टैलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd.

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे — वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक २) — २९ पौष २०२० रविवार—दयानन्दाब्द १४०—१२ जनवरी १९६४ — (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

कर्म कृण्वन्तु मानुषाः

मनुष्य कर्म करते रहें। मानव-जीवन कर्म करने के लिए मिला है। कर्मशील और कर्मयोगी बनना ही मानव जीवन का परम लक्ष्य है। निरन्तर कर्म करते रहना ही मनुष्य का कर्तव्य है। आलस्य, निराशा तथा तन्द्रा कभी पास न आने दे। वेद ने कर्मयोग का सुन्दर उपदेश किया है—मानव सदा काम करते रहें।

शं नो भवन्तु आपः

ये जल हमारे लिए सुखदायक तथा कल्याणकारी हों जल जीवन के लिए बड़ी भारी औषधी मानी जाती है। इसके द्वारा नाना प्रकार के रोग दूर हो जाते हैं जल चिकित्सा तथा जल-उपचार अपने रूप में बड़ा महत्व-पूर्ण उपचार है। प्रभो! जल हमारे लिए शान्ति दायक है।

ओषधीः शिवाः

ये सारी औषधियां, जड़ी-बूटियां, बनस्पतियां हमारे लिए कल्याण करनी वाली हों। ये बन-स्पतियां जीवन के नाना रोगों को हटाकर स्वास्थ्य प्रदान करती हैं। तुष्टि और पुष्टि को देने वाली है। भगवन्! ये हमारे लिए सदा सुख देने वाली बन जाएं।

अ थ र्व वे द, से

वे दा मृ त

ओ३म् समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत।
अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी॥

ऋक् १० मं० सू० १९० मं० २

अर्थ :—उसी परमेश्वर से ही (समुद्रान्) समुद्र से (अर्णवात्) जल वाले (अधि) पीछे (संवत्सरः) बरस, महीने आदि समय (अजायत) पैदा किये गये। और उसी ने ही (अहोरात्राणि) दिन और रात्री को (विदधत्) बनाया, (विश्वस्य) सब को वह परमात्मा (मिषतः) अपने सहज स्वभाव से (वशी) अपने बश में, नियत नियम में रखने वाला है।

भाव :—मानव! तुझे किस बात पर अभिमान होता है? यह धनमद, बलमद, ज्ञान व सत्तामद, शरीर वा सौंदर्य मद अथवा और मद किस लिए तुझ अभिमानी बना देते हैं। जरा देख तो सही! ऊपर आकाश में भी एक विशाल जल का सागर ठाठें मारता है। यह मेघों का समुद्र है। जब बरसता है, धरती को जलमयी बना देता है। ऊपर का जल सागर तब भूमि पर आ जाता है। धरती पर भी तीन भागों में विशाल समुद्र है। ये किसके बनाए हैं? यह क्रम से आने वाले दिन-रात का नियमित चक्रक्रम किस की मर्यादा में है? यह काल समय का विचित्र चक्र कितना अजीब है इसे देखकर मनुष्य का अभिमान नशा कहां रहता है। सुनो! उसी सर्वव्यापक, सर्ववशी, नियामक प्रभु ने, अपने सहज स्वभाव से रचे हैं। नियम सूत्र में कमालपन से पिरा दिये हैं। उसी को नमस्कार करो। उसी विधाता के गुण गाओ—सं.

काग़ा काको धन हरे कोयल काको देय।
मीठे वचन सुनायके जग अपनो कर लेय।
चलती चक्की देख के दिया 'कबीरे' रो।
दो पट भीतर आय के साबत गया न कोय।

ऋषि दर्शन

रुचिकराय ब्रह्मणे नम

सब से सुन्दर, प्यारे तथा जी में आनन्द भर देने वाले उस ज्यो तथा महान् ब्रह्म को नमस्कार उसी की भक्ति करें, उसी से आ मांगे तथा उसी से प्यार करें।

गुणान् मह्यं देहि

हे प्रभो! कृपा करके मुझे गुणों का दान प्रदान करें। जी को बनाने वाले जितने भी उत्तम गुण, कर्म, स्वभाव हैं। आप आ आशीर्वाद से मुझे प्रसादरूप प्रदान करते रहें।

दोषांश्च विनाशय

जितने दोष हैं, दुर्गुण हैं, मेरे जीवन को गिराने वाले, बिग ड़ने वाले, दूषित करने वाले जि भी दुष्ट कर्म और स्वभाव हैं, से जीवन का पतन होता है— को हे परमेश्वर! दूर भगा दें उनका नाश कर देवें।

सुखस्य मार्गः

जीवन में परत्मा की उपास भक्ति करना सुख का मार्ग यही केवलमात्र एक ऐसा साधन जिस से सारे दुःख दूर होते सब प्रकार का सुख मिलता है।

भा ष्य भू मि का

प्रकाशक—संतोषराज सभा मंत्री — चेतना उठे — सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शा

धार्मिक चर्चा—

आयुर्यज्ञेन कल्पताम्

ले० पं० सत्यप्रिय जी शास्त्री सिद्धान्त शिरोमणि
प्राध्यापक—दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार

वेद की इस पवित्र शक्ति में मानवमात्र के लिए अपनी आयु को दीर्घ करने का उपदेश किया गया है। 'यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म' ब्राह्मण ग्रन्थ के इस वचन के अनुसार श्रेष्ठ कर्मों के द्वारा जीवन की डोरी को विस्तृत किया जा सकता है। अर्थात हे मानव तू मानस, वाचिक एवं कायिक श्रेष्ठ कर्मों के द्वारा अपनी आयु लम्बे समय तक चलाने में समर्थ बना। मनुष्य की आयु क्षीणता में जहां प्रारब्ध कारण है। उस से बहुत अधिक क्रियमाण कर्म है। अर्थापत्ति से यह भी सिद्ध है कि अपने जीवन सुधार में प्रारब्ध कर्मों की अपेक्षा क्रियमाण कर्म अधिक सहायक एवं उपयोगी हैं। आध्यात्मिक, आधिभौतिक एवं आधिदैविक यह दुःखों की त्रिपुटी है जिस से प्रत्येक जीव मुक्त होने में सतत प्रयत्नशील है। आज यहां आध्यात्मिक दुःखों के एक पहलू पर ही संक्षिप्त विचार करना है। मनुष्य की आयु हानि में प्रमुख रूपेण कारण उसका भोजन होता है। आयुर्वेद ने मनुष्यों की प्रकृतियों को वातप्रधान, पित्तप्रधान तथा श्लेष्म प्रधान के रूप में तीन जगह विभक्त किया है। किस प्रकृति वाले के लिये कौन-से ऋतु में कौन-सा पदार्थ अनुकूल होगा तथा कौन सा पदार्थ प्रतिकूल यदि इस विचार पूर्वक भोजन किया जाये तो आयु क्षीणता से बहुत अंश में हम बच सकते हैं। उदाहरणार्थ श्लेष्म प्रकृति के लिये उष्ण तथा रुक्ष पदार्थ लाभप्रद होते हैं परन्तु पित्त-प्रकृति के लिये नहीं। इस में ऋतु परिवर्तन तथा जलवायु के भेद से पदार्थ भेद हो सकता है। इस के साथ २ कई पदार्थ विरुद्ध गुण वाले होने से एक साथ खाने पर हानिप्रद होते हैं। यदि खीर व दूध के साथ मूली वा दही खाई जाये तो उत्तम होने पर भी हानिकारक सिद्ध होती है।

इसी दृष्टिकोण से भारतीय संस्कृति की अक्षुण्ण परम्परा रही कि पत्नी का सर्वाधिक उत्तरदायित्व पूर्ण कार्य स्वयं अपने हाथ से भोजन बनाकर अपने पति तथा बच्चों को खिलाना था। क्योंकि महर्षि दयानन्द सरस्वती ने लिखा कि स्त्रियों को आयुर्वेद अवश्य पढ़ना चाहिए, क्योंकि वे आयुर्वेदानुसार भोजन बनाकर अपने परिवार को रोगों से बचा सकती हैं। वैद्यों का मत है कि मनुष्य के आधे रोग तो उसके भोजन से होते हैं। इसीलिए आयुर्वेद का मत है कि 'कोऽरुक्' अर्थात् नीरोग कौन है? इसका उत्तर दिया कि 'हित भुक्, मित भुक् ऋत भुक्' अर्थात् जो निम्न भोजन खाता है।

'हित भुक्' अपनी प्रवृत्ति के अनुकूल पदार्थों का ही सेवन करने वाला। मानलीजिये खीर वा हलवा हैं, ये पदार्थ सात्विक हैं तो भी उस व्यक्ति के लिए रही हैं, जिसकी प्रवृत्ति के प्रतिकूल हैं, इसको भी महर्षि ने अपने सत्यार्थ प्रकाश में अभक्ष्य कोटि में गिना है। मिर्चें श्लेष्म प्रकृति के लिए भक्ष्य हैं किंतु वे ही पित्त प्रकृति के लिए भक्षण करने पर हानि कारक सिद्ध होती हैं।

'मित भुक्' जितनी भूख हो उससे कुछ कम ही खाया जाये, इसीलिए ग्रामीण वृद्ध लोगों का कथन होता है कि जब एक रोटी की भूख शेष हो तो थाली से हाथ खींच लो, देखो, कम खाने से कोई नहीं मरता, हां अधिक खाने से अवश्य मर जाता है।

'ऋत भुक्' अर्थात् सात्विक भोजन करना, वह अपनी पवित्र कमाई का होना चाहिये। आपके सामने पवित्र कमाई 'का होना चाहिये। आपके सामने पवित्र एवं ताजे गाय के दूध से बनी खीर हैं जो खाने पर हानि बिल्कुल न करे, किन्तु यदि चोरी जारी, रिश्वत तथा ब्लेक के पैसे से बनी है तो वह भी अभक्ष्य है। इस के साथ ही मांसादि भी अभक्ष्य है कोटि में आ जाती है, क्योंकि वह बिना हिंसा के प्राप्त नहीं होता, दूसरे उसके भक्षण से मनुष्य की क्रूर प्रवृत्ति हो जाती है। इसीलिए मुनियों का कथन है कि 'घृतं वै आयु' अर्थात् घृत दुग्ध आदि सात्विक पदार्थ आयु को लम्बा करने वाले होते हैं, साथ ही सात्विक भी होते हैं, इसी लिये वेद में पंच गव्य सेवन की महिमा का विस्तृत वर्णन है। कई लोगों का विचार है कि गोदुग्ध की अपेक्षा भैंस का दूध शक्तिशाली है, ये भ्रांति में हैं, इस में यह प्रमाण है कि गाय का बच्चा उत्पन्न होते ही उछलने कूदने लगता है जब कि भैंस का बच्चा कई दिन में जमीन से उठता है, क्योंकि कमज़ोर है। बैल बहुत कार्य करता है, दौड़ता है, परन्तु भैंसा थोड़ा-सा कार्य करने पर हांफने लगता है, यह उसके निर्बल होने का प्रबल प्रमाण है। आज के महंगाई के युग में मान लो ये बहु-मूल्य पदार्थ प्राप्त न हों तो भी रत्न गर्भा भूमि पर अमूल्य औषधियें खड़ी, हैं जिनका महत्व हम नहीं समझते और वे वैसे ही सूख जाती हैं। आज जल गोखरू बहुत उग रहे हैं। इसका उपयोग न जानने से यह व्यर्थ जाता है।

शरद् ऋतु में गोखरू को सुखा कूट पीस कर उस में यथा शक्ति घृत तथा मीठा मिला कर प्रतिदिन प्रातः थोड़ा २ खाने से दीर्घायु एवं काया-कल्प में बहुत उपयोगी है। यदि निर्धनता-वश घृत न मिल सके तो तिल का तेल मिला लें, वह और भी गुण कारक होता है। शरद् ऋतु में प्रायः नजला जुकाम घेर लेता है। यदि सब औषधियों को तिलांजली देकर प्रतिदिन प्रातः दो तीन मास काली मिर्चें पीस कर शुद्ध शहद के साथ थोड़ी-सी लेते रहें तो अत्युत्तम गुण कारक होती है। अब तक यह चर्चा आहार के विषय में रही, अब थोड़ा-सा विहार के विषय में भी विचार किया जाता है। प्रतिदिन प्रातः का स्नान भी मनुष्य के दीर्घायु में परम सहायक होता है. परन्तु वह शीतल एवं ताजे जल से हो तो और भी गुण कारक होता है। स्नान से पूर्व यदि न्यून से न्यून सप्ताह में एक बार सारे शरीर पर तेल की मालिश हो तो बहुत लाभ-प्रद होती है। आयुर्वेद का तो यहां तक कहना है कि "घृतादश गुणं तैलं मर्दने न तु भक्षणे" अर्थात् मर्दन करने पर सरसों का तेल घी से दश गुणा अधिक लाभ प्रद होता है। एक छटांक तेल मालिश द्वारा शरीर में पहुंचने पर उतना लाभ करता है जितना कि दश छटांक घी पच जाने पर करता है। कई सज्जनों के प्रातः मल विसर्जन का स्वभाव नहीं होता, ऐसे व्यक्ति यदि स्वभाव डालें तो आदत पड़ जाती है, अन्यथा प्रातः उठते ही मुंह धोकर आंवलों का चूर्ण थोड़ी मात्रा में ताजे जल के साथ लेवें, इस से मल भी उतरेगा, आंखों में ज्योति वृद्धि बाल काले रहेंगे तथा वीर्य रक्षा में परम सहायक होगा। स्नान से पूर्व मुख, नाक. कान आदि अव यवों को स्वच्छ जल से साफ करें।

(शेष पृष्ठ ४ पर)

सम्पादकीय-

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२०, १२ जनवरी १९६४ [अंक २

मकर संक्रांति पर्व

आर्य सभ्यता और आर्य जीवन में पर्वों का बड़ा महत्व है। समय २ पर आने वाले ये सारे विविध त्योहार पर्व सारे समाज में उद्‌बोधन की भावना भर देते हैं। स्तेये पड़े समाज में नवचेतना, प्रबल प्रेरणा का संचार कर देते हैं। इनके विविध रूप हैं। किसी का सम्बन्ध राष्ट्रिय महापुरुषों के दिव्य जीवन के स्फूर्तिदायक इतिहास के साथ है और किसी का ऋतु मौसम तथा किसी का पुरातन संस्कृति के प्रचार व प्रसार के पवित्र संकल्प के व्रत को धारण करने का है। नाना प्रकार की धाराओं में आर्य सभ्यता के पर्व मानव का प्रवाह बहता चला आ रहा है। ये सारे पर्व हमारे समाज के जीवन अंग ही बन गये हैं। ये सुन्दर पाठ पढ़ाने वाली प्यारी पुस्तक के समान बहुत कुछ पढ़ाते, सिखाते और बातें बताते हैं।

सारा समाज मकर संक्रांति के के पर्व को मना रहा है। इसे पंजाब में लोहड़ी के नाम से पुकारा जाता है। इस पर्व का आर्य जीवन में बड़ा भारी महत्व है। सरदी की मौसम चल रही है। सूर्य की किरणें मिलती तो हैं पर पूरी तरह नहीं मिल पातीं। सरदी के कारण धरती का भी सारा जीवन सिकुड़ा २ रहता है। खेतियां बो दी गई हैं। बीज अंकुरों के रूप में भूमि से उग कर ऊपर आ चुके हैं। किन्तु जीवन प्राण शक्ति का संचार करने वाली इस खेती को प्रभु प्रदत्त वर्षा की बड़ी आवश्यकता होती है। हमारे शास्त्रों में लिखा है। अन्नं वै ब्रह्म, अन्नं वै प्राणः अन्नं बहु-कुर्वीत—अन्न को ब्रह्म कहा है, यही प्राण शक्ति है इसी के आधार पर जीवन चलता है। इसी लिए यह विधान व कर्तव्य था कि अन्न बहुत उपजाओ। आज का अंगरेजी में जनता को दिया जाने वाला यह **Grow more food**—नारा अन्नं बहु-कुर्वीत का छाया अनुवाद मात्र ही है। अन्नाद् भवन्ति भूतानि अन्न से प्राणियों का पालन होता है और यह अन्न पर्जन्य से मेघों की वर्षा से होता है। समय पर वर्षा से अन्न की बहुलता होती है। वर्षा के लिए यज्ञ सब से सुन्दर साधन होता है। पुरातन युग मे विविध यज्ञों के अनुष्ठान के कारण ही समय और मात्रा में वर्षा हो कर सारा देश अन्न धन से माला माल हो जाता है। यह पर्व यज्ञ का पर्व है। सारा राष्ट्र अपने २ मुहल्लों में इकट्ठे हो कर यज्ञ करता था। बच्चे यज्ञ के लिए हर एक घर पर जा कर यज्ञ के लिए कोई न कोई समिधा या अन्न यज्ञीय सामग्री लेने के लिए टोली बना लर जाते थे।

आज भी इस का विकृत रूप हमें दिखाई देता है। बच्चे आज भी घर २ जा कर लकड़ियां इकट्ठे कर के उस दिन लोहड़ी जलाते हैं। यज्ञ का ही बिगड़ा रूप है यह। सर्दी शरीर के रक्त संचार को जमा देती है, मन्द बना कर अपना प्रभाव डाल देती है। रक्त जमा नहीं शरीर की सारी क्रिया शिथिल हो जाती है। इस लिए इस पर्व पर गर्म वस्तुओं का, तिल गुड़ का विशेष प्रयोग होता है। अग्नि से भी कार्य लेते हैं। यह सर्दी को सारे समाज को चैलञ्ज था कि चाहे यह कितना भी खून को ठण्डा करने में हिमपात करती है पर हम उस अग्निमय प्रभु से बल शक्ति ले कर तथा भौतिक अग्नि रूपी यज्ञ के द्वारा एवं गर्म सात्विक पदार्थों का प्रयोग कर के कभी शिथिल न होंगे। बर्फ वाली इस सर्दी में जीवन पथ में आगे ही आगे बढ़ते हुए समाज को प्रगतिमय बनायेंगे। आर्य समाज इस पर्व को धूम धाम से मना कर सारे राष्ट्र में चेतना उत्साह भर देवे।

त्रिलोक चन्द्र

देवता की जन्मशताब्दी

****

आर्य जगत् के गत सप्ताह के अंक में सभा के मान्य महामन्त्री श्री ला० सन्तोषराम जी द्वारा सारी समाजों, संस्थाओं एवं भाई बहिनों की सेवा में प्रभावशाली शब्दों में आवश्यक निवेदन रूप में सूचना प्रकाशित हुई है जिस में सारे समाज का ध्यान इस वर्ष आने वाले अक्तुबर मास मे तपोमूर्ति जीवनबलिदानी, सर्वमेधी पूज्य स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी की सौ वर्षीय जन्मशताब्दी मनाने के शानदार समारोह की ओर दिलाया गया है। आर्य प्रादेशिक सभा के सारे मान्य कर्णधारों ने गम्भीर विचार के बाद इस महापुरुष की जन्मशती के महान जीवनपर्व को बड़े ही शानदार ढग से अखिल भारतवर्षीय स्तर पर मनाने का निर्णय कर दिया है। इस कार्य के लिए एक उपसमिति का गठन कर दिया गया है जिस उपसमिति में बड़े २ नेता, मान्य अनुभवी समाजों व संस्थाओं के कर्णधार संचालक प्रतिष्ठित विद्वान् तथा मंजे सुलझे हुए भाई बहिन शामिल हैं। बहुतों की सेवा में सभा द्वारा पत्र प्रेषित कर दिये गये हैं तथा और भी सज्जनों को प्रतिदिन पत्र भेजे जा रहे हैं। नये वर्ष की भरी उमंगों के साथ इस महान कार्य को सभा ने अपने हाथ में लेकर काम इस दिशा में प्रारम्भ भी कर दिया है। ये सात आठ महीने सभा ने इसी वास्ते जयन्ती के लिए लिये हैं ताकि उस त्यागी सर्वमेधी देवता के जीवन के अनुरूप ही यह शताब्दी समारोह मनाया जा सके। इस के लिए तैयारी का पूर्ण और पर्याप्त समय मिलना ही चाहिए। हम इस महान काय को स्वीकार करके इस दिशा में पूर्णतया क्रियात्मक पग उठाने के लिए सभा को हार्दिक बधाई देते हैं। सभा के पास भारी शक्ति है। आर्यसमाजके पास शिक्षण संस्थाओं की भारी छावनियां मौजूद हैं जिसमें लाखों छात्र छात्राए शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं समाज के पास सारे देश में मूर्धन्य नेता डा. मेहरचन्द जी महाजन प्रधान दयानन्द कालेज कमेटी देहली, डा. गोकुलचन्द नारंग, डा. जी. एल. दत्त वायस चांसलर विक्रम यूनिवर्सिटी, डा. दीवानचन्द जी एम. ए. कानपुर, पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी, प्रिंसीपल सूयभानु जी वाइस चांसलर कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी, महामना श्री देवीचन्द जी एम. ए. सभा प्रधान, प्रिंसिपल ज्ञानचन्द जी हिसार, प्रिंसिपल भीमसेन जी बहल एम. ए. जालन्धर, प्रिंसिपल भगवान् दास जी शोलापुर, स्वामी ध्रुवानन्द जी, महात्मा आनन्द भिक्षु जी आदि कितनी विभूतियां हैं। आर्यसमाज का भण्डार इससे मालामाल है। आर्यसमाजें, स्कूल कालेज और गुरुकुल इसके भारी केन्द्र हैं।

स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी सबके थे। आज जितना भी राष्ट्र में

(शेष पृष्ठ ४ पर)

आर्य समाज की आवश्यकता

(ले० श्री शयामलाल जी आर्य दयानंद ब्राह्म महाविद्यालय हिसार)

आज कल कुछ महानुभाव कहा करते हैं कि अब तो आर्य समाज की आवश्यकता नहीं है आर्य समाज की वास्तव में आज अत्यन्त आवश्यकता है।

आधुनिक हिन्दी के उच्चकोटि के विद्वान कवि रामधारी जी दिन कर जो कि आज कल M.P. हैं उन्होंने 'संस्कृत के चार अध्याय, नामक पुस्तक लिखी है उस में लिखा है कि 'सीता' मर्यादा पुरुषोत्त राम की बहिन थी और राम ने अपनी बहन सीता के साथ विवाह कर के घोर अनर्थ किया और साता स्वयं रावण के साथ जाना चाहती थी न कि रावण स्वय उठा ले गया। अतः 'राम' ने रावण को मार कर तथा रावण की बहिन की नाक काट कर बहुत पाप किया। साथ ही साथ एक बात और है कि इस पुस्तक की भूमिका भारत के मन्त्री पं० जवाहर लाल जो नेहरू ने लिखो है

और भी ध्यान दो दिल्ली से कम्युनिष्टों की अध्यक्षता में 'सरिता' नामक पत्रिका निकली है जिस पत्रिका में भारत केभूत पूर्व शिक्षा मंत्रीमौलाना आजाद का हाथ था, उस में लिखा जाता है कि प्राचीन ऋषि महर्षि महामूर्ख थे और जड़ देवताओं की पूजा करते थे इसी प्रकार मर्यादा पुरुषोत्तम तथा योगिराज महात्मा कृष्ण पर अनेकों कटाक्ष करते है और अथर्ववेद में जादू टोना सिद्ध करने की कुचेष्टा 'सरिता' नामक पत्रिका से की जाती है।

हा! खेद है फिर भी कहते हैं कि आर्य समाज की क्या आवश्यकता है उपयुक्त अत्याचारों पर पाठक गण ध्यान देते हुये यह कहने का प्रयास करेंगे कि आजकल आर्यसमाज की अत्यन्त आवश्यकता है क्योंकि इन भ्रान्तियां को दूर करने में आर्य समाज ही सफल हो सकता है अन्य नहीं।

आज कल इसी प्रकार काअन्यअनेक भ्रान्तियां फैली हुई हैं। जैसे के. एम. मुंशी की बाम्बे में 'विद्यामवन' नामक संस्था खोलकर 'वैदिक एज' नामक पत्रिका निकाली थी उस में लिखा था कि वैदिक ऋषि गोमांस, शराब तथा व्यभिचार से अत्यन्त प्रेम करते थे अर्थात वे गोमांस, शराब इत्यादि का प्रयोग करते थे और ज्ञान विज्ञान में बिल्कुल शून्य थे। (क्रमश.)

देवता की जन्मशताब्दी

(पृष्ठ ३ का शेष)

शिक्षा का प्रवाह बहता है—इसके लिए मानसरोवर थे। शिक्षा की ज्ञान धारा उसी तपस्वी त्यागी के सर्वमेध यज्ञ मानसरोवर से निकाल कर सारे देश में फैली है। वर्तमान युग में विद्या ज्ञान की गंगा को लाने वाले महात्मा जी देवता भगीरथ सिद्ध हुए हैं। उन की जीवन शताब्दी धूमधाम से मनाने के लिए अभी से जुट जावें। हम सभा तथा दयानन्द कालेज कमेटी के नेताओं से बलपूर्वक नम्र शब्दों में कहना चाहते हैं कि वे भारत-सरकार से विशेष निवेदन कर के इस शिक्षण के आदि देव की विशेष टिकट अन्यों के समान निकालें। यह काम करना ही होगा। सारी संस्थाओं, समाजों, सज्जनों को इस महान् कार्य में तैयारी करनी चाहिए। —त्रिलोक चन्द्र

प्रातः स्मरणीय–

महात्मा हंसराज जी की जन्मशताब्दी और हम

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर ने ७-१२-६३ को महात्मा हंसराज जन्मशताब्दी मनाने का निश्चय किया था और साथ ही तिथि और स्थान आदि चुनने, कार्यक्रम बनाने और धन संग्रह करने के लिए एक उपसमिति बनाई थी। इस निश्चय के अनुसार उक्त उपसमिति के सदस्यों की सेवा में एतर्थ सूचना भेजी थी, इस प्रार्थना के साथ कि वे सदस्यता की स्वीकृति से सभा को सूचित करने की कृपा करें और साथ हो कुछ ऐसे सज्जनों के नाम सुझाएं जिन को इस उपसमिति का सदस्य बनाया जाए कि उनके कीमती परामर्श तथा ठोस सहायता से समिति का कार्य आगे बढ़े। साथ ही मनोनीत सदस्यों से प्रार्थना की थी कि वे अपनी ओर से कार्यक्रम सम्बन्धी कुछ सुझाव भी दें कि इन पर विचार करके कार्यक्रम की रूप रेखा बनाई जावे। बहुत से सज्जनों ने सहर्ष स्वीकृति प्रदान कर दी है। अनेक सज्जनों ने अपने सुझाव भी भेजे हैं। उनका धन्यवाद। जब उपसमिति की बैठक बुलाई जाएगी तो इन सुझावों पर उस में विचार करेंगे और इनकी सहायता से कार्यक्रम तैयार किया जाएगा। परन्तु कुछ सज्जन ऐसे हैं जिन्होंने अभी तक स्वीकृति प्रदान नहीं की और न कुछ सुझाव ही भेजे हैं। सभा ने उनका महात्मा जी का अनन्य भक्त समझते हुए, उनकी महात्मा जी पर अगाध श्रद्धा जानते हुए ही उनको सदस्य बनाया है और उनकी आर्य समाज की सेवा, आर्य संस्थाओं से प्रेम की कदर को सम्मान की दृष्टि से देखते हुए ही, उनकी सहायता और परामर्श का मोल जानते और समझ कर ही उन से प्रार्थना की गई थी। उन महानुभावों से प्रार्थना है कि शीघ्र स्वीकृति प्रदान करें, कुछ अपने मित्रों के नाम भेजें कि जो इस पुण्य कार्य में सभा का हाथ बटायें और कुछ सुझाव लिख भेजें जिस से सुन्दर, ठोस, उपयोगी कार्यक्रम तैयार हो सके।

क्या मुझे यह कहने की आवश्यकता होगी कि महात्मा हंसराज जी महाराज ने सारे देश पर साधारणतः और पंजाब पर विशेषतः महान उपकार किया है। उनके उपकार से हमारा सब पंजाबियों का बाल-बाल बंधा हुआ है। हमें भगवान ने यह सुअवसर दिया है, आओ हम कुछ कर लें और उनके ऋण से उऋण होने का यत्न करें। मैं जानता हूं कि उनके ऋण को चुकाना कठिन है फिर भी किसी हद तक सफलता मिल जाए, यह भी अहोभाग्य है। —सन्तोषराज मन्त्री सभा

आयु र्यज्ञेन कल्पताम्

(पृष्ठ २ का शेष)

अच्छा हो यदि मुख में खूब पानी भरकर फिर जल से आंखों पर छींटे देखें। यह क्रिया नेत्रों की ज्योति में वृद्धि कारक तथा मस्तिष्क में शीतलता एवं शरीर में नयी चेतनता उत्पन्न करती है। इसके साथ २ अच्छा हो यदि प्रातः काल नंगे पांव घूमा जाये, इससे भी शरीर के रोम-रोम में नवीन स्फूर्ति का संचार होता है। इस प्रकार का विहार भी दीर्घायु होने में प्रमुख कारण होता है। इनसे भी अधिक बढ़कर मनुष्य का ब्रह्मचर्य है। इस प्रकार का आहार विहार मनुष्य के ब्रह्मचर्यरक्षा में सहायक होता है। ब्रह्मचर्य के साथ निद्रा का भी सम्बन्ध होता है। इस सम्बन्ध में इतना वक्तव्य है कि मनुष्य की निद्रा ब्रह्म मुहूर्त तक पूरी हो लेती है, उसके बाद सोना मानव के लिए हितकर नहीं है। गृहस्थ लोगों के लिए ब्रह्मचर्य शब्द का अर्थ ऋतु कालगामी होना है। क्योंकि गृहस्थ के लिए वेद का यही आदेश है। इस प्रकार के ये शुभ कर्म अर्थात् शुभाचरण हैं जिनसे मनुष्य अपने जीवन को अपने शरीर रूपी यान को लम्बे समय तक चला सकता है। यही अमर सन्देश वेद की सूक्ति में बताया गया है। अतः कल्याणाभिलाषी मानवों का कर्तव्य है कि वे परम पिता के आदेशानुसार आचरण कर दीर्घायु बनें।

गन्दे चल-चित्रों से देश समाज तथा राष्ट्र का पतन

(ले०—श्री ब्रह्मानन्द जी जिज्ञासु 'विद्यावाचस्पति' हिसार)

किसी भी राष्ट्र की वास्तविक उन्नति उस राष्ट्र की आर्थिक विकास से ही नहीं होती बल्कि यह भी देखा जाता है कि राष्ट्र चारित्रिक, बौद्धिक आध्यात्मिक एवं आत्मिक दृष्टि से कितना उन्नत है। राष्ट्र की आचारशिला चरित्र एवं अनुशासन से बनती है। आज, विद्यार्थियों का जीवन जितना अनुशासनहीन, अनियंत्रित और अमर्यादित हो रहा है उसका मुख्य कारण चलचित्र ही हैं। प्राचीन काल में नाटकों के लिए गुण, लक्षण और परम्परायें निर्धारित होती थीं जिसके कारण नाटक के नायकों में वीरता, सुन्दरता आस्तिकता आदि गुणों का समावेश था। यह इसीलिए किया जाता था कि जनता के दिल-दिमाग पर अच्छा प्रभाव पड़े इस से शिक्षा ग्रहण कर अपने जीवन को उन्नत बनाएं।

किन्तु आज फिल्मों के नायक 'पाकेटमार' 'अवारा' 'श्री चार सौ बीस' 'प्यार किया तो डरना क्या ? 'मुहब्बत' 'शराबी' 'दिल ही तो है' आदि बहू-बेटियां भगाने वाले चरित्र भ्रष्ट होते हैं। 'किस्मत' के नायक ने देश के कितने होनहार नवयुवकों को अपनी पाकिटमार कला से परिचित कराया। 'अवारा' के नायक ने कितने अच्छे भले मानुषों को 'अवारा' कहने और बनने में गौरव की अनुभूति कराई। श्री चार सौ बीस' के नायक ने झूठ, धोखे बाजी, आदि अवगुणों की गहरी छाप मानव जीवन पर डाली।

'गूंज उठ शहनाई' के नायक ने नशा बन्दी की ओर अग्रसर देश में 'पीने' को 'जीने की कला' बतलाकर शराबियों की संख्या बढ़ाने का प्रयास किया जिस की संख्या बतलाना कठिन है। 'जागृति' फिल्म को देख कर कितने छात्रों ने अपने गुरुजनों को 'जालझोटा' दे दिया' इस जालझोटा देने का परिणाम यह निकला कि लड़का स्कूल से बाहर निकाल दिया गया इस प्रकार लड़के ने स्वय अपने पैरों पर कुल्हाड़ी चलाई।

इस के अतिरिक्त आज का नवयुवक फिल्मों में यह देखता है चित्र का नायक-नायिका से छेड़-छाड़ करता है, उसका पीछा करता है। गंदे अश्लील गाने गाता है। सीटियां बजाता है इत्यादि कार्यों से वह नायिकाओं से प्रेम करने में सफल हो जाता है। तब वह नवयुवक भी सभी लोक लज्जा को छोड़ कर परायी स्त्री को माता न समझ कर दूसरे की बहू-बेटियों को अपनी बहन-बेटी न मान कर उस नायक की तरह छेड़ खानी, उन का पीछा करना, गंदे अश्लील गाने गाना एवं सीटियां बजाना आरम्भ करता है। ऐसे ही कुकर्म में अपने जीवन को धन्य समझता है। वह नवयुवक भी फिल्मों में देखे हुए दिलीप कुमार के बिखरे बाल, राज कपूर का अवारा पैंट तथा अन्य नायकों की बेल बूटे दार जानाने आदि का प्रयोग करने में ही उद्देश्य की प्राप्ति समझता है। इस प्रकार जीवन में वासना, लोलुप्ता और चारित्रिक पतन जैसे दोष आ जाते हैं।

चलचित्र से निर्लज्जता का प्रसार—चलचित्र से जितनी फैशन परस्ती एवं निलज्जता का प्रसार हो रहा है उतना और किसी से नहीं, क्योंकि आजकल तो प्रत्येक फैशनों का आविष्कार चलचित्रों से ही होता है आज एक भाई अपनी बहन के समक्ष फिल्म में देखे हुए अभिनेत्रियों के सौंदर्य, केशविन्यास, वेश-भूषा, आदि की मुक्त चर्चा बिना लोक लज्जा एवं हिचकिचाहट के साथ करते हैं। बहिन भी भाई के साथ अभिनेताओं के प्रति अपनी रुचि एवं आकर्षण को स्वतन्त्रता पूर्वक व्यक्त करती है इसमें किसी प्रकार की लज्जा एवं शर्म का अनुभव नहीं करती। जिससे समाज देश राष्ट्र में निर्लज्जता का प्रसार एवं लोक लज्जा मिटती जा रही है। आजकल की नवयुवतियां चलचित्र के प्रभाव में आकर ऐसे नकली सौंदर्य की धारणा करती हैं एवं ऐसे वस्त्र को पहनती हैं जिस में उनके शरीर के बहुत से अंग ढके हुए नहीं होते। उनके ऐसे वस्त्रों एवं सौंदर्यादि को देखकर कामातुर नवयुवक गीध की भांति उन तोतों की भांति रंगों से रंगे हुए होंठों पर टूट पड़ते हैं। वास्तव में उन नवयुवकों का कोई दोष नहीं बल्कि उन नवयुवतियों का दोष है जो अपनी प्राचीन वेशभूषा को त्यागकर पाश्चात्य वेशभूषा को अपनाती हैं। इसीलिए अंग दिखाई देने वाले वस्त्रों को धारण करती हैं जिससे कि देखकर लोग मुग्ध पर मुग्ध हों, उनका चरित्र भ्रष्ट हो जावे। आजकल की नवयुवतियों ने यह सिद्ध कर दिया है और कर रही हैं कि आप पुरुष नहीं पुरुष तो हम हैं जो कि सुने सिर हिन्दुस्तान पाकिस्तान नामक चोटियां बनाकर ओठों पर तोते के ऐसे मुंह रंग कर सड़कों पर चलते हैं। आज वृद्ध या मर्यादित पुरुष गर्दन उठाकर नहीं चलते किन्तु नवयुवतियां वक्षस्थल तान कर चलती हैं तो प्रतीत होता है कि नवयुवतियां अपने ऐसे वेशभूषा से उन्हें चैलेंज करती हैं कि पुरुष तो हम हैं तुम नहीं। यह सब चलचित्र का ही तो प्रभाव है।

क्रांतिकारी परिवर्तन की आवश्यकता—इस प्रकार सिनेमा के वर्तमान रूप से हमारा व्यक्तिगत जीवन अत्यन्त दूषित होता जा रहा है। अब सरकार ही जनता को पतित करने के लिए सिनेमा घर खोलकर जनता का विनाश देश का पतन तथा राष्ट्र को अधोगति कैसे न हो ? पंजाब प्रदेश के मुख्य मंत्री सरदार प्रताप सिंह कैरों के लड़के ने अपना सिनेमा हाल हिसार में खोला यह कितनी निर्लज्जता की बात है। समय सम्पूर्ण भारत वर्ष में लगभग ४००० (चार हजार) से अधिक चलचित्र (सिनेमा) गृह हैं। दो करोड़ से भी अधिक (२०,००००००) व्यक्ति प्रतिदिन चलचित्र देखते हैं केवल इन्द्रप्रस्थनगर (दिल्ली शहर) में ही २५०००० व्यक्ति प्रतिदिन चलचित्र देखते हैं। एक ओर तो वे व्यक्ति हैं जिन को भर पेट भोजन नहीं मिलता दूसरी ओर देश का ८५ करोड़ रुपया व्यभिचार के प्रचार में व्यय होता है।

आज इस प्रकार भ्रष्टाचार और दुराचार को प्रोत्साहन दिया जा रहा है कि उस का उदाहरण प्राचीन काल की सभ्यता संस्कृति में स्थान तक नहीं। एक बुद्धिमान सज्जन ने भी कहा है कि 'यदि किसी का धन चला जाय, कंगाल हो जाय तो वह धनी हो सकता है, अस्वस्थ और बीमार स्वस्थ्य हो सकता है परन्तु जो भ्रष्टाचारी है जिस का नैतिक पतन हो चुका है उस का उत्थान नहीं हो सकता।' जब शासक ही भ्रष्टाचारी और दुराचारी हों तो जनता का कहां ठिकाना ?

जनता के धन की होली—जब जब भी भारत के राजनीतिक लाभ का प्रश्न उत्पन्न हुआ किसी भी देश ने भारत की सहायता नहीं की बल्कि विरोध ही किया परन्तु हमारे प्रधान मंत्री जी अतिथियों करोड़ों रुपये अतिथियों पर खर्च करना उचित समझते हैं।

(क्रमशः)

हिन्दी और देश की भावात्मक एकता

(ले०--श्री जयदेव जी आर्य एम० ए० ब्रह्मपुर)

हमारे देश को स्वतन्त्र हुए १५ वर्ष का समय व्यतीत हो चुका है। इस काल में हमारे देश में जातिवाद, भाषावाद, सम्प्रदायवाद तथा प्रांतवाद ने जिस प्रकार प्रगति की है और इसके कारण ही अनेक प्रकार की जो अवांछित घटनाएं घटित हुई हैं उनको ध्यान में रखते हुए आज प्रत्येक देशभक्त के मन में एक गम्भीर प्रश्न उठ खड़ा हुआ है और वह प्रश्न है देश की भावात्मक एकता का। ऐसा कौन-सा वह तत्व है जो भारतीयों में भावात्मक एकता को उत्पन्न करने का मुख्य साधन बन सकता है? यही इस लेख का विषय है।

इस प्रश्न पर विचार करने से पूर्व हमें मानव-समाज की रचना पर भी कुछ ध्यान देना चाहिए। अन्य प्राणियों की अपेक्षा मनुष्य में चिन्तन-शक्ति की एक ऐसी विशेषता है जो इसे उनसे श्रेष्ठता प्रदान करती है। पशुओं का समूह जब बनता है तो उसमें कोई नियम या चिन्तन-शीलता परिलक्षित नहीं होती अतः उसे 'समज' कहा जाता है। परन्तु मनुष्य समुदाय कुछ आदर्शों और नियमों में बंधा होने के कारण 'समाज' के नाम से अभिहित किया जाता है। इस समाज के निर्माण में उसकी भावाभिव्यक्ति की सामर्थ्य ही प्रधान कारण होती है और इस भावाभिव्यक्ति का साधन है उसकी भाषा। अतः भावात्मक एकता की स्थापना के लिए भाषा की एकता अत्यन्त आवश्यक है। बाईबिल में एक कथा आती है कि एक बार पृथ्वी के सब मनुष्यों ने स्वर्ग में जाने का विचार किया। उन्होंने एक बड़ा सारा बुर्ज बनाना प्रारम्भ किया। यह देख कर ईश्वर ने सोचा कि इनको ऐसा करने से रोकना चाहिए अतः उसने उनकी भाषा में भेद कर दिया। वे भिन्न २ प्रकार की बोलियां बोलने लगे और एक दूसरे की भाषा को समझने में असमर्थ हो गए। इस प्रकार उन में एकता न रही और वे बुर्ज को पूर्ण न कर सके। चाहे यह कथा सत्य नहीं पर फिर भी एक महत्व-पूर्ण तथ्य की ओर अवश्य संकेत करती है कि किसी भी प्रकार की एकता के सम्पादनार्थ भाषा की एकता अत्यन्त आवश्यक है। आज गम्भीरता-पूर्वक देखने पर हमें ब्रिटेन और अमेरिका जैसे दो देश एक भाषा-भाषी होने के कारण इतने भिन्न नहीं दिखलाई पड़ते जितने भिन्न कि एक ही देश भारत के भिन्न २ भाषा वाले पंजाब और मद्रास प्रांत। इनके अन्दर जो कुछ एकता दिखलाई भी पड़ती है उसका मुख्य कारण संस्कृत भाषा ही रही है। अतः आज भावात्मक एकता के लिए एक भाषा का प्रचार और प्रसार अत्यन्त आवश्यक है।

अब हम यदि सभी भाषाओं पर दृष्टि डालें तो इसमें कोई सन्देह की बात नहीं रहती कि हिन्दी ही इस कार्य को भलि-भांति सम्पादित करने में समर्थ है। जबकि गुजराती, मराठी आदि भाषाएं गुजरात या महाराष्ट्र जैसे एक २ प्रान्त का ही बोध कराती हैं वहां हिंदी भाषा समस्त हिन्द देश का बोध कराती है। जहां अन्य भाषाएं केवल ३-४% लोगों द्वारा बोली जाती हैं वहां हिन्दी को देश की ४५%जनता बोलती है। जहां अन्य भाषाएं अपने एक प्रांत में ही बोली जाती हैं वहां हिन्दी कई प्रान्तों की सीमाओं को लांघकर उत्तर प्रदेश राजस्थान, पंजाब, दिल्ली, बिहार, मध्य प्रदेश आदि कई बड़े २ प्रांतों में बोली और समझी जाती है। जहां अन्य भाषाओं के साहित्यकार उन २ प्रान्तों के ही निवासी हैं वहां हिन्दी के साहित्यकार सभी प्रान्तों में विद्यमान हैं। बंगाल के मन्मथ नाथ गुप्त केरल के रांगेय राघव जैसे यशस्वी लेखक हिन्दी के साहित्यकार हैं। समस्त देश में पर्यटन करने वाले साधुओं की सधुक्कड़ी भाषा यह हिन्दी ही है। सभी तीर्थ स्थानों पर विभिन्न प्रांतों के लोगों के वार्तालाप का माध्यम हिन्दी ही है। वास्तव में हिन्दी किसी एक प्रांत की नहीं अपितु सभी प्रांतों की है। कलकत्ता में कलकतिया हिन्दी बोली जाती है तो बम्बई में बम्बईया हिन्दी और मद्रास में मद्रासी हिन्दी। यदि ऐसा न होता तो आज मद्रास में इतने हिंदी के चलचित्र न बनते। केरल में ५० प्रतिशत लोग अच्छी तरह से हिंदी जानते हैं। मद्रास में भी लोग बड़ी संख्या में हिंदी सीख रहे हैं।

आज हिंदी को संविधान में राष्ट्रभाषा स्वीकृत किया गया है परन्तु आश्चर्य की बात यह है कि इस को यह गौरवपूर्ण स्थान दिलाने में हिंदी भाषियों की अपेक्षा अहिंदी भाषियों का हाथ अधिक रहा है। हिंदी के सब से बड़े प्रचारक महर्षि दयानन्द गुजराती थे। इसी प्रकार गांधी जी भी गुजरात से सम्बन्ध रखते थे। डा० राजेन्द्र प्रसाद बिहार निवासी हैं तो हिंदी के महत्व को स्वीकार करने वाले लोकमान्य तिलक महाराष्ट्रीय थे। १६वीं शती में सुदूर महाराष्ट्र में भूषण कवि ने इसी भाषाके माध्यमसे राष्ट्रीय चेतना की लहर चलाई थी। इसी भाषा में गोस्वामी तुलसी दास ने 'राम चरित मानस' जैसा अमर ग्रन्थ लिखा जिस से झोंपड़ी से लेकर राज प्रासादों तक में रहने वालों ने समान रूप से प्रेरणा ली। इसी भाषा में हिन्दी वी के नाम से अमीर खुसरो ने साहित्य रचना की। मुसलमानी काल में भी हिन्दी को राज्य भाषा के रूप में माना गया। महाराष्ट्र के नामदेव, ज्ञानेश्वर, तुकाराम आदि सभी सन्तों ने हिन्दी में ही साहित्य रचना की। पंजाब में गुरु नानक देव ने तथा गुरु गोविन्द सिंह ने इसी भाषा के द्वारा एकता तथा वीरता का सन्देश दिया। यह हिन्दी किसी एक सम्प्रदाय की भी भाषा नहीं। रहीम, रस खान तथा जायसी जैसे मुस्लिम कवियों ने एवं इंशा अल्ला खां जैसे मुस्लिम साहित्यकारों ने भी इस भाषा में साहित्य-रचना की।

११ वीं शती से ले कर आज लगभग एक सहस्र वर्ष से हिन्दी ने ही लोगों को अपनी ओर आकर्षित किया है। मुस्लिम तथा सिख शासकों ने भी हिंदी को राज्य भाषा के रूप में स्वीकार किया था। आज से बहुत समय पूर्व बीसवीं शती के प्रारम्भ से ही गुरुकुल कांगड़ी तथा डी. ए. वी. महाविद्यालयों ने उच्चतम शिक्षा के लिये इसे माध्यम के रूप में स्वीकृत किया। आज हिंदी में किसी भी विषय पर पर्याप्त उच्चकोटि का साहित्य विद्यमान है। इस की लिपि देवनागरी सर्वश्रेष्ठ तथा उसे संस्कृत जैसी भारतीय भाषाओं की जननी भाषा की लिपि होनेका गर्व प्राप्त है।इसीलिए पिछले दिनों सर्वभाषा सम्मेलन में हिन्दी के पक्ष का सभी भाषाओं के साहित्यकारों ने पुष्ट किया तथा हिन्दी की उन्नति को अन्य सभी भारतीय भाषाओं की उन्नति का कारण बतलाया। वास्तव में देश की भावात्मक एकता के सम्पादन में संस्कृत के पश्चात् यदि कोई भाषा समर्थ है तो वह हिन्दी ही है, इस में कोई सन्देह नहीं हो सकता।

क्या हम पूर्ण स्वतन्त्र हैं

(लें० अरुण शास्त्री O.T. सी. आर कालेज रोहतक)

(गतांक से आगे)

और मान लिया जाय होती भी हो तो क्या अंग्रेजों के आने के पूर्व सभी अंग्रेजी जानते थे।

और यदि स्वतन्त्रा मिलने के पश्चात् हम थोड़ा२ प्रयत्न करते तो क्या आज तक हिन्दी के निष्णात नहीं हो सकते थे।

फिर एक बात यह भी है कि प्रान्तीय भाषा कोई भी हो राष्ट्र की भषा तो हिन्दी है और जितने भी देश परतन्त्र हुए स्वतन्त्र होने के पश्चात् क्या सभी की राष्ट्र भाषा अपनी मातृभाषा नहीं है।

क्या इसके कारण हमारी आत्मा का पतन नहीं हुआ। यह तो वह बात हुई कि हम अपनी मां का दूध पी कर राक्षी के दूध की प्रशंसा कर रहे हैं। और मां का गला घोट रहे हैं तथा अपनी मां को सिंहासन से हटा कर राक्षसी को सिंहासन पर बिठाकर स्वागत कर रहे हैं उस को हटाने के विषय में सोचते तक नहीं।

महान दुख है कि हमारी मां आज विमोचन कर रही है और दुःखी हो कर पुकार रही है कि पुत्रों जिस कोख से निकले उसी को लात लगा रहे हो। अतः अवश्य ही हमें अपनी मां के आंसु पोंछने होंगें।

मुझे १४ सितम्बर को जालन्धर में 'हिन्दी, दिवस' पर मनोनीत नेता श्री मोहन मैत्रेय M.A. का भाषण सुनने का अवसर प्राप्त हुआ।

उस से मुझे तो यही प्रेरणा मिली कि हम अपने शहीदों को सरासर धोखा दे रहे हैं। वे तो मां को दुष्टों की बेड़ियों से छुड़ा गये किन्तु उस के बाद हम उस राक्षसी को सिंहासन से न उतार अपनी मां को अभी तक भी सिंहासन पर न बिठा सके इस के लिए हमें भर तक प्रयत्न करना पड़ेगा।

गान्धी जी का वह वाक्य बार २ याद आ रहा है कि 'देश में अंग्रेज तो रहें परन्तु अंग्रेजी तथा उनकी सभ्यता न रहे। किन्तु अंग्रेज चले गये परन्तु अंग्रेजी तथा उनकी सभ्यता नहीं गयी।

जब पहले संविधान में अंग्रेजी को १९६५ तक रक्खा था अब फिर दुबारा उसको अनिश्चित समय तक राष्ट्र भाषा के रूप में स्वीकृत कर दिया क्या यह राष्ट्र भाषा हिन्दी के लिए कड़ी चपत नहीं है।

इस के लिए हमें भरसके प्रयत्न करना पड़ेगा हमें अपने नेताओं का विरोध करना पड़ेगा तथा इस के लिए जीवन दान भी देना पड़ेगा।

अब हमें पूर्व की भांति अपने को अपनी मा के बलिदान के लिए तैयार रहना होगा। यदि इस काय को संभाल सकेंगे तो आज के उदीयमान नवयुवक ही अपने श्रद्धेय वयो वृद्ध तथा गुरुजनों के आशीवाद से संभालेंगें। तथा पूर्वजों के इस कथन का भी ध्यान रखना होगा कि नवयुवकों में जोश होता है होश नहीं 'अतः अब हमें होश को भी ध्यान में रखते हुए राष्ट्र भाषा की रक्षा के लिए उद्यत रहना चाहिए।

दो आवश्यक कार्य

(लें० श्री गणेश दत्त जी आर्य सेवक, वान प्रस्थी दिल्ली)

देशोन्नति के लिए दो कार्य अत्यन्त आवश्यक हैं। पहिला यह कि देश में गोहत्या बन्द होनी चाहिए। गो रक्षा का लाभदायक कार्य निरन्तर चलता रहे क्योंकि भारत की सब कठिनाइयों का एक मात्र समाधान है गो रक्षा। गौ द्वारा हमें दूध, दही, माखन और घी अधिक मिलेगा। ताजा दूध, दही और माखन घी से देश वासियों को स्वास्थ्य लाभ होगा। विदेशी औषधियों पर करोड़ों रुपये के व्यय की बचत होगी। बैलों से कृषि कार्य सुविधा से होगा और कृषक वर्ग श्रमका सहित सुखी होंगे। अन्न की प्राप्ति होगी। बेकारी और निर्धनता दूर होगी। जब सब धन्धे में लग जायेंगे तो अन्न संकट नहीं होगा। पहिने के लिए वस्त्र मिलेंगे। इस प्रकार महंगाई की बला भी टल जायेगी।

दूसरा आवश्यक कार्य है शिक्षा पद्धति में परिवर्तन। लार्ड मैकाले ने यह शिक्षा पद्धति क्लर्क पैदा करने के लिए निर्माण की थी। फल स्वरूप आज का व्यक्ति दिन-प्रतिदिन अधिक कलह प्रिय, अधिक लोभी, अधिक छली कपटी, अधिक हिंसक, अधिक भोग विलासी, अधिक कामी और अधिक स्वार्थी होता जाता रहा है। अकर्मण्यता की यह दशा है कि प्रत्येक ग्रेजुएट केवल नौकरी करने का इच्छुक है! परिश्रम से जी चुराता है। कोई अन्य धन्धा पसन्द नहीं करता। उसकी यही इच्छा बनी रहती है कि कुलर्क बने और बाबु के रूप में दोनों हाथ पतलून में हों स्वतन्त्रता प्राप्त हुए सोलह वर्ष बीत गये परन्तु आज तक शिक्षा पद्धति में परिवर्तन नहीं किया गया हालांकि इसे शीघ्रति शीघ्र बदलना चाहिए था।

शारीरिक उन्नति के पश्चात् आत्मिक उन्नति की आवश्यकता है। प्रत्येक देशवासी (भारती) का शरीर पाषाण की भान्ति दृढ़ हो और बुद्धि कुल्हाड़ी के समान तीव्र। भगवती श्रुति ने अनादि काल से आदेश दे रखा है :—

अश्माभव परशुर्भव

ताकि शरीर दृढ़ होने पर कोई रोग आक्रमण न कर सके और बुद्धि बल बढ़ने पर कोई चार सौ बीस न कर सके। इसी में भारत का कल्याण है।

दयानन्द-वचनामृत

'स्वार्थी लोग तो दूसरों को हानि पहुंचा कर अपना प्रयोजन सिद्ध करते हैं। परन्तु सज्जन लोगो! आप इन अनाथ पशुओं की रक्षा तन-मन-धन से क्यों नहीं करते हो? धन्य है भारत आर्यजनों को, जिन्होंने, ईश्वर के नियमानुसार, परोपकार ही में तन, मन और धन लगाया और अब भी लगाते हैं। परोपकार के कारण ही आर्य राजे, महाराजे धनी जन आधी भूमि में जंगल रखा करते थे, जिससे पशुओं की पूरी रक्षा होती और पुष्कल दूध मिला करता। सुनो बन्धु वर्ग! यदि आपका तन-मन-धन गाय आदि उपकार के पशुओं की रक्षा में न लगे तो ये किस काम के हैं? देखो, परमात्मा ने विश्व में सारे पदार्थ परोपकार ही के लिए रच रखे हैं। आप भी इस पुण्य कार्य में, अपना सर्वस्व प्रदान कर दीजिए।'

(स्वामी सत्यानन्द जी)

सन्ध्या का लाभ पर अ[illegible] करने पर हानि

[लेखक—श्री भक्तराम जी (अफ्रीका वाले जालन्धर]

तार्किक शिरोमणि श्री पं० रामचन्द्र जी देहलवी शास्त्रार्थ महारथी को एक युवक कहने लगे—"चाचा जी सन्ध्या तो करते हैं परन्तु मैं उनके जीवन में कोई परिवर्तन नहीं देखता। मुझे आप कोई जीवित उदाहरण दें कि सन्ध्या करने से लाभ होता है।" पूज्य पण्डित जी ने उत्तर दिया—"यदि चाचा केवल मन्त्रोच्चारण करता है तो मन्त्र की रक्षा होती है। उसकी अपनी नहीं। यदि अर्थ न समझा और उसके फल स्वरूप आचरण न किया तो कोई लाभ नहीं। जिस प्रकार कोई (नुस्खा) को स्मरण करे परन्तु उसके अनुसार आचरण न करे तो कोई लाभ न होगा।

फिर उसी युवक ने पण्डित जी से प्रश्न किया—"अपनी ही में सन्ध्या करने में क्या हानि है?" माननीय पण्डित जी ने समझाया कि "एक वेद मन्त्र के अनेक अर्थ होते हैं 'दयानन्द तिमर-भास्कर' के रचयिता पं० ज्वाला प्रसाद जी मिश्र ने 'ओ३म् ये त्रिसा :...' मन्त्र के १६ अर्थ किये हैं।) संध्या में, जो एक अर्थ उचित समझे, लिख दिये हैं। यदि मन्त्र की रक्षा न की जाये तो वह खजाना जो इस के भीतर है खो जायेगा। यदि रोटी बनने के बाद पत्नी से कहो कि परौंठे बनाओ तो वह कैसे बनायेगी? हां आटे से परौंठा बन जायेगा। आटे से दलिया नहीं बनता हां (अलबत्ता) गेहूं से दलिया बन सकता है। एक अर्थ करके सस्ती प्रार्थना तो की जा सकती है। इस मन्त्र के जो और अर्थ उस में से निकल सकते हैं वे आप न जान सकेंगे इसलिए घाटे में रहेंगे। उपासना समझ कर करनी चाहिए। अन्यथा कोई लाभ न होगा।'

स्वास्थ्य के लिए प्रार्थना

आर्यजगत् के तपस्वी त्यागी पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज के हैदराबाद में तीन आपरेशन हुए हैं। समाज की दिन रात भ्रमण कर के निरन्तर विश्राम किये बिना सेवा करते रहने से शरीर की ऐसी दशा हो गई। आप्रेशनों के बाद उनका शरीर अस्वस्थ है। आर्य जगत सारे का ध्यान उनके स्वास्थ्य की ओर लगा है। ये सन्त महात्मा समाज की कीमती सम्पत्ति हैं। आर्य प्रादेशिक सभा के महामन्त्री श्री ला०सन्तोषराज जी ने सभा अन्तरंग की विशेष बैठक में पारित विशेष प्रस्ताव के अनुसार सारे समाजों संस्थाओं से महात्मा जी के स्वास्थ्य के लिए प्रार्थना करने का निवेदन किया है सब इस कर्त्तव्य को निभावें।

[illegible]ब के एक बड़े नगर [illegible] प्राप्त पुराने कार्यकर्ता के पत्र के कुछ शब्द

[illegible]पलने में बोली और [illegible] भगवान दास जी जहां अन्य [illegible] प्रिंसीपल डी. ए. वी. कालेज शोलापुर

[illegible] तो यह है, कि यहां का वातावरण सिवाय पगड़ी उछालने के कुछ नहीं। समाज में दो पार्टियां हैं कुछ प्रयत्न किये कि सुलझ जायें पर नहीं अब तो पंजाब में तोड़ा-ताड़ी रह गये। कोई सोचने का तथा एकता का तो शान्तिपाठ पढ़ा गया। समाज में एकता का नाश खूब शिखर पर है। स्वार्थ को पूरा करने वास्ते सिद्धान्तों की आहुति दे दी गई है। मन में अशान्ति और आंखों में पानी भरता है। यह क्या हो रहा है।

आप मुझे अपना बहुमूल्य सुझाव दें। क्या करूं? समाज में जाने वास्ते दिल नहीं करता। स्वार्थ के जो पुजारी हैं, उनका ही आज सब कुछ है। आपको पंजाब छोड़ना पड़ा। आपकी गर्जन एक थी जिस ने दुश्मनों को कम्पायमान कर दिया था।

आर्य प्रादेशिक सभा की आवश्यक सूचना

(१) आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि पंजाब से संबन्धित सभी आर्यसमाजोंको सूचित किया जाताहै कि सभाका वार्षिकअधिवेशन आर्य समाज लोहगढ़ अमृतसर में १६-२.-६४ रविवार को दोपहर के समय होना निश्चित हुआ है। ठहरने और भोजन आदि का प्रबन्ध समाज मन्दिर में ही होगा। आने वाले प्रतिनिधि महोदय तिथि और स्थान आदि नोट कर लें।

२. सभी समाजों के प्रतिनिधि बनने के फार्म २२-१-६४ तक सभा के कार्यालय में पहुंच जाने चाहिएं तथा अपनी-अपनी आर्य समाजों के दशांश भी शीघ्र भेजें।

—संतोषराज मन्त्री सभा

अक्षरों से ज्ञान

क—से कभी न करो न लड़ाई।
ख—से खामोश रहो तुम भाई।
ग—से गम तुम खाना सीखो।
घ—से घड़ी बनाना सीखो॥
च—से चट पट काम बनाओ।
छ—से छत्रपति बन जाओ।
ज—से प्रभु का जाप करो।
झ—से झगड़े नाश करो।
ट—से खूब टमाटर खाओ।
ठ—से ठंडक मन में लाओ।
ड—से [illegible] दूर [illegible]।
ढ—से ढारस खूब बंधाना।
त—से तरुवर खूब उगाओ।
थ—से सदा थकान भगाओ।
द—से दंगा कभी न करना।
ध—से धन का लोभ न करना।
न—से [illegible] मन में लाओ, गुस्सा को अन्दर ही [illegible]।
प—से पक्के वीर बनो।
फ—से नहीं फकीर बनो।
ब—से बदब दूर भगाओ।
भ—से भक्त पूर्ण बन जाओ।
म—से मन में दुःख मत लाओ।
हसते हसते बढ़ते जाओ।
य—से यश फैलाना सीखो।
र—से रंगत लाना सीखो।
ल—से लालच तुम मत करना।
व—से तुम वजीर भी बनना।
श—से शान्ति मन में लाओ।
स—से तुम सुभाष बन जाओ।
ष—से तुम षटकोण बनाना।
ह—से हनुमान बन जाना।
इन शिक्षाओं पर ध्यान करो।
दुनिया में कुछ नाम करो।

आलस्य सब दोषों का मूल है। इस को कदापि निकट न आने दो। प्रति क्षण परिश्रम से काम में लगे रहो।

न केवल पाप से अपितु पाप के विचार से भी बचना चाहिए।

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टैलीफोन न० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक १) ६ माघ २०२० रविवार—दयानन्दाब्द १४०–१९ जनवरी १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

सोमं पवित्रे आनय

हे प्रभो ! मेरे शुद्ध पवित्र मन-चित्त में सोम-अपने भक्तिरस को आनय-भर दो ! आपके नामरस का पान करने के लिये मैंने अपना मनः-पात्र पवित्र बना लिया है—इस में सोमरस भर दो।

तरत् स मन्दी धावति

स तरत्-वह नर-नारी इस भव-सागर से तर जाता है, पार कर जाता है। दौड़ता हुआ जाता है, जो मन्दी-भक्ति की मस्ती में मस्त रहता है। सोमरस का पीने वाला भवसागर पार करता है।

अस्मे श्रवांसि धारय

महादानी प्रभो ! मुझे उत्तम सुख, भला करने वाले अन्न तथा ज्ञान को प्रदान करें। मैं उत्तम अन्न, धन का तथा ज्ञान का प्यारा बन कर जीवन बिताऊं।

ताः सर्वा नश्यन्तु

भगवन् ! वे सारी बीमारियां, मन की बुराईयां हमारे शरीर तथा मन से परे हट जायें। सब का नाश हो जाये। कोई भी बीमारी तथा बुराई हमारे शरीर एवं मन में न आने पाये। सदा स्वस्थ तथा चिन्तारहित बनें।

अथर्ववेद, से

वेदामृत

सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथा पूर्व मकल्पयत् । दिवञ्च पृथिवी आन्तरिक्ष मथो स्वः

ऋक् मं. १० सू० १९० मं. ३

अर्थः—यह (सुर्याचन्द्रमसौ) सूर्य और चन्द्रमा (धाता) उसी सब को धारण करने वाले जगदीश्वर ने (यथापूर्वम्) जैसे पूर्व सृष्टियों में (अकल्पयत्) रचे उसी प्रकार इस सृष्टि में भी रचे हैं। तथा उसी प्रभु ने (दिवंच) इस द्युलोक को व (पृथिवी च) इस पृथ्वी लोक को तथा अन्तरिक्षम्) अन्तरिक्षलोक को तथा (स्वः) दूसरे लोक लोकान्तर को रचा।

भाव :—यह हमारी विशाल सृष्टि इस बार ही नहीं रची गई अपितु प्रवाह से इसी प्रकार ही पुरातन काल से चली आ रही है। सृष्टि के बाद प्रलय तथा प्रलय के बाद सृष्टि का क्रम इसी प्रकार से चलता ही रहता है। वही सर्व सामर्थ्य वाला सर्व वशी परमेश्वर पूर्व सृष्टियों के समान ही इस सूर्य चन्द्र आदि की रचना करता है। यह पृथ्वी लोक, ऊपर का अन्तरिक्षलोक, उस से भी ऊपर का दीप्यमान द्युलोक तथा सारे लोकलोकान्तर वही निर्माण करता है। अपने नियममें रखता है। क्या मजाल कि इस विशाल संसार के अन्दर घूमने वाले इन नक्षत्रों में किसी प्रकार की गड़बड़ हो जाए। समय में तनिक भी हेर-फेर हो जाए। प्रभु की ये विचित्र घड़ियां निरन्तर काम करती रहती हैं। मानव ! उसी विश्वपति की पूजा कर, भक्ति का प्रसाद प्राप्त कर—सं.

मनुष्य जन्मते हैं और मरते भी हैं ?
समुद्र की लहरें उठती हैं और शान्त भी हो जाती हैं ?
बालुका (रेती) में पद चिन्ह उठते हैं और शीघ्र ही मिट भी जाते हैं।

ऋषि दर्शन

त्रिविधं सर्वं जगत्

यह सारा जगत् तीन प्रकार का है। जितना भी विश्व का पसार है। इस के तीन प्रकार, तीन भाग और तीन रूप हैं। जड़ हो या चेतन भूमि हो या द्युलोक—सब कुछ इन तीन रूपों में ही आ जाता है।

सर्वोत्कृष्टं प्रकृत्यादिकम्

उन तीन रूपों में जगत् का उत्कृष्ट प्रथम रूप या प्रकार प्रकृति आदि का है। जिस प्रकृति से यह सारा विश्व बनता है। पंच तत्वों से शरीर आदि की रचना होती है यह प्रथम उत्कृष्ट रूप है।

क्षुद्र कृमि कीटादिकञ्च

जगत् का दूसरा और निकृष्ट रूप या प्रकार इन छोटे २ कृमियों और कीट पतंग आदि का है। यह विश्व का प्रकार है। नाना प्रकार के छोटे २ कीट पतंग आदि इस का निकृष्ट रूप है।

भाष्यभूमिका

अधिष्ठाता—संतोषराज सभा मंत्री सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

ज्ञान का सन्देश

(श्री प्रिंसिपल पं० रलाराम जी एम.एल,ए. सभा प्रधान का भाषण)

स्वामी दयानन्द प्रकाश के पैगम्बर थे। उन्होंने ज्ञान के प्रकाश का सन्देश दिया। शास्त्र इस विषय में एक मत हैं कि ज्ञान के बिना मुक्ति की अवस्था को नहीं प्राप्त किया जा सकता। ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः—ज्ञान के बिना मुक्ति नहीं मिलती। स्वामी दयानन्द अविद्या के नाश और विद्या की वृद्धि करने के लिए आये। इन स्कूलों, कालेजों आदि का आदर्श भी यही है कि विद्या का ज्ञान का प्रकाश किया जाये। भगवान् कृष्ण ने गीता में कहा है—सर्वं ज्ञानप्लवेनैव—इस भवसागर को तरने की नौका ज्ञान ही है, इसी से यह कष्टभरा संसार समुद्र पार किया जा सकता है। फिर आता है—न हिज्ञानेन सदृशं पवित्रम्-ज्ञान से बढ़ कर पवित्र तथा पवित्र करने वाला दूसरा तत्व कोई भी नहीं है। जल से शरीर ही पवित्र बनाया जा सकता है, किन्तु बुद्धि की शुद्धि तो ज्ञान से ही होती है। यह जल मन और आत्मा को शुद्ध नहीं करता। शुद्धता के लिए कहा गया है—**Cleanliness is next to Godliness.** सब से अधिक पवित्र चीज ज्ञान ही है। पवित्र बनाने के लिए भगवान कृष्ण ने नदियों का नाम नहीं लिया। वैसे यह नदियां निर्मल जल रखती हैं। परन्तु इन का शुद्ध जल शरीर के लिए है, ज्ञान मन और आत्मा की शुद्धि के लिए नहीं है। यदि कोई थोड़ा भी पढ़ा लिखा है, तब भी किसी चिन्ता की आवश्यकता नहीं है। गीता में ज्ञान की बड़ी महिमा लिखी है। जो व्यक्ति निष्काम कर्म करता है और स्वार्थ रहित हो कर सेवा करता है, उस की बुद्धि चमकती है। ऐसा मनुष्य कुछ समय बाद ज्ञान प्राप्त कर लेता है। कहा है **There is no more religion than** selfelssness निष्काम या निस्वार्थता से बढ़ कर और कोई धर्म नहीं है।

काम कर के जीविका कमाना स्वार्थ नहीं है। जब कोई अध्यापक कलास में जाये तो उस समय अपने विद्यार्थियों को योग्य बनाने में लग जाये वह स्वार्थी नहीं। रोटी तो समाज देता है। एक वस्तु के बनाने में कितने लोगों का हाथ होता है। अकेले एक कोट के बनाने में कितनों के हाथ लगे हैं। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। सब का अन्नदाता भगवान् है, कोई व्यक्ति किसी व्यक्ति का अन्नदाता नहीं है। लोग तो केवल निमित्त होते हैं। जो आदमी काम से चित्त नहीं चुराता, वह निष्कर्मी है। ज्यों २ यह मात्रा बढ़ती जाती है, वह ज्ञान के मार्ग पर बढ़ता जाता है। स्वामी दयानन्द ने इसी लिए ज्ञान के प्रचार पर बड़ा बल दिया, अज्ञान का खण्डन किया। इस के सिवाय और कोई चारा नहीं था। गुरु ने भी वेद प्रचार करने का आदेश दिया। इस जाति को अन्धविश्वास से ऊपर उठाया। इस का राष्ट्रिय उद्धार किया।

देश का पतन क्यों हुआ। केवल इस लिए नहीं कि हम दया और अहिंसा को मानते थे। दया अहिंसा तो हमारे जीवन के स्तम्भ हैं। हमारे पूर्वज वीर थे पर यह शिकायत है कि वे नीति को नहीं अपनाते थे। उन की वीरता पर कोई सन्देह नहीं। मुस्लिम काल में राजपूत वीरों ने जो वीरता दिखाई वह विश्व के सारे इतिहास में नहीं मिलती। पीछे हटना कायरता नहीं होती, कई बार समय देख कर पीछे हटना भी नीति होती है। उस युग में जब राजपूत वीरांगना माता अपने वीर पुत्र को संग्राम भूमि में मर जाने के बाद देखने जाती थी तो सर्वप्रथम उसको छाती पर या पीठ पर लगे हुए घाव को देखती थी—उसकी छाती पर लगे घावों को देख कर प्रसन्न होती थी कि मेरा पुत्र वीर है, वीरता से स्वर्ग में गया है। ऐसी बात किया में थी, कथनी में न थी। पद्मिनी की बहिनें सैंकड़ों की संख्या में अपने हाथों से चिताएं जला कर भस्म हो गईं यह बात कहनी सरल है पर करना कठिन है। ऐसी वीरता के होने हुए भी फिर राष्ट्र का पतन क्यों हुआ।

इसके वास्तविक कारण को स्वामी दयानन्द ने देखा। तभी अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करने के नियम पर जोर दिया। इतिहास में आता है कि सोमनाथ मन्दिर पर जब आक्रमण हुआ तब ६० हजार सेना अपने पास विद्यमान थी। आक्रमणकारी गजनवी के पास २० हजार सेना ही थी। मन्दिर में अतुल सम्पत्ति के भण्डार भरे थे। लेनपूल Lanepool जैसे प्रसिद्ध इतिहास लेखक लिखते हैं कि इतनी सैनिक शक्ति होने पर भी भारतीय वीरों ने शत्रु की सेना का मुकाबिला न किया। उन्होंने कहा कि हम तो सोमनाथ के पड़ौसी हैं, देवता के होते हुए हमें लड़ने की क्या आवश्यकता है। अपनी सेना उस सोमनाथ देवता को ही देखती रही, मुकाबिले पर न आई। परिणाम यह था कि शत्रु ने मन्दिर पर आक्रमण कर दिया। मन्दिर के भारतीय योद्धा मन्दिर की फसील पर बैठ कर हंसते रहे कि अभी २ सोमनाथ देवता इन सब को मौत के घाट उतार देगा। हमारा इतना बड़ा देवता इन को भस्मी भूत कर देगा। परन्तु हुआ कुछ भी न। शत्रु ने मन्दिर तोड़ दिया। २५ हजार भारतीय वीरों को वहीं मार कर अन्दर जा कर मूर्ति तोड़ी, उसके दो टुकड़े कर दिये। अपने देश में जाकर मूर्ति के टुकड़े मस्जिद की सीढ़ियों पर लगा दिये ताकि मोमिनों के पैरों तले प्रतिदिन रौंदे जायें। इस पराजय का कारण अज्ञान तथा अन्धविश्वास था—जो हमें ले बैठा। वीरता थी पर अज्ञान ने वीरता को भी कायरता में बदल दिया।

(अपूर्ण)

माननीय प्रिंसिपल रलाराम जी एम. ए. एम. एल. ए. प्रधान आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर आर्य समाज की विभूति हैं, इस में कोई सन्देह नहीं। आर्यसमाजों के जल्सों पर आपके भाषण विशेष रस तथा गम्भीरता लिये होते हैं। इतना सरल सुगम और फिलास्फी से भरा बोलते हैं कि छोटा बड़ा प्रत्येक झूम उठता है। ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे हम परिवार में बैठे उन्नति की गोष्ठी कर रहे हैं। यही कारण है कि आर्यजगत के प्रेमी पाठकों की सेवा में आपके सारगर्भित प्रवचनों को समय २ पर पहुंचाते रहे हैं। यह प्रसाद भी प्रस्तुत है—सं०

'भीखा' भूखा कोई नहीं
सब की गठड़ी लाल।
गिरह खोल नहीं देखते
इस विध भये कङ्गाल॥

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२०, १९ जनवरी १९६४ [अंक ३

वसन्त ही वसन्त

मौसम सारे सुन्दर हैं, प्रत्येक ऋतु में कोई न कोई विशेषता है। फिर भी वसन्त को ऋतुराज कह कर अतीत युग से पुकारा जाता है। लिखने वालों तथा चर्चा करने वाले सारे लोगों ने वसन्त का यही नाम और गुण बताया है। सचमुच यह है भी सारे मौसमों का राजा। जब यह आता है तो प्रकृति के राज्य की दशा ही बदल जाती है। चारों ओर जीवन तथा जागृति पैदा होने लगती है। सोना वाली धरती पर एक नया मुस्कराता युग आंखें खोल देता है। सर्वत्र उल्लास, आनन्द, प्रसन्नता एवं प्रमोद का प्रवाह बह निकलता है। वसन्त में क्यारियां, पत्ते फूल, पर्वत और सारा जीवन ही नया जीवन पाता है। कवियों ने तो ऋतुओं के इस राजा वसन्त के सम्मान में स्वागत करते या इसकी आरती उतारते हुए कमाल ही कर दिया है। पतझड़ ने हिमपात ने सारी धरती को समेट ही दिया था सारे वृक्षों को पत्रहीन बना कर शोभा से शून्य करके उनका रूप रङ्ग ही बिगाड़ दिया था। परन्तु सब दिन होत न एक समान। अत्याचारी का समय सदा एक-सा नहीं रहता—इस नियम ने वसन्त राजा को लाकर श्री हीन करने वाले हिमपात या पतझड़ के मौसम को कहा अब चलो, बहुत कर चुके। अब हम आ गये नया जीवन देकर सम्पत्ति से सब को पुनः भर देंगे।

प्रकृति के समान समाज के समूचे जीवन पर भी हिमपात होता है, भयंकर पतझड़ का मौसम आकार श्री हीन करने में लगा रहता है। समाज के रक्त को ठंडा कर उस के संचार को मन्द कर देता है। एक बार तो सारा समाज ही रक्त-हीन या अतीव शिथिल हो जाता है। लोग समझते हैं कि समाज गया, राष्ट्र की वीर भावना समाप्त पतझड़ ने सारे जीवन के पत्ते झाड़ कर रख दिये पर वसन्त आकर सारी शिथिलता दूर करके नया जोश, उत्साह, उमंग और उल्लास भर देता है। महापुरुषों का जीवन कार्य और उनका सन्देश वसन्त का रूप होता है। इस से सारा समाज पुष्पित हो जाता है।

आज देश के विचारों में शिथिलता आगई है। चारों ओर निराशा ने घेरा डाल रखा है। आर्य समाज के जीवन में थोड़े बहुत ठण्डे विचारों ने उल्लास कम करना आरम्भ किया हुआ है। आर्यो आज इस पतझड़ के बाद प्रकृति में तो वसन्त की मौसम आगई है। किन्तु समाज के जीवन में वसन्त लाना आपका काम है। ठण्डे रक्त और हिम से प्रभावित विचारों को वीरता भरे वसन्त से भरना आप का कर्तव्य है। समाज में वसन्त ला दो ताकि इस वर्ष आर्यसमाज विशेष काम कर सकें। आज सारे देश में वसन्त का उल्लास भर दो।

—त्रिलोकचन्द्र

'नारायण' सुख भोग में
तू लम्पर दिन रैन।
अन्त समय आयो निकट
देख खोल के नयन॥

सभा का वार्षिक अधिवेशन

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर एक व्यवस्थित, संगठित तथा प्रसिद्ध सभा है। राष्ट्र विभाजन से पूर्व भी इस सभा से सम्बन्धित आर्य समाजों का पंजाब प्रान्त में तो शानदार विस्तार और कार्य तो था ही। इस के साथ बलोचिस्तान में भी इस के साथ सम्बन्ध रखने वाली विशाल समाजें, शिक्षण संस्थाएं तथा औषधालय अपने २ लोक सेवा धर्म सेवा के पवित्र काम में लगे हुए थे। रावलपिण्डी, पेशावर, टांक के, सरगोधा, लायपुर, जेहलम, मुलतान, लाहौर, गुजरात के, कराची, कोहाट, शिकारपुर, सक्कर, बहावलपुर के तथा कोयटा, फोर्टसण्डेमन, लोरालाई नगरों की समाजों के शानदार जल्सों का चित्र सामने आ जाता है। भारत में जन सेवा के कार्य में इस सभा ने कांगड़ा, कोहाट विहार राजस्थान मालाबार, उड़ीसा, बंगाल के अकालों, भूकम्पों तथा पीड़ा में जो निष्काम सब की सेवा की है, वह तो इतिहास के पन्नों में सोने के अक्षरों में लिखी जायगी। सभा के महान कर्णधार स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी ने जो महान् कार्य किया। उन के साथ और बाद में महात्मा आनन्द स्वामी जी, श्री. प्रि. मेहरचन्द जी, पं. मेहर चन्द जी, बलराज जी, प्रिंसिपल देवी चन्द जी, प्रि. सूर्यभानु जी, प्रि. रलाराम जी ने जो भी कार्य किया और करते हैं। उस पर सारे समाज को गर्व है। अब भी यह सभा अपने उसी धर्म प्रचार को उसी प्रकार से दिन रात एक कर के करती जा रही है। इस का सारा श्रेय सभा का हितचिन्तकों को ही है।

प्रतिवर्ष इस का साधारण अधिवेशन होता है, जिस में गतवर्ष का निरीक्षण, अगलेवर्ष के लिए नाना विध बजट तथा अधिकारियों का निर्वाचन होता है। यह सभा की परम्परा है कि आर्यप्रादेशिक सभा का वार्षिक अधिवेशन बड़े प्रेम तथा भावना से सम्पन्न होता है। सेवा के काम मे यही भावना समाज तथा सभा को आगे ही आगे ले जाती है। इस वर्ष फरवरी मे सभा का वार्षिक साधारण अधिवेशन आर्यसमाज लोहगढ़ अमृतसर में होना नियत किया गया है आर्यसमाज लोहगढ़ के माननीय प्रधान, सभा के पुराने सहयोगी और हितैषी श्री ज्ञानी पिण्डी दास जी सभा के अन्तरंग सदस्य भी हैं। उन के तथा उन के समाज के मान्य सज्जनों की शुभ इच्छा, भावना प्रेम के नाते सभा की अन्तरंग सभा ने लोहगढ़ आर्यसमाज अमृतसर में यह अधिवेशन करना स्वीकार कर लिया है। सभा मन्त्री श्री. ला. सन्तोषराज जी ने इस की सूचना भी आर्य-जगत को दे दी है। श्री. ज्ञानी पिण्ड दास जी प्रधान लोहगढ़ समाज अमृतसर के दर्शन करने पर यह देख कर, जान कर बड़ी प्रसन्नता हुई है कि श्री. ज्ञानी जी अपने नगर के सारे समाजों के साथ सभा के इस अधिवेशन को शानदार ढंग से सफल बनाने में जुटे हुए हैं। इस वर्ष तो स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी की सौ वर्षीया जन्म शताब्दी भी मनानी है। इस लिए भी यह अधिवेशन महत्वपूर्ण होगा

—त्रि. चन्द्र

दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय और आर्य समाज

ले०—श्री देशबन्धु जी विद्यावाचस्पतिवि०वै०शो०सस्थान होशियारपुर

हम को अपने संस्थापक महर्षि दयानन्द, स्वनाम धन्य पं० लेखराम तथा दिवंगत स्वामी श्रद्धानन्द एवं त्यागमूर्ति हंसराजादि के बलिदान का बड़ा अभिमान है और उस बलिदान क भरोसे हम सारे संसार में 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' का स्पन देखना चाहते हैं। निस्संदेह जिन संगठनों और समाजों की नींव शहीदों के खून और हड्डियों से भरी जाती है, वे संसार में अमर हो जाती हैं। इस का यह अर्थ कदापि नहीं है कि उनका अस्तित्व हमेशा के लिए अक्षुण्ण बन जाता है, विवेक भ्रष्ट होने के बाद पतन तो उनका भी होता ही है, मराठों और राजपूतों ने हम से भी कहीं अधिक महान त्याग और बलिदान किया है। वे जातियां उसके बाद भी उन्नति के शिखर पर कायम नहीं रह सकीं तब आर्य समाज उनकी तुलना में बलिदान की इस छोटी पूंजी के सहारे कैसे सदा जीवित रह सकता है? आज हम पत्रों में पढ़ते हैं कि 'आर्य समाज का प्रचार रुक चुका।'

अहो! आर्यस्कूल और कालेज खोलने वाले इस धुन में हैं कि किसी तरह इन कालजों से महर्षि दयानन्द जैसे बाल ब्रह्मचारी दल बल सहित निकल कर कहते हुए कि 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' यह है मृत्यु शैया पर पड़े हुए हमारे मुर्दे की पुकार।

जनता के उद्धार के लिये हमने आर्य स्कूल डी० ए० वी० कालेज खोले कि इस में से वेद के प्रचारक निकलें परन्तु आज हमारी योजनाओं का भण्डा फूट रहा है। हमने जनता से रुपया लेकर दो पैसे की वस्तु भी उनके मत्थे नहीं मारी। यदि इन स्कूल और कालेजों से धर्म प्रचारक निकलते तो दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय और दयानन्द उपदेशक महाविद्यालय की स्थापना क्योंकर होती।

आओ! आज हम सब मिलकर इस विद्यालय पर आद्योपान्त विचार करें। यदि हम ही इस पर विचार न करेंगे तो और कौन करेगा?

आज से लगभग ८१ वर्ष पूर्व डी. ए. वी. कालिज प्रबन्धकर्त्री सभा लाहौर ने वैदिक धर्म और महर्षि दयानन्द के स्वप्नों का प्रचार एव प्रसार के निमित्त इस महाविद्यालय की स्थापना की थी। सर्वप्रथम इस का कायभार श्री पं० विश्वबन्धु जी शास्त्री एम. ए. एम. ओ. एल. को सौंपा गया था। इन के देखरेख में यह संस्था प्रतिदिन सर्वांगीण उन्नति करती चली गई। लाहौर में स्वर्गीय बक्शी जैशोराम जी एडवोकेट ने विद्यालय को पर्याप्त भूमि प्रदान की थी। जिस में विद्यालय का अपना लाखों रुपयों का विशाल-भवन एवं छात्रावास तैयार हो गए थे और विद्यालय बहुत ही अच्छी स्थिति में चल रहा था। आचार्य विश्वबन्धु जी के अनुपम पाण्डित्य एवं गम्भीर विचारों से विद्यार्थियों को एक अद्भुत प्रेरणा मिलती थी। जिस के परिणाम स्वरूप भारत के विभिन्न प्रान्तों से आए हुए अनेक विद्यार्थी वहां शिक्षा प्राप्त करते थे। कई वर्षों तक यह संस्था बड़े सुन्दर ढंग से चलती रही, आचार्य जी के संस्था से अवकाश ग्रहण कर लेने पर डा. परमानन्द जी और ऋषिराम जी को कार्य भार सौंपा गया। उन्होंने भी तन्मयता के साथ विद्यालय की उन्नति के लिए बहुत समय तक कार्य किया। उस का फल यह था कि उस समय में विद्यालय के स्नातक निकल कर देश के कोने २ में प्रचार कर रहे थे उस को देखकर, आर्य जन्ता यह सोच रही थी चन्द दिनों में ही सारे भारत वर्ष में वैदिक धर्म का प्रचार होगा।

भारत के दुर्भाग्यपूर्ण विभाजन बड़वानल से हमारे स्वप्न हो नष्ट हो गये परन्तु यह संस्था भी इस से मुक्त न हो सकी और १९४७ के पश्चात् कुछ समय तक इस के सम्बन्ध मे कोई स्थिरव्यवस्था न बन सकी। पहले इसे श्याम चौरासी में चलाने का प्रयत्न किया परन्तु किन्हीं कारणों से स्थगित करना पड़ा। इस के बाद पुनः जालन्धर में इसे आरम्भ किया गया और अन्त में वहां से भी उठाना पड़ा। १९५६ में डा. मेहरचन्द्र जी हिसार पधारे और यह निश्चय हुआ कि इस विद्यालय को हिसार में स्थापि किया जाय भूमी वा प्रबन्ध स्थानीय प्रबन्ध कर्त्री सभा ने किया। इस के साथ २ डी.ए.वी. कालेज प्रबन्ध कर्त्री सभा ने १२०००) रु० भवन किर्माण के लिए प्रदान किए और विद्यालय को प्रतिमास ५०० रु. देने का भार अपने ऊपर लिया। तो भी यह संस्था सुचारू रूप से न चल सकी। १९५९ में डा. मेहरचन्द जी महाराज ने इस के सम्बन्ध में श्री ज्ञान चन्द जी आचार्य दयानन्द कालेज से इस संस्था को उन्नत करने के विषय में विचार विमर्श किया। उन के अनुरोध पर श्री ज्ञानचन्द जी एम. ए. ने १९६० से कार्य भार संभाल ने का वचन स्वीकार किया। तब से विद्यालय की स्थिति में परिवर्तन हो रहा है। जिस समय श्री पं. ज्ञान चन्द जी एम. ए. आचार्य नियुक्त हो गये थे तब एक ही अध्यापक थे परन्तु उस के पश्चात् उन्होंने भारत वर्ष के उच्चकोटि के विद्वानों को अर्थात् (१) श्री पं. अमरसिंह जी 'आर्यपथिक' सिद्धांतों के प्राध्यापक (२) श्री पं. जगदीश चन्द्र जी दमनाचार्य, वेद और दर्शनों के प्राध्यापक (३) श्री पं. सत्यप्रिय जी शास्त्री, सि. शिरोमणी संस्कृत साहित्य और सिद्धांत के प्राध्यापक (४) श्री पं. राम विचार जी एम.ए. उपनिषद् और अंग्रेजी के प्राध्यापक (५) श्री पं. रामस्वरूप जी शास्त्री व्याकरण के प्राध्यापक के के रूप में बुलाया, इन पण्डितों के अनुपम पाण्डित्य एव गम्भीर सांस्कृतिक विचारों से विद्यार्थियों को एक अद्भुत प्रेरणा मिलती चली गई। जिस के परिणाम स्वरूप भारत के विभिन्न प्रान्तों से अर्थात केरल, आंध्र, महाराष्ट्र, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, बिहार, ओड़िसा, आसाम और पजाब प्रदेश से अनेक विद्यार्थी यहां शिक्षा प्राप्त कर रहे थे।

यहां छात्रों को संस्कृत, व्याकरण वेद, दर्शन उपनिषद वैदिक सिद्धान्तादि का सम्यक ज्ञान कराया जाता है और छात्रों को भोजन वस्त्र एवं पुस्तकादि का समस्त व्यय विद्यालय हो वहन करता है इस के साथ इस विद्यालय का उद्देश्य आर्योप देशक, पुरोहित, समाज सेवक, संस्कृत एव हिन्दी के उत्तम लेखकादि बनाना है विद्यालय का वातावरण बहुत ही शान्त, सुस्थिर, स्वास्थ्यवर्धक एवं आध्यात्मिक भावना से ओत प्रोत हैं, प्रतिदिन प्रातः सायं संध्या, हवन स्नानादि कार्य करना पड़ता है। इस को देख कर भूतपूर्व पंजाव के राज्यपाल नरहरि विष्णु गाडगिल ने इस विद्यालय के प्रथम दीक्षान्त

शेष पृष्ठ ६ पर

गन्दे चल-चित्रों से देश समाज तथा राष्ट्र का पतन

(ले०--ब्रह्मानन्द जिज्ञासु 'विद्यावाचस्पति' (हिसार)

(गतांक से आगे)

देखिए जिस इंग्लैण्ड ने देश को वर्षों गुलाम रखा, देश भक्तों को कष्ट दिए उस इंग्लैण्ड की रानी जब भारत आयी तो उस रानी एलिजाबेथ के स्वागत समारोह में २३ करोड़ रुपया खर्च किया गया। जबकि देश में लाखों व्यक्तियों को समय पर खाने के लिए रोटी, शरीर ढकने के लिए कपड़ा, तथा सिर ढकने के लिए छप्पर तक नहीं। यदि देश में सच्चा प्रजातन्त्र राज्य होता तो विदेशी लोगों पर करोड़ों रुपए खर्च नहीं किए जाते। कांग्रेस ने करांची अधिवेशन में अधिक से अधिक पांच सौ रुपया वेतन लेने के लिए प्रस्ताव पास किया था। गांधी जी ने १९४७ में अन्य कई सुझाव देते हुए ७ सौ रुपये मासिक रखे। किन्तु आज केन्द्रीय सरकार के एक-एक मंत्री पर पांच-पांच हजार रुपये मासिक खर्च होता है। तो भी जनता त्राहि-माम् त्राहि-माम् की ही पुकार मचा रही है।

चल-चित्र को चालू करने में तीन का होता है फिल्म निर्माता, अनुमतिदाता, और देखने वाला! यदि फिल्म निर्माता गन्दे फिल्मों का निर्माण न करें, सरकार गन्दे फिल्मों की अनुमति चालू करने की आज्ञा न दे, जनता इन गन्दे फिल्मों न देखे तो चलचित्राकार कभी सफल हो नहीं हो सकता। इसलिए मेरी इन तीनों से प्रार्थना है कि—फिल्म निर्माता यदि देश समाज राष्ट्र एवं जनता को आदर्श चरित्रवान् बनाना चाहते हैं तो कृपया गन्दे फिल्मोंका निर्माण न करें, सरकार ऐसे फिल्मों पर प्रतिबंध लगावे जनता अपने माया मोह को त्याग कर इसके लिए आंदोलन करे तभी देश समाज राष्ट्र का कल्याण हो सकता है अन्यथा नहीं।

गन्दे फिल्मों का द्रष्टा लाख जन्म भी अपने चरित्र को ठीक नहीं रख सकते क्योंकि इसमें कामुकता, शृंगार, असभ्य परिहास चुम्बन आलिगन, गर्जन उत्तेजना, नग्न नृत्य आदि से परिपूर्ण होती हैं, पतन की इतनी पराकाष्ठा हो गई है कि फिल्म

देखने वाले नवयुवक के पास अपनी

देखने वाले के नवयुवक के पास अपनी सगी बहन भी सुरक्षित नहीं समझी जाती। इसलिए सभी आर्य बन्धुओं एवं नवयुवक तथा नवयुवतिओं से प्रार्थना है कि अपने चरित्र को उन्नत करते ही इससे दूर हटें।

★

दयानन्द-वचनामृत

"कोई गाय आदि पशु (यदि) सरकारी जङ्गल में जाकर घास-पात खावे तो उसकी और उसके स्वामी की दुर्दशा होती है। जङ्गल में आग लग जावे तो चिन्ता नहीं, किन्तु पशु न खाने पावें।......ध्यान देकर सुनिये, जैसा सुख-दुःख अपने आप को होता है, वैसा ही दूसरों को भी समझा कीजिये। यह भी ध्यान में रखिये कि पशुओं से और खेती-बारी आदि का काम करने वाले मनुष्यों के अधिक पुरुषार्थ ही से राजा का ऐश्वर्य बहुत बढ़ता है। इसके विपरीत करने से वह नष्ट हो जाता है। प्रजा से राजा इस लिए कर लेता है कि उनकी यथावत् रक्षा करेगा, न कि इस लिए कि प्रजा के सुख कारक गाय आदि पशुओं का नाश किया जाये। आज तक जो हो गया सो हो गया, परन्तु आगे को आंखें खोलिये। हानि कारक कर्मों को न कीजिये और न किसी को करने ही दीजिये।"

(स्वामी सत्यानन्द जी)

प्रातः स्मरणीय—

महात्मा हंसराज जी की जन्मशताब्दी और हम

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर ने ७-१२-६३ को महात्मा हंसराज जन्मशताब्दी मनाने का निश्चय किया था और साथ ही तिथि और स्थान आदि चुनने, कार्यक्रम बनाने और धन संग्रह करने के लिए एक उपसमिति बनाई थी। इस निश्चय के अनुसार उक्त उपसमिति के सदस्यों की सेवा में एतर्थ सूचना भेजी थी, इस प्रार्थना के साथ कि वे सदस्यता की स्वीकृति से सभा को सूचित करने की कृपा करें और साथ ही कुछ ऐसे सज्जनों के नाम सुझायें जिन को इस उपसमिति का सदस्य बनाया जाए कि उनके कीमती परामर्श तथा ठोस सहायता से समिति का कार्य आगे बढ़े। साथ ही मनोनीत सदस्यों से प्रार्थना की थी कि वे अपनी ओर से कार्यक्रम सम्बन्धी कुछ सुझाव भी दें कि इन पर विचार करके कार्यक्रम की रूप रेखा बनाई जावे। बहुत से सज्जनों ने सहर्ष स्वीकृति प्रदान कर दी है। अनेक सज्जनों ने अपने सुझाव भी भेजे हैं। उनका धन्यवाद। जब उपसमिति की बैठक बुलाई जाएगी तो इन सुझावों पर उस में विचार करेंगे और इनकी सहायता से कार्यक्रम तैयार किया जाएगा। परन्तु कुछ सज्जन ऐसे हैं जिन्होंने अभी तक स्वीकृति प्रदान नहीं की और न कुछ सुझाव ही भेजे हैं। सभा ने उनको महात्मा जी का अनन्य भक्त समझते हुए, उनकी महात्मा जी पर अगाध श्रद्धा जानते हुए ही उनका सदस्य बनाया है और उनकी आर्य समाज की सेवा, आर्य संस्थाओं से प्रेम की कदर को सम्मान की दृष्टि से देखते हुए ही, उनकी सहायता और परामर्श का मोल जानते और समझ कर ही उन से प्रार्थना की गई थी। उन महानुभावों से प्रार्थना है कि शीघ्र स्वीकृति प्रदान करें, कुछ अपने मित्रों के नाम भेजें कि जो इस पुण्य कार्य में सभा का हाथ बटायें और कुछ सुझाव लिख भेजें जिस से सुन्दर, ठोस, उपयोगी कार्यक्रम तैयार हो सके।

क्या मुझे यह कहने की आवश्यकता होगी कि महात्मा हंसराज जी महाराज ने सारे देश पर साधारणतः और पंजाब पर विशेषतः महान उपकार किये हैं। उनके उपकार से हमारा सब पंजाबियों का बाल-बाल बंधा हुआ है। हमें भगवान ने यह सुअवसर दिया है, आओ हम कुछ कर लें और उनके ऋण से उऋण होने का यत्न करें। मैं जानता हूं कि उनके ऋण को चुकाना कठिन है फिर भी किसी हद तक सफलता मिल जाए, यह भी अहोभाग्य है।

—सन्तोषराज मन्त्र सभा.

दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय और आर्य समाज

(पृष्ठ ४ का शेष)

समारोह पर एक महत्व पूर्ण सन्देश दिया था कि "मुझे इस विद्यालय के सात्विक वातावरण को देखकर प्राचीन ऋषि मुनियों के विद्यालयों का स्मरण हो आया।"

इस प्रकार की उन्नति देखकर हम आशा कर रहे थे कि अब आर्यसमाज का भविष्य उज्वल होगा। परन्तु दुःख है कि भारत पर चीन ने हमला कर दिया, और इधर धनपतियों ने पैसा देना बन्द किया। उसका यह फल हुआ कि श्री अमर सिंह जी 'आर्यपथिक' और श्री पं० जगदीश चन्द्र जी दर्शना चार्य को विद्यालय छोड़ना पड़ा तथा विद्यार्थी भी कम होगये। इस समय २५ विद्यार्थी अध्ययन कर रहे हैं।

इस गिरती हुई हालत को देखकर, हम कैसे कहसकते हैं कि अब आर्यसमाज की उन्नति होगी। मुसलमान और ईसाइयों के इस समय बड़े२ महाविद्यालय देश के कोने २ में चल रहे हैं, जैसे कि देवबन में ही १५०० विद्यार्थी कुरान पढ़ते हैं। परन्तु हम आर्यो का एक ही विद्यालय है और जिस में हमारे २५ विद्यार्थी हों? अब बताओ कैसे वैद प्रचार होगा?

यदि इस विद्यालय को हम प्रत्येक आर्य समाजी एक २ रुपया मासिक भेजेगे तो भी वह दिन दूर नहीं होगा कि हमारे भी हजारों विद्यार्थी पढ़ लिखकर वेद के प्रचारक बनेगे। हे आर्यो! भगवान दयानन्द के पद चिन्हों पर चलने वाले इस विद्यालय की तेजोमय अग्नि में आपका पैसा पड़कर कुन्दन बन सकता है। तभी महर्षि दयानन्द के स्वप्न पूरे हो सकते हैं।

महात्मा हंसराज जी की जन्मशताब्दी

(श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा जालन्धर)

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब, जालन्धर के तत्वाधान में महात्मा हंसराज जन्म शताब्दी उपसमिति की बैठक १२-१-६४ को जालन्धर में हुई। इसमें उस महोत्सव को धूमधाम और उस देवता के नाम और काम के मुताबिक मनाने का निश्चय किया।

सर्व प्रथम तिथि और स्थान का प्रश्न था। सोच विचार के बाद २३, २४, २५ अक्तूबर १९६४ की तिथियां चुनी गई और स्थान जालन्धर का इस गौरव के उपयुक्त इसलिए समझा गया कि पूज्य महात्मा जी द्वारा स्थापित आर्य-प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य कार्यालय यहीं पर है। यह कार्यालय सभी आर्यसमाजों का नियन्त्रण करता है, वेद प्रचार का कार्य करता है और वैदिक साहित्य का प्रचार करता है। पंजाब में जालन्धर ही वह स्थान है जो आर्य शिक्षा संस्थाओं का महान् केन्द्र है। यह संस्थाएं जहां जीवन की सभी आवश्यकताओं को पूरी करती हैं, जहां आकार में महान् है, वहां देश भर में अपना नाम भी रखती हैं। और इन संस्थाओं के बनाने, धर्म प्रचार करने, वैदिक सभ्यता का नाद बजाने में ही उस महान तपस्वी ने जीवन का प्रति क्षण लगा दिया। इस लिए यह जरूरी समझा गया कि यह गौरव, यह श्रेय इसी नगर को प्राप्त हो। हां, इस से इस नगर के निवासियों की आर्य संस्थाओं की ओर आर्य समाज को जिम्मेदारी बढ़ गई है। इस के बाद प्रोग्राम आदि पर विचार हुआ। ठोस और उपयोगी कार्य करने का निश्चय हुआ। कोई नई संस्था खोलने का विचार नहीं किया गया। यह सभी संस्थाएं उसी महान आत्मा की देन हैं। फिर अनेक संस्थाएं, उच्चकोटि की संस्थाएं इनके नाम पर चल रही हैं। आवश्यकता पड़ने पर और खोली जा सकती हैं। अतः निश्चय हुआ कि महात्मा हंसराज साहित्य विभाग को संगठित, सुदृढ़ किया जाए। धर्म प्रचार और लेखकों को प्रोत्साहन दिया जाए। आर्यजगत सुनकर प्रसन्न होगा कि महात्मा हंसराज द्वारा लिखे गए सभी ग्रंथों को महात्मा हंसराज ग्रंथावली के नाम से छाप देने का निश्चय हुआ है। यह भी निश्चय हुआ कि चारों वेदोंका अंग्रेजीमें भाष्य किया जाए। यह भाष्य अंग्रेजी लिखे पढ़े सज्जनों के हाथोंमें दिया जा सकेगा। विदेशों जो वेद पढ़ने और समझने के योग्य हो सकेंगे और अपनी ज्ञान पिपासा मिटा सकेंगे। महात्मा हंसराज Commemoration Volume भी तैयार होगी। इस में महात्मा जी के जीवन, आर्य समाज क्या है, आर्यसमाज के कार्य, वैदिक संस्कृति तथा आर्य समाज की संस्थाओं से सम्बन्धित लेख होंगे। यह लेख आर्य जगत के प्रसिद्ध विद्वान, नेता और महात्मा जी के भक्त लिखेंगे। निस्संदेह यह ग्रंथ भी आर्यसमाज का दर्पण होगा उस में हिन्दी संस्कृत और अंग्रेजी में लेख होंगे। आर्य विद्वानों से प्रार्थना है कि वे अपने बहुमूल्य लेख लिख कर भेजें।

आप समझ सकते हैं कि इस महान कार्य के लिए धन की आवश्यकता है। बिना धन के कुछ भी न हो सकेगा। पांच लाख की अपील की जा रही है। आर्य नेता झोली ले कर नगर फिरेंगे। धनी मानी दिल खोल देंगे और जनसाधारण अपनी श्रद्धानुसार उस देवता के प्रति अपनेसे उऋण होनेके विचारसे धन देंगे। सभी महायज्ञ में अपनी अपनी आहुति देंगे जिस से यह यज्ञ सफलता से पूर्ण होगा। आर्य बंधुओ! उस महान् आत्माकी जन्म शताब्दी मनाई जा रही है जिस ने हमारे लिए सर्वस्व त्याग दिया, अपनी जवानीकी उमंगें, सुख ऐश्वर्य के जीवन के स्वप्न, विधवा मां की आशाएं, बड़े भाई की मनो कमनाएं सभी का बलिदान दे कर तिल तिल कर जला, चमका, अविद्या के अंधकार को मिटाया, जगमगा कर स्वयं मिट गया परन्तु अमर हो गया। आओ! हम उन की शताब्दी मनाएं, उन को पवित्र याद को हिम्मत से मनाएं शानसे मनाएं, खूब मनाएं।

—०—

आर्य समाज मंडी (H.P.) का चुनाव

सर्व सम्मति से निम्नलिखित अधिकारी चुने गए।

प्रधान—कैप्टन इन्द्रसैन जी, उपप्रधान— ला० दीनानाथ जी Advocate, स्वामी कृष्णानन्द जी मन्त्री—चेतरामजी बहल, उपमंत्री—श्री लेखराज जी, प्रचार मंत्री—पं० केवल राम जी, कोषाध्यक्ष—ला० इन्द्रसिंह जी, पुस्तकाध्यक्ष—ला० लछमन दास जी।

सदस्य अंतरंग सभा

(१) ला० मायाधर जी (२) ला० परमानन्द जी सहगल (३) ला. मुकुन्दराम जी सहगल (४) श्री हरबंसलाल जी (५) ला० हेमप्रभ जी (६) ला० विद्यासागर जी।

*

आर्यसमाज और राजनीति

(श्री रामप्रकाश जी एम.एस.सी. (आनर्ज) रिसर्चस्कालर चंडीगढ़ी)

भारत स्वतन्त्र हुआ। कुछ लोगों के हाथ में सत्ता आई। सर्वत्र उन्हीं की तूती बोलने लगी। यह देखकर आर्य समाजियों ने भी विचारा कि क्यों न सामूहिक रूप से राजनीति में भाग लिया जाए? फिर क्या था जितने मुंह उतनी बातें होने लगीं। इससे जनता भ्रम में पड़ गई। कोई स्पष्ट मार्ग न रहा। पर आर्यसमाज के परखे हुए सिपाही प्रिंसीपल भगवानदास जी ने इस प्रसंग में 'आर्यसमाज' में एक लेख देकर सही पथ प्रदर्शित किया है। उन्हीं विचारों का मैं अनुमोदन करना चाहता हूं।

राजनीति में भाग लेने के लिए कई बातों पर विचार करना आवश्यक है। सर्व प्रथम नीति निर्धारित करनी होगी। हम मनुष्यों द्वारा निर्मित विधान तो स्वीकार करने से रहे। अतः सर्वोपयोगी, सर्वोत्तम ईश्वरीय विधान—वेद को आधार बनाना होगा। आज लोग वेद को मानने से ही इन्कार करते हैं, सो वैदिक नीति के पक्ष में कौन वोट देने लगा! फिर राजनीति से सम्बन्धित सभी विषयों पर आर्य विद्वानों ने वैदिक विचार भी तो स्पष्ट नहीं किए। अनेक समस्याओं पर अनुसन्धान करना बाकी है। वस्तुतः वेद के नाम का ढंढोरा पीटने वाले आर्यों ने जितना कम कार्य वेद विषय में किया है, उतना कार्य सम्भवतः किसी भी क्षेत्र में नहीं किया होगा कहने को तो हम कह देते हैं कि 'वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है' पर अभी तो यह भी स्पष्ट नहीं किया कि वेदसत्य विद्याएं कौन-कौन सी हैं। सो भले! पहले नीति तो निश्चित कर लो या वेद के नाम पर निज विचारों को ही भारतीयों पर लादने का इरादा बना रखा है?

फिर मैदान में कूद जाना ही तो पर्याप्त नहीं, सत्तारूढ़ होने के लिए वोट चाहियें। हम अल्प संख्या में हैं। सो विजय तो हम से डरकर भाग जाएगी। 'आगे २ जीत, पीछे-पीछे हम, खूब दौड़ लगेगी। अच्छा खासा तमाशा बन जाएगा। कुरान, पुराण, बाईबिल का खण्डन करने वालों को अवैदिक विचार-धारा के मानने वाले वोट क्यों देने लगे? वे तो मांग करेंगे कि वोट चाहियें तो हमारी भूठी बातों को भी सत्य बताओ। भाई, कुर्सी के लिए तो अवतारवाद भी स्वीकार करना होगा, मूर्ति पूजा पर भी चुप्पी साधनी पड़ेगी, कुरान और पुराण को भी अच्छा बताना पड़ेगा—यदि यही कुछ करना है तो फिर 'हो लिया प्रचार वेदों का।' हां चुनाव में शराबें पिलाई जाती हैं, जातिवाद उभारा जाता है, अपने बुरे को भी भला और पराये भले को भी बुरा बताया जाता है। कहो आर्यो! क्या यह सब कुछ करने को तैयार हो?

यदि कहीं हमारी देखा देखी पौराणिक, यवन, ईसाई आदि ने भी लगर लंगोटे कस लिए, तो खूब खिचड़ी पकेगी। प्रजातन्त्र मखौल बनकर रह जाएगा। न ही राष्ट्रीय एकता हो पाएगी।

स्वतन्त्रता के पश्चात् इस राजनीति ने हमसे अनेक सार्वजनिक कार्यकर्ता छीन लिए हैं। अब उनका रोम-रोम राजनैतिक दलों के लिए है। तो उनके पास वेद प्रचार के लिए समय कहां? परिणाम स्वरूप अनेक आर्यसमाजों का कार्य ठप्प हो गया है। जब हम सामूहिक रूप से राजनीति में भाग लेंगे तो सभी कार्यकर्ताओं को इधर धकेलना पड़ेगा, उत्सवों और सत्संगों में भी यही राग अलापा जाएगा। सो वेद का कार्य बिल्कुल छूट जाएगा।

आज नए राजनैतिक दल की आवश्यकता का आभास इसलिए भी हुआ है कि सत्तारूढ़ दल में भ्रष्टाचार है, फूट है। पर क्या सभी आर्य पूर्णतया सत्यवादी और धर्मात्मा हैं? यदि हमारे जीवन का स्तर भी दूसरे लोगों के समान है तो लेबल बदलने से क्या लाभ होगा?

तो क्या आर्यसमाज राजनीति से पूर्णतया संन्यास ले ले? नहीं, कदापि नहीं। अपितु प्रचलित राजनीति में भाग न लेने वाले, निष्पक्ष पांच सात विद्वान आर्य संन्यासियों की एक सभा बनाई जावे। ये विद्वान किसी भी राजनैतिक दल एवं तत्सम्बन्धी संस्था के सदस्य न हों। ये प्रत्येक समस्या पर वैदिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करके आर्य जनता का सही नेतृत्व करें। इसी आधार पर आर्य जन चुनाव में वोट देवें। इसी नीति को लेकर आर्यसमाजी व्यक्तिगत रूप से चुनाव लड़ें। साथ २ युवकों के साथ सम्पर्क बना कर उन पर आर्य समाज की छाप लगा दी जावे ताकि बीस तीस वर्ष में जब वे क्षेत्र में कूदें तो सर्वत्र आर्य विचारों के लोग ही चुनाव लड़कर भारत का उत्थान कर रहे हों। यह है भी सम्भव। क्योंकि केवल वैदिक धर्म ही विज्ञान पर आधारित है। सो यह निर्विवाद सत्य है कि आने वाली सन्तति को केवलमात्र आर्य समाज ही पचा सकता है। आने वाले पच्चीस वर्ष के पश्चात भारतीय या तो नास्तिक होंगे या वैदिक धर्मी। बस देखना यह है कि हम इस समय कितना सदुपयोग करते हैं? इसी बात पर आर्यसमाज और राष्ट्र का भविष्य निर्भर है। सो राजनीति के पचड़े में न पड़कर इधर ध्यान दिया जाना चाहिये।

बसन्त ऋतु

सौरभ, सुमन, सुगन्ध, सुरीली,
साज सजा कर आई है।
हरियाली का आंचल ओढ़े,
फिर बसन्त-ऋतु आई है।
वन-उपवन आज उजियारा है,
हर चीज में भरी लुनाई है।
आम्र-तरु पर कोयल कूके,
फिर बसन्त-ऋतु आई है।
बिछ गए बिछौने हरियाली के,
हर फूल में मस्ती छाई है।
भ्रमर-पुनः गुंजार उठे,
फिर बसन्त-ऋतु आई है।
देख सुहाने रात-दिवस,
मेरे मन ने भी अंगड़ाई है।
मलय-समीर, ए चांद गगन के,
कहना उन से इतना जाके।
फिर बसन्त-ऋतु आई है।

रामचन्द्र 'मधु' शशिनगर देहली

आर्यसमाज सैक्टर ८ चंडीगढ़ का चुनाव

५-१-६४ को रविवार निम्न प्रकार से सम्पन्न हुआ।

प्रधान—श्री नानकचन्द जी पंडित, उप-प्रधान—श्री संतराम जी सैनी, प्रिंसीपल श्री त्रिलोकीनाथ जी, प्रिंसीपल हरिराम जी, श्री सीताराम जी बोहरा मन्त्री—श्री रामप्रताप जी शर्मा, उपमन्त्री—श्री विजयकुमार पुंज और श्री सी.एल. गोस्वामी, कोषाध्यक्ष—श्रीरामलाल जी, जौहर, पुस्तकाध्यक्ष—श्री अविनाशी लाल जी, निरीक्षक—श्री देशराज जी मालिक, इसके इलावा २१ सदस्य अन्तरंग सभा के लिए और १५ प्रतिनिधि आर्य प्रादेशिक सभा के लिए निर्वाचित हुए।

इसी अवसर पर पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज के स्वास्थ्य के लिए प्रभु से प्रार्थना की गई।

—रामप्रताप मंत्री समाज

आर्य समाज मन्दिर राउर केला के निर्माणार्थ सहायता की अपील

स्टील कम्पनी राउरकेला ने कृपा पूर्वक आर्य समाज मन्दिर के लिए आर्य समाज राउर केला को भूमि दान में दी है।

राउर केला (उड़ीसा) भारत के बहुत बड़े अन्तर्प्रान्तीय औद्योगिक केन्द्र के रूप में विकसित हो रहा है अतः वहां पर आर्य समाज को स्थायित्व प्रदान करना नितान्त आवश्यक है। इस के अतिरिक्त आर्य समाज के प्रचार की दृष्टि से उड़ीसा एक पिछड़ा हुआ प्रान्त है। उस प्रान्त के एक बड़े केन्द्र में आर्य समाज को स्थायी शक्ति बनाए जाने का महत्व सुविदित ही है।

आर्य समाज राउर केला की स्थिति ऐसी नहीं है कि राउर केला के अनुरूप बिना बाह्य सहायता के आर्य समाज मन्दिर का निर्माण कर सके अतः मैं समस्त आर्य समाजों के सदस्यों, अधिकारियों एवं दानी महानुभावों से आग्रह पूर्वक निवेदन करता हूं कि अपनी शक्ति के अनुसार समाज मन्दिर के निर्माणार्थ दान देने का अनुग्रह करें।

यह धन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, (दयानन्द भवन) नई दिल्ली—१ के पते पर आना चाहिए।

स्वामी ध्रुवानन्द सरस्वती
प्रधान सार्वदेशिक
आर्य प्रतिनिधि सभा देहली

पत्र-पत्रिकाओं का उद्देश्य केवल मात्र सेवा होना चाहिए।

(संगृहीता-भक्त राम)

आर्य समाज यमुना नगर का मासिक प्रचार कार्य

दिसम्बर मास में पं. विश्वनाथ जी आर्योपदेशक ने दैनिक कथा के अतिरिक्त २२ उपदेश दिये। संस्कार विवाह १ नाम करण संस्कार ४ जन्म दिन २ आर्य पत्रों के लिये ११ लेख लिखे। ७५ यात्रियों ने आर्य समाज मन्दिर में सुखद निवास किया।

कृष्ण लाल मंत्री समाज

आर्यसमाज शूगर मिल खतौली

के साप्ताहिक सत्सङ्ग में पूज्य आनन्द स्वामी जी महाराज के स्वास्थ्य के लिये सम्मिलित प्रार्थना की गई। प्रभु इन को शीघ्रता से स्वास्थ्य प्रदान करें जिस से स्वामी जी सदा आर्य समाज के मिशन व ऋषि ऋण को चुकाते हुए अपनी मधुर वाणी से जनता में अमृतवर्षा कर सब का कल्याण करते रहें यही हम सब की प्रभु से प्रार्थना है।

आवश्यक सूचना

सब आर्यसमाजों को तथा आर्य महानुभावों को सूचित किया जाता है कि श्री धावानन्द शर्मा टंकारा ट्रस्ट की ओर से धन-संग्रह और प्रचार के लिए नियुक्त नहीं किये गये उनको ट्रस्ट का नाम बताकर न देकर किसी सहायता हमें भेज देनी चाहिए।

—निवेदक आनन्द प्रिय मंत्री
महर्षि दयानन्द ट्रस्ट टंकारा

आर्यसमाज रेलवे रोड अम्बाला शहर

का

वार्षिक चुनाव ५. १. ६४ को निम्न प्रकार से हुआ

प्रधान श्री जगदीश चन्द्र जी। उप-प्रधान महेन्द्र नाथ जी, श्री सत्य प्रकाश जी दुग्गल। मंत्री-श्री करतार चन्द्र जी डावर। उप-मंत्री श्री केसर चन्द्र जी। कोषाध्यक्ष-श्री, तख्तमल जी। एडीटर—श्री मातु राम जी। मैनेजर—श्री सत्य स्वरूप जी।

करतार चन्द्र
मंत्री समाज

आर्य जगत का ऋषि बोध अंक

११ फरवरी १९६४ को बड़ी सजधज के साथ प्रकाशित हो रहा है मुख पृष्ठ पर महर्षि स्वामी दयानंद जी का तिरंगा फोटो होगा। यह अंक पाठकों को ११ फरवरी से तीन चार दिन पहले मिल जायगा।

यह अंक २६ जनवरी २ फरवरी का सम्मिलित अंक होगा। इस में मान्य महात्माओं नेताओं तथा विद्वानों के सुन्दर विचार होंगे। सारे स्कूलों कालिजों व आर्य समाजों से प्रार्थना है कि २०. १. ६४ तक अधिक से अधिक प्रतियां मंगवा कर लाभ उठाएं तथा प्रसाद के समान बांटें।

व्यवस्थापक

तिथि परिवर्तन

(१) आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा से संबंधित सभी समाजों को सूचित किया जाता है कि सभा का साधारण अधिवेशन किन्हीं विशेष कारणों से १६-२-६४ की बजाए [illegible] को लोहगढ़ [illegible] में होना निश्चित हुआ है सभी समाजें तिथि, स्थान आदि को नोट कर लें।

(२) प्रतिनिधि भेजने के फार्म २२-१-६४ की बजाए ५-२-६४ को सभा कार्यालय में पहुंच जाने चाहिए।

आवश्यक सूचना

पास, स्मरणीय महात्मा हंसराज जयन्ती उपसमिति की पहली बैठक १२-१-६४ को सम्पन्न हुई जिस में निश्चय हुआ कि जयन्ती समारोह २३, २४, २५ अक्टूबर सन् १९६४ को जालंधर शहर में मनाई जाए।

संतोषराज—मंत्री सभा

आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य दक्षिण हैदराबाद

आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य दक्षिण हैदराबाद के तत्वावधान में वैदिक धर्म प्रचार नगर समिति का वार्षिक वृहद् अधिवेशन १६ से २२ जनवरी ६४ ई० तक हैदराबाद में समारोह से मनाया जा रहा है। इस अवसर पर उत्तर तथा दक्षिण के गण्यमान्य आर्य नेता पधार रहे हैं।

इस अवसर पर कई एक सम्मेलनों का भी आयोजन किया जा रहा है।

अंतिम दिन २२, जनवरी ६४ को मध्य दक्षिण के प्रमुख आर्य कार्यकर्त्ताओं का सम्मेलन भी रखा गया है जिस में सम्पूर्ण मध्य दक्षिण से पांच सौ से भी अधिक कार्यकर्त्ताओं के सम्मलित होने की आशा है, जिसमें आर्यसमाज के भावी कार्यक्रम पर विचार किया जाएगा।

मंत्री सभा

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टैलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd No. P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक ७) ५ फाल्गुण २०२० रविवार—दयानन्दाब्द १४०—१६ फरवरी १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

अव मा पाप्मन्

हे पाप के भाव ! मुझ से परे हट जा । पाप का विचार मनुष्य को नीचे गिरा देता है । पाप जीवन को काला कर देता है । जहां पर पाप है वहां ताप सन्ताप है । हे मेरे भगवन ! इस पाप के भाव को हमारे जीवन से दूर भगा दो । हे पाप ! मुझ से दूर रह, मेरे समीप मत आ ।

त्वा जहिमो वयम्

हे पाप के भाव ! हम तुझे छोड़ते हैं । इसलिए हमारे पास भूल कर भी मत आना । दूर ही रह । तेरे से प्यार करके हम ने पतित नहीं होना, काले नहीं बनना । पाप के भाव ! सुन ले, भली प्रकार सुन ले । हम ने तुझे सदा के लिए त्याग दिया चले जाओ ।

शिवो गोभ्य:

प्रभो ! हमारी गौओं के लिए कल्याण हो, भला हो । गौएं दूध से तृप्त करती रहें । दूध घृत की नहरें चलती रहें । कोई भी गोधन को किसी प्रकार की हानि न पहुंचा सके गो आदि सारे पशु स्वस्थ रहें ।

अथर्ववेद से

वेदामृत

मनसा परिक्रमा मन्त्रा:

ओ३म् प्राची दिगग्निरधिपतिरसितो रक्षितादित्या इषव: । तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु । योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्म: ॥ अथर्व कां.३ सूक्त २७ मं.१

अर्थ—हे प्रभो ! इस (प्राची) पूर्व (दिग्) दिशा में आप (अग्नि) प्रकाशमय हो (अधिपति.) सब के स्वामी हो (असित:) बन्धन से रहित हो (रक्षित) सब के रक्षक हो (आदित्या:) सूर्य की किरणें (इषव:) बाण हैं । (तेभ्य: नम:) उन के लिए नमस्कार हो (अधिपतिभ्य. नम:) हमारा रक्षण करने वालों का नमस्कार हो (रक्षितृभ्य. नम:) हमारा पोषण करने वाली इन शक्तियों को नमस्कार हो । (इषुभ्य: नम:) बाणरूप इन सूर्य की किरणों के लिए या सूर्यवत् उन दिव्य देवों को नमस्कार हो । (य:) जो भी (अस्मान्) हम से (द्वेष्टि) द्वेष करता है तथा (यं वयम्) जिस से हम द्वेष करते हैं (त) उस को हे परमेश्वर ! (व) आप के (जम्भे) न्यायनियम में (दध्म:) अर्पित करते हैं !

भाव :—परमात्मन् ! आप कहां नहीं हैं । हम ने अपने चंचल मन को दौड़ा कर देख लिया । पूर्व दिशा में दूर २ तक दौड़ा २ गया वहां पर सूर्य के रूपमें आपकी शक्ति का दर्शन किया । कितना प्रकाश है इस का । इसे भी आप ही प्रकाश प्रदान करते हो । आप ही सब के रक्षक तथा प्रकाशक हो । यह सूर्य आप की ज्योति से ही तो स्वयं चमकता और सब को उजाला देता है । इस की किरणें बाणों के समान हैं, जो अन्धकार के शत्रु को मार २ कर भगा देती हैं । हे प्रकाशमय प्रभो ! आप की इन दिव्य प्रकाश की शक्तियों को हम नमस्कार करते हैं । ये हमारी रक्षा करती हैं । ये प्रखर बाण हैं जिन के सामने कोई ठहर नहीं सकता है । इस जीवन में जो हम से घृणा या द्वेष करता है या भूल वश हम उस से घृणा करते हैं—परमेश ! उस को हम आप के ही अटल न्याय नियम में अर्पित करते हैं । जैसा उचित हो करें—सं.

ऋषि दर्शन

मनुष्यदेहाद्याकाश पर्यन्तम्

तीन प्रकार के जगत् के रूपों में इस का मध्यम रूप मनुष्य शरीर से ले कर आकाश पर्यन्त है । मानव जीवन इस त्रिविध विश्व का मध्यम रूप माना जाता है । इस प्रकार जगत् त्रिरूप कहा है ।

स्कम्भ: प्रजापति: स:

वेद में जिस शक्ति को स्कम्भ के नाम से पुकारा गया है । वह प्रजापति परमेश्वर है । विश्व के उत्पादक, धारक, पालक तथा नियामक भगवान् को स्कम्भ के रूप में माना गया है ।

देवा विद्वांस: पितरो ज्ञानिन:

देव विद्वानों का नाम है और पितर ज्ञानियों को कहते हैं । मरे हुए लोगों का नाम पितर नहीं पर जो जीवित हैं ज्ञानी हैं प्रकाश देते हैं—उन को पितर कहा जाता है ।

भाष्य भूमिका

अधिष्ठाता—संतोषराज सभा मंत्री

सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

महर्षि दयानन्द की बोध रात्रि के ऐतिहासिक पर्व पर आर्यसमाज के भूत और भविष्य पर कुछ विचार करना हमारा आवश्यक कर्तव्य है यह ठीक है—

कि अभी तक है सपना ऋषि अधूरा।
कोई काज भी कर सके हम न पूरा॥

परन्तु यह कहना नितान्त मिथ्या है कि हम कुछ भी नहीं कर पाये या हमें कहीं भी सफलता नहीं मिली और ऐसा सोचना भी हीन मनोवृत्ति का प्रदर्शन है कि हमारा भविष्य अंधकारमय है। आर्य होने के नाते मैं आशावादी हूं। मुझे आर्यसमाज के गौरवमय भूत पर अभिमान है और एक युवक के नाते मैं आर्यसमाज के उज्ज्वल भविष्य में विश्वास रखता हूं। आर्यसमाज के भविष्य का अंधकार-मय चित्र खींचना या ऐसी कल्पना करना अपने जीवन में अविश्वास है। इस का अर्थ यही हुआ न! कि आज आर्य युवकों में साहस, त्याग, निष्ठा, धन, बलवले और उमंगें नहीं। परन्तु ऐसा नहीं है। महर्षि का बलिदान, लाजपत का साहस, श्रद्धानन्द की वीरता, हंस-राज की गम्भीरता और अतुल्य त्याग, लेखराम के अरमान, श्याम-लाल की चेतना, नारायण स्वामी की मस्ती और स्वतन्त्रानन्द का धीरज आज भी हमारी रगों में नवल रक्त का संचार करता हुआ स्फूर्ति और जीवन को प्रवाहित करता है।

आईये! अपने भूत की चर्चा निसुये। हमने क्या किया?

मूर्ति पूजा, कबर पूजा, श्राद्ध, फलित ज्योतिष, छूतछात, बाल-विवाह, विदेश यात्रा से भय आदि भ्रम किस बात के सूचक थे? प्रसिद्ध भारतीय विद्वान डा० A.C. Bose के अनुसार कलियुग में Intellectual Impotence मानसिक नपुंसकता का हिन्दुओं को रोग था। महर्षि और उसके आर्य समाज ने इस का निदान किया।

हमारा भूत और भविष्य

ले० श्रीराजेन्द्रजी 'जिज्ञासु' M.A. प्राध्यापक दयानन्द कालेज शोलापुर

'Arya Samaj Aims at' Producing a virile intellect.' आर्य समाज का उद्देश्य उक्त लेखक के अनुसार स्वस्थ एवं शक्त मस्तिष्क को जन्म देना है। इसी मूर्धन्य विद्वान के अनुसार 'To subject oneself to astrology is to paralyse one's will.' ज्योतिष में विश्वास का अर्थ अपनी संकल्प शक्ति को पक्षाघात की भेंट करना है। जीव कर्म करने में स्वतन्त्र है वेद शास्त्र अनुमोदित एवं गीता द्वारा प्रतिपादित आर्ष सिद्धान्त आर्यों ने युग के सामने सफलता से रखा।

हमें कितनी सफलता मिली? विश्व विख्यात सर्वमान्य भारतीय इतिहासकार डा० यदु नाथ सरकार के शब्दों में 'To day Hinduism has paid the Arya Samaj the tribute, that of imitating by stealing its programme.'

अर्थात् आज हिन्दुमत आर्य समाज का अनुकरण कर के, आर्य समाज के कार्यक्रम को चुरा कर (अपना कर) आर्य समाज के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट कर के ऋण चुका रहा है। मैं कहता हूं कि भले ही लोग आर्यों को गाली दें। ऋषि को भला बुरा कहें परन्तु हमारी यह पूर्ण विजय होगी यदि विधर्मी मतावलम्बी आर्य समाज का नाम लिये बिना भी वैदिक मान्यताओं को अंगीकार करते जायें।

हमारी राष्ट्र सेवा का सब से प्रबल व ज्वलन्त प्रमाण प्रसिद्ध राष्ट्रिय नेता एवं लेखक श्री 'C. Y. Chintamani के शब्दों में यह है कि fear of India's enemi es, or opponents, is the measure of service it has rendered or shown itself capable of rendering to the ancient land पुण्य भूमि।' सारांश इसका यह है कि भारत के बैरियों का आर्य समाज से आंतकित होना ही इस बात का सूचक है कि पुण्य भूमि की यह क्या सेवा कर रहा है। पुराने दिवंगत नेता के शब्दों का समर्थन अभी पाकिस्तान के अयूब ने भी कर दिया। भारत के विरुद्ध विष वमन करते समय अयूब भी आर्य समाज को भूल न सका। यह ठीक है कि आर्य समाज एक विश्व व्यापी समाज है परन्तु प्रत्येक देश के प्रत्येक वेद भक्त के लिये वेद मातृ भूमि के प्यार का आदेश देता है अतः आर्य समाज भारत भूमि के वैरियों की आंख में सदा से कांटा बन कर खटकता रहा है।

क्या से क्या कर दिया?

अभी मैं तपोधन महात्मा हंसराज की छोटी पुस्तक Vedas As Interpreted by Swami Dayanand पढ़ रहा था उस में महात्मा जी ने लिखा है 'Gentlemen, I was much amuse to read in a work on Geography that in habitants of India were called Gentoos, that they were descended from shem a son of Noah, and that there language which was named sanskrit was discovered by a European gentleman in snch and such a year.'

महात्मा जी के शब्दों का सारांश यह है कि उस मन में जो आया सो हमारे सम्बंध में अंट संट लिख दिया। इस उद्धरण में कहा गया है कि भारत के निवासी हजरत नूह के पुत्र की सन्तान थे जिनकी भाषा संस्कृत का पता अमुक वर्ष में एक यूरोप निवासी ने लगाया। इस प्रकार की सब अनाप शनाप को आर्य समाज ने चुनौती दी। आर्य समाज महर्षि द्वारा निर्दिष्ट वेद पथ पर चलकर महात्मा हंसराज की निम्न भविष्य वाणी को—सपन को साकार करने के लिये कटिबद्ध है:—

'I see signs of the spiritual renaissance of the world throgh India. May the forecast be true and may the members of the Arya Samaj justify it through their conduct

अर्थात्' मैं भारत द्वारा विश्व के आध्यात्मिक नवजागरण के चिह्न देखता हूं। भगवान् करे यह भविष्यवाणी सत्य सिद्ध हो और आर्य समाज के सदस्य अपने आचरण से इसे सार्थक करें।"

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये संग्राम की आवश्यकता है। आर्य समाज का धर्म है ही संघर्ष और संग्राम का धर्म। यह प्रकाश का धर्म है। प्रकाश सदा अंधकार का संहार करने के लिये निशा से युद्ध करता है। लोग हमें झगड़ालू कहें या आक्रमक परन्तु बम्बई हाईकोर्ट के माननीय न्यायमूर्ति श्री ताराकुण्डे ने ऋषि के प्रति में श्रद्धा व्यक्त करते हुए जो बात कही उसे हमें सदा स्मरण रखना चाहिए।

सच्चा सुधारक वह नहीं जो तालियां पिटवा लेता है। सच्चा समाज सुधारक तो वह है जो विरोध, अपमान तथा पत्थरों की वर्षा के सामने भी अडिग खड़ा रहकर अपने सिद्धांतों के प्रचार में अनवरत तत्पर रहे। इस दृष्टि से

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सम्पादकीय–

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२०, १६ फरवरी १९६४ [अंक ७

महत्व पूर्ण दिन

तेईस फरवरी का अगला रविवार का दिन बड़े महत्व का है, क्योंकि उस दिन आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का वार्षिक अधिवेशन आर्य समाज लोहगढ़ अमृतसर में बड़े समारोह से हो रहा है। इस में सभा से सम्बन्धित आर्य समाजों के मान्य प्रतिनिधि इकट्ठे हो जहां अगले वर्ष के लिए अधिकारी निर्वाचित करेंगे, वहां सभा की सर्वांगीण उन्नति तथा वेद प्रचार के महान् कार्य की प्रगति के बारे में भी गम्भीरता से विचार करते हुए बड़े ठोस, क्रियात्मिक उपाय, साधन सोचेंगे, उनसे पूरा २ लाभ उठा कर सभा को अधिक से अधिक ऊंचा ले जाने में विशेष प्रयास करेंगे। आर्य समाज की आज के भौतिक युग में कितनी अधिक आवश्यकता है, पाखण्ड फिर से कितना पनपता जा रहा है, भोगवाद का वातावरण उत्तरोत्तर कितना बढ़ता जाता है। वेदों पर चारों ओर से आज कैसे २ अनर्गल आरोप लगाये जा रहे है। कुरीतियां, रुढ़ियां एवं दबी हुई भ्रान्तियां किस प्रकार अपना सिर उठा कर दनदना रही हैं। किस प्रकार का साहित्य लिखा लिखवाया जाता है। जीवन किस दिशा में मोड़ खाने लगा है। खानपान की अवस्था, विलास का लास्य, भोगों की भक्ति, शृंगार का प्यार, अनाचार का खेल, नग्ननाच और जीवन का स्तर किस सीमा तक जा पहुंचा है—इसे देखते हुए आंखें सिर लज्जा से झुक जाते हैं, कहते हुए वाणी विरम जाती है। यह प्रवाह बड़ी तेजी से बह रहा है। वेद प्रचार की क्या अवस्था है? ऐसे और इन जैसे कितने आवश्यक प्रश्न हैं, जिन पर आज गम्भीरता से मिल बैठ कर सोचने की आवश्यकता है। तात्पर्य यह है कि हर बात ही बिगड़ती जा रही है। इस पर और कौन विचार करेगा?

आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब बड़ी विशाल, संगठित, शक्तिशाली सभा है। इस के पास प्रसिद्ध २ शिक्षा विशारद, नेता, तपस्वी, संन्यासी, प्रभावशाली कार्यकर्ता तथा भारी संस्थान हैं। इस बार इस का महत्व और भी इसलिए अधिक है कि सभा इस बार आने वाले अक्तूबर मास में स्वर्गीय महात्मा हंसराज शताब्दी मना रही है। हम चाहते हैं कि सभा का यह अधिवेशन' बजट निर्वाचन की विशेष विशाल बैठक महत्वपूर्ण हो। सभा के मान्य समाजों से आये हुए प्रतिनिधि अपना विशेष समय तथा सम्मति सहयोग देकर विशिष्ट कार्य करें। क्या ही उत्तम हो कि शनिवार को दो चार घंटे सभा के विशेष २ संस्थाओं के मान्य सज्जन समाजों के कार्यकर्ता पहले इकट्ठे हो कर कुछ ठोस निर्णय करें। रविवार के अधिवेशन में उन को सर्वसम्मत दे कर कार्य को आरम्भ कर दिया जाये। इस के लिए सभा शनिवार की बैठक का विशेष प्रबन्ध करे।

—त्रिलोक चन्द्र

वेद को प्रमुखता देवें

अभी २ राजस्थान के राज्यपाल श्री डा० सम्पूर्णानन्द जी का एक महत्व भरा लेख प्रकाशित हुआ है। जिस में उन्होंने एक अत्यन्त आवश्यक बात की ओर सारे भारतवासियों का ध्यान आकर्षित किया है। बड़े प्रभावशाली शब्दों में अपनी मनोभावना को व्यक्त किया है। वे कहते हैं कि हमें गीता पर भी मान है रामायण, महाभारत के उदात्त इतिहास पर भी बड़ा गर्व है। उपनिषदों का भी सब के हृदय में बड़ा गौरव है। यह सम्मान होना भी चाहिए। किन्तु आज चारों ओर ऐसी अवस्था दृष्टिगोचर हो रही है कि इनका सम्मान करते २ जनता वेदों को पीछे करती जा रही है। स्थान २ पर गीता सम्मेलन होते हैं, रामायण के बड़े २ पारायण किये जाते हैं, गीता के बड़े २ भव्य और विशाल मन्दिर बन रहे हैं। वाराणसी में ऐसा मन्दिर निर्मित हुआ है जिस की भित्तियों पर तुलसी रामायण अंकित है। यह बात अन्य पुस्तकों की भी है। डा० सम्पूर्णानन्द जी कहते हैं कि हम भी इनका सम्मान करते हैं। किन्तु इस प्रवृत्ति को देख कर ऐसा होने लगा है कि इन के अतिशय प्रेम, भक्ति में आकर वेदों को, उनके प्रचार को बहुत पीछे डाला जा रहा है। वेद तो महान स्रोत हैं सागर हैं, जहां से ये सन्देश निकले हैं। गीता यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय के आरम्भ के कतिपय मन्त्रों की विस्तृत और सुन्दर व्याख्या है। यदि हम ने वेदों की उपेक्षा कर दी और इन ग्रन्थों का ही सम्मान किया तो अवस्था क्या होगी—इस का अनुमान सहज लगाया जा सकता है। इस लिए जो मूल स्रोत है, जहां से गीता, उपनिषदें आदि ग्रन्थ निकले और व्याख्या के रूप में बनाये गये हैं— उन वेदों के प्रचार में पूर्ण ध्यान दिया जावे।

डा० सम्पूर्णानन्द जी भारत के राजनीतिक नेता ही नहीं है, प्रत्युत् बड़े भारी विद्वान, प्रकांड स्कालर तथा लेखक भी हैं। आप उत्तर प्रदेश के मुख्य मन्त्री भी रह चुके हैं। आज कल राजस्थान के राज्यपाल हैं। वेदों पर बड़ी श्रद्धा आस्था है इन का कथन है कि वेदों से आंखें बन्द कर लेना आत्मसत्ता को भूल जाने के समान है। इस भाव की सुन्दर विचार धारा व्यक्त है। यह तथ्य ही है आज सारे देश में आर्य समाज के सिवाय और किसे वेदों, वेदप्रचार, वैदिक साहित्य लिखने प्रकाशित करने की चिन्ता है? वेदों पर आज चारों ओर से नानाविध भाषाओं में जो २ ग्रन्थों द्वारा आक्रमण हो रहे हैं। समाज के अतिरिक्त उसका कौन प्रतिकार कर सका है। समय आ गया है जब कि हम वेदप्रचार में तन, मन, धन अर्पित करने में प्रसन्नता अनुभव करें।

—त्रिलोकचन्द्र

आर्य समाज सांबा

आर्य समाज सांबा की साप्ताहिक बैठक में हजरत मुहम्मद साहब के बालों की बरामदगी पर खुशी का इजहार करते हुए यह भी मुतालबा किया गया कि जम्मू मंदिर से चोरी की गई मूर्त्तियां फौरन तलाश करके हिन्दुओं के मजहबी जज़बात की कदर की जाए। वरना अगर किसी प्रकार की गड़बड़ हो गई तो उसकी जिम्मेदारी हकूमत पर होगी।

वेदप्रकाश वर्मा
मन्त्री सभा

आर्यजगत के प्रेमी पाठकों के लिए स्वर्गीय पूज्य महात्मा हंसराज जी का आज से५०-५२ वर्ष पूर्व दिया गया धर्म प्रचार के साधनों पर ओजस्वी, ओजपूर्ण भाषण जगत के पिछले कई अकों में प्रकाशित किया जाता रहा है। ईसाई मत कैसे फैला—यह प्रसंग चल रहा था—उस से आगे पढ़िये—सं०

स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी का भाषण

धर्म प्रचार के साधन

सेंटपाल के प्रचार का तरीका बड़ा विचित्र था। वह जिस स्थान पर जाता था, वहां पर दो तीन या चार दिन नहीं ठहरता था, प्रत्युत छः सात मास तक रहता था। वहां पर वह दुकान खोल लेता था और रस्से बना कर बेचता तथा अपनी रोटी कमाता था जब वह यह देख लेता कि अब मैं ने रोटी के लिए पैसे कमा लिये हैं तो वह झट उसे छोड़ कर प्रचार के काम में लग जाता था। वह यहूदियों के गिर्जों के पास चला जाता और बाहर खड़ा हो कर गिरजा में जाने वाले और आनेवाले लोगों को उपदेश करता था। शनैः २ वह उन को रात को बुलाता और वह आ कर इस का उपदेश सुनते। वह अपना धार्मिक जीवन इन के हृदयों में प्रविष्ट करता। जब देखता कि कुछ जीवन वाले मनुष्य उस स्थान पर पैदा हो गये हैं तो दूसरे स्थान पर जा कर इसी विधि से प्रचार करता सेंटपाल का काम शान्ति से नहीं होता था, क्योंकि सैंटजेम्स ने सैंटपाल के पीछे आदमी छोड़े हुए थे जो सेंटपाल के लैक्चर वाली जगह पर जा कर कहते थे कि इस का भाषण मत सुनो। यह मसीह का अनुयायी नहीं। यह लुच्चा और बदमाश है। परन्तु वह अपना प्रचार बराबर किये जाता था।

ईसाई मत इस तरह से कदाचित अधिक न फैलता, क्योंकि यरोसिलम में बैठे हुए हवारी यदि आज्ञाएं जारी कर देते तो सैंटपाल का काम रुक जाता। इन के सामने सौभाग्य से एक बड़ी कठिनाई आ गई। वह यह थी कि यरोसिलम में हवारियों पर जुल्म होने लगे वे तंग हो कर इधर उधर भाग गये। जहां २ कोई गया, उस ने प्रचार का काम आरम्भ किया तथा ईसाई मत को फैलाने लगे। वे जहां पर गये उन्हों ने लोगों को मसीह का उपदेश सुनाया। (मैं कहूंगा, जब तक हर एक आदमी उपदेशक नहीं बनता, तब तक धर्म की उन्नति नहीं हो सकती। पहिले २ समाज में जो कोई मेम्बर होता था वह यह आवश्य समझता था कि दूसरों को भी वैदिक धर्म से परिचित करे और कई एक ऐसे भद्र पुरुष हैं कि वे जहां भी गये हैं उन्हों ने वहां पर ही समाज स्थापित किया है। जिस स्थान पर इन की नौकरी के कारण बदली हुई है, उन्होंने वहीं आर्य समाज का झण्डा गाड़ा है। इस प्रकार के यदि भाव हों तो जितनी बदली होंगी उतना अधिक प्रचार होगा) यही विचार उस समय उन में वर्तमान था। उन में एक और भी विचार था जो उन में प्रवेश कर गया था कि संसार शीघ्र नष्ट हो जाने वाला है अर्थात् यहां की वर्तमान अवस्था सब नष्ट हो कर मसीह आयेंगे और वह बादशाह बनेंगे। इस विचार ने उन में तपस्वी उत्पन्न कर दिए। तपस्वियों की एक प्रकार की जाति बन गई थी। वह जगलों में, बनों में तथा एकान्त स्थानों में तप करते थे। तीस २ दिन तक व्रत रखते थे। वे अपना जीवन बड़े अद्भुत प्रकार से व्यतीत करते थे। वह उस समय तपस्या को आवश्यक समझते थे और सभी इस विचार में बैठे थे कि अभी मसीह आता है और उस की बादशाहत होगी। इन मनुष्यों के जीवन का लोगों पर बड़ा भारी प्रभाव हुआ और बहुत से लोग इन में सम्मिलित हो गये।

एक और सिद्धांत जो इन में प्रचलित था, उस ने विचित्र रूप धारण कर लिया अर्थात वह केवल एक ईश्वर को वा मसीह को मानते थे, और दूसरे लोग उस समय के बादशाह की मूर्ति बना कर पूजते थे। उस समय बादशाह का बड़ा बल होता था। लोग देवी देवताओं के साथ अपने बादशाह की भी मूर्ति बना कर उस की धूप दीपसे पूजा करते थे। उस की आरती पढ़ते तथा उस के आगे चढ़ावे चढ़ाते थे। हजारों लोग बादशाह के मन्दिर बनवा कर उस की पूजा करते थे। लोगों ने मसीहियों को कहा कि तुम बादशाह की पूजा क्यों नहीं करते। तो उन्होंने कहा कि हम बादशाह की प्रजा हैं। हम उन का मान आदर करते हैं। परन्तु सिवाय परमात्मा के और किसी का पूजन नहीं करते। उन्होंने मूर्तिपूजा अस्वीकार कर दी। इन के साथ उन में यह विचार भी पैदा हो गया था कि जब हम देवी देवताओं को नहीं पूजते तो उन के त्योहारों को क्यों मानें? तात्पर्य यह कि ईसाई दूसरे लोगों से दो बातों में अलग हो गये अर्थात् बादशाह की पूजा और देवी देवताओं के त्योहारों में सम्मिलित न होना। तब लोगों ने कहना शुरु किया कि ये ईसाई बागी हैं और ये बादशाह के विरोधी हैं। जब यह रात को एक त्रित होते तो एक बच्चे को मार जन्त्र मन्त्र करते रहते हैं (इन के जल्से रात को ही होते थे और केवल ईसाई ही सम्मिलित हो सकते थे। —(अपूर्ण)

आर्ष कन्या गुरुकुल नरेला (दिल्ली) का ८वां वार्षिक महोत्सव

भारत भर में कन्याओं के आर्ष-पाठ-विधि के एक मात्र निःशुल्क शिक्षा-केंद्र कन्या गुरुकुल का ८वां वार्षिक महोत्सव १८, १९ फाल्गुन दिनांक २९ फरवरी १ मार्च को अति समारोह से मनाया जाएगा। इस अवसर नवीन ब्रह्म-चारिणियों का प्रवेश भी होगा। प्रवेशार्थ प्रार्थना-पत्र २३-२-६४ तक पहुंच जाने चाहियें।

उत्सव में उच्चकोटि के आर्य विद्वान तथा संन्यासी अपने अमूल्य प्रवचनों एवं भजनोपदेशक मनोहर भजनों के द्वारा वैदिक धर्म के प्रचार प्रसंग में योग देंगे। इस के अतिरिक्त गुरुकुल की ब्रह्म चारिणियों द्वारा देव भाषा (संस्कृत) तथा आर्य भाषा में मनोरंजक कार्यक्रम रखा जाएगा एक सप्ताह पूर्व से यजुर्वेद-पारायण-महायज्ञ श्री स्वामी सुरेन्द्रानन्द जी की अध्यक्षता में सम्पन्न होगा। पर्याप्त संख्या में पधार कर समस्त कार्यक्रम से लाभ उठाएं तथा उत्सव की शोभा बढ़ाएं।

चन्द्रकला आर्या स्नातिका
मुख्याधिष्ठात्री एवं आचार्या

दयानंद कालिज शोलापुर

५-१-६४ को आर्य समाज, सोलापुर की साधारण सभा में पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज के स्वास्थ्य सम्बंधी सारी सूचना सभासदों को दी गई और माननीय महात्मा जी की दीर्घ आयु व स्वास्थ्य के लिये आर्य परिवारों में प्रार्थना करने की सभासदों को प्रेरणा दी गई।

राजेन्द्र जिज्ञासु
अध्यक्ष,
आर्य युवक समाज, सोलापुर.

महात्मा हंसराज जयन्ती के शुभअवसर पर

हमारा परम आवश्यक मिशन

ले०—श्री दयानन्द आर्य एम.ए. विद्यार्थी साधु आश्रम होश्यारपुर

आर्यसमाज का युग संघर्ष का रहा है। जब हम इस संस्था का इतिहास देखते हैं तो गर्व करने की बात हमारे संमुख स्वयं उपस्थित होती है कि आर्यसमाज ने अपने प्रवर्तक के उद्देश्य को भली-भांति समझा है। संसार में यह भी बड़ी समस्या रही कि महापुरुष के अनुयायी अपने गुरु के उपदेश से भटक गए। उदाहरणतया कबीर की मृत्यु के बाद उनके अनुयायियों ने वही सिद्धान्त अपना लिए जिसके खंडन के लिए महात्मा कबीर जीवन भर जूझते रहे। भला हो देव दयानन्द का, जिन का धर्म एक वेद का धर्म था वरन आर्यसमाज भी मार्ग विचलित हो जाता। महापुरुष पहचानना तो कठिन है ही, परन्तु पहचान कर उसे समझना और भी महान कठिन है। आज यदि आर्य समाज ऋषि की मूर्ति पर माथा नहीं झुकाता तो केवल इसीलिए कि उसकी महानता ऋषि की प्रतिभा पर फूल चढ़ाने में नहीं बल्कि ऋषि के धर्म पर आस्था रखने में है। आज की सभ्यता का उच्च शिक्षण ढांचा बदलने की आवश्यकता सब को मालूम होती है परन्तु बिल्ली की म्याऊं कौन पकड़े? यह समस्या है। इस बात में आज कोई भ्रम न जाने कि विज्ञान पढ़ने वाले नास्तिक भट्टाचार्य पैदा हो रहे हैं अपवादों को छोड़कर। परन्तु अपवादों से तो संसार नहीं बनता। दूसरी ओर कालिजों का वातावरण, फिर उस में पश्चिमी विचार जिस पर भारतीय संस्कृति के प्रति अश्रद्धा युवकों को ऐसे निवेदन है कि नवम कक्षा का बालक हंसराज जिस उद्देश्य के लिए ईसाई स्कूल से नाता तोड़ना चाहता है व भविष्य में उनका कार्यक्षेत्र इस घटना ने निर्धारित किया, आज उसी को लागू करवाने की आवश्यकता है। इस जयन्ती का आयोजन बिजवाड़े में हो तो बहुत श्रेयस्कर है। एक चिंता की बात है। इतने बड़े २ दयानन्द कालिज स्कूल, जिनके भवन देखकर आकाश की चोटी भी दिखाई देती है, किन्तु उस महात्मा जी के जन्म स्थान का घर एक टूटा फूटा खोला, एक कमरा भी न आज बन सका। यदि टंकारा का स्मारक व करतारपुर में विरजानन्द—स्मारक बन सकता है तो बजवाड़े में उस देवता हंसराज के मूल घर की यह टूटी फूटी अवस्था क्या? वहां पर उगी लम्बी-लम्बी घास, टूटा दरवाजा मानो पुकार पुकार कर कह रहा है कि सुनो, हंसराज के तप से चलाए स्कूल व कालिज बड़े-बड़े होकर क्या के क्या हो रहे, हा देव! परन्तु हंसराज के बजवाड़े की सुध कौन ले! ठीक है कि महात्मा हंसराज जी की महानता उनके जन्मस्थान में न लोगों को दीख पड़े वह जगह जा कर देखो तो दो आंसू आ जाएंगे। पास ही डाक घर है। वहां से पत्र जाते हैं। पत्र बांटने वाले डाकखाने की तो अवस्था ठीक, किन्तु शिक्षा व तप त्याग के मूर्तिमान हंसराज जी ने यहां से शिक्षा के सन्देश भेजने के संस्कार ग्रहण किए थे वह घर उजड़ा वीरान। शोक, महाशोक! जागो! सभा अपने कर्तव्य को पूरा करे। तभी यह जयन्ती का उद्देश्य सफल होगा। आज समय आ गया है कि हम जागें, सोचें व दूसरों को जगाएं।

प्रभु सभा के अधिकारियों को बल दें ताकि वे पूज्य महात्मा हंसराज जी के प्रति अपने कर्तव्यों को सफलता पूर्वक निभायें। आ जन परम-धर्म को समझें व अपने परम-धर्म की रक्षार्थ कटिबद्ध हो जाएं। यही उत्तम है।

—

दयानन्द-वचनामृत

'वे महाशय धन्य हैं जो अपने तन-मन-धन से संसार का अधिक उपकार साधित करते हैं। वे लोग निन्दनीय हैं जो अपनी अज्ञानता से स्वार्थवश होकर अपने तन, मन और धन से जग में परहानि करके बड़े लाभ का नाश करते हैं। अल्प लाभ के कारण महाहानि कर बैठना सृष्टिक्रम के प्रतिकूल है। विश्वम्भर में दो ही पदार्थ जीवन का मूल हैं—एक अन्न और दूसरा पान। मनुष्य को खान पान पुष्कल प्राप्त हो, इस अभिप्राय से आर्यावर्त्त के राजे-महाराजे और प्रजा के जन गाय आदि महोपकारक पशुओं का न तो आप बध करते और न ही किसी दूसरे को करने देते थे। अब तक भी वे गाय और भैंस का हनन नहीं होने देते। इन की रक्षा से अन्न पान की बहुत वृद्धि होती है, जिस से सर्वसाधारण का सुख-पूर्वक निर्वाह हो सकता है। राजा प्रजा की जितनी हानि इनकी हत्या से होती है, उतनी किसी भी दूसरे कर्म से नहीं हो सकती।'

(स्वामी सत्यानन्द जी)

ईसायत का स्वरूप

आज भारत में ईसाई लोग करोड़ों रुपये व्यय कर के हिन्दु-समाज की निर्धनता, अशिक्षा, भोला भालेपन का अनुचित लाभ उठा कर उन को धड़ा धड़ ईसाई बनाने में हजारों पादरी मिशनरी लगे हुए हैं। आर्य समाज के सिवाय इस ओर किसी का तनिक भी ध्यान नहीं है। आर्य प्रादेशिक सभा की ओर से तपस्वी एवं देव वृत्ति के श्री पं. देव प्रकाश जी आचार्य बीसियों वर्षों से इन्दौर रतलाम आदि के क्षेत्रों में ईसाई मिशनरियों के प्रचार को रोकने के लिए वहां भीलों में बड़ा ही सराहनीय काम कर रहे हैं। हजारों भील ईसाईमत वापस ले आये हैं। वहां आश्रम चला कर बड़ा काम करते हैं। उन के द्वारा 'ईसाईमत का वास्तविक स्वरूप' नामक पुस्तक अनुसन्धान से भरी लिखी गई है। आर्य प्रादेशिक सभा जालंधर की ओर से यह पुस्तक ईसाईमत की जानकारी करने तथा उन का मुंह तोड़ने के लिए प्रकाशित की गई है। इस के प्रकाशन का सारा व्यय आर्य समाज के पुराने अत्यन्त श्रद्धालु, वृद्धावस्था में भी कमाल का धर्म प्रेम रखने वाले, नानास्थानों पर अपने सात्विक दान के द्वारा धर्म कार्यों में अत्यन्त प्रेमी, आर्य प्रतिनिधि सभा बर्मा के बीसियों वर्ष मन्त्री रहे हुए श्री. ला. जगतराम जी १०० दयानन्द नगर लारेंस रोड़ वालों ने दे कर बहुत ही सुन्दर कार्य कर के दूसरों को भी प्रेरणा दी है। उन की इस अवस्था में भी धर्म लगन देखकर प्रसन्नता होती है। हम चाहते हैं कि यह पुस्तक सब के हाथों में हो ताकि ईसाईयत का निरोध कर सकें।

आर्य प्रादेशिक सभा से बहुत सस्ते मूल्य पर यह पुस्तक मिल सकती हैं।

आदर्श विवाह

श्री शाम लाल जी रामकृष्ण मैटल वक्से भारद्वप रेलवे स्टेशन रोड बम्बई की सुपुत्री सौ. सरला B.A.L.L.B. का शुभ विवाह संस्कार अमृत सर में धूमधाम से से सम्पन्न हुआ। विवाह से पूर्व साम वेद का यज्ञ बटाला तथा अमृतस सर में हुआ। विवाह संस्कार तथा यज्ञ पं. त्रिलोक चन्द्र शास्त्री आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर तथा पं. मनीषीदेव शास्त्री बटाला ने कराया। ला. शामलाल जी कर्मठ आर्य पुरुष हैं। आर्यसमाज की सेवा में आगे ही आगे रहते हैं बनावट तथा बरात का सम्मान बड़े समारोह से किया। लारेंस रोड तथा बटाला के गन्य मान्य सज्जन शामिल थे। एक ट्रैक्ट और शिक्षा भी छपवा कर बांटी गई। इस शुभावसर पर अन्य दान के अतिरिक्त वेद प्रचार सभा में भी बीस रुपये श्री शामलाल जी ने दिये। सारे परिवार को वधाई तथा धन्यवाद।

आर्य समाज लारेंस रोड

आर्य समाज लारेंस रोड अमृत सर में प्रातः काल दैनिक यज्ञ हवन के पश्चात् पं. त्रिलोक चन्द्र शास्त्री आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब जालंधर के महर्षि कणाद के वैशेषिक दर्शनों की कथा कर रहे हैं। प्रातः काल धर्म प्रेमी नर नारी अच्छी संख्या में इस दैनिक दर्शन के स्वाध्याय में सम्मिलित होते हैं। इस समाज के सज्जन और माताएं बहिनें गम्भीर स्वाध्याय में बड़ी रुचिलेते हैं। इस ओर बड़ा शौक है। समाज का यह दैनिक कथा कार्यक्रम कई दिनों से आरम्भ है तथा यह कथा चलती रहेगी। 6½ बजे से 8 बजे तक कार्यक्रम चलता है।

★

देवता की जयन्ती नं० २

प्रातः स्मरणीय म० हंसराज जी की जन्म-शताब्दी २३-२४-२५ अक्तूबर १९६४ को जालन्धर नगर में समारोह से सम्पन्न हो रही है। महापुरुषों की जयन्ती जनता को विस्मृत गुणों, घटनाओं व जीवन को व्यवस्थित मार्ग पर चलने का पथ प्रदर्शन करती है। इस दृष्टि-कोण से महात्मा जी की स्वर्ण जयन्ती भी अपना विशेष महत्व रखती है। इस को सफल बनाने के लिए प्रादेशिक सभा रोचक प्रोग्राम तैयार कर रही है। इस सम्बन्ध में म० हंसराज वैदिक साहित्य विभाग महात्मा जी की पुण्य स्मृति में साहित्य प्रकाशन का कार्य कर रहा है। ऐसा साहित्य जो कम कीमत का, म० हंसराज जी के संक्षिप्त जीवन से भरपूर, नवयुवकों के हाथों में अधिक संख्या में पहुंचाना है, प्रकाशित हो रहा है। इसी अवसर पर प्रदर्शनी का भी आयोजन किया जा रहा है। इस जयन्ती का सब से महत्व पूर्ण कार्य खेलें वाद विवाद प्रतियोता तथा विविध सम्मेलन होंगे।

जयन्ती को सुचारु रूपसे चलानेके लिए पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज ने तीन पृष्ठों की अपील प्रकाशित की है जो प्रायः सभी दैनिक पत्रों में प्रकाशित हो चुकी है। अब वह पैमफेल्ट की शकल में छप कर भारत की सभी समाजों में भेजी जा रही है। इस प्रकार प्रादेशिक सभा पूर्ण उत्साह से इस को सफल बनाने का उद्योग कर रही है।

व्यवस्थापक

नैराश्यं परमं सुखम्

निराशा की भी एक आशा होती है। निराशा में भी आशा रहती है!

—'अब हमारे तरण-तारण का एक ही उपाय शेष है। वह यह कि निराशा की आशा। इसी निराशा की आशा के बल पर बहुतों ने भव-सागर को पार किया है और ईश्वर के साक्षात दर्शन किये हैं'—

—'प्राप्त संकटों के पार जाने के लिए यह निराशा की आशा ही परम सहायक होगी। इसी से शक्ति आयेगी। इस शक्ति का अभ्यास करते रहोगे, तो—नैराश्यं परमं सुखम्' इस व्यासोक्ति का बीज हमारे हाथ लग सकता है।'

—'तब हम शीघ्र ही दुःसह वर्तमान स्थिति को पार कर जायेंगे।'

(लोक मान्य) बाल गंगाधर तिलक)
(विश्ववृत्त, मरहटी मासिक, अप्रैल १९०६)

आने वाली जयन्ती को स्मरण रखें.

महात्मा आनन्द स्वामी जी

यह शुभ समाचार अत्यन्त प्रसन्नता एवं हर्ष से सुना जायगा कि आर्यजगत् महान तपस्वी, प्रभुभक्त, सौम्यता और मधुरता की मनोरम सजीव मूर्ति पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज अब प्रभु कृपा से स्वस्थ हो गये हैं। शिवरात्रि पर बम्बई में सारे आर्यसमाजों द्वारा मनाए गए शिवरात्रि के सुन्दर समारोह में पधार कर आपने अमृतमय उपदेश से कृतार्थ किया। आजकल बम्बई ही हैं। आप दो मार्च को देहली पधार रहे हैं। प्रभु का महान् धन्यवाद है। अब उसी प्रकार जनता अमृतपान करेगी। प्रभु महात्मा जी को सदा स्वस्थ रखें इस समय ८८ वर्ष के हो गये हैं।

पुस्तक समीक्षा

बहाई-मत-दर्पण—

लेखक—श्री देव प्रकाश जी वैदिक मिशनरी, प्रकाशक—दानवीर श्री लाला जगत राम जी महाजन रिटायर S.D.O. अमृतसर पृष्ठ संख्या 77, कीमत 50 N.P.

लेखक महोदय ने इस छोटी सी पुस्तिका में बहाई मत की उत्पत्ति, उसका विकास, तथा नियम भली प्रकार समझाए हैं। बहाई मत का प्रथम जन्मदाता बहा उल्लाह ने किस प्रकार ईरान देश में इस को स्थापना की और इस का प्रचार करने के हेतु इसके बड़े भाई ने अरब के अनेक देशों में भ्रमण करके अनेक अवतार खड़ कर दिए इन सभी बातों का इस लघु पुस्तक में बड़ा मनो रंजक वर्णन किया है। पुस्तक प्रचारकों के लिए अति उपयोगी है।

प्रकाशक महोदय ने बहाईमत का नग्न रूप जनता के समक्ष रखने के लिए ही बहाईमत दर्पण का सारा खर्च अपने पास से ही किया है। ऐसा करने से उन की दान वीरता का परिचय मिलता है।

प्राप्तिस्थान—म. हंसराज साहित्य विभाग आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर

बातों की परीक्षा हो जाती है।

गच्छतः स्खलनं क्वापि, भवत्येव प्रमादतः।
हसन्ति दुर्जनास्तत्र, समादधति सज्जनाः॥

चलते-चलते कहीं न कहीं पैर फिसलता है, तब गिरते हुए पुरुष की खिल्ली उड़ाने में कौन बड़ाई। बड़ाई इस में है कि उस गिरे हुए को सम्भालें। सज्जनों का काम संभालना ही है। केवल दोषैकदृक् नहीं होना चाहिए, गुणों पर भी दृष्टि रहनी चाहिए क्योंकि बुद्धिमान् पुरुष गुण ग्राह्य अर्थात् गुणों के पक्षपाती होते हैं।

आर्य प्रादेशिक सभा के वेद प्रचार की गतिविधि

आर्य समाज लारेंस रोड–४ फरवरी से ११ फरवरी तक शिवरात्री समारोह धूमधाम से मनाया गया है । श्री पं. त्रिलोकचन्द्र जी पधारे।

आर्य समाज रेलवे रोड अम्बाला शहर में शिवरात्री पर्व बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हुआ श्री पं. ओमप्रकाश जी, श्री राजपाल मदन-मोहन मण्डली तथा श्री हजारीलाल जी पधारे।

आर्य समाज पुरानी मण्डी जम्मू–६ फरवरी से ११ तक शिवरात्री पर्व पं. हरिश्चन्द्रजी शास्त्री तथा श्री हंसराजजी ने सम्पन्न किया।

आर्य समाज मोडल टौन पानीपत–शिवरात्री पर्व सम्मिलित रूप से समारोह के साथ सम्पन्न हुआ। ऋषि मेला और खेलें ६ फरवरी को हुईं।

आर्य समाज लारेंस रोड–में होलियों के पर्व पर २१ से २८ फरवरी तक पं. खुशीराम शर्मा कथा कहेंगे।

आर्य समाज कक्कड़ माजरा (अम्बाला)–५ फरवरी से ११ तक यज्ञ उत्सव सम्पन्न हुआ। श्री मेलाराम जी, श्री अमरसिंह जी, श्री जगतराम जी और श्री सुभाष जी पधारे।

आर्य समाज इलाहाबाद (U.P.)—का उत्सव ८ से ११ फरवरी तक धूमधाम से सम्पन्न हुआ। सभा की ओर से श्री राजपाल, मदन-मोहन चिमटा मण्डली, प. चन्द्र सैन जी पधारे।

आर्य समाज कुंजपुरा करनाल–का यज्ञ उत्सव २५ फरवरी से १ मार्च तक धूमधाम से हो रहा है। श्री पं. त्रिलोकचन्द्रजी श्री पं. ओम प्रकाश जी, श्री राजपाल मदनमोहन जी चिमटा मण्डली, श्री मेलाराम जी, श्री पं. चन्द्रसैन जी, श्री अमरसिंह जी अम्बाला करनाल मण्डल पधार रहे हैं। ६ से ६ फरवरी खरकड़ा, १० से १२ फरवरी भाऊ आनन्दपुर १३ से १५ फरवरी भरू के उत्सव सम्पन्न हुए।

आर्य समाज वीर दल सम्मेलन प्रेमनगर करनाल मे

१, २, फरवरी को सम्पन्न हुआ सभा की ओर प. ओमप्रकाश जी पं. चन्द्रसैन जी और पं. मेलाराम जी पधारे।

आर्य समाज पावली १६ से १८ फरवरी, आर्य समाज टिटोली १६ से २१ फरवरी, आर्यसमाज मदीना डागी २२ से २४ फरवरी, आर्य-समाज निडाना २५ से २७ फरवरी, आर्य समाज चुड़ाली २८ से १ मार्च, ये सारे उत्सव श्री भूरारामजी की देखरेख में सम्पन्न हो रहे हैं।

आर्यसमाज कोट (अम्बाला)–का यज्ञ ११, १६ फरवरी तक सम्पन्न हो रहा है। श्री पं. त्रिलोक चन्द्र जी श्री मेलाराम जी, श्री अमरसिंह जी अम्बाला करनाल मण्डल पधारे।

खुशीराम शर्मा
वेदप्रचार अधिष्ठाता
आर्य प्रादेशिक सभा

शिवरात्रि कल्याणकारी रात्रि

(ले०–सुदेशकुमारी जी रेलवे रोड करनाल)

पता नहीं भारतवासी क्यों और कब से शिवरात्रि मनाते चले आ रहे थे। परन्तु यह रात्रि कभी भी अपने अर्थानुकूल शिवरात्रि अर्थात् कल्याणकारी रात्रि सिद्ध न हुई थी। टंकारा में भी यही शिवरात्रि आई। वह न केवल कल्याणकारी ही थी अपितु मंगलकारी बोध रात्रि भी थी। ज्ञानदात्री के आंचल में टंकारा के शिवालय में पिता के आदेशानुसार एक १३ वर्षीय बालक मूलशंकर शिवार्चन करने के पश्चात् उत्सुकता पूर्वक शिवदर्शनार्थ, शिवलिंग की ओर निहार रहा था। उस समय अन्धकारमयी रात्रि के चारों ओर प्रसारित शान्तमय वातावरण में अकेला मूलशंकर ही जाग रहा था शिव दर्शनके लिए, जबकि मन्दिर के सभी पुजारी और शिवभक्त निद्रादेवी की गोद में सुख पूर्वक सो रहे थे। उस समय बुझते हुए दीपक मानों मूलशंकर को अपना कर्त्तव्यभार सौंप रहे थे। जब मन्दिर में नीरवता और अन्धकार का साम्राज्य छा गया तो एक लघु परन्तु महत्वपूर्ण घटना ने मूलशंकर के जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन ला कर दिया। शिवलिंग में से शिवदर्शन की प्रबल लालसा शिवलिंग के प्रति घृणा में परिणित हो गई। यही बोध बेला थी। उसी समय मूलशंकर के हृदयस्थल में एक और नई अभिलाषा का प्रादुर्भाव हो गया। वह थी सच्चे शिव की खोज। इसी कल्याकारी रात्रि ने मूलशंकर को 'दयानन्द' बना दिया।

अपने उद्देश्य में सफलता प्राप्त करने के लिए दयानन्द को अनेकों कठिनाईयों का सामना करना पड़ा। परन्तु कहा गया है—'वीरानां चित्तरत्नं अखण्डितम्' अन्ततोगत्वा आपने व्याकरणके सूर्य, वेदविद्या के विशारद, मथुरा निवासी प्रज्ञाचक्षु गुरुवर 'विरजानन्द' जी का द्वार खटखटा। भीतर से आवाज आई कौन हो ? दयानन्द का उत्तर था यही तो जानने आया हूं कि मैं कौन हूं ? कितने भावपूर्ण थे महर्षि के यह वाक्य। ज्ञान प्राप्ति के अनन्तर महर्षि ने तन-मन, यौवन, दक्षिणा के रूप में गुरु को अर्पण कर दिया और विश्व में प्रसारित अविद्यान्धकार को दूर करने की प्रतिज्ञा की।

जिस समय महर्षि का जन्म हुआ था, मानवता अन्धकार में पड़ी हुई कराह रही थी। धर्म की परिभाषा को सभी भूल चुके थे, धर्म तो व्यापार में परिणत हो चुका था। धर्म रूपी पर्दे की ओट में अनेकों पाप और अत्याचार किए जाते थे। धर्म के ठेकेदारों ने ईश्वर के सर्वज्ञाता के गुण को विस्मृत किया था उनके लिए तो ईश्वर मूर्ति के रूप में खिलौना मात्र था। इसी का दुष्परिणाम था कि उनका नैतिक पतन बहुत तीव्र गति से हो रहा था। चारों ओर अज्ञानरूपी अन्धकार का साम्राज्य छाया हुआ था। इस परम पवित्र ऋषि-भूमि भारत में कई मतमतान्तरों रूपी घटोटोप बादलों की ओट में वैदिक धर्म रूपी सूर्य छिप चुका था! महर्षि के ज्ञानरूपी प्रचण्ड वायु ने, उन मेघों को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। पुनः संसार वैदिक धर्मरूप सूर्य से आलोकित हो उठा। यदि आज हम वेदों के गूढ़तम ज्ञान को सुनने, पढ़ने और समझने की क्षमता रखते हैं तो महर्षि की ही कृपा है।

महर्षि आज की रात को जागे थे और सदा के लिए जागते रहे। यह रात्रि केवल आर्य जाति के लिए ही कल्याणकारी नहीं थी बल्कि

(शेष पृष्ठ ८ पर)

मारा भूत और भविष्य

(पृष्ठ २ का शेष)

मी दयानन्द कसौटी पर पूरे रे।"

आर्य समाज ने जो कुछ किया सूझबूझ वाले अंग्रेज ने वह र्य समाज के जन्म लेते ही भांप गा था। एक बार जालन्धर के ेज डिप्टी कमिश्नर से महात्मा शीराम जी की भेंट हुई चर्चा के य महात्मा जी ने कहा कि र्य समाज राजनैतिक दल नहीं। रा सरकार से कोई सीधा विरोध । हमारा कार्य धर्म प्रचार है। विवाह, छूतछात, अविद्या दि सामाजिक रोगों से समाज बचाना। यह सुन कर वह बोला और कैसे आप शासन का ाध करेंगे? इस प्रकार से तीय शक्तिशाली बनेंगे। इनकी ाजिक और राष्ट्रीय बीमारियां हो जायेंगी तो फिर हम इन कैसे शासन करेंगे? बलवान किसी के आधीन रहता है?

यह है कार्य जो हम ने किया। व्य हमारी बाट देखता है। ापुर में एक प्रतिष्ठित नेता श्री गे ने कहा कि आर्य समाज का शेरों का समाज है। वीरों आर्य समाज को सिसकती कती मानवता पुकारती है। वीरो! बोध रात्रि जागरण र्व है। जागो! जागो! जागो! को जगाने का महान कार्य को ऋषि ने सौंपा है।

रात्रि कल्याणकारी रात्रि

(पृष्ठ ७ का शेष)

के लिए भी कल्याणकारी थी। के दिन का कोई महत्व नहीं व तो इस बात का है कि विश्व गाने वाले महान् ऋषि ने आज न अपने उद्देश्य प्राप्ति के लिए कदम उठाया था इसीलिए यह आर्यसमाज के इतिहास में एक महत्व

इस दिवस का [illegible] अधिकारी हैं जबकि अपने आचार्य-वर महर्षि दयानन्द का अनुसरण करते हुए विश्व का कल्याण करने का दृढ़ संकल्प लें। तभी हम 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' का नारा लगाने के भी अधिकारी हैं।

[illegible]

आर्य कुमार सभा प्रधाना मुहल्ला [illegible]

संरक्षक—जगदीश मित्र जी, [illegible]चन्द्र जी, [illegible] जी। [illegible]—जगमोहन जी आर्य। उपप्रधान—सुरेश कुमार जी। मंत्री—श्री उत्तम चन्द्र जी। कोषाध्यक्ष—रोशनलाल जी। उत्तमचन्द्र आर्य मंत्री आर्य कुमार सभा।

आर्य युवक परिषद देहली

प्रधान—देवव्रत जी धर्मेन्दु। उपप्रधान—साधुराम जी शास्त्री। रामदेव जी तनेजा, जगदीश विद्यार्थी प्रधान मन्त्री—श्री ओमप्रकाश जी, उपमंत्री—सुदेश कुमार जी, सुरेन्द्र हिन्दी। प्रचार मन्त्री—नरेन्द्रकुमार जी। परीक्षा मन्त्री—सुदर्शन सरीन। कोषाध्यक्ष—कुलदीपराज महता। अन्तरंग सदस्य—ज्ञान प्रकाश, तिलकराज, गणेश दास, हरिदत्त और रामधन भाटिया। ओमप्रकाश प्रधान मंत्री।

आर्य समाज पुल बंगश देहली की सूचनाएं व चुनाव।

प्रधान—श्री किशोरी लाल जी, उपप्रधान-धर्मदत्त जी, मंत्री-सुदेश कुमार जी, सहायक मंत्री-पारवानी जी, कोषाध्यक्ष-राम सरन दास जी, पुस्तकाध्यक्ष-प्रभु दयाल जी, निरीक्षक-राज कुमार जी।

—लोहड़ी का बृहद् यज्ञ श्री पं. गणेशदत्त जी, वानप्रस्थी ने सम्पन्न कराया।

—बसंत पचमी का त्योहार [illegible] में वानप्रस्थी जी के [illegible]रोह के साथ समाप्त हुआ।

—महात्मा हंसराज जयन्ती के अवसर पर भारत सरकार से महात्मा हंसराज टिकट जारी करने की और शिवरात्री की छुट्टी जारी करने की मांग की गई। सुदेशकुमार मंत्री समाज।

आर्य कुमार सभा सीताराम बाज़ार देहली—

यह सभा श्री राजा राम जी, शास्त्री की प्रधानता तथा प्रिंसीपल रूपलाल जी देख रेख में चल रही है। प्रति रविवार शाम को इस के साप्ताहिक सत्संग बड़े मनोरंजक ढंग से मनाए जाते हैं। गत सप्ताह पारिवारिक सत्संग बड़े उत्साह के साथ सम्पन्न हुआ। जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा ऐसा करने से अनेक युवक कुमार सभा के सदस्य बन गए। तेजराम पुरोहित।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिधि सभा की सूचनाएं।

(भ्रष्टचार का निवारण)

प्रताप सिंह शूर जी, वल्लभ दास प्रधान सभा आर्य समाजों के अधिकारियों व सदस्यों से आग्रह करते है कि वे स्वयं भ्रष्टाचार और उस के प्रभुत्व से अपने को मुक्त रखे, दूसरों से मुक्त रहने की प्रेरणा करें, बड़े से बड़े भय, प्रलोभन और स्वार्थ से ऊपर रहकर चरित्र-निर्माण की स्वस्थ परम्पराएं डालने और उन में वृद्धि करने का कारण बन कर यश के भागी बनें। इस कार्य में आर्यसमाज और उसके सदस्यों से बहुत बड़ी आशाएं हैं जिन की पूर्ति पूर्ण गौरव और मनोयोग पूर्वक होनी ही चाहिए।

साप्ताहिक सत्संगों, वार्षिकोत्सवों, विशेष सम्मेलनों और विशेष समितियों द्वारा भ्रष्टाचार निवारण को प्रोत्साहन दिया जाना आवश्यक है। प्रांतीय सभाओं को भी इस दिशा में विशेष यत्न की आवश्यकता है।

महाविद्यालय गुरुकुल झज्जर का ४६वां वार्षिक महोत्सव

तारीख १५, १६ फरवरी १९६४ ई० शनिवार, रविवार को अति समारोह के साथ मनाया जायेगा। पर्याप्त संख्या में पधार कर अनुगृहीत करें। इस अवसर पर अनेक उच्चकोटि के संन्यासी, महात्मा, विद्वान, तथा उपदेशक पधार रहे हैं।

यजुर्वेद पारायण महायज्ञ

११ फरवरी, मंगलवार (शिवरात्रि) को प्रातःकाल ७ बजे प्रारम्भ होगा और महायज्ञ की पूर्णाहुति १६ फरवरी रविवार को प्रातःकाल १० बजे होगी। यज्ञप्रेमी सज्जन महायज्ञ की सफलता के लिये श्रद्धानुसार घृत, सामग्री, समिधा आदि देकर पुण्य के भागी बनें।

नवीन ब्रह्मचारियों का प्रवेश

वार्षिक महोत्सव पर नये ब्रह्मचारी प्रविष्ट किये जायेंगे। प्रवेशार्थी सज्जन १४ फरवरी को सायंकाल तक गुरुकुल में पहुंच जावें।

मन्त्री बलवंतसिंह वैद्य

आर्यसमाज लोहगढ़ अमृतसर

आर्यसमाज लोहगढ़ ने २६-१-६४ रविवार सत्सङ्ग में श्री कैप्टन केशवचन्द्र जी की पूज्या धर्मपत्नी के देहावसान, श्री ला० परमानन्द जी नागपाल की वीरमाता जी के परलोक गमन और श्री ला० बस्तीराम जी के निधन पर शोक तथा परिवारों के साथ सहानुभूति और परमात्मा से सब को धैर्य प्रदान करने की प्रार्थना की।

—पिण्डीदास ज्ञानी प्रधान

[मुद्र]क व प्रकाशक श्री सत्यपराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा [आर्य]जगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टैलीफोन न० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे — वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक ८) १२ फाल्गुण २०२० रविवार—दयानन्दाब्द १४०—२३ फरवरी १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

ब्रह्म द्विषो जहि

हे विद्वन् ! जो ब्रह्म के आस्ति-
ा के, ज्ञान के तथा प्रभु की
्याणी वाणी वेद के द्वेषी हैं,
रोधी हैं, उनको नष्ट कर दे।
के उन विचारों को नाश कर दे।
ज्ञान को ज्ञान में बदल दे। उन्हें
ान का, भगवान् का और वेद का
क्त बना दे।

इन्द्रसोमं पिब

हे मानव ! तू अपने जीवन में
ु भक्ति के सोम रस के प्याले
ो.पी। नाना प्रकार के पीने के
दार्थ पीता है, तो जीवन में उस
मृत के समान मीठे, स्वादु भक्ति
स का प्याला भी पी। यह सोम
स बड़ा ही मधुर, अनूठा है।

इन्द्र त्वादातमित्

हे परमेश्वर ! सारे ऐश्वर्य के
भण्डार ! यह सब कुछ प्रसाद त्वा-
दातम्—तेरा ही दिया हुआ है।
हमारे पास जो कुछ भी है, शरीर,
बल, धन वैभव तथा प्रकृति के
पदार्थ—ये सब आपका ही दिया
प्रसाद है सब के दाता प्रदाता आप
ही हैं। साम वेद से

स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी सर्वमेधी
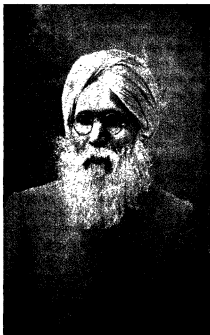
आप की जन्म शताब्दी आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर की ओर से अक्टूबर १९६४ में धूमधाम से मनाई जानी निश्चित हुई है।

ऋषि दर्शन

लोक: सर्वे भ्रमन्ति

जितने भी लोक लोकान्तर हैं। पृथिवि आदि लोक हैं—वे सब घूमते हैं। कोई अपनी परिधि पर घूमता है और कोई अपनी परिधि पर घूमता हुआ सूर्य के गिर्द भी घूमता है। सब में गति हैं। बिना गति कोई भी नहीं ठहरा।

सूर्यस्य परितो याति

यह हमारी भूमि सूर्य के चारों ओर घूमती है। उसके चारों ओर चक्कर लगाती रहती है। इसमें अपनी परिधि पर घूमने की गति भी है तथा सूर्य के गिर्द भी घूमने की गति है।

एव मेव सूर्य:

इसी प्रकार सूर्य भी अपनी परिधि पर आकाश में घूमता है। उस में भी परिधि पर भ्रमण करने की गति है। नितान्त स्थिर या गति शून्य तो कोई रह नहीं सकता।

भा ष्य भू मि का

अधिष्ठाता—संतोषराज सभा मंत्री — सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

सैद्धान्तिक चर्चा

प्राणापान की परिभाषा

लेखक – श्री पं. सत्यप्रिय जी शास्त्री सिद्धान्त शिरोमणी
प्राध्यापक :– दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार

ऋषि शब्द का निर्वचन करते हुये महर्षि यास्क ने निरुक्त में लिखा है 'साक्षात कृत धर्माण ऋषयो बभूवुः' अर्थात वेद के तत्वों का जीवन में प्रत्यक्ष करने वाले ऋषि कहलाते हैं। इस परिभाषा के अनुसार युगप्रवर्तक आचार्य दयानन्द जी ऋषि ही नहीं प्रत्युत महर्षि थे। ऋषिवर दयानन्द ने अपने साहित्य द्वारा वेद का जो मौलिक विश्लेषण किया उसमें उनके साहित्य चक्र की धुरा प्राचीन वैदिक ऋषियों की अमर मान्यतायें हैं। ऋषिने प्राक् कालीन ऋषियों के सर्वकालीन सत्य एवं अमर सिद्धान्तों के आधार पर ही अपने अन्वेषण की नीव रखी। दूसरे शब्दों में हम उन्हें वैदिक धर्म रुपी हीरे सदियों से जमे मैल को तरासने वाला शिल्पी कह सकते हैं उनके द्वारा प्रादुर्भावित सिद्धान्तों के सम्बन्ध में यदा कदा आर्य विद्वानों में मतभेद होता रहता है। उन्हीं में से प्राण एवं अपान शब्द के अभिप्राय भी हैं। साधारणतः वर्तमान आर्य विद्वान प्राणापान की निम्न परिभाषा करते हैं। 'जो वायु बाहर से अन्दर लिया जाय वह प्राण तथा जो शरीरस्थ वायु बाहर निकाला जाय वह अपान इसमें उनकी युक्ति यह है कि अप अथवा अव शब्द निम्नता के वाचक होने से बाहर आने वाला वायु अपान तथा तद विरुद्ध प्राण कहाता है। महर्षि के साहित्य का गंभीरता पूर्ण विवेचन करने से यह मत अशुद्ध ठहरता है, क्यों कि इसमें महर्षि दयानन्द जी का स्वयं शब्द प्रमाण है। यथा (प्राणश्चापानश्च) 'शरीराद् बाह्य देशं यो वायुर्गच्छति स प्राण—बाह्य देशाच्छरीरं प्रविशति स वायुरपानः' अर्थात शरीर से बाहर जो वायु निकलता है वह प्राण तथा बाहर से जो वायु शरीर में प्रवेश करे वह अपान है। भाष्य भूमिका वेदोक्त धर्म विषय) '(प्राणाय) आभ्यन्तराद बर्हिनिः सरति तस्मै...(अपानम्) यो बहिर्देशादाभ्यन्तरं गच्छति तस्मै' अर्थात जो अन्दर से बाहर निकले उस प्राण नामक वायु के लिये और जो बाहर देश से अन्दर शरीर मे जाये उस अपान के लिये देखिये यजुर्वेद २२ २३ पर महर्षि दयानन्द जी का भाष्य तथा देखिये 'दूसरा प्राणमय' जिस से 'प्राण' अर्थात जो भीतर से बाहर जाता है 'अपान' जो बाहर से भीतर आता है (सत्यार्थ प्रकाश नवम समुल्लास) स्थाली पुलाक न्याय से इस विषय के लिये ये तीन प्रमाण ही पर्याप्त हैं। महर्षि दयानन्द जी महाराज का ऐसा अर्थ करना निराधार तथा प्रमाण हीन नहीं है। ऋषि दयानन्द जी महाराज का ऋषित्व तथा प्राचीन वैदिक मुनियों के प्रति दृढ़ आस्था ऐसे स्थलों पर आकर प्रकट होती हैं इन शब्दों में अनधातु से पूर्व प्र तथा अप ये दो उपसर्ग लगे हैं इन उपसर्गों का अर्थ समझने के पश्चात ही महर्षि दयानन्द कृत अर्थस्पष्ट हो जाता है। महर्षि यास्क ने अपने वैदिक कोश निरुक्त में नाम आख्यात उपसर्ग और निपात ये शब्दोंके चार भेद स्वीकार किये हैं उपसर्गो का अर्थ करते हुये महर्षि यास्क जी लिखते हैं। 'आदति अर्वागर्थे प्र परेत्येतस्य प्रतिलोम्यम् समित्ये की भावम् व्यपेत्येतस्यप्राति लोम्यम्' अर्थात आ इस उपसर्ग का अर्थ इधर परिधि-सीमा वाचक है। परन्तु प्र और परा इन दोनों का अर्थ इसके विपरीत अर्थात परे होता है सम इस का अर्थ एकत्र संघात होना है परन्तु वि-अप इनका इसके विपरित अर्थात अनेक हो जाता है। जो वायु शरीर से बाहर निकलता है वह प्राण क्यों कि प्र का अर्थ परे होना निरुक्त के अनुसार है जो वायु बाहर से शरीर में आता है वह अपान है। क्यों कि शरीर में आकर वह पांच स्थानों पर विभक्त हो अपना २ कार्य करने लगता है जैसे किसी ग्रंथ का वचन है—हृदि प्राणो गुदि अपानो समान नाभि मण्डले, उदान कण्ठ देशस्थ व्यान सर्व शरीरगः। क्यों कि वह वायु पांच स्थानों पर विभक्त अनेक होकर कार्य करता है। अतः अपान कहाता है इसलिये यास्क महोदय ने अप का अर्थ अनेक किया है इसी आर्ष प्रमाण के आधार पर ऋषि दयानन्द जी महाराज ने प्राण तथा अपान की उपरोक्त परिभाषा की है प्र शब्द का इसी अर्थ में प्रयोग योगदर्शन में भी देख सकते हैं यथा तस्मिन् सतिश्वास प्रश्वास योर्गति विच्छेदः प्राणायाम योग २—४९। इस सूत्र पर व्यास भाष्य देखिये 'सत्यासन जये बाह्यस्य वायोराचमनंश्वासः कौष्ठास्य वायोर्निस्सारणं प्रश्वासः' अर्थात आसन पर विजय लाभ होने के बाद बाहर के वायु को अन्दर लेना श्वास एवं अन्दर का वायु बाहर निकाल ना प्रश्वास कहाता है और भी देखिये—'सतु बाह्याभ्यान्तर स्तम्भ वृतिर्देशकाल संख्याभिः परिदृष्टो दीर्घ सूक्ष्मः॥ यो० २-५०॥ इस पर भी व्यास भाष्य द्रष्टव्य है 'यत्र प्रश्वास पूर्वको गत्यभावः स बाह्यः यत्र श्वासपूर्वको गत्यभावः स आभ्यन्तरः' अर्थात जिस अवस्था में प्रश्वास को बाहर निकालकर गति निरोध करना है वह बाह्य कहाता है एवं जब श्वास को अन्दर रखकर ही रोकना है वह आभ्यन्तर होता है यहां दोनों स्थानों पर महर्षि वेदव्यास भी प्र उपसर्ग सहितश्वास का अर्थ बाहर निकालना वायु को परे धकेलना ही करते हैं। महर्षि यास्क ने भी अर्वाक का विपरीत अर्थ प्र को दिया है इस प्रकार प्र शब्द का जो अर्थ महर्षि वेद व्यास ने योग के प्रकरण में किया है वैसा ही अर्थ महर्षि दयानन्द का किया जाना उनके ऋषि होने का प्रमाण है इस विवेचन का यह भी निष्कर्ष है कि योग दर्शन के श्वास को ही महर्षि दयानन्द जी अपान और प्राण नाम देते हैं क्यों कि इनकी परिभाषा की साम्यता है दोनों स्थानों पर ही प्र का अर्थ परे करना है अतः प्राणापान का अर्थ यही संगत तथा आर्षशास्त्र सम्मत है। महर्षि दयानन्द जी महाराज कृत सत्यार्थ प्रकाश के दो स्थलों पर प्राणापान अर्थ का वैपरीत्य है तृतीय समुल्लास में दिये दर्शन सूत्र प्रकरण में जहां वैशेषिक दर्शन का जीवलक्षण विषयक सूत्र 'प्राणापान निमेषोन्मेषेत्यादि' दिया है तथा यही सूत्र सप्तम समुल्लास में दिया है। तो दोनों स्थलों पर प्राण का अर्थ बाहर से अन्दर लिया जाने वाला तथा अपान का अन्दर से बाहर किया जाने वाला वायु अर्थ किया है इन दो स्थलों के अतिरिक्त अन्यत्र सर्वत्र हमारे द्वारा अनुमोदित अर्थ किया है। इन दो स्थलों के विषय पर विचार के बाद इस निश्चय पर पहुंचते हैं कि हो सकता है वैशेषिक दर्शन के अनुसार प्राणापान की यही परिभाषा हो परन्तु इस से तो ऋषियों में परस्पर विरोध उपस्थित होता है अतः अन्त में इस निश्चय पर पहुंचते हैं कि यह सब लेखक के प्रमाद से लिखा गया।

(क्रमशः)

श्री स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी के चरणों में श्रद्धांजली

(ले०—श्री पं. रुद्रदत्त जी शर्मा प्रधान आर्यसमाज लक्ष्मणसर अमृतसर)

देश और धर्म की रक्षा के लिए अपनी जान को जोखों में डालना या गोली का निशाना बनकर शहीद हो जाना भारी कुरबानी है परन्तु आयु भर मोह माया के बन्धन को काटकर धन और ऐश्वर्य की इच्छा तक को त्याग कर जीवन का श्वास श्वास पर-उपकार में लगा देना उस से भी बहुत बड़ी कुरबानी है। देश में अगनित कालज और विश्व-विद्यालय हैं जिनमें से लाखों विद्यार्थी प्रति वर्ष परीक्षोत्तीर्ण होकर निकलते और अपनी डिग्रियों का मूल्य वसूल करने में दिन रात एक कर देते हैं। परन्तु कितने हैं जो महान परिश्रम और घोर तपस्या द्वारा उच्च से उच्च शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् समस्त इच्छाओं और जवानी की उमंगों को दबा कर अपनी शक्ति, शिक्षा और योग्यता को जीवन भर के लिए संसार का दुःख दूर करने में लगा देते हैं। महात्मा हंसराज एक ऐसे ही सुशिक्षित और तपस्वी युवक थे जिन्होंने उस समय **B.A.** पास किया जब कि बहुत कम, इने गिने ग्रैजुयेट निकला करते थे और सरकार ऐसे होनहार युवकों को तुरन्त ऊंचे से ऊंचे पदों पर लगा दिया करती थी। महात्मा जी भी सरकारी पद स्वीकार करके सुख और आनन्द का जीवन व्यतीत कर सकते थे परन्तु उन्हीं दिनों महर्षि दयानन्द के परलोक गमन के कारण देश में शोक की घटायें छाई हुई थीं और आर्य नेता महर्षि के मिशन की पूर्ति के निमित्त देश और धर्म के दीवाने पैदा करने के लिये डी० ए० वी० हाई स्कूल की नींव रखने का निश्चय कर चुके थे और इस चिन्ता में थे कि इस महान् कार्य का बोझ किस के कन्धों पर रखा जाये। इस समय महात्मा हंसराज जी ने सांसारिक सुखों की लालसा को त्याग कर डी० ए० वी० स्कूल का अवैतनिक मुख्याध्यापक बनना स्वीकार किया और उनके परिवार के गुजारा के लिये उनके बड़े भ्राता श्री मुलकराज ने कुछ साधारण रकम मासिक रूप में देनी आरम्भ की जो इतनी अपर्याप्त थी कि महात्मा जी और उनके परिवार को कई-कई रातें बिना कुछ खाये गुजारनी पड़ती थीं। यह महात्मा जी के घोर परिश्रम और अनुपम बलिदान ही का परिणाम था कि यह स्कूल न केवल प्रांत भर में एक आदर्श शिक्षणालय बन गया, अपितु देखते ही देखते इसने एक भारी विश्वविद्यालय का सा रूप धारण कर लिया और इसकी शाखायें देश के कोने-कोने में फैल गयीं, जो क्या शिक्षा के लिहाज से और क्या देश और धर्म की रक्षा की भावना तथा सदाचार की दृष्टि से समस्त देश में सर्वश्रेष्ठ समझी जाने लगीं। सभी विद्यार्थियों, अध्यापकों एवं प्रोफैसरों के हृदयों पर महात्मा जी के सादा एवं पवित्र जीवन की छाप अङ्कित थी। और बीसियों सुयोग्य और होनहार युवक साधारण वेतन पर कालेज के "लाइफ मैंबर" बनने में गर्व समझते थे। उस समय के आर्य नेताओं की धर्म प्रचार की पवित्र भावना और तदानुकूल परिश्रम के परिणाम स्वरूप डी. ए. वी. कालेज आर्य मिशनरियों की खान सिद्ध हुये और इन में से पढ़ कर निकले विद्यार्थियों ने प्रचार कार्य को चार चांद लगा दिये और देश में आर्य समाज की धाक बिठा दी। महात्मा जी के सामने सदैव यही लक्ष्य उपस्थित रहा कि इन संस्थाओं को अधिक से अधिक वेद प्रचार का साधन बनाया जाये। वह धर्म शिक्षा स्वयं पढ़ाया करते थे। उन दिनों किसी युवक का डी० ए० वी० स्कूल में पढ़ना ही उसके आर्य होने का और डी० ए० वी० कालेज में शिक्षा प्राप्त करना उसके पक्का आर्य मिशनरी होने का अचूक प्रमाण हुआ करता था। महात्मा जी के देहांत के पश्चात इन संस्थाओं ने जहां शिक्षा के क्षेत्र में अपना उच्च स्तर (**Standard**) आज तक सुरक्षित रखा वहां अपने वास्तविक लक्ष्य वेद प्रचार और धर्म शिक्षा की दृष्टि से यह बहुत पीछे रह गये हैं। इसी कारण आज आर्य समाज में शिथिलता दिखाई दे रही है, क्योंकि आर्यसमाज की समस्त शक्ति संस्थाओं में झोंकी जा चुकनेके पश्चात इन संस्थाओं के आर्य समाज से बेमुख हो जाने से आर्य समाज के काम को भारी धक्का लगा है। डी० ए० वी० संस्थाओं के संचालकों तथा आर्यसमाज के नेताओं को परस्पर मिलकर इस गम्भीर प्रश्न पर अवश्य विचार करना चाहिये, यही पूज्य महात्मा जी की सच्ची याद होगी। हमें महर्षि के निज अनुभव में आ चुके इस सिद्धान्त को अवश्य सामने रखना होगा कि विद्यार्थियों में देश और धर्म की भावना भरने के लिये आवश्यक है कि हमारे अध्यापक, प्रोफैसर तथा प्रिंसिपल दृढ़ आर्य सुपरीक्षित धर्मात्मा विद्वान हों।

महात्मा जी किसी दुःखी को देखकर तड़प उठा करते थे। देश और जाती के लिये असीम दुःख उनके हृदय में कूट २ कर भरा हुआ था। जब कभी देश के किसी भी कोने में भूचाल, दुर्भिक्ष अथवा हिन्दू, मुसलिम दंगों की घटना सुनते, महात्मा जी तुरन्त वहां पहुंचते या आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के कार्यकर्ता भेजकर रुपया, अन्न वस्त्र आदि की सहायता का प्रबन्ध करते थे। उनका जीवन सचमुच इस लोक का जीवित जागृत चित्र था—

नत्वह कामये राज्यं,
न स्वर्गं न पुनर्भवम्
प्राणिना दुःख तप्तानाम्,
कामये दुःख नाशनम् ॥

महात्मा जी के आत्म अभिमान के एक ही उदाहरण का वर्णन करना पर्याप्त होगा। अंग्रेज सरकार ने जब दूसरे देश भक्तों के साथ महात्मा जी के ज्येष्ठ सुपुत्र बलराज जी पर राज विद्रोह का अभियोग चला कर मृत्यु दण्ड सुना दिया। उस समय के गवर्नर महात्मा जी की ओर से केवल संकेतमात्र मिलने पर श्री बलराज जी को मुक्त करने को तैयार थे। परन्तु पूज्य महात्मा जी गवर्नर के सामने प्रार्थना करने को तैयार न हुए। अपितु एक दिन गवर्नर कालिज देखने के बहाने स्वयं डी० ए० वी० कालेज में आ पहुंचा तो महात्मा जी ने छुट्टी ले ली ताकि वहां उपस्थित होने की अवस्था में शिष्टाचार के नाते उन्हें गवर्नर का अतिथि के रूप में स्वागत करना होगा, जिससे गवर्नर ऐसा न समझ बैठे कि महात्मा जी अपने पुत्र की रिहाई के लिये उसके आगे पीछे फिर रहे हैं। काश—आज भी हमारे नेताओं में इसी प्रकार का आत्म अभिमान आजये तो आर्य समाज और संस्थायें देश में क्रान्ति ला सकती हैं।

कठिन समस्या सरल सुझाव

(डा०देवव्रत जी महाजन मन्त्री आर्य समाज लारेंस रोड़ अतमृसर)

निसन्देह यह एक विकट समस्या है और भारी न्यूनता भी जो प्रत्येक जाति चिन्तक अथवा समाज सुधारक के मन में ही नहीं खटकी अपितु प्रत्येक गम्भीर गोष्ठी में प्रश्नचिन्ह बन कर मुखरित हो उठती है, कि आगे समाज का क्या बनेगा। युवकगण इधर ध्यान नहीं दे रहे। उन की धर्म के प्रति उदासीनता अथवा अरुचि निश्चय ही एक भयानक क्षेत्र है। जिस के अभिशाप स्वरूप अभी से समाज के चरित्र की दीवारें थिरकती सी दीखने लगी हैं। कौन जाने कि यदि इस समस्या का उचित हल न ढूंढा जा सका तो एक दिन ऐसा आये कि इस सामाजिक व्यवस्था के राजसी प्रासाद भुरभुरा कर तहस नहस हो जाय। आज भय ही नहीं वह एक कटु सत्य है कि भावी समाज का चित्र दिन प्रतिदिन धुंधला होता जा रहा है।

किसी भी रोग की चिकित्सा के पहले उस का निदान आवश्यक हुआ करता है। यदि निदान ठीक हो जावे और रोगी भी वैद्य या डाक्टर के साथ पथ्य आदि सेवन में सहयोग दे तो चिकित्सा आसान हो जाती है। और यदि निदान भी ठीक हो जावे रोगी भी सहयोग देने को तत्पर रहे और औषधि ही ठीक उपलब्ध न हो तो भी वही ढाक के तीन पात वाली बात रहेगी। आवश्यकता है कि समाज के सभी पहलुओं पर पूर्ण दृष्टि रखते हुये इस समस्या का सम्यक विश्लेषण किया जावे।

आज का युवक कल के युवक की अपेक्षा अधिक चुस्त और चालाक है अधिक पठित है नानाविध विद्याओं का ज्ञाता है। खेल में कूद में नाच मे गाने में बढ़ कर भाग लेता है। भिन्न २ प्रकार की गुट बन्दियों अथवा दल बन्दियों का भी प्राण है। सारांश यह कि उस में जीवन है वह निष्प्राण नहीं। जो प्राण डालने की आवश्यकता हो। आवश्यकता है तो केवल इस बात की कि उस की गतिविधियों को एक नया मोड़ दिया जावे। मोड़ भी ऐसा जो समाज में रूह फूंक दे। परन्तु यह क्यों कर सम्भव हो सकता है। भंवरा यदि असली पुष्प से उड़ कर कागज के पुष्पों पर मंडराता है बनावटी फूलों की ओर आकर्षित होता है। तो क्या तब सोचना न होगा कि ऐसा क्यों है। क्या असली फूलों का दुर्भाग्य समझ कर चुप रहना पर्याप्त होगा निश्चय ही नहीं। तो फिर देखना होगा कि पुष्प में क्या कमी है क्या दोष है जो भंवरा आकर्षित नहीं हो रहा।

क्षमा करेंगे मेरे आदरणीय पाठक गण। छोटा मुंह और बड़ी बात वाली बात कहने जा रहा हूं। मेरा विश्वास ही नहीं बल्कि दृढ़ विश्वास है कि पुष्प सुन्दर है आकर्षक है और सुरभित भी। भंवरा इधर आना तो चाहता है पर आने नहीं दिया जाता, उसे पुष्प पर मंडराने की मनाही कर दी जाती है 'संरक्षक' मक्खियों को उड़ाने के बहाने भंवरों को भी उड़ा देते हैं यदि इन्हीं पुष्पों को कुछ भले लोग अपने कोट कालर की शोभा बना कर रख लें तो मैं पूछता हू कि भंवरे बेचारे का क्या दोष? यह एक कटु सत्य है मानते सब हैं जानते सब हैं पर विवश हैं और यही विवशता समाज को घुन की तरह खाये जा रही है। मेरा विश्वास है कि बहुत से युवक उचित सम्मान न पा सकने के कारण अथवा कोई प्रोत्साहन प्राप्त न कर सकने के कारण समाज से दूर होने चले गये हैं।

समाज की सुगन्धि व्यक्ति के जीवन से विस्फुरित होती है। समाज भवन का नाम नहीं। उस मे सजी सुन्दर अलमारियों का नहीं यांफिर अलमारियों में सजी बहु मूल्य पुस्तकों का नाम भी नहीं। समाज है व्यक्तियों का समूह। व्यक्ति अच्छे समाज, अच्छ, और फिर बड़े व्यक्तियों में तो गुण भी विलक्षण होने चाहियें। अनुयायी अपने नेताओं को हर छोटी बड़ी बात को ध्यान से परखते हैं। उन का प्रभाव, अच्छा या बुरा, एक अमिट छाया पीछे छोड़ता है। बड़े २ लोगों के कपड़ों और मूच्छों तक के 'कट' के अनुकरण के उदाहरण ज्वलन्त रूपमें विद्यमान हैं।

दयानन्द-वचनामृत

"दो ही पदार्थों से मनुष्य के प्राणों की रक्षा, जीवन, सुख, बल, विद्या और पुरुषार्थ की वृद्धि होती है। एक तो अन्न-जल से और दूसरे आच्छादन से। पहले के अभाव से प्राण-नाश हो जाता है, और दूसरे के न होने पर अनेक दुःख भोगने पड़ते हैं। देखिये, गौ आदि पशु सूखा घास-पात खाकर मनुष्यों के प्राण-धारण करने का साधन, अन्न-पान-दूध प्रदान करते हैं। बैल गाड़ी और हल को खींच कर अनेक प्रकार का अन्न उत्पन्न कर देते हैं, जिस से मनुष्यों का पालन होता है, और वे बल, बुद्धि तथा शक्ति सम्पन्न हो जाते हैं। गौ आदि पशु कितने कोमल हैं कि मनुष्यों के साथ सन्तान और मित्रों की भांति विश्वास रखते और प्रेम करते हैं। उन्हें जहां बांधो, वहीं बंधे रहेंगे। जिधर चलाओ, उसी ओर चलेंगे। जहां से हटाओ, हट आवेंगे और देखने और पुचकारने पर पास चले आवेंगे।" (स्वामी सत्यानन्द जी)

श्री वीरेन्द्र जी के निवास स्थान पर भव्य आयोजन

स्वर्गीय महाशय कृष्ण जी की प्रथम पुण्य तिथि श्री वीरेन्द्र जी मालिक दैनिक प्रताप जालन्धर के निवास स्थान पर २१ फरवरी से २५ फरवरी तक सम्पन्न हो रही है इस उपलक्ष्य में प्रातः ८ बजे से १० बजे तक और सायं ५ बजे से ७ बजे तक यजुर्वेद महापारायण यज्ञ का आयोजन किया जा रहा है इस यज्ञ के पुरोहित श्री ब्रह्मानन्द जी होंगे। २५ फरवरी को प्रातः १० बजे पूर्णाहुति होगी। २५ की शाम को ४-४५ पर म० कृष्ण जी के उपलक्ष्य में एक वृहद गोष्ठी का आयोजन किया गया है जिस में अनेक विद्वान उपस्थित होकर म० कृष्ण जी को श्रद्धांजलियां अर्पित करेंगे इस पुण्य कार्य का सेहरा श्री विरेन्द्र जी के सिर पर है।

हम हिन्दु जनता से साग्रह अनुरोध करते हैं कि इस पवित्र समारोह में पधार कर अपने स्नेह पुष्प स्वर्गीय म० कृष्ण जी के चरणों में भेंट करें।

—संतोषराज मन्त्री सभा

जयन्ती का समारोह

(पृष्ठ ३ का शेष)

प्रबन्ध निमन्त्रण धनसंग्रह, प्रचार आदि की अनुभावी सज्जनों की कमेटियां बना देवें, ताकि सारे काम उत्तमता से होते रहें। इस अधिवेशन पर इस शताब्दी समारोह को शानदार रूपसे मनाने के लिए भी विशेष विचार करने का आयोजिन करे—त्रिलोक चन्द्र

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२०, २३ फरवरी १९६४ [अंक ८

अभिनन्दन और निवेदन

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का वार्षिक साधारण अधिवेशन आज २३ फरवरी रविवार के दिन आर्यसमाज लोहगढ़ अमृतसर के भव्य विशाल मन्दिर में हो रहा है। उस में सारे पंजाब तथा दिल्ली की अपनी सभा से सम्बन्धित आर्य समाजों के मान्य प्रतिनिधि इस में शामिल होने और अपनी सम्मति, सुझाव अथवा तन मन धन से पूर्ण सहयोग देने सभा को अधिक से अधिक समुन्नत करने, महात्मा हंसराज जयन्ती के महान शताब्दी समारोह को धूमधाम से मनाने की सुन्दर योजना बनाने के लिए पधार रहे हैं। उन सब का हम आर्य जगत की ओर से स्वागत सम्मान एवं अभिनन्दन करते हैं। अपना सभा के लिए उनका प्रेम सराहनीय है। वे सारे स्वयं ही सभा रूप हैं। उन सब की सेवा में कुछ निवेदन कर के दिल की बात कहना चाहते हैं।

आज का युग भोगवादी और भौतिकवादी बनता जा रहा है। धर्म, अध्यात्मवाद के लिए रुचि कम होती जाती है। चारों ओर ही जीवन की परम्परागत आचार विचार की सीमाय मर्यादायें टूटती जाती हैं। संसार बिगाड़ के कगार पर खड़ा हो गया है। खानपान, साजसज्जा, रीति नीति, आचार-विचार, व्यक्ति परिवार सब में ही काफी गड़बड़ मची है। किसी को किसी बात की चिन्ता नहीं आर्य समाज के सिवाय किसी का इस ओर ध्यान तक भी नहीं है। विशेषकर वर्तमान अवस्था तो और भी चिन्तनीय बन रही है। आर्य समाज के सामने कितना काम है, कितनी समस्याएं हैं, कितनी कठिनाईयां हैं। प्रचार के क्षेत्र में कितनी न्यूनता है, कार्यकर्ताओं तथा प्रचारकों की कितनी न्यूनता है, सभा की आर्थिक अवस्था किस प्रकार की है? विधर्मी लोग आज अपनी विपुल धनराशि के द्वारा अपने प्रचार में क्या २ हथकंडे दिखा रहे हैं, कितनी बड़ी चुनौति उनकी ओर से दी जा रही है? किस प्रकार का साहित्य प्रचारित किया जा रहा है। युवकों की समाज के प्रति आज किस प्रकार की रुचि है? नग्न नृत्य ने संस्कृति कल्चर का वेशभूषा धारण कर के क्या २ काम आरम्भ किया हुआ है। खानपान किस पराकाष्ठा तक चला गया है। धर्मस्थानों में आने वालों की स्थिति क्या है? आर्यसमाज के साहित्य, मुखपत्रों की दशा क्या है। आज इस महंगाई के युग में भी विवाहों पर आये दिन का दिखावा क्या २ रूप धारण करता जा रहा है। इन तथा इन जैसे अन्य भी आवश्यक प्रश्नों, गम्भीर समस्याओं पर आप सब ने मिल कर विचार करना होगा। हमें गर्व है कि आर्य प्रादेशिक सभा के अधिवेशन में भाग लेने वालों के बहुत ऊंचे २ प्रत्येक भाग तथा जीवन क्षेत्रों में प्रभावपूर्ण कार्य करने वाले प्रतिष्ठित भाई बहिनें आयेंगे। सभा के सामने आज इतना बड़ा काम है जितना पूर्व भी नहीं था। आज की अवस्था विकट और जटिल है। फिर जब आप ने महात्मा हंसराज जयन्ती के शताब्दी के भारी उत्तरदायित्व को अपने कन्धों पर सम्भाला हो तब तो कार्य और भी बढ़ जाता है। इसलिए आप सब इस अत्यन्त गम्भीर वातावरण में अधिवेशन में पधार रहे हैं। अतः नम्र निवेदन है कि यह सभा का अधिवेशन हर अवस्था में शानदार हो। अपने २ पूर्ण सहयोग से इतने सुन्दर ठोस निर्णय करके उठें ताकि उनको क्रियात्मिक रूप देकर सभा के कार्य को बहुत ऊंचा कर देवें। फिर आपका स्वागत है। —त्रिलोक चन्द्र

जयन्ती का समारोह

सभा ने आर्यसमाज के तपस्वी, सर्वमेधी स्वर्गी पूज्य महात्मा हंसराज जी की जन्मशती या शताब्दी समारोह को आने वाले अक्टूबर १९६४ में धूमधाम से मनाने का अन्तिम निर्णय कर दिया है। इस महान् कार्य के लिए प्रारम्भिक कार्य भी आरम्भ कर दिया। इस अवसर पर बड़ा विशेष महात्मा हंसराज अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशित किया जायगा। महात्मा जी के ओजस्वी, प्रभावशाली पुराने भाषणों, लेखों का संकलन कर के लेख ग्रन्थ भी स्मृति में प्रकाशित किया जायगा। अन्य भी बहुत कुछ साहित्य प्रकाशित होगा। इस अवसर पर जालन्धर में शताब्दी समरोह भी बड़े विराट् स्तर पर आयोजित किया जायगा। इस में भारत भर के प्रमुख २ महात्मा, नेता तथा विद्वान पधार के अपने विशेष विचारों के सन्देश देंगे। सभा के लिए यह पर्व बड़े गौरव का होगा। हमें लाहौर में जब सभा की जयन्ती मनाई गई थी वह दृश्य आज भी आंखों के सामने है, स्मरण है। विशाल भव्य समारोह था। केवल लाहौर ही नहीं अपितु सारा अविभक्त पंजाब, सीमा प्रान्त, सिन्ध प्रान्त बिलोचिस्तान, दिल्ली तथा काश्मीर हिमाचल प्रांत उमड़ २ कर वहां शामिल होने आगया था। पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी के रात दिन के घोर परिश्रम रूप तप, सभा के मान्य अधिकारियों के सहयोग तथा आर्य समाजों के जोश और सब प्रकार से दिल खोल कर सहायता देने से समारोह क्या था कमाल ही था। सभा के उपदेशक वर्ग ने भी कमाल कर दिया था। महाराजा शाहपुराधीशा का पधारना तथा उन का भाषण भी जीवन देने वाला था।

यद्यपि आज युग बदला हुआ है। देशविभाजन के बाद हमारे महारथी भिन्न २ स्थानों पर चले गये हैं। सभा की तथा समाजों की अवस्था भी वैसी नहीं है। फिर भी सभा के प्रेमी तो वही हैं। संस्थाओं के सज्जन तो वही हैं। नेता भी वही हैं। जन्म शताब्दी भी उस देवता महात्मा हंसराज की है जिन के जीवन दीप से लाखों करोड़ों दीप प्रदीप्त हुए हैं। इस समारोह को बहुत ऊंचे स्तर पर ही मनाया जाना चाहिए। उसी स्तर पर इस महान शतीपर्व को मनाने की तयारी सभा कर रही है। सभा क्या है? आर्यसमाजें संस्थाएं तथा परिवार ही तो सभा का रूप हैं। हम तो चाहते हैं कि केन्द्रिय सरकार पर जोर दिया जाये कि उस देवता के, शिक्षा के इस युग के आदि आचार्य महात्मा हंसराज जी के डाक टिकट उस समय समारोह पर जारी किये जाएं, महात्मा जी का भारतीय प्रेम किसी से कम नहीं। सभा इस काम के लिए अलग २ प्रकाशन, शताब्दी

(शेष पृष्ठ ६ पर)

अध्यात्मवाद—

भक्ति का प्रकार

(श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज)

★★★★★★★★★★★★★

पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी का उपदेश कितना स्वादु, कितना मीठा और कितना गम्भीर हो कर भी सरल होता है—यह तो उनके प्रवचनामृत का पान करने वाले जानते ही हैं। जितने मीठे वे स्वयं हैं, वैसा ही उनका प्रवचन भी मधुर है। सुख दुःख दोनों अवस्थाओं में एकरस हैं। भक्ति कैसे करें—इसका कितना सुन्दर विवेचन किया है—सं०

भक्ति करें किस प्रकार ? बृहदारण्यक उपनिषद् के पांचवें अध्याय के पांचवें ब्राह्मण में इसकी विधि बताई गई है। इस ब्राह्मण में उन तीन व्याहृतियों की भी चर्चा है, जिन्हें हम गायत्री मन्त्र से पूर्व पढ़ते हैं। वे तीन शब्द हैं—भूः, भुवः, स्वः। भूः अर्थात् वह प्राण प्यारा ईश्वर जो सत् है विद्यमान है। भुवः जो दुःखों को दूर करने वाला है। चित् है, अनुभव करता है, जानता है, और स्वः जो सुखों को देने वाला है। आनन्द है। सच्चिदानन्द है। परमात्मा ही भूः भुवः स्वः—तीन तीन रूप में हमारे सामने आता है भूः अर्थात् विद्यमान है, परन्तु केवल विद्यमान नहीं पत्थर की भांति पड़ा नहीं, वह भुवः भी है, हो रहा है। अनुभव कर रहा है, दुःखों को दूर करने का प्रयत्न कर रहा है। केवल प्रयत्न ही नहीं करता, दुःख में घिरा नहीं रहता, क्योंकि वह ईश्वर स्वः भी है। सुखों को देने वाला आनन्द भी है। यह आप का संसार है, विद्यमान है, हो रहा है। खड़ा नहीं है, आगे बढ़ रहा है, परन्तु क्यों आगे बढ़ रहा है ? जो कुछ हो रहा है वह क्यों हो रहा है ? आनन्द के लिए। सारे ब्रह्मांड में सारे विश्व में, इस के छोटे-छोटे कण में और बड़े से बड़े महा सौर मण्डल में स्थान पर भूः भुवः स्वः का चक्र चल रहा है। है, हो रहा है, आनन्द के लिए है। इस चक्र को चलाता कौन है ? सविता, परमात्मा की वह शक्ति जो सब को कहती है, चलो, चलो आगे बढ़ो। परन्तु इस चक्र को वह चलाती किस प्रकार है ? भगे शक्ति से जो सब को पका देती हैं, भून देती है जिसके लिए हारना नहीं है, पीछे हटना नहीं है।

सारा संसार इस आनन्द के लिए अशांत है। दौड़ रहा इस आनंद को पाने के लिए। भगवान ने इस भूः भुवः स्वः का ऐसा पथ दे दिया है संसार को कि प्रत्येक वस्तु क्रियात्मिक रूप में इसका जाप करती हुई आगे बढ़ती जाती है। मुंह से बोलो या न बोलो क्रिया से लगातार यह जाप हो रहा है। एक क्षण के लिए भी चक्र रुकता नहीं। इस नदी की गति रुकती नहीं। यह है आपका संसार। उपनिषद् के ऋषि ने कितने रहस्य की बात थोड़े और सरल शब्दों में कह दी—भूः भुवः स्वः। परन्तु इस चक्र से बाहर जाने और वास्तविक आनन्द को पाने का मार्ग क्या है ? इस रहस्य को समझ कर आनन्द स्रोत के पास पहुंचो। एकाग्र होकर ध्यान लगाकर उसको देखो जिस को सविता शक्ति भूः भुवः स्वः के इस चक्र को चला रही है। जो स्वयं भी भूः भुवः, स्वः, सत्-चित् आनन्द है। परन्तु इसे देखने के लिए पहली आवश्यकता है कि अपने चित्त की वृत्तियों को रोको। चित्त को सच्चिदानन्द की ओर जाना है। (अपूर्ण)

सफलता के सूत्र—

ईश्वर विश्वास और विनय

(श्री प्रिंसिपल रलाराम जी एम. ए. प्रधान सभा)

※※※※※※※※※※※※※※※※※※※※※※

माननीय प्रिंसिपल रलाराम जी एम. ए. एम. एल. ए. प्रधान आर्य प्रादेशिक सभा सौम्यता के सच्चे प्रतीक हैं, सरलता, सादगी, नम्रता की सजीव मूर्ति हैं। उन का प्रवचन जीवन ग्राही होता है। सफलता के सूत्र के विषय में विश्वास और विनय पर सुन्दर विवेचन किया है—सं.

वेद में आता है कि न ऋते श्रान्तस्य सख्याय देवाः—जो पुरुषार्थी नहीं होता, उस को प्रभु की सहायता नहीं मिलती। भगवान ने मानव को मानव जीवन दिया। इस का शरीर अन्यों के शरीरों से सर्वोत्तम है, दिव्य है, इस को हाथ, मुख, आंख, भुजाएं आदि बड़ी सुन्दर इन्द्रियां प्रदान की हैं। यदि मनुष्य प्रभु प्रदत्त इन की उत्तम शक्तियों का प्रयोग नहीं करता और इस पर भी भगवान् से मांगते रहते हैं। तो उन का कार्य कैसे हो सकता है। स्वामी दयानन्द ने जब लोगों ने पूछा कि आप इतना बड़ा कार्य किस के बल और शक्ति से करते हैं। उनका उत्तर यह था—कि मैं जो कार्य करता हूं, यह सब भगवान के विश्वास पर करता हूं। महापुरुष सदा प्रभु विश्वास की शक्ति को ले कर ही संसार में महान से महान् कार्य कर के भारी परिवर्तन कर सकते हैं। परमात्मा पर अटल-विश्वास जीवन का सब से बड़ा बल है। इस के तुल्य और कोई भी बल नहीं है। यही कारण है कि प्रभु प्रेमी अपने कार्यों में सदा निर्भीक तथा निश्चिन्त होता है। ईश्वर निष्ठा उस का अटूट कवच हो जाता है।

महात्मा गान्धी लिखते हैं—उनसे पूछा कि आप प्रभु प्रार्थना किस लिए करते हैं। उन्हों ने कहाकि—**in all my great movements I ever rayed and He never devied to me.** अर्थात मैं ने अपने जीवन के तमाम बड़े २ आन्दोलनों में उसी परमात्मा से बल की प्रार्थना की और उस ने मुझे कभी वंचित नहीं रखा। उस की ओर से मुझे कभी निराशा नहीं हुई।

धर्मात्मा और महापुरुष की पहिचान यह है कि उस के जीवन में धृति का गुण कूट २ कर भरा होता है। उसके किसी भी मुसीबत में पांव नहीं उखड़ते। उस की क्षमा निर्बलों की क्षमा नहीं होती अपितु बलशाली की क्षमा होती है। गान्धी जी भी कहा करते थे कि—**My nonviolence is not the nonviolence of coward** मेरी क्षमा कायर की क्षमा नहीं वरन वीरपुरुष की क्षमा है। अहिंसा कमजोर के पास हो नहीं सकती। वह तो उस की कमजोरी होती है। जिस में शक्ति ही नहीं हो वह दूसरे को क्षमा कैसे कर सकेगा। उस के जीवन में तो अहिंसा का प्रश्न ही नहीं है। वीरपुरुष की अहिंसा वास्तविक अहिंसा है क्षमा वीर प्रतापी ही कर सकता है। प्रभुभक्त में अभिमान लेश मात्र भी नहीं होता। गीता में अमानित्वम कहा गया है। बड़ा कार्य करने पर भी अभिमान न आये कि यह काम मैं ने किया है। समाज की दरियां बिछाना भी बड़ी सेवा है, पर दरियां बिछा कर कहते फिरना कि मैंने दरियां बिछाई हैं, वह अभिमान की गणना में आता है। दूसरे लोग उस सेवा काम की प्रशंसा करें वह सच्ची प्रशंसा होती है। प्रभु-विश्वासी को अभिमान नहीं होता—

अपूर्ण

तलाक से होशियार

(ले० श्री देशबन्धु जी विद्यावचस्पति शास्त्री वि० वै० शोध संस्थान होशियारपुर)

दुर्भाग्य और नामर्द की एक ही निशानी होती है कि ऐसे लोग सड़ी गली चीजों को बड़ी हिफाजत से सम्हाल कर रक्खे रहते हैं। पाश्चात्य विवाह पद्धति भी ऐसी ही सड़ी चीज है, जिसे पाश्चात्य एवं पूर्वीय लोगों ने सम्हाल कर रखा है।

आज जगत् में सब से भयानक कुरीति पाश्चात्य विवाह पद्धति है। इस प्रथा की आड़ में अनगिनत पाप, पाखण्ड, अपराध, अन्याय और चरित्र भ्रष्ट युवक और युवतियां तैयार हो रही हैं। विवाह का मूल उद्देश्य स्त्री पुरुष का परस्पर आत्म-भावना का नैसर्गिक विनिमय है, जिसके आधार पर प्रकृति का प्रवाह चल सकता है। स्वभाव ही से स्त्री पुरुष दोनों के मिलने पर एक रूप बनता है। अतः समय पर उपयुक्त स्त्री पुरुषों का परस्पर संयुक्त होना आवश्यक है परन्तु यह सहयोग वैज्ञानिक भित्ति पर है। इस का सब से मोटा उदाहरण तो यही है कि सपिण्ड और सगोत्र स्त्री पुरुष संयुक्त नहीं हो सकते, यह बहुत गम्भीर और वैज्ञानिक बात है कि भिन्न रक्त और भिन्न वंश को मिलाकर सन्तान उत्पन्न की जाए। महर्षि आचार्य दयानन्द जी ने स्वनिर्मित 'अष्ट संस्कार विधि' विवाह प्रकरण में बड़े मनोवैज्ञानिक एवं विज्ञान के ढंग से वर्णन किया है।

विवाह की प्रथा सब से ज्यादा बेहूदी और अधर्म की परिपाटी 'तलाक' की परिपाटी है। मुसलमान और पाश्चात्य लोग एवं उनके पद-चिन्हों पर चलने वाले भारत के सभ्य कहलाने वाले स्त्री पुरुषों में यह सर्वाधिक प्रधान बात है।

इस 'तलाक' के भीषण परिणाम को लिखते सचमुच लेखनी थर्राती है। रोंगटे खड़े हो जाते हैं। सारे शरीर में सांप काटने जैसा दर्द होता है। आज का वातावरण तलाक की नयी सभ्यता की चमक दमक में इतना दूषित हो गया है कि पग-पग पर काम वासना को उत्तेजना मिलती है, नाच, गाना, खेल, कूद, सिनेमा, रेडियो, टेलीविजन, फोन, सड़कें, मार्केट एवं सहशिक्षा के केन्द्रों से तथा जिधर देखें उधर से वासना एवं तलाक को प्रोत्साहन मिल रहा है।

चढ़ती हुई जवानी में चपल, चंचल घूमने वाले लड़के और लड़कियां समाज में तलाक की नसीहत को बड़े जोर से फैला रहे हैं एवं सरकार भी इनका साथ दे रही है।

प्राचीन काल में विवाह की बड़ी पवित्रता थी, धार्मिक रीति से किया गया विवाह टूट नहीं सकता था।

हाय आज सन्तान ऐसी अधर्मी हो गई। करोड़ों बालकों की बिलबिलाहट और हाहाकार सुनकर भी उन तलाक वालों को सुख की नींद आती है? वे अनाथ बालक तुम्हारे पाप से ही इस अन्धेरी दुःख भरी दुनिया में चक्की पीस-पीस कर कुत्ते भी न खाएं ऐसे सूखे टुकड़े खाकर दिन काट रहे हैं। सूअर भी न रहें, ऐसे जगे रहकर, एवं बीमार पड़ने पर असहाय भूखे, प्यासे तड़प-तड़प कर मर जा रहे हैं परन्तु पाश्चात्य सभ्यता के सपूत उन्हीं का गला घोंट कर अपने लिये स्वर्ग का द्वार खोल रहे हैं।

हाय! हाय! इस डायन प्रथा का श्री गणेश वेलेरियस मैक्सिमस जी के अनुसार पहला तलाक ईसा से ३०६ वर्ष पूर्व हुआ था परन्तु आज विश्व के देशों में चरित्र इतना गिर गया है कि संयुक्तराज्य अमेरिका में का १००० व्यक्ति पीछे २.२ तलाक होते हैं। रूमानियां में १.६, हंगरी में १.८, डेन्मार्क में १.५ का औसत है। उत्तरी आयरलैंड में फी एक हजार आबादी पीछे ०.७, पुर्तगाल से ०.६, इंग्लैंड में १.२५, फ्रांस में १.२० से लेकर अन्य यूरोपीय देशों में १.५ तथा पाकिस्तान में १.१५ का औसत है और भारत में ०.३ औसत है।

भाइयो! तलाक एक भयानक अपराध तो है ही, एक भीषण पाप भी परन्तु इस अपराध और पाप की जिम्मेदारी उन बदनसीब पशु प्रकृति स्त्रियों पर या पुरुषों पर नहीं जो लोभ और स्वार्थ में अन्धे होकर तलाक देते हैं। उसके असली जिम्मेदार तो वे साम्प्रदायिक ग्रन्थ अर्थात् कुरान, बायबल और आजकल का कानून है जिन्होंने तलाक को शादी का धर्म बताया। यदि ये दूषित और लानत योग्य सम्प्रदाय ग्रन्थ विधान न करते तो आज माता-पिता अभागिनी बालिकाओं और बालकों को त्यागने में स्वाधीन न हो सकते थे। हमें आश्चर्य है कि इतने घोर पाप करने पर भी पाश्चात्य संस्कृति पोषक जगत अब तक कैसे रह गया! अब यह पाप अपनी अन्तिम सीमा तक पहुंच चुका है इसके जहरीले फल फलने लगे हैं यथा—

(१) लाखों घराने विवश हो गए। बड़े-बड़े घरों में ताले ठुक गए।

(२) स्त्री और पुरुषों में प्रेम न्यून होने लगा है। क्योंकि जब चाहे तब सम्बन्ध विच्छेद कर सकते हैं।

(३) बहुत से भद्रकुलों का नाम वा चिन्ह भी न रहकर वे समाप्त हो गए हैं।

(४) पति-व्रत और स्त्री-व्रत धर्म नष्ट होने लगा है।

(५) बालक और बालिकाओं को त्यागने से वे भी भूखे प्यासे मर रहे हैं।

(६) देश में जनसंख्या बढ़ रही है।

(७) तलाकों की खेप की खेप मानव जाति की छाती पर नाच रही हैं।

इन सब बातों को सुन समझ कर भी जो तलाक की सत्यानाशी प्रथा के पक्षपाती रहे तो हम कहेंगे कि सांप को गले लटकाए फिरते हो, पल्ले में आग बांधकर रूई के गोदाम में घूमते हो? जिस प्रथा ने तुम्हें दीन दुनियां से निकम्मा कर दिया है, उसे भयानक जानकर भी जो आप आंख-मींच कर क्यों लकीर के फकीर बन रहे हो तो निःसन्देह तुम्हारे जीवन मनुष्यत्व निकल गया है।

—

जयन्ती समारोह

माननीय प्रतिनिधि मण्डल! आप की सभा ने स्वर्गीय पूज्य महात्मा हंसराज जी की सौ वर्षीया जन्मशताब्दी जयन्ती महापर्व के रूप में धूमधाम से अक्तूबर में मनाने का निर्णय किया है। आप इस वार्षिक सभा के बजट निर्वाचन के अधिवेशन में पधारे हैं। आप सभा का रूप हैं। इस अवसर पर इस शताब्दी समारोह को भी बहुत ऊंचे स्तर पर मनाने का संकल्प कर के कल से ही इस में जुट जायें—यही प्रार्थना है।

विनीत

त्रिलोकचन्द्र शास्त्री

सम्पादक आर्य जगत्

D. A. V. College Managing Committee Chitra Gupta Road New Delhi.

LIST OF THE OFFICE BEARERS OF THE D. A. V. COLLEGE MANAGING COMMITTEE NEW DELHI FOR THE YEAR 1964.

---

1. [illegible] Chand Mahajan. President. 47, Friends Colony, NEW DELHI.
2. [illegible] Kapur. Vice-President. [illegible]11, York Road, NEW DELHI.
3. R.B. Dr. Mabaraj Krishan Kapur. —do— 31, Rajpur Road, DELHI.
4. R.B. Man Mohan. —do— 155, Golf Link Area, NEW DELHI.
5. R B. Brij Mohan Lal. —do— 3/17, East Patel Nagar, NEW DELHI.
6. Shri Suraj Bhan. —do— Vice-Chancellor, Kurukshetra University, KURUKSHETRA.
7. Shri C. L. Anand. General Secretary, 19, West Patel Nagar, NEW DELHI.
8. R. B. Dr. G.D. Kapur. Secretary. 22, Curzon Road, NEW DELHI.
9. Shri Lal Chand Khanna. —do— 74, Cueensways, NEW DELHI.
10. Shri S.L. Verma. —do— Punjab National Bank Parliament street, NEW DELHI.
11. Shri Brij Lal Dhawan. —do— 16, M. Connaught Place, NEW DELHI.
12. Dr. D. R. Mehta. —do— 89-H, Connaught Circus, NEW DELHI.
13. Shri R. N. Gupta. —do— 15, Ring Road, Lajpat Nagar, NEW DELHI.
14. Shri Amar Nath Puri. —do— D-408, Defence Colony, NEW DELHI.
15. Shri Panna Lal Sood. Accountant. A-20-21, Nizamudhin Extension, NEW DELHI.
16. Shri Jessa Ram. —do— 132/48, Krishan Nagar, Chankaya Puri, NEW DELHI.
17. Shri T. R. Tuli. —do— New Bank of India Ltd., Central Office, Connaught Place, NEW DELHI.
18. Shri Sewa Ram Kapur. —do— 29, Rohtak Road, DELHI.

आर्य प्रादेशिक सभा के

साधारण अधिवेशन में आने वाले प्रतिनिधियों की सेवा में—जैसा कि पूर्व समाचार पत्रों में सूचित किया गया है कि सभा का साधारण अधिवेशन २३-२-६४ को रविवार २ बजे बाद दोपहर आर्य समाज लोहगढ़ अमृतसर में सम्पन्न होगा। इस में सम्मिलित होने के लिए सभी प्रतिनिधियों को एजन्डे भेजे गए हैं अगर किसी कारण से उनको एजन्डे ठीक समय पर न मिलें तो वे अपने प्रमाण पत्रों सहित अधिवेशन में अवश्य भाग लेने का प्रयास करें।

संतोषराज—मंत्री सभा

हिन्दी साप्ताहिक पत्र

आर्यजगत

जालन्धर के स्वामित्व अधिकार तथा अन्य विषयों का ब्योरा

फार्म ४ (अधिनियम ८ देखो)

१. प्रकाशन स्थान :—कार्यालय आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा जालन्धर नगर।

२. प्रकाशन की अवधि :—साप्ताहिक

३. मुद्रक का नाम :—श्री संतोषराज जी

जाति :—भारती

पता :—मंत्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा जालन्धर नगर

४. प्रकाशक का नाम :—श्री संतोषराज जी

जाति :—भारती

पता :—मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा जालन्धर नगर

५. सम्पादक का नाम :—श्री पं. त्रिलोकचन्द्र जी शास्त्री ओ, ए.

जाति :—भारती

पता :—महोपदेशक आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा जालन्धर नगर

६. पत्र के स्वामि व्यक्तियों के नाम अथवा पते जो इसके [illegible] के मालिक हैं।

आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा रजिस्टर्ड संस्था ही इस पत्र की स्वामिनी है।

मैं संतोषराज इस लेख द्वारा घोषित करता हूं कि ऊपर लिखे विषयों की सूचना मेरे ज्ञान व विश्वास के अनुसार सर्वथा तथ्य पूर्ण है।

(हस्ताक्षर) संतोषराज प्रकाशक आर्यजगत, जालन्धर

आर्य समाज सैक्टर ८ चण्डीगढ़ में

ऋषिबोध उत्सव ९-२-६४ को सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर चौ० सूरजमल जी, प्रिन्सीपल श्री त्रिलोकीनाथ जी, पं० रामप्रताप जी, श्री शांति स्वरूप जी, पं० आशुराम जी आदि महानुभावों ने अपने ओजस्वी भाषणों द्वारा महर्षि स्वामी दयानन्द जी के चरणों में श्रद्धांजलियां समर्पित कीं।

—व्यवस्थापक

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

ओ३म्

आर्य जगत

ऋषिबोध (शिवरात्री) विशेषांक

११ फरवरी १९६४, शिवरात्रि २०२०

२६,२,९ फरवरी १९६४ के ४,५,६, का सामिलित अंक, वर्ष २४

वेदामृत

यो जात एव प्रथमो मनस्वान् देवो देवान् क्रतुना पर्यभूषत् ।

यस्य शुष्माद्रोदसी अभ्यसेताम् नृम्णास्य मन्हा स जनास इन्द्रः॥

अथर्व काण्ड ४

भावः—हे लोगों ! इन्द्र वह है जो सदा सत्यसनातन है, दिव्य देव है तथा सर्वत्र महती महिमा वाला है, सब को अपने नियम में नियमित किये हुए है। जिस के अटल नियम शक्ति से ये भूमि, अन्तरिक्ष एवं द्युलोक आधारित है। जो समस्त बलों का केन्द्र, भण्डार है, वहीं महान् भगवान् है। उसी को मानो जानो और भक्ति करो। इस प्रकृति के जड़ पदार्थों का पूजन मत करो।

सम्पादकीय

अनोखी बात

शिवरात्री के इस विशेषांक में सारे समाज के सामने इस अत्यन्त, अनोखी, आवश्यक तथा अतीव आदर्श बात को जान बूझ कर रखता हुआ आन्तरिक निवेदन कर क्रियात्मिक पग उठाने वाले व्रतियों की तलाश में निकला हूं। देखें ऐसा शिव-व्रत कौन लेता है, कौन संकल्प करता है कौन आगे आता है ? मेरी आंखें देखना, कान सुनना, वाणी बोलना चाहती है देखें कौन दिखाने, सुनाने बुलवाने को तैयार है ?

आदर्श विवाह कई होते हैं पर आदर्श की परिभाषा जुदा २ है। सर्वांगी आदर्श क्रियात्मिक रूप में बहुत ही कम हैं। क्या कोई मानेगा कि आज के समय ऐसी भी बरात हो सकती है जिसमें वर समेत केवल तीन ही सज्जन हों, कोई बैंड वाजा न हो, सिर पर मुकुट का दिखावा न हो, केवल एक पुष्पों की मंगल निशानी ही पर्याप्त हो। कोई घोड़ी भी न हो। वर के साथ उसका पिता और भाई भी न आया हो। वर बहुत सम्पन्न परिवार का होकर भी इतने ऊंचे विचार का होकि शादी की सारी बाहर की रूढ़ियां तोड़कर सर्वथा आदर्श रूप पेश किया जाये बिजली की चमक-दमक सर्वथा न हो। सारा महत्त्व विवाह संस्कार को ही दिया जाये। विवाह के बाद ही भोजन का काम हो। विवाह पूर्ण वैदिक रीति से हो। कितनी अनोखी बात है। कल्पना नहीं पर यथार्थ है। अभी २ मैं टोहाना में श्री गौरी शंकर जी गुप्त की सुपुत्री अरुणा आर्या प्रभाकर के विवाह में कार्यक्रम पर विवाह संस्कार कराने गया। अरुणा जी आर्य जगत् में लेख भी लिखती हैं दहेज प्रथा नामक आंसू रुलाने वाली पुस्तिका भी लिखी है। उसी की बरात जीरा जिला फिरोज़ पुर के प्रतिष्ठित परिवार श्री मुनिलाल जी के छोटे भाई श्री सतीश कुमार जी के रूप में आई। श्री सतीश जी के पिता जी व भाई जी भी साथ न थे। कहीं ऐसा न हो कि अन्य भाई सम्बन्धियों को गिला देने का अवसर न मिले। टोहाना की जनता तो इस क्रियात्मिक रूप पर मस्तक झुका बैठी क्या सुन्दर वधाई थी जो इस अत्यन्त सादा विवाह पर आर्य समाज टोहाना के प्रधान श्री वृजलाल जी गुप्ता ने दोनों परिवारों को दे कर इस दिशा में आर्य समाज को संकल्प लेने की प्रेरणा दी। मेरे दिल पर जो गहरा प्रभाव पड़ा वह चिरस्थायी है। व्यक्त किये बिना रह नहीं सका।

आज शिवरात्री पर इस आदर्श क्रियात्मिक आन्दोलन का सूत्रपात कर दें। जनता को इस सादगी के पीछे लगाना होगा। दिखावा-दिखावा से नहीं जाता एक दम तोड़ देने से जाता है। आज की समाज के सामने सब से आवश्यक बड़ी मांग यही है कि ऐसा आदर्श दृश्य पैदा करने में व्रत लें। परिवार आगे आवें। नवयुवक आगे आयें। संगठित योजना बनायें। यह व्रत ले सकें तो शिवरात्री सफल हो सकेगी। हम तो उन दोनों परिवारों को इस शानदार साहस पर नमस्कार करते हैं। आओ ! हम भी दयानन्द के भक्त ऐसा संकल्प कर के समाज का भला करें—त्रिलोक चन्द्र

महर्षि का दिव्य स्वप्न पूरा करें आत्मा को मत भूलो

(पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज का पवित्र सन्देश)

पूज्य पाद महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज गत कई महीनों से हैदराबाद में रोगशय्या पर हैं। गतदिनों आप ने अपने पत्र में लिखा है कि मैं तो ठीक हूं, उसी प्रकार से हूं पर मेरा शरीर ठीक नहीं था। इस के आप्रेशन कराने पड़े एक दो, तीन। मकान गिराया तो जल्दी जा सकता है पर बनता देर में है। अब स्वस्थ हो रहा हूं। चिंता तों करता है कि इन होलियों में पूर्ववत आर्यसमाज लारेंस रोड अमृतसर में कथा करूं पर मार्च में ही आ सकूंगा। प्रभु महात्मा जी को शीघ्र स्वस्थ करें सारी जनता यही मंगल कामना कर रही है। शिवरात्री पर उनका मीठा प्रसाद लीजिये।

आज का मानव दुःखी है। सारे वैभव और विज्ञान के होते हुए भी दुःखी है। जिस समाज ने संसार का उपकार करना था, वह स्वयं दुःखी हो गया है और मानव भी। मानव समाज निश्चित रूप से दुःखी ही रहेगा, यदि इस ने आत्मा को इसी प्रकार भुलाये रखा। आत्मा को भूलने से सब से बड़ा रोग, जिस रोग में मानव बुरी तरह फंस गया है। स्वार्थ परायण दुनियां पाप पुण्य, बुराभला कुछ नहीं देखती और अपने निकृष्ट स्वार्थ की पूर्ति के लिए हर प्रकार के अत्याचार पर तय्यार हो जाती है। आत्मा को भूल कर स्वार्थ की दलदल में फंस कर बुद्धियां मलिन हो चुकी हैं। न शुद्ध प्रेम, न शुद्ध श्रद्धा, न अनन्य भक्ति कुछ भी नहीं रहा। जब ऐसे चिन्ह दिखलाई देने लगते हैं तो या तो भयंकर नाश आता है या कोई ऐसा महात्मा आता है जो मनुष्यों के आसुरी वृत्तियों को बदल कर उन में दैवी भावनाएं भर दे। तो क्या हमें भयंकर नाश की प्रतीक्षा करनी चाहिए? यह तो कोई अच्छी बात नहीं। तब उचित यही है कि जिस आत्मा को भूल कर हम दुःखी हो गये हैं उस की ओर झुकें और शिवरात्री के दिन यह व्रत लें कि आत्मा को जान कर आत्मबल से अपने व्यक्तिगत विद्युत को प्रबल बना कर हम महर्षि के दिव्य स्वप्नों को पूरा करें।

शिवरात्रि का महत्व

रचि कु०सुखलालजी आर्यमुसाफिर बुलंदशहर

१. आयी थी शिवरात्रि हम को जगाने के लिए।
मर रहे थे जो उन्हें अमृत पिलाने के लिए॥
२. गुम रहों को रास्ता सीधा दिखाने के लिए।
कौम की बिगड़ी हुई किस्मत बनाने लिए॥
३. कर गयी रौशन जमाने को निराली रात थी।
इसमें भी कुदरत को कुछ मनजूर था, कुछ बात थी॥
४. वह दयानन्द एक आलम के लिए इल्हाम था।
जिस के दस्ते पाक में वहदानियत का जाम था॥
५. वेद का डंका बजा देना उसी का काम था।
उस के पहलू में छुपा तौहीद का पैगाम था॥
६. उस के दिल में देखिए कैसा वतन का दर्द था।
किस कदर शैदाए आजादी था कितना मर्द था॥

मूलशंकर और दयानन्द

(महान् फिलास्फर डा० दीवानचन्द जी एम० ए० कानपुर)

स्वामी दयानन्द को शिव की रात्री में बोध हुआ। उस समय वह दयानन्द न थे, मूल शङ्कर थे। उनका बोध क्या था ? उनके नाम की व्याख्या ही था यही कि सारे संसार और सारे सत्य का मूल शङ्कर अर्थात् परमात्मा है। इस मौलिक प्रकाश की ओर से कभी भी उनकी दृष्टि इधर-उधर नहीं हुई। यह सिद्धांत सदा उनके विचारों में प्रमुख बना रहा। यह विचार उन के मन्तव्य का केन्द्र था। जब उन्होंने आर्यसमाज की स्थापना की तो उसके नियमों में प्रथम स्थान इसी विचार को दिया। उनका जीवन त्याग का जीवन था। त्याग किसी वस्तु का किया जाता है। इसके सम्बन्ध में यह देखना होता है कि वह किस भाव से किया जाता है और उसका फल क्या होगा। उत्तम त्याग वह है जो दया के भाव से किया जाये तथा उनके करने में दुःख नहीं बल्कि आनन्द का अनुभव हो। स्वामी दयानन्द के हृदय में दूसरों के लिए दया थी और इस दया के साथ अपना आनन्द मिला था। मूल शङ्कर को उसके माता-पिता ने बहुत अच्छा नाम दिया। जिस ब्रह्मचारी ने मूल शङ्कर को शुद्धचैतन्य बना दिया, वह भी इस से अच्छा नाम चुन नहीं सकता था। जो कमी रह गई थी वह स्वामी पूर्णानन्द जी ने उन्हें दयानन्द बना कर पूरी कर दी। मैंने जीवन के फल्सफे पर पढ़ा भी है विचार भी किया है। मुझे इस फल्सफे को तीन शब्दों में ही कहना हो तो मैं यही कहूंगा—मूलशङ्कर, शुद्धचैतन्य, दयानन्द। बोधोत्सव को हम प्रति वर्ष मनाते हैं मेरा विचार है कि इसके साथ प्रत्येक को थोड़ा और भी करना चाहिए। वह यह कि बोध उत्सव की रात्रि में घंटा आध घण्टा अलग शांत हो कर मनन करें। सम्भव है हमारे हृदय में भी कोई प्रकाश की रेखा आ पड़े और हमें भी कुछ बोध हो जाये। जिन्हें यह न जचे वे आध घण्टा केवल इन तीन शब्दों का मूलशङ्कर शुद्ध चैतन्य, दयानन्द का जाप ही करें। इस का भी जीवन पर कुछ प्रभाव पड़ेगा।

★★★

चलती चक्की देख के दिया 'कबीरा' रो।
दो पट भीतर आय के साबत गया न को ॥
बुरा जो ढूंढन मैं चली बुरा न देखा को।
जो घर ढूंढा अपना मुझ से बुरा न को ॥
'कबीरा' शरीर सराय है क्यों सोवे सुख चैन।
काल नक्कारा सांस का बाजत है दिन रैन ॥
'भीखा' भूखा कोई नहीं सब की गठडी लाल।
गिरह खोल नहीं देखते इस विध भये कंगाल ॥
'नारायण' सुख भोग में तू लम्पट दिन रैन।
अन्त समय आयो निकट देख खोल के नयन ॥

आत्म-विश्वास शक्ति बिन्दु है

(श्री प्रिंसिपल सूर्यभानु जी एम.ए. वायस चांसलर कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी)

मनुष्य की सफलता आत्म-विश्वास में निहित है। इसकी साधारण या विशेष दुर्बलता व सबलता का प्रमाण उसका एक मात्र गुण यही आत्म-विश्वास है। जिसमें जितना अधिक यह गुण होता है वह संसार में उतना ही महान् बन जाता है।

महर्षि दयानन्द में भी यही अनोखा गुण था। उनके व्रतपालन में उनके व्रत त्याग में उनके उस दृढ़ निश्चय में कि वे अवश्य एक सच्चे शिव की खोज करेंगे,, उनके गृहत्याग में, उनके सच्चे गुरु की खोज की धुन में सभी में उनकी आत्म-विश्वास शक्ति ही काम करती थी। जब गुरु जी उन्हें भारत में वेद का नाद बजाने की आज्ञा दी तो देश में अन्धविश्वास तथा दीनता का राज्य था। समूचा भारत खण्ड ही अज्ञान के घोर अन्धकार में डूबा हुआ था। उधर महर्षि अकेले थे। उन के पास वेद ग्रथ थे। एक कमण्डलु था और थी पाखण्डखंडिनीपताका। धन था मित्रमंडल व दूसरा कोई साधन पास न था। किन्तु अनोखे आत्मविश्वास पर महर्षि ने सहर्ष वह महान् भार अपने कन्धे पर ले लिया। आज विकसित मानवता के सिद्धांतों का बीजारोपण महर्षि ने किया था। मनुष्यमात्र के समान अधिकारों की घोषणा ऋषि कर गये थे। निजभाषा, निजदेश तथा निज सत्ता ये वाक्य भी सर्वप्रथम उन्हीं के मुख से निकले थे। किन्तु हम उस अनुपम और उपयोगी गुण को, उस शक्तिबिन्दु को, आत्मविश्वास को भुला बैठे हैं। आज की जनता उस वीर महर्षि के अनुयायियों की ओर आशा भरी दृष्ठि से देख रही है, किन्तु आर्यजन अपने को असहाय समझ बैठा है। यह सभी कुछ आत्म दुर्बलता है। उठो। आत्मविश्वास के पवित्र गुण को प्राप्त करो। उसी अकेली शक्ति से अपनी सारी बाधाओं पर विजय पाएगा। शिवरात्री हमें जीवन में आत्मविश्वास का पाठ पढ़ाती है।

समय पर ही सब कुछ मिलता है—
समय पर ही सब कार्य सिद्ध होते हैं—
समय पर ही बीज बोया जाता है—
समय पर ही अंकर फूटता है—
समय पर ही अंकुर महा वृक्ष बन जाता है—
समय पर ही वृक्ष को फल लगते हैं—
समय ही किसी को सबल, अबल अथवा निर्बल कर देता है—
समय एव करोति, बलाबलम् (माघ)

मार्ग और ज्योति

[श्री यश जी पूर्व शिक्षा-मंत्री पंजाब सरकार]

महर्षि दयानन्द का जीवन एक चमत्कार था। इतिहास साक्षी न हो तो विश्वास नहीं हो सकता कि इतने कम समय में यातायात और प्रचार के साधनों के लगभग सर्वथा अभाव के बावजूद कोई एक व्यक्ति इतनी महान् क्रांति को जन्म दे सकता है। महर्षि दयानन्द को काम करने के लिए अधिक समय नहीं मिला; लेकिन उन्होंने अपने जीवन का एक-एक क्षण लोक-कल्याण में लगाकर चमत्कार कर दिखाया। वास्तव में काम करने की यह अपूर्व शक्ति उनकी कठोर तपस्या, अटल विश्वास, अद्वितीय कर्त्तव्य-परायणता और सिद्धान्त-निष्ठा का ही परिणाम थी। यदि मानव के आत्म-विश्वास में परिपक्वता न हो तो ईश्वर की छत्रछाया भी शक्ति प्रदान नहीं कर सकती। उनके मन-मस्तिष्क पर आर्य-सिद्धान्तों की छाप अमर थी, कर्त्तव्यपरायणता की पकड़ इतनी मजबूत थी कि विपरीत परिस्थितियों की प्रबल आंधी भी उन्हें विचलित नहीं कर पाती थी!

एक महान् कर्मयोगी की तरह जीने वाले दिव्य दयानन्द की मृत्यु एक अमर शहीद की तरह थी। तन के रोम-रोम में विष की पीड़ा कराह रही थी, लेकिन दयानन्द के केवल होठों पर ही सन्तोष की मुस्कान नहीं झलक रही थी अपितु उनका हृदय भी द्वेष-रहित था। कितना अथाह सागर था उनके सीने में कि जिसने उन्हें विष दिया, उसके लिए भी मंगल-कामना करते रहे। संकीर्णता कहीं नाम को भी नहीं। विशाल-हृदयता का विस्तृत सागर ही सागर।

दयानन्द का जीवन एक मार्ग था। दयानन्द की मृत्यु मार्ग को प्रकाशित करती हुई एक ज्योति। अखण्ड और अमर। मार्ग का हर पग प्रेरणा-दायक। ज्योति की हर किरण स्फूर्तिदायक।

हे योगिराज

रचयिता—श्री वेद प्रकाश जी एम. ए. प्रभाकर खन्ना

हे योगिराज शिव सूर्य देव जन-जन का लो शत-शत प्रणाम।
हे सत्य हितैषी प्रभापूर्ण रहने न दिया तम तोम नाम॥

कर दिया सिद्ध क्या योग शक्ति, क्या शक्तिधाम नर एकाकी।
क्यों स्वार्थ शून्य नर वर जलधर धो सके मलिनता नाचाकी।

बन प्राण प्यार से बसे हुए हो सकल प्राणियों के मन में।
भर रहे जागरण नव-जीवन सुख सार सुरभि को मन-मन में॥

हे क्रान्ति शान्ति के सम्मिश्रण तप त्याग तेज के सफल-सुफल।
मन-मन के परमाकर्षण बल कटुता की नष्ट करो दलदल॥

हर हृदय दुआएं देता है प्रभु का कर वर अर्चन वन्दन।
तुम रहो सुखी शत संवत्सर हरते मानवता का क्रन्दन॥

हर वैमनस्य छल बल कटु घन विकसित कर दो वर हृदय जलज।
तिल-तिल जलते कटते मिटते कर दो पातक पाखड सलज॥

आज का जगत और दयानन्द

(श्री. प्रिंसिपल रलाराम जी एम ए. एम. एल. ए. प्रधान आर्यप्रादेशिक सभा जालंधर)

आज का जगत अद्‌भुत है। मानव नक्षत्रों में पहुंचने के स्वपन ही नहीं ले रहा, अपितु बहुत समीप चला गया है। ब्रह्माण्ड के रहस्यों के उद्‌घाटन का भरसक प्रयत्न कर रहा है। विज्ञान की उन्नति सच मुच आश्चर्यजनक है। परमाणु से काम ही नहीं लिया जा रहा, अपित इस के गुह्यतम रहस्यों को खोजा जा रहा है। इस में मानव ने विस्मयजनक सफलता प्राप्त की है। परन्तु संसार आगे से अधिक अशान्त तथा क्षुब्ध है। चिन्ता की मात्रा कहीं बढ़ गई है। परमाणु युग एक महान् चिन्तायुग बन गया है। जब चिन्ता जीवन का साधारण अंग बन जावे तो भोग विलास समाज में नितान्त बढ़ जाते हैं। चिन्ता से मुक्ति प्राप्त करने के लिये तथा अपने स्वल्प व्यक्तित्व (limited self) को भूल जाने के लिये लोग शराब तथा भोग विलास का आश्रय लेते हैं ताकि वे अपने कुवेदना-दाहक स्वप्न को भूल सकें। इसी कारण आज का साधारण मानव भक्ष, पिब, रमस्वत के विनाश-तथा-पतनात्मक सिद्धान्त का अनुयाई बनता जा रहा है। अमरीका जैसे समृद्ध देश में मानसिक रोग भयंकर रूप धारण कर रहे हैं। पागलपन तथा मानसिक बीमारियों की संख्या इतनी बढ़ गई है कि वहां हजारों मन नींद वाली गोलियों का प्रयोग प्रतिदिन होता है। फ्रांस में रिवीयरा एक बड़ा स्वास्थ्य-प्रद स्थान (Health resort) है जहां यूरोप के लाख पति अपने शोक संतप्त हृदयों तथा चिन्तित मन को भोग विलास के जीवन द्वारा शान्त करने के लिये जाते हैं परन्तु वहां का शीतल जल वायु इस मानसिक ज्वाला को बुझा नहीं सकता। अतः वहां धनाढ्यों में आत्म-हत्या की संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। जब भय तथा चिन्ता मानव को चारों ओर से घेर लेते हैं तो कुच्छ व्यक्ति तो धर्म तथा भगवानोन्मुख हो जाते हैं परन्तु बहुत अधिक व्यक्ति भोगविलास की ओर झुक जाते हैं। आज के संसार में भौतिक वाद के फलस्वरूप भोगविलास तथा स्वछन्दता की ओर बहुत अधिक झुकाव है। इङ्गलैन्ड में जो पीछे कुच्छ सप्ताह उच्चतम सिविल सर्वेंटस (Civial Servants) का सम्मेलन हुआ उस में उन्होंने बड़े प्रामाणिक तरीके से कहा कि जो युवतियां बीस वर्ष की आयु से पहले इस देश में विवाह करती हैं उनमें भी ३० प्रतिशत गर्भिणी होती हैं। यह इस बात को दर्शाता है कि माणु परयुग किस ओर प्रयाण कर रहा है।

ऐसी स्थिति में दयानन्द का बताया हुआ नुसखा हमें वैदिक सिद्धान्तानुसार प्रयोग में लाना होगा। वेद ने कहा 'उदयान ते पुरुष नावयानम्।' मानव तू निरन्तर ऊपर चढ़ने के लिये बना है,

अधः पतन के लिये नहीं। विकास की सीढ़ी पर चढ़ते हुए तू अधोमुख से उर्ध्वमुख बना है। यह अविरल उन्नति तभी हो सकती है जब व्यक्ति न तो इन्द्रियों के जीवन से ऐसे भगे जैसे व्यक्ति एक एक बृहदकाय अजगर से भागता है और न ही इतनी संकीर्ण दृष्टि वाला बने कि इन्द्रिय सुख के अतिरिक्त उसे और कोई सुख का स्रोत ही दिखाई न दे। वह यह भी न देख सके कि वह मूलतः एक आत्मा है और आत्मा के परे संसार का नियन्ता प्रभु भी मौजूद है। जैसे मनु भगवान ने कहा 'न जातु कामः कामानाम् उप भोगने शाम्यति। हविषा कृष्णवर्त्मेन भूय एवाभिजायते'। कामनाएं उपभोग के द्वारा शान्त नहीं होती, संयमन तथा नियमन के द्वारा मानव शान्ति को प्राप्त करता। जैसे वेद ने कहा 'तेन त्यक्तेन भुंजीथा।' संसार का अवश्य भोग करो परन्तु त्याग भाव से करो। त्याग तथा भोग का समन्वय हो। दोनों में से कोई भी 'वाद' (ism) का रूप न धारण करें। आश्रमाधारित जीवन बने। संयम भोग से पहले जीवन में लाया जावे ताकि समय पर भोग संयम से मर्यादित रहे। आज के जीवन में यह क्रम उलटा होता जा रहा है। भोगा पहले आ जाता है, तब संयम का विचार ही नहीं आता। जैसे भगवान कृष्ण ने गीता में कहा 'रागद्वेष वियुक्तैस्तु विषया-निन्द्रियैश्चरण। आत्मवश्यैर्विधयात्मा प्रसाद अधिगच्छति॥ प्रसादे सर्व दुखानाम् हानिरस्योप-जायते। प्रसन्नचेतसृ ह्याशु बुद्धि पर्यवतिष्ठिते॥' राग द्वेष को छोड़ कर जब व्यक्ति इन्द्रियों से उचित काम लेता है और इन्द्रियों को अपने आत्मा के अधीन रखता है तब वह शान्ति तथा प्रसन्नता को प्राप्त करता है। प्रसन्नचित व्यक्ति निर्मल तथा स्थिर बुद्धि पाकर सब दुःखों से ऊपर उठ जाता है।

आज के जगत की दूसरी समस्या है कि परमाणु युद्ध से कैसे मुक्ति प्राप्त की जावे। युद्ध अच्छी वस्तु है कि बुरी, यह अब विवादास्पद विषय नहीं रहा। अब युद्ध का अर्थ है मानव का समुच्चय विनाश। यह विवाद भी व्यर्थ है कि अहिंसा का प्रयोग विश्वव्यापी रूप में सम्भव है या नहीं! हिंसा त्याज्य है कि नहीं? हिंसा तो सदैव त्याज्य है ही क्योंकि हिंसा का तात्पर्य्य है स्वार्थवश, क्रोधवश या द्वेषेन किसी का प्राणहरण करना। यह तो सर्वदा पाप है ही। परन्तु अहिंसा का यह अर्थ नहीं कि हम किसी भी स्थिति में, कभी भी, किसी का प्राण हरण न करें। धर्म, न्याय, देशरक्षा, तथा आत्म-सन्मान रक्षा के लिये किसी का प्राणहरण करना अहिंसा ही है। जज जब किसी कातिल हत्यारे को फांसी दण्ड देता है तो वह अहिंसा ही करता है। जब एक जवान युद्धक्षेत्र में शत्रु का संहार करता है तो वह अहिंसा ही करता है। जैसे भगवान ने गीता में कहा 'यस्य नाहंकृतो भावो बुद्धिर्यस्य न लिप्यते। हत्वापिस इमानलोकान् न हन्ति न निबध्यते।' जो स्वार्थवश नहीं या द्वेषवश नहीं अपितु न्याय तथा देश रक्षा के लिये हजारों को मारता है वह पाप नहीं अपितु पुण्यात्मा कर्मयोगी है।' ऋगवेद में आता है

क्रान्तदर्शी शिक्षा विशेषज्ञ दयानन्द

(लेखक :– प्रि० भीमसेन जी बहल, एम० एस० सी० डी० ए० वी० कालेज जालन्धर नगर)

'It is perfectly certain that India never saw a more learned Sanskrit scholar, a deeper metaphsician, a more wonderful orator and a more fearless denunciator of any evil than Dayanand.'

थियासोफिकल सोसाइटी की संस्थापिका रूसी महिला मैडम ब्लैवेटस्की ने अपनी पुस्तक' 'The caves and Jungles of Hindustan में उपर्युक्त भाव स्वामी दयानन्द जी महाराज के सम्बन्ध में कहे हैं। वास्तव में विश्व का प्रत्येक स्वतन्त्र विचारक स्वामी दयानन्द जी का भक्त बने बिना न रहा सका। उन्होंने शिवरात्रि के पावन दिन, आत्मबोध की जो प्रकाश किरण से अलौकिक तेज जीवन में धारण किया, उसने भारत वासियों को ही नहीं अपितु सार्वभौम प्राणी मात्र को निहाल कर दिया। घर छोड़ा, वैभव त्यागा। पर्वतों कन्दराओं और बीहड़ जंगलों में जीवन तत्व को खोज विश्व कल्याणार्थ न्योछावर कर दिया।

आज से लगभग १०० वर्ष पूर्व वैशाख सम्वत १९२१ विक्रम को गुरु विरजानन्द से शिक्षा और दीक्षा प्राप्त कर उन्होंने मथुरा से प्रयाण किया। गुरुने जो मन्त्र शिष्यको दिया उसकी सुरभिसे सभी को सुरभित करने के हेतु दयानन्द जी ने दृढ़ संकल्प मन में धारण किया। भारत की दयनीय दशा देख उन का हृदय चमत्कार कर उठा।

महाभारत काल से गिरता हुआ भारत १८६४ तक पतन की पराकाष्ठा में पहुंच गया था। राष्ट्रीय

स्थिरा वः सन्त्वायुधा प्राणुदे वीडू उत प्रतिष्कभे। युष्माकमस्तु तविषि पनीयसी मा मर्त्यस्य मायिनः।' हे आर्य लोगो तुम्हारे हथियार मजबूत तथा शत्रु का संहार करने वाले हों, तुम्हारी सेना बलवान तथा सुदृढ़ हो न कि छली कपटी लोगों की।' वेद का हम को आदेश है कि हे श्रेष्ठ पुरुषो तुम्हारी सेना सुदृढ़ तथा विजयी हो आज हमारी स्वतन्त्रता तथा हमारा आत्म-सम्मान खतरे में है। हमारा मुकाबिला कपटी, छली, दम्भी चीनी कम्यूनिस्टों से है। वेद का सन्देश, है कि हे श्रेष्ठ पुरुषो तुम्हारी तलवार स्थिर रूप से चमके और तुम्हारी सेना सुदृढ़ तथा विजयी हो। क्या हम दयानन्द के इस उपदेश को जो उन्होंने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में हमें दिया अब हम इस राष्ट्रीय संकट में अपने आचरण में नहीं लायेंगे ?

भावना पूर्णतः समाप्त हो चुकी थी। पलासी की लड़ाई मरहठों का पतन पंजाब में सिखों की पराजय, दक्षिण में टीपू सुलतान की समाप्ति तथा ऊपर से १८५७ के स्वतन्त्रता संग्राम की प्रतिक्रियाओं ने भारतीय जनता के हृदयों में हीन भावना (Defeatist Mentality) को भर दिया था। जिस राष्ट्र भाषा हिन्दी की चर्चा आज सर्वत्र है उस समय उसका कुछ भी अस्तित्व न था। संस्कृत मृत भाषा घोषित हो चुकी थी। अंग्रेजी शिक्षा का प्रचलन हो चुका था इसी के माध्यम से भारत को ईसाई बनाने का संकल्प अंग्रेज कर चुका था सर्व प्रथम डिग्री कालेज बंगाल में स्थापित हुआ। वन्दे-मातरम् के लेखक श्री बंकिम चन्द्र चैटरजी प्रथम ग्रेजुएट हुए। जब उन्हें डिग्री दी गई तो एक तोप से उन्हें सलामी भी दी गई। इस प्रकार की शिक्षा का प्रभाव यह हुआ कि भारतीय नव-युवक अपने स्वाभिमान को ही तिलांजली दे बैठा। माईकेल मधूसुदन और के० एम० दत्त जैसे विद्वान भी ईसाई बन चुके थे।

स्वामी दयानन्द जी महाराज ने इस सब स्थिति को भांपा और जहां वैदिक धर्म का प्रचार और प्रसार अपना ध्येय बनाया वहां शिक्षा के क्षेत्र में भी नव-क्रांति का सूत्रपात किया। शिक्षा सम्बन्धी दृष्टिकोण को जिस मनोवैज्ञानिक ढंग से स्वामी जी ने उपस्थित किया है उससे हमें मानना होगा कि वह एक क्रांतदर्शी-शिक्षा-विशेषज्ञ थे। आज उसके सिद्धान्तों को न मानने वाले भी शिक्षा के क्षेत्र में उनका लोहा माने बिना न रह सके हैं। कारण स्पष्ट है कि इस दिशा में सुधार के हेतु स्वामी जी महाराज ने पत्तों को सींचने की बजाए मूल को ही ग्रहण किया है।

'मातृमान पितृमानाचार्यवान् पुरुषों वेद'

शतपथ के इस वाक्यनुसार महर्षि ने बच्चे का प्रथम गुरु माता को ही स्वीकार किया है। वे सत्यार्थ में प्रकाश में लिखते हैं कि 'जितना माता से सन्तानों को उपदेश मिलता है उतना किसी अन्य से नहीं।' निःसन्देह 'माता निर्माता भवति माता ही तो निर्माण करती है। किन्तु आज इस तथ्य को न समझ प्रायः माताएं भी अपनी सन्तानों को विद्यालयों में केवल अध्यापकों की दया पर छोड़ना ही अपना कर्तव्य समझ बैठी हैं यही कारण है कि सन्तानों की शिक्षा अधूरी रह गई है, क्योंकि उन का प्रथम गुरु तो छिन ही गया। चाहे नर्सरी और मांटेसरी पद्धतियों को कितना भी लागू करो, जब तक बच्चे की अपनी माता शिक्षक न बनेगी राष्ट्रोत्थान होना कुछ कठिन सा ही प्रतीत होता है। महर्षि ने इस चीज को एक शती पूर्व ही परख लिया था।

इसी प्रकार भारत की निर्धन और अशिक्षित जनता की अधोगति से दुःखी होकर स्वामी जी ने अनिवार्य शिक्षा का विचार सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास में इस प्रकार व्यक्त किया है :—

"इस में राजनियम और जाति नियम होना चाहिए कि पांचवें अथवा आठवें वर्ष से आगे कोई अपने लड़कों और लड़कियों को घर में न रख सके। पाठशाला में अवश्य भेज देवें। जो न

भेजे वह दण्डनीय हो।"

क्या स्पष्ट और दूरदर्शी विचार हैं? आज से एक शताब्दी पूर्व महर्षि ने जो आदेश मनुस्मृति के आधार पर दिया था, वह आज के कर्णधारों के लिए मार्ग दर्शन का काम कर रहा है कि नहीं? आज का व्यक्ति चाहे उस ऋषि का ऋणी हो या नहीं, किन्तु सत्य की किरण छिपाई नहीं जाती। वह प्रकट होती ही है। अनिवार्य शिक्षा हुए बिना राष्ट्र का कल्याण होना असम्भव है। राष्ट्र-नायक दयानन्द का यह अमर वाक्य सदा ही ग्राह्य रहेगा।

कुछ लोग भ्रमवश यह समझ बैठते हैं कि स्वामी दयानन्द जी के शिक्षा विषयक विचार संकुचित, सांप्रदायिक और अनुदार हैं। ऐसे लोगों का विचार है कि स्वामी जी तो केवल धार्मिक शिक्षा, (वेदों की शिक्षा) पर ही बल देते थे, इस लिए आज के इस युग में यह विचार सफल होने असम्भव हैं। किन्तु बात ऐसी नहीं हैं। वास्तविकता तो यह है कि महर्षि ने शिक्षा को कभी भी किसी संकीर्ण सीमा में बांधने का विचार नहीं किया वे शिक्षा का अर्थ सम्पूर्णता में समझते थे अर्थात् विद्यार्थी जितनी भी भाषाएं पढ़ें अच्छा है, जितना भी ज्ञानार्जन करें कम है। वे लिखते हैं:—

"जब पांच वर्ष के लड़का लड़की हों तब देवनागरी अक्षरों का अभ्यास करावें अन्य देशीय भाषाओं के अक्षरों का भी।"

क्या इसे हम अनुदार और संकुचित दृष्टिकोण कहेंगे? महर्षि ने तो स्पष्ट ही लिख दिया कि अन्य देशीय भाषाओं का ज्ञान होना भी बालक को पांच वर्ष की आयु से ही प्रारम्भ करा देना उचित है। यदि इस क्रम से शिक्षा हो तो पूर्ण आयु तक व्यक्ति कितनी भाषाओं का ज्ञान कर सकता है। क्या इस की कोई सीमा है। इस असीमित और उदार व्यवस्था के लिए क्या हम उस ऋषि को धन्यवाद न दें?

स्वामी जी तो भाषा ज्ञान के अतिरिक्त आचार की शिक्षा का प्रारम्भ भी सत्यार्थ प्रकाश के दूसरे समुल्लास और व्यवहार भानु के अनुसार बाल अवस्था से ही करते हैं। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य व्यवहार ही तो है। यदि पढ़ लिख कर भी हमें परस्पर व्यवहार करना न आया तो ऐसी शिक्षा से तो अशिक्षित ही भला। यदि आज के विद्यालयों में स्वामी दयानन्द जी महाराज द्वारा रचित 'व्यवहार भानु' पुस्तक को पाठ्य क्रम में स्थान दे दिया जावे तो विद्यार्थियों और अध्यापकों की बहुत सी समस्याएं स्वतः ही निर्मूल हो जावेंगी।

महर्षि ने जो पाठविधि वर्णित की है वह बड़ी ही वैज्ञानिक, परीक्षित और मनोविज्ञान का आधार लिए हुए है। सहशिक्षा ने देश के चरित्र के साथ किस प्रकार घातक खिलवाड़ किया है यह किसी से छिपा नहीं है। स्वामी जी इस प्रकार की शिक्षा को अवैज्ञानिक तथा अस्वाभाविक ही बतलाते हैं। आश्रम जीवन को वह मान्यता प्रदान करते हैं। इस प्रकार के जीवन में गुरु और छात्र एक दूसरे के निकट आकर जीवन के निर्माण में एक दूसरे के सहायक हो सकते हैं। महर्षि ने जिस प्रकार की सर्वगुण सम्पन्न शिक्षा विधि का प्रचलन करने की इच्छा प्रकट की उसके लिए यह अनिवार्य था कि

स्वा० दयानन्द का विचित्र बोध

(ले०—श्री सत्यदेव जी M.A. प्रो, डी० ए० वी० कालेज जालन्धर)

स्वा० दयानन्द का बोधोत्सव मनाते हुए प्रायः जन महाशिवरात्रि के पर्व पर होने वाली घटना का ही उल्लेख करते हैं। पर यदि थोड़ा सूक्ष्म विचार किया जाए तो दिखाई देगा कि महापुरुषों के जीवन में अनेक मोड़ आते हैं। वे मोड़ एक तरह से उनकी आत्मा में प्रकट होने वाले ज्ञान के भिन्न २ रूपों के प्रतीक होते हैं। इस लेख में हम दो महापुरुषों की बोध सम्बन्धी घटनाओं की तुलना द्वारा इस बात को स्पष्ट करना चाहते हैं।

महात्मा बुद्ध का जन्म ईसा से ६२३ वर्ष पूर्व हुआ। २८ वर्ष की आयु के लगभग मृतक, रोगी, तथा वृद्ध उनको देख कर उन्हें, संसार दुःखमय है, यह ज्ञान हुआ। इसके साथ ही संन्यासी को देख कर उन्हें इस बचने के उपाय का भी ज्ञान हुआ। वह उपाय वैराग्य था। इसी लिए गहरी रात्रि को अपनी प्रिय पत्नी यशोदरा तथा सद्योजात शिशु राहुल को छोड़ कर छन्दक सारथि को लेकर वे घर से निकल गए।

पर बोध या ज्ञान का यह रूप प्रारम्भिक था। इस बोध या ज्ञान का दूसरी और अधिक परिणत रूप तब उन के सामने आया जब बोधि वृक्ष के नीचे तपस्या के अनन्तर, तपस्या की निरर्थकता का

विद्यार्थी सभी प्रकार की चिन्ताओं से मुक्त हो। स्वामी जी ने इस के समाधानार्थ उन्होंने राजा से आश्रम जीवन को संरक्षण देने के लिए लिखा है—

'राजा की आज्ञा से आठ वर्ष के पश्चात लड़का व लड़की किसी के घर में न रहने पावें किन्तु आचार्य कुल में रहें'।

आज के शिक्षा शास्त्री जिन **Residential Universities** के विचार पर अपना जोर लगा रहें हैं स्वामी दयानन्द के ही तो दूरदर्शी विचार उन में बोलते दृष्टि गोचर हो रहें हैं। अरविन्दु घोष इसी लिए स्वामी दयानन्द के लिए गा उठे थे कि—

'...Here I say to myself, Dayanand) was a soldier of light, a warrior in God's world, a sculptor of man and institutions, a bold and rugged victor of difficulties which matter presents to spirit.'

ऐसे क्रान्तदर्शी, महान, शिक्षा विशेषज्ञ के चरणों में बोधरात्रि के इस पावन दिवस पर भारत का प्रत्येक विद्यार्थी नतमस्तक हो कर अपनी श्रद्धाञ्जली अर्पित करने को सर्वदा उत्साहित होता ही रहेगा। इन्हीं शब्दों में मैं भी अपनी भक्ति के प्रसून भेंट कर रहा हूं।

ज्ञान होने पर, सुजाता के द्वारा भेंट की गई गो दुग्ध की खीर से तृप्त हो वे विचार-समाधि में बैठे। इस विचार-समाधि द्वारा ही उन्होंने अपने मन के विकारों पर विजय पाई, दुःखमय मानव जीवन की अहिंसा का उपदेश सुनाया तथा निर्वाण-लाभ करने के मार्ग पर चलना प्रारम्भ कर दिया।

स्वा. दयानन्द का जन्म १८३४ ई. के लगभग हुआ। प्रारम्भिक लाभ उन्हें बहिन की मृत्यु, चाचा की मृत्यु तथा महाशिवरात्रि के दिन शिव-पिण्डी की जड़ दशा देख कर हुआ। परम्परा से मिले हुए योगमार्ग की उन्होंने मृत्यु के भय से छूटने तथा सच्चे शिव की प्राप्ति के लिए साधन बनाने की निश्चय दिया।

लगातार १५ वर्ष उन्होंने योग मार्ग को पूर्ण करने के प्रयत्न किए। इस के लिए हिमालय की कन्दराओं और चोटियों से चल कर नदियों और तीर्थों के स्थानों तक लगातार खोज जारी रही। और अन्त में उन्होंने समाधि अवस्था प्राप्त की।

पर इतने से ऋषि दयानन्द की तृप्ति न हुई। भारत का सौभाग्य कहो, हिन्दू जाति का सौभाग्य कहो या आर्यसमाज का सौभाग्य ऋषि दयानन्द ने केवल अपनी समाधि पर ही ज्ञान की पूर्णता नहीं मानी। खोज जारी रखी। आयु में १६१७ विक्रमी सम्वत को ३६-३७ वर्ष की आयु के रुद्राक्षधारी, शिवरूप, व्रतनिष्ठ, रुद्र ब्रह्मचारी ने गुरु विरजानन्द का द्वार मथुरा में जाकर खटखटाया। गुरु ने पूछा, कौन हो? क्या चाहते हो? उत्तर मिला, दयानन्द सरस्वती ब्रह्मचारी हूं, व्याकरण आदि शास्त्रों का अध्ययन करना चाहता हूं। आदेश हुआ, पहली पढ़ी हुई पद्धति को भुला दो, तब नये प्रकाश का रूप प्राप्त कर सकोगे।

गुरु विरजानन्द के पास ब्रह्मचारी दयानन्द ने २॥-३ वर्ष विद्याध्ययन किया। यहां दयानन्द को दूसरा जागरण प्राप्त हुआ। इस जागरण का महत्व आंका नहीं जा सकता, क्योंकि इस जागरण ने हिन्दू जाति के भाग्य की दिशा को बदल दिया। ठीक ऐसे ही जैसे महाराजा रणजीत सिंह के जमरूद का किला जीतने पर इतिहास ने एक नया मोड़ लिया। सदियों से आक्रमण करने वाले हार कर भागने वाले बन गए और हार कर भागने वाले आक्रमण करने वाले बन गए।

गुरु विरजानन्द का हिन्दू जाति पर अपार ऋण है क्योंकि उसने इस जाति को वह उद्धारक किया, अपूर्व योद्धा किया जो सदा के लिए इस्लाम और ईसायत का मुंह मोड़ गया। वैदिक धर्म का असली रूप स्पष्ट कर गया।

महात्मा बुद्ध, सन्त कबीर, गुरु नानक देव, आदि को भी यह द्वितीय जागरण और प्रबोध हुआ था। पर उनके इस प्रबोध का रूप यह था कि पुरानी परम्परायें भ्रष्ट हैं, ठीक नहीं हैं, एक नए पन्थ की आवश्यकता है। इसीलिए बुद्ध-धर्म, सन्त कबीर का मत तथा गुरु नानक देव का मत चला। ये सब मत मूल वैदिक धर्म के विरोधी बने यद्यपि जो कुछ सारे इन महात्माओं ने प्रचारित किया वह मूल वैदिक धर्म में ही मिल सकता था। ऋषि दयानन्द ने भी बौद्ध धर्म के मध्य मार्ग की मर्यादा मार्ग के रूप को माना, आचरण का महत्व

शिव संकल्प का चमत्कार

(लेखक श्री ओमप्रकाश जी नारंग एम. ए. डी. ए. वी. कालेज जालन्धर)

शिव मन्दिर में पड़ी हुई पत्थर की मूर्ति पर चूहे का घनौना आक्रमण देखकर बालक मूलशंकर के मन में आशंका उत्पन्न हुई। क्या ये ही वह शिव हैं जो सारे संसार का कल्याण करता है। उस को तो एक छोटा-सा चूहा पांव तले रौंद रहा है। यह भला मेरे जैसे मनुष्यों की रक्षा कैसे करेगा। यह प्रश्न बालक के मन में बार २ आता। परन्तु इसका यथोचित उत्तर उसे न सूझता। अन्त में बालक की निर्मल बुद्धि ने निर्णय दिया और उसका अन्तर आत्मा पुकार उठा 'कुछ भी हो हरगिज़-हरगिज़' सच्चा शिव नहीं। मैं उस सच्चे शिव की खोज अवश्य करूंगा जो विश्व का कल्याण करता है। शिव की उपासना से मनुष्य जन्म-मरण के बन्धन से छूट कर मोक्ष के आनन्द को पाता

स्वीकार किया। आर्यसमाज में भी गुरू नानक देव के विचारानुसार रूढ़ि का खंडन, जात-पात न मानने का विचार, एकेश्वर वाद आदि सब विशेषताएं हैं। इसी प्रकार सन्त कबीर की विचार धारा का ज्ञान मार्ग, रूढ़ि-खंडन तथा ऊंच-नीच का त्याग की भावना भी ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों में हैं। फिर भी ऋषि दयानन्द ने वेद-शास्त्र परम्परा से अलग एक नया पन्थ मत नहीं बनाया। इसका एक मात्र कारण गुरू विरजानन्द की प्रेरणा पर आश्रित यह द्वितीय जागरण था।

इस द्वितीय जागरण का रूप यह था कि वेद और प्राचीन शास्त्रों के मानव जीवन को सार्थक करने वाले, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के साधक सब साधन और तत्व मिल जाते हैं। सदियों से चली आने वाली परम्पराओं ने उन के रूप को मलिन कर दिया है, उन का भ्रष्ट रूप लोगों के सामने रख दिया है।

आवश्यकता तथा मत चलाने की, अपना नाम जपाने की, एक नए ईश्वर के स्थापन करने की नहीं। आवश्यता है उस प्राचीन वैदिक परम्परा को परिष्कृत करने की, मलिनता साफ करने की, अपने को भुलाने की, प्राचीन ऋषियों के महत्व को फिर स्थापित करने की।

ऋषि दयानन्द ने यही मार्ग ग्रहण किया। आर्य समाज मूल वैदिक शाखा से अलग न हुआ, राम कृष्ण से अलग न हुआ। अपितु हिन्दू जाति का सच्चे अर्थों में उद्धारक और रक्षक बन गया।

इसलिए बोध-दिवस मनाने वालों को यह स्मरण रखना चाहिए कि ऋषि दयानन्द के बोध दो चरण ही दो रूप हैं। दोनों को मिला कर ही यह बोध-ज्ञान-जागरण पूरा होता है और इस में गुरु विरजानन्दका विशेष स्थान हैं।

है।" यह शिव संकल्प एक हृढ़मति बालक ने शिवरात्रि को आधी रात गए शिव मन्दिर में किया। इस महान व्रत ने एक अबोध बालक को जगत-गुरु दयानन्द में परिणत कर दिया। शिव रात्रि के उपलक्ष्य में महर्षि दयानन्द सरस्वती के पवित्र चरणों में श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए आओ हम निम्नलिखित बातों पर विचार करें!

१. ऋषि दयानन्द क्या था?

२. ऋषि दयानन्द ने क्या किया?

३. ऋषि दयानन्द के किए का ठोस परिणाम क्या हुआ?

पहले प्रश्न के उत्तर में हमें यह कहना है कि महर्षि दयानन्द पूर्ण मनुष्य थे। यूं तो प्रभु की विशाल सृष्टि में असंख्य पुरुष और स्त्रियां बसते हैं परन्तु मानवताके गुण किसी में ही दिखाई देते हैं। और फिर पूर्ण मनुष्य तो चिराग ले कर ढूंढने से भी नहीं मिलता। आधे, पौने, सवाए डयोढ़े दुगने और चौगने भी शायद मिलते हों पर पूर्ण नहीं मिलता। जिस व्यक्ति में शरीर, मन, मस्तिष्क तथा चरित्र की शक्तियां पूर्ण रूप से विकसित हों उसे ही पूर्ण मनुष्य कहा जा सकता है। इस कसौटी पर संसार के अनगिणत व्यक्तियों में शायद ही कोई पूरा उतरे। क्योंकि जिन का शरीर बलवान हो उन का मन बहुधा दुर्बल होता है, और यदि सुदृढ़ हों उन में बुद्धि की हीनता पाई जाती है। ऐसे भी लोग मिलते हैं जिन के शरीर मज़बूत मन बलवान और बुद्धि प्रखर होते हुए भी उन में चरित्र दोष पाया जाए। संक्षेप-तया यह कि इन चारों शक्तियों का संतुलित विकास किसी एक व्यक्ति में होना सचमुच ही दुलर्भ बात है। किसी महान विचारक का कहना है।

"Normalcy is a Bietion in life"

अर्थात जीवन में सतुलन कल्पनामात्र है। जन साधारण को तो खैर जाने दीजिए बड़े २ महा-पुरुषों में भी ऐसी ही त्रुटियां दिखाई देती हैं उदाहरण के रूप में आप गांधी जी ही को लें। गांधी जी का मन बलवान बुद्धि प्रखर और चरित्र निर्मल होते हुए भी शरीर दुर्बल था और स्वयं गान्धी जी को आजन्म अपनी शारीरिक दुर्बलता का खेद रहा। इस के विपरीत महर्षि दयानन्द सरस्वती में शरीर, मन, मस्तिष्क, और चरित्र का संतुलित विकास अपनी चर्म सीमा की पहुंचा हुआ था। शरीर इतना सुडौल कि दस घोड़े की बग्घी को रोक सके। मन इतना बलवान कि बड़े से बड़े भय आप को भयभीत न कर सके। मस्तिष्क इतना उन्नत कि आप ने संसार भर के विद्वानों को शास्त्रार्थ के लिए ललकारा और बड़े से बड़ा फिलासफर और ऊंचा पंडित आप की युक्तियों के आगे ठहर न सका। चरित्र इतना महान कि बड़े से बड़ा विरोधी भी आप पर उंगली न रख सका। यह सब कुछ होते हुए भी ऋषि ने स्पष्ट शब्दों में यह घोषणा की कि आप को वली पैगम्बर अथवा अवतार न माना जाय। अवतारी जीवों के सम्बध में एक बहुत बड़ा दोष उत्पन्न होता है और वह यह कि हम उन की अच्छाइयों को अनुकरणीय नहीं मानते। हम उन के गुणानुवाद तो गाते हैं परन्तु उन के सद्गुणों को अपने जीवन में धारण करने योग्य न जानकर इन की पूजा और प्रशंसा में ही अपने आप को धन्य मान

लेते हैं। भला वह भलाई भी किस काम की जो हमारे अन्दर भला बनने की सद्प्रेरणा पैदा न कर सके मानव की इन कमजोरियों को जानते हुए ऋषि ने डंके की चोट से यह घोषणा की कि मैं दूसरों जैसा ही एक मनुष्य हूं और मेरी एक २ अच्छाई सब अच्छे आदमियों को अपनानी चाहिए। दोषों से भी सावधान किया। आप ने तो यहां तक लिख दिया कि मैं कोई नया मत चलाने नहीं आया ब्रह्मा से लेकर जैमिनी पर्यन्त ऋषि मुनि महात्मा जिस सत्य सनातन वैदिक धर्म को मानते चले आए हैं उसी का पुनरुत्थान मेरा मन्तव्य है। इस से बड़ी विनम्रता ससार के इतिहास में ढूंढने से नहीं मिलती।

यूं तो ऋषि ने परोपकार, समाज सुधार तथा देश सेवा के अनेकों कार्य किए परन्तु हमारे विचार में ऋषि का सब से बड़ा कारनामा यह है कि आप ने धर्म को रूढ़िवाद की दलदल से निकाल कर तर्क और न्याय के आसन पर बिठाया।

Dayanand is the Bounder of rationalism in religion. अर्थात् ऋषि दयानन्द धर्म में बुद्धि वाद का जन्मदाता है।

ऋषि दयानन्द से पूर्व धर्म को बुद्धि शून्य माना जाता था। इस्लाम और इसाइयत की तालीम और पुराणों की गाथाएं इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। बड़े २ विद्वानों का यह मत था कि मजहब में अक्ल को दखल नहीं है। परन्तु ऋषि के खण्डन चक्र ने इस विचार को अशुद्ध अक्षर की तरह मिटा दिया। साथ ही प्रचलित मत मतान्तरों ने ने ऋषि का घोर विरोध किया। परन्तु आज यह अवस्था है कि ऋषि के कथन के आगे सारा संसार सर झुकाता है।

धर्म ग्रन्थों की मंडी महर्षि का सत्यार्थ प्रकाश एक अनोखी पुस्तक थी यह शायद पहला धर्म ग्रन्थ था जिस में युक्तियों द्वारा अन्य मतों का खडन किया गया हो। ऋषि ने दलीलों से समझाया कि धार्मिक सिद्धान्त यदि तर्क शुद्ध न हों वे माननीय नहीं होते। इस अनोखी घोषणा से धार्मिक जगत में खलबली मच गई। इस के प्रकाश में अन्य मतावलम्बियों ने अपनी पुस्तकों के अर्थ ही बदल डाले। चुनाचे कुरान करीम की एक आयत का तर्जमा यह था 'जिन लोगों ने खुदा के साथ मक्कारी की खुदा ने उनके साथ मक्कारी की' परन्तु मौलाना अबुल कलाम आज़ाद ने इस का संशोधन इस प्रकार किया। 'जिन लोगों ने खुदा के साथ कारसाजी की खुदा ने उनके साथ कारसाजी की' गोया ऋषि के खंडन रूपी सुदर्शन चक्र से भयभीत होकर खुदा की मक्कारी कारसाजी में बदल गई। इसी प्रकार पादरी C.F Anelreues ने ईसा के मौजज़ों की नई तफसीलें कीं। ईसा के बारे में प्रसिद्ध था कि वह कोढ़ियों पर दृष्टि डालता उन का कोढ़ दूर हो जाता था। परन्त C. F. Audrenes ने इस का अर्थ यूं किया 'लोग अपने मनों में पापों का कुष्ट लिए ईसा के समक्ष आते, ईसा उन पर प्रेम भरी दृष्टि डालता जिस से उन के मन की कुटिलता ढल जाती।' गोया शरीर का कुष्ठ मन की कुटिलता होकर रह गया। इसी प्रकार पुराणों के तेतीस करोड़ देवता जिन्हें

वैदिक धर्म और संस्कृति का रक्षक—केवल आर्यसमाज

[लेखक—श्री पं० भक्तराम जी (अफ्रीका वाले) जालन्धर]

महाविद्यालय ज्वालापुर के ३६वें महा-महोत्सव ५-६-७-८ अप्रैल सन् १६४७ पर देश प्रसिद्ध वक्ता कुंवर सुखलालसिंह जी 'आर्य मुसाफिर' ने रुग्ण रहते हुए भी चौथे दिन की समाप्ति के समय करारा भाषण दिया और कहा था कि आर्य समाज के अतिरिक्त वैदिक धर्म तथा संस्कृति की रक्षा कोई भी नहीं कर सकता। कुंवर साहिब जी का कथन नितांत सत्य है। उन भोले नाथों को क्या कहा जाए जो अब तक भी यह कहने से नहीं रुकते कि देश स्वतन्त्र होने के पश्चात् आर्य समाज की आवश्यकता नहीं रही। जब आर्य समाज का जय घोष 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम' है तब इस की आवश्यकता उस समय तक रहेगी जिस समय तक एक भी अनार्य संसार में है। आर्य समाज का उद्देश्य अन्तर्राष्ट्रीय है और वह उस उद्देश्य—सार्वभौम वैदिक धर्म प्रचार के लिए अपने स्थापना-दिवस से यत्नशील है। दिसम्बर, १६५६ में श्रीमद्दयानन्द दीक्षा शताब्दी के अवसर पर भाषण देते हुए हमारे भूतपूर्व राष्ट्रपति स्वर्गीय डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने कहा था कि महात्मा गांधी ने जो रचनात्मक कार्य देश के सम्मुख रखा है वह सारे का सारा ५० वर्ष पूर्व महर्षि दयानन्द बता गये थे। सरदार वल्लभ भाई पटेल ने एक बार कहा था—'स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् आर्यसमाज की और भी आवश्यकता है।'

हमारा देश १५ अगस्त सन् १६४७ को स्वतन्त्र हुआ और २६ जनवरी सन् १६५० को गणतन्त्र (रीपब्लिक) घोषित किया गया। स्वराज्य

जीवित सचाइयां मान कर पूजा जाता था अलंकार बन कर रह गए। ऐसा था ऋषि के खंडन का जादू जो हर किसी के सर चढ़ कर बोला। ठीक दृष्टि से देखा जाए तो ऋषि दयानन्द का खंडन धर्म पर आघात नहीं था यह तो एक सफल आप्रेशन था जिस के द्वारा ऋषि ने धर्म के बूढ़े और जीर्ण शरीर से सर्फ, कुरीतियों तथा रूढ़िवाद की बुराइयों की गन्दी पाक निकाल कर इस में तर्क, न्याय और ईश्वर विश्वास के शुद्ध रक्त का सचार किया। यदि यह कहा जाए विज्ञान के युग में ऋषि ने धर्म को सोलह आने विज्ञान के अनुकूल बना दिया तो शायद इस में कोई अतिशयोक्ति नहीं।

पर यह सब कुछ था उस शिव संकल्प का प्रताप जो शिवरात्री को बालक मूलशंकर के मन में उत्पन्न हुआ। आओ हम भी शिवरात्री को एक शिव संकल्प करें और उसे जीवन में चरितार्थ करने के लिए भरसक प्रयत्न करें। हम दयानन्द न भी बन पाएं तो भी प्रयत्न अवश्य करें।

प्राप्त हुए साढ़े सोलह वर्ष हो गए परन्तु सुराज्य न जाने कब बनेगा ? सुना करते थे कि स्वतन्त्र होने, पर भारत में राम राज्य की स्थापना हो जाएगी वह तो स्वप्न सिद्ध हुआ। जो कुछ है देश वासियों के सामने है। लोगों की धारणा अब यह हो गई है—'When character is lost nothing is lost, when health is lost some thing is lost but when wealth is lost every thing is lost" अर्थात् जब कोई चरित्र हीन हो तो कुछ नहीं बिगड़ता, स्वास्थ्य बिगड़ा तो कुछ खोया पर जब किसी का धन चला गया तो मानो उसका सब कुछ नष्ट-भ्रष्ट हो गया

भारतीय संस्कृति विदा होती दीख रही है। सरकार भारतीयों को कल्चरल प्रोग्रामों द्वारा संस्कृत करना चाहती है। आकाशवाणी पर अश्लील गानों द्वारा नव-युवकों तथा नव-युवतियों के चरित्र का निर्माण करने की इच्छा रखती है। भ्रष्ट चित्र दिखाकर जनता से सच्चरित्र बनने की आशा रखती है। लड़कियां लड़कों का वेष धारण कर रही हैं और लड़कों की लड़कियां बनने की ओर प्रवृत्ति बढ़ रही है। भाषा मिली-जुली हो गयी अर्थात् सब भाषाओं की खिचड़ी अंग्रेज चला गया परन्तु अंग्रेजियत घर कर गयी। बच्चियों को देवी के स्थान पर बेबी कहा जाने लगा है। 'माता जी !'—'पिता जी !' शब्द बिस्तर गोल कर रहे हैं ! कौन किसे कहे ? यदि कोई समझाने का यत्न भी करे तो समझने वाला कौन है ? परमात्मा ही सुमति प्रदान करेंगे। दूसरों को बुरा कहने वाले स्वयं बुरे हैं। एक भाई दूसरे को चोर कहता सुनायी देता है पर वह स्वयं डबल चोर है। सर्वत्र चार सौ बीस हो रही है। भ्रष्टाचार का इतना दौर-दौरा है कि किसी पर विश्वास करने को मन नहीं करता।

वनस्पति घी को रोते थे परन्तु अब कोई वस्तु बिना मिलावट नहीं। यहां तक कि बोलने चालने में भी मिलावट है। मेरी सब से छोटी पुत्री रेडियो पर घोषणा करते हुए एक देवी को सुनकर कहती थी कि 'देखो ! पिता जी, बनावटी मुंह बनाकर बोल रही है।' डालडा खाते २ डालडा मस्तिष्क हो गये। अब डालडा गुरु—डालडा शिष्य, डालडा डाक्टर—डालडा रोगी, डालडा वकील—डालडा सायल, डालडा प्रचार—डालडा श्रोता, डालडा सम्पादक—डालडा पाठक इत्यादि। कोई काम सिफारिश और रिश्वत के बिना नहीं होता। चांदी के पहिये लगने पर ही फाइल गति करती है। गाजर मूली की भान्ति मनुष्य काटे जा रहे हैं। देवियों का मान सुरक्षित नहीं। निर्वाचनों के समय सब दल खब सब्ज बाग दिखाते हैं पर निर्वाचनों के पश्चात् जनता सदस्यों के दर्शन करने से भी वंचित रहती है। मत भिक्षार्थ पधारने वाले उमीदवारों की दशा पर दया को भी दया आती है। 'राम नाम' के स्थान 'धन नाम' दोनों हाथों से लूटा जा रहा है। रातों रात एक रङ्क राव और धनपति कुबेर धनहीन बन रहा है। 'Eat, drink and be merry' अर्थात् 'खाओ, पियो और मौज उड़ाओ' हमारे जीवन का लक्ष्य बन गया है।

अभिनेताओं और अभिनेत्रियों को उपाधियों और पारितोषिकों का प्रलोभन दे कर बालकों और बालिकाओं के चरित्र स्तर को गिराने के लिए उन्हें

प्रेरणा दी जा रही है। राज्याधिकारियों के अधार्मिक होने का यही परिणाम हुआ करता है। यहां मूल में ही भूल है। आज जब कि अत्याचार, अनाचार, दुर्व्यवहार, व्यभिचार और भ्रष्टाचार का ही हाकर सुनायी देता है तो आर्य समाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द याद आते हैं जिन्होंने आर्य समाज के छटे नियम में सामाजिक उन्नति से पूर्व आत्मिकोन्नति को स्थान दिया और सातवें नियम में प्रत्येक की अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट न रह कर सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझने का आदेश दिया। यदि देश ने इन दोनों नियमों पर ही आचरण किया होता तो न विभाजन के समय करुणाजनक दृश्य देखने और शोक प्रद घटनाएं सुनने का अवसर उपस्थित होता और न ही वर्त्तमान शोचनीय अवस्था पर अश्रुपात करने पड़ते। महर्षि ने तो रोग का निदान और चिकित्सा दोनों ठीक बताये थे पर नादान लोगों ने मेरे स्वामी का कहना न माना और अध्यात्मवाद की भूल कर भौतिक वाद का आश्रय लेकर दुःखी हो रहे हैं। भोगवाद के रोगियों का चिकित्सक आर्य समाज ही है।

वेद का धर्म किसी जाति विशेष अथवा व्यक्ति विशेष की निजू सम्पत्ति नहीं और आर्य संस्कृति का कोई एक स्वामी नहीं। उस धर्म तथा संस्कृति का ही प्रचार आर्य समाज करता है अतः वही वैदिक धर्म और संस्कृति का रक्षक है।

ऋषिबोध दिवस ही महर्षि दयानन्द का जन्मदिन है। जो जागत है सो पावत है, जो सोवत है सो खोवत है। जागना जीवन और सोना मृत्यु है।

आर्यसमाजों से निवेदन

सभी आर्य बन्धुओं से विनम्र निवेदन है कि ८ फरवरी १६६४ से ११ फरवरी १६६४ तक ऋषि बोधोत्सव धूमधाम से मनाने की कृपा करें।

इस महान् पर्व को मनाते हुए सभी आर्य नर-नारी अपने परिवार के प्रत्येक सदस्य के हिसाब से चार आना फंड वेद प्रचार के लिए अवश्य इकट्ठा करने की कृपा करें।

और एकत्रित धन सभा में भेजने की कृपा करें। प्रायः आर्यसमाजें इस दिशा में कुछ उदासीनता का व्यवहार करती हैं। कृपया इन प्रमुख त्यौहारों को प्रधानता से मानना चाहिये। और सभा का फण्ड भी अवश्य इकट्ठा करना चाहिये। यही विनम्र प्रार्थना है।

विनीत—खुशीराम शर्मा
वेद प्रचार अधिष्ठाता

शिवरात्रि का शुभ पर्व

सभी आर्यसमाजों और आर्य भाइयों, बहिनों को वेद प्रचार के पुनीत कार्य को सुदृढ़ करने केलिए प्रयत्न करना चाहिए और परिवार के प्रत्येक सदस्य के हिसाब से कम से कम चार आना संग्रह कर आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर के वेद प्रचार कोष में भिजवा कर पुण्य के भागी बनें।

—खुशीराम शर्मा वेद प्रचार अधिष्ठाता

महात्मा हंसराज जी की जयन्ती

सम्बन्धी--रोग शैया से महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज की **अपील**

'मेरे बहुत प्यारे यश जी, आनंदित रहो !

अपने शरीर की लम्बी बीमारी के पश्चात् यह एक लेख लिखा है। बीमारी क्या थी, जीवन और मृत्यु में युद्ध था। एक दिन तो गांधी हस्पताल सिकन्दराबाद में सारे डाक्टर निराश दिखाई देने लगे। आपका कर्मठ भैया युद्धवीर भी घबरा गया कि यह क्या घटना घटने लगी। परन्तु, मैंने, कहा देखो, हैं तो यह अस्सी वर्ष की पुरानी हड्डियां, लेकिन यह दधीचि की हड्डियां सिद्ध होंगी। घबराओ मत। और मैं सचमुच बच निकला। शायद यही लेख लिखने के लिए। अपने हाथों ही से इसे लिखा है ! हिन्दीमिलाप, उर्दू मिलाप, आर्य जगत और आर्य गज़ट में छपवा दीजिए !

—आनन्द स्वामी सरस्वती !'

महात्मा हंसराज जी आधुनिक युग के उन सेवकों में शिरोमणि थे जिन्होंने भारत का ठीक पथ-प्रदर्शन किया है। सारा जीवन त्याग और तप की कठोर भट्ठी में गुजार देना युवा अवस्था की उमंगों का तिल-तिल करके बलिदान कर देना, अपने लिए एक झोंपड़ी भी न बनवाना और दूसरों को शानदार महल खड़े करने के योग्य बना देना, भारत के किसी भी अकाल, भूचाल, उपद्रव तथा महामारी से पीड़ित हो जाएं तो महात्मा जी का हृदय पिघल जाना और जब तक पीड़ितों, दुखियों को सहायता न मिल जाए तब तक चैन न लेना, आर्य जाति के युवकों और युवतियों को अन्य मतों के पजेसे बचाकर उन्हें सुरक्षित बनाने के लिए दयानन्द स्कूलों, कालेजों और महिला विद्यालयों का एक जाल बिछा देना महात्मा हंसराज ही का कार्य था। केवल इन महत्वपूर्ण कार्यों की ओर ही महात्मा हंसराज जी का ध्यान नहीं गया, अपितु इस युग के लोगों को वेद-अमृत पिलाने के लिए भी उन्होंने भरसक प्रयत्न किया। कितने ही विद्वानों को उन्होंने आकर्षित किया। महामहो-पाध्याय पं० आर्यमुनि जी, श्री पं० राजाराम जी, श्री पं० भक्त राम जी, श्री महता रामचन्द्र जी शास्त्री, श्री पं० जगतसिंह जी, श्री पं० भगवद्दत्त जी, श्री पं० राम गोपाल जी, श्री पं० विश्वबन्धु जी तथा अन्य कितने ही महानुभावों को महात्मा जी ने वैदिक विचारों के प्रचार के लिए उत्साहित किया। यही नहीं, कितने ही योग्य युवकों को, जो बड़े से बड़ा सरकारी पद प्राप्त कर सकते थे, उन्हें केवल पचहत्तर रुपये मासिक लेकर विद्या-प्रचार में लगा दिया। श्री लाला साईंदास जी, श्री पं० मेहरचन्द जी, श्री ला० दीवानचन्द जी, श्री बख्शी रामरत्न जी, श्री ला० मेहरचन्द जी, श्री पं० दीवान-

चन्द जी, श्री पं० गोवर्धनलाल दत्त जी, श्री श्रीराम जी, श्री बहादुरमल जी, श्री ला० सूर्यभानु जी, श्री महात्मा देवीचन्द जी, श्री अमरनाथ जी काली, श्री ला० ज्ञानचन्द जी तथा कितने ही और युवकों ने महात्मा हंसराज जी के पदचिह्नों पर चलकर दयानंद कालेजों के लाइफ मम्बर बनकर त्याग-भावना का परिचय दिया।

दुखी जनता, चाहे वह गढ़वाल की थी या जम्मू की मालावार की थी या बिहार की, उड़ीसा की थी या रोहतक या हिसार जिला की कोइट की थी या दक्षिण प्रदेश की, कांगड़ा की भूकम्प पीड़ित थी या उत्तर प्रदेश के मलकाने थे, बिना सम्प्रदाय, बिना प्रदेश और भाषा के विचार के सारे दुखी मानवों की सहायता के लिए श्री पं० रुलियाराम जी बजवा, श्री बख्शी सोहन लाल जी, श्री महता सावनमल जी, श्री पं० मस्तानचन्द जी, श्री कविराज हरनामदास जी, श्री पं० ज्ञानचन्द जी, श्री बाली जी, श्री पं० ऋषिराम जी तथा दयानन्द कालेज लाहौर के प्रोफैसरों तथा विद्यार्थियों को तैयार कर दिया और उन्होंने दुर्गम स्थानों पर पहुंच कर दुखी जनता की सेवा बिना किसी स्वार्थ के की। न कौंसिल या असैम्बली की मैम्बरी या मिनिस्ट्री चाही, न कोई पद ही ! वह कौन-सी भारत-हित की बात थी जिस की ओर महात्मा जी ने ध्यान नहीं दिया। मरती हुई हिन्दु जाति में प्राण-संचार करने के लिए जम्मू रियासत की वसिष्ठ जाति को, उत्तर प्रदेश के मलकानों, सिन्ध के भाई-बंदो, मालाबार के नम्बूद्रों तथा नायरों को पुनः यज्ञोपवीत पहना कर हिन्दुओं को प्रबल अंग बना दिया। निदान, महात्मा जी का एक-एक क्षण परहित, परोपकार और सहायता ही में व्यतीत होता था और इतना सेवा-कार्य करते हुए मन में नेता बनने का विचार कभी नहीं आया। एक बार मार्शल-ला के पश्चात लाहौर के माननीय कार्यकर्ता, सात-आठ महानुभावों के साथ ला० हरिचन्द जी महात्मा हंसराज जी के पास पहुंचे और प्रार्थना की कि इस समय आप नेता बनना स्वीकार करें, सारा पंजाब आपको अपना राजनैतिक नेता बनाना चाहता है। मैं उस समय वहीं बैठा था। महात्मा जी ने धन्यवाद करने के पश्चात कहा—'मैं चौबारे की ईंट नहीं बनना चाहता, मुझे भारत-भवन की बुनियाद ही की ईंट बने रहने दो। चौबारे की ईंट बनने वाले आपको बहुतेरे मिल जाएंगे। बुनियाद में पड़े रहने और वहीं गल जाने वाले कोई-कोई मिलेंगे।' ओह ! कितना त्याग है, कितनी नम्रता है और कितनी है निरभिमानता !

ऐसे एक भारत सेवक की जयन्ती आ रही है। महात्मा हंसराज जी को जन्म लिए एक शताब्दी बीत रही है। कितनी वह शुभ घड़ी थी, कितना वह पवित्र दिन था जब बजवाड़ा के छोटे-से ग्राम में महात्मा हंसराज ने जन्म लिया। ऐसे महात्मा की जयन्ती पूरी श्रद्धा, भक्ति, उत्साह तथा उल्लास से मनानी चाहिए। महात्मा हंसराज ने सारी आयु जनता जनार्दन की सेवा की। अब जनता का कर्तव्य है कि वह महात्माजी की जयन्ती ऐसी शान से मनाएं जिससे यह प्रकट हो सके कि भारत के लोग कृतघ्न नहीं, अपितु पूरे श्रद्धालु हैं और वे तप-

त्याग का जीवन व्यतीत करने वालों की स्मृति बनाने के लिए तप न सही, त्याग तो कर सकते हैं। काहे का त्याग? समय का त्याग, धन का त्याग, आलस्य-प्रमाद का त्याग, क्रोध और मोह का त्याग, अनाचार और अनाचार का त्याग, वैमनस्य और धड़ेबन्दी का त्याग, और सबसे बढ़कर दानवता का त्याग, और यह दानवता डार्विन थियूरी ने पैदा कर रखी है कि मनुष्य पशुओं की सन्तान हैं और पशु-वृत्ति यह है कि वह अपने लिए जीता है। परन्तु मानवता तो परस्पर सहायता में निहित है। मैथिलीशरण जी गुप्त ने ठीक कहा है कि यही पशु-वृत्ति है कि आप-आप ही चरे, वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिए मरे।

और पशुता विचारधारा, जिसने आज सब को आपा-धापी के अग्निकुंड में धकेल दिया है। वेद-विचार के प्रबल प्रचार से ही दब सकती है। डार्विन थियूरी यह कहती है कि मनुष्य पशुओं का पुत्र है। आज का पतन इसी विचार से हुआ है। बम्बई युनिवर्सिटी के प्रो० श्री एस० घोरे ने अपनी पुस्तक 'संस्कृति और समाज' में ठीक लिखा है कि :—

'डार्विन का सिद्धांत वस्तुतः नैतिक पतन लाने में सहायक होता है।'

और यूरोप के समझदार विद्वान भी कहते हैं कि 'यूरोप वाले इस दुनिया पर स्वर्ग नहीं बना सकते क्योंकि हमारे अन्दर पशु-वृत्ति (animal instinct) बड़ी प्रबल है।'(**The Travel Diary of a Philosopher**)

और इसके विपरीत वेद कहता है :—

'शृण्वन्तु विश्वे अमृतस्य पुत्राः।'

सम्पूर्ण मानव समाज अमृत प्रभु का पुत्र है। पशु-पुत्र तो पशु ही बनेंगे और अमृत प्रभु के पुत्र परमात्मा के गुण अपने अंदर लाने का यत्न करेंगे। इन्सान-मनुष्य किसे कहते हैं, एक उर्दू कवि ने खूब कहा है :—

दर्दे-दिल पासे वफा,
जज़बाए-ईमां होना।
आदमियत है यही और
यही है इन्सां होना॥

और यही विचारधार वेद देता है यही वैदिक विचारधारा महात्मा हंसराज जी की जीवन-नैया को आगे ही आगे ले जाती रही। महात्मा हंस राज जी की पुण्य-स्मृति वेद-प्रचार ही से स्थापित हो सकती है। इस 'हंसराज वेद-प्रचार-निधि' के लिए धन दे सकें या धन-ज़मीन दे सकें या मकान, बड़ी उदारता से दे डालिए।

आर्य जगत के लेखकों व कवियों से नम्र निवेदन

जिन महानुभावों ने लेख व कविता भेजकर आर्यजगत से अपना स्नेह प्रकट किया है हम उनके प्रति आभारी हैं। लेकिन कुछ मैटर असमय पर पहुंचने और स्थानाभाव से अप्रकाशित रहा है। अतः हम उन सज्जनों से क्षमा चाहते हैं। शेष लेख व कविता साधारण अंकों में समय समय पर प्रकाशित होती रहेंगी।

—व्यवस्थापक

जागा पाछे जागना जागा कहिए सोय

(लेखक श्री पं० दयाराम जी शास्त्री एम. ए. मन्त्री आर्यसमाज अनारकली नई देहली)

काल रात्रि थी घनघोर घटाएं छाई थीं हाथ को हाथ नहीं सूझता था। जाति चिर-जागरण के उपरान्त गहरी नींद सो गई। इस गाढ़-निद्रा में कुछ स्वार्थी ज्ञानपापी अपना ढोंग जाल बिछा गए। करवटें लेने वाले लोग उस में बुरी तरह फंसे। करोड़ों की संख्या को व्यवस्था दी गई—'स्त्री शूद्रौ नाधीयताम्'—स्त्री और शूद्र पवित्र वेद ज्ञान को न सीखें। आधी संख्या मातृ शक्ति अशिक्षित रह कर सन्तान को सुसंस्कृत कैसे करती? करोड़ों शूद्र भी अशिक्षित रह कर पशु के समान भोगमय जीवन यापन करने लगे। 'अष्ट वर्षा भवेद् गौरी' की व्यवस्था देकर कन्याओं की ग्यारह वर्ष से पूर्व ही विवाह प्रथा चला कर विनाश की दिशा में रही सही कसर भी पूरी कर दी। बाल विवाह, बहु-विवाह, वृद्ध-विवाह और बेमेल विवाहों ने जाति के अंकुरों को प्रारम्भ में ही मसल कर पनपने की आशा से वंचित कर दिया। इस अज्ञानान्धकार में छूआछूत के भूत ने प्रेम के देवता का बुरी तरह गलाघोटा। भाई भाईसेबिछुड़ा। परिवार केहर व्यक्ति का चूल्हा अलग हो गया। यह धांधली, अनाचार और छीना-झपटी चिरकाल तक चलती रही। 'चार्वाक' जैसे घृणित मत धर्म बन गए।

यावज्जीवेत्सुखं जीवेत्, ऋणंकृत्वाघृतं पिवेत्।
भस्मी भूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः॥

जब तक जीयो, सुख से जीओ। धन नहीं, ऋण लो। चुकाया नहीं जा सकता, तो अंगूठा दिखाओ किन्तु, विलासिता के साधन जुटाओ। राख बनें तो फिर कहां से आओगे!' Eat, drink & be merry'—खाओ पीओ और मौज उड़ाओ की इस मादक मदिरा ने रहा सहा विवेक भी मिट्टी में मिला दिया। कुछ जागे—ज्ञानी किन्तु स्वार्थी। उन्होंने जलते दीपक को प्रेम के काले पर्दे से ढक दिया। पवित्र वेद का दीपक प्रकाश के स्थान पर विचित्र भ्रमक अन्धकार फैलाने लगा। नरमेध के द्वारा निरपराध नर पवित्र यज्ञ की अग्नि में होमे गए, अश्वमेध और गोमेध द्वारा घोड़े और गौएं यज्ञकुण्ड में आहुति-रूप में चढ़ाए गए।

विदेशी जागरूक लुटेरों ने महान् देश की काल-रात्रि के अन्धकार और अस्तव्यस्तता का लाभ उठाया। मुसलमान और ईसाइयों ने लताड़े और दुत्कारे हजारों भाइयों को अपने में मिला लिया। वेद-दीपक का प्रकाश उन्हें अखरा। यदि कभी जाति की निद्रा खुली तो यह दीपक यथार्थ पदार्थ-ज्ञान कराने में सहायक होगा। उन्होंने इस पर ऐसा पर्दा डाला कि 'खिचड़ी' का 'खाचिड़ी' ही बन गया। वेदों के भाष्यकार बन ऐसे भाष्य किए कि अर्थ के अनर्थ होगए। गडरियों के गीत बता कर इन पर की गई श्रद्धा ही उड़ा दी। शैव वैष्णवों के झगड़े चले। मतमतान्तरों का कोलाहल बढ़ा।

एक मन्दिर में विचित्र टंकार हुई। एक व्यक्ति की नींद खुली। चूहे ने उसे टंकारा। वह जागा। वह भागा। वह छटपटाया, किन्तु सोतों को जगाने वाला न मिला। एक नेत्रहीन व्यक्ति मिला। जिस की आंतरिक ज्योति जाग रही थी। उसने इस भटके व्यक्ति का हाथ पकड़ा। ज्ञानांजन की सींक से अज्ञान तिमिर नाश किया। शिष्य कह उठा—गुरुवर ! क्या भेंट दूं ? 'यही कि सोतों को जगाओ—'जागे पाछे जागना जागा कहिए सोय।' अन्धकार में जागे इस व्यक्ति ने जगाना प्रारम्भ किया। वह अन्धकार में जगाने भागा। 'उत्तिष्ठत ! जाग्रत ! जाग्रत !' 'सोने वाले ! उठो, जागो। अर्ध-निद्रा में जगे लोगों ने इस जागरण को नींद भंग का दुःख समझा। किसी ने पत्थर मारे किसी ने कंकर बरसाए। जगाने वाला ढके चार दीपकों की ओर बढ़ा। उसे अपार आशा हुई। वह स्वार्थियों के जाल को समझ गया। उसने दीपकों पर का पर्दा खींचा। प्रकाश चारों ओर फैला। जगाने वाले ने दीपक के ढकने वाले काले पर्दे लोगों को दिखाए और कहा कि स्वार्थी चाहते हैं कि तुम सोए रहो। और हम तुम्हें लूटते रहें। उनींदी आंखों को यह चुंधियाने वाला प्रकाश अन्धकार से बुरा लगा। उन्होंने दीपकों पर काले पर्दे पड़े रहने देने का निश्चय किया, किन्तु मस्त जागरूक न माना। ऋग्वेदादि भाष्य-भूमिका के द्वारा उसने सदा के लिए इन दीपकों के विचित्र प्रकाश को दर्शा दिया। कुछ शिष्य बने व्यक्ति भी जाति को जगाने लगे। लोगों ने भी इनका खूब पीछा किया। किसी को विष पिलाया तो किसी को छुरा घोंपा। विचित्र जगाने वाले ने एक और नया दीपक संजोया। इस के द्वारा सारे पदार्थ अपने सच्चे रूप में लोगों को दीखने लगे। लोग जगने लगे। प्रकाश प्रेमी प्रकाश फैलाने वाले के साथ हो लिए। जागरूक दलबल के साथ जगाने के लिए आगे बढ़ा। काल रात्रि की भीषणता घटी। वास्तविकता का भान हुआ। 'यथेमां वाचं' कल्याणीम्' की घोषणा होने पर स्त्री शूद्र पढ़ने लगे बाल और वृद्ध विवाह समाप्त हुए। स्वार्थियों का स्वार्थ जाल टूटा। निद्राभंग हुई। जगाने वाला स्वार्थियों के स्वाथ जाल में फंसा। उसे मार डाला। कुछ अनुयायी भी मार डाले। किन्तु 'सत्यार्थप्रकाश' प्रकाश दे रहा है। भले ही जोत में जोत मिल गई किन्तु आज हम जाग गए। जगाने वाला जगा गया। इस नींद में जो खोया सो खोय किन्त अब लम्बी न तानेंगे। घर शिवरात्रि शिव-रात्री बन गई। अब हम यही कहते हैं—सचमुच अनोखा व्यक्ति जागा और हमें जगाया। यही सच्चा जागरण है। जागे पाछे जागना जागा कहीए सोय।

—

संसार के आघातों को सहते हुए भी संसार के कल्याण में ही मग्न और संलग्न रहने से महर्षि दयानन्द 'सन्त' थे।

महात्मा हंसराज जी की जन्म शताब्दी

(ले० श्री म. देवी चन्द्र जी M.A. प्रधान वेद प्रचारिणी सभा होशयारपुर

महात्मा जी का जन्म १६ अप्रैल १८६४ को बिजवाड़ा, जिला होशियारपुर में हुआ था। १६६४ में उनकी जन्म शताब्दी मनाने का निश्चय आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा ने किया है। यह शताब्दी जालन्धर में २३, २४, २५ अक्टूबर को मनाई जावेगी।

जो जाति अपने नेताओं तथा लेखकों का आदर करना नहीं जानती जिस में Hero-worship का भाव नहीं है जो उन के कारनामों को समय पर जनता के सामने नहीं ला सकती, वह जाति जीवित नहीं कहला सकती।

महात्मा हंसराज जी की अगणय सेवाएं हैं। एक धेला समाज से लिए बगैर सारी आयु वैदिक धर्म की सेवा उन्होंने की! डी. ए. वी कालिज लाहौर और दर्जनों शिक्षा सम्बन्धी संस्थाओं को पंजाब में उन्होंने स्थापित किया। इस प्रकार उन्होंने इस प्रान्त में विद्या की गंगा बहा दी। उनकी प्रेरणा से लाला दीवान चन्द, लाला साईं दास, लाला मेहर चन्द, बख्शी रामरत्न, पंडित मेहरचन्द लाला राम दास, पंडित रलाराम इत्यादि सज्जनों ने अपना जीवन शिक्षा के क्षेत्र में काम करने के लिए प्रदान किया। महात्मा हंसराज जी के शिक्षा सम्बन्धी कार्य को देखकर पंजाब में सनातन धर्मियों, सिक्खों तथा जैनियों ने भी अपने स्कूल और कालिज खोलें।

मोपला, विद्रोह में महात्मा जी ने कार्यकर्त्ता और धन भेजकर हजारों हिन्दुओं को मद्रास में मारे जाने से बचाया।

१९०५ में कांगड़ा के भूचाल में पीड़ित लोगों की सेवा के वास्ते सेवक भेजे और धनका प्रबन्ध किया। वेश्याओं तक को मकान बनाने के वास्ते सहायता दी। मैं वहीं काम करता था। एक स्थान पर जब मलबा मेरी देख भाल में उठाया जा रहा था तो पंजाब के लाट साहिब सड़क पर से गुजरे। उन्होंने पूछा 'यह स्वयं सेवक कौन है।' मैंने उत्तर दिया कि 'यह आर्य समाज के स्वय सेवक हैं जिन को महात्मा हंसराज जी ने भेजा है।' गवर्नर साहिब ने उत्तर दिया 'मैं जानता हूं कि आय समाज एक धनाढ्य संस्था है और महात्मा हंस राज जी उस के त्यागी, तपस्वी नेता है।'

मलकाना शुद्धि में महात्मा हंसराज जी ने इतने ज़ोर से गर्मी की अधिकता मे काम किया था कि वह बीमार हो कर लाहौर वापिस आ गए थे और देर तक कारबंकल फोड़े के कारण रोगी हो कर बिस्तर पर पड़े रहे।

राज पुताना में जब दुर्भिक्ष पड़ा और रामा-

बाई ईसाई स्त्री ने ब्राह्मणी का वेष बना कर सैकड़ों बच्चों को एकत्रित किया और बम्बई के ईसाई आश्रम में उन को रखा तो महात्मा हंसराज जी ने 'हिन्दसरकार' पर जोर डाल कर उन बच्चों को छुड़वा कर, उन के माता पिता के सुपुर्द किया और जिन बच्चों के माता पिता मर चुके थे, उनको अनाथालयों में भिजवाया।

बिहार में जब बाढ़ आई तो महात्मा जी ने दुःखी लोगों की सहायता का प्रबन्ध किया। अतः जहां कहीं आग लगती थी, दुर्भिक्ष पड़ता था, भूकम्प आता था या कोई अन्य दुर्घटना हिन्दुओं और मुसलमानों पर आती थी, तो महात्मा हंसराज जी सर्वप्रथम उनके लिए सेवा और सहायता का प्रबन्ध करते थे।

ऋषि दयानन्द के मिशन को फैलाने के लिए उन्होंने नगर-नगर में घूमकर अनथक सेवा की। बीसियों नई आर्य समाजें स्थापित कीं। वैदिक धर्म के प्रचार के लिए पुस्तकें लिखीं। यद्यपि अन्तिम आयु में आंखों की ज्योति के क्षीण हो जाने पर वह अधिक अध्ययन नहीं कर सकते थे, उन्हें वीयाना आस्ट्रिया में आंखों के आप्रेशन के लिए जाना पड़ा था। महात्मा जी की सेवाओं का वर्णन करना मेरी शक्ति से बाहर है।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा जालन्धर ने उनकी शताब्दी पर साहित्य तैयार करवाने का निश्चय किया है एक Commemoratian Volume छपवाई जावेगी जिस में भारत वर्ष तथा अन्य देशों के विद्वानों के लेख होंगे। पंडित श्रीराम जी एम० ए० महात्मा जी के जीवन चरित्र का अंग्रेजी में द्वितीय संस्करण लिखेंगे। लाला दीवान चन्द जी कानपुर वाले भी शताब्दी के वास्ते एक पुस्तक लिख रहे हैं। मेरा यजुर्वेद का अंग्रेजी अनुवाद का दूसरा संस्करण वेद मन्त्रों सहित भी छपवाने का सभा ने निश्चय किया है।

इस शताब्दी पर वेद प्रचार के स्थिर कोष और शताब्दी के व्यय आदि के वास्ते सभा के अधिकारियों वा आर्यसमाज के नेताओं तथा अन्य सज्जनों की ओर से पांच लाख रुपये की अपील की जा रही है।

हिन्द सरकार को लिखा जा रहा है कि वह महात्मा जी की जन्म शताब्दी पर विशेष महात्मा जी के नाम की **Postal stamps** छपवाए

प्रत्येक संस्था कालिज स्कूल तथा प्रत्येक आर्य समाज का यह कर्तव्य है कि वह अपने कोष में से शताब्दी फण्ड (fund) के लिए दिल खोलकर सहायता करें। व्यक्तिगत रूप में प्रत्येक आर्य समाजी और शिक्षित हिन्दू का, जो महात्मा हंसराज जी के कार्य की प्रशंसा करता हो, कर्तव्य है कि वह शताब्दी फण्ड में यथाशक्ति अपना भाग मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा जालन्धर को भेजें। हमारी परीक्षा का समय आ गया है यदि हम ५ लाख रुपया महात्मा जी की जन्म शताब्दी पर एकत्रित न कर सके तो हम कृतघ्नता के पाप के भागी होंगे जिस के लिए हमारे शास्त्रों में कोई प्रायश्चित नहीं है। मुझे पूरी आशा है कि हम सभा की अपील का सम्मान करते हुए अक्तूबर से पूर्व ही पांच लाख रुपया सभा के दफ्तर में भेज

आर्यसमाज का साहित्य : कुछ झांकियां

(प्रो० भवानीलाल जी भारतीय एम. ए. पाली)

हिन्दी में दार्शनिक साहित्य के प्रणयन में आर्यसमाज का क्या योगदान रहा है, यह तब तक नहीं समझा जा सकता, जब तक कि हम पं० गंगा-प्रसाद उपाध्याय की कृतियों का परिचय प्राप्त न कर लें। उपाध्याय जी हिन्दी के मान्य लेखक तथा सुप्रसिद्ध दार्शनिक हैं। आप ने हिन्दी साहित्य को अपनी उन दार्शनिक कृतियों से समृद्ध किया है, जिन पर वस्तुतः किसी भी भाषा को गर्व हो सकता है। 'आस्तिकवाद', 'अद्वैतवाद,' 'जीवात्मा','शाङ्कर-भाष्यालोचन' आदि वे कृतियां हैं जिन्होंने हिन्दी के दार्शनिक साहित्य में अपना एक पृथक् महत्व बना लिया है और जो सभी विचारों के विद्वानों द्वारा समादृत हुई हैं। हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने सन् १९३१ के कलकत्ता अधिवेशन में उपाध्याय जी को उनको 'आस्तिकवाद' शीर्षक रचना पर १२०० रु० का मंगलाप्रसाद पुरस्कार देकर सम्मानित किया। 'शाङ्कर भाष्यालोचन' अपने विषय की अपूर्व कृति है जिस में अकाट्य युक्तियों और प्रमाणों से शङ्कराचार्य के अद्वैतमत का निराकरण किया गया है। उपाध्याय जी की दार्शनिक कृतियां आर्य-समाजेतर क्षेत्रों में भी उतनी ही रुचि और चाव से पढ़ी जाती हैं जितनी आर्यसमाज के क्षेत्र में।

प्रो. सुधाकर की 'मनोविज्ञान' शीर्षक रचना भी मंगलाप्रसाद पुरस्कार से पुरस्कृत आर्यसमाज वाङ्मय की अमर निधि है। 'आस्तिकवाद' तथा 'मनोविज्ञान' वर्षों तक सम्मेलन की परीक्षाओं के पाठ्यक्रम में रही हैं। इसी प्रकार पं० चमूपति का वैदिक दर्शन, महात्मा नारायण स्वामी की 'आत्म रहस्य', प्रो० नन्दलाल खन्ना की आत्ममीमांसा, स्वामी ब्रह्ममुनि की क्रियात्मक मनोविज्ञान आदि रचनायें हिन्दी में दार्शनिक पुस्तकों के अभाव को पूरा करती हैं। दार्शनिक अन्वेषण का कार्य भी आर्यसमाज ने हिन्दी के माध्यम से ही किया। इस क्षेत्र में पं० उदयवीर शास्त्री का सांख्य दर्शन विषयक अनुसन्धान कार्य नितांत महत्वपूर्ण है। उनका 'सांख्य-दर्शन का इतिहास' तो सम्भवतः अपने विषय का अद्वितीय ग्रन्थ है। इस रचना पर लेखक को हरजीमल डालमिया पुरस्कार प्राप्त हो चुका है। उन्हीं के सांख्यदर्शन-विद्योदय भाष्य

देंगे। वेद कहता है कि 'शत हाथों से कमाओ और सहस्र हाथों से दान दो।' दान देने से धन नहीं घटता। ऐसा वेद का आदेश है। देखो ऋग्वेद मंडल १०, सूक्त ११७ दान देने में मनुष्य को उदार होना चाहिए। कृपणता मानव को अधोगति के गर्त में डाल देती है।

तथा सांख्य सिद्धांत इन दो ग्रन्थों का प्रकाशन सांख्य विषयक सम्पूर्ण जिज्ञासाओं को शांत कर देता है। हिन्दी के लिये वस्तुतः यह एक गौरव की बात है कि जो कोई भी विदेशी विद्वान् सांख्य पर पूर्ण आधिकारिक ढङ्ग से जानकारी प्राप्त करना चाहेगा, उसके लिये हिन्दी पढ़ना अपरिहार्य हो जाएगा।

धर्म और दर्शन के क्षेत्र में परमत समीक्षण तथा तुलनात्मक अध्ययन के महत्व को स्वीकार करना आवश्यक है। इस दृष्टि से आर्य समाज ने विभिन्न मतों के विषय में एक विशाल आलोचनात्मक साहित्य की सृष्टि की है। अन्य मत सम्प्रदायों के सिद्धांतों के परिचय के लिये इस प्रकार का साहित्य लिखा जाना नितान्त आवश्यक है। आर्य विद्वानों ने विभिन्न मत सम्प्रदायों के सिद्धांतों की समीक्षा की दृष्टि से जिन ग्रन्थों की रचना की है, उनका साहित्यिक तथा भाषा की अभिवृद्धि के दृष्टिकोण से विचार होना आवश्यक है। पं. मनसाराम जी पं. शिव शर्मा, पं. बुद्धदेव मीरपुरी आदि लेखकों ने पौराणिक मत विषय विपुल ग्रन्थ राशि का सर्जन किया। स्वामी दर्शनान्द तथा स्वामी कर्मानन्द ने जैन धर्म के समीक्षण में अनेक लघु पुस्तिकायें लिखीं। इसी प्रकार पं. रामचन्द्र देहलवी तथा पं. प्रेमशरण 'प्रणत' ने इस्लाम विषयक आलोचनात्मक साहित्य का निर्माण किया। वैष्णव, शैव, शाक्त आदि पौराणीक सम्प्रदायों, कबीर, नानक, राधा, स्वामी आदि निर्गुण वादी मत पंथों तथा ब्राह्म समाज, थियोसोफी आदि नवजागरण के आधुनिक आन्दोलनों के विषय में भी प्रचुर साहित्य लिखा गया है। यहां यह लिख देना अनुचित न होगा कि आर्य समाज ने अपने जीवन के विगत दद वर्षों में देश देशान्तरों में जो कुछ धर्मान्दोलन किया वह हिन्दी के माध्यम से ही हुआ। आर्य समाज के विरूद्ध भी जो कुछ लिखा गया वह भी हिन्दी माध्यम द्वारा ही जनता के समक्ष आया, क्योंकि आर्य समाज के विरोधी इस तथ्य को पूर्णतया हृदयगम कर चुके थे कि उत्तर भारत के हिन्दी भाषा भाषी प्रान्तों में आर्य समाज की नींव बहुत गहरी जम चुकी है। खण्डन के ग्रन्थों की यह अशेष राशि आर्य समाज के एक जीवित तथा जागृत आन्दोलन होने का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

आर्यसमाज ने शास्त्रीय साहित्य के अतिरिक्त ललित साहित्य के सृजन में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया है। आचार्य मम्मट ने काव्य के प्रयोजनों में जहां यश प्राप्ति, अर्थ प्राप्ति, व्यवहार ज्ञान, अमंगल का निवारण, वेद्यान्तर सम्पर्क शून्य ब्रह्मानन्द की प्राप्ति का वर्णन किया है वहां उसे 'कान्ता-सम्मित उपदेश' देने वाला भी बताया है। शास्त्र वर्णित बातें प्रभु सम्मित होती हैं और इतिहासादि के कथन सुहृत् सम्मित होते हैं, परन्तु काव्य का आदेश कान्तासम्मित होने के कारण पाठक के लिये सहज स्वीकरणीय होता है। काव्य के माध्यम से बातों को कुछ इतना सरस मनोरंजक बनाकर कहा जाता है कि वे हमारे अन्तर्तम तक प्रवेश पाकर अनुकल प्रतिक्रिया को जन्म देती हैं। इसी दृष्टि से आर्यसमाज के कवियों, लेखकों एवं साहित्यकारों ने सारस्वत भण्डार की जो अपूर्व अभि-

वृद्धि की है, उस पर यहां विचार किया जायगा।

आर्यसमाज की हिन्दी कविता की देन—

आर्य कवियों द्वारा रचित काव्य उपदेश प्रधान नैतिक भावनाओं से परिपूर्ण, भक्ति एवं आध्यात्मिक तत्वों से समृद्ध है। काव्य के माध्यम से वैदिक सिद्धान्तों को ही प्रकारान्तर से अभिव्यक्त किया गया है। मेहता अमीचन्द के इस सुप्रसिद्ध भजन 'जय जय पिता परम आनन्द दाता' की द्वितीय पंक्ति 'जगदादि कारण मुक्ति प्रदाता' वेदांत दर्शन के 'जन्माद्यस्ययत:' इस सूत्र का स्मरण दिलाती है। नारायण प्रसाद 'बेताब' का सुप्रसिद्ध भजन 'अजब हैरान हूं भगवन तुम्हें क्यों कर रिझाऊं मैं' जितना उस समय लोकप्रिय रहा, उतना ही आज भी है। साकारोपासना के विरोध में जितनी सबल युक्तियां इस भजन में ग्रथित की गई हैं उतनी सम्भवत: अन्य किसी भजन में उपलब्ध न हो सकें। स्व० कविता वा मिनीकान्त पं० नाथूराम शर्मा तथा उनके सुयोग्य पुत्र डा० हरिशंकर शर्मा हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि हैं। अभी हाल ही में आगरा की श्रीमती शांतिदेवी शर्मा को शंकर जी के व्यक्तित्व और कृतित्व पर अनुसंधान करने के कारण पी. एच. डी. की उपाधि प्राप्त हुई है। डा० हरिशंकर शर्मा को देव पुरस्कार मिला था। वर्तमान काल में आर्यसमाज के ख्याति प्राप्त कवि तथा भजनोपदेशक कविराज प्रकाशचन्द्र जी की काव्यकृतियों का साहित्यिक मूल्यांकन इन पंक्तियों के लेखक द्वारा निकट भविष्य में अपने थीसिस के लिखने के प्रसंग में किया जायगा।

आर्यजगत् के स्नेही पाठकों से

आर्यजगत सभा का साप्ताहिक मुखपत्र है। पत्र धर्म प्रचार में कितना सहायक होता है, यह तो सब को विदित ही है। सभा अपने साप्ताहिक पत्र द्वारा संन्यासी महात्माओं, समाज के पुराने अनुभवी नेताओं, विद्वानों कवि महोदयों तथा युवक भाई बहिनों को जीवन देने वाले आध्यात्मिक, राष्ट्रीय, एवं सामाजिक लेखों वा कविताओं से धर्म प्रचार कर रहा है। यत्न होता है कि प्रति सप्ताह दो तीन मननशील सज्जनों के लेख अवश्य पाठकों की सेवा में पहुंचाए जाएं। सभा की प्रचार सम्बन्धी सूचनाएं भी होती हैं। सभा अपने कर्त्तव्य को सदा से निभाती चली आरही है। सब लेखक सज्जनों की 'जगत पर अनुकम्पा का आभार प्रदर्शन करते हुए जनता से प्रार्थना करते हैं कि आर्य जगत को अधिक से अधिक प्यारा बनाने का यत्न करेंगे। ग्राहक बनाकर सहयोग देंगे। अपने अमूल्य सुझाव भी देते रहेंगे।

—सम्पादक

इसे अवश्य पढ़िए

आर्यजगत के प्रेमी पाठकों की सेवा में सूचनार्थ निवेदन है कि प्रस्तुत विशेषांक २६ जनवरी २ और ६ फरवरी के संख्या ४,५,६, का सम्मिलित अंक है। इस से अगला अंक १६ फरवरी को प्रकाशित होगा। पाठक नोट करलें।

—व्यवस्थापक

दयानन्द वचनामृत

शिवरात्रि में प्रबोध भास्कर का उदय

'शिव कथा में तो मैंने सुना है कि शिव त्रिशूल धारी है, उनका वाहन वृषभ और निवास कैलाश है, वह मनुष्याकारधारी देवता, डमरू बजाने वाला, अस्त्र सम्पन्न, और वरशाप प्रदान में समर्थ पर ब्रह्म है। वह पाशु पतास्त्र से दैत्यों का संहार करता है, तो क्या वही महादेव यह मूर्त्ति हो सकती है ? अहो ! इसके सिर पर तो ये अपावन प्राणी चूहे दौड़ लगा रहे हैं, इसके चढ़ावे को बड़ी निर्भयता से खा रहे हैं। इसमें तो उन तुच्छ जीवों को भगाने का भी बल नहीं ! यह महादेव कैसा ? पिता जी ! जिस महादेव की कथा मुझे सुनायी गयी है, वह तो गुणों से चेतन प्रतीत होता है, यदि यह मूर्त्ति वही महादेव होता है तो इन भ्रष्ट महामलीन मूषकों को अपने ऊपर क्यों चढ़ने देता ? चूहे इसके शरीर पर सपाटे से दौड़े फिरते हैं और यह सिर तक नहीं हिलाता, और न घृणित जन्तुओं के स्पर्श से ही अपने को बचाता है। इस अचेतन महादेव से मैं उस सर्व शक्ति सम्पन्न चेतन परमेश्वर को समझना असम्भव समझता हूं', यही भेद जानने के लिए आपको जगाकर प्रश्न पूछा है।

—महर्षि दयानन्द सरस्वती

मधु-कलश

(रचयिता—श्री विजय'निबार्ध' मोडलटौन जालंधर)

१. यह जीवन तरु सदा स्वेद से हरा हुआ है
सुमन सुमन में इसके अमृत भरा हुआ है
जो जीते जी कर्म नहीं करता है जग में
है उसका अस्तित्व मगर वह मरा हुआ है

२. सदा सत्यकी करूं साधना शिवको शीश झुकाऊं
मनसा, वाचा और कर्मणा सुन्दर को अपनाऊं
जो जग मुझको गरल पिलाए स्वर्ण चषकके अंदर
मैं मिट्टी के मधुर पात्र में अमृत उसे पिलाऊं

३. जहां खड़ा था वहीं रह गया जो मनमें घबराया
मंजिल तक जा पहुंचा लेकिन जिसने कदमबढ़ाया
कल उठने की आशा करके आंख मूंद ली जिसने
वह अज्ञानी इस दुनिया में कभी नहीं उठ पाया

—क्रमशः

महात्मा जी का स्वास्थ्य

आर्य जगत् के प्रसिद्ध संन्यासी तपस्वी त्यागी पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज का स्वास्थ्य अब पहिले की अपेक्षा बहुत अच्छा है। वैसे तो अब पूर्ण स्वस्थ हैं। किन्तु शरीर में थोड़ी निर्बलता बाकी है। यह भी शीघ्र दूर हो जायगी। सारा आर्य जगत् उन के पूर्ण स्वास्थ्य के लिए भगवान् से प्रार्थना करता है। महात्मा जी शीघ्र व पूर्ण स्वस्थ हो कर अपने अमृतमय प्रवचनों का पान कराने में तत्पर हों। मंगलमय प्रभु से यही मंगल प्रार्थना है।

महर्षि दयानन्द की दृष्टि में शूद्र

लेखक श्री डा० हरिदत्त जी शास्त्री व्याकरणाचार्य, एकादशतीर्थ, एम. ए., पी. एच डी.
अध्यक्ष संस्कृत विभाग, दयानन्द कालेज, कानपुर

पौराणिकों का व्यवहार स्त्री व शूद्रों के साथ अच्छा नहीं है। वे 'स्त्री शूद्रौ नाधियताम्' कह कर शूद्रों व स्त्रियों को वेदाधिकार से वंचित करते हैं।

जहां आद्य श्री शंकराचार्य जी ने वेदान्त दर्शन के 'शारीरिक भाष्य' में यह लिखा कि यदि शूद्र वेद मन्त्रों का उच्चारण करे तो उसका जिह्वाछेदन करावे' और यदि वेद मंत्रों को श्रवण करे तो कान में शीशा पिघला कर डाल देवे। यह तो एक प्रकार से मानवोचित अधिकारों का हनन तथा भीषण अमानुषिक अत्याचार है। वहां महर्षि दयानंद जी ने शूद्रों व स्त्रियों के लिए वेदों का द्वार खोल दिया। आज उस महर्षि की कृपा व उदारता से सहस्रों शूद्र वेदों को पढ़कर विद्वान बन गए हैं। म.र्षि दयानन्द जी अपने 'सत्यार्थ प्रकाश' एकादश समुल्लास में लिखते हैं—'वेद पढ़ने व सुनने का अधिकार सब को है। देखो गार्गी आदि स्त्रियां और छांदोग्य में जनश्रुति शूद्र ने भी वेद 'रैक्वमुनि' के पास पढ़ा था और यजुर्वेद के २६वें अध्याय के २ मंत्र में स्पष्ट लिखा है कि वेदों के पढ़ने और सुनने का अधिकार मनुष्यमात्र को है।'

'यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः। ब्रह्म राजान्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय च।' यजु० २६।२

महर्षि दयानन्द जी का अर्थः (यथेमां वाच कल्याणी) इस मन्त्र का अभिप्राय यह है कि वे वेदों के पढ़ने, पढ़ाने का अधिकार सब मनुष्यों को है और विद्वानों को उनके पढ़ाने का इसलिए, ईश्वर आज्ञा देता है कि हे मनुष्य लोगो। जिस प्रकार मैं तुमको चारों वेदों का उपदेश करता हूं उसी प्रकार से तुम भी उनको पढ़के सब मनुष्यों को पढ़ाया और सुनाया करो। क्योंकि ये चारों वेद सबका कल्याण करने वाले हैं। तथा (आवदानि जनेभ्यः) जैसे सब म.ष्यों के लिए मैं वेदों का उपदेश करता हूं वैसे ही सदा तुम भी किया करो। वेदाधिकार जैसा ब्राह्मण वर्ण के लिए है वैसा ही क्षत्रिय, आर्य, वैश्य, शूद्र, पुत्र, भृत्य और अतिशूद्र के लिए भी बराबर है, क्योंकि वेद ईश्वर प्रकाशित है'—(ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका से) महर्षि के इस अर्थ का समर्थन कई कट्टर पौराणिक विद्वानों ने भी किया है। कलकत्ते के सुप्रसिद्ध वेदज्ञ पं० सत्यव्रती जो सामश्रमी लिखते हैं:—

'शूद्रस्य वेदाधिकारे साक्षाद् वेद वचनमपि प्रदर्शितम् स्वामि दयानन्देन। यथेमां वाच कल्याणी माव-दानि जनेभ्यः ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय इति तदेवं वेदविधेः पक्षपातदोष-माक्स्वं न कथमपीतिस्पष्टम्'

—ऐतरेयालोचनम् पृष्ठ १७ सन् १९०६ ई०
कलकत्ता संस्करण

अर्थात्—'शूद्रों के वेदाधिकार विषय में स्वामी दयानन्द जी साक्षात् यजुर्वेद के २६, २ के यथेमां वाचं कल्याणीम्'—इस मन्त्र का प्रमाण दिया है और इस प्रकार यह भी स्पष्ट है कि वेद के विधान से किसी तरह के पक्षपात का दोष नहीं लगाया जा सकता।'

श्रीमहीधर व उव्वट प्रभृति पौराणिकों ने जो इस वेद मंत्रका अर्थ किया है वह सर्वथा भ्रमपूर्ण है।

'तदद्यवाचः प्रथमं मसीय येनासुराँ अभिदेवा असाम्। उर्जाद् उत यज्ञियासः पंचजना मम होत्रं जुषध्वम्'। ऋग्वेद १०।५३।४

अर्थ—'उस वीर्यवाणी को अत्युत्तम मैं समझता हूं जिससे हम असुरों का अपमान करें। हे देवो। आप अन्न भक्षण करते हुए, यज्ञ सम्पादन करते हुए और हे मनुष्यो! निषाद को मिला कर पांचों वर्ण तुम मेरे अग्निहोत्र को सेवन करो।'

इस मंत्र की व्याख्या करते हुए यास्काचार्य 'निरुक्त' ३।७ में लिखते हैं:—

'पंचजना मम होत्रं जुषध्वं गन्धर्वाः पितरो देवा असुरा रक्षांसीत्येके। चत्वारो वर्णा निषादः पंचम इत्यौपमन्यवः। निषाद कस्मान्निषदनो भवति निषण्णमस्मिन पापकमिति नैरुक्ताः। यत् पांच जन्यया विशा पंच जनीनया। पंच पृक्ता संख्या स्त्री पुंनपुंसकेष्व विशिष्टा।'

अर्थात्:—पांच जन मेरे अग्निहोत्र को सेवन गन्धर्व, देव, असुर, राक्षस ये पांच कई मानते हैं। चारों वर्ण, पांचवां निषाद ऐसा उपमन्यु के मत वाले मानते हैं। जो प्राणियों का वध करे वह निषाद अथवा जिस में पाप स्थित हो वह निषाद है। पांच जन समुदाय ऋत्विजों के साथ हो, पांच संख्या विशिष्ट अर्थात् पांच स्त्रियां, पांच पुरुष, पांच नपुंसक, सारांश यह कि पांच कोई हों।

निषाद को अमरकोषकार श्री अमर सिंह जी 'अमरकोष' में चांडाल के दश नाम में यों देते हैं

'चांडालप्लव मातंग दिवाकीर्ति जनंगमाः।
निषादश्वपचावन्ते वासि चांडाल पुक्कसाः॥'

'अग्निर्ऋषिः पवमाना पांचजन्य पुरोहितः। तमीमहे महागयम्,...यजु २६।६ इस मंत्र पर पौराणिक भाष्यकार श्री महीधर लिखते हैं।

'पांचजन्यः पंचजनेभ्योहितः। विप्रादयश्चत्वारो वर्णा निषादश्चेति पंचजनास्तेषां यज्ञाधिकारात्।'

अर्थात्:—'पांच मनुष्य के लिए' ब्राह्मणादि चार वर्ण और निषाद के लिए यज्ञाधिकार है।

अतएव महर्षि दयानन्द जी ने जो शूद्र व स्त्रियों के लिए वेद पढ़ने व सुनने का अधिकार लिखा है वह सर्वथा वैदिक है। वेदों के इन प्रमाणों से श्रीआद्यशङ्कराचार्य जी का सिद्धांत खंडित हो गया।

आवश्यक निवेदन

आर्यसमाजों तथा अपनी संस्थाओं से निवेदन है कि समय-समय पर अपने यहां होने वाले पर्व, संस्कार, यज्ञ और उत्सव आदि की सूचना आर्य जगत कार्यालय आर्य प्रादेशिक सभा हंसराज भवन जालन्धर शहर के पते पर भिजवा दिया करें ताकि उचित समय पर प्रकाशित हो सकें। —सम्पादक

वेदोद्धारक दयानन्द

(लेखक श्री बृजलाल जी गुप्ता प्रधान आर्यसमाज टोहाना)

जिस समय ऋषि दयानन्द का जन्म हुआ उस समय सारे भारत वर्ष पर अज्ञानान्धकार के बादल छाये हुए थे। वेद प्रायः लुप्त हो चुके थे और उनके स्थान पर मनुष्य कृत कपोल कल्पित ग्रन्थों को ही वेद समझने लगे थे। विधर्मियों ने चारों ओर से हिन्दुओं पर आक्रमण किया हुआ था। एक ओर से मुसलमान और दूसरी ओर से ईसाई हिन्दुओं को हड़प करने का भरसक प्रयत्न कर रहे थे। पश्चिमी विद्वानों ने ऐसे ग्रन्थ लिखे जिन में वैदिक धर्म से ईसाई धर्म की श्रेष्ठता साबित हो। जर्मनी के संस्कृत विद्वान् परोफैसर मैक्स मूलर ने लिखा 'I remind you again that the vedas contain a great deal of what is childish and foolish tnrough very little of what is had and objectionable—many hymns are utterly meaningless and insipid.'

अर्थात्—मैं आप को फिर याद दिला दूं कि वेद में पर्याप्त मात्रा में बालपन और मूर्खता पूर्ण भाव हैं यद्यपि उस में ऐसे तत्व बहुत कम है जो बुरे और आपत्ति जनक हों, कई मन्त्र तो सर्वथा अर्थ रहित और निःसार हैं। कितने ही पश्चिमी विद्वानों ने वेदों के बारे में इस प्रकार की भ्रमपूर्ण बातें लिखीं ताकि वह भारत में ईसाई धर्म का प्रचार कर सकें। अंग्रेजी पढ़े लिखे लोगों पर इस का बड़ा प्रभाव पड़ा और वह धड़ाधड़ ईसाई बनने लगे।

ऐसे समय में ऋषि दयानन्द का प्रादुर्भाव हुआ गुरु विरजानन्द की आज्ञा से उन्होंने वेदों द्वारा और वैदिक धर्म के प्रचार का बीड़ा उठाया। उन्होंने एक साथ ही वैदिक धर्म पर आक्रमण कारियों का मुकाबला करने का संकल्प किया। उन्होंने घोषणा की कि मानव कल्याण के लिये वेदानुकूल जीवन आवश्यकता है।

एक बार कुम्भ के मेले पर ऋषि दयानन्द ने हरिद्वार के सब घाटों, पुलों, मार्गों और मन्दिरों की दीवारों पर एक विज्ञापन लगवाया था जिस के अन्तिम शब्द थे।

क्या तुमने नहीं सुना कि ब्रह्मा से लेकर जैमिनी मुनि पर्यन्त महर्षि और स्वयंभू से लेकर युधिष्ठिर पर्यन्त राजर्षि लोग वेदोक्त धर्म के अनुकूल चल कर चक्रवर्ती आदि राज्यके असख्यात सुखोंको भोगते विमान आदि सवारियों में बैठते थे। बड़े आश्चर्य की बात है कि पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्र, ऋतु, मास, पक्ष, दिन, रात, घड़ी, पल,

नाया, आंख, कान, औषधि, बनस्पति, खाना, पीना आदि सब व्यवहार ज्यों के त्यों बने हैं किन्त हमारा हाल बदल गया है । इसका कारण है हमारा वेद विरुद्ध आचार और व्यवहार। वेदादि सत्य शास्त्रों के अनुकूल चलने से ही मनुष्यों का कल्याण और उन्नति हो सकती है।

ऋषि दयानन्द कृत ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका पढ़कर मैक्स मूलर जैसा पश्चिमी विद्वान् भी बड़ा प्रभावित हुआ। उसको वेदों के बारे में अपनी सम्मिति बदलनी पड़ी। उसने अपनी पुस्तक हम भारत से क्या सीख सकते हैं 'में लिखा' मेरा यह निश्चित मत है कि संसार में मनुष्य मात्र के स्वाध्याय के लिये वेद के अतिरिक्त अन्य कोई आवश्यक ग्रन्थ नहीं है।'

मैक्स मूलर एक और स्थान पर लिखता है कि— **I maintain that is every body who caves for himself, for his anecstars, far his history, for his intellectnal development, a stidy of the vedic literature is indispensible'**

अर्थात् मेरा विचार है कि आत्म-ज्ञान की प्राप्ति की इच्छा करने वाले तथा अपने पूर्वजों, इतिहास और मस्तिष्क उन्नति के लिए सचेत प्रत्येक व्यक्ति के लिए वेद का स्वाध्याय नितान्त आवश्यक है।'

ऋषि दयानन्द ने आर्यसमाज के दस नियमों में एक नियम बनाया कि वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना आर्यों का परम धर्म है। पश्चिमी विद्वान् जो कि पहले वेदों को गडरियों के फजूल गीत समझते थे, ऋषि दयानन्द के प्रचार से वेदों का स्वाध्याय मनुष्य मात्र के लिए आवश्यक समझने लगे।

ऋषि दयानन्द ने लिखा है कि वेद सत्य, विद्याओं की पुस्तक हैं और इसी आशय को लेकर अमेरिकन विदुषी विलोक्स ने वेदों पर मुग्ध होकर अपने विचार प्रकट किये :—

"India is the land of the great Vedas—the most remarkable works containing not only religions ideas for a Perfect life but also ferets which all the science has since proved true. Electricity, Radium, electrons, airslops all seem to be known to the seers who found the Vedas."

अर्थात—"भारतवर्ष उन महान् वेदों का देश है जिन में न केवल सफल जीवन के लिये धार्मिक सिद्धांत ही हैं बल्कि उन में वे सब तथ्य भी पाये जाते हैं जो कि विज्ञान ने अब तक ठीक साबित किये हैं। ऐसा मालूम होता है कि वैदिक ऋषियों को बिजली, ऐलेक्ट्रोन, हवाई जहाज आदि के बारे में सब कुछ ज्ञात था।'

ऋषि दयानन्द जी ने आर्य समाज की स्थापना की ताकि उनके पश्चात् भी वैदिक धर्म का प्रचार होता रहे परन्तु आज कल आर्य समाज के सदस्य ही वेद प्रचार की ओर बहुत कम ध्यान देते हैं। ऋषिबोधोत्सव हमें अपना कर्तव्य याद दिलाता है कि हमें ऋषि दयानन्द के अधूरे कार्य को पूरा करने के लिये भरसक प्रयत्न करना चाहिये।

बोध रात्रि हमें जगाने आई है

(सौ०-अरुण जी आर्या प्रभाकर ज़ीरा (फिरोजपुर)

इस संसार में मनुष्य दो प्रकार के हैं एक स्थूल बुद्धि वाले तथा दूसरे सूक्ष्म बुद्धि वाले। स्थूल बुद्धि वाले मनुष्यों के जीवन में कई ऐसी घटनायें आती हैं लेकिन उनके जीवन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता पर सूक्ष्म बुद्धि वाले मनुष्यों के जीवन में छोटी-सी छोटी घटना भी उनकी काया पलट कर देने में सहायक सिद्ध होती है। तथा उनके जीवन में ऐसा प्रकाश ला देती है जो उसके जीवन को ही नहीं प्रत्युत समस्त संसार को उस प्रकाश से प्रकाशित कर देती है।

इतिहास इस बात का साक्षी है कि समय-समय पर महापुरुषों के जीवन में ऐसी घटनाएं आई जिन्होंने उनके जीवन का रूप ही बदल दिया। १८३८ की शिवरात्रि थी। मूल शंकर अपने पिता के साथ शिव मन्दिर में जागरण के लिए गए इस विचार से कि इस जागरण से ही शिव के दर्शन होंगे। अनेक शिव-भक्त भी वहां थे। परन्तु जैसे-जैसे रात ढलती गई भक्त जन एक-एक करके निद्रा देवी की गोद में चलते गए और मूलशंकर के पिता जी भी। यदि कोई रात्रि की निस्तब्धता में, जागता रहा तो चौदह वर्ष का बालक मूलशंकर, महान् आत्माएं उस वक्त भी जागती हैं जब साधारण आत्माएं सोई रहती है। चूहे को मूर्त्ति पर चढ़ते और शिव का अपमान होते देख मूलशंकर के मन में सच्चे शिव को पाने की तड़प उत्पन्न हुई। इस पुण्य पवित्र रात्रि में मूलशंकर जागा। प्यारी बहिन और प्यार करने वाले चाचा की मृत्यु में जब अन्य सगे सम्बन्धी रो पीट रहे थे, अर्थात् आध्यात्मिक विचार से, अज्ञान की तन्द्रा में सोए पड़े थे तो मूलशंकर को जगी हुई आत्मा को एक और झंझोड़ा मिला। इन दोनों घटनाओं ने उनके जीवन पर इतना प्रभाव डाला कि उनको संसार निर्माता आर्य समाज के जन्म दाता सुधारक स्वामी दयानन्द के नाम से संसार में प्रकाशित कर दिया।

मूलशंकर इस घटना घटित होने के उपरान्त स्थान-स्थान पर घूमे। सच्चे शिव को प्राप्त करने के लिए प्रत्येक स्थान को छाना लेकिन कहीं भी उनकी तृष्णा को बुझाने वाला सरोवर न मिला। अन्ततः गुरु विरजानन्द की कुटिया का द्वार खटखटाया जहां उनको मन चाही मुराद मिल गई। गुरु की कुटिया से पठन-पाठन समाप्त कर बाहर निकले तो उनके हाथ में ओ३म् की पाखण्ड खण्डिनी पताका थी और हृदय में समस्त संसार के उद्धार का दृढ़ निश्चय किया। वह भारत में फैले अज्ञानता के अन्धकार को दूर करने के साथ भारत माता के पांवों में पड़ी पराधीनता की बेड़ियों

जन्म शताब्दी आ रही है

भारत में डी. ए. वी. का विशाल ज्ञान प्रवाह चलाने वाले, त्याग, तपोमूर्ति स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी की सौ वर्षीय जन्म शताब्दी इसी वर्ष में अक्टूबर १९६४ को बड़े ही व्यापक स्तर पर मनाई जानी निश्चित हो गई है। आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब जालन्धर की विशेष बैठक में यह निर्णय कर दिया गया है कि यह महान् समारोह होगा। इसमें सारा आर्यसमाज परिवार अपने कालेज स्कूल तथा समाज के बड़े २ नेता सम्मिलित होंगे। इसके लिए तैयारी प्रारम्भ है। सारी समाजों स्कूलों कालेजों संस्थाओं से निवेदन है कि वे इस महानात्मा के महान् पर्व को मनाने के लिए अभी से जुट जाएं अपने २ स्थानों पर नगरों, संस्थाओं में सब को इस शताब्दी के बारे में सूचना तथा प्रचार करना आरम्भ कर देवें। इस कार्य के लिए सभा को अपना सहयोग देवें। आर्य जगत् में समय २ पर समाचार निकलते रहेंगे—सं.

को भी तोड़ना चाहते थे। अन्तत: उन्होंने स्वतन्त्रता का बीज बो दिया। और उसका परिणाम आज हमारे सम्मुख है।

अत: हम इस बोधरात्रि पर प्रतिज्ञा करें कि हम अपने जीवन परिवार और राष्ट्र के जीवन में सदा जागत रहें। अपने जीवन को पवित्र बनाएं। जो दयानन्द हमें वेद की कुंजी दे गए हैं जिससे हम वेदों में उत्तम २ रत्न निकाल सकते हैं। तथा अपने इस जीवन रूपी मकान को ऐसा सुदृढ़ बना सकते हैं जो कि कभी भी विचलित न हो सके।

डी. ए. वी. हाई स्कूल कमाहीदेवी (होशियारपुर)

में गणराज्य-दिवस बड़ी धूमधाम से मनाया गया। राष्ट्र झंडा कप्तान सुखराम जी ने लहराया फिर खेलें दौड़ें और भंगड़ा हुई। स्टेज का प्रोग्राम बड़ा मनोरंजक था। जिसे लोगों ने बहुत पसंद किया और बहुत से बच्चों को ईनाम दिए। अन्त में लोगों में मिठाई बांटी गई।

—आर. पी. सेठी हैडमास्टर स्कूल

आर्यसमाज (अनारकली) मंदिर मार्ग, नई दिल्ली

का चुनाव १९-१-६४ को निम्न प्रकार से हुआ।

प्रधान—श्री गणपतराय तलवाड़।

उप-प्रधान—डा० गणेशदास कपूर, श्री लाल चन्द खन्ना, श्री हरिश्चन्द्र, श्री सेवाराम कपूर, श्री तीर्थराम।

मन्त्रीगण—प्रधान मन्त्री—श्री दयाराम शास्त्री।

मन्त्री—श्री दरबारीलाल एम. ए., श्री मुन्शीराम सचदेवा, श्री प्रकाश चन्द महता, श्री गोपालचन्द महता, श्री गोपाल कृष्ण दत्त, श्री हरिमितल बहल श्री सोमनाथ गुप्ता।

कोषाध्यक्ष—श्री बजलाल सोनी।

सहायक—श्री प्रेमकृष्ण भारद्वाज।

लेखानिरीक्षक—श्री रामसरण कपूर।

पुस्तकालयाध्यक्ष—श्री सोमकीर्ति जी एम. ए.

दरबारी लाल M. A. मंत्री समाज

दांत गये घर आपने, रहा न काला बाल।
मौत निशानी आ गयी, तू अपना आप सम्भाल॥

कुछ तीखे-तीखे

धर्मझरोके से संसार चक्र

श्री डा. देवव्रत जी महाजन आर्यसमाज लारेंसरोड अमृतसर के मन्त्री हैं। बड़े ही स्वाध्यायशील हैं। स्वास्थ्य विचारों तथा कार्य करने में भी युवक ही हैं। बोलने व लिखने दोनों में प्रभु कृपा से निष्णात हैं। भाषा मंजी हुई, मन पर एकदम प्रभाव डालने वाली होती है। मेरी विशेष प्रार्थना पर आपने आर्य जगत में अपने विचारों को लिख देना स्वीकार किया है। व्यस्त समय से समय निकाला है। पाठक लाभ उठावें—सं०

यह कहिये, खैर गुज़री कि श्री लभूराम जी देश घूमे विदेश घूमे पर गुम कभी न हुये। वरना सत्य तो यह है कि उन के पिता जी जब तक जिये उन के लिये यही प्रार्थना करते रहे कि भगवान! देखना बुढ़ापे की तरस २ कर ली हुई यह सन्तान है बड़ा हो कर मेरी छड़ी बने मेरा सहारा बने। कहीं गुम न हो जाये। यह तो भगवान की मरज़ी हुई कि छड़ी तो गुम न हुई पर पकड़ने वाले ही गुम हो गये।

पिता जी जब महा यात्रा को जाने लगे तो पहले तो उन्हें इस यात्रा का विश्वास ही न था और जब हो ही गया तो समय थोड़ा था और कहने को बहुत कुछ। फिर जब कहने सुनने वाले भक्त भी जवाब देते देखे तो केवल इतना ही कह पाये कि बेटा लभूराम धर्म पालियो अपने परिवार की यही परम्परा है और बस। कह वह गये और श्री लभूराम जी ने इसे आज तक न भुलाया।

लभूराम जी ने भी धर्म खूब निभाया। देश घूमे विदेश घूमे पर धर्म से पतित होने की कभी नौबत न आने दी। घर पर चौका लगा कर (लकीर लगा कर) खाने की प्रथा थी। बाहिर निभाना कठिन थी। पर वाह रे! दिमाग़ राह निकाल ही तो ली। होटल हो अथवा रैस्टोरैंट कुरसी पर बैठते तो मन ही मन अपने इरदगिरद उंगली घुमाकर कर कल्पनिक रेखा खींच लेने। वारे धर्म! तू

डा. देवव्रत जी महाजन मन्त्री आर्यसमाज
लारेंसरोड अमृतसर

बचने की खुद भी तो राह निकाल लेता है। आखिर तुझे भी तो जीने की चिन्ता है ना। कभी कुमार दोस्तों मित्रों की मंडली बूटी छानती तो वह भी पीये ही बनती पर यह नशा तो शिव जी महाराज का है बम भोले भण्डारी का इस में दोष कहां। एक आध बार मंडली के कहे सुने मद्य भी

पी, पर विदेशी नहीं पी ! कौन जाने उस में किस किस के गन्दे गन्दे हाथ छुये हों और फिर यह अपने देश की नहीं बल्कि अपने ग्राम की रही ग्रामो द्योग का प्रोत्साहन भी होता रहे आखिर यह धर्म का धन्धा है ना।

दान दक्षिणा में भी लभूराम जी किसी से पीछे नहीं। ग्राम का हो अथवा बिरादरी का, कोई भी उत्सव ऐसा नहीं होता जिस में लभूराम जी चन्दा न दें। अभ्युदय के साथ २ निःश्रेयस भी सुधरता जावे। कौन जाने काल बुलावा कब आ जावे। और फिर इस से मान इज्जत की भी तो वृद्धि होती है समाज में वाह २ होती है और सब से अधिक लाभ होता है व्यापार में। व्यापार मांगता है विश्वास, और विश्वास बनाने का जनता में, इस से बड़ा साधन और कौन होगा। बस एक बार विश्वास बना नहीं कि छुरी के नीचे आया और झट से कट। धन्धा कोई सा भी ले लो युधिष्ठिर पुत्र बन कर कहो अथवा सत्यवादी हरिश्चन्द्र बन कर गुज़र होने से रहा। थोड़ा बहुत तो इधर उधर होना ही होता है। आज यह उत्सव कल यह मेला कोई फकीर कोई गुरवा थोड़ा हो पर इन्कार तो बन नहीं पड़ता। फिर नित नये टैक्सों का बोझ 'कम्पीटीशन' सो जुदा। कमाई का 'मार्जन' ईमानदारी से रह ही कहां गया है। यदि लेने देने के बाट एक हों तो चल चुकी यह दुकानदारी। दस बीस दिन में ही धन्धा ठप हो जावे। कितने बुद्धिमान थे पुरखा लोग। कैसा ढंग सिखला कर सीधी राह बता गये। 'टेढ़ी उंगली कमाओ और भोग भोगते रहो। धर्म की जय जयकार होती रहेगी।'

'पुण्यात्मा लोग राम का नाम लेते २ ही चोला छोड़ते हैं और राम का नाम अन्त समय तभी वाणी पर आता है यदि इस का नित २ का अभ्यास बना रहे' श्री लभूराम जी ने जब से एक पंडित जी से यह शब्द सुने हैं हृदयंगम कर लिये हैं। तब से नित्य इस की कसरत करने मन्दिर जाते हैं। जाना भी कैसा ? यूं कहो स्वयं भगवान की कृपा है नित्य उन्हें बुला लेते हैं। चार बजते ना बजते झट से नींद खुल जाती है नित्य कर्म से निवृत्त हो, माला सम्भाल मन्दिर की राह लेते हैं। भगवान की कृपा ही तो है स्वास्थ्य अच्छा पाया है आलस्य नाम को नहीं। मन्दिर पहुंचते ही एक कोने में जहां की भगवान के साक्षात दर्शन होते हैं बैठ जाते हैं। माला पर माला चलती है...घण्टों। समय बड़े आनन्द से बीत जाता है बुद्धि बड़ी निर्मल रहती है। केवल थोड़ी सी चिन्ता है...ध्यान न जम पाने की। कमबख्त मनुराम न जाने इतने में कहां से कहां घूम आता है। वाणी तो राम नाम जपती है और यह हाट बाट तराजू से लेकर राजनीति तक की चौकड़ियां भरता फिरता है। बस यह ज़रा संध जावे तो पाओं बारह हो जावें इसी चिन्ता की चिन्ता बनी रहती है।

खैर कुछ भी हो लभूराम जी को सन्तोष है कि परिवार की परम्परा निभाने में उन्होंने कोई कसर उठा नहीं रखी। भले ही शराब भी पी हो,

गणतन्त्र तथा आर्यसमाज

(ले०-प्रसिद्ध नेता कैप्टन श्री केशवचन्द्र जी लारेंस रोड अमृतसर)

स्वामी दयानन्द जी महाराज ने आर्य समाज की स्थापना सर्व प्रथम बम्बई नगरी में की। बीज रूप में तो आर्य समाज शिवरात्री पर ही स्थापित हो गया था, जिस समय मूलशंकर ने अपने जीवन की निष्ठा की दीक्षा ले कर अपना कार्य आरम्भ किया था। आर्य समाज का विधान आज से सौ वर्ष पूर्व बनाया गया। आज सारे संसार में सोशलिज्म-समाज वाद की चर्चा चल रही है। समाज वाद की रूप रेखा क्या हो तथा गणतन्त्र पर आधारित कर के इस को किस प्रकार से क्रियात्मिक रूप दिया जा सकता है, इस बात का पुनः विवेचन किया जा रहा है। जिस बात का निर्णय करने के लिए बड़े २ नेता अभी इधर उधर विचार विनिमय में लगे हुए हैं। उसी का स्पष्ट, क्रियात्मिक तथा सुन्दर रूप आज से १०० वर्ष पूर्व आर्य समाज के विधान में रख दिया, जिस की झलक सब के सामने है। इस समाज वाद का आधार गणतन्त्र पर रखा। समाज वाद पर आधारित समाज कायम किया। इस के दस नियमों में एक नियम में स्पष्ट लिखा है कि लोग अपने २ कार्यों में स्वतन्त्र होते हुए भी सामाजिक कार्यों में परतन्त्र रहें। यदि हम इस सिद्धांत को अपने जीवन के कार्यों में ले आवें तथा इस नियम की मर्यादा में अपने को मर्यादित कर लें तो सारे समाज की समुन्नति हो सकती है। कितना सर्वांगीण, सुनहला सिद्धांत है कि प्रत्येक व्यक्ति का अपना भी व्यक्तित्व है, उस की अपनी भी सत्ता है, उस के लिए अपनी भी स्वतन्त्रता है। उस का अपना व्यक्तिगत संसार भी है, किन्तु जब सारे समाज की उन्नति का प्रश्न सामने हो तो उस समय समष्टि की उन्नति में अपने व्यक्तित्व को महत्त्व नहीं देना होगा। समाज के नियमों, मर्यादाओं में व्यक्तिवाद को पीछे कर देना होगा उस समय समाज को प्रमुखता देनी चाहिए। यही एक उत्तम नियम है जिस को आधार बना कर समाज का

(भांग भी छानी हो, मांस, मच्छली से भी परहेज न किया हो, सत्यासत्य की ओर भी अधिक ध्यान न दिया हो, भलेही छल कपट भी दुनियादारी निभाने को करना ही पड़ा हो पर सच्ची बात तो यह है कि धर्म को कभी आंच नहीं आने दी। भाई, धर्म है तो सब कुछ है। जो धर्म ही नहीं बचा पाया भला इस का जीना भी कोई जीना है। कहा नहीं

धर्मेण हीना पशुभिः समानः। हमें तो भाई पशु बनना स्वीकार नहीं। मनुष्य चोला पा कर भी पशु बनें तो क्यों?

कल्याण हो सकता है। मध्यममार्ग भी यही है। यदि केवल व्यक्तित्व को ही प्रमुखता दी जाये और समाज को सर्वथा उपेक्षित कर दिया जाये या समाज को ही सब कुछ मान कर व्यक्तित्व को बिल्कुल समाप्त कर दिया जाये—तब दोनों अवस्थाओं में ही कल्याण का पथ नहीं मिल सकता। आर्यसमाज के इस नियम में व्यक्तित्व का भी सम्मान है तथा समाज का भी गौरव निहित है। भारतीय सभ्यता का यह पुरातन सुन्दर आदर्श है जिस के द्वारा हमारी प्राचीन सभ्यता आज भी अक्षुण्ण बनी है। एक दूसरी विशेषता वर्णाश्रम व्यवस्था की है। वर्ण को कर्म पर आधारित करके समूचे समाज को हर क्षेत्र और हर दिशा में ऊंचा बनाया जा सकता है। हर व्यक्ति में आरम्भ से ही एक विशेष प्रवृत्ति होती है। उस की रुचि का बालपन से ही परिचय मिल जाता है। वर्णविभाग में यही नियम काम करता है। जिन का जीवन ज्ञान प्रचार में लगता है वे ब्राह्मण कहलाते हैं, जिन के शरीर व मन में शत्रुओं को नष्ट करने में क्षात्रतेज काम करता है वे क्षत्रिय हैं, जिन की प्रवृत्ति देश में व्यापार के काम में चलती है वे वैश्य हैं और बाकी श्रमी कहे जा सकते हैं। इस विभाग द्वारा सारा समाज निश्चिन्त होता है। अपने २ धर्म, कर्तव्य में लगे रहते हैं। इस प्रकार से राष्ट्र का सारा काम चलता रहता है। कर्म से वर्णव्यवस्था का सूत्र चला करता है। स्वामी दयानन्द जी ने इस सिद्धांत को भी गणतन्त्र के साथ कितने उत्तम ढङ्ग से मिश्रित किया है। ये दोनों प्रवृत्तियां किसी भी देश की सर्वांगीण समुन्नति का मूल कही जाती हैं। इन में जहां पर भी गड़बड़ हो जाये, वहीं पर ही राष्ट्रीय जीवन की भित्ति में दरार पड़ जाती है। स्वामी जी की दिव्य दृष्टि ने इस सत्य को देखा तथा समाज के सामने मौलिक नियम रख दिये। आर्यसमाज इसी आधार पर खड़ा होकर अपना शानदार काम कर रहा है।

शिवरात्री के पर्व पर आर्य समाज ने सारे विश्व को इसी समाजवाद का सन्देश देना है। इस के लिए प्रयत्न करना होगा। समाज के सिद्धांतों का प्रचार करने में स्वामी जी के समान जीवन में निष्ठा की दीक्षा लेनी पड़ेगी।

—

तीन पाठक

कोई जितना पुस्तक में लिखा है उतना ही पढ़ते हैं। कोई पुस्तक में जितना लिखा रहता है उतना भी नहीं पढ़ते। कोई पुस्तक में जितना लिखा रहता है उससे भी अधिक पढ़ते हैं। इस प्रकार तीन प्रकार के पाठक हैं।

'शंकर' छोड़ेंगे नहीं, जो पर हित की टेव।
बन जायेंगे वे सुधी, देश भक्त नरदेव॥

जो बात स्वप्न में भी असम्भव थी, और जिस के करने में अनेक मनोरथ मग्न हो गये, उसको विधाता सहज ही में कर डालता है। विधाता के लिए असाध्य ही क्या है!

शास्त्रार्थ युग पुनः लाने की आवश्यकता

(लेखक–श्री पिण्डीदास जी ज्ञानी आर्यसमाज लोहगढ़ अमृतसर)

महर्षि दयानन्द के कार्यक्षेत्र में अवतीर्ण होने के समय आर्यावर्त्त देश, आर्य जाति और आर्य धर्म पर विदेशी मतों इस्लाम एवं ईसाईयत की ओर से हर प्रकार के घातक आक्रमण हो रहे थे। देश, जाति तथा धर्म के कतिपय हितचिन्तकों को बचाव का कोई मार्ग नहीं सूझ रहा था। मैक्समूलर जैसे ईसाई प्रचारकों ने कुछ संस्कृत का अध्ययन करके आर्य धर्म स्रोत वेद पर ताबड़-तोड़ हमले शुरू कर रखे थे। मिशन अंग्रेजी शिक्षणालयों के विद्यार्थी ईसाई गुरुओं से प्रेरणा प्राप्त करके अन्दर जाति को खोखला किये जा रहे थे। उधर कादियां (पंजाब) के मिर्जा गुलाम अहमद महोदय ने एक नया 'फिला' आरम्भ कर रखा था। पौराणिक वाम मार्गियोंने किसी भी ऋषि, मुनि, आचार्य गुरु अथवा अवतार कहलाने वाले महानुभाव को निष्कलङ्क नहीं रहने दिया था। प्रतिक्षण यह भान होने लग गया था कि आर्य जाति और आर्य धर्म की नैया जो भंवर में फंसी प्रतीत होती थी, वह आज डूबी या कल ऐसी परिस्थिति में दयामय प्रभु की अपार कृपा से 'सत्य को ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए की सिंह गर्जना करते हुए महर्षि दयानन्द मैदान में आए। आपने पौराणिक-वाममार्गियों, मुसलमानों, ईसाईओं और संसार भर के विविध मत-मतान्तरों को खुला चैलेंज देकर शास्त्रार्थ के मैदान में आने और अपने मतों की सच्चाई सिद्ध करने के लिए ललकारा। महर्षि ने अपने कार्य काल में अनेकों शास्त्रार्थ किये और भावी शास्त्रार्थ महारथियों यथा धर्मवीर श्री पं. लेखराम आर्य मुसाफिर, विचित्र दार्शनिक शिरोमणि स्वामी दर्शनानन्द जी, स्वामी योगेन्द्रपाल जी श्री पं. धर्मभिक्षु जी, श्री पं. रामचन्द्र जी देहलवी, श्री पं. मुरारीलाल शर्मा, श्री पं॰ बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार, श्री बुद्धदेव जी मीरपुरी, श्री ठाकुर अमरसिंह 'आर्य पथिक' श्री मेहता रामचन्द्र शास्त्री, श्री पं. भगवद्दत्त रीसर्च स्कालर, श्री पं. रामगोपाल शास्त्री, पं. कालीचरण शर्मा, श्री पं. जगदीश चन्द्र न्याय रत्न शास्त्री, श्री पं. देवप्रकाश जी तथा पं. शान्ति प्रकाश जी आदि के लिए भव्य मार्ग प्रदर्शन किया। महर्षि के अनेकों शास्त्रार्थों में से कुछ प्रसिद्ध शास्त्रार्थोंका ब्योरा नीचे की तालिका में दिया जाता है ताकि महर्षि के भक्तों को ज्ञात हो सके कि उन दिनों जब हवाई जहाज़ और मोटरकार का आविष्कार नहीं हुआ था, जब कि रेलवे मार्ग भी इतने विस्तृत नहीं हुए थे, और प्रायः बैलगाड़ी और घोड़ा गाड़ियां ही यातायात के प्रधान साधन थे वैदिक धर्म पर होने वाले आक्रमणों का परिहार और मनुष्य कृत मत-मतान्तरों पर भरपूर वार करने में आर्य समाज के प्रवर्त्तक को कितना प्रयत्न और परिश्रम

करना पड़ा था—

१८६६ अजमेर—पादरी ग्रे, रावसन तथा शूलब्रेड, १८६७ कर्णवास—पं अम्बादत्त अनूपशहर। रामघाट—पं. कृष्णानन्द, कर्णवास—पं. हरिवल्लभ सोरों—पं. अङ्गद शास्त्री, १८६८ अक्तू० काकोरी का मेला—पं. उमादत्त, फर्रुखाबाद पं. श्री गोपाल १८६६ जून फर्रुखाबाद—पं. हलधर ओझा, कन्नौज—पं. हरिशंकर, १८६६ जौलाई कानपुर—पं० हलधर ओझा। १८६६ नवम्बर बनारस—पं० ताराचरण तर्क रत्न, स्वा० विशुद्धानन्द, पं० बाल शास्त्री, पं० राजाराम शास्त्री पं० शिवसहाय, पं० माधवाचार्य, पं० वामनाचार्य। ११८७२ मिर्जापुर—पं० गोविन्द भट्ट, पं० जैशीराम। उमराओं—पं० दुर्गादत्त। आराह—पं० रुद्रदत्त, पं० चन्द्रदत्त। सितम्बर पटना—पं० रामजीवन भट्ट, पं० राम अवतार। १८७३ मार्च कलकत्ता—पं० हेमचन्द्र चक्रवर्त्ती, पं० महेशचन्द्र न्याय रत्न। १८७२ अप्रैल हुगली—पं० ताराचरण तर्क रत्न। १ ७३ नवम्बर लखनऊ—पं० गंगाधर। मई छपड़ा—पं० जगन्नाथ, अक्तूबर कानपुर—पं० गंगाधर। १८७४ फरवरी इलाहाबाद—पं० काशीनाथ शास्त्री। १८७४ नवम्बर २५ सूरत - पं० इच्छाराम शास्त्री, बड़ोच— पं० माधव राव शास्त्री, राजकोट—पं० महीधर। १८७५ मार्च बम्बई—पं खेम जी बाल जी शास्त्री। जून बम्बई—पं० कमल नयन आचार्य। बड़ोदा—पं० यजेश्वर, पं० अपय्या शम्भु। १८७६ जून बम्बई—पं० राम लाल, नवम्बर मुरादाबाद—पादरी पार्कर। १८७७ मार्च २० चान्दापुर मेला—पादरी स्काट मौलवी मुहम्मद कासिम। सितम्बर२४ जालन्धर—मौलवी अहमद हसन। १८७८ फरवरी गुजरांवाला—ईसाई पादरियों के साथ। नवम्बर अजमेर— पादरी ग्रे, पादरी हस्बैण्ड। १८७६ अगस्त ४ बदायूं—पं० राम प्रसाद। अगस्त २५—बरेली—पादरी स्काट। १८८१ जून २८ ब्यावर—पादरी शूल ब्रेड। १८८२ सितम्बर ११ उदयपुर—मौ० अब्दुर्रहमान। यह बात द्रष्टव्य है कि प्रथम शास्त्रार्थ १८६६ में अजमेर नगर में ईसाइयों के साथ और अन्तिम उदयपुर नगर में १८८३ में मुसलमानों के साथ हुआ। महर्षि के देहावसान के अनन्तर सैंकड़ों आर्य विद्वानों ने उनके पद चिन्हों पर चलते हुए स्वाध्याय का आश्रय लेकर विधर्मियों के साथ शास्त्रार्थ समरांगण में लोहा लिया और अनेकों गिरतों को सम्भाला और शतशः पथभ्रष्टों को सन्मार्ग दिखलाया। शास्त्रार्थ युग का आज भी जब स्मरण आता है तो मुर्झाया हुआ हृदय कमल खिल उठता है। कैसा अनुपम था वह समय, किस तरह बच्चा-बच्चा स्वाध्याय में रत बड़े से बड़े विधर्मी का मुकाबला करने को तैयार नजर आता था। आज वह सब बातें स्वप्न नजर आती हैं। मुझे वह दिन याद हैं जब आर्य युवकसमाज अमृतसर की ओर से कादयानियों, वहाबियों, अहलेसुन्नत आदि मुसलमानों, ईसाई पादरियों, पौराणिक वाममार्गियों आदियों के साथ कई-कई सप्ताह आर्य समाज लोहगढ़ में निरन्तर शास्त्रार्थ यह हुआ करते थे। वह चहल-पहल, वह रौनक, वह उत्साह वह भव्य दृश्य दैवी देन प्रतीत होते थे। वह बसन्त जो 'सत्य को ग्रहण करो और

क्रांतिकारी सन्देश

(ले०-श्री पं. रुद्रदत्तजी शर्मा प्रधान आर्य समाज लक्ष्मणसर अमृतसर)

शिवरात्री प्रतिवर्ष अपना मूक संदेश ले कर आती है परन्तु हमने कभी इसे सुनने और समझने की आवश्यकता अनुभव नहीं की। आज से लगभग 1½ शताब्दी पूर्व भी शिवरात्री आई उसने अपना संदेश सुनाया परन्तु सब ने सुना अनसुना कर दिया। मन्दिर में अनेकों भक्त मौजूद थे जो जागते रहने का व्रत लिये हुये थे परन्तु सभी शिवरात्री का संदेश प्राप्त होने से पहले सो गये। बालक मूल शङ्कर जागता रहा, उस ने शिवरात्री का उपदेश सुना, ध्यान से सुना और उस पर मनन किया और उसको अपने जीवन में धारण किया, जिस ने समस्त देश में, नहीं नहीं संसार में एक क्रान्ति उत्पन्न कर दी। यह सब जागते रहने का परिणाम था। तभी तो वेद ने कहा है :—

'उत्तिष्ठ जाग्रत प्राप्य वरांनिबोधत स्वयं जागने वाला ही दूसरों को जगा सकता है। सोये हुये सैङ्कड़ों व्यक्ति किसी एक को भी नहीं जगा सकते अकेले ऋषि ने जाग कर संसार को जगा दिया। महर्षि दयानन्द ने आर्य संस्कृति के बुझते हुये दीपक को अपने रक्त से बचाया। विदेशियों और विधर्मियों द्वारा फैलाये जा रहे अन्धकार को मिटा कर देश को वेद की ज्योति से आलोकित कर दिया और अपने अन्तरात्मा की ज्योति से असंख्यता

असत्य को छोड़ो" की समीर के कारण धार्मिक जगत् में आ रही थी, गांधी की आंधी ने उसे पतझड़ में परिवर्तित करके रख दिया। आज यह दुर्दिन देखना नसीब हो रहा है कि सत्य को कोई पूछता नहीं, असत्य को कोई छोड़ता नहीं, भ्रष्टाचार, दुराचार का बोल—बाला हो रहा है। सारी की सारी कौम का नैतिक पतन सा हो गया है जिस से बड़े-छोटे, नेता और अनुयायी सब चील उठे हैं, किसी को कोई इलाज नहीं सूझता। परमात्मा करे कि भगवान् दयानन्द का नुस्खा 'सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये' पुनः स्थान-स्थान पर प्रयोग में लाने का साहस हमारे नेताओं में पैदा हो जाए और पुनरपि स्थान-स्थान पर शास्त्रार्थों द्वारा भूलेभटके लोगों को सीधे मार्ग पर चलाते हुए देश और जाति का कल्याण कर सकें जिस से कुछ एक विदेशी धर्म जो अपने कुत्सित विचारों के प्रचार से देश की अखण्डता और एकता के लिये खतरा बन रहे हैं, सत्य सनातन वैदिक धर्म के महत्व को समझते हुए इसकी शरण में आ सकें। इसी में हिन्दोस्थान का और इसी में हिन्दोस्थानियत का भला है।

———

बुझे हुए दीपों को जला दिया। वह अन्याय और अन्धकार को सहन न कर सके, उस के मुकाबिला में छाती तान कर खड़े हो गये। आपत्तियों का सामना किया, ईंटे और पत्थर खाये, विष के पियाले पिये परन्तु क्या मजाल कि सत्य के पथ से विचलित हुए हों। ऋषि ने पूर्ण निर्भीकता के साथ आगे बढ़ते हुए अपने शत्रुओं को चैलेंज किया कि दयानन्द को तोप के मुंह के आगे रख कर उड़ा दिया जाये, इसकी उङ्गलियों की मोम बत्तियां बना कर जला दी जायें तब भी सत्य कहने से नहीं हिचकिचायेगा। काश, यदि कहीं ऋषि की निर्भयता और सत्य प्रियता का सहस्रवां भाग भी हम में आ जावे तो संसार का नकशा बदल सकता है। अन्तर केवल इतना है कि ऋषि जागते थे परन्तु हम सोये हुए हैं। अकेले ऋषि ने असत्य अन्याय और पाखण्ड के जिन किलों को भूमि से मिला दिया था आज पहले से अधिक वेग के साथ वह फिर सर उठा रहे हैं और हम भारी संख्या में होते हुए भी अपने आप को इन का मुकाबला करने में असमर्थ पाते हैं। सच पूछो तो हम महर्षि तथा उस के सुयोग्य शिष्यों द्वारा किये जा चुके काम को अपनी अयोग्यता, स्वार्थता, और गद्दियों की लोलुपता द्वारा चौपट कर रहे हैं। आज आर्य समाज के प्रत्येक सदस्य, कार्यकर्ता अधिकारी एवं नेता को इस विकट समस्या पर गम्भीरता के साथ विचार करना होगा।

आज आर्यसमाज और इसकी संस्थाओं में वह स्पिरिट (**Spirit**) समाप्त हो चुकी है जो आज से १५-२० वर्ष पूर्व तक दिखाई देती रही है। जलती अग्नि के समीप शेर और चीते भी फटकाने का साहस नहीं कर सकते परन्तु जब आग बुझ कर राख का ढेर रह जाती है तो उसे कव्वे और कुत्ते भी रौन्दते फिरते हैं। यह अवस्था आज आर्य-समाज की हो चुकी है। जब आर्य समाज जागता था तो कोई इसकी ओर आंख उठा कर देख नहीं सकता था। हिन्दू जाति को मुसलमान और ईसाई बनाने के स्वप्न लेने वाले मुल्लां और पादरी बिल्लों में छुप गये थे, आर्य समाज के कालेजों और गुरुकुलों में से निःस्वार्थ निर्भय और तपस्वी प्रचारक निकलते थे जो देश और धर्म की रक्षा के लिये जीवन अर्पण करके संसार में वैदिक धर्म की धाक बिठा रहे थे। परन्तु जिस स्वतन्त्रता के लिये आर्य-समाज और उसके परवानों ने सर्वस्व न्योछावर किया इस भाग्यता से वही स्वतन्त्रता आर्य समाज को ले डूबी। स्वतन्त्रता बुरी नहीं, परन्तु चालाक अङ्गरेज शासकों ने विदा होते समय भारत की स्वतन्त्रता की बागडोर जिन हाथों में सौंपी उनकी अयोग्यता अदूर-दर्शिता और स्वार्थान्धता आदि के कारण आजादी बरबादी बन कर रह गयी। और देश की संस्कृति और इसके संरक्षक आर्य समाज के लिये विशेष रूप में घातक सिद्ध हुई। स्वतन्त्रता के ठेकेदारों ने अपने आप को सैक्युलर घोषित करके धर्म और संस्कृति के विरुद्ध जबर्दस्त जहाद आरम्भ कर दिया है। हमारे राज्याधिकारी प्राचीन सभ्यता का मूलोच्छेदन कर देने की शपथ ले चुके प्रतीत होते हैं। हिन्दुकोड बिल और तिलाक आदि के कानूनों के अतिरिक्त सब ओर शराब मांस और

इसका भी ध्यान है ?

(ले०--श्री दयानन्द जी आर्य एम. ए. विद्यार्थी साधु आश्रम होश्यारपुर)

सुना होगा कि ऋषि के आने से पूर्व कलकत्ता के एक महाराजा ने वेद जानने की यह इच्छा प्रकट की। एक पौराणिक ने वेद सुनाने प्रारम्भ किए। तब उस राजा के दिल में घृणा पैदा हो गई कि यदि यही हैं वेद तो दूर से ही प्रणाम। आज भी जो संस्कृत पढ़ता है उसे वही पश्चिमी विचार पढ़ाए जाते हैं। भला विद्यार्थी को लिखना पढ़ता है कि वेदों में मांस, सुरा का विधान है। वैदिक ऋषि प्रसन्नचित्त थे, यद्यपि उनमें जंगली पता भी प्रत्यक्ष हो जाया करता था, ये विचार हाईरिखसिमर की आल्टिण्ड शेज़ लेवन में लिखे हैं। फिर उस विद्यार्थी को यह भी पढ़ना व लिखना पड़ता है कि **Relig-ion dos vedas** में **olden herg** में कहा है कि यद्यपि ऋग्वेद भारतीय साहित्य और धर्म की

अण्डों का खुला प्रचार, दुराचार, भ्रष्टाचार, रिश्वत ब्लैक, स्मगलिंग और लूटखसूट का सागर ठाठें मार रहा है। देश के गो धन का तीव्रता के साथ नाश किया जा रहा है मछलियां, मुर्गियां और सुअर पाल कर बेचने वालों को सरकार की ओर से लाखों रुपयों की बिना ब्याज सहायता दी जा रही है। मानों बड़े वेग के साथ पुरुष को पशु और मानव को दानव (राक्षस) बनाया जा रहा है। सरकारी विद्यालयों में बच्चों को अण्डे बांट कर रही सही कसर भी पूरी की जा रही है। स्कूलों और कालेजों में जो शिक्षा दी जा रही है वह बच्चों को धर्म और सभ्यता से कोसों दूर ले जाने वाली है। परन्तु हम सब कुछ देखते हुये भी नहीं देखते अर्थात् जागते हुये भी सो रहे हैं।

आर्य वीरो, शिवरात्री फिर अपना पवित्र संदेश लिये आ रही है और जागने का आदेश दे रही है। सुनो, सुनो और ध्यान से सुनो। जागो और असत्य और अन्याय के सामने छाती तान कर खड़े हो जाओ। तुम्हारे पास साधन और शक्ति दोनों विद्यमान हैं। देश के कोने-कोने में आर्य समाजें स्थापित हैं। नगर-नगर में आर्य स्कूल, कालिज और गुरुकुल मौजूद हैं। आर्यसमाज के सहस्रों कार्यकर्ता, इस के विद्वान उपदेशकों की सेना इस की संस्थाओं के संचालक, अध्यापक और उनके आधीन शिक्षा प्राप्त करने वाले लाखों युवक जब एक कदम होकर चलें तो संसार में क्रांति ला सकते हैं। आवश्यकता है तो केवल संयोजक और संगठन की। शिवरात्रि के अवसर पर आर्यसमाज के नेताओं, प्रतिनिधि सभाओं विशेषतः सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के कर्णधारों की एक विस्तृत कन्वेशन बुला कर आधुनिक परिस्थिति पर गंभीरता से विचार करना चाहिये और देश तथा धर्म की डूब रही नैया को बचाने का उपाय करना चाहिये।

प्राचीन कृति है तथापि वैदिक ह्रास के चिन्ह उसमें उत्तरोत्तर बढ़ते ही नजर आते हैं। पिशल, गैल्डनर विलसन इस मत के पोषक हैं कि ऋग्वेद के समय में भारतीय संस्कृति उतनी ही विकसित हो चुकी थी जितने कि प्रामाणिक रूप में हम सिकन्दर के समय उसे जानते आए हैं। पिंटरनिट्स महोदय अथर्व वेद के सम्बन्ध में लिखते हैं, 'प्रक्षेप की वृत्ति ने मूल पाठ को बिगाड़ने में कोई कसर नहीं छोड़ी प्रतीत होती। भाषा तथा छन्द के आधार पर भी हम यह कह सकते हैं कि वेदों का रूप अब वह नहीं रहा।' ऐसे विचार आज संस्कृत विद्यार्थियों को पढ़ने को मिलते हैं। जरा और रूप देखें कि भारतीय संस्कृति के भावी रक्षकों को कैसे भक्षक बनाया जा रहा है, किसी को ? इसी देश के उगते यौवन को यह दिन दिहाड़े पढ़ाया जा रहा है कि यजुर्वेद १० से २१ अध्याय में सौत्रामणि सत्र का वर्णन हुआ है जिस में सोम के स्थान पर सुरा का बयान है। पुरुषमेध के प्रसंग में कम से कम १८४ पशुओं की जिबह करने का हुकम है। मेध्य पशु को यूप के साथ बांधा जाता है व सम्बोधित किया जाता है, तू सांप न बन जाना,' जहां वेद के मन्त्र 'एक सद्विप्रा बहुधा वदन्ति...एक एक वृदेक एव' 'तं उपस्तुहि कह कर एक ईश्वर की ही उपासना का सफलतया सुष्ठुरीत्या विधान लिखते हैं वहां श्री मैक्डानेल 'A History of Sanskrit Literature.' में लिखते हैं, The higher goods of the Rigveda are almost entirely personifications of natural phenomena Sun, such as Down, Fire and Wind.' आर्यो ! जागो। चेतो। अपने राज्य में वेद पर डाका, वह वेद जिस के बारे में ऋषिवर ने आर्यों का परम धर्म बताया है। हमारा उद्देश्य वेद-प्रचार है। क्या ये विचार चलते रहेंगे ? आज आर्यों के परम-धर्म पर ऐसे थोथे अनालि विचार। हमारा लक्ष्य वेद-रक्षा है। सोचो तो। सही ये नानाविध वेद विरोधी विचार जो अनिवार्य तौर पर स्कूलों कालिजों में पढ़ाये जा रहे हैं, क्या भावी सन्तति को आर्य बनाएंगे ? मह न खेद ! दुःख के चार आंसू क्यों न बहें। उस भारत की पावन ज्ञानमय धरती पर जिस धरणी पर राम का गौरव मूर्तिमान बन कर चमका, योगेश्वर कृष्ण का सुदर्शनचक्र चमका, भीम की गदा व अर्जुन का गांडीव झंकृत हुआ, दयानन्द की पाखंड-खंडिनी पताका लहराई गई, उस स्थान में पैदा होने वाले युवक वेद के प्रति ऐसे नास्तिक विचार लें। आओ, हम पहले चारों वेदों के भाष्य कौन २ से प्रमाणिक रूप से हैं यह घोषित कर दें। भाइयो ! किस बात की कमी है, कहीं लक्ष्य तो नहीं भूल गए, भूले लक्ष्य वाला हो तो निराश होता है हमारा लक्ष्य है वेद-रक्षा, हां मरते दम तक याद रखिए वेद-रक्षा। आर्यों के बच्चे क्या इस पावन वेद-वाणी को पढ़ते हैं ? आर्यसमाज में बड़े २ प्रकांड पण्डित हैं। केन्द्रीय सभा इन सब को एक जगह बैठा कर धड़ाधड़ किताबें प्रकाशित कराये ताकि वेद-प्रचार हो सके। याद रखें, आज भी जितने वक्ता, लेखक, विद्वान् आर्यसमाज के पास हैं उतने कहां ? परन्तु बिखरे २ से हैं। उन से केन्द्रीय सभा कार्य ले। वेद रक्षा ही हमारा प्राण से भी प्रिय कार्य है।

नया युग उमड़ कर उमंगों से आया

रचयिता—श्री राजेन्द्र जी 'जिज्ञासु' एम. ए. शोलापुर

सहे कष्ट लाखों नहीं लड़खड़ाया वतन को पतन के गढ़े से निकाला!

निर्बल दीन असहाय थे देशवासी
विदेशी सभी खिल्लियां थे उड़ाते
निशा थी सघन मेघ छाये हुए थे
बिना रोक हुल्लड़ निशाचर मचाते

वह आया लिये वेद भानु को स्वामी—चतुर्दिक हुआ विश्व मे फिर उजाला!

सकल ज्ञान गौरव पुराना लुटाकर
कभी की वतन एकता खो चुका था
घृणा द्वेष जाति में घर कर चुके थे
जन्म-भूमि का भाग्य ही सो चुका था

पुनः सुप्त शक्ति हिलाई जगाई वह आया ऋषि वेद वाला निराला!

जो नेता थे वे भी तो भटके हुए थे
कुमारग में जाति यह अटकी हुई थी
किया आततायियों ने बरबाद भारत
यूंही जान भारत की लटकी हुई थी

वह सोतों को झकझोर जिस ने जगाया, था स्वामी दयानन्द साहस की ज्वाला

परतन्त्र अकिंचन थे भारत निवासी
मेरे देश का मान ही लुट रहा था
ऋषि देश की दुर्दशा सह सके न
अविद्या से दम देश का घुट रहा था

वह दी जिस ने आकर ठगों को चुनौती, वह था दिव्य योगी ऋषि वेद वाला

श्रुति के श्रवण पर प्रतिबंध टूटा
नया युग उमड़ कर उमंगों से आया
पिलाई सुधा देश जाति को जिसने
हलाहल का प्याला उसी को पिलाया

दुःखी दीन जन के हिये ने पुकारा हमें गर्त से उस ऋषि ने निकाला

वह निर्भीक साधु सुधारक निराला
हिय मातृभूमि का जिस ने टटोला
किया चूर राजों का अभिमान जिसने
कभी धमकियों से वह साधु न डोला

हुआ देश स्वाधीन जिसकी दया से—दयानन्द स्वामी तेरा बोल बाला

Regd No P. 121

डी० ए० वी० फार्मेसी

के

प्रबन्धक डी.ए.वी. फार्मेसी जी. टी. रोड जालंधर शहर

आर्यजगत् जालन्धर

D. A. V. Colleg

ttee Chitra Gup

LIST OF THE OFFICE BEA

MANAGING COMMITTEE NE

1. Dr. Mehr Chand Mahajan.
2. Justice J. L. Kapur.
3. R.B. Dr. Maharaj Krishan
4. R.B. Man Mohan.
5. R.B. Brij Mohan Lal.
6. Shri Suraj Bhan.
7. Shri C. L. Anand. Genera
8. R. B. Dr. G.D. Kapur.
9. Shri Lal Chand Khanna.
10. Shri S.L. Verma.
11. Shri Brij Lal Dhawan.
12. Dr. D. R. Mehta. ... NEW DELHI.
13. Shri R. N. Gupta. —do— 15, Ring Road, Lajpat Nagar, NEW DELHI.
14. Shri Amar Nath Puri. —do— D-408, Defence Colony, NEW DELHI.
15. Shri Panna Lal Sood. Accountant. A-20-21, Nizamudhin Extension, NEW DELHI.
16. Shri Jessa Ram —do— 132/48, Krishan Nagar, Chankaya Puri, NEW DELHI
17. Shri T. R. Tuli. —do— New Bank of India Ltd., Central Office, Connaught Place, NEW DELHI
18. Shri Sewa Ram Kapur. —do— 29, Rohtak Road, DELHI

पता .—महोपदेशक आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा जालन्धर नगर

६. पत्र के स्वामि व्यक्तियों के नाम अथवा पते जो इसके सम्मिलित हुए हैं तथा इसकी सम्पूर्ण पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक शेयरों के मालिक हैं।

आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा रजिस्टर्ड संस्था हो इस पत्र की स्वामिनी है।

मैं संतोषराज इस लेख द्वारा घोषित करता हूं कि ऊपर लिखे विषयों की सूचना मेरे ज्ञान व विश्वास के अनुसार सर्वथा सत्य पूर्ण है।

(हस्ताक्षर) संतोषराज प्रकाशक आर्यजगत, जालन्धर

आर्य समाज सैक्टर ८ चण्डीगढ़ में

ऋषिबोध उत्सव ६-२-६४ को सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर चौ० सूरजमल जी, प्रिन्सीपल श्री त्रिलोकीनाथ जी, पं० रामप्रताप जी, श्री शांति स्वरूप जी, पं० आशुराम जी आदि महानुभावों ने अपने ओजस्वी भाषणों द्वारा महर्षि स्वामी दयानन्द जी के चरणों में श्रद्धांजलियां समर्पित कीं।

—व्यवस्थापक

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टेलीफोन नं० ३०४७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd No. P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक ६) १९ फाल्गुण २०२० रविवार—दयानन्दाब्द १४०—१ मार्च १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

न त्वामिन्द्रातिरिच्यते

हे इन्द्र ! त्वाम्—आप से तुम से न अतिरिच्यते—संसार में कोई भी और बढ़ कर नहीं है। आप सब से महान हैं, आप से और कोई भी बढ़ कर महान तथा श्रेष्ठ नहीं है। आप सर्वश्रेष्ठ, सर्व ज्येष्ठ हैं। आप अविनाशी तथा अविकारी हैं।

इन्द्रं वाणीरनूषत

हमारी सारी वाणियां-स्तुतियां, भक्तिरस भरे गीत उसी इन्द्र की ही स्तुति प्रशंसा करती हैं। ये वेदवाणियां और सारे सुन्दर सूक्त सूक्तियां उसी महान् भगवान् की प्रशंसा करती हैं। उसी के मधुर गान से भरी हुई हैं। हमारी वाणी में यदि प्रभु का गान है तब तो यह सफल है।

वाजी ददातुवाजिनम्

वह वाजी—सब बल, ज्ञान आदि का दाता परमेश्वर मुझे और सब को बल प्रदान करे, ज्ञान का प्रसाद देवे, शक्ति पराक्रम का दान देता रहे। उसके सिवा इन सम्पदाओं को और देने वाला भी कौन है! वह प्रभु सर्व शक्तिमान है, हमें शक्तिवाला बनावे।

सा म वे द से

वे दा मृ त

मनसा परिक्रमा मन्त्रा:

ओम् दक्षिणादिगिन्द्रोऽधिपतिस्तिरश्चिराजी रक्षिता पितर इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्य नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥ अथर्व कां. ३ सू. २७ मन्त्र २

अर्थ—हे दयामय ! (दक्षिणा दिग्) हमारी इस दाहिनी ओर की दिशा में (इन्द्र) ऐश्वर्यशाली आप (अधिपति) सब के स्वामी बन कर विराजमान हो। उस दिशा में जो भी (तिरश्चि) टेढी चाल वाले (राजी) तिर्यक् योनी वाले बुरे स्वभाव के हैं, उन से सब की (रक्षिता) रक्षा करने वाले हो। उस दिशा में आप की कृपा से जो पितर) ज्ञानी हैं, आयु, ज्ञान तथा विद्या अनुभव आदि में जो बड़े हैं—ऐसे दिव्य लोग (इषव) बाणों के समान हैं। ये बाणवत हानि पहुंचाने वालों को हम से दूर भगाते तथा उन से हमारी सदा रक्षा करते हैं। तेभ्य नम) हम उन पितरों वृद्धों को सादर नमस्कार करते हैं। वे हमारे हितचिन्तक हैं, जीवन के ज्ञान की रक्षा करने वाले हैं। हमारे लिए बाण के समान हैं, उन को नमस्कार है। (योऽस्मान द्वेष्टि) जो भी हम से द्वेष करता या जिस में हम द्वेष करते हैं (त व जम्भे दध्म) हे प्रभो ! उसे हम आप के समर्पण करते हैं।

भाव —हे परमप्रीतम ! दक्षिण दिशा में भी हमारा चंचल मन भटक २ कर थक गया। फिर वहां भी देखा कि आप नाना प्रकार के महा ऐश्वर्य भण्डार के स्वामी बन कर व्यापक हो। उस दिशा में जो भी कुटिल गति वाले पतग हैं, कुटिल स्वभाव के लोग हैं, उन से हमारे जीवन की सदा रक्षा करते हो। उधर जो ज्ञानी वृद्ध जन पितर हैं, वे अपने ज्ञान प्रकाश के द्वारा हमारा रक्षण करते हैं। समय २ पर अपने दिव्य उपदेशों, प्रवचनों से सन्मार्ग पर चलाते रहते हैं, कुपथ से बचाते हैं। हम उन को, ज्ञान देने वालों, अपने अनुभवों से हमारा कल्याण करने वालों को सादर नमस्कार करते हैं। जो बुरा है, उसे आप के न्याय में भेंट करते हैं।—सं.

ऋषि दर्शन

चन्द्रलोक: पृथिवीमनु

यह चन्द्रलोक इस पृथिवी के चारों ओर भ्रमण करता है। पृथिवी तो सूर्य के गिर्द चक्कर लगाती है और यह हमारा चन्द्रमा इस हमारी धरती के चारों तरफ घूमता रहता है। इसकी गति का नियम नियत है।

द्यावा पृथिवी एजेते

यह द्युलोक का सूर्य तथा यह पृथिवीलोक दोनों लोक ही गति करते हैं। एक आकाश में अपनी धुरी पर घूमता है और यह हमारा भूमिलोक अपनी गति करता भी सूर्य के चारों ओर गति करता है।

सोमश्चन्द्रलोक:

सोम चन्द्रलोक को कहते हैं। शीतल शान्त किरणों से सब को शीतल करके ताप दूर कर देता है। वनस्पतियों, औषधियों में रस भरता है इसलिए चन्द्रमा को सोम नाम दिया जाता है।

भा ष्य भू मि का

अधिष्ठाता—संतोषराज सभा मंत्री सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

सैद्धान्तिक चर्चा—

प्राणापान की परिभाषा

(लेखक—श्री प सत्यप्रिय जी शास्त्री सिद्धान्त शिरोमणि)

(गतांक से आगे)

तब से वैसा ही छपता आ रहा होगा। इस विषयमे इतना विवेचन करना और आवश्यक है कि नासिका द्वारा ही केवल मात्र जो वायु छोड़ा जाय वह प्राण तथा ग्रहण किये जाने वाले वायु को ही अपान कहेंगे। क्योंकि योग दर्शन के श्वास प्रश्वास शब्दो के पर्याय वाचक हैं और श्वास नासिका का विषय है। यह प्राणापान की साधना पथ की किया सम्बन्धी परिभाषा का विषय है। परन्तु साधारण रूपेण मलद्वार से जो वायु बाहर निकलता है उसे भी अपान कहेंगे। परन्तु वहा अप शब्द अनेकार्थक न होकर कुत्सित शब्द वाचक होगा क्योंकि अप तथा अव दोनों शब्द हीनता के भी द्योतक है यथा-मान अवमान इत्यादि में परन्तु वह अवस्था एव प्रकरण भेद होगा। इस सारे प्रकरण के के उपरान्त इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि महर्षि दयानन्द जी महाराज ने जो प्राण का अर्थ शरीर से बाहर निकलने वाला वायु एवं अपान का अर्थ बाहर से भीतर आने वाला वायु किया है। यह सर्वथा उचित एवं शास्त्रानुकूल है। इस बात की पुष्टि की उनके वेद एवं भाष्य भूमिका के संस्कृत के वचनों से स्पष्ट रुपेण हो जाती है। महर्षि दयानन्द के साहित्य का संस्कृत भाषा का अंश उन्हीं के मुखारविन्द से लिखाया गया है, इसमें सन्देहको स्थान नहीं है हिन्दी भाषा की अपेक्षा संस्कृत का शब्द प्रमाण अधिक महत्वपूर्ण है। अतः निरुक्त रचियता महर्षि यास्क, योगदर्शन के विख्यातभाष्यकार यद्यपि वेदव्यास एव अन्त में स्वय महर्षि दयानन्द के संस्कृत भाषा के शब्द प्रमाण की उपस्थिति में प्राणापान के उपरोक्त अर्थ ही ठीक एव आर्ष पद्धति पोषक सिद्ध होते हैं। इसके विपरीत विद्वानों द्वारा नित्य-प्रति किये जाने वाले मनमाने आर्ष पद्धति से सर्वथा विरुद्ध एवं शास्त्रों के प्रतिकूल होने से सर्वथा हेय है।

आर्यसमाज यमुना नगर में

ऋषिबोधोत्सव ११-२-६४ को सब आर्यसमाजों का सम्मिलित रूप में बड़े समारोह से मनाया गया। विद्वान स्त्री पुरुषों के अतिरिक्त कुमार और कुमारियो के भी भजन तथा व्याख्यान हुए जनवरी मास में श्री प० विश्वनाथ जी ने अन्य प्रचार कार्य के अतिरिक्त श्री प्रधान रामसिंह जी वैद्य के भ्राता श्री रामगोपाल जी एम ए. की सुपुत्री का नाम करण सस्कार वैदिक रीति से सम्पन्न कराया कन्या को सवितादेवी नाम से सुभूषित किया।

कृष्णचन्द्र आर्य
मन्त्री समाज

बिना खिला फूल

(रचयिता—रामचन्द्र जी 'मधु' शक्ति नगर देहली)

फूल,
कोमल कोपलों को,
फाड़ कर,
कुछ बाहर आया था,
कि इक अनजान को,
सुन्दर लगा।
आव देखा न
ताव देखा
शीघ्र उसको,
तोड डाला।
बिनाखिला।
वह फूल,
कुछ ही रोज में,
मुर्झा गया!
देखकर,
अनजान ने,
ऐसा उसे फिर,
मसल डाला।
कुचल डाला।
मिट गई,
उसकी सुगन्धी,
पखड़िया सब,
सड़ के राख बन गईं।
फूल की यू जिन्दगी,
दो-रोज में ही मिट गई।
तोड़ कर यह फूल!
अनजाने,
तुझे क्या मिल गया!
दो-रोज रखा,
पास अपने,
फिर उसे,
कुचल दिया!
अरे!
रोएगी वह डाल
जिसका सुहाना,
फूल था वह।
चीखेंगे वह पात,
जिनका सुरीला,
मीत था वह!
या रोएगा,
बाग का माली,
कि जिस ने उम्र भर,
प्यार से सींचा था
अपने पौद को,
कि एक दिन
आएगा!
सुन्दर फूल होगा।
मेरे वीरान बाग का,
शाभा बनेगा।
मिट गए,
अरमान उसके,
तेरी हसरत मिट गई,
दो रोज में,
उस फूल की,
सुन्दर कहानी मिट गई।

दयानन्द-वचनामृत

"कोई गाय दो सेर दूध देती है और कोई बीस सेर। यदि औसत ग्यारह सेर दूध की रख ली जाये तो एक मास में एक गाय का दूध सवा आठ मन होता है। कोई गाय छ मास दूध देती है और कोई अठारह मास। दूध देने की औसत बारह मास नियत कर लीजिये। बारह मास का यह दूध निनावे मन होता है। एक मनुष्य की तृप्ति के लिए दो सेर दूध की खीर पर्याप्त हुआ करती है। इस प्रकार एक गाय के एक वर्ष भर के दूध से एक बार पच्चीस सहस्र सात सौ चालीस मनुष्य तृप्त होते हैं। यदि उसकी पीढ़ियों का विचार किया जाये तो एक गाय से अगणित जनों का पालन होता है।"

(स्वामी सत्यानन्द जी)

आर्यसमाज मोडलटौन गुडगावो

मे ऋषिबोध उत्सव स्थानीय पाचों समाजों ने सम्मिलित रूप से मनाया। इस सुअवसर पर श्री रामगोपाल जी शाल वाले, आचार्य सत्यपाल जी एम० ए० कुमारी विजय लता आदि अनेक महानुभावों ने ऋषि चरणों में श्रद्धाजलियां अर्पित कीं।

यशवत सिह वोहरा
मन्त्री समाज

बी ए वी H/S स्कूल वालाचौर

में ११-२-६४ को स्थानीय आर्य समाज और विद्यालय की आर्य कुमार सभा ने ऋषिबोध उत्सव समारोह के साथ सम्पन्न किया। हवन यज्ञ के पश्चात् छात्रों ने मनोरंजक कार्यक्रम उपस्थित किया। बाद मे सभाध्यक्ष महोदय ने महर्षि दयानन्द जी के जीवन की झांकियों पर प्रकाश डालते हुए उनके प्रदर्शित मार्ग पर चलने की छात्रों को प्रेरणा दी।

कंवल सूद
प्रिंसीपल स्कूल

सम्पादकीय–

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२०, १ मार्च १९६४ [अंक ९

सभा का समारोह

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का वार्षिक बजट और निर्वाचन अधिवेशन बड़े समारोह से आर्य समाज लोहगढ़ के भव्य मन्दिर में ता० २२ फर्वरी रविवार को सम्पन्न हो गया। इसका विस्तार से विवरण तो इसी अङ्क में अन्य स्थान पर आप पढ़ेंगे एक बात की बड़ी प्रसन्नता है कि सभा के इस महत्वपूर्ण अधिवेशन में सभा से सम्बन्धित पंजाब, देहली, हिमाचल तथा जम्मू काश्मीर सारे स्थानों से मान्य प्रतिनिधि सज्जन पधारे हुए थे। यह इस बात का परिचय है कि सभा के कार्यों एवं अपनी इस महती संस्था के साथ समाजों का पूरा-पूरा प्रेम और हित है। अपने केन्द्र के वार्षिक अधिवेशन की सफलता सारे समाजों की ही तो सफलता है। प्रतिनिधियों में ऊंचे ऊंचे हर क्षेत्र के गण्यमान्य सज्जन शामिल थे। इस बात की सब को हार्दिक बधाई हो।

सभा के अन्य कार्यों की विशेष प्रगति के साधनों पर जहां बड़ा सुन्दर विचार विनिमय होता रहा। अनेक योग्य सज्जनों ने अपने २ बड़े आवश्यक, ठोस उपयोगी सुझाव दिये। वहां सभा की वर्तमान आर्थिक अवस्था को समुन्नत करने के लिए भी विशेष साधनों पर विचार होता रहा। इस बात को देख सुन कर हमें गौरव है, कि सारे सज्जन दिल से इस बात का अनुभव करते थे कि हमारी सभा इस रूप में बहुत ऊंची बन जाये। सारी समाजों, संस्थाओं को इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिए भरसक प्रयत्न करके इस आवश्यक न्यूनता को पूर्ण करने में जुट जाना होगा। किसी सभा के लिए उस के सारे हितैषियों की ओर से इस प्रकार की भावना उसकी प्रगति की ही निशानी है। इस के साथ आने वाली सभा द्वारा अक्तूबर मास में मनाई जाने वाली महात्मा हंसराज जयन्ती की कार्य योजना पर भी पर्याप्त विचार होता रहा। यह बड़ा भारी उत्तरदायित्व है जो सभा ने लिया है। भारी स्तर पर मनाने का विचार हुआ। उपयोगी सुझाव सामने आये। युवक संगठन पर भी बड़े उत्तम विचार व्यक्त किये। मान्य प्रो० वेदीराम जी शर्मा एम० ए० जालन्धर अध्यक्ष आर्य युवक संगठन इस दिशा में जो प्रशंसनीय कार्य कर रहे हैं तथा प्रगतिपथ पर यह कार्य चल रहा है। सराहना हुई। सभा के प्रचार, साहित्य तथा आर्थिक विभाग को अधिक फूलता फलता करने पर अपना २ दृष्टिकोण रखा। आर्यसमाज लोहगढ़ के मान्य अधिकारियों श्री ज्ञानी पिंडीदास जी प्रधान, श्री प्रो० वेदव्रत जी एम० एस सी० मन्त्री श्री प० धर्मपाल जी म्यूनिसिपल कमिश्नर आदि का सारा प्रबन्ध भी स्तुत्य था। इस अधिवेशन की सफलता पर सारे समाजों के मान्य प्रतिनिधियों को बधाई हो तथा लोहगढ़ समाज के सज्जनों का धन्यवाद।

—त्रिलोक चन्द्र

कार्य में जुट जायें

सभा का अधिवेशन समारोह से समाप्त हो गया वार्षिक आय व्यय का बजट पारित हो चुका। सभा के पुराने वर्ष १९६३ के मान्य अधिकारियों माननीय प्रिंसिपल रलाराम जी एम. ए. एम. एल. ए. श्री ला सन्तोषराज जी तथा अन्य सभा के सहयोगियों ने जिस प्रेम, श्रद्धा, लगन के साथ सभा कार्य को उत्तमता से निभाया उसका विशेष धन्यवाद किया गया। इस अधिवेशन के सभापति माननीय प्रिंसिपल रलाराम जी एम. ए ने अपने सभापतित्व के ऊंचे आसन से स्वयं पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज का इस वर्ष १९६४ के लिए सभा का प्रधान बनाने के लिए शुभ नाम पेश किया उसे सारे सदन के सदस्यों ने सर्वसम्मति से प्रसन्नता से भरी करतल ध्वनि के साथ एकमत से अनुमोदित कर दिया। सभा के केन्द्र को सुदृढ़ बनाने पर भी सम्मतियां दी गई। वेदों के मन्त्रों को परिवर्तन कर देने के बारे में अपना रोष भी प्रकट कर दिया। सभा के प्रति अपना दिली स्नेह भी व्यक्त कर दिया। महात्मा हंसराज जयन्ती मनाने पर भी क्रियात्मक विवेचन हो गया। यह सब कुछ सभा के कार्य का एक आवश्यक अध्याय था, जो प्रतिवर्ष होता है और होते रहना चाहिए, ताकि सभा की वार्षिक स्थिति सामने आती रहे। उसकी प्रगति भी तथा न्यूनता भी दोनों का ध्यान रखा जा सके।

परन्तु इसका एक दूसरा भी अध्याय होता है जिसे इसके बाद क्रियात्मक रूप में पग उठाने के नाम से पुकारा जाता है। पहले को योजना या सूत्र अध्याय कहते हैं तथा दूसरे को आरम्भ करना कहा जाएगा। योजना न बने तब भी काम नहीं होता। इसी प्रकार उस योजना को संचालित न किया जाए तब भी काम नहीं होता। योजना और क्रिया ये दोनों हों तभी सफलता मिलती है। सभा का एक अध्याय तो हो चुका, अब इस योजना के अध्याय को क्रियान्वित करने की आवश्यकता है। सभा के इस वार्षिक अधिवेशन में सभा के सारे प्रेमियों ने जो उत्तरदायित्व का भार पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज के पवित्र कन्धों पर जिस प्रेम, श्रद्धा से एकमत होकर रखा है, उसे क्रियान्वित करने के लिए अपने तन, मन, धन से भी पूरा सहयोग देना है। महात्मा हंसराज जयन्ती आ रही है। उसके लिए अभी से तैयार हो जाए। इस अधिवेशन में सारे समाजों के मान्य प्रतिनिधियों ने मिलकर, सिर जोड़कर जो सभा की हर प्रकार की उन्नति के लिए योजनाएं पारित की हैं, अब उनको पूर्ण करने में जुट जाएं।

—त्रिलोकचन्द्र

आर्य हिंदू जनता होली न मनाये

हमारे पूर्वी बङ्गाल में रहने वाले भाइयों पर जो अत्याचार हुए हैं वे सर्वविदित हैं। वे भाई बड़े दुःखी हैं। इस कारण हम को भी उनके कष्टों में सहयोग देना है। और वह इस वर्ष होली न मनाकर सरकार पर प्रभाव डालना है। आशा है आप लोग होली न मना कर प्रस्ताव पास करके सरकार को भेजेंगे। अपने-अपने क्षेत्रों में सभाएं करके जनता से प्रार्थना करें कि वह होली न मनाएं।

रामनाथ—मन्त्री

आल इंडिया दयानन्द साल्वेशन मिशन हुशियारपुर

प. विश्वम्भर दत्त जी नैनीताल में और प. तोताराम जी को गढ़वाल में प्रचार कार्य पर नियुक्त किया है।

—शादीलाल मन्त्री मिशन

आर्य प्रादेशिक सभा का अमृतसर में वार्षिक अधिवेशन समारोह

पूज्य महात्मा आनन्दस्वामी जी सर्वसम्मति से प्रधान निर्वाचित

मंत्रिमंडल व अन्तरंग चुनने का भी सर्वाधिकार समर्पित

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का वार्षिक बजट-निर्वाचन अधिवेशन आर्यसमाज लोहगढ़ अमृतसर के मान्य अधिकारियों से सप्रेम निमन्त्रण पर ता० २३ फरवरी १९६४ रविवार को दोपहर बाद दो बजे आर्यसमाज लोहगढ़ के विशाल एवं भव्य मन्दिर में समारोह पूर्वक सम्माननीय प्रिंसिपल रलाराम जी एम० ए० एम० एल० ए० के सभापतित्व में वेद माता गायत्री मन्त्र के समवेत उच्चारण के साथ समारम्भ हुआ। बड़े हर्ष का विषय है कि अपनी सभा की इस नये वर्ष की विविध समस्याओं पर विचार करने महात्मा हंसराज जयन्ती समारोह को धूम-धाम से मनाने की सभा द्वारा योजना को पूर्ण सहयोग देने एवं बजट व नवीन अधिकारियों का सर्वसम्मति से निर्वाचन करने के लिए सभा से सम्बन्धित पंजाब, देहली, हिमाचल तथा जम्मू काश्मीर की समाजों के मान्य प्रतिनिधि इस अधिवेशन में पधारे हुए थे। समीप व दूर २ की समाजों शिमला, मंडी जोगेन्द्र नगर, देहली, अम्बाला, चण्डीगढ़, करनाल, हरियाणा प्रांत, धर्मशाला, फिरोजपुर, टोहाना हिसार, लुधियाना, होशियारपुर, गुरदासपुर, जलालाबाद, जालन्धर, अमृतसर, रोहतक, कांगड़ा अंबाला करनाल के ग्रामों ठाकुरपुरा, गोगला आदि जिलों, नगरों, कस्बों तथा देहातों के समाजों से सज्जन भाई बहिनें पधारे थे। यह उन का प्रेम सभा के लिए गौरव की बात है। यह देख कर मन बड़ा प्रसन्न था कि मान्य प्रतिनिधियों में कालेजों, स्कूलों के प्रिंसिपल, असम्बली के सदस्य, राष्ट्रिय क्षेत्र में कार्य करने वाले प्रतिष्ठित भाई, व्यापार में लब्धनाम सज्जन तथा समाजों, संस्थाओं के प्रबन्धक काम करने वाले शामिल थे। माननीय बाबा गुरुमुख सिंह जी के इस बार देर बाद सभा अधिवेशन में दर्शन कर चित्त बड़ा ही प्रसन्न हुआ। मान्य ला. देवी चन्द जी, ला शंकर दास जी डा. हुकम चन्द जी, ला कन्हैया लाल जी जेजों, दीवान जय कृष्णानन्दा जी ला परमेश्वरी दास जी, प्रिंसिपल ज्ञान चन्द भाटिया, कैप्टन शिवराम जी, प. दौलत राम जी शास्त्री, कैप्टन केशव चन्द जी, चौ बलबीर सिंह जी, ला इन्द्रसेन जी, ज्ञानी पिण्डी दास जी, प. पृथ्वी नाथ जी शिमला, ला हंसराज खन्ना, ला वृजलाल गुप्ता, म सन्तराम जी, ला मातूराम जी, पं वजीर चन्द जी, श्री बलदेव सिंह जी भण्डारी, बा दरबारी लाल जी देहली, प्रि जुगलकिशोर जी, प्रिं. प्यारा लाल जी, प्रि प ऋषि जी, श्री मुंशीराम जी, श्री बैजनाथ महेन्द्रो, प्रि विद्यावती जी आनन्द, प दुर्गादास आर्य गजट श्री. रघुनाथ जी, भ्राता केवल राम जी, श्री मुरारी लाल जी, प देसराज जी प्रो. वेदी राम जी, श्री. प. रुद्रदत्त जी शर्मा, बा. वृज लाल जी, पं. विद्यासागर जी, डा. देवव्रत महाजन जी, मा. राम रखा जी, श्री प. धर्म पाल जी, श्री प्रो. वेदव्रत जी, प्रि. भगतराम जी, प. आशुराम जी, बहिन अरुणा जी, आदि कितने ही सभा के स्तम्भ वयोवृद्ध नेता, सहयोगी प्रेमी उपस्थित थे। यह देखकर मन बलियों उछलता था कि सब को सभा का कितना हित है। किस २ का नाम लिया जाये। सभा का विशाल परिवार उपस्थित था।

सभापति के आसन पर माननीय प्रिंसीपल रलाराम जी एम ए. विराजमान थे तथा उनकी बाईं ओर श्री ला. सन्तोषराज जी महामन्त्री बैठे थे। वार्षिक विवरण पढ़े जाने से पूर्व चौ. बलबीरसिंह जी ने एक दो वैधानिक बातों का स्पष्टीकरण जानना चाहा कि अधिवेशन में समाजों के ही प्रतिनिधि आ सकते हैं।, अन्य संस्थाओं के नहीं। जिस सभा के विधान की किसी धारा में यदि परिवर्तन करना अभीष्ट हो तो अन्तरंग सभा जनरल सभा को सिफारिश ही कर सकती है, परिवर्तन नहीं कर सकती। सार्वदेशिक के सारे नियम भी हम पर लागू होते हैं क्योंकि सभा का सम्बन्ध सार्वदेशिक सभा से है। श्री ला. इन्द्रसेन जी ने कहा कि इस परिवर्तन करने का अधिकार साधारण सभा को भी नहीं होता वरन उसके लिए विशेष सभा का दो तिहाई कोरम होना चाहिए। ये सारे सुझाव आपस के विचार विनिमय के बाद स्वीकार कर लिए गये। माननीय प्रधान जी ने वार्षिक विवरण की भूमिका पढ़कर सुनाई व स्वीकृत हुई। इसमें ला. इन्द्रसेन जी ने एक सुझाव दिया कि भूमिका में आर्य अनाथालय फिरोजपुर में बैठकर अपना सारा समय देने वाले दीवान जयकृष्ण जी नन्दा का भी धन्यवाद होना चाहिए। यह भी स्वीकार किया गया। इस वर्ष आर्य समाज के जो २ महान व्यक्ति दिवंगत हो गये हैं उन पर मौन हो कर शोक प्रस्ताव पारित किया गया प्रो. वेदीराम जी एम.ए की अध्यक्षता में चल रहे पंजाब में आर्य युवक संगठन का भाग भी भूमिका में सम्बद्ध कर के सुनाया गया।

इस के बाद सभा के बजट पर आर्थिक अवस्था पर विचार आरम्भ किया गया। इस पर ज्ञानी पिण्डी दास जी प. रुद्रदत्त जी, प धर्मपाल जी श्री. मोहनलाल अम्मू, ला. इन्द्रसेन जी, चौ. बलबीर सिंह जी, डा. हुकम चन्द जी, भल्ला श्री ओं प्रकाश जी, श्री वृजलाल गुप्ता, प्रो. वेदीराम जी, ला मातू राम जी, श्री बलदेव सिंह जी भण्डारी, श्री दरबारीलाल जी देहली, पं. लभूराम जी, प. वजीरचन्द जी, पं. दुर्गादास जी, प. त्रिलोक चन्द्र शास्त्री, श्री मुंशीराम जी आदि कई सज्जनों ने बड़े सुन्दर ठोस सुझाव रखे कि सभा की अर्थ व्यवस्था कैसे सुधर सकती है सब के सुझाव अंकित कर लिये गये। महात्मा हंसराज शताब्दी धूमधाम से मनाने के लिए विविध समितियों का भिन्न २ कार्यों को करने के लिए आयोजन किया जाना मंजूर हुआ। भारत सरकार से डाक टिकट जारी कराने के लिए विशेष प्रबन्ध किये जाने पर जोर दिया गया इस के बाद चंडीगढ़ के प. राम प्रताप जी ने आचार्य विश्वबन्धु जी द्वारा लिखित पुस्तक वेदसार में मन्त्रों के परिवर्तन व परिवर्धन के विषय को लेकर उस के विरुद्ध प्रस्ताव पारित करने का बल देने पर श्री ज्ञानी पिण्डीदास जी प्रधान आर्यसमाज लोहगढ़ अमृतसर ने सारा विस्तार से

(शेष पृष्ठ ५ पर)

आर्य प्रादेशिक सभा का अमृतसर में वार्षिक अधिवेशन समारोह

(पृष्ठ ४ का शेष)

इस के बारे में विवरण सुनाया तथा प्रस्ताव रखा जो पारित हो गया। और भी कई सज्जनों ने इस पर विचार प्रकट किये। पं० त्रिलोकचन्द्र शास्त्री ने कहा कि वेद सार के बारे में तो आप विचार प्रस्तुत कर रहे हैं पर मैकनाल्ड विन्टर नित्ज, उत्तर राम चरित्र आदि में क्या लिखा व पढ़ाया जाता है—

इस के बाद सभा के कर्मचारियों के सेवाकाल को ५५ वर्ष से ५८ वर्ष कर देने का प्रस्ताव आया। इस पर श्री ला० इन्द्रसेन जी, चौ० बलवीर सिंह जी, श्री बलदेव सिंह जी भण्डारी, पं० दुर्गादास जी, ज्ञानी पिण्डीदास जी, वैद्य विद्यासागर जी, डा० देवव्रत जी महाजन आदि कई सज्जनों ने ५८ के स्थान ६० वर्ष तक अवधि कर देने का विचार पेश किया, जो सवसम्मति से स्वीकार कर दिया।

अन्त में माननीय प्रिंसिपल रलाराम जी ने सभापतित्व के आसन से यह आन्तरिक निर्वाचन के सम्बन्ध में विचार प्रस्तुत किया कि सभा के प्रधान पद के लिए पूज्य महात्मा आनन्द स्वामीजी महाराज को निर्वाचित किया जाये। हमें सभा की प्रगति तथा जयन्ती के विशेष कार्य के लिए उनके नेतृत्व की बड़ी आवश्यकता है उनका अनुभव, प्रभाव बड़ा है। अत: मैं महात्मा जी का शुभनाम सभा के प्रधान पद के लिए पेश करता हूं तथा सारे मन्त्रिमंडल, अन्तर ग एवं सार्वदेशिक सभा के लिए भेजे जाने वाले सभा द्वारा सदस्यों के निर्वाचन का सर्वाधिकार भी उन को ही सौंप दिया जाये। माननीय सभापति जी के प्रस्ताव पर सारे सदन ने एकमत सर्वसम्मत हो कर अपार करतल ध्वनि के हर्ष के साथ अनुमोदित कर दिया।

अन्त मे सभा के पुराने सारे अधिकारियों के धन्यवाद तथा शान्तिपाठ के साथ अधिवेशन समाप्त हुआ। समाज की ओर से जल पान का प्रबंध था सबने मिल कर जलपान किया। आर्यसमाज लोहगढ़ अमृतसर के अधिकारियों ज्ञानी पिण्डी दास जी, मन्त्री वेदव्रत जी, पं. धर्मपाल जी आदि ने प्रतिनिधियों के निवास, खानपान अधिवेशन तथा सारी सुविधाओं का स्वय खड़े रह कर बड़ा ही सुन्दर प्रबन्ध किया। सभापति जी ने सभा की ओर से उनका भी धन्यवाद किया —सब को बधाई।

आर्य सामज की शिक्षण संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा की व्यवस्था

सार्वभौम आर्य समाज शिक्षण संस्था परिषद ने अपने अधिवेशन मे आर्य समाज की संस्थाओं मे धार्मिक शिक्षा की समुचित व्यवस्था के सम्बन्ध मे विचार कर सुझाव देने के लिए समिति नियुक्त की है। इस सूचना के द्वारा मैं संस्थाओं के प्रमुखों, प्रबन्धकों, संचालकों तथा इस विषय में दिलचस्पी रखने वाले दूसरे सज्जनो से प्रार्थना करता हूं कि इस विषय मे अपने सुझाव मेरे पास जल्दी से जल्दी भेजने की कृपा करें। सुझाव व्यावहारिक होने चाहिये। विशेषत निम्न बातों पर प्रकाश डालते हुए अपने विचार लिखें।

१. आज कल आप के यहां क्या क्या व्यवस्था है।

२. शिक्षा का आधार कौन सी पुस्तकें है।

३ पढ़ाने वाले कौन हैं और उन की पतद्विषयक क्या योग्यता है।

४. स्थिति को बेहतर बनाने के लिए प्रत्येक विषय मे आप के क्या क्या सुझाव है।

(लक्ष्मी दत्त दीक्षित)
प्रिंसिपल, आर्य कालेज पानीपत।
संयोजक।

आर्य शिरोमणि सभा फिरोजपुर में

९, १०, ११ फरवरी को आर्य अनाथालय के विशाल मैदान में आर्य शिरोमणि सभा के तत्वावधान मे स्थानीय समाजों ने सम्मिलित रूप में ऋषिबोध उत्सव मनाया। उपस्थिति २००० से ऊपर थी। ऋषि लंगर का भी आयोजन किया गया। कार्यक्रम अतीव मनोरंजक था।

३-४-५ अप्रैल को आर्य अनाथालय का उत्सव होगा इस अवसर पर आचार्य कृष्णा जी यज्ञ और कथा करेंगे।

मदनजित आर्य
प्रधान शिरोमणि सभा

आर्य समामज योगेन्द्रनगर

की प्रचार समिति ने दिनाक ६अप्रैलसे १३ अप्रैल तक महात्मा हंसराज जयन्ती एवं आर्य समाज स्थापना दिवस मनाने का निश्चय किया है।

दिनाक६-४-६४ से प्रात. गायत्री यज्ञ रात्री को सत्यार्थ प्रकाश की कथा प. त्रिलोकचन्द जी शास्त्री बी० ए० महोपदेशक करेंगे और प्रतिदिन मास्टर ताराचन्द जी के मनोहर भजन हुआ करेंगे।

और उत्सव में महिला सम्मेलन होगा, आसपास की आर्य समाजों से प्रार्थना की जाती है इस जयन्ती को सफल मनाने मे सक्रिय सहयोग देने का कष्ट करें।

—मुरारी लाल
मन्त्री समाज

पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी सर्वसम्मत प्रधान निर्वाचित

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पजाब जालन्धर के ता० २३-२-६४ रविवार के आर्यसमाज लोहगढ़ अमृतसर मे सारे सदन ने सभापति के आसन से प्रिंसिपल रलाराम जी एम ए. एम. एल. ए. के इस प्रस्ताव को सर्वसम्मति से पारित करते हुए आर्य जगत् के तपस्वी, त्यागी सन्यासी पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती को सभा का प्रधान निर्वाचित करके मंत्रिमंडल, अन्तरङ्ग तथा आर्य सार्वदेशिक सभा देहली के लिए सभा द्वारा भेजे जाने वाले सदस्यों के निर्वाचन का भी सर्वाधिकार आप को ही सौंप दिया। सभा की सर्वसम्मत निर्वाचन परम्परा के लिए बधाई हो।

सिविल हस्पताल में

आर्यजगत के मैनेजर श्री चौ० हरिदत्त जी के सुपुत्र सुरेन्द्र वर्मा गत दस दिनों से सिविल हस्पताल जालन्धर में सूत की उलटियों के कारण रोग शय्या पर पड़े हैं। डाक्टरों का इलाज हो रहा है धीरे धीरे स्वास्थ्य लाभ कर रहा हैं। हमारी प्रभु से प्रार्थना है कि वे शीघ्र ही स्वस्थ होकर अपने निर्धन परिवार के सहायक बने।

श्री चन्द्रसैन जी आर्य हितैषी उपदेशक आर्य प्रादेशिक सभा विगत कई दिनों से सिविल हस्पताल सोनीपत (रोहतक) मे बवासीर के कष्ट से रोग शय्या पर पड़े हैं। उनका अपरेशन होने वाला है। कष्ट निवारक प्रभु से उनके स्वास्थ्य की कामना करते हैं ताकि वे अपने परिवार का सहारा बने।

—त्रिलोक चन्द्र
सम्पादक

ऋषि दयानन्द और स्त्री जाति

(लेखिका—ब० करुणा जी आर्या जनसेविका सलीमपुर पटना)

★★★★★★★★★★★★★★★

ऋषि दयानन्द सरस्वती के कार्य क्षेत्र मे आने के पूर्व हम नारियों की अति शोचनीय अवस्था थी बहुत बुरी हालत हो रही थी। क्या अवस्था हो रही थी आचार्य मेधाव्रत जी ने इसका वर्णन एक श्लोक के द्वारा कराया है—

श्रद्धालुभिर्मूढजनै स्वकन्या,
देवालये देवदराय दत्ता।
श्रीदेवदासय क्रतगीतलास्या,
बलादभुज्यत विटैरजस्रम ॥

ऋषि के आने के पूर्व नारी जाति अविद्या के अन्धकार मे पड़ी हुई थी, मठों के मठाधीश मन्दिरों में देवदासी के रूप में रख कर उनकी बली देते थे पुजारी गण उनसे व्यभिचार करते थे स्त्रियां खेती समझी जाती थी। मातृशक्ति का अपमान समझा जाता था विधवा नारी को नियोग और पुनर्विवाह की आज्ञा नहीं थी उन्हें चिता बना कर सती प्रथा के अनुसार चिता मे पति के साथ भस्म कर दिया जाता था। मुसलमान ईसाई अत्याचार करते थे। आम जनता में यह प्रचार किया जाता था कि "स्त्रिया नैव विश्वासं दुष्टाना कारयेद् बुधा।" स्त्रियों का कभी विश्वास नहीं करना चाहिये। भागवत १४-२३ के अनुसार 'स्त्रीशूद्र द्विजबन्धूना त्रयो न श्रुतिगोचर.' स्त्रियों को वेद पढने सुनने का अधिकार नहीं है हमारे कान बन्द कर दिए जाते थे।

शंकर स्वामी के समय तक 'विश्वासपात्र किमत्र नारी द्वार किमेक नरकस्य नारी' नारी जाति को विश्वास का पात्र नहीं समझा जाता था उसे नरक का द्वार समझा जाता था। तुलसीदास भी यही प्रचार कर रहे थे कि—

'ढोल गंवार शूद्र पशु नारी ये सब ताडन के अधिकारी' इस प्रकार हमारी दुर्गति हो रही थी। धन्य हैं महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती का आना जिसने स्त्री जाति के ऊपर दृष्टि दौड़ाई और इस जाति के उद्धार का व्रत लेकर नारी जाति को गढ़े मे गिरने से बचाया। स्वामी जी ने मनु का श्लोक देते हुए कहा—'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।

यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्र क्रियाफला॥ यहा पर नारी की पूजा सम्मान आदर सत्कार किया जाता है वहा पर देवता निवास करते हैं। जहा स्त्री जाति की पूजा सत्कार नहीं होता वहा सभी क्रियाए विफल हो जाती हैं। ऋषि ने यह घोषणा की कि हे ऋषि जाति का अपमान करने वाले लोगो? 'भार्या श्रेष्ठतम सखा' पत्नी पुरुष की सर्वश्रेष्ठतम मित्र होती हैं जिस प्रकार एक पहिए से गाडी नहीं चलती उसी प्रकार बिना स्त्री के गृहस्थ धर्म रूपी गाड़ी नहीं चल सकती इसलिए इन का सम्मान करो। उन पौराणिक पुजारियों और मठाधीशों को पुराण में से ही प्रमाण निकाल कर बतलाया कि देखो लक्कड पूजको? एक सौ ग्यारह नम्बर का चिन्ह लगाने वाले लोगो! निर्णयसिन्धु मे यही लिखा है कि—

पुराकल्पेषु नारीणा
मौञ्जी बन्धन मिष्यते।
अध्यापन च वेदाना
सावित्री वाचन तथा॥

वैदिक युग में स्त्रियों को यज्ञोपवीत पहनने का विधान, वेद के पढ़ने पढ़ाने का विधान है। सीता सावित्री जैसी स्त्रिया वेदों को पढ़ती थीं और तुम इस समय इन्हें वेद सुनने से निषेध करते हो। इतना ही नहीं नारी जाति के लिए कूर्म पुराण ४२।१७१ का प्रमाण देते हुए उन धूर्तों को बताया—

पुराकल्पेषु कुमारिणा
मौञ्जी बन्धन मिष्यते।
सुभद्रा देवकी सीता
वेद वेदाङ्ग पारगा॥

कुमारियों का यज्ञोपवीत होता था सुभद्रा, देवकी, सीता वेदवेदाङ्ग को जानने वाली थीं। सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास में 'इमं मन्त्र पत्नी पठेत' इस श्रौत सूत्र के द्वारा वेदों को पढने पढाने का अधिकार दिया। वेद सब को पढने पढ़ाने का विधान बताया। आपोहिष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जेदधातन महे रणायचक्षसे" इस यजुर्वेद ८-४० के मन्त्रों से वेद मे स्त्री की महत्ता का बतला कर स्त्री जाति का उद्धार किया। विधवा को पति के साथ सती प्रथा के अनुसार चिता मे झोंक दिया जाता था। ऋषि ने उदीर्ष्व नारी पतिलोक वृथाना निषद्यत उपस्थायमे प्रेतम। धर्म पुराण मनु पालयन्ती तस्यै प्रजाद्रविण चेहधेहि' इस अथर्ववेद का० १८-३-१-१ का प्रमाण देकर विधवा नारी को चिता में जलनेसे बचाया, नियोगका नियम बतलाया और इसकी आज्ञा दी ऋषि दयानन्द ने नारि जाति के लिए, शिक्षा, पठन-पाठन, बच्चे का पालन पोषण, भक्ष्य-अभक्ष्य, सोलह संस्कार गर्भाधान से अन्त्येष्टि पर्यन्त बहुत सी शिक्षाऐं देकर ईसाई मुसलमान अंग्रेजों से लोहा ले कर कई एक बार विष पान कर स्त्री जाति पर इतना उपकार किया जिसे स्त्री जाति कभी भूल नहीं सकती इस लिए ऋषि के ऋण से उऋण होने के लिए हम भी बोधित होवें ऋषि के विचारों को घर-घर में फैलावें तभी ऋषि के ऋण से उऋण हो सकते हैं।

——

प्रादेशिक सभा की वार्षिक रिपोर्ट का विस्तृत वर्णन ८-३-६४ के अंक में पढ़ें।

—व्यवस्थापक

बोधरात्रि (१९६४) उत्सव पर म. द. स्मारक के शुभ चिंतकों की ३ मांगे

हम सब आर्यबन्धु हृदय से टकारा को महर्षि दयानन्द का सच्चा स्मारक बना हुआ शीघ्र देखना चाहते हैं। पाच वर्ष से टंकारा की दशा को हम सब लोग देख सुन रहे हैं। हम बहुत गहराई में नहीं जाना चाहते हैं। अब शिवरात्रि पर्व पर हमारी केवल ३ मांगे हैं। जिन की पूर्ति यदि होली तक नहीं हुई तो हम लोग सोधी कार्यवाही करने के लिये विवश होंगे।

(१) टकारा पूर्व व्यवस्थापक श्री अम्बालाल जी या उन जैसा कोई बुलाया जाय और श्री भगवान देव को तुरन्त हटाया जाय। श्री अम्बालाल जी पहिले अवैतनिक व्यवस्थापक थे।उसी प्रकार अवैतनिक व्यवस्थापक सफल हो सकता है। वैतनिक व्यवस्थापक बेकार है।

(२) 'दयानन्द संस्कृत विश्व विद्यालय' में महर्षि दयानन्द की आज्ञा के विरुद्ध अनार्ष ग्रन्थ न पढ़ाये जायें।

(३) टंकारा के दयानन्द हाई स्कूल में सहशिक्षा होती है। इस लिये 'टकारा ट्रस्ट' को बन्द कर दें तथा कोई सहायता न दें।

निवेदक—
मगनलाल जोशी,
भू पू. स्पीकर, सौराष्ट्र विधान सभा,

"एक टीस जिगर में उठती है,
एक दर्द सा दिल में होता है।
हम रात को उठ कर रोते हैं,
जब सारा आलम सोता है॥"

यह उक्ति महर्षि स्वामी दयानन्द जी के जीवन पर पूर्णरूपेण चरितार्थ होती है। घटना उस समय की है जब स्वामी जी दानापुर में वैदिक धर्म का प्रचार तथा प्रसार कर रहे थे। एक दिन आधी रात के समय वह जाग पड़े तथा उठ कर इधर-उधर घूमने लगे। पदचाप को सुनकर एक कर्मचारी भी जाग पड़ा और देखता क्या है कि स्वामी जी बड़ी व्याकुलता तथा बेचैनी से घूम रहे हैं। उससे न रहा गया तथा उसने नम्रता पूर्वक निवेदन किया, "भगवन्, यदि कोई वेदना है तो आज्ञा दीजिये, सेवक औषधोपचार करने के लिये उपस्थित है। यदि आदेश हो तो वैद्य को भी बुला लाऊं।"

उस समय स्वामी जी ने दीर्घ श्वास छोड़ते हुए कहा, "भाई, यह बड़े वेग से बढ़ती हुई वेदना, आप के औषधोपचार से शमन होने वाली नहीं है। यह वेदना भारत के परिश्रमी लोगों की दुर्दशा के चिन्तन से चित्त में अभी उत्पन्न हुई है। ईसाई लोग कोल-भील आदि भारतवासियों को ईसाई बनाने के लिये अपनी कल्पनाओं के ताने-बाने बुन रहे हैं। रुपया भी पानी की भांति बहाने को तत्पर हैं। परन्तु इधर आर्य जाति के भी पुरोहित हैं जो कुम्भकर्ण की नींद पड़े सोते हैं। उनके कानों पर जूं तक नहीं रेंगती। यही पीड़ा है जो मुझे सता रही है।" कैसी विमल देश-भक्ति है!

इसी भारत निर्माता महान् पुरुष का बोधोत्सव ग्यारह फरवरी को मनाया गया। स्वामी जी का जन्म १८२४ ई० में टंकारा नामक ग्राम में हुआ था।

जब ऋषिराज पधारे

लेखिका—बहिन शारदा रानी बी० ए० फाईनल सुपुत्री श्री० भगवान् दास जी M.A. शोलापुर

★★★★★★★★★★

जब इन्होंने होश सम्भाला तो देश को शारीरिक तथा मानसिक दासता में जकड़ा हुआ पाया। २२ वर्ष की अवस्था में ही जब स्वामी जी ने देशहित के लिए घर-बार छोड़ा, उस समय पंजाब भी ब्रिटिश सरकार के हाथों में आ चुका था। 'देशी रियासतों' के राजाओं ने भी अपनी आधीनता स्वीकार कर ली थी। इन 'देशी रियासतों' को उतनी भी स्वतन्त्रता प्राप्त न थी जितनी कि उन रियासतों को जिन पर अंग्रेज सरकार का सीधा शासन था। क्योंकि ब्रिटिश सरकार को अपने अफसरों पर तो विश्वास था, परन्तु भारतीय शासकों पर नहीं। इसीलिये 'देशी रियासतों' के राजाओं को कम अधिकार प्राप्त थे तथा उन्हें हर समय अंग्रेज सरकार का मुंह ताकना पड़ता था।

केवल राजनैतिक क्षेत्र में ही नहीं, अपितु धार्मिक तथा सामाजिक क्षेत्रों में भी हिन्दू जाति दासता की जंजीरों से मुक्त न थी। हिन्दू धर्म पाखण्ड तथा अन्धविश्वासों में जकड़ा जा चुका था। उनके मन देवताओं के गुलाम थे। धर्म के नाम पर लूट मार करने वाले पुजारियों का बोलबाला था। यहां तक कि साधारण मनुष्यों का मस्तिष्क भी इन्हीं लुटेरों के हाथ में था। इस तरह हिन्दू धर्म एक खिलौना मात्र रह गया था।

मनुष्य अपने भाग्य का विधाता स्वयं होता है। इस उक्ति पर से हिन्दू जाति का विश्वास उठ चुका था। भगवान पर भरोसा रख कर वह अपने आपको भाग्य के सहारे छोड़ देते थे। अपने कर्मों का परिणाम नक्षत्रों की गति पर छोड़ हाथ पर हाथ धरे बैठे रहते थे। इस का परिणाम यह हुआ कि विदेशियों ने हिन्दुओं की इस मानसिक दासता के कारण उन्हें अपने धर्म में मिलाना शुरू कर दिया। कोई भी हिन्दू अपने सुधार की बात न सोचता था, उसके विपरीत स्वयं ईसाई या मुसलमान होने पर अन्य हिन्दुओं को घृणा तथा व्यंग्यात्मक दृष्टि से देखता था।

इसी प्रकार सामाजिक क्षेत्र में भी दुराचार फैला हुआ था। अज्ञानता तथा अविद्या ने चारों तरफ अपना आधिपत्य जमा रखा था। छोटी आयु में ही विवाह कर दिए जाते थे तथा जब लड़कियां विधवा हो जातीं तो यह कहकर संतोष कर लेते कि कलियुग में लड़कियां विधवा हुआ ही करती हैं। इसी प्रकार अपने दोष समय पर थोप दिया करते थे। कलियुग एक असाध्य रोग बन चुका था। हिन्दू धर्म छोड़कर मुसलमान तथा ईसाई होने में भी कलियुग का ही हाथ माना जाता था।

इन्हीं व्यर्थ विचारों वा अंधविश्वासों ने हिन्दू जाति को इस बुरी तरह से अपने शिकंजे में जकड़ रखा था कि राष्ट्र निर्माण का विचार भी उसके मन में आना असम्भव था। इसके विपरीत यदि कोई भी महापुरुष उन्हें सुप्तावस्था से जागृत करना चाहता, उनकी वर्तमान स्थिति का भान दिलाना चाहता, उन्हें सुमार्ग पर ले जाना चाहता तो वह उसे द्रोही समझकर उसका विरोध ही करते। यही तो हुआ स्वामी दयानन्द जी के साथ भी। जब वह पाखण्ड-खण्डनी पताका लेकर क्षेत्र में उतरे तो उन्हें भी ऐसे ही विरोधों का सामना करना पड़ा। परन्तु यह स्वामी जी के दृढ़ निश्चय, गम्भीरता तथा निर्भयता का परिणाम था कि वह भटकी हुई जनता का पथ प्रदर्शन कर सके तथा उनके हृदयों को जीत सके। सच ही तो है —'गिरे सौ बार भी बिजली अगर किश्ते तमन्ना पर तो हिम्मतदार हैं मायूस कब होते हैं हासिल से।'

एक बार की बात है, कि स्वामी जी सोरों में उपदेश दे रहे थे। बीसियों व्यक्ति ध्यानपूर्वक सुन रहे थे। इतने में ही कंधे पर मोटा सा डंडा रखे हुये एक हट्टा कट्टा पहलवान वहां आया और सीधा स्वामी जी के पास जाकर दांत पीसता हुआ कहने लगा, "अरे साधु! तू ठाकुर पूजा का खण्डन करता है और श्री गंगा मैया की निंदा करता है, देवताओं के विरुद्ध बोलता है? झटपट बता यह सोटा तेरे कहां मारूं?" यह सुनते ही पूरी सभा में तो खलबलीमच गई, परन्तु स्वामी जी तनिक भी विचलित न हुये। उन्होंने मुस्कराते हुये कहा, "भद्र! यदि तेरे विचार में मेरा धर्म प्रचार करना अपराध है तो इस अपराध का प्रेरक मेरा मस्तिष्क ही है, इसलिए यह डंडा मेरे सिर पर ही मार दे।" इन वाक्यों के साथ ही स्वामी जी की नेत्र-ज्योति उसकी आंखों में पड़ी तो वह श्री चरणों पर गिर कर तथा क्षमा याचना करने लगा।

स्वामी दयानन्द जी शारीरिक दासता के आरम्भ होने के पूर्व मानसिक दासता का आरम्भ होना मानते थे तथा मानसिक दासता के दूर होते ही शारीरिक दासता का समाप्त होना। अतएव मानसिक दासता को वे शारीरिक अवस्था से अधिक भयंकर मानते थे। इस मानसिक दासता को दूर करने के लिए ही स्वामी जी ने अपना तन-मन-धन न्यौछावर कर दिया।

आर्य समाज प्रधाना मोहल्ला के समाचार

लोहड़ी का पर्व —१३ जनवरी को आर्य समाज के प्रांगण में गत वर्षों के समान नियम अनुसार मनाया गया।

महर्षि बोध रात्रि —२९ माघ सं० २०२० मंगल वार को प्रात. प्रभात फेरी की गई। पश्चात ७½ से १० बजे तक हवन, भजन तथा महर्षि जी को श्रद्धांजलि अर्पित की गई। कुमारी सच्चिदानन्द आर्या जो कि ६ वीं श्रेणी की दस वर्षीया है ने एक मौलिक लेख महर्षि के सम्बंध में सुनाया। वैसे भी हर सप्ताह किसी विषय पर मौलिक लेख सुना रही है। रात्रि को दीप माला की गई।

वेद प्रचार .—पहली फागण सं० २०२० बुधवार से सांय ८½ बजे तक व्याख्यान माला प्रारम्भ हो गई है।

ऋषि अंक.—पिछले १६ वर्षों के समान इस वर्ष भी आर्य गजट तथा जगत के ऋषि अंक मंगवा कर बेचे गये।

परमानन्द विद्यार्थी

आर्य केन्द्रीय सभा अमृतसर

की ओर से शिवरात्री का महान् पर्व बड़ी धूमधाम से मनाया गया। सोमवार को इसी उपलक्ष में आर्यसमाज लोहगढ़ से शानदार जलूस निकला जिस में स्कूलों के लड़के लड़कियां, समाजों के गण्य मान्य सज्जन शामिल थे। मंगलवार लोहगढ़ समाज में रात को विशाल जल्सा हुआ। इसमें प्रसिद्ध वक्ता श्री सत्य स्वरूप जी पराशर एम. ए. तथा प्रसिद्ध नेता वीर यज्ञदत्त जी का बड़ा ही प्रभाव पूर्ण ओजस्वी भाषण हुआ। भाषण बड़े ही प्रभावशाली थे। इस अवसर पर नगर के गण्य मान्य महानुभाव उपस्थित थे। इसका नगर की जनता पर बड़ा प्रभाव पड़ा। समारोह बड़ी धूमधाम तथा सफलता से समाप्त हुआ।

आर्यसमाज लारेंस रोड अमृतसर

में शिवरात्री का महापर्व बड़ी धूमधाम से मनाया गया। प्रातःकाल बड़ा यज्ञ किया गया। तत्पश्चात् पर्व मनाते हुए समाज की ओर से चलाये हुए आर्य कन्या हाई स्कूल की लड़कियों ने शिवरात्रि के उपलक्ष्य में अपने संगीत कविता, प्रस्ताव, वार्तालाप तथा अन्य सुन्दर कार्यक्रम से बहुत प्रभाव डाला। यह स्कूल का कार्यक्रम बड़ा ही अच्छा, प्रभावशाली था समयोचित था। जनता ने इसे बड़ा सराहा। श्री वेदी जी प्रिंसिपल तथा बहिन [illegible] जी को इस कार्य क्रम पर बधाई दी गई। बाद में पण्डित त्रिलोक चन्द्र जी शास्त्री आर्य प्रादेशिक सभा का भाषण हुआ। बाद में प्रसाद बांटा गया।

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्य जगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टेलीफोन न० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No P. 12

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक १०) २६ फाल्गुण २०२० रविवार—दयानन्दाब्द १४०–८ मार्च १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

तस्मै यमाय नमः

उस यम रूप भगवान को नमस्कार हो। यम और काल रूपी प्रभु की शक्ति है जो समय समय पर संसार को अपना ग्रास बनाती रहती है। प्रभु की इस शक्ति से कोई बच नहीं सकता। उसे नमस्कार है।

गिर्वणः पाहि नः

हे स्तुति के योग्य परमात्मन्! हम सारे आप के ही हैं हमारी आप ही रक्षा करो। नाना प्रकार के संकटों से आप की कृपा से ही हम सदा सुरक्षित रहें। आप ही हमारे रक्षक, पाता, परित्राता हैं। इसी लिए तो आप पिता हैं, सच्चे रक्षक हैं।

स हि स्थिरो विचर्षणिः

वह प्रभु स्थिर है सदा एक रस है, अटल है। यह जगत परिवर्तनशील है, पर परमेश्वर सदा एक रस है, उस में कभी परिवर्तन नहीं होता। वही सबका निरीक्षक है। सब के बाहर अन्दर के कार्यों भावों को देखता, जानता है। उससे कोई भी बात गुप्त नहीं है।

साम वेद से

आदर्श तपस्वी

आर्य प्रादेशिक सभा के

आगामी वर्ष १९६४ के लिए

२३-२-६४ के साधारण अधिवेशन में

जो लोहगढ़ अमृतसर में

सम्पन्न हुआ

श्री पूज्य महात्मा

आनन्द स्वामी जी सरस्वती

सर्वसम्मति से प्रधान निर्वाचित हुए

हमें दृढ़ विश्वास है कि आपके नेतृत्व में

सभा दिन दुगुनी रात चौगुनी

उन्नति करेगी

ऋषि दर्शन

ईश्वरसत्तया च धारितः

ये सारे लोक-लोकान्तर भूमि सूर्य आदि आपस में घूमते हुए भी उस परमेश्वर के सत्ता नियम से धारण किए हुए हैं। इनको सचालन तथा नियम में रखने वाली वही चेतन शक्ति ही है।

सर्वाणि सुखानि दाशत्

यह भूमि अपने नियम में बन्धी हुई सबको अनेक प्रकार के सुखों को देती है। यह माता के समान सबको पालती, खिलाती पिलाती है। जीवन के लिए यह गोदी है। इसी से सब कुछ मिलता रहता है।

प्राणिनः प्रपूरयति

यह भूमिमाता अपने उत्तम उत्तम भण्डारों से, अनेक विध पदार्थों से तथा उत्तम २ प्रसादों से अपने सारे पुत्र-पुत्रियों को, जीवमात्र को भर देती है, तृप्त करती रहती है, मालामाल करती है।

भाष्य भूमिका

अधिष्ठाता—संतोषराज सभा मंत्री सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

दार्शनिक चर्चा

सिद्धान्त शब्द का अर्थ

(श्री डा॰ शकरदास जी लारेस रोड अमृतसर)

डा. शंकरदास जी स्वाध्याय-शील एवं गम्भीर चिन्तक हैं। दर्शनों के परिशीलन की बड़ी रुचि है। हमारी प्रार्थना पर अपने अमूल्य विचारों को आर्यजगत् के प्रेमी पाठकों को लेखरूप में देना स्वीकार किया है। (सं.)

आर्यजगत के गत एक अक में दर्शन शब्द का अर्थ वर्णित किया जा चुका है। अब सिद्धान्त शब्द का अर्थ समझिये। इसका विस्तार से वर्णन न्याय दर्शन १-१-२६-३० में गौतम महर्षि ने किया है। अर्थात् तन्त्र संस्थत्या सिद्धान्त —(शास्त्र के अर्थ की सस्थिति-निर्णय किये गए अर्थ को सिद्धान्त कहते हैं। यह ऐसा हुआ और माना गया—इसको सिद्ध कहते हैं तथा सिद्धि की इस स्थिति का नाम सिद्धान्त है—अर्थात् दर्शन सिद्धान्त का अर्थ हुआ, वह दर्शन शास्त्र जो निर्णय किये गये मूल तत्वों का भली भान्ति दर्शन कराए।

दर्शनो के मूल तत्व

१—ससार मिथ्या शून्य नहीं है। परिवर्तन संसार का धर्म है। अत्यंत अभाव किसी पदार्थ का नहीं हो सकता। मिथ्या ज्ञान का अर्थ योगिराज पतंजलि मुनि ने योगदर्शन के पहले अध्याय मे इस प्रकार किया है—जो वस्तु के निज रूप में अप्रतिष्ठित अर्थात् विद्यमान न हो, वह मिथ्याज्ञान है, मिथ्या-ज्ञान, शून्य प्रतीति या ज्ञान नहीं है जैसा कि नवीन वेदान्ती अर्थ कर के जनता को भ्रान्त करते है दूसरे अध्याय के पांचवें सूत्र मे फिर इसी भाव का विस्तार से वर्णन करते हैं। अनित्य, अशुचि, दु ख, अनात्म में क्रमशः नित्य, शुचि, सुख और आत्म दृष्टि होना अविद्या अर्थात् मिथ्या ज्ञान है। यह दृश्य प्रपंच शून्य नहीं है। प्रवाहरूप से अनादि है। मूल प्रकृति के स्वतन्त्र सत, रज तम रूप गुण नित्य तत्व हैं।

२—जीवात्मा दूसरा नित्य तत्व है। यह हर एक शरीर को जीवन देता है। यह स्वरूप से मरने और बन्धन से मुक्त है। परन्तु अपने सस्कारों के प्रभाव से भिन्न २ योनियों में जाता है।

३—परमात्मा नित्य, शुद्ध, बुद्ध, मुक्त स्वभाव, सारे ससार का कर्ता धर्ता और हर्ता है। माया का कभी इस पर प्रभाव नहीं पड़ता। जीवों को उनके कर्मानुसार, न्याय अनुकूल उनके हित के लिए भिन्न २ फलों को उन्हें देता है। वह कभी न जगदाकार और न कभी जीव रूप बनता है।

४—प्रत्येक तत्व का बोध वेद और आर्ष दर्शन शास्त्रों के स्वाध्याय से ही ठीक २ हो सकता है।

५—शिक्षा का आदर्श इस बोध से युक्त करके प्रत्येक जिज्ञासु को दु खों की अत्यन्त निवृत्ति कराकर प्रभु समीप पहु चाकर मृत्यु के भय से इसी जीवन मे मुक्त करना है।

६—इस के लिए शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा के संचित कर्म के अनुसार उन्नत कराने की आवश्यकता है। उन्हे मिथ्या नहीं अपितु सच्चा समझ कर उपयोगी साधन बनाने की जरूरत है।

इस बात का ध्यान रखो कि जीवन मे हमारी परीक्षा हो रही है। जितने हम धर्मात्मा, बलवान बुद्धिमान होंगे, उतना अधिक अच्छी तरह से इस परीक्षा में सफल होंगे। उठो जागो और विवेक पूर्वक विचारो। यह नर तन बड़ा ही दुर्लभ है। जीवन यात्रा मे यह प्रभात है। इस जीवन के पाने के बाद अन्धकार की परिसमाप्ति है। यह मुफ्त में नहीं मिला वरन परमात्मा के बाजार में सब नेकियां शुभ कर्म देकर मिला है। ताकि भगवान के आनन्द की प्राप्ति करके हम सौभाग्य को पा सकें। इस शरीर को एक नौका भी कहा है। इसलिए जल्दी २ चप्पू चलाओ ताकि हम इस शोक भवसागर से पार हो जावे। ऐसा न हो कि इस नौका में छिद्र हो जावे या यह पुरानी हो जाये और टूटने लगे। हम कहीं मझदार में न डूब जावे। सब भोगयोनियों में तप कर के यह नर तन मिला है, जिसमें विवेक बुद्धि चुनावशक्ति है। यह विचारशक्ति मनुष्यों की सबसे बड़ी विशेषता है इसलिए सर्वप्राणियो मे मानव जीवन की महत्ता है। नित्य अनित्य, सार असार, अर्थ अनर्थ, विधि निषेध, गुण दोष, शुभ अशुभ को परखने की कसौटी यह चुनाव विचार शक्ति (organ of reason) है। अत. सर्वदु खो की अत्यन्त निवृत्ति एव सुखप्राप्ति की मुख्य आशा से इस विचारशक्ति के उपयोग करने का साधन केवल मनुष्य शरीर ही माना गया है। जो लोग मैं मनुष्य हू ऐसा अभिनय रखते है दु खों से अत्यन्त निवृत्ति चाहते हैं, उनके लिए दर्शनों की जिज्ञासा बड़ी उपयोगी है। ये दर्शन उन साधनों का उपदेश करते है, जिनकी सहायता से मनुष्य मोक्ष प्राप्त कर सकता है। (अपूर्ण)

मनुष्य के हाथो मे क्या है ?

यह सब कुछ हो गया पर मनुष्य के हाथ में ही क्या है। वह भले ही अपने आपको कर्त्ता-धर्त्ता समझ बैठे पर उसका यह अहंकार व्यर्थ है। वही भगवान मनुष्यों के कर्मानुसार चक्र घुमाता रहता है और उसी में मनुष्य का अच्छा बुरा जो कुछ निकालना है, निकल आता है।

अमरशहीद पं॰ लेखराम बलिदान दिवस

वैदिक सत्य सनातन धर्म के निर्भीक प्रचारक, दिवाने और परवाने आर्यपथिक प० लेखराम जी का बलिदान-दिवस वेद प्रचार मण्डल जालन्धर के प्रबन्ध से आर्य समाज मन्दिर ऋषिकुञ्ज (पक्काबाग) में ६ मार्च १९६४ शुक्रवार रात को ८ बजे से १० बजे तक मनाया जावेगा। उसमें अमर बलिदानी की जीवनी पर भजन, गीत' कवितायें, तथा ओजपूर्ण भाषण होंगे।

जालन्धर नगर के सभी नर-नारियों से प्रार्थना है कि अपने परिवार, इष्टमित्रों तथा बन्धुओं सहित पधारने का कष्ट करें।

—मुल्खराज आर्य
मन्त्री वेद प्रचार मण्डल

दयानन्द ब्राह्ममहाविद्यालय हिसार

के योग्य स्नातक प० नरेन्नायर जी की विदाई के उपलक्ष्य में दि० २३-२-६४ को एक सभा का आयोजन हुआ इस सभा में हिसार के गण्य-मान्य सज्जनों ने भाग लेकर पं० नरेन्द्रन जी को शुभ आशीर्वाद देते हुए दिव्य सन्देश दिया कि केरल प्रान्तान्तर्गत फैले हुए अज्ञानान्धकार को दूर करके वैदिक नाद गुंजाओ इस प्रकार सम्पूर्ण उपस्थित लोगों ने पं० नरेन्द्रन जी का उत्साह वर्द्धन किया। पं० नरेन्द्रन जो केरल निवासी हैं वे विद्यालय में वैदिक धर्म के सिद्धान्तों के ज्ञान के लिये आये थे विद्यालय ने इन्हें केरल में वैदिक धर्म का प्रचार करने को तैयार किया है।

निवेदक
रामविचार
उपचार्य

सम्पादकीय–

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२०, ८ मार्च १९६४ [अंक १०

आर्य समाज की जय

आर्यसमाज के सिद्धान्त तर्क की कसौटी पर पूरे उतरते हैं। यही कारण है कि आर्यसमाज की स्थापना के बाद मतमतान्तरों के जो भी ग्रन्थ लिखे गये या वर्तमान समय में लिखे जा रहे हैं, उनका भारी परिवर्तन हो गया है। तर्क और युक्ति के साँचे भी आज दूसरे लोग अपने २ सिद्धान्तों को कसने पर विवश हो चुके हैं। जहा २ भी अन्धविश्वास का प्रचार होता हो, पाखण्ड का सहारा लेकर ऐसे वैसे स्वार्थी लोग भोली भाली जनता को अपने अन्धविश्वास से भरे विचारों मे, माया जाल में फंसाने मे लगे हों, वहा पर आर्यसमाज अपनी पताका गाड कर उस जाल को तार तार करने में लग जाता है। इस की युक्तियों का किसी के पास भी उत्तर नहीं है, इस के सामने कोई ठहर भी नहीं सकता। सारे देश में इस का प्रत्यक्ष परिचय मिलताहै।

इसी सम्बन्ध मे अभी २ एक ताजा समाचार सामने है। जिस में समाज की शानदार विजय का समाचार मिला है। अमृतसर मे महासिंह गेट के बाहर एक पादरी ने कई दिनों से एक पाखण्ड रचाया हुआ था। भोली जनता को अपने मायाजाल में फंसाने के लिए अन्धविश्वास का काम आरम्भ किया हुआ था। उसने यह घोषणा अपने दो चार चेलों से जनता में करा दी थी कि जिसको किसी प्रकार का भी रोग हो, शरीर मे बीमारी हो, वह मेरे पास आजावे, मैं अपने हाथ से उसे छूकर भला चंगा कर दूंगा। भोले लोगों की कमी नहीं। सैंकड़ों की संख्या मे भोली भाली हिन्दू सिख नर नारी, युवती-युवक उसके पास आने लगे। उस पादरी को पैसे भी देते थे, तथा ईसाईयत का उपदेश भी सुनते थे। इस प्रकार के भ्रमजाल, झूठ के द्वारा पाखण्ड चक्र चलने लगा, धन भी वह बटोरने लगा। भीड अन्धविश्वासी लोगों की वहा खडी होती थी। अमृतसर मे पादरी द्वारा इस भ्रमजाल के द्वारा पाखंड के प्रसार को देखकर किसे भी ध्यान न आया कि ईसाई किस प्रकार अपने ईसाईमत का प्रचार कर रहा है। पर आर्यसमाज तो मौन नहीं रह सकता था। महर्षि दयानन्द के प्यारे इस पाखण्ड को सहन न कर सके। वे मैदान में कूद पड़े।

अमृतसर के आर्य समाजी इकट्ठे होकर केन्द्रीय समाज के साथ मिलकर इस जाल का तार-तोडने का निश्चय करके संगठित हो गए। आर्यसमाज लोहगढ़ के प्रधान ज्ञानी पिण्डीदास जी, पं धर्मपाल जी म्यूनिसिपल कमिश्नर, मा. रखामल जी, लछमणसर के प्रधान प. रुद्रदत्त शर्मा,ला गंगारामजी श्रद्धानन्द बाजार के प्रधान श्री विश्वनाथ ग्रोवर, नवा कोट के ला मथुरादास जी, लारेंसरोड के प्रधान श्री हंसराज खन्ना, डा० देवव्रत महाजन तथा केन्द्रीय समाज के प्रधान श्री कैप्टन केशवचन्द जी, गुरुचरणदास जी, पुतलीघर के श्री भोलानाथ जी, श्री शिवदत्त जी आदि सबने मिलकर कमाल कर दिया। वहां मुकाबिले पर आर्य समाज की स्थापना करके इस पाखण्ड के विरोध में अपना कैम्प लगाकर प्रचार शुरू कर दिया। परिणाम यह हुआ कि आर्यसमाज के इस संगठित प्रचार से उस पादरी के पांव उखड गये। वह पादरी वहां से स्थान छोड़कर भाग गया। आर्यसमाज की शानदार विजय हुई। इसके लिए हम, सबको आन्तरिक बधाई देते हैं। आर्यसमाज के पास बडी शक्ति है जहा उसके सैनिक कमर कस कर भ्रमजाल तोड़ने के लिए मैदान मे कूद पड़ते हैं। आर्यसमाज के संगठन में बडी शक्ति है। उस के प्रवाह के सामने कौन ठहर सकता है। अमृतसर के इस समाज के सज्जनों के आयोजन द्वारा प्राप्त की हुई विजय से अन्य नगर की समाजें भी प्रेरणा लेवें। ऐसे २ जहा भी भ्रमजाल दिखाई दें, वे वहा संगठन बनाकर कूद पड़ें—समाज ही भ्रमजाल को काट सकता है अन्य कौन है। —त्रिलोकचन्द्र

होली हो ली

****

होली का महान् पर्व आया और चला गया। इस बार तो पाकिस्तानी बंगाल में हिन्दुओं के ऊपर जो भी नृशस अत्याचार किये गये। उनको समक्ष रख कर इस बार सार्वदेशिक सभा के महामन्त्री श्री रामगोपाल जी शाल वाले ने तथा लोक सभा मे पं० प्रकाशवीर शास्त्री जी ने इस बार होली न मनाने की मार्मिक अपील की। अन्य संस्थाओं ने भी इस दिशा मे उचित अपील की है। होली इसलिए इस बार उस परम्परागत रूप मे नहीं मनाई गई। आर्यसमाज तो वैसे भी इस पर्व को और ही सुन्दर प्रकार से मनाता चला आ रहा है।

यह होली का पर्व प्रेम प्यार का पर्व कहा जाता है। विजया दशमी क्षत्रियत्व से सम्बन्ध रखता है, श्रावणी ब्राह्मणों से, दीवाली वैश्य समाज से तथा यह होली चारों वर्णों का त्यौहार कहा जाता है। थोड़ा बहुत गुलाल लेकर मित्र अपने मित्र पर, लड़कियां अपनी सहेलियों तथा लडके अपने साथियों पर होली खेलते हैं। प्रसन्न होते हैं बात यह है कि आपस में कई बार भाई का भाई से, बहिन का बहिन से, व्यक्तियों का व्यक्तियों से, एक का दूसरे से मनमुटाव हो ही जाता है। यह स्वाभाविक ही है। मानव जीवन मे ऐसा होता ही रहता है। यदि यह मनमुटाव पुराना या पक्का होता जाये, तो कई बार भयंकर रूप धारण कर लेता है। यदि थोड़े समय बाद इस धो दिया जाए, दूर करने का उपाय हो जाए तो मनमुटाव प्यार में बदल जाता है। होली का पर्व यह सन्देश देता है कि वर्ष मे यदि किसी का किसी से किसी बात पर मनमुटाव हो गया है। तो इस होली पर आपस में होली खेल कर गले मिल जाना चाहिए। वर्ष भर का वैमनस्य इस सप्ताह सर्वथा दूर हो जावे। प्रेम का रंग कपड़ों, मन पर पड़ता है। सारा राष्ट्र प्रेम के फाग में, प्यार के सूत्र मे पिरोया जाता है। यह राष्ट्रिय प्रेम का पर्व है।

हमने आर्य समाज के सारे सज्जनों से से कहना है कि आज के इस वर्तमान विषम युग में आर्यसमाज के काम की कितनी आवश्यकता है। इस होली के बीतने पर रूठे हुए आर्यसमाजी आपस मे गले मिल जाएं। मन की ग्रन्थियां समाप्त हो जाए। सिर जोड़कर बैठें। समानी प्रपा सह वोऽन्न भाग: वाला वेद का संगठन सूक्त जीवन मे, कार्यों में तथा विचारों में आजाये। होली तो आई और हो ली। अब हमारा कर्त्तव्य है कि इस बार ... समाप्त हो जाएं। —त्रिलोकचन्द्र

आर्य प्रादेशिक सभा का कार्य विवरण

अधिवेशन के सभापति श्री प्रिं. रलाराम जी एम.ए.,एम. एल. ए. ने अध्यक्षपद से सभा का वार्षिक विवरण का जो प्राक् कथन पढ़ कर सुनाया उस का संक्षिप्त भाग नीचे दिया जा रहा है।

मान्यवर बन्धुओ।

अमृतसर नगरी और यहां के आर्य भाई इस विचार से अधिक सौभाग्यशाली हैं कि आर्यसमाज के के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने १८७७ में यहा पधार कर आर्यसमाज अमृतसर की स्वयं स्थापना की थी। यहा के दानवीर समाज के अनन्य भक्त भारत भर में प्रसिद्ध हैं। बावा अत्तरसिंह जी तथा उनके सुपुत्र बावा गुरमुखसिंह जी, राय बहादुर गोपालदास जी भंडारी, रायबहादुर लालचन्द जी भंडारी, दीवान उत्तमचन्द जी, प० परशुराम जी आदि। इन के पुण्य प्रताप से आर्यसमाज का काम अमृतसर में चमका। वर्तमान में भी यहा समाज के गन्यमान्य नेता एव स्तम्भ ज्ञानी पिंडीदास जी, प० रुद्रदत्त जी, वैद्य विद्यासागर जी, डा० देवव्रत जी, ला० सुशीराम जी महाजन, श्री मोहनलाल जी अरोड़ा, श्री हंसराज जी खन्ना, कै० केशवचन्द्र जी, श्री धर्मपाल जी आदि सज्जन विद्यमान हैं। इनके सुन्दर प्रयत्नों से ही अमृतसर में प्रशसनीय कार्य हो रहा है। इनके पुरुषार्थ से ही इस नगरी की आर्यसमाजों मे जीवन है।

सभा का यह वार्षिक अधिवेशन एक विशेष महत्व रखता है। इस वर्ष हम ने महात्मा हंसराज जन्म शताब्दी मनाने का निश्चय किया है। यह पुण्य कार्य है परन्तु कठिन भी है। इस दिशा मे भी मार्ग दर्शन पाना है। आर्थिक कठिनाई भी सामने है। वेदप्रचार में भी शिथिलता सी आ गई है। इन समस्याओं पर भी विचार करना है। अतः इस नगरी के दानवीर, कर्मठ, साहसी और पुरुषार्थी बन्धुओं के पास आकर इनका हल सोचने में आसानी होगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

मैं आर्य समाज अमृतसर के मान्य सदस्यों का धन्यवाद करता हूँ और मान्य प्रधान जी का आभारी हू कि उन्होंने सभा के अधिवेशन को यहा बुलाकर हमें यह सुअवसर प्रदान किया है कि सभी माननीय प्रतिनिधि यहा पर एकत्रित होकर अपनी अपनी समस्याओं पर विचार कर सके और यहा के अनुभवी धर्म प्रेमी बधुओं से मार्ग दर्शन भी पा सकें। भगवान् आप सब को इसी प्रकार आर्यसमाज के प्रति निष्ठावान बनाये रखे।

शोक समाचार

इस वर्ष के मध्य में भारत तथा आर्यसमाज की कुछ विभूतिया प्रभु इच्छा में लीन हो हम से सदा के लिए पृथक् हो गई हैं। भारत सरकार के मान्य भूतपूर्व राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद जी जोकि कर्मठ, धार्मिक सच्चरित्र तथा स्वतन्त्रता सग्राम के प्रमुख सेनानी थे। इनकी सेवाए कभी भुलाई नहीं जा सकेंगी। इनका रिक्त स्थान पूर्ण होना कठिन है।

दैनिक प्रताप के मालिक महाशय कृष्ण जी का हमारे मध्य से चला जाना अति दु खदायक है। महाशय जी की लेखनी अनुपम थी। स्थिरता, निडरता उनका आभूषण था। आर्य समाज के अनन्य भक्त थे। इनकी पृथकता समाज एव जाति तथा राष्ट्र के लिए दु ख का कारण है।

श्री बलदेव सिंह जी भण्डारी एडवोकेट गुरदासपुर जो कि समाज के अनथक कार्य-कर्ता हैं, की माता जी का देहावसान भी असह्य है। माता जी सच्ची आर्य देवी थीं।

श्रीमान डा० मेहरचन्द जी महाजन के जामाता श्री गुप्त जी का असामयिक देहावसान भी हृदय विदारक है।

भगवानदास जी पुरी प्रधान आर्य प्रादेशिक उपसभा दिल्ली के निधन से सभा एव समाज को भारी क्षति पहुची है। पुरी जी दानी तथा दृढ़ आर्य थे।

पं० बुद्धदेव जी मीरपुरी के निधन से भी बहुत दु ख हुआ है। सभा के पुराने महारथी थे। उनका स्थान पूरा होना कठिन है।

मा० अमरनाथ जी भी सभा के महोपदेशक थे। इनकी लच्छेदार गाथायें सदा स्मरण रहेंगी।

प० सुशीराम जी अधिष्ठाता वेद प्रचार सभा की सुपुत्री कमला का अचानक देहान्त भी दु ख का कारण है।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के हम सभी सदस्य दिवंगत आत्माओं के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए परमदेव प्रभु से प्रार्थना करते हैं कि वे इन्हें सद्गति प्रदान करे तथा उनके बन्धु बान्धवों को असह्य दु ख सहन करने की सामर्थ्य प्रदान करें।

वेद प्रचार

आर्यसमाज के सामने महान कार्य है। इस दूषित वातावरण को सुधारने, विकृत प्रवृत्तियों को संयम की लगाम देने और पतन की ओर सरपट भागते मानव को वेदोपदेश द्वारा सजग, सचेत तथा सावधान करने का कठिन परन्तु पुनीत कार्य आर्यसमाज का है। देव दयानन्द ने अपना जीवन इसी काम के निमित्त अर्पण किया था और इसी कार्य को पूरा करने के लिए आर्य समाज की स्थापना की थी और आर्य समाज को ही अपना उत्तराधिकारी बनाया था। इसी महान कार्य को चलाने के लिए प्रातः स्मरणीय महात्मा हंसराज जी ने आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा को जन्म दिया था और इसी काम को आगे बढाने मे पूज्यपाद महात्मा आनन्द स्वामी जी ने सुख ऐश्वर्य को त्याग कर देश विदेश मे घूम कर वेद प्रचार किया और अब भी कर रहे हैं।

सब से बड़ी कठिनाई तो आर्थिक कमजोरी है। सभा की आर्थिक अवस्था दिनों दिन बिगड़ती जा रहा है। उपदेशकों और भजनोपदेशको की कमी है। परन्तु धन की कमी इस सख्या मे वृद्धि करने नहीं देती। हम उपदेशक और भजनोपदेशक रख न सके। वेद प्रचार कार्य मे देर से शिथिलता आ रही है। अनेक कारणों से धन प्राप्ति मे कमी हो रही है। उपदेशकों की कमी से धन की कमी और धन की कमी से उपदेशकों की कमी होकर कुचक्र चल रहा है। इस चक्र को तोड़ना ही होगा। हम चाहते है कि यथेष्ठ रूप मे वेद प्रचार हो।

दूसरी अड़चन यह पैदा हुई कि सभा के दो मान्य भजनोपदेशक वर्ष भर में काफी समय तक बीमार रहे। उनके रोग-ग्रस्त होने से वेद प्रचार मे बाधा पडना स्वाभाविक ही था। इस पर पूज्यपाद महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज भी

बीमार हो गए और उनके बीमार होने से वेद प्रचार के काय को काफि हानि पहुंची। पूज्य महात्मा जी की बीमारी लम्बी थी और साथ बहुतदु खदायी भी थी। वे स्वयं लिखते हैं कि बीमारी के दिनों मे ऐसा समय भी आया जब डाक्टर लोग भी जीवन से निराश हो गए थे। परन्तु वाह रे वीतराग संन्यासी! पूर्ण विश्वास के साथ उनको कह दिया कि 'अभी इन अस्सी वर्ष की हड्डियों ने दधीचि ऋषि की हड्डियों के समान बहुत काम करना है।' परम पिता परमात्मा का कोटिश. धन्यवाद है कि अब वे स्वस्थ हैं। कमजोरी शेष है परन्तु उनके शब्दों में ही 'उसे भी जाना ही होगा।' और मैं सहर्ष बन्धुओं को सूचित करना चाहता हू कि वे अब फिर अपने पुनीत कार्य को प्रारम्भ कर रहे हैं। उनकी अमृत वर्षा बम्बई शान्ता क्रुज से प्रारम्भ हो चुकी है।

सभा के सभी उपदेशक और भजनोपदेशक महानुभाव वर्ष भर कार्यरत रहते हैं। केन्द्र मे अधिष्ठाता जी के सुप्रबन्ध से प्रचार काय चलता है। करनाल और अम्बाला मण्डल श्री अमरसिह जी की देख-रेख मे काम कर रहा है। हिसार और रोहतक मण्डल की ओर विशेष ध्यान देनेकी आवश्यकता है। जमादार भरतसिह जी लड़ाई में चले जाने और प. मुरारीलाल जी शास्त्री के अन्य आवश्यक कार्यों में जुटे रहने से रोहतक और हिसार मे काम कम हुआ। इस वर्ष इसमे सुधार करना होगा। जिला हिसार तो हमारी सभा का विशेष गढ रहा है और इसी मे इस समय ढाल अधिक है।

सभा को यह सौभाग्य प्राप्त है कि डी० ए० वी शिक्षण संस्थाओं के प्रिन्सीपल महोदय और मान्य प्रोफैसर अपना कीमती समय सभा के अर्पण करते रहते हैं। वे विभिन्न

आर्य प्रादेशिक सभा का कार्य विवरण

समाजों के उत्सवों पर व्याख्यान आदि देकर वेदप्रचार मे सभा का हाथ बटाते हैं। हम सब उनके आभारी हैं।

इनके अतिरिक्त मान्यवर महात्मा देवी चन्द जी एम ए., मान्यवर उपकुलपति सूर्यभानु जी, परम पूज्य डा० दीवानचन्द जी कानपुर एव मान्यवर प्रि० ज्ञानचन्द जी का सहयोग सभा को सदा प्राप्त रहा है। उनका विशेष धन्यवाद है।

दिल्ली उप-सभा तो सभा की प्राण है। राजधानी मे उस उप-सभा ने खूब कार्य किया है। अकेले देहली मे ही २५ आर्य समाजें सभा के साथ सम्बन्धित है। देहली के इर्द-गिर्द मे भी वेद प्रचार की धूम सी मची रहती है। इसका श्रेय उपसभा के दिवगत प्रधान ला० भगवानदास जी पुरी तथा सभा के ओजस्वी मन्त्री राजकुमार जी को प्राप्त है।

वेद प्रचार का कार्य भारत के अन्य प्रदेशों मे भी है। मध्य प्रदेश मे श्री देवप्रकाश जी अपने चार साथियो के साथ काम मे सलग्न है। कालीकट (केरल) मे श्री बुद्ध सिह जी और उडीसा में स्वामी ब्रह्मानन्द जी पूरी लगन के साथ काम कर रहे है। इनके काम का ब्योरा आप आगे रिपोर्ट मे पढे गे। यहा इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि इन महानुभावों के प्रयत्न सराहनीय हैं।

सभा की आर्थिक अवस्था

जैसा कि मै ऊपर कह आया हू सभा की आर्थिक अवस्था ठीक नहीं है, चिन्ताजनक है। पिछले तीन वर्षों से सभी कोष समाप्त हो चुके है। जू तू करके गुजारा हो रहा है। महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज और मान्यवर उपकुलपति सूर्य भानु जी की सहायता, कतिपय दानी महानुभावों के दान दानवार बिडला जी की २०० रु० मासिक की सहायता और समृद्ध, भाग्यशाली आर्य समाजों के विशेष वेद प्रचारार्थ अनुदान से सभा का काम चलता आ रहा है। इस वर्ष मै भी कई जगहों पर स्वयं गया हूं। वहा से आर्य समाजों और सज्जनों ने धन लेकर सभा की सहायता की है। इस सम्बन्ध मे आर्यसमाज लारेंस रोड अमृतसर, आर्य समाज लोह गढ अमृतसर, आर्य समाज किला जालन्धर, आर्य समाज अम्बाला छावनी तथा शहर, आर्य समाज मन्दिर मार्ग नई दिल्ली, डा ए वी कालेज अमृतसर, डी ए वी. हायर सैकेण्डरी स्कूल अमृतसर और डी ए. वी. कन्या पाठशाला अमृतसर श्रीमती मैनादेवी जी होशयारपुर, जगदीशराज जी होश्यारपुर, ज्ञानचन्द जी मुकेरिया, सेठ हरिमित्र बलदेव मित्र जी मेकेरिया, दीवानचन्द जी, हरिराम जी, बलबीर सिह जी सब रजिस्टार मुकेरिया, महन्त केशवदास जी जडवाल, विशेष धन्यवाद के पात्र हैं। अन्तरग सभा के अनेक सदस्यों ने भी अपनी जेब से धन देकर सभा की सहायता की है। इन सब का भी धन्यवाद है।

महात्मा हसराज जन्म शताब्दी

प्रात स्मरणीय महात्मा हसराज जी के शुभ जन्म को अप्रैल १९६४ में १०० वर्ष हो रहे हैं। उनका देश वासियों पर और विशेषत पजाब पर महान उपकार है। आधुनिक पजाब के निर्माण मे उनका सबसे बडा हाथ है। वैदिक सभ्यता और सस्कृति की रक्षा तथा प्रसार में उन्होंने अपना जीवन लगा दिया। तप और त्याग का एक उज्वलतम आदर्श कायम किया जिसके फलस्वरूप पजाब मे शिक्षा का प्रचार हुआ, वेद प्रचार को प्रोत्साहन मिला। ऐसे महापुरुष के के जन्म को १०० वर्ष हो रहे हैं। सभा ने निश्चय किया है कि पूज्य महात्मा जी की जन्म शताब्दी धूमधाम से मनाई जाए। इसके लिए एक शताब्दी उपसमिति बना दी गई है जिस ने कार्यक्रम तैयार किया है। यह उपसमिति धन एकत्र करके उस कार्यक्रम को पूरा करेगी। प्रभुसे प्रार्थना है कि हमे इस पुनीत कार्य मे सफलता प्राप्त हो जिससे हम उस पुण्य आत्मा के ऋण से किसी सीमा तक उऋण हो पाए।

महात्मा हसराज भवन

सन् १९६१ की वार्षिक रिपोर्टमें बताया गया था कि सभा भवन जिसमें कार्यालय काम करता है, सभी का सभी सरकार से खरीद लिया गया गया है। यह निकासी जायदाद थी और ३५ मरले के करीब भूमि है। १९६२ मे उसके साथ लगती १७ मरले जमीन भी खरीद ली थी। इसके लिए धन महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराक की कृपा से प्राप्त हुआ था। डेढ़ कनाल के लगभग जमीन इस भवन के सामने है। इसे भी खरीदना जरूरी है। इससे सभाका भवन बड़ी सडक पर आ जाएगा। परन्तु इसके लिए धन की आवश्यता है। सरकार से बातचीत हो रही है। यदि धन प्राप्त हो जावे तो इसे भी खरीदने का प्रबन्ध हो सकेगा।

यह भवन तो नाम का ही भवन हैं, पुरानी, कुछ कच्ची कुछ

आर्य प्रादेशिक सभा का कार्य विवरण

पक्का, टूटा फूटा इमारत है। इस की मुरम्मत से काम नहीं चल सक्ता, इसे तो नए सिरे से बनाना होगा। परन्तु इसके लिए भी धनकी आवश्यकता है। यदि कोई सज्जन अपने मनमें इसका निश्चय कर ले तो धन एकत्र हो सकता है। मैं मान्य प्रतिनिधियों से प्रार्थना करता हूं कि वे इधर अवश्य ध्यान दें।

साहित्य प्रचार विभाग

हमारा साहित्य प्रचार विभाग कुछ वर्षों से ढीला चल रहा है। कारण वही धन की कमी है और लोगों की धर्म ग्रन्थोंमे अरुचि। परन्तु मुख्य कारण है हमारी अपनी कमजोरी। धन के न होने से अच्छी अच्छी पुस्तकें छपने से रह जाती हैं। सत्यार्थ प्रकाश की मराठा, तामिल, पंजाबी, अंग्रेजी वा अन्य भाषाओं मे बहुत बड़ी मांग है। यह कितना जरूरी है, यह किसी से छिपा नहीं है। वेद मन्त्रोंके सरल अर्थ, कविता मे वेदार्थ, वेदों का अंग्रेजी में भाष्य, उपनिषदों की कथाए आदि जैसे उपयोगी साहित्य की मांग है। विदेशी विद्वानों के हाथ मे देने के लिए हमारे पास कोई साहित्य नहीं। अपने ही देश वासियों तक पहुँचानेके लिए हमारे पास सरल, सरस, सस्ता साहित्य नहीं है। इस कमी को हम सभी बुरी तरह से महसूस करते हैं। पर कुछ बन नहीं पाता। भला हो महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज का कि इस अवस्था में और प्रचार कार्य मे इतना व्यस्त रहने पर भी लिखते रहते हैं। इस वर्ष उनकी एक पुस्तक "घोर घने जंगल मे" छपी है। उपनिषदों का सार है। प्रत्येक पढ़नेके योग्य है। हमारे पूज्य डाक्टर दीवानचन्द जी भी बधाई के पात्र हैं। वे अपना समय पढ़ने और लिखने मे ही व्यतीत करते हैं। इस वर्ष उन की दो पुस्तकें तैयार हो रही हैं, 'उपनिषद प्रवचन' और 'जीवन व्यापार' यह दोनों प्रेस में हैं। अब वे महात्मा हंसराजजी का जीवनलिख रहे है। यह पुस्तक उनकी जयन्ती पर छपकर तैयार हो जायगी। इसी प्रकार प्रि० श्री राम जी भी महात्मा जी का जीवन चरित्र अंग्रेजी मे लिख रहे हैं। इन दोनों जीवनियों में जहां महात्मा जी की जीवन झाकी होगी वहां आर्य समाज का दिग्दर्शन भी होगा सभा महात्मा देवी चन्द जी की भी आभारी है। वे इस आयु में भी दिन रात उपदेश देने, पढ़ने और लिखने में लगे हुए हैं। उन्हों ने यजुर्वेद और सामवेद का अनुवाद अंग्रेजीमे कर लिया है। यजुर्वेद का तो दूसरा संस्करण निकलने वाला है। इसे अब आप की सभा छापेगी। सामवेद छप कर आर्य जगत की भेंट हो चुका है। अब वे अथर्ववेद का अनुवाद कर रहे हैं। भगवान उन्हें आयु दे और उनका स्वास्थ्य बनाए रखे ताकि वे कृतसंकल्प हो सकें और चारों वेदों को अंग्रेजी जानने वालों के हाथों मे दे सके। अमृतसर के ला० जगतराम जी का भी धन्यवाद है कि वे भी लिखवाने और छपवाने के काम में लगे रहते हैं। इस वर्ष उन्होंने बड़ाई मत दर्पण तैयार करवाया है और अपने खर्च पर छपवा कर मध्य प्रदेश में मुफत बांटा है।

हम सब का कर्तव्य है कि हम इन सभी पुस्तकों को अपनी शिक्षण संस्थाओं में स्थान दें—अर्थात् संस्थाओं के पुस्तकालयों में, पारितोषिक वितरण में, स्कूलों के अध्ययन में और आर्य युवक समाजों में इन का अधिक से अधिक उपयोग करें। जिस से आगे आने वाले राष्ट्र के भावी कर्णधार नवयुवक और नवयुवतियां इन से उचित दिशा प्राप्त कर राष्ट्रोत्थान व समाजोत्थान के पुनीत कार्य मे अपना कन्धा लगा सकें।

आवश्यक निवेदन

अन्त मे मैं फिर आप का ध्यान इस ओर आकर्षित करता हूं कि हम वर्तमान आर्य सभा सद के स्वामी दयानन्द जी महाराज के उत्तराधिकारी हैं। उन की अन्तिम वसीयत यही ही थी कि आर्य समाज ही उन की एक मात्र यादगार है तथा आर्य समाजी उन के उत्तराधिकारी हैं। वेद के जीवनदायी तथा उत्कर्षमय ज्ञान को फैलाने के बोझ को स्वामी जी महाराज ने हमारे कन्धों पर रखा है तथा हमारे जिम्मे सौंपा है। हमारे कन्धे बेशक महारथियों के मुकाबले मे कमजोर हैं, जिन्होंने महर्षि दयानन्द की मृत्यु के बाद ही इस प्रकार कार्य को सुव्यवस्थित किया। परन्तु हमें दृढ़ संकल्प तथा दृढ निश्चय बन कर यथा शक्ति इस काम को आगे ले जाने का भरसक प्रयत्न करना चाहिये। हमारी शिथिलता आर्य समाज, नहीं राष्ट्र की, घातक होगी, हमारा देश नैतिक पतन के दुःखद युग मे से गुजर रहा है। ज्ञानी तथा विचारक ठीक कहते हैं कि भारत चरित्र संकट मे से गुजर रहा है। उच्च कोटि का वेदज्ञान, उपनिषदों की आध्यात्मिकता यदि हमारे जीवन मे प्रविष्ट हो कर हमें सच्चे अर्थों में आर्य बना दे तो आर्य समाज प्रगतिशील हो कर सारे देश को भ्रष्टाचार तथा अनाचार के भयङ्कर गढ़े से निकाल सकता है। आओ हम आपस की कलह को मिटाकर और आर्यों जैसा अपना शील अथवा चरित्र बना कर स्वयं उन्नत हों तथा ऋषि के सन्देश को देशान्तरों में प्रसारित करें।

रला राम सभा प्रधान

प्रादेशिक आर्य युवक संगठन पंजाब

प्रादेशिक आर्य युवक संगठन का एक सुदृढ़ और अपने ढंग से चल रहा अनुपम संगठन है। आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा ने इस का संविधान अपनी अन्तरंग सभा द्वारा स्वीकृत कर प्रो० वेदीराम जी शर्मा एम० ए० को इस संगठन का अध्यक्ष निर्वाचित किया था। सभा ने युवक संगठन को पंजाब, दिल्ली तथा हिमाचल प्रदेश में संगठित करने का भार भी प्रो० वेदीराम जी पर ही डाला था। उन्होंने बड़े प्रयत्न पूर्वक स्थान-स्थान पर जाकर इस संगठन का नियोजन किया है। सभी स्कूल और कालेजों मे युवक समाजोंकी स्थापना की है।

श्री रणवीरजी सम्पादक दैनिक मिलाप देहली की सुपुत्री का शुभ विवाह

२-३-६४को कुमारी विजयबाला पौत्री महात्मा आनन्द स्वामी जी को, सुपुत्री श्री रणवीर जी का शुभ विवाह श्री दर्शन M A. सुपुत्र श्री तीर्थराम नैयर आगरा निवासी के साथ हुआ।

इस अवसर पर भारत सरकार के अनेक उच्च अधिकारी व सदस्य पार्लियामैंट और बड़ी-बड़ी संस्थाओं के सचालक उपस्थित हुए। सबने वरवधू को आशीर्वाद दिया। तथा विदेशों से भी वर वधू को आशीष संदेश प्राप्त हुए।

व्यवस्थापक

आर्य पथिक धर्मवीर पं. लेखराम जी

(ले०—श्री वेदव्रत जी 'मलिक' विद्याधिकारी गुरुकुल भैंसवाल (रोहतक)

आर्य समाज के परिमित मंडल में कोई भी ऐसा व्यक्ति न होगा जो धर्मवीर श्री प० लेखराम जी आर्य पथिक के नाम और काम से परिचित न हो। परन्तु आर्यसमाज से बाहर भी करोड़ों मनुष्य श्री पं. लेखराम जी के नाम से परिचित है।

आपका जन्म ८ चैत्र स. १९१५ वि० को शुक्रवार के दिन सैय्दपुर ग्राम में हुआ। आपके पिता का नाम श्री प. तारासिह जी महता था। आपके पिता की चार सन्तानें थीं। जिनमे आप सबसे बड़े थे। आपके चाचा का नाम श्री पं. गण्डाराम जी महता था। था। जो पेशावर पुलिस मे डिप्टी इन्सपेक्टर थे। आपको भी ग्रामीण बच्चों की तरह ६ वर्ष की आयु मे पढने के लिए भेजा गया। इसके बाद आपको आपके चाचा जी अपने पास पेशावर ले गये। तथा वहा पर आपके पढने का प्रबन्ध कर दिया गया। इसी समय आपने अपनी चाची को एकादशी का उपवास रखते देखकर अपने आप भी उपवास रखना आरम्भ कर दिया। इससे सिद्ध होता है कि आप का मन बचपन से ही धार्मिक विचारों की तरफ था।

आप सं. १९३२ वि. के पौष मास में पेशावर पुलिस में सारजेण्ट क पद पर लग गये। इस समय आपने एक धार्मिक सिख सिपाही के संग से परमात्मा की उपासना करनी आरम्भ कर दी थी। आप प्रतिदिन गीता का पाठ करते थे। इस समय आप के विचार सर्वथा नवीन वेदान्तियों के साथ मिलते थे। जब आपकी आयु २१ वर्ष हो गई। तब माता पिता ने आपके सामने विवाह का प्रस्ताव रखा। परन्तु आपने स्पष्ट रूप से अस्वीकार कर दिया। इससे मालूम होता है कि आपके उस समय वैरागियों के से विचार थे। एक दिन आप काशी से सटीक गीता मगाकर व्याख्या सहित पढ रहे थे

कि उस समय आपके मन मे लुधियाने के मुशी कन्हैयालाल अलखधारी के ग्रन्थों के पढने की उत्कण्ठा हुई। तत्काल आपने अलखधारी के सब प्रसिद्ध ग्रन्थ मंगाकर पढने आरम्भ कर जिससे आपको आर्य समाज तथा स्वामी दयानन्द के काम का पता चला।

इसी समय आपने स्वामी दयानन्द जी के प्रसिद्ध ग्रंथ मंगाकर पढने आरम्भ कर दिये। स्वामी दयानन्द जी के ग्रन्थों के पढने से आप के विचार पलट गये। तथा आप आर्य बन गये। आपने आर्य समाज का प्रचार करने के लिए सन १८८० मे ई० मे पेशावर मे आर्य समाज की स्थापना की। जिसके आरम्भ मे केवल ५ सदस्य बने। इसके आप ही सर्वे सर्वा थे।

यद्यपि आप आर्य बन गए थे तथापि आपके मन मे अभी तक कुछ शंकाए थीं। इसलिए आपने शंका निवारणार्थ स्वामी दयानन्द जी के दर्शन करने का निश्चय कर लिया। अपने निश्चयानुसार साढ़े ४ वर्ष की नौकरी के बाद १ मास का अवकाश लेकर आप ११ मई स. १८८० ई० को स्वामी जी के दर्शनार्थ अजमेर चल दिए। वहा १७ मई को सेठ फतेहमल की वाटिका मे पहुंचकर स्वामी दयानन्द जी के प्रथम व अन्तिम दर्शन किये। वहा पर स्वामी जी से शंका समाधान किया। स्वामी दयानन्द जी के सत्योपदेश से आपके सब संशय निवृत्त हो गये। इसके बाद स्वामी दयानन्द जी ने आपको २५ वर्ष से पहले विवाह न करने की आज्ञा दी। ऋषि दयानन्द जी के थोडे से ही सग से आप सच्चे आर्य बन गए।

अजमेर से वापिस आकर आप ने पेशावर आर्यसमाज की ओर से 'धर्मोपदेश' नामक मासिक पत्र निकालना आरम्भ किया। तथा सम्पादक का भार भी आपने ही लिया। जिससे जनता मे वैदिक धर्म का बहुत प्रचार हुआ। आपने ग्राम-ग्राम में जाकर जनता को वैदिक धर्म का सन्देश सुनाया। आपकी इस धामिक प्रचार की लगन को देखकर मुस्लिम पुलिस अधिकारी आपसे शास्त्रार्थ करते थे। परन्तु उनको अपने मुह की खानी पडती थी। उन्होंने चिढ़कर आपकी पेशावर से कालूखा के स्थान पर बदली कराकर अपनी पराजय का बदला लिया था। परन्तु बदली ह ने से आपके काम मे बाधा नहीं हुई। बल्कि मनुष्य को अत्याचार क दासत्व से मुक्त कराने में सहायता दी। २४ जौलाई सन १८८४ ई० को सदा क लिए आपने पुलिस की नौकरी स त्यागपत्र दे दिया और ३० सितबर १८८४ ई० को मनुष्यों के दासत्व से सदा के लिये मुक्त हो गए। इसके बाद आप आर्य पथिक बन गए।

इन्हीं दिनों कादिया के 'मिर्जा गुलाम अहमद' की बनाई हुई 'बुराहीन अहमदिया तथा सुरमा चश्म आरिया' नामक पुस्तके प्रकाशित हुई। जिन में आर्यसमाज का विरोध किया गया था। इन पुस्तकों के छपने से आपके दिल को बहुत चोट लगी। इस लिए आपने 'बुराहीन अहमदिया' के खण्डनार्थ 'तकजीब-बुराहीन-अहमदिया' नामक पुस्तक लिखी तथा 'सुरमाचश्म आरिया' के खंडनार्थ 'नुसखा खब्त अहमदिया' नामक पुस्तक लिखी। इन से महम्मदी मत का बहुत प्रबल खडन हुआ। जिससे उस मत का प्रभाव जाता रहा। जहा भी आर्य समाजियों के साथ महम्मदी मत वालों का शास्त्रार्थ होता था, वहीं आप पहुँच जाते थे और दूसरे लोग आप की उपरोक्त पुस्तकों से सहायता लेते थे।

आपने जहां धर्मप्रचार किया वहा शुद्धि सुधार भी अत्यधिक किया। जिन मे मुजफ्फर नगर के जाट रईस चौ० घासीराम जी और सिंध के रईस दीवान सूर्यमल जी और उनके दोनो पुत्रों के नाम उल्लेखनीय है जिनमे शड़े का नाम दिवान मेवाराम था।

आप का ज्येष्ठ स० १९५० वि० के आरम्भ मे ३६ साल की आयु मे मरी-पर्वतान्तरगत भन्न ग्राम निवासिनी कुमारी लक्ष्मीदेवी के साथ पूर्ण वैदिक रीति से विवाह सस्कार हुआ। जिस के गर्भ से १८ मईसं० १८९५ ई० क दिन एक पुत्र रत्न उत्पन्न हुआ। जिस का नाम आप ने सुखदेव रखा। जिस की बाद मे १॥ वर्ष की आयु में मृत्यु हो गई। इस हृदय विदारक घटना से भी आप का उत्साह कम नहीं हुआ। इस के विपरीत आपने दुगने उत्साह से वैदिक धर्म के प्रचार का काम किया। जब आप के प्रिय पुत्र की मृत्यु हुई। उस समय पंजाब में मास भक्षण विषय पर विवाद चल रहा था। इसलिए आपने इस विवाद को समाप्त करने का निश्चय किया तथा अपने निश्चयानुसार मास भक्षण खंडनार्थ एक ग्रथ लिखा। जिसका नाम 'आर्यसमाज में शान्ति फैलाने के उपाय और श्री रामचद्र जी का सच्चा दर्शन' है। आप ने इस ग्रथ मे वैदिक प्रमाणों से मास भक्षण का खंडन किया है।

क्रमश

साम्बा में आर्य समाज, प्रचार

१८/२/६४ से २०/२/६४ तक तीन दिवस श्री मेला राम जी और हरबंसलाल जी भजनीक उपदेशकों द्वारा बहुत प्रभाव शाली सामाजिक प्रचार किया गया आर्य समाज साम्बा आर का कार्य है।

आर्य प्रादेशिक समाज नाभा पंजाब

आर्य हाईस्कूल नाभा के विशाल भवन में धनी मानी सेठ राजेन्द्र प्रसाद जी मलिक की अध्यक्षता में ऋषि बोध उत्सव समारोह के साथ सम्पन्न हुआ। छात्रों ने बोधोत्सव सम्बन्धी लेख, कविताएं भाषणों से इस समारोह को मनोरंजक बनाया। विजयी छात्रों को पारितोषिकों से सम्मानित किया तथा निर्धन छात्रों को वस्त्रादि से सहायता की।

अन्त में श्री प्रो० बी० बी० शर्मा व श्रीमती विमला बत्रा ने ऋषि जीवन पर भाषण दिए। बाद में श्री ला० वेगराज जी भाटिया ने धन्यवाद भाषण के साथ कार्यवाही समाप्त की।

परमानन्द
मन्त्री समाज

आर्यसमाज पुरानी मंडी में ऋषि बोधोत्सव

आर्यसमाज पुरानी मंडी जम्मू में इस वर्ष जम्मू की समस्त समाजों की ओर से सम्मिलित रूप में ऋषि बोधोत्सव बड़ी धूम-धामसे मनाया गया हवन यज्ञ के पश्चात् में आर्य-कन्यामहाविद्यालय की लड़कियों की ओर से भजनों-प्रस्तावों और आपसी बात-चीत के द्वारा ऋषी जीवनी पर अपने विचार रखे। श्री प्रोफैसर सुलतानमुहम्मद जी ने ऋषि को अपनी श्रद्धाञ्जली भेंट करते हुए वेदों की महानता पर व्याख्यान दिया श्री हरिश्चन्द्र जी शास्त्री तथा देवेन्द्र कुमार जी शास्त्रीके भी प्रभावशाली व्याख्यान हुए। रातको बख्शीनगर कोटकी सैक्टर में भी धूम-धामसे मनाया गया—

आर्य समाज गोबिन्द नगर कानपुर का चुनाव

प्रधान श्री राम लाल जी आनंद, उप-प्रधान श्री कंवरनाथ मिसरी, मंत्री श्री मोहन लाल जी, उपमंत्री श्री अश्विनीकुमार जी, कोषाध्यक्ष— श्री शिवदयाल टुटेजा, पुस्तकाध्यक्ष— श्री जगन्नाथ जी कपूर। अंतरंग सदस्य देवीदास आर्य, डी. एन. उप्पल, अमीचन्द्र जी महेशचन्द्र कुमार, रामसहाय जी। पुरुषार्थ लाल आर्य निरीक्षक।

—मोहनलाल मन्त्री समाज

वैदिक साधन-आश्रम, तपोवन देहरादून

में गायत्री-महायज्ञ और साधना-शिविर। सब प्रभु भक्तों और यज्ञ प्रेमी सज्जनों को सूचित किया जाता है कि वैदिक साधन आश्रम तपोवन जो देहरादून रेलवे-स्टेशन से लगभग तीन मील की दूरी पर बहुत सुन्दर एवं रमणीक जंगल में स्थित है। जिस में २५ हजार आहुतियों का गायत्री महायज्ञ श्री महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज की अध्यक्षता में १६ अप्रैल १९६४ से २० अप्रैल १९६४ (७ वैशाख) तक होगा। आत्मदर्शन की इच्छा रखने वाले साधकों को श्री महात्मा जगन्नाथ जी साधना करायेंगे। इन्हीं दिनों में पूज्यपाद श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती का सत्संग भी आपको मिलेगा। ब्रह्म-चारी महेश जी के श्लोक और भक्ति के गीत भी आपको सुनने को मिलेंगे ब्रह्मचारी [illegible] और योगासन सिखायेंगे। आशा है कि श्री पंडित ऋषिराम जी बी०ए० भी पधारेंगे, दर्शनाचार्य श्री पंडित जगदीशचन्द्र जी शास्त्री के उत्तम भाषण भी आप सुन सकेंगे।

आपकी सेवा में प्रार्थना है कि इस शुभावसर पर 'वैदिक साधना आश्रम तपोवन देहरादून' में अपने मित्रों सहित पधार कर लाभ उठावें। अपने, यहा पहुंचने की सूचना आज ही यहा भेजिए, ताकि स्थान का प्रबन्ध किया जा सके।

— हरिचन्द्र बत्रा
प्रबन्धक वैदिक साधनाश्रम तपोवन

बम्बई में नाम करण संस्कार

श्री भगवान देवजी आर्य के निवास स्थान पर१९ से२३ फरवरी६४ तक पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज ने तीन दिन तक मधुर प्रवचन दिया। इसी अवसर पर गायत्री यज्ञ और बालक का नाम करण संस्कार हुआ। उपस्थित इष्ट मित्रों व सम्बन्धियों ने बालक को दीर्घायु होने का आशीर्वाद दिया। तत्पश्चात् उपस्थित सज्जनों को श्रद्धा पूर्वक भोजन कराया गया।

आर्यसमाज शांताक्रूज बम्बई

का वार्षिकोत्सव२७फरवरीसे १मार्च ६४ को बड़े समारोह से सम्पन्न हुआ। पं० रुद्रदत्त जी शास्त्री की रात के समय वेद कथा होती रही। पूज्य आनन्द स्वामी जी महाराज,स्वामी सम्पूर्णानन्दजी महाराज संन्यासियों ने तथा जगदीशचन्द्र जी दर्शनाचार्य प० रामनारायण जी शास्त्री आदि विद्वानों के विद्वत्तापूर्ण भाषण होते रहे।

आर्य प्रचार समिति बम्बई

का वार्षिकोत्सव तथा दयानन्द बोधोत्सव ८ फरवरी तक बड़ी धूम धाम से सम्पन्न हुआ। ४ फरवरी को सायं ४ बजे शोभा यात्रा प्रारंभ हुई जिस में आर्य सभासदों के अतिरिक्त एक हजार के लगभग स्कूल के छात्र छात्राओं ने भागलिया। उत्सव में श्री पूज्य आनन्द स्वामी जी महाराज के प्रवचन तथा, श्री P.N. शुक्ला आदि के भाषण होते रहे। अनेक सम्मेलनों का भी आयोजन किया गया। उत्सव सब प्रकार से सफल रहा।

दयानन्द-वचनामृत

"महन्त जी! यदि मेरे मन में माया की भूख होती, तो मैं धनधान्य-पूर्ण अपने पितृ-प्रासाद का क्यों परित्याग करता? वहां तो आपके चढावे में चढ़े, पूजा पाठ से आये, यन्त्र-मन्त्र से कमाये, और नाना लीलाओं से लिए हुए रुपयों से कहीं अधिक ऐश्वर्य था। 'महाशय, जिस वस्तु की खोज में मैंने घर-बार और सांसारिक सुखों को सदा के लिए तिलाञ्जलि दे दी है, मैं देखता हूं, आप लोगों को उसका कुछ भी ज्ञान नहीं इस कारण आपका चेला बनना तो दूर रहा, मेरा तो यहां रहना भी असंभव है।"

(स्वामी सत्यानन्द जी)

आर्यसमाज कलैक्टर कालोनी चेंबूर को सात्विक दान

श्री मान ला. जयदेव जी प्रधान आर्यसमाज चेंबूर ने ५०००), श्री रामदास, जीवनलाल जी कुआजी वालों ने अपने माता-पिता जी की पुण्य स्मृति में ३१) श्री प्रतापसिंह सूर जो प्रधान आर्य प्रचार समिति ने चार दीवारी बनाने का वचन दिया। मंत्राणि आर्य स्त्री समाज चेंबूर ने २६०)

मुद्रक व प्रकाशक श्री सतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टैलीफोन न० ३०८७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd No P. 1

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे — वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अक ११) ३ चैत्र २०२० रविवार—दयानन्दाब्द १४०— १५ मार्च १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

वयं सख्याय स्वरतये

हम अपने सुख कल्याण के लिए, हे परमेश्वर ! आपको अपना परम सखा बनाते हैं । उसी भगवान को ही परम सखा बना लेने पर मानव को हर प्रकार की सुख-शान्ति मिलती है, जीवन सुखमय बन जाता है। जिस का भगवान् परममित्र बन जाए उसे क्या चिंता ?

हुवेम वाज सातये

हे पित ! हम आपको पुकारते हैं, प्रार्थना करते हैं, इस लिए कि हमे आपकी कृपा से ज्ञान, बल प्राप्त हो । अन्न आदि भोग्य पदार्थ मिलें । इनके आप ही तो भण्डार हैं, दाता हैं। फिर आपके भण्डार के द्वार छोड़कर भला और किसके द्वार पर जाए ?

न कि इन्द्र त्वदुत्तरम्

हे इन्द्र प्रभो ! आपसे बढ़-कर कोई भी उत्तर उत्तम या ऊंचा नहीं है । आप ही सब से उत्तम ऊंचे हैं । आपकी भक्ति से ही हमे जीवन में हर प्रकार की सुख सुविधा की सामग्री मिलती है । आप महान् बलवान् हो। साम वेद से

वे दा मृ त

मनसा परिक्रमा मन्त्राः

ओम् प्रतीची दिग्वरुणोऽधिपतिः पृदाकू रक्षितान्न मिषवः तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्योऽस्तु । योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥ अथर्व कां० ३ सू० २७ मन्त्र ३

अर्थ—हे भगवन ! आप (प्रतीची दिग्) इस पश्चिम दिशा मे भी (वरुण) सब से पूज्य वरुण रूप में (अधिपति) सब के स्वामी बन कर व्यापक हो । वहा पर जो (पृदाकू) विषैले जीव जो हैं उन से (रक्षिता) हमारी रक्षा करते हो । (अन्नम) जितना भी अन्नादि भोज्य पदार्थ हैं वह (इषव) बाणों के रूप से भुखादि से रक्षा करते हैं । उन अन्न आदि पदार्थ रूपी बाणों का हम सदा आदर करते हैं । वे पदार्थ हमारे जीवन के परमोपयोगी हैं, वे हमारे जीवनधारण मे सदा सहायक हैं वही हमारी नाना व्याधियों से बाणों के रूप मे रक्षण करते हैं । (य अस्मान) जो हम से द्वेष करता है या (यं वय द्विष्म) जिसे हम द्वेषभाव से देखते हैं—प्रभो ! उसे आपके न्याय मे भेंट करते हैं ।

भाव—परमात्मन् ! आप से विलग होकर मेरा चचल चित्त पश्चिम दिशा मे भी भटक २ कर थक गया । वहा पर भी आप की सर्वव्यापकता की भव्य झलक देखी । पश्चिम दिशा में आप वरुण के नाम से प्रसिद्ध हो रहे हो । आप वरुण हो, सारा विश्व आपको ही वरणीय समझता और पूजता भजता है । सारा ससार आपको ही अपना वरुण मान कर पूजन वन्दन में लगा हुआ है । जितने भी उस दिशा मे विषैले जहरीले प्राणी जन्तु हैं, उन से एकमात्र आप ही तो हमारे जीवन की रक्षा करते हो । आपके बिना और हमारा परित्राता हो सकता है ? हम आपके इन रक्षा करने के नाना साधनों को पुन २ नमस्कार करते हैं । इन बाणों के रूप शक्तियों का समादर करते हैं । जो हमारे द्वेषी हैं उनको आपके अटल नियमों की भेंट करते हैं—सं०

ऋषि दर्शन

सर्वे लोका नियमेन

ये सूर्य आदि सारे लोकान उसी परमेश्वर के नियमों ं अपने २ काम में लगे हुए हैं वही इन सब का लोकाधिपि है क्या मजाल जो तनिक भ उस भगवान के रचित नियम को तोड कर इधर हो जाये ।

लोकानां व्यवस्थापकः

वही महान भगवान ही इन सारे सूय आदि लोकों की व्यवस्था करने वाला है वही महान व्यवस्थापक है । मनुष्य की व्यवस्था प्रबन्ध मे तो नाना प्रकार की गडबड होती रहती है, पर उस की व्यवस्था में लेश मात्र भी गडबड नहीं हो सकती

आश्चर्यस्वरूपः सः

वह प्रभु महान् आश्चर्य-स्वरूप है, अद्भुत है, रहस्यमय है । उस पहेली को आज तक पूर्ण रूप से न कोई समझ सका है और न समझ ही सकता है । उस की रहस्य भरी सृष्टि का पार ही जब नहीं पाया जा सका तो उस का तो कहना ही क्या—

भा ष्य भू मि का

अधिष्ठाता—संतोषराज सभा मंत्री — सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्

मन को वश करने के तीन साधन

ज्ञान-प्राण और ध्यान

(पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज)

मन के वशीकार करने के साधनों का विवेचन करते हुए पूर्व के दोनों ज्ञान और प्राण के सम्बन्ध में प्रसंग के क्रम से सचेप से कहा जा चुका है। अब तीसरे साधन ध्यान के विषय में विवेचन किया जाता है। ध्यान का सरल अर्थ यह है कि ध्यायतेऽनेनेति ध्यानम् जिस साधन या प्रक्रिया के द्वारा ध्यान किया जावे उसे ध्यान कहा जाता है। योग के प्रमुख आठ अंगों में ध्यान का स्थान भी बड़ा प्रमुख है। योग दर्शन में लिखा है कि—तत्र प्रत्ययैक तानता ध्यानम् किसी तत्व को लेकर उस पर निरन्तर रूप से मन को लगाये रखना ध्यान कहलाता है। जिस समय मन की ऐसी अवस्था बन जाती है। कि वह किसी एक तत्व पर पूर्णतया टिक जाता है। उस की चचलता समाप्त हो जाती है, उस अवस्था को ध्यान की अवस्था का नाम दिया है। किन्तु चित्त की इस नितान्त एकाग्रता की दशा को प्राप्त करने के लिए बड़े अभ्यास की आवश्यकता है ऐसी बात नहीं कि जब मन में आया तो अभ्यास के लिए बैठ गये और फिर कई २ दिन समय निकाला ही न जा सका। न ही अभ्यास के लिए बैठना ही आवश्यक समझा। यदि बैठ भी गये तो अनमने चित्त के साथ बैठे। ऐसी स्थिति मे ध्यान नहीं लगा करता। योग दर्शन में इस बारे में स्पष्ट शब्दों में कहा है कि चित्त की भूमि-अवस्था को इस दशा पर लाने के लिए तीन विशेष बातों की बड़ी आवश्यकता है। इसके लिए सावधानी करनी पड़ती है। ध्यान का अभ्यास निरन्तर नियमित रूप से किया जाना चाहिए। इस प्रकार लगातार के अभ्यास से मन में इस के लिए रुचि पैदा हो जाती है। उस की चचलता धीरे २ एकाग्रता मे परिवर्तित होती जाती है। कभी२ किया गया अभ्यास ध्यान की अवस्था को परिपक्व नहीं कर सकता। अत. पहिली बात यह है कि निरन्तर अभ्यास का स्वभाव बना डालो। जैसे किसी काम का स्वभाव बन जाये। यह स्वभाव निरन्तर की जाने वाली अभ्यास की क्रिया प्रक्रिया से ही प्राप्त किया जाता है।

दूसरी बात इस के लिए यह है कि निरन्तर पन के साथ साथ साथ दीर्घकाल तक इसे जारी रखो अभ्यास करते हुए जब कुछ समय हो जाये तो घबराना नहीं चाहिए उदास या निराश नहीं होना चाहिए कि इतना समय हो चुका है किन्तु अभि तक विशेष तत्व मिला नहीं है। ऐसा विचार भी साधक को कोई लाभ नहीं पहुंचा सकता। प्रत्येक बात के लिए समय लगता है। साधारण से वृक्ष के लिए कितना यत्न करना पड़ता है। पहिले अकुर है, फिर पौदा होता है, उस के लिए जल सिचन आदि की ओर ध्यान देना ही होता है। तब कितने समय के बाद वृक्ष बन कर पत्ते, फूल और फलों से युक्त होता है। जब हम बाहिर के तत्वों के लिए इतना ध्यान कर के यत्न करते हैं, तो मन के वशीकार द्वारा प्राप्त होने वाली सम्पत्ति के लिए हमे प्रयत्न की आवश्यकता नहीं है?

बुराई को ?

(ले० अशोक कुमार जी आर्य समाज रेलवे रोड हिसार)

"Evil events from evil-Aristophanes

हमें समस्त विश्व में बुराई ही बुराई दृष्टिगत होती है। अगर मन में बुरे विचार भर जायें तो सत्य वहां से भाग जाता है।

At the arrival of evil, the truth is parted.

कोई भी व्यक्ति इसलिये बुराई नहीं करता कि उसे, दूसरे को दुःखी देखकर असीम प्रसन्नता मिलेगी। परन्तु वह बुराई उसके मन को सन्तुष्ट करने वाली होगी क्योंकि उसे भी तो किसी ने अवश्यमेव तग किया होगा।

प्रत्येक कार्य के साथ कोई न कोई कारण जुड़ा ही रहता है। क्योंकि Cicero ने ठीक ही कहा है —

"Reason is the mistress and queen of the things"

आजकल जितनी भी बुराईया दृष्टिगोचर होती हैं क्या वे अपनी इच्छा से ही की जाती हैं ? नहीं बिल्कुल नहीं।

क्या किसी ने सोचा इनके बारे में ? सब Yes man (हां में हां मिलाने वाले) बने हुये है।

'किसी भी बुराई की जड़ मजबूरी है।'

व्यक्ति मजबूर होने पर ही बुराई का सहारा लेता है। मजबूर व्यक्ति कोई भी कार्य कर सकता है। मजबूरी का दूसरा नाम असन्तुष्ट है। सन्तुष्ट व्यक्ति कभी कोई बुराई नहीं कर सकता। कई व्यक्ति ऐसे भी होते हैं जो अपने बच्चों को मजबूर करते रहते हैं और फिर कहते हैं 'हम क्या करें, हमारे बच्चे बहुत नालायक हैं, कुछ करते ही नहीं।'

किसी व्यक्ति का चरित्र जानने के लिये उसके बच्चों का चरित्र देखना चाहिये। वह अपने चरित्र के अनुसार अपने बच्चों का चरित्र बनाता है।

कोई भी बच्चा तभी धार्मिक विचारों का हो सकता है जब वह सन्तुष्ट तथा प्रसन्न हो।

'The best way to make children good is to make them happy."

Wilde

अत. कोई भी बुराई किसी न किसी कारण पर निर्भर होती है अर्थात असन्तुष्ट पर निर्भर है। अगर असन्तुष्ट तथा मजबूरी को समाप्त कर दिया जाये तो बुराई का नामो निशान मिट जाये।

मेधार्थी जी का टंकारा ट्रस्ट से असम्बन्ध

श्री मेधार्थी जी के कार्य से टंकारा ट्रस्ट का कोई सम्बन्ध नहीं है। श्री मेधार्थी जी टंकारा को अपना केन्द्र बनाकर प्रचार करने की भावना से पधारे थे, अब अपना केन्द्र जामनगर ले गए हैं और बम्बई प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभाके सहयोग से काय कर रहे हैं।

आर्य समाज शान्ता कूंज बम्बई

का वार्षिकोत्सव 27 फरवरी से 1 मार्च 1964 को बड़े समारोह से सम्पन्न हुआ। प० रुद्रदत्त जी शास्त्री की रात के समय वेद कथा होती रही। पूज्य आनंद स्वामी जी महाराज, स्वामी सम्पूर्णा नंद जी महाराज सन्यासियों ने तथा जगदीशचन्द्र जी दर्शना चार्य. प० राम नारायण जी शास्त्री आदि विद्वानों के विद्वत्ता पूर्ण भाषण होते रहे।

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२०, १५ मार्च १९६४ [अंक ११

अमरशहीद लेखराम

आर्य समाज का विशाल भवन बलिदान की शिला पर रखा गया है। इस के महान् संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपना जीवन बलिदान दे कर स्वयमेव आदर्श पेश कर दिया। अन्य किसी साधारण पर बनाई गई भित्तियां थोड़े समय में ही गिर जाती हैं। परन्तु बलिदान पर बनाया गया भवन बड़े से बड़े भूचाल से भी प्रकम्पित नहीं होता। आर्य समाज का सारा इतिहास ही बलिदानों एवं संघर्ष का इतिहास है। नरमेध या सर्वमेध का जीता जागता उदाहरण देखना हो, धर्म तथा विश्व कल्याण के लिए महान् उत्सर्ग का परिचय प्राप्त करना है, समाज सेवा के निमित्त अपने जीवन को समिधा बना कर आहुत करने का आदर्श पाठ पढ़ाना हो तो उस के लिए आर्य समाज की परम्परा भरी पड़ी है। गुरु विरजानन्द से आरम्भ हो कर वीर सुमेर तक सारी जीवन माला में इसी बलिदान के ही मनोरम मोती पिरोये हुए मिलते हैं। उसी जीवन मेध की गाथा में अमर शहीद पण्डित लेखराम का नाम भी आता है।

अभी २ गत ६ मार्च का दिन सारे आर्य जगत् ने अपने २ स्थान पर इस बलिदानी वीर लेखराम जी का पुण्य दिवस मनाया। लेखराम नगर कादियां जिला गुरदास पुर में यह दिवस बीसियों वर्षों से महान शहीदी मेले के शानदार रूप में तीन दिनों के लिए मनाया जाता है। वहां की तो कुछ ऐसी परम्परा सी बन गई है कि इसे सारा जिला ही मिल कर मनाता है। नगर की सारी जनता इस शहीदी मेले को अपना मेला समझती है। अमरशहीद के जयघोषों से सारा नगर गूंज उठता है। हिन्दु सिक्खसज्जनों का इस मेले साझा प्यार देख सुन कर चित्त बड़ा ही प्रसन्न हो जाता है। हमारा विचार है कि इस वार्षिक शहीदी मेले को पंजाब की दोनों सभाएं आर्य प्रादेशिक सभा तथा आर्य प्रतिनिधि सभा मिल कर मनाने का अपना साझा सहयोग देवे तो इस में सारे समाज का गौरव है इस पर दोनों सभाओं के मान्य सज्जन अवश्य गम्भीरता पूर्वक ध्यान देंगे ऐसी पूर्ण आशा है। आरम्भ में ऐसा कार्य किया भी जा चुका है। इस का भारी प्रभाव होता रहा। वही पुरातन दृश्य आज फिर सारी जनता देखना चाहती है। अमर शहीद का साझा यह मेला एक नया अध्याय खोल देगा।

बलिदान दिवस तो आया और गया। उस देवता ने तो अपना सर्वस्व भेंट कर के शहादत का प्याला पी लिया। उत्सर्ग एवं बलिदान से जीवन में पाठ पढ़ेंगे या नहीं? हम समाज के लिए क्या भेंट करते हैं। समय, सम्पत्ति तन, मन, धन जो हमारे पास है, उस में से समाज को हम क्या देते हैं आज समाज हम से मांग करता है। तन वाले शरीर से समाज की सेवा करें मन वाले मनोयोग तथा धनवाले समाज के लिए धन देवें। आज का समाज आप से बलिदान मांगता है—क्या आप देंगे?

—त्रिलोक चन्द्र

शराब बढ़ रही है

****

राष्ट्र विभाजन से पूर्व जनता सुनहले स्वप्न लिया करती थी कि विदेशी सत्ता के चले जाने तथा शासन सूत्र अपनों के हाथ में आने के बाद भारत सारे विश्व में महान आदर्श उपस्थित करेगा। महात्मा मनु के पवित्र भावों के अनुरूप इस देश का प्रत्येक नर-नारी जीवन का प्रकाश स्तम्भ बन कर सारे विश्व को अपने आचार-विचार के उदात्त पाठ पढ़ायेगा। किन्तु ज्यों २ समय गुजरता गया, त्यों २ देश के जीवन में विलास का वातावरण अधिक गहरा होता गया। संस्कृति व कला के नाम पर नाचगान ने वह चित्र पेश किया जिसे देख कर लज्जा को भी लज्जा आने लगी भारत जिस उच्चता के लिए विश्वविख्यात था वह समाप्त करने के अपनों द्वारा प्रयत्न जारी हुए। सारा देश ही विलासी बन कर नवाब वाजिद अली के समान रंगीला बनने लगा। हमारे देश के वृद्धनेता भी युवतियों के नाच देखने में विभोर होने लगे। चीन के आक्रमण ने यदि झटका न दिया होता तो पता नहीं कि देश किस स्थान पर जा खड़ा होता। अब भी फिर उसी विलासपथ पर बढ़ने लगा है।

जीवन के पतन का मार्ग केवल इस दिशा में ही भयंकर नहीं दिखाई देता अपितु गिरावट की और बातों का चित्र भी सामने है। देश में प्रान्तों की सरकारों ने अपने २ प्रान्त में शराब को बन्द करने के लिए प्रयत्न किये। किन्तु बना क्या? शराब आगे से भी बढ़ती चली गई। जिसका परिणाम यह निकला कि कई स्थानों से इस प्रतिबन्ध को हटा लेने की जोरदार मांग की जा रही है हम अपने प्रान्त पंजाब की अवस्था देखते हैं कि यहां की स्थिति कितनी भीषण है। इस बार जालन्धर की रिपोर्ट समाचार पत्रों में निकली है जिसे पढ़कर कितनी लज्जा अनुभव होती है। गतवर्ष शराब का ठेका लगभग डेढ़ लाख रुपए में नीलाम हुआ था पर इस वर्ष के ठेके की जो बोली नीलामी हुई है वह चार लाख है। यह केवल एक स्थान का हाल है तथा उस स्थान का चित्र है जहां पर प्रान्त की अपनी दोनों सभाओं का केन्द्र है, विशाल संस्थाएं हैं, सनातन धर्म सभा भी है तथा अन्य सुधारक संस्थाएं भी मौजूद हैं। पंजाब के अन्य जिलों का क्या हाल होगा। अनुमान कर लेवें।

यही अवस्था मछली, अंडों तथा अन्य मांस की खपत के बारे में कही जा सकती है। उस दिन समाचार पत्रों में केवल अमृतसर नगर के मांस खपत के आज के आंकड़ों को पढ़कर दिल पर भारी चोट लगी। आज सरकार के लिए मुर्गी पालन, सूअरपालन, मछली-पालन, बकरापालन को कितना प्रश्रय दे रही है, कौन नहीं जानता उस सर्वप्रिय अशोक को आदर्श मानने वाली हमारी सरकार अशोक होटल, अशोक स्तम्भ वाले राज्य में अंडे खिलाने का कितना प्रचार कर रही है सामने है। इन सारी बुराइयों को कौन रोकेगा। आर्य समाज से ही इस प्रवाह को रोकने की आशा की जा सकती है—आर्यो! मैदान में उतरो।

—त्रिलोकचन्द्र

———

कुञ्जपुरा का समारोह

आर्य समाज कुंजपुरा का वार्षिक यज्ञ व महोत्सव इस बार भी धूमधाम से सम्पन्न हुआ। समाज के प्रधान श्री चौ० गणेशदास जी, अनथक कार्यकर्ता श्री गोविन्दराम जी, श्री नन्दलाल जी, श्री पण्डित जी, श्री राधेश्याम जी आदि सज्जनों के प्रेम, उत्साह से यहां पर यह सप्ताह का धर्ममेला शानदार ढंग से होता है। अथर्व वेद के यज्ञ व जल्से में इस बार जिले के पुराने अनथक कार्यकर्ता श्री प० विश्वम्भर दत्त जी, सभा से श्री प० ओ३म् प्रकाश जी आर्य, श्री प० त्रिलोक चन्द्र जी शास्त्री, श्री प० राजपाल मदनमोहन जी की भजन मंडली, श्री प० मेलाराम जी रेडियो सिंगर, श्री प० अमरसिंह जी, श्री पं० जगतराम जी, प० बस्तीराम जी, श्री सुभाष जी, चौ० नत्थासिंह जी आदि पधारे। यज्ञ के साथ ७ दिन रात प्रचार भी होता रहा।

करनाल से इलाके के प्रसिद्ध डा० गणेशदास जी, श्री मामचन्द जी प्रधान दयालपुरा समाज, वि० मेलाराम वर्क, श्री ला० हुकमचन्द जी उपप्रधान, पानीपत से प्रो० उत्तम चन्द जी शरर एम० ए० भी पधारे। राष्ट्र रक्षा सम्मेलन बड़ा ही शानदार था। श्री कामरेड रामप्यारा एम० एल० ए० ने भी प्रभावशाली विचार प्रकट किये। प० विश्वम्भर दत्त जी ने पूर्णाहुति पर आशीर्वाद दिया। डा० गणेशदास जी ने समाज द्वार का शिलान्यास किया। यज्ञ व जल्सा बड़े ही समारोह से समाप्त हुआ।

वेदभक्त मंगतराय जी

आर्य समाज को जहां धनी-मानी, शिक्षा विशारद, विद्वानों का सहयोग तथा आशीर्वाद प्राप्त है, वहां वेद एवं ऋषि के लिए जीवन में मस्ती रखने वाले भी मिले हुए हैं। रम्बोली ग्राम जिला करनाल के निवासी प्रिय दयानन्द व श्रद्धानन्द के पिता चौ० मंगतराम भी उन्हीं वेद भक्तों में गिने जा सकते हैं। वेद प्रचार के कितने प्यारे तथा स्वामी दयानन्द के कितने भक्त हैं आर्यसमाज के कैसे दीवाने हैं— यह लिखने की बात नहीं वरन् देखने से ही सम्बन्ध रखता है। करनाल के सारे इलाके में ही उनकी इस मस्ती की धूम है।

गत दो तीन दिनों के लिए मुझे तथा पं० राजपाल जी मदनमोहन जी मंडली को उनकी सुपुत्री सौभाग्यवती सत्यवन्ती के शुभ विवाह पर सभा कार्यक्रम पर जाने का सौभाग्य मिला। विवाह में सादगी, धर्म का प्रेम, वेद प्रचार की लगन देखकर मन प्रसन्न होता था कि ऐसे भक्त भी आर्यसमाज में मौजूद हैं। तथा रात को प्रातः काल खूब प्रचार हुआ। उनकी तो एक ही लगन है कि वेद का प्रचार होता रहे। स्वामी दयानन्द जी का नाम आते ही उनकी आंखों में प्रेम के आंसू आ जाते हैं। प्रभु ने उनका दिल बड़ा ही कोमल बनाया है। समाज के बड़े ही मस्ताने हैं। इनके सारे परिवार तथा प्रियदयानन्द श्रद्धानन्द में भी यही भाव भरा है। सभा को वेद प्रचार में ५१) रु० मिले। प्रभु जोड़े को चिरंजीवी व परिवार को सानन्द रखे। आर्य समाज में ऐसे २ मस्ताने भी हैं। इस अवसर पर बरात तथा दूसरों को भी भक्ति स्तोत्र डेढ़ सौ की संख्या में प्रसाद के रूप में बांटा गया। ग्राम के सारे सज्जनों का भी इस अवसर पर पूरा २ सहयोग मिला। विवाह वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ। —सम्पादक

महाराष्ट्र दर्शन

(ले० श्री सत्यवीर जी शास्त्री पुरोहित आर्यसमाज शोलापुर)

भारत में जहां अनेक प्रान्तों का समावेश है वहां महाराष्ट्र का भी। लगभग भारत के सभी प्रदेशों से यह बड़ा होगा। इस का भूमि भाग भी अत्यधिक है। इस में ही जगप्रसिद्ध 'अजिण्ठा की लेणी' हैं। तथा इस प्रदेश का पंढरपुर' यह प्रसिद्ध तीर्थ क्षेत्र है। दूसरे कमाडूपर तुळजापूर की भवानी है जिसे महाराष्ट्र का कुल देवता माना जाता है, इन दोनों स्थानों का ही महाराष्ट्रीय जनता पर गहरा प्रभाव छाया है।

धार्मिकता का सर्वेक्षण करने से ज्ञात होता है, यह प्रदेश भी अत्यधिक उलझनों में फंसा है। ग्रामों का वातावरण भक्ति भावनाओं से परिपूर्ण है। प्रान्त के प्रायः सभी देहातों में बारहमास 'ज्ञानेश्वरी' की कथा मन्दिरों में होती रहती है। 'ज्ञानेश्वरी' यह संत ज्ञानेश्वर का मूल गीतापर किया हुआ भाष्य है। शास्त्रीय विधानानुसार चातुर्मास में प्राचीन काल में वेदों की कथाएं होती थीं उसकी अपभ्रंश परम्परा महाराष्ट्र में दिखाई देती है। विशेषतः श्रावण मास में सम्पूर्ण ग्रामों में कथाएं आरम्भ होती हैं, परन्तु यह वेद की न हो कर 'श्री विजय, हरिविजय, पाण्डव प्रताप, दासबोध, नवनाथ, आदि पुस्तकों की होती हैं। कथा को सुन ने वाले भी उसी प्रकार के होते हैं जैसे सतवचन महाराज वाले। कुछ कथा पर तर्क वितर्क किया उस शीघ्र ही नास्तिक की उपाधी मिल जाती है। एक बार मेरे मित्र डा० गणेशचन्द्र के आग्रह से कथा सुनने का अवसर मिला। रात्रि के लगभग ग्यारह बजे कथा सुनने हम चल पड़े। दूर से ही कथाकार की आवाज कानों में पड़ रही थी। कथाकार बड़े ही रोचक ढंग से गा गा कर कथा पढ़ता तथा मरहठी में सरल कर के अर्थ सुनाता जा रहा था। हम भी जा कर सुनने लगे। विषय था युद्ध का अर्जुन अपने धनुष से सहस्त्रों मनुष्यों को यम सदन पहुंचा रहे थे भगवान् कृष्ण रथ चला रहे थे। विस्मित करने की बात कथाकार ने सुनाई नीचे भगवान् कृष्ण सारथी का कार्य कर रहे हैं। रथ मध्य में धनुर्धारी अर्जुन बाणों की वर्षा कर रहे हैं और उन के रथ पर महाबली हनुमान जी बैठे थे। वह भी अपनी पूंछ से सैंकड़ों शत्रुओं का संहार कर रहे थे। पहली दो बातें तो ठीक लगीं परन्तु तीसरी ने मुझे शंका के लिए उत्सुक बना दिया। बारह बजे कथा आरती समाप्त हुई प्रसाद वितरण होने लगा तब मैंने पूछा हनुमान जी तो त्रेतायुग में राम के काल में हुए और वह द्वापर में फिर कैसे आगए युगों में लाखों वर्षों का अन्तर एक दो साल का भी नहीं, सभी को ही इस प्रश्न ने विचार में प्रवृत्त किया कुछ लोगों ने कहा, यह हमारे समझ में नहीं आता इस 'पाण्डव प्रताप' के लिखने वाले 'श्रीधर' कवि ने यह कैसा लिखा। मैंने कहा भाइयों आंखें खोल कर ही आप पढ़ें तथा सुनें तभी आप का भला होगा। हां में हां भरने वाली वृत्ति का त्याग करो।

जब कार्तिक मास का आरम्भ होता है तब भी सारे महाराष्ट्र में भावुक लोग लगातार प्रतिदिन चार बजे प्रातः उठ कर भजन करते तथा आरती करते हैं। आमिषाहारी इस कार्तिक मास में आमिष खाना भी छोड़ देते हैं।

(क्रमशः)

पुराणों और तन्त्रों का परस्पर घनिष्ट सम्बन्ध

(लि०—श्री पिंडोदास जी ज्ञानी प्रधान आर्यसमाज लोहगढ अमृतसर)

किसी व्यक्ति विशेष के जब बुरे दिन आते हैं तो उसकी बुद्धि विचलित हो जाती है, जैसा कि प्रसिद्ध लोकोक्ति है—'विनाश काले विपरीत बुद्धि'।

इसी प्रकार जब किसी जाति अथवा राष्ट्र के दुर्भाग्य का समय आ जाय तो उसके अग्रगण्य पुरुष लक्ष्य-भ्रष्ट हो जाते हैं। उनके अध पतन का साधारण जन-समुदाय पर चिरस्थायी प्रभाव पड़ता है जिस का दूर होना असम्भव सा हो जाता है।

महर्षि दयानन्द के अनुसार महाभारत युद्ध से एक सहस्र वर्ष पहिले से ही आर्यावर्त्त के दुर्दिन का आरम्भ हो गया था, जबकि आसुरी वृत्तियों की वृद्धि और दैवी सम्पत्तियों का ह्रास होने लग गया था। राष्ट्र के कुछ एक ब्राह्मण नामधारी व्यक्तियों के मस्तिष्क विचलित हुए, संस्कृत भाषा के विद्वान तो वे थे ही, झट अण्ड-बण्ड श्लोक रचकर ग्रन्थाकार में लिख मारे और शिव-पार्वती तथा भैरव-भैरवी के कल्पित सम्वादों के रूप में वे अनाचार और व्यभिचार फैलाये कि क्या कहें। संसार का घृणित से घृणित पाप उनके मन में मुक्तिप्रद अगम्यागमन तीर्थ स्नान और अभक्ष्य-भक्षण परम प्रशस्त था। देवताओं का नाम लेकर, मूक पशु-पक्षियों की निर्मम हत्या करके उन्हें हड़प जाना, सिद्धि की आकांक्षा में मद्योन्मत्त तथा निर्लज्ज होकर 'शिवोऽहम्' 'भैरवोऽहम्' कहते हुए जिस किसी भी स्त्री (मा-बहिन-बेटी भी अपवाद न थी) के साथ भैरवी चक्र में सम्भोग करना जन्म-मरण को काटने का साधन समझा गया। इन दुष्कृत्यों का यहां तक प्रचार-प्रसार हुआ कि राजे-रंक, ज्ञानी अज्ञानी और पण्डित-मूर्ख सब इस जाल में फंस गये। अपने ग्रन्थों तक ही यदि ये 'महात्मा सामन्त रहते तो भी कदाचित क्षन्तव्य होते, परन्तु ये तो यहां तक बढ़े कि आप ग्रन्थों पर भी हाथ साफ करने लगे और अब हमारे दुर्भाग्य से, वेद संहिताओं के अतिरिक्त अन्य कोई भी प्राचीन अथवा मध्यकालीन पुस्तक इनके हस्तक्षेप से बचा हुआ मिलना असम्भव सा ही रहा है। यही कारण है कि उनमें ऐसा परस्पर विरोध पाया जाता है कि एक धर्म-जिज्ञासु के लिए धर्माधर्म विवेचन दुष्कर प्रतीत हो रहा है। अर्थात् एक ही ग्रन्थ में जहां मांस-भोजी होना पाप बतलाया है वहां मांस खाने-खिलाने की विधि और उससे अनन्त पुण्य की प्राप्ति भी मिल जायगी जहां मद्यपान को महापाप उद्घोषित किया हुआ होगा वहां इसे पुनर्जन्म से छुटकारे का साधन भी बतलाया गया होगा, और जहां परस्त्री गमन रौरव नरक में ले जाने का साधन लिखा होगा, वहां इसे तीर्थ स्नान का पुण्य प्राप्त करने वाला भी कहा हुआ होगा।

इस प्रकार के ऊट-पटांग लेखों और अनर्गल प्रवृत्तियों का ज्ञान प्राप्त होने पर भगवान बुद्ध ने पैतृक राज्य-सिंहासन पर लात मारी और आयुभर इन दुराचारों के विरुद्ध प्रचार करते रहे। उस समय इन स्वार्थान्ध लोगों ने वेद के गूढ यौगिक अर्थों को न समझ कर अर्थों के अनर्थ करने पर कमर बांधी हुई थी। यहां तक कि भगवान बुद्ध को (जो स्वयं वेद के पण्डित न थे) कहना पड़ा कि 'यदि वेद इस प्रकार के पापों-उपद्रवों, अत्याचारों, व्यभिचारों की शिक्षा देते हैं तो ऐसे वेदों की भी संसार को आवश्यकता नहीं है।'

भगवान बुद्ध के सरल सिद्धान्तों ने संसार को प्राय इन खोटे कर्मों से बचा दिया और ये लोग कुछ चुप से हो गये। तत्पश्चात नवीन तन्त्र ग्रन्थों की रचना करके अपने अनुयायियों को यह शिक्षा देने लगे कि—

गोपनीयं गोपनीयं गोपनीय प्रयत्नत

इस धर्म को प्रयत्न पूर्वक गुप्त रखना चाहिये। परन्तु काल की गति विचित्र है। उन्हों ने कई बहुरूप धारण करने की शिक्षा देते हुए अपने ग्रन्थों में लिखा—

अन्त शाक्ता बहिरशैवा सभाया वैष्णवा मता
नाना रूप धरा कौला विचरन्ति महीतले ॥

अर्थात कौल (वामियों का आचार्य) वह है जो अन्दर से शाक्त (वाममार्गी) दिखाने को शिवभक्त, सभा में त्रिपुण्डधारी वैष्णव आदि अनेक रूप धारण करके पृथिवि पर विचरण करे। उस का फल यह हुआ कि पौराणिक धर्मावलम्बी भी उनके जाल में ऐसे फंसे कि पुराण तान्त्रिक वाममार्गियों के और तन्त्र पौराणिकों के धर्म ग्रन्थ बन गये और उनका परस्पर चोली दामन सा घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित हो गया।

हम आगामी पंक्तियों में यह दर्शाने का यत्न करेंगे—१ तन्त्रों और पुराणों का परस्पर सम्बध २ तन्त्रों की शिक्षा।

आशा है गुण ग्राही सज्जन इन पंक्तियों पर भली भांति विचार करके—

तातस्य कूपोऽयमिति ब्रुवाणा
क्षार जल का पुरुषा. पिबन्ति

के अनुसार तन्त्रों और पुराणों जैसे त्याज्य ग्रन्थों के साथ केवल इसी विचार से कि ये हमारे बड़े-बूढ़ों के लिखे हुए हैं, चिमटे नहीं रहेंगे। यदि कुछ एक विवेक-प्रिय-महानुभावों के उदार हृदय में भी उपरिलिखित पंक्तियों पर विचार करने का भाव उत्पन्न हो सका तो हम अपने आपको सौभाग्यशाली समझेंगे।

१ सेन्द्रा देवगणा मुनीश्वर जना
लोका सपाला सदा,
स्व स्व कर्म्म सुसिद्धये प्रतिदिनं
भक्तया भजन्त्युत्तमा.।
त विघ्नेशमनन्तमच्युतमजं सर्वज्ञ
सर्वाश्रयम्,
वन्दे वैदिक तान्त्रकादि विविधैः
शास्त्रै पुरोवन्दितम्।

कल्कि पुराण अंश १)श्लोक १ अ.१

अर्थात्—देवराज इन्द्र, श्रेष्ठ महर्षि और लोकपाल गण अपने कार्य को सिद्ध करने के लिए प्रतिदिन भक्ति के सहित जिसकी उपासना करते हैं पूर्वकाल में जो देवता वैदिक तान्त्रिकादि अनेक शास्त्रों से पूजित हुआ है, वो सर्वज्ञ अर्थात सब कुछ जानता है, सब का आधार है, जिस का जन्म नहीं है, ऐसे समस्त विघ्नों के नाश करने वाले अविनाशी विष्णु जी की वन्दना करता हूं।

टीका मुरादाबाद निवासी प० बलदेव प्रसाद मिश्र वैष्णवीतन्त्र मन्त्रेण कामाख्या योनि मण्डले ४६ सकृत् पूजन कृत्वा फलं शत गुण लभेत ४७

कालिका पुराण अ० ६० श्लोक ४६ ४७ अर्थात-वैष्णवी तन्त्र द्वारा कामाख्या के योनि मण्डल पर एक बार भी पूजन किया जाय तो सौ गुणा फल मिलता है।

(क्रमश.)

अब निराश कहां ?

(ले० पं० रामविचार जी उपाचार्य दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार)

उन्नीसवीं शताब्दी के अज्ञान-पूर्ण वातावरण में महर्षि दयानन्द जी ने वैदिक ज्ञान की ज्योति की प्रसार का अभूत पूर्व कार्य किया। इसी प्रचार कार्य को अग्रसर करने के लिये अनेक व्रतधारियों ने इस महान कार्य में प्रशमनीय सहयोग प्रदान किया। आर्य समाज के महान विद्वानों ने महर्षि के कार्य को पूर्ण करने के लिये अब तक भगीरथ प्रयत्न किया है प्रचार कार्य के लिये आर्यसमाज ने पंजाब में ब्राह्म महा विद्यालय और गुरुदत्त भवन जैसी संस्थाओं का निर्माण किया। इन दोनों संस्थाओं ने अपने अपने ढंग से वेद प्रचार कार्य को उन्नत किया।

देश के विभाजन के पश्चात आर्य समाज पंजाब का कोई भी सुयोग्य कर्मशील महानुभाव दयानन्द ब्राह्म महा विद्यालय को पल्लवित और पुष्पित नहीं कर पाया इस अवस्था को देखकर डी०ए०वी० कालिज प्रबन्ध कर्त्री सभा के प्रधान श्रद्धेय डा० मेहर चन्द्र जी महाजन ने तपोनिष्ठ, समाज सेवी और धर्मानुरागी प्रि० ज्ञान चन्द्र जी से इस संस्था को उन्नत करने की प्रार्थना की। आचार्य जी ने तथास्तु कहकर इस कार्य को 3½ वर्ष पूर्व अपने हाथों में लिया। संस्था को हाथ में लेते ही आचार्य जी की यह बलवती इच्छा थी कि इस संस्था से वैदिक धर्म के प्रचारक निकलें जो कि दिग्दिगान्तर में ईसा के ब्रह्मचारियों की भांति और महात्मा बुद्ध के भिक्षुओं की भांति महर्षि दयानन्द के सन्देश को पहुंचावें उनके इस परिश्रम के फलस्वरूप वह भी शुभ दिन आया जबकि २३-२-६४ रविवार विद्यालय के एक सुयोग्य स्नातक पं० नरेन्द्र जी को केरल में वेद प्रचार कार्य के लिये विदाई सभा का आयोजन किया गया।

पं० नरेन्द्र जी का परिचय— पं० नरेन्द्र जी केरल प्रान्तान्तगत चगन्नूर नगर के निवासी एक सम्भ्रान्त कुलोत्पन्न महानुभाव हैं। उन्होंने इन्टर तक शिक्षा को सुचारु रूप से प्राप्त किया। वे दक्षिण भारत की चारों भाषाओं मलयालम, तिलगू, तामिल और कन्नड के सुयोग्य पण्डित हैं। अंग्रेजी पर भी उनका सुन्दर अधिकार है वे केरल में किसी दफ्तर में कार्य किया करते थे और २५०) वेतन के रूप में प्राप्त करते थे उन्हें हिन्दू धर्म के ज्ञान की इच्छा हुई तो एक आकर सन्यासी ने उन से कहा कि यदि आप हिन्दू धर्म को जानना चाहते हैं तो पंजाब में जाकर आर्यसमाज की किसी संस्था में वैदिक धर्म का ज्ञान प्राप्त करो इसी प्रेरणा को लेकर वे दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय में प्रविष्ट हुए। विद्यालय में.. . लगभग 2½ वर्ष तक शिक्षा प्राप्त करके हिन्दी और संस्कृत का भी विपुल ज्ञान प्राप्त किया वैदिक सिद्धान्तों के विषय में भी सुन्दर जानकारी प्राप्त की। अपनी वक्तृत्व कला को भी उन्होंने सुचारू रूप से विकसित किया विद्यालय के आवास में जो विद्या उन्होंने प्राप्त की, इस में मुख्य सहयोग पं० जगदीश चन्द्र जी शास्त्री, पं० सत्यप्रिय जी शास्त्री सिद्धान्त शिरोमणि और पं० रामस्वरूप शास्त्री का रहा। शिक्षा प्राप्ति के समय में उन्हें त्याग, तप और समाज सेवा कार्य की भावनायें उनके हृदय को उद्वेलित करती रहीं इन्हीं सदभावनाओं से प्रेरित होकर उन्होंने यह संकल्प किया कि मैं जीवन भर आर्य समाज और वैदिक धर्म का प्रचार अपने प्रान्त में करूंगा। केरल प्रान्त के अन्दर छाई हुई ईसाइयत और Communism (साम्यवाद) के अन्धकार में वैदिक ज्योति का प्रकाश करूंगा आर्थिक वैषम्य के होते हुये भी और पारिवारिक अवस्था को आर्थिक संकट से आच्छादन देखते हुये भी उन्होंने अपने पवित्र उद्देश्य की पूर्ति के लिये त्याग और तप का परिचय देते हुये अपने मासिक निर्वाह के लिये केवल १२५) की याचना की है यह उनका अपूर्व त्याग है जिसका हार्दिक अभिनन्दन करना प्रत्येक आर्य का पावन कर्तव्य है।

उनकी विदाई के लिये २३-२-६४ रविवार को नगर के आर्यपुरुषों और माताओं को निमन्त्रित किया ३ घण्टे तक सभा का कार्यक्रम चलता रहा जिसमें बख्शी रामकृष्ण जी व प्रकाश चन्द्र जी, पं० दीना नाथ जी, पण्डिता जानकी आचार्य और अन्य गण्यमान्य महानुभावों ने पं० नरेन्द्र जी को आशीर्वाद देते हुये उन का उत्साह वर्धन किया और आपको अपने व्रत पर अटल रहने की प्रेरणा दी। २७ फरवरी को सायंकाल को उन्होंने केरल प्रान्त की ओर प्रस्थान किया। हम ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि शंकराचार्य जैसे अद्वितीय सन्यासी के प्रान्त में जो अन्धकार फैला हुआ है वह वैदिक प्रकाश से छिन्न भिन्न हो जाये और फिर वेद भानु की ज्योति से केरल प्रान्त प्रकाशित हो जाये।

इतना ही नहीं विद्यालय. और सुयोग्य स्नातक पं० गोविन्द प्रसाद जी जो बिहार प्रान्त के निवासी हैं बिहार में वैदिक धर्म के प्रचार कार्य के लिये प्रस्थान करेंगे।

ऋषि दयानन्द क्या थे?

(ले० गुप्तेश्वर कुमार आर्य डेवा, हजरतसाई, पटना बिहार)

ऋषि के जीवन पर हम जिन-जिन पहलुओं पर दृष्टिपात करते हैं उन में पूरे खरे सोने की भांति हम ऋषि को पाते हैं। कोई जीवन का ऐसा अंग नहीं जिस में ऋषि पूर्ण न हो।

ऋषि सत्यवेत्ता थे—चांदपुर में इन्द्रमन जी ने कहा कि 'स्वामी जी महाराज १९ मार्च को मेला लगने वाला है मौलवियों की मण्डली आ चुकी है ये लोग झटपट भड़क उठते हैं इस लिए आप अति कोमल शब्दों से ही काम लीजिएगा' सत्यवक्ता स्वामी दयानन्द जी ने हुंकार मारते हुए कहा 'असत्य का सम्भाषण और समर्थन करना मेरे लिए असम्भव है सत्य मेरा बनाया हुआ नहीं है यह सनातन है और ईश्वर का है उस सत्य का यथावत प्रकट करने में मैं किसी से किंचित् मात्र भी भयभीत नहीं होता हूं आप भी मत डरिए मेरे रहते कोई भी ऐसा माई का लाल नहीं जो बाल बांका कर सके' यह थी ऋषि की सत्य प्रियता।

ऋषि चरित्रवान थे—इन्हें चरित्र से पथभ्रष्ट करने के लिए धूर्तों ने बहुत उपाय किए किन्तु ऋषि अपने पथ से विचलित न हुए। एक बार मथुरा में जब ऋषि गंगा तट पर समाधी लगा रहे थे तो एक वेश्या को लोगों ने ऋषि को पथभ्रष्ट करने के लिए भेजा। वेश्या गई-तो महर्षि के तेज को देख कर मन की एकाएक सारी मलिनता दूर हो गई वह वेश्या ऋषि के चरणों में गिर कर कहने लगी 'क्षमा कीजिए मैं तो आप को कलंकित करने के लिए आई थी फूट फूट कर रोने लगी और दुष्टों का सारा वृतान्त सुनाया' महर्षि ने ढाढस बधाते हुए कहा 'देवी जाओ, ईश्वर करे तुम्हारी सुमति स्थिर रहे'। यह थी ऋषि की चरित्रता।

आर्य पथिक धर्मवीर पं. लेखराम जी

(ले०-श्री वेदव्रत जी 'मलिक' विद्याधिकारी गुरुकुल भैंसवाल (रोहतक)

इस के बाद आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने आप पर स्वामी दयानन्द जी की प्रामाणिक जीवनी लिखने का भार डाल दिया। आप के भाई तोता राम जी व आप के पिता जी का देहान्त हो गया। इस हृदय विदारक घटना से भी आप वैदिक धर्म का प्रचार करने से नहीं रह रुके। रथा घर न जा कर बाहर ही धर्म प्रचार का कार्य करते रहे। आप ने ऋषि दयानन्द जी सरस्वती की प्रामाणिक जीवनी लिखने का काम दिलो जान से किया। यद्यपि इस मे कुछ त्रुटिया रह गई हैं। परन्तु फिर भी आप का यह काम अति श्लाघनीय है।

अन्त को फरवरी सं० १८९७ के मध्य भाग मे एक काला, नाटा मुसलमान युवक आप के पास आया और आप से शुद्ध होने की प्रार्थना की। आप ने उस को अपने पास रख कर धर्म का उपदेश देना प्रारम्भ कर दिया। आप के कई हितैषी आर्य भाईयों ने आप को उस से सुरक्षित रहने के लिए कहा। किन्तु आप ने उस पर कुछ भी कान न दिया और उस को धर्म जिज्ञासु कह कर अपने हितैषियों की बात टालते रहे। एक दिन साय काल के समय उसी दुष्ट मुसलमान युवक ने अगड़ाई लेते हुए आप के उदर में जब कि आप महर्षि दयानन्द जी की जीवनी में उनका परम पद प्राप्त के वर्णन का अध्याय अभी २ लिख कर उठे थे, कटारी भोंक दी। जिस से उन की आन्तों मे आठ मारक घाव लगे और उन से आधी रात तक बराबर रुधिर बहता रहा। डाक्टर पेरी और सिविल सर्जन (लाहौर) के घावों को ७ घन्टे तक सीते रहने पर भी आप न बच सके और आप ने फाल्गुन सुदि ३ स० १९५३ वि० अथवा ६ मार्च सन् १८९७ ई० को रात के २ (दो) बजे अपने नश्वर शरीर को वैदिक धर्म की वेदि पर बलिदान कर दिया। अन्तिम समय आप ओं विश्वानि देव सवित इत्यादि प्रार्थना मन्त्रों का पाठ कर रहे थे। आप के अन्तिम शब्द ये थे—

'आर्य समाज से लेख का काम बन्द नहीं होना चाहिए।' उस समय आप के शव के साथ ३० हजार आदमी थे।

उस समय आर्य—धर्म रूपी देवी का आर्तनाद स्पष्ट सुनाई देता था—

'हा! वीर लेखराम, पुत्र! क्या तुम सदा के लिए मेरी सेवा विदा होते हो?'

परन्तु आज ८६ वर्षों के पश्चात् भी देवी का वही आर्त विलाप सुनाई देता है—

'हा, पुत्र लेख राम! वीर! क्या सच की यात्रा मे ही चले गए? फिर दर्शन न दोगे?'

इस प्रकार वैदिक धर्म पर बलिदान हो कर आप जहा अपना नाम धर्म के शहीदों की पंक्ति मे सदा के लिए अमर बना गये। वहा आप आर्य समाज रूपी छोटे पौधे को रुधिर का खाद देकर वृक्ष मे परिणत होने के लिए हरी-भरी और लहलाती हुई अवस्था में छोड़ गए। यदि आप के गुण, कर्म स्वभाव का वर्णन एक वाक्य में किया जाये तो आप अत्यन्त त्यागी, सरल स्वभाव, प्रतिज्ञा-पालन के पक्के, तेजस्वी, मन्युप्रवण, आर्य सिद्धात के अटल विश्वासी, अकुतो भय, वाक्पटु, सुलेखक व आदर्शक धर्म प्रचारक थे। आप के रक्त बिन्दु पृथिवी पर व्यर्थ नहीं गिरे। आप ने अनेक धर्माग्नि से प्रज्वलित धर्मोपदेशक उत्पन्न किए। जिन मे सोमनाथ, वजीर चन्द्र, मथुरा दास, तुलसी राम, मन्तराम, योगेन्द्रपाल व जगतसिंह आदि के नाम उल्लेखनीय है। जिन्होंने ओइम की पताका उठाए हुए प्राण दिए। स्व० श्री पूज्य स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज पर भी आप के उच्च जीवन का बहुत व्यापक प्रभाव पड़ा। उन्होंने तो आप का प्रशस्त जीवन चरित्र स्वय लिख कर आप के समान ही शहीद होने मे गौरव अनुभव किया है।

धन्य हैं आप और आप का श्लाघनीय आर्य जीवन चरित। जिस को पढ कर सुन कर भविष्य में आने वाले नव-युवकों में आर्य भावनाओं का प्राणप्रद नूतन रक्त सचार होना अनिवार्य है।

मधु कलश

१

है मसार मुसाफिर खाना अनगिनत हैं आने वाले,
लेकिन कितने लोग यहा हैं जीवन सफल बनाने वाले,
जिया असल मे वही कि जिसके मर जाने पर,
सजल नयन हो उठे स्वय दफनाने वाले।

२

कदम बढ़ाते चले चलो खुद छोड़ो सभी सहारा तक ना,
जब तक लक्ष्य नहीं मिल पाये किसका थकना, कैसा थकना,
जितना चाहो उतना जीलो लेकिन आलस पास न आए,
नामुमकिन है इस दुनिया में गए वक्त को लौटा सकता।

३

सखे आज का मोल समझ ले किसका कल है,
है अनमोल जगत के अन्दर जो भी पल है,
सिर्फ रास्ता भर टेढा है इस जीवन का,
खोजा तो बिल्कुल सीधा और सरल है।

क्रमश

विजय निर्बाध जालन्धर

दयानन्द-वचनामृत

'प्रार्थना का फल यह है कि जब कोई जन अपने सच्चे मन से, अपने आत्मा से, अपने प्राण से और सारे सामर्थ्य से परमेश्वर का भजन करना है, तब वह कृपामय परमात्मा उसको अपने आनन्द मे निमग्न कर देता है। जैसे छोटा बालक घर की छत पर अथवा नीचे से अपने माता-पिता के पास जाना चाहता है, तो उनके मा-बाप, इस भय से कि हमारे प्रिय पुत्र को इधर-उधर गिर पडने से कष्ट न हो, अपने सहस्रों कामों को छोड, दौडकर उसे गोद मे उठा लेते हैं, वैसे ही परम कृपा निधि परमात्मा की ओर यदि कोई सच्चे आत्म-भाव से चलता है तब वह भी अपने अनन्त शक्तिमय हाथा से उस जीव को उठाकर सदा के लिए अपनी गोद में रख लेता है। फिर उसको किसी प्रकार का कष्ट-क्लेश नहीं होने देता, और वह जीव सदा आनन्द ही मे रहता है। परमात्मा माता-पिता भान्ति, अपने भक्तों को सदा सुख-सम्पन्न करने ही की कृपा करता है।'

(स्वामी सत्यानन्द जी)

मंडी के (H.P) समाचार

आर्य स्त्री समाज मंडी का(H.P.)नचुाव

प्रधान—श्रीमती लाजवती जी, उपप्रधाना—श्रीमती पुन्नी देवी व गौरा देवी जी, मंत्राणी—श्रीमती सरला देवी जी, उपमंत्राणि—शारदा देवी व वतीदेवी जी, कोषाध्यक्ष— राजेश्वरी देवी जी, पुस्तकाध्यक्ष—कलादेवी जी। अंतरग सदस्या—धनीदेवी जी, गांधारी देवी जी, हरवंशी देवी जी, मिहरा देवी जी, कृष्णा जी, सीता रानी जी, सुहाग रानी जी और गौतमी देवी जी।

६-२-६४ को डा० चन्द्रमणि जी के पिता श्री सिधुराम जी का देहान्त हो गया उनकी अन्त्येष्टी क्रिया वैदिक रीति से प० केवलराम जी ने करायी।

ऋषि-बोध उत्सव

तारीख ११-२-६४ को ऋषिबोध उत्सव समाज मंदिर मे धूमधाम से सम्पन्न हुआ। प्रातः प्रभात फेरी की गई। साधारण कार्यवाही के पश्चात ऋषि जीवन पर अनेक विद्वानों व प्राईमरी स्कूल के छात्रों के भाषण हुए। अपील पर वेद प्रचारार्थ ४०/- एकत्रित हुए। पूर्णाहुति के पश्चात यज्ञ शेष वितरण के साथ सभा की कार्यवाई समाप्त हुई।

चैतराम बहेल
मन्त्री समाज

राजपूत हाई स्कूल ढोलवाहा (होशियारपुर) मे ऋषि-बोध उत्सव

११-२-६४ को ऋषिबोध उत्सव श्री गुरदासराम जी मुख्याध्यापक राजपूत हाई स्कूल ढोलवाहा के सभापतित्व मे बड़े उत्साह से सम्पन्न हुआ। जिस में राजपूत हाई स्कूल व गवरमैंट बेसिक ट्रेनिंग स्कूल के छात्रों व अध्यापकों ने भाग लिया।

सभा के आयोजन का श्रेय श्री रमेशचन्द्र जी बी. ए. बी. टी. प्रोफेसर गवर्नमैंट बेसिक स्कूल ढोलवाहा को है। श्री रमेशचन्द्र जी, पं० अमरनाथ जी शास्त्री, पं० राम कृष्ण जी शास्त्री विद्वानों ने महर्षि के जीवन पर प्रकाश डालते हुए अनेक गुणों पर चलने का मार्ग दिखाया। अनेक छात्रों ने महर्षि के उपकारों का गीतों व भजनों द्वारा गायन किया।

अन्त में प० गुरदासराम जी ने सभापति आसन से भाषण देते हुए जनता को ऋषि के चरण चिन्हों पर चलने की प्रेरणा दी। शान्ति पाठ के बाद सभा विसर्जित हुई।

टकारा मे ऋषि लंगर

मुपलेटा (सौराष्ट्र) ने उद्योगपति श्री विराभाई काराभाई ने महर्षि की जन्मभूमि टंकारा में स्थायीरूप से यात्रियों के भोजनार्थ ऋषिलंगर की स्थापना की है। इसी प्रकार शिवरात्रि के अवसर पर भी तीन दिन लगातार ऋषि लंगर चलाने का आश्वासन दिया है। इसका सारा प्रबन्ध उनकी देख-रेख में होगा।

गुरुकुल विद्यापीठ हरियाणा भैंसवाल कलां

का ४४ वां वार्षिकोत्सव बड़े समारोह के साथ सम्पन्न हुआ। श्री सत्यव्रत जी शास्त्री M. A, P. H. D की अध्यक्षता में संस्कृत सम्मेलन हुआ जिसमें गुरुकुल के छात्रों ने संस्कृत भाषा मे विद्वत्तापूर्ण भाषण वा कविताएं सुनाई। प समरसिंह जी, आचार्य विष्णु मित्र जी, चौ. मांडूसिंह जी, पं. कपिलदेव जी शास्त्री, आर्य विद्वानों के भाषणों का जनता पर गहरा प्रभाव पड़ा। अपील पर २० हजार पांच सौ तरेसठ रुपए प्राप्त हुए।

दयानन्द ब्रह्म महाविद्यालय हिसार

का दीक्षान्त समारोह १-३-६४ रविवार को श्री धर्मवीर जी की अध्यक्षता २॥ से ४ बजे तक मनाया गया। इस अवसर पर श्री धर्मवीर जी ने विद्यालय के प्रशासन विभाग का शिलान्यास तथा छात्रों को उपाधियां प्रदान कीं। अध्यक्ष पद से भाषण देते हुए महर्षि दयानन्द तथा आर्यसमाज के कार्यों की प्रशंसा की और विद्यालय के कार्य-क्रम पर श्रद्धा प्रकट की।

आर्यसमाज बाढ (पटना)

एक प्रस्ताव द्वारा पूर्वी पाकिस्तान में हो रहे हिन्दुओं पर अत्याचारों को अमानुषीय दृष्टि से देखते हुए हार्दिक क्षोभ व रोष प्रकट करती हैं। तथा इस कृत्य की घोर निन्दा करती है। तथा यह सभा भारत सरकार को विश्वास दिलाती है कि पूर्वी पाकिस्तान से आए हुए हिन्दुओं की रक्षा तथा पुनर्वास के कार्य में पूर्ण सहयोग देगी।

—राम लखन आर्य,
मंत्री समाज।

आर्य समाज खन्ना

की एक बैठक में पूर्वी पाकिस्तान में हो रहे हिन्दुओं पर अत्याचारों की कड़ी निंदा की गई तथा भारत सरकार से मांग की गई कि वह पाक सरकार पर दबाव डाले।

आर्य प्रचार समिति बम्बई

का वार्षिकोत्सव तथा दयानन्द बोधोत्सव ८ फरवरी से ११ फरवरी तक बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हुआ। ४ फरवरी को सायं ४ बजे शोभा यात्रा प्रारम्भ हुई जिसमें आर्य सभासदों के अतिरिक्त एक हजार के लगभग स्कूल के छात्र छात्राओं ने भाग लिया। उत्सव में श्री पूज्य आनन्द स्वामीजी महाराज के प्रवचन तथा श्री P. N. [illegible] आदि के भाषण होते रहे। अनेक सम्मेलनों का भी आयोजन किया गया। उत्सव सब प्रकार से सफल रहा।

[illegible] सहज है,
सहज विरिया का नेह।
मान बड़ाई ईर्ष्या,
[illegible] कठिना यह॥
'तुलसी' जग में आय के,
कर लीजो दो काम।
देने को टुकड़ा भलो,
लेने को प्रभु नाम।'

शोक प्रस्ताव

(१) आंज इविक्वा दयानन्द साल्वेशन मिशन हुशियारपुर रा. ब. ला. गोकलचन्द्र जी सचदेव जो कि मिशनके लाइफ मैम्बर थे। की अचानक मृत्यु पर शोक प्रकट करते हुए उनके सम्बन्धी व परिवार से सहानुभूति प्रकट करता है तथा उनकी आत्मा की सद्गति के लिए प्रभु से प्रार्थना करता है।

रामदास, प्रधान
मिशन

(२) आर्य समाज रमदास में १-३-६४ में एक प्रस्ताव द्वारा श्री कुन्दनलाल जी अग्रवाल के निधन पर शोक प्रकट किया गया। तथा उनकी आत्मा की सद्गति के लिए प्रभु से प्रार्थना की गई।

आप श्री सेठ वृन्दावन के पौत्र थे जिनकी सहायता से वृन्दावन गर्ल्स हाई स्कूल रमदास चल रहा है।

प्रधान आर्यसमाज
रमदास अमृतसर

मुद्रक व प्रकाशक श्री सोमदत्त जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टैलीफोन न० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd No. P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य रुपये

वर्ष २४ अक १२) १० चैत्र २०२० रविवार—दयानन्दाब्द १४०— २२ मार्च १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

न क्येवं यथात्वम्

हे परमेश ! जैसे आप हैं, ऐसा कोई नहीं। आप अनुपम अद्वितीय हैं। आपके समान सर्वशक्तिमान, अनन्त, अनुपम, सर्वज्ञ, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वान्तर्यामी, महान और कौन हो सकता है। आपके समान दूसरा कोई नहीं है। आप महान हो, श्रेष्ठ हो।

समानमुप्रशंसिषम्

प्रभो ! आप सब के प्रति समानता रखते हैं पक्षपात से शून्य हैं। जैसा कोई कर्म करता है, उसी के अनुसार उसे फल प्रदान करते हो। आपकी मैं सदा स्तुति प्रशसा करता हूं। आप पिता हैं, आपके लिए सारी प्रजा समान है। कर्म के अनुसार आपका प्रसाद होता है।

असृग्रमिन्द्र ते गिर:

हे इन्द्र ! मेरे सारे ये शब्द वचन, वाणिया, उद्‌गार, भजन स्तोत्र, भक्तिभाव आपके लिए ही हैं। मैं आपके सिवाय स्तवन के गीत गाऊं भी किस के ? मैं तो यही चाहता हू कि मेरा शब्द शब्द आपके स्तुतिरस से भरा रहे। मैं आपका स्तोता गायक बना रहूं। सामवेद से

वेदामृत

मनसापरिक्रमामन्त्राः

ओम् उदीची दिक् सोमोऽधिपतिः स्वजो रक्षिता शनिरिषवः । तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्योऽस्तु । योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥ अथर्व का० ३० सूक्त २७ मंत्र४

अर्थ—हे जगदीश ! आप इस (उदीचीदिग्) उत्तर दिशा में भी (सोम) सोम शान्तिस्वरूप के रूप में व्याप्त होकर सब के (अधिपति) स्वामी हो तथा (स्वज) स्वय प्रकाशमय हो रहे हो, आप ही (रक्षिता) हमारे रक्षक हो तथा इस (अशनि.) बिजली वा प्रकाश के (इषव) बाणों के द्वारा हमारी सब प्रकार से रक्षा करते हो। (तेभ्य नम) आपकी इन रक्षण करने वाली शक्तियों को हम नमस्कार करते हैं ये हमारा जीवन त्राण करती हैं, हमारा मार्ग प्रशस्त करती है। यही बाण बन कर हमें नानाविध विपत्तियों से बचाते रहते हैं। (य अस्मान द्वेष्टि) जो कोई हम से द्वेष करता है या जिस से हम द्वेष करते हैं (तं व जम्भे दध्म) उसे आप के जबडे में न्याय नियम में रखते हैं। आप के निर्णय पर छोडते हैं।

भाव—हे सर्वव्यापक। देवाधिदेव। हमारा चचल मन उत्तर दिशा में भी भटक कर थक गया। वहा पर भी आप का ही अनुपम नियम देखा। वहा भी शान्ति दायक बन कर सोम के रूप में आप रम रहे हो। वहा पर जो भी बिजली है, प्रकाश है, उस के बाणों के द्वारा हमारे जीवन का रक्षण करते हो। विद्युत् की सुन्दर प्रकाशमयी रेखाये बाण के समान हैं। ये सारी आप की ही शक्तिया हैं। हम आप के इन शक्तिमय नियमों का समादर करते हैं। ये आप के निर्मित साधन हमारे जीवन के रक्षक हैं, हमें नाना विपत्तियों से बचाते हैं। हम इन का मान करते हैं। जो हमारा द्वेषी है, महाराज। उसे हम तेरे सपुर्द करते हैं। तू ही न्याय कर।—स.

हार्दिक स्वागत

आर्य जगत के तपस्वी, त्यागी, जीवनमेधी सन्त पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती अपने एक, दो, तीन आपरेशनों के बाद प्रभु कृपा एवं मानसिक शक्ति से पूर्ण स्वस्थ होकर पहिली बार पजाब मे आर्य समाज लारेंस रोड अमृतसर में अमृत मधुर कथा करने इस सप्ताह पधारे हुए हैं। हम आर्यजगत की ओर से आपका श्रद्धा से हार्दिक स्वागत करते हैं। आर्य प्रादेशिक सभा के गत आर्यसमाज लोहगढ़ अमृतसर के वार्षिक अधिवेशन २३ फरवरी रविवार को सारे पजाब दिल्ली और हिमाचल के प्रतिनिधियों ने मिलकर एकमत, एकस्वर से आपको सभा का प्रधान निर्वाचित कर के सभा कार्य का पवित्र भार आपके दधीचि सन्त के समान दृढ कन्धों पर रख दिया। प्रभु आप को सदा स्वस्थ रखें ताकि जनता आपके मधुर प्रवचनों का अमृतपान करती रहे—सं०

अधिष्ठाता—संतोषराज सभा मंत्री सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

मन को वश करने के तीन साधन :

ज्ञान-प्राण और ध्यान

(पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज)

इस लिए दीर्घकाल तक निरन्तर रूप से अभ्यास जारी रखो तीसरी बात इस के लिए श्रद्धा की है। इस के लिए पूरी श्रद्धा रखो तभी इस में सफलता मिलेगी। श्रद्धा के बिना तो साधारण सा कार्य भी पूरा नहीं होता। जिस कर्म में श्रद्धा की भावना भर दी जाती है, उसमें मिठास पैदा हो जाता है और जिस मे इसका अभाव होता है, वह सर्वथा रसहीन हो जाता है। इस श्रद्धापूर्वक किया हुआ अभ्यास ध्यान की स्थिति को दृढ़ बनाता है। जितना २ अभ्यास दृढ़ होता चला जायगा, उतनी २ चित्त की स्थिति में स्थिरता आती जायगी।

ध्यान करने के लिए शरीर, वस्त्र, स्थान' आसन और वातावरण की शुद्धि बड़ी आवश्यक है। खानपान पर तो विशेष नियन्त्रण रखना पड़ेगा। ऐसे वैसे चट पटे पदार्थों का प्रयोग करके मन की ध्याना-वस्था को नहीं प्राप्त किया जा सकता। जिसने रसना को अपने काबू में नहीं किया उसका मन काबू में कभी नहीं आ सकता। मन की एकाग्रता के लिए रसना पर संयम बड़ा ही जरूरी है। ध्यान नासिका के अग्र भाग पर अथवा आज्ञा चक्र पर किया जा सकता है। अपने आज्ञा चक्र पर ओम अक्षर लिख कर ध्यान करें तो कुछ देर के अभ्यास के बाद आपको ऐसा प्रतीत होगा कि यह ओम अक्षर वहां लिखा हुआ है। चमकता दिखाई देगा। कभी दीखेगा और फिर मिट जायगा। फिर दिखाई देगा। इस ध्यान की अवस्था मे चिन्ता न करो, निराश न हो। अपने निरन्तर अभ्यास को जारी रखो फिर ऐसी स्थिति आजायगी, जबकि आज्ञा चक्र पर लिखा हुआ प्रकाशित यह ओम स्थायी बना रहेगा, मिटेगा नहीं। यह दशा निरन्तर अभ्यास के द्वारा ही आयेगी। यही प्रकट होने वाला ज्योति आपको अन्दर ले चलेगी। इसी ज्योति के द्वारा आपको अन्दर का अद्भुत जगत दिखाई देगा। मन की एकाग्रता के लिए यह बड़ा सुन्दर साधन है। ध्यान के लिए एक और बात का ध्यान रखना भी जरूरी है। जब कोई ध्यान करने बैठे, उसे प्रयत्न करना पड़ेगा कि उसके मन के कोठे मे जितने भी नानाविध विषयों के विचार रूपी पदार्थ भरे पड़े हैं, जिन के कारण चित्त सदा चंचल रहता है। उन विषयों के पदार्थों से मन के कमरे को खाली करना होगा। यदि मन का कोठा पहिले ही भरा हुआ है उस मे और किसी वस्तु की गुंजाइश ही नहीं है तो फिर ध्यान की अवस्था कैसे पैदा हो सकती है। जो पात्र पहिले से ही भरा हुआ है उस मे और वस्तु कैसे आ सकती है। शास्त्र मे कहा है—ध्यान निर्विषयं मन — मन की ध्यान अवस्था वह है जिस में विषयों का सर्वथा अभाव हो जाये। अभ्यासी को ससार के विषय तथा सब प्रकार के विचार मन से अभ्यास के समय बाहिर कर देने चाहिए। इस स्थिति के लिए भी सग्राम करना पड़ेगा। जब मन निर्विषय हो जायगा तब उसकी सारी चंचलता समाप्त होकर एकाग्र हो जायगा। मन की एकाग्रता ही ब्रह्म अनुभूति का परम साधन है। यही एकाग्र मन ध्यान की अवस्था में जाकर हमे वहां

स्वराज्य और आर्य समाज

ले० श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली

भारत को स्वतन्त्र करने की सर्व प्रथम भावना महर्षि श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के विशाल भाल में ही उद्बुद्ध या जाग्रत हुई थी। उन्होंने सर्व प्रथम कहा था कि विदेशी राज्य कितना ही श्रेष्ठ और सुख कर क्यों न हो परन्तु वह स्वदेशीय शासन की समता नहीं कर सकता। इसी मौलिक भावना का प्रचार-प्रसार अन्य राजनैतिक नेताओं ने भी किया जिन में आर्य सामाजिकों की सख्या भी पर्याप्त थी। फलत भारत स्वतन्त्र हो गया और आज सारे देश मे स्वराज्य स्थापित तो हो गया परन्तु अभी सुराज्य नहीं हो पाया। भ्रष्टाचार बराबर बढ़ रहा है और नागरिक गण अन्न वस्त्र के लिये भी तरस रहे हैं। न्यायालयों में अभियोगों की सख्या बढ़ चली है। गणतन्त्र या जनतन्त्र जनता का राज्य कहा जाता है परन्तु जनता अपने अधिकारों और कर्तव्यों से अनभिज्ञ सी बनी हुई है। उसके तीन कर्तव्य शेष रह गये हैं धन-दान, मत-दान और अपने चुने हुए अधिकारियों का स्वागत सम्मान। विधान-सभाओं पर प्रचुर धन-राशि व्यय की जा रही है परन्तु जनता में नैतिकता प्रसार के लिये कुछ नहीं किया जा रहा। धर्म के मौलिक सिद्धांतों को क्रियान्वित करने का नाम ही नैतिकता है। रिश्वत बुरी चीज है यह सिद्धांत है परन्तु हम रिश्वत नहीं लेते देते और न लेने देते हैं यह नैतिकता है। इसी प्रकार अन्य अपराधों और दुर्गणों के सम्बन्ध में भी समझ लीजिए। भ्रष्टाचार या अनैतिकता कानूनों से दूर नहीं हो सकती। इस के लिए धर्म-भावनाओं का प्रचार-प्रसार आवश्यक होगा। महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने धर्महीन राजनीति को कभी स्वीकार नहीं किया। महात्मा गान्धी ने तो स्पष्ट कहा है कि मैं धर्महीन राजनीतिको कूड़ा करकट समझता हूं। सत्य एवम् अहिंसा दोनों ही धर्म के मौलिक सिद्धांत हैं। जिस धर्म ने देश को उस की खोई हुई स्वतन्त्रता प्राप्त करायी आज सत्ताधारी शासक उस के नाम से भी घृणा करते हैं यह कितने दुःख और कैसे आश्चर्य की बात है।

ऐसी स्थिति में आर्य समाजों का कर्तव्य है कि वे देश में पूर्ण रूप से धर्म प्रचार-पथ पर अग्रसर

(शेष पृष्ठ ८ पर)

पहुंचा देता है, जिस के लिए हम भटकते फिरते हैं। वेद मे इसी लिए बार २ प्रार्थना है कि तन्मे मन शिवसंकल्पमस्तु। स्वामी शंकराचार्य जी से पूछा था कि जित जगत् केन—इस जगत् पर किस ने विजय पाई? उन्होंने उत्तर दिया कि मनो येन—जिस ने मन पर विजय पाई। मनोजित व्यक्ति ही जगत् जित् होता है। जिस का मन ही अपने काबू में नहीं वह विश्व-विजयी नहीं बन सकता।

ये तीन साधन हैं जिन के द्वारा मन पर वशीकार किया जा सकता है। इसकी चंचलता भगाई जा सकती है। आज के भौतिक अशांत संसार को इस वैदिक संदेश की आवश्यकता है। तभी शान्ति होगी। एकाग्र चित्त के बाद जीवन की क्या स्थिति होती है यह शब्दों का विषय नहीं है अपितु अनुभवों का विषय है। चित्त की इस भूमि को पाकर आप स्वयं अनुभव कर सकेंगे। ब्रह्मकृपा हि केवलम्

सम्पादकीय–

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२०, २२ मार्च १९६४ [अंक १२

दयानन्द युनिवर्सिटी

आर्यसमाज ने भारत में जहां धर्म प्रचार का वैदिक आन्दोलन प्रारम्भ करके जनता को जागृति के पथ पर ला खड़ा किया, वहां अविद्या के नाश और विद्या की वृद्धि के महान कार्य में भी सारे देश का नेतृत्व किया। आज सारे राष्ट्र में जितना भी शिक्षा का प्रसार दिखाई देता है उसका सारा श्रेय आर्यसमाज को ही है—इसमें तनिक भी किसी को मतभेद नहीं है। स्वराज्य, सुधार तथा विद्या दान में सारे राष्ट्र में जो शानदार प्रवाह चल रहा है, इसका सारा गौरव भी आर्यसमाज को ही मिलता है। इसने शिक्षा के कार्य को लेकर सारे देश में विशाल संस्थाओं का जाल बिछा दिया। इनका प्रबन्ध पढ़ाई, परिणाम तथा आचार विचार का स्तर बहुत ऊंचा है, जिसकी मुक्त-कण्ठ से प्रशंसा में अपने पराये एकमत हैं। आर्यसमाज की इन संस्थाओं ने देश को बड़े-बड़े रत्न प्रदान किये हैं। आज इन शिक्षा संस्थाओं का प्रबन्ध करने वाले माननीय डा. मेहरचन्द जी महाजन प्रधान डी.ए.वी. कालेज प्रबन्धक कमेटी देहली, डा. दीवानचन्द जी फैलास्कर कानपुर, डा० जी, एल. दत्त वायस चांसलर विक्रम यूनिवर्सिटी, प्रिंसीपल सूर्यभानु जी एम.ए.वायस चांसलर कुरुक्षेत्र विश्व-विद्यालय, प्रिंसिपल रलारामजी, प्रिंसि-पल भीमसेन बहल प्रिंसिपल दीना-नाथ शर्मा, प्रिंसिपल ज्ञानचन्द जी, भाटिया, आचार्य प्रियव्रत जी गुरु-कुल कांगड़ी, प्रिंसिपल वाल्ले जी, डा० सूर्यदेव जी अजमेर प्रिंसिपल देवीचन्द जी एम. ए., प्रिंसिपल रामदास सरीखे शिक्षा विशारदों पर बड़ा मान है। इनके सतत प्रयास से चल रहा है।

देर से आर्य समाज चाहता था कि जहां अन्य शानदार काम किये जा रहे हैं, वहां दयानन्द यूनिव-र्सिटी की स्थापना भी की जाये। जब भारत में समाज के पास इतनी बड़ी शिक्षा संस्थाएं हैं, इतना महान् विद्याप्रसार का काम है शिक्षा के क्षेत्र में इतने महान् नेता हैं, तो ऐसी यूनिवर्सिटी क्यों न बनाई जाये। माननीय जस्टिस डा० मेहरचन्द जी ने एक बार कहा था कि मेरा यह स्वप्न भी जीवन में पूर्ण हो जाये कि दयानन्द यूनिवर्सिटी की स्थापना कर दी जाये। अब यह प्रसन्नता है कि अजमेर में दयानन्द यूनिवर्सिटी स्थापित करने का निश्चय हो गया है। इस कार्य सूत्र का प्रारम्भ भी हो चुका है। आर्य जगत् के इसी अङ्क में इस सम्बन्ध में एक लेख भी प्रकाशित हो रहा है। हमें गौरव है कि डा० महाजन जी जैसा गम्भीर उच्च प्रतिष्ठा महान् व्यक्ति जिस कार्य को अपने हाथ में लेते हैं, उसे सफलता के ऊंचे शिखर पर पहुंचा देते हैं। टंकारा में महान कार्य का आदर्श उदाहरण है यह दयानन्द यूनि-वर्सिटी भी सारे देश में अपने प्रकार तथा अपनी शान की आप ही होगी अजमेर जैसे केन्द्र में यह महान विश्वविद्यालय पुरातन काल में तक्षशिला, नालन्दा, विक्रम विश्वविद्यालयों का पुन स्मरण करा देगा। इसके द्वारा शिक्षा के के साथ २ जीवन की समस्त प्रक्रि-याओं का प्रचार भी होगा। स्वामी दयानन्द का शानदार वैदिक मिशन विश्व के चारों कोनों में इस के द्वारा प्रसारित होगा। जनता विशेष कर आर्य संसार को भी चाहिए कि वह इस महान संस्थान के लिए बड़े से बड़ा उत्सर्ग करने में कटिबद्ध हो जावे तभी ठीक है —त्रिलोकचन्द्र

दल से देश प्यारा

समाचार पत्रों में आया है कि गत दिनों लोक सभा में राष्ट्र के प्रतिरक्षा बजट पर बोलते हुए कांग्रेस के वरिष्ठ माननीय ससत्सदस्य श्री महावीर जी त्यागी ने कहा कि यदि राष्ट्र की सरकार देश की सीमाओं पर होने वाले आक्रमण रोक नहीं सकती, तो उसे अपना पद त्याग देना चाहिए। श्री त्यागी जी ने यह भी कहा कि मैं यह बात दुःख से कह रहा हूं। मुझे कांग्रेस प्यारी है पर मुझे दल की अपेक्षा देश प्यारा है, इसी देश प्रेम के नाते मैं ऐसा कहने पर विवश हूं। इस प्रकार के भाव व्यक्त किये।

हमें प्रसन्नता है कि श्री त्यागी जी ने बड़ी उचित तथा युक्तियुक्त बात कह कर दूसरों को भी इस दिशा में पथ प्रदर्शन किया है। दल प्यारा होता है किन्तु जब देश का प्रश्न हो, राष्ट्रिय हित हो, अथवा अपना दल किसी और ओर जा रहा हो तो उस समय अपने दल की अपेक्षा देश का ध्यान सर्वप्रथम होना चाहिए। यदि ऐसा न किया जाये तो दल के मोह में राष्ट्र हानि भी हो जाती है ऐसे २ स्पष्टवादी लोग ही तो राष्ट्रहित कर सकते हैं। दल तो राष्ट्र पर बलिदान हो सकता है किन्तु राष्ट्र को दल पर कुर्बान नहीं किया जा सकता। राष्ट्र के नेता महान हैं पर राष्ट्र इन से भी महान है। जहां देश का प्रश्न हो वहां पार्टी का स्थान पीछे है और देश सब से प्रथम। हम श्री त्यागी जी को इस स्पष्टोक्ति पर बधाई दे कर दूसरे सब राज नीति के क्षेत्र में काम करने वालों से भी यही आशा रखते हैं कि दलबन्दी से ऊपर उठ कर राष्ट्रहित का प्रश्न आने पर अपने दल को भी ऐसे शब्दों में अपनी दिल की बात कहने में भय या संकोच नहीं करना चाहिए। व्यक्ति वाद, दलवाद और संस्था वाद से राष्ट्र वाद एवं सिद्धात वाद बहुत ऊंचा है।

एक उत्तम सुझाव

हमें बम्बई से श्री मास्टर दरबारी लाल जी तनेजा कुलाची वालों का एक पत्र मिला है। श्री तनेजा जी देशविभाजन से पूर्व कुलाची सीमाप्रान्त में आर्य समाज का मन्त्री, वहां की प्रसिद्ध आर्य कन्या पाठ शाला के अनथक कार्य-कर्ता थे। इधर भी बड़ा समाज कार्य करते हैं। पत्र में लिखते हैं कि आज कल सिनेमा द्वारा कुमारियें तथा युवक युवतियों का जीवन इन के चित्रों तथा अन्य चित्रपटों के नाचादि द्वारा जिस तेजी से पतन, विलास तथा भोगवाद के मार्ग की ओर बढ़ रहा है, उसे रोकने के लिए आर्य समाज को विशेष कार्य योजना बना कर नगर २ में मैदान में उतरना चाहिए .. कौन नहीं जानता और मानता कि आज सिनेमा का क्या कुप्रभाव फैल रहा है। आचार, विचार आहार, परिवार, शृंगार आदि सब कुछ इस से प्रभावित हो रहा है। हम भी श्री तनेजा जी के हार्दिक भावों का समर्थन करते हुए आर्य समाज

(शेष पृष्ठ ४ पर)

दयानन्द विश्वविद्यालयकी स्थापना

आर्य जगत के लिये एक चुनौती

दयानन्द विश्वविद्यालय की स्थापना का महत्वपूर्ण प्रश्न आज प्रत्येक शिक्षा तथा समाज प्रेमी के सामने है। हमारे देश में तथा बाहर की लगभग एक हजार डी० ए० वी० आदि आर्यसमाज की शिक्षण संस्थाओं को एक सूत्र में बांधने के उद्देश्य से भारत के सर्वोच्च न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश डा० मेहरचन्द जी महाजन के प्रधानत्व में सार्वभौम आर्यसमाज शिक्षण संस्था परिषद का संगठन होने के बाद उसका पहला अधिवेशन ३ व ४ नवम्बर १९६२ को महात्मा हंसराज कालेज, देहली में किया गया था। इस सम्मेलन के अध्यक्ष प्रसिद्ध प्रशासक तथा शिक्षा शास्त्री डा० चिन्तामन देशमुख, आई० सी० एस ने अपने उद्घाटन भाषण में शिक्षा के क्षेत्र में आर्य समाज के महान कार्य की प्रशंसा करते हुए दयानन्द विश्वविद्यालय के सुझाव का स्वागत किया था और सम्मेलन का यही सबसे महत्वपूर्ण निश्चय भी था। अत इस निर्णय को पूरा करने के लिये दयानन्द विश्वविद्यालय स्थापना समिति बनाई गई जिसमें अनेक प्रसिद्ध शिक्षा विशेषज्ञ तथा भिन्न भिन्न प्रान्तों के प्रमुख आर्य सज्जन सदस्य मनोनीत किये गये। दिनांक २२ सितम्बर १९६३ को देहली में कार्यकारिणी तथा विश्वविद्यालय समिति की सम्मिलित बैठक इस महत्वपूर्ण प्रश्न पर विचार विनिमय करने के लिये की गई। विश्वविद्यालय की स्थापना के लिये तीन स्थान विचाराधीन थे अर्थात काठियावाड़ में टंकारा जहां ऋषि दयानन्द का जन्म हुआ, मथुरा जहां उन्होंने शिक्षा ग्रहण की तथा अजमेर जहां उनका स्वर्गवास हुआ। जैसा डा० मेहरचन्द महाजन ने बताया अजमेर में कई अनुकूल परिस्थितियां हैं। ऋषि दयानन्द की निर्वाण भूमि व देश के केन्द्रीय स्थान में होने के अतिरिक्त वहां निकट भविष्य में विश्वविद्यालय की स्थापना में सहानुभूति के अतिरिक्त वहां एक विशाल दयानन्द कालेज भी मौजूद है और उसको अपनी पर्याप्त खुली भूमि भी है। अत सर्व सम्मति से निश्चय किया गया कि यह विश्वविद्यालय अजमेर में स्थापित किया जावे। पंजाब, उत्तरप्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र राजस्थान तथा देहली आदि के उपस्थित प्रतिनिधियों ने इस निर्णय का उत्साहपूर्वक स्वागत करते हुए उसे पूरा करने में सहायता देने का आश्वासन भी दिया। तारीख १२ जनवरी, १९६४ को डी० ए० वी० कालेज, कानपुर में हुए परिषद के सम्मेलन में सर्वसम्मति से इस निश्चय का समर्थन कर दिया गया और अब कार्यान्वित करना हम सबका पवित्र कर्तव्य हो जाता है।

यह स्पष्ट है कि केवल प्रस्ताव और निर्णय मात्र से इतना बड़ा कार्य पूरा नहीं हो सकता इसलिये दयानन्द विश्वविद्यालय कोष का योजना बनाई गई है। हमें विश्वास है कि डी० ए० वी० स्कूलों व कालेजों के अध्यापक तथा विद्यार्थी उनके अभिभावक और प्रबन्धक इस चुनौती को स्वीकार करेंगे। इसी प्रकार सार्वदेशिक सभा आर्यप्रतिनिधि सभाएं तथा देश विदेश में फैली आर्यसमाजें भी धन संग्रह में हमारा हाथ बटायेंगी, ऐसी हमारी आशा व प्रार्थना है। आर्यजगत के अतिरिक्त प्राय सर्वत्र आर्यसमाज व उसकी शिक्षण संस्थाओं की अनेकांगी सेवाओं तथा आधुनिक भारत के निर्माण में ऋषि दयानन्द के महान योगदान के प्रशंसक व समर्थक हैं। उन सबकी उदार सहायता भी इस पवित्र कार्य में मिलेगी। (क्रमश)

हंसराज महिला महा-विद्यालय का पारितोषिक वितर्णोत्सव

प्रतिरक्षा मंत्री श्री चह्वाण ने सभापति पद को सुशोभित किया।

जालंधर—१३ मार्च १९६४ का हंसराज महिला महाविद्यालय की पारितोषिक वितर्णोत्सव कालिज के विस्तृत प्रांगण में सायं ३॥ बजे सम्पन्न हुआ। पंडाल माननीय अतिथियों से भर पूर था। स्थान २ पर कालिज की छात्राएं अपनी ड्यूटी पर तैनात थीं। कार्यक्रम के समय पंडाल में पूर्ण शान्ति का राज्य था। स्वागत भाषण के पश्चात् छात्राओं का कार्यक्रम अतीव मनोहारी था। श्री चह्वाण जी ने अपने पवित्र हाथों से कालिज की कन्याओं को इनाम तकसीम किए। अध्यक्षीय भाषण में आपने कहा कि एक पुरुष को शिक्षा देने से एक ही व्यक्ति शिक्षित होता है जब कि एक कन्या को शिक्षा देने से समूचा परिवार शिक्षित होता है। स्त्री शिक्षा राष्ट्रीय उन्नति का सुदृढ स्तंभ है।

प्रतिरक्षा मंत्री ने, कालिज छात्राओं को सैन्य संबंधी पारितोषिक देते हुए अत्यन्त प्रसन्नता प्रकट की और कहा कि 'मैं तो अब तक पंजाब के पुरुषों को ही सैनिक कार्यों में अग्रणी समझता थो लेकिन इस कालिज की छात्राओं को प्रतिरक्षा सेवाओं के लिए पुरस्कार प्राप्त करते देख कर अत्यन्त संतोष हुआ है। इस में भारत का उज्वल भविष्य निहित है।

तत्पश्चात् कालिज की प्रिन्सीपल मिस विद्यावती आनंद MA ने वार्षिक रिपोर्ट पढ़ी जिस में कालिज की छात्राओं का सरल जीवन धार्मिक विचार, तथा परस्पर का संगठन आदि धाराओं का सुन्दर वर्णन किया।

अंत में श्री यश जी के संक्षिप्त, तथा ओजस्वी भाषण के साथ कार्यवाही समाप्त हुई।

व्यवस्थापक

कानपुर में हिन्दू लड़की बुरके में बरामद। अभियुक्त मुसलमान गिरफ्तार।

कानपुर कचहरी में कल उस समय सनसनी फैल गई जब केन्द्रीय आर्य सभा कानपुर के मन्त्री चौ देवीदास आर्य (सभासद नगर महापालिका) ने एक संदिग्ध युवती का बुरका हटा दिया तो वह रेल बाजार से अपहृत हिन्दू लड़की मुन्नी देवी निकली। अपहरण कर्ता रेलबाजार निवासी इब्राहीम यह देख कर भाग खड़ा हुआ लेकिन श्री आर्य व उन के साथियों ने अहाता कचहरी में ही उसे पकड़ लिया और कोतवाली पुलिस के सुपुर्द कर दिया।

कुमारी मुन्नी देवी की आयु लग भग १६ साल की है उसको ५ मार्च को भगाया गया था। उसे पहिले इलाहाबाद ले जाया गया तत्पश्चात स्थानीय बाबू पुरवा में रखा गया। कल कचहरी में एक मुसलमान वकील के पास लिखा पढ़ी के लिए उसे बुरका पहना कर लाया गया। इस बीच में श्री आर्य जी को किसी तरह पता चला और उन्हों ने तुरन्त वहां पहुंच कर साहस से लड़की को व अभियुक्त को पकड़ लिया। लड़की को डाक्टरी के लिए भेजा गया।

यह भी ज्ञात हुआ है कि अभियुक्त रेल बाजार में होटल चलाता है लड़की के माता पिता ने भी आर्य से इस मामले में सहायता मांगी थी इसी लिए भी आर्य ने उस की खोज की।

देवी दास मंत्री

महाराष्ट्र दर्शन

(ले० श्री सत्यवीर जी शास्त्री 'पुरोहित आर्यसमाज शोलापुर)

(गताक से आगे)

जो अपने आपको 'वारकरी कहते हैं वे प्रति वर्ष कार्तिक मास में पंढरपुर जाते हैं। 'वारकरी शब्द का ही अर्थ होता है बार बार जाने वाला।

ऋषि की अनुकम्पा से इस प्रदेश मे भी आर्य-ज्योति कहीं कहीं पर पहुच गई है। आर्य प्रचारकों का अभाव होने से कुछ ग्रामों तथा कुछ नगरों मे आर्यसमाज मन्दिर हैं। बहुत से ऐसे नगर हैं जहा आर्यसमाज का निशान भी नहीं है परन्तु इतना जरूर है कि आर्य समाज के कार्य से वातावरण प्रभावित है। इस प्रदेश मे अपने डी ए. वी. सस्था के कुछ हाईस्कूल तथा कालेज हैं। इन सबो में शोलापुर का कालेज तीव्र गति से बढ़ रहा है। यह महाराष्ट्रीय जनता की बड़े प्रेम से तथा गौरव के साथ लगातार बीस वर्षों से सेवा कर रहा है। अब तो इस कालेज को चार चांद लग गए हैं। क्योंकि इस समय इस के श्रीमान भगवान दास एम ए. जो नीतिमान, कार्यकुशल दृढ़ोत्साही, उदारचरित हैं वह प्रिंसिपल का पद सुशोभित कर रहे हैं। उनके ही कार्य प्रभाव से समीप के प्रदेशों से भी विद्यार्थी विद्या ग्रहणार्थ इस महाविद्यालय में आकर कुछ अशों में वेद सन्देश स्वप्रदेश को ले जाते हैं। प्रिन्सिपल साहेब के अन्दर जहा बहुत-सारी विशेषताए हैं वह एक यह है कि वह किसी भी स्थान से चाहे राजनीतिक हो चाहे सामाजिक हो कोई भी स्थान हो उनके अनेक भाषणों से विदित हुआ उनके मुख कमल से ऋषि दयानन्द, तथा आर्यसमाज निकले बिना नहीं रह सकता। इसका कारण यही है कि उनके नस-नस मे आयसभ्यता सचार कर रही है।

हमारे मे एक भ्रम-सा है कि हम निज प्रदेश से दूसरे प्रदेश मे प्रचार करने मे सफलता प्राप्त नहीं कर सकते। भाषा नहीं आती रीतिरिवाजो का ज्ञान नहीं परिचित प्रदेश नहीं यह दूसरी बातें केवल टालने की है जो प्रचार करना चाहता है वह किसी भी स्थान पर कर सकता है। उदाहरण सन्मुख है 'श्री राजेन्द्र जिज्ञासु' जिनको पंजाब के प्राय आबाल वृद्ध जानते हैं अभी-अभी शोलापुर कालेज में प्राध्यापक बनकर आए और आते ही प्रचार आरम्भ कर दिया है। मनुष्य ससार मे किसी स्थान पर, नगर, ग्राम, देश, विदेश मे चाहे कहीं भी उसे एक सदृश स्थिति होती हैं। नीतिज्ञ चाणक्य का कथन है।

पचत्वानुगमिष्यन्ति यत्र-यत्र गमिष्यसि।

मित्रान्यमित्राणि मध्यस्थोपजा-व्योपजीविन.॥

पाच प्रकार के मानव हर जगह मिलते है, मित्र, अमित्र, मध्यस्थ, सहायता देने वाले, और सहायता लेने वाले, यह यथार्थ कथन है इस से हमें प्रेरणा लेनी चाहिए और उत्साहित हो प्रतिप्रदेश मे प्रचार करना चाहिए। प्रचार की दृष्टि से महाराष्ट्र में वातावरण बना हुआ है। हैद्राबाद सत्याग्रह का प्रभाव सम्पूर्ण प्रदेश पर है, तथा आज की स्थिति यह है प्रचार का विरोध करने की शक्ति का ह्रास हो चुका है, अब. इस दक्षिण के उत्तम वातावरण से लाभ लेना चाहिए'।

अब आवश्यकता है दक्षिण में भी स्वामी श्रद्धानन्द जी की महात्मा मुन्शीराम जी की, पंडित लेखराम जी की स्वामी दर्शनानन्द जी की, पंडित गणपति शर्मा की—परन्तु ये दक्षिण से तभी निर्माण, होंगे ना जब कि हम आर्य समाज का प्रचार करेंगे।

दयानन्द-वचनामृत

'उसी नामका जप अर्थात् स्मरण और उसी का अर्थ-विचार सदा करना चाहिए। जो पुरुष सन्यास लेना चाहे, वह तीन दिन तक दुग्ध-पान सहित उपवास करे भूमि पर सोवे, प्राणायाम, ध्यान तथा एकान्त देश में ओंकार का जप करता रहे। जो जानने की इच्छा से गौण संन्यास ले, वह भी विद्या का अभ्यास, सत्पुरुषों सग, योगाभ्यास, ओंकार का जप और उसके अर्थ-परमेश्वर का विचार भी किया करे।'

(स्वामी सत्यानन्द जी)

मधु कलश

चलने का ही नाम जिन्दगी कसो कमर को चलते जाओ
बनकर फूल रहो दुनिया मे खुद महको, इसको महकाओ
पानी जैसी चचलता से हरगीज काम नहीं चल सकता
मृत्यु से टकराना सीखो भावों में स्थिरता लाओ
अमृत कभी नहीं हो सकती लाख मधुर हो हाला
करो लाख उपचार रहेगा तम काले का काला
धन से मोल नहीं मिल सकते सदगुण कभी जगत में
लेकिन सब धन पा सकता है जग में सदगुण वाला
खुद सकट में पड़कर सब के सकट हरना सीखो
हसते-हसते जीना सीखो हसकर मरना सीखो
अगर लालसा कुछ पाने की है कुछ भी मन के अन्दर
तब तुम सब से पहले साथी अर्पित करना सीखो

(क्रमश)

--विजय निर्बाध

पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज

की

आध्यात्मिक कथा १७ से २२ मार्च तक आर्यसमाज लारेंसरोड अमृतसर मे हो रही है।

एको सिमरिये 'नानका'
जो जल थल रहा समाई।
दूजा काहे सिमरिये,
जो जन्मे ते मर जाई॥
प्रारब्ध पहिले बनी,
पाछे बने शरीर।
'तुलसी' यही आश्चर्य है,
जो मन न बान्धे धीर॥
जात पात पूछे न को,
हर को भजे सो हर का हो।

दल से देश प्यारा

(पृष्ठ ३ का शेष)

से कहना चाहते हैं कि नगरों में अपने २ समाज तथा सम्मिलित केन्द्रीय आर्य सभाओं द्वारा विशेष प्रचार, सम्मेलनों का स्थान २ पर आयोजन कर के इस प्रवाह को रोकने का प्रबन्ध करें। समाज के सिवाय यह करे भी कौन।

—त्रि० चन्द्र

पुराणों और तन्त्रों का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध

ले० श्री पिंडीदास जी ज्ञानी प्रधान आर्य समाज लोहगढ अमृतसर

(गतांक से आगे)

श्री भगवानोवाच

वैष्णवी तन्त्र— स्वयोक्त क्रम सर्वत्र सर्वदा साधकैर्बलिदानस्य ग्राह्य. सर्व सुरस्य च ।।२।।

पक्षिण कच्छपा ग्राह्या मत्स्या नवविधा मृगा ।
महिषो गोधिका गावच्छागो बभ्रुश्च सूकर ।।३।।
खड्गश्च कृष्ण सारश्च गोधिका शरभो हरि ।
शार्दूलश्च नरश्चैव स्वगात्र रुधिरं तथा ।।४।।
चण्डिका भैरवादिनाम्बलय परिकीर्तिता ।
बलिभि साध्यते मुक्ति र्बलिभि साध्यते दिवम् ।।५।।
नारेणैवाथ मासेन त्रिसहस्रंच वत्सरान् ।
तृप्तिमाप्नोति कामाख्या भैरवी मम रूप धृक ।।१६।।

कालिका पुराण अध्याय ७० श्लो० २, ३, ४, ५, १६

नरस्य शीर्षमादाय साधको दक्षिणे करे ।
वामेन रौधिर पात्र गृहीत्वा निशि जाग्रत ।।६६
यावद्रात्र स्थितो मर्त्यो राजा भवति चेद्ध्रुवे ।
मृते मम गृह प्राप्य गणानामधिपो भवेत ।। ७४

कालिका पुराण अ० ७१

गौ की, नर की तथा पशुओं की बली

अर्थात—सब देवताओंके लिये बलिदान का जो कार्य-क्रम वैष्णवी तन्त्र के कल्प में कहा गया है, साधक उसे ग्रहण करे ।।२

पक्षी, कछुवे, नौ प्रकार के मृग, भैंसे, गोय, बकरे, नेवले तथा सूअर ग्रहण करे ।।३

गैंडा, हीरा, हरिण, गोह, शरभ (मृग) शेर (अथवा) बन्दर, बाघ, आदमी तथा अपने अंगों का लहू ।।

ये चण्डिका अथवा भैरव आदियों की बलिया कही हैं। बलियों से ही मुक्ति सिद्ध होती है और बलियों से ही स्वर्ग प्राप्ति होती है ।।५

मेरे रूप को धारण करने वाली कामाख्या-भैरवी आदमी के मास से तीन हजार वर्ष तक तृप्त रहती हैं।

(राजा बनने का पुराणोक्त नुस्खा)

साधक को चाहिये कि दायें हाथ में आदमी का सिर लेकर और बायें हाथ में लहू का पात्र पकड़ कर रात भर जागता रहे। जो पुरुष (इस प्रकार) रात भर खड़ा रहे वह आदमी राजा बन जाता है। मरने पर मेरे धाम में पहुंच कर गणों का अधिपति हो जाता है।

वर्ष भर सुखी रहने का नुस्खा भगवान् (कृष्ण) उवाच

गन्ध पुष्पान्न नैवेद्य . सक्षीरैर्गुडपायसै ।
मद्य मास सुरा लेह्य चोष्य भक्ष्योपहारकै . ।।
मन्त्रेणानेन राजेन्द्र स मन्त्री स पुरोहित
पूजां करिष्यति यो वं सौख्यं स्यात्तस्य वत्सरम् ।।

अर्थात—गन्ध, पुष्प, अन्न तथा दूध समेत नैवेद्य, गुड़ और दलमयी (खीर), मद्य, मास तथा सुरा, चटनियां, चूसने वाले खाद्य पदार्थों की भेंट दे कर मन्त्री और पुरोहित समेत जो राजा पूजा करेगा वह साल भर सुखी रहेगा।

(छापा पूना पद्म पुराण उत्तर खण्ड अध्याय ८८४ श्लोक ४१, ४०)

नीचे के प्रमाण सुराचित भारत धर्म रक्षक, वर्गविद्वच्छिरोमणि तन्त्र-सागर मन्थन-मन्दराचल श्री युक्त शिवचन्द्र विद्यार्णव भट्टाचार्य महोदय के 'तन्त्र तत्व' नामक ग्रन्थ में से लिये गये हैं देखिए।

Principls of Tantra Edited by Arthur Avalor Book I

'My worship is of three kinds—Namely Vaidik Tantrik and mixed (Pauranik) I shou'd, therefor, be worshipped according to the rules prescribed in three shastras of Veda, Tantra and purana'

अर्थात—मेरी पूजा के तीन प्रकार हैं—वैदिक, तान्त्रिक तथा मिश्रित (पौराणिक)। इस कारण मेरी पूजा तीनों शास्त्रों वेदों, तन्त्रों और पुराणों में वर्णित नियमों के अनुसार करनी चाहिए।

श्रीमद्भागवत स्कन्ध ११ श्री कृष्ण-उद्धव सम्वाद

'He who would free himself from the bonds of heart should worship Bhagwan in the manner prescribed in Tantra

अर्थात्—वह, जिसे मानसिक बन्धनों से विमुक्त होने की इच्छा हो, तन्त्रों में वर्णित विधि से भगवान का अर्चन करे।

श्री भद्भागवत ११ स्कन्ध

'Hear also how worship is to be performed in the Kali age, according to the Ordinance of Various Tantras.'

अर्थात्—यह भी सुनो कि कलियुग में तान्त्रिक विधि विधान के अनुसार पूजा कैसे करनी चाहिये।

'Commenting on this Verse Shri Dher Swami says —

'By a Separate reference again the Superiorty of Tantrik Path in the Kali Age is shown

उक्त श्लोक पर टीका करते हुए श्री धर स्वामी कहते हैं कि पृथक् उद्धरण से फिर कलियुग में तान्त्रिक मार्ग की उत्कृष्टता दर्शाई गई है।

"In the same work Bhgwan come selled udhav, the crest gem of devotees, as to what should be done in his own worship"

अर्थात्—इसी श्री मद्भागवत में भगवान् ने भक्तशिरोमणि उद्धव को उपदेश दिया है कि स्वयं उनकी पूजा में क्या करना चाहिये।

" Then worship me with mantras prescribed both the Veda and tantra shastras for attainment of sidhi in both."

अर्थात् तो फिर मेरी पूजा वेद तथा तन्त्र शास्त्र में लिखे मन्त्रों द्वारा करो ताकि दोनों में सिद्धि की प्राप्ति हो।

"We ask those who have faith in Bhagwan and the Bhagvat, whether thy have faith in Bhagwan as stated in the Bhagvat."

अर्थात—जिन लोगों की भगवान् तथा भागवत में श्रद्धा है, हम उन से पूछते हैं कि वे भगवान् के उपदेश को मानते हैं या नहीं जो उन्होंने भागवत में वर्णन किया है।

Intelligent men should warship Jauardan (Krishna) by the rites prescribed in the Ved or Agame

अर्थात—ज्ञानी पुरुष जनार्दन (भगवान् कृष्ण) की पूजा वेद अथवा तन्त्र में वर्णित विधि के अनुसार करें।

"The Devi should be meditated upon as ten-handed and worshipped according to Durga Tantra The entire Kalika Purana follow, the Tantra All the Vajas, mantras and murtis of Bhegwan **maheshwar which are given for the Shiv Kavacha in the Brahmothar Khand of Sakanda Purana are iauspired by Trntra**

(क्रमश.)

प्रादेशिक सभा का वेद प्रचार कार्य

आर्य समाज कोट--अम्बाला का यज्ञ उत्सव ४ से ११ मार्च को धूमधाम से सम्पन्न हुआ। श्री अमरसिंह जी, श्री जगतराम जी, श्री वस्तीराम जी, श्री मेलाराम जी, श्री सुभाष जी सभा की ओर से पधारे।

आर्य समाज नई गोमका का उत्सव २० से २२ मार्च का समारोह से सम्पन्न हो रहा है। श्री प० त्रिलोक चन्द्र जी, श्री हजारी-लाल जी, श्री राजपाल जी, श्री मदनमोहन जी, श्री मेलाराम जी खुशीराम शर्मा भाग ले रहे हैं।

आर्य समाज गोगरा गाव बम्बई का उत्सव १२ से १५ मार्च को समारोह से सम्पन्न हुआ। श्री राजपाल जी श्री मदनमोहन जी मण्डली पधारी।

आर्य समाज राजपुरा टाउन शिप का यज्ञ ३ से ११ मार्च को धूमधाम से सम्पन्न हुआ। श्री प० ओमप्रकाश जी पधारे।

आर्य समाज खन्ना का उत्सव २७ से २९ मार्च को समारोह से सम्पन्न हो रहा है। २३ मार्च से श्री प० त्रिलोक चन्द्र जी कथा करेंगे। और श्री मेलाराम जी के भजन होंगे। उत्सव पर श्री ठा० दुर्गासिंह जी, श्री प० सुखानन्द जी, श्री प्रो० वेदीराम जी शर्मा एम.ए., श्री प० रलाराम जी एम ए, एम एल ए, प्रधान सभा २६ मार्च को पधार रहे हैं।

आर्य समाज अखनूर (जम्मू) का महोत्सव २७ से २९ मार्च को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। २३ मार्च से यज्ञ कथा श्री प० ओमप्रकाश जी द्वारा। भजन श्री जगतराम जी, श्री वस्तीराम जी। उत्सव पर श्री राजपाल जी, श्री मदनमोहन जी मण्डली, खुशीराम शर्मा, तथा श्री प० हरिश्चन्द्र जी शास्त्री जम्मू भाग ले रहे है।

डी ए वी हाई स्कूल हरयाणा का उत्सव २७ से २९ मार्च को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। श्री हजारी लाल जी पधार रहे है।

आर्य अनाथालय फिरोजपुर का उत्सव ३ से ५ अप्रैल को समारोह से सम्पन्न हो रहा है। २६ मार्च से कथा पर सभा की ओर से श्री दुर्गासिंह जी पधार रहे हैं। उत्सव पर सभा की ओर से श्री प० त्रिलोकचन्द्र जी, श्री राजपाल जी, श्री मदन मोहन जी, श्री मेलाराम जी, श्री खुशीराम शर्मा भाग ले रहे हैं।

आर्य समाज जलालाबाद गर्वी का उत्सव १० से १२ अप्रैल को सम्पन्न हो रहा है। ६अप्रैल से कथा श्री प० त्रिलोक चन्द द्वारा भजन श्री दुर्गासिंह जी। उत्सव पर श्री प० चन्द्रसेन जी, श्री राजपाल जी मदनमोहन जी की मण्डली पधार रही हैं।

आर्य समाज जोगेन्द्रनगर का उत्सव ११ से १३ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। इस यज्ञ कथा पर श्री प० ओमप्रकाश जी श्री जगतराम जी श्री वस्तीराम जी पधार रहे हैं।

आर्य समाज प्रेम नगर करनाल का उत्सव २२ से २४ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है।

आर्य समाज लारेस रोड अमृतसर मे १६ से २२ मार्च तक पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी कथा कह रहे हैं। श्री दुर्गासिंह जी के भजन होंगे। और आर्य समाज लारेसरोड अमृतसर में ८ से १३ अप्रैल तक खुशी राम शर्मा कथा कहेंगे।

आर्य व्यायाम शाला गोनीपत का उत्सव २२ से २४ अप्रैल को समारोह से सम्पन्न हो रहा है।

—खुशीराम शर्मा।
अधिष्ठाता वेद प्रचार सभा

राजपुरा टाउन में विश्व कल्याण यज्ञ एव धर्म मेला

राजपुरा टाउन अनाजमण्डी के आढ़तियों की ओर से ४-३-६४ से १०-३-६४ तक अनाज मण्डी के मैदान में वृहद् यज्ञ और प्रचार का विशेष आयोजन किया गया। मण्डी के सभी सज्जनों ने इस प्रचार कार्य में पूरा पूरा सहयोग दिया और प्रात साय दोनों समय बड़ी लग्न और श्रद्धा से सपरिवार सम्मिलित होकर धर्म लाभ उठाया। सभा के सुयोग्य महोपदेशक श्री पं० ओम्प्रकाश जी ने अस्वस्थ होते हुए भी सारे कार्य को सफलता से सम्पन्न कराया। जनता पर आप के प्रचार का यथेष्ट प्रभाव पड़ा।

८-३-६४ से १० ३ ६४ तक जम्मू के प्रसिद्ध गायक श्री सेवाराम जी रेडियो सिंगर ने पधार कर उत्सव की शोभा को और भी बढ़ा दिया उनके सुरीले संगीत से सुविज्ञ जन खूब प्रभावित हुये।

आर्य समाज टाउन शिप के सभी सज्जनों का इस धर्म प्रचार में पूरा सहयोग अनाज मण्डी के आढ़तियों को प्राप्त रहा।

अनाज मण्डी के श्री ला० भगवानदास जी, ला० बलदेवराज जी, श्री रामचन्द्र जी, श्री दौलतराम जी, श्री नियामता राम जी तथा आर्य समाज के दीवाने--सम्माने मन्त्री मुनि चेतनदेव जी, श्री पं० हरिदेव जी, श्री महेन्द्र जी, श्री ज्ञानचन्द जी, श्री रामलाल जी, श्री फकीरचन्द जी आदि सभी महानुभाव बधाई के पात्र हैं। माताओं का धर्म प्रेम भी दर्शनीय एवम् अनुकरणीय था।

इस शुभ अवसर पर सभा को १०१) वेद प्रचारार्थ धन भी श्रद्धा से भेंट किया गया और भविष्य के लिए भी पूरे सहयोग का आश्वासन दिया गया।

★★★

आर्य समाज जोगेन्द्रनगर (हिमाचल प्रदेश)

मे महात्मा हसराज जयन्ती समारोह के उपलक्ष में दिनाक ४ अप्रैल से १३ अप्रैल १९६४ तक बडी धूम धाम से मनाया जा रहा है जिस में प० त्रिलोक चन्द जी शास्त्री बी० ए० तथा श्री जगतराम जी की भजन मण्डली यज्ञ तथा सत्यार्थ प्रकाश की कथा करेंगे। आर्य सज्जनों से पुरजोर अपील है कि इस समारोह को सफल बनाने में तन मन धन से सहयोग दे कर कृतार्थ करें।

मुरारी लाल मन्त्री समाज

अदालती नोटिस

बा अदालत श्री देसराज जी महाजन P.C.S सब जज दर्जा अवल (ए) भटिंडा

इश्तहार जेर आर्डर ५ रूल २० C.P.C.

दलीप सिंह वलद काकू सिंह, बचन सिंह वलद गुरमुख सिंह, ज्योति बेवा हरि सिंह, साधु सिंह, बानू सिंह, गुरदीप सिंह नाबालगान बेटे पाला सिंह व सरपरस्त मुसम्मात शाम कौर वाल्दा खुद साकनान बंगी निहाल सिंह मुदैयान

बनाम—जंग सिंह वगैरह साकनान बंगी निहाल सिंह मुदैला

—दावा दखलयाबी अराजी—

—नोटिस बनाम—सुच्चासिंह वल्द गुरमुख सिंह सकना बंगी निहाल सिंह मुदैला

मुकद्दमा अनवान मुदर्जा बाला में मोरखा 1.4 64 की तारीख पेशी थी जाकर अदालत हजा को यकीन कामिल हो चुका है कि मुसम्मी सुच्चा सिंह मुदैला जान बूझ कर तामील समन से गुरेज करता है और रूपोश है लिहाजा इश्तहार बनाम मुसम्मी सुच्चा सिंह मुदैल जारी किया जाकर उसको मुतला किया जाता है कि वो मुकाम भटिंडा मोरखा 1 4.64 को सुबा १० बजे हाजिर अदालत हजा होकर पैरवी मुकद्दमा करे वरना उसके खिलाफ़ कारवाही यकतरफा अमल में लाई जावेगी । मोरखा 11.3 64 को बसबत मोहर अदालत और मेरे दसखतों के जारी किया गया।

****

म. आनन्द स्वामी जी महाराज के चरणों में विनीत प्रार्थना

२३-२-६४ के सभा के साधारण वार्षिक अधिवेशन में जो कि लोहगढ अमृतसर मे सम्पन्न हुआ था, मे सर्वसम्मति से आप सभा के प्रधान निर्वाचित हुए हैं। सभा के प्रतिनिधियों द्वारा तथा अधिकारियों द्वारा लिखित प्रार्थना आपके चरणों मे की गई है और व्यक्तिगत रूप से भी आपकी सेवा में कई सज्जन प्राथना कर चुके हैं। लेकिन अभी तक श्रीमान जी ने सभा प्रधान बनने की स्वीकृति नहीं प्रदान की। सभा का कार्य रुका पड़ा है। कृपया प्रधान पद को स्वीकार करते हुए सभा के भविष्य को उज्वल करें।

सन्तोष राज

निःसन्तान परिवार ध्यान से पढ़ें

यदि आप विवाह के बाद अब तक नि सन्तान हैं तो इस रोग के सफल चिकित्सक श्री. प. श्यामसुन्दर जी स्नातक (महोपदेशक पंजाब प्रतिनिधि सभा) से मिले या पत्र व्यवहार करे। श्री स्नातक जी भारत के अनेक परिवारों की सफलता पूर्वक चिकित्सा कर चुके हैं।

पूर्ण कोर्स ३ मास—पूर्ण व्यय २०० रुपए।

पत्ता—प श्याम सुन्दर स्नस्नातक महोपदेशक पजाब सभा ३०३ रानी बाग शकूर बस्ती देहली

स्वराज्य और आर्य समाज

(पृष्ठ २ का शेष)

हों। मुहल्ले मुहल्ले में वे-शास्त्रों की कल्याणी वाणी सुनावें और जनता को समझावें कि धर्म के बिना देश का उद्धार नहीं हो सकता और न 'स्वाराज्य' बन पाएगा। भ्रष्टाचार की भयकर बाढ़ रोकने के लिये हृदय-परिवर्तन की आवश्यकता है कानूनों के कोड़ों ने न कभी हृदय-परिवर्तित किये न कर सकते हैं। उनका प्रभाव तो शरीर तक सीमित है। फिर भी कानून को बड़ी आवश्यकता है। विधानों का निर्माण अवश्य होता रहे, परन्तु सब से आवश्यकता धर्म प्रचार की है। धर्म किसी समुदाय या राष्ट्र विशेष के लिये नहीं होता वह तो विश्व के लिये है। 'वैदिक धर्म' ही एक मात्र ऐसा धर्म है। और भी जहा विश्व धर्म की चर्चा है, वहां वेदों से ही सब बाते गई हैं क्योंकि वैदिक धर्म सृष्टि के आदि से है। आर्य समाज को प्रत्येक प्रकार की दल बन्दी से दूर रह कर केवल शुद्ध भावना से सर्वसाधारण में धर्म-प्रचार करना चाहिए। इस से जनता मे नैतिकता की ज्योति जगेगी और नागरिकता का स्तर भी ऊंचा होगा।

आर्य समाज खन्ना

का वार्षिकोत्व २७ से २९ मार्च १९६४ को होना निश्चित हुआ है। इस अवसर पर २३ मार्च १९६४ से श्री प. त्रिलोक चन्द्र जी महापदेशक सभा की कथा व श्री मेला राम जी के भजन होते रहेंगे।

वैदिन साधन आश्रम यमुना नगर (अबाला)

मे तेहरवा साधना शिविर १ से ५ अप्रेल १९६४ तक बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। उच्च कोटि के विद्वानो के अतिरिक्त अष्टांग योग साधन की शिक्षा, और आध्यात्मिक यज्ञ का भी आयोजन हो रहा है। जनता इस सुअवसर से लाभ उठाए। भोजन आदि का प्रबंध आश्रम की ओर से होगा।

आर्य समाज यमुना नगर का प्रचार कार्य

श्री प० विश्वनाथ जीने फरवरी मास में ३ विवाह, १ नाम करण संस्कार तथा १ प्रवेश सस्कार कराया।

श्री पं० मुकन्द लाल जी शर्मा के सुपुत्र शिव कुमार के शुभ विवाह पर ११००) दान में दिए जिस में १५१) वेद प्रचारार्थ मिले।

लेखराम बलिदान दिवस समाज मंदिर में मनाया गया इस अवसर पर स्वामी सत्यानंद जी, पं० विश्वनाथ आदि के व्याख्यान हुए।

ईसाई निरोध प्रचार

ईसायत के प्रचार का रोकने के लिए तथा अमृतसर में महासिंह गेट में ईसाई मिशनरी की ओर से जो भ्रमजाल फलाया जा रहा था, उसे रोकने में दूसरे आर्य समाजों के साथ दयानन्द साल्वेशन मिशन होश्यार पुर की ओर से काम करने वाले श्री ज्ञानी राम सिंह जी ने भी बड़ा काम किया। अमृतसर के ग्रामों में भी ज्ञानी जी ईसाईमत के प्रचार को रोकने में खूब प्रचार कर रहे हैं।

आवश्यकता

आर्य समाज जोगेन्द्र नगर को एक सुयोग्य मिशनरी प्रचारक की आवश्यकता है। जो कि आर्य समाज का प्रचार तथा धार्मिक शिक्षा शास्त्री का कार्य कर सके हारमोनियम आदि का भी ज्ञान होना आवश्यक है। आर्य युवकों में प्रचार की क्षमता रखता हो उत्सुक व्यक्ति अपनी पूर्ण योग्यता एवं कार्य सम्बन्धित पूर्ण पत्र व्यवहार समाज से करें और न्यूनतम वेतन व अधिकतर मासिक दक्षिणा कितनी लेंगे।

मुरारी लाल
मन्त्री आर्य समाज

मुद्रक व प्रकाशक श्री सोतषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जाल०५९

टैलीफोन न० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd No. P. 12

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक १३) १७ चैत्र २०२० रविवार—दयानन्दाब्द १४०— २९ मार्च १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तयः

अरं शक्र परेमणि

हे सर्वशक्तिमन परमेश्वर! ऐसी कृपा करें कि हम तेरे ही परेमणि—परम रूप मे, रस-पान करने में, तेरी स्तुति मे आप की ही आराधना, साधना, में ही अरलगे रहें, मग्न मस्त रहें। आप की भक्ति की मस्ती का परमरस सदा पान करते रहें।

विश्वा यदजयः स्पृधः

हे मानव! तेरे अन्दर जितनी भी तामसी प्रवृत्तिया हैं, जिन के कारण यह जीवन तमोमय बनता जाता है, उन सब को जीत ले। उन तमोभावों को दूर भगाने के लिए उन पर पूरे रूप से विजय प्राप्त कर ले। ये तमोगुण मुझे अपना दास न बनाने पावें।

मत्स्व प्रभू वसो

इस शरीर में निवास करने वाले आत्मन्! बड़ी सामर्थ्य रखने वाले आत्मन! तू सदा ही प्रसन्न रह। कभी भी विषाद को प्राप्त न हो। जीवन की निष्ठा सदा प्रसन्नता में है, घबरा कर सदा रोते रहना या निराश होना जीवन की साधना नहीं है। सदा प्रसन्न रहो।

सा म वे द से

वे दा मृ त

मनसापरिक्रमामन्त्राः

ओ३म् ध्रुवादिग् विष्णुरधिपतिः कल्माषग्रीवो रक्षिता वीरुध इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्योऽस्तु। योस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भेदध्मः॥अथर्व का. ३सू. २७ मन्त्र ५

अर्थ —हे महादेव! इस (ध्रुवा दिग्) नीचे वाली दिशा में भी आप (विष्णु) विष्णु रूप से व्यापक हो कर (अधिपति) सब के स्वामी बन रहे हो। इस दिशा मे जो भी (कल्मापग्राव) हरी २ गर्दन वाले हैं, उन के द्वारा (रक्षिता) हमारी रक्षा करते तथा (वीरुध) ये वृक्ष, लता वनस्पतिया आदि (इषव) बाण हैं इनसे हमारा सदा कल्याण करते हों। (तेभ्य नम) इन के लिए नमस्कार हो, (रक्षितृभ्य नम) रक्षा के इन साधनों के लिए नमस्कार हो। (य अस्मान् द्वेष्टि) जो भी हम से द्वेष करते हैं, (तं व. जम्भे दध्म) उसे आप के नियम में भेंट करते हैं।

भाव —प्रीतम! चारों दिशाओं में भटकने के बाद सोचा कि नीचे वाली दिशा में घूम २ कर के देख लूं, शायद चंचल चित्त को शान्ति मिल जाये। पर मेरे देव! इस नीचे की दिशा में भी मेरा चंचल चित्त खूब भटका, दौड़ा किन्तु इसे शान्ति न मिली। इस दिशा में भी आप की सर्वव्यापकता की सर्वत्र झलक देखी। आप विष्णु बन कर यहा पर भी सर्व व्यापक हो कर विराजमान हो रहे हो। यहा जितने भी हरे भरे वृक्ष हैं, वनस्पतियां ओषधिया हैं, हमें सुख देती हैं, उन से हमें जीवन का सुख देते हो, वे बाण हैं, जिन के द्वारा हमारे रोगों का उन के द्वारा हनन हो जाता है। हे परमेश! हम आप के भक्त आप की इन शक्तियों का सदैव समादर करते हैं। इन से पूरा २ लाभ उठाते हैं। अपने द्वेषियों को हम आप के नियमों की भेंट करते हैं।

—सं.

ऋषि दर्शन

ब्रह्म अस्ति

हे लोगो! इस संसार मे ब्रह्म है, उस परमेश की परम-सत्ता सर्वत्र विद्यमान है। आस्तिकता को जाने माने बिना गुजारा नही है। इस विचित्र विश्व के चित्र को देखकर उस चित्रकारसे इनकार कैसे किया जा सकता है ब्रह्म है, सर्वत्र उसकी अनुभूति होती है।

अन्तर्बहिः स्थितम्

वह ब्रह्म सब के अन्दर और बाहिर व्यापक है जितना भी यह विशाल विश्व है, सर्वत्र उस की व्यापकता है। पर्वत कन्दराओं, जल थल में, घने एकान्त जगलों मे, मानव के अन्दर भी उसकी सत्ता का अनुभव होता है। उस से कोई भी स्थान खाली नहीं वह स्व है।

यथार्थतया ज्ञाता

वह सब का सब कुछ भली भाति जानता है। हम कोई वस्तु, कोई रहस्य, कोई भाव भी उस से गुप्त नहीं कर सकते। जो मन में भी सोचते हैं, कमरे में बन्द करके भी विचारते हैं वह भी भली भाति जानता है। सर्वज्ञ है। भाष्य भूमिका से

अधिष्ठाता—संतोषराज सभा मंत्री सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शा

दर्शनों का स्वाध्याय

योगदर्शन का स्वाध्याय

(ले०—श्री डाक्टर शकरदास जी लारेसरोड अमृतसर)

दर्शनों के गम्भीर परिशीलन करने वाले मान्य डाक्टर जी ने हमारे निवेदन पर ध्यान देते हुए दर्शन सम्बन्धी विवेचन के सुन्दर लेख लिखे हैं। गत आर्य जगत् के क्रम के बाद आगे यह लेख है—

इसी प्रकार चिकित्सा शास्त्रो में भी चार विभाग हैं—१ रोग २. रोग का हेतु ३. आरोग्य ४ उपचार ऐसे ही योगदर्शन के चार विभाग हैं। १. ससार २. ससार का हेतु ३. मोक्ष ४. मोक्ष का उपाय। अर्थात १. दु खरूप ससार त्याज्य हेय है। २. प्रकृति पुरुष का अवैदिक योग अर्थात सयोग हेय हेतु दुःख का कारण है। ३ सयोग निवृत्ति हान ४. सम्यक् यथार्थ ज्ञान होना उपाय है।

उन मे हान करने वाला आत्मा का स्वरूप न हेय है और न उपादेय है प्राप्त और त्याग दोनों प्रसग आत्मा के स्वरूप मे नहीं आ सकते। दोनों के निवृत्त करने पर शाश्वत सुख की सिद्धि होती है। वही सम्यक् दर्शन, अनुभूति और यथार्थ बोध है, जो कि इस महान दुःख समुदाय के बीज अविद्या के नाश का कारण है। यद्यपि इन षद्दर्शनों और आचार्यों के उपदेश से वस्तुरूप जाना हुआ यथार्थ ही होता है, क्योंकि उन वस्तुओं मे यथार्थ स्वरूप होने की सामर्थ्य होती है। तो भी जब तक जिज्ञासाभाव से श्रद्धापूर्वक इन दर्शनों का अनुसन्धान Research on scientific lines नहीं किया और कराया जाता, तब तक पूर्ण लाभ नहीं हो सकता। क्योंकि शिक्षित लोगों में विशेष कर वैज्ञानिकों मे यह धारणा व मनोवृत्ति बन गई है कि सारे दर्शन तथा धर्म शास्त्र मनघड़न्त एव भ्रमजाल के विचार हैं। जैसे कि एक वैज्ञानिक ने कहा भी है .—

That all religious matters more or less abounded in sentimentality, mysticism and dogmatic faith and are Void of Practical research which distingush a scientific study.

आईये। हम ध्यान पूर्वक विचारे कि संसार मे सारे प्राणी सब कुछ होते हुए क्यों दु.खों से भय भीत हो रहे हैं और भागते हैं। कोई नहीं चाहता कि उसे दु ख हो। तीनों तापों से पृथक रह कर आनन्द मे मग्न रहने की इच्छा रखते हैं। किन्तु अज्ञानवश उस सच्चे सुख को प्राप्त करने का उपाय न जान कर अनुचित कर्मों में प्रवृत्त हो जाते हैं तथा दुःख भोगते हैं।

दु खो का वास्तविक रूप

न्यायदर्शन १-१-२१ मे आता है—बाधनालक्षण दु.ख, बाधना, पीड़ा, ताप इन का एक ही अथ है। अर्थात् जिस की चोट खा कर के नाश करने का यत्न करते हैं वह दु ख है। यह दु ख तीन प्रकार का है—१ आध्यात्मिक २. आधिभौतिक और ३—आधिदैविक इन में पहिला दु ख आध्यात्मिक है। यहा पर आत्मा मन और शरीर के अर्थ में आया है। Mental and Physical काम क्रोध आदि मानसिक तथा ज्वर चोट आदि शारीरिक दु ख। अधिभौतिक—शेर, सर्प आदि भूतों से मिला दु ख। भूत यहां प्राणियों के अर्थ मे प्रयुक्त हुआ है। तीसरा दु ख आधिदैविक है—बिजली अग्नि, अति वर्षा, आन्धी आदि दैवी शक्तियों से दु ख तथा पूर्वजन्मों के संचित सन्ताप। समय के विचार से भी दु ख तीन प्रकार का है। भूत, वर्तमान तथा अनागत।

दु खो का स्थान

न्याय दर्शन ४-१-३५ में आता है—विविध बाधनायोगात दुःखमेवजन्मोत्पत्ति। अर्थात् जन्म, उत्पत्ति का स्थान अनेक प्रकार के दु खों से युक्त है। सारा संसार दुखों से परेशान है। नारकी दुष्ट जीवों को महान दु ख पशु पक्षियों को मध्यम दु ख, मनुष्यों को हीन दुःख होता है। देव और वीतरागियों को हीनतर दुख होता है इस प्रकार सब प्राणी दु.खो से युक्त हैं। जो जन्म के होने से ही होते है शरीर, इन्द्रिय और बुद्धि आदि के समूह रूप से प्रकट होने को जन्म कहा जाता है। अर्थात् जन्म उत्पत्ति दुख रूप ही है दुखों के बीज में सुख की प्राप्ति होती है विवेक से विचार करने पर वह भी दु ख ही है, सुख नहीं जैसा योगदर्शन २-१५ मे कहा है—

परिणाम-ताप-संस्कार दु खैगुण वृत्ति विरोधाच्च दुःख मेव सर्वं विवेकिनाम। अर्थात् परिणाम, ताप, संस्कारों द्वारा और गुणों की वृत्तियों के विरोध से अर्थात् जड चेतन साधनों के आधीन जितना भी सुख का अनुभव है वह सारा रागादि दोषों से युक्त होने से दु ख ही है। महर्षि व्यास इस सूत्र की टीका करते हुए लिखते हैं—वास्तव मे जो भोगों मे इन्द्रियो की तृप्ति है जो इस तृष्णा का बुझ—उपशान्ति जाना है उसी को हम सुख कहते हैं और जो न बुझना है वह दु ख है। भोग अभ्यास से हम इन्द्रियों को तृष्णारहित नहीं कर सकते। क्योंकि भोग अभ्यास के साथ-साथ राग बढता जाता है। इसलिए भोग अभ्यास सुख का उपाय नहीं है।

(अपूर्ण)

गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर हरिद्वार

(उ० प्र०)

का ५६वां वार्षिकोत्सव १० से से १३ अप्रैल ६४ तक होना निश्चित हुआ है।

इस अवसर पर अनेक महत्वपूर्ण एव शिक्षाप्रद सम्मेलनों का आयोजन किया जा रहा है। आपकी सेवा मे सादर सप्रेम निमन्त्रण है कि उक्त अवसर पर इष्ट मित्रों सहित पधार कर लाभ उठाए।

उत्सव पर श्री डा० राम सुभगसिंह जी, श्री भक्त दर्शन जी, श्री प्रकाश जी आदि महानुभाव पहुच कर उत्सव की शोभा को बढ़ाएगे।

मुख्याधिष्ठाता

आर्यसमाज ओहरी चौक बटाला में आदर्श विवाह

श्री रामशरण जी पुरी वैहरामपुर निवासी की सुपुत्री का शुभ विवाह श्री दुर्गादास भल्ला के सुपुत्र श्री केवल कृष्ण जी मालिक कारखाना मैटल इन्डस्ट्री के साथ १६-३-६४को सायंकाल श्री मेलाराम जी खुल्लर लैंडलार्ड के निवास स्थान पर पूर्ण वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर किसी प्रकार का दहेज, टीका, सगन, बरात वगैरह का कोई आयोजन नहीं किया। इस अवसर पर श्री दुर्गादास जी व उनकी धर्म पत्नी को मुहूर्त आदि के बन्धन को तोड़कर विवाह करने की बधाई दी जा रही हैं।

श्री मेलाराम जी खुल्लर व डा. राम प्रकाश जी खुल्लर M C.] बधाई के पात्र हैं कि उन्होंने सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध पग उठाया है।

सतीश चन्द्र
मन्त्री समाज

सम्पादकीय–

आर्य जगत

वर्ष २४] रविवार २०२०, २९ मार्च १९६४ [अंक १३

आर्य समाज के होते हुए

सूर्य के प्रकाश के होने पर यदि अन्धकार अपना कार्य करता जाये, दिन में यदि रात्री की सत्ता मौजूद हो तो देखने वालों को कितना अचम्भा होगा। यही बात हम आर्य समाज से कहना चाहते हैं। आर्यों के होते हुए उनकी विशाल संस्थाओं, समाजों, सभाओं, प्रचार केन्द्रों तथा शानदार कार्यकर्ताओं के होते हुए यदि अपने ही देश में इस प्रकाश के युग में भी अज्ञान के अन्धकार भरे अन्धविश्वास की पराकाष्ठा दिखाई देती हो तो कितना भारी आश्चर्य है। भारत में अन्धविश्वास चल रहा है, इस बात को तो स्वीकार किया जा सकता है। किन्तु यह इस सीमा तक भी विद्यमान है, इस का ज्ञान अब होने लगा है। आर्य समाज की कितनी आवश्यकता है, उसका प्रचार कितने जोर से होना चाहिए। आर्यों के सामने अभी कितना कठिन काम है, जनता में किस प्रकार का अन्धविश्वास डेरा डाल कर बैठा है—इस का परिचय इस दिल हिलाने वाली घटना से मिल सकता है। लोगों की क्या अवस्था है।

समाचार प्रकाशित हुआ है कि दुर्ग मध्य प्रदेश के पास कुरधा नामक स्थान पर मार्च में कवार अधारिया का मेला हुआ है। इस में इलाके के समीप दूर स्थानों से नर-नारी शामिल होते हैं। स्त्रियां अपने बांझपन को दूर करने के लिए तथा सन्तान की प्राप्ति के निमित्त विशेष रूप से मेले में आती हैं। मेले पर देवी की पूजा चलती है। इस बार इस मेले में देवी की पूजा निमित्त दस हजार बकरों की बलि दी गई बलि का नाम लेते ही हमारे नेत्रों के सामने कलकत्ता के काली मन्दिर में दी जाने वाली मूक बकरों की बलि का भयंकर और आंसू रुलाने वाला दृश्य आ गया कि किस प्रकार भूमि में गडे हुए यूप में बकरे की गर्दन को रख कर उसका सिर धड़ से अलग कर दिया जाता है। फिर देवी माता का प्रसाद मान कर बांटा जाता है। माता कहलाने वाली काली के मन्दिर में पता नहीं सवेरे से लेकर शाम तक कितने बकरे मार दिये जाते हैं। उन आंखों देखे बीभत्स दृश्य को स्मरण करके आज भी दिल रो देता है कि मानव किस पतन की पराकाष्ठा तक जा पहुंचा। किन्तु समाचार पत्रों में कुरधा के इस मेले पर दस हजार बकरों के निर्मम वध की आड़ में हत्याकांड को पढ़ कर तो दिल कांप गया। आज भी इतनी हत्या? देवी की पूजा के नाम पर इतनी हिंसा? धर्म के नाम पर ऐसा अधर्म? पुण्य की आड़ में इतना भारी पाप? मानवता का इतना पतन? अज्ञान का यह भीषण रूप?

शराब और मांस के प्रचार की वृद्धि भी अपने रूप में कम नहीं। कला नाम पर खुला डांस भी कम बुराई नहीं। किन्तु धर्म की आड़ लेकर एक स्थान पर ही दस हजार बकरों की हत्या कर देना कितना भारी अज्ञान का परिचय देता है। आर्यसमाज के होते हुए? आज अज्ञान, अन्ध विश्वास तो अपना रूप भीषण से भीषणतर किये जा रहे हैं, परन्तु जो आर्य-समाज उसे रोकने, उससे टक्कर लेने को स्थापित हुआ था, वह आपस में ही टकरा कर अपनी शक्ति गवाने लगा है। आज हमारी गणना बढ़ रही है, हमारी संस्थाएं दूर २ तक फैलती जा रही हैं, प्रचार भी बढ़ रहा है, उत्सवों व सम्मेलनों की भी धूम है, किन्तु अज्ञान तथा अन्ध विश्वास से सक्रिय, निर्भीक होकर टक्कर लेने का जोश कम होता जा रहा है। सारा समाज ही विश्राम करने तथा सुस्ताने के लिए बैठने लगा है। हमारी अग्नि कुछ गीली लकड़ियों के कारण धूमिल होती दिखाई देने लगी है। तभी अभी तक इतना अज्ञान दनदना रहा है। दस हजार बकरों को एक ही स्थान के मेले में बलिरूप में देवी के नाम पर मार देना कोई मामूली बात नहीं जिसे पढ़ कर मौन रहा जाये। हमारा तो मन कांप गया। आर्यो! ऋषि दयानन्द का बलिदान याद करो। स्थापना दिवस पर प्रतिज्ञा करके अपने प्रचार कार्य को तेज कर के डट जाओ—त्रिलोक चन्द

श्री सिद्धान्ती जी को बधाई

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

श्री जगदेव सिंह जी सिद्धान्ती पूर्व प्रधान आर्य प्रतिनिधि पंजाब लोक सभा के माननीय सदस्य हैं। गत पालियामेंट के निर्वाचन में झज्जर क्षेत्र से अपने विरोधी कांग्रेसी प्रत्याशी श्री दौलता को हरा कर लोक सभा के सदस्य निर्वाचित हुए। बाद में इन के विरोधी श्री दौलता ने पुनर्याचिका-न्यायाधीश के पास अपना आवेदन पत्र प्रस्तुत करते हुए श्री सिद्धान्ती जी के विरुद्ध अपना केस पेश किया। किन्तु उस माननीय न्यायाधीश ने पक्ष-विपक्ष को सुनने के बाद श्री सिद्धान्ती जी के हक में निर्णय दे दिया। इस पर कांग्रेसी प्रत्याशी श्री दौलता ने हाईकोर्ट में अपना आवेदन पत्र प्रस्तुत कर दिया। हाईकोर्ट ने श्री दौलता के पक्ष में निर्णय देते हुए श्री सिद्धान्ती जी के विरुद्ध फैसला दिया। हाईकोर्ट ने लिखा था श्री सिद्धान्ती जी ने अपना निर्वाचन कार्य में ओम् के झण्डे को लेकर तथा हिन्दी भाषा के नाम पर लोगों को कह कर वोट लिये हैं। ओम् का झण्डा साम्प्रदायिक है। अतः साम्प्रदायिकता तथा भाषा का आधार लेने पर यह निर्वाचन अवैध है कुछ इस प्रकार का निर्णय था।

इस पर श्री सिद्धान्ती जी भारत के सब से ऊंचे न्यायालय सुप्रीम-कोर्ट में गये। वहां के माननीय जजों ने हाईकोर्ट के निर्णय को रद्द कर के श्री सिद्धान्ती जी के पक्ष में शानदार निर्णय देते हुए कहा कि ओ३म् का झण्डा साम्प्रदायिक नहीं। भगवान के नाम के झंडा को किसी एक सम्प्रदाय के साथ जोड़ना ठीक नहीं। अतः इस झंडा से साम्प्रदायिकता सिद्ध नहीं होती। एवं हिन्दी राष्ट्र भाषा है। राष्ट्रभाषा से प्रेम करना भी कोई बुराई नहीं है। अतः हाईकोर्ट की दोनों बातों से सहमत न होते हुए श्री सिद्धान्ती जी के लोक सभा के निर्वाचन को वैध बनाया श्री सिद्धान्ती जी की विजय है।

यह विजय केवल श्री सिद्धान्ती जी की ही नहीं है वरन सारे समाज तथा प्रभु के प्यारों की है। राष्ट्र भाषा के प्रेमियों की है। हम इस पर मान्य सिद्धान्ती जी को बहुत २ बधाई देते हैं। उन का धन भी काफी व्यय हुआ और परेशानी भी बड़ी हुई परन्तु इस शानदार निर्णय से सारे समाज का मस्तक ऊंचा हो गया है। —त्रिलोक चन्द्र

जीवन चर्चा

धन कमा अवश्य परन्तु

(पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जो प्रधान आर्यप्रादेशिक सभा)

महात्मा आनन्द स्वामी जी का प्रवचन अमृत के कटोरे होते हैं ज्यों २ पीते जाये त्यों २ स्वाद और मीठे लगते हैं । सरल शब्दों मे कमाल कर देते हैं। आर्यजगत के प्रेमी पाठक इन के अमृतप्रवचनों का अमृत का पान करते रहते हैं
—सं०

अग्निना रयिमश्नवत् पोषमेव दिवे दिवे । यशस वीरवत्तमम् । ऐ मानव ! देख तुझे क्या करना है। प्रभु के साथ धन को कमा-प्राप्त कर प्रतिदिन प्राप्त कर। हाथ पर हाथ धर कर न बैठ जा । परन्तु कैसा धन प्राप्त कर ? ऐसा धन जो प्रतिदिन तेरी पुष्टि और शक्ति को बढ़ाये तुझे यश और कीर्ति देने वाला हो और जो वीरों को तेरे पास लाने वाला हो। ऐसा पवित्र धन कमा।

मन्त्र मे चार बातें कहीं हैं। पहली यह कि धन कमा अवश्य परन्तु ईश्वर के साथ। इस प्रकार उपार्जन कर कि तेरा आत्मा ऊपर उठे, नीचे न गिरे। यदि आत्मा का पतन होता है, यदि रिश्वतखोरी और मिलावट कर के ही धन कमाना है तो मत कमा ऐसा धन। यह धन तुझे नीचे गिरा देगा। किसी निर्धन का खून चूस कर किसी भोले भाले व्यक्ति को असली घी के स्थान पर डालडा खिला कर, किसी अभागे पिता को उस के पुत्र की बीमारी में नकली दवा दे कर और निर्दोष बच्चे की हत्या कर के धन कमाना है तो न कमा। यह तुझे नष्ट कर देगा। भाई को भाई से लड़ा कर, परिवारों में फूट पैदा कर के, देश मे साम्प्रदायिकता की आग लगा कर यदि धन मिलता है, तो ऐसे धन को ठुकरा दे। ऐसा धन आज नहीं तो कल तुझे सर्वनाश की ओर ले जायेगा। ईश्वर को भुलाकर, आत्मा को गिराकर लाखों करोडों रुपये भी मिलने हों तो उन्हे लेने से इन्कार कर दो। धन कमाओ अवश्य परन्तु आत्मा के साथ कमाओ, आत्मा की हत्या न करो।

दूसरी यह कि ऐसा धन कमा जो तुझे पुष्ट करने वाला हो। शक्ति देने वाला हो। ऐसा धन मत कमा जो हर समय तेरे लिए संकट ही बना रहे और तुझे भीरू तथा डरपोक बना दे। कई लोग अपने धन को अपनी कमर के साथ ही बान्धे फिरते हैं। उन्हें न दिन को चैन मिलता है न रात को आराम। ऐसे व्यक्ति को धन मिल गया तो क्या बना। उसने रुपये को एक कपडे में बान्ध दिया। पहले तो रात को ही भय होता था कि कोई चोर या डाकू न आ जाये, पर अब उठते-बैठते, खाते-पीते, सोते जागते हर समय भय रहने लगा भला बताओ ऐसे धन का क्या लाभ है ? वेद कहता है कि ऐसा धन मत कमा जो तुझे निर्बल बना दे, भीरू बना दे, अपितु ऐसा धन कमा जो तुझे शक्ति दे, साहस दे। तेरी शक्ति और साहस बल को सदा बढाते रहे।

तीसरी बात यह है कि ऐसा धन कमा जो तुझे यश कीर्ति और सम्मान दे। ऐसा धन मत कमा जो तेरे अपमान का कारण हो पंजाबी की एक कहानी का अर्थ है कि 'धन तो वेश्याओं के पास भी होता है।' धन का होना मनुष्य को सम्मान नहीं देता। अच्छा धन वह है जो मनुष्य को दृष्टि मे सम्माननीय और आदर योग्य बनाये। यदि आप धन जमा कर के बैठे हैं और आप के आस-पास के लोग भूखे मर रहे हैं, परन्तु उन्हें अन्न नहीं देते, लोग प्यास से मर रहे हैं और आप पानी नहीं पिलाते, लोग बीमार हैं और आप उनकी औषधि का प्रबन्ध नहीं करते तो धिक्कार है उस धन पर। याद रखो कि ऐसा धन संकट बन जाता है। वह दूसरों के दिल मे घृणा और द्वेष उत्पन्न करता है, क्रोध पैदा करता है, आपके लिए आदर और प्रेम पैदा नहीं करता। इसीलिए वेद ने कहा—ऐसा धन कमा जो यश देने वाला हो।

अन्तिम बात यह है कि ऐसा धन कमा जो वीर लोगों को तुम्हारे पास लाने वाला हो। ऐसा धन कमा जिस से वीरों का, देश तथा समाज की रक्षा करने वालों का पालन किया जा सके। यह है धन के सम्बन्ध में वेद की आज्ञा। धन इस प्रकार कमाओ कि आत्मा का पतन न हो, ऐसा धन कमाओ जो प्रतिदिन शक्ति बढ़ाये, भय का कारण न बना रहे, जो यश देने वाला हो, जिस से वीरों और विद्वानों का पालन हो। ऐसा ही धन वास्तविक धन है। ऐसे धन की निन्दा न वेद करता है और न कोई ऋषि महर्षि। अथर्व वेद में तो धन के सम्बन्ध मे कितने ही मन्त्र आते हैं। तीसरे काण्ड का एक मन्त्र है—येन धनेन प्रपण चरामि धनेन देवा धनमिच्छमान.—३-१५-६ हे प्रभो। जिस धन से मैं और धन कमाने की इच्छा करता हू, वह लगातार बढ़ता जाये, कभी कम न होने पाये। यह है वेद का उपदेश। वेद धन को समाप्त करने उसे मिटा देने, उसे कम करने और उस से घृणा करने का उपदेश नहीं देता अपितु उसे निरन्तर बढाने का ही उपदेश देता है। अब सोच कर देखिये कि यदि धन कोई निकम्मी या बुरी वस्तु होती तो वेद में उसके लिए प्रार्थना क्यों की जाती ?

परन्तु जैसा कहा गया है कि धन कोई बुरी वस्तु नहीं। उस का अनुचित प्रयोग उसे बुरा बना देता है। उस का उचित प्रयोग उत्तम बना देता है। स्वयं वह उस अंगूर की भान्ति है जैसा खा कर आप अमृत जैसा स्वाद भी ले सकते हैं और उस की शराब बना कर अपने मस्तिष्क का बेड़ा भी डुबा सकते हैं।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली

आर्यसमाज का स्थापना दिवस

आर्यसमाज के स्वीकृत पर्वों में मे से एक महान पर्व है। सार्वदेशिक सभा के निश्चयानुसार इस वर्ष यह पर्व १३-४-६४ को मनाया जायगा। इसकी सूचना अपने नगर में विशाल रूप में प्रचारित करें और इसका आयोजन बहुत उत्तम ढग से किया जाए। सब समाजों के लिए कार्य-क्रम निम्न प्रकार निश्चित किया है .—

सभी समाजें प्रभात फेरी, सार्वजनिक सभा, घरों में वा मंदिर में दीपमाला, वेदप्रचार के लिए धन संग्रह तथा आर्य समाजों की स्थापना व आत्मनीरिक्षण आदि कार्य-क्रमों को पूर्ण रूप से निभाए।

—रामगोपाल सभा मन्त्री

महर्षि दयानन्द संस्कृत विश्व-विद्यालय टंकारा (सौराष्ट्र)

पूर्व सूचनानुसार विश्व-विद्यालय की सरल संस्कृत परीक्षा दिनांक २६-२-६४ तथा १-३-६४ को सम्पादित हुई। भारत वर्ष के प्राय: सभी प्रांतों के छात्रों ने भाग लिया। विद्यार्थियों की संख्या उत्तरोत्तर बढ़ रही है। विश्व-विद्यालय की अग्रिम परीक्षा सितम्बर १९६४ को होने जा रही है।

भवदीय
आनन्दप्रिय
मन्त्री. म. द. सं० स्मारक ट्रस्ट,
टंकारा

ईश्वर विश्वास से निर्भयता प्रसाद

तर्क और श्रद्धा का समन्वय

(श्री प्रिंसिपल रलाराम जी एम ए प्रधान सभा)

इसी के बारे में वेद में आता है – व्रतेन दीक्षामाप्नोति कि व्रत से मनुष्य दीक्षा को प्राप्त करता है। किसी शुभ कार्य के लिए पक्का इरादा करना व्रत है। यह उपवास भी व्रत है, इस से शरीर की पाचन क्रिया सुधर जाती है। पर दृढ धारणा को व्रत कहा जाता है। कहा गया है कि—**we have no PurPose in life** हम अपने जीवन में कोई व्रत लेते ही नहीं हैं। किसी प्रकार की निष्ठा ही नहीं है। ऐसी हालत में हमारे काम पूर्ण हों तो कैसे हों। पक्के इरादे के बिना तो जीवन सफल ही नहीं हो सकता। व्रत सफलता की चाबी है जिस से कठिन से कठिन कार्य भी सरल किये जा सकते हैं। जिस अन्तिम सच्चाई की तलाश है, वह तत्व तो श्रद्धा से मिलता है। तर्क तो मध्यम दर्जे की वस्तु है। यह तर्क भी जीवन में जरूरी है। कार्य के भले बुरे का ज्ञान करने के लिए टैस्ट करने की कसवटी है। किन्तु श्रद्धा का स्थान ऊंचा है। दृढ विश्वास के बिना कोई भी व्यक्ति आगे बढ नहीं सकता।

श्रद्धया सत्यमाप्यते——

श्रद्धा से सत्यतत्व की, भगवान् की प्राप्ति होती है। जब तक श्रद्धा नहीं होती तब तक मानव प्रभु की तलाश में निकलता ही नहीं है श्रद्धा पहिले पैदा होती है कार्य की सिद्धि बाद में स्वय ही हो जाती है। श्रद्धावान लभते ज्ञानम –जिसके अन्दर श्रद्धा है, वही व्यक्ति ज्ञान को, विद्या को पा सकता है। जो श्रद्धालु नहीं, उसे विद्या कैसे मिलेगी। श्रद्धाहीन से ज्ञान दूर-दूर भागता है। किसी पुस्तक को दोषों के खोजने के दृष्टिकोण से नहीं पढना चाहिए। ऐसे करने पर उस में छिपे गुणों को हम प्राप्त न कर सकेंगे। उसे श्रद्धा की दृष्टि से पढ़े तो जीवनमें काम आने वाली उत्तम बातें भी मिल जाती हैं जिनके द्वारा मनुष्य का कल्याण हो सकता है। जिस पुस्तक को हम पढने लगे हैं, यदि उसके लिए हमारे मन में पहिले से ही श्रद्धा नहीं है वरन् उसको पढा इसीही विचार से जा रहा है कि इसमें अधिक से अधिक दोषों का सचय किया जाए, तो ऐसा व्यक्ति कहीं से भी लाभ नहीं उठा सकेगा। उसके मन के पात्र में सबके दोष ही सचित हो जाएंगे। दोषों के कारण उसका मन भी वैसा बन जायगा। किसी के गुण की ओर उसकी प्रवृत्ति बन ही नहीं सकेगी। उसके स्वभाव में परदोष चयन का काम ही बस जायगा। इस प्रकार का मनुष्य गिर जाता है। श्रद्धा की भावना इस दोष दर्शन की बुराई को भगा देती है। गुणों से प्यार की रुचि पैदा हो जाती है। श्रद्धा के द्वारा मनुष्य देवत्व की ओर बढने लगता है। आजकल कई लोग हैं कि हमने वह पुस्तक पढली, उसकी बातें भी सुन लीं—किन्तु हमें ज्ञान नहीं मिला। ऐसी शिकायत करने वाले सोचें कि क्या उसमें श्रद्धा था यदि श्रद्धा की भावना नहीं थी—तो ज्ञान मिलता कैसे जिसमें न तो श्रद्धा है और न आत्म सयम है। उसे ज्ञान व भगवान नहीं मिल सकता। प्रभुप्राप्ति तथा ज्ञान-उपलब्धि के लिए श्रद्धा का होना परमावश्यक है।

यदि हम गृहस्थी हैं तो सयमी बन कर आगे बढ सकते हैं। सयम पूर्वक यह गृहस्थ स्वर्गधाम है और सयम के विना यह नरक का धाम बन जाता है। श्रद्धा तथा सयम इसे स्वर्ग में बदल देते हैं। जहां पर निश्चय नहीं वहीं भय होता है और जहां निश्चय है वहां भय का नाम तक भी नहीं होता। यह भय अज्ञान से पैदा होता है। निश्चित ज्ञान हुआ नहीं कि सारा भय भागा नहीं जब इस बात का विश्वास हो जाता है कि यह आत्मा अजर है, अमर है, न जायते म्रियते वा कदाचित। न कभी यह जन्मता और न वह मरता है। न इसे आग जला सकती, वायु उडा सकती या जल गला सकता है। इस हालत में मौत का भय समाप्त हो जाता है। अत जीवन में ऊंचा आदर्श ले कर चलना चाहिए। प्रभु से प्रार्थना करें कि हम तेरे भक्त हैं, पुत्र हैं, तू हमारा पिता माता है। फिर भय कैसा? वैदिक धर्म की यही विशेषता है कि यह हमें परमेश्वर के साथ पिता पुत्र का सम्बन्ध बताता है। पुत्र को अपने पिता के पास जाने में भय कैसे? परन्तु यह तभी हो सकता है जब कि हम श्रद्धा भरे दिल से अपने को पुत्र मान कर परमात्मा को अपना पिता समझें—

छूतछात निवारक महर्षि दयानन्द

(लेखक प प्रकाश चन्द्र जी कविरत्न अजमेर)

महर्षि जी के पास एक नाई रोटी लेकर आया
बड़े स्नेह से ऋषिवर ने उस के भोजन को अपनाया
देखी रोटी रखी थाल मे भड़के कुछ दकियानूसी
करने लगे देख ऋषिवर को, आपस में काना फूसी
फिर बोले 'धिक, धिक' तुम ने ये धारण अजब ढिटाई को
ब्राह्मण हो के अरे! खा रहे हो तुम रोटी नाई की
ऋषि ने वचन कहे मुसका कर आंखे खोल अजी! देखो
ये रोटी नाई की है या रोटी गहूं की देखो?
मानव की केवल पवित्रता, करतूतें, अच्छी देखो!
सीपी को क्या! देख रहे उसके उज्जवल मोती देखो!

आर्यसमाज गोरे गांव बम्बई

का स्थापना दिवस उत्सव के रूप में १२ से १६ मार्च तक मनाया गया। जिसमे आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब की ओर से श्री प. राजपाल जी व मदनमोहन जी की मंडली पधारारीं। मंडली का बम्बई में अच्छा प्रभाव पड़ा जनता दूर-दूर से आकर लाभ उठाती रही। हम समाज की ओर श्री प. खुशीराम जी वेदप्रचार अधिष्ठाता सहृदय से आभारी हैं। इस अवसर पर प्रादेशिक सभा को वेद प्रचारार्थ ५००) रुपए दिए गए। जिसका व्योरा अगले अंक में पढ़ें। मार्ग व्यय इसके अतिरिक्त दिया गया।

—रघुनाथ वर्मा मंत्री समाज

मोहन आश्रम हरिद्वार में ऋषि-मेला

महर्षि जी के भक्तों को यह जानकर बड़ी प्रसन्नता होगी कि महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज की पाखंड-खंडिनी पताका के नीचे मोहन आश्रम हरिद्वार में पूर्ववत् इस वर्ष भी ता० ८-९-१० और ११ अप्रैल सन् ६४ को ऋषि मेला मनाया जायेगा। जिस में आर्यसमाज के बड़े-बड़े पूज्य महात्मा सन्यासी और विद्वान महानुभावों के सदुपदेश होंगे। उन्हीं दिनों मे यजुर्वेद के विशेष-विशेष अध्यायों के मन्त्रों द्वारा एक विशेष यज्ञ भी होगा। धर्मप्रेमी पधार कर लाभ उठाएं। नोट ?— मेले में आने वाले महानुभावों से निवेदन है कि अपने आने की सूचना पहले से ही देने की कृपा करें।

(स्वामी) सच्चिदानन्द तीर्थ
अधिष्ठाता
मोहन आश्रम, हरिद्वार

यानन्द विश्वविद्यालय की स्थापना

र्य जगत के लिये एक चुनौती

(गतांक से आगे)

दयानन्द विश्वविद्यालय की थापना का कार्य जहां बड़े महत्व का है, वहां कठिन भी है किन्तु हमें पूर्ण विश्वास है कि आप सब की सहायता व सहयोग से वह अवश्य पूरा होगा और इसी निश्चय से हम दस लाख की यह पहली अपील कर रहे हैं अपनी लगभग एक हजार शिक्षा सस्थाओं और उन में शिक्षा प्राप्त करने वाले करीब पांच लाख विद्यार्थियों तथा उनके अध्यापकों के प्रयत्नों से ही यह राशि पूरी हो सकती है, इन संस्थाओं मे शिक्षा दीक्षा लेकर हजारों विद्यार्थी जीवन के अनेक क्षेत्रों में सफलता और प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके हैं और हमें पूर्ण आशा है कि वे अपनी पुरानी मातृ सस्थाओं के प्रतीक इस गौरवपूर्ण विकास मे अधिक से अधिक सहायता देंगे, क्योंकि यह प्रस्तावित दयानन्द विश्वविद्यालय न केवल उनके पुराने स्कूलों व कालेजों की प्रगति का द्योतक ही होगा बल्कि देश के शिक्षा क्षेत्र मे उनका दीर्घ व उपयोगी सेवा का एक महान स्मारक भी बनेगा।

हम और देश की शिक्षा व सार्वजनिक क्षेत्र मे कार्य करने वाले अनेक प्रमुख व्यक्ति इसीलिये दयानन्द विश्वविद्यालय की आवश्यकता तथा उपयोगिता अनुभव करते हैं, डी. ए वी. आदि आर्यसमाज की शिक्षा सस्थाओं की जो विशेषता र रही है, उनकी रक्षा उनके अपने विश्वविद्यालय द्वारा ही सम्भव है इसी प्रकार जिन उद्देश्यों और आदर्शों को लेकर लड़के लड़कियों की इन हजारों सस्थाओं की स्थापना की गई थी, स्वाधीन भारत की वर्तमान आवश्यकताओं के अनुरूप उनको ढालकर और अधिक उपयोगी बनाने का कार्य इस प्रकार के विश्वविद्यालय के स्वतन्त्र वातावरण ही मे सम्भव है, उदाहरण के लिए संस्कृत के भविष्य का प्रश्न हम ले सकते हैं । ऋषि दयानन्द से पूर्व संस्कृत विद्या और साहित्य को धार्मिक अन्धविश्वास बौद्धिक दकियानुसियत का गढ़ समझा जाता था और स्त्रियों तथा अछूत समझे जाने वालों के लिये संस्कृत पढ़ना तो दूर सुनना तक पाप व अपराध था । आर्यसमाज की डी० ए० वी० गुरुकुल तथा कन्या विद्यालय मे न केवल संस्कृत का ज्ञान भडार सबके लिये खोल दिया गया बल्कि उसको अनेक क्रान्तिकारी सामाजिक व धार्मिक सुधार और राष्ट्रीय जागृति तथा बौद्धिक स्वतन्त्रता का साधन भी बनाया गया इसलिये इस लिये इस बात में दो राय नहीं हो सकती कि इस परम्परा को लेकर स्थापित दयानन्द विश्वविद्यालय ही संस्कृत को पुनः पुराने गर्त मे पड़ने से बचा सकता है, इसी प्रकार पूर्व तथा पश्चिम के सम्मिलित और प्राचीन तथा आधुनिक देन के उपयुक्त समन्वय करने का आवश्यक कार्य भी इसी प्रकार का विश्वविद्यालय कहीं अधिक सफलता से कर सकता है।

इस प्रकार दयानन्द विश्वविद्यालय की यह योजना शिक्षा सुधार और विकास की दृष्टि से महत्व की होने के सिवाय हमारे राष्ट्र और समाज के लिये भी एक उपयोगी सेवा होगी। इसलिए इस कार्य में हमे सबकी सहायता व सहयोग मिलेगा, आशा है।

'आर्य जगत्' नियमावली

१. साप्ताहिक आर्य जगत का वार्षिक चन्दा 6 रुपए है। जितने समय के लिए कोई ग्राहक बनता है उतने समय का चन्दा उस से आरम्भ मे ही प्राप्त किया जाता है ।

२. जिन सज्जनों का वार्षिक चन्दा जिस मास मे समाप्त होता है उस मास के आरम्भ मे उन को पत्रों द्वारा सूचित किया जाता है। यदि उन का चन्दा उस मास मे प्राप्त नहीं होता है तो उसी मास के अन्त मे पत्रों द्वारा वी. पी. भेजे जाने की सूचना भी दी जाती है। फिर आगामी मास का पहला अक उन को वी पी. पी. कराया जाता है। तब इस वी पी पी. का छुड़ाना उन का धार्मिक कर्तव्य हो जाता है।

३ ऋषि बोध उत्सव पर और ऋषि निर्वाण दिवस पर उच्चकोटि के विशेष अक भी प्रकाशित किये जाते हैं।

४. जो सज्जन ग्राहक बनाने में विशेष उत्साह दिखाते हैं। आर्य जगत उनकी सेवा मुफ्त करता है।

५ लेखक, कवि, ग्राहक अथवा विज्ञापनदाता, मैनेजर, आर्य जगत, हसराज भवन, जालन्धर शहर से ही हर प्रकार का पत्र व्यवहार करने की कृपा करें।

६ पत्र व्यहार करते समय ग्राहक सख्या अवश्य लिखें। वरना उन के उत्तर मे विलब होगा।

७ मनी आर्डर मत्री प्रादेशिक सभा के नाम ही आना चाहिए किसी व्यक्ति विशेष के नाम पर नहीं।

व्यवस्थापक

'आर्य जगत्' जालन्धर

ऋषि दयानन्द क्या थे ?

(ले०--गुप्तेश्वर कुमार आर्य डेवा, हजरतसाई, पटना बिहार)

(गतांक से आगे)

ऋषि दयालु थे-- अनूप शहर में एक व्यक्ति ने स्वामी जी को पान मे विष दे दिया था ऋषि खाते ही समझ गए थे कि इस में विष है अन्त में न्योली क्रिया द्वारा इस को समाप्त किया जब इस घटना का पता वहां के तहसीलदार को लगा। जिस व्यक्ति ने स्वामी जी को पान खिलाया था उसे तहसीलदार पकड़ कर लाया और जेल मे डाल दिया। जब ये बातें स्वामी जी को मालूम हुई तो उस तहसीलदार से स्वामी जी ने पूछा-- मैंने सुना है कि मेरे लिए आज आपने एक मनुष्य को आबद्ध किया है परन्तु मैं मनुष्य को बंधवाने नहीं आया हूं बल्कि छुड़वाने आया हूं यदि दुष्ट अपनी दुष्टता को नहीं छोड़ता तो हम क्यों सवश्रेष्ठता का परित्याग करें । ऋषि के कहने पर उसे तहसीलदार ने छोड़ दिया।

ऋषिलोक निर्माता थे-- रायबहादुर लाला मूलराज जी ने कहा-- आपने जो आर्यसमाज के तीसरे नियम म वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक रखा है यदि इस मे से सत्य शब्द निकाल दो 'वेद सब विद्याओं का पुस्तक है ऐसा रखे तो कोई हिच चाहट नहीं है महर्षि दयानन्द लोक मत के पीछे चलने वाले नहीं थे किन्तु लोक निर्माता थे उन्होंने कहा कि ऐसा कभी नहीं हो सकता' हम लोक के पीछे चलने वाले नहीं है बल्कि लोक को बनाने वाले हैं। इस प्रकार हम ऋषि के भिन्न २ पहलुओं में पूर्ण थे जैसे दृढ़ता के पुजारी थे सत्य प्रचारक थे, ईश्वर विश्वासी थे। यदि सभी का केवल सकेत ही किया जाए तो एक बहुत बड़ा पुस्तक बन जाए। अत हमे भी ऋषि के गुणों को अपनाना चाहिए।

प्रादेशिक सभा का वेदप्रचार कार्य

****

आर्य समाज नया गोगएं का उत्सव २० से २२ मार्च को समारोह से सम्पन्न हुआ। श्री पं० त्रिलोक चन्द्र जी, श्री हजारीलाल जी, श्री मेलाराम जी पधारे।

आर्यसमाज खन्ना का उत्सव २७ से २६ मार्च को समारोह से सम्पन्न हो रहा है। २३ मार्च से श्री प० त्रिलोक चन्द्र जी कथा कहेंगे। और श्री मेलाराम जी के भजन होंगे। उत्सव पर श्री डा० दुर्गासिह जी, श्री प्रो० वेदीराम जी शर्मा एम. ए., श्री पं० रलाराम जी एम. ए, एम एल. ए प्रधान सभा २६ मार्च को पधार रहे हैं। समाज की ओर से वेद प्रचारार्थ थैली भेंट की जायेगी।

आर्य समाज अखनूर (जम्मू) का महोत्सव २७ से २६ मार्च को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। २३ मार्च से यज्ञ कथा श्री प० ओमप्रकाश जी द्वारा। भजन श्री जगतराम जी, श्री बस्तीराम जी। उत्सव पर श्री राजपाल जी, श्री मदनमोहन जी मंडली, सुशीराम शर्मा, तथा श्री प० हरिश्चन्द्र जी शास्त्री जम्मू भाग ले रहे हैं।

डी ए वी हाई स्कूल हरयाणा का उत्सव २७ से २६ मार्च को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। श्री हजारा लाल जी पधार रहे हैं।

आर्य अनाथालय फिरोजपुर का उत्सव ३ से ५ अप्रैल को समारोह से सम्पन्न हो रहा है। २६ मार्च से कथा पर सभा की ओर से श्री दुर्गासिंह जी पधार रहे हैं। उत्सव पर सभा की ओर से श्री पं० त्रिलोकचन्द्र जी, श्री राजपाल जी, श्री मदनमोहन जी, श्री मेलाराम जी, श्री सुशीराम शर्मा भाग ले रहे हैं।

'संसार को प्रेम सिखा देंगे'

(रचयिता श्री किशोरी लाल 'प्रेम' रेणुका जिला सिरमौर) (H.P.)

हम आर्य वीर कहाते हैं, बन कर के वीर दिखा देंगे।
यदि पर्वत आए मार्ग में, ठोकर से उसे हटा देंगे।
जो निराकार और निर्विकार है, सर्वव्यापक सर्वाधार है।
उस पार ब्रह्म परमेश्वर की पूजा, सब को सिखला देंगे।
वेदों का ज्ञान है सब के लिए, यह वेद है ईश्वर की वाणी।
मानव के लिए सत्यज्ञान यही, संसार को यह समझा देंगे।
प्रचार करेंगे वेदों का, हम दयानन्द के सेनानी।
हम सत्य, अहिंसा, सेवा का दुनिया को पाठ पढ़ा देंगे।
ये वैदिक धर्म हमारा है, यह प्राणों से भी प्यारा है।
इस धर्म की रक्षा करने को, हम अपना खून बहा देंगे।
घूसखोरी, चोर बाजारी का और झूठ फरेब, मक्कारी का।
हम अपने प्यारे भारत से इन सब को दूर भगा देंगे।
इस देश का अन्नजल खाकर भी, जो देश द्रोही करते हैं।
उन देश द्रोही दुष्टों का, नाम और निशान मिटा देंगे।
विधवाओं और अनाथों की रक्षाकर्त्तव्य हमारा है।
इनकी रक्षा करने के लिए हम तन-मन धन लगा देंगे

दयानन्द-वचनामृत

'जो मनुष्य सच्चे प्रेम से, भक्ति-भाव से परमेश्वर की उपासना करेंगे, उन उपासकों को परम कृपामय, अन्तर्यामी परमेश्वर, मोक्ष-सुख-सम्पन्न कर सदा के लिए आनन्दी कर देगा। इस में सन्देह नहीं कि जो जन अपनी सब वस्तुएं परमेश्वर के लिए समर्पित कर देता है, उस को परम कारुणिक परमात्मा सम्पूर्ण सुख प्रदान करता है। जो मनुष्य पूजने योग्य प्रभु का अपने हृदय-रूप आकाश में, भली भान्ति प्रेम, भक्ति और सत्याचरण द्वारा पूजन करता है, वही उत्तम मनुष्य है।'

(स्वामी सत्यानन्द जी)

आर्यसमाज जलालाबाद मंडी का उत्सव १० से १२ अप्रैल को सम्पन्न हो रहा है। ६ अप्रैल से कथा श्री प० त्रिलोक चन्द्र जी द्वारा भजन श्री दुर्गासिंह जी। उत्सव पर श्री पं० चन्द्रसेन जी, श्री राजपाल जी मदनमोहन जी की मंडली पधार रही हैं।

आर्य समाज जोगेन्द्रनगर का उत्सव ११ से १३ अप्रैल को धूमधाम से सम्मान हो रहा है। ६ ता० से यज्ञ, कथा पर श्री प० ओमप्रकाश जी श्री जगत राम जी, बस्तीराम जी पधार रहे हैं।

आर्य समाज प्रेम नगर करनाल का उत्सव २४ से २६ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। १७ अप्रैल से कथा।

आर्य समाज लारेंस रोड अमृतसर में १६ से २२ मार्च तक पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी की कथा होती रही। श्री दुर्गासिंह जी के भजन और आर्य समाज लारेंस रोड अमृतसर में ८ से १३ अप्रैल तक सुशीराम शर्मा कथा करेंगे।

आर्य व्यायाम शाला सोनीपत का उत्सव २४ से २६ अप्रैल को समारोह से सम्पन्न हो रहा है।

आर्य समाज पुरानी मंडी जम्मू का उत्सव १८ से २० अप्रैल को सम्पन्न हो रहा है।

श्री प० त्रिलोकचन्द्र जी शास्त्री तथा श्री दुर्गासिंह जी, श्री जगतराम जी, श्री बस्तीराम जी मंडली पधार रही है।

आर्य समाज पलवल का उत्सव ८ से १० मई को सम्पन्न हो रहा है।

आर्य समाज अशोक कालोनी करनाल का उत्सव २८ से ३० मई को सम्पन्न हो रहा है।

नोट—सभी समाजों से निवेदन है कि अन्त ३० अप्रैल तक उत्सव नियत हो चुके हैं। कृपया आगे की तिथियां नियत कराने की कृपा करें।

आर्य समाजों से निवेदन

सभी संबंधित आर्य समाजों से निवेदन है कि १३ अप्रैल १९८४ को आर्य समाज स्थापना दिवस का आयोजन बड़ी धूमधाम से करें।

—सुशीराम शर्मा, वेदप्रचार अधिष्ठाता

म० आ[illegible] स्वामी [illegible]
स्वीकार करने की अपील

जालन्धर २१ मार्च—पूज्य महात्मा आनंद स्वामी जो सरल ने दुर्बल स्वास्थ्य के कारण आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का अध्यक्ष पद सम्भालने में असमर्थता प्रकट की है परन्तु आर्य नेता अब भी उन से आग्रह कर रहे हैं कि वह महर्षि दयानन्द के महान कार्य को प्रगति देने के लिए यह पद स्वीकार कर [illegible] इस सम्बन्ध में सभा के मन्त्री श्री सन्तोषराजजी ने स्वामीजी को एक विस्तृत पत्र लिखा है जिसमें कहा गया है—

२३-३-६४ के सभा के साधारण अधिवेशन में आप सर्वसम्मति से सम्मान पूर्वक प्रधान निर्वाचित किए गए थे। आप स्वास्थ्य दुर्बल होने के कारण असमर्थता प्रकट कर रहे हैं। यह ठीक है कि इतने भयानक रोग से मुक्त होना आपके तप और आत्मिक बल का ही प्रभाव है। आर्यजगत का सौभाग्य है कि आप भयानक रोग से मुक्ति प्राप्त कर संतप्त आत्माओं को वेदामृत पिलाकर शांत करने के लिए कार्य-क्षेत्र में पुनः पधार पाए हैं। स्वास्थ्य दुर्बल होने पर भी आप नगर नगर ग्राम-ग्राम घूम कर वेदप्रचार के लिए भिक्षा करें, हम इस बात को पसन्द नहीं करते। सभा और समाज के लिए आप का जीवन अमूल्य है। जहां कहीं भी आप विराजमान रहकर स्वास्थ्य सुधार करते रहें, कार्य सुचारू रूप से चलता ही रहेगा। पहले भी आप प्रधान काल में भ्रमण करते रहे और साथ-साथ सभा का संचालन भी करते रहे। कृपया आप सभा के प्रधान पद को स्वीकार कर प्रतिनिधियों के सर्वसम्मत निर्णय को मान देने की कृपा करें। हमें पूर्ण आशा है कि हमारी प्रार्थना अवश्य स्वीकार होगी।'

—संतोषराज मन्त्री सभा

आर्य समाज ककड़ माजरा में अथर्व वेद पारायण यज्ञ

आर्य समाज ककड़ माजरा में अथर्व वेद पारायण यज्ञ ३ फरवरी से १०फरवरी१६६४ तक समारोह के साथ सम्पन्न हुआ। यज्ञ में सैंकड़ों स्त्री पुरुष प्रात सायं एकत्रित होते थे श्री स्वामी सोमा नन्द जी व पं. अमर सिंह जी अध्यक्ष अम्बाला करनाल वेद प्रचार मन्डल के भाषण होते रहे कु० जगत राम जी व श्री मेला राम जी के भजन होते रहें। यज्ञ का श्रेय बैजनाथ जी, श्रवण नाथ जी, कश्मीरी लाल जी, श्री रामनिरंजन जी, श्री राम स्वरूप जी, श्री मनोहर लाल जी तथा ककड़ माजरा की समस्त आर्य देवियों को है।

आर्य समाज कोट में यजुर्वेद ब्रह्म पारायण यज्ञ की धूम

आर्यसमाज कोट जिला अम्बाला में यजुर्वेद ब्रह्मपारायण यज्ञ का उत्सव ३ मार्च से ६ मार्च १९६४ तक बड़ी धूम धाम से सम्पन्न हुआ। आस पास की जनता बड़ी श्रद्धा से हजारों की संख्या में एकत्रित होती रही। श्री स्वामी सोमा नन्द जी व पं. अमरसिंह जी अध्यक्ष अम्बाला करनाल वेद प्रचार मन्डल के भाषण होते रहे। श्री मेला राम जी, कु० जगतराम जी, सुभाष जी, सत्यपाल श्री तथा बस्ती राम जी आदि के मधुर भजनों का जनता पर अच्छा प्रभाव रहा। यज्ञ का श्रेय कोट निवासियों पर है। यह यज्ञ प्रथम बार इस इलाका में हुआ है हमारी प्रबल इच्छा है कि प्रतिवर्ष इसी प्रकार वेदों का पारायण यज्ञ होता रहे।

[illegible] करनाल

में आर्य समाज की स्थापना १ नवंबर ६३ को हुई थी जिसके साप्ताहिक सत्संग नियमानुसार प्रति रविवार को सायं के समय होते रहे। प० विश्वम्भर दत्त जी के व्याख्यान समय २ पर होते रहे। इस समाज का वार्षिक उत्सव २८, २६.३०मई को होना निश्चित हुआ है। सभी धर्म प्रेमियों को इस शुभ अवसर पर पधारने का सादर निमंत्रण है।

रणधीर सिंह मन्त्री समाज

देश की पुकार

वर्तमान समय में भ्रष्टाचार को रोकने के लिए, चरित्र निर्माण, राष्ट्रीय निर्माण, आध्यात्मिकवाद, जाति सगठन, सावित्री यज्ञ तथा वैदिक संस्कारों के प्रचार के लिए तेजराम पुरोहित आर्यसमाज सीता राम बाजार देहली से पत्र व्यवहार करें।

आर्यसमाज पुल बंगश देहली

में वार्षिक उत्सव के अवसर पर श्री महात्मा आनंद भिक्षुजी ने चार दिन का वृहद यज्ञ कराया। ऋषि-लंगर में हजारों से अधिक स्त्री पुरुषों ने भोजन पाया। वर्ष भर में ऋषिबोध उत्सव श्रद्धानंद बलिदान दिवस, लोहड़ी आदि पर्व धूमधाम से होते रहे। श्री गणेशदत्त जी वानप्रस्थी के अनथक परिश्रम से आर्यसमाज सभी ऋणों से उऋण होकर २०००/-की स्थिर राशि का मालिक है।

—सुरेशकुमार मंत्री समाज

आर्यसमाज हिसार

NOTICE

'Any body, who knows the address of the Church or any relation to it, [illegible] inform me with [illegible] late. I shall be highly thankful to him.'

[Ashok Kumar, Arya-Samaj, Ry. Rd. Hissar]

देहली में सावित्री यज्ञ

श्री देवराज जी उपप्रधान आर्यसमाज सीताराम बाजार देहली व माता माया देवी जी सरस्वती समाज के घर पर श्री पं. तेजराम जी पुरोहित ने सावित्री यज्ञ सम्पन्न कराया। यमुना पार सीलमपुर आर्यसमाज में श्री पंडित जी का सार गर्भित व्याख्यान हुआ।

—जगन्नाथ दत्त प्रधान समाज

रन्धौली (करनाल) में शुभ विवाह

श्री मगतराय जी मन्त्री आर्य समाज रन्धौली की सुपुत्री सत्यवती का शुभ विवाह ७,८ मार्च १६६४ को पूर्ण वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर श्री पं० त्रिलोक चन्द्र जी शास्त्री, स्वामी अभयानन्द जी, राजपाल मदन-मोहन जी की मंडली के भजन व संक्षिप्त सा प्रचार कार्य हुआ। भिन्न २ संस्थाओं को दान दिया गया।

मंगतराय आर्य सेवक

आर्य युवक परिषद् देहली का चुनाव

प्रधान—श्री देवदत्त जी, धर्म-चन्द्र जी, उपप्रधान—राजदेव जी, मन्त्री—श्री ओमप्रकाश जी।

नोट—परीक्षाओं का दफ्तर आर्यसमाज मोडल बस्ती देहली—५ में तबदील हो गया है।

—हरिदत्त मंत्री

पत्र व्यवहार करते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखा करें

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मासिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब

महात्मा

आर्य जगत् का

हंसराज अङ्क

॥ ओ३म् ॥

आर्य जगत्

का

—महात्मा हंसराज अंक—

१६ अप्रैल १९६४ तदनुसार ७ वैशाख २०२१

वर्ष २४] १२, १९ अप्रैल १९६४, २ वैशाख, ९ वैशाख २०२१ [अंक १५-१६

वेदामृत का पान

अभीवर्तेन मणिना येनेन्द्रो अभिवावृधे ।

तेनास्मान् ब्रह्मणस्पतेऽभिराष्ट्राय वर्धय ॥ अथर्व १-२९-१

भाव :—अथर्ववेद के राष्ट्रिय सूक्त में राज्य के रक्षण का बड़ा ही उत्तम उपदेश मिलता है। इस में विद्या के स्वामी प्रभु से प्रार्थना की गई है कि राष्ट्र के वासियों को राज्य रक्षा तथा समुन्नति के लिए सब प्रकार से बढ़ाते जायें। प्रभु कृपा से देश का, मातृभूमि का एक-एक बच्चा देश प्रेम, राष्ट्रिय भक्ति, भूमि शांति के लिए आगे ही आगे बढ़ता जाये। इसी प्रकार विद्वानों से भी कहा गया है कि वे भी अपनी राज्य विद्या के प्रचार द्वारा देश में सब प्रकार की प्रगति का ध्यान रखते हुए सारे राष्ट्रवासियों को देश-प्रेम का सन्देश देते रहें। भूमि राज्य का प्रत्येक जीवन में कार्य आने वाला पदार्थ वृद्धि करता जाये। विद्या, व्यापार, विज्ञान, नीति, वीरता, विविध विचार तथा आचार किसी में भी न्यूनता न आने पाये।

राष्ट्र का संचालक राजा या राष्ट्रपति इन्द्र बन कर अभीवर्तमणि के द्वारा—राज्य चक्र को चलाने वाले नियम, प्रबन्ध, विधानदण्ड के द्वारा राष्ट्र की उन्नति में सदा सावधान एवं सतर्क रहें। जहां भी कोई कमी देखे, देश द्रोही का पता लगे। देशघाती का परिचय मिले, राज्य में किसी प्रकार की भी गड़बड़ करने की बात सुने। राजा का कर्तव्य है कि ऐसे व्यक्ति, दल या संस्था को राज्य नियम और विधान की व्यवस्था के अनुसार उसको कड़ा दण्ड देकर देश में शांति स्थापित कर देवे। राज्य चक्र में जहां भी शिथिलता आयेगी, वहीं पर उत्पात मच जाएगा। इसलिए राजा को सदा सावधान रहना होगा तभी काम चलेगा—सं०

सम्पादकीय--

समाज के लिए

त्याग और तपस्या के देवता स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी का पुण्यदिवस प्रति वर्ष की भान्ति इस वर्ष भी आया है। महापुरुषों के जीवन दिवस स्वयं एक प्रेरणा के स्रोत होते हैं। सारे समाज तथा राष्ट्र के लिए प्रकाश स्तम्भ होते हैं। इन से सदा ही सब को प्रकाश मिलता है। जीवन का पथ स्पष्ट दिखाई देता है। निर्बल धमनियों में रक्त का संचार होने लगता है। इसीलिए समाज अपने महापुरुषों के दिवस को विशेष पर्व मान कर समारोह से मनाता है। महात्मा हंसराज जी का यह दिन भी अपने रूप में बड़े महत्व का है। यदि यह कहा जाये कि पूज्य महात्मा जी अपने रूप में स्वयं चलती फिरती एक संस्था थे, विशाल आंदोलन थे, एक आर्यसमाज थे। उस समय के एक प्रदीप्त सूर्य थे, जिन से आचार-विचार, निष्ठा, भक्ति, गम्भीरता, सौम्यता, धारणा लोकसेवा की अनेकों चमकती हुई किरणें निकलीं। जिनके द्वारा पता नहीं कितने जीवन जगमगा उठे। महात्मा जी का जीवन पारस था जिस के स्पर्श से कई लोह जीवन सोने में बदल गये। वह तपस्या की मनोरम मूर्ति, त्याग की सजीव प्रतिमा, गम्भीरता के पुनीत पुतले तथा निष्ठा लोह पुरुष थे। जो पथ अपने लिए युवावस्था में चुन लिया, सारी आयु उसी पर चलते रहे। बड़े २ प्रलोभन, बड़े बड़े चमकीले दृश्य भी उनको लेशमात्र भी विचलित न कर सके। वायु के साथ बदलना तथा वातावरण के प्रवाह के साथ बहना उनके जीवन में कभी था ही नहीं। वह एक विशेष मिशन लेकर आये थे। गरीबी उन्होंने स्वयं चुनी थी। आत्मगौरव, देशभक्ति, संस्कृति पूजा, ऊंची विद्या में भी नम्रता उनके जीवन में स्वभाव से भरी थी। वे सचमुच महात्मा थे, संन्यासी थे, साधक एवं तपस्वी त्यागी थे। उनका अपने लिए कुछ था ही नहीं, वरन जो कुछ भी उनके पास था सब समाज के लिए ही था। धन तो उनके पास था नहीं और न ही महात्मा जी धन कमाने ही आये थे। यदि चाहते तो लक्ष्मी उनके चरणों में आ जाती पर वे इस मार्ग पर चले ही नहीं तन-मन तथा जीवन सब समाज के अर्पण कर दिया। समाज उनका था और वे समाज के हो गये। ऐसे देवता विरले होते हैं। भारत में तथा बाहर भी जितना डी० ए० वी० आन्दोलन का जो विशाल रूप है, आर्य प्रादेशिक सभा का जितना विस्तार है। इसकी समाजों का जितना सुन्दर परिवार फैला हुआ है, सब के निर्माता स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी ही थे। आज जितने भी शिक्षा और धर्म के क्षेत्र में हमारे बड़े २ मूर्धन्य नेता महानुभाव दिखलाई देते हैं। ये सारे उसी देवता के जीवन प्रभाव की पवित्र देन हैं। हमें इन पर मान है। आज महात्मा हंसराज दिवस पर हम अन्तर-

आज संकल्प करें

आज का दिवस एक पवित्र पर्व है। उस महा-पुरुष का पर्व मना रहे हैं, जिस के जीवन का प्रत्येक कार्य सरलता, सादगी की पराकाष्ठा तक पहुंचा हुआ था। बनावट किसी काम में भी नहीं आने दी। वेशभूषा, खानपान, वासनिवास तथा अन्य जीवन के सारे कामों में सादगी का बोल-बाला था। सरलता की साक्षात सजग मूर्ति थे।

आज का जीवन जटिल ही नहीं जटिलतम बनता जा रहा है। हर काम में, जीवन की हर बात में जटिलता घर कर रही है। मानव बनावटी बनता जा रहा है, वास्तविकता नाना पर्दों में छिपती जाती है। चारों ओर समस्याओं के पर्वत खड़े हो गये हैं। जीवन-पथ अवरुद्ध हो चुका है। इन में सब से बड़ी जटिलता आज के विवाह की है। इस समय का विवाह परिवारों को ले बैठा है। परिवार के परिवार अन्दर ही अन्दर चिन्ता से खोखले हो रहे हैं। एम. ए. बी. टी. लड़कियां तीस-तीस वर्ष की आयु की घरों में बैठी हैं। कारण कि विवाह की जटिलता भीषण बन गई है। टोहाना की बेटी शोभा या अरुणा अथवा इन जैसे दो चार परिवार ही सौभाग्यशाली होंगे या ऐसा कहना चाहिए कि जीरा के श्री मुनिलाल जी श्री सतीश कुमार जी जैसे नवयुवक ऊंचे विचारों वाले विरले ही होंगे जो सब कुछ सम्पन्नता होते हुए भी विवाह को सचमुच ही ऐसा सादा बना कर दिखा सकते हैं जहां आज के सारे आडम्बर समाप्त करके दिखला सकें। हमारे मन पर इसका भारी प्रभाव है। लेकिन ऐसे परिवार या वीर युवक बहुत विरले ही हैं। कहा तो जा सकता है पर जब आचरण का समय आता है तो विचार दशा बदल जाती है। विवाह की जटिलता आज सारे समाज को खोखला करती जा रही है। तङ्ग सारे हैं पर आगे कोई नहीं आता। समाज के सारे कुंए में भांग पड़ चुकी है।

आज महात्मा हंसराज दिवस है। उनका जीवन हर ओर सरल था। आज हम चाहते हैं कि उनके पवित्र दिन हम विवाह की इस भारी जटिलता को, इन बन्धनों को तोड़ने के लिए मैदान में आकर संकल्प करें। हम ऐसे नवयुवक चाहते हैं जो संकल्प करें कि हम विवाह की जटिल समस्या का हल करने के लिए सादगी की प्रतिज्ञा करते हैं। काम तो करने से होगा। मार्ग बनाना पड़ेगा उसी पर फिर दूसरे चलेंगे। इस कार्य को

झांक कर देखें कि क्या हम भी समाज के लिए अपने को अर्पण करते हैं या नहीं? हमारे तन, मन, धन का कितना भाग समाज सेवा में लगता है। यदि समाज सेवा के लिए हम भी कुछ भेंट करते हैं तब तो ठीक अन्यथा आज प्रतिज्ञा करके समाज सेवा में जुट जायें तभी यह दिन मनाना सफल हो सकेगा। —त्रिलोक चन्द्र

नैया का पतवार थामने वाला

(श्री पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती)

एक केवट मिला था डगमगाती नैया को, नैया के सवारों ने उसे नदी में धकेल दिया। तब झुंझला के उन्होंने देखा, नदी में सागर की लहरें नैया को खा जाने के लिये बढ़ रही हैं। आतंक फैल गया। घबराहट अकुलाने लगी। निराशा उभरने लगी। चिन्तित जाति सोचने लगी, 'अब क्या होगा!' तब दयानन्द की जोत से प्रकाश पा एक युवक ने इस निराशा को चीर नैया की पतवार थामने का निश्चय किया। इस निश्चय की पूर्ति में उसे अपना जीवन बलिदान कर देना पड़ा।

महात्मा हंसराज चाहते तो अन्य सांसारिक लोगों की तरह उच्च-से उच्च पद प्राप्त कर लाखों की सम्पत्ति जुटा लेते। लेकिन जाति की दुरावस्था ने उन्हें बलिदान के इस मार्ग पर बढ़ने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने बढ़ता हुआ एक तूफान देखा और रुक न सके। कूद पड़े। सारी आयु निर्धनता, तपस्या और त्याग में बिताते हुए संसार के कल्याण के लिये धर्म, देश और जाति की सेवा का प्रण लिया। होश सम्भालने से लेकर अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक उन्होंने हर श्वास के साथ देश से अज्ञानता को दूर का प्रयत्न किया। हिन्दू-समाज को सुधारने और दुखी, भूकम्प, अकाल, दुर्भिक्ष, महामारी पीड़ितों का सेवा-सहायता करने के लिये वह सदा तत्पर रहे। जीवन के ७४ वर्षों में से ५८ वर्ष उन्होंने परोपकार में ही बिताये। दयानन्द कालिज को सफल बनाने के लिये उन्होंने १८८५ में अपना जीवन अर्पण किया और एक कौड़ी लिये बिना शीत-ग्रीष्म बीमारी, दुख, गरीबी, कष्ट, विरोध की तनिक भी अपेक्षा किये बिना उन्होंने मृत्यु-पर्यन्त अपना प्रण निभाया। उनकी निस्वार्थ सेवाओं और निष्काम प्रयत्नों से उन्हें हर क्षेत्र में पूर्ण सफलता मिली। उनके विरुद्ध कई षड्यन्त्र रचे गये, बीसियों लेख लिखे गये, झूठे दोष आरोपित किये गये, परन्तु वह अपने निश्चय पर स्थिर रहे। इस बीच उन्हें कई प्रलोभन दिये गये, देश के नेतृत्व का स्वर्ण जाल फैलाया गया। प्रबल राजनैतिक आंदोलन के समय उन्हें कहा गया कि यदि आप

आज के दिन प्रारम्भ करें। नवयुवक मैदान में निकलें, बन्धनों को तोड़ें, परिवारों तथा सारे समाज का कल्याण होगा। आर्य जगत् के पृष्ठ ऐसे लोगों के लिए खुले हैं। ऐसे नवयुवक हम से बेशक पत्र व्यवहार करें। आज उत्सवपरती, सर्वमेधी महात्मा के पुण्यदिवस पर इस महान् कार्य को आरम्भ करने का संकल्प करें। देखें कितने युवक निकलते हैं—त्रिलोकचन्द्र

इस में शामिल हो जायेंगे तो सारे देश के नेता बन जायेंगे। तब महात्मा जी ने केवल इतना ही कहा, 'मैं नींव में पड़ने वाला पत्थर हूं', रचनात्मक कार्य में लगा हूं और इसी में लगा रहूंगा!'

उनका सारा जीवन तप और त्याग का जीवन है। धन दौलत, सुख-सम्पदा, भोग-ऐश्वर्य सब त्याग दिया। गरीबी को निमन्त्रण दिया। भाई द्वारा प्राप्त केवल चालीस रुपये मासिक पर गुजारा करते रहे। स्व-प्राप्त गरीबी में दुख के दिन काटना सब से कठोर तपस्या है। यक्ष के पूछने पर कि 'तप क्या है ?' युधिष्ठर ने कहा था, 'तपः स्वधर्मवर्तित्वं।' अपने कर्त्तव्य को करते रहना ही तप है। दुख-सुख, रोग-अरोग, मान-अपमान, प्रसन्नता-अप्रसन्नता की उपेक्षा किये बिना जो कर्त्तव्य अपने कंधे ले लिया, उसे निभाते जाना सच्चा तप है। महात्मा जी ने एक भाषण में कहा था, 'मनुष्य जीवन का एक ध्येय होना चाहिये, एक केन्द्र, जहां पहुंचकर वह अपना जीवन कुर्बान कर सके, अपने धन दौलत और बाल-बच्चों को सुविधा से छोड़ सके। एक स्थान होना चाहिये, जहां पहुंच कर गर्व के साथ कह सके कि चाहे प्राण चले जायें, चाहे सब ओर नाश-विनाश नाचने लगे तो भी वह लौटेगा नहीं, पीछे हटेगा नहीं। ऐसे स्थान पर ही मनुष्य का वास्तविक चरित्र और उसका असल मोल मालूम होता है।' यह शब्द महात्मा जी ही के मुख से शोभा देते हैं, जिन्होंने जीवन का एक ध्येय मानकर उमर भर तपना मंजूर किया।

त्याग की साक्षात मूर्त्ति, सादगी का सजीव चित्र, निरभिमानता के आदर्श हंसराज का जीवन अनुकरणीय है। रहने का एक छोटा-सा कमरा, लकड़ी का एक तख्तपोश, दो टूटी हुई कुर्सियां और बस। कपड़े मोटे-मोटे शुद्ध स्वदेशी, जूता होशियारपुर का। सीधा सादा पाजामा, बन्द गले का कोट, ऊबड़ खाबड़ सी पगड़ी—यह उनका वेश था। उन्नत विशाल मस्तक, श्वेत वर्ण लम्बे चेहरे पर भव्य दाढ़ी, ऐसे लगती थी, मानो कोई प्राचीन काल का देवता हो। बातचीत में केवल माधुर्य ही नहीं, आधिकता भी थी। नपेतुले शब्द, एक अक्षर भी व्यर्थ न बोलते। सागर की तरह गम्भीर, हिमालय की तरह निश्चल और चन्द्रमा की तरह शांत क्रोध पर उन्हें पूर्ण विजय प्राप्त थी, पूर्ण संयमी।

बे-लगाव कितने थे, इसका एक ही उदाहरण है। १८८५ से १९११ तक दयानन्द कालिज रूपी पौदे को वृक्ष बना उसके प्रिंसिपल पद को भी त्याग दिया और वेद प्रचार तथा लोक सेवा की ओर ध्यान दिया। आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का काम अपने हाथ में लेकर वेद-प्रचार का क्षेत्र बहुत विस्तृत कर दिया। दुखी-पीड़ितों की सेवा में दिन-रात एक कर भारत के एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक दयानन्द का संदेश पहुंचा दिया और जब देखा कि सभा का काम भी अब सुचारु रूप से होने लगा है तो १९३७ में इसका प्रधान पद भी त्याग दिया।

महात्मा जी के जीवन का एक ही उद्देश्य था। ऋषि का मिशन सफल हो ताकि हिन्दू जाति में नया जीवन आये, वह कुरीतियों और वहमों से बचे, एक ईश्वर

जाग्रति और क्रांति का सूत्रधार

(श्री प्रि० सूर्यभानु जी वायस चांसलर कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी कुरुक्षेत्र)

माननीय प्रिंसिपल सूर्यभानु जी वायस चांसलर कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय एक गम्भीर लेखक, शिक्षा विशारद तथा वक्ता हैं। महात्मा हंसराज जी के जीवन को किस गम्भीरता से आंका है वह उनके अपने शब्दों में ही पढ़िये—सं०

महात्मा हंसराज धर्म सुधारक थे और वे इस बात से भली-भांति परिचित थे कि धर्म लोक और परलोक दोनों की एक साथ व्यवस्था करता है। इसलिए एक ओर वे वेद और वैदिक धर्म के अथक प्रचारक तथा अग्रगण्य कार्यकर्ता थे और दूसरी ओर वे पश्चिम की भौतिक उन्नति को भी विस्मृत न कर सके। इस दोहरी वृत्ति के परिणाम स्वरूप महात्मा जी ने अपने आपको उस आंदोलन के साथ बान्ध दिया जिस ने नये पंजाब में जागृति और क्रांति की भावनाओं को जन्म दिया। यह महान आंदोलन डी० ए० वी० आंदोलन था।

बाहर से देखने में यह एक महाविद्यालय तथा स्कूल का शिलान्यास था परन्तु इस में बिजली की सी एक शक्ति थी। डी० ए० वी० संस्थाओं ने ऐसे नेताओं को जन्म दिया जो अपने जीवन में शुद्ध रूप में भारतीय थे परन्तु वे विदेशी विचारधाराओं से भी अपरिचित न थे। यही कारण है कि वे लोग बृटिश राज्य से सफल टक्कर ले सके थे।

महात्मा हंसराज जी का अपना जीवन एक फकीर और सन्त का जीवन था। वे अपने शरीर के भोगों से उदासीन थे। परन्तु वे नेतृत्व उन

की उपासक हो और पराधीनता की कड़ियां काट सके। इसके लिये उन्होंने उपयुक्त साधन बरते। दयानन्द कालिज की निस्वार्थ एवं निष्काम सेवा, आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा की स्थापना, महिला महा-विद्यालय की स्थापना आदि सब इसी कार्यक्रम की कड़ियां थीं। इसी ध्येय-प्राप्ति के लिये जहां कहीं भी भारतीयों पर कष्ट आया, उन्होंने वहां ही आर्य सेवक भेजे, स्वयं भी वहां पहुंचे। शुद्धि आंदोलन, अछूतोद्धार, हरिजनों की उन्नति आदि सब का यही प्रयोजन था। महात्मा हंसराज जी महात्मा गांधी के हरिजन सेवक संघ में भी काम करते रहे।

इस ध्येय के पीछे एक विचार था, जो महात्मा जी के इस वाक्य में झलकता है, "....मैं तो अंत में आप से यही कहना चाहता हूं कि महर्षि दयानन्द के बताये मार्ग पर दृढ़ता से कायम रहें और उस पर चलते हुये वैदिक धर्म का प्रचार और आर्य जाति का सुधार करें, ताकि सारे संसार का कल्याण हो सके।"

महात्मा हंसराज—जन्मदाता

(ले०-प्रिंसिपल भगवानदास जी, एम. ए. डी. ए. वी. कालेज शोलापुर)

अंग्रेजी राज्य स्थापित होने से पूर्व जन-साधारण को शिक्षित करने का कार्य गतिरुद्ध हो चुका था। धर्मस्थानों में मदर्से और पाठशालाएं व्यक्तिगत रूप से चलाई जा रही थीं परन्तु गवेषणा के लिये स्फूर्ति पूर्णतया समाप्त हो चुकी थी। अध्यापक (चाहे उसकी योग्यता और विद्या कुछ भी हो) यदि देव का अवतार नहीं तो देव तुल्य अवश्य समझा जाता था। शिष्यों को उस के प्रति अंधश्रद्धा के लिये विवश किया जाता था।

विद्यार्थियों का करते थे जिनके हाथ में आने वाले भारत का निर्माण था। उनका स्थान डी० ए० वी० आन्दोलन की लम्बी और दिलचस्प कहानी में नायक का है। उनकी मानसिक शक्ति से इस आन्दोलन को शक्ति मिलती थी। उनके त्याग से इस में क्रियाशीलता उत्पन्न होती थी। वह अर्थ और मोक्ष दोनों की महत्ता को स्वीकार करते थे। वे जानते थे कि प्रवृत्ति और निवृत्ति दोनों मार्ग एक दूसरे के सहायक हैं। उन में मूल विरोध का अभाव है। ऐसे महान् नेता इतिहास में अमर रहते हैं।

सुधार का आन्दोलन ऋषि के पश्चात उन नेताओं पर निर्भर था जो दयानन्द के उपदेशों के अनुसार आगे बढ़ना जानते थे। इन नेताओं में महात्मा हंसराज सब से आगे थे।

ये पाठशालाएं थोड़े बहुत स्थानीय अथवा क्षेत्रीय दान से चलती थीं इस लिये स्थानीय और वर्गीय पक्षपात ने शिक्षा क्षेत्र में प्रवेश पा लिया। परन्तु इन शिक्षा संस्थाओं के सबंध में फिर भी दो विशेषतायें उल्लेखनीय थीं—अध्यापक की ध्रुव-कर्तव्य निष्ठा और विद्याध्ययन के लिये उसके शिष्यों की जिज्ञासा। सोचने वाले को आज यह विचार करके आश्चर्य होता है कि उस युग की सीमित सुविधाओं और साधनों की तुलना में आज के अगणित साधनों और अवसरों में यदि ये दो गुण धारण किये जायें तो हमारी मातृभूमि का स्वरूप क्या होगा। उस समय प्रतिष्ठित लोगों की संख्या अतिन्यून प्रायः शून्य ही थी। अंग्रेज भारत में आये। कुछ समय तक संशय में रहे परन्तु फिर उन पाठशालाओं और मदर्सों को संदिग्ध दृष्टि से देखा और फिर भारत के लाखों और करोड़ों लोगों को शिक्षित करने का दायित्व अपने ऊपर लेने का निर्णय किया। अतः उन्होंने कुछ स्कूल और कालेज खोले। परन्तु उन संस्थाओं के खोलने का एकमेव प्रयोजन ईसाईयत के प्रचार को सुगम बनाना था। 'ताकि भारत को स्थायी रूप से पराधीन रखना सम्भव हो जाये।' यहां यह तथ्य उल्लेखनीय है कि एकमेव गैर सरकारी

ईसाई कालिज अर्थात कलकत्ता हिन्दु कालेज ने जहां तक ईसाईयत का संबन्ध है अच्छे परिणाम दिखाये। यह हाउस आफ लार्ड और हाउस आफ कामनज़ के सम्मुख दी गई साक्षी के निम्न संदर्भो से सिद्ध होता है।

'कलकत्ता छोड़ने से पूर्व मैंने सुशिक्षत वर्ग में से ईसाई बनाये गये लोगों की सूची तैयार की। मैं ने उस समय यह जाना कि ईसाई होने वाले वर्ग का वह बहुमत जिस का चरित्र, प्रवृत्तियां और मानसिक ढांचा ईसाईयत के लिये सर्वाधिक सहयोग प्रस्तुत करता है वह हिन्दु कालेज की देन है।'

'मेरा विश्वास है कि इंग्लैण्ड के किसी भी पब्लिक स्कूल से कलकत्ता के हिन्दू कालेज में बाईबल का अधिक ज्ञान है। (सर फैरड्रक हैलिडे)

ऊपर के प्रमाणों से यह सुस्पष्ट है कि हमारे उस समय के भाग्य विधाताओं (शासकों) का एक ही उद्देश्य था। भारत के लाखों लोगों को अशिक्षित और अज्ञ रखा और शिक्षित वर्ग के मस्तिष्क को अंग्रेजी शासन के पक्ष में तैयार करना। उत्तर भारत में अव्यवस्थित सामाजिक अवस्था के कारण तो यह और भी स्पष्ट था। साम्प्रदायिक दलबदियों ने तो पहले ही ईसाइयत के प्रसार के लिये उर्वरा भूमि का निर्माण कर रखा था। भारतीय ईसाइयों के प्रति भी घृणा की भावना और उनको गोरे ईसाइयों की स्थायी आधीनता में रखने से भी यही प्रतीत होता है कि मुख्य विचार राजनैतिक था। यह थी परिस्थिति जब हंसराज ने विलक्षणता से बी०ए० किया। बी० ए० पास तो कहना ही क्या उन दिनों मैट्रिक पास भी बिना मांगे ऊंची राजकीय नौकरी प्राप्त कर सकता था और हंसराज तो फिर भी एक विलक्षण प्रतिभाशाली विद्वान था। जिस लिये उसको किसी बड़े पद के लिये हाथ पसारने की आवश्यकता न थी। यह तो उस के सामने निवर्चन के लिये स्वयं आ जाती। परन्तु ऋषि दयानंद के प्रखर राष्ट्रवाद और स्वदेशी प्रचार ने हंसराज के तरुण मन पर अमिट प्रभाव छोड़ा। उस ने गंभीरता से यह अनुभव किया कि इस से बढ़ कर देश वासियों की कोई सेवा नहीं हो सकती कि जन साधारण को राष्ट्रीय ढंग से शिक्षित कर के उन में आत्मविश्वास और आत्मसम्मान की भव्य भावना उत्पन्न की जावे। इस के लिये वह सब प्रकार का त्याग व साधना करने को उद्यत था। इस लिये उस ने एक पाई भी वेतन रूप में स्वीकार न करते हुये अपने आप को उद्देश्य पूर्ति के लिये भेंट कर दिया। महर्षि दयानंद की पवित्र स्मृति में लाहौर में एक स्कूल चलाने के लिये दयानंद कालेज कमेटी की स्थापना की गई। यह स्पष्ट ही है कि इस कमेटी जैसी दृढ़ राष्ट्रीय विचारों वाली समिति आर्थिक स्थिति से निश्चन्त न हो सकती थी। अंग्रेजी सरकार भी पहले आर्थिक अनुदान देने को उद्यत न थी। कमेटी ने स्वयंमेव विदेशी सरकार से एक पाई भी सहायता न लेने का संकल्प किया। धनी लोग सरकारी आतंक से

भयभीत थे तो फिर जनता को ज्ञान दान कैसे दिया जाये? यह थी समस्या! हंसराज ने यह कार्य सुगम कर दिया। १८८६ में महात्मा हंसराज जी के रूप में आदर्श मुख्याध्यापक पाकर स्कूल चला दिया गया। कमेटी के सामने एक ध्येय था राष्ट्रिय गौरव को पुनर्स्थापित करना सरकार से एक पाई भी अनुदान न लेने पर कोई आश्चर्य नहीं होता जब यह तथ्य हमारे ध्यान में आता है कि स्कूल की स्वीकृति के लिये प्रार्थना करना भी प्रतिष्ठा के प्रतिकूल समझा गया। लाहौर में यह रिकार्ड में था कि डी. ए. वी. स्कूल ने अपने प्रथम वर्ष सारे हाई स्कूल स्कालर शिप पाने पर डी. पी. आई. से बधाई प्राप्त की। महात्मा जी ने बधाई के लिये धन्यवाद का जो पत्र लिखा सरकार ने उसे ही स्कूल की स्वीकृति का आवेदन पत्र मान कर स्कूल को सरकारी मान्यता प्रदान कर दी। यह है शिक्षा क्षेत्र में अराजकीय (प्रयत्नों) की कहानी और सरकार द्वारा उसकी मान्यता का इतिहास। यह उल्लेखनीय है कि डी. ए. वी. आंदोलन की शिक्षा सम्बन्धी सेवाओं की उपयोगिता पर अंग्रेज भी स्तंभित और मुग्ध थे। बिना आवेदन पत्र के स्कूल को मान्यता मिलना उस महान गुरू, शिक्षा विशेषज्ञ और सुधारक की गौरवपूर्ण सेवाओं का अभिनन्दन था।

१८८६ में उत्तर में एकमेव अराजकीय और गैर ईसाई स्कूल में राष्ट्रीय भावना के प्रसार और संचार में कितना कठोर परिश्रम करना पड़ा इसका अनुमान और माप करना महाराष्ट्र में अति कठिन है। दक्षिण में उस समय भी निर्भिक नेतृत्व के कारण देश प्रेम की लहर उमड़ रही थी। उत्तर में तब नौकरशाही का रोब था। १८५७ के सर्वप्रथम स्वाधीनता संग्राम की विफलता के कारण जनता त्रासित थी। और सरकार द्रोही होने का आरोप थोपे जाने का प्रतिक्षण भय था। यह स्वाभाविक ही था कि अंग्रेज स्कूल को, मुख्याध्यापक को, छात्रों को और सारी प्रबन्ध समिति को सदिग्ध दृष्टि से देखते थे। परन्तु महात्मा हंसराज के दृढ़ निर्भीक नेतृत्व में आर्य समाज और स्कूल की अविरल और अविराम उन्नति के परिणाम स्वरूप १८८८ में पहला अराजकीय और गैर ईसाई कालेज लाहौर में स्थापित किया गया जिस के आदर्श आचार्य महात्मा जी थे।

परीक्षा को अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई और मध्यम वर्ग के साधारण लोग डी० ए० वी० कालेज कमेटी के सहयोग को आगे निकले जिससे यह पुनीत कार्य सर्वत्र फैला।

महात्मा हंसराज जी एवं उन सरीखे दृष्टिकोण के अन्य नेताओं की दूरदर्शिता का परिचय इस तथ्य से मिलता है कि सरकारी रोष को बेकार करने के लिये डी० ए० वी० संस्थाओं के स्नातकों के लिए नये-नये क्षेत्र तैयार करने के लिये कई बैंक, बीमा कम्पनियां और उद्योग चलाये गये। एक शिल्प विद्यालय, टैकनिकल स्कूल, आयुर्वेदिक कालेज, नार्मल स्कूल (अध्यापकों के प्रशिक्षणार्थ)

वैदिक मिश्नरियों के निर्माण के लिए एक कालेज, एक वैदिक शोध संस्थान और अनेक आर्टस साईंस कालेज एवं स्कूल १९३८ में महात्मा जी की मृत्यु से पूर्व फुलते फलते हुए इस आन्दोलन की नींव में तप और त्याग की भावना का ज्वलन्त प्रमाण दे रहे थे।

केवल शिक्षा के क्षेत्र में महात्मा जी के बराबर कोई और नेता उतना कुछ कर दिखाता तो वह जाति से धन्य धन्य प्राप्त करता परन्तु महात्मा जी ने वहीं विराम नहीं लिया। वह एक महान रचनात्मिक नेता और लोक सेवक थे। आर्यसमाज के पुनीत हितों के प्रसार और विस्तार के लिये वह कभी रुके नहीं। जब कभी और जहां कहीं भी देश पर कोई विपदा आयी वह अपने सहयोगी सेवकों के दल के साथ अविलम्ब आगे आते। भूकम्प, महामारी, बाढ़, दंगे आदि से वह सदैव चौकस हो कर व्यथित वासित मनुजता के त्राण बनते। सैकड़ों और सहस्त्रों उन के सहयोगी स्नेही वरदहस्त अनुभव करते।

महात्मा जी में सुयोग्य व्यक्तियों और युवकों को आकर्षित करने का अद्भुत गुण था और उनके पास आजीवन सदस्यों के रूप सहयोगी कार्य कर्ताओं का बहुत बड़ा दल था। दर्जनों अन्य युवक ध्येय पूर्ति के लिये उन के चारों ओर इकट्ठे हो गये। उन के तेजस्वी रूप में विशेषता यह थी कि उन के कार्य कर्ताओं में उन के व उनके आदर्शों के प्रति निष्ठा थी।

गुरु रूप में एवं प्रबंधक के रूप में महात्मा जी बड़े लोकप्रिय थे। चाहे वह बड़े नियामक (अनुशासन रखने वाले) थे परन्तु पात्र छात्रों के प्रति बड़ी सहानुभूति रखते थे उन के बिना अनेकों युवक जिन के पास शिक्षा प्राप्ति क साधन नहीं थे अशिक्षित और निराश्रय रहते। यह वही थे जिन्होंने अपनी आत्म आहुति से अकिंचन जन जन तक ज्ञान उजाला पहुंचाया।

महात्मा हंसराज जी की पुण्य स्मृति में श्री यश जी के हृदयोद्गार

(महात्मा जी के निधन के अवसर पर)

जो लहरों से लड़ २ कर पतवार हाथ में थामे।
जो वह चीर सागर का उस तूफानी वेला में॥
जब झंझा के झोंके थे उन्माद भरा था सागर।
मुंह फाड़े तकते थे जब लहरों के भूखे अजगर॥
जिसके अदम्य साहस ने डरकर मुंह जरा न मोड़ा।
जिस ने अपनी नौका का पलभर भी साथ न छोड़ा॥
उस नाविक को तकती है मेरी यह आज निगाहें।
औ' अन्तस्तल से बरबस निकली पड़ती हैं आहें॥

महात्मा हंसराज और आर्यसमाज का भावी कार्यक्रम

(ले०—श्री पं०रलाराम जी एम०ए०,एम०एल०ए०प्रधान आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर)

महात्मा हंसराज एक दरम्याने दर्जे के घराने में बजवाड़ा ग्राम जिला होशियारपुर में पैदा हुए। उनके पिता की आर्थिक अवस्था उस समय बड़ी डावांडोल थी। आपने जब बी० ए० पास किया तो सारा भारत वर्ष स्वामी दयानन्द के सिंहनाद से गूंज रहा था। शिक्षित भारतीयों ने महर्षि दयानन्द के संदेश में आशा, उत्साह तथा पुनरुत्थान के प्रकाश को देखा। उनकी जान में जान आई। समझदार भारतवासियों ने आत्मसम्मान की उस में झलक देखी। सभी स्वभावतः उस युग पुरुषकी तरफ झुके। भारत की आत्मा के अन्दर एक बिजली सी दौड़ गई। यह कैसे हो सकता था कि हंसराज जैसी पवित्र आत्मा इस से अप्रभावित रहती। उस समय का बी० ए० उच्च से उच्च पदवी जो किसी भारतीय के लिए उस दासता के युग में खुली थी, प्राप्त कर सकता था। हंसराज जी तो विशेष प्रतिभाशाली व्यक्ति थे। परन्तु परमार्थ के मुकाबिले में स्वार्थ उन्हें खींच न सका। महर्षि दयानन्द के संदेश ने उन्हें अपनी ओर विशेष ढंग से आकर्षित किया। महर्षि दयानन्द की मृत्यु पर श्री हंसराज जी ने महा त्याग का एक भीष्म व्रत लिया। विवाहित होने के बावजूद वेद ज्ञान को सर्वत्र फैलाने के लिए अवैतनिक आजन्म सेवा का व्रत धारण किया। जिस खूबी से उन्होंने इसे निभाया। उसका उदाहरण अन्यत्र मिलना कठिन है। आज जो विद्या का प्रसार पंजाब ही नहीं अपितु सारे भारत में है। उसका बहुत बड़ा श्रेय महात्मा हंसराज को है। वह शिष्टाचार के नाते महात्मा नहीं कहलाये। महात्मा शब्द श्री हंसराज जी की महिमा को बढ़ाता है तो महात्मा हंसराज इस शब्द को गौरवान्वित करते हैं।

इस हुतात्मा ने युग पुरुष दयानन्द के संदेश में धर्म का वास्तविक रूप देखा। धर्म का अर्थ मत या सम्प्रदाय नहीं। 'यतो अभ्युदयनिःश्रेयस सिद्धिः स धर्मः।' धर्म इस लोक में समृद्धि और परलोक में परम शांति तथा मुक्ति का सम्पादन करता है।' धारणाद् धर्ममित्याहुः, धर्मो धारयते प्रजाः।' धर्म उन सार्वभौम महाव्रत का, उन सिद्धांतों का नाम है, जो कि सब प्रजाओं को धारण करते हैं। इसीलिए धर्म एक देशीय तथा एक पक्षीय हो नहीं सकता। यदि इस का सर्वव्यापी तथा सर्वकालीन रूप नहीं तो वह धर्म ही नहीं।

मूढ़ से मूढ़ मानव भी जीवन को एक फिलास्फी रखता है। विश्व-कल्पना अथवा विश्व दृष्टिकोण के बिना मानव जीवित ही नहीं रह सकता। इस के विश्व का चित्र चाहे आध्यात्मिक आधार पर हो या भौतिक आधार पर, यह बात और है परन्तु उसका दिमाग किसी न किसी रूप में सारे ब्रह्मांड

को परिवेष्टित करता है, तथा उसके विचार समस्त जगत पर आधारित होते हैं। इसी कारण वह धर्म धर्म कहलाने का अधिकारी ही नहीं जिस में सारे विश्व या समस्त जगत का समावेश न हो। युग पुरुष दयानन्द ने इस सच्चाई का अनुभव करते हुए अपने दश नियमों में एक नियम यह भी रखा कि 'सारे संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, सामाजिक तथा आत्मिक उन्नति करना।'

आर्यसमाज भारतवासियों की उन्नति तथा उन के उद्धार और पुनरुत्थान के लिये प्रयत्नशील तथा चिन्तित रहा है। ऐसा होना अनिवार्य था। जो अपने घर का स्वामी नहीं और जो अपने ही समाज का सुधार तथा उत्थान नहीं कर पाया उसे संसार में कौन आदर तथा ध्यान से सुनेगा **'Physician heal thyself'** वैद्यराज पहले अपनी चिकित्सा करो। भारतीय समाज शताब्दियों से रुग्ण तथा दूषित था। सामाजिक रोग असाध्य हो चुके थे या असाध्य समझे जाते थे। विरोधी तो इस रोगी के अन्तिम श्वास गिन रहे थे और धर्म परिवर्तन द्वारा इस वृद्ध के कायाकल्प की लम्बी चौड़ी योजनायें बना रहे थे। एक बङ्गाली भाई न दुखित तथा निराश होकर एक पुस्तिका Hindus, a Dying Race लिख डाली। स्थिति चिन्ताजनक तो थी ही भयानक भी बन रही थी ऐसे समय में भगवान की प्रेरणा से मुक्तात्मा दयानन्द का प्रादुर्भाव हुआ। इस परम चिकित्सक ने रोग का सही निदान करके निराशा को आशा में, पतन को उत्थान में, हीनता को आत्म-विश्वास तथा निर्जीव निष्क्रियता को उत्साह तथा प्रयत्न में परिणत कर दिया। ऊषा की लालिमा प्रकट हुई तथा शीघ्र सुन्दर प्रभात का रूप धारण कर गई। तिरस्कृत तथा हतोत्साह हिन्दु सजग, सचेत तथा गतिशील बन गया। प्रभात सुप्रभात बन गया। वह दीन हीन विचारधारा जो दयानन्द के आगमन के पहले सब हृदयों पर आच्छादित होकर सब को निराश तथा शक्तिहीन बना रही थी इस तरह काफूर हो गई जैसे सूर्योदय पर धुन्ध पड़ जाती है। वैदिक धर्म के इस विशाल तथा विश्व-व्यापी रूप के लिये महात्मा हंसराज ने अपना सर्वस्व अक्षरश: बलिदान कर दिया। महात्मा हंसराज के पदचिन्हों पर चलते हुए हमें वैदिक धर्म के विशाल सार्वलौकिक तथा सार्वजनिक रूप को देखना चाहिए वैदिक धर्म को सङ्कुचित संकीर्ण बनाना दयानन्द और महात्मा हंसराज के साथ विद्रोह तथा धोका होगा।

भारत में इसके परिणाम स्वरूप राष्ट्रीयता का जन्म हुआ। महात्मा गांधी तथा पंडित जवाहर लाल नेहरू जैसे नेताओं के नेतृत्व में हजारों हुतात्माओं के बलिदानोंके फलस्वरूप भारत स्वतन्त्र हुआ। स्वतन्त्र भारत ने स्वामी दयानन्द के सामाजिक प्रोग्राम को शत प्रतिशत अपना लिया है। कथी केवल आचरण की है। परतन्त्रता पोषक सामाजिक कुरीतियों का सुधार करने में आर्य समाज खूब सफल रहा, परन्तु आन्तरिक समाज सुधार में असफल रहा है। अछूतापन तथा छोटी आयु में विवाह और विधवा विवाह निषेध, इन बुराईयों

का उन्मूलन करने में काफी सफल रहा है, परन्तु आन्तरिक सुधार में इसे विफलता का सामना करना पड़ा। दहेज की कुरीति का आर्य समाज सुधार नहीं कर सका। विवाह सुन्दर तथा सरल ढ़ग से हों यह तो एक स्वप्न मात्र रह गया। हम लोभ-लालच के तूफान से घिर ही नहीं गये। अपितु आर्थिक भावों की बाढ़ में बह भी गये हैं। यदि आर्य समाज सामाजिक सुधार के क्षेत्र में नेतृत्व प्राप्त करना चाहता है तो दहेज की कुप्रथा तथा विवाह समारोहों पर अत्यधिक दिखावे तथा प्रदर्शनी का नियमित रूप से विरोध एक आन्दोलन के रूप में आरम्भ करें और प्रत्येक आर्य सामाजी इस बात को अनुभव करे कि हर एक सुधार सफल होने के लिए पहले यह अपने आप से आरम्भ होना चाहिए। इस आंदोलन में सफलता के लिये दोनों ओर 'अति' वर्जित समझनी चाहिए विवाह में कोई आनन्द मंगल न हो, कोई सामाजिक समारोह न हो या विवाह में इतनी प्रदर्शनी करो कि चारों ओर ईर्षा, द्वेष तथा प्रतिस्पर्धा की ज्वाला भड़क उठे यह दोनों बातें गलत तथा बड़ी हानिप्रद हैं। क्या हर एक आर्य समाजी पहले स्वयं इस सुधार क्षेत्र में पदार्पण करने को तैयार है? आर्य समाज अब इस ओर ध्यान दे। यह आदेश हमें महात्मा हंसराज के जीवन से मिल रहा है।

—o—

महात्मा हंसराज जी का सब से प्यारा भजन

हे जगत् स्वामी! हे जगत् पिता प्रभु जी! भेंट धरूं मैं क्या तेरी।
माल नहीं मेरा सम्पत नहीं जिस को कहूं मैं मेरी॥
इस जग में ऐसे विचरे जोगी करे ज्यों फेरी। हे जगत् स्वामी......
धन मन यौवन अपना माने मूरख भूला भारी।
तुम बिन और सहाई न मेरा देख लिया मैं विचारी॥ हे जगत् स्वामी......
ए तन ए मन होय न अपना है सब माल तुम्हारा।
जब चाहो प्रभु तब ही ले लो नहीं कछु जोर हमारा॥ हे जगत् स्वामी...
तुमरे दर पर मैं याचक स्वामी लाज तुम्हे मेरी।
चरण शरण निज अर्पण करके दियो भक्त बिनु देरी॥ हे जगत् स्वामी...

नोट—श्री महा० राजपाल जी चिमटा भजन मण्डली के सौजन्य से प्राप्त।

इतिहास के रहस्य और राष्ट्र निर्माता

वज्र संकल्पी महात्मा हंसराज जी

ले० श्री राजेन्द्र जी 'जिज्ञासु' प्राध्यापक दयानन्द कालेज शोलापुर

अंग्रेज जन भारत में आये तो व्यापरी के रूप में पधारे। व्यापार के पीछे राज्य विस्तार का उद्देश्य था परन्तु वह प्रकट न होने दिया। यही यूरोप की सभ्य कहलाने वाली जातियों के चरित्र की विलक्षणता रही है। जब राज्य स्थापित किया तो राज्य की स्थिरता की चिन्ता हुई। इस प्रयोजन की सिद्धि के लिये ईसाई मत का प्रचार और शिक्षा का कार्य आरम्भ किया गया। हम आर्य समाजी लोग यदि अंग्रेजी शिक्षा का उद्देश्य साम्राज्य की स्थिरता बताते हैं तो कुछ अज्ञानी और अनुभव हीन एवं वोटों नोटों के चक्र में पड़े हुए तथा कथित उदारवादी बाबू हमें सकीर्ण कहते हुए कहते हैं कि हम तो अच्छे कार्यों में भी त्रुटि निकालते और व्यर्थ ही अंग्रेजी सरकार पर सन्देह करते हैं परन्तु:—

इतिहास साक्षी है कि बात वही सत्य है जो आर्य समाज कहता है १८३८ में मद्रास के राज्य पाल ट्रेविलियन ने अपनी पुस्तक **On Education In India** के पृष्ट १८६ पर लिखा है 'भारती हमारे विरुद्ध कभी भी क्रान्ति नहीं करेंगे......क्यों कि शिक्षित भारतीय समाज, यह सोच कर कि हमारी शिक्षा प्रणाली पर आधारित भारती समाज उन्नति बिना हमारे संरक्षण के सम्भव नहीं सदैव हम से चिपका रहेगा।' इस से अधिक स्पष्ट शब्दों में अंग्रेजी शिक्षा का प्रयोजन व्यक्त करना कठिन है।

महात्मा हंसराज ने अपनी जीवन आहुति दे कर सरकार की सब आकांक्षायें मिट्टी में मिला दीं। महात्मा के प्रखर राष्ट्रवादी दृष्टिकोण और आर्य समाज की लोरियों के कारण दयानन्द संस्थाओं से उग्र भावनाओं के देश भक्त निकले जो सरकार की आंख में कांटा बन कर खटकने लगे। कभी खुशी राम के रूप में राष्ट्र की बलिवेदी पर आर्य समाज की शिक्षा संस्थाओं के युवकों ने अपना रक्त बहाया तो कभी गेंदा लाल जी दीक्षित के रूप में मां भारत को आर्य वीरों ने सिर भेंट किया। कभी भक्त सिंह के रूप में डी० ए० वी० फांसी पर झूल गये तो कभी सोहनलाल पाठक बलिवेदी पर चढ़ कर डी० ए० वी० आंदोलन और आर्य समाज की दिव्य भव्य परम्पराओं की गौरव पताका फहराता हुआ संसार के सन्मुख आया। कभी बलराज आगे आया तो कभी I. N. A. (नेता जी सुभाष की सेना) के कप्तान सहगल के रूप में डी० ए० वी० मौत को ललकारते हुए जननी को बंधन मुक्त करते हुए भारतीय जनता के सामने आये। १६१६, १६३० और १६४२के सब आंदोलनों

में बलिदान देने वालों में इतिहास कहता है कि पलड़ा हंसराज के शिष्यों का ही भारी है। विस्तार भय से इस प्रसंग को मैं यहीं छोड़ता हूं और देश में चलाए गये एक और शिक्षा आंदोलन की भी एक झांकी पाठकों के सम्मुख रख कर राष्ट्र निर्माता हंसराज की महिमा को दर्शाना चाहता हूं।

अलीगढ़ में मुसलमान बंधुओं ने आर्य-समाज से थोड़ा समय पूर्व अपना शैक्षणिक आंदोलन आरम्भ किया। इसके जन्मदाता सर सय्यद अहमद थे। सर सय्यद अहमद १८६८ में सांप्रदायक दृष्टिकोण अपना चुके थे ऐसा उर्दू के विख्यात कवि हाली द्वारा उनकी जीवनी से स्पष्ट होता है। जब काशी के हिन्दी प्रेमियों ने प्रशासन में हिन्दी को उसका स्थान दिलाने के प्रयत्न किये तो सर सय्यद हिन्दी की प्रगति सहन न कर सांप्रदायिकता के पोषक बन गये परन्तु अपनी कुभावना प्रकट न होने दी जब तक कि अलीगढ़ कालेज के विशाल भवनों का निर्माण न कर लिया। ऐसा क्यों? अलीगढ़ कालेज के लिये हिन्दुओं ने दिल खोलकर धन दिया और सर सय्यद ने लिया। अब कार्य बन गया तो फिर आंख दिखाई। आर्य समाज के यशस्वी नेता हुतात्मा स्वा० श्रद्धानन्द जी महाराज भी अलीगढ़ में प्रविष्ट हुए परन्तु वहां हिन्दुओं लिये विषैला एवं प्रतिकूल वातावरण पाकर उनका अलीगढ़ कालेज छोड़ना।

एक और बात सर सय्यद ने कांग्रेस का पहले तो पोषण किया। क्यों? हिन्दुओं से भी धन लेना था। फिर मुसलमानों को कांग्रेस से दूर रखने के लिये **Muslim Educational Conference** का अधिवेशन उन्हीं तिथियों पर आयोजित करना आरम्भ किया। जब कांग्रेस का अधिवेशन होता था। **Beck** और **Archibold** सरीखे अंग्रेज वहां आचार्य बनाये गये जिन्होंने मुसलिम लीग की नींव रखवा कर भारत विभाजन कराया।

यह सारा वृत्तान्त देने का अभिप्राय यह है कि पाठक उस युग की घिनौनी परिस्थितियों की कुछ कल्पना करें जब तरुण तपस्वी हंसराज अपने साधन हीन समाज का सेनापति बन कर जाति घाती शक्तियों से जूझने निकला। उसके पास था क्या? तप और त्याग से विभूषित वज्र संकल्पी योद्धा रणक्षेत्र में उतरा। समय की गतिविधियों का अवलोकन करते हुए गम्भीर मुनि ने अपने राष्ट्र और मानव समाज की सेवा करते हुए वह सफलता पाई कि दुनिया दंग रह गई। आत्म बल भण्डारी से सरकार ऐसी कम्पित हुई कि उसके शिष्यों का सरकारी दफ्तरों में प्रवेश (Services) बन्द हो गया। जब भी राष्ट्र में राजनैतिक हलचल हुई दयानन्द संस्थायें प्रकोप के प्रसाद का सेवन करने में अग्रसर रहीं। १९४२ के आंदोलन में तो लाहौर दयानन्द कालेज के अन्दर और बाहर लाठी चार्ज व गोली वर्षा हुई। हमारा शीश गर्व से ऊंचा होता है जब आज हम यह याद करते हैं कि उस आंदोलन में लाहौर दयानन्द कालेज के छात्रावास में भी लाठी चार्ज हुआ गोली भी चलाई गई।

कर्मयोगी महात्मा हंसराज जी

(ले०-श्री महात्मा देवीचन्द जी, एम. ए. होशियारपुर)

महापुरुषों की जीवनियां समाज व जाति में नव-जीवन लाती हैं और देश के युवकों में नवीन रक्त का संचार करती हैं। वे हमारे लिए पथप्रदर्शक का काम करती हैं। धन्य है वह भूमि जहां महात्मा हंसराज जैसी पवित्र आत्मा ने जन्म लिया और धन्य थी वह माता जिसकी कोख से इस प्रकार का कर्मयोगी उत्पन्न हुआ। जीवन भी वास्तव में ऐसे ही लोगों का सफल होता है जिनके जीवन का उद्देश्य केवल अपनी उदरपूर्ति नहीं होता, परन्तु वे मनुष्यमात्र की भलाई में अपना व अपने देश का अभ्युदय एव विकास समझते हैं।

भारतवर्ष की अधोगति का मुख्य कारण इस देशवासियों की अविद्या ही समझनी चाहिए। इसी लिए आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज ने आर्यसमाज के दस नियमों में एक नियम यह रखा था कि 'अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।' उस नियम के अनुसार स्वामी जी के निर्वाण प्राप्त करने के पश्चात उनकी अत्युत्तम स्मृति स्थापित करने के लिए हमारे नेताओं ने शिक्षा के प्रसार को अपने हाथों में लेने का निश्चय किया। अतः सर्वप्रथम पंजाब की राजधानी लाहौर में मिशन कालेज तथा स्कूलों के मुकाबले पर आर्यसमाज ने दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कालेज का आंदोलन अपने हाथ में लिया और उसका प्रारम्भ लाहौर के डी० ए० वी० हाई स्कूल से हुआ। आवश्यकता थी कि इस महान

आज की पीढ़ी के आर्य युवकों के लिये भी महात्मा जी का जीवन एक ज्योति स्तम्भ है। आज भी देश में द्रोही शक्तियां दनदना रही हैं। गोआ के मुक्ति आंदोलन में वहां के ईसाईयों ने जो धन दिया उसका उल्लेख न करना ही अच्छा है परन्तु आज गोआ को एक पृथक प्रांत रखने के लिये वे इतना शोर मचा रहे हैं कि सुनकर कान फटे जा रहे हैं। पूर्वी बंगाल से हिन्दुओं का रक्तपात हो रहा है पर सब मौन हैं जब कुछ ईसाई निकले तो सारे विश्व के ईसाई चिल्ला उठे। यह सब कुछ विचारणीय है। अज्ञान की काली निशा अब भी सर्वत्र है। मूर्ति पूजा, कबर पूजा, व्यक्ति पूजा, झण्डा पूजन, पुस्तक पूजन आदि सब कुछ चल रहा है। नूतन पंथ जन्म ले रहे हैं। वेद उजाला कौन देगा? महात्मा जी का नाम लेने वालों को कर्त्तव्य की पुकार सुननी होगी और सारे विश्व को वेद भानु से आलोकित करना होगा।

यज्ञ की पूर्ति के लिए कोई त्यागी वीर आहुति बन कर अपनी सेवाएं अर्पित करे। अतः नव-युवक हंसराज ने, जिन्होंने अभी पंजाब विश्वविद्यालय से बी. ए. की डिग्री प्राप्त की थी, महर्षि की इस पवित्र भावना को सम्मुख रखते हुए अपनी सेवाएं अर्पित कर दीं और यह व्रत धारण किया कि वह बिना किसी प्रकार का वेतन स्वीकार करने के आर्यसमाज और डी. ए. वी. कालेज कमेटी की सेवा करेंगे। उनके इस महान त्याग का ही यह शुभ परिणाम आज देखने में आ रहा है कि पंजाब में कोई भी नगर ऐसा दिखाई नहीं देता जहां आर्यसमाज का कोई स्कूल अथवा कन्या-पाठशाला न हो। इन संस्थाओं में प्रातःस्मरणीय महात्मा हंसराज जी की आत्मा काम करती हुई दिखाई देती है।

महात्मा जी के पदचिन्हों पर चलते हुए अनेकों योग्य नवयुवकों के भारत में शिक्षा और वैदिक धर्म के प्रचार को अपने जीवन का लक्ष्य बनाया और अपना जीवन उनके चरणों में भेंट किया। इस कर्मयोगी को मैं 'ज्योतिः-स्तम्भ' इसलिए कहता हूं क्योंकि उन्होंने देश से अविद्या रूपी अन्धकार को दूर करने के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया था। सैकड़ों नव-युवकों ने इन शिक्षा-संस्थानों से शिक्षा प्राप्त करके जहां शिक्षा के क्षेत्र में बहुमूल्य सेवाएं की हैं वहां अनेकों नवयुवकों के हृदयों में देश-भक्ति का भाव भी उत्पन्न हुआ और वे स्वतन्त्रता रूपी अग्नि में शलभ की भांति जल मरे। महात्मा जी का जीवन आदर्श जीवन था, वह त्याग और तपस्या तथा सादगी की साक्षात मूर्ति थे। इस 'ज्योतिःस्तम्भ' से सहस्रों ने प्रकाश ग्रहण किया।

महात्मा जी ने न केवल शिक्षा के क्षेत्र में ही हमारा पथ-प्रदर्शन किया है, अपितु समाज-सेवा के कार्य में भी वह सदैव हमारे अग्रणी बने रहे। जब कभी देश के किसी भाग में हिन्दु-जाति पर विपत्ति का समाचार उनके कानों तक पहुंचता था वह तड़प उठते थे और जाति व समाज पर आए उस संकट का निवारण करने के लिए एकदम अपनी सहायता का हाथ बढ़ाते थे।

महात्मा जी अपने जीवन में हमारे पथ-प्रदर्शक रहे। उनकी स्पिरिट हम में बनी ही रहनी चाहिए। उनका जीवन हमें जो शिक्षा प्रदान करता है उसको सम्मुख रखते हुए उत्साहपूर्वक आगे बढ़ते चले जाना चाहिए इस में हम सब का, देश व विश्व का कल्याण है। आशावादी कभी निराश नहीं हुआ करते।

आर्यसमाजों से निवेदन

समस्त आर्यसमाजों की सेवा में सूचनार्थ निवेदन किया जाता है कि जो समाजें अपने यहां कथा, उत्सव, यज्ञ तथा प्रचार आदि का कार्यक्रम रखना चाहें वे शीघ्र ही 'आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा जालन्धर से पत्र व्यवहार करके अपने प्रोग्राम की तिथियें निश्चित कर लें।

खुशीराम शर्मा
वेद प्रचारक अधिष्ठाता

सकल आर्य जगत् करे अभिनन्दन 'हंस' तुम्हारा

(श्री रघुवीरसिंह वर्मा 'साहित्य रत्न' अध्यापक डी.ए.वी. हायर सैं. स्कूल करनाल)

दयानन्द की पुष्पवाटिका का था सींचन हारा।
'हंस' हंस सम धवल बहाई इस में जीवन धारा॥
थे दिव्य मूर्ति सत्य-तपस्या और त्याग की अनुपम।
यतिवर दयानन्द के शिष्यों में निकले सर्वोत्तम।
मनुष्यता के परम हितैषी बन करके रहे हरदम।
महान आत्मा विद्यादानी थे वो नर श्रेष्ठतम।
इतने महान, पर अध्यापक ही रह कर किया गुजारा॥१॥

दीन-हीन दलितों की दशा लख द्रवीभूत हो जाते।
पीड़ित, विधवा, अनाथों की अवस्था पर नीर बहाते।
गोरों ने बन्धन में डाली थी आजादी माता।
था उर पीड़ित, किसी भाव थे वो आजादी चाहते।
परम-दयालु धर्म-धुरेन्द्र चमका हिन्द सितारा॥२॥
सर्व गुणों से युक्त 'हंस' प्रतिभाशाली सुन्दर।
नहीं देखने में आता अब ऐसा मानव भू पर।
शस्य-श्यामला भारत वसुधा हाय! पड़ी है खाली।
आ कर फिर से हंस! मात की गोद करो हरियाली।
सकल आर्य जगत करे अभिनन्दन 'हंस' तुम्हारा॥३॥

महात्मा हंसराज जन्म-शताब्दी

(रचयिता—गणेशदत्त आर्य वानप्रस्थी दिल्ली)

आर्य जाति की उन्नति के हित
जीवन का सर्वस दे डाला
आर्यों में शिक्षा फैलाई
युवक गणों का भार संभाला
दिव्य देवता हंसराज थे
आर्य जाति के रक्षक प्यारे
उनको राह दिखाई तम में
भटक रहे थे जो बेचारे

शहर शहर और गांव गांव में
स्कूल और कालिज खुलवाए
दयानन्द के सिद्धांतों के
पीछे लाखों युवक चलाए
आर्यो उनकी जन्म-शताब्दी
आप मनाकर शान बढ़ाओ
भारत के कोने-कोने में
वेद ज्ञान की ज्योति जगाओ

महानव्रती और दृढ़संकल्पी

(ले०-श्री स्वामी सोमानन्द जी, सरस्वती गुरदासपुर)

महात्मा हंसराज जी एक सच्चे नेता थे। वह एक चट्टान के समान थे। मनुष्य को दुःखों व आपत्तियों में से गुजरना पड़ता है। साधारण पुरुष इन दुःखों से घबरा जाता है, किन्तु महान् आत्मा इन दुःखों का हंस २ कर सामना करता है। श्री महात्मा हंसराज जी को अपने जीवन में कड़ी परीक्षाओं एवं विपत्तियों में से गुजरना पड़ा। इन के सुपुत्र श्री बल राज जी को फांसी का हुकम, बाद में सात वर्ष कैद में तबदीली, श्री बलराज जी के मुकद्दमा के अवसर पर धर्म पत्नी का देहान्त हो गया—किन्तु इस महानव्रती और दृढ़ संकल्पी महात्मा ने इन तमाम आपत्तियों को परमात्मा की ओर से समझ कर हंस २ कर सहन किया। इन के चेहरे पर दुःख की रेखा तक न आई। इन का सारा जीवन संघर्ष का जीवन था। भरी जवानी में ग़रीबी का व्रत धारण किया तथा निर्धनता में ही आनन्द प्रसन्न रहते। यह सच्चा फ़कीर मस्ताना वार झूमता रहता था। अपना सारा जीवन आर्य समाज और डी. ए. वी. कालेज के अर्पण कर दिया तथा इस व्रत को बड़ी उत्तमता से निभाया। यह व्रती लेशमात्र भी नहीं डोला। महात्मा जी महर्षि दयानन्द के पक्के भक्त थे। वेद, प्राचीन आर्य सभ्यता पर उन को पूर्ण विश्वास था।

महात्मा हंसराज जी का न केवल मस्तिष्क ही उज्ज्वल था अपितु उन के हृदय में जाति तथा देश के लिए सच्चा प्रेम व दर्द था। यदि देश के किसी कोना में कोई आपत्ति आती तो महात्मा हंसराज के करुणा एवं सहानुभूति भरे दिल में एक तड़प पैदा हो जाती थी। कांगड़ा का भूकम्प, राज-पूताना का दुर्भिक्ष, गढ़वाल, उड़ीसा, छत्तीसगढ़ तथा काश्मीर के अकाल में, मालाबार में मोपलों द्वारा किये गये अत्याचार के अवसर पर अपने सेवक भेज कर उन के दुःख निवारण किए आप अमीर ग़रीब के बीच एक कड़ी थे। मोटे देसी कपड़े, बजवाड़ा का देसी जूता, दो जोड़ा जुराबों में सारी सर्दियां गुजार देते। आपका दरबार सब के लिए खुला था।

महात्मा जी में आत्मसम्मान का भाव भरा हुआ था। श्री बलराज जी के केस में हजारों रुपयों की थैलियां आप के भक्तों तथा प्रेमियों ने पेश की परन्तु लेने से इन्कार कर दिया। सत्य के प्रकट करने में किसी से भी नहीं डरते थे। डी. ए. वी. कालेज के जल्सों में अपने दृष्टिकोण को बड़ी उत्तमता तथा निर्भयता से पेश करते थे। यदि उन की राय न मानी जाये तो लेशमात्र भी दुःख नहीं मानते थे। महात्मा जी आर्य समाज को डेमोक्रेटिक

चर्चे कहा करते थे। आर्य समाज के हित में तो वे अपने निकटतम सम्बन्धियों व मित्रों की भी परवाह नहीं करते थे। वे घासफूस के समान लहर के साथ नहीं बहते थे। प्रवाह में तिनके की तरह बहना तो कुछ कठिन नहीं। बात तो तब है कि तूफानों के मुख मोड़ देवे।

महात्मा हंसराज जी के जीवन में चुम्बक के समान दूसरों को अपनी ओर खींचने की शक्ति थी। ऐसी शक्ति से कई नवयुवकों को अपनी ओर खींचने में सफल हो गये। इस में उनका तप, त्याग भी काम करता था। इस ज्योति से और ज्योतियां जलीं। जिन्होंने अपने गुरु के पदचिन्हों पर चल कर अपने जीवन की आहुतियां आर्यसमाज, वैदिक धर्म, कालेजों, स्कूलों और गुरुकुलों के लिए दीं। भाई परमानन्द, लाला राम प्रसाद, डा. दीवान चन्द्र, लाला साईंदास, आचार्य रामदेव, प्रिंसिपल बाल कृष्ण, बख्शी टेकचन्द, डा. गोकुल चन्द नारंग आदि कितने ही महानुभाव थे।

महात्मा हंसराज क्या थे—महात्मा हंसराज सच्चे कर्मयोगी व तपस्वी थे। वे त्याग व बलिदान की सजीव प्रतिमा थे। ऋषि दयानन्द के भक्त थे आर्यसमाज के सरगरम मिशनरी थे, प्रभुभक्त थे, आर्यसभ्यता के शैदायी थे, शुद्धि एवं हिन्दु संगठन के प्रबल पक्षपाती थे, दीन दुःखियों के हितैषी थे, प्रकाश के स्तम्भ थे। उन्हीं ने आर्यजाति की नय्या को भंवर से निकाला। महात्मा जी की मृत्यु पर अंगरेजी पत्र ट्रिब्यून ने पहिले पृष्ठ पर शीर्षक लिखा The Maker of Modern Punjab passes away. पंजाब का निर्माता चला गया। महात्मा हंसराज में गम्भीरता शान्ति कूट २ कर भरी हुई थी। गीता २-७० का लक्षण उनपर पूर्ण घटता है।

आपूर्यमाणमचल प्रतिष्ठं समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत्। तद्वत् कामा यं प्रविशन्ति सर्वे, स शान्तिमाप्नोति न कामकामी। उनका जीवन परोपकार मय था—

परोपकाराय फलन्ति वृक्षाः।
परोपकाराय वहन्ति नद्यः।
परोपकाराय दुहन्ति गावः।
परोपकारार्थ मिदं शरीरम्

आप का जीवन सच्चे परोपकारी महापुरुष का जीवन था।

आओ! हम भी उन के निर्दिष्ट पथ को ही अपना जीवन पथ बनायें।

आर्य समाजों की सेवा में आवश्यक प्रार्थना

चार आना फण्ड शीघ्र भेजें

ऋषि बोध शिवरात्रि का पर्व सभी आर्य समाजों में बड़े धूमधाम से मनाया जा चुका है। इस उपलक्ष्य में वेद प्रचारार्थ चार आना फण्ड एकत्र किया जाता है आशा है सभी आर्य समाजों में ये राशि एकत्र की जा चुकी होगी। एतदर्थ आर्य समाजों से प्रार्थना है कि वे एकत्र फण्ड को शीघ्र ही 'आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा जालन्धर' के कार्यालय में शीघ्र भिजवाने की कृपा करें।

संतोषराज मंत्री सभा

आदर्श समाज सेवक--

महात्मा हंसराज

(श्री ज्ञान सिंह जी नई दिल्ली)

एक कवि ने कहा है कि आकाश वर्षों दिन रात घूमता रहता है तब जाकर कोई मनुष्य, वास्तविक मनुष्य उत्पन्न होता है। महात्मा हंसराज एक ऐसे ही महामानव थे। उन्होंने त्याग का एक ऐसा उदाहरण कायम किया जो दूसरों के लिए आदर्श बन गया एक योग्य नवयुवक ग्रेजुएट जिस के लिए उच्च सरकारी नौकरी के प्रायः सभी द्वार खुले थे और जिसके लिए सांसारिक सुखों की प्राप्ति के साधन जुटाना मुश्किल न था उसने जन कल्याण की भावना से प्रेरित हो एक मिशन की पूर्ति के लिये गरीबी का व्रत धारण किया यह कोई साधारण बात न थी। नवयुवक हंसराज ने उच्च श्रेणी में बी. ए. की परीक्षा में सफल होकर अपना समूचा जीवन डी. ए. वी. कालेज व आर्यसमाज की सेवा के लिये बिना एक कौड़ी लिये समर्पित कर दिया। किस तरह उन्होंने अपनी जवानी की उमंगों को मसल कर व भोग विलास के जीवन पर लात मारकर खुशी से गरीबी और सेवा का व्रत लिया और सारी आयु उसे निभाया। वह कोई साधारण त्याग नहीं, वास्तव में महात्मा हंसराज अपने उदाहरण आप ही हैं। एक ही बार में छलांग लगाकर तिनके की तरह जल मरना निःसन्देह वीरता है, दुश्मनों से लोहा लेते हुए मर मिटना एक बड़ा पराक्रम है, परन्तु, जीवन पर्यन्त हर रोज कदम-कदम पर भावनाओं, उमंगों व इच्छाओं का मुकाबला करते जाना और अपने निश्चित मार्ग से विचलित न होना सब से बड़ा साहस व जुर्रत और सब से ऊंची वीरता है।

कई लोग कुर्बानी करते हैं परन्तु अपने व बेगानों की बेकद्री अथवा बेरूखी से नाराज होकर सर्वदा शिकायत करते रहते हैं या अपने मार्ग से विचलित हो जाते हैं किंतु महात्मा जी ने किसी भी हालत में अपनों व बेगानों की कभी शिकायत नहीं की। लोगों ने उनका विरोध भी किया, उन्हें जीवन में कष्ट भी आए, दुखों व विपत्तियों का सामना भी करना पड़ा, परन्तु, किसी भी समय शिकायत का एक शब्द भी कभी उनके मुख से न निकला। गरीबी की जिंदगी अपनाने का उन्होंने भी पश्चाताप नहीं किया, बल्कि प्रत्येक विपरीत परिस्थितियों में भी सदा संतुष्ट रहे। जिस प्रकार उनका त्याग महान था उसी प्रकार उनका संतोष भी महान् था। चूंकि इनकी सेवा निष्काम व निस्वार्थ थी, इसलिये उन्हें प्रलोभन, कष्ट और

विपरीत परिस्थितियां कुछ भी अपने मार्ग से विचलित न कर सकीं। अपने त्याग का उपयोग न तो उन्होंने अपने व्यक्तिगत अथवा पारिवारिक काम के लिये किया और न संस्था या जाति के इष्ट-साधन के लिये। ऐसी निष्काम सेवा का उदाहरण अन्यत्र ढूंढने से कम ही मिलेगा। कई ऐसे अवसर आए जब कि वे राजनीति के क्षेत्र में भाग लेकर ख्याति प्राप्त कर सकते थे। परन्तु उन्होंने आर्य समाज की सेवा को अपना लक्ष्य बनाये रखा। एक बार पंडित मालवीय जी ने महात्मा हंसराज से बहुत अनुरोध पूर्वक कहा कि वे कुछ समय के लिये राजनीति के क्षेत्र में कुछ काम करें। किंतु महात्मा जी ने उन से यही कहा कि उन के लिये कार्य क्षेत्र निश्चित हो चुका है। ऐसी थी उनकी दृढ़-निष्ठा। उन को डी.ए.वी. कालेज से इतना प्रेम था कि उन्होंने अपने अस्तित्व को कालिज मध्यास्थि में सर्वथा खो दिया था। महात्मा में और कालिज में अद्वैत संबन्ध स्थापित हो गया था। कालेज को हंसराज से अलग और हंसराज को कालेज से अलग समझना सर्वथा असंभव था।

महात्मा जी ने जन-कल्याणार्थ आपात् सेवा के तथा डी० ए० वी० संस्थाओं और शुद्धि के लिये लाखों रुपये दानियों से एकत्रित किये और व्यय किये परन्तु जिस ईमानदारी का परिचय रुपया खर्च करने में उन्होंने और उनके नेतृत्व में आर्य समाज ने दिया उसकी हर बड़े छोटे ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की। सही बात यह है कि पब्लिक फंड के प्रयोग में सदुपयोग की बाबत आर्य समाज की इस समय ईमानदारी की धाक जम गई। पंजाब गवर्नमैन्ट के फाइनेन्स मैम्बर सर जान मैनार्ड ने एक बार कहा था कि डी० ए० वी० कालेज लाहौर एक रुपये या उससे कम राशि से इतना काम निकाल लेता है जितना दूसरे लोग दो रुपये से लेते हैं।

महात्मा हंसराज जी का व्यक्तिगत जीवन बहुत ही सादा था। वे खद्दर के वस्त्र व देसी जूती पहनते थे। बहुत दिनों तक वे तीसरे दर्जे में ही सफर करते रहे। एक छोटा सा मकान था जिसमें वे रहते थे। अड्डे पर जाकर तांगे में एक सवारी का किराया देकर वे स्टेशन तक जाते थे। आजकल एक साधारण समाज सेवी भी अपने घर पर ही सवारी मंगवाता है और टेकसी या सालम तांगे से कम में यात्रा नहीं करता। जब वह आर्य समाज के जल्सों पर उपदेश देने के लिये बाहर जाते थे तो कई बार सात आठ मील पैदल यात्रा करते थे और कई अवसरों पर बिस्तरा भी स्वयं कंधे पर उठा ले जाया करते थे। 'सादा जीवन व उच्च विचार' के कथन की वे साक्षात मूर्ति थे।

आज हम देश के निर्माण में लगे हुए हैं, करोड़ों रुपया समाज के कल्याण के लिये व्यय किया जा रहा है। इन योजनाओं को सफल बनाने के लिए त्याग, तपस्या, मिशनरी स्पिरिट, दृढ़ता व निष्काम सेवा की भावना, ईमानदारी व मितव्ययता आदि की आवश्यकता है। सरकारी कर्मचारी गण और समाज के अन्य काम करने वाले यदि महात्मा हंसराज का उदाहरण अपने सामने रखें तो देश की उन्नति को चार चांद लग जायें।

त्यागी और तपस्वी महात्मा हंसराज जी

(कु० अरुण जी आर्या प्रभाकर, जीरा)

किसी भी राष्ट्र की संस्कृति, उन्नति तथा सभ्यता का मूल्यांकन उस देश के वीर पुरुषों के अपूर्व त्याग व बलिदान को देख कर ही हो सकता है। संसार का इतिहास इस बात का साक्षी है कि समय २ पर जो महापुरुष राष्ट्र, धर्म और जाति की रक्षा के लिए उत्पन्न होते रहे हैं उनको हम एक बहुत बड़ी उपाधि से सुशोभित करते हैं जैसे कि, महात्मा, सन्त, गुरु, आचार्य एवं नेता। और सदा उनकी महानता का गान किया करते हैं।

आर्यसमाज रूपी आकाश के सूर्य ऋषिवर दयानन्द हैं ही लेकिन महात्मा हंसराज जी भी इस आकाश में सितारे के रूप में देदीप्यमान हैं। उनका जीवन इसीलिए श्रेष्ठ था कि उन में त्याग और तपस्या कूट २ कर भरी हुई थी। उनका सारा जीवन और आदर्श उनके साक्षी हैं। उन्होंने अपनी तपस्या के बल पर अपने जीवन को महान बनाया और त्याग की शक्ति से वे दूसरों के लिए एक प्रकाश स्तम्भ बन गए।

महात्मा हंसराज जी निर्धनता की गोद में ही पले तथा जीवन पर्यन्त जान बूझकर निर्धनता को ही अपनाए रखा।

महात्मा जी ने १८८० में १६ वर्ष की आयु में गवर्नमेंट कालिज लाहौर में प्रविष्ट हुए और बी. ए. की परीक्षा में पंजाब में दूसरी श्रेणी में रहे। जिन दिनों इन्होंने बी. ए. पास किया उस समय सारे हिन्दुस्तान में बी. ए. पास नवयुवकों की संख्या उंगलियों पर गिनी जा सकती थी। ऐसे युवकों को सैंकड़ों रुपयों की नौकरी तत्काल ही मिल जाती थी। लेकिन महात्मा जी ने D.A.V स्कूल के लिए सैंकड़ों रु. का त्याग कर अपना समस्त जीवन अर्पण कर दिया। इस परिस्थिति में महात्मा जी का यह अपूर्व बलिदान अत्यन्त श्लाघनीय है।

1885 में डी. ए. वी. हाई स्कूल कायम किया गया। महात्मा हंसराज उस के प्रथम हैडमास्टर बनाए गए। उस समय के गवर्नमेंट हाई स्कूल के अंग्रेज हैडमास्टर ने कहा था कि यह पगड़ी वाला बेवकूफ नौजवान क्या हाई स्कूल चला सकेगा? मगर हंसराज जी ने दो वर्ष में ही हाई स्कूल को कालिज बना दिया। उस समय केवल ईसाइयों के या सरकारी कालिज ही थे। डी. ए. वी कालिज को देखा देखी इस्लामिया खालसा कालिज भी खुलने प्रारम्भ हो गए। मगर उन के प्रिंसीपिल अंग्रेज थे। धीरे २ डी. ए. वी.

कालिज लाहौर का एक आदर्श कालिज बन गया और महात्मा हंसराज जी का नाम दूर २ तक फैल गया। महात्मा जी ने अपनी सरगर्मियों को यहीं तक ही सीमित नहीं रखा बल्कि पंजाब और दिल्ली के भिन्न २ स्थानों पर डी. ए. वी. स्कूलों, कालिजों तथा आर्य संस्थाओं की स्थापना की।

त्याग की साक्षात् प्रतिमा, सरलता एवं सादगी का सजीव चित्र, निरभिमानता के आदर्श देवता हंसराज का जीवन अनुकरणीय है। कालेज का प्रिंसीपल होते हुए भी चार रु. मासिक किराये के मकान में रहते थे। रहने का एक छोटा सा मकान, लकड़ी का तख्त पोश, दो टूटी हुई कर्सियां और बस। कपड़े मोटे और स्वदेशी। सीधा सादा पायजामा, बन्द गले का कोट, ऊबड़ खाबड़ सी पगड़ी—उन का वेश था। उन्नत विशाल मस्तक, श्वेत वर्ण, लम्बे चेहरे पर भव्य दाढ़ी, ऐसे लगता था, मानो कोई प्राचीन युग का देवता हो।

महात्मा हंसराज प्रभु के परम विश्वासी थे। जब कहीं बाहर आते जाते थे तो ओ३म् विश्वानि देव सवितुर्दुरितानि परासुव। यद्भद्रं तन्न आसुव। मन्त्र पढ़ा करते थे। यदि कोई मित्र अथवा सम्बन्धी को भी विदा करते तब भी इसी मन्त्र का पाठ किया करते थे।

जहां कहीं भी भूकम्प आया, अकाल पड़ा वहीं स्वयं जा कर सेवा करते। तथा आर्य सेवकों को भी भेजते। शुद्धि आंदोलन, अछूतोद्धार, हरिजनों की उन्नति आदि सब का यही प्रयोजन था।

आइये, हम महात्मा जी के जन्म दिवस को मनाते हुए इस संकट काल में अपने देश की सीमाओं की रक्षा के लिए अपना सर्वस्व अर्पण करने की प्रतिज्ञा करें। महात्मा हंसराज जी का नाम ही हंस नहीं, वास्तव में वह हंस थे। उस हंस के हृदय में जो एक तड़प अपने देश के प्रति थी आज उसी तड़प को हमने अपने हृदय में जगाना है। तभी महात्मा जी का जन्म दिवस वास्तविक रूप में मनाने में सफल हो सकेगा।

आवश्यक सूचना

जिन ग्राहकों का वार्षिक चन्दा अप्रैल मास में समाप्त होता है। उनकी सेवा में अलग अलग पत्र भी लिखे गए हैं। उन से प्रार्थना है कि अपना चन्दा १६ अप्रैल से पहले पहले कार्यालय में पहुंचा दें। अन्यथा ८ मई का आर्य जगत उनको वी. पी. द्वारा ६ रुपये ७२ नये पैसे में भेजा जाएगा। जिस का प्राप्त करना उनका धार्मिक कर्तव्य होगा।

मैनेजर, आर्य जगत्
सिविल लाइन, जालन्धर शहर

पत्र व्यवहार करते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखा करें

महात्मा जी का प्रचार कार्य

(ले०-श्री दयानन्द जी आर्य विद्यावाचस्पति कादियां)

यह सौभाग्य है कि आर्यसमाज के एक वेद-धुनी ने आर्य शिक्षा को डी. ए. वी. संस्था से प्रारम्भ किया। त्याग, तप की साक्षात प्रतिमा मानो हंसराज में छा गई थी। कार्लाइन ने लिखा है, **A great man shows his greatness by the deeds he treats with little man.** अर्थात् महापुरुष वह है जो जन-साधारण काय करके ऊपर उठता है। महात्मा जी का घर बजवाड़ा में बहुत बड़ा तो नहीं था। मामूली फर्नीचर था। परिधान देखकर कोई अनुमान नहीं कर सकता था कि वे प्रिंसीपल हैं। उनका लक्ष्य वेद का प्रचार था। सब कार्यों को छोड़कर वे भाषण देने को तत्पर रहते थे। मनुष्य की पहचान चाम से नहीं प्रत्युत काम से होती है। हंसराज की हंसी ने भी कई हंस बना दिए। शिक्षा का विस्तार जितना है, सब उस देव का प्रताप है। आओ, आज महात्मा हंसराज के उपदेशक पहलू पर विचार करके देखें कि हम उस देव का ऋण चुका सकते हैं या नहीं ?

उन्हें वेद प्रचार की लगन का ध्यान नवीं श्रेणी में पढ़ते हुए आया। न जाने एक ईसाई मुख्याध्यापक की असंगत बातों को काटने में जो निर्भीकता इस युवक हंसराज में आई वह किन २ शुभ कर्मों का परिणाम थी। जटा बांध कर भस्म रमाना मामूली बात है, घर छोड़ना भी आसान है। किन्तु वेदप्रचार के लिए जीवन के रोम २ को दीपक की बत्ती के समान जलाना बड़ा कठिन सा प्रतीत होता है। यदि कहा जाए कि आर्य शिक्षा देने के लिए उन्होंने स्कूल खोले, उनका नामकरण करते हुए दयानंद व वैदिक शब्द बीच में रखा तो झूठी बात नहीं होगी। आज इन छावनियों में आसानी से आर्य युवक तैयार हो सकते हैं। हंसराज ने जवानी मस्तानी को वार दिया। सुखों को तिलांजलि दी व अपने मिशन को सफल किया। जब भी भारत में विद्या-प्रसार का कारण जाना जायगा, तब निश्चय ही महात्मा जी का नाम आएगा। कवि कह रहा है :—

विद्या की दिव्य ज्योति तूने यहां जलाई
अज्ञान की निशा थी तूने यहां भगाई

आर्यसमाज सांबा (जम्मू)

१ से २ अप्रैल ६४ तक सभा के भजनीक, कुंवर जगतराम जी व बलीराम जी पधारे और वेद प्रचार किया गया, जिसका जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा।

२१, २२ अप्रैल को सांबा आर्यसमाज का २५ वर्ष पश्चात् पहला वार्षिकोत्सव सम्पन्न हो रहा है सभा के प्रचारक पधार रहे हैं। वेद प्रकाश वर्मा मन्त्री समाज।

श्रद्धांजलि गीत

(श्री हरिश्चन्द्र जी 'निस्तन्द्र' शास्त्री एस०डी०ए०एस० एच-एस स्कूल जालन्धर)

तर्ज—नगरी-नगरी द्वारे-द्वारे............

हंसराज के चरणों में पहुंचे मेरी श्रद्धांजलि।
जिसने अपने जीवन की असली मंजिल पहचान ली।
हंसराज के चरणों में......

१. श्रेष्ठदान है विद्या का यह, वेदों ने बतलाया है।
तन-मन देकर हंसराज ने हमको यही सिखाया है।
सारा जीवन डी० ए० वी० की सेवा जिसने ठान ली॥
हंसराज के चरणों में......

२. ग्रेजुएट को उन्हीं दिनों में बड़ी नौकरी मिलती थी।
पर समाज की दशा देख उसकी आत्मा दहलती थी।
सरकारी सर्विस ठुकराई सुध समाज की आन ली।
हंसराज के चरणों में......

३. डी. ए. वी. का शिक्षा-सागर ठाठें हरसू मारता।
जग का हर कोना ऋषिवर की जय जयकार पुकारता।
सत्ता आर्य समाज की शिक्षा क्षेत्र में सब ने मान ली।
हंसराज के चरणों में......

४. अगर हंस के गुण गौरव की सच्ची याद मनानी है।
तो जीवन में त्याग भावना हम सब को अपनानी है।
क्यों "निस्तन्द्र" अभी से यह तन्द्रा की चादर तान ली॥
उस महात्मा के चरणों में नत मस्तक श्रद्धांजलि।
जिसने अपने जीवन की असली मंजिल पहचान ली।

डी.ए.वी संस्थाओं रूपी उद्यानके उद्यानक 'महात्मा हंसराज'

(लेखिका— सुदेश कुमारी जी रेलवे रोड करनाल)

माली बाग लगाता है। बहुत परिश्रम के साथ उस में लगाए हुए पौधों का पालन-पोषण करता है। कड़ी धूप में उन की गोड़ाई करता है, पानी देता है और इतने कठिन परिश्रम के पश्चात उन के मधुर फलों का आस्वादन भी करता है। परन्तु, यदि उद्यानक के बाद में उस उद्यान की कोई देख-भाल न करें तो जो अवस्था उस उद्यान की होती है वही अवस्था आज डी.ए.वी संस्थायों की हो रही है। डी.ए.वी संस्थाओं रूपी बाग को कई बागवानों ने मिल कर लगाया। उन्हीं की छत्र छाया में यह उद्यान खूब फूला-फला। इस उद्यान की उर्वरा भूमि ने भी कई आर्य वीर पैदा किए किन्तु आज परिश्रम के आभाव में यह उर्वरा भूमि भी ऊसर बनती जा रही है।

महात्मा हंसराज भी उन उद्यानकों में से एक थे। आज उन की जन्म शताब्दी है। इस महान नेता का जन्म १६ अप्रैल सन् १८६४ में जिला हुशियार पुर के बिजवाड़ा नामक ग्राम में हुआ। निर्धनावस्था होते हुए भी माता-पिता ने आप को बी.ए. तक शिक्षा दिलवाई। बी.ए. करने के पश्चात् आप के पास अमीर बनने का एक सुन्दर अवसर था। उस समय अंग्रेजी सरकार भारतीय स्नातक को आंखों पर बिठाती थी। परन्तु महात्मा जी को तो परोपकारमय जीवन पसन्द था। आपने अपना सारा जीवन डी.ए.वी संस्थाओं को दान दे दिया।

डी.ए.वी संस्थाओं का इतिहास इस प्रकार है कि सन १८८५ में लाहौर में डी.ए.वी विद्यालय की स्थापना हुई। महात्मा जी इस के अवैतनिक मुख्याध्यापक नियुक्त किए गए। उस समय सरकारी स्कूल के अंग्रेज मुख्याध्यापक स्टेन ने कहा था कि यह मूर्ख पगड़ी वाला लड़का क्या हाई स्कूल चला सकेगा? परन्तु महात्मा जी ने अपनी कार्य कुशलता, योग्यता, निपुणता और प्रबन्ध-दक्षता से सब को चकित कर दिया। इस विद्यालय ने इतनी उन्नति की कि दो वर्ष में ही यह महाविद्यालय बन गया और महात्मा जी उस के प्रधानाचार्य। आप ने एक आयुर्वैदिक महाविद्यालय और औद्योगिक शिल्प विद्यालय की स्थापना भी की। महाविद्यालय के अध्यापन और प्रबन्ध इत्यादि का कार्यभार वहन करने के साथ आप धर्म प्रचार में भी पीछे नहीं रहे। जहां कहीं पीड़ित मानवों को सहायता की आवश्यकता पड़ी आप ने वहां पर सहायता पहुंचाई। आप ने एक महान् यज्ञ रचा, परन्तु दयानन्द महाविद्यालय के लिए किसी राजा या सरकार से सहायता नहीं ली। जब कि आज

डी. ए. वी संस्थाओं को चलाने के लिए इनके कार्यकर्त्ता बड़े २ राजकीय पदाधिकारियों की झूठी प्रशंसा करते हैं। क्या आवश्यकता पड़ने पर ऐसे कार्यकर्त्ता उन के विरुद्ध अपनी स्वतन्त्र आवाज उठा सकते हैं?

जिस उद्देश्य के लिए इन संस्थाओं की स्थापना की गई थी, आज वह उद्देश्य पूर्ण नहीं हो रहा। उस उद्देश्य पूर्ति के लिए तो महात्मा जी के समान त्यागी तपस्वी कार्यकर्त्ता चाहिएं, तभी यह उद्यान फूलेगा और फलेगा। आज उनकी जन्म शताब्दी के अवसर पर हमें उनके उपदेशानुसार, कि "जब तक हम अपने पावन अनुष्ठान में अविचल हैं, तब तक हमें यह भय नहीं कि हमारे विरोधियों की शक्ति कितनी प्रबल है,' कार्य करना होगा। आप को विदेशी सभ्यता से इतनी घृणा थी कि आप लिखते हैं, 'पश्चिमी सभ्यता और भारतीय सभ्यता में आकाश पाताल का अन्तर है। कोई व्यक्ति आक्सफोर्ड और कैम्ब्रिज का विदेशी सार्टिफिकेट प्राप्त करने से विद्वान नहीं बन जाता। यदि आर्य केवल ऐसे प्रमाण-पत्रों की ओर आकृष्ट रहेंगे तो वह अपनी मृत्यु को स्वयं आह्वान करेंगे। क्योंकि अपने घर को आग लगा कर दूसरे के महलों में कोई भी सुख प्राप्त नहीं कर सकता। आर्य सभ्यता हमें सरलता तथा सत्यप्रियता सिखाती है। विदेशी लोग हमें फैशन के पुजारी, कुटिल और पक्षपाती बनाते हैं।' यह था उनका स्व सभ्यता के प्रति अनुराग। हमें उन के चरण चिन्हों पर चलते हुए और आर्य जाति को संगठित करते हुए बनना है क्या परोपकारी, त्यागी, सत्यनिष्ठ, कर्मठ, कर्मवीर, आर्यवीर महर्षि के सैनिक ऐसा कर सकेंगे।

दयानन्द-वचनामृत

'गंगा आदि नाम इड़ा, पिङ्गला, सुषुम्ना, कूर्म और जठराग्नि की नाड़ियों के हैं। इनमें ध्यान करने से-अभ्यास करने से उपासक के सारे दुःख दूर हो जाते हैं। उपासना-धारणा नाड़ियों द्वारा ही करनी पड़ती है। इड़ा और पिङ्गला ये दोनों नाड़ियां जहां मिलती हैं उस संगम स्थान का नाम सुषुम्ना है उस संगम में स्नान करने से योगाभ्यास करने से उपासक जन शुद्ध हो जाते हैं। तदनन्तर परम पवित्र रूप परमात्म देव को पाकर सदा आनन्द में रहते हैं।'

(स्वामी सत्यानन्द जी)

राजिस्थान के कुलचन्द्र गांव में नई आर्यसमाज की स्थापना

सभा प्रचारक श्री प्रभुदयाल जी व हरिश्चन्द्र जी के पुरुषार्थ से १० से १२ मार्च तक वेद प्रचार होता रहा और आर्यसमाज की स्थापनाकी गई।इस अवसर परसभा को मार्ग व्यय समेत वेद प्रचारार्थ१०७) दान मिले तथा और धन भेजने का आश्वासन दिया। प्रचार का प्रभाव गांव के निवासियों पर बहुत अच्छा रहा।

बम्बई में आर्यसमाज की प्रगति

(ले० श्री राजपाल जी प्रचारक चिमटामंडली)

पंजाब का जब से बटवारा हुआ तब से सभाओं का क्षेत्र केवल बचे खुचे पंजाब में ही नहीं अपितु यू पी सी. पी. राजस्थान बिहार और बङ्गाल में भी अर्थात् जहां २ भी पंजाबी सिंधी तथा फ्रन्टीयर के सज्जन पहुंचे। वे अपने को बसाने के साथ ऋषि दयानन्द के पवित्र संदेश को फैलाने में आगे ही रहे चुनांचे इन सज्जनों में पुराने प्रेम और ऋषि दयानन्द की छाप के नाते पंजाब प्रतिनिधि व आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर से विशेष नाता बनाए रखा और समय २ पर अपने उत्सवों में अपने प्रभाव से इधर के प्रचारक बुला कर वहां की स्थानीय जनता में एक नई रूह फूंकते रहे चुनांचे हमारी मंडली भी प्रति वर्ष पंजाब से बाहर प्रांतों की बड़ी २ समाजों में जाती ही रहती है इसी नाते वहां अपने साथियों के जोश को देखने का अवसर मिलता रहता है। माननीय सभा के अधिकारी वर्ग विशेष रूपेण श्री पं० खुशीराम जी अधिष्टाता इस के लिए धन्यवाद के पात्र हैं जो बाहिर बैठे हुए उन मित्रों को सहयोग देकर उत्साह बढ़ाते रहते हैं पिछले कई वर्षों में निरन्तर श्री पं० त्रिलोकचन्द जी शास्त्री महोपदेशक श्री पं० ओम प्रकाश जी आर्य और हम लोग उन्हीं सभी प्रांतों में जाते रहे इस बार भी हमारी मंडली को पुनः श्री रघुनाथ जी अमृतसरी जो आर्य समाज के सही मानों में दिखाने और पवाने हैं उनकी तथा श्री ओंकारनाथ जी श्री गुलजारीलाल जी की प्रेरणा से बम्बई गोरेगांव के उत्सव में जाना पड़ा इस बार श्री रघुनाथ जी का उत्साह और भी बढ़ा चढ़ा देखा उपरोक्त महानुभावों के अतिरिक्त और भी पंजाबी परिवारों तथा सिंधी परिवारों की सेवा में आपने गहरा प्रभाव डाला श्री रघुनाथ जी व ओंकारनाथ जी पं० श्री गुलजारीलाल जी, श्री दिवानचन्द जी साहनी ईशवास्यम् वाले श्री जयदेव सिंधी प्रधान चैम्बूर एवं श्री प्रभुदयाल जी गुलाटी सज्जनों के नाम उल्लेखनीय हैं।

श्री रघुनाथ जी का तो उत्साह देखकर इनका पुराना समय अमृतसर वाला स्मरण हो आता है जबकि लक्ष्मणसर के कर्मवीर श्री पं. रुद्रदत्त जी श्री गुलजारीलाल जी धर्मपाल जी बी. ए. युवक संघ के सिपाही रूप में कार्य करते थे अस्तु: ? इन दिनों श्री दिवानचन्द जी साहनी के ईशावास्यम् परिवार में एक विशेष उत्साह देखा पू० माता सुशीला धर्म पत्नी श्री दिवानचन्द और शिवराज देवी धर्म पत्नी श्री ओंकार नाथ जी माटुंगा वालों ने तो सचमुच आर्यसमाज के पुराने युग को याद करा दिया धन्य हैं इन देवताओं के परिवार जिनमें आर्यसमाज की अमिट छाप है सो इस बार जाकर वस्तुत: अपने को एक नई प्रेरणा मिली कौन कहता है आर्यसमाज खतम हो गया जरा आईए इन परिवारों में आपको आर्यसमाज का सही रूप देखने को मिलेगा अन्त में मैं इन परिवारों के लिए परम पिता से शुभ कामना रखता हुआ इन्हें

वेदकौर आर्य कन्या हाईस्कूल कादियां का उज्वल कार्य

डी. ए. वी. कालिज मैनेजिंग कमेटी की आर्य विद्या सभा की ओर से प्रचालित धर्म शिक्षा परीक्षा जो कि छठी श्रेणी से दसवीं तक प्रतिवर्ष सारे पंजाब के स्कूलों में होती है, सफल छात्र छात्राओं को पारितोषिक दिए जाते हैं। इस वर्ष वेद कौर आर्य कन्या हाई स्कूल की दसवीं श्रेणी की छात्रा श्री देवी आर्या सारे पंजाब में प्रथम स्थान लेकर अपने प्रिय स्कूल का नाम उज्ज्वल किया है। इसके अतिरिक्त इसी स्कूल की दसवीं श्रेणी की छात्राओं ने दस इनाम जीते हैं। इस सफलता के लिये मुख्याध्यापिका तथा उनका स्टाफ बधाई का पात्र है। —व्यवस्थापक

बधाई देता हूं श्री रघुनाथ जी का व उपरोक्त सज्जनों का धन्यवाद करता हूं जो इतनी देर बैठे हुए प्रादेशिक सभा तथा वेदप्रचार की चिंता रखते हैं इस वार भी हमें मार्ग व्यय के अतिरिक्त १०१)रु. गोरे गांव समाज २५०) श्री ओंकारनाथ जी मन्त्री माटुंगा वालों ने १०१) रु० श्री गुलजारी लाल जी ३०) श्री साहनी दिवानचन्द जी ने वेदप्रचार के लिए दिए तथा १८) आर्यजगत के लिए भी इन महानुभावों से प्राप्त हुए प्रभु कृपा करें बाकी भी समाजें वेदप्रचार के लिए ऐसे सज्जनों से प्रेरणा लें।

आर्य समाज पुरानी मंडी जम्मू

का सात्विक दान

आर्य समाज पुरानी मंडी जम्मू के सज्जनों और माताओं बहिनों का हार्दिक धन्यवाद है विशेषत: पं० हरिश्चन्द्र जी शास्त्री पुरोहित जिन्होंने अपना अमूल्य समय देकर मेरी प्रार्थना पर वेद प्रचारार्थ संग्रह धन किया। जम्मू के देवी देवता बधाई के पात्र हैं। वेद प्रचार से उनका अगाध प्रेम है। निम्न सज्जनों और देवियों ने वेद प्रचार के लिये सहयोग प्रदान किया।

शकुन्तला देवी जी	६०) रु०
मोहनलाल जी मोत्याल	१२) ,,
गोपाल कृष्ण जी	१२) ,,
माता चन्दन देवी जी	१२) ,,
वेद जी	१२) ,,
कमला जी	१२) ,,
बाबा दुसहरा नाथ जी	१२) ,,
मोहनलाल जी नारंग	१२) ,,
हंसराज जी तनेजा	१२) ,,
सुशीला जी तुली	१२) ,,
राज जी	१२) ,,
मुल्कराज जी मैनेजर	१२) ,,
भगवती देवी जी	१२) ,,
बा० कर्मचन्द जी	१२) ,,
महा० कर्मचन्द्र जी वकील	१२) ,,
तेजराम जी अबरोल	१२) ,,
चंचल कुमारी जी	१२) ,,
कविराज विष्णु गुप्त जी	१२) ,,
रामेश्वरीदेवी जी	१२) ,,

खुशीराम शर्मा
वेद प्रचार अधिष्ठाता

आर्यसमाज चेम्बूर का प्रस्ताव

चेम्बूर के आर्य तथा हिन्दुओं की यह सार्वजनिक सभा पूर्वी पाकिस्तान के हिन्दुओं के योजनाबद्ध नरमेध और उन पर हो रहे नाना प्रकार के अत्याचारों पर हार्दिक क्षोभ और रोष प्रकट करती हुई इस अमानवीय कृत्य की घोर निन्दा करती है।

पूर्वी पाकिस्तान के हिन्दुओं की रक्षा और पुनर्वास की जो कार्यवाही भारत सरकार द्वारा हो रही है उस पर यह सभा असन्तोष व्यक्त करती हुई उसे युद्ध स्तर पर करने की प्रेरणा करती है।

यह सभा भारत सरकार को विश्वास दिलाती है कि पूर्वी पाकिस्तान से आने वाले हिन्दुओं की रक्षा तथा पुनर्वास के कार्य में अपनी सरकार को आर्य हिन्दू जनता पूरा सहयोग देगी।

आसानन्द मन्त्री
आर्यसमाज चेम्बूर

दयानन्द ब्राह्म महा विद्यालय, हिसार

हंसराज पुस्तकालय का उद्घाटन ५-४-६४ को सेठ मोहनलाल अग्रवाल हिसार निवासी के करकमलों से सम्पन्न हुआ। उद्घाटन से पूर्व यज्ञ की पूर्णाहुति सेठ जी के करकमलों से सम्पन्न हुई। नगर के प्रतिष्ठित नर-नारी इस अवसर पर उपस्थित थे। आचार्य जी ने विद्यालय सम्बन्धी उद्देश्य की ओर सबका ध्यान आकृष्ट किया। अन्त में सेठ जी ने विद्यालय के ध्येय की प्रशंसा करते हुए विपुल भाग में सहायता देने की भावना प्रकट की।

निवेदक—
राम विचार

आर्यसमाज श्रीगंगा नगर का चुनाव

प्रधान—श्री नारायण राम जी आर्य, उपप्रधान—श्री क्षेमराज जी शर्मा, डा० तुहीराम जी, मंत्री—श्री किशन सिंह जी, उपमंत्री—श्री गंगाराम जी एडवोकेट, श्री शिवशरण जी, कोषाध्यक्ष— श्री चंदूलाल जी गुप्ता, वस्तु भंडारी—श्री सेवाराम जी आर्य, लेखा निरीक्षक—श्री ईश्वर चन्द्र जी गुप्ता।

किशन सिंह मंत्री समाज

आर्य समाज अखनूर का

वार्षिकोत्सव तिथि २६-३०-३१ मार्च को बड़ी सफलता के साथ सम्पन्न हुआ! उत्सव से पूर्व तिथि २०-३-६४ से पं. ओ३म् प्रकाश जी आर्य महोपदेशक और कुंवर जगतराम व बस्ती राम की मण्डली पधारी हुई थीं! तिथि २१-२२ मार्च को पौनी ग्राम में प्रभावशाली प्रचार हुआ।

२४-३-६४ से २८-३ ६४ तक पूज्य पं० जी की वेद कथा होती रही। २७ ३-६४ से पूज्य पं० खुशीराम जी शर्मा वेद प्रचार अधिष्ठाता और म० राजपाल मदन मोहन चिमटा भजन मंडली के भजन होते रहे नगर कीर्तन का जलूस भी दर्शनीय था! जनता ने भारी संख्या में सम्मिलित होकर आर्यसमाज के प्रेम का परिचय दिया। उत्सव की सफलता के लिए मैं आर्यसमाज के समस्त कार्यकर्ताओं को बधाई देता हूं। वहां सब से अधिक बधाई और धन्यवाद पं० खुशीराम जी को देता हूं जिन्होंने हमारी मांग पर अच्छे से अच्छा स्टाफ भेजा। और स्वयं भी पधारने का कष्ट किया। आर्यसमाज की ओर से २०१) रुपया सभा को वेद प्रचार में भेंट किया गया।

जियालाल मंत्री आर्य समाज

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली-१

आशा है कि आपने सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के निर्देशानुसार १३-६४ को अखिल भारतीय पूर्वी बंगाल दिवस मनाया और धन संग्रह किया होगा।

पूर्वी बंगाल के अत्याचार पीड़ित हिन्दुओं की रक्षा, सहायता और पुनर्वास का कार्य बहुत बड़ा और व्यय साध्य है अतः अधिक से अधिक धन-संग्रह करने की आवश्यकता है। इस समय तक आपके यहां जो धन संग्रहीत हुआ हो वह अविलम्ब मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्यालय में प्राप्त हो जाना चाहिए और ज्यों २ धन एकत्र होता जाए त्यों २ यहां भिजवाते रहना चाहिए।

तात्कालिक रिलीफ का कार्य कलकत्ता में आरम्भ हो गया है। अन्न, वस्त्र, खाने पीने के बर्तन आदि पीड़ितों में वितरित किए जा रहे हैं। मांग इतनी है कि उनकी पूर्ति नहीं हो रही है अतः आप अपने क्षेत्र के सभी विचारों के हिन्दुओं की सहायता इस महान कार्य में प्राप्त करें और जितना धन और वस्त्र एकत्रित हों वह तुरन्त सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा रामलीला मैदान नई दिल्ली १ के पते पर भेजने की कृपा करें।

कलकत्ता में आर्यसमाज रिलीफ समिति को धन की एक बड़ी राशि भेज दी गई है और भी धन शीघ्र भेजना है। रामगोपाल सभा मन्त्री

केन्द्रीय आर्य सभा, अमृतसर

सप्रेम नमस्ते।

पूर्वीय बङ्गाल (पाकिस्तान) में कई मास से हिन्दुओं पर जो पाशविक अत्याचार और अनाचार हो रहे हैं, वह असह्य अवस्था तक पहुंच चुकने पर भी हम आज तक शांति पूर्वक देखते रहे हैं, हजारों हिन्दुओं की क्रूरता पूर्ण हत्या, लूट मार तथा देवियों के अपहरण की हृदय विदारक सूचनायें सुनते हुये भी खामोश बैठे रहना एक महान पाप होगा, अतः आर्य सार्वदेशिक प्रतिनिधि सभा की आज्ञानुसार केन्द्रीय आर्य सभा अमृतसर की ओर से पाकिस्तान से बलात् निकाले जा रहे पीड़ित और असहाय हिन्दुओं, सिखों और ईसाईयों की सहायता के लिये कार्य आरम्भ कर दिया गया है। यह महान कार्य आप सब के सम्मिलित सहयोग से ही पूर्ण हो सकता है।

अतः आप से सानुरोध निवेदन है, कि आप स्वयं तथा अपने समीपवर्ती क्षेत्र में उपरोक्त आपत्ति ग्रस्त भाईयों की सहायता के लिये अधिक से अधिक मात्रा में धन और वस्त्र आदि एकत्रित करके १६ ब्रह्म नगर लारन्सरोड अमृतसर में पहुंचाने की कृपा करें।

केशवचन्द्र—प्रधान सभा

प्रस्तुत अंक में

लेखक व कवि महानुभावों का हार्दिक धन्यवाद है जिन्होंने अपने अमूल्य लेखों या कविताओं को भेज कर सहयोग दिया है। —व्यवस्थापक

टैलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No.

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक १७) २४ चैत्र २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०— २६ अप्रैल १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जा

वेद सूक्तयः

न ज्यायो अस्ति वृत्रहन्

हे भगवन्! आप से बड़ा कोई नहीं है। आप वृत्रों को पाप के भावों को मारने वाले हैं। सब से महान् हैं आप की मार से, अटल नियमों से कोई भी पापी, दुष्कर्मी बच नहीं सकता। अभिमानी का अभिमान समाप्त हो जाता है। आप से कोई भी महान् नहीं।

स्तोतृभ्य इन्द्र मृडय

हे दयालो! हम सारे तेरे स्तोता हैं, उपासक, आराधक हैं, तेरे भक्त हैं। कृपा करके अपने अमृत पुत्रों को, साधकों को, भक्तों को सुख की सम्पदा से मालामाल कर दो। जीवन में सुख का प्रसाद भर दो। दुःख दूर करके सुखी बना दो। हम तेरे ही हैं।

वसु स्पार्हं तदाभर

हे भगवन्! हमें ऐसा धन ऐश्वर्य प्रदान करें, जो स्पार्ह जिसकी सब अभिलाषा करें, पवित्रता से भरा हो, सब से प्रशंसित हो। निन्दा से भरा, बुरे साधनों से प्राप्त किया हुआ तथा जिसे कोई न चाहे, ऐसा धन नहीं चाहिए। शुद्ध पवित्र धन प्रदान करें।

सा म वे द से

वे दा मृ त

अथोपस्थान मन्त्राः

ओम् उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्।
देवं देवत्रा सूर्य मगन्म ज्योतिरुत्तमम् ॥

यजुः अध्याय ३५ मन्त्र १४

अर्थ :—(वयम्) हम सब नर नारी उस (तमसः परि) सब अन्धकार से अलग तथा (स्वः) नित्य प्रकाश स्वरूप भगवान् को (पश्यन्तः) जानते हुए, अनुभव करते हुए (उत्तरम्) जो प्रभु सब से श्रेष्ठ है तथा प्रलयकाल में भी तथा इस के पश्चात् भी रहने वाला है। उसी (देवम्) दिव्य सुख देने वाले महान देव को (देवत्रा) सारे देवों के देव (सूर्यम्) सर्वव्यापक को (अगन्म) हम प्राप्त करें। वही (ज्योतिः) प्रकाशमय है तथा (उत्तमम्) सब से उत्तम ज्योति है। उसी की कृपा नियम से ये सारी ज्योतियां भासित होती हैं।

भाव :—हे दिव्यदेव! आप समस्त अन्धकार से रहित हैं। सदा ही प्रकाशमय, ज्योतिर्मय हो। सदा सुख आनन्द स्वरूप हैं। आप सदा अजर अमर हो, सर्वव्यापक हो। प्रलय अवस्था में भी जब यह सारा विश्व अपने प्रकृति रूप में लीन हो जाता है, इस की सारी वर्तमान विकृति की भौतिक दशा समाप्त हो कर प्रकृति की अवस्था में बदल जाती है, सारे पदार्थ अपने प्रकृति के परमाणुओं के रूप में लीन हो जाते हैं उस समय में भी आप अविनाशी रूप में विद्यमान रहते हो प्रलय बाद भी आप सदा सत्यमय हो। आप सारे जड़ चेतन देवों को अटल नियम में रखते हो। आप के नियम मर्यादा को तोड़ने वाली शक्ति न कोई है और न ही हो सकती है। आप सब से श्रेष्ठ ज्योति परमज्योति हैं। इन सूर्य आदि तेजोमय पदार्थों में आप की ही ज्योति आभा विद्यमान है। हे प्रभो! हम सदा आप के इस परमतेजोमय, सर्वश्रेष्ठ स्वरूप का अनुभव करें आप का ही समाश्रय ले कर जीवन तम दूर करते रहें—सं.

ऋषि दर्श

स विष्णुरीश्व

वह विष्णु ईश्वर वही परमेश्वर विष्णु है। सर्वव्यापक होने से विष्णु कहलाता है। उस व्यापक प्रभु से ही जी सारी कामनाएं पूरी हों उसी को मानो और मांगना सीखो।

चक्रवर्ति राज्यम

आपका राज्य चक्रव सारे विश्व की जनता स्वराज्य तथा सुराज्य की रहे। कोई हमें प न बना सके। मानसिक द न बने हम चक्रवर्ति रा प्रसाद प्राप्त करें।

अनन्त पराक्रमव

वह परमेश्वर अन पराक्रमों का भण्डार है, शक्तियों का वही केन्द्र है की शक्ति के सामने कौन वान ठहर सकता है। आ बली उस महाबली के हार गये, कुछ न चली व है। भा ष्य भू मि

अभिष्ठाता—संतोषराज सभा मंत्री सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र

कई शताब्दियों की दासता जहां हमारा सामाजिक आर्थिक पतन किया, वहां एक क्षेत्र में भी हमारी सार्व सत्य भावनाओं की नींव को खला बना दिया। गौरांग जनों अपने शासन की दृढ़ता के लिये के उलूल जुलूल भाष्य कराये। ों के पूर्वजों को जगली, महा- सिद्ध किया, वेद को गडरियों ोत एवं बच्चों की बिल-बिलाहट , ऐसा करने से उन के शासन बड़ें अधिक गहरी होती थीं। के ऐसा करने में कुछ भारतीय ानों की नासमझी भी कारण थी अब भी है। ऐसे लोगों की विषयक जो धारणाएं हैं उन सोम' शब्द के अर्थ विषयक ी भ्रान्ति है। वे सोम से शराब ग्रहण करते हैं तथा कहते हैं क-युग में यज्ञ के अवसरों पर ब पीते थे, अन्य विवाहादि हर्ष वसरों पर भी इस का प्रयोग था। उन्हीं के विचारार्थ कुछ लिखा जा रहा है। सज्जन वेद में प्रयुक्त 'सोमोम- आदि शब्दों को देख कर ही ते हैं कि नशा देने वाली तो ी हो सकती है। परन्तु भाषा से वे सर्वथा कोरे होते हैं। शब्द यदि हर्ष धातु से बना जिस का अर्थ है हर्ष देने वाला ै। नशे की अवस्था में हर्ष होता, क्योंकि तब तो सुध बुध जाता है जब कि हर्ष ग्रहण में होश ठिकाने होते हैं। ेद का अध्ययन करने पर वहां का वर्णन मिलता है। कहते हैं ान से दीर्घायु, तेज, बल, बुद्धि होते हैं, काया कल्प हो है उसकी लता होती है। पक्ष में क्रमशः तिथि के ार एक २ पत्ता प्रति उगता है तथा कृष्णपक्ष में न तिथिवार क्षीण होता है। ता की खोज अनेक सज्जनों

धार्मिक चर्चा

सोम क्या है ?

(ले० श्री पं. सत्यप्रिय जी शास्त्री सिद्धांत शिरोमणि प्राध्यापक :–दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार)

ने उत्तराखण्ड में की है। परन्तु अभी तक तो प्राप्त नहीं हुई है। आयुर्वेद में एक और सोमलता का वर्णन है, जिसे आज कल गिलोय कहते हैं। इस में निम्न-प्रमाण हैं।

'सोमवल्ली—गुडूची, सोमलता'
संस्कृतशब्दार्थ कौस्तुभ कोश

'सोमवल्ली - सोमलता - गिलोय'
नालन्दा अद्यतन कोश 'सोमलता- गुडूची, गुडूची-गिलोय, गिलोय- सोम'
आदर्श हिन्दी संस्कृत कोश

वत्सादनी छिन्न रूहा गुडूची
तंत्रिकामृता
जीवन्तिका सोमवल्ली विशल्या
मधुपर्ण्यपि।
अमरकोश (वनौषधिवर्ग)

इसके अतिरिक्त निम्न आर्ष- प्रमाण भी हैं।

'चौथे रोगनाशक—सोमलता अर्थात् गिलोय आदि औषधियां
संस्कार विधि सामान्य प्रकरणे

'किन्तु घृत, दुग्ध, मिष्ट, सोमलता अर्थात् गुडूच्यादि औषधी'
संस्कारविधि गर्भाधानान्ते

इन प्रमाणों से सिद्ध है कि सोमलता गिलोय को ही कहते हैं। इसका स्वाद कसैला होता है, इसे कूटपीस तथा निचोड़कर पीते हैं। अतः इससे ही सम्भवतः इसे सोम कहते हों। क्योंकि यह हवन सामग्री में भी पड़ती है। अतः इसे ही प्राचीनकाल में कूट छानकर गो- दुग्ध के साथ यज्ञादि के अवसर पर पीते होंगे, यह असम्भव नहीं है। आयुर्वेद में दोनों के गुण लग- भग बराबर ही बताये गए हैं। यह कायाकल्प भी करता है। शारीरिक पुष्टि एवं मानसिक शान्ति तथा सात्विकता प्रदान करने में गिलोय प्रमुख है ही। प्रतिदिन इसके पान से हर्ष अर्थात् सात्विक आनन्द की प्राप्ति होती है, उसी को वेद ने मद नाम से पुकारा है। वेद में भौतिक सोम के जिन गुणों का विस्तृत वर्णन पढ़ते हैं, वे सारे के सारे लगभग इसमें प्राप्य हैं, यह लेखक का निजी अनुभव है। अतः पूर्ण- सम्भावना है कि सोमरस नाम से गिलोय का रस अथवा सत्व ही पीने के काम में आता होगा। यह नशा नहीं करता है। यह कथन भौतिक सोम के विषय में ही जानना चाहिए। वैसे वेद में 'सोम' शब्द से परमेश्वर को भी सम्बोधित किया गया है।

दयानन्द वचनामृत

'प्राणायाम-पूर्वक उपासना करने से, आत्मा के ज्ञान को आवृत्त करने वाला अज्ञान नित्य प्रति नष्ट होने लगता है और आत्म-ज्ञान का प्रकाश धीरे-धीरे बढ़ता चला जाता है। अपने आत्मा में जो आनन्द-स्वरूप अन्तर्यामी परमेश्वर विद्यमान है, उसके स्वरूप में निमग्नता लाभ करनी चाहिए। विमल गम्भीर नीर में नहाने वाला जन जैसे बार बार गहरी डुबकी लगा कर ऊपर आता और नीचे जाता है, वैसे ही परमेश्वर में अपनी आत्मा को बार-बार निमग्न करना अत्यन्त उचित है। ध्यान और आश्रय के योग्य, अन्तर्यामी, व्यापक परमेश्वर के प्रकाशमय आनन्दमय स्वरूप में सुविमल विचार और परम प्रेम-भक्ति से उपासक को ऐसे प्रवेश करना चाहिए जैसे सागर में नदियां प्रवेश करती हैं। ध्यानकाल में ध्याता को अपने ध्येय, परमात्मा के अतिरिक्त दूसरी किसी भी वस्तु का स्मरण-चिन्तन करना उचित नहीं है।'

(स्वामी सत्यानन्द जी)

आर्य समाज जलालाबाद

आर्य समाज जलालाबाद गर्बी फिरोजपुर की कथा व वार्षिक जल्सा ता. ६ से १२ अप्रैल तक धूम धाम से सम्पन्न हो गये। सभा की ओर से पं. त्रिलोक चन्द्र जी शास्त्री तथा ठा. दुर्गा सिंह जी तुफान कथा पर पहुंचे। बाद में प. चन्द्र सेन जी तथा पं. राज पाल मदनमोहन जी चिमटा मंडली भी पहुंची। खूब समारोह था। प्रातः और रात को दोनों समय प्रचार होता था। रविवार प्रातः ८ बजे से ले कर १२ बजे तक वेदों के शतकों से भारी यज्ञ होता रहा म. मदनजित् जी आर्य फिरोजपुर वालों ने भी खूब शोभा दी। जलालाबाद में समाज के पुराने महारथी श्री वैद्य काशीराम जी तथा उन के सारे परिवार ने बड़ी समाज की सेवा की। श्री मुकुन्द लाल जी प्रधान, श्री चमन लाल जी मन्त्री श्री डा. ऋषि जी तथा अन्य सज्जन बड़ी सेवा करते हैं। जलसा समारोह से समाप्त हुआ।

अमूल्य वचन

भाषा बोलते समय विवेकी जन को सत्यासत्य ध्यान रखना चाहिए। वचन छने आटे की भांति स्वच्छ होने चाहिएं। धीर जन वचन से मर्यादा का लोप नहीं करते।

सम्पादकीय–

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२०, २६ अप्रैल १९६४ [अंक १७

एक बड़ी आवश्यकता

समाचार पत्रों में आया है कि अमरीका से एक प्रोफैसरों का जोड़ा भारत में गत छः मास से इस विशेष बात को लेकर आया हुआ है कि आर्य समाज के विशाल आन्दोलन का पूर्ण परिचय प्राप्त किया जाये। उसके सम्बन्ध में गत लगभग आधी शती में समाज के विस्तृत कार्य का अनुसन्धान किया जाये। जब उन से समाज के वरिष्ट सज्जनों ने उन से पूछा कि आपका इस से क्या प्रयाजन है—तो उन्होंने उत्तर दिया कि वहां यूनिर्सिटी में जब भारत के गत शतो का विशेष करके समय २ पर होने वाले नाना कार्यों एवं आन्दोलनों को पढ़ते हैं तो उस में आर्यसमाज का विशेष नाम आता है। नानाविध क्षेत्रों में आर्यसमाज का नेतृत्व मिलता है। इसीलिए जिस विशाल आन्दोलन का इतना व्यापक प्रभाव हो उसका अनुन्धान करके परिचय पाना आवश्यक है। इसी कार्य के लिए हम अमरीका से चल कर भारत में आये हैं। आर्य समाज को समझने के लिए उसके सारे कार्यों का विवरण हम ने लेना है।

सुना है कि वे दोनों समाज की बड़ी २ संस्थाओं तथा सभाओं के कार्यालयों एवं पुस्तकालयों में गये हैं। बड़े २ नगरों में पहुंचे हैं यहां तक कि कबाड़ियों की दुकानों पर भी जाकर पुरानी २ किताबों को खोजते रहते हैं। आजकल पाकिस्तान में गये हैं ताकि वहां से भी यथासम्भव सामग्री प्राप्त की जा सके। कितने गौरव की बात है कि अमरीका से चलकर ये जोड़ा आर्य समाज के इतिहास का कार्यों और नाना प्रकार की अतीत युग की गतिविधियों का अनुसन्धान करने आया है। हमें मालूम नहीं कि उन के साथ सार्वदेशिक सभा या अन्य किसी सभा ने इस कार्य में सुविधा देने के लिए अपनी ओर किसी योग्य इस कार्य के उपयोगी एक दो सज्जनों को लगा दिया है या नहीं? क्या २ पुराना साहित्य समाज का उन को भेंट किया है तथा उन को समाज से पूर्णतया परिचित कराने का अपने २ विशेष स्थानों पर बुला कर प्रबन्ध किया है या नहीं? यह आवश्यक है कि ये जोड़ा जो हमारे समाज का पूरा २ इतिहास जानने, खोजने और लेने इतनी दूर से चल कर समय व धन लगा कर आया है। उस के लिए हर प्रकार का आयोजन कर उसे पूर्ण सुविधा देने का प्रबन्ध करें। एक विशेष समिति इस कार्य के लिए शीघ्र ही बना दी जाये जिस का काम यह हो कि उस जोड़े को समाज का सारा पुरातन युग का इतिहास जहां से भी मिल सके दिया जावे, साहित्य दिया जाये, पुराने स्तम्भों से मिलाया जाये ताकि वे जब अमरीका जायें तो आर्य समाज के बारे में सुन्दर भावना ले जा सकें। उन के स्वागत, निवास, आतिथ्य का विशेष प्रबन्ध किया जाए उन के साथ एक दो विशिष्ट व्यक्ति लगाये जायें जो सब स्थानों पर जावें। इन बातों से बड़ा लाभ होता है। यदि हम समय पर तो सोते रहे विशेष ध्यान न दिया जब ये सज्जन वापस जायेंगे, जैसा भी इन को साहित्य मिलेगा यदि अपनी समझ या ऐसे वैसे अनुसन्धान को आधार बना कर वहां समाज पर कोई पुस्तक निकली जिस में आर्य समाज को वास्तविक रूप में चित्रित न किया गया हो तो फिर हम बाद में चिल्लाना आरम्भ कर देंगे। उस का क्या लाभ होगा? क्यों न हम इस मिले हुए स्वर्णावसर से लाभ उठाते। एक वे हैं जो अमरीका जैसे दूर देश से चल कर हमारे घर आये हैं कि बताओ आर्य समाज क्या है? इस का ज्ञान कराओ। एक हम हैं कि अभी तक असावधान हैं। यह सब से बड़ा विदेश प्रचार है। इस लिए इस समय इस बात की बड़ी आवश्यकता है। विशेष कर सार्वदेशिक सभा से हम ने कहना है कि इस समय से पूरा २ लाभ उठाने का प्रयत्न करें—त्रिलोकचन्द्र

ऐसे अवसर पर

****

आर्य जगत् के गत अङ्क में, पूर्वी बङ्गाल के अत्याचारों से पीड़ित नर-नारी लाखों की संख्या में अपने २ घरों को छोड़ कर शरणार्थी बन कर भारत में आये तथा उनका आगमन जारी है। किस भयानक दशा में हैं तथा कितने अत्याचार उन पर किये गये। समाचारपत्रों में पढ़ कर कौन नहीं रो देता। लोकसभा के माननीय सदस्य भी तो बोलते २ रो उठे। गत १९४७ का देश विभाजन का भीषण दिलहिला देने वाला दृश्य सामने स्मरण हो आया। भारत सरकार इसी समस्या को देख कर ही पुनर्वास का पूरा मन्त्रालय बनाने पर बाधित हो गई। इसके लिए श्री महावीर त्यागी जी को नया मन्त्री नियत किया गया। सरकार का तो लाखों उजड़े हुए शरणार्थियों को बसाने का दायित्व भी है और कर्तव्य भी। पर हमारा भी तो इस विषम संकट में उन भाइयों के प्रति विशेष कर्तव्य हो जाता है। गत अङ्क में इस दिशा में पाठकों के सामने विशेष विचार रखे थे। अपनी आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब की ऐसे विशेष विषम अवसर पर खास सेवा परम्परा रही है। उसका गत सारा इतिहास सेवा का ही इतिहास है। बङ्गाल, बिहार, कोइटा, कांगड़ा, मालाबार, राजस्थान आदि के कष्टमय अवसरों पर सेवा का विशिष्ट कार्य किया है। अब सभा स्वयं ही देशविभाजन के बाद उस स्थिति में यद्यपि नहीं तथापि उस ने अपनी सेवा परम्परा कायम रखी है। इसके हाथ चाहे छोटे हो गये पर दिल तो वही है जिस में करुणा, सहानुभूति का प्रवाह चलता है।

आर्य जगत् के इसी अङ्क में सभा के महामन्त्री श्री ला० सन्तोषराज जी ने सभा की पुरातन पुनीत सेवा कार्य परम्परा का स्मरण कराते हुए सारे प्रेमी भाई बहिनों का ध्यान इस आवश्यक बात की ओर दिलाया है। सभा अपने इस दिशा में भी सेवा कार्य को प्रारम्भ कर रही है। न करने से कुछ तथा यथाशक्ति कार्य करना बहुत अच्छा है। इस लिए मन्त्री जी ने यह प्रेरणा दी है कि आर्यसमाजें, परिवार, संस्थाएं तथा व्यक्ति भी बङ्गाल के उन पीड़ित भाईयों के लिए बिना किसी भेद-भाव के, सभा को तन-मन-धन वस्त्रों तथा दवाईयां भिजवा कर पूरा २ सहयोग देवें। जिन २ सज्जनों, समाजों या संस्थाओं की ओर से बङ्गाल पीड़ितों के सेवा कार्य के लिए सभा को जो भी

(शेष पृष्ठ ६ पर)

अमरीकन प्रोफैसर आर्य समाज की खोज में

सभा मंत्री जी द्वारा साहित्य भेंट

अमरीका से चल कर जो अमरीकन प्रोफैसर भारत में आर्य-समाज की पुरानी गतिविधियों, विशेष कार्य तथा इतिहास सामग्री का अनुसन्धान करने आए हुए हैं। वह जब जालन्धर शहर में हंसराज महिला कालेज में आये तो वहां की माननीया प्रिंसिपल विद्यावती जी आनन्द ने उनको वहां सब कुछ कालेज का दिखलाया और समाज के बारे में बतलाया, वहां उन्हें आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब के मन्त्री श्री ला० सन्तोषराज जी के पास समाज की विशेष सूचनाएं प्राप्त करने तथा सभा का पुस्तकालय देखने के लिए भिजवा दिया। वे सीधे सभा मन्त्री जी के घर पर ही आगये उनको पूरा २ आतिथ्य सम्मान दिया गया। जब तक चाहें उनको यहीं ठहरने का निमन्त्रण भी दे दिया गया।

आर्यसमाज के सम्बन्ध में चर्चा हुई। सभा मन्त्री ला. सन्तोषराज जी ने अपना सारा पुस्तकालय खोलकर पुस्तकों को क्रम वार ढेर उनके आगे लगाकर कहा कि इन में से जिस २ और जितनी पुस्तकों की आपको आवश्यकता हो, सहर्ष ले जावें। वापस करने की आवश्यकता नहीं। आर्य समाज के विशाल आन्दोलन के बारे में मैं समझता हूं कि यह खोज आप नहीं कर रहे अपितु अमरीका कर रहा है, आप नहीं लिख रहे, अमरीका लिख रहा है हमें प्रसन्नता है कि आर्य समाज के सम्बन्ध में यह काम तो आप हमारा ही कर रहे हैं। वहां अपने देश अमरीका को वापस जाने पर आपको यदि किसी पुस्तक की या किसी प्रकार की सूचना की आवश्यकता पड़े तो मैं सदा सेवा के लिए आप का भाई प्रस्तुत हूं। पुस्तकें देखते रहे। रहे। पं. लेखराम जी द्वारा लिखा ऋषि दयानन्द का विशाल उर्दू में लिखा ग्रन्थ देखकर प्रोफैसर जी बोले—ऐसा ग्रन्थ मैंने अपने भारत भ्रमण में दूसरे नम्बर पर देखा है। कुछ विशेष पुस्तकें चुन लीं—१. वेदों के मुफस्सिर उर्दू २—आर्य समाज के सन्त तथा समाज पर विशेष निबन्ध—काफी देर बातें भी होती रहीं। सभा मन्त्री जी ने यह भी कहा कि समाज की सामग्री के लिए आप पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज के पास जरूर जावें। उन से आपको विशेष तथा तथा महत्व की सामग्री मिल सकेगी। डा. जस्टिस महाजन तथा डा. दीवानचन्द जी कानपुर के पास भी जरूर जावें।

फिर उनको मन्त्री जी ने आर्य प्रादेशिक सभा के दफ्तर में भिजवा दिया। सभा कार्यालय में उनका समुचित सम्मान किया। सभा का पुस्तकालय दिखाया। यहां पर ही तीन चार विशिष्ट पुस्तकें उनको भेंट की गईं। सभा की पिछले वर्षों की वार्षिक रिपोर्टें भी विश्वास तथा अन्य साहित्य भी उन की सेवा में भेंट किया गया। बड़ी बड़ी अपनी समाजों का भी उन को पता दिया गया। वहां जायें तो हर प्रकार की प्रबन्ध सुविधा के लिए भी दिला दिया गया। श्री प्रोफैसर जी बड़े प्रसन्न तथा प्रभावित हुए। प्रिंसिपल सूर्यभान जी वायस चांसलर कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी की लिखी इंगलिश पुस्तक **Swami Dayanand His lifeandwork Teachings** तथा दूसरी पुस्तकें भेंट की गईं। सभा मन्त्री जी ने कहा कि जहां २ भी प्रोफैसर जी इस काम के लिए जावें वहां की समाजें, संस्थाएं पूरा २ सम्मान करते हुए समाज के बारे में सामग्री जुटा कर देने का प्रयत्न करें।

महर्षि दयानन्द द्वारा लगाया महान वृक्ष

आर्य अनाथालय फिरोजपुर छावनी महोत्सव

श्री नन्दा जी का तप, त्याग

आर्यसमाज के महान संस्थापक महर्षि दयानन्द जी महाराज ने अन्य विशाल कार्यों के साथ २ फिरोजपुर में अनाथों के संरक्षण के लिए अपने पवित्र हाथों से आज के आर्य अनाथालय फिरोजपुर छावनी को स्थापित किया था। आज वह कितनी विशाल संस्था बन गई है। उसने हजारों बच्चों बच्चियों को अपनी प्यार-भरी गोदी में लेकर पालकर राष्ट्र सेवा में भेंट कर दिया। उस संस्था के महोत्सव तथा लड़कियों के विवाह समारोह को देखकर दिल प्रसन्न हो गया। जनता विशेषकर नगर की देवियों की कितनी श्रद्धा है, यह दृश्य तो भूलेगा नहीं। यह संस्था सन १८७७ में ऋषि ने स्थापित की थी जिसे १९७७ में सौ वर्ष हो जायेंगे। अपने गत ८७ वर्ष में इस ने कितनी सेवा की। कितने अनाथ बच्चों को सनाथ बना दिया इसकी रिपोर्ट से पता लग जाता है। भारत विभाजन से पूर्व तो काम चलता रहा पर राष्ट्र विभाजन में १९४७ के बाद ऐसी स्थिति पैदा हो गई कि वहां की स्थानीय कमेटी ने इसे सरकार के हवाले कर देने का निश्चय कर लिया क्योंकि आमदनी तथा संचालन कठिन हो गया था। महर्षि की स्थापित संस्था समाज न चला सके कितने दुःख की बात होती। तब कुछ सज्जनों ने आर्य प्रादेशिक सभा को लिखा। सभा ने तत्काल इसे अपने हाथ में ले लिया। परन्तु आर्थिक समस्या तथा संचालन कठिनता तो कायम रही। व्यक्तियों के बिना संस्था नहीं चलती।

उन दिनों पूज्य स्व. महात्मा हंसराजी के दामाद माननीय दीवान जयकृष्ण जी नन्दा काश्मीर में अपनी सरकारी सर्विस के बहुत बड़े ऊंचे पद से रिटायर होने लगे थे। श्री नन्दा जी बहुत अनुभवी, सौम्य, प्रभावशाली तथा धार्मिक भाव के सज्जन हैं। सभा ने संस्था संभालने की उन से विशेष प्रार्थना की थी। आज रिटायर हो कर भी कौन सेवा कार्य में बैठता है? पैसा सब को प्यारा है। पर इस देवता ने अपना भावी प्रोग्राम त्याग कर इसे सम्भालना स्वीकार किया। तब से ले कर श्री नन्दा जी ने देहली जैसे व्यस्त, आय वाले नगर के जीवन में कदम न रख कर यहां एकान्त शान्त स्थान पर बैठ कर इन अनाथ बच्चों की सेवा को अपना धर्म बना लिया। पूज्य महात्मा जी की सुपुत्री जिन को माता जी कहा जाता था—साथ बैठ कर रात दिन जो सेवा की, वह सदा याद रहेगी। श्री नन्दा जी ने इस संस्था को आकाश पर पहुंचा दिया। यह स्थान दर्शनीय है। श्री नन्दा जी का तप त्याग अमूल्य है। दिन रात सेवा में लगे रहते हैं। इस काम में आर्य समाज के पुराने महारथी महता प्रताप चन्द्र जी ने भी सर्विस से रिटायर हो कर अपनी सेवायें संस्था को भेंट कर दी है। उन के साथ उन की देवी परमेश्वरी देवी भी जिन को सारे कुलवासी माता जी कहते हैं, इस समय बड़ी सेवा कर रही हैं। इन का भी बड़ा तप व त्याग है। इन सज्जनों के कारण ही आज यह

(शेष पृष्ठ ६ पर)

क्या ब्राह्मण ग्रन्थ वेद हैं ?

(ले० श्री मित्रसेन जी आर्य एम० ए० (पू) साहित्यचार्य

वेदों के काल निर्धारण के विषय में भारतीय और पाश्चात्य विद्वानों में बहुत मत भेद रहा है। ज्यों-ज्यों विद्वानों ने इस विषय पर विचार किया त्यों-त्यों वे वेदों को प्राचीन ही मानने को विवश हुए। इस भूतल पर कोई शक्ति नहीं जो यह निश्चय कर सके कि वैदिक मन्त्र रचना कब हुई। अतः हमें यह मानना ही पड़ेगा कि वेद अनादि हैं।

वेदों के साथ कुछ आधुनिक विद्वानों का मत है कि ब्राह्मण ग्रन्थ भी अनादि हैं और वे श्रुति कहे जाने चाहियें। जब कि वास्तविकता यह है कि (महर्षि दयानन्द सरस्वती के विचार थोड़े काल को न लें) अनेक भारतीय आचार्यों और पाश्चात्य विद्वानों का विचार है कि वेदों की चार ही संहिताएं हैं तथा ब्राह्मण ग्रन्थों की गणना उनमें नहीं हैं। हां उन्हें इतिहास आदि के ग्रन्थ या वेद व्याख्या ग्रन्थ माना है। इसकी पुष्टि के लिये हम सर्व-प्रथम भारतीय आचार्यों के मत और पाश्चात्य विद्वानों के विचार तदनन्तर देंगे।

प्राचीन भारतीय आचार्यों के मत

'देवासुराः संयत्ता आसन्' इत्यादयः इतिहासाः ग्रन्थाः।

तदेव सोम्येदयग्र आसादेकमेवाऽद्वितीयम्॥ छान्दोग्योपनिषद् प्रपा० ६॥

अर्थात्—जो ब्राह्मण ग्रन्थों में देवासुर आदि के संग्राम का वर्णन है वह इतिहास है और जिसमें जगत् की उत्पत्ति आदि का है वह ब्राह्मण भाग पुराण है।

वाक्य विभागस्य चार्थग्रहणात्
न्याय दर्शन अ० २।आ०१। सू६०

विध्यर्थ वादानुवादवचन विनियोगात्
न्याय दर्शन २।१।६१॥

महाभाष्य का कथन

पाणिनी की अष्टाध्यायी का सर्वश्रेष्ठ व्याख्या ग्रन्थ महाभाष्य है। उस में लौकिक और वैदिक उदाहरण पृथक् दिये गये हैं। इस आधार पर यदि हम देखें तो उसमे "शन्नोदेवी" आदि उदाहरण प्राप्त होते हैं किन्तु ब्राह्मण ग्रन्थों के शब्द नहीं। हां उनके उदाहरण लौकिक विभाग में से उपलब्ध हैं। अतः इस से भी यह सिद्ध होता है कि भगवान् पतंजलि को भी ब्राह्मण ग्रन्थ श्रुति में मान्य नहीं थे।

आधुनिक भारतीय विद्वानों के विचार

कुछ विद्वानों को छोड़ कर लगभग सभी विद्वानों की भी विचार-धारा उक्त मत की सम्पुष्टि ही करती है। स्थानाभाव के कारण हम कुछ विद्वानों के विचार उद्धृत करते हैं। "मन्त्र भाग और ब्राह्मण भाग में परस्पर विभिन्न प्रकारता है। ब्राह्मण भाग मंत्र भाग के पीछे चलता है। इसके प्रतिपादन की सुविधा के लिए हम भी वेद शब्द का प्रयोग मत्र भाग (या संहिता भाग) के लिए ही करना उचित समझते हैं।" (भारतीय संस्कृति विकास ले० डा० मंगलदेव शास्त्री पृ० ५६)

"इन ब्राह्मण ग्रंथों में उन अनुष्ठानों का विशद रूप से वर्णन है जिन में वैदिक मन्त्रों को प्रयुक्त किया गया है। उन में वेद मन्त्रों के अभिप्राय, विनियोग की विधि का ही वर्णन है।"

(भारतीय संस्कृति और उसका इतिहास ले० सत्यकेतु विद्यालंकार पृ० ६०)

'यह बहुविध सामग्री ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषदों की है जो मंत्र संहिताओं विभिन्न है (संस्कृत का इतिहास ले० वाचस्पति श्रेटोला पृष्ठ ६५।

पाश्चात्य विद्वानों के विचार

वेद और संस्कृत भाषा के अन्य ग्रन्थों के समझने और प्रचार करने मे जो परिश्रम विदेशी विद्वानों ने किया है, उन के सम्पूर्ण विचारों से सहमत न होते हुए भी उन की प्रशसा करनी ही पड़ेगी। उन विद्वानों ने भी वेद तथा ब्राह्मणों को पृथक्-पृथक् ही माना है।!

'कालक्रम की दृष्टि से और विषयवस्तु महत्व की दृष्टि से ब्राह्मण ग्रन्थों का स्थान वेदों के बाद ही आता है। **Translatien of M. Winternitzs Indischen Lit. 154.)**

ब्राह्मण श्रुति नहीं

हम ने उक्त प्रवल प्रमाणों के आधार पर यह सिद्ध किया है कि ब्राह्मण ग्रन्थ और श्रुति (वेद) प्रथक् प्रथक् हैं। हम पर आक्षेप करते हुए प्रश्न हो सकता है। 'तैत्रीय संहिता के एक अंश को श्रुति मानना तद्गत ब्राह्मण भाग को श्रुति न मानना कहां तक न्याय होगा।'

उत्तर में निवेदन है कि ब्राह्मण ग्रन्थो मे वेद के कुछ स्थानों का व्याख्या है इस लिये उन्हें ब्राह्मण कहते हैं। उपाध्याय जी के अनुसार वेद मंत्रों के व्याख्यान उपस्थित करने के कारण 'ब्राह्मण' नाम करण है। यदि वेदों की ही व्याख्या होती तब कुछ सोचा भी जाता, परन्तु उन में विधि, विनियोग, हेतु, अर्थवाद, निरुक्ति आदि भी पाई जाती है। अतः ये ग्रन्थ श्रुति नहीं कहेजा सकते। 'यह यथार्थ है कि इन में वेद के कुछ अंश विद्यमान हैं परन्तु इतने से ये श्रुति नहीं कहे जा सकते।' जैसे सत्यार्थ प्रकाश के कुछ अंशों को ले कर उन की व्याख्या कर दी जाये तो भी वह (नवीन पुस्तक) सत्यार्थ प्रकाश नहीं कही जा सकती। इसी प्रकार ब्राह्मण ग्रन्थ हैं।

ब्राह्मण और वेद इनके विवेच्य विषय में भी अन्तर है। यदि एक ही काल के होते तो इन में रूपता अथवा वेदानुसार विवेच्य विषय होते। इस के अतिरिक्त वेद में पद्य अधिक हैं और गद्य बहुत कम। परन्तु ब्राह्मणों में गद्य ही अधिक हैं। इस प्रकार से दोनों की शैलियां भी मेल नहीं खातीं।

ब्राह्मण ग्रथ अनादि नहीं

अधिकांश भारतीय आचार्यों के अनुसार वेद ईश्वरीय ज्ञान हैं और सृष्टि के आदि में ईश्वर ने उन्हें प्रकट किया था। पाश्चात्य आलोचक भी ऋग्वेद को संसार सर्वाधिक प्राचीन ग्रंथ मानते हैं। जिन्होंने वेद काल निर्णय करने का प्रयत्न किया है उन्हें यह मानना पड़ा कि सर्वप्रथम वैदिक कविता सुनी गई। इसे जानने के लिये हमारे पास कोई साधन नहीं। इस प्रकार से वेदों को सभी विद्वानों ने अनादी ही माना परन्तु ब्राह्मणों को नहीं।' ब्राह्मणों का रचनाकाल लगभग ३००० वर्ष ई० पू० माना जाता है तब वे अनादि कैसे हो सकते हैं। हम पूर्व ही कह आये हैं कि भाषा और शैली दृष्टि से भी यह मानना सम्भव नहीं।

श्रुति और अनादि मानने में एक और हानि

विषय प्रतिपादन की दृष्टि से ब्राह्मण आरण्यक और उपनिषदों में कोई विशेष अन्तर नहीं है। वास्तविकता यह है कि आरण्यक उसी प्रकार ब्राह्मण ग्रंथों के अश हैं जिस प्रकार ब्राह्मण ग्रंथ वेदों के। आरण्यकों को इसी प्रकार ब्राह्मण ग्रंथों का परिशिष्ट कहा जा सकता है। जब कुछ भाग होने से ब्राह्मण अनादि श्रुति माने जा सकते हैं तो आरण्यक और उप-

(शेष पृष्ठ ६ पर)

क्या ब्राह्मण ग्रंथ वेद हैं?

(पृष्ठ ४ का शेष)

निषद् क्यों नहीं? अनेकों उपनिषदों में संहिता के मन्त्र ही ज्यों के त्यों ही हैं। जैसे ईशादि परन्तु यह विचारकों को मान्य नहीं। अतः ब्राह्मण ग्रंथ केवल ब्राह्मण ग्रंथ ही हैं।

ऋषि कात्यायन का कथन

ब्राह्मण से लेकर जैमिनी ऋषि तक केवल कात्यायन ऋषि ही ऐसे हैं जिन्होंने ब्राह्मणों का वेद संज्ञा दी है। अन्य किसी भी ऋषि ने कहीं भी ऐसा नहीं लिखा अपितु दोनों को पृथक्-पृथक् ही माना है। इस विषय में कात्यायन ऋषि का यह लेख किसी भी प्रकार प्रमाणिक नहीं हो सकता।

क्या ब्राह्मण ग्रन्थ प्रमाणिक हैं?

इस विषय में तो दो मत नहीं हो सकते कि ब्राह्मणों में मन्त्रों की व्याख्या की गई है परन्तु इसके साथ-साथ विनियोग आदि का भी उल्लेख है। और यह भी साथ है कि अनेक स्थलों पर उनमें एक ही विषय के बारे में विरोध भी है। तब उनमें किस का प्रमाण वेदों के तुल्य मान्य नहीं। जहां तक वेदानुकूल हैं वे प्रमाणिक कहे जा सकते हैं। इस लिए महर्षि दयानन्द सरस्वती ने लिखा 'ब्राह्मण ग्रन्थों में वेदों की गणना नहीं हो सकती। ब्राह्मण ग्रन्थों का प्रमाण वेदों के तुल्य नहीं हो सकता क्योंकि वे ईश्वरोक्त नहीं हैं। परन्तु वेदों के अनुकूल होने से प्रमाण के योग्य तो हैं। आदि जो उचित भी प्रतीत होता है। अतः इस विषय में श्री बलदेव जी उपाध्याय के इस लेख से 'स्वामी जी ने ब्राह्मण ग्रन्थों को प्रामाणिक नहीं माना जो उचित नहीं है।' कोई भी विद्वान् मनीषी और विचारक सहमत नहीं हो सकता।

उपसंहार

अत्यन्त खेद का विषय यह है कि आर्य समाज में साहित्य प्रकाशन और ऋषि के ग्रन्थों के भाष्य का अभाव है। जिस के कारण विदेशी विद्वानों की बात जाने दीजिए। भारतीय विद्वानों के सम्मुख भी हम अपना वेद सम्बन्धी दृष्टिकोण नहीं रख पाये हैं। इसका परिणाम स्वरूप वे यथार्थता समझ कर ऋषि के सम्बन्ध में अनुचितानुचित लिख देते हैं। दुर्भाग्य से वे ग्रन्थ परीक्षाओं के पाठ्यक्रमों में स्वीकृत हैं अतः छात्रों में महर्षि के विचार नहीं पनप पाते। इस लिये सार्वदेशिक सभा। प्रतिनिधि सभाएं और आर्य समाज की अन्य प्रकाशन संस्थाओं को वेद सम्बन्धी अपना दृष्टिकोण का साहित्य और महर्षि ग्रन्थों के भाष्य या व्याख्यायें अधिक से अधिक सख्याओं में प्रकाशित कराने चाहिये।

ऐसे अवसर पर

(पृष्ठ ३ का शेष)

सहायता मिलेगी उसे प्रति सप्ताह आर्य जगत् में प्रकाशित किया जायगा। यह दुःखियों की सेवा का अवसर मिला है। हम अन्य अपने कार्यों के लिए भो व्यय करते हो हैं। इस पवित्र कार्य में भी पीछे न रहें। व्यक्ति की बजाय सभा के संगठन का प्रभाव बहुत बड़ा होता है। सभा मन्त्री जी के इस विशेष वक्तव्य पर पूरा २ ध्यान देकर सहयोग दीजिये।

—त्रिलोकचन्द्र

महर्षि दयानंद द्वारा लगाया महान वृक्ष

(पृष्ठ ४ का शेष)

संस्था ऊंचे शिखर पर जा पहुंची है। इस बार महान उत्सव हुआ तथा चार लड़कियों की शादी भी सम्पन्न हुई। नगर की बहिनों माताओं की श्रद्धा अपार थी। हम सभा को बधाई देते हैं कि उन को श्री नन्दा जी जैसा देवता मिल गया है। तथा सहयोगी मिले हैं जिन के कारण यह संस्था सारे भारत में बहुत ऊंची हो गई है। महर्षि की यह यादगार किसे प्रसन्न नहीं करती।

आर्य समाज लारेंस रोड़ (अमृतसर)

मैं १२. ४. ६४ को मंदिर में आर्य समाज स्थापना दिवस मनाया गया। इस अवसर पर पं. खुशी राम जी शर्मा वेद प्रचार अधिष्ठाता, कैप्टन केशव चन्द्र जी, पं. दौलत राम जी, डा. शंकर देव जी आदि विद्वानों के सार गर्भित भाषण हुए। श्री हजारी लाल जी भजनीक सभा के मधुर भजन हुए।

वार्षिक चुनाव

प्रधान—टेकचन्द्र जी सेठी, उपप्रधान—मोहन लाल जी अरोड़ा व हंसराज जी महाजन, मंत्री—डा. देवव्रत जी महाजन, उपमंत्री—वैद्य विद्या सागर जी, कोषाध्यक्ष—ज्ञान चन्द्र जी सोंधी, पुस्तकाध्यक्ष—गोबिन्द राम जी, आयव्ययनीरिक्षक राम कृष्ण जी खोसला।

बैठक के पश्चात् जलपान भी किया गया।

देवव्रत
मंत्री समाज

आर्य केंद्रीय सभा देहली

के तत्वावधान में श्री महात्मा देवीचन्द्र जी प्रधान दयानन्द साल्वेशन मिशन के सभापतित्व में १२-४-६४ को ८८वां आर्यसमाज स्थापना दिवस गांधी ग्रौंड में बड़े समारोह के साथ सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर अनेक विद्वानों के मर्मस्पर्शी भाषण हुए। सोमवार १३ अप्रैल को देहली के अनेक समाजों ने दीप माला तथा प्रीति-भोजन का आयोजन किया।

ओम प्रकाश
सभा मंत्री

आर्य समाज माडल टाउन यमुनानगर का वार्षिक चुनाव

प्रधान—श्री चमनलाल जी सेठ, उपप्रधान—श्री मदनलाल जी, व वैद्य दुर्गा प्रसाद जी, मंत्री—श्री चरणदास जी महाजन, उपमंत्री—श्री एस. पी. औली, कोषाध्यक्ष—श्री अतरचन्द जी वोहरा। चुनाव सर्व सम्मति से सम्पन्न हुआ।

चिमनलाल सेठ
प्रधान समाज

आर्य समाज मालवीय नगर देहली

में ६ अप्रैल से १२ अप्रैल तक बृहद् यज्ञ हुआ और १३-४-६४ को पूर्णाहुति डाली गई। इस समाज के सभी सदस्य स्वाध्यायशील हैं तथा पारिवारिक सत्संग का प्रचलन भी किया गया है इस सत्संग में किसी विद्वान का भाषण अत्यावश्यक रखा गया है। श्री सहगल जी, श्री शास्त्रीजी तथा श्री पानोकाल जी की सहायता सराहनीय है।

निर्वाचन

विरजानन्द संस्कृत परिषद् दिल्ली' का कार्यालय २३ फरवरी की साधारण सभा के निश्चयानुसार गुरुकुल झज्जर (रोहतक) में स्थानान्तरित हो गया है अतः परिषद् से सम्बन्धित सभी महानुभाव परिवर्तित पते पर सहयोग बनाए रखे।

दयानन्द व्याकरणाचार्य
परीक्षा मन्त्री

वैदिक सांस्कृतिक विद्यालय आर्य नगर कुरड़ी [हिसार]

पठन पाठन का नवीन वर्षारंभ १३ अप्रैल सन ६४ से होगा। जिस में २० नवीन ब्रह्मचारी प्रविष्ट होंगे।

यज्ञोपवीत तथा वेदारम्भ संस्कार आर्य जगत् के प्रसिद्ध विद्वान तथा कर्मठ कार्य कर्ता आचार्य श्री पं० मुरारिलाल जी शास्त्री आर्य पथिक करायेंगे।

देवानन्द सरस्वती आर्य संन्यासी

आर्य प्रादेशिक सभा का वेद प्रचार कार्य

आर्य अनाथालय फिरोजपुर का उत्सव ३ से ५ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हुआ। खुशीराम शर्मा, पं० त्रिलोकचन्द्र जी, हजारीलाल जी, दुर्गासिंह जी, राजपाल जी, मदन मोहन जी ने भाग लिया।

आर्यसमाज रेलवेरोड अम्बाला शहर में स्थापना दिवस समारोह से सम्पन्न हुआ। श्री राजपाल जी, श्री मदन मोहन जी, श्री चन्द्रसेन जी पधारे।

आर्यसमाज जोगेन्द्र नगर का उत्सव १० से १३ अप्रैल को समारोह से सम्पन्न हुआ। श्री पं० ओमप्रकाश जी, श्री जगतराम जी बस्तीराम जी पधारे, ६ से कथा प० ओं प्रकाश जी की होती रहा।

आर्यसमाज लारेंस रोड अमृतसर में आर्य समाज स्थापना दिवस समारोह से सम्पन्न हुआ। १ से १३ तक खुशीराम शर्मा की कथा और हजारीलाल जी तथा श्री राजपाल जी, श्री मदन मोहन जी के भजन होते रहे। गोपाल नगर में भी प्रचार हुआ।

आर्य समाज पुरानी मंडी जम्मू का उत्सव समारोह से १८ से २० अप्रैल को सम्पन्न हुआ श्री पं० त्रिलोकचन्द्र जी, श्री दुर्गासिंह जी श्री जगतराम व बस्तीराम जी सभा की ओर से पधारे।

महात्मा हंसराज मेला वजवाड़ा में १६ अप्रैल को सभा की ओर से मनाया गया। श्री प० ओं प्रकाश जी तथा अम्बाला मण्डली सभा की ओर से पधारी।

आर्य समाज वस्ती गुजां का उत्सव १७ से १६ अप्रैल को समारोह से सम्पन्न हुआ। सभा की ओर से श्री प० ओंप्रकाश जी पधारे

आर्य व्यायामशाला सोनीपत का उत्सव २४ से २६ अप्रैल को सम्पन्न हो रहा है। १६ से खुशीराम शर्मा की कथा और श्री मदन-मोहन जी, हजारीलाल जी के भजन। उत्सव पर श्री पं० ओंप्रकाश जी, श्री प्रो० रामविचार जी, श्री दुर्गासिंह जी, श्री चन्द्रसेन जी सभा की ओर से पधारेंगे।

आर्य अनाथालय भिवानी का उत्सव १ से ३ मई को समारोह से सम्पन्न हो रहा है। २७ अप्रैल से श्री पं० त्रिलोकचन्द्र जी, श्री राजपाल जी, श्री मदन मोहन जी पधार रहे हैं।

आर्य समाज अलावलपुर का उत्सव १ से ३ मई को सम्पन्न हो रहा है। २८ अप्रैल से कथा के लिये श्री पं० चन्द्रसेन जी, श्री मेलाराम पधार रहे हैं। उत्सव पर श्री पं० ओंप्रकाश जी, श्री हजारीलाल जी, श्री दुर्गासिंह जी सभा की ओर से पधार रहे हैं।

आर्य समाज पलवल का उत्सव ८ से १० मई को समारोह से सम्पन्न हो रहा है। ४ मई से श्री पं० ओंप्रकाश जी कथा करेंगे। और उपसभा दिल्ली के महानुभाव पधारेंगे।

आर्य समाज न्यू रेलवे कालोनी जालन्धर का उत्सव ८ से १० मई को सम्पन्न हो रहा है। श्री पं० त्रिलोकचन्द्र जी, श्री पं० चन्द्रसेन जी, श्री राजपाल जी, श्री मेलाराम जी, श्री मदनमोहन जी, श्री हजारीलाल जी पधार रहे हैं।

फुटकर कवित्त

(रचयितृ विजय लक्ष्मी आर्या B.A. बदायूं यू. पी.)

धर्मों का अधिराज

नभ में अनेकों तारे शोभा दिखलाते पर,
अन्धकार दूर करे दधि सुत राज है।
सैंकड़ों निवास करें बलशाली हाथी किन्तु,
वन्य पशुओं में जैसे सिंह सरताज है।
पक्षियों में राजहंस 'लक्ष्मी' मन मोह लेत,
सब ऋतुओं में सोहे जैसे ऋतुराज है।
पापों का विनाश करे मुक्ति का प्रदाता त्यों
सु आर्य धर्म विश्व धर्मों का अधिराज है॥

आर्य बन जाइये

दुर्गुण दूर हों यदि यह तुम चाहो सभी,
वेदों के बताये सद्गुण अपनाइये।
निःशंक यदि तुम दुनिया में रहना चाहो,
तो निर्भय ईश्वर को नित् प्रति ध्याइये।
मन में हिलोरें यदि खुशी की बहाना चाहो,
'लक्ष्मी' कहे निज मित्र सब को बनाइये।
पार भव सागर से यदि तुम होना चाहो,
मोह सब छोड़ कर आर्य बन जाइये॥

आर्यसमाज प्रेम नगर करनाल का उत्सव ५ से ७ जून को सम्पन्न हो रहा है।

आर्यसमाज अशोक कालोनी करनाल का उत्सव २६ से ३१ मई को सम्पन्न हो रहा है।

आर्यसमाज बुज १६ से २३ अप्रैल। आर्यसमाज इन्द्री २७ से २६ अप्रैल। आर्यसमाज रामसरन माजरा १ से ३ मई। आर्यसमाज अलाहर, ६ से ११ मई। आर्यसमाज सुभरी १२ से १४ मई। आर्य समाज झफाड़ी १५ से १७ मई। आर्यसमाज ... १८ से २० मई। सुल्तानपुर २१ से २३ मई। बिजापुर २४ से २७ मई। आर्यसमाज मिर्जापुर २६ से ३१ मई। मोदीपुर ५ से ७ जून ये सब उत्सव श्री पं. अमरसिंह जी की अध्यक्षता में सम्पन्न हो रहे हैं।

आर्यसमाज (का.वि) नाभा में मई मासके अन्त में कथा सम्पन्न हो रही है। —खुशीराम शर्मा

वेदप्रचार अधिष्ठाता

आर्यसमाज कालीकट

मार्च मास में ७ ईसाइयों की शुद्धि की गई। मन्दिर में पानी का नलका लग गया है जिस पर ६३७.३७ न० पै० खर्च आया है। हिन्दी विद्यालय का नया वर्ष आरम्भ हो गया है। गत फरवरी में परीक्षा हुई जिस में ६० विद्यार्थी प्रविष्ट हुए जिनका परीक्षा परिणाम १०.४.६४ को निकल चुका है। प्रचार कार्य भली प्रकार चल रहा है।

बुधसिंह प्रचारक सभा

बंगाल क ये पीड़ित भाई बहिने

आर्य समाजें दिल खोल कर सहायता करें

सभा के महामन्त्री जी की अपील

र्य प्रादेशिक सभा पंजाब जालन्धर के महामन्त्री श्री ला. ...त्र जी ने सारे संस्थाओं तथा परिवारों के नाम अपने इस वक्तव्य में लिखा है—

पूर्वी बंगाल में जो २ अत्याचार हुए जिन के कारण बहुत बड़ी संख्या में नरनारी व परिवार अपने घरों को छोड़ कर भारत में आये तथा अब भी आ रहे हैं। हमारा भी मानवता, बन्धुत्व के नाते इन दुःखियों, विपद् ग्रस्तों की सेवा करना कर्तव्य है। आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब सेवा कार्य में सदा आगे २ रही है। इस समय भी मैं सारे समाजों, संस्थाओं तथा धनी मनी परिवारों से निवेदन करता हूं कि तन-मन-धन तथा वस्त्रों व दवाईयों से सभा का पूरा सहयोग देवें ताकि सभा बंगाल के इन पीड़ित भाईयों की सेवा कर सके। छोटी से छोटी राशि वस्त्र, औषधि धन्यवाद सहित स्वीकार की जायगी इन उजड़े हुए परिवारों, शरणार्थियों के प्रति हम अपने दायित्व को समझें, निभायें। पूर्णाशा है कि सारे सज्जन सभा को पूरा २ इस काम में सहयोग देंगे। ऐसे विषम अवसर पर सभा आप से बहुत आशा रखती है।

आप का

सन्तोष राज मन्त्री सभा

पुराणों और तंत्रों का घनिष्ठ सम्बन्ध

(ले० श्री पिंडीदास जी प्रधान आर्यसमाज लोहगढ़ अमृतसर)

नोट—यह लेख आर्य जगत् के २२, २६ मार्च व ५ अप्रैल के अंकों में क्रमशः प्रकाशित होता रहा है लेख का शेष व अंतिम भाग २६-४-६४ के अंक में पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत है। —सं०

हमारे देश में अनेक लोग अन्ध परम्परा से तान्त्रिक उपासना में दीक्षित होकर भी तन्त्रानभिज्ञता के कारण तन्त्र में कही हुई विधि को बुरा कहते हैं। धर्मशास्त्र और तन्त्र का मर्म जानते होते तो ये लोग कभी ऐसा न कहते। विशेष करके तान्त्रिक अनुष्ठान फल को शीघ्र ही देता है। ....तन्त्रसार में महानिर्वाण तन्त्र का नाम नहीं लिखा। इस कारण से कोई-कोई महात्मा इस ग्रन्थ की प्रामाणिकता में संशय करते हैं। ऐसी शंका करने वालों को उचित है कि पद्म पुराण, अग्नि पुराण और शंकर दिग्विजय को पढ़कर अपने सन्देह को दूर करें। ...सामवेद और अथर्व वेद से तन्त्र शास्त्र का आविर्भाव हुआ है। ब्रह्मज्ञान रूप मन्दिर में प्रवेश करने के लिए तन्त्र शास्त्र ही प्रथम सोपान है।...अपने पूज्यपाद ज्येष्ठ सहोदर पं. ज्वाला प्रसाद जी मिश्र को कोटिशः धन्यवाद देता हूं कि जिन्होंने आद्यन्त पर्यन्त इस तन्त्र की लिखित कापी को देखकर मुझ को उपकृत किया है।

लाहौर के प्रसिद्ध सनातनधर्मी विद्वान् (स्वर्गीय) श्री पं० भानुदत्त जी सन १९११ में छपे अपने अन्तिम ग्रन्थ 'हिन्दू धर्म' मर्म में लिखते हैं—

'मैं तो तन्त्र ग्रन्थों को भी वेद मूलक ही कहूंगा क्योंकि आगम शास्त्र (तन्त्र ग्रन्थ) भी वेद का अंग गिना गया है। आगम पंचम वेद है और कौल पंचम आश्रम है।'

पृष्ठ ४१

'वैदिक उपासना और तान्त्रिक उपासना में कोई भेद नहीं।'

उक्त पुस्तक पृष्ठ ८०

सनातनधर्म सभा के प्रसिद्ध उपदेशक स्वामी प्रकाशानन्द हजरो निवासी अपने 'मूर्ति पूजा की कदामत' नामक उर्दू ट्रैक्ट में पृष्ठ ११ तथा १२ पर 'कुलारावि तन्त्र' और 'महानिर्वाण तन्त्र' को मूर्ति पूजा की सिद्धि में प्रमाण रूप में उद्धृत करते हुए लिखते हैं—

'महानिर्वाण तन्त्र' अति प्राचीन और मुस्तभेद (प्रामाणिक) ग्रंथ है...यह तमाम ग्रन्थ मुतअल्लिक बाला (उपर्युक्त) वेद की शाखाओं के अन्तर्गत हैं और इसलिए इनके प्रमाण खास तौर पर काबिले गौर हैं।

विवेक प्रिय पाठक वृन्द! उपरिलिखित कतिपय उद्धरणों से यह भली भान्ति स्पष्ट हो गया होगा कि तन्त्रों और पुराणों एवं तान्त्रिकों और पौराणिकों का परस्पर कितना घनिष्ट सम्बन्ध है! इस परिस्थिति में यदि निस्संकोच यह कह दिया जाय कि आधुनिक सनातनधर्म ही वाममार्ग है तो इस में कोई अन्यथा उक्ति नहीं होगी।

इस से आगे के अंकों में हम तान्त्रिक शिक्षा का दिग्दर्शन कराते हुए पाठकों से यह आशा रखेंगे कि ऐसी घृणित शिक्षा देने वाले ग्रंथों को त्याज्य समझेंगे।

आर्य समाज यमुना नगर

का वार्षिकोत्सव १-२-३ मई ६४ को होना निश्चित हुआ है जिसमें श्री स्वा. सुत्रानन्द पं. शिव-कुमार जी शास्त्री पं. शान्ति प्रकाश जी शास्त्रार्थ महारथी कुंवर सुखलाल जी शयय मुसाफिर तथा श्री ...न्द्र जी एम. ए. आदि महानुभावों के पधारने की आशा है।

कृष्णचन्द्र शास्त्री मन्त्री

तुम्हारे प्रति

(सत्यव्रतसिंह जी, केसर गं... बराइच यू. पी.)

चारों ओर दिशा के बन्धन
भटक रहा मन, भटक रहा मन
किरण घनों में चमकी चुमकर
खिले विजन वन, बेसुध लोचन !
कृपा तुम्हारी ऊपर छायी
कोई घटा वहां घहरायी
उथला स्नेह रहा लहराया,
बढ़ी नहीं दिल की गहराई !
तुम में मैंने जीवन देखा,
बने तुम्हीं जीवन की रेखा,
अविश्वास के अंधकार में—
कौन किरण की बांह गहेगा !

आर्यसमाज लक्ष्मणसर (अमृतसर) का प्रस्ताव

१२-४-६४ के सत्संग में निम्न प्रस्ताव पारित हुआ—

'शेख अबदुल्ला की मुक्ति व विशेष कर वर्तमान नाजुक परिस्थि... में भारत सरकार की हिमाल... जैसी गलती को असीम अदूर... दर्शिता व देश के लिए अत्य... खतरनाक समझते हुए इस पर गह... चिंता प्रकट की गई। ... ऐसा गलत कदम उठाया जा चु... है और शेख अबदुल्ला ने अप... भाषणों व बातचीत में अपनी कु... अनीति को प्रकट भी कर दिय... है। भारत सरकार से मांग की गई कि वह शेख अबदुल्ला की गतिविधियों पर कठोर दृष्टि रख... हुए उसके देश-द्रोही संकल्पों को आचरणहीन और असंभव बना दे।

रुद्रदत्त—प्रधान समाज

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तराम जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टैलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक १८) २१ वैशाख २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०— ३ मई १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

स्तोतार: इंद्र गिर्वण:

हे ऐश्वर्य के भण्डार इन्द्र! आप ही हमारी वाणियों के स्तुति के योग्य हो। हम आप का ही नित्य स्तवन करते हैं। आपके ही स्तोता बनकर भजन भक्ति के गीत गाते हैं। आपके सिवा हम किसी के भी गायक उपासक न बनें।

नृमणं तनूषु धेहि

हे भगवन! आप कृपा करके हमारे शरीरों में स्वास्थ्य तथा बल प्रदान करें। हमें ज्ञान रूपी नृमणं-धन भी दीजिए। हम स्वास्थ्य और शक्तिशाली बनें, ज्ञान की दौलत से भी हम मालामाल हो जावें। हमें ज्ञान और बल दोनों का प्रसाद प्रयत्न करें।

सत्राजिद् उग्र पौंस्यम्

हे सत्राजित—सब पर विजय पाने वाले प्रभो। हमें पौंस्यम्-बलपराक्रम प्रदान कीजिए। हम कभी निर्बल न बनकर बलवान बनें। पिता जी! आप बल के दाता बलदा हैं, हमें शक्ति से भरपूर कर दें। हम बलवान् बनें।

वे दा मृ त

अथोपस्थान मन्त्रा:

ओ३म् उदुत्यं जात वेदसं देवं वहन्ति केतवः।
दृशे विश्वाय सूर्यम्॥

यजु: अ० ३३ मं. ३१

अर्थ :—उस प्रभु को, जिस के द्वारा (उदुत्यं जात वेदसम्) ये वेदों का ज्ञान प्रकट हुआ है, प्राप्त हुआ है और जो सारे प्रकृति के भूतों में व्यापक है, उस (देवम्) प्रकाश मय देव को (वहन्ति) धारण करती हैं, बताती हैं ये (केतव:) ये श्रुतियां और ये विश्व के पदार्थों की झंडियां। हम उसी प्रकाशमय सूर्य रूपी तेजोमय परमेश्वर को (दृशे विश्वाय) संसार के पदार्थों का ज्ञान प्राप्त करने के निमित्त, विश्व के विविध वस्तुसमूह को जानने के लिए प्राप्त करें, उसी का आश्रय प्रसाद को पायें। उसी की आराधना उपासना करें।

भाव :—मेरे महान् प्रीतम! आप इस ज्ञात अज्ञात विशाल एवं महान विश्व में सर्वत्र व्याप्त हो रहे हो। कोई भी ऐसा स्थान नहीं, जहां आप की परम सत्ता का सौन्दर्य न प्रतीत होता हो। प्रभो! आप की कृपा से ही तो सर्ग के आरम्भ में अपने अमृत पुत्रों को वेदों का ज्ञान मिला करता है। संसार का प्रत्येक छोटा या बड़ा पदार्थ आप की उस दिव्य परम सत्ता की प्रतीति है। ये सारी झण्डियां हैं जिन से आप के अटल नियमों की झांकी सर्वत्र देखने को मिलती है।

हे महान सूर्य। हम आप की भक्ति करते हैं। आप की उपासना में लगे हैं। क्योंकि आप के सिवाय और सच्चा गुरु तथा सच्चा पिता कौन सा है, जो हमें इस विविध विश्व के नाना प्रकार के पदार्थों का ज्ञान करा सकता है। आप महान् गुरु हैं। सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सब का आदि मूल हे प्रभो। आप ही हैं। हम आप के पुत्र हैं. नमस्कार करते हैं—सं

ऋषि दर्शन

न्यायकार्यसि

हे परमेश! आप न्याय करने वाले हैं। आप की न्याय नियम की तुला में कोई खोटा अपनी खोट को छिपा नहीं सकता।

निर्वैरोऽसि

हे दयानिधे! आप निर्वैर हैं। किसी से भी आप का वैर नहीं है। प्रजापति के नाते सारा विश्व आप की ही प्रजा है। जैसा २ कोई शुभ अशुभ कर्म करता है, उसी के अनुकूल उसे फल देते हो। उस में भी आप की दया का परिचय मिलता है।

ईश्वरात् याचितकम्

हे मानवो! इधर उधर क्यों भागते फिरते हो क्या मिलता है। भटक २ कर थकना ही होगा। जो कुछ भी मांगना चाहते हो तो उसी परमेश्वर से मांगना सीखो। उसके बिना और दूसरा कोई भी तो मन की कामना को पूर्ण नहीं कर सकता।

अधिष्ठाता—संतोषराज सभा मंत्री सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

अध्यात्मवाद

सच्चा गुरु कौन ?

(श्री पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज)

आज कल नर नारियों में गुरु बनाने तथा धारण करने की बड़ी प्रथा चल पड़ी है। नानाप्रकार के गुरु बनाये जाने लगे हैं। गुरुओं का भी प्रवाह चलने लगा है। इस ने गुरुडम को जन्म दिया है जिस का परिणाम ठीक नहीं निकल रहा। गुरु के नाम पर जो कुछ होता है, उसे कौन नहीं जानता। पूज्य महात्मा जी ने उपनिषदों के आधार पर सच्चे गुरु की पहिचान बताई है। यदि सब इस पर आचरण करें तो वर्तमान पाखण्ड तथा गुरुडम का दम्भ रोका जा सकता है—सं.

गुरु उसे कहते हैं जो परमात्मा को प्राप्त करने का सीधा मार्ग बताये, जो कल्याण का रास्ता दिखाये, धर्म के पथ पर चलने की प्रेरणा दे। ऐसे ही गुरु को खोजने और उसके पास जाने की आज्ञा उपनिषदों ने दी है—तद् विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्। आत्मा और परमात्मा का ज्ञान प्राप्त करने के लिए—आत्मा और परमात्मा का दर्शन कराने वाले विज्ञान को पाने के लिए वह अर्थात ज्ञान का अभिलाषी गुरु के पास जाये। परन्तु किस प्रकार? क्या अकड़ कर, अपनी धन सम्पत्ति का अभिमान लेकर, अपने बड़प्पन का गर्व करता हुआ? नहीं—समित्पाणिः—हाथ में समिधा लेकर, सिर झुकाकर, विनम्र बन कर उसके पास जाये। परन्तु किस के पास जाये? कैसे गुरु के पास पहुंचे। उपनिषद् कहती है 'श्रोत्रियम्' उसके पास जो चारों वेदों को जानने वाला है। प्रत्येक प्रकार के ज्ञान और विज्ञान का स्वामी है तथा ब्रह्मनिष्ठम् जिस ने ब्रह्म को पा लिया है, आत्मदर्शन कर लिया है, परमात्मा को अनुभव से देख लिया है। ऐसे गुरु के पास जाना चाहिए।

आजकल गुरु धारण करने की प्रथा बहुत तीव्र हो रही है। कई लोग मेरे पास भी आते हैं—कहते हैं कि हम आप को गुरु धारण करना चाहते हैं। मैं हंस कर कहता हूं—अरे बाबा! गुरु तो सब का परमात्मा है। मुझे तुम गुरु किस प्रकार बना लोगे? परन्तु आजकल गुरु बनने वाले भी बहुत हैं। उनकी यही इच्छा होती है कि अधिक से अधिक लोग उनके चेले बन जाएं। एजेन्ट बना रखे हैं उन्होंने जो लोगों के पास जाकर कहते हैं कि अमुक व्यक्ति को गुरु बना लो। ये एजेन्ट अपने साथ रजिस्टर लिये घूमते हैं। चेलों के नाम उस में दर्ज करते रहते हैं। यह गुरुडम ठीक नहीं, ऐसे गुरु भी ठीक नहीं। गुरु के लिए आवश्यक है कि उस में तीन गुण हों।

पहला गुण यह होना चाहिए कि आप उसके पास बैठें तो बैठने को जी चाहे। यह नहीं कि बैठने के कुछ ही देर बाद मन कहने लगे चलो। जिस व्यक्ति के पास बैठकर बैठे रहने को जी न चाहे तो समझ लो कि उसमें गुरु बनने का गुण नहीं। प्रत्येक व्यक्ति में एक आकर्षण शक्ति रहती है। अंग्रेजी में उसे **Personal magnelism** कहते हैं। योगाभ्यास से, आत्मदर्शन से, सुकर्म से और सदाचार से इस आकर्षण में इतनी वृद्धि हो जाती है कि समीप बैठा व्यक्ति उसकी ओर इस प्रकार खिचने लगता है जैसे लोहा चुम्बक के पास पहुंच कर इसकी ओर खिंचता है। आकर्षण की लहरें, किरणें, इस व्यक्ति के भीतर से निकलने लगती हैं। वे पास बैठने वाले को मानो अपने साथ बान्ध लेती हैं। यह पहिला गुण है। यदि यह गुण आपके गुरु में नहीं है तो समझ लें कि आप गलत आदमी के पास पहुंच गए। इस व्यक्ति में आपका गुरु बनने की योग्यता नहीं है।

दूसरी बात यह है कि इस व्यक्ति ने अपनी जिह्वा को वश में किया है या नहीं। यह जिह्वा बहुत शक्तिशाली इन्द्रिय है। स्वाद भी लेती है और बोलती भी है। एक यह ज्ञानेन्द्रिय भी है और कर्मेन्द्रिय भी। जिसने इसको वश में नहीं किया वह किसी भी दूसरी इन्द्रियको वश में नहीं कर सकता। यदि किसी व्यक्ति की जीभ कड़वा बोलती है, दिल को दुखाने वाली बात कहती है तो समझ लो कि इस ने अपनी जिह्वा पर अधिकार नहीं किया। यह व्यक्ति यदि हर समय स्वाद ही देखता रहता है, हर समय खाने का कार्यक्रम ही बनाता रहता है तो समझना चाहिए कि यह व्यक्ति विद्वान् होने पर भी किसी न किसी दिन गिरेगा अवश्य। ऐसा व्यक्ति गुरु बनने के योग्य नहीं। जिस ने अपनी इन्द्रियों को वश में नहीं किया वह आप को क्या सिखायेगा? और यदि ये दोनों बातें ठीक हों। यदि उसके पास बैठे रहने को जी चाहे तथा उसने अपनी जिह्वा को वश में कर लिया है तो कुछ दिन उसके निकट रह कर देखिये, उसे छेड़ कर देखिये कि उसे क्रोध आता है या नहीं। यदि उसके क्रोध की ज्वाला भड़क उठती है तो समझ लीजिये कि उस व्यक्ति में गुरु बनने की योग्यता नहीं है। यदि क्रोध नहीं आता तो ठीक व्यक्ति है। उसे गुरु बनाओ परन्तु होश से बनाओ। देख भाल कर बनाओ।

सावधान! जागते रहना, कहीं धोखा न खा जाना! असली घी की बजाये डालडा न खरीद लेना इस संसार में धोखा बहुत है। जगह २ बोर्ड लगे हुए हैं। कहीं योग सिखाया जाता है। कहीं आत्म-दर्शन कराया जाता है। दुकानें बहुत हैं। इन से सावधान रहना। यह देखना कि जिसे गुरु बनाना चाहते हो उस में गुरु बनने के गुण हैं या नहीं? यदि नही तो तलाश जारी रखो।

आर्यसमाज तथा धर्मार्थ औषधालय अलावलपुर

आपके आर्य समाज तथा धर्मार्थ औषधालय अलावलपुर का उत्सव २७-४-६४ से ३-५-६४ तक बहुत वर्षों के पश्चात धूमधाम से मनाने की तैयारी आरम्भ कर दी है। इस शुभ अवसर पर बड़े बड़े विद्वान, उपदेशक, भजनीक पधारेंगे। औषधालय के लिए अपील होगी। दानियों के शुभ नामों की सुनहरी लिस्ट पेश की जावेगी। आप से प्रार्थना है कि यदि आप अभी तक नई तजवीज के अनुसार **Patron** संरक्षक अथवा परम सहायक नहीं बनें, तो अवश्य बन कर हमारा उत्साह बढ़ावें। औषधालय तथा आर्यसमाज के काम आप के सहारे ही चल सकते हैं। पूर्ण निश्चय है कि निराश नहीं करेंगे।

पहले की भांति परिवार सहित इस अवसर पर पधार कर रौनक बढ़ावें, जिस से हमारा उत्साह बढ़ेगा। अपील औषधालय भेजी जा रही है। 	निवेदक

अमरनाथ मन्त्री प्रधान
गुरुप्रसाद मन्त्री आर्यसमाज,
अलावलपुर (जालन्धर)

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२०, ३ मई १९६४ [अंक १८

वेदों का अंगरेजी भाष्य

आर्य जाति के भवन की आधार शिला वेदों पर निहित है। वेद परमधर्म हैं, पवित्र करने वाला उस देव का काव्य है। सनातन चक्षु तथा सारे जीवन के कर्तव्यों का मूल है। परम्परा से इस का पठन-पाठन चला आया है। वेदों पर अनेक प्रकार के भाष्य किये गये हैं। भारत के पुराने कई लोगों ने भी संस्कृत में भाष्य किये तथा पश्चिम के विद्वानों ने भी इस पर लेखनी उठाई। किन्तु लिखा क्या और भाष्य किस प्रकार का किया—इस पर इस समय इतना ही कहना है कि अपनी कुत्सित मनोवृत्ति या अपने पूर्व से निश्चित किये हुए दृष्टिकोण के अनुसार ही वेदों का भाष्य करके विश्व की दृष्टि से गिराने का प्रयत्न करने में कोई कसर नहीं उठा रखी। पश्चिम के भाष्यकारों के दादा गुरु मेक्समूलर और भारतीय भाष्यकर्ताओं के दादा महीधर का भाष्य क्या है—इस के बारे में इस समय अधिक नहीं कहना। धन्यवाद है ऋषि दयानन्द जी का, जिन्होंने वेद भाष्य कर सारे विश्व में इन के निन्दनीय भाष्यों को नंगा करके रख दिया। अंगरेजी पढ़े लिखे लोगों को देने के लिए वेदों का भाष्य आर्यसमाज के पास नहीं था। समाज में विशाल संस्थाएं भी हैं, संगठित शिक्षण केन्द्र भी हैं तथा भिन्न भिन्न विद्वन्मंडल के वेद संस्थान भी हैं। किन्तु इंगलिश में वेदों के भाष्य की ओर किसी का भी ध्यान नहीं गया। यदि किसी ने ध्यान दिया भी तो वह केवल ध्यान की सीमा से आगे न बढ़ सका। अंगरेजी पढ़े लिखे लोगों के सामने तो वही भाष्य आते हैं जिन में वेदों से घृणा पैदा हो जाती है। इतनी आवश्यकता होने पर भी इंगलिश भाष्य कराने का किसी प्रकार का भी प्रबन्ध न हो सका। यह काम सरल न था। इस में विद्या की, निष्ठा, गम्भीरता, भावना तथा धन की बड़ी आवश्यकता थी। सारे अपने २ कार्यों में लगे थे।

आर्य समाज के पुराने युग के महारथी, जीवन को आर्य समाज के सेवा में भेंट कर देने वाले, जिला होश्यारपुर को अपने काय का केन्द्र बना कर विद्या की सरस्वती धर्म प्रचार का प्रवाह बहा देने वाले आर्य जगत् में सम्माननीय श्री महात्मा देवीचन्द जी एम. ए. प्रधान दयानन्द साल्वेशन मिशन ने इस आवश्यक वेदों के इंगलिश भाष्य के कठिन व महान् कार्य को करने का व्रत लिया। लगातार रात दिन के प्रयत्न तथा भारी स्वाध्याय के बाद यजुर्वेद तथा सामवेद इन दो वेदों का अंगरेजी में भाष्य करके बड़े सुन्दर ढङ्ग से प्रकाशित करा दिया। सामवेद को इंगलिश भाष्य इस समय हमारे सामने है। यजुर्वेद पर तो महर्षि दयानन्द का भाष्य मिलता है पर सामवेद पर उनका भाष्य नहीं। कितनी कठिनता हुई होगी। कितना गम्भीर परिशीलन किया है। इंगलिश भाषा पर कितना उत्तम अधिकार है। हमने कई मन्त्रों तथा स्थलों को विशेष ध्यान से पढ़ा है। भाष्य में कितनी योग्यता, विद्वत्ता का परिचय मिलता है। इस अवस्था में महात्मा ने कितना कमाल कर दिखलाया है। आर्य समाज का ऐसा भाष्य करके मस्तक ऊंचा कर दिया है। अब अथर्ववेद के भाष्य में लगे हुए हैं। इस वृद्धावस्था में वेदों के इंगलिश भाष्य जैसा गहन काम। कितना भारी परिश्रम है यदि अन्य किसी दूसरे देश में इतना शानदार काम करने वाला ऐसा मान्य स्कालर तथा भाष्यकार होता तो वहां की सरकार इन की विशेष कृति पर विशेष पुरस्कार सम्मान देती। पर यहां तो सिनेमा अभिनेत्रियों, अभिनेताओं, नाच करने वालियों के लिए सम्मान, पुरस्कार तथा उन के साथ खड़े हो कर चित्र तो खिंचाये जा सकते हैं पर ऐसे २ स्कालरों के प्रति कितनी उदासीनता है। हम सार्वदेशिक सभा तथा अपनी डी. ए. वी. कालेज कमेटी तथा आर्य प्रादेशिक सभा से विशेष कर कहना चाहते हैं कि इस दिशा में अपने कर्तव्य को निभालें। भाष्यकार का सम्मान सारे देश का सम्मान है हम महात्मा जी से भी नम्र निवेदन करेंगे कि चारों वेदों का भाष्य पूर्ण करने में लगे रहें। इसी कार्य को प्रमुखता देवें। प्रभु उन को आयु व स्वास्थ्य देवें।

—त्रिलोक चन्द्र

फिलास्फर की प्यारी देन

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

प्रिंसिपल दीवानचन्द जी एम. ए. कानपुर पूर्व वायस चांसलर आगरा यूनिवर्सिटी भारत के प्रसिद्ध फिलास्फरों में एक माने हुए हैं। आर्य समाज को बड़ा गौरव है कि डाक्टर जी आर्य समाज के नेता हैं, लगभग ह। वर्ष बाद आर्य-समाज रीडिंग रोड देहली तथा आर्य समाज जिला जालन्धर के महोत्सवों पर पधार कर अपना गम्भीर तथा दार्शनिकता से भरा भाषण देकर जनता को जीवन रस पिला जाते हैं। बोलते हैं तो फिलास्फी से भरा और लिखते हैं तो भी फिलास्फी से परिपूर्ण। दार्शनिक की आंखें, मन और दृष्टिकोण बहुत गहरा, रहस्यमय होता है साधारण सी बात को कमाल के ढङ्ग से व्यक्त कर देता है। माननीय प्रिंसिपल जी बहुत अच्छे लेखक भी हैं। आप की लिखित पुस्तकें बड़े चाव तथा श्रद्धा से पढ़ी जाती है।

सभा ने स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी की सौ वर्षीया शताब्दी समारोह मनाने की योजना बनाई। उसी क्रम में माननीय प्रिंसिपल जी ने कानपुर में बैठ कर 'महात्मा हंसराज' पुस्तक लिखी। १५-१६ हजार की संख्या में उन्होंने स्वयं प्रकाशित कराई है। उस स्वर्गीय देवता के जीवन को जिस नवीन शैली से कमाल के ढङ्ग से, नई २ बातों तथा घटनाओं का उल्लेख करके प्रकाशित किया है। जिसे फलस्फियाना रूप देकर पुस्तक लिखी है। यह तो आप का भाग ही है। इस जीवनमें बीसियों बातें ऐसी हैं जिन का आज तक जनता को भी पता नहीं था। माननीय प्रिंसिपल जी समाज के उस पुराने युग के चमकते स्तम्भ हैं। डी.ए.वी. कालेज, आर्य प्रादेशिक सभा तथा आर्य समाज के पुराने इतिहास का चलता फिरता सजीव ग्रन्थ ही हैं। स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी के साथ रहे हैं, काम किया है, कालेज कमेटी, सभा तथा समाज

(शेष पृष्ठ ६ पर)

आर्यसमाज तथा स्थान पवित्रता

(प्रिंसिपल भगवान दास जी एम. ए. दयानन्द कालेज शोलापुर)

एक दो मास हुये भारत के एक उच्च कोटि के अंग्रेजी दैनिक समाचार पत्र में पढ़ा कि पाकिस्तान सरकार ने लाहौर के आर्यसमाज मन्दिर में एक इसलामिया स्कूल खोल दिया है। समाचार को पढ़ कर खेद हुआ। भारत सरकार तो प्रत्येक धर्मस्थान को उचित ढंग से रखती है पर पाकिस्तान सरकार तो किसी के धर्मस्थान का उचित तो कहना ही क्या अपितु जान बूझकर अनुचित ढंग अपनाती है फिर भी यह जानकर थोड़ा संतोष हुआ कि स्कूल ही खोला है पहले तो ऐसे समाचार मिलते रहे कि कि बुचड़ खाने आदि कई धर्म-स्थानों में खाल दिए गए हैं। जिस को अन्य धर्मों से घृणा हो। ऐसी पाकिस्तान सरकार क्या नहीं कर सकती। यह सब बातें खेद-जनक तो हैं पर आर्यसमाज क्योंकि स्थान पवित्रता में विश्वास नहीं रखता इसलिए यह बात सरकार पर ही छोड़ता है।

जब मैं दिल्ली में था तो कुछ आर्य नेताओं ने आर्य नगर बसाने की योजना चालू की थी। कुछ मित्र मेरे पास भी आए तथा सदस्य बनने को कहा। जब पूछा तो कहने लगे कि केवल आर्य समाजी ही योजना के सदस्य बन सकेंगे। मैंने दो बातों के आधार पर घोर विरोध किया कि जहां आर्य समाजी इकट्ठे होंगे तो लड़ेंगे (ख) अगर आर्यसमाजी एक स्थान पर रहने लग गए तो अनार्य समाजियों को आर्यसमाजी कैसे बनाएंगे। मेरी दोनों बातें मित्रों ने मान लीं तथा जहां तक मुझे याद है योजना रह गई। आर्यसमाज के लिए सारा विश्व आर्य नगर है हम दूसरे मत मतान्तरों की तरह गुट नहीं हमारी विचार-धारा सार्वभौमिक है। एक ही नगर केवल आर्य समाजियों का नहीं हो सकता।

अब पुन हमारे एक उच्च कोटि के नेता तथा कर्मठ कार्यकर्ता ने निराशा व्यक्त की है कि आर्य समाजी टंकारा के लिए इतना भी नहीं करते जितना कि दयाल बाग-आगरा के राधास्वामियों ने फरीदाबाद में किया है। उन्होंने इसी बात को देखकर श्रद्धा के अभाव के लिए आर्य समाजियों को कोसा है। मेरे मन में पुनः वही विचार आया कि क्या टंकारा ऋषि भक्तों के मनों में वही स्थान रखता है जो मक्का मुसलमानों के लिए अगर हो तो ऋषि मिशन समाप्त, अगर नहीं तो हम जीवित हैं। क्या आर्यसमाजी यह कह सकता कि ऋषि के विचारों से भी टंकारा उसको प्यारा है। आज यह हमारे लिए दुःख की बात है कि गांधी जी के विचारों से उनके भक्तों के लिए राजघाट बहुत प्यारा है। गांधी जी के विचारों का खून होते देखकर किसी कांग्रेसी को रोष नहीं आता पर राजघाट के लिए कोई थोड़ा भी मत प्रकट करे तो उसको मारने दौड़ते हैं। वह उसको तीर्थस्थान कहते हैं। वह आर्य समाजी जो टंकारा, मथुरा अथवा अजमेर को आर्य समाजियों के तीर्थस्थान कहते हैं वह भी वही गलती कर रहे हैं जो राज घाट को तीर्थ स्थान बनाने पर तुले हुये हैं। पूना में एक भाई ने मुझे कहा कि वह बाड़ा जहां पर ऋषि दयानन्द ने पूना में भाषण दिया था उस को आर्य सामज खरीद ले तथा वहां ऋषि दयानन्द का पुतला बना दे। मैंने कहा ऋषि दयानद का पुतला एक जगह पर ही खाड़ा नहीं रखा जा सकता जगह जगह घूमने तथा ससार के कष्ट मिटाने के लिये दौड़ने वाले पुतले होने चाहिएं। ऋषि के बाड़ा में दो दस व्याख्यान होने से बाड़ा ही धर्म स्थान हो गया यह मैं नहीं मानता।

मथुरा, टंकारा, अजमेर हमारे लिये स्मरणीय स्थान हैं पूजा स्थल नहीं। और इन से भी अधिक स्मरणीय वह स्थान हैं जहां पर ऋषि दयानन्द के मिशन को लेकर परवानों ने बलिदान दिया। मै वहां दो चार जैसे स्थानों पर गया मन में घटनाओं का स्मरण कर के उत्साह प्राप्त हुआ। जो नेता टंकारा आदि स्थानों पर सुन्दर कार्य कर रहे हैं वह सदैव याद रखें कि वह जनता का धन लेकर उन स्थानों को दयानन्द के मिशन से भी ऊंचा नहीं कर सकते वह केवल साधन मात्र ही रहें यही उचित है तथा जो आर्य समाजी उन के लिये धन न दे उस को ऋषि दयानन्द के मिशन पर श्रद्धा नहीं ऐसा कह कर नीचा न करे जिन स्थानों पर किये जा रहे कार्य अति सुन्दर तथा प्रत्येक आर्य समाजी को धन देना चाहिये पर थोड़े अथवा बहुत धन की प्राप्ति आर्य समाजियों की श्रद्धा तथा ऋषि मिशन के लिये तड़प का मापदंड नहीं हो सकती अगर ऐसा समझ जाये तो भूल है इसी प्रकार से कई भाई दयानन्द संस्थाओं अथवा आर्य समाजों के लिये धन न मिलने पर आर्य समाजियों के प्रेम तथा श्रद्धा को कोसते हैं वह यह नहीं जानते कि दान का मिलना अथवा न मिलना सुन्दर कार्य तथा कार्यकर्ता की लगन पर निर्भर होता है अच्छे कार्य के लिये कौन धन नहीं देता इसका प्रमाण यह है कि देश का दुःख कष्ट विपदा तथा क्लेश मिटाने के लिये जब भी आर्यसमाज ने कोई पग (आन्दोलन आदि) उठाया तो धन की न्यूनता के कारण कभी गाड़ी रुकी नहीं। जनता तो यह देख रही है कि आर्य समाजी कार्य कितना सुन्दर कर रहे हैं हमारा कार्य ही जनता के विश्वास का मापदंड है। संसार यह देखना चाहता है कि क्या आर्यसमाजी लोग कहते ही हैं या करते भी हैं।

यही बात दयानन्द यूनीवर्सिटी के बारे में चल रही है मैंने कई लेख पिछले दो चार वर्षों में पढ़े हैं मुझे तो समझ भी नहीं आ रही कि यह क्या है। सब लेखों में भिन्न भिन्न प्रकार के विचार रखे गये हैं। अगर तो इस यूनीवर्सिटी में वेदों पर ऋषि शैली के आधार अनुसन्धान होना है तथा संस्कृत अनिवार्य होनी है तो कुछ समझ में आता है अगर केवल परीक्षाओं को लेने के लिये दयानंद का नाम चाहिये तो मैं पूछता हूं कि ऐसी संस्थायें तो अब भी बहुत हैं जो दयानन्द के नाम पर हैं तथा केवल परीक्षाओं का कार्य अति सुन्दर रीति से कर रही हैं। एक और लड़खड़ाती हुई संस्था से कितना लाभ और हो जायेगा। आज आर्य संस्थाएं कह रही है कि चलाने को आर्य समाजी कार्यकर्ता नहीं मिल रहे और दयानन्द मिशन के मिशनरी कह रहे हैं कि आर्य संस्थायें उनको अपनाने को तैयार नहीं। कितनी उलझन पड़ गई है कोई नेता उठकर ऐसी स्थिति को ठीक क्यों न कर दे।

भावुकता उचित है पर एक सीमा तक योग्यता इसी बात में है कि वेद पर अनुसंधान की मांग को पूरा किया जावे। परीक्षाओं का कार्य करने को दूसरी यूनीवर्सिटीयां बहुत हैं और क्या हम केवल भारत को दयानन्द यूनीवर्सिटी बनाना चाहते हैं अथवा विश्व-व्यापी तो फिर उसके लिये हम क्या मुंह लेकर आगे बढ़ेंगे अगर हम अनुसंधान को छोड़ कर कोई भी दूसरी बात पकड़ेंगे। अगर केवल भारत के लिये दयानन्द

(शेष पृष्ठ ६ पर)

आर्य समाज (अनारकली) मन्दिर मार्ग नई दिल्ली, के भव्य भवन का उद्घटन समारोह

श्री दरबारीलालजी एम०ए० उपमंत्री आर्य समाज अनारकली देहली

****

१९ अप्रैल, १९६४, आर्य समाज का महत्व पूर्ण दिन है। आर्यसमाज के कर्णधार तथा कर्मठ सेनानी पूज्यपाद महात्मा हंसराज जी की जन्म शताब्दि भी इसी दिन ही थी और मन्दिर मार्ग आर्य समाज ने उस दिन की महत्ता को अधिक बढ़ाने तथा मन्दिर की शोभा को अधिक विस्तार देने के लिए उस का उद्घाटन समारोह बड़ी धूम धाम से प्रातः ६ बजे से १२ बजे तक श्री जुगल किशोर जी बिरला प्रसिद्ध दानी द्वारा सम्पन्न करवाया सारा मन्दिर दिल्ली तथा दूरस्थ स्थानों से आये महानुभावों, मन्दिर के दानियों, स्कूलों तथा कालेजों के सहस्त्र अध्यापकों तथा छात्रों की चहल-पहल से परिपूर्ण था। कई स्कूलों से बैंड से सुसज्जित विद्यार्थियों की टुकड़िया अपने अध्यापकों की देख-रेख में समारोह को चार चांद लगा रही थीं। दिल्ली जैसे विशाल नगर में यह एक विलक्षण उत्सव था जिसकी चर्चा हर नर नारी की जिह्वा पर थी और दिल्ली नगर की प्रायः सभी छोटी बड़ी आर्य समाजें यहीं विराजमान थीं, मन्दिर मार्ग अपनी महत्ता को आज दर्शाने में वस्तुतः अग्रसर था। इस मार्ग पर आज तक इतना समारोह पूर्व कभी नहीं दीख पड़ा। प्रातः६बजे से हवन-यज्ञ प्रारम्भ हो कर सुरीले संगीत से १०बजे तक चलता रहा और फिर उस दिन के अध्यक्ष श्री दानवीर बिरला जी का स्वागत श्रीयुत आनन्द स्वामी जी सरस्वती, डा० गोकुलजी नारंग, डा० मेहरचन्द जी महाजन, श्री सूर्यभानु जी उप-कुलपति, श्री गणपतराय जी तलवाड़, आदि प्रसिद्ध नेताओं द्वारा समाज के सुसज्जित द्वार पर हुआ और एक विशाल एवं विस्तृत जलूस के साथ बिरला जी मन्च पर पधारे। यद्यपि वयोवृद्ध दानवीर बिरला जी उस दिन कुछ अस्वस्थ थे, परन्तु उनका साहस, समाज के प्रति प्रेम हिन्दू जाति के साथ अगाध श्रद्धा तथा अपने आध्यात्मिक विचारों में अटूटता देखने और सुनने को ही बनती थी। दयानन्द माडल स्कूल नई दिल्ली की छात्राओं ने वेद-मंत्रों का शुद्ध उच्चारण किया और उसके पश्चात् पूज्यपाद डा० मेहर चन्द जी ने बिरला जी का शुभ स्वागत करते हुए, आर्यसमाज के मन्दिर के विषय मे कुछ विवरण दिया। यह मन्दिर अपना लाहौर अनारकली का एक पुरातन इतिहास लिए आज मन्दिर मार्ग पर शोभायमान है जिस पर लगभग चार लाख तक धन राशि व्यय हो चुकी है। सारी दिल्ली में यह एक बहुत बड़ा एवं अद्वितीय मन्दिर है जिसका हाल काफी अधिक विशाल तथा अति सुन्दर है। इसके साथ ही १५, २० कमरे हैं, जिनमें बाहर से आये हुए यात्री, योगी, तथा अन्य धार्मिक लोग प्रायः ठहरते हैं, और मन्दिर की शोभा को बढ़ाते हैं यह जानकर अत्यन्त हर्ष होगा कि श्री आनन्द स्वामी जी सरस्वती जब दिल्ली में आते हैं तो यहां ही ठहरते हैं, परन्तु एक बात जो इस विशाल धार्मिक भवन को बनाने में बतानी आवश्यक है वह है, इस में योगदान। हमारे प्रसिद्ध नेता, भारत सेनानी, हिन्दू धर्म के अग्रणी, तथा डी० ए० वी० संस्थाओं के कर्णाधार डा० मेहरचंद जी महाजन की निःस्वार्थ सेवाओं तथा दानी महोदयसे याचना का ही परिणाम था कि आज इस विशाल भवन का उद्घाटन हो पाया है। डा० महाजन जी ने अपनी शक्ति एवं अटूट श्रद्धा से इतना धन एकत्रित किया कि समाज का यह अद्भुत ढांचा आज खड़ा महर्षि दयानन्द की पवित्रात्मा तथा महात्मा हंसराज जी के अटूट प्रेम के गीत गा रहा है। नया सुनहरी कलश ओ३म की ध्वजा से आकाश से बातें कर रहा है और स्वर्ग में बैठी श्री स्वामी दयानन्द जी की शुद्ध आत्मा इसे देखकर शीतलता को ग्रहण किये है। डा० महाजन जी के अतिरिक्त हमारे नायक श्रीयुत सूर्यभानु जी, डा० गोवर्धनलाल दत्त, श्री स्वर्गीय भगवानदास जी पुरी की सेवाएं भी इस भव्य भवन के निर्माण में कुछ न्यून नहीं हैं। श्री अनन्तराम जी कोहली भी इस मन्दिर की एक जान थे। इसी प्रकार अनेक महोदय जिन्होंने इस योगदान मे भाग लिया हमारी श्रद्धा के पात्र हैं।

डा० महाजन जी के मन्दिर सम्बन्धी विवरण के पश्चात मन्दिर का उद्घाटन मधुर संगीत तथा वेद मन्त्रों की ध्वनि से सम्पन्न हुआ। श्री बिरला जी उस समय अत्यन्त हर्षित दीख पड़ रहे थे और साथ ही डा० महाजन तथा श्री सूर्यभानु व अन्य आर्यसमाज के कार्यकर्ता अपनी विशेष रुचि से इस पवित्र समय में गद्‌गद् हो रहे थे। हमारे आर्यसमाज के प्रमुख कार्यकर्ता जिनकी अनथक सेवाओं से यह आर्यसमाज खड़ा हुआ है, श्री दयाराम जी शास्त्री, त्याग मूर्ति तथा हिन्दी संस्कृत के विद्वान, वेद मन्त्रों के पाठी अपनी एक विशेष छवि लिए समारोह को अग्र करने में व्यस्त थे।

इस समारोह का एक और महत्वपूर्ण अंश था, वह था अशेष वितरण, इसी बीच में २०० दर्शकों तथा स्कूलों कालिजों आये विद्यार्थियों को बूंदी लिफाफे बांटे गये। यह मिष्ठान आर्यसमाज की ओर से एक भेंट थी जो महात्मा हंसराज जी जन्म दिवस तथा उद्घाटन समारोह की शोभा को बढ़ाये थी।

तत्पश्चात् महात्मा हंसराज जी को श्रद्धांजलियां अर्पित की गईं। सर्वप्रथम महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती ने महात्मा जी से उनके सम्पर्क की कुछ झांकियां बताईं और फिर इसी प्रकार श्री जीवानचन्द जी शर्मा, संसद सदस्य, श्री गोकुलचन्द जी नारंग, तथा लाला सूर्यभानु जी उप-कुलपति ने अपनी अपनी श्रद्धा के फूल चढ़ाये और महात्मा जी का अनथक कार्य, समाज के प्रति अगाध श्रद्धा, निर्धनों से दया, तथा निस्वार्थ सेवाओं पर प्रकाश डालते हुए अपने मनोहर व्याख्यान दिये। श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी का व्याख्यान जहां उपदेशात्मक था, तो लाला सूर्यभानु जी का मनोहर व्याख्यान उपदेशात्मक देने के साथ साथ शिक्षा प्रद भी था। श्री शर्मा जी ने अपनी आत्म कथा सुना कर महात्मा जी के प्रेम की महत्ता को बढ़ाया और यह बताया कि किस प्रकार वह निर्धन विद्यार्थियों को सहायता देकर या दिलवा कर ऊंचा उठाना चाहते थे।

श्री बिरला जी ने भी अपने व्याख्यान में हिन्दू धर्म के प्रति हमारा कर्तव्य तथा उस पर आचरण की ओर जनता का ध्यान दिलाया और यह चेतावना दी कि हम क्या थे और किधर जा रहे

(शेष पृष्ठ ६ पर)

आर्य समाज अनारकली मंदिर मार्ग नई दिल्ली

(पृष्ठ ५ का शेष)

। बिरला जी का भाषण वस्तुतः उल्लेखनीय है और उपदेशात्मक एवं आदेशात्मक था।

समारोह की कार्यवाही कुछ मनोहर भजनों से १२ बजे शान्ति पाठ के साथ समाप्त हुई और तत्पश्चात लोगों ने दयानन्द माडल स्कूल तथा आर्य समाज के भवन को जी खोल कर देखा।

हां एक अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा उल्लेखनीय घोषणा जो माननीय डा० मेहरचन्द जी महाजन ने की, वह है, कि श्रीयुत बिरला जी ने अपनी दानवीरता से परिप्लावित हो कर ४०,००० रु० का दान दयानन्द माडल स्कूल के लिए, १०,००० रु० आर्य समाज के लिए तथा ५००० रु० का वाटर कूलर आर्य समाज के प्रयोग के लिए देने की शुभ घोषणा की जिस से सारा मन्डप तालियों से गूंज उठा और बिरला जी इस महान् कृपालुता से कृत कृत्य हुए। बिरलाजी वस्तुतः महान हैं और उन का धन्यवाद करने के लिए शब्दों का सदैव अभाव है।

आर्य समाज का निर्माण कार्य अभी समाप्त नहीं हुआ और प्रभु कृपा से और तीव्रता से चलेगा अभी भवन का कुछ भाग ऐसा है जिसे बनाने में लाखों रुपयों की आवश्यकता है। औषधालय के कार्य को और अग्रसर करना है। सेवासमिति, तथा अंग्रेजी, भाषणों के आयोजन को भी अभी गतिविधि देने की जरूरत है। अंग्रेजी भाषणों को प्रारम्भ करना हमारा अगला पग है। जिस की घोषणा शीघ्र ही की होने वाली है। इस के लिए श्रद्धेय डा० महाजन जी की कृपा से १०० नव-निर्मित कुर्सियां बन कर मन्दिर के हाल में आ गई हैं।

हम सब कार्य-कर्ताओं तथा दानी महोदयों का यहां वर्णन करते हुए धन्यवाद तो नहीं कर सकते, अपितु कुछ एक का उल्लेख करना हमारा धर्म एवं परम कर्तव्य है। हमारे मान्य, प्रधान मन्त्री श्री दयाराम जी शास्त्री वस्तुतः त्याग की साकार मूर्ति हैं, और अपने आपकी आहुति देकर ही उन्होंने अपने परिवार की भी परवाह न करते हुए समाज की सेवा की है। वह महान् हैं और उनकी सेवाओं से हमें लाभान्वित होना चाहिए। हमारे सहयोगी श्री सोमनाथ जी गुप्ता श्री पी. सी. महता, श्री मुन्शीराम सचदेवा, श्री दत्ता जी, बृजलाल सोनी तथा श्री महल जी यह सारा मन्त्रीमण्डल इस सारे प्रोग्राम को सफल बनाने में दिन रात तत्पर रहते हैं। हमारे प्रसिद्ध नेता श्री शान्ति नारायण जी, श्री आर. एम. चोपड़ा व प्रि० हरिश्चन्द्र जी, श्री गिरधारी लाल जी, व स्थानीय स्कूलों के अन्य प्रिंसिपल तथा अध्यापक गण हमारे धन्यवाद के पात्र हैं, और उनके सहयोग से ही यह शानदार समारोह हो पाया है।

संसार में कई लोग ऐसे होते हैं, जो गुप्त रूप से अपने सहयोग तथा दान से ऐसी संस्थाओं को बढ़ते फूलते देख खुशी महसूस करते हैं। हमारे प्रसिद्ध सहयोगी महोदय, रायबहादुर डा. गणेशदास जी कपूर, श्री शिवलाल बर्मा, श्री लालचन्द खन्ना, श्री पन्नालाल सूद, श्री सेवाराम कपूर श्री टी आर हांडा, श्री गणपतराय तलवाड़, श्री मुल्खराज जी भल्ला, श्री अमरनाथ जी पुरी, लाला बोधराज जी, श्रीमती सुशीला दूबे, श्री वेदप्रकाश जी कोहली, श्री पुरुषोत्तमलाल जी वानप्रस्थी, श्री रणवीर जी, तथा अन्य कई कार्य-कर्ताओं जिन के हम समाज की ओर से अत्यन्त आभारी हैं।

इस योगदान में भाग लेने वाली महान विभूतियों का भी हम आभार प्रदर्शित करते हैं, और दानी महोदयों की सूची अगले अंक में दी जा रही है।

फिलास्फर की प्यारी देन

(पृष्ठ ३ का शेष)

सेवा में नेता बन कर सेवा की है। ८४ वर्ष के इस नेता के नेत्रों के सामने समाज के कई युग आये हैं। अनेक चित्र देखे हैं। सुनी बातों का लिखना और किन्तु अनुभव की बातों का लिखना सजीव हो जाता है। आप की लिखी पुस्तक 'महात्मा हंसराज' सचमुच बड़ी सुन्दर जीवनी है। अपने में आर्य समाज का सजीव इतिहास का चित्रण भी है। यह पुस्तक तो हजारों में नहीं लाखों में छपनी चाहिए। इतने बड़े महान् नेता का जीवन हो और जिस का लेखक भी समाज का ही नहीं अपितु भारत का ऐसा महान दार्शनिक हो, उस की पुस्तक लाखों की संख्या में प्रकाशित होवे। कोई ऐसा न रहे जिस के हाथों यह पुस्तक न पहुंचे। स्कूलों, संस्थाओं के बच्चे २ के हाथ यह पहुंचा दी जाये। हम तो यह कहेंगे कि यह पुस्तक अंग्रेजी में भी प्रकाशित होनी चाहिए। इंगलिश पढ़ी जनता तक भी यह पहुंचे। हां एक बात और भी कहेंगे कि अगली बार ऊपर का चित्र और अधिक सुन्दर रंगीन हो जावे तो अधिक अच्छा है। हम मान्य प्रिंसिपल जी को इस अत्यन्त सुन्दर पुस्तक पर हार्दिक बधाई देते हैं।

—त्रिलोक चन्द्र

आर्य समाज तथा स्थान पवित्रता

(पृष्ठ ४ का शेष)

यूनीवर्सिटी बना रहे हैं तो क्या लाभ होगा। आर्यसमाज भारत में बन्द रहना चाहे तो दूसरी बात है।

आर्य समाज में स्थान पवित्रता की भावना न ही सीधे तथा न ही उलटे मार्ग से लाने का यत्न करना चाहिये। व्यक्ति वाद तथा स्थान पवित्रता का भाव आर्य-समाज के लिये घातक है ऐसे विचारों को दूर रखो इसी में कल्याण है। हमारा कार्य हमारे मन्तव्यों के आधार पर होना ही कल्याण का साधन है आर्यसमाज जहां भी अपने पग से विचला वहीं "आप भी डूबे ब्राह्मण यजमान भी डूबे।"

आर्य प्रादेशिक सभा का वेद प्रचार कार्य

आर्य व्यायामशाला सोनीपत का उत्सव २४ से २६ अप्रैल को सम्पन्न हुआ। १६ से खुशीराम शर्मा की कथा और श्री मदन-मोहन जी, हजारीलाल जी के भजन। उत्सव पर श्री पं० ओम्प्रकाश जी, श्री प्रो० रामविचार जी, श्री दुर्गासिंह जी, श्री चन्द्रसेन जी सभा की ओर से पधारेंगे।

आर्य अनाथालय भिवानी का उत्सव १ से ३ मई को समारोह से सम्पन्न हो रहा है। २७ अप्रैल से श्री पं० त्रिलोकचन्द्र जी, श्री राजपाल जी, श्री मदन मोहन जी पधार रहे हैं।

आर्य समाज अलावलपुर का उत्सव १ से ३ मई को सम्पन्न हो रहा है। २८ अप्रैल से कथा के लिये श्री पं० चन्द्रसेन जी, श्री मेलाराम जी पधार रहे हैं। उत्सव पर श्री पं० ओम्प्रकाश जी, श्री हजारीलाल जी, श्री दुर्गासिंह जी सभा की ओर से पधार रहे हैं।

आर्य समाज पलवल का उत्सव ८ से १० मई को समारोह से सम्पन्न हो रहा है। ४ मई से श्री पं० ओम्प्रकाश जी कथा करेंगे। और उपसभा दिल्ली के महानुभाव पधारेंगे।

आर्य समाज न्यू रेलवे कालोनी जालन्धर का उत्सव ८ से १० मई को सम्पन्न हो रहा है। श्री पं० त्रिलोकचन्द्र जी, श्री पं० चन्द्रसेन जी, श्री राजपाल जी, श्री मेलाराम जी, श्री मदनमोहन जी, श्री हजारीलाल जी पधार रहे हैं।

आर्यसमाज प्रेम नगर करनाल का उत्सव ५ से ७ जून को सम्पन्न हो रहा है।

"महात्मा हंसराज"

(प्रणेता—विद्यासागर शर्मा, दयानन्द मठ, दीनानगर)

मिलिन्द पाद वृत्तम्—

धर्म प्रेमी हंसराज श्री, धर्म की पतवार थे।
धर्म ध्यानी धर्मराज श्री, धर्म के सुविचार थे॥
धर्म-उज्ज्वल, मोक्ष-दायक धर्म के सुविचार थे।
धर्म-पथ पे, दिव्य जीवन, वेद-पथ अनुसार थे।
जय विभु श्री, वीर-वैदिक हंसराज।
जयति जय श्री, वीर-वैदिक हंसराज॥

मालिनी वृत्तम्—

बनकर अनुयायी, श्री दयानन्द जी के।
समुचित पद-चिन्हों, पे सुविद्या-प्रचारी॥
उदितकर सु डी०ए०, वी० सुविद्यालयों को।
दलित-जन सुकल्या, गार्थ शिक्षा-प्रसारी॥

द्रुतविलम्बित वृत्तम्—

विजय-ओ३म्-ध्वजा धर हाथ में।
विमल-वेद-विचार प्रसार ने॥
कर विपक्षक क्रिश्चन सामना।
रच दिए गुरु-आलय आपने॥

भुजङ्ग प्रयात वृत्तम्—

दयानन्द का कार्य पूरा कराने।
दबी छात्र की भावना को जगाया॥
दयानन्द-वार्ता सभी को बता के।
सुना-वेद-वाणी सुधा को पिलाया॥

शार्दूल विक्रीत वृत्तम्—

(१)

दाने जीवन-दान आर्य गण को, सद्धर्म सेवी बनें।
नेता आप विशेष आर्य गण के सद्देश्य त्यागी बनें॥
देवे आ उपदेश छात्र-गण को, कृतकृत्य होते सभी।
दानिन्! जीवन-मार्ग शुद्ध लखके, आश्चर्य होते सभी॥

(२)

नेता के पद-चिह्न पे हम चलें, औ कार्य पूरा करें।
देवें ईश्वर शक्ति आर्यगण को, सन्मार्गगामी बनें॥
ध्याते हों वेद-धर्म आर्यगण के, सत्कार्य पूरा करें।
माने बात विशुद्ध "हंस" यति की कर्तव्य गामी बनें॥

आर्यसमाज अशोक कालोनी करनाल का उत्सव २६ से ३१ मई को सम्पन्न हो रहा है।

आर्यसमाज बुज १६ से २३ अप्रैल। आर्यसमाज इन्द्री २७ से २९ अप्रैल। आर्यसमाज रामसरन माजरा १ से ३ मई। आर्यसमाज अलाहर, ६ से ११ मई। आर्यसमाज सुमरी १२ से १४ मई। आर्य समाज भभाड़ी १५ से १७ मई। आर्यसमाज भेणी खुर्द १८ से २० मई। सुल्तानपुर २१ से २३ मई। बिंजापुर २४ से २७ मई। आर्यसमाज मिर्जापुर २६ से ३१ मई। मोदीपुर ५ से ७ जून ये सब उत्सव श्री पं. अमरसिंह जी की अध्यक्षता में सम्पन्न हो रहे हैं।

आर्यसमाज (का.वि.) बाबा में मई मासके अन्त में कथा सम्पन्न हो रही है। —खुशीराम शर्मा

वेदप्रचार अधिष्ठाता

श्रीमती नागेसरु [illegible] स्मृति में पुण्य दान

(श्रीमती नागेसरु जी)

मंडी हिमाचल के भगत ईश्वरदासजी आर्य समाज के दीवाने सज्जन हैं। समाज के काम में सदा आगे रहते हैं। गत दिनों श्री भगत जी ने अपनी माननीया बहिन श्री नागेसरु जी की स्मृति में आर्य प्रादेशिक सभा को स्वर्ण के रूप में वेद प्रचार के लिए विशेष दान देकर आदर्श उपस्थित किया था। भगत जी की बहिन नागेसरु जी सचमुच ही प्रभुनिष्ठा में बढ़ी-चढ़ी थीं। धर्मभाव कूट २ कर भरा...जीवन में सेवा तथा भक्ति ये दो गुण तो उनके विशेष विद्यमान थे। जीवन नियमित, सरल...ऐसी साध्वी बहिन पाकर भगत जी का जीवन भी भाग्यशाली बना। प्रभु करें कि ऐसा धर्मभाव विचार प्रेरणा तथा वेदनिष्ठा अन्यों में भी आ सके। प्रभु भगत जी को स्वस्थ रखें।

—सं.

दयानन्द-वचनामृत

'मुख और जिह्वा के व्यापार के बिना ही, मन में विविध व्यवहारों का विचार और शब्दोच्चारण होता रहता है। कानों को अंगलियों से बन्द करके सुनो कि बिना मुख, जीभ, तालु आदि अंग हिलाये कैसे २ शब्द भीतर हो रहे हैं। जैसे प्रचण्ड अग्निकुण्ड में उत्तप्त किया लोहा भी लाल-अग्निरूप हो जाता है, वैसे ही जिस अवस्था में उपासक अपनी देहादि के अध्यास को भूल जाता है और परमात्मा के ज्ञान से जगमगा उठता है और उसके प्रकाश से स्वरूप से, आनन्द से, ज्ञान से अपनी आत्मा को परिपूर्ण कर लेता है, उस शान्त अवस्था को समाधि कहते हैं।'

(स्वामी सत्यानन्द जी)

टैली ग्राम से

पं. रुद्रदत्त जी शर्मा प्रधान आर्य समाज अटमगसर अमृतसर भारत सरकार को सावधान करते हैं कि शेख अब्दुला की रिहाई अक्षम्य तथा ऐतिहासिक भूल है। देश के लिए भारी खतरा सिद्ध हो चुकी है। इस लिए उस पर कड़ी निगरानी और जबान बंदी अनिवार्य है। अब्दुला-नेहरु भेंट केवल धोखे की टट्टी है। भारत सरकार सावधान हो कर कदम उठाए तथा अब्दुलाकी साथियों सहित निस्संकोच शीघ्र गिरफ्तारी अति आवश्यक है।

आर्य समाज साम्बा (जम्मू)

पठान कोट से जम्मू जाते हुए मार्ग में साम्बा आता है। बड़ा भारी बसों का केन्द्र है, मण्डी है। दाईं ओर पक्की सड़क पर दस बारह हजार जनसंख्या का बड़ा सुन्दर नगर है। जलवायु बड़ा उत्तम है। यहां आर्य समाज मन्दिर बड़ा सुन्दर बना हुआ है। किन्तु २०-वर्षों से समाज का काम सर्वथा बन्द था न कभी जल्सा और न ही कथा प्रचार होता था। हमें स्वयं भी पता न था कि साम्बा में समाज है भी या नहीं।

बहुत २ बधाई के पात्र हैं यहां के श्री ला. रूप चन्द जी तथा उन का परिवार जिन्हों ने समाज को पुनः जागृत करने में अपनी सारी शक्ति लगा कर सज्जनों को प्रेरणा दी। नगर के प्रतिष्ठित श्री ला. राम लाल जी सराफ, श्री दुर्गादास जी श्री ओम प्रकाश गुप्ता, पं. नानक चन्द जी, श्री बरकत राम जी, श्री परमानन्द जी श्री बनारसी दास जी आदि कर्मठ सज्जनों ने सहयोग दिया। इतने वर्षों के बाद समाज का पहिला महोत्सव बड़े ही कमाल का हुआ। जनता को समाज के वेद प्रचार से कितना हित व सच्चा प्रेम है, यह उस की भारी भीड़ से हो पता लगता था नर नारी बच्चे बूढ़े सारा नगर ही उमड़ आया। मन्त्री श्री वेद प्रकाश जी वर्मा, प्रधान श्री दुर्गादास जी आदि नवयुवकों के उत्साह को देखकर चित्त बड़ा ही प्रसन्न होता था। सारे ही बधाई के पात्र हैं। उत्सव में आर्यप्रादेशिक सभा की ओर से पं. त्रिलोकचन्दजी शास्त्री पं. जगत-राम जी बस्ताराम जी की अम्बाला मण्डली, ठा. दुर्गासिंह जी तूफान तथा जम्मू से प्रो. सहदेव जो चक्रवर्ती, श्री मोहनलाल जी मोतियाल श्री मा० छज्जूराम जी पधारे थे। तीन-चार दिन खूब ही धूम रही परिवारों की श्रद्धा को देखकर प्रसन्नता हुई। हम श्री रूपचन्द जी को विशेष बधाई देते हैं सारे समाज के प्रेमी सज्जन बधाई के पात्र हैं। सभा को वेदप्रचार में १२५)- रु. भेंट किया। श्री रामलाल जी सराफ ने आर्यसमाज साम्बा को सौ रुपये दान दिया।

जम्मू समाजों का महोत्सव

जम्मू नगर की आर्यसमाजों का सम्मिलित वार्षिक महोत्सव बड़े ही समारोह से मनाया गया। इस में आर्य प्रादेशिक सभा की ओर से पं० त्रिलोक चन्द्र शास्त्री, ठा० दुर्गासिंह तूफान, पं० जगतराम बस्तीराम जी की मंडली, आर्य प्रतिनिधि सभा से पं० नन्दलाल जी मिशनरी, पं० [illegible] जी पधारे। गाजियाबाद से प्रो० रत्न सिंह जी एम० ए०, [illegible] पं० कृष्णदत्त जी लुधियाना से प्रो० सहदेव जी चक्रवर्ती एम० ए० पधारे। बड़ा भारी समारोह था। श्री शामलाल जी सराफ M. P. की प्रधानता में राष्ट्र रक्षा सम्मेलन किया गया। श्री पं० हरिश्चन्द्र जी शास्त्री आर्यसमाज पुरानी मंडी जम्मू, पं० जोगिन्द्रपाल जी शास्त्री ने भी विचार रखे। उत्सव हर प्रकार से सफल रहा। सब को बधाई।

भूल सुधार

आर्य जगत के महात्मा हंसराज विशेषांक पृष्ठ ३० पर वेदकौर आर्य गर्ल्ज हाईस्कूल की दसवीं श्रेणी की छात्राओं ने आर्य विद्या सभा की धर्म शिक्षा के दस इनाम जीते हैं के स्थान पर पहले तीन इनाम इस स्कूल ने जीते हैं पाठक नोट कर लें।

—व्यवस्थापक

मुद्रक व प्रकाशक श्री सोमराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टैलीफोन न० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे | वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक १९) २८ वैशाख २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०— १० मई १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तयः

त्वा शूर नोनुमः

हे शक्ति के भण्डार ! परमात्मन् ! हम आपको नमस्कार करते हैं, श्रद्धा से आपको ही प्रणाम करते हैं। आप ही तो नमस्कार के योग्य हैं। कोई किसी को नमस्कार करे पर हम तो सदा आपको ही नमस्कार करते हैं।

त्वामिद्धि हवामहे

परमेश्वर ! हम आपको ही हवामहे-स्मरण करते हैं, पुकारते हैं। हम भीड़ के समय आपको हां बुलाते हैं। आपके सिवाय और हमारा है भी कौन, जिसको हम अपना पिता माता मानकर पुकारते रहें। आप हमारे और हम आपके हैं।

त्वां वृत्रेषु इन्द्र

हे इन्द्र ! हम वृत्रों में-विघ्नों आपदाओं में आपको ही पुकारते हैं। जब २ हमारे जीवन में कष्ट आता है, हम दुःखी हो जाते हैं, उस समय आपका ही सहारा आश्रय होता है। आप ही दुःख नाशक सुखद हैं।

अ थ र्व वे द

वे दा मृ त

ओम् चित्रं देवानामुद्गादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः आप्राद्यावापृथिवी अन्तरिक्षं सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च स्वाहा ॥ यजु: अ. ७ मन्त्र ४२

अर्थ :—वह परमेश्वर (चित्रं) अद्वितीय है (देवा नाम) विद्वानों के लिए अनुपम तथा प्रकाशमय है, (उदगात्) हमारे हृदय मे यथा वत् प्रकाशित रहें। (अनीकम) बलों का भण्डारे हैं, वही (चक्षुः) मार्गप्रदर्शक हैं, (मित्रस्य) उस सब के मित्र हितकारी (वरुणस्य) सब का वरुण है (अग्नेः) तेजोमय प्रभु का स्मरण करें। हे परमेश्वर ! (आप्रा) आप ने ये सारे (द्यावापृथिवी) द्युलोक और पृथिवी लोक (अन्तरिक्षम्) यह अन्तरिक्ष लोक धारण कर रखे हैं तथा वही प्रभु (सूर्यः) प्रकाशमय हो कर (जगतः) इस सारे जगत् जानदार तथा (तस्थुषः) बेजान जड़ आदिकों का (आत्मा) नियामक बना हुआ है। ऐसा (स्वाहा) हम दिल से विश्वास पूर्वक मानते और कहते हैं।

भाव :—हे परमेश ! जितने भी इस विशाल ब्रह्माण्ड में जड़ या चेतन पदार्थ हैं, उन सब में आप अद्वितीय और अनुपम हैं आप जैसा और कोई भी नहीं है। आप सब के परम मित्र हो, वरणीय हो— कर्मानुसार फल प्रदान कर के सब का हित करते हो, सदा अग्निमय, तेजोमय और प्रकाशमय हो। ये सारे लोक पृथिवी लोक, अन्तरिक्ष तथा द्युलोक लोकान्तर जो हमें ज्ञात हैं या अज्ञात हैं, आप ने ही अपने नियम विधान में धारण कर रखे हैं। आप इन के कर्ता, धर्ता तथा संहर्ता हैं। यह जड़ और चेतन रूपी जितना भी दो प्रकार का स्थावर या जंगम जगत् है। जानदार तथा बिना प्राण का संसार है, इन दोनों के आप ही सूर्य और आत्मा बन रहे हो। सब के स्वामी आप ही तो हो। हम अपने अटल विश्वास से ऐसा जानते हैं। आप को ही विशाल विश्व का विश्वपति मानते हैं। सं.

ऋषि दर्शन

सर्वं परमेश्वराय

हे लोगो ! जीवन में जो भी प्रिय वस्तु है, उसे परमेश्वर के अर्पण कर दो। परोपकार में लगा दो। सब कुछ प्रजापति का है, उसी का दिया हुआ, उसी के निमित्त लगा दो। भोगों को त्यागभाव से ही भोगो।

वयं परमेश्वरस्य एव

हम सब उसी परमेश्वर की प्रजा हैं, उसी प्रजापति की सन्तान हैं। वही हमारा पिता है हम उसके अमृतपुत्र हैं। इस नाते जो कुछ भी हमारे पास है, हमें जीवन में प्राप्त है सब उसी की कृपा का प्रसाद है। यह सब उसी का है—कस्यस्विद् धनम्।

पुत्रवद्वर्तेमहि

प्रभो ! हम सारे आपके पुत्र ही तो हैं, आप हमारे पिता हैं। इसलिए हमारा कर्तव्य है कि हम पुत्रों के समान ही बर्ताव करें। आपके आदेश के अनुसार चलते रहें। आपके आज्ञाकारी बन कर हम सुपुत्र बनते जावें।

भा ष्य भू मि का

अधिष्ठाता—संतोषराज सभा मंत्री | सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

धार्मिक चर्चा—

जीवन की दिशाएं

लेखक—श्री पं० सत्यप्रिय जा शास्त्री सिद्धांत शिरोमणि:
प्राध्यापक:—दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार

****

मानव जीवन का ऐसा कोई क्षेत्र नहीं जो वेद के पथप्रदर्शन से अछूता रहा हो। क्या समष्टि जीवन तथा क्या वैयक्तिक जीवन। वेद ने मानव के हर पहलू पर प्रकाश डाला है। वेद के अनुसार मुख्य रूपेण छः दिशाएं होती हैं। ये दिशाएं केवलमात्र बाह्य भौतिक जगत को ही नहीं प्रत्युत मानव का समष्टि जीवन भी इन्हीं दिशाओं का संघात होता है। सर्वप्रथम प्राची दिशा है, जिसका अधिपति अग्नि है। मानव जीवन की उषावेला ब्रह्मचर्याश्रम की ही प्राची संज्ञा है, क्योंकि इस अवस्था में प्रकृष्टरूप से गमन होता है। शारीरिक बल, विद्या एवं सद्गुणादि के प्राप्त्यर्थ परम प्रयत्नशील होना पड़ता है, इसी से इस अवस्था को प्राची नाम से पुकारा जाता है। अग्नि नाम उत्साह, ज्ञान एवं वीर्यादि का है। इस अवस्था में यह प्रधान होते हैं। जो गुण जब प्रधान हो वह उस स्थिति का मानों अधिपति होता है। 'अग्निः कस्मादग्रणी भवति' इस यास्कमुनि के वचन से आगे बढ़ने की भावना का ब्रह्मचारी पर प्रबल प्रभाव होता है। उस से आगे बढ़ने पर दूसरी अवस्था दक्षिणा आती है। 'दक्षसमृद्धौ' से उत्पन्न शब्द दक्षिणा उस स्थिति का स्पष्ट परिचय दे रहा है। वह स्थिति गृहाश्रम है। एक से दो हो गये। प्रथम तो यही समृद्धि है। पुनश्च उस दूसरे साथी का ग्रहण करने से पूर्व नाना वस्तुओं का ... का अर्जन भी समृद्धि है। महर्षि [illegible]गल का एक सूत्र इस [illegible] को स्पष्ट बताता है। धी श्री स्त्राम्' प्रथम ज्ञान संग्रह करे, पुनः लक्ष्मी का संग्रह और पश्चात् पाणिग्रहण करे। आश्रम मर्यादानुसार जीवन के अन्य विभाग तो त्याग एवं तपः पूर्ण हैं। केवल एक गृहाश्रमी ही भोग एवं ऐश्वर्य का अधिकारी होता है। अतः इस का अधिपति इन्द्र अर्थात् अधिक से अधिक भौतिक ऐश्वर्य है। परन्तु ऐश्वर्य भोग तो लक्ष्य नहीं, अतः इस से आगे को दिशा है प्रतीची। अब उस ने प्रति नाम उल्टी गति करनी है। अर्थात् भोग के मार्ग को छोड़ उस से विपरीत त्याग पथ पर ही चलना है। इस लिये वानप्रस्थ समाज से विपरीत एकान्त जंगल में जा कर स्वाध्याय एवं तप द्वारा पुनः श्रेयमार्ग का वातावरण उत्पन्न करता है। वह वरुण नाम वरणीय भगवान् को ग्रहण करता है।

वरुण जो वह ठहरा, अतः तदाश्रित हो निवृत्ति मार्ग का वरण करता है। यह वरण करना ही पूर्व स्थिति से उसे विपरीत दशा में धकेलता है। जब उसका मन अनुकूल वातावरण से भर जाता है तो उसकी उदीची दिशा आती है। अब तक किसी न किसी रूप से समाज से सम्बन्धित था। परन्तु अब उन सबसे ऊपर उठता है। अर्थात् अपनी वस्तुओं का सर्वमेध कर, ऐषणात्रय को भी छोड़ देता है। यहां तक कि 'मत्तः सर्वभूतेभ्योऽभयमस्तु' का वचन दे 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना से भरा घूमता है। यही स्थिति ही सोम नाम से कही जाती है। वह सौम्यता, शान्ति एवं समता का अवतार सा बन जाता है। इस स्थिति में रहता हुआ जब प्रभु के निमन्त्रण-पत्र की पुकार को सुनता है तो घबराता नहीं है प्रत्युत ध्रुव अर्थात् स्थिर हो जाता है। उस समय वह इस अनित्य संसार के कण-कण में व्यापक (विष्णु) के अटल नियमों को नियामक के रूप में देखता है। इसीलिए सम्भवतः पौराणिक भाई आसन्न मृत्यु पुरुष को गीता का १८ वां अध्याय सुनाते हैं कि वह विष्णु के स्वरूप, को जानकर स्थिर वृत्ति हो सके। क्योंकि उनके मत से श्री कृष्ण जी विष्णु के अवतार जो हैं। परन्तु तथ्य यह है कि सत्कर्मी अन्तिम-काल में स्थिर वृत्ति हो जाते हैं। मृत्यु परान्त मोक्ष की स्थिति आती है। उस में सांसारिक सुख की अपेक्षा कोटि गुणा अधिक अलौकिक आनन्द को प्राप्त होना होता है। जीव की यह स्थिति ऊर्ध्वा है। अर्थात् अन्य साधारणों की अपेक्षा अत्यन्त उच्च स्थिति को प्राप्त होना। तभी वह परमपिता परमेश्वर के वास्तविक स्वरूप को जगत् धातृत्व एवं मुक्ति के धारक के रूप में देखता है। जब वह बृहस्पति अर्थात् बड़े से बड़े लोक एवं श्रेष्ठ से श्रेष्ठ पदार्थ मुक्ति को धारण किये परमेश्वर को साक्षात् देखता है तो उसके संसर्ग से वह भी मुक्त हो जाता है।

इस प्रकार ये शब्द जहां भौतिक दिशाओं के बोधक हैं वहां मानव के जीवन में आने वाली स्थितियों के भी ज्ञापक हैं। महाकाव्य वेद की यही अलौकिकता है कि वह एक शब्द से संसार को अनेक गतिविधियों का परिचय दे देता है। उसके भौतिक अर्थ से भी अध्यात्म मार्ग के रहस्य प्रकट होते हैं।

—

लोगों का जीवन

(श्री लालचन्द जी वेद स्वाध्यायी मंसूरी)

****

भावी भारत संतान चाहेगी यह सत् ज्ञान कि आधुनिक फैशनेबल बाबू लोगों की भारत में सृष्टि कब हुई कैसे हुई इस लोक में? बाबू लोगों को सृजन किया गौरांग महा प्रभु ने उसी की देखा देखी भारत के वे लोग प्रायः जिन्होंने अंग्रेजों के दफतरों में काम किया या अब भी अंग्रेजों के भारत से चले जाने के बाद भी, हिन्दी के गीत गाते, पर अपनी निजी व्यवहार सब, काम काज सब, आपस का पत्र व्यवहार तक सब अंग्रेजी ही में करते, अंग्रेजों का सा खानपान रहन सन करते गौरव समझते भारतीय होते भी अंग्रेजों की ही नकल करते नहीं लजाते, अधिक अंग्रेज बने रहने में गौरव मनाते और अपने बाल बच्चों को विशेषतः बालिकाओं को अंग्रेजी माध्यम वाले स्कूलों में शिक्षा दिलाते आत्म गौरव दिखाते हैं। घरों में अपने रहन सहन में नकल करते अंग्रेजों को धोती कुरता तक त्याग चुके, नाइट सूट पहन सोते सूर्य चढ़े तक सोते रहते उठते ही बैड टी चाहते हैं। फिर नासता करते, ये सब काम करते बिना शौच स्नान किए अथवा कोई २ लेटरीन पाजामा पहनते सुख पाते हैं टी अपनी अथवा काफी पिए जाते हैं। ये गौरांग महा प्रभु के भक्त जन उसे अपने प्रत्यक्ष प्रभु के चले जाने के बाद स्वतन्त्रता के पन्द्रह बरस बाद भी हिन्दी को न बढ़ने देने वाले भारतीय रंग के किन्तु ढंग सब अंग्रेजों के से ऐसे स्त्री पुरुष ये जिनकी संख्या बढ़ती ही जा रही है और जिनका तौर तरीका रहने का ढंग भारतीय नहीं रहा सन्ध्योपासना का नाम तक न जाने पर नाम अपना अभी तक हिन्दुओं जैसा

(शेष पृष्ठ ८ पर)

आर्यसमाज (अनारकली) मन्दिर मार्ग नई दिल्ली

दान शिला

—दानियों की सूची निम्न है—

****

१. सेठ मंगलदास वर्मा ४८९६६)
२. राय बहादुर तोशंराम १३५००)
३. महाराजा हरिसिंह जी १५००)
४. बिरला ब्रादर्ज १५०० जमा १५००)
५. मिलाप परिवार तथा माता मेला देवी जी ८००)
६. श्रीमती निक्की देवी माता श्री राम लाल मेहरा ५२५०)
७. श्री राज रत्न नान जी कालीदास महता ५०००)
८. ,, टी. आर. हान्डा ५४०९)
९. ,, डी. डी. पुरी ३०००)
१०. माता शुभ करी ३०००)
११. श्री बालमुकन्दसाह साहनी ५०००)
१२. ,, रामलाल हंस ५०००)
१३. मैसर्ज ईश्वरदास साहनी एण्ड सन्ज २५००)
श्री त्रिलोक नाथ जी २५००)
१४. राय बहादुर जोधामल कुठियाला २५००)
१५. मैसर्ज चूनीलाल शकरदास २५००)
श्री पी एन. वढेहरा २५००)
१६. ,, हरबन्सलाल मरवाह २१००)
१७. ,, मुकन्दलाल २१००)
१८. ,, भगवानदास पुरी २०७७)
१९. डा० बी एल. दत्ता उप-कुलपति २५००)
२०. श्री सूर्यभानु जी उप-कुलपति २०००)
२१. श्रीमती डाक्टर चन्द्र प्रभा २०००)
२२. ,, प्रेम ट्रस्ट २०००)
२३. राय बहादुर कर्मचन्द थापर २०००)
२४. सेठ कास मुटु षपिगराजन ओफ मदुरा १५०१)
२५. श्रीमती कृष्णा सेठी १५००)
२६. श्री देसराज वर्मा ट्रस्ट १५००)
२७. माता मेला देवी १२००)
२८. माता दुर्गादेवी १३००)
२९. डा० मेहरचन्द महाजन ११३०)
३०. श्री राजेश्वरी जी, श्री राजपाल एंड सन्ज १००१)
३१. श्री मदनमोहनलाल ११००)
३२. ,, किशनचन्द १०००)
३३. डा० गोकुलचन्द नारंग १०००)
३४. श्रीमती मेहरचन्द कौर १०००)
३५. श्री भगीरथदास १०००)
३६. ,, सीताराम गुजराल १०००)
३७ ,, मुल्कराज भल्ला ३०००)
३८ श्रीमती रत्नदेवी १०००)
३९. मोदी स्पिनिंग एंड वीविंग कम्पनी १०००)
४०. श्री हरिश्चन्द्र थापर १००१)
४१ ,, शांति नारायण ८८०)
४२. ,, आर एन चौपड़ा ८००)
४३. ,, देवराज नारंग ७५०)
४४ ,, हंसराज ७००)
४५ श्रीमती जमनादेवी कोहली ६००)
४६. राय बहादुर महाराज कृष्ण कपूर ७५१)
४७. श्री रामचन्द्र थापर ५२६ जमा ४७५)
४८. श्रीमती यशोधरा देवी ५२५)
४९. श्री हरीकृष्ण आहूजा ५०१)
५०. श्री धनपतराय बहल ५०१)
५१. श्री रनजीतराय नारंग ५०१)
५२. श्रीमती अग्निहोत्री ५००)
५३. श्री दुर्गादत्त अग्निहोत्री ५००)
५४. ,, दयाराम शास्त्री ५००)
५५ श्रीमती प्रकाशवती ५००)
५६ श्री दीवानचन्द ५००)
५७. ,, हरिमित्तल वोहरा ५००)
५८. न्यू बैंक आफ इन्डिया लिमिटेड ५००)
५९. राय बहादुर अमरनाथ पुरी ५००)
६०. श्री रौशनलाल ५००)
६१. ,, राय बहादुर मोहनलाल ५००)
६२. ,, देवराज कोछड़ ४१२)
६३. ,, ज्ञानचन्द ४०६)
६४. ,, नारायण दत्त धवन ४००)
६५. ,, पी एल सोनी ४००)
६६. माता दयावती एबरोल ३२५)
६७. श्रीमती डा० आईएन दास ३००)
६८. श्री टी आर हान्डा ३००)
६९. श्रीमती लीलावती बक्शी ३००
७०. जालन्धर मोटर ऐजेन्सी २५१)
७१. श्री एस. एल. वर्मा २५२)
७२. ग्लोब फाईनेंस कम्पनी २५०)
७३. राय बहादुर जैसाराम २५१)
७४. श्री बलराज वर्मानी २५०)
७५. ,, राम नारायण वर्मानी २५०)
७६. ,, सतीश रूप लाल २५०)
७७. ,, मोहनलाल २५०)
७८. ,, परमानन्द खन्ना २५०)
७९. ,, कृष्ण स्वरूप २३१)
८०. डा० मुनेन्द्र तलवार २०२)
८१, राय बहादुर डा० गणेशदास कपूर २२६)
८२ श्री ज्ञानचन्द्र आफ हरिन्द ट्रस्ट २०१)
८३. ,, केश्वदास भूटानी २०१)
८४ ,, सत्यपाल वर्मानी २००)
८५ ,, आर सी डुन २००)
८६ ,, रामजी दास १८१)
८७ ,, राजेन्द्र प्रकाश १७१) २००)
८८. ,, ज्ञानचनराय एडवोकेट १५८)
८९ ,, एम. सी बेरी १७०)
९०. ,, सोमनाथ एडवोकेट १५१)
९१. ,, एच. एन सब्बू जा १५१)
९२. श्री रामदास १५०)
९३. ,, रामसरण कपूर १३५)
९४. ,, सत्य प्रकाश गौड १३२)
९५ ,, बृजलाल चड्डा २०७ ५०)
९६. ,, दीनानाथ १२५)
९७. मैसर्ज धनपत दीवानचन्द वर्मानी १२५
९८. श्री मुरारीलाल मलक १२०)
९९. ,, अन्नवलाल कोहली ११०)
१०० श्री गणेशदास बहल १११)
१०१. ,, रणवीर, मिलाप १०१)
१०२. माता सुभद्रणी देवी १०१)
१०३. श्री मनोहरलाल तालिब ११२)
१०४. श्रीमती ध्यानो देवी १०१)
१०५. राय बहादुर देसराज १०१)
१०६. श्री अमरसिंह पुरी १००)
१०७. ,, उत्तमचन्द विजय कुमार १०१)
१०८. आर. एस. दीनानाथ १०१)
१०९. श्री दीवान चन्द १०१)
११०. ,, हरबन्स लाल १०१)
१११. ,, बी डी. नन्दा १००)
११२. श्रीमती मनोरमा देवी १०१)
११३. चौधरी राजेन्द्र सिंह १०१)
११४. श्री गिरधारीलाल १०१)
११५. ,, गनपतराय तलवार १०१)
११६. ,, बिशनदास १००)
११७. ,, जगदीश कुमार कपूर १००)
११८. ,, मनोहर लाल १००)
११९. ,, त्रिलोक चन्द १००)
१२० ,, दुर्गादत्त भन्डारी १५२)
१२१. ,, राजेन्द्र प्रकाश १०१)
१२२ राय बहादुर बालमुकन्द साहनी १००)
१२३. श्री निशालचन्द इन्ड ब्रादर्ज १००)
१२४ ,, हजारीलाल मारहवा १००)
१२५. ,, देवराज १०)
१२६. ,, के एम दावर एन्ड को. १०)
१२७ श्री लखनलाल १०१)
१२८. ,, दयाराम नन्दा १०१)
१२९ ,, रविन्द्रनाथ चाद १००)
१३० ,, राम अवतार १००)
१३१ ,, आर. एन. तुल्ली १००)
१३२ ,, रोशनलाल महरा १०१)
१३३ ,, सरदार चन्द कानटरक्टर १०१)
१३४. श्री बोधराज चोपड़ा १०१)
१३४. मैसर्ज हरिचन्द भक्तराम ११०)
१३६ मैसर्ज पिन्डी ज्युलरज़ १०१)
१३७ श्री विश्वर दास खुजर १०१)
१३८ ,, आर एन. गुप्ता १०१)
१३९ ,, रामनारायण पटवारी १००)
१४०. ,, सुमेरचन्द १०२)
१४१. ,, मती भाग देवी १०१)
१४२. ,, देवदत्त, रावलपिंडी १०१)
१४३. ,, हन्सराज कपूर १००)
१४४ ,; हवेलीराम कपूर १०१)
१४५ डा० तिलकराज अरोरा १००)
१४६ श्री एम के खोसला १००)
१४७ ,, ज्ञानचन्द चानना १०१)
१४८ ,, ताराचन्द खरबन्दा १०१)
१४९ माता जमनादेवी १००)
१५०. डा० जगदेवसिंह १०१)
१५१ श्री जलालुद्दीन १००)
१५२. ,, सत्यकौर १०)

लोगों का जीवन

(पृष्ठ २ का शेष)

ही रखे हुए पर जीवन व्यवहार में नकल ही करते रहते अंग्रेजों की, आम तौर पर दुकानदारों से बाबू जी, बीबी जी कहे जाते हैं। इनकी महिमा के विस्तार के लिये एक पुराण की रचना की अपेक्षा है, और इनका जीवन अन्य अनुकरण का ही प्रतीक जीवन की वासनाओं में इबे बहुत वासनाओं की दलदल में फसे, दिल के कोढ़े पर दाद से बने हुए आपस में साहब कहते, बाल-बच्चे इनके अंग्रेजी ढङ्ग से रहते साधारण जनता से रहते अलग-अलग अपने ही गौरव में मस्त साहब कहाना चाहते पर सक्षेप से दुकानदारों द्वारा बाबू जी कहते हैं। यद्यपि ये अपने आप को साहब कहाने में रुचि रखते हैं वे घरों में बालकों को बेबी कहते, बालक इनके इन्हें पापा मम्मी कहते अन्य जनों को इन बालक कहते "अ... में भोजन करते गौरव मनाते, सभी अनाचार में शौक करते, रिंक घर में जाते लोहे के जूतों में नाचते चोट खाते खुशी मनाते हैं। रमी खेलते मनोरंजन करते दिल बहलाने के लिये और "एवरी टाइम इज ... आर काफी टाइम"का महाजाप ... आपस में बैठ केवल अनर्गल बातचीत में समय बरबाद करते नहीं लजाते, अपितु अपने बड़प्पन में चूर रहते, जनता से दूर रहते, अपनी ... करते, नौकरों पर अत्याचार करते, कलुष वासनाओं में ही प्रसन्न रहते बाबू जी कहे जाते हैं। इस प्रकार ये लोग अंग्रेज तो बने नहीं पर भारतीय रहे नहीं, एक विचित्र ढंग की बनावटी जीवनचर्या करते देखे जाते हैं, सुख पाते हैं। यह बीमारी फैल रही बवा के रूप में, मस रही है जन-साधारण तक को, इस बीमारी से अधिकतर भारतीयता को, आर्यत्व को पहुंच रही है ठेस दिनों-दिन। ये बाबू लोग चाहे हों आर्यसमाजी, चाहे सनातनधर्मी, अपने रहन-सहन के बनावटी ढंग में मस्त रहते हुए जनता से अलग रहते, अभिमान में चूर थे, विचित्र ... अंग्रेजी मिली बोली के गौरव मिली समझ, दिनों-दिन अन्य अनुकरण करते नहीं थकते हैं।

एक विभूति

श्री शंकरलाल जी त्रेहन वर्तमान प्रधान आर्य समाज किला मुहल्ला जालन्धर

... समय से रुग्णावस्था में कष्ट भोग रहे हैं। ऐसी दशा में भी ... का प्रेम इतना अधिक है कि बीमार होने पर भी आर्यसमाज के सत्संगों में नियमानुसार उपस्थित होते हैं। कार्य करने की लग्न इतनी है कि ... के सारे कार्यों को भली प्रकार निरीक्षण करके विक्रमपुरा में नवीन निर्माणाधीन समाज मन्दिर में पहुंच कर वहां के कार्य मजदूरों की व्यवस्था, व्यय के बिलों की पड़ताल आदि का सारा कार्य करके पुनः अपने निवास स्थान लाजपत नगर में पहुंचते हैं आप काफी वृद्ध होते हुए भी आर्य समाज की लग्न के पक्के हैं। आपके निरन्तर पुरुषार्थ का यह फल है कि समाज का नवीन भवन लगभग तैयार हो चुका है। हमारी प्रभु से हार्दिक कामना है कि श्री शंकरलाल जी शीघ्र ही स्वस्थ होकर अपनी योजना के अनुसार बन रहे भवन निर्माण के कार्य को सुचारु रूप से सम्पूर्ण करा सकें।

सन्तोषराज कार्यकर्ता प्रधान

सत्यार्थ प्रकाश की परीक्षाएं

महर्षि दयानन्द जी के अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' की आर्य युवक परिषद दिल्ली सारे देश में परीक्षाएं आयोजित करता है इस वर्ष ये परीक्षाएं ६ सितम्बर १९६४ को होंगी। सभी नर नारियों को इन में सम्मिलित होकर लाभ उठाना चाहिए। परीक्षा पाठविधि आवेदन पत्र, केन्द्र स्थापना फारम तथा अन्य जानकारी के लिए परीक्षा मन्त्री के पते—

आर्यसमाज मौडल बस्ती दिल्ली—५

पर पत्र लिख कर बिना मूल्य प्राप्त करें।

देवव्रत धर्मेन्दु
आर्योपदेशक प्रधान

मुद्रक व प्रकाशक श्री सोमराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मासिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टेलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

(वर्ष २४ अंक २०) ४ ज्येष्ठ २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०— १७ मई १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

शूर उत स्थिर:

भगवन् ! आप शूर हैं, आप अटल और एक रस हैं। सदा अविचल हैं। आप के सामने कोई भी शूर होने का अभिमान नहीं कर सकता। सारी शक्तियां आप से ही प्राप्त होती हैं। आप अविनाशी नित्य हैं।

सखायो मा रिषण्यत

हे मित्रो! व्यर्थ के भ्रम-जाल में अपनी शक्ति, अपना समय और अपना पैसा बेकार नष्ट न करो। प्रभु पूजा के सिवा अन्य जड़ पूजा सर्वथा बेकार है तथा जीवन शक्ति, धन समय को गंवा देती है।

सुराधसमिन्द्रमर्च

हे मनुष्य! उसी इन्द्र की अर्चना कर, पूजन किया कर। वही सुराधस—ज्ञान का भंडार है। सब धन शक्तियों का प्रदाता है। उसी से मांगा करो, उसी की स्तुति किया करो उसी पूजनीय का पूजन किया करो—"

अ थ र्व वे द से

वे दा मृ त

ओम् तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरद: शतं जीवेम शरद: शतं शृणुयाम शरद: शतं प्रब्रवाम शरद: शतमदीना: स्याम शरद: शतं भूयश्चशरद: शतात्॥

यजु: अ० ३६ मंत्र २४

अर्थ :—(तत्) वह ब्रह्म सब का (चक्षु:) द्रष्टा है, शुभमार्ग दर्शक है तथा (देवहितम्) देवों विद्वानों का हितकारी है, वह (पुरस्तात्) सृष्टि से पूर्व, पश्चात् और मध्य में सदा (शुक्रम्) शक्तिमय है एवं (उच्चरत) विद्यमान व्यापक है। हे प्रभो! हम आप के सारे अमृतपुत्र पुत्रियां (पश्येम) देखें (शरद: शतम्) सौ वर्षों पर्यन्त (जीवेम शरद: शतम्) सौ वर्ष जीवें (शृणुयाम शरद: शतम्) सौ वर्ष तक शुभ उपदेश सुनें तथा (प्रब्रवाम शरद: शतम्) सौ वर्ष तक उसी ब्रह्म का उपदेश करें (अदीना: स्याम) किसी के अधीन न रहें (शरद: शतम्) सौ वर्ष तक तथा (भूयश्च) इसके उपरांत भी (शरद: शतात्) सौ वर्षों के बाद भी इसी प्रकार शुभ कार्यों में लगे रहें।

भाव :—हे प्यारे प्रभो! आप सब के चक्षु हैं, द्रष्टा हैं, हमारी तो केवल दो ही आंखें हैं, ये भी दूर तक नहीं देख सकतीं, किन्तु आप तो सहस्राक्ष हो, अनन्त चक्षु बन कर सब का सब कुछ देखते हो। दूसरों से तो मनुष्य अपने को, अपने कार्यों को, मनोभावों को छिपा सकता है पर महादेव! आप से कैसे छिपा सकता है? सब का कल्याण हित करते हो। सदा सनातन हो कर विराज रहे हो। चाहे सृष्टि की उत्पत्ति की वेला हो या प्रलय की अवस्था हो, परन्तु सर्वव्यापक देव! आप प्रत्येक समय में व्याप्त हो रहे हो। हम आप के बालक आप से प्रार्थना करते हैं कि सौ वर्ष तक शुभ देखें, शुभ सुनें, शुभ बोलें, शुभ कर्म करें और सदैव अदीन हो कर इस से भी अधिक समय शुभ मार्ग पर चलते रहते रहें। आप ही हमें बल दीजिये—सं०

ऋषि दर्शन

ईश्वरोपासका मेधाविन:

जो ईश्वर के उपासक होते हैं, प्रभु के पास बैठते हैं, प्रभु-निष्ठ हो जाते हैं, वे मेधावी हो जाते हैं, ज्ञानी बन जाते हैं। प्रभु की उपासना से मानव को मेधा की प्राप्ति होती है। उस पिता का बन जाने से सब कुछ मिल जाता है—

सूर्यादेधारणम्

जितने भी सूर्य आदि के ये बड़े २ लोक हैं इन का धारण वही परमेश्वर ही करता है मनुष्य तो इन को समझ ही नहीं सकता। उसे प्रभु के बिना और कौन सी शक्ति इस विराट् विश्व को धारण कर सकती है।

त्वं नो जिन्व सोमपा:

हे अपना भक्ति का रसीला रस पिलाने वाले परमेश्वर! हम आप के ही तो अमृतपुत्र हैं, भक्त बालक हैं। आप हमारी सब ओर से रक्षा करें। हर संकट से हमारा परित्राण करें। आप के सिवाय हमारी रक्षा और कर ही कौन सकता है।

भा ष्य भू मि का से

प्रकाशक—संतोषराज सभा मंत्री सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

ईश्वर विश्वास निर्भयता का प्रसाद

तर्क और श्रद्धा का समन्वय

(श्री प्रिंसीपल रलाराम जी एम० ए० सभा प्रधान)

वेद में आता है—शृण्वन्तु विश्वे अमृतस्य पुत्राः—हम सारे उस भगवान के अमृतपुत्र हैं। अपने को कभी दीन हीन मत समझो। तुम उसके पुत्र हो। यह विश्व फूलों की शय्या नहीं अपितु कर्तव्य का क्षेत्र है। उपनिषद में कहा है—उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत उठो—जागो और ऊंचे लोगों के पास रहकर ज्ञान सीखो। यह जीवन क्षुरस्य धारा—छुरे की धारा के समान है जो जागते हैं, अभ्यास करते हैं, वही पार करते हैं। आज देश की स्थिति गम्भीर है। दोनों ओर से भय सामने खड़ा है। जिस चीन की फिलास्फी यह हो कि यदि जंग में २।। अरब जनता मर जाये तो भी चिन्ता नहीं, बाकी जो बचेगी वही ठीक है। जिस की धारणा ही जंग करने की हो। जो सह आस्तित्व की विचारधारा को न मानते हों तो फिर ऐसी स्थिति का मुकाबिला करना ही पड़ेगा। निर्भय होकर शत्रु का प्रतिकार करना होगा। निर्भयता बिना ज्ञान के नहीं आती। माताओं ने अपने बच्चों को निर्भय बनाना है। इस दुनिया में यदि चालाक लोग सीधे लोगों को **exploit** करें तो इस से बढ़ कर मानवता का अपमान नहीं है। सदा सावधान होना है ताकि कोई चालाक आदमी अनुचित लाभ उठा न सके। अपने बच्चों को निर्भय बनाओ।

जो निरर्थक भय की भावना देता या पैदा करता है वह माता पिता अपनी सन्तान का शत्रु है। नियन्त्रण और चीज़ है पर भयभीत करके उनको काबू में रखना ठीक नहीं। यह निर्भयता धार्मिक जीवन का सार है। धार्मिक पथ पर चलने की पहली निशानी निर्भयता है। किसी को धोखा देना बुरा है पर धोखा में आ जाना भी मूर्खता है। लोकमान्य तिलक ने एक बार कहा था कि शठों के साथ व्यवहार करते समय सदा सावधान रहना चाहिए। सरल के साथ सरल रहो, किन्तु चालाकों, मक्कार लोगों के धोखे में आजाना भी मूर्खता है। टेढ़े देवदारुओं में जो देवदारु सीधा होता है वह काट दिया जाता है। टेढ़ों में सरल होना भी पाप है और सरलों में टेढ़ा होना भी पाप है। जो जिस प्रकृति, स्वभाव का है, उस से उसी प्रकार का व्यवहार करना चाहिए। जीवन की सफलता का यह मन्त्र है, इस से संसार में सुख मिलता है। इस के विपरीत कार्य करने में हानि की सम्भावना रहती है। आज के विषम वातावरण में इसकी बड़ी आवश्यकता है। भय से न तो जीवन बनता है और न ही राष्ट्र के संकट काटे जा सकते हैं। निर्भयता से हर प्रकार की विपत्ति का सामना किया जा सकता है। इस के लिए प्रभु पर अटूट विश्वास बड़ा ही जरूरी है। जीवन में और तर्क श्रद्धा का समन्वय करना है। इस वेद मन्त्र में की गई निर्भयता प्राप्त करने की प्रार्थना को सोते उठते सदा करते रहना चाहिए। आज के युग में तो इस की विशेष आवश्यकता है। निर्भय जीवन, निर्भयपथ, निर्भय आचरण जरूरी है। जो ऐसे करे He is the mentally healtheous man वही स्वस्थ है।

हवन यज्ञ का लाभ

(ले श्री मास्टर दरबारी लाल जी तनेजा बम्बई—७४

वैदिक संस्कृति में हवन यज्ञ (होम) का बहुत महत्व है। दुर्गन्ध युक्त वायु और जल से रोग, रोग से प्राणियों को दुःख और सुगन्धित वायु तथा जल से आरोग्य और रोग के नष्ट होने से सुख प्राप्त होता है। अग्निहोत्र वैदिक कर्म है। इसे कभी त्यागना नहीं चाहिए। सुगन्धित, पुष्टिकारक मिष्ट और रोग नाशक द्रव्य जब अग्नि में पड़ते हैं तो वह अपनी सामर्थ्य से उनकी शक्ति अनेक गुणा बढ़ा देती है जो वे पदार्थ सूक्ष्म होकर फैल जाते हैं। तब वायु के साथ दूर २ तक जाकर दुर्गन्ध की निवृत्ति करते हैं जैसे आग में डाली हुई केवल एक मिर्च हवा के साथ ऊपर जाकर कितनों को छीं छीं करा देती है। गीता के अनुसार यज्ञ से बादल, बादल से अन्न और अन्न से प्राणी होते हैं। मनुस्मृति के तीसरे अध्याय के ७६वें श्लोक में आया है कि—'अग्नि में भी प्रकार डाली हुई आहुति सूर्य को प्राप्त होती है, सूर्य से वर्षा होती है, वर्षा से अन्न और अन्न द्वारा प्रजा होती है। वेद मन्त्रों द्वारा हवन करने से वेद रक्षा तथा वेद प्रचार होता है। एक आदमी के लिए पर्याप्त घी व अन्य होम द्रव्यों से लाखों मनुष्यों का उपकार होता है। खाने पीने से तो एक व्यक्ति विशेष को सुख मिलता है। अपनी सामर्थ्यानुसार यदि कोई पारायण यज्ञ कराये तो बहुत अच्छी बात है पर प्रत्येक आर्य के लिए होम करना अत्यावश्यक है ताकि धर्म की व्युत्पत्ति के अनुसार उसे इस लोक और परलोक में सुख प्राप्त हो।

मधु-कलश

(४)

विजय 'निर्बाध' जालन्धर

सरस प्यार की भाषा मेरी, प्रीत पगा व्यवहार
आता सब के काम रात दिन मेरा धर्माचार
जो चाहो सो समझो लेकिन मन की बात यही है
दुनिया मेरा देश साथियो मनुज मात्र परिवार

★

कर्महीन किस्मत को रोता, सिर धुनता, पछताता
लेकिन चलने वाला सब को नई दिशा दिखलाता
दे दुनिया को दोष भले ही सिर धुनता पछताता
अपने ही आपे से मानव अक्सर धोखा खाता

★

जिसने ध्यान समय का राखा मोर उसा ने मारा
लेकिन मौका चूक गया जो आवी बाजा हारा
जो मिनटों का ध्यान सीख लो किसी तरह तुम रखना
सच कहता हूं खुद रख लेंगे घंटे ध्यान तुम्हार (क्रमशः)

आल इन्डिया दयानंद साल्वेशन मिशन होश्यारपुर

की साधारण अभिवेशन की बैठक जो कि १०-५-६४ को होनी थी अब वह १७-५-६४ को मिशन के कार्यालय में शाम के चार बजे आरम्भ होगी। सभी सदस्य ठीक समय पर पधारने की कृपा करें।

रामदास
प्रधान-मिशन

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२०, १७ मई १९६४ [अंक २०

सेवा के पथ पर

सेवा धर्म भी प्रमुभक्ति का ठीक है। आर्य समाज के दस नियमों में स्वामी दयानन्द जी महाराज ने एक नियम में समाज का उद्देश्य में संसार का उपकार करना भी लिखा है, अन्य एक नियम में सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए—ऐसा भी प्रतिपादन किया है। लोक सेवा ही नहीं अपितु प्राणिमात्र की सेवा करना एक महान व्रत है। आर्य समाज इसे सदा से निभाता चला आता है। आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब जालन्धर तो इस दिशा में विशेष कर्तव्य का पालन करती रही है। इसके महान संस्थापक स्वर्गीय पूज्य महात्मा हंसराज जी ने तो अपना सारा जीवन ही सेवायज्ञ में आहुत कर दिया था तथा भारत में समय २ पर जन-जीवन पर आने वाली विपत्तियों को दूर करने के लिए सभा द्वारा जो कार्य किया, वह स्वर्णिम इतिहास का एक गौरवपूर्ण अध्याय बन चुका है। उन के बाद पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी ने भी उसी सेवा मार्ग पर चल कर सभा की इस परम्परा को कायम रखा। उन्होंने कोट पहिनना कब और क्यों छोड़ा—इस बात के पीछे भी एक बड़ा रहस्य है। उनके सेवाभाव की ओर संकेत करता है। हमारे दयानन्द कालेजों, स्कूलों गुरुकुलों, सभाओं ने सेवायज्ञ में बहुत कुछ दिया और देते रहते हैं। समाज के अनाथालय, आश्रम आदि इसी लोक सेवा के सुन्दर चित्र हैं। हमें इन संस्थाओं पर आज भी बड़ा गर्व है।

एक व्यक्ति के शरीर में किसी दूसरे की आत्मा रहती है या बाहिर से आकर थोड़ी देर बाल कर चली जाती है। इस को मान लेने पर तो फिर भूत-प्रेत मानने का सिद्धांत सिद्ध हो जाता है। यदि किसी में शृंगी की आत्मा आती है ऐसा स्वीकार करेंगे तो कल यदि कोई ऐसा दावा करे कि मेरे में दयानन्द, हंसराज, श्रद्धानन्द या शंकर, बुद्ध, हनुमान, सीता आदि की आत्मा आती है तो इन्कार नहीं किया जा सकेगा। आज भूत-प्रेत का दम्भ कितना फैला हुआ है। सिर हिलाकर खेलने वालों की न्यूनता नहीं। दूसरों का प्रतिकार करते २ आर्य समाज स्वयं इस भ्रान्ति का शिकार होने जा रहा है। इस बात को जितनी जल्दी रोका जाये उतना उत्तम है। यह तो सिद्धान्त का प्रश्न है इसे धन कमाने का साधन नहीं बनाने देना चाहिए था। व्यक्ति का भी प्रश्न नहीं है।

आर्यसमाज सांबा जम्मू का युवक उत्साही मन्त्री श्री वेदप्रकाश जी ने इस सम्बन्ध में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई देहली को पत्र लिखा। वहां से इस बारे में जो उत्तर आया, उसकी प्रतिलिपि श्री वेदप्रकाश जी ने हमें भेज कर आर्यसमाजों को इस ओर सचेत करने के लिए आर्य जगत में लिखने को लिखा है। सार्वदेशिक सभा ने स्पष्ट लिखा है कि श्री कृष्णदत्त जी को समाज की वेदी द्वारा प्रोत्साहन मत देवें। हम सार्वदेशिक का पत्र प्रकाशित कर देंगे। आर्यसमाजें थोड़े से मनोरंजन या तमाशा के

प्रोत्साहन मत देवें

कुछ समय से आर्य समाज में एक ऐसी बात आरम्भ होने लगी है, जिस के सम्बन्ध में परस्पर मतभेद होने के साथ २ जनता में भी समाज के सिद्धांतों के प्रति समालोचना भी होने लगी है। देहली में ब्रह्मचारी कृष्णदत्त के शृङ्गी ऋषि तथा उसके शिष्य महानन्द के सम्वाद एवं सिर हिला २ कर बोलने पर परस्पर महान् मतभेद हो गया। इस की शैली यह होती है कि समाज की वेदी पर चारपाई बिस्तरे समेत ला कर रख जाती है। उस पर यह युवक श्री कृष्णदत्त जी, जो अपने आप को सर्वथा अपढ़ बताते हैं लेट कर चादर तान लेते हैं। लगभग पंद्रह मिनट मौन लेटे रहते हैं फिर सिर से चादर उठा कर जोर २ से दायें बायें सिर हिलाने लगते हैं तथा संस्कृत में कुछ अस्पष्ट जोर २ से बोलते हैं फिर एक घंटा सिर हिला कर उपदेश होता है। व्यापक रूप में जनता में इसका प्रचार किया जाता है। देहली के कुछ व्यक्ति इस के लिए विशेष काम करते हैं। प्रसिद्ध यह किया जाता है कि इस में ऋषि शृङ्गी की आत्मा आती है और बोल कर चली जाती है...

हम ने भी इस युवक को देखा है और इस सिर हिलाने के रूप में सुना है। देहली में इस विषय पर काफी देर से आर्यजनता में क्षोभ और रोष है कि आर्य समाज की वेदी से इस प्रकार के काम नहीं होने चाहिएं। आर्य समाज इस बात को मिथ्या और भ्रम मानता है कि

लिए अपनी वेदी से इस भ्रमभरे सिर हिलाने का उपहास न करायें।

—त्रिलोक चन्द्र

इन दिनों पाकिस्तानी बंगाल से जो लाखों शरणार्थी अपने मकान, भूमि, सम्पत्ति आदि छोड़ कर वहां नृशंस अत्याचारों से पीड़ित होकर भारत में आगये और अभी तक आ रहे हैं। उन पर होने वाले अत्याचारों को पढ़ कर पत्थर भी द्रवित हो जाते हैं। पुनर्वास की नई समस्या खड़ी हो गई है। भारत सरकार इन को बसाने का प्रबन्ध करती और करेगी ही। परन्तु इन भाईयों के प्रति हमारा भी तो कर्तव्य है। आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर के माननीय नेता प्रिंसिपल रलाराम जी एम०ए०एम०एल०ए० ने इस सम्बन्ध में अपना एक विशेष वक्तव्य देकर सारे समाज का ध्यान इस आवश्यक दायित्व की ओर दिलाया है। वक्तव्य मार्मिक तथा दिल पर प्रभाव डालने वाला है। आर्य प्रादेशिक सभा इस दिशा में अपना काम कर रही है। अभी २ हिसार के श्री बख्शी रामकृष्ण जी एडवोकेट ने माननीय सभा के नेता प्रिंसिपल जी की सेवा में लिखा है कि सभा की ओर से कलकत्ता समाज द्वारा बंगाल सरकार को लिख दिया जावे कि एक सौ पीड़ित बच्चे सभा द्वारा हमें भेज देवें। हम उनको सभा के अनाथाश्रमों में रखकर हर प्रबन्ध करेंगे। माननीय प्रिंसिपल जी ने कलकत्ता लिख दिया है। सभा सेवा पथ पर चल रही है। हम हिन्दू समाज से कहना चाहते हैं कि इस विपत्तिकाल में बंगाल के पीड़ितों की सेवा के लिए तन, मन, धन से इस सभा को अधिक सहयोग देवें ताकि सभा अधिक सेवा का काम कर सके।

—त्रिलोक चन्द्र

——

स्वातन्त्र्य संग्राम और महर्षि दयानन्द

ले० श्री सत्यप्रिय जी शास्त्री शिरोमणि :
प्राध्यापक :—दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार

आर्य जाति के जीवन में वह सब से बड़ा दुर्दिन था, जब कि राजर्षि श्री कृष्ण के लाख समझाने पर भी भरे दरबार में 'सूच्यग्रंनैव दास्यामि बिना युद्धेन केशव' की घोषणा कर के कुपथगामी दुर्योधन महाभारत रूपी प्रलयंकर समराग्नि की चिनगारियों को हवादी थी। आर्य जाति के जीवन में उस का परिणाम पतन ह्रास एवं दासत्वके रूप में सामने आया। अपना गौरव, प्रमुत्व समस्त ब्राह्मणत्व एवं राष्ट्र का शौर्य उस युद्ध को भेंट चढ़ गया। शक्ति के न रहने से विजातीय तत्वों ने आर्य जाति को कुचलना प्रारम्भ किया। इस शारीरिक दासता के साथ २ वेद विद्या के ज्ञाता ब्राह्मणों के अभाव से राष्ट्र का अध्यात्म पथ भी घोर अन्धकार से पूर्ण हो गया, इस कारण भारतीय नागरिकों के जीवन में नानाविध दुर्गुण, दुर्व्यसन एवं कुरीतियों ने पदार्पण किया। जो आर्य जाति तप, त्याग, सदाचार, वेदविद्या, राजनीति एवं आर्थिक दृष्टि से विश्व का नेतृत्व करती थी एक दिन आया कि वही इन सब बातों के लिये संसार के सामने भिक्षुक के रूप में खड़ी दिखाई देती थी। सार्वभौम चक्रवर्ती राज्य छिन कर दासता का युग आया। संसार से पाखण्ड, गुरुडम, कुरीतियें एवं रूढ़िवाद के भूत को भगाने वाली इस जाति के अपने जीवन में सब का बोलबाला हुआ। संसार का अन्नदाता भारत का नागरिक एक २ दाने को तरसने लगा। अनाथों की करुण कराहें, बालविधवाओं का हृदय द्रावक क्रन्दन एवं वेद के सत्पथ से विचलित मानव का आर्तनाद ही सुनने को मिलता था। इस के साथ ही भारतीयों के दुर्भाग्य से अस्पृश्यसमझा जाने वाली निम्न जातियों को पादरी एवं मौलवी भी पकी खेती जान कर अपना रहे थे।

ऐसी असहाय दशा में पड़ा भारत किसी उद्धारक, किसी संजीवन संचारक किसी कुशल वैद्य की प्रतीक्षा में था, जो उस के समस्त दुःखों और क्लेशों का पूर्णनिदान कर के उसे सर्वविध स्वास्थ्य लाभ करासके, जो उस के यथार्थ स्वरूप को जनासके। सर्वतो विपदाच्छन्न कराळकाल में भारत के कार्य क्षेत्र में ऋषिवर दयानन्द का आगमन हुआ। पूर्व इस के कि महर्षि के कार्य क्षेत्र में अवतीर्ण होने पर किये कार्यों का वर्णन हो १८५७ के स्वाधीनता सग्राम के सम्बन्ध में कुछ बातें लिखना आवश्यक है।

विदेशी शासकों विशेष कर बृटिशगवर्नमेंट की घातक चालों के परिणाम-स्वरूप यहां की जनता में उस समय राज्य के विरुद्ध सर्वप्रथम जो महान् विस्फोट हुआ वह यही स्वाधीनता का प्रथम सग्राम था। जिस में भारत के अटक से लेकर कटकतक तथा कश्मीर से कन्याकुमारी तक के विभिन्न मतवादी निवासियों ने पारस्परिक मत भेदों को भुला कर एक सूत्र में सगठित हो, अंग्रेजों के दासत्व के जुए को कन्धों से फैंकने का दृढ़ निश्चय कर लिया था। अंग्रेजों को भारत से उन के घर भेजने को यह पूर्व निश्चित एक योजना थी, जिस को कि भारत के विभिन्न प्रान्तों के प्रभावशाली व्यक्तियों ने मिल कर तैयार किया था। यह योजना तैयार कर मार्ग दिखाने वालों में ऋषिवर दयानन्द एवं उन के गुरु स्वामी विरजानन्द जी भी थे। जैसा कि एक लेखक ने लिखा है कि, 'विरजानन्द ने अपने प्रज्ञा नेत्रों से साक्षात् कर लिया था कि भारत की दुर्दशा के दो प्रधान कारण हैं—एक अनार्ष-ग्रन्थ प्रसार तथा दूसरा विदेशी राज्य। आज युक्त ऐतिहासिक मुक्त कण्ठ से कहते हैं कि विरजानन्द तथा उनके गुरु पूर्णानन्द सरस्वती ने इस संग्राम का आरम्भ कराया था। इस के लिये वेदो हेतु प्रस्तुत करते हैं संवत् १९१४ वि. (सन् १८५७) के स्वातन्त्र्य संग्राम में जिन राजाओं ने भाग लिया था, वे सब के सब विरजानन्द के शिष्य थे। उस समय के राजाओं की जैसी प्रवृत्ति हो रही थी, उस को देखते यह कह जा सकता है कि समर में जूझने की भावना उन की अपनी न थी, वह किसी दूसरे की प्रेरणा से प्रसूत थी। स्वभाव से यह मानना पड़ता है कि वह किसी ऐसे की थी जिस की बात टालने का उन्हें साहस न होता था। भारतीय संस्कृति में गुरुही उच्च-पदस्थ एक ऐसा व्यक्ति है कि जिसकी आज्ञा के उल्लंघन करने की कल्पना भी सच्छिष्य में आ ही नहीं सकती। दूसरा प्रमाण वे यह उपस्थित करते हैं कि जिज्ञासु दयानन्द १८५५ ई. में कनखल में विरजानन्द के गुरुदेव स्वा. पूर्णानन्द सरस्वती की सेवा में विद्याप्राप्ति के निमित्त पहुंचे हैं। पूर्णानन्द जी उन्हें कहते हैं कि हम बहुत वृद्ध हो चुके हैं। हम आप का मनोरथ पूर्ण करने में असमर्थ हैं। आप मथुरा जाइये वहां विरजानन्द सरस्वती हमारे योग्य शिष्य रहते हैं। वे आप की मनः कामना पूर्ण करेंगे" व्यग्र दयानन्द कनखल से सीधे मथुरा नहीं जाते। वे उत्तराखण्ड की ओर चल कर कानपुर तथा नर्मदा के परिसर में पहुंचते हैं। वह वह क्षेत्र है वहां स्वतन्त्रता संग्राम का आयोजन किया जा रहा था। तो क्या यह समझना उचित न होगा कि वृद्ध पूर्णानन्द ने युवा बलिष्ठ दयानन्द को उस ओर प्रेरा हो। भले ही कुछ लोगों को यह तर्क प्रबल न जंचे, किन्तु ये ऐसे दुर्बल या हीन भी नहीं हैं कि इन की उपेक्षा की जा सके'

विरजानन्द चरित पृ० ११८-९

स्वा. वेदानन्द सरस्वती इसी बात की पुष्टि करते हुये एक और लेखक भी लिखता है—'अप्रैल १८५५ से जब कि उस का दूसरा समवयस्क भारत का पेशवा बनने के बाद क्रान्ति यज्ञ के समारम्भ में दीक्षित होने जा रहा था, मार्च १८५७ तक वह प्रायः गंगा के साथ २ गंगोत्री और बदरीनाथ से बनारसतक गढवाल, रुहेलखण्ड, दोआब और काशी के प्रदेशों में घूमता रहा जहां तब क्रान्ति की तैयारियां जनता में भीतर ही भीतर जोरों से की जा रही थी। १८५६ के मई मास में वह नाना के नगर कानपुर गया और आगे पांच मास तक कान पुर इलाहाबाद के बीच ही चक्कर काटता रहा। फिर बनारस, मिर्जापुर, चुनार हो कर मार्च १८५७ में जब क्रान्ति की तैयारियां लगभग पूरी हो चुकी थी......तब दयानन्द भी बनारस से मिर्जापुर चुनार हो कर नर्मदा-स्त्रोतों के लिये दक्खिन की ओर निकल पड़ा। अपने प्रारम्भक जीवन का परिचय देने के लिये दयानन्द की स्व लिखित जीवनी का यहां अन्त कर एक एक अन्त हो जाता है। आगे तीन साल क्रान्ति युद्ध के दिनों में वह कहां और क्या करता रहा इस की कोई विगत उसने कभी नहीं दी। (क्रमशः)

सम्पादकीय-

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२०, १० मई १९६४ [अंक १९

आर्य समाज रीडिंगरोड देहली

भारत के विभाजन के बाद देहली का कितना विस्तार हुआ है, कितने भव्य उपनगर बस गये, कितनी चहल-पहल हो गई और कितना जीवन आगया—यह सब कुछ वहां जाने पर पता लग जाता है। इस शानदार निर्माण में आर्य समाजों का भी किस कमाल से, श्रद्धा से निर्माण किया गया, कितने २ सुन्दर एवं भव्य मन्दिर बन गये इसे देखकर आर्यपुरुषों की आस्था का परिचय मिल जाता है। इन में आर्यसमाज रीडिंग रोड अनारकली का मन्दिर तो अपनी उपमा आप ही है। माननीय डा० मेहरचन्द जी महाजन पूर्व चीफ जस्टिस आफ सुप्रीमकोर्ट के समाज प्रेम तथा उनके अन्य सहयोगियों के सहयोग, महात्मा आनन्द स्वामी जी की साधना और आर्य भाई बहिनों की श्रद्धा का परिणाम है कि नई देहली में इतना शानदार समाज मन्दिर निर्मित हो गया है। राजधानी में बैठे ऊंचे अधिकारी बड़े २ व्यापारी तथा शिक्षा व राजनीति के क्षेत्र में काम करने वाले बड़े २ व्यक्ति इस समाज के सदस्य हैं। यह सब उस स्वर्गीय देवता महात्मा हंसराज जी का तप है, जिसके द्वारा इतने बड़े २ लोग आज इस समाज के प्यारे अंग हैं। कितना विशाल मन्दिर है, कितना दर्शनीय इस का हाल है, यज्ञशाला है—यह तो देखकर ही पता लगाया जा सकता है। सेठ बिरला जी ने भी इस समाज मन्दिर के सत्संग हाल को बनाने में विशेष रुचि ली है। संगमरमर का फर्श, दीवारों पर संगमरमर के सुन्दर पत्थरों में अंकित वेद मन्त्रों की माला, ऊपर लाल पत्थर का सुन्दर निर्माण उनके धर्मप्रेम एवं दान शीलता का परिचय देता है। इसके वार्षिकोत्सव तो शोभा से भरे होते ही हैं। अधिकारियों में मान्य प्रधान जी तथा सौम्य मूर्ति मन्त्री श्री पं० दयाराम जी शास्त्री एम. ए., श्री दरबारीलाल जी एम. ए. सुपरि. दयानन्द कालेज कमेटी कार्यालय एवं श्री बहल जी जैसे सारे सज्जनों का उत्साह प्रशंसनीय है। अभी २ गत ता० १६ अप्रैल को महात्मा हंसराज दिवस पर मन्दिर का उद्घाटन श्रीयुत सेठ बिड़ला जी के हाथों द्वारा हुआ। इस अवसर पर श्री बिरला जी ने ५५ हजार रुपये वहां दान भी दिया। जिस में महात्मा आनन्द स्वामी जी, डा० महाजन जी तथा सेठ बिरला जी ने अपने उद्गार भी व्यक्त किये। कितना समारोह, कितना मनोमोहक दृश्य तथा उल्लासमय वातावरण था। इसका कुछ विवरण समाज के मान्य मन्त्री श्री दरबारी लाल जी एम. ए. ने आर्य जगत को भेजा है जो गत अंक में प्रकाशित हो चुका है। इतने महान् समारोह के लिए सारे अधिकारी बधाई के पात्र हैं। हमें इस भव्य समारोह से वंचित रहना पड़ा। बड़ा चित्त था इस शानदार कार्यक्रम को देखने का। राजधानी में समाज के इस प्रचार से चित्त अतीव प्रसन्न हुआ। महात्मा हंसराज शताब्दी का समारोह तो अखिल भारतीय स्तर पर होना चाहिए। महान् देवता की शान भी उसके अनुरूप होवे। आर्यों को निराश नहीं होना चाहिए समाज का कार्य प्रचार चारों दिशाओं में फैल रहा है। हां एक बात का कभी रह २ कर विचार आता है समाज की शिक्षा संस्थाओं का शानदार काम हो रहा है। उसे प्रचुर राशियां भी समय २ पर मिलती रहती हैं तथा इन्हें सहयोग देना ही चाहिए। महात्मा हंस राज जी की स्थापित आर्य प्रादेशिक सभा भी महान कार्य कर रही है। कभी ऐसा अवसर आ जाये जब कि इसे भी वेद प्रचार के कार्य के लिए इसी प्रकार से सेठ बिरला मिल जायें। इसे धर्म कार्य के लिए मालामाल कर देवें। सभा के महान् अधिकारी यदि इस ओर लग जावें तो यह काम कठिन नहीं है प्रभु सभा को भी ऐसा महानअवसर प्रदान करें। मान्य डाक्टर महाजन जी जैसे नेता द्वारा सभा का भी एक ऐसा शानदार समारोह मनाया जाये। हम इसी आशा में हैं।

त्रिलोक चन्द्र

दयानन्द यूनिवर्सिटी

(श्री वीरेन्द्र जी एम. ए. जालन्धर)

पाठक यह तो पूर्व ही सुन चुके हैं कि अजमेर में दयानन्द यूनिवर्सिटी स्थापित करने का फैसला हो चुका है। सब से पूर्व सितम्बर १९६३ में आर्य समाज की विविध शिक्षा संस्थाओं के प्रतिनिधियों की एक मीटिंग देहली में हुई, जहां इस विषय पर विचार करने के पश्चात् यह निर्णय किया गया कि दयानन्द यूनिवर्सिटी स्थापित की जाये। इस के बाद जनवरी १९६४ में इसी बारे में देहली में एक और बैठक हुई, जिस में उस विषय के भिन्न २ तमाम पहलुओं पर विमर्श करने के पश्चात् यह अन्तिम निर्णय किया गया कि विश्वविद्यालय अवश्य स्थापित किया जाये तथा इस के लिए दस लाख रुपये भी एकत्रित किया जायें। अब देश भर के भिन्न २ प्रान्तों के माननीय प्रसिद्ध व्यक्तियों के हस्ताक्षरों से एक अपील प्रकाशित हुई है जिस में न केवल आर्य समाजियों अपितु उन तमाम लोगों से जिन्हें भारत की संस्कृति को पुनर्जीवित करने में रुचि है, यह निवेदन किया गया है कि वे इस निधि में जितना भी रुपया जमा कर सकते हैं, करें। इस अपील पर जिन उल्लेखनीय सज्जनों के नाम दिये गये हैं—वे ये हैं—श्री डा. मेहर चन्द्र महाजन श्री वाई. बी. चह्वाण सुरक्षा मन्त्री, श्री भीमसेन सच्चर, श्री अमरनाथ खोसला गवर्नर उड़ीसा, श्री एन. वी. गाडगिल पूर्व गवर्नर पंजाब, श्री एम. ए. अय्यं संसत्सदस्य, महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती, श्री टेक चन्द पूर्व जज पंजाब हाई कोर्ट, डा. राम दुखन वायस चांसलर बिहार यूनिवर्सिटी, श्री प्रि० सूर्यभानु वायस चांसलर कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी डाक्टर गोकुल चन्द नारंग, महाराणा डूंगरपुर (राजस्थान) राजाधिराज शाहपुर, श्री भाई प्रताप जी वल्लभदास, श्री दयाभाई पटेल, श्री मदनमोहन वर्मा स्पीकर यू. पी. असैम्बली, श्री प्रकाश वीर शास्त्री, राणा रणञ्जयसिंह जी। इनके अतिरिक्त और भी कई प्रतिष्ठित व्यक्तियों के हस्ताक्षर हैं। जिससे यह प्रकट है कि इसे देश के बड़े २ नेताओं की हिमायत प्राप्त है। ऐसी अवस्था

(शेष पृष्ठ ६ पर)

दक्षिण के आर्यों में नवीन चेतना

(ले० श्री राजेन्द्र जी' जिज्ञासु' दयानन्द कालेज शोलापुर)

फरवरी मास के अन्तिम सप्ताह लातूर आर्य समाज का उत्सव जिस धूमधाम से मनाया गया उसको वही जानते हैं जिन्होंने देखा। यूं तो बीसियों उत्सव धूमधाम से मनाये जाते हैं परन्तु यह उत्सव अपने साथ कुछ विशेष महत्व रखता है। इस अवसर पर मराठवाड़ा के पांच जिलों की आर्यसमाजों के प्रतिनिधियों का भी एक सम्मेलन श्रद्धेय पं० नरेन्द्र जी की अध्यक्षता मे मनाया गया। तपोधन महात्मा आनन्द स्वामी जी, श्रीमान ला० रामगोपाल जी व आदरणीय प्रि० भगवान दास जी की अनुपस्थिति को छोटे बड़े सब बुरी तरह अनुभव कर रहे थे। मराठवाड़ा के ३०० के लगभग आर्य वीर इस में सम्मिलित हुए। जहां पुरानी पीढ़ी के बलिदानी और यशस्वी आर्य सेनापति शेषराव जी बाघमारे एवं पूज्य डा० दास जी इस सम्मेलन की शोभा थे वहां नई पीढ़ी के बीसियों आर्य वीर उत्साह और उमंगों का सजीव रूप बन कर मां आर्यसमाज के उज्ज्वल भविष्य की चित्रकारी के लिये वहां पधारे। मैं आर्यजन की श्रद्धा, प्रेम, अनुशासन व लगन को देखकर झूम रहा था। जन-जन में अपने वीर नेता पं० नरेन्द्र जी के प्रति श्रद्धा है। दक्षिण के लोग अब महात्मा अनन्द स्वामी जी पर तो मानो अपना जन्मसिद्ध अधिकार मानते हैं। यह सब कुछ हमारे संगठन की शोभा है।

मराठवाड़ा में आर्य समाज की प्रगति के लिये मध्य दक्षिण सभा हैदराबाद की ओर से लातूर मे आर्य प्रतिनिधि सभा की उपसभा का कार्यालय बनाने का निश्चय हुआ। कार्यकर्त्ता सम्मेलन में एक बंधु ने एक ऐसी बात कर दी जिस से प्रान्तीयता की कुछ गंध थी बस फिर क्या था. आर्य जन उस पर भड़क उठे और एक एक ने इस प्रकार की बातों को आर्य समाज की भावनाओं के प्रतिकूल घोषित करते हुए उस का प्रतिवाद किया। यह आर्य समाज के लिये अभिमान की बात है कि राष्ट्र की भावनात्मक एकता के लिये उस ने ऐसा ठोस कार्य किया है कि आर्य जन अपने मंच से ऐसी बात सुनना भी पसन्द नहीं करते। पूज्य आनन्द स्वामी जी तो भला परिव्राजक ठहरे और मान्य प्रि० भगवान दास जी की योग्यता व सेवा ऐसी है कि वह इधर आर्य समाज और आर्य समाज एतर जनता में लोक प्रिय हो गये। यहां तो मेरे जैसे साधारण समाज सेवी को भी आर्य जन ने अपने प्यार के बोझ से लाद दिया है। उत्तर भारत में तो यूं ही कुछ स्वार्थी तत्वों ने यह भ्रम फैला रखा है कि दक्षिण में प्रान्तीयता या उत्तर दक्षिण का भयंकर भेदभाव है। यह सब कोरो झूठ है। आर्य समाज के बाहर के लोग भी हमारे साथ इतना प्यार करते हैं कि हम शब्दों में व्यक्त नहीं कर सकते।

अभी आर्य समाज यादगिरि मैसूर राज्य की रजत जयन्ति मनाई गई है। यहां भी पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी, श्रद्धेय प्रि० भगवान दास जी व मान्यवर शालवाले जी के दर्शनों को आर्य जन तरसते रहे। किसी न किसी कारण हमारे ये तीनों नेता यहां भी भाग न ले सके। मैसूर राज्य के कोई १५० आर्य वीर कार्यकर्त्ता सम्मेलन में भाग लेने पधारे। वर्षों के बाद लोगों ने आर्यों के उत्साह की अंगड़ाई को देखा। पूज्य पं० नरेन्द्र जी के नेतृत्व में यहां भी यही निश्चय किया गया कि मैसूर राज्य में वेद प्रचार की प्रगति के लिये एक उप समिति अपना कार्यालय गुलबर्गा में बना कर कार्य करे प्रान्त भेद से अछूते देश प्यार की मस्ती से झूमते दयानन्द दीवानों की नवीन चेतना भारत के दक्षिण में नये युग का नवनिर्माण करेंगे ऐसा पूर्ण विश्वास है। जनजन यही स्वर निकालें गे 'दयानन्द की है पताका रंगीली सजी ओ३म के नाम वाली सजीली।'

आधुनिक भारत निर्माण में महर्षि दयानन्द का योग

(ले०—श्री विजय लक्ष्मी आर्य बी० ए०, बदायूं

भारत एक प्राचीन देश है। इसकी विविधताएं इसकी सामा के समान अत्यन्त विस्तृत हैं। महाभारत के युद्ध पश्चात् इस देशमें अनेक संकट आये। मध्य एशिया आदि देशों से इस पर कई बार बर्बर जातियों ने आक्रमण किए। जिससे उन्होंने भारत के गौरवशाली रूप को विकृत कर दिया। किन्तु फिर भी उस समय भारतीयों में जीवन और जान थी। बाहर के आक्रमणकारी भारतीय बनकर ही भारत के निवासी हो गए।

किन्तु इसके पश्चात् मुसलमानों के आक्रमण ने भारत की संस्कृति, साहित्य, धर्म तथा संपत्ति का नाश कर दिया। फलस्वरूप सम्पूर्ण भारत अज्ञानान्धकार में आवृत्त हो गया। मुसलमान विजेताओं ने शक्ति सहित भारत में इस्लाम का प्रचार किया। और भारत की जनता पर घोर अत्याचार किये। उस दुरवस्था में सन्तों ने भक्ति के प्रचार से हिन्दू और मुसलमान में समन्वय की भावना को जागृत किया।

तत्पश्चात् अंग्रेजी राज्य के आने से भारत की दशा सर्वथा परिवर्तित हो गई। अंग्रेज चतुर तथा कूटनीतिज्ञ थे, उन्होंने वैज्ञानिक ढग से अपना धर्म प्रचार किया। अंग्रेजी शिक्षा के कारण जनता में स्वतः ही अपनी संस्कृति, धर्म एवं जातीयता के प्रति उपेक्षा भाव उत्पन्न होने लगे। हिन्दू धर्म अनेक भागों में विभक्त हो चुका था। ऊंच-नीच का भाव, छुआ-छूत तथा अशिक्षा का देश में बोल बाला था। दूसरी ओर विदेशी राज्य अपने हथकन्डों से देश को दुर्बल बनाने में लगा हुआ था।

ऐसे घोर अन्धकार के समय में जब कि चारों ओर से भारतीय, भारतीयता का विनाश हो रहा था, युग प्रवर्तक परमहंस परिव्राजकाचार्य महर्षि दयानन्द सरस्वती का जन्म हुआ। (क्रमशः)

दयानन्द-वचनामृत

'ध्यान और समाधि में केवल इतना ही भेद है कि ध्यान में तो ध्याता-ध्यान करने वाला ध्यान अर्थात् जिस मन से ध्यान किया जाता है, और ध्येय अर्थात जिस वस्तु का ध्यान किया जाता है, ये तीनों बने रहते हैं। परन्तु समाधि में तो आत्मा केवल परमात्मा ही के आनन्द-स्वरूप और ज्ञान में निमग्न हो जाता है। वहां ध्याता, ध्यान और ध्येय का भेद-भाव नहीं रहता।'

(स्वामी सत्यानन्द जी)

दक्षिण भारत में हिन्दी की लोकप्रियता

ले०—श्री पं० प्रकाशवीर जी शास्त्री M.P. नई देहली

राष्ट्र की एकता के लिए अपने ही देश की कोई एक भाषा, जो अन्तर्प्रान्तीय व्यवहार का माध्यम बन सके, सब से पहले यह स्वप्न अहिन्दी भाषी राज्यों के ही दूरदर्शी नेताओं ने लिया था। स्वामी दयानन्द सरस्वती, लोकमान्य तिलक और महात्मा गांधी के अतिरिक्त कलकत्ता के 'जस्टिस शारदाचरण मित्र और मद्रास के श्री कृष्णा स्वामी उन में प्रमुख थे। आरम्भ में अखिल भारतीय कांग्रेस के वार्षिक अधिवेशनों के साथ हिन्दी के अधिकाधिक प्रचलन पर विचार करने के लिए भी सम्मेलनों का आयोजन होता रहा है। बाद में फिर हिन्दी साहित्य सम्मेलन के मंच से विशेष रूप से उन्हीं नेताओं ने इस को उठाया। हिन्दी साहित्य-सम्मेलन का यह सौभाग्य था, जो गांधी जी आदि कई अहिन्दी भाषी महानुभाव उस के अध्यक्ष-पद को सुशोभित कर चुके हैं। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की स्थापना भी उसी पृष्ठभूमि में महात्मा गांधी की देखरेख में मद्रास अब से ४५ वर्ष पूर्व हुई। उस समय और अब से भी कुछ वर्ष पूर्व तक चक्रवर्ती श्री राजगोपाला-चार्य भी उन के समर्थकों में थे। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा ने अपनी इस छोटी-सी आयु में जो सराहनीय सेवा राष्ट्रीय एकता को पुष्ट करने के लिए हिन्दी के प्रचार और प्रसार द्वारा की है उसे आसानी से भुलाया नहीं जा सकेगा। दक्षिण में इसके अतिरिक्त भी हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद, राष्ट्रभाषा प्रचार-समिति वर्धा और मैसूर एवं केरल राज्यों के निजी संगठनों ने इस विषय में अच्छी सेवाएं की हैं। दक्षिण में हिन्दी का विरोध कहां है, यह वे लोग, जिन्हें इन राज्यों की जानकारी है, भली-भांति जानते हैं। केवल चन्द राजनीतिज्ञों के यह नारे हैं, जिन्हें समय-समय पर लगाकर ये अपना लक्ष्य सिद्ध करना चाहते हैं। आंध्र, केरल और मैसूर राज्य इन तीनों में तो आज हिन्दी सीखने की होड़-सी लगी हुई है। केवल मद्रास में ही एक विशेष समुदाय है, सो भी मुट्ठी भर जो आंदोलन अथवा कोलाहल करने में अधिक निपुण है। वह वहीं सारे दक्षिण भारत का अपने को प्रतिनिधि कहता है।

राष्ट्रीय महत्व की संस्था

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार-सभा को राष्ट्रीय महत्व की संस्था घोषित किया जाए, इस विधेयक पर जब लोकसभा में चर्चा हुई, तो अधिकांश दक्षिण के ही सदस्यों ने जिन में केरल राज्य के भूतपूर्व मुख्यमन्त्री श्री गोविन्द मेनन, मैसूर के श्री सुब्रह्मण्यम और आन्ध्र राज्य के भी सदस्य सम्मिलित थे, इसका स्वागत किया। उन्होंने सरकार से हिन्दी की शिथिल प्रगति के लिए शिकायत भी की। इसी से प्रतीत होता है कि उनमें इसके लिए कितनी अपनत्व की भावना काम कर रही है। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा के कार्य के विवरण को देखने से जो इस विधेयक के उद्देश्यों के साथ दिया गया है, ७ हजार ट्रेनिंग प्राप्त शिक्षक इस सभा के पास हैं, और ६ हजार केन्द्रों में हिन्दी पढ़ाने की व्यवस्था है। उससे भी दक्षिण में हिन्दी के प्रति बढ़ रहे उत्साह का परिचय मिलता है। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा का केन्द्रीय कार्यालय मद्रास नगर में है जो द्रविड़ मुनेत्र कड़घम का भी गढ़ माना जाता है। हैदराबाद में तो उस्मानिया विश्वविद्यालयको पहले केन्द्रीय सरकार हिन्दी माध्यमका विश्वविद्यालय बनाना चाहती थी परन्तु आन्ध्र सरकार इस से सहमत न हो सकी। अब वहां हिन्दी महाविद्यालय प्राच्य महाविद्यालय तथा हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद तीनों हिन्दी प्रचारक संस्थाओं के अतिरिक्त भी और कई सार्वजनिक संगठन इस प्रकार के हैं, जो हिन्दी को अधिकाधिक लोकप्रिय बनाने में यत्नशील हैं। हैदराबाद राज्य की आर्य प्रतिनिधि सभा और उस के प्रमुख कर्णधार स्व. पण्डित विनायक राव विद्यालंकार और वर्तमान प्रधान नरेन्द्र जी ने निजाम के समय से ही हिन्दी को इस देश की राष्ट्रीय और सांस्कृतिक एकता की कड़ी मानकर विद्यालयों और सामूहिक कार्यक्रमों द्वारा आगे बढ़ाया था और अब भी प्रयत्नशील हैं।

हिन्दी विश्वविद्यालय

पर दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा को राष्ट्रीय महत्व की संस्था घोषित करने मात्र से ही केवल लक्ष्य-पूर्ति नहीं हो जाएगी, इस के लिए उन सभी राज्यों में, जहां दो-दो, चार-चार हिन्दी माध्यम कालेज खुलने अपेक्षित होंगे, वहां एक हिन्दी माध्यम का विश्वविद्यालय भी बहुत आवश्यक है। भूतपूर्व शिक्षामन्त्री श्री श्रीमाली इस दिशा में बराबर यत्नशील रहे। वर्तमान शिक्षामन्त्री ने भी तो यह आश्वासन दिया है कि उन राज्यों में से यदि कोई भी इस प्रकार का विश्वविद्यालय बनाना चाहेगा तो उसे अधिक से अधिक केन्द्र की सहायता प्राप्त हो सकेगी।

दक्षिण की तेलगु, कन्नड़ और मलयालम भाषाओं में संस्कृत के शब्द भी बड़ी मात्रा में पाए जाते हैं। इसके लिए एक ऐसे तत्सम शब्दों के कोष का निर्माण भी यदि हो जाए तो उत्तर भारत का दूसरी भाषाओं के अतिरिक्त राजभाषा के स्वरूप को ही समृद्ध कर सके तो अच्छा रहेगा। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा अथवा और कोई संगठन इस काम को अपने कन्धों पर ले ले तो इससे राष्ट्र की बहुत बड़ी सेवा हो सकेगी। दक्षिण की इन चारों भाषाओंके अतिरिक्त भी अन्य सभी भारतीय भाषाओं को परस्पर एक-दूसरे के निकट लाने के लिए देवनागरी के वैकल्पिक माध्यम को ही आवश्यक मानकर कुछ प्रयास करने अत्यन्त अपेक्षित होंगे। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा का राष्ट्रीय महत्व की संस्था घोषित हो जाने के बाद दायित्व और बढ़ गया है। यद्यपि आज वातावरण उतना पवित्र नहीं है, जितना कि उसकी स्थापना के समय था फिर भी उसके सभा के गम्भीर कार्यकर्ता अपने दूरदर्शी और मधुर स्वभाव से उन सब परिस्थितियों का भी सुगमता से सामना कर सकेंगे, ऐसा विश्वास है।

अमूल्य वचन

व्रत के द्वारा उत्तम अधिकार योग्यता को प्राप्त करता है और योग्यता से दक्षिणा को प्राप्त करता है और दक्षिणा श्रद्धा को प्राप्त करता है और श्रद्धा (निष्ठा) से सत्य को प्राप्त करता है।

दयानन्द यूनिवर्सिटी

(पृष्ठ ३ का शेष)

में कोई कारण नहीं कि यह सिरे चढ़े। इसका सबसे अधिक संतोष जनक पहलू यह है कि राजस्थान सरकार ने इस यूनिवर्सिटी को स्थापित करने में हर प्रकार की सहायता देने का विश्वास दिलाया है। ज्यूं ही धन जमा हो जाएगा। राजस्थान विधान सभा में इस के बारे में एक बिल पेशकर दिया जाएगा ताकि इस विश्वविद्यालय को वैधानिकरूप प्राप्त हो जाएगा।

परन्तु राजस्थान भी उस समय तक कुछ न कर सकेगी, जब तक हम स्वयं इसके लिए हाथ-पांव न हिलाएंगे। दस लाख रुपए की अपील की गई है। सारे देश में से इतनी रकम जमा करना कोई कठिन नहीं बशर्ते कि सब आर्य समाजी अपने लिए एक चुनौती समझते हुए इसमें लग जाएं। आर्यसमाज की सारे देश में एक हजार से ऊपर शिक्षा संस्थाएं हैं और आर्यसमाजों की संख्या तो कई हजार है। दूसरे देशों में भी आर्य समाजों की शाखाएं हैं। कुछ न कुछ रुपया वहां से भी आ सकता है। परन्तु दूसरों को कहने से पूर्व हमें स्वयं इस के लिए कुछ न कुछ करना होगा। यह एक शुभ लक्षण है कि देश के तमाम बड़े २ नेताओं ने इस प्रस्ताव का स्वागत किया है। इस के बाद प्रत्येक आर्य समाजी का कर्तव्य हो जाता है कि वह इस यज्ञ में आहुति डाले। इस समय तक आर्य समाज डी. ए. वी. और गुरुकुल संस्थाओं के द्वारा शिक्षा के परीक्षण करता रहा है। अब उसे एक ऐसा अवसर मिल रहा है कि एक केन्द्रीय संस्था के द्वारा अपनी इन शिक्षा संस्थाओं के सामने एक स्पष्ट शैक्षणिक योजना पेश करे। देश में जो भी यूनिवर्सिटी स्थापित होती है उसकी कुछ न कुछ विशेषता रखने का प्रयत्न किया जाता है। दयानन्द यूनिवर्सिटी की अपनी शान होगी। क्योंकि वह इस विचारधारा को एक क्रियात्मिक रूप देने की कोशिश करेगी, जो ऋषि दयानन्द ने संसार के सामने रखी थी। यह एक बहुत बड़ा काम है और इस समय तक सुचारु रूप से नहीं हो सकता जब तक आर्य जनता इस में पूर्ण रूप से जुट न जाये इस लिए मैं पंजाब भर के आर्य भाईयों से फिर निवेदन करूंगा कि वह इस ओर ध्यान देवें और दयानन्द यूनिवर्सिटी के लिए जितना भी धन जमा कर सकते हैं, करने की कोशिश करें।

(दैनिक प्रताप से)

भिवानी अनाथालय

भिवानी अनाथालय भिवानी का वार्षिकोत्सव ता० ३ से ५ मई तक धूमधाम से सम्पन्न हुआ। सभा से पं० त्रिलोकचन्द शास्त्री तथा पं० मेलाराम जी रेडियो सिंगर ता. २७ अप्रैल से कथा करते रहे। अनाथालय का विशाल भवन दर्शनीय है। उत्सव पर श्री पं० मुरारीलाल जी शास्त्री, प्रिंसिपल देवराज जी गुप्त एम. ए. दयानन्द कालेज हिसार, श्री स्वामी देवानन्द जी पधारे। हिसार से श्री बख्शी रामकृष्ण जी एडवोकेट, सेठ फतहचन्द जी आदि पधारे। भिवानी के पं० देशबन्धु जी शास्त्री एम. ए. डा० गिरधर जी प्रधान श्री शिवकरणदास जी, प० रामनाथ जी, मन्त्री श्री सुग्रीव जी का अथक प्रयास देख कर मन प्रसन्न हुआ। बच्चों का अनुशासन, सुप्रबन्ध तथा धर्मसेवाभाव उत्तम है। प्रबन्धक पं० रामनाथ जी का सौम्य स्वभाव तथा शास्त्री देशबन्धु जी एम.ए. का परिश्रम, श्री शिवकरणदास जी की लगन सराहनीय है हर प्रकार से जल्सा सफल रहा। सब को बधाई।

जनता से आवश्यक निवेदन

पूर्वी पाकिस्तान में जो महा संकट वहां के हिन्दुओं पर आया है वह अकथनीय है। हजारों पुरुष स्त्री तथा बच्चे मौत के घाट उतारे गये। लाखों बेघर कर दिये गये। जो स्त्रियों पर अत्याचार हुए वह सुन या पढ़कर रौंगटे खड़े हो जाते हैं, और कलेजा मुंह को आता है। लाखों पूर्वी पाकिस्तानी हिन्दू पूर्वी बंगाल से धकेल कर हिन्दुस्तान में भेज दिये गये हैं। उनके पुनर्वास की समस्या तथा उनके संकट मोचन का प्रश्न एक बहुत बड़ी समस्या है। यह ठीक है कि सर्वप्रथम यह हिंद सरकार की जिम्मेदारी है और गवर्नमैंट इस को निभाने का भरसक प्रयत्न कर रही है। परन्तु यह संकट इतना भयकर तथा बृहद है कि हमारी गवर्नमैंट पूर्णतया इस से निपट नहीं सकती यदि पब्लिक इस विषय में पूर्ण सहयोग न दे। इस के अतिरिक्त हम भी इस सारी दुर्घटना तथा विपत्ति के निरपेक्ष द्रष्टा मात्र नहीं हो सकते। हमारा भी कर्त्तव्य है कि हम भी इस पवित्र तथा आवश्यक काम में सरकार का हाथ बटायें तथा अपने कर्त्तव्य को निभायें।

आर्य समाज विशेषतया आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब इस संकट निवारण के काम में सदैव अग्रसर रही है। हमारी आर्य समाजों ने व्यक्तिगत रूप में सहायता कार्य किया है। परन्तु यह उचित समझा गया है कि आर्य प्रादेशिक सभा विशेष पैमाने पर इस काम को पश्चमी बंगाल में आरम्भ करे। अतः आर्य प्रादेशिक सभा की अंतरंग सभा ने निश्चय किया है कि हिंदुमात्र से नहीं अब भारतीयों से प्रार्थना की जावे कि वे अधिक से अधिक धन इस कार्य के लिये सभा के कार्यालय में भेजने की कृपा करें ताकि यह सहायता कार्य तुरन्त आरम्भ कर दिया जावे।

रलाराम प्रधान

आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर

सभा का क्रियात्मिक पग

हिसार के श्री बख्शी रामकृष्ण जी एडवोकेट के लिखे अनुसार आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर की ओर से आर्य समाज कार्नवालिस स्ट्रीट कलकत्ता की मार्फत बंगाल सरकार को लिखा जा रहा है कि पूर्वी बंगाल से आने वाले अत्याचार पीड़ित शरणार्थियों के असहाय एक सौ बालक हिसार भिजवा देवें। उनको सभा के अनाथालयों भिवानी तथा फिरोजपुर आदि स्थानों में रख कर उनका पूरा पालन पोषण करके उनको शिक्षा भी दिया जाएगा। सारा प्रबन्ध किया जाएगा। सभा अपनी सेवा परम्परा पर चल रही है।

आर्यसमाज रंधौली (जिला करनाल)

के गांव बदरपुर में १३-१४-१५ मार्च को धूमधाम से जलसा सम्पन्न हुआ जिस में पूज्य रामेश्वरानन्द जी हरलाल जी की चिमटा मंडली व नत्थासिंह जी के मनोहर आख्या व भजन होते रहे। जनता ने पर्याप्त लाभ उठाया। वेद प्रचारार्थ धन भी प्राप्त हुआ।

आर्य सेवक

दान शिला

(पृष्ठ ७ का शेष)

१५४. कविराज हरनामदास	१०१
१५५. श्री रामलाल बशानी	१०२
१५६. „ बिशनदास सुखेजा	१०१
१५७. „ विष्णुमित्र	१०१

आर्य नेताओं और जनता की सेवा में

(ले०श्री भद्रसेन जी दर्शनाचार्य वि०वै०शोध संस्थान होश्यारपुर)

आज के युग में साहित्य की महत्ता किसी भी व्यक्ति से छिपी हुई नहीं है, साहित्य जहां ज्ञान का साधन है वहां प्रत्येक व्यक्ति के लिए प्रत्येक क्षेत्र में उन्नति का महान् सहारा है। बिना साहित्य के कोई भी समाज, जाति और राष्ट्र विद्या का विकास नहीं कर सकता और बिना विद्या के विकास के किसी को भी उन्नति सम्भव नहीं है। साहित्य जहां किसी की उन्नति का साधन है, वहां साहित्य प्रत्येक समाज, जाति और राष्ट्र का दर्पण है। जिस प्रकार दर्पण (सीसा) में प्रत्येक सामने की वस्तु यथा तथ्य रूप में दिखाई देती हैं, ठीक उसी प्रकार प्रत्येक समाज, जाति और राष्ट्र के स्व स्व साहित्य में उसका सम्पूर्ण रूप दृष्टि गोचर हो जाता है। बिना साहित्य के किसी के अतीत के सम्बन्ध में पूर्ण ज्ञानकारी प्राप्त करने का एक मात्र साधन साहित्य ही है।

विद्वानों ने "शास्त्रं सर्वस्य लोचनम्" साहित्य की नेत्रों से उपमा दी है। शरीर में जो नेत्रों का स्थान है, वही साहित्य का व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के जीवन में स्थान है। नेत्रों के बिना शरीर का संसार व्यर्थ सा प्रतीत होता है। तभी प्रत्येक प्रज्ञाचक्षु कहता हुआ सुनाई देता है--"बाबा आंखें बड़ी निआमत हैं। ठीक यही साहित्य की स्थिति हैं। वस्तुतः साहित्य की महिमा के विषय में आज के युग में लिखना या कहना सूर्य को दीपक दिखाने के समान हो उपहास्यास्पद है।

भूमिका स्वरूप इन दो शब्दों को ध्यान में रखते हुए आर्य नेताओं और आर्य जनता को सेवा में निवेदन है कि आर्य जगत के विशाल साहित्य भण्डार से कुछ विरले हो आर्य जन पूर्ण परिचित होंगे, तथा आये दिन प्रकाशित होने वाले आर्य साहित्य से। आज तक आर्य समाज का किस-किस भाषा में, किस-किस लेखक द्वारा क्या क्या साहित्य किस-किस विषय पर प्रकाशित हुआ है, इस सम्बन्ध में सूचना देने वाली कोई भी पुस्तक दृष्टि गोचर नहीं होती है। आज के प्रगति शील युग में एक ऐसी पुस्तक की बहुत ही अधिक आवश्यकता है जिस के द्वारा यह ज्ञान प्राप्त हो सके कि किस किस विषय पर किस किस भाषा में किस किस लेखक ने क्या कुछ लिखा है। सम्भवतः साधारण दृष्टि से सोचने पर यह योजना बहुत विचित्र ही अनुभव हो, परन्तु जिन सज्जनों को लेख, ग्रन्थ आदि लिखने का अवसर प्राप्त होता रहता है तथा जिन को किसी विषय पर कुछ बोलने या शोध (Research) करने का अवसर आता है, वे इसकी उपयोगिता को बहुत सरलता से समझ सकते हैं। यह साधारण दिखाई देने वाला कार्य भी बहुत अधिक उपयोगी है। व्यापारिक दृष्टि से यह कार्य अवश्य एक प्रकार से टोटे का सौदा है, कि इस परिश्रम साध्य ग्रन्थ को खरीदने वाले कितने सज्जन होंगे, परन्तु साहित्य सेवा और विद्या की दृष्टि से यह ग्रंथ अत्यन्त उपयोगी है। यदि आर्य जगत की प्रत्येक आर्यसमाज और शिक्षण संस्था इस पुस्तक की एक एक प्रति ले ले तो इस का व्यय सरलता से पूर्ण हो सकता है।

आर्य जगत के साहित्य की ग्रन्थ सूची की महत्ता जहां लेखक, वक्ता और शोधकर्ता स्वतः जानते ही हैं, वहां साधारण आर्यजनों के लिए इसकी उपयोगिता को समझने के लिए (एवं प्रस्तुत विषय की स्पष्टता के लिए) तथा सार्वदेशिक एवं प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के अधिकारियों के ध्यान को आकर्षित करने के लिए दो उदाहरण देना चाहता हूं। गत दो वर्ष की बात है कि पंजाब विश्वविद्यालय में एक विद्यार्थी आर्य समाज के साहित्य पर शोध ग्रंथ लिख रहा था, उसने श्री ओम कुमार जी, राजेन्द्र जिज्ञासु जी एवं रामप्रकाश जी आदि आर्य युवकों से आर्य साहित्य के सम्बन्ध में पूछा उन्होंने यथा ज्ञान उत्तर देते हुए कहा कि आप आर्य साहित्य का पूर्ण परिचय प्राप्त करने के लिए विश्वविद्यालय गुरुकुल कांगड़ी एवं सार्वदेशिक सभा देहली आदि के पुस्तकालयों का निरीक्षण कीजिये। परन्तु वे ऐसी किसी भी पुस्तक का परिचय नहीं दे सके जिस में आर्य साहित्य के सम्बन्ध में पूर्ण ज्ञान कारी दी गई हो। क्योंकि आर्यजगत में आज तक ऐसी कोई पुस्तक प्रकाशित नहीं हुई है। सोमित उत्तर के कारण मेरे ध्यान में उन्हें कुछ कमी अनुभव हुई होगी।

दूसरा महत्व पूर्ण उदाहरण पिछले दिनों का है, श्री वीरेन्द्र जी ने 'वीर प्रताप' में आर्य जनता के नाम एक सम्पादकीय लेख लिखा था, कि एक अमेरिकन दम्पती भारत के इतिहास में आर्य समाज की उपयोगिता को समझते हुए आर्य समाज के अतीत के सम्बन्ध में ज्ञान कारी प्राप्त करने के लिए अमेरिका से आ कर भारत के विभिन्न स्थलों का भ्रमण कर रहे हैं, वे एतदर्थ पाकिस्तान भी जायेंगे वे सार्वदेशिक सभा देहली और विश्वविद्यालय गुरुकुल कांगड़ी इत्यादि विभिन्न स्थलों पर गये, मैं कह नहीं सकता उन्हें इस कार्य में कितनी सफलता प्राप्त हुई। इस घटना के सम्बन्ध में आर्य जगत की पत्र पत्रिकाओं में भी सम्पादकीय लेख आ रहे हैं। यदि आर्य साहित्य की ग्रन्थ सूची की कोई पुस्तक होती तो वह उन को इस कार्य में बहुत सहायता देती। वे उस के द्वारा आर्य समाज के अतीत के इतिहास सम्बन्धी ग्रन्थों का एक दम चयन कर लेते तथा उन का कार्य बहुत कुछ सरल हो जाता। इस प्रकार के अनेक उदाहरण इस कार्य की उपयोगिता सम्बन्धी दिये जा सकते हैं।

वस्तुतः इस कार्य को सार्वदेशिक सभा को अपने हाथों में शीघ्राति शीघ्र लेना चाहिये। सार्वदेशिक सभा का जहां राजधानी में कार्यालय रूपेण भव्य भवन है, वहां उस भव्य भवन में एक ऐसा पुस्तकालय होना चाहिये, जिस में आर्य जगत् के प्रत्येक भाषा का आर्य साहित्य उपस्थित हो। सार्वदेशिक सभा के लिए यह उपयोगी कार्य कोई कठिन नहीं है। मैं साधारण ज्ञान के अनुसार इस कार्य की रूप रेखा अगले लेख में शीघ्र आर्य जगत के समक्ष रखने का प्रयास करूंगा। मैं आर्य जगत् की प्रत्येक पत्रिका के सम्पादक महोदय से सानुरोध प्रार्थना करता हूं, वे अपने सम्पादकी लेखों द्वारा आय जनता और आर्य नेताओं का इस ओर ध्यान आकर्षित करने कष्ट करेंगे।

आधुनिक भारत निर्माण में महर्षि दयानन्द का योग

ले०—विजय लक्ष्मी जी आर्य B.A. बदाऊं)

(गतांक से आगे)

उन्होंने अपनी सर्वतोमुखी प्रतिभा, बुद्धि और विद्वता से भारत की प्रसुप्त जनता को जगाने तथा उसका पुनरुद्धार करने का बीड़ा उठाया। स्वामी जी ने अपने उपदेशों से भारत की आर्य जनता में धर्म तथा जातीयता के प्रति नवीन उत्साह भर दिया। उन्होंने अपने निम्न ग्रन्थों सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, व्यवहार भानु, यजुर्वेद भाष्य, गोकरुणानिधि, संस्कारविधि, ऋग्वेद भाष्य, आर्याभिविनय, वेदांगप्रकाश आदि से भारत में पुनः अपने प्राचीन गौरव के प्रति जागृति उत्पन्न की।

उनकी दृष्टि में आर्य सभ्यता ही देश को उन्नत कर सकती है। और वह तभी सम्भव है जब देश स्वतन्त्र हो। यही कारण है कि उन्होंने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में सब से प्रथम स्वराज्य शब्द का उपयोग किया। छुआछात तथा जाति भेद उनकी दृष्टि में त्याज्य है वे बाल विवाह तथा दूसरी कुरीतियों के प्रति भी उन्होंने सिंह गर्जना की। वास्तव में सत्यार्थ-प्रकाश के लिखने का ऋषि का प्रमुख उद्देश्य सत्य को प्रकाशित करना ही था, इतना ही नहीं वैदिक राजनीति पर भी आपने प्रकाश डाला। राष्ट्रभाषा हिन्दी को गुजराती होते हुए भी अपनाना तथा सब स्थानों पर उचित स्थान दिलाने का आपने ही प्रयत्न किया। यही कारण है कि आपने अपने सब ग्रन्थों की भाषा हिन्दी ही रखी। आपने ही सर्वप्रथम एक राष्ट्रभाषा का नारा लगाया था। प्रसन्नता का विषय है कि आज भारत सरकार ने उसे राष्ट्र भाषा

माधवाचार्य जी का शास्त्रार्थ से निर्लज्जता पूर्वक पलायन

(श्री वेदप्रकाश जी आर्य हापुड़)

★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★

२३-२४-२५-२६ अप्रेल को हापुड़ की सनातन धर्म सभा का उत्सव था। प्रसिद्ध पौराणिक फक्कड़ माधवाचार्य जी ही इस उत्सव में एक मात्र वक्ता थे। अपने स्वभाव के अनुसार उन्होंने आर्यसमाज और ऋषि दयानन्द जी के विरुद्ध बहुत अनर्गल बातें की शास्त्रार्थ केसरी पं० अमरसिंह जी आर्य पथिक ने आर्य समाज हापुड़ द्वारा माधवाचार्य जी को खुला चैलेंज दिलाया आठ प्रश्न लिखकर छपवाये और सहस्रों की संख्या में बांट गये। माधव जी ने बहुत बातों में यह भी कहा था कि—

सत्यार्थ प्रकाश में सृष्टि उत्पत्ति के समय जवान मनुष्यों का उत्पन्न होकर आकाश से कूद पड़ना लिखा है।

आर्य समाज की ओर से विज्ञापन में यह पूछा गया कि सत्यार्थ प्रकाश में जवान मनुष्यों का आकाश से कूद पड़ना कहां लिखा है?

ब्रह्मा जी से सनक सनन्दक हुए भागवत में लिखे हैं वह बालक हुए जवान व बूढ़े हुए। ब्रह्मा जी की जांघ से असुर उत्पन्न हुए जो ब्रह्मा जी से ही मैथुन करने दौड़े, यह भागवत में लिखा है बताओ वह बालक थे, जवान थे या बूढ़े उत्पन्न हुए थे माधव जी ने न उत्तर दिया न शास्त्रार्थ को तैयार हुए। पर अनर्गल बातें बहुत कहीं।

श्री पं० अमरसिंह जी ने पत्र द्वारा भी चैलेन्ज भिजवाये और दूसरा विज्ञापन भी छपवाया उस का शीर्षक था माधवाचार्य को खुला चैलेन्ज। इस को भी सहस्रों की संख्या में उन के सामने बंटवाया दोनों विज्ञापन माधवजी के हाथों में दे दिये गये। उन के रहते हुए ही लाउड स्पीकर से सारे नगर में घोषणा करा दी कि २७ अप्रेल की रात्रि को आर्य समाज के विशाल मैदान में माधवाचार्य जी के साथ श्री पं० अमरसिंह आर्य पथिक जी का शास्त्रार्थ होगा यदि माधव जी भाग गये तो श्री पं० अमरसिंह जी माधव जी के अनर्गल भाषणों का युक्ति पूर्वक खण्डन करेंगे।

२६ अप्रेल के दिन यह घोषणा की गई और रात्रि को उन की सभा में विज्ञापन बांटे गये। फिर भी २७ के प्रातः—निर्लज्जता की चादर ओढ़ कर भाग गये और रात्रि को भरी भीड़ में श्री पं० अमरसिंह जी ने सिंह गर्जना के साथ माधव जी के भाषणों की धज्जियां उड़ाईं और अपने पक्ष में प्रमाणों की झड़ी लगा दी।

आर्योपदेशक विद्यालय हापुड़ के विद्यार्थियों ने भी माधव जी से कई प्रश्न पूछे और उन की झूठी बातों के विरुद्ध प्रमाण उन के सामने जा कर दिखाये। पर माधव जी ने अन्त तक एक ही मन्त्र को अपना ध्येय बनाये रखा कि—

'एकं लज्जां परित्यज्य त्रैलोक्य विजयी भवेत।'

(आधुनिक भारत निर्माण... शेष)

के पद पर आरूढ़ कर दिया है।

इस प्रकार से व्यवहार के सभी क्षेत्रों में महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों ने अद्भुत क्रांति उपस्थित की। और वे आधुनिक भारत के निर्माण में महल की नींव की ईंट के समान कार्य कर रहे हैं।

दयानन्द-वचनामृत

'स्त्री-पुरुषों को सदा रात्रि के दस बजे सोना चाहिए। वे सवेरे चार बजे, ब्राह्म मुहूर्त में उठ बैठें। सब से पहिले ईश्वर का चिन्तन कर के फिर धर्म और अर्थ का चिन्तन करें। उस दिन जो कार्य करने हों, उन का समय-विभागादि बनावें। धर्म और अर्थ के कामों को करते हुए यदि कोई कष्ट-क्लेश भी हो, तो भी ऐसी धारणा करें कि उन का परित्याग कदापि न होने पावे। व्यावहारिक और पारमार्थिक कर्त्तव्य-कर्म की सिद्धि के लिए ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना भी किया करें। परमेश्वर की कृपा दृष्टि और सहायता से महाकठिन कार्य भी बड़ी सुगमता से सिद्ध हो जाते हैं।' (स्वामी सत्यानन्द जी)

आर्य समाज पलवल (जिला गुड़गावां)

का उत्सव ८ से १० मई तक धूमधाम से सम्पन्न हुआ। प्रादेशिक सभा की ओर से श्री पं० चन्द्रसैन जी, पं० मेलाराम जी वा प्रादेशिक उपसभा देहली का स्टाफ पहुंचा। उत्सव के उपलक्ष्य में श्री पं० चन्द्रसैन जी की ४ मई से निरन्तर वेद कथा होती रही। उत्सव के दिनों में आपने आठ भाषण दिए। जिनका जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा। कथा के दिनों में श्री हरिदत्त जी के रसीले भजन होते रहे। जलसा सर्वांग रूप से सफल रहा।

हिन्दी के प्रेमियों से

****

आर्य समाज के प्रसिद्ध नेता एवं आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब जालन्धर के पूर्व कार्यकर्ता प्रधान श्री ला. इन्द्रसेन जी आर्य समाजियों, हिन्दी प्रेमी सारे हिन्दु समाज का ध्यान इस आवश्यक बात की ओर दिलाते हुए अपने एक वक्तव्य में कहा है :—सन् १९६१ की जनगणना से भली भान्ति ज्ञात हो गया है कि पंजाब में हिन्दी बहुमत की भाषा है। यदि जनगणना के पूर्व पंजाब के हिन्दु नेता समय पर कारवाई न करते तो ये आंकड़े इस के विपरीत होते। जनगणना से लगभग एक मास पहिले पंजाब के गवर्नर श्री गाडगिल सर्वोदय के भवन का उद्घाटन करने जालन्धर पधारे तो मैं उन से मिला और भाषा समस्या का हल ढूंढने के लिए शीघ्र से शीघ्र भाषा कमेटी की मीटिंग बुलाने की प्रार्थना की। इस पर उन्होंने बताया कि बहुत जल्दी २६ सदस्यों की कमेटी की मीटिंग बुला रहे हैं। परन्तु उन्होंने साथ ही कहा कि पण्डित जवाहर लाल नहरू ने अपने अभी के भाषणों में पंजाबी को पंजाब की बहुमत भाषा कहा है। अब जनगणना आने वाली है। उस में देखा जायगा कि पण्डित जी का यह दावा ठीक है या नहीं।

मैं ने उसी समय भांप लिया कि एक ओर तो सरकार जनगणना के आंकड़ों के आधार पर पंजाब की बहुमत की भाषा का निर्णय करने वाली है और दूसरी ओर पंजाब के हिन्दु और हिन्दु संस्थाएं इस बात से सर्वथा अनभिज्ञ हैं। इस लिए इस के सम्बन्ध में उन को चेतावनी देनी आवश्यक है। इसके अनुसार मैं ने गवर्नर को मिलने के शीघ्र बाद लाला जगत नारायण और श्री. वीरेन्द्र को टेलीफोन पर कहा कि गवर्नर पंजाब के साथ हुई बात चीत के बारे में एक आवश्यक विचार करना है। निर्णय हुआ कि श्री. वीरेन्द्र जी की कोठी पर शाम को हम इकट्ठे हों। मिलने पर निर्णय किया गया कि पंजाब के आर्य समाजी; सनातन धर्मी और जैनी नेताओं का एक सम्मेलन जालन्धर में जनगणना से दो सप्ताह पूर्व बुलाया जाये और इस में लोगों को मातृभाषा हिन्दी लिखवाने के लिए कहा जाये। सरकार ने इस सम्मेलन के लिए पहिले तो धमकियां गई। हमारे न मानने पर ठीक सम्मेलन से एक रात्री पूर्व धारा १४४ लगा दी गई। परन्तु पुलिस कर्मचारियों की नुमायश के बावजूद सम्मेलन बड़ी सफलता से सम्पन्न हुआ। जिसके परिणाम स्वरूप लाला जगत नारायण श्री श्री वीरेन्द्र जी, आचार्य राम देव जी, श्रीमती विमला कोहली, डाक्टर ज्योति जी तथा मुझे प्रातः काल ही पकड़ लिया गया। हम ने जमानत देने से इन्कार कर दिया इस पर हमें जेल भेज दिया गया। इस बात का हिन्दुओं पर अच्छा प्रभाव पड़ा। यद्यपि हम गिरफतार हो चुके थे, परन्तु सम्मेलन की सफलता तथा हमारी गिरफतारी अपना काम कर चुकी थी। जिस उद्देश्य के लिए सम्मेलन बुलाया था वह पूर्ण हुआ। पंजाब के लोगों ने बहु मत से जनगणना में अपनी मातृभाषा हिन्दी लिखवाई तथा बाद में पंजाब सरकार ने अपनी गलती को स्वीकार करते हुए सबके विरुद्ध केस भी वापस ले लिया। सरकार का वह दावा भी गलत सिद्ध हुआ कि पंजाबी पंजाब के बहुमत की भाष है। —सं०

महात्मा आनन्द स्वामी मेरी दृष्टि में

श्री विनयप्रकाश जी, ग्यारवी कक्षा, सुपुत्र, प्रि. श्री भगवानदास जी

****

महापुरुषों की पहचान का एक तरीका यह है कि वे बच्चों के साथ कैसा व्यवहार करते हैं। परन्तु महापुरुषों की अपेक्षा महात्माओं को बच्चे अधिक प्यारे होते हैं। इन्हीं इनेगिने महात्माओं में से एक हैं पूज्य महात्मा आनंद स्वामी जी सरस्वती। भारत में तो क्या वे विदेशों में भी प्रसिद्ध हैं। जिस आदमी ने उन के दर्शन नहीं किये मैं समझता हूं कि यह उस के लिये एक बहुत बड़े दुर्भाग्य की बात होगी। उन के जैसा हंसमुख व्यक्ति इस संसार में शायद ही हो। जो एक बार उन के दर्शन कर लेता है वह उन के गुणगान जिन्दगी भर करता रहता है। और बार-बार उन के दर्शन करने का इच्छुक हो जाता है।

'महात्मा आनंद स्वामी' यह नाम उन के बिल्कुल अनुरूप है। वे सचमुच महात्मा हैं। मैंने आज तक उन्हें दुःखी नहीं देखा। मैंने हो क्या जो हमेशा उन के पास रहता हो उस ने भी उन्हें कभी दुःखी न देखा होगा। 'महात्मा' अर्थात जिसकी आत्मा महान हो वह महात्मा। और सचमुच उनकी आत्मा महान है। उन्होंने बड़े-बड़े संकटों को हंसते निभाया है। जिस से वे महात्मा कहलाते हैं। 'यथा नाम तथा काम।' यह बात उनके लिये बिल्कुल सार्थक सिद्ध होती है। वे हमेशा आनंदित रहते हैं और हमेशा लोगों को आनंदित करते हैं। इसी पर संबंधित एक घटना आप को सुनाता हूं। एक बार यहां शोलापुर में पधारें। हमारे घर में उन के हाथ का अंगूठा स्नानघर के दरवाजे में बुरी तरह आ गया तथा बहुत रक्त बहने लगा पर उन्होंने पांच दस अपने कपड़े स्वयं धोये तथा परवाह न की। खाने पर बैठे पिता जी ने देखा तो एक दम डाक्टर साहिब के पास ले गये। डाक्टर साहिब देख कर हैरान हो गये पर स्वामी जी ने कहा कि किसी का अंगूठा खराब होगा हमें तो कोई कष्ट नहीं। यहां आर्य समाज में भाषण दे रहे थे। भाषण का विषय गंभीर था। वातावरण को हास्य मय बनाने के लिये शायद भगवान ने भी उनका साथ दिया कि लाउडस्पीकर खराब हो गया। सब लोग चिंतित हो गये बिजली वाला उसे बनाने लगा तो स्वामी जी बोल उठे 'बनाने की कोई जरूरत नहीं' मैं खुद ही लाउडस्पीकर हूं।' सारी की सारी जनता हंस पड़ी। इस प्रकार उनका जीवन विनोदों से भरा पड़ा है।

कुछ दिन पूर्व उनका हैदराबाद में आपरेशन हुआ था। हम उन को मिलने गये थे। वहां जाकर मैं ने देखा कि वे बहुत कष्ट में थे फिर भी वे सब से हंस-हंस कर बातें कर रहे थे। उन के मुखारविन्द पर विषाद की कोई आभा न थी।

आपको यह जान कर आश्चर्य होगा कि स्वामी जी की आयु [illegible] साल से भी अधिक होते हुये वह ऐसा जान नहीं पड़ते तो कोई यदि उन्हें इक बार देख ले ऐसा जान पड़ता है जैसे वे ५० [illegible] से अधिक के न हों। यह सब उ[illegible] हंस मुख रहने के कारण ही है।

वे स्थान-स्थान पर भ्रमण [illegible] हैं तथा वेद का अमृत बरसाते मैं सब अपने जैसे बच्चों से प्रा[illegible] करता हूं कि जब भी पूज्य मह[illegible] जी उनके नगर में पधारें तो [illegible] उनके दर्शन अवश्य करें। मैं [illegible] दीर्घ आयु और स्वास्थ्य की ईश्[illegible] प्रार्थना करता हूं।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा की सूचना

प्रादेशिक सभा की 5 5 64 की अन्तरंग सभा के प्रस्ताव नं० २ के अनुसार सभा के नए अधिकारियों का चुनाव 14. 6 64 को होना निश्चित हुआ है। समाजों के प्रतिनिधि नोट करने की कृपा करें।

स्थान की सूचना फिर दी जाएगी

सतोषराज मन्त्री सभा

आर्यसमाज मंगवाल जि० कांगड़ा में म० हंसराज दिवस

आज 19 4. 64 को महात्मा हंसराज जी की जयन्ती बड़े ही समारोह के साथ मनाई गई आज से कुछ दिन पूर्व मुख्याध्यापक डी.ए हाई स्कूल मगवाल महात्मा जी के जीवन के भिन्न भिन्न पहलुओं पर रोशनी डालते रहे। और आज हवन यज्ञ के बाद एक सम्राट सम्मेलन किया गया जिस में महात्मा जी के जीवन पर कवितायें पढ़ीं। इस के बाद रेलू राम चौधरी S. V इसके बाद श्री पूर्णचन्द जी भण्डारी मुख्याध्यापक मगवाल ने महात्मा जी के साधारण जीवन वा त्याग तथा आतिथ्य के सम्बन्ध में बतलाया कि आपने बड़े ही प्रयास से डी. ए वी. को अपनी जिन्दगी अर्पण कर रातदिन काम किया और स्वामि दयानन्द जी के मिशन को चलाया।

निवेदकरे लूराम

★

आर्य कन्या शुद्ध आयुर्वेद महाविद्यालय

कारेली बाग बड़ौदा में तीस कन्यायें हिन्दी माध्यम वाली प्रवेश की जावेंगी

गुजरात सरकार से मान्य आयुर्वेद प्रवीण के पांच वर्ष के डिग्री कोर्स के लिए हिन्दी माध्यम वाली संस्कृत के साथ मेट्रीक उत्तीर्ण तीस कन्याओं को जून से प्रवेश मिल सकेगा। नियम तथा प्रवेश पत्र मंगाने के लिये पत्र व्यवहार करें।

आचार्य

आर्य कन्या शुद्ध आयुर्वेद महाविद्यालय, कारेली बाग आत्मा राम पथ बड़ौदा

आर्यसमाज रेलवे कालोनी

आर्यसमाज न्यू रेलवे कालोनी जालन्धर का वार्षिक जल्सा [illegible] से १० मई तक समारोह से हुआ इस में स्वामी सुधानन्द जी, श्री. वीरेन्द्र जी मालिक प्रताप, पं० ओम प्रकाश जी आर्य, पं० त्रिलोक चन्द शास्त्री, प० राजपाल मदन मोहन जी चिमटा मंडली, प० हजारी लाल जी श्री, सेवाराम रेडियो सिंगर प्रो० सत्यदेव जी विद्यालंकार एम, ए. आदि पधारे। चरित्र निर्माण सम्मेलन तथा बाल मनोरंजन सभा का कार्यक्रम भी शानदार था। यहा श्री. प्यारे लाल जी कोहली, श्री चौ. देवकी नदन जी, श्री अग देव जी तथा श्री बेरी जी आदि थोड़े से ही सज्जन हैं पर अथक परिश्रमी, उत्साही हैं। उत्सव हर प्रकार से सफल रहा—

ज़िला अम्बाला आर्य वीर सम्मेलन

अम्बाला जिला आर्य वीर महा सम्मेलन नारायण गढ में १६ १७ मई १९६४ को रहा है। सम्मेलन के प्रधान कुवर यशपाल सिंह जी सदस्य लोक सभा को जलूस नगरकीर्तन १६ मई को निकलेगा इस के अतिरिक्त श्री प्रकाश वीर जी शास्त्री श्री राम गोपाल जी शाल वाले मन्त्री सार्वदेशिक सभा, श्री वीरेन्द्र जी सम्पादक दैनिक प्रताप, पूज्य स्वामी वेदानन्द जी, प्रिंसिपल भगवान दास जी, श्री राजेन्द्र जी जिज्ञासु प्रो० उत्तम चन्द जी शरर, श्रो० राम प्रकाश जी, श्री पं० हरिदत्त जी भजनोपदेशक प्रादेशिक सभा आदि नेता पधारेंगे। जिला अम्बाला के प्रत्येक आर्य समाजी तथा आर्य वीर का कर्तव्य है कि इस सम्मेलन को सफल बनाने में पूरा सहयोग दें और जलूस में सम्मिलित हो कर अपनी संगठन शक्ति का परिचय दें।

निवेदक

रामेश्वर दास आनन्द

नगरनायक आर्य वीर दल

नारायणगढ़ (अम्बाला)

श्री देव व्रत जी धर्मेन्दु

आप आर्य समाज के कर्मठ प्रसिद्ध आर्योपदेशक हैं आप बड़ी लम्बी बीमारी के बाद परम पिता परमेश्वर की कृपा से अब पूर्ण स्वस्थ होकर पुन आर्य जगत की सेवा में यथा पूर्व जुट गए हैं।

वर्षों नई दिल्ली के डी० ए० वी हायर सै० स्कूल में धर्मोपदेशक का कार्य करने के बाद अभी [illegible] अप्रैल १९६४ को आप स्कूल [illegible] ससम्मान रिटायर हुए हैं।

आप स्कूल के समय [illegible] रिक्त अपने बचे समय में [illegible] से आर्य जगत की सेवा करते [illegible] थे अब आप सम्पूर्ण समय में स्वतन्त्रता पूर्वक आर्य जगत की सेवा करते रहेंगे ऐसा मेरा विश्वास तथा भरोसा है।

देश की राजधानी दिल्ली राज्य में लगभग १३० आर्य समाजें हैं और हजारों आर्य परिवार भी हैं। यहा उपदेशकों की सदैव कमी रहती है। ऐसी अवस्था में श्री पण्डित जी जैसे अनुभवी, स्वाध्याय शील तथा आर्य समाज के प्रचार की लगन में रहने वाले आर्य बन्धु की सेवाओं से आर्य जगत को लाभ उठाने में गौरव व सौभाग्य ही समझना चाहिये।

अत जिस समाज संस्था, परिवार या व्यक्ति विशेष को श्री पण्डित जी के स्वाध्याय अनुभव व सेवाओं से लाभ उठाना होवे वे निम्न पते पर मिलकर या पत्र लिखकर लाभ उठा सकते हैं।

श्री प० देवव्रत जी धर्मेन्दु.

आर्योपदेशक

१६५४ कूचा दखिनो राय, दरिया गंज दिल्ली—६

[illegible]द कौर आर्य गर्ल्स हाई स्कूल कादियां जि० गुरदासपुर

आर्य विद्या सभा (डी ए. वी कालिज मैनेजिंग कमेटी) की प्रचालित धर्मशिक्षा की परीक्षा की उज्वल परिणाम

सुदर्शन	VI	73/100		12/-
सुरेन्द्र बाला	VIII	76/100	1st	20/
विश्व बाला	"	74/100	2nd	16/-
राम प्यारी	"	72/100	4th	10/-
शुभ लता	IX	71/100	4th	13/-
निर्मल कुमारी	IX	68/100	7th	6/-
श्रीदेवी	X	77/100	1st	24/-
नरेश	V	76/100	2nd	20/-
निर्मल	X	75/100	3rd	20/-

कुमारी श्री देवी श्रेणी में प्रथम रह कर २४/- का पुरस्कार प्राप्त के अपने स्कूल का नाम उज्वल किया है। यह सारा श्रेय मुख्याध्यापिका तथा उन की सहयोगी अध्यापिकाओं के सिर पर है।

[illegible] व प्रकाशक श्री सीतपराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा [illegible]जगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मासिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब [illegible] जालन्धर

टैलीफोन न० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 1

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे — वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक २१) ११ ज्येष्ठ २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०— २४ मई १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

अस्मां अवन्तु ते धिय:

हे प्रभो ! आप के आशीर्वाद हमको सदा बचाते रहें। आपका दिया ज्ञान तथा शुभ विचारबल हमें कुमार्ग से बचा कर सुपथ पर चलाता रहे। हमें प्रत्येक आपत्तिकाल में बचाता रहे।

सचा विश्वे पिबन्तु

सारे प्रभु के प्रेमी, भक्ति आनन्द रस का पान करने की इच्छा करने वाले भक्तजन इस मधुर सोमरस को, भक्ति के स्वादु प्याले को पीते रहें। इन भौतिक रसों के अतिरिक्त उस परमरस का अमृत भी सदा पीवें। यह रस बड़ा ही स्वादु और अनुपम है।

मा चिदन्यद् विशंसत

हे लोगो !, सावधान होकर सुनो कि आप लोग उस परमेश्वर के सिवाय और किसी वस्तु पदार्थ की या मनुष्य की, देवी देवता की ईश्वर के स्थान स्तुति उपासना, पूजा न करो। अपूज्य का पूजन प्राप्त ही है।

अ थ र्व वे द

वे दा मृ त

अथ गुरु मन्त्र:

ओ३म् भूर्भुव: स्व: तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो योन: प्रचोदयात् ॥ यजु: अ० ३६ मं.३

अर्थ :—हे महान देव ! आप (भू:) प्राण प्यारे हैं, (भुव:) दुखों के नाशक हैं तथा (स्व:) सुख रूप होकर सुखदायक हैं। हे प्राणप्रिय ! दु:खनाशक और सुखदाता प्रभो ! आप (सवितु:) सारे जगत् को उत्पन्न करने वाले (वरेण्यम) वरने ग्रहण करने के योग्य हैं, (भर्ग:) शुद्ध रूप हैं, ऐसे आप का (देवस्य) दिव्य शक्तियों के भण्डार महान् देव का हम (धीमहि) ध्यान करते हैं, अपने आत्मा में धारण करें। (धिय:) हमारी बुद्धियों को (य: न:) जो भगवान हमारी बुद्धियों को (प्रचोदयात्) शुभ उत्तम कर्मों में प्रेरित करे, प्रवृत्त करे। हमें सदा शुभ धर्मी और शुभ कर्मी बना देवे।

भाव :—यह गायत्री मन्त्र सचमुच गायन करने वालों का परित्राण करता है, उसे शुभ मार्गी बनाने में सहायक बनता है। यह गुरु मन्त्र भी है। इस में स्तुति प्रार्थना और उपासना रूप तीनों गुणों का समावेश है। प्रभु का भक्त कहता है मेरे जीवन के आधार ! आप भू: प्राणों से भी प्यारे हैं। आप से संसार में और प्यारी वस्तु कोई नहीं है। भुव: हैं, सारे दु:खों के नाशक हैं तथा स्व:—सुखों को प्रदान करते हैं। आप ही सविता हैं—इस चराचर विश्व के स्रष्टा और नियामक हैं। वरेण्य हैं, सब से पूज्य और ग्रहण करने के योग्य हैं, भर्ग: हैं, सदा ही शुद्ध रूप हैं। हम आप के भक्तजन आप की ही भक्ति करते तथा आप का ही ध्यान और धारण करते हैं। देव ! यह प्रार्थना करते हैं कि आप हमारी बुद्धियों को सत्पथ पर चलने की प्रेरणा देवें। शुभ कर्म का भण्डार भर देवें—सं०

ऋषि दर्शन

स एकोऽद्वितीय:

वह परमेश्वर एक है और उस जैसा दूसरा और कोई नहीं है। जड़ और चेतन रूप से देवता और अनेक हैं, पर महान देव वह भगवान् एक है। और न कोई होगा ही।

सर्वत्र व्याप्त:

वह महान् भगवान् सर्वत्र व्याप्त है, सर्वव्यापक है, कोई भी स्थान, दिशा या लोक ऐसा नहीं है, जहां उस परमसत्ता की सत्ता का परिचय न मिलता हो। मानव उससे बचकर किसी स्थान पर भी जाकर कोई कार्य नहीं कर सकता।

ज्ञान स्वरूपश्च

तथा वह जगदीश्वर ज्ञान स्वरूप है। सारे ज्ञानों का केन्द्र और भण्डार है। सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदिमूल परमेश्वर है। उसी से सबको ज्ञान की प्राप्ति होती है ज्ञान के स्रोत से ही तो ज्ञान मिलता है।

भा ष्य भू मि का से

अधिष्ठाता—संतोषराज सभा मंत्री — सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र श

धार्मिक चर्चा—

परमात्मा की सिद्धि और स्वरूप

[साहित्याचार्य श्री मित्रसेन जी आर्य शास्त्री, एम.ए. (पू.)]

संसार में परमात्मा के विषय में अनेकों विचार धारायें प्रचलित हैं उन में से जहां कुछ ईश्वर की सत्तायें विश्वास रखते हैं वहां कुछ यह प्रश्न करते हैं कि ईश्वर कहां है? और कुछ तो भावुकता में आकर यह भी कह देते हैं कि वह कहीं भी नहीं है। इनका विवरण ऋग्वेद में भी प्राप्त होता है :—

यंस्मा पृच्छन्ति कुह सेति घोरमुतेमाहुर्नेषो अस्तीत्येनम् ॥ऋ० २।१२।५

परमात्मा की सिद्धि के लिये अनेकों युक्तियां दी गई हैं और अब भी दी जाती हैं। हम यदि गम्भीरता से मनन करें तो उनका बीज वेद में ही प्राप्त हो जाता है। उन में से कुछ यहां प्रस्तुत हैं?

जगत का कर्ता

जब हम इस संसार पर दृष्टि डालते हैं तो देखते हैं कि इसके विकास में नियम है, निश्चय है। इसकी रचना बुद्धिपूर्वक की गई है। यह किसकी रचना है? प्रकृति की तो हो नहीं सकती और न आत्मा की। तब हमें इन से पृथक् अन्य कोई शक्ति अवश्य ही माननी पड़ेगी और वही शक्ति ईश्वर है। यजुर्वेद में इसके विषय में कहा गया है :—

पादोऽस्येहा भवत्पुनः।
ततो विष्वङ्व्यक्रामत्साशनानशने अभि॥

अर्थात् उस चतुष्पाद पुरुष (परमात्मा) का एक चरण इस संसार में प्रकट हुआ उसी से यह जंगम यह संसार उत्पन्न हुआ। वैसे भी परमात्मा जगत का निमित्त कारण है ही।

जगत का धर्ता

संसार में हम देखते हैं कि सभी वस्तुएं एक दूसरे को आकर्षण शक्ति से स्थिर हैं। यथा सूर्य और पृथिवी। यह आकर्षण शक्ति का कार्य भी तो बुद्धि पूर्वक हो रहा है। इन वस्तुओं में यह धर्म कहां से आया? और आया भी तो सूर्य पृथिवी से ही क्यों आकर्षित होता है वह और किसी की आकर्षण शक्ति से आकर्षित क्यों नहीं होता? इन सब प्रश्नों के उत्तरों के लिए हमें विवश होकर परमात्मा की शक्ति माननी ही पड़ती है। वेद ने भी कहा :—

स्कम्भे नेमे विष्टभिते द्यौश्च भूमिश्च तिष्ठतः।
स्कम्भ इदं सर्वमात्मन्वद्यत्प्राणन्निमिषच्च यत्॥

अर्थात् धारणकर्ता ईश्वर ने आकार और पृथिवी अलग-अलग थमे हुए खड़े हैं। उसी धर्ता में प्राण लेने और आंख झपकाने वाले आत्मावान जगत् है। अर्थात इसका (जड़ चेतन जगत् का) आधार ईश्वर ही है।

जगत् का हर्ता

जहां ईश्वर संसार का कर्ता है, धर्ता है वहां हर्ता भी है। संसार का प्रत्येक पदार्थ मूल से परिणाम प्राप्त करके कार्य और उसके बाद उसीमें लीन हो जाता है। कबीर ने भी कहा :—

पानी ही ते हिम भया हिम भी गया विलाय।

अर्थात जैसे पानी से बर्फ जम जाता है और वह बर्फ पुनः पिघल कर पानी बन जाता है इसी भांति संसार की मर्यादा भी दिखाई देती है। श्रुति भी इसकी पुष्टि करती है—

कालेनोदेतिसूर्यः काले निविशते पुनः। अथ० १६।५४।१

अर्थात् संख्याकर्ता परमात्मा से सृष्टिकाल में सूर्य उत्पन्न होता है और प्रलयकाल में उसी में समा जाता है।

एक विरोध और उसका परिहार

कुछ जनों का मत है कि संसार प्रकृति से ही पैदा होता है। उनका कथन है कि जैसे कुछ अमक गैस और अमुक गैसे मिलकर एक और अन्य गैस बन जाती है इसी प्रकार प्रकृति के एक तत्व दूसरे तत्व से मिलकर संसार की सृष्टि करते हैं। परन्तु यहां कर्ता और हर्ता दोनों में परस्पर विरोध है। इनका मर्यादा पूर्वक और कालानुसार कार्य में प्रवृत्त होना जड़ प्रकृति से असम्भव है। क्योंकि प्रकृति से या तो उत्पत्ति ही होगी अथवा प्रलय ही प्रलय। अतः इसकी सिद्धि के लिये हमें पृथक् शक्ति माननी ही पड़ती है, जो चेतन होनी चाहिये और उसका प्रभाव विश्वव्यापी होना चाहिये। इसको वेदान्त दर्शन में यों कहा गया है—

जन्माद्यस्य यतः ।१।१।२।

अर्थात् ब्रह्म वह है जिससे इस (संसार) का जन्म धारण और विनाश होता है। अंग्रेजी में इसे **Cosmological Agument** कहते हैं।

वैज्ञानिक तर्क

विज्ञान नाम है नियमों का। प्रत्येक विज्ञान बताता है और देखते भी हैं कि सारा संसार नियमों पर ही आधारित है। यदि नियमानुसार कार्य न हो तो संसार चल ही नहीं सकता। जैसे एक कृषक भूमि में बीज बोता है क्योंकि उसे विश्वास है कि यह अंकुरित होगा। परन्तु उसके अंकुरित होने में उसे यदि संदेह हो तो वह बीज ही नहीं बोयेगा। हम सूक्ष्म दृष्टि से देखें तो प्रत्येक क्षेत्र की रचना अद्भुत है। जगत् की छोटी से छोटी वस्तु को, उस समस्त विश्व की ध्वनि है संगठन। यह बिना ईश्वर के हो नहीं सकता। देखिये वेद भी कहता है :—

यो विद्यात् सूत्रं विततं यस्मिन्नोताः प्रजा इमाः।
सूत्रं सूत्रस्य यो विद्यात् स विद्यात् ब्राह्मणं महत्॥

भाव यह है कि जो उस अलग-अलग क्षेत्र में फैले हुये सूत्र को जानता है और फिर उस सूत्र के सूत्र को जानता है वह परमात्मा को जानता है। (क्रमशः)

प्रार्थना मन्त्रों के हिन्दी कविता में अर्थ

(प्रत्येक प्रकाशन में पढ़िए)

ओ३म् हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

शार्दूल विक्रीडित वृत्तम्—

धारे विश्व-पदार्थ गर्भस्थक में, उत्पन्न जो हैं किये।
चन्द्रादित्य-पदार्थपूर्ण रचके दाधार वे ही किये॥
भूतों के पहिले प्रसिद्ध जग स्वामी ही सदा से रहे।
शुद्धात्मावर-ईश को हम वरें, औ भक्ति आदि करें॥

द्रुतविलम्बित वृत्तम्—

परम देव! सुदिव्य स्वरूप हे!
नित विशुद्ध - सुधा - पयपायिनी॥
उचित भक्ति पिता तव प्राप्ति को।
नित करें मन में शुचिता लिए॥

विद्या सागर शर्मा
दयानन्दमठ दीना नगर

सम्पादकीय—

आर्य जगत

वर्ष २४] रविवार २०२, २४ मई १९६४ [अंक २१

यह कैसी प्रगति

हमारा देश भारत कई बातों में बड़ी सत्तम प्रगति कर रहा है। आजके नितान्त संघषमय में ज्ञान-विज्ञान की उन्नति के बिना आगे बढ़ने में कठिनता ही होगी। अन्य देशों की भौतिक उन्नति में हमें भी साथ चलना ही होगा। इसीलिए राष्ट्रीय योजनाओं का आरम्भ होता है ताकि इन पांच वर्षों में राष्ट्र के जीवन को किस स्थान पर पहुंचाना है। किन्तु आज बिना लाग लिपटी रखे यह बात बड़े ही खेदके साथ कही जा सकती है कि महात्मा गांधी का बात २ पर नाम लेने वाली भारतीय सरकार देश में शराब को बन्द तो क्या, थोड़ा कम भी नहीं कर सकी। अभी एक मान्य सज्जन ने अपने प्रवचन मे बताया कि भारत में एक वर्ष में एक अर्ब ८६ करोड़ रुपए की शराब पी गई। अन्य बातों का जाने दीजिए। शराब पीने में सचमुच राष्ट्र ने बहुत ही प्रगति की है। इस मार्ग पर देश चला है इतना तेज चला है जितनी तेज शायद धरती भी अपनी धुरी पर नहीं चलती होगी। कितना दुःख होता है इस बात पर विचार करते हुए कि अपने स्वराज्य मे शराब पीने की इतनी उन्नति ! महात्मा गांधी का नाम तो अब केवल नेताओं के भाषणों के लिए या मूर्तियों के रूप अथवा राजघाट की समाधि पर फूल-मालाएं भेंट करने के रूप में ही रह गया। वैसे उनके आदर्शों पर कोई चलने को तैयार नहीं। उनकी हित्की बातों को कोई मानता नहीं है। आज तो शराब योजनका एवं सभ्य समाज में बैठनेका एक आवश्यक अंग बन गया है। जो शराब नहीं पीता उसे आज शिष्ट नहीं कहा जाता। पश्चिम के गुरू बन कर उन को चरित्र का पाठ पढ़ाने के स्थान हम ही उनके बाहिरी चित्रों पर मोहित हो बैठे। आज दूध घी महंगा है पर शराब सस्ती है। दूध घी की नदियां तो क्या पर हां शराब के तूफान सारे देश में उमड़ते हैं। शराब की दुकानों पर भारी भीड़ लगी देख कर मन में विचार आता है कि इस देश का क्या बनेगा ? नेताओं को शेख अब्दुल्ला की तो चिन्ता है पर देश का शराब से जीवन क्या बन रहा है, इसकी तनिक भी चिन्ता नहीं। कांग्रेस की बात जाने दीजिये। अपने आप को भारतीय संस्कृति का दावेदार बताने का जोर २ से ढोल पीटने वाला जनसघ भी आज तक इसके बारे में एक शब्द भी नहीं बोला। लोगों में उछल-कूद और दिखावा बहुत है पर अन्दर पोल है। आर्यसमाज भी तो इस दिशा में अभी तक देश में सबल आंदोलन नहीं कर सका जो इसे करना चाहिए। अन्य संस्थाओं का काम तो है ही पर्दों के पीछे भागना। बाहिर रह कर तो उन से सेवा हो ही नहीं सकती।

पंजाब में तो शराब की बाढ़ आ गई है। जितनी बोतलें तो क्या सारा, कुआं भरवा लेवें। शराब की कमी नहीं। अवस्था यहां तक आ गई है कि इस की अधिकता,

ooooooooooooooooooooooo

सुलभता तथा सस्तेपन को देख कर न पीने वाले भी पीने लगे हैं। लड़कियों, स्त्रियों तक भी जा पहुंची है। सारा प्रांत ही शराबी बनता जा रहा है। इस प्रगति को कौन रोकेगा ? हम आर्यसमाज से कहेंगे और है भी कौन ? स्थान २ पर, नगर २ में, बड़े २ सम्मेलन करके इस शराब के खुले प्रवाह को रोका जाये। आर्यो ! अब मैदान में निकलो—त्रिलोकचन्द्र

अमृतसर के आर्य भाई

****

देश में जब कभी कोई संकट आता है। आर्यसमाजी व्याकुल हो जाते हैं। आर्यसमाज में आने वाला नर-नारी अपने जीवन में सारे विश्व की सेना का व्रत लेकर काम करता है। आर्यसमाज संसार के लिए तो स्थापित हुआ। इसके महान् संस्थापक महर्षि दयानन्द जी सरस्वती ने अपना यौवन, जीवन, शरीर यहां तक भस्म भी सेवा मे भेंट कर दी। उनका सब कुछ सबकी सेवा के लिए तो था। आज पाकिस्तानी बंगालमें हिन्दुओं और ईसाईयों के साथ क्या २ बलात्कार एवं अमानुषिक अत्याचार किये गये। उन समाचारों को पढ़ सुनकर मानवता तो रोती ही है पर पत्थर भी द्रवित हो जाते हैं। लाखों की संख्या में अपने-अपने घर छोड़कर एकाध वस्त्र में ही वहां से गोलियोंसे बच बचाकर कलकत्ता में आए हैं। आर्य सार्वदेशिक सभा नई देहली के महामन्त्री श्रीयुत ला. रामगोपाल जी शाल वालों ने वहां जाकर आंखों देखा दर्दनाक दृश्य देखकर जो दिल हिला देने वाला समाचार लिखा तथा प्रवचनों में सुनाया है संसत्सदस्य माननीय श्री प्र. प्रकाश वीर जी शास्त्री ने जो वक्तव्य दिया—वह किसे नहीं रुला देता ? लाखों आ गये तथा हजारों की संख्या में वहां से प्रतिदिन आ रहे हैं।

आर्य समाज तो सेवा कार्य के लिए पैदा हुआ है। सार्वदेशिक सभा ने काम आरम्भ कर दिया है। आर्य प्रादेशिक सभा ने भी सेवा पथ पर चलते हुए वहां से अनाथ बच्चों को मंगवाने को लिख दिया है। यदि इस समय पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज सभा से विशिष्ट सम्बन्धित होते तो महान कार्य आरम्भ हो जाता। मान्यवर प्रिंसिपल पं० रलाराम जी एम० ए० एम० एल० ए० ने सभा की ओर से जनता से बड़ी मार्मिक अपील कर सभा को इस कार्य के लिए हर प्रकार का सहयोग देने के लिए अपना वक्तव्य दिया है। हम इस अवसर पर अमृतसर के आर्य भाई बहिनों को विशेष बधाई देना चाहते हैं। उन्होंने इस दिशा में आर्य समाज का मस्तक ऊंचा कर कमाल कर दिया है। हमें यहां सभा कार्यक्रम पर आने पर बतलाया गया कि अभी २ यहां केन्द्रीय आर्यसमाज की ओर से गोल बाग में बंगाल पीड़ितों की सेवा के लिए बड़ा भारी जलसा किया गया। जिस में श्री ला० रामगोपाल जी मन्त्री सार्वदेशिक सभा ने आंखों देखा वहां का हाल जनता के सामने उपस्थित किया। जनता सुन कर रो पड़ी। पांच हजार रुपयों की प्रथम किस्त बंगाल पीड़ितों की सहायता के लिए भेंट की गई। ये भाई बधाई के पात्र क्यों न हों। जहां पर आर्य समाज लक्ष्मणसर के ऋषिभक्त पं० रुद्रदत्त जी प्रधान के

(शेष पृष्ठ ४ पर)

यह कहना तो कठिन है कि क्रांति युद्ध या उसके संगठन के प्रति उसका क्या रुख रहा और उसने भी उस में कोई भाग लिया या नहीं। तो भी उसकी जीवन घटनाओं की विधियों का जो संक्षिप्त-सा विवरण ऊपर दिया गया है उस से यह बात तो स्पष्ट हो ही सकती है कि क्रांति की तैयारियों आदि से उसे निकट परिचय करने का अवसर अवश्य मिला। यह अनुमान लेना आसान नहीं कि दयानन्द के सदृश भावना प्रवण और चेतनावान हृदय और मस्तिष्क का युवक उसके प्रभाव से अछूता बचा रहा हो और उस युद्ध की सफलता विफलता की उस पर कोई प्रतिक्रिया न हुई हो। अतः उसकी उन तीन वर्षों के बारे में यह पूरी चुप्पी भी कम अर्थ भरी नहीं प्रतीत होती" हमारा राजस्थान पृ० २६७-६९ ले० पृथ्वीसिंह मेहता विद्यालंकार।

"दयानन्द को विरजानन्द के पास पढ़ने की प्रेरणा विरजानन्द के गुरु पूर्णानन्द ने १८५५ में ही दी थी। परन्तु क्रांति आंदोलन के शीघ्र छिड़ जाने की सम्भावना के कारण प्रतीत होता है उसकी मनः स्थिति तब गम्भीर अध्ययन की तरफ न थी, किन्तु उसकी विफलता ने १८६० में यह मनः स्थिति पैदा कर दी" हमारा राजस्थान पृ० २७०

उपरोक्त उद्धरणों में दोनों महान् लेखकों द्वारा दी गई युक्तियें बड़ी स्पष्ट और दृढ़ हैं, जिन्होंने ऐतिहासिक क्षेत्र में एक क्रांति उत्पन्न करदी है। यह एक तथ्य है कि भारत के इस प्रथम स्वातन्त्र संग्राम के आयोजन एवं नेतृत्व में पूर्णानन्द, विरजानन्द एवं दयानन्द इन तीनों साधुओं का प्रमुख हाथ रहा। चाहे वह सशस्त्र कायिक क्रांति न होकर केवल वचन मात्र से रहा हो।

स्वातन्त्र्य संग्राम और महर्षि दयानन्द

(ले०—श्री पं० सत्यप्रिय जी शास्त्री सि० शिरोमणिः प्राध्यापक—दयानन्द ब्राह्ममहाविद्यालय हिसार)

(गतांक से आगे)

****

इस प्रकार भारत की ही कुछ देश द्रोहीणी जातियों द्वारा अंग्रेजों का साथ देने पर जब यह स्वातन्त्र युद्ध विफल हो गया और इस क्रांति यज्ञ के आयोजन को एवं सहयोगियों को निर्दयता से कुचलकर अंग्रेज अपना प्रभुत्व जमाने लगे जबकि भारत की निस्सहाय प्रजा इन गोरांगों की अत्याचार की चक्की में पिसती हुई अपने गौरव को विस्मृतकर दीन हीन हो रही थी, तब दयानन्द भी गुरु की पाठशाला से तैयार होकर कार्य क्षेत्र में आ चुका था। तब उसने अपनी लोह लेखनी द्वारा भारत की प्रसुप्त आत्मा को जगाने का कार्यक्रम अपनाया। उसकी ओजस्वी वाणी एवं बलिष्ठ लेखनी मुर्दों की धमनियों में भी मदमदाते रक्त का संचार कर देती थी। भारत के अन्दर बाद में जो कुछ राजनीतिक चेतना आई वह ऋषि दयानन्द की लेखनी का ही प्रभाव था। जैसा कि एक लेखक ने लिखा है कि 'दयानन्द का जन्म रियासत के टकारानामक गांव में समृद्ध ब्राह्मण गृहपति करसन जी के यहां सन् १८२४ में हुआ था। यों भारत के स्वाधीनता के लिए मर-मिटने और उसमें फिर से राष्ट्रियता जगाने वाले मे दोनों महा-पुरुष समसामयिक और समवयस्क भी थे। इनमें से जब एक शास्त्र का आश्रय लेकर राष्ट्र की स्वाधीनता की ज्योति को प्रज्वलित रखने में अपना सर्वस्व होमकर भी असफल रहा, तब दूसरे ने उसके स्फुलिंगों को एक प्रकार उसे फिर से जगाने की विधि निकालने के लिए शास्त्र का आश्रय ग्रहण किया।' हमारा राजस्थान पृ० २६६

'१८७३ से १८८१ तक दयानन्द उत्तर भारत के अनेक नगरों में घूमता और अपने विचारों का प्रचार करता रहा जिसके कारण भारतवासियों में अपने प्राचीन इतिहास और धर्म का गौरव फिर से जागने लगा। १८७३ से भारत राजनीतिक पुनर्जागरण के लक्षण भी प्रायः सर्वत्र प्रकट होने लगे' हमारा राजस्थान पृ० २७०, 'सन ५७ की क्रांति के पश्चात के उन महापुरुषों की सूची में जिन्हें हम उस क्रान्ति के मानसिक, सामाजिक और सांस्कृतिक उत्तराधिकारी कह सकते हैं, पहला नाम महर्षि दयानन्द सरस्वती का है' भारतीय स्वाधीनता संग्राम का इतिहास पृ० २२ ले० पं० इन्द्र जी 'इस देश में अंग्रेजी राज के कायम होने के बाद वे पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने देशवासियों के हृदय में स्वाभिमान और स्वदेशाभिमान के दीपक को बुझने २ बचाया' राष्ट्रवादी दयानंद पृ० २३ ले० सत्यदेव विद्यालंकार। 'राजनीति में स्वामी दयानन्द को नवीन राष्ट्रियता का अग्रदूत कहें तो अत्युक्ति न होगी। उन्होंने अपने मुख्य ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में स्वराज्य, स्वदेशी, स्वभाषा और स्वदेश के पक्ष में जो स्पष्ट विचार प्रकट किए थे, वह भारत की राजनीति में १९०१ से पहले व्यक्त रूप में नहीं आए थे। व्यावहारिक रूप में उनका प्रयोग तो बंगविच्छेद के पश्चात् ही हुआ' स्वाधीनता संग्राम का इतिहास पृ० २४। महर्षि दयानन्द के जिन असाधारण विचारों से भारत के राजनीतिक वातावरण में अपूर्व हलचल प्रकट हुई उनके साहित्य से स्वामी पुस्तक न्यायेन वे स्वयं उपस्थित किए जाते हैं। 'कोई कितना ही करे, परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मतमतान्तर के आग्रह रहित, अपने और पराये का पक्षपात शून्य, प्रजा पर माता पिता के समान कृपा न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है।'

सत्यार्थप्रकाश—अष्टमसमुल्लासः

इसी प्रकार भारत की दुर्दशा को देख दुःखित हृदय से ऋषिवर लिखते हैं कि 'विदेशियों के आर्यावर्त में राज होने के कारण आपस की फूट, मतभेद, ब्रह्मचर्य का सेवन न करना, विद्या न पढ़ना पढ़ाना, बाल्यावस्था में अस्वयम्वर विवाह विषयाशक्ति, मिथ्या भाषणादि कुलक्षण, वेदविद्या का अप्रचारादि कुकर्म हैं जब आपस में भाई २ लड़ते हैं तभी तीसरा विदेशी आकर पंच बन बैठता है' सत्यार्थ प्रकाश—इसी प्रकार १८५७ के स्वाधीनता संग्राम का आंखों देखे दुःखद प्रसंग का वर्णन करते लिखते हैं— (क्रमशः)

अमृतसर के आर्य भाई

(पृष्ठ ३ का शेष)

साथी हों, आर्यसमाज लारेंसरोड के प्रधान श्री सेठी जी, मन्त्री डा० वेदव्रत जी महाजन वैद्य पं० विद्या-सागर जी पं० धर्मपाल जी बी० ए० आदि लोहगढ़ के ज्ञानी पिण्डीदास जी, प्रो० वेदव्रत जी एम० एस०सी, श्रद्धानन्द बाजार के श्री विश्वनाथ जी, श्री शास्त्री जी, नवां कांटे के ला० मथुरादास जी तथा केन्द्रीय समाज के कर्मठ नेता कैप्टन केशव चन्द्रसेन जी एवं उनके साथी श्री ला० गुरचरणदत्त जी हों—तो वह नगर पीछे क्यों रहे। बहुत बड़ा उत्साह है। बड़ा काम यहां हो रहा है। हां एक बात है कि इन के महान सेवा काम की पब्लिसटी नहीं है। इस से भी दूसरों को प्रेरणा मिलती है। हम बधाई देते हैं। आर्य समाज इस काम से बहुत ऊंचा हो गया है—

—त्रिलोक चन्द्र

सामाजिक जीवन

(लेखक—श्री लालचन्द जी, मेरठ)

★★★★★★★★★★★

यदि हम अपनी आर्य संस्कृति को लिए हुए उन्नत होना चाहते हैं तो हमें अपना सामाजिक जीवन प्रगति शील बनाना होगा। क्रियात्मक रूप से जब तक हम ऋत और सत्य को विवेक द्वारा पहचान कर वर्तमान जीवन में आपस के व्यवहार में नहीं लाएंगे हम में नैतिकता व्यवहार में न रहेगी। केवल बातचीत में कही गई नैतिकता स्थिर नहीं रहा करती। हमारा आपस का व्यवहार सदाचार पर ही अवलंबित होना चाहिए। भारतीय आर्य संस्कृति में आस्तिक भाव और साथ ही परम्परा की भी रक्षा होनी चाहिए केवल रूढ़ियों की दासता से संस्कृति की रक्षा न हो सकेगी। परम्परा, वह परम्परा जो वेद से आरम्भ करके हमारी स्वतन्त्र जीवन को दृढ़ रखती हुई सहस्त्रों वर्ष तक चली, उसका सत्य रूप जानना आवश्यक है, किंतु साथ ही यह जानना भी नितांत आवश्यक है कि परम्परा में प्रवाह में चलती हुई संस्कृति समय के प्रभाव से अछूती नहीं रही। उस में जो संस्कार समय-समय पर मिले उनका प्रभाव भी है। इस लिए जिसे हम भारतीय संस्कृति कहते हैं वह शुद्ध वैदिक संस्कृति नहीं रही और न ही वह आर्य संस्कृति ही है।

हमारे पूर्वज अपने रहन-सहन में, रीति रिवाज में, समयानुकूल परिवर्तन करते रहे। कुछ परिवर्तन जाति की रक्षा के निमित्त हुए जैसे छोटी आयु में विवाह और स्त्रियों का पर्दा आदि मुस्लिम राज्य में और कुछ परिवर्तन अन्य देशों के लोगों में मेलजोल होने से हुए जैसे तम्बाकू का पीना, जो कभी हमारे देश में विक्रम की सोलहवीं शताब्दि तक नहीं किया गया, या चाय सोडा आदि का रिवाज जो अंग्रेजों के अन्ध अनुकरण से ही भारतीयों में आ गया और जो देशवासियों के स्वभाव के नितांत प्रतिकूल है। इसी प्रकार मद्यपान भारत में सदा से ही उपेक्षा क्यों, भर्त्सना की भावना से ही देखा गया और मद्यप तथा शराब का व्योपारी दोनों ही संस्कृति के दृष्टिकोण से हीन समझे गए पर अंग्रेजी प्रभाव से इन का व्यवहार भी दूषित न रहा। इसी प्रकार मांस भक्षण भी वर्तमान काल में फैल रहा है यद्यपि यह निर्विवाद सिद्ध है कि मांस भारतीयों के लिए हानिकर है। यहां का जलवायु मांस मदिरा के प्रतिकूल है। प्रसन्नता की बात है कि इस प्रकार के व्यसन अंग्रेजों की भांति अभी तक हमारी संस्कृति के अंग नहीं हुए और हमारे लिए इन बुरी आदतों को बदलना इतना कठिन नहीं। सिग्रेट पीना एक गन्दा व्यसन है और यह आजकल विवाह उत्सवों तक में तीव्र वेग से चल रहा है। रेलगाड़ियों बसों आदि में यद्यपि धूम्रपान सिग्रेट बीड़ी हुक्का आदि पीना मना है पर लोग पीते ही रहते हैं और इस प्रकार अन्य साथियों के दुःख का कारण बनते हैं। हमें अपनी समाज में आए हुए उन हानिकारक तत्वों को जो हम देख रहे हैं कि सामाजिक जीवन को गिरा रहे हैं अवश्य ही हटाने का घोर प्रयत्न करना चाहिये हमें एक सुदृढ़ और सशक्त समाज चाहिए जिस में स्वराज्य को सुचारु रूप से चलाने और विकसित करने की क्षमता हो इसके लिए समाज के रहन सहन में बसी हुई कतिपय बुरी और हानिकर प्रथाओं को तो दूर करना ही होगा।

हमें न तो प्राचीनता को केवल इसलिए अपनाना है कि वह कुछ शतियां पूर्व देश में प्रचलित थी और न आधुनिकता की ही दासता करनी है क्योंकि अन्य देश वैसा करते हैं हमें एक सशक्त और विकास में समर्थ भारतीय संस्कृति का निर्माण करना है जिसे अपनाते हुए हम भारतीय अपनी विलक्षण स्थिति भी रख सकें साथ ही विश्व भर के मनुष्यों से मिल जुलकर समन्वय से उनकी भली बातों को हम सम्मिलित करने की भी क्षमता रखें।

इतिहास से पता लगता है हमारे पूर्वजों ने स्थिति को जांच जांच कर अपना रहन सहन और वर्ताव बदला था कहीं वे सफल हुए कहीं वे असफल हुए और जाति को हानि भी हुई। आज भारतीयता को पुष्ट करने के लिए हमें कूप मंडूक नहीं होना।

विरोधियों के छोटे चक्करों में अपने आपको बन्द नहीं करना साथ ही हमने किसी का अनुकरण ऐसा नहीं करना कि हम अपना आप ही खो बैठें। हमें इस सांस्कृतिक मेलजोल में कुछ लेना भी है कुछ देना भी है। ये बिरादरियें जो मनुष्यों को आजकल जकड़े हुए हैं और जिन में फंसे रहने के कारण मनुष्यों की मनोवृत्ति संकीर्ण और संकुचित हो गई है इन पर सचाई से और गहराई से विचार करना है और चूंकि हम एक सशक्त और विकास की क्षमता लिए और परम्परा को भी निभाते हुए आगे बढ़ना है उस में बिरादरी का स्थान गुण कर्म की समानता को ही लेना होगा और ये छोटे-छोटे चक्कर तोड़ने ही होंगे। इस विषय पर गम्भीरता से युवक युवतियों तथा प्रौढ़ जनों को सोचना चाहिये।

हमारे विचार, आचार, विश्वास, क्रियाकलाप, भाषा, अतएव हमारे सिद्धांत भारतीय परम्परा को लिए हुए और आधुनिकता को भी अपनाते हुए होने चाहिये। हमें रूढ़ियों की दासता तो छोड़नी ही होगी। धर्म वह है जिस में जीवन का प्रवाह लक्ष्य की ओर चलता रहे जिस में जीवन में ही अभ्युदय हो और निश्रेयस भी हो। हम जिन सिद्धांतों को जीवन में निभाते हुए ऐश्वर्यशाली विजयशील और प्रभाव शील हों और अपने कर्तव्यों को निर्भयता से तत्परता से और पूरी लग्न और रुचि से करते रहें वे ही धर्म हैं वे ही कर्तव्य हैं वे विचार ही हमें अपने उद्देश्य तक जो व्यक्तित्व और समाज दोनों का विकास है, लेजाने में समर्थ होंगे। हम लोगों में संकीर्णता और क्षुद्र हृदय दौर्बल्य ऐसा आगया है कि साहस और उत्साह लुप्त सा दीख रहा है। ऐसी जीवनचर्या ऐसा जीवन व्यवहार जिस में उत्साह मन्द पड़ जाय और मनुष्य मोम सा हो जाए कभी धर्माचरण नहीं कहला सकते। धर्म हमें धारण करता है और हम धर्माचरण करते हुए उन्नत हो सकते हैं।

—

दयानन्द कालेज शोलापुर

का ओजस्वी परीक्षा परिणाम

शोलापुर—इस वर्ष दयानन्द कालेज शोलापुर के विद्यार्थी श्री नंदकुमार हनुमते सारी यूनिवर्सिटी के इन्टर परिक्षा में ७५-२५ प्रतिशत नम्बर लेकर सर्वप्रथम रहे। यही नहीं तीन विद्यार्थियों ने ७० प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त किये। सारी यूनिवर्सिटी में दयानन्द कालेज को २६ फर्स्ट क्लास सब कालिजों से अधिक हैं। इस महान सफलता का श्रेय प्राध्यापक वर्ग तथा विद्यार्थियों को है।

दिल्ली में वेदामृत रस प्रवाह

[लेखक—श्री भक्तराम जी शर्मा (अफ्रीका वाले)]

मेरा यह स्वभाव बन गया है कि जहां मैं जाता हूं वहां सब से पहले आर्य समाज मन्दिर का पता पूछता हूं और रविवार साप्ताहिक सत्सङ्ग में अवश्य सम्मिलित होता हूं। इसी नियम के अनुसार जब मैं अपने डाक्टर पुत्र तथा डाक्टर पुत्र वधू के हां १९-२ को मालवी नगर, नई दिल्ली-१५ में आया तो आर्य समाज के साप्ताहिक अधिवेशन में उपस्थित हुआ। हारमोनियम बजाने वाले की आवश्यकता पड़ने पर सम्मिलित भजन के साथ हारमोनियम बजाया और फिर भजन बोलने की आज्ञा पर ईश्वर स्तुति, प्रार्थनोपासना का एक भजन गाया। ढोलक बजाने वाले एक आर्य भाई का भ्रातृभाव सराहनीय है जिस ने न केवल उस सत्सङ्ग के पश्चात् अपितु अन्य समाजों द्वारा आयोजित महायज्ञों, वेद कथाओं, उत्सवों, नगर कीर्त्तनों और सम्मेलनों के अवसर पर भी आत्मीयता दर्शायी। अपने सद्-व्यवहार द्वारा एक व्यक्ति दूसरे को अपने समाज की ओर आकृष्ट कर सकता है।

आर्य समाज के अधिकारियों की सेवा में मेरा एक नम्र निवेदन है और वह यह कि उन्हें साप्ताहिक समाजों में भाग लेने वाले नव आगन्तुकों का परिचय अवश्य प्राप्त करना चाहिए। नये आने वालों की सख्या अधिक नहीं होती जो उनका समय पर्याप्त व्यय होगा। इस से वे भाई शनैः २ आर्यसमाज की ओर आकर्षित होंगे। हम आर्य भाई चारा बढ़ाने में कृपण होते जा रहे हैं। आर्य समाज के हित की दृष्टि से हमें समय का योग देना होगा। मुझे एक नया अनुभव हुआ है। एक समाज के किसी अधिकारी ने इन शब्दों 'अब पण्डित जी का व्याख्यान होगा' द्वारा घोषणा की। जब मैंने और फिर दूसरे भाइयों ने नाम घोषित करने के लिए कहा तो ज्ञात हुआ कि प्रधान जी तक उस वक्ता से अपरिचित हैं। अस्तु! भाषण के पश्चात् मन्त्री ने, जो विलम्ब से आये थे, व्याख्यान दाता का परिचय कराया। न जानने पर घोषक को वक्ता का नाम पूछने में लज्जा अनुभव नहीं करनी चाहिए।

आर्यसमाज नया बांस का ४३ वां वार्षिकोत्सव २६ मार्च से २९ मार्च तक वेद मर्मज्ञ प्रो० सत्य भूषण जी योगी वेदालंकार एम० ए० अध्यक्ष वेद विभाग मिशन कालेज दिल्ली (स्व० आचार्य राम देव जी के सुपुत्र) द्वारा उपनिषद् की कथा हुई। २३ मार्च से २६ मार्च तक महात्मा आनन्दभिक्षु जी की अध्यक्षता में भव्य महायज्ञ सम्पन्न हुआ। १९ मार्च से एक सप्ताह पूर्व भिन्न-भिन्न स्थानों पर देश प्रसिद्ध वक्ता कुंवर सुखलाल जी 'आर्य मुसाफ़िर' के प्रभावशाली भाषण होते रहे। खूब धूमधाम रही। राजस्थान एक नवयुवक संन्यासी स्वा० प्रकाशानन्द जी (स्व० ब्रह्मचारी नित्यानन्द जी के अनुयायी) का व्याख्यान विशेषतया उल्लेखनीय है। उन्होंने एक बड़े महत्व की बात कही कि जो आर्य (हिंदू) आश्रम मर्यादा का पालन नहीं करते उन्हें अपने पुत्रों से सेवा न करने की शिकायत करने का कोई अधिकार नहीं और न ही पुत्रों को सेवा करनी चाहिए। क्योंकि माता पिता अपना धर्म नहीं निभाते। व्यक्तिगत जीवन की पवित्रता की ओर हमें ध्यान देना चाहिए।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के पूज्य प्रधान प्रो० रामसिंह जी एम० ए० की अध्यक्षता में 'देश जागृति' सम्मेलन तो बहुत समारोह पूर्वक हुआ। स्वामी मेधार्थी जी, श्री के० नरेन्द्र सम्पादक 'प्रताप' व 'वीर अर्जुन' डा० महावीर जी एम० ए० (भाई परमानन्द जी के सुपुत्र) श्री विष्णु घन श्याम देश पाण्डे अध्यक्ष हिंदू महा सभा और स्व० प्रकाशानन्द जी प्रमुख वक्ता थे। 'वैदिक राजनीति' पर ठाकुर यशपाल सिंह जी एम० ए० संसद सदस्य का भाषण बहुत पसन्द किया गया। तेजस्वी व्यक्तित्व के अनुरूप ही उनका ओजस्वी व्याख्यान था। समय २ पर पं० आशानन्द जी के भजन सोने पर सुहागे का काम दे रहे थे। उपस्थिति देखकर अनुभव हुआ कि आर्यसमाज के बुद्धिवाद के विचार सुनने के लिए जनता कितनी उत्सुक है। अनेक व्याख्याता और श्रोता यह कहते अवश्य सुनेवाये कि 'वैदिक सिद्धांत तो पवित्र हैं परन्तु उनके प्रचारक आर्यसमाजियों का आचरण उनके अनुकूल नहीं।' कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' का जय घोष निरर्थक है जब तक हम स्वयं 'आर्य' नहीं बनते।

१२-४ रविवार महात्मा देवीचन्द जी एम० ए० के सभापतित्व में 'आर्य समाज स्थापना दिवस' धूमधाम से मनाया गया। महात्मा देवीचन्द जी का अध्यक्षीय भाषण तो था ही प्रभावशाली और युक्ति-युक्त परन्तु श्री जगदेव सिंह जी सिद्धांती, श्री पं० भगवद्दत्त जी बी० ए० अनुसन्धानकर्त्ता, प्रिंसिपल हरिश्चन्द्र जी और स्वामी योगेश्वरानन्द जी (ब्रह्मचारी व्यास देव) की वक्तृताएं भी प्रभावोत्पादक थीं। श्री उत्तमचन्द्र जी 'शरर' और श्री विश्व प्रेमी जी की कविताएं तो मृत शरीरों में भी जीवन डालने वाली थीं। महात्मा जी ने आंकड़ों द्वारा आर्यों की सख्या, आर्यसमाजों की संख्या और शिक्षा संस्थाओं की गणना में अद्भुत उन्नति का वर्णन किया और साहित्य प्रचार व ग्राम प्रचार के क्षेत्रों की ओर अधिक ध्यान देने की प्रेरणा की। पं० भगवद्दत्त जी ने अपने प्रवचन में सार्वदेशिक सभा और आर्य प्रतिनिधि सभाओं की आलोचना की कि उन में से किसी ने और डी० ए० वी० कालेजों व गुरुकुलों की ओर से भी किसी ने भारत सरकार की ओर से आयोजित वेद सम्मेलन, जिस में विदेशों से लगभग तीन सौ वेद के विद्वान् सम्मिलित हुए, में अपना प्रतिनिधि न भेजा और यह कि वह निजू रूप में सम्मिलित हुए। वह भी समयाभाव के कारण पूरी तैयार न करके तो भी आर्यसमाज की लाज रख ली। विद्वान् लोग बहुत प्रसन्न हुए और पण्डित० जी ने १३ मिनट के भाषण के बाद तालियों की गूंज में अपना स्थान लिया। वेद २ पुकारने से वो वेद प्रचार होने से रहा।

१३ अप्रैल को आर्यसमाज दीवान हाल की ओर से आचार्य वैद्यनाथ जी शास्त्री के प्रधानत्व में 'आर्यसमाज स्थापना दिवस' सम्पन्न हुआ। आचार्य जी का अध्यक्षीय भाषण और श्री ब्रजनारायण 'ब्रजेश' का व्याख्यान सराहे गए। ब्रजेश जी ने कहा—'आर्यसमाज के लिए कार्य क्षेत्र विस्तृत है पर वे परस्पर स्वार्थ सिद्धि के लिए झगड़ रहे हैं। सरकार के अन्याय को सहन कर रहे हैं। बहुत आर्य नेता सरकार के हाथ बिक गए। जनता को आर्यसमाज जैसी उत्कृष्ट संस्था से बड़ी आशाएं हैं। सिद्धान्तों की उपेक्षा को क्या करना है।

(क्रमशः)

दुःखी क्यों ? सुखी कैसे ?

(ले०—सुदेशकुमारी जी रेलवे रोड करनाल)

'जो कोई दुःख को छुड़ाना और सुख को प्राप्त होना चाहे वह अधर्म को छोड़ धर्म अवश्य करे। क्योंकि दुःख का पापाचरण और सुखका धर्माचरण मूल कारण है।'

नवमसमुल्लास सत्यार्थ प्रकाश

कोई भी प्राणी दुःख नहीं चाहता। उसकी प्रबल इच्छा बनी रहती है कि वह येन केन प्रकारेण सुखी हो, तथापि सभी सुखी दृष्टिगोचर नहीं होते आश्चर्यजनक बात तो यह है, कि आज विज्ञान के युग में जबकि सुख प्राप्ति के अनेकों साधन विद्यमान हैं, तो भी मानव दुःख-सागर में अवगाहित होता जा रहा है क्यों? इसका कारण क्या है? कारण के बिना तो कोई कार्य हो नहीं सकता वेद उस कारण को बतलाता है कि :—

'न तं विदाथ य इमा जजाना-
न्यद् युष्माकमन्तरं बभूव।
नीहारेण प्रावृता जल्प्या
चासुतृप उक्थशासश्चरन्ति'
॥यजुः १७।३१॥

हे जीवो! जो परमात्मा इन सब भवनों का बनाने वाला विश्व-कर्मा है, उसको तुम लोग नहीं जानते हो। इसी हेतु से तुम 'नीहारेण' अत्यन्त अविद्या से आवृत, मिथ्यावाद, नास्तिकत्व, बकवाद करते हो, इससे दुःख तुमको मिलेगा, सुख नहीं। तुम लोग 'असुतृप' केवल स्वार्थ साधक प्राण पोषण मात्र में ही प्रवृत्त हो रहे हो। 'उक्थशासश्चरन्ति' केवल विषय भोग के लिए ही अवैदिक कर्म करने में प्रवृत हो रहे हो, और जिसने ये सब भुवन रचे हैं, उस सर्वशक्तिमान् न्यायकारी परब्रह्म से उलटे चलते हो। अतएव उसको तुम नहीं जानते। यह मन्त्र एक और प्रश्न का समाधान भी प्रस्तुत करता है, जिससे एक महान् सन्देह का निवारण होता है। कि क्या हम जीवात्मा और ब्रह्म एक हैं ? महर्षि मन्त्रार्थ करते हुए इस प्रश्न का उत्तर देते हैं 'यद्युष्माकमन्तरं बभूव', ब्रह्म और जीवकी एकता वेद और युक्ति से सिद्ध कभी नहीं हो सकती, क्योंकि जीव ब्रह्म का पूर्व से ही भेद है। जीव अविद्या आदि दोषयुक्त है, ब्रह्म अविद्यादि दोषयुक्त कभी नहीं होता, इससे यह निश्चत है कि जीव और ब्रह्म एक न थे, न होंगे और न ही है किंच व्याप्य व्यापक, आधाराधेय (सेव्य सेवकादि) जन्यजनकादि सम्बन्ध तो जीवादि के साथ ब्रह्म का है। इस से जीव ब्रह्म की एकता मानना किसी मनुष्य को योग्य नहीं। 'आर्याभिविनयात'

धर्म की परिभाषा करते हुए महर्षि कणाद ने लिखा है 'यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः' जिस के आचरण करने से उत्तम सुख और निःश्रेयस अर्थात मोक्ष सुख की प्राप्ति होती है, उसी का नाम धर्म है। महामन्त्री चाणक्य ने भी लिखा है 'सुखस्य मूलं धर्मः'। सुख का मूल धर्म है। जब धर्माचरण से सुखोपलब्धि होती है तो निश्चय ही अधर्म में प्रवृत्त होने पर दुःख मिलेगा। महात्मा मनु कहते हैं कि 'वेदोऽखिलो धर्ममूलम्' वेद सम्पूर्ण धर्म का मूल है। सुख का मूल धर्म है, तो दुःख का मूल अधर्म ही होगा। यतः हमें दुःख मिल रहा है अतः यह हमें अधर्माचरण के कारण ही प्राप्त हो रहा है। क्योंकि वेद सम्पूर्ण धर्म का मूल है और हम अधर्माचरण कर रहे हैं तो प्रत्यक्ष विदित है कि हम वेद विरुद्ध चल कर अवैदिक कर्म कर रहे हैं। यही कारण है कि हमें दुःख के भागी बनना पड़ता है। यजुर्वेद भी कहता है कि 'उक्थशासश्चरन्ति' केवल विषय भोग के लिए ही अवैदिक कर्म करने में प्रवृत्त हो रहे हों और जिसने यह सब भुवन रचे हैं, उस सर्वशक्तिमान न्यायकारी परब्रह्म से उलटे चलते हों। अतएव उसको तुम नहीं जानते। इसी हेतु से तुम 'नीहारेण' अत्यन्त अविद्या से आवृत मिथ्यावाद, नास्तिकत्व, बकवाद करते हों, इस से दुःख ही तुम को मिलेगा, सुख नहीं।

जहां वेद यह बताता है कि तुम दुःखी क्यों हो, वहां उपनिषद् यह भी बताता है कि उस दुःख का अन्त कैसे होगा ?

यदा चर्मवदाकाशं वेष्टयिष्यन्ति मानवाः। तदा देवमविज्ञाय दुःखस्यान्तो भविष्यति ॥

श्वेताश्वेतर उपनिषद् ६,२०

अर्थात जब लोग चमड़े की तरह आकाश को लपेट सकेंगे, तब देव को जाने बिना दुःख का अन्त होगा। इसका अभिप्राय है कि जिस प्रकार आकाश (पोल) को चमड़े की तरह लपेटना कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव है उसी प्रकार 'ईश' को जाने बिना दुःखों का अन्त होना भी असम्भव है। वस्तुतः मतमतान्तर रूपी घोर अन्धकार में रहते हुए कोई भी मानव उसको जान ही नहीं सकता। क्योंकि कोई भी ऐसा मत नहीं है जिस ने 'ईशस्वरूप' को पूर्णतया वैदिक दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया हो। किसी का ईश्वर तो सातवें असमान पर निवास करता है, किसी का चौथे पर, किसी का गोलोक में, किसी को विष्णु लोक में तो किसी का भारतस्थित आबू पर्वत पर। वेद 'उसे' एक देशीय नहीं मानता। वेदानुसार तो 'ओ३म् खम्ब्रह्म,' 'स पर्यगात्' ॥ 'उसे' एकदेशीय मानने पर ही अधर्म का क्षेत्र विस्तृत होता है। यही कारण है कि अधर्म का बाजार गर्म है। सुखी तो तभी हुआ जा सकेगा जबकि ईश को

(शेष पृष्ठ ८ पर)

पैसे की महत्ता

[श्री मास्टर नानक चन्द्र जी, साम्बा]

जितनी भी है शानो शौकत शहरों और बाजारों में
पैसा ही पैसा है मित्र सब का बनिज व्योपारों में
पैसे की आवश्यकता है सब ही कारो बारों में
पैसा पैसा हर जा झगड़ा रोजो शब अखबारों में
पैसे पर है आंखें अकसर बड़ी-बड़ी सरकारों में
पैसा खट खट खटक रहा घर-घर बिजली की तारोंमें
पैसे की ताकत है होती बन्दूकों औ' तलवारों में
पैसे की इज्जत है केवल सेठों और साहूकारों में
पैसे की शादी है जीवन बिन पैसे फटकारों में
औरत बच्चे सब पैसे के मान हो रिश्तेदारों में
पैसे का संघर्ष है जारी उमरा और सरदारों में
पैसा क्यों है दुशमन होता नकदों और उधारों में
लुटा जाए एक धनी जन दुनिया के व्यवहारों में
दान पुन्य चन्दे आदी अकसर हर बड़ त्योहारों में
आव भगत और खान-पान में होते खरच हजारों में
क्या कुछ कमी नहीं हो सकती है रसमों बेकारों में
नीयमत करें अगर हम मिलकर अपने-अपने परिवारों में
सुखी रहेंगी महिलायें चन्द्र सोशल सुधारों में

आर्यसमाज आदर्शनगर जालन्धर स्थापना महोत्सव

आर्यसमाज आदर्शनगर जालन्धर का स्थापना महोत्सव १७ मई रविवार सायं ५ बजे से ७॥ बजे तक बड़ी धूमधाम से मनाया गया। श्री पं० रोशनलाल जी तथा भजन मण्डली वेद मन्दिर भार्गव कैम्प के भजनों के अनन्तर श्री पं० सत्यदेव जी विद्यालंकार प्रो० डी. ए. वी. कालेज जालन्धर का प्रभावशाली प्रवचन हुआ। इस महोत्सव में जालन्धर नगर की समस्त आर्य समाजों के सदस्य तथा आदर्श नगर की जनता काफी संख्या में सम्मिलित हुई। महोत्सव के व्यय का सारा भार आदर्शनगर के प्रतिष्ठित धनी मानी श्री घृतराम जी अग्रवाल ने उठाया। इस समाज की स्थापना का श्रेय उन्हीं को है।

टेकचन्द प्रभाकर जालन्धर

आर्य समाज अलावलपुर का वार्षिक समारोह

आर्य समाज अलावलपुर तथा उसके अधिनस्थ श्रीमद्दयानन्द धर्मार्थ आयुर्वैदिक औषधालय का वार्षिक उत्सव ८, ९, १० को धूमधाम से सम्पन्न हुआ। औषधालय के उत्सव को प्रधानता श्री सेठ शिवचन्द्र राय जी ने सुशोभित की। इस अवसर पर औषधालय के लिए २५००० /- की अपील की गई जिस में से १००/- श्री बालक राम जी अग्रवाल, ५००/- सेठ शिवचन्द्र रायजी, ५००/- श्री महंत वचन दास जी गद्दी झण्डा साहिब अलावलपुर २०००/- ला० हरिकृष्ण जी बजाज द्वारा शेष धन अन्य दानियों से प्राप्त हुआ कुल राशि ६०००/- हुई। उत्सव पर डाक्टर विद्यावती सेठ, कृष्णादेवी जी, बहिन सुखोराजी, तथा माता लक्ष्मी देवी जी के प्रभावशाली व्याख्यानों के अतिरिक्त श्री यज्ञदत्त जी, डा० दुर्गादत्त जी मेनन M.A.,P.H.D. प्रो० वेदी राम जी शर्मा, M. A. श्री प्रि० रलारामजी M.A., M.L. तथा अन्य महानुभावों ने पधार कर उत्सवको शोभा बढ़ाई। इन सब सज्जन महोदयों का समाज की ओर से अति धन्यवाद।

गुरप्रसाद
मन्त्री समाज

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा

की

आवश्यक सूचना

आर्य प्रादेशिक सभा की ५.५.६४ की अंतरंग सभा के प्रस्ताव नं० २ के अनुसार सभा के नए अधिकारियों का चुनाव १४.६.६४ को साईंदास हायर सैकन्डरी स्कूल जालंधर के विशाल भवन में होना निश्चित हुआ है। सभा की ओर सभी संबंधित आर्य समाजों को एजन्डा की कापी भेजी जा रही हैं सभी प्रतिनिधि अपने प्रमाण पत्रों सहित १४.६.६४ को ठीक एक बजे दोपहर पधारने की कृपा करें। भोजन और निवास का प्रबन्ध साईंदास स्कूल में होगा। प्रतिनिधि तारीख नोट कर लें।

भवदीय
संतोषराज मंत्री सभा

* *

महात्मा हंसराज साहित्य विभाग का

दृढ़ निश्चय

५० प्रतिशत कमीशन प्राप्त करें

नीचे लिखी हुई कुछ पुस्तकों पर विभागने ५०प्रतिशत कमीशन देना स्वीकार है

इस सुनहरे अवसर से

सभी स्कूल, कालिज, आर्य समाजें और उन की संस्थाएं

लाभ उठाकर सभा का हाथ बटाएं

अमृतवाणी सजिन्द ॥) अजिल्द ।-) म०हंसराज जी की सचित्र जीवन चरित्र (आनन्द स्वामी जी महाराज लिखित) कीमत ६) दयानन्द शतक (प्रि० दीवान चन्द्र जी कृत) कीमत १) प्रभु दर्शन (आनन्द स्वामी जी लिखित) कीमत २॥) महर्षि दर्शन (प्रि० दीवानचन्द्र जी कृत) कीमत २) वैदिक धर्म मुझे क्यों प्यारा है (प्रिंसीपल रामचन्द्र कृत) कीमत १॥) वैदिक धर्म की महत्ता (पं त्रिलोकचन्द्र जी शास्त्री लिखित) कीमत १२) रु० सैंकड़ा, सत्यार्थ प्रकाश हिन्दी भाष्य i, ii समुल्लास (श्री वाचस्पति जी एम० ए० कृत) कीमत प्रत्येक समुल्लास की १)।

नीचे की पुस्तकों पर 25/% कमीशन—

सत्यार्थ प्रकाश उर्दू ३॥) सभा का प्रकाशन, दयानन्दहिज लाईफ एन्ड वर्क (प्रि० सूर्य भानु जी वायस चांसलर) कीमत १॥) जीवन ज्योति और गीता दिग्दर्शन कीमत क्रमशः ॥=), ॥) आने (प्रि० दीवानचन्द्र जी कृत, स्वाध्याय संग्रह (प्रि० दीवान चन्द्र जी कृत) कीमत ॥) आने।

नोट—डाक खर्च ग्राहकों को देना होगा।

प्राप्तिस्थान—महात्मा हंसराज साहित्य विभाग A.P.P. सभा जालन्धर शहर

* *

पुस्तक परिचय

सच्ची शिक्षा—लेखिका चंचल बहिन मणिकलाल पाठक

—प्रकाशिका— " " " "

पृष्ठ संख्या ११६ कीमत १.२५ नये पैसे

उपरोक्त पुस्तक को आद्योपान्त पठन से ज्ञात होता है कि लेखिका श्रीमती चंचल बहिन ने वास्तविक शिक्षा कैसी होनी चाहिए ? तथा वर्तमान शिक्षा प्रणाली में और उसके अध्यापन में क्या त्रुटियां हैं इसका विवेचन भली प्रकार से किया है। इसके साथ व्यक्ति की शिक्षा तथा समाज की शिक्षा पर बारीक दृष्टिकोण से विवेचन किया गया है। मानव जिन नियमों का सम्पूर्ण आयु में पालन करता है उससे वह लोक और परलोक दोनों में सुख की उपलब्धी प्राप्त होती है उसे ही सच्ची शिक्षा का स्थान प्राप्त है।

हमारे विचार में उपरोक्त पुस्तक स्कूलों और कालिजों में विद्यार्थियों को पुरस्कार रूप में देने के लिए अतिउत्तम सामग्री है। विशेषकर गृहस्थियों के लिए तो आदर्श संतान बनाने के लिए अमोघ औषध है।

आर्य जगत इस पुस्तक की लेखिका को हार्दिक बधाई देता है। उसने इस पुस्तक को लिखकर आर्य साहित्य में आदर्श का काम किया है।

पुस्तक सचित्र होने पर वैदिक यंत्रालय अजमेर से प्रकाशित हुई है इससे सुन्दरता में चार चांद लग गए हैं।

प्राप्ति स्थान—चंचल बहिन माणिक लाल प्रधाना आर्य स्त्री समाज टंकारा (गुजरात)

दुःखी क्यों ? सुखी कैसे ?

(पृष्ठ ७ का शेष)

जानकर वैदिक धर्म का आचरण होगा। उसी को जानने से सुख की प्राप्ति हो सकती है यतः वह महान् है, महान् ही सुख होता है। छान्दोग्योपनिषद् में भी लिखा है :—

यो वै भूमा तत्सुखं नाल्पे
सुख मस्ति भूमैव सुखम्।
भूमा त्वेव विजिज्ञासितव्य इति।

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मासिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टैलीफोन न० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 12

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे   वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक २२) १८ ज्येष्ठ २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०— ३१ मई १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

इन्द्रमित् स्तोता

उसी इन्द्र भगवान की ही स्तुति किया करो क्योंकि वही परमात्मा सारे ऐश्वर्यों का भण्डार है, सब सुखों, मन्त्र-दाओं का प्रदाता है। उसे ही जानो, उसे ही मानो, उसी का ही स्तवन, भजन और पूजन करो।

मुहुरुक्था च शंमत

मुहु—बार२वेद की ऋचाओं साम के संगीतों, स्तुति के मन्त्रों तथा भक्तिरस भरे भावों में उसी के गीत गाओ, उसी के स्तोता बन कर सोमरस के कटोरे भर २ कर बार २ जीवन में पान करो। सवेरे भक्ति रस पियो, शाम को पियो, बार २ पियो।

यश्चकार सदावृधम्

जो नरनारी प्रभु का प्रेमी उस जीवन में सुख शान्ति, सम्पन्नता आदि की वृद्धि प्रदान करने वाले उस भगवान को चाकर अपना साथी, नेता बना लेता है, उसका आश्रय प्राप्त कर लेता है—उसे अपना लेता है।

अथर्ववेद से

वेदामृत

ओइम् नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शंकराय च। मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च॥

यजु: अ. १६ मन्त्र ४१

अर्थ :—हे प्रभो! हम सारे (नमः) प्रणाम करते हैं, नमस्कार हो आप (शम्भावय च) शम्भु के लिए, आप शम्भु-सुखरूप हैं हम आप के इस शम्भुरूप को नमस्कार करते हैं। आप (मयोभवाय च) संसार के उत्तम सुखों के दाता हैं, अतः आप के इस मयोभू रूप को नमस्कार हो। (नमः शंकरायच) आप शंकर हैं सब का कल्याण करने वाले हैं, हम आप के इस शंकररूप को प्रणाम करते हैं। आप (मयस्कराय च) मयस्कर रूप हैं—धर्म के कार्यों में युक्त करने वाले हैं। आप को नमस्कार हो। (नमः शिवाद) आप के शिवरूप को तथा (शिवतराय च) अत्यन्त ही मंगल स्वरूप को नमस्कार हो। सब का मंगल करते हैं।

भाव :—हे जगदीश्वर! आप के अनन्त नाम और अनन्त गुण हैं। कौन आप की महिमा का पार पा सकता है? देवाधिदेव! आप ही शम्भु हैं, सब का भला करते हैं। स्वयं सुखमय हैं, कल्याण स्वरूप हैं। आप ही मयोभू हैं आप का ही प्यारा नाम शंकर है। सारे विश्व के प्राणियों का कल्याण करते हैं। आप का दिया कर्मफल दण्ड भी तो प्राणियों को सुखी करने का सब से बड़ा साधन है। आप ही तो शिव और शिवतर हैं। आप के सिवाय और कौन शिव-मंगलमय बन कर हमारा मंगल कर सकता है। हम आप के पुत्र-पुत्रियां हैं। आप के प्रसाद के बिना हमारा कल्याणकारी दूसरा कौन हो सकता है। हे महान् शिव! हमारा कल्याण करो, हे शम्भो! हमारा मंगल करो, हे शंकर! हमें सदा सुपथ पर चलाते रहो—सं०

ऋषि दर्शन

तदाज्ञानुष्ठातार:

जो लोग भगवान् के भक्त उस परमेश्वर की आज्ञा का अनुष्ठान करते हैं, आदेश पर चलते हैं, प्रभु के परम विश्वासी बनकर उस पिता की निर्धारित मर्यादाओं पर चलते हैं। उसी के बन जाते हैं।

स्थिरा भवन्ति

वे अमृत पुत्र प्रभु के प्रेमी अपने जीवन के प्रत्येक काम में स्थिर हो जाते हैं। उन का वचन अटल, मन स्थिर तथा कर्म प्रशस्त हो जाता है। उनको अपने जीवन पथ से संसार की कोई भी शक्ति विचलित नहीं कर सकती है। वे ध्रुव होते हैं।

विद्वांस: क्रान्तदर्शना

जो विद्वान् हैं, जिन्होंने ज्ञान का प्रकाश पा लिया है। सत्य विद्या का प्रसार जिनको मिल गया है, वे क्रांतदर्शी बन जाते हैं। उनकी दृष्टि बड़ी दूर पैनी बन जाती है। दूरदर्शी हो जाते हैं।

भाष्यभूमिका

अधिष्ठाता—संतोषराज सभा मंत्री   सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

कर्मफल का दाता

धर्म या आचार का फल अवश्य प्राप्त होता है। यदि अच्छा फल प्राप्त न हो तो कर्ता कर्म करने में प्रवृत्त हो न हो। अतः वेद ने कहा :—

सविता सत्य धर्मा

अर्थात् प्रेरक प्रभु का कर्म अटल है। उसी ने सत्य को धर्म बनाया है। गीता ने इस विषय में कहा:—

नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते ॥

अर्थात् यहां किया हुआ कर्म नष्ट नहीं होता। परिपाक का प्रतिबन्धक कोई नियम या कारण नहीं।

पूर्णसत्

कांट ने इस विषय में उक्ति दी थी कि महत्तम महान का भाव मनुष्यों में है और इसका निराकरण नहीं हो सकता, अतः परमात्मा विद्यमान् है। इसका भाव यह है कि अपूर्ण जीव पूर्णता की भावना रखता है। यह भावना काल्पनिक भ्रमात्मक भावना से भिन्न है। इसके अतिरिक्त उसने पूर्णता को कभी नहीं देखा फिर भी उसीकी ओर जाने का यत्न करता है, इसका अर्थ यह हुआ कि ऐसी कोई न कोई शक्ति है अवश्य जो सत्ता ज्ञान, साफल्य आदि सभी दृष्टियों से पूर्ण है। वेद ने इसका उत्तर देते हुए कहा :—

न कुतश्चनोनः। अथर्व० १०।८।४४ वह किसी बात में ऊन नहीं।

दूरे पूर्णे निवसन्ति दूर ऊने न हीयते। अथर्व० १०।८।१५॥

अर्थात् परमात्मा परिपक्व जीव से उत्कृष्ट है। और अपरिपक्व ता उसे जानता ही नहीं। अतः इस से भी परमात्मा की सिद्धि होती है।

अन्तः साक्ष्य

अन्त साक्ष्य की दृष्टि से वेद का कथन है :—

वेदस्तत्पश्यन्निहितं गुहायत्॥ अथर्व०२।१।१॥ अर्थात् योगी हृदय देश में जो छिपा है उसे देखता

धार्मिक चर्चा—

परमात्मा की सिद्धि और स्वरूप

(साहित्याचार्य श्री [illegible] आर्य शास्त्री, एम० ए० (पू०)

(गतांक से आगे)

है। ऋग्वेद ने कहा :—[illegible] तं अने [illegible] परोमनीषया। गृभ्यन्ति-जिह्वासतम् ।।८।८।७२।३ इस प्रकार से अन्तः साक्ष्य की दृष्टि से भी परमात्मा की सिद्धि होती है।

परमात्मा का स्वरूप

परमात्मा का वैदिक स्वरूप निम्न प्रकार है। उस के स्वरूप में निम्न बातें हैं :—

ज्ञान

परमात्मा का सच्चा स्वरूप आर्य समाज के द्वितीय नियम है। उस में सब से प्रथम है सच्चिदानंद सत् प्रकृति भी है, सत् चित् आत्मा भी है और सत् चित् आनन्द केवल परमात्मा है। परमात्मा और आत्मा के ज्ञान में भेद यह है कि परमात्मा ज्ञानस्वरूप है सर्वज्ञ है। अथर्व वेद ने कहा :—

सर्वं तद्राजा वरुणो विचष्टे यदन्तरा रोदसी यत्परस्तात्।

संख्याता अस्य निमिषो जनानामक्षानिव श्वघ्नी निमिनोतितानि ॥

अर्थ :—पृथिवी और आकाश में जो कुछ होता है उसे वरुण (परमात्मा) जानता है। यही नहीं उस के तो प्राणी प्राणी के निमिष तक गिने हुये हैं। आत्म हत्यारे इन निमिषों को जुए का दाव बनाते हैं।

आनन्द स्वरूप

विश्व को अन्य सभी चीजें अपूर्ण हैं। पूर्ण केवल परमात्मा है। अपूर्ण होने के कारण अन्य सभी चीजों में दुःख है और पूर्ण होने के कारण परमात्मा आनन्द स्वरूप है। वेद के शब्दों में तो कहिए :—[illegible] न [illegible] [illegible] नम ! ॥

निराकार आदि

पूर्ण होने के कारण परमात्मा में निराकार[illegible], अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र, आदि भावों का समावेश है, वेद में इन सबके प्रमाण विद्यमान हैं। स्थानाभाव के कारण हम उन्हें यहां नहीं दे रहे।

एक मात्र उपास्य

आर्य समाज के द्वितीय नियम में यह कहा गया है कि उसी (परमात्मा) को उपासना करनी योग्य है। यह भी वेद से प्रमाणित है :—

दिव्यो गन्धर्वो भुवनस्य यस्पतिरेकएवनमस्यो विक्ष्वीड्यः।

अथर्व १।२।११

अर्थात्—प्रकाश स्वरूप, ज्ञान और क्षेत्र का धर्ता संसार का एक मात्र स्वामी हो नमस्कार के योग्य है, उसी की स्तुति प्रजाओं में करो।

ईश्वर की एकता

प्रश्न यह हो सकता है कि उक्त प्रमाणों से ईश्वर को सिद्धि और उसका स्वरूप तो निश्चित हो गया परन्तु उसके अनेकों कार्य होने के कारण क्या उसकी पृथक्-पृथक् शक्तियां नहीं ? दूसरे शब्दों में ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि क्या अनेक ईश्वर नहीं ? उत्तर में निवेदन है कि पूर्णता जो कि ईश्वर में होनी चाहिए वह सब में नहीं है। हां उसके अनेक कार्य या शक्ति होने के कारण नाम अनेक हैं। जैसे एक बालक पिता, माता का पुत्र, भाई, बहिन का भाई, मामा का भांजा, गुरु का शिष्य और शिष्य का गुरु होता है, उसके नाम भी उसी प्रकार के अनेक होते हैं, परन्तु वह होता एक ही है। वैसे ही ईश्वर भी एक ही है। वेद ने भी कहा—

एक सद्विप्रा बहुधा वदन्ति।

उपसंहार

इस प्रकार हम ने यहां सिद्ध करने का प्रयत्न किया कि परमात्मा की सत्ता विद्यमान है, और उसका वैदिक स्वरूप क्या है तथा वह एक ही है अनेक नहीं।

प्रार्थना मंत्रों के हिन्दी कविता में अर्थ

प्रणेता—विद्यासागर शर्मा दयानन्द मठ, दीनानगर

(गतांक से आगे)

ओ३म् विश्वानिदेव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद् भद्रं तन्न आसुव ॥

द्रुतविलम्बित वृत्तम्—

(१) सकल संसृति के जनिता पिता !
दुरित दूर करो द्रुत हे पिता !
मधुर सत्य-सुधा प्रिय-भाषिणी।
रसवती मृदु ये रसना बना ॥

(२) परम दिव्य सुप्रेरक हे प्रभो !
कलुष तामस दुष्ट-कुवृत्तियां।
दुखद-दुर्गुण-कर्म-स्वभाव को।।
कर कृपा हम से हर लो पिता !

(३) सुगुण पुञ्ज विशुद्ध पदार्थ को,
सुखद भद्र-स्वभाव-सुकर्म को ॥
वरद-हस्त बढ़ा कर हे पिता !
सकल प्राप्त करा हम को पिता !!

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२१, ३१ मई १९६४ [अंक २२

आर्य समाज की शुद्धि

एक कड़वा सत्य

शुद्धि जीवन का एक आवश्यक अङ्ग है। इस की दोनों जीवनों को भारी आवश्यकता है। व्यष्टि और समष्टि, घटक तथा समाज, अङ्ग एवं विराट् शरीर सब के लिए इसका बड़ा महत्व माना गया है। कारण और कार्य का परम्परा से गहरा सम्बन्ध चला आ रहा है तथा सदा सम्बन्ध बना रहेगा। कारण पवित्र और शुद्ध हो तो निश्चित बात है कि उस से सम्पादित होने वाला कार्य भी उसी के अनुरूप शुद्ध-पवित्र होगा। कारण दूषित, मैला, अशुद्ध तथा विकार वाला हो तो उसका कार्य भी विकृत और दूषित ही होगा। योग जैसे आदर्श पथ पर चलने के लिए भी शुद्धि की परमावश्यकता स्वीकार की गई है। योगदर्शनकार ने इस पर भी पूर्ण प्रकाश डालते हुए अपने गम्भीर सूत्रों में भली प्रकार विवेचन किया है। शरीर और मन दोनों की शुद्धि के साधनों की चर्चा मिलती है। महात्मा मनु जैसे आचार्यों ने भी अद्भिर्गात्राणि शुद्धयन्ति—कह कर चारों तत्वों की शुद्धि के प्रकार बता दिये हैं। शरीर जल से, मन सत्य से, आत्मा ज्ञान तप से तथा बुद्धि ज्ञानादि से पवित्र बना करती है। खोट सोने चांदी में आ जाये, मैल पात्र और वस्त्र में भर जाये, अशुद्धि जल तथा दूसरे पेय पदार्थों में आ जाये तो इन सब को शुद्ध पवित्र करना पड़ता है—इसके बिना निर्वाह और गुजारा नहीं। मनुष्य की इन्द्रियां भी अशुद्ध हो जायें तो वेदाचार्य—वाच ते शुन्धामि—कह कर उनको पवित्र बनाने का वैदिक सन्देश दिया करते थे। नाना शास्त्रों में शुद्धिशास्त्र भी अपने स्थान पर बड़ा महत्व रखता है। व्यक्ति शुद्ध है तो सारा समाज पवित्र है। यदि व्यक्ति का आचार, विचार और व्यवहार घटिया है। उस में अत्यन्त खोटापन तथा छोटापन है तो सारा समाज वैसा बन जाता है। इसी लिए समय २ पर समाज के जीवनमें शुद्धि का ध्यान रहता है। आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने वेद के आदर्श और उच्च शब्द आर्य को ले कर उस के संगठन का नाम आर्य समाज रखा जिस का अर्थ है कि आर्यों का जीवन के प्रत्येकस्तर में ऊंचे लोगों का समाज। संसार को भी आर्य बनाने का अर्थ यही था कि ऐसे शुद्ध, पवित्र सब अंगों में उत्तम सज्जनों से सारा विश्व उन्नत बन जाये। मानवता का मान होता रहे। उदात्त विचार, चारु चरित्र तथा विशाल मनोभाव का शासन सारे जगत् को फिर से एक बार निष्पाप बना दे। ऐसी भव्य भावना एवं ध्रुवधारणा मन में विराज रही थी! आर्य समाज में संख्या प्रधान न थी वरन जीवन प्रधान था। यहां पर धनबल, शरीर, बाह्यज्ञान, अधिकार, भौतिकता, उपाधि आदि का बल गौण था—चरित्र और जीवन बल की ही प्रधानता थी। धन धर्म के सामने नतमस्तक होता था। धर्म धन और धनी का दास नहीं था। उदात्तजीवन महात्मा हंसराज जी, अमर शहीद पं. लेखराम जी, तपोमूर्ति स्वा. सर्वदानन्दजी सर्वमेधी प. मेहर चन्दजी प्रिंसिपल, सौम्यभाव ला. मेहर चन्द जी, साधुभाव ला. साईं दास जी का प्रभाव धन या सत्ता से न था अपितु जीवन के प्रकाश से था। धन तो उन के पास था। धन तो उन के पास था ही नहीं। आर्य विचार उन की सब से प्यारी सम्पत्ति थी। दीप्ति से भरी उन की व्यक्ति थी। चमकते हुए दीपक थे—प्रकाशमयी ज्वाला थी-तभी तो उन के सम्पर्क में आ कर कितने जीवन बन गये। दूसरों का खोटापन, छोटापन निकल गया। उन के संसर्ग की पवित्र अग्नि का स्पर्श पा कर कितने जीवनों की मैल दूर कर कुन्दन बना गये। बुझे दीपक जगमगाये। विचार समिधा दमक उठी। जीवन की व्यक्तियां बन गईं सारा समाज शुद्ध हो गया।

किन्तु युग बदला। आर्य समाज ने दूसरे अनेक चक्रों और आन्दोलनों के साथ एक शुद्धि का भी आन्दोलन चलाया। दूसरों को भी शुद्ध किया, अपनों की भी शुद्धि कर के समाज का अंग बना दिया। शुद्धि का अर्थ है कि किसी के संकुचित, विकृत विचारों और मैले जीवन को साफ करके पवित्र बना देना। घर में कुछ समय बाद जल में और वाटिका में भी समय के बीतने पर नाना प्रकारका ऐसा वैसा घास, ऐसी वैसी बूटियां स्वयं उग कर फल वाले वृक्षों के साथ २ या अन्य पौदों के साथ बढ़ने लगती हैं—आकाश बेल बनकर पौदों, वृक्षों को घेरकर उन का रस लेकर स्वयं बढ़ती जाती हैं तथा उन जीवन देने वालों को पीला बनाती जाती हैं। यही अवस्था समाज और राष्ट्र के समष्टि जीवन में आ जाती है। आर्यसमाज में युग बीतने पर ऐसी कुछ दशा आने लगी है। आर्य संगठन के विशाल उपवन में इस प्रकार के असंगत पौदे और घास यत्र तत्र उगकर समाज के विशाल जीवन को कुछ दुर्बल करने लगे हैं। आकाशबेल बनकर इस आन्दोलन के महान् वृक्ष को चारों ओर से ढांपने लगे हैं। परिणाम सामने आने लगा है।

आर्यजगत के आदर्श विद्वान कवि के महान् सुपुत्र श्री प. हरिशंकर जी शर्मा ने गत दिनों एक संक्षिप्त किन्तु मार्मिक लेख लिखकर सारे आर्यसमाज का ध्यान इसी आवश्यक बात की ओर खींचा था। उन्होंने लिखा था कि आर्यसमाज अब तक दूसरों की शुद्धि करता आया—किन्तु अब दूसरों के साथ २ उसे अपनी भी शुद्धि करनी चाहिए! देखना चाहिए। कि इसकी वाटिका में कितना और कैसा २ असंगत घासपात पैदा हो गया है। कैसी २ आकाशबेलों ने इसके रस को चूसकर इसे पीला बनाना आरम्भ किया हुआ है। इस मिलावट और मिलावटी भाग की शुद्धि करें इसके बिना समाज पूर्ण रूप से पनपेगा नहीं। मिलावटी घी, दूध, खाद्य पदार्थ जैसे स्वास्थ्य की हानि करते हैं—उसी प्रकार समाज में यह मिलावटी भाग भी सारे समाज को बिगाड़ देता है।

स्वातन्त्र्य संग्राम और महर्षि दयानन्द

(२)

ले० श्री पं० सत्यप्रिय जी शास्त्री सि० शिरोमणि
प्राध्यापक–दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

(गतांक से आगे)

'जब सं० १९१४ के वर्ष में तोपों के मारे मन्दिर मूर्तियां अंग्रेजों ने उड़ा दी थीं तब मूर्ति कहां गई थी? प्रत्युत बाघेर लोगों ने जितना वीरता की और लड़े शत्रुओं को मारा परन्तु मूर्ति एक मक्खी की टांग भी न तोड़ सकी। जो श्री कृष्ण के सदृश कोई होता तो इनके धुर्रे उड़ा देता और ये भागते फिरते' सत्यार्थ प्रकाश 'अन्याय विध्वस्त हे महाराजाधिराज परब्रह्म ? अखण्ड चक्रवर्ती राज्य के लिये शौर्य, धैर्य, नीति-विनय पराक्रम और बलादि उत्तम गुणयुक्त कृपा से हम लोगों को यथावत् पुष्टकर। अन्य देशवासी राजा हमारे देश में कभी न हों तथा हम लोग पराधीन कभी न हों' यजु० ३८-१४।

इसी प्रकार स्तुति, प्रार्थना, उपासना के पुस्तक आर्याभिविनय में भी प्रार्थना है। ऐसे २ प्रसंगों से महर्षि का साहित्य भरा पड़ा है। प्राचीन भारतीय संस्कृति का वह गौरव जिसके कारण भारत विश्व का पथ-प्रदर्शन एवं नेतृत्व करता था, उसी विस्मृत गौरव को महर्षि जनता के हृदय में जागृत करना चाहते थे। वे अपने देश को दासत्व की शृंखलाओं में जकड़ा हुआ क्षण भर भी देखना पसन्द न करते थे। राष्ट्रिय स्नेह की भावना उन में कितनी प्रबल थी, यह निम्न घटना से अनुमान लगाया जा सकता है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती प्रचार करने के उद्देश्य से १६ दिसम्बर १८७२ को कलकत्ता गये। वहां वे राजा ज्योतीन्द्र मोहन टैगौर के प्रमोदकानन में ठहर कर मार्च १८७३ तक प्रचार करते रहे। उसी अवधि में भारत के तत्कालीन वायसराय लार्डनार्थब्रुक एक दिन महर्षि से मिले और बोले कि—

'देखो हमारे राज्य में अमनचैन व न्याय है अतः आप हमारे राज्य के स्थैर्य के लिये ईश्वर से प्रार्थना कर दीजिये' उस समय महर्षि ने जो उत्तर दिया वह उन के विशुद्ध एवं सीमातीत राष्ट्रिय स्नेह को प्रकट करता है—उन्होंने कहा 'राजन् ? मैं तो प्रतिदिन प्रातः उठकर अपने परम पिता परमेश्वर से यही याचना करता हूं कि शीघ्रातिशीघ्र यह अंग्रेजी राज्य उठ जाय मैं शीघ्र ही वह दिन देखना चाहता हूं जब कि भारत का शासन हम भारतीयों के हाथ में हो!' महर्षि के इस वीरता पूर्ण उत्तर से वायसराय चकित हो गया तथा इण्डिया आफिस को भेजेगये दस्तावेजों में उस ने लिखा कि 'इस विद्रोही फकीर पर कड़ी नजर रखी जाये' देखिये—वीर अर्जुन देहली ६-४-६१ के अंक श्री दीवान अलखधारी जी का लेख, उस समय महर्षि ने अंग्रेजी राज्य का सहयोग देने पर भी बल दिया था। बम्बई में निर्धारित २८ नियमों में यह लिखा कि जहां तक हो सके न्याय के लिये सरकारी अदालत का दरवाजा न खटखटाओ।

उस समय अंग्रेजी सरकार की ओर से भारतीयों पर जो कठोर प्रतिबन्ध लगे हुए थे, महर्षि ने १८७५ के सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम संस्करण में उन की कठोर शब्दों में भर्त्सना करते हुवे लिखा 'एक तो यह बात है कि नौन और पौन रोटी में जो कर लिया जाता है वह मुझ को अच्छा मालूम नहीं देता, क्योंकि नौन के बिना दरिद्र का भी निर्वाह नहीं किन्तु सब को नौन का आवश्यक होता है। और वे मेहनत मजदूरी से जैसे तैसे निर्वाह करते हैं उन के ऊपर भी यह नौन का दण्ड तुल्य रहता है।

इससे दरिद्रों को क्लेश पहुंचता है...अतः कर लवणादिकों के ऊपर न चाहिये। पौन रोटी से भी गरीब लोगों को बहुत क्लेश होता है। क्योंकि गरीब लोग कहीं से घास छेदन करके ले आये वा लकड़ी का भार उनके ऊपर कौड़ियों के लगाने से उनको अवश्य क्लेश होता होगा। इससे पौन रोटी का जोकर कर स्थापन करना सो भी हमारी समझ से अच्छा नहीं।" पृ० ३८४—८५

"सरकार कागद को बेचती है और बहुत सा कागजों पर धन बढ़ा दिया है। इससे गरीब लोगों को बहुत क्लेश पहुंचता है। सो यह बात राजा को करनी उचित नहीं, क्योंकि इसके होने से बहुत गरीब लोग दुःखपा के बैठे रहते हैं। कचहरी में बिना धन से कुछ बात होती नहीं इससे कागजों के ऊपर जो बहुत धन लगाना है सो मुझ को अच्छा मालूम नहीं देता।" पृ० ३८७।

इस प्रकार हम देखते हैं कि महात्मा गांधी ने जिस नमक कानून के विरुद्ध सन् १९३० में सत्याग्रह द्वारा आवाज उठाई महर्षि दयानन्द ने अपने उक्त लेख द्वारा इस विषय में ५५ वर्ष पूर्व ही अंगरेजी सरकार को दुत्कारा था।

अतः महर्षि दयानन्द ने उस राष्ट्रियता को जो कि स्वातन्त्र संग्राम की विफलता पर अंग्रेजों के अत्याचार एवं दमन से रौंदी जाती हुई भारत की निःसहाय प्रजा शासन के पाशविक आतंक से जुबान पर भी नहीं लाईजा सकती थी अपने विशुद्ध राष्ट्रिय प्रचार से पुनः जागृत करने का अद्भुत प्रयास किया। उसी के परिणाम स्वरूप तब से जनता में राष्ट्रियता का सांस चलने लगा। उसने समझा कि हमारा भी हमारे वतन में उत्पन्न कोई मार्गदर्शक एवं खबर लेने वाला है। भारतीय प्रजा में उठती हुई इस चेतना को अंग्रेज सहन न कर सके उसी के फलस्वरूप महर्षि दयानन्द को बृटिश साम्राज्य की कूटनीति का शिकार होकर अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ा। सो कैसे एक प्रत्यक्षदर्शी की बात सुनिये—'श्री डी० पी० जौहरी गर्मी के दिनों में जोधपुर गये। वे पानी की तलाश में एक तालाब के किनारे पहुंचे और वहां उन्होंने ७० वर्ष के वृद्ध आर्यसमाजी को सन्ध्या करते देखा। जब उन्होंने सन्ध्या समाप्त की तो श्री जौहरी ने उन से स्वामी जी की मृत्यु के सम्बन्ध में बातचीत आरम्भ की। जौहरी जी के प्रश्न का उत्तर देने से पहले वृद्ध महाशय ने उन से यह शपथ ले ली कि उनका नाम प्रकाशित नहीं किया जायेगा। यह शपथ लेकर जो कहानी वृद्ध महाशय ने जौहरी जी को सुनाई उसका संक्षेप यह है कि जिन दिनों महर्षि दयानन्द जोधपुर में थे अंग्रेजी सरकार की ओर से रियासत के एक अत्यन्त आवश्यक अन्तरंग विषय पर चिट्ठी प्राप्त हुई। जिसका उत्तर शीघ्र मांगा गया था। रियासत की कौंसिल अभी उस पर विचार ही कर रही थी कि महाराजा ने उस चिट्ठी की चर्चा महर्षि से करदी। महर्षि ने जो सलाह दी महाराजा ने उसके अनुसार ही उत्तर भेजा। उत्तर ऐसा चतुरतापूर्ण था कि उस से इण्डिया आफिस चकित हो उठा। वहां से रेजीडेण्ट को लिखा गया कि जिस दरबार में इस पत्र पर चर्चा हुई उसकी तस्वीर भेजी जाए। जिस से पता लग सके कि यह उत्तर किस के दिमाग की उपज है। (क्रमशः)

आर्यसमाज की कहानियां

मैं इस लेखमाला में आर्यसमाज के निर्माताओं के ज्वलन्त जीवन की स्फूर्तिदायक घटनाएं पाठकों की सेवा में उपस्थित करूंगा। मेरी चाह है कि आर्यजन इन घटनाओं का इन घटनाओं का प्रचार व प्रसार करके आर्यसमाज के गौरव व प्रतिष्ठा को बढ़ाएं यदि पाठकों ने इस लेखमाला को पसन्द किया तो मैं इस लेखमाला को जारी रखूंगा। मैं यह कोष लुटाना चाहता हूं लूटने वाले चाहिए —

श्री राजेन्द्र जी 'जिज्ञासु' एम. ए. आर्यजगत के प्रतिष्ठित युवक लेखक है। आप आर्यजगत को आर्यसमाज की सजीव तथा आधुनिक युग को रोचक कहानियां प्रस्तुत लेख में भेंट कर रहे हैं। अवश्य पढ़ें तथा परिवार को सुनाएं ताकि भावी सन्तति के भीतर नवीन जागृति तथा उत्साह पैदा हो।

—व्यवस्थापक

ईश्वर विश्वासी महात्मा :— सभा के भूतपूर्व मन्त्री श्री देश राज जी सूरी ने एक बार बताया कि मान्य महात्मा हंसराज जी यात्रा आदि पर जाते समय पहले ओ३म् विश्वानि देव—मन्त्र का पाठ किया करते थे। एक बार एक उत्सव पर गए। कुछ साथी साथ थे। मार्ग में लारी बिगड़ गई। उतरना पड़ा। एक साथी ने उपहास में कहा 'देखें अब आपका ओ३म् विश्वानि देव क्या करता है?' महात्मा बोले अवश्य कुछ करेगा। इतना कहना ही था कि एक कार महात्मा जी के निकट आकर रुक गई। कार में महात्मा जी का एक भक्त ठेकेदार बैठा था। महात्मा जी को नमस्ते कह कर वहां रुकने का कारण पूछा। महात्मा जी ने बात बताई। झटपट सबको कार में बिठाकर उक्त महाशय निर्दिष्ट स्थान पर महात्मा जी को ले गए सारे साथी महात्मा जी के अडिग ईश्वर विश्वास का प्रत्यक्ष फल देखकर चकित रह गए।

एक आर्यवीर आङ्गना — "हैद्राबाद सत्याग्रह से पूर्व एक बार १०००० मुसलिम गुण्डों ने हैद्राबाद के यशस्वी आर्य नेता पं. विनायक राव जी के घर पर आक्रमण कर दिया। घर में राव साहिब की पत्नी, उनका एक शिशु-गुरुकुल घटकेश्वर एक अध्यापक, रियासत के पुराने क्रान्तिकारी आर्यवीर श्री अशोककुमार जी एवं एक सिख सेवक शेरसिंह थे। राव साहिब घर में न थे। मकान के द्वार को बन्दकर लिया गया। पर बचाव कैसे हो? कब तक दस सहस्र आक्रमणकारियों का सामना किया जा सकता था। मौत घूर २ कर देख रही थी। शेरसिंह ने सोचा कि बचाव नहीं हो सकता। द्वार के पास यह सोच कर बैठ गया कि मुझे कोई क्या कहेगा मैं कोई आर्य समाजी थोड़ा हूं। राव साहिब के घर कोई शस्त्र भी न था। सौभाग्य से राव साहिब के मान्य पिता श्रद्धेय आर्य गौरव न्यायमूर्ति केशव राव जी का पिस्तौल पड़ा हुआ था अलमारी से वह निकाला गया। राव साहिब के नन्हे पुत्र को जवार की बोरियों की ओट में सामान में छिपाया गया। छत पर चढ़ कर श्री अशोक कुमार जी ने मकान के विभिन्न कोनों से कुछ फायर किये। आक्रमणकारी समझे घर में कई आर्य समाजी हैं। कुछ डरे और पीछे हटे। इतने में यह समाचार नगर में फैला। राव साहिब को अपने मित्र के घर सूचना मिली। वह मित्र राव साहिब को कार में बिठा कर लाया और मकान के बाहर छोड़ कर स्वयं कार लेकर खिसक गया। पुलिस भी नाटक करने आई। पुलिस में एक राजपूत सैनिक ने राव साहिब को बचाया। मकान की छत से एक और वार किया गया। उस दिन राव साहिब के घर कुछ मराठों का भोजन था। महाराष्ट्र में चटनियां व भाजियां कई प्रकार की होती हैं। पत्तलों पर थोड़ी-थोड़ी चटनियां लगा कर छत से बाहर फैंकी गईं। मुसलमानों ने समझा घर में मराठवाड़ा के कई मराठे आर्य वीर आज जमा हैं वह डर कर और पीछे हटे कुछ फायर किये गये इस प्रकार आर्य वीर अशोक जी एवं राव साहिब की पत्नी आर्य वीर आंगना के साहस व बुद्धि कौशल से सहस्रों गुण्डे पराजित हो गये। यह कहानी हमारे इतिहास का सुनहरी पृष्ठ है।

बलिदान की सबल प्रेरणा— पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज एक बार हैदराबाद पधारे। पं० नरेन्द्र जी से बात करते हुए आप ने कहा, "नरेन्द्र आप अत्याचारों के विरुद्ध संघर्ष करते जाओ एक दिन निज़ाम की सरकार पराजित हो कर रहेगी। संघर्ष करते हुए ठीक है कि बीसियों आर्य वीर कटेंगे, मरेंगे और बीसियों की हड्डियां टूटेंगी, सैंकड़ों जेल में गलेंगे और सड़ेंगे परन्तु लाखों पीड़ितों के बंधन इस बलिदान से कटेंगे और अन्यायी शासन समाप्त हो जावेगा।" सुधीर साधु की अमर वाणी के प्रभाव से आर्य वीरों ने बढ़ चढ़ कर बलिदान दिये परिणाम स्वरूप हैदराबाद की जनता की सैंकड़ों वर्षों की दासता मिट गई।

"अभी कितनी बार पगड़ी उतरेगी"

दिवंगत पं० बुद्ध देव जी मीरपुरी ने एक बार यह कहानी सुनाई कि पूज्य महात्मा हंसराज जी मजीठा जिला अमृतसर पधारे। वहां उन के एक श्रद्धालु इनजीनियर (सम्भवतः वह अब भी हैं) उन को एक धनी पुरुष के पास समाज सेवा के वास्ते भिक्षा के लिये ले गये। उस धनी पुरुष को क्रोध आया उस ने कुछ अपशब्द कह दिये। श्रद्धालु भक्त और धनी पुरुष परस्पर इस कारण उलझ पड़े। महात्मा जी बीच में पड़ कर शान्त करने लगे तो उनकी पगड़ी उतर गई। श्रद्धालु भक्त के हृदय को और भी ठेस लगी। जब साढ़ियों से उतर रहे थे तो उस ने महाराज को कहा कि पगड़ी पहन लें। क्षमा के सागर दयानन्द का दयालु उदार हृदय शिष्य हंसराज बोला न जाने अभी यह पगड़ी कितनी बार उतारी जायेगी इस लिये अब तो एक ही बार पहनूंगा जिस २ ने सिर की सेवा करनी हो कर ले। आह! समाज सेवा करते हुए अपमान का विषपान करने की यह भव्य भावना आज कहां गई। पद लोलुपता के रोग से ग्रस्त भारत के समाज सेवी लोग कुछ सीखें इस घटना से!

श्री राजेन्द्र जी,
जिज्ञासु एम. ए.
प्राध्यापक दयानन्द कालिज
शोलापुर

दिल्ली में वेदामृत रस प्रवाह

(ले०—श्री भक्तराम जी शर्मा अफ्रीका वाले)

(गतांक से आगे)

जब उन्हें क्रियात्मक रूप नहीं दिया जाता। गन्दा झाड़ साफ सुथरे घर को भी गन्दा कर देता है।'

आर्य समाज की कीर्ति नगर के नवनिर्मित विशाल भवन में १६ अप्रैल से २६ अप्रैल तक पं० शिव दयालु जी महोपदेशक अध्यक्ष वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर की अध्यक्षता में यज्ञ हुआ। रात्रि के समय पं० शिव दयालु जी की कथा होती रही। तीन दिन प्रातःकाल प्रिंसिपल ज्ञान चन्द जी एम० ए० द्वारा। प्रिंसिपल महोदय की वक्तृत्व शैली अद्भुत है। उपस्थित स्त्री पुरुष गद्गद् हो गये। मैंने उन्हें अपना परिचय देते हुए स्मरण कराया कि जब मैं डा० ए० वी० मिडल स्कूल मेड़ा-खलवाड़ा का प्रधानाध्यापक था तो मैंने आर्यसमाज व स्कूल के संयुक्त वार्षिकोत्सव पर आमन्त्रित कर व्याख्यान कराया था। उन्हें भी याद है।

आर्य समाज पटेल नगर और करोल बाग के वार्षिकोत्सव एक ही समय १६ अप्रैल से २६ अप्रैल तक थे। उत्सवों के उपलक्ष्य में बृहत् यज्ञ और कथाएं भी हुईं। दोनों स्थानों पर प्रसिद्ध २ व्याख्याता पधारे थे। यथा आचार्य कृष्ण जी परिव्राजकाचार्य, पं० बिहारी लाल जी शास्त्री काव्यतीर्थ शास्त्रार्थ महारथी, स्वामी सुधानन्द जी, पं० प्रकाशवीर जी शास्त्री, पं० सत्यपाल जी शास्त्री वेद वाचस्पति, पं० शिवकुमार जी शास्त्री, आचार्य वाचस्पति जी, ठाकुर यशपाल सिंह जी एम० ए० संसद् सदस्य, पं० शिवदयालु जी, प्रो० रामसिंह जी एम० ए०, श्री रघुबीर सिंह जी शास्त्री, पं० रुद्रदत्त जी विद्याभास्कर, सेठ राधा कृष्ण जी, पं० दीनानाथ जी सिद्धान्तालङ्कार, पं० निरंजन देव जी और प्रिंसिपल ज्ञानचन्द जी एम० ए०। आ० स० करोल बाग की ओर से 'आर्यकुमार सम्मेलन,' चरित्र निर्माण सम्मेलन,' कवि सम्मेलन' आयोजित हुए और आ० स० पटेल नगर ने 'शाकाहारी—सम्मेलन', 'पूर्वीपाकिस्तान से विस्थापित आर्यों (हिंदुओं) से सम्बन्धित सम्मेलन,' 'वेद-सम्मेलन' वैदिक जन-तन्त्र सम्मेलन की व्यवस्था थी। ठोस काम करने की आवश्यकता है।

मैंने आर्यसमाज पटेल नगर का 'वेद सम्मेलन' देखा जिसमें पं. भगवद्दतजी बी० ए० अनुसंधान कर्त्ता, आचार्य वैद्य नाथ जी शास्त्री (पं. भगवद्दत्त जी के जामाता), प्रो० सत्यभूषण जी योगी एम० ए० (स्व० आचार्य रामदेव जी के सुपुत्र), डा० रामस्वरूप जी, डा० देवप्रकाश पातञ्जल और पं. रुद्रदत्त जी विद्याभास्कर ने भाग लिया। यह दुर्भाग्य की बात है कि सब के विचार भिन्न २ थे। किसी विद्वान् ने कहा कि वेदार्थ करने के लिए व्याकरण की आवश्यकता नहीं। कोई कहता था कि वेद मन्त्र के चार प्रकार के अर्थ हो सकते हैं। एक के मत में महर्षि दयानन्द की वेदार्थशैली ठीक है। एक का विचार था कि किसी शब्द का ईश्वर परक अर्थ करते हुए लिंग और वचन के पचड़े में नहीं पड़ना नहीं चाहिए। वेद के अनुसन्धान के लिए लाखों की पुस्तकों की आवश्यकता है।

मैंने दोनों उत्सवों के नगर कीर्तन देखे। आ० स० करोल बाग के नगर कीर्तन में सबसे पीछे तीन भजनीकों की गाड़ी थी पर एक भजन भी नहीं हुआ। ६ बैण्डों के ढोल धमाके में। हां, बैण्डों की विज्ञप्ति खूब हुई। वे उत्साह पूर्वक बजाते जाते और बैंड के नाम के कार्ड वितरण करते आते थे। कानों की मैल अच्छी निकल गयी। आ०स० पटेल नगर के नगर कीर्तन की शोभा यात्रा में भी भजन मण्डलियों का प्रबन्ध था परन्तु उन का भी सदुपयोग नहीं हुआ। आचार्य कृष्ण जी के शब्दों में करोल बाग के एक अधिकारी ने हर्ष में उन्हें ऊपर उठा लिया। जोश खरोश भी अच्छा होता है पर इससे आगे हमारा भी कर्त्तव्य है। पौराणिकों का कीर्त्तनों पर और आर्य भाइयों का आज कल यज्ञों पर जोर है। पाञ्च महायज्ञोंमें देव यज्ञ (अग्नि होत्र) भी महान यज्ञ है यज्ञ के वास्तविक अर्थों की उपेक्षा हो रही है। जो स्त्री पुरुष न यज्ञ में और न ही कथा में दर्शन देते हैं पूर्णाहुति वाले दिन नारियल की आहुति देने अवश्य पहुंच जाते हैं। आगे से आगे बढ़ कर पहिले आहुति डालना पुण्य समझते हैं। मुझे भय है कि पौराणिकों की भान्ति आर्य समाजी भी यज्ञ शब्द को न समझते हुए केवल आहुति डालने और न डालने में ही पुण्य व पाप न मानने लग पड़ें। अन्ध श्रद्धा बढ़ रही है।

'ऋषि लङ्गर' की करोल बाग में और पटेल नगर में 'यज्ञ शेष' की व्यवस्था अच्छी नहीं थी। पटेल नगर में बेचारी स्त्रियों को बच्चों सहित कड़कती धूप में पङ्क्ति बद्ध डेढ़ दो घण्टे दो २ पूरियों के लिए प्रतीक्षा करनी पड़ी। धैर्य पूर्वक बैठे स्त्री पुरुषों में से बहुत थोड़ों को सब चीज मिली होगी। करोल बाग में तो पहिली पंक्ति में बैठे स्त्री पुरुषों में से भी कुछ भूखे उठे। दूसरी पंक्ति तो इस घोषणा कि 'एक घण्टा भोजन बनने में लगेगा' के पश्चात् भी न लगी थी। लङ्गर के प्रबन्ध का प्रशिक्षण आर्यों को सिक्खों से लेना चाहिए। वे इस काम में निपुण हैं।

२७ ४ से आर्य समाज मोती नगर के तत्वावधान में स्वामी योगानन्द जी, पं० राम नाथ जी शास्त्री और ठाकुर शमशेर सिंह जी अमृत वर्षा कर रहे हैं। जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ रहा है। उत्सव पृथक् २ तिथियों पर होने चाहिएं ताकि दिल्ली के समस्त आर्य समाजों के सदस्य एक ही स्थान पर एकत्रित हो सकें अन्यथा बट कर रौनक कम हो जाती है। परमात्मा करें कि महर्षि दयानन्द की खेती रहती दुनिया तक लहराती रहे।

मधु कलश

(५)

भाग्य भरोसे बैठे रहना मानव मन का भ्रम है
वरना इस दुनिया के अन्दर कौन किसी से कम है
रह रह कर कहता है कोई अन्तर मन में बैठा
रुको नहीं तुम बढ़ते जाओ जब तक दम में दम है

★ ✶ ✶

सोच समझ कर चलना साथी जीवन के इस पग में
कदम-कदम पर बिछे हुए कांटे चुभें न पग में
सच कहता हूं बहुत सरल हैं कोरे भाषण देना
कहे हुए को कर दिखलाना बहुत कठिन है जग में

✶ ★ ★

चले जहां से वहीं खड़े अरा नहीं बढ़ पाये
कोरे सपने गढ़े रात दिन सत्य नहीं गढ़ पाये
पढ़े लिखे होने का दावा करने वालो बोलो
दुनिया के कितने लोगों को सही-सही पढ़ पाये

क्रमशः

विजय निर्बोध

ब्रह्मकुमारी मत का अध्ययन करें

अजीबोगरीब घटना

ब्रह्मकुमारी विद्यालय में कथित प्रणय सम्बन्धी कांड

आश्रम के दो प्राणी मरे पाए गए

दीनापुर, ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय नासरीगञ्ज (दीनापुर) के एक २० वर्षीय लड़के और १६ वर्षीया लड़की के प्रणय प्रसंग के परिणाम दोनों की मृत्यु में हुई, यह रिपोर्ट प्राप्त हुई है।

रिपोर्ट के अनुसार इस शोकपूर्ण घटना का लगभग साढ़े नौ बजे (प्रातः) पता लगा जबकि आश्रम की अध्यक्षा कुमारी बी० के० चन्द्र शान्ता (४७) ने मृत लड़की उर्मिला को बेहोशी की अवस्था में देखा ! कहा जाता है कि उस ने आश्रम के अर्जुन नामक एक नवयुवक को बुलाकर कहा कि (मृत-लड़के) बैजनाथ से जा कर कहो कि वह उर्मिला की चिकित्सा के लिये डाक्टर को ले आये। जब अर्जुन बैजनाथ की खोज के लिये अपने कमरे से बाहर निकला तो रिपोर्ट के अनुसार बैजनाथ भी पास ही मरा हुआ पड़ा पाया गया। अर्जुन ने तत्काल कुमारी शान्ता को यह बात बताई। आश्रम में चिल्लाहट मच गई और तुरन्त सैकड़ों व्यक्ति वहां जमा हो गये।

लड़के और लड़की की मृत्यु के ६० मिंटन बाद एक स्थानीय डाक्टर वहां पहुंचा डाक्टर को किसी कुत्सित प्रसंग का सन्देह हो जाने पर उस ने तत्काल पुलिस को सूचना दे दी।

पत्रों की प्राप्ति हुई

पुलिस ने तुरन्त घटना-स्थल पर पहुंच कर तहकीकात शुरू कर दी जिस के दौरान में बैजनाथ की जेब से कुछ पत्र मिले। उन पत्रों से जो उर्मिला के हाथ से लिखे गए बताए जाते हैं ज्ञात हुआ कि दोनों के मध्य प्रेम प्रसंग चल रहा था और आश्रम की अध्यक्षा उस पर आपत्ति करती थी। पत्र से इस बात का भी आभास मिल बताया जाता है कि उर्मिला का एक गार्ड के कमैन्डैन्ट के साथ अनुचित सम्बन्ध था जो नियम से आश्रम में आया करता था।

आश्रम के पत्रों के अनुसार पहले तो बैजनाथ की मृत्यु कारण सर्पदंश बताया गया था। परन्तु उन पत्रों से कारण कुछ और ही ज्ञात हुआ। डाक्टर के मतानुसार ये दोनों मौतें किसी तेज विषैली दवाई के खा लेने से एक साथ हुई हैं।

इस संस्था ने जिसका संगठन विचित्र ढंग का है इस स्थान के कुछ नवयुवकों और नवयुवतियों को अभी हाल में अपनी ओर आकृष्ट किया, था। यद्यपि इस संस्था के विषय में यह कहा जाता है कि यह धार्मिक केन्द्र है तथापि इसकी प्रगतियों से इस स्थान के लोगों के हृदयों में इसके प्रति संदेह उत्पन्न हो गया है।

आश्रम का इतिहास

कांकरबाग रोड पटना स्थित सर्वोदय इञ्जीनियरिंग वर्कशाप के श्री आर० जी० कई० राय और पटना के मांदिरी मुहल्ले में रहने वाले श्री मथुराप्रसाद ठेकेदार के प्रयत्न से गत विजयदशमी के अवसर पर इस विश्वविद्यालय एवं आश्रम की स्थापना हुई थी। श्री मथुराप्रसाद की पत्नी आश्रम में रह रही है। मृत उर्मिला पटना जिले के दतियाना (बिहुम) की निवासिनी और पटना के त्रिमूर्ति प्रेस में काम करने वाले श्री नवाबसिंह की पुत्री थी। कुमारी चन्द्रशान्ता का मृत उर्मिला के परिवार के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध था और दीनापुर जाने से पूर्व वह दतियाना में उस परिवार के साथ रहा करती थी।

मृत बैजनाथ नासरीगज का निवासी था। वह सुन्दर नवयुवक था और पिछले कुछ समय से आश्रम की देख-रेख कर रहा। था। इसका पिता उस मकान के मालिक का मित्र है जिसमें आश्रम स्थापित है। तहकीकात के फल स्वरूप इस प्रकार की संस्था के स्वरूप और प्रवृत्तियों के सम्बन्ध में भविष्य में अनेक तथ्यों के प्रकट होने की सम्भावना है।

(आर्योदय से उद्धृत)

नोट—प्रो० सत्यदेव जी एम० ए० प्रधान हिन्दी विभाग डी० ए० वी० कालिज जालन्धर का ब्रह्मकुमारी मत पर अत्यन्त खोजपूर्ण लेख ७-६-६४ के अंक में प्रकाशित हो रहा है। अवश्य दृष्टिगत करें। आशा है कि लेखों को क्रमशः प्रकाशित किया जाएगा।

—व्यवस्थापक

भजन

(ले०—हर कृष्णलाल आर्य गढशंकर (होशियारपुर)

किस पर्दे में निहां है, ओ ला मकान वाले,
अपना पता बता दे, ओ बे निशान वाले।
फिरते हैं तेरी धुन में हर जहान वाले,
करते हैं तेरी इज्जत, उन्नत निशान वाले।
इतना पता बता दे, तू किस जगह मिलेगा,
ऐ खालिके दो आलम ऐ आनबान वाले।
कवि में मैंने देखा, काशी में मैंने ढूंढा,
तेरा पता न पाया, आला निशान वाले।
कुछ तो बता ही दे तू, अपना पता ओखालिक,
किस जा है तेरा रहना सारे जहान वाले।
'आर्य' अगर है ख्वाहिश वेदों का पाठ कर तू,
उसको हैं ढूंढ लेते हैं वेदों के ज्ञान वाले।

समीक्षा

ऋषि संदेश

लेखक :—श्री 'मुजरिम' जी दसूहा। प्रकाशक—आर्य समाज दसूहा। पृष्ठ संख्या—६१

पुस्तक के नाम करण से तो ज्ञात होता है कि सम्पूर्ण पुस्तक में ऋषि दयानन्द जी के संदेश होंगे। पर पठनोत्तर इस परिणाम पर पहुंचते हैं कि भिन्न २ विषयों को लेकर उन्हें कविता का चोला पहनाया गया है। पर इस विचार से हम इन्कारी नहीं हैं कि सभी भजनों में आर्य सिद्धांतों को अक्षुण्ण रखा गया है। सभी कविताओं के ऊपर भजन के अंतर्गत आने वाले लक्ष्य को बौर्डर देकर सुसज्जित किया गया है जिस ने पुस्तक की शोभा को बहुत चार चांद लगा दिए हैं। लिपी भी हिन्दी और [illegible] को अपनाया गया है। [illegible] २० पोइन्ट का लगा कर पुस्तक को आकर्षक बनाया गया है। पुस्तक, आर्य समाजों के सत्संगों व कीर्तनों के लिए अति उपयोगी है। स्कूलों के छात्रों के मनोरंजनार्थ उत्तम सामग्री है। मुजरिम जी का यह प्रयास प्रशंसनीय है।

प्राप्ति स्थान—

आर्यसमाज दसूहा

(होशियारपुर)

आल इन्डिया दयानन्द साल्वेशन मिशन होशियापुर का निर्वाचन

प्रधान—श्री रामदास जी भूतपूर्व एम. पी., उपप्रधान—श्री पं. रत्ताराम जी एम. ए., एम. एल. ए. व चौधरी हरिराम जी एडवोकेट, मन्त्री—श्री बाबा शादीलाल जी एडवोकेट, उपमन्त्री—बूटाराम जी, व पं. ठाकुरदासजी एडवोकेट।

—रामदास प्रधान मिशन

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा

की

आवश्यक सूचना

आर्य प्रादेशिक सभा की ५.५.६४ की अंतरंग सभा के प्रस्ताव नं० २ के अनुसार सभा के नए अधिकारियों का चुनाव १४.६.६४ को साईं दास हायर सैकन्डरी स्कूल जालंधर के विशाल भवन में होना निश्चित हुआ है। सभा की ओर से सभी सम्बंधित आर्य समाजों को एजन्डा की कापी भेजी जा रही हैं सभी प्रतिनिधि अपने प्रमाण पत्रों सहित १४.६.६४ को ठीक एक बजे दोपहर पधारने की कृपा करें। भोजन और निवास का प्रबन्ध साईं दास स्कूल में होगा। प्रतिनिधि तारीख नोट कर लें।

भवदीय

संतोषराज मंत्री सभा

महाविद्यालय गुरुकुल भज्जर रोहतक का निर्वाचन

आर्यसमाज गुरुकुल भज्जर का वार्षिक निर्वाचन १० मई को सर्व सम्मति से निम्न प्रकार सम्पन्न हुआ :—

प्रधान—ब्र० फतहसिंह जी सि० शास्त्री—स्वामी दर्शनानन्द जी सरस्वती मन्त्री—ब्र० दयानन्द जी व्याकरणाचार्य उपमन्त्री—पं. ओम्प्रकाश जी कोषाध्यक्ष—ब्र० राम कुमार जी आर्य, पुस्तकाध्यक्ष—ब्र० योगेन्द्र जी व्याकरणाचार्य।

—दयानन्द 'मन्त्री' आर्यसमाज गुरुकुल भज्जर (रोहतक)

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली

सार्वदेशिक सभा के वार्षिक अधिवेशन में बम्बई पहुंचने वाले प्रतिनिधियों को दादर स्टेशन पर उतरना चाहिये। ठहरने तथा मीटिंग की व्यवस्था आर्य समाज मन्दिर मांटुगा में की गई है स्टेशन पर स्वयं सेवक मिलेंगे। आर्य समाज मांटुगा का टेलीफोन नं० [illegible] है।

सोमदत्त विद्यालंकार
मंत्री स्वागत समिति

टंकारा ट्रस्ट को श्री के पुन बोधराज जी की सेवाएं

देहली के श्री कैप्टन बोधराज जी ने टंकारा के कार्य के लिए अपनी सेवाएं सानन्द रूप में प्रदान की हैं जिसका हार्दिक स्वागत किया गया और महर्षि महालय के व्यवस्थापक के रूप में उन्होंने दि० ६-५-६४ से ट्रस्टी मण्डल की अनुमति से वहां का सब का कार्य भार सम्भाल लिया। आप सेना के रीटायर्ड अनुभवी, ऋषिभक्त आर्य महानुभाव हैं और टंकारा को एक वयोवृद्ध वानप्रस्थी की आवश्यकता थी सो आपके वहां आने से परिपूर्ण हो गई।

निवेदक
[illegible]
महर्षि दयानन्द स्मारक ट्रस्ट टंकारा

अमूल्य वचन

हे संकल्प देव! जो तेरे मंगलमय और कल्याणकारी स्वरूप हैं, जिन स्वरूपों से तू जो कुछ करता है वह सत्य स्वरूपों के साथ तू हममें सब तरफ से प्रविष्ट हो और जो पापी बुद्धियां या संकल्प हैं उनको हम से जुदा करके दूर कर दें।

मातृ-भाषा, मातृ सभ्यता, और मातृभूमि, ये तीन देवियां कल्याण करने वाली हैं। इसलिए, ये तीनों देवता अंतःकरण में निर्भय होकर बैठें।

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टैलीफोन न० ३०४७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd No P 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक २२) २५ ज्येष्ठ २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०— ७ जून १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

मानव जाति का महान् उन्नायक

पण्डित जवाहर लाल नेहरू

राष्ट्रपति का राष्ट्र के नाम शोक सन्देश

प्रधान मन्त्री श्री० पण्डित जवाहर लाल नेहरू के अत्यन्त दुःखद देहावसान पर राष्ट्रपति डा. राधाकृष्णन जी ने राष्ट्र के नाम शोक पूर्ण सन्देश देते हुए कहा है—

हमारे देश के इतिहास में एक युग का खात्मा हो गया। श्री जवाहर लाल नेहरू मानव जाति के एक महान उन्नायक, स्वतन्त्रता के गौरव शाली योद्धा और आधुनिक भारत के निर्माता थे। अपने प्रधान मन्त्रित्व काल के सुदीर्घ वर्षों में श्री नेहरू ने अपने देश को प्रगतिशील, वैज्ञानिक, अग्रगामी और असाम्प्रदायिक आधार पर अग्रसर किया। उन्होंने सामाजिक और राज नीतिक संस्थाओं में एक नया जीवन फूंक दिया श्री. नेहरू विश्व शान्ति और एक विश्व समुदाय की मान्यता के महान समर्थक थे। संयुक्त राष्ट्र संघ में उन की सर्वाधिक आस्था थी। श्री नेहरू के साहस, बुद्धिमत्ता और व्यक्तित्व ने इस देश की एकता बद्ध रखा। इन गुणों को हम ने अपनाना है जिन आदर्शों को उन्होंने अपनाया उन के लिए कार्य करना ही हम सब का कर्तव्य है। अपने स्वर्गवासी नेता के लिए हमारी यह सब से श्रेष्ठ श्रद्धांजलि है।

श्री नेहरू जो के निधन से देश का आबाल, वृद्ध, युवा सभी शोकातुर हैं प्रभु उन्हें सद्गति प्रदान करें तथा उनके सबंधियों को धैर्य दें। परमात्मा उन्हें सदैव भारतवर्ष में जन्म दे।

आधुनिक निर्माता

भारत के सर्वप्रिय प्रधान मन्त्री श्री पण्डित जवाहर-लाल जी नेहरू के दिल विदारक देहावसान पर विश्व के बड़े २ नेताओं ने अपनी २ श्रद्धांजलियां भेंट की है—

लार्ड एटली

श्री नेहरू कटुता से मुक्त थे। ब्रिटिश सरकार ने उन्हें वर्षों जेल में रखा। लेकिन यह उनकी राजनीतिज्ञता थी कि उन्होंने भारतीय और ब्रिटिश जनता के बीच मैत्री स्थापित करने के लिए सब कुछ किया। मैं उन से भली प्रकार परिचित था और उनके साथ मैत्री मेरे लिए बहुमूल्य थी।

श्री प्रतापसिंह जी कैरों

हमारी जिन्दगी की रोशनी चली गई। उनके रिक्त स्थान की पूर्ति कभी नहीं हो सकती।

महारानी एलिजबेथ

श्री नेहरू के निधन के समाचार को, जिस पर समूचा राष्ट्रमण्डल और शान्ति प्रिय विश्व शोक मनायेगा सुन कर मुझे बेहद दु:ख हुआ। मैं अपना, अपने पति और परिवार की ओर से आप को और भारत की जनता को इस अपूर्ति होने वाली क्षति पर गहरी और सच्ची सहानुभूति अर्पित करती हूं।

लार्ड माउंटबेटन

दुनिया के इतिहास में वह महानतम व्यक्तियों में से थे। वह अत्यन्त उदार थे। अंग्रेजों द्वारा वर्षों जेल में रखे जाने पर भी उन्होंने कभी भी तनिक-सी भी कटुता प्रदर्शित नहीं की। भारत के राष्ट्रीय स्वतन्त्रता संग्राम के वे महान् योद्धा थे और जब उनके जीवन के कार्य को सफलता मिली तब यह उनका बड़प्पन था कि उन्होंने अंग्रेजों के साथ दोस्ती का हाथ बढ़ाया।

प्रकाशक—संतोषराज सभा मंत्री सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

हा ! जवाहर !!

सुज्ञानवान, बलवान, देवगुणों के पालक,
शान्तिदूत, अहिंसक राजनीति के संचालक,
जीवनभर भारत सेवा का ही नियम निभाया,
राष्ट्रहित भला आपने कौन नहीं दुःख पाया॥
धीर, वीर, गम्भीर अति, देव महिमावान थे।
परमपूज्य सम्माननीय श्री जवाहरलाल थे।
हे भारत के रक्षक! सुकर्म मर्म के हामी,
भारत मां के वरद पुत्र विश्व में नामी,
सकट में मां को छोड़कर तुम स्वर्ग सिधारे,
कौन नाव को खेसकता है बिना तुम्हारे॥
विश्वोपवन में कीर्ति की फैली गंध ललाम है।
शोकाकुल भारत का तुम्हें श्रद्धायुक्त प्रणाम है॥

—श्री मित्रसेन आर्य, एम० ए० (उ०)

शांति, मुक्ति तथा मैत्री के लिए सबसे बड़ा संघर्षकर्त्ता उठ गया

(दिल्लीकी शोकसभा में विदेशी तथा देशी नेताओंकी श्रद्धाजलियां)

नेहरू का निधन भारत की ही नहीं, विश्व की क्षति

कल रात यहां रामलीला ग्राऊंड में हुई एक विशाल शोक सभा मे संसार भर के अनेक प्रमुख राजनीतिज्ञों तथा नेताओं ने स्वर्गीय प्रधानमन्त्री श्री नेहरू को हृदय-स्पर्शी शब्दों में श्रद्धांजलियां अर्पित कीं। उपस्थिति दो लाख से अधिक की थी।

प्रधानमन्त्री श्री गुलजारीलाल नन्दा ने कहा कि भारत स्वदेश और विदेश में स्व० प्रधानमन्त्री की नीतियों का अनुसरण जारी रखेगा।

श्री नन्दा ने लोगों से अपील की कि वे भूख, अनपढ़ता और बीमारी से भारत को एक समाजवादी लोकतन्त्र में परिवर्तित करने के दिवंगत नेता के स्वप्नों को सच्चाई में बदल दें।

श्री नन्दा ने कहा कि जबकि हृदय दुःख से भरपूर है, बोलना बहुत कठिन है। लेकिन ऐसे समय जब कि हम अपने स्वर्गीय नेता को श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए एकत्रित हुए हैं, हम यह शपथ लें कि हम उस कार्य को आगे बढ़ाएंगे जिस के लिए वह जीए और उन्होंने कार्य किया।

उन्होंने कहा कि श्री नेहरू का हृदय सामान्य व्यक्ति के लिए सहानुभूति से पूर्ण था। वह अपने जीवनकाल में भारत में एक ऐसे समाज की स्थापना करना चाहते थे, जो लोकतन्त्रात्मक भी हो और समृद्ध भी। इसी दृष्टिकोण से उन्होंने अधिक उत्पादन और सामाजिक न्याय का अनुरोध किया।

श्री नेहरू ने देश की प्रतिष्ठा के लिए अनथक कार्य किया और अपने साथियों से सदैव एक रहना चाहा।

उपराष्ट्रपति डा० जाकिरहुसैन ने कहा कि गत तीन दिनों में शायद ही कोई आंख हो जिसने आंसु न बहाए हों तथा शायद ही कोई हृदय हो जिसने इस महान दुःख को अपनी निजी क्षति के रूप में अनुभव न किया हो। श्री नेहरू को सर्वोत्तम श्रद्धांजलि उनके आदर्शों को सच्चे हृदय से निभा कर ही दी जा सकती है।

आचार्य कृपलानी ने कहा कि श्री नेहरू के साथ ४५ वर्षों का सम्पर्क फिल्म की तरह उनकी आंखों के सामने आ रहा है। राजनीतिक मतभेदों के बावजूद उनकी श्रीनेहरू के साथ व्यक्तिगत मैत्री आचरण रही।

लंका की प्रधान मन्त्री श्री मावो भण्डारनायके ने कहा कि उन्हें नेहरू हीन भारत में आ कर अद्भुत अनुभव हुआ है। लंका के लोग इस महान शोक की घड़ी में भारतवासियों के साथ हैं।

जापान के विदेश मन्त्री श्री ओहिरा ने आशा प्रकट की कि भारतवासी पं० नेहरू के आदर्शों तथा नीतियों पर चलते रहेंगे।

युगोस्लाविया के प्रधानमन्त्री श्री पीटर स्टैंबोलिक ने कहा कि उपनिवेशवाद के विरुद्ध अपने सघर्ष के लिए पं० नेहरू संसार को सदा याद रहेंगे। मार्शल टीटो पं० नेहरू की व्यक्तिगत मैत्री की बहुत कद्र करते थे।

अमरीकी विदेशमन्त्री श्री डीन रस्क ने कहा संसार भर के लोग यह समझते हैं कि शांति के लिए, मानवीय सम्मान तथा भ्रातृभाव के लिए सघर्ष करने वाला वह मानव उठ गया है। श्री नेहरू संसार के सब से बड़े प्रजातन्त्र के निर्माता थे।

सोवियत संघ के प्रथम उपप्रधान मन्त्री श्री कोसीजिन ने कहा कि उपनिवेशवाद के विरुद्ध निरन्तर संघर्ष करने के कारण श्री नेहरू सोवियत जनता को बहुत प्रिय थे। उन्होंने संसार की अनेक उलझनों को शांतिपूर्वक सुलझाने में अद्भुत प्रतिभा दिखाई।

कांग्रेस-प्रधान श्री कामराज ने कहा कि श्री नेहरू ने देशवासियों को सहनशीलता सिखाई। उन्हें पारस्परिक मतभेदों को भुलाकर शांति, प्रगति तथा राष्ट्रीय एकता के पथ पर अग्रसर होना चाहिए।

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२१, ७ जून १९६४ [अंक २३

ज्योति चली गई

भारत के प्रधान मन्त्री श्री पण्डित जवाहर लाल जी नेहरू आज के सारे विश्व के राष्ट्रों के लिए एक उज्ज्वल ज्योति थी ता. २७ मई बुधवार दोपहर के दो बजे बुझ गई। जब यह दुःखद समाचार सुनने को मिला तो पहले किसी को भी विश्वास नहीं होता था अभी २ तीन दिन देहरादून में विश्राम कर के श्री पण्डित जी वापस देहली लौटे थे। पूर्ण रूप से स्वस्थ प्रसन्न बदन तथा ठीक थे। मंगल वार रात को यथा पूर्व भोजन किया। आराम की नीन्द भी की। प्रातः काल ६ बज कर १० मिनट पर पीठ मे पीड़ा हुई। डाक्टर आये। देखा। किन्तु फिर बेहोश हो गये। डाक्टरों ने आप को होश में लाने तथा रक्त चाप ठीक करने के लिए बड़ा ही प्रयत्न किया। प्राणवायु दी गई। किन्तु उसी अचेत अवस्था में ही विश्व की सब से बड़ी यह ज्योति बुझ गई। सारा विश्व इस अत्यन्त हृदयविदारक समाचार को सुन कर फूट २ कर रो पड़ा। शोक की लहर में डूब गया। इतना भारी धक्का लगा जिसको सहन करना अतिकठिन है। समस्त राष्ट्रों के नेता रो पड़े। भारत की तथा राजधानी देहली की दशा का तो क्या कहना? सारे नगर की एक २ दीवार और कण-कण भी रो रहा था। सारे राष्ट्र के बाजार बन्द हो गये। लाखों लोग अपने प्यारे नेता के अन्तिम दर्शन करने स्पेशल गाड़ियों तथा अन्य साधनों द्वारा देहली पहुंचे विदेशों से बड़े २ सरकारी नेता इस शोक में शामिल होने आये। कौन सा ऐसा था जो फूट २ कर नहीं रोया। प्यार दुलार में पली श्री पण्डित जी की इकलौती सुपुत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी एवं उनके दोनों प्यारे बेटे चिरंजीव राजीव व संजीव जितना रोये उसका तो किसी से भी वर्णन नहीं हो सकता। लाखों लोग मान्य प्रधान मन्त्री जी का अन्तिम दर्शन करने गये। सारा देश ही उमड़ आया था।

ता० २८ मई वीरवार को उनकी शव यात्रा में कितनी भीड़ थी, कितने मन पुष्प तथा मालाएं उनके शव पर श्रद्धा से अर्पित की गई। यह बात तो वर्णन से परे है। कहा जाता है कि बीस लाख नर-नारी उस दिन दोनों ओर मार्गों पर खड़े होकर अपने सर्वप्रिय प्रधान मन्त्री को अपनी हार्दिक श्रद्धांजलियां भेंट करने इकट्ठे हो गये थे। पण्डित जवाहर लाल जी नेहरू भारतीयों तथा दूसरे देशों की जनता के मन और आत्मा पर राज्य करते थे। इस का प्रत्यक्ष दर्शन उस दिन आंखों से कर लिया। इस समय भारत को आपकी कितनी आवश्यकता थी, कितनी समस्याएं सामने थीं—पर सब को रोता बिलखता छोड़कर अपनी महा-प्रस्थान की यात्रा पर चले गये। कभी न टूटने वाली नींद में सो गये। राजघाट पर दस मन चन्दन की लकड़ियों तथा ३५ सेर शुद्ध पवित्र घृत के द्वारा वेद मन्त्रों की की गम्भीर ध्वनि में, सब की बहती

कर्मयोगी पंडित नेहरू

योग कई प्रकार का है तथा उस योग मार्ग पर चलने वाले योगी भी अनेक प्रकार के हैं। भक्ति योग व ज्ञान योग के पथ पर चलने वाले भक्ति योगी, ज्ञान योगी होते हैं। कर्मयोग के मार्गी कर्मयोगी कहलाते हैं। योग अपने २ स्थान पर सारे ठीक हैं परन्तु कर्म योग का स्थान बहुत ऊंचा माना गया है। कर्मयोग की शास्त्रों में विशेषता लिखी गई है। ससार में रह कर जीवन में लोकसेवा, राष्ट्रभक्ति एवं विश्व में शांति के लिए लगातार काम करते रहना कर्मयोगी का सब से बड़ा कर्तव्य है। कर्मयोगी पर्वत की कन्दरा मे नहीं जा बैठता, सर्वथा विरक्त नहीं होता, संसार की सेवा से उदासीन होकर एकांत में जाकर आराम नहीं करता, केवल अपनी मुक्ति के लिए ही साधना नहीं करता। कर्मयोगी तो सारे विश्व की सेवा में सदा लगा रहता है। लोग चाहे कुछ कहते रहें परन्तु कर्मयोगी अपनी निष्ठा पर कायम रहता है।

हमारा प्यारा पण्डित जवाहर-लाल नेहरू भी कर्मयोगी थे जीवन में एक कर्मयोग का पथ ही अपनाया। आरम्भ से ही जीवन देशभक्ति में भेंट कर दिया। घर पर किस बात की कमी थी। पंडित मोतीलाल जी जैसा सारे देश में प्रसिद्ध नेता जिन के पिता हों। चांदी का चमचा मुख में लिये पैदा हुए। इकलौता जिनका लड़का है। आनन्द भवन जैसा आनन्द दायक निवास हो। धन के भण्डार भरे हों। इंगलैंड में हेरो तथा कैम्ब्रिज में जिनकी शिक्षा दीक्षा हुई हो। उनको जीवन में क्या न्यूनता। परन्तु भारत की पराधीनता की अवस्था को देखकर स्वराज्य के आंदोलन में कूद पड़े। जवानी दे दी। कितनी बार जेलों में गए, यातनाएं झलीं, जीवन मे कष्ट उठाये। सारे देश के सर्वप्रिय नेता बन गए। आज के सारे राष्ट्रों में जवाहरलालजी की नीति योग्यता तथा महत्ता का प्रभाव बैठ गया। भारत को नेता मिल गया।

जब से भारत के शासन का काम सम्भाला। रात दिन उसको सेवा में जुट गए। अठारह-अठारह घण्टे दफ्तर में बैठकर काम करते थे। भारत के कोने २ में कोई भी समारोह होता वहां पहुचते। विदेश में पता नहीं कितनी बार यात्रा पर, सम्मेलनों में गये। कर्मयोग की सजीव प्रतिमा थे। कार्य की अधिकता से ज्यों २ उनकी आयु बढ़ती गई, शरीर पर बोझ पड़ता गया कई बार रुग्ण भी हो गए। पर देश सेवा के काम में निरन्तर लगे रहे। सब ने कई बार अपने पूज्य नेता से आराम विश्राम करने की प्रार्थना की किन्तु श्री पण्डित जी नहीं मानते थे। वे देश सेवा के व्रत से नहीं हटे। पर्वत की कन्दरा में बैठ जाना उनके स्वप्न में भी नहीं आता था। हमारा यह नेता रोग में भी कर्म-योग को ही अपना धर्म मानते थे। कर्मयोग ही जीवन का सब कुछ था। बीमारी ने आक्रमण किया। डाक्टरों ने पूर्ण विश्राम करने को कहा। पर थोड़े दिनों के बाद ही

(शेष पृष्ठ ५ पर)

आंखों के सामने इस विश्व के महान नेता का देह चिता में रख कर अग्नि के सुपुर्द कर दिया गया। जीवन की प्रदीप्त ज्योति थी जो अपनी किरणों से करोड़ों को प्रकाश देकर चली गई। शरीर तो चला गया पर पण्डित नेहरू अमर हो गया—**Light is out**।

—त्रिलोक चन्द्र

शोक प्रस्ताव

दयानन्द मौडल स्कूल जालन्धर

के स्टाफ व छात्र छात्राओं ने शोक सभा द्वारा श्री पं० जवाहरलाल जी प्रधान मंत्री भारत सरकार के निधन पर गहरा शोक प्रकट किया। स्कूल के मुख्याध्यापक जी ने पं० नेहरू जी के गुणों पर प्रकाश डालते हुए कहा कि भारत देश को उनके अभाव में जो क्षति पहुंची है वह जल्दी पूर्ण नहीं हो सकती। जगन्नियंता प्रभु से बार २ सहृदय से प्रार्थना है कि स्वर्ग स्थित हमारे नेता की आत्मा को सद्गति प्रदान करें जिस से वह निराश्रित भारत देश को अपने गुणों पर चलाता हुआ तथा उन्नति के मार्ग पर अग्रसर होता हुआ देखकर शांति प्राप्त हो।

आर्यसमाज किला मुहल्ला जालन्धर

ने गत दिवस एक शोक प्रस्ताव में श्री पं० जवाहरलाल जी नेहरू की अकाल मृत्यु पर समवेदना प्रकट करते हुए उनकी आत्मा की सद्गति व परिवार को धैर्य प्रदान करने की तथा भारतीय प्रजा को इस दारुण दुःख सहन करने की प्रभु से करबद्ध याचना की।

हमारा देश, संसार का महा नीतिज्ञ, गंभीर तथा शांति के अवतार महान नेता को सर्वदा के लिए खो बैठा है। इस नाजुक समय में अपने को परम पिता प्रभु ही इस देश के सहायक हों यही बार २ प्रार्थना है। मंत्री

आर्यसमाज किला

आर्य प्रचारक मंडल प्रादेशिक सभा जालन्धर

भारत के प्रधान मन्त्री एवं जनता के प्यारे श्री पं. जवाहरलाल जी नेहरू की अचानक मृत्यु पर हार्दिक शोक और वेदना प्रकट करता है माननीय पं. जी भारत के नहीं अपितु विश्व भर के लिए शांति और अमन के सच्चे प्रेरक थे उनकी जुदाई पर कौन न रोता होगा सचमुच यह स्थान कभी कोई पूरा नहीं कर सकता हमें उनके परिवार से सहानुभूति है परम पिता परमात्मा उस दिव्य आत्मा को सद्गति दें और उनके पीछे राष्ट्र के कर्णधारों में साहस दें ताकि वह भी सच्चे रूप में देश का पथ प्रदर्शन कर सकें।

राजपाल मन्त्री

आर्य प्रचारक सभा जालन्धर

प्रधान मंत्री श्री पं० नेहरू जी के निधन से देश तड़प रहा है

इसका प्रत्यक्ष प्रमाण नीचे पढ़िए

आर्यसमाज की संस्थाओं के कुछ शोक प्रस्ताव

****

आर्य समाज कालिज विभाग श्रीगंगानगर

श्री पं. जवाहर लाल जी नेहरू प्रधान मन्त्री भारत की इस अकाल मृत्यु पर अपार शोक प्रकट करता है।

परम पिता परमात्मा से प्रार्थना है कि स्वर्गीय की आत्मा को सद्गति प्रदान करें, तथा भारत वासियों को सहन शक्ति देवें, एवं भारतवासी एकता की ओर शक्ति को बढ़ावें।

निवेदक

हजारीलाल सेठी मंत्री

63 F श्री गंगानगर

पंजाब आर्य वीर दल

भारत माता के प्यारे पुत्र, राजनीति के महान् नेता, राष्ट्र नायक, संसार के मित्र श्री पं. जवाहर लाल जी नेहरू के अकस्मात् निधन पर महान् शोक प्रकट करता है तथा उन की पवित्र आत्मा की सद्गति के लिये प्रभु से प्रर्थना करता है।

उत्तमचन्द शास्त्री

संचालक

आर्य वीर दल पंजाब

पंजाब प्रांतीय आर्य कुमार परिषद

विश्व के महानतम् राजनीतिज्ञ, मानवता के पूजारी भारत गौरव श्री पं. जवाहर लालजी की दुःखद मृत्यु पर हार्दिक शोक प्रकट करती है तथा परम पिता परमात्मा से प्रार्थना करती है कि वह सतप्त परिवार तथा शोकातुर राष्ट्र को शांति प्रदान करें।

वेदानन्द सरस्वती

आर्य समाज खन्ना

पं. जवाहरलालजी नेहरू प्रधान मन्त्री की अचानक तथा असामयिक मृत्यु पर अतीव शोक प्रकट करता है। उन की मृत्यु से जो हानि भारत और दुनिया को हुई है उसे पूरा करना अत्यन्त कठिन है। परमात्मा से प्राथना है कि वह उन की आत्मा को शांति प्रदान करें और हमें शक्ति दें कि हम उन के पद चिह्नों पर चल कर भारत और जाति की सेवा कर सकें।

मुंशीराम प्रधान

आर्य समाज खन्ना

आर्य समाज लक्ष्मणसर अमृतसर में

आज ३१-५-६४ रविवार आर्य समाज लक्ष्मणसर के साप्ताहिक अधिवेशन में प्रधान मन्त्री श्री पं० जवाहरलाल नेहरू के असामयिक और अत्यन्त दुःखदाई निधन पर गहरा शोक प्रकट करते हुए समस्त देश तथा उनके परिवार से ऐसे संरक्षक से वंचित होने पर हार्दिक सहानुभूति दरशाई गयी। श्री रुद्रदत्त शर्मा तथा मास्टर मेहरचन्द जी ने जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओं का वर्णन करते हुए उनके प्रति श्रद्धांजलि भेंट की और प्रस्ताव द्वारा कांग्रेस हाई कमाण्ड तथा पारलीमैण्टरी बोर्ड के प्रतिष्ठित नेताओं की सेवा में प्रार्थना की गयी कि इस नाजुक समय में धड़े-बन्दी प्रान्तवाद और स्वार्थ से ऊपर उठकर देशकी बागडोर सर्व-सम्मति से किसी सर्वोत्तम-सच्चे, न्याय और त्याग की मूर्ति दृढ़ अति सर्व-प्रिय और आदर्श व्यक्ति के हाथ में सौंपें जो सच्चे अर्थों में भारत और भारतीयता की रक्षा कर सकता हो।

आशा प्रकट की गई कि राष्ट्रपति श्रीयुत राधाकृष्णन जी जैसे योग्यतम नेता की उपस्थिति में यह प्रश्न अवश्य पूरी सुन्दरता से प्रीतिपूर्वक सुलझ सकेगा।

—निवेदक रुद्रदत्त शर्मा प्रधान

आर्य समाज पुरानी मंडी जम्मू

साप्ताहिक सत्संग के बाद पं. जवाहरलालजी नेहरू प्रधान मंत्रीकी मृत्यु पर शोक सभा हुई जिस में कविराज विष्णु गुप्त जनरल सैक्ट्री ने पंडित जी की जीवन पर और नेहरू जी की उन लासानी और अनगिनत कुरबानियों का जो उन्होंने भारत को स्वतंत्र कराने में तथा स्वतंत्रता को दृढ़ रखने तथा विश्व भर में भारत के मान को ऊंचा करने में जो कुछ उन्होंने किया उस का सार मात्र जिकर करते हुये अपनी श्रद्धांजलि भेंट की और शोक प्रस्ताव रखा जो सर्व सम्मति से सब ने दो मिन्ट मौन प्रार्थना कर के स्वीकार किया और ईश्वर से उन की आत्मा की सद्गति के लिये प्रार्थना की गई।

अफसोस और दुःख तथा सहानुभूति की तारें राष्ट्रपति डा. राधा कृष्णन श्रीमती इन्द्रा गांधी तथा श्री गुलजारी लाल नन्दा को दी गईं।

भवदीय

कविराज विष्णु गुप्त प्रधान मंत्री

प्यारे जवाहर !

(विजय लक्ष्मी आय वी. ए., इस्लाम नगर बदायूं)

'अभी मैं जवान हूं', उक्त शब्द भारत के भूतपूर्व-प्रधान मंत्री प. जवाहर लाल नेहरू ने कुछ दिन पूर्व ही कहे थे, ये शब्द अभी आकाश में अपनी ध्वनि गुंजा ही रहे थे, समचार पत्रों से इनकी स्याही सूख भी न पाई थी कि क्रूर कराल काल ने विश्व का सफल राजनीतिज्ञ, शान्ति के मूर्तिमान देवता, भारत के आबाल वृद्ध का स्नेह पात्र, युवक हृदय सम्राट जवाहर के नाम को केवल इतिहास की कहानी ही बना दिया।

मृत्यु तो सबको अपने बन्धन में बांधती है परन्तु उसे हम मौत नहीं कह सकते जिसके देहान्त होने पर उसके शत्रु और विरोधी भी आंसू बहाने लगें। पं. जवाहरलाल नेहरू की नीति से विदेशों में ही नहीं अपितु भारत में भी अनेकों विरोधी विद्यमान थे, परन्तु जैसे ही मनहूस समाचार उन्होंने सुना,अपने हृदय पर एक धक्के को आभास का अनुभव किया,प्रबलतम विरोधी भी पं. जी की मृत्यु को सुनकर अपने आंसू न रोक सके। पं. जी ने एक कवि की इस उक्ति को चरितार्थ कर ही दिया—

जब हम आए जगत में, जग हासा हम रोय।
ऐसी करनी कर चलो, हम हासे जग रोय॥

युग का नायक

नेहरू जी के कार्य-क्षेत्र में उतरने के कुछ समय पश्चात ही देश के वातावरण में परिवर्तन होना प्रारम्भ हो गया था, क्योंकि नेहरू एक साधारण हस्ती नहीं थी। वे स्फूर्ति, की साक्षात मूर्ति तथा शक्ति का अवतार थे। उन्होंने कांग्रेस में बहुत शीघ्र ही ख्याति अर्जित की और थोड़े दिनों के पश्चात् ही विश्व में प्रसिद्ध हो गए। अपने-

शोक प्रस्ताव

जिला वेद प्रचारिणी सभा होशियारपुर देश और मानवजाती के सर्वोच्च तथा सर्वप्रिय नेता भारत के प्रथम नागरिक एवं प्रथम प्रधान मन्त्री भारत-रत्न श्री जवाहर लाल नेहरू की अकस्मात मृत्यु पर हार्दिक शोक, दुख तथा संवेदना प्रकट करती है।

उन के निधन से न केवल भारत अपितु समूची मानव जाती को ऐसा धक्का लगा है जिस ने सारे संसार को हिला दिया है और जिसे संसार भर के लोगों और सरकारों ने विशेषतय भारत के प्रत्येक नर नारी बाल वृद्ध ने अपनी निजी क्षति माना है। भारत को ऐसा उज्ज्वल रत्न और जवाहर संसार में प्रस्तुत करने का बड़ा गर्व और मान है।' महात्मा गांधी के बाद केवल वोही एक मात्र समस्त भारत वासियों के हृदय सम्राट थे। आज संसार उन के बिना सूना हो गया। वह संसार के इतिहास में अपना अमिट स्थान पा गए हैं और भारत में तो निस्संदेह उन का नाम और स्थान सदा के लिए अमर हो गया है।

यह सभा प्रार्थना करती है कि सर्व शक्तिमान प्रभु उन की पवित्र आत्मा को सद्गति प्रदान करें और हम सब देश वासियों विशेषतय: उन की सपुत्री श्रीमती इन्द्रा गांधी तथा परिवार के सभी सदस्यों को इस दारुण दुख के सहन करने की शक्ति दें।

बूटाराम मंत्री
होशियारपुर

देश भर में श्री नेहरू की स्मृति में शोक सभाएं

बम्बई के प्रमुख मुस्लिम नेताओं ने कल यहां आयोजित एक शोक-सभा में प्रधानमन्त्री श्री नेहरू को भारतीय लोगों विशेषतया अल्पसंख्यकों के प्रति उनकी सेवाओं को हार्दिक श्रद्धांजलि भेंट की।

बैठक में पास किए गए एक प्रस्ताव में कहा गया है कि श्री नेहरू के निधन से समस्त देश, विशेषतया भारत को अत्यन्त दुःख हुआ है। आपकी धर्मनिरपेक्षवादिता और उदारता के लिए अल्पसंख्यकों को वह सदैव स्मरणीय रहेंगे।

प्रेस क्लब आफ इण्डिया ने कल श्री नेहरू की मृत्यु पर एक शोक प्रस्ताव पास किया।

प्रस्ताव में श्री नेहरू को एक उच्च पत्रकार के रूप में उल्लिखित किया गया और कहा गया कि वह अपने देश के पत्रकारों के हितों में निजी दिलचस्पी रखते थे।

श्रीनगर में कल चौथे दिन भी श्री नेहरू के निधन पर शोक प्रकट करने के लिए जनसभाएं हुईं।

दिल्ली में जारी एक शोक सन्देश में सांस्कृतिक सम्बन्धों के के लिए भारतीय परिषद के अध्यक्ष श्री एम० सी० छागला ने कहा कि यह श्री नेहरू की ही प्रेरणा थी कि परिषद अस्तित्व में आई।

लोकसभा सचिवालय ने कल एक प्रस्ताव में कहा कि श्री जवाहर-लाल नेहरू देश के अग्रणी थे और हर क्षेत्र में प्रेरणा-स्रोत थे। स्वतन्त्रता के बाद अत्यन्त थोड़े समय में संसदीय संस्थाओं के कुल विकास का श्रेय उन्हीं को प्राप्त है।

प्रस्ताव में प्रधानमन्त्री और परिवार के अन्य सदस्यों से भी संवेदना प्रकट की गई।

★

कर्मों से युग में बहुत बड़ा परिवर्तन उपस्थित किया और युग नायक कहलाए।

प्रतिभाशाली लेखक

श्री नेहरू में जहां अन्य गुण विद्यमान थे वहां यह सबसे बड़ी विशेषता थी कि वे एक प्रतिभाशाली लेखक भी थे। सम्पूर्ण राष्ट्र की बागडोर हाथ में होते हुए भी अनेकों, चिन्ताएं, विश्वशान्ति में प्रयत्न शील होते हुए अपनी मेधा वी बुद्धि के कारण उस जनप्रिय नेता ने अनेकों ग्रन्थ लिखे जिनमें विश्व इतिहास की झलक, पिता के पत्र पुत्री के नाम, डिसकवरी आफ इण्डिया आदि प्रमुख थे।

सफल राजनीतिज्ञ

लगभग सत्रह वर्षों तक भारत जैसे विशाल राष्ट्र के प्रधान मन्त्री रहकर आपने अपने को एक सफल राजनीतिज्ञ सिद्ध कर दिया। भारत वर्ष के साथ-साथ हुए अन्य स्वतन्त्र देशों में अनेकगये, उनकी नीतिओं में परिवर्तन भी हुए उन देशों में अशान्ति भी हुई परन्तुभारत इन सब वस्तुओं से अछूता ही रहा जो इस बात का प्रबल प्रमाण है कि पं. नेहरू की नीति सफल रही।

उप-संहार

पं. जवाहर लाल नेहरू में उक्त गुणों के अतिरिक्त अन्य अनेकों विशेषताएं भी विद्यमान थीं। उनके तप और त्याग, मेधावी बुद्धि, विश्व प्रेम, देश भक्ति और कार्य करने की अटूट लगन की कौन प्रशंसा न करेगा। ऐसे नेता के हमारे मध्य में से उठ जाना भारत का दुर्भाग्य ही है। यदि यह कहा जाए तो अत्युक्ति न होगी ऐसे समय में जबकि देश भयकर परिस्थितियों में से गुजर रहा है. पं. जी के स्वर्गवास से वह अनाथ हो गया।

दयानन्द-वचनामृत।

'ईश्वर सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापक है। भीतर-बाहर व्याप्त होने से, वेदोपदेश के लिए उसे मुखादि अवयवों का किया की कुछ भी आवश्यकता नहीं। शब्दोच्चारण की किया तो अपने से पृथक व्यक्ति के लिए की जाती है। अपने भीतर तो मुखादि की क्रिया के बिना ही अनेक विचार और शब्दोच्चारण होते रहते हैं। कानों को उंगलियों से बन्द करके सुनो और समझो कि मुखादि अवयवों की चेष्टा के बिना ही कैसे शब्द हो रहे हैं। जैसे ये शब्द बाहर की प्रेरणा के बिना होते हैं, वैसे ही अन्तर्यामी-रूप से जगदीश्वर ने जीवों को उपदेश किया है।

(स्वामी सत्यानन्द जी)

शान्ति के अग्रदूत श्री नेहरू जी का स्वर्गवास

२७ मई का दिन भारत और संसार के लिए मनहूस सिद्ध हुआ कि उस रात अचानक श्री नेहरू पर अधरंग का आक्रमण हुआ जो उन की मृत्यु का कारण बना।

दो बजे बाद दोपहर परलोक सिधार गए। एक बज कर चालीस मिंट पर रेडियो में उन की चिंताजनक बीमारी की सूचना दी गई। और चंद मिंट बाद ही उन की मृत्यु की खबर बिजली की तेज गति के समान सारे संसार में फैल गई।

आप पं० मोती लाल जी नेहरू के घर बड़े ठाठ बाट में पले और देश की पराधीनता के युद्ध में कूद पड़े और एक निर्भय नेता की तरह अंग्रेजों से टक्कर लेते रहे। युवावस्था में ही उन की धर्मपत्नी कमला नेहरू जी ने भी उन का साथ छोड़ दिया। आप गृहस्थ के बन्धनों से स्वतंत्र हो गए। और आपने सारी शक्ति स्वतन्त्रता प्राप्ति में ही लगा दी। पिता का निर्मित शाही महल आनन्द भवन भी देश और जाति के निमित अर्पण कर दिया। आज़ादी मिलने पर आप स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधान मन्त्री बने और मरते दम तक इस पद को सम्भाले रहे। अन्त में मौत के पंजे में जकड़े गए। इस अमन और शान्ति के देवता की अभी अशांत दुनियां को भारी आवश्यकता थी पता नहीं कि उन की मृत्यु से भारत देश और संसार की गति विधियों के संबंध में ईश्वर को क्या स्वीकार था। स्वर्ग स्थित उन की आत्मा तीव्र दृष्टि से भारत की स्वतन्त्रता को देख रही है भारत के वर्तमान कर्णधारों का परम कर्त्तव्य हो जाता है कि वे नेहरू द्वारा दिलाई हुई स्वतंत्रता को स्थिर रखते हुए भारत देश को हरामरा बनाएं ताकि उसे देखकर नेहरू जी की आत्मा को शांति प्राप्त हो सके। अंत में देश वासी उनकी सद्गति के लिए प्रभु से प्रतिक्षण शुभ कामनाएं करते तथा उनके दुःखी परिवार से अगाध सहानुभूति रखते हैं।

ज्योति बुझ गई एक फूल झर गया

('श्री विजय' निर्बाध, मौडलटौन जालन्धर)

एक ज्योति वह कि जिससे जगमगा रहा था घर
छिड़क रही थी चांदनी गली-गली डगर-डगर
एक ज्योति वह कि जिसमें प्रेरणा थी प्राण की
एक ज्योति वह कि जिसमें गर्व था जहान को
एक ज्योति वह कि जिसकी खुद वही मिसाल थी
जिसकी पुण्य गोद में वसुन्धरा निहाल थी

लुटी-लुटी-सी है निशा, मौन हैं चहुँ ओर
शून्य में घुटन-सी है, अन्धकार सब ओर
एक ज्योति बुझ गई, एक फूल झर गया

एक फूल वह कि जिसमें प्यार का पराग था
शान्ति की सुगन्ध थी अतुल अपार त्याग था
एक फूल वह कि जिसकी रम्यता अनन्त थी
एक-एक पांखुरी वस्तुतः वसन्त थी
बागवां की जान था, बाग की बहार था
एक फूल वह कि जिसपे खुद चमन निसार था

शोर है गली गली, रो उठी कली-कली
काल चक्र यूं चला हर सुमन सिहर गया
एक ज्योति बुझ गई, एक फूल झर गया

एक साज़ वह कि जिसके गीत प्राणवान थे
स्वस्थ, सारवान थे, ज्योतिमय, जवान थे
एक साज़ वह कि जिसके राग में था जागरण
दे रही थी चेतना जिन्दगी को नव चरण
एक साज़ वह कि जिसपे आदमी को नाज़ था
आदमी के दिलकी धड़कनों का जिसमें राज़ था

डबडबा रहे नयन, मिल नहीं रहे बयन
कंठ आज रुद्ध है, साज वह बिखर गया
एक ज्योति बुझ गई, एक फूल झर गया

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा

को

आवश्यक सूचना

आर्य प्रादेशिक सभा की ५.५.६४ की अंतरंग सभा के प्रस्ताव नं० २ के अनुसार सभा के नए अधिकारियों का चुनाव १४.६.६४ को साईंदास हायर सैकन्डरी स्कूल जालंधर के विशाल भवन में होना निश्चित हुआ है। सभा की ओर से सभी संबंधित आर्य समाजों को एजेंडा की कापी भेजी जा रही है सभी प्रतिनिधि अपने प्रमाण पत्रों सहित १४.६.६४ को ठीक एक बजे दोपहर पधारने की कृपा करें। भोजन और निवास का प्रबन्ध साईंदास स्कूल में होगा। प्रतिनिधि तारीख नोट कर लें।

भवदीय
सतोषराज मंत्री सभा

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टैलीफोन न० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे — वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक २४) १ आषाढ २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०— १४ जून १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

अमृतमथेदम्

यह आत्मा अमृत है, अमर और अविनाशी है। पांच तत्वों पृथिवी, जल, अग्नि, वायु और आकाश का पुञ्ज यह शरीर तो चला जाएगा पर आत्मा का तत्व सदा अमर बना रहेगा। उसे मौत कभी नहीं आती। अमृतमय है।

भस्मान्तं शरीरम्

हे मानव ! यह तेरा शरीर भस्म हो जाने वाला है। इसका अन्त भस्म हो जाना है। सदा नहीं रहेगा। यह तो यात्रा करने को गाड़ी मिली है, रथ मिला है। किन्तु सदा नहीं साथ देगा। एक दिन टूट जायगा। सुन्दर शरीर की भस्मी ही बन जायगी। राख की मुट्ठी हो जायगी।

ओ३म् क्रतोस्मर

इसलिए मनुष्य ! सदा उस रक्षक प्यारे ओ३म् का स्मरण कर। उसी का आश्रय ले, उसे अपना परम सखा बना प्रत्येक कार्य में उसे याद रख। तन यौवन, धन परिजन, ज्ञान शान के अभिमान में आकर भगवान को मत भूलना। ओ३म् को याद रख। य जु र्वे द

महान् कर्मयोगी स्वर्गीय नेहरू जी

आप ने अपनी वसीयत में लिखा कि मेरी भस्मी को खेतों में बिखेर देना ताकि मातृभूमि की धूल में आत्मसात् हो जाए

महान् आत्मा थे

भारत के राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन जी ने स्वर्गीय प्रधान मन्त्री पण्डित नेहरू जी के महान् व्यक्तित्व के बारे में बोलते हुए कहा—

स्वर्गीय प्रधान मन्त्री एक महान् आत्मा थे। वह न केवल अपने देश के बहुत बड़े मुक्तिदाता थे अपितु इसके बड़े २ निर्माताओं में से भी एक थे। पण्डित नेहरू के बारे में सब से बड़ी बात यह कही जा सकती है कि वह अपने देशवासियों के दिलों में बसते थे। पण्डित जी ने लोगों के जीवन को खुशहाल बनाने का पूरा प्रयत्न किया। उन की वसीयत के कतिपय उद्धरण इस बात को प्रकट करते हैं कि पण्डित जी के दिल में देशवासियों के लिए कितना प्रेम भरा था। हमें उनके जीवन से शिक्षा लेनी होगी। उन की महानता इस बात में पाई जाती है कि उनका जीवन अपने लिए नहीं अपितु अपने पड़ोसियों और देशवासियों के लिए था। उन्होंने अपने देशवासियों को न केवल राजनीतिक स्वतन्त्रता दिलाई अपितु उनके लिए सामाजिक तथा आर्थिक न्याय भी प्राप्त किया—

अधिष्ठाता—संतोषराज सभा मंत्री — सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

मेरे पार्थिव शरीर की भस्मी खेतों में बिखेर दी जाये

मुझे भारत की संस्कृति एवं विरासत पर गर्व है

स्वर्गीय पण्डित नेहरूजी की मर्मस्पर्शी वसीयत

सारे विश्व के प्यारे नेता भारत के स्वर्गीय प्रधान मन्त्री श्री पंडित जवाहर लाल जी नेहरू ने २१ जून १९५४ को अपनी वसीयत लिखी थी। आकाशवाणी से पण्डित जी को माननीया बहिन श्रीमती पण्डित विजय लक्ष्मी जी ने पढ़ी। इस में स्वर्गीय प्रधान मन्त्री ने कहा था—

'मेरे पार्थिव शरीर की अस्थियां एवं भस्मी का एक भाग इलाहाबाद में गंगा, यमुना और अदृश्य सरस्वती के संगम पर प्रवाहित कर दिया जाये। लेकिन बड़ा भाग एक विमान में रख कर आकाश से खेतों में बिखेर दिया जाये। जहां किसान खेती करते हैं ताकि ये (अस्थियां और भस्मी) मातृभूमि की धूल में मिल कर उस में आत्मसात हो जाये।

मैं अपने देशवासियों के प्यार और साथियों एवं सहयोगियों के सहयोग का ऋणी हूं। मैं किसी धार्मिक भावना के कारण अपनी भस्मी का कुछ भाग गंगा में प्रवाहित करने को नहीं कह रहा। यह तो केवल इस लिए कि इस पवित्र नदी से मुझे एक खास लगाव है।

मैं नहीं चाहता कि मेरी मृत्यु के बाद मेरे लिए कोई धार्मिक रस्में की जायें। मेरा इन रस्मों में विश्वास नहीं और फिर इन्हें रिवाज मात्र के लिए करना पाखण्ड के साथ २ अपने आप को और दूसरों को धोखा देना है। लेकिन मेरी यह अभिलाषा है कि मेरे शरीर को जलाया जाये, चाहे मेरी मृत्यु भारत से बाहिर हो और भस्मी भारत लाई जाये।

यद्यपि मैं चाहता हूं कि भारत के लोग शीघ्रातिशीघ्र अन्ध विश्वासों और पाखण्डों से, जो उनके विकास में बाधा हैं, छुटकारा पाएं लेकिन मेरी कभी यह इच्छा नहीं हुई कि मैं अपने महान अतीत से बिल्कुल अलग थलग हो जाऊं। मुझे अपने भारत की विरासत पर गर्व एवं अभिमान है और मैं इसे बनाये रखने के पक्ष में हूं।

भारत के लोगों से मुझे जितना प्यार मिला है उसके बदले में चाहे मैं कितनी भी सेवा करूं किन्तु मैं उसका एक भाग भी लौटा नहीं सकता। निश्चय ही प्यार ऐसी अमूल्य वस्तु है जो किसी भी रूप में लौटाई नहीं जा सकती।

गंगा और यमुना नदियों से मेरा बचपन से लगाव रहा है। गंगा विशेष रूप से भारत की एक पवित्र नदी है। भारत के लोगों की प्रिय है जिस से भारतीयों की पुरानी स्मृतियां, आशाएं, आशंकाएं, गीत, विजय, पराजय सम्बन्ध हैं। गंगा भारत के लोगों की युगों की पुरानी सभ्यता एवं संस्कृति की प्रतीक है। यह सदा बदलती रही है, बहती रही है। लेकिन इस पर भी यह वही पुरानी गङ्गा रही है। यह हिमालय की हिमाच्छादित चोटियों और गहरी घाटियों की जिन से मुझे सदैव प्यार रहा है, स्मरण कराती है। यह गङ्गा प्रत्येक प्रातः सूर्य के प्रकाश में मुस्कराती और नाचती है और जैसे २ संध्या की परछाई ढलने लगती है, यह भी काली चादर धारण कर लेती है। यह गङ्गा मुझे भारत के अतीत का स्मरण कराती है। वर्तमान में बहती जा रही है तथा भविष्य के विशाल सागर की ओर जा रही है।

मैं बहुत-सी पुरानी रस्में और रिवाज छोड़ चुका हूँ और मैं चाहता हूं कि भारत वे तमाम बेड़ियां उतार फैंके जो उसे जकड़े हुए हैं। तथा इसकी गति में रुकावट बनती हैं जो इस की जनता में फूट पैदा करती हैं तथा इनकी बहुत बड़ी संख्या को दबाये हुए है। इनकी शारीरिक एवं आत्मिक उन्नति में बाधा बनी हुई हैं। यद्यपि मैं यह सब कुछ चाहता हूं, किन्तु मैं अपने अतीत से सर्वथा अलग-थलग नहीं होना चाहता।

मुझे इस बात का गर्व है कि हम एक बड़ी सम्पत्ति के मालिक हैं और दूसरों के समान मुझे भी इस बात की अनुभूति है कि मैं एक जंजीर की कड़ी हूँ जिस का पिछला भाग भारत के अतीत युग के इतिहास की प्रभात तक पहुँचता है वे कड़ियां कभी तोड़ना नहीं चाहता क्योंकि यह अमूल्य खज़ाना है और मुझे इस से प्रेरणा मिलती है। अपनी इस अभिलाषा की साक्षी के रूप में एवं भारत की संस्कृति की थाती के निमित्त अपनी श्रद्धांजलि के तौर पर यह प्रार्थना कर रहा हूं कि मेरी भस्म इलाहाबाद में गङ्गा में डाल दी जाये जो उसे बहा कर उस विशाल सागर में ले जाए जो भारत के चरणों को छूता है। मेरे मरने के बाद मेरा श्राद्ध न किया जाए।

मर्मस्पर्शी वसीयत

मेरे पार्थिव शरीर की अस्थियां एवं भस्मी का एक भाग इलाहाबाद में गंगा, यमुना और अदृश्य सरस्वती के संगम पर प्रवाहित कर दिया जाए। लेकिन बड़ा भाग एक विमान में रख कर आकाश से खेतों में बिखेर दिया जाये, जहां किसान खेती करते हैं। ताकि वे अस्थियां और भस्मी मातृभूमि की धूल में मिल कर उस में आत्मसात हो जाएं—

गोविन्द नगर कानपुर

आर्यसमाज गोविन्दनगर कानपुर का वार्षिकोत्सव धूमधाम से ता० २३ मई से २६ मई तक मनाया गया जिस में आचार्य कृष्ण जी, पं० त्रिलोकचन्द्र शास्त्री व पं० राजपाल जी मदनमोहन जी चिमट मंडली आर्य प्रादेशिक सभा जालंधर श्री पं० वाचस्पति जी शास्त्री, स्वामी शिवानन्द जी, पं० बलवीरसिंह जी शास्त्री तथा पं० नरपतसिंह जी पधारे। राष्ट्ररक्षा सम्मेलन, चरित्र निर्माण सम्मेलन, शिक्षा सम्मेलन भी हुए। आर्य कन्या पाठशाला की पुत्रियों का कार्यक्रम बड़ा ही शानदार था। जल्सा हर प्रकार से शानदार था। वहां के कर्मठ जनसेवी श्री देवीदास जी आर्य का प्रभाव तो जन २ पर है। समाज के प्रधान सौम्य स्वभाव श्री रामलाल जी मन्त्री श्री मोहनलाल जी, श्री कुमार जी, श्री देसराज जी कपूर, श्री बहल जी, शास्त्री कृष्णजी तथा बहिनों का उत्साह प्रेम प्रशंसनीय है। उत्सव की शोभा से चित्त प्रसन्न हुआ। सभा को मार्ग व्यय के अतिरिक्त १०५) रु० वेदप्रचार में मिला। सब का धन्यवाद व बधाई।

सम्पादकीय–

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२१, १४ जून १९६४ [अंक २४

सभा के हित चिन्तकों से

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर के गत वार्षिक बजट तथा निर्वाचन के आर्यसमाज लोहगढ़ अमृतसर में हुए शानदार अधिवेशन में समाजों के सारे मान्य प्रतिनिधियों ने मिलकर पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज को सभा का प्रधान चुना था। किन्तु पता नहीं क्यों पूज्य महात्मा जी ने प्रधान बनना स्वीकार नहीं किया। अतः अब पुनः १४ जून १९६४ रविवार को जालन्धर में सभा के इस अधिवेशन में सभा के अधिकारियों का निर्वाचन होगा। सभा से सम्बन्धित आर्यसमाजों के मान्य प्रतिनिधि बन कर आप भाई बहिनें पधार रहे हैं। आप सभा के हितचिन्तक हैं, इस विशाल परिवार के अंग हैं, केन्द्र के घटक हैं, शरीर के स्वस्थ भाग हैं और विशाल सागर की पवित्र धाराएं हैं। आप ही सभा हैं तथा यह सभा आप का ही दूसरा रूप है।

आज का समय कितना विषम है। चारों ओर क्या स्थिति तथा वातावरण है। धर्म प्रचार की क्या गति है, जीवन दशा का क्या हाल है? विशेष का भारत के मान्यवर प्रधानमन्त्री श्री पं० जवाहर लाल जी नेहरू के अत्यन्त दुःखद देहावसान पर राष्ट्रिय संस्था कांग्रेस की विषम अवस्था पर उसके कर्णधारों ने, प्रधान श्री कामराज ने कितनी योग्यता, अनथक परिश्रम तथा प्रेम से इस निर्वाचन में कितनी दूरदर्शिता से काम लिया है। मोतियों के बिखरने की आशंका समाप्त हो गई है। आर्य प्रादेशिक सभा के लिए क्या कोई कामराज निकलेगा। आज के भौतिक युग में इस समय सभा के सारे बिखरे मोतियों को एक ही प्रेम के सूत्र में पिरोने के लिए सभा के सारे प्रेमी अपना २ दायित्व निभायेंगे? इस सभा का अतीत बड़ा शानदार था पूज्य महात्मा हंसराज जैसा सर्व मेधी देवता इस का कर्णधार था। उन के बाद महात्मा आनन्द स्वामी जी ने भी इसे उन्नत करने में कोई न्यूनता नहीं रखी। इस के पास बड़ी २ संस्थाएं, बड़े २ नेता हैं। कमी कोई नहीं। बड़ी २ आर्य समाजें हैं। किन्तु तथ्य यह है कि आज उन को सक्रिय बनाने की आवश्यकता है। भारी कार्य करना है। यह जब कि सारे सिर जोड़ कर सभा को गौरव के शिखर पर ले चलें। आज कुछ उदासीनता सी है। कुछ दो चार ऐसे सज्जन निकले जो सभा के लिए विशेष दायित्व ले कर समय देवें। समाजों में भ्रमण करें, जनता में उत्साह बढ़ायें, वेद प्रचार की दशा को समुन्नत करें। अर्थ की प्रगति में विशेष सहयोगी बनें। यदि केन्द्र निर्बल हो गया तो अंगों का क्या होगा? प्रचारक तो कर्तव्य निभा रहे हैं। यह समय है जब कि सभा के सारे प्रेमी, स्तम्भ सिर जोड़ कर मिल कर एक परिवार के नाते इसे दृढ़ बनावें

—त्रिलोकचन्द्र

—

जवाहर और लाल

भारत का सर्वप्रिय नेता प्रधानमन्त्री पंडित जवाहर लाल नेहरू भौतिक शरीर त्याग कर चले गये। अब उनके बाद इस दायित्व पूर्ण आसन पर श्री लाल बहादुर शास्त्री बैठ गये हैं। यह भी एक संयोग है कि पंडित जवाहर लाल जी के बाद भारत को लाल मिले हैं। भारत के यह नये प्रधानमन्त्री कितने सौम्य, गम्भीर, सादगी की मूर्ति, अनथक कार्यकर्ता तथा दृढ़ विचार के हैं—यह तो इन के कार्यों से साफ हो गया है। सारी कांग्रेस ने उन को अपना नेता चुन कर इनके गम्भीर व्यक्तित्व का सच्चे अर्थों में सम्मान किया है। कहा जाता है कि श्री शास्त्री जी अठारह २ घण्टे तक काम करते हैं। देशभक्ति की भावना जीवन में कूट २ कर भरी हुई है।

भारत के आकाश में आज चारों ओर विषम समस्याओं की काली घटाएं छाई हुई हैं। गम्भीर मामले सामने हैं। चारों ओर भय एवं अशांति का झंझावात चल रहा है। ऐसी स्थिति में प्रभु से प्रार्थना है कि हमारे राष्ट्र के यह नये प्रधानमन्त्री इन सारी समस्याओं को अपनी योग्यता, नेताओं के सहयोग, जनता के प्यार के साथ २ सुलझाने में सक्षम हों। राष्ट्र का पूरा २ सहयोग मिले। स्वर्गीय जवाहर के बाद यह लाल विश्व में लाल सिद्ध हो सकें—सं०

—

ये हमारे स्कूल

आर्य समाज के पास कितनी बड़ी संस्थाएं हैं। पूज्य स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी के त्याग, बलिदान से सारे भारत में डी.ए.वी. का विशाल सागर बह रहा है। डी.ए.वी. संस्थाओं पर सब को मान है। इन में अब भी किताबी शिक्षा के साथ २ जीवन की शिक्षा पढ़ाई जाती है। इन संस्थाओं ने देश को बड़े २ देशभक्त, नेता, शिक्षा विशारद, वक्ता व लेखक दिये हैं। इन का परीक्षा परिणाम तो कमाल का ही होता है। अभी २ हायर सैकंडरी परीक्षाओं के नतीजे निकले हैं। इन में दसवीं में तथा ग्यारहवीं में भी डी.ए.वी. हायर सैकंडरी स्कूल चंडीगढ़ के ही छात्र सारे पञ्जाब में प्रथम आये हैं। हम स्कूल के मान्य अनथक प्रिंसिपल श्री हरिराम जी एम. ए. को बहुत २ हार्दिक बधाई देते हैं। आर्य समाज का मस्तक ऊंचा है।

श्री प्रिंसिपल बहल जी

डी. ए. वी. कालेज जालन्धर पंजाब के सारे कालेजों में बहुत बड़ा कालेज है। इस के मान्य प्रिंसिपल श्री भीमसेन जी बहल अमरीका सरकार के निमन्त्रण पर अमरीका गये हुए थे। निरन्तर चार महीने वहां अमरीका तथा इंग्लैंड के कालेजों तथा विश्वविद्यालयों को भी देखते रहे। वहां अनेक भाषण भी दिये। अब वापस चार मास के परिभ्रमण के बाद पधारे हैं। हम मान्य प्रिंसिपल बहल जी का स्वागत करते तथा बधाई देते हैं। आर्य समाज को इन पर बड़ा मान है—सं.

—

गांधी मैमोरियल मॉडल स्कूल गोकलगढ़

में छात्रों व स्टाफ की सम्मिलत शोक सभा में शांति के देवता पं. नेहरू जी के निधन पर शोक प्रस्ताव पारित कर के पांच मिनिट तक मौन रह कर समवेदना प्रकट की तथा प्रभु से उन के लिए मंगल कामना की प्रार्थना की। इस आघात के कारण एक दिन स्कूल बंद कर दिया गया।

—

भारत के नये प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री जी

श्री लाल बहादुर शास्त्री का जन्म एक साधारण घराने में हुआ। इनके पिता जी एक अध्यापक थे और श्री लाल बहादुर की शैशवास्था में ही उनका देहांत हो गया। श्री शास्त्री जी ने अपने जीवन में श्री नेहरू, आचार्य नरेन्द्रदेव और श्री रफी अहमद किदवई जैसे नेताओं से प्रेरणा प्राप्त की और प्रारम्भिक जीवन इन्हीं के साथ शुरु किया।

राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन के शब्दों में लाल बहादुर जी संतुलित विचारों वाले हैं और उन में कठिन से कठिन स्थिति से सफलता पूर्वक निपटाने की क्षमता है। श्री पं० नेहरू जी श्री शास्त्री जी को हमेशा एक ईमानदार परिश्रमी तथा अपनी आत्मा की आवाज पर चलने वाला कहते थे। श्री शास्त्री जी की कांग्रेस के वरिष्ठ नेताओं में गणना १९५१-५२ में शुरु हुई जब उन्होंने प्रथम आम चुनाव का संचालन किया। तभी वह श्री नेहरू जी के निकट आये। श्री नेहरू जी के अन्तिम दिनों में श्री शास्त्री जी उनके अत्यन्त विश्वस्त व्यक्ति थे और दल के नेता तथा कांग्रेस संगठन के मध्य एक लिंक का काम करते थे। विभागहीन मन्त्री बनने के बाद उन्होंने पूर्णतया श्री नेहरू जी का कार्यभार सम्भाला।

श्री शास्त्री जी गांधी जी की जन्मतिथि दो अक्तूबर को १९०४ में पैदा हुए। लेकिन अपनी शारीरिक गठन से वह अधिक से अधिक चालीस वर्ष के लगते हैं। उन्होंने अपनी शिक्षा वाराणसी में एक स्कूल में की लेकिन १९२१ के सत्याग्रह में कूद पड़ने के कारण पढ़ाई रुक गई। उन्होंने गांधी जी का वह भाषण सुना कि छात्रों को सरकारी स्कूलों का बहिष्कार करना चाहिए और सत्याग्रह में शामिल हो गए। काशी विद्यापीठ से उन्होंने शास्त्री की और फिर आचार्य कृपलानी, श्री प्रकाश और डा० सम्पूर्णानन्द के सम्पर्क में आए। ये सभी नेता तब अध्यापक थे। शिक्षाकाल में अनेक ऐसे अवसर आए जब लाल बहादुर जी के पास किश्ती का किराया देने के पैसे न होते तब वह तैर कर गंगा पार करके घर लौटते।

श्री शास्त्री जी रेल मन्त्री के रूप में १९५२ में केन्द्रीय मन्त्रिमंडल में आए। १९५१ तक वह उत्तर प्रदेश मन्त्रिमंडल में थे। १९५२ से ही वह लगभग सारा समय केन्द्र मन्त्रिमंडल में रहे। १९५६ में एक रेल दुर्घटना के बाद उन्होंने मंत्री पद से त्यागपत्र दिया था और १९६३ में वह कामराज योजना के अधीन मन्त्री पद से हटे किन्तु थोड़े समय बाद ही पुनः आगए। १९६१ में उन्होंने गृहविभाग सम्भाला। १९६२ में वह श्री नेहरू के साथ इलाहाबाद क्षेत्र से लोक सभा के लिए चुने गए। श्री शास्त्री जी ने अपने राजनीतिक जीवन में अनेक समस्याओं के समाधान में उल्लेखनीय योगदान दिया।

आर्यसमाज, रेलवे रोड अम्बाला शहर

आर्यसमाज तथा स्त्री आर्य समाज अम्बाला शहर ने १ जून को एक विशेष बैठक में स्वर्गत विश्वनेता श्री पं० नेहरू जी के प्रति शोक प्रस्ताव पास किया तथा श्रद्धांजलियां अर्पित कीं।

श्री नेहरू के जीवन का दिग्दर्शन मात्र संक्षिप्त इतिहास तिथियों में

१४ नवम्बर, १८८९—इलाहाबाद में जन्म हुआ।

१९०४—इंगलैंड में रवाना।

१९१२—भारत में वापिस

१९१६—महात्मा गांधी से भेंट की।

१९२०-२२—दो बार जेल गए

१९२३—कांग्रेस के महासचिव रहे

१९२६—यूरोप और रूस की यात्रा की।

१९२८—लखनऊ में कमीशन के खिलाफ जलूस का नेतृत्व

१९२९—कांग्रेस के लाहौर अधिवेशन के अध्यक्ष बने।

१४ फरवरी १९३५—अल्मोड़ा जेल में आत्म कथा पूरी की।

३१ अक्तूबर, १९४०—सत्याग्रह में गिरफ्तार हुए

७ अगस्त, १९४२—कांग्रेस के बम्बई अधिवेशन 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव रखा।

८ अगस्त १९४२—गिरफ्तारी। अहमद नगर किले में रखा गया।

मार्च, १९४६—द० पू० एशिया का दौरा किया

६ जुलाई, १९४६—चौथी बार कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गए।

२ सितम्बर, १९४६—गवर्नर जनरल की कार्यकारी परिषद के उपाध्यक्ष निर्वाचित हुए।

१५ अगस्त, १९४७—भारतके स्वाधीन होने पर प्रधान मन्त्री बने।

३ फरवरी, १९४८—राष्ट्र संघ महासभा में भाषण। (१९५६ और १९६१ में भी भाषण किए।

१९५४—चाऊ के साथ पंचशील के सिद्धान्तों पर हस्ताक्षर।

३१ अक्तूबर, १९५६—संयुक्त राष्ट्रसंघ के नाम विशेष संदेश। मिस्र पर हमले के सम्बन्ध में कार्रवाई की मांग।

अक्तूबर, १९४८—राष्ट्रपति ट्रूमन का निमंत्रण अमरीका-यात्रा। (१९५६ और १९६१ में पुनः अमरीका गए।

१९५३—लंदन में एलिजबेथ की राजगद्दी में शामिल हुए।

दिसम्बर, १९५४—मलय इण्डोनेशिया, थाई देश और बर्मा की यात्रा।

१९५५—रूस यात्रा (फिर १९६१ में रूस यात्रा)

८ जुलाई, १९५५—भारत रत्न की उपाधि से सम्मानित किए गए

१९५६—चीन यात्रा की।

जून-जुलाई, १९५६—आयरलैंड, पं. जर्मनी, फ्रांस, यूगोस्लाविया आदि देशों की यात्रा की।

जून, १९५७—सीरिया, डेन्मार्क, फिनलैंड, नार्वे आदि की यात्रा की।

अक्तूबर, १९५७—जापान यात्रा की।

१९५८—नैपाल की दूसरी यात्रा की।

११ दिसम्बर, १९५९—आइक के साथ संयुक्त वक्तव्य।

सितम्बर-अक्तूबर, १९६१—राष्ट्रीय एकता के लिए सम्मेलन बुलाया गया।

सितम्बर, १९६०—राष्ट्रसंघ में भारतीय प्रतिनिधि मंडल का नेतृत्व किया।

अक्तूबर, १९६२—चीन के आक्रमण से आघात पहुंचा।

जनवरी, १९६४—भुवनेश्वर कांग्रेस अधिवेशन के समय बीमार हुए।

२७ मई, १९६४—को नश्वर शरीर का त्याग।

—

प्रिंसिपल बी.एस. बहल जी की सफल अमरीका यात्रा

तथा 'शिक्षा सम्बन्धी नए अनुभव'

डी० ए० वी० कालेज जालन्धर के सुयोग्य व सफल प्रिन्सिपल श्री बी० एस० बहल जो अमरीका सरकार द्वारा भारत में स्थापित ऐजूकेशनल फाउन्डेशन के निमन्त्रण और यात्रा प्रबन्ध पर १४ फरवरी से ३१ मई तक अमरीका और ब्रिटेन महाद्वीपों की विभिन्न शिक्षण संस्थाओं में शिक्षा सम्बन्धी अनुभव पूर्ण जानकारी प्राप्त करने के हेतु पर्यटन कर भारत लौटे हैं। श्री बहल बड़े उत्साही और सुयोग्य शिक्षा विशेषज्ञ हैं। पंजाब ही नहीं अपितु भारत के इस महान कालेज में जिस आचार्य पद पर आप आसीन हैं वस्तुतः अमरीका राज्य सरकार के का यह चुनाव बड़ा ही शिक्षा विभाग उपयुक्त सिद्ध हुआ। हम आर्य जगत की ओर से जहां श्री प्रिंसिपल बहलजी का अभिनन्दन पूर्ण स्वागत करते हैं वहां अमरीकी सरकार के इस शिक्षा फाउन्डेशन को भी बधाई देते हैं और आशा रखते हैं कि भविष्य में भी इसी प्रकार के पर्यटनों का प्रबन्ध किया जाता रहेगा।

श्री बहल साहिब के आगमन पर हम सभी को प्रसन्नता है। मैं उन से मिल कर और विदेशों में शिक्षा सम्बन्धी जानकारी प्राप्त कर अत्यन्त प्रभावित हुआ। श्री प्रिंसिपल महोदय के साथ अन्य कई बन्धु गए थे उन्होंने भी अपने २ दृष्टिकोण से अनुभव प्राप्त किए हैं किन्तु श्री बहल जी के हृदय में भारत माता और महर्षि दयानन्द के प्रति जो अटूट श्रद्धा भरी है तथा भारतीय संस्कृति की जो स्पष्ट कल्पना उन के मन में है उन्होंने उसी दृष्टिकोण से ये अनुभव प्राप्त किए हैं। यह सभी जन सामान्य के लिए अत्यन्त उपयोगी हैं इसी हेतु यहां कुछ उद्धृत कर रहा हूं।

श्री बहल साहिब अपने साथियों के साथ १४ फरवरी १९६४ ई० को 'क्लेयरमाउन्ट' पहुंचे और 'हार्वे मड कालेज' में आवास प्राप्त किया। इन के यात्रा निर्देशक ने यहां के आवासान्तर्गत सभी कार्यक्रम निर्धारित किए। प्रयोग शालाओं पुस्तकालयों, भाषणकर्त्ताओं व अन्य वार्ता आदि सभी इन में सम्मिलित थी।

यहां यह लोग १० दिन ठहरे। हार्वे मड कालेज में रहते हुए प्रिंसिपल महोदय ने अनुभव किया कि कालेजों का परस्पर समुदायिक सहयोग बहुत सी आवश्यक बातों में बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकता है। पुस्तकालय चिकित्सा, सभा भवन छात्र केन्द्र आदि अपूर्व योग्यता और मितव्ययता के साथ कार्य कर सकते हैं। प्रत्येक कालेज कुछ थोड़े से आर्थिक सहयोग से कालेज का सम्मिलित क्षेत्र बड़ा ही सुन्दर और आकर्षक बना सकता है। हार्वे मड कालेज के आचार्य की योग्यता और बुद्धिमत्ता का यह परिचायक है। श्री बहल साहिब का कहना है कि यदि भारत के बड़े २ नगरों में इसी प्रकार की पद्धति को लागू कर दिया जाए तो शिक्षण संस्था व छात्र वर्ग सभी लाभ उठा सकते हैं।

२४ मार्च को सान फ्रान्सिसको के लिए प्रस्थान किया। मार्ग में केफोलीर्निया यूनिवर्सिटी देखी तथा सेन फ्रान्सिसको में रहते हुए ही बर्कले गए तथा स्टेनफोर्ड यूनिवर्सिटी देखी। बर्कले यूनिवर्सिटी की उल्लेखनीय बात यह है कि उस में २७००० छात्र निवास करते हैं तथा साथ ही शिक्षास्तर भी उच्च रखा गया है। शिक्षा विदों की यह पार्टी ३० मार्च से २ अप्रैल तक ब्लैकबर्न कालेज में रही। यह कालेज भी अपने ही ढंग का अनूठा कालेज है। भारतवर्ष के विद्यार्थियों को इस के विद्यार्थियों से स्वात्मनिर्भर जीवन से काफी शिक्षा मिल सकती है। यहां के विद्यार्थी अपने आप ही भवन निर्माण करते हैं। भोजन बनाना, पाकशाला के भोजन कक्ष में सभी साथियों को भोजन परोसना आवश्यक है। स्वयं ही वे अपने बर्तन साफ करते हैं। कपड़े स्वयं धोते हैं। पुस्तकालय, प्रयोगशालाओं और कार्यालयों के कार्यों में हाथ भी बटाते हैं। यह सभी कार्य बड़ी ही कुशलता पूर्वक नियोजित किया गया है। इस कार्यक्रम से जहां शिक्षा व्यय में कमी अनुभव की जाती है साथ ही छात्रों को स्वात्म जीवन का पूर्वाभ्यास भी हो जाता है। भारतवर्ष में अवस्था ही दूसरे प्रकार की है। यहां विद्यार्थियों की संख्या अधिक है और शारीरिक कार्य बहुत कम लिया जाता है। यदि अमरीका की तरह यहां भी यही अभ्यास किया जाए चाहे वह प्रारम्भ में छोटे ही स्तर पर हो तो हमारे विश्वविद्यालय कुछ ही समय में अच्छे सुयोग्य राष्ट्रीय निर्माण कर सकेंगे।

२ अप्रैल को माननीय प्रिंसिपल, बहल डेट्रायट के मोनटाथ कालेज में पहुंचे इस कालेज में शिक्षा पद्धति पर कुछ भाषण हुए जिन से पूर्ण पता चला कि अमेरिका की शिक्षा पद्धति किस प्रकार की है। हमें यह कहने में किसी प्रकार का संकोच नहीं कि अमेरिका एक उद्योग वादी देश है। प्रत्येक कार्य बड़े ही वैज्ञानिक ढङ्ग पर किये जाते हैं। शिक्षा का ढङ्ग भी वैज्ञानिक ही कहें तो अत्युक्ति नहीं। मौनटोथ कालेज दूसरे कालेजों से हर रूप में पृथक् है। यहां कालेज की क्लासकांश का कोई एक सीनियर सदस्य किसी एक कक्षा को भाषण करता है तदुपरांत वही कक्षा दस-दस या १५-१५ छात्रों के लघु वर्गों में विभक्त हो जाती है। इन वर्गों में छात्र परस्पर वार्तालाप और बात-चीत में उक्त भाषण के विषय को हृदयंगम करते हैं। शिक्षक वहां केवल एक प्रोमोटर का कार्य करते हैं और विद्यार्थियों को उनकी चर्चा में सहायता देते हैं। भारतवर्ष में छात्रों की संख्या बहुत अधिक होती है और हमें केवल भाषण शैली पर ही निर्भर रहना पड़ता है।

अमेरिका में साधारण शिक्षा के भी विविध संस्थान हैं। वास्तव में इस पद्धति ने यहां पर मानव को मानव बनाने में काफी सफलता प्रदान की है। भारत में भी हम इस ओर कुछ अग्रसर हुए हैं यह अभी केवल हायर सेकण्डरी पद्धति तक कुछ अंश में लागू की गई है। कालिजों में इस ओर कुछ उत्साह-जनक कार्य नहीं हुआ।

अमेरिका के शिक्षा क्षेत्र में जूनियर कालिजों ने भी श्री बहल साहिब को काफी प्रभावित किया। यह पद्धति उन विद्यार्थियों के लिए जो कि उच्चतम शिक्षा प्राप्त करना चाहते हैं बड़ी लाभदायक सिद्ध हुई है। व्यवस्थापक, (क्रमशः)

विनम्र उपदेशक

धारूर (महाराष्ट्र) के पुराने आर्य भजनोपदेशक मान्य पं. आय भानु जी ने एक दिन बताया कि ऋषि की जन्म शताब्दी पर मथुरा में सवत्यागी हंसराज का प्रवचन हो रहा था। श्रोताओं ने बीच-बीच में फुस-फुस आरम्भ कर दी कि लोकप्रिय अलौकिक व्याख्याता कंवर सुखलाल जी आर्य पथिक का प्रोग्राम शीघ्र आरम्भ किया जावे। महात्मा हंसराज जी समय की नाड़ी भाप गए और शीघ्र अपने विचारों को विराम दिया। अब आई आर्य पथिक कंवर जी की बारी।

कंवर जी ने आर्य जन की वह तर्जना की कि भूल न सके। आप ने अत्यन्त विनम्र भाव से अपने जीवन की दुर्बलता एवं पूज्य महात्मा जी की राष्ट्र एवं समाज हित में आहुति का मार्मिक चित्र जनता के सामने खींचते हुए श्रोताओं को चरित्र की एवं त्याग की पूजा का आदेश दिया। आपने उसी समय व्याख्यान देते-देते एक गीत रच डाला और उस गीत द्वारा आर्यों की अशिष्टता को रगड़ा। गीत का एक पद था :—

खसलत जनानी हो गई।

आर्यसमाज के मंच से बोलने वाले सभी वक्ताओं के लिए कंवर जी ने एक आदर्श प्रस्तुत किया जिसे हम सब को अपनाना चाहिए। कई बार बड़े-बड़े महात्मा एवं प्रकाण्ड पंडितों के होते हुए यदि जनता हमारे भजनों एवं चटकीले अखबारी भाषणों की मांग करे तो हम इसमें अपना गर्व समझते हैं। आइए हम बीसियों विनम्र सुखलाल पैदा करें जो कीर्ति के शिखर पर चढ़कर भी पूर्णतया विनीत रहे। मेरा आर्य जगत की अद्भुत विभूति को शत-शत नमस्कार।

आर्यसमाज की कहानियां—२

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

इस में आर्यसमाज की हानि है :—

श्री स्वामामी सोमानन्द जी महाराज रोहतक ने मुझे बताया कि एक बार दीनानगर में राष्ट्रिय संघके कुछ प्रतिष्ठित भाई मान्यवर स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज के पास आये और अपने गुरु दक्षिणा उत्सव की अध्यक्षता करने की प्रार्थना की। राष्ट्रिय संघ वाले भाई इस उत्सव पर अपने झण्डे की पूजा करते एवं उसे धन भेंट करते हैं। झण्डे को संघ गुरु मानता है। स्वामी जी ने जड़ पूजा के इस उत्सव की प्रधानता को प्रेम पूर्वक अस्वीकार कर दिया। बार बार उन भाईयों ने प्रार्थना की पर आर्य साधु ने स्वीकृति न दी। जब उन भाईयों ने पूछा कि अस्वीकृति का कारण क्या ? तो स्वामी जी ने कहा 'मैं इस में आर्य समाज की हानि समझता हूं।'

क्या हम आर्य समाजी सिद्धांत प्रेम में संन्यासी का अनुकरण करेंगे ?

यह आर्य संस्था है

दिवगत चौधरी वेद व्रत जी (जो स्वामी सत्यानन्द बन कर संसार से गये) ने एक बार मुझे बताया कि साईं दास स्कूल जालधर में Divisional Inspector of School का आगमन हुआ। सम्भवत: उस का नाम श्री क्लार्क था। अंग्रेज की छाया से ही तब भारतीय भयभीत थे। उस ने स्कूल में सिग्रेट सुलगया। श्रद्धेय आर्य गौरव पं० मेहर चन्द जी ने तुरन्त कहा कि 'यह आर्य संस्था है यहां धूम्र पान वर्जित है।' अंग्रेज अधिकारी चकित रह गया और अविलम्ब सिग्रट बुझा कर क्षमा मांगी साथ ही डी० ए० वी० अनुशासन की इस कट्टरता की अत्यन्त प्रशंसा की। आर्यों की स्पष्टवादिता, साहस एवं सिद्धान्त का सौदा न करने की नीति का यह एक अनुपम उदाहरण है। इसी प्रकार कुछ वर्ष पूर्व हिसार आर्य समाज के सेवक श्री गिरधारी लाल ने पंजाब के एक प्रतिष्ठित कांग्रेसी नेता को समाज में सिग्रेट पीने से टोका। वह समाज के सेवक की कर्त्तव्य निष्ठा पर मोहित हुआ जिस ने एक बड़े व्यक्ति को भी टोकने से संकोच न क्या हम सब में ऐसा नैतिक बल है ?

वज्र संकल्पी स्वा०सर्वदानंद जी महाराज

स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज विरक्त होकर घर से निकले। एक महात्मा के पास पहुंचे। कुछ पढ़ने की इच्छा प्रकट की परन्तु उसी समय एक डिबी से कुछ निकाल कर खाने लगे। महात्मा ने पूछा कि यह क्या ? बोले महाराज कुछ अफीम का नशा है।

(ले०—राजेन्द्र 'जिज्ञासु' प्राध्यापक दयानन्द कालेज शोलापुर)

यह सुन कर महात्मा ने बहुत फटकारा और धिक्कारा। महात्मा बोले तेरे जैसा व्यसनी क्या विद्या पायेगा। बस फिर क्या था स्वा० जी ने वह डिबी वहीं बैठे दूर फैंक दी और संकल्प किया कि अब तो इसे छूना ही नहीं। तीन दिन साधु के पास ही रहे और व्यसन के बार बार आक्रमण पर विचलित न हुए फिर साधु को विश्वास हो गया कि यह युवक वज्र संकल्पी है इस ने व्यसन पर विजय पाई है।

जीवन निर्माण की कला का यही रहस्य है। क्या हम इस पथ के राही बन कर सब व्यसनों को त्यागने का निश्चय करेंगे ?

शिष्टाचार क्या है ?

आर्यजगत के किसी गत अंक में शोलापुर के प्रिय आर्यवीर विनय प्रकाश जी का मान्य महात्मा आनन्द स्वामी जी पर एक लेख प्रकाशित हुआ है। आपने महात्मा जी के जीवन पर कुछ प्रकाश डाला है। महापुरुषों का वेदोक्त आचरण ही सदाचार है। महात्मा आनन्द स्वामी जी अपने शिष्टाचार के लिये प्रसिद्ध हैं। उनके शिष्टाचार की एक कहानी भूलती नहीं। १९५६ की ग्रीष्म ऋतु में महात्मा जी आर्यसमाज के कमठ दानवीर श्री बृजलाल जी गुप्त की प्रार्थना पर टोहाना पधारे। मैं भी दर्शन करने चला गया। श्री बृजलाल जी की बैठक में श्रद्धालु स्त्री पुरुष बैठे हुए थे। महात्मा जी चारपाई पर बैठे थे। मैंने आकर चरण स्पर्श कर नमस्ते की और दरी पर बैठ गया। महात्मा जी ने आग्रह पूर्वक पास रखी कुर्सी पर बैठने की आज्ञा दी। मैंने कहा नहीं दरी पर ही ठीक है। मैंने आदेश जब न माना तो महात्मा जी चारपाई से उतर कर नीचे बैठ गये और कहा कि जब आप ऊपर नहीं बैठते तो मैं भी नीचे बैठूंगा। मुझे हारकर कर्सी पर बैठना पड़ा। मैं तो दंग रह गया और उपस्थित लोगो पर भी महात्मा जी की महानता का गहरा प्रभाव पड़ा। ऐसे कार्यकर्त्ता खींचे जाते हैं।

——

डी.ए.वी. H/S स्कूल तथा आर्य समाज कमाही देवी

३१-५-६४ को प्रिय प्रधान मंत्री जवाहर लाल जी के आकस्मिक निधन पर शोक प्रकट किया तथा उनकी आत्मा की सद्‌गति व परिजनों को धैर्य प्रदान करने की प्रभु से प्रार्थना की। आठ जून तक प्रतिदिन प्रातः हवन यज्ञ वा प्रार्थना का कार्यक्रम बनाया गया।

प्रधान मन्त्री श्री नेहरू जी के निधन से देश अनाथ हो गया

आर्य संस्थाओं के शोक प्रस्तावों की भरमार

डी० ए० वी० हायर सैकण्डरी स्कूल कादियां स्टाफ तथा विद्यार्थियों की यह संयुक्त शोक सभा शान्ति के अमर देवता प्रधान मन्त्री पं० जवाहर लाल नेहरू के असमय निधन पर हार्दिक शोक प्रकट करती है और पंडित जी के सम्बन्धियों तथा देशवासियों के साथ इस असह्य दुःख में हार्दिक सहानुभूति प्रकट करते हुए भगवान से उनकी शुभ गति के लिए प्रार्थना करता है।

आर्य समाज पलवल कैम्प—आर्य समाज पलवल कैम्प की ओर से तिथि २७ मई १९६४ को श्री जवाहरलाल नेहरू जी के अकस्मात् निधन के स्मरण में एक शोक सभा हुई जिस में नेहरू जी को श्रद्धांजलियां दी गईं।

आल इन्डिया द.नं. सालवेशन मिशन हुशियारपुर—भारत माता के सुपुत्र तथा जनता के हृदय श्री प्रधान मन्त्री नेहरू जी के निधन पर अत्यन्त खेद प्रकट करता है तथा श्रीमती इन्दिरा गांधी से हार्दिक सहानुभूति प्रकट करता है। श्री नेहरू की सद्‌गति के लिए प्रभु से शुभ कामना करता है।

आर्य समाज युसफसराय (ग्रीन पार्क) नई दिल्ली-१६ आर्यसमाज यूसफसराय (ग्रीन पार्क) के सदस्यों की यह सभा भारत के लोक प्रिय जननायक तथा प्रधान मन्त्री विश्व नेता पण्डित जवाहर लाल नेहरू के आकस्मिक निधन पर हार्दिक शोक प्रकट करती है।

हम सब प्रार्थी हैं कि प्रभु उनकी आत्मा को शांति, हम सब को धैर्य एवं उनके पद चिन्हों पर चलकर कर्त्तव्य पालन की क्षमता प्रदान करें।

शालिग्राम गौतम मन्त्री

आर्य केन्द्रीय सभा, दिल्ली—आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली राज्य नई दिल्ली के तत्वाधान में एक सार्वजनिक शोक सभा स्वतन्त्र भारत के प्रधान मन्त्री लोक नायक पं. जवाहरलाल जी नेहरू के देहावसान पर ३१-५-६४ को सायं ६ बजे शोक सभा हुई जिसमें अनेक महानुभावों ने अपनी २ श्रद्धाजलियां अर्पित कीं। तथा स्वर्गीय आत्मा के लिए सद्‌गति की प्रार्थना पर की।

रामनाथ मन्त्री

श्री चन्दूलाल ऐंग्लो वैदिक हायर सेकैण्डरी स्कूल हिसार के छात्रों, प्राध्यापकों, प्रबन्ध-समिति के सदस्यों तथा वरिष्ठ नागरिकों की यह शोक सभा मानवता के शाश्वत हितैषी, वसुधैव कुटुम्बकम की साकार प्रतिमा भारत माता के सच्चे सपूत, भारत रत्न श्री जवाहरलाल जी नेहरू के आकस्मिक एवं असामयिक निधन पर अपार शोक प्रकट करती है तथा परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करती है कि वह दिवंगत महान आत्मा को स्थायी शांति प्रदान करें।

आर्यसमाज प्रेमनगर की यह सभा भारत के महान सपूत, स्वतन्त्रता संग्राम के वीर सेनानी, पूज्य पण्डित जवाहर लाल जी नेहरू की असामयिक मृत्यु पर हार्दिक शोक प्रकट करती है। परमपिता परमात्मा से उनकी आत्मा की सद्‌गति के लिए प्रार्थना करती है।

वीरभानु आर्यसमाज प्रेमनगर करनाल

दयानन्द-वचनामृत

वेदार्थ—ज्ञान का आदेश सब महर्षि-मण्डल के मन में होता है। धार्मिक, योगी, महर्षि जन जिस समय जिस मन्त्र के अर्थ जानने की जिज्ञासा से, ध्याना वस्थित हो, परमात्म-स्वरूप समाधिगत हुए, तभी २ परमेश्वर ने उन पर अभीष्ट मन्त्रों के अर्थों का प्रकाश किया। इसी वेदार्थ को ऋषि मुनियों के इतिहास के साथ मिला कर ऋषियों ने ब्राह्मण ग्रन्थों की सृष्टि की। ब्राह्मण ग्रन्थ वेद का व्याख्यान हैं। जैसे आप्तों का कथन प्रमाण माना जाता है, वैसे सब के गुरु, परम आप्त परमेश्वर का उपदेश भी प्रमाण है।'

(स्वामी सत्यानन्द जी)

चुनाव

आर्य समाज पलवल कैम्प

संरक्षक—डा० मनोहरलाल जी, ला० हुकमचन्द जी, चौ० नानकचन्द जी प्रधान—श्री धनपत राय जी उपप्रधान—टिक्कनलालजी, मा० चोथराम जी मन्त्री—श्री हेमराज जी उपमन्त्री—मा० जयदयाल प्रभाकर कोषाध्यक्ष— श्री नारायण दास जी आडीटर—डासू राम जी, श्री गुरदत्त जी पुस्तकाध्यक्ष—मा० ज्ञानचन्द जी।

—जयदयाल प्रभाकर

आर्य समाज पुरानीमंडीजम्मू

प्रधान—श्री हंसराजजी तनेजा उप-प्रधान –,, प्रोफैसर शम्भु-नाथ जी, उपप्रधान—,, मा० रामरखामलजी, प्रधान मन्त्री—,, कविराज विष्णु गुप्त, उपमन्त्री—,, गोपाल कृष्ण जी, उपमन्त्री—,, भगत छज्जू राम जी, कोषाध्यक्ष—श्री कृष्णलालजी गुप्त, पुस्तकाध्यक्ष—श्री जयदयाल जी, मैनेजर आर्य कन्या महाविद्यालय—श्री मुलखराज जी गुप्त, सहायक-मैनेजर—चूनीलाल जी, अंतरंग सदस्य श्री मोहनलाल जी मोग्याल श्रीमती सुशीला देवी तुल्ली, श्री रामधन महाजन, श्री ओ० कपूर चन्द्र जी, श्री कमचन्द्र जी ठेकेदार।

आर्य कन्या महाविद्यालय बड़ौदा

कन्याओं का नया प्रवेश

आर्य कन्या महाविद्यालय बड़ौदा का नवीन सत्र ता० १६ जून से आरम्भ होता है। कन्याओं को प्रविष्ट कराने के लिये आचार्या, आर्यकन्या महाविद्यालय, कारेली बाग, बड़ौदा को लिखकर, प्रवेश पत्र मंगवाकर ता० १० जून से पूर्व भरकर भेज दें। नवीन कन्याओं का ता० १६ से ३० जून तक प्रवेश किया जायगा।

संस्था का सेकण्डरी विभाग सरकार मान्य है। एस० एस० सी० तथा स्नातिका' दोनों का अभ्यास क्रम रखा गया है। प्रवेश शुल्क ६०/- रु० है मासिक फीस ५०/- रु० है।

गुरुकुल आर्य नगर कुरड़ी

में लोकप्रिय प्रधान मन्त्री पंडित जवाहरलाल नेहरू की आकस्मिक मृत्यु पर गुरुकुल आर्य नगर कुरड़ी के अधिकारी वर्ग ने हार्दिक संवेदना प्रकट की। दिवंगत आत्मा को सद्‌गति के लिए प्रार्थना की गई। तथा गुरुकुल में एक दिन का पूर्ण अवकाश रहा।

साईंदास A.S. H/S स्कूलके H/S क्लास का उज्वल परीक्षा परिणाम

स्वतंत्रपाल थापर १५३२ अंक ले कर पंजाब में IInd, रहा। H/S क्लास में ३८८ छात्र प्रविष्ट हुए जिस में से ३१८ छात्र उत्तीर्ण हुए। परीक्षा परिणाम ८२% रहा जब कि यूनिवर्सिटी का ४६.७ था। मैरिट लिस्ट पर २५ छात्र आए। १६ छात्र वृत्तियां इस स्कूल ने प्राप्त की जो कि सारे पंजाब में सब स्कूलों से अधिक हैं। पहली १० पोजीशन में से ५ इस स्कूल ने लीं और अगली दस में फिर ५ पोजीशन स्कूल ने लीं। इस प्रकार पहली २० में से १० इस स्कूल ने प्राप्त कीं।

जालन्धर के सारे स्कूलों में २४ छात्र वृत्तियां आने की आशा है [illegible] इस स्कूल की हैं। इस सफलता [illegible] प्रिन्सीपल प्यारेलालजी, वेरी, [illegible] के लग्नशील सहयोगी [illegible] को है। इस के लिए आर्य जगत की ओर से कोटिशः धन्यवाद।

डी.ए.वी. H/S स्कूल चण्डीगढ़ की अपूर्व सफलता

दसवीं की परीक्षा में नरेशकुमार बत्रा ७२८ अङ्क लेकर और सुभाषचन्द्र ७२९ अङ्क लेकर क्रमशः प्रथम और द्वितीय स्थान पंजाब भर में हासिल किए। १६ छात्र मैरिट लिस्ट में आए। स्कूल का परिणाम ९९% रहा जबकि यूनिवर्सिटी का ८८% था।

हायर सैकंडरी की ११वीं कक्षा में अनिल कुमार शारदा ५५४ अङ्क लेकर पंजाब भर में प्रथम रहा। तीसरा, पांचवां और दसवां स्थान भी इसी स्कूल ने लिया। २५ छात्र मैरिट लिस्ट में आए। परिणाम ८०% रहा जब कि यूनिवर्सिटी का ४७% है।

इस उज्वल परिणाम का श्रेय प्रि० हरिराम जी बहल तथा उनके सुयोग्य स्टाफ को है।

आ[illegible]नाथ सभा

की

आवश्यक सूचना

आर्य प्रादेशिक सभा की ५.५.६४ की अंतरंग सभा के प्रस्ताव नं० २ के अनुसार सभा के नए अधिकारियों का चुनाव १४.६.६४ को साईंदास हायर सैकन्डरी स्कूल जालंधर के विशाल भवन में होना निश्चित हुआ है। सभा की ओर से सभी संबंधित आर्य समाजों को एजन्डा की कापी भेजी जा रही है सभी प्रतिनिधि अपने प्रमाण पत्रों सहित १४.६.६४ को ठीक एक बजे दोपहर पधारने की कृपा करें। भोजन और निवास का प्रबन्ध साईंदास स्कूल में होगा। प्रतिनिधि तारीख नोट कर लें।

भवदीय

संतोषराज मंत्री सभा

आर्य प्रादेशिक उप सभा, दिल्ली का प्रचार कार्य

(क) इस मास में आर्य समाज नेताजी नगर, लेखराम नगर दिल्ली तथा हज़रत पुर, न्यूकालोनी पलवल के वार्षिकोत्सव बड़े समारोह के साथ सफलता पूर्वक समाप्त हुए। और प्रचार का जनता पर संतोष जनक प्रभाव पड़ा।

(ख) १२ मई से २६ मई तक आर्य समाज पंजाब [illegible] में श्री भगदत्त जी द्वारा वेदों की कथा होती रही। और श्री पं. हरिदत्त जी के मनोहर भजनों द्वारा प्रचार होता रहा जनता अत्यन्त प्रसन्न हुई। प्रभाव अत्युत्तम रहा।

(ग) ग्राम सौंध जी० गुड़गावां में २७ से ३१ मई तक उत्सव बड़े समारोह के साथ मनाया गया और विश्वास है कि इस का अत्युत्तम प्रभाव जनता पर पड़ेगा।'

साधनाश्रम गुरदासपुर

श्री स्वामी सोमानन्द जी महाराज की अध्यक्षता में संचालित वैदिक साधनाश्रम गुरदासपुर का वार्षिक वेद पारायण महायज्ञ तथा धर्ममेला इस बार जून १५-१६ से बड़ी ही धूमधाम से आश्रम में मनाया जा रहा है। ऋग्वेद के मंत्रों से प्रातः सायं महान यज्ञ होगा। दोनों समय संगीत व प्रवचन होते रहेंगे। श्री स्वामी जी तथा नगर के मान्य सज्जन श्री बलदेव सिंह जी भंडारी एडवोकेट, श्री मुल्खराज जी हैडमास्टर डी० ए० वा० स्कूल, श्री सलोत्रा जी, समाज के भाई व बहिन इस यज्ञ मेले को शानदार ढंग से मनाने के प्रबन्ध में लगे हुए हैं। पूर्णाहुति पर बड़ा भारी भण्डारा लगता है। सज्जन पूर्ण सहयोग देवें।

'आर्य जगत रोहतक के समाचार

आर्यसमाज कालिज विभाग प्रधाना मोहल्ला में दैनिक सत्संग प्रातः ६ से ६॥ बजे तक नियमित रूप से होता है।

आर्यजगत रोहतक की ओर से भारतीय प्रधान मन्त्री पं. जवाहरलाल नेहरू के आकस्मिक निधन पर राष्ट्रपति एवं श्रीमती इन्दिरा गांधी को हिन्दी में संवेदना तार भेजे गए।

१८ जेठ तदनुसार ३१ मई रविवार को आर्यसमाज के साप्ताहिक सत्संग के पश्चात् श्री विद्यार्थी जी के घर उनकी दोहिती का नामकरण संस्कार हुआ। और बच्ची को आशीर्वाद दिया। बच्ची के नाना श्री विद्यार्थी जी एवं पिता श्री राजेन्द्र जी जिज्ञासु ने निम्नलिखित रूप में दान दिया।

श्री राजेन्द्र जी जिज्ञासु ने ५० रु० आर्यसमाज शोलापुर एवं ५ रुपए पूर्वी बंगाल पीड़ित फंड में दान दिए।

(ख) श्री विद्यार्थी जी ने ४४ रु० क्रमशः आर्यसमाज प्रधाना मोहल्ला, पूर्वी बंगाल पीड़ित फण्ड, महर्षि स्मारक ट्रस्ट टंकारा हरिजन धर्म-शाला रोहतक, ३ हरिजन हिन्दु सिखों के नाम तीन धार्मिक पत्रों का चन्दा, आर्यवीर दल, आर्य स्त्री सभा, श्री दयानन्द मठ, वैदिक भक्ति आश्रम को दान दिए।

अमृतसर में आदर्श विवाह

गत दिनों आर्य समाज लक्ष्मण सर अमृतसर के कर्मठ सज्जन श्री पं. ब्रह्मदास जी रामानन्द बाग निवासी की विदुषी सुपुत्री अनूप कुमारी तथा छोटे भ्राता जी के शुभ विवाहों पर सभा के कार्यक्रमानुसार जाने का सौभाग्य मिला। आर्य समाज लक्ष्मण सर अमृतसर के कर्मशील प्रधान श्री पं. रुद्रदत्त जी शर्मा तथा सारे सज्जनों का प्रेम ही तो वहां ले गया। अन्यथा वहां विवाह संस्कार के कराने वाले उत्तम से उत्तम सज्जन हैं पं. ब्रह्मदास शर्मा जी के घर पर आर्य समाज के सौम्यमूर्ति श्री पं, दौलत जी शास्त्री इसी सम्बन्ध में यज्ञ करा रहे थे। समाज के प्रातः का सत्संग वहीं लगता था। धूमधाम से पूर्णाहुति हुई। घर पर सत्संग का प्रवाह बहता था। दोनों विवाह संस्कार बड़े ही समारोह से सम्पन्न हुए। श्री पं. दौलतराम जी शास्त्री के पथ प्रदर्शन में कार्य होता रहा। पं. ब्रह्मदास जी का समाज प्रेम तो दर्शनीय है। आर्य समाज के लिए बड़ा ही प्रेम है। पं. रुद्रदत्त जी शर्मा प्रधान, श्री बा. बृजलाल जी, ला. गंगाराम जी, श्री जगदीश जी सारे ही समाज के भाई बहिन पधार कर मंगलमय जोड़े को आशीर्वाद देते रहे। बड़ा मनोरम दृश्य था। सभा के वेद प्रचार में पैंतालीस रुपये पण्डित जी ने दान दिया। विवाह का कार्य, समाज के सज्जनों का प्रेम तथा पं. ब्रह्मदास जी का अर. भाव प्रशंसनीय था। बधाई

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्य जगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टेलीफोन न० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No P. 12

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे — वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक २५) ८ आषाढ़ २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०— २१ जून १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

इन्द्रं धनस्य सातये

हम उस इन्द्र को धन की प्राप्ति के लिए पुकारते हैं। परमेश्वर धनपति हैं, यह सारा ऐश्वर्य उसी का ही है। हम उसी धन के अनन्त भण्डार महान् भगवान् से ही धन प्राप्त करने के लिए प्रार्थना करते हैं वह पिता हम पुत्रों को धनपति बना दे।

इन्द्रमिद् देवतातये

उसी इन्द्र को हम देवतातये दिव्यगुणों, दिव्य शक्तियों एवं दिव्य विचारों को प्राप्त करने के लिये पुकारते हैं। संसार में जो देव हैं, उनकी समुन्नति के लिए भी प्रभु का प्रसाद चाहते हैं।

मरुतो ब्रह्मार्चत

हे मरुत:—विद्वान लोगो! नाना प्रकार की विद्याओं को जानने वालो! उस ब्रह्म की अर्चना करो। उसी का ही पूजन स्तवन करो। वह ब्रह्म है, सब से महान है। उस के सिवाय और किसी जड़ देवता की पूजा मत करो। ब्रह्म भक्त बनो जड़ भक्त नहीं।

य जु र्वे द से

वे दा मृ त

आचमन-मन्त्रा:

ओ३म् अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा। ओम् अमृतापिधानमसि स्वाहा ओम् सत्यं यश: श्रीर्मयि श्री श्रयतां स्वाहा।

तैत्तिरीय आ. प्र. १० अनु. ३२-३५

अर्थ—हे (अमृत) सुख दायकजल! तू सब प्राणियों का (उपस्तरणम्) आश्रय देने वाला एवं आच्छादन करने वाला (असि) है! हे अमृतमय जल! तू (अपिधानम्) पोषक है तथा (सत्यं) सच्चाई (यश:) कीर्ति यश (श्री:) लक्ष्मी शोभा (मयि) मुझ में (श्रयतां) स्थित हो—मैं सत्य का प्यारा, यशस्वी और धनवान् बन जाऊं। यह जल मेरे लिए सुखदायक हो। इस से सारे जीवों का पोषण होता है। आश्रय देने वाला है। यह अमृत है।

भाव:—जल के आचमन में कितना रहस्य भरा हुआ है। जल सचमुच अमृत है, औषध है, रोगों का निवारक है। जल चिकित्सा है। इस के द्वारा सारे जगत का पालन पोषण होता है। जल जंगल में मंगल कर के सूखे को हरा भरा बना देता है जल जीवन है। तीन आचमन से प्रभो! मैं अपने जीवन में तीन प्रसाद चाहता हूं। पहिली बात यह मांगता हूं कि मुझ में सत्य का निवास हो। मैं सत्यप्रेमी बनूं। दूसरा प्रसाद यह मिले कि मैं सदा कीर्ति वाला बनूं। अपयश मेरे समीप न आने पाये। मेरे किसी कर्म से निन्दा न हो। तीसरी बात मुझ में लक्ष्मी का निवास हो। मैं कंगाल न हो कर सदा खुशहाल बन कर जीवन बिताता चलूं। तीनों गुण मेरे में भर देवें—सं.

ऋषि दर्शन

उपासनायुक्ता योगवृत्तय:

प्रभु परमेश्वर की उपासना से जो योग की उसकी भक्ति भाव से वृत्तियां आती हैं। प्रभु प्रेमी उपासक के जीवन में उपासना योग के साधनों के द्वारा जो सुन्दर वृत्तियों का प्रकाश पैदा होता है। वे

सर्व क्लेशहन्त्र्य:

ऐसी वृत्तियां, शक्तियां, सात्विक जीवन की धाराएं सारे क्लेशों को मार देती हैं, सारे दु:खों को भगा देती हैं। तमोगुण या रजोगुण से जो वासनाएं उठती हैं। उन से कष्ट क्लेश आते हैं पर प्रभु उपासना से कष्टों का सदा विनाश हो जाता है।

शान्त्यादिगुण पुष्टा:

क्योंकि ये प्रभु उपासना से जो वृत्तियां प्रसाद के रूप में साधक आराधक उपासक को मिलती हैं, ये शान्ति आदि पवित्र शान्तगुणों से पूर्ण होतीं तथा प्रभु उपासन भी शान्ति आदि गुणों से तृप्त होते हैं। अत: दु:ख कहां?

भाष्य भूमि का

अधिष्ठाता—संतोषराज सभा मंत्री

सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शा।

मनुष्य लोक को कैसे जीते ?

(लेखक—पं० मङ्गराम जी (अकोका वाले) जालन्धर)

****

तीन लोकों में एक मनुष्य लोक है। दूसरे दो लोक हैं—पितृ लोक और देव लोक। जहां पितृ लोक पर यज्ञ से और देव लोक पर विद्या से विजय पाई जाती है वहां मनुष्य लोक सन्तान द्वारा जीता जाता है। माता-पिता जीवित हैं जब तक उनकी सन्तान जीवित है। यदि हमारी सन्तान वास्तविक अर्थों में संतान हो तो वह हमें अमर रख सकती है। नेक सन्तान अपने माता-पिता कुल, जाति और देश की लाज रखती है और बुरी इन सब के मान को मिट्टी में मिला देती है। न हम स्वयं ऐसे काम करते हैं जिन से हमारा नाम उज्ज्वल हो और न ही सन्तान को इस योग्य बनाते हैं कि वह हमारे गौरव को बढ़ाए। जीवन भर येन केन प्रकारेण धन एकत्रित कर सन्तान के लिए छोड़ जाने की चिन्ता में रहते हैं। प्रभु के सम्मुख पढ़ाने के लिए भेंट त्यार करने की किसी को फिक्र नहीं।

आर्यसमाज के प्रसिद्ध संन्यासी महर्षि दयानन्द के परम भक्त और मधुर भाषी धर्मोपदेशक स्वर्गीय स्वामी सत्यानन्द जी महाराज ने मोहल्ला महंदरुआं में वेद की कथा करते हुए कहा था—'भाई छल-कपट और झूठ से अपनी सन्तान के लिए अपने सिर पाप की गठड़ी क्यों धर रहे हो ? परलोक में तुम्हारी सन्तान सहायक नहीं होगी। सन्तान योग्य होगी तो स्वय कमा लेगी और अयोग्य होगी तो बेईमानी से इकट्ठा किया हुआ तुम्हारा सारा पैसा दस दिन में नष्ट कर देगी।' से उदाहरण हैं कि नालायक सन्तान ने कुछ दिनों में ही दीवाला निकाल दिया और लायक ने थोड़े समय में लहर बहर कर दी। इस लिए औलाद अच्छी होनी चाहिए। वह हमें किराया के मकान से उठा कर स्वय के मकान में बिठा देगी। अपनी बहिनों के विवाह भी हमारी अपेक्षा सुचारू रूप से करेगी।

जातियों की शक्ति भी सन्तान पर निर्भर है। क्या हमने फ्रांस के प्रधान को यह कहते नहीं सुना था कि दूसरे विश्व युद्ध में उन का देश इस लिए दो सप्ताह में समाप्त हो गया क्योंकि इस के निवासी हार श्रृङ्गार के पुजारी हो गये थे और भोग रोग में व्यस्त थे। हमारी सन्तान अच्छी होती तो हम विभाजन से पश्चात् यहां भाग कर न आते। वहां ही दृढ़ता पूर्वक अवस्थाओं का डट कर सामना करते। आर्य नेता और प्रसिद्ध वैज्ञानिक प्रिंसिपल दीवान चन्द जी एम. ए. ने आर्य समाज किला के वार्षिकोत्सव, सन् १९५६ के अवसर पर अपने व्याख्यान में एक घटना सुनायी थी कि लाहौर में उन्हें उनके एक मित्र मिले जो अवकाश प्राप्त थे। प्रिंसिपल महोदय ने उनसे पूछा—"आप ने क्या बनाया है ?" वह मित्र बोले—'तीन कोठियां बनायी हैं।' प्रिंसिपल जी ने फिर प्रश्न किया कि उन में कौन रहता है ? कहने लगे—'किरायेदार।'

प्रिंसिपल ने कहा कि—'वे तो तुम ने किरायेदारों के लिए बनवाई हैं। अपने लिए क्या बनाया ?' वह बोला कि उस ने तीन लड़कों और दो लड़कियां के विवाह किये हैं। प्रिंसिपल बोले कि 'वे तो पुत्रों तथा पुत्रियों की हुई'। लड़के पत्नियां लेकर चले गये और लड़कियों को उनके पति ले गये। तुम ने अपने लिये तो कुछ न बनाया।' यही अवस्था हम सब की है। अपने बाल-बच्चों के लिए हर उचित व अनुचित उपाय द्वारा भोगवाद की सामग्री प्राप्त करा देंगे पर अपना मनुष्य जन्म सफल करने के लिए कुछ नहीं जोड़ा जाता। हमारी दशा उस लिफाफे की सी है जो अन्दर से भी खाली है और जिस के एड्रेस की ओर भी कोरी है। क्या वह जीवन है जिस के अन्त होने पर पड़ोसी और परिचित यह कहें कि यदि अमुक व्यक्ति न होता तो क्या अन्तर पड़ता ? यह तो जीवन का उद्देश्य नहीं। हमें स्वयं अच्छा बनते हुए सन्तान को नेक बनाना चाहिए जिस से मनुष्य लोक को जीता जा सके और परलोक सुधारा जा सके।

पं. नेहरू जी के निधन पर शोक सभाएं व श्रद्धांजलियां

मानवीय स्वतन्त्रता तथा विश्व-शांति के अग्रदूत पं. जवाहरलाल जी नेहरू के आकस्मिक निधन पर आर्य संसार विह्वल हो उठा है। चारों ओर से शोक प्रस्तावों का तांता लगा हुआ है शोक सभाओं द्वारा स्वर्गीय नेता के प्रति श्रद्धांजलियां अर्पित की गईं तथा उनकी आत्मा की सद्गति के लिए प्रभु से प्रार्थना की गईं। आर्यसमाज हुशियारपुर, आर्यसमाज प्रधाना मुहल्ला रोहतक, आर्यसमाज सैक्टर ८ चंडीगढ़, आर्यसमाज माटुंगा (बम्बई), आर्य प्रचार समिति बम्बई नं. ४, आर्यसमाज ओहरी चौक बटाला, आर्यसमाज चैम्बूर बम्बई, आर्य युवक परिषद देहली, आर्यसमाज दसूआ, आर्यसमाज रंधौली (करनाल)।

आर्योपदेशक महाविद्यालय हापुड़

उ० प्र० में विद्यार्थियों का प्रवेश जून मास के अन्त तक होगा। शास्त्रार्थ केसरी श्री पं० अमरसिंह जी आर्य पथिक इस विद्यालय के आचार्य हैं उनका भारी पुस्तकालय और ४५ वर्ष तक इकट्ठा किया हुआ प्रमाण भण्डार विद्यालय के काम में आ रहा है।

शास्त्रार्थ महारथी तार्किक शिरोमणि श्री पं० रामचन्द्र जी देहलवी अवैतनिक रूप से पढ़ाते हैं और अपने अनुपम अनुभव से भावी उपदेशकों को अलभ्य लाभ पहुंचाते हैं।

एक और विद्वान की नियुक्ति शीघ्र ही होने वाली है विद्यालय की ओर से विद्यार्थियों को भोजन दुग्ध, घृत, पुस्तक सब कुछ मुफ्त दिया जाता है। व्याख्यानों शंका-समाधानों तथा शास्त्रार्थ की विशेष तैयारी कराई जाती है लगनशील और परिश्रमी उपदेशक बनने के इच्छुक विद्यार्थी शीघ्र ही प्रार्थना पत्र श्री आचार्य जी के नाम भेजें।

भवानी प्रशाद मित्तल मन्त्री
आर्योपदेशक महाविद्यालय
हापुड़ उ.प्र.

शोक समाचार

श्री मेलाराम जी भजनीक ए. पी. पी. सभा की बड़ी बहिन गोमादेवी का ५-६-६४ को आकस्मिक देहांत हो गया। काफी उपचार करने पर भी स्वस्थ न हो सकी। आर्यसमाज बस्ती गुजां (जालंधर) की ओर से उनके परिवार को धैर्य व शांति प्रदान करने की प्रभु से प्रार्थना की गई तथा गोमादेवी की आत्मा की सद्गति के लिए ईश्वर से हार्दिक प्रार्थना की गई।

नौहरियाराम
मन्त्री समाज

सम्पादकीय–

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२१, २१ जून १९६४ [अंक २५

आर्य प्रादेशिक सभा का नवीन निर्वाचन

विगत दो चार मास पूर्व सभा का वार्षिक अधिवेशन फरवरी ६४ में आर्य समाज लोहगढ़ अमृतसर में हुआ जोकि अति उत्तम ढंग से सम्पन्न हुआ। आर्य जगत के होनहार तपस्वी सभा के प्रधान प्रि० रला राम जी M.A. M.L.A ने अगामी वर्ष के प्रधान पद के लिए पूज्य महात्मा आनंद स्वामी जी महाराज का नाम पेश किया जो कि बड़े हर्ष, उल्लास और तालियों की गड़गड़ाहट में सर्व सम्मति से स्वीकृत हुआ और शेष सभा के अधिकारी वर्ग तथा अंतरंग सदस्यों का निर्वाचन उन को सौंपा गया।

एक सप्ताह के भीतर अपनी शारीरिक अस्वस्थता के कारण उन्होंने यह भार लेने से अस्वीकार करते हुए क्षमा मांगी इस पर आर्य बन्धुओं को अत्यन्त निराशा हुई। इस पर स्वामी जी ने पूर्व वत सभा को सहयोग देने का वचन दिया।

सभा के व समाजों के प्रतिनिधियों को नए सिरे से चुनाव करना चाहिए था नहीं। इस विषय पर सभा की अंतरंग सभा ५.५.६४ को सम्पन्न हुई और उस के निर्णयानुसार १४.६.६४ को रविवार १ बजे दोपहर साईंदासH/Sस्कूलके विशाल भवन में सभा सम्पन्न हुई जिस में १०० के लगभग प्रतिनिधियों ने भाग लिया सर्वप्रथम गायत्री मंत्रोच्चारण किया गया तत्पश्चात स्वर्गीय पं० जवाहरलाल नेहरू जी का दो मिंट मौन रह कर शोक प्रस्ताव पास किया गया और इसकी कापी भारत गवर्नमैंट के प्रधान व मंत्रियों को तथा उनकी सुपुत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी जी को भेजने का निश्चय किया गया।

अन्य कई विषयों पर कई प्रतिनिधियों ने अपने सुझाव तथा विचार रखे जो कि सभा के विचाराधीन हैं। इसके बाद सब प्रतिनिधियों ने इच्छा प्रकट की कि सब चुनाव इसी अधिवेशन में ही किया जाए इस पर कई प्रतिनिधियों ने आपत्ति उठाई परन्तु प्रधान जी की आज्ञानुसार निश्चय हुआ कि सब चुनाव अधिवेशन में ही किया जाए। इस पर श्री राजकुमार जी मंत्री उपसभा देहली ने मान्य प्रि० रलाराम जी का नाम पेश किया और इसका अनुमोदन लगभग सभी प्रतिनिधियों ने किया। तथा बहुमत से प्रधान निर्वाचित हुए। उपप्रधान के लिए, श्री रुद्रदत्त जी शास्त्री, श्री प्रि० भीमसैन जी बहल, श्री प्रि० हरिराम जी चण्डीगढ़ डा० हुकुमचन्द्र जी भल्ला के नाम पेश किए गए जो सर्वसम्मति से पास हुए। मंत्री पद के लिए श्री ज्ञानचन्द जी भाटिया तथा उपमंत्री पद के लिए डा० देवव्रतजी महाजन अमृतसर, कैप्टन शिवराम जी के नाम बहुसम्मति से स्वीकृत हुए।

कोषाध्यक्ष श्री ला० संतोषराज जी पुस्तकाध्यक्ष श्री प्रो० वेदीराम जी शर्मा निर्वाचित हुए जिन की सूची साथ के कालम में दी गई है। तत्पश्चात महात्मा हंसराज जयन्ती का प्रश्न आ गया जो कि अधिवेशन ने अंतरंग सभा को यह कार्य सौंपा कि जयन्ती कहां, कब, और किस प्रकार मनानी चाहिए। शान्ति पाठ के साथ सभा विसर्जित हुई। हम आशा करते हैं कि सभा के अधिकारी वर्ग तथा अंतरंग सदस्य व बाहर से आए हुए प्रतिनिधि सभा की वर्तमान दशा को देखते हुए उसे ऊंचा उठाने में कोई कसर नहीं रखेंगे। ताकि दयानंदजी की यह वेद प्रचार वाटिका सदा फूलती फलती रहे। बाहर से आए हुए प्रतिनिधियों का तथा अधिवेशन को शान्ति पूर्वक सफल बनाने वाले सज्जनों का आर्य जगत की ओर से धन्यवाद।

चुनाव

१. श्री रलाराम जी एम. ए. प्रधान
२. श्री प्रि.भीमसेन जी बहल उपप्रधान
३. श्री डा. हुक्मचन्द जी भल्ला ,,
४. श्री प्रि. हरिराम जी ,,
५. श्री पं० रुद्रदत्त जी ,,
६. श्री ज्ञानचन्द जी भाटिया मन्त्री
७. श्री शिवराम जी उपमन्त्री
८. श्री प्रो० देवव्रत जी ,,
९. श्री सन्तोषराज जी कोषाध्यक्ष
१०.श्रीप्रो.वेदीरामजी शर्मा पुस्तकाध्यक्ष

अतरंग सदस्य २४

मधु कलश

(६)

बिना खिवैया की नैया को मिलता नहीं किनारा
दिखलाता है दिशा रात में नाविक को ध्रुवतारा
अगर सुरक्षा किसी मूल्य पर हम चरित्र की कर लें
स्वयं सुरक्षित रह सकता है खुद को सुयश हमारा

★ ★ ★

सुख में ही क्यों दुख में भी तो साथ निभाना होगा
साथ सुमन के शूलों को भी गले लगाना होगा
ऊपर लाना चाह रहे हो मुझ को दुनिया वालों
सब से पहले तुम को खुद को ऊपर आना होगा

★ ★ ★

देख भंवर में पड़ी नाव को बिना वजह क्यों रोता है
हिम्मत करके खेता चल तू धीरज क्यों खोता है
आज कष्ट है हंस कर सहते कल को सुख पायेगा
निशा तिमिर के बाद हमेशा अरुणोदय होता है

क्रमशः

विजय निर्बाध

समाज

किसी व्यक्ति विशेष देश वा जाति का नाम नहीं है। व्यक्तियों के समूह का नाम ही समाज है। समाज में जिस आचार विचार के व्यक्ति होंगे तदनरूप ही देश व जाति का ढांचा तयार होगा। वर्तमान युग में हमारे समाज का ढांचा क्या है और किस तीव्रगति से परिवर्तित हो रहा है यह कहने की आवश्यकता नहीं है मद्य, मांस, मदिरा, मैथुन, मत्सर्य पदार्थों की अधिकता ही आज के समाज को अधोगति की ओर ले जा रही है। अतः प्रत्येक व्यक्ति को अपना सुधार करना होगा। तब समाज स्वयं ही प्रगति करेगा। 'मनुर्भव' वेदवाणी के अनुसार पहले हमें ही मनुष्य बनना है। यही हमारी कार्य क्षमता का परीक्षण होगा।

—व्यवस्थापक

स्वातन्त्र्य संग्राम और महर्षि दयानन्दजी-४

ले० श्री पं. सत्यप्रिय जी-शास्त्री सि० शिरोमणि :
प्राध्यापक-दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार

(गतांक से आगे)

उस चित्र से भी जब इण्डिया आफिस की जिज्ञासा शान्त न हुई तो महाराजा से सीधा पूछा गया। महाराजा ने सरलता से स्वामी जी का नाम लिख भेजा। तब विलायत से गवर्नर जनरल को यह भर्त्सना की गई कि स्वामी दयानंद जैसे राजद्रोही को प्रचार करने के लिये खुला क्यों छोड़ा गया।

यह वृतान्त सुनकर वृद्ध महाशय ने कहा कि इस घटना की रोशनी में यह समझना कठिन नहीं है कि स्वामी जी को विष दिलाने वाले कौन थे और सरकारी डाक्टरों ने उनका ठीक इलाज क्यों नहीं किया।

आर्यसमाज का इतिहास (प्रथम भाग) पृ० ३२१-२२ ले० पं० इन्द्र जो

महर्षि को विष देने के षड्यन्त्र में कौन २ सी शक्तियां सम्मिलित थी इस प्रश्न का उत्तर देने में भी बहुत कुछ कल्पना से काम लेना पड़ेगा। दोनों ही बातें सत्य हैं। नन्हीं जान वेश्या स्वामी जी से रुष्ट हो गयी थी इस में कोई सन्देह नहीं और यह भी असन्दिग्ध है कि अंग्रेजी सरकार राज स्थान में स्वामी जी के बढ़ते हुये प्रभाव से बहुत असंतुष्ट थी। यह सर्वथा सम्भव है कि उस समय दोनों ही विरोधी शक्तियें मिल गयी हों। सरकारी डाक्टरों द्वारा महर्षि के रोग की उपेक्षा केवल नन्ही जान की प्रेरणा से नहीं हो सकती......यह सन्देह निर्मूल नहीं प्रतीत होता कि महर्षि की मृत्यु के पीछे केवल एक वेश्या का हाथ नहीं था, कोई जबरदस्त हाथ था जो पर्दे के पीछे से इशारा दे रहा था'—आर्य समाज का इतिहास पृ. ३२३—२४

इन उद्धरणों पर गम्भीर विवेचन करने के पश्चात् इस परिणाम पर पहुंचते हैं कि अपने समय का ख्यातनामा सुधारक जिस से कि विदेशी भी परिचित हों, वह सब के देखते २ एक वेश्या द्वारा विषदिया जा कर मारा जाये और जब कि वह उस राजा का राजकीय अतिथि हो, जिस की नागरिक। वह वेश्या थी तथा वह राजा प्राणपण से महर्षि को बचाने में यत्न शील हो? यह समझ नहीं आता। जब तक महर्षि का उपचार प्राइवेट डाक्टरों द्वारा होता रहा तभी तक उन की दशा सुधरती गयी। परन्तु जब सरकारी डाक्टर अलीमर्दानखां का इलाज प्रारम्भ हुआ तभी से महर्षि की दशा बिगड़ने लगी और यहां तक कि मृत्यु का ग्रास हो गये। क्योंकि डाक्टर के पीछे तत्कालीन सरकार का हाथ, इस के साथ २ डाक्टर महोदय स्वयं मुसलमान होने के कारण मन ही मन महर्षि से खीझे हुये थे। क्योंकि महर्षि ने ही सब से पहले कुरान पर कठोर समालोचना का कुठाराघात किया था। अतः उस ने महर्षि को ६० ग्रेन के विशाल परिमाण में वह तीव्र विष दिया जिस का कि बलिष्ठ मनुष्य की मृत्यु के लिये १० ग्रेन परिमाण पर्याप्त होता है। आज यदि कोई वैसा प्रभावशाली व्यक्ति वैसी सन्दिग्ध परिस्थितियों में मृत्यु का शिकार हो जाये तो सरकार उस सम्बन्ध में अवश्यमेव छानबीन करने का प्रयास करेगी। परन्तु ऋषि दयानन्द जैसे जगद्विख्यात् व्यक्ति की विषदान से मृत्यु हो जाती है, विषदाता का भी पता लग जाता है परन्तु अंग्रेजी सरकार की ओर से इस दुःखद कांड के कर्ताओं की खोज अथवा दंड प्रदान सम्बन्धी नाम मात्र भी प्रयत्न नहीं किया जाता। जहां तक कि वह राजा जो महर्षि का प्रिय शिष्य था, जिसके निमन्त्रण पर महर्षि जोधपुर पधारे थे, इस अनर्थकारी सन्दिग्ध प्रसंग की आलोचना तक करने में एक शब्द मुख से निकालने की हिम्मत नहीं कर पाता। इससे स्पष्ट है कि उसे ज्ञात था कि यह सारा कांड सरकार की ओर से ही किया जा रहा है, नन्हीं-जान तो केवल मात्र एक बहाना है। अब यदि तुमने कोई कदम उठाया तो विपत्ति से बच न पायेगा। इस सारे विवेचन का तत्व यही है कि ब्रिटिश राज्य ने ही किसी को अपनी कठपुतली बनाकर विषदान द्वारा महर्षि के प्राणों का हरण कर अपना मार्ग साफ किया।

इतिहास के अन्तर्राष्ट्रिय ख्याति प्राप्त विद्वान् श्री पं० भगवद्दत्त जी बी० ए० ने इस सम्बन्ध में जो खोज की, वह उन्होंने लेखक को बताई जो कि इस प्रकार है—

१. पं० भागराम जी अजमेर निवासी जी कि अंग्रेजी सरकार की ओर से महर्षि के ऊपर विशेष गुप्तचर छोड़े गये थे, उन्होंने बताया कि लन्दन के इण्डिया आफिस में तत्कालीन गवर्नरों के पत्र व्यवहारों के जो रिकार्ड हैं यदि वे खोजकर पढ़े जायें तो महर्षि की मृत्यु सम्बन्धी घटना को यथार्थता सामने आ सकती है।

२. श्री फिरोचन्द्र एम० ए० जो सरकार की ओर से स्वतन्त्रता संग्राम का इतिहास लिख रहे हैं, उन्होंने बताया कि भारतीय स्वाधीनता संग्राम के सम्बन्ध में महर्षि दयानन्द का जगह २ जिक्र आता है।

इस सारे तर्क वितर्क से हम इस परिणाम पर पहुंचते हैं कि महर्षि ने जनमन में जो अपूर्व जागृति उत्पन्न की उस में राजनीतिक अंश का बाहुल्य था। निरन्तर बढ़ती इस चेतना के भय से उस समय के अंग्रेजी राज्य ने एक भयकर षडयन्त्र रचकर महर्षि के प्राणों का हरण कर जलती अग्नि को बुझाने का कार्य किया।

शिक्षा के क्षेत्र में आर्य समाज की सराहनीय सेवाएं हैं।

शिक्षा सम्मेलन में भाषण

आर्य समाज गोबिन्द नगर के वार्षिकोत्सव के अवसर पर शिक्षा सम्मेन का आयोजन किया गया जिस की अध्यक्षता नगर प्रमुख (मेयर) श्री रतन लाल शर्मा ने की। सम्मेलन में पं० वाचस्पति शास्त्री ने वर्तमान शिक्षा पद्धति में आमूल परिवर्तन करने की मांग की। और कहा शिक्षा सादगी व सच्चाई सिखा ने वाली हो। केन्द्रीय आर्य सभा कानपुर के मन्त्री श्री दास आर्य (सभासद) ने अपने भाषण में कह कि देश भर में सरकार के बाद आर्य समाज की शिक्षण संस्थाएं हैं। शिक्षा के क्षेत्र में आर्य समाज की सेवाएं सराहनीय हैं। स्त्री शिक्षा के लिए महर्षि दयानन्द सरस्वती के आदेशानुसार सब से प्रथम आर्य समाज ने पग उठाया और लड़कियों के लिए भारत में प्रथम विद्यालय जालन्धर में खोला। श्री आर्य ने महर्षि दयानन्द के अमर ग्रंथ को एक प्रति नगर प्रमुख को स्वाध्याय के लिए पेश की। नगर प्रमुख श्री शर्मा ने आर्य कन्या विद्यालय गोबिन्द नगर की छात्राओं व अध्यापिकाओं में पारितोषक वितरण किए। विद्यालय के कार्यों पर प्रसन्नता व्यक्त की और आर्य समाज की सेवाओं की प्रशंसा की। सम्मेलन में छात्राओं ने मन्दिर की ज्योति नाम ड्रामा पेश किया। सम्मेलन में श्री पं० त्रिलोक चन्द शास्त्री व श्री राज पाल विमटा मण्डली व आचार्य कृष्ण के भाषण भी हुए।

जनता प्रिय—स्व. पं. नेहरू जी

आंखों देखा दृश्य

(ले०—श्री ओ०, पी०, अंशु नई दिल्ली)

गुरुवार २८ मई दोपहर का समय है धूप तेज और बहुत तेज ऐसे समय में लाखों की संख्या में स्त्री-पुरुष बालक वा वृद्ध टकटकी बांध विजय चौक की ओर डब-डबाई आंखों से देख रहे हैं दूसरी तरफ पवन भी गतिहीन हो भारत में हुई इस महान क्षति की पूर्ति करने से साफ इन्कार कर रही है। लोगों को जहां स्थान मिला वहीं पाषाण-वत खड़े रहे। इसी भीड़ में कहीं-कहीं किसी के सिसकने की आवाज भी सुनाई देती। आंखों से निकल कर आने वाले आंसू जब ललाट से टपकने वाली पसीने की बून्दों में आ मिलते तो चेहरे पर अजीव मान-चित्र खिंच जाता यह नन्हीं-सी लहर सुखे मुख में आ विश्राम पाती परन्तु लोगों को तभी मालूम पड़ता जब जिह्वा खटास का अनुभव करती। इसी तरह लोग घण्टों ही अपने प्रिय नेता के अन्तिम दर्शनों निमित्त इन्तजार में खड़े रहे।

जैसे ही रामधुन गाती हुई एक टोली दर्शकों के सम्मुख गुजरी. लोग विचलित हो उठे। शोक मग्न जनसमूह को यह सब तो सहनीय था परन्तु जब स्वर्गीय नेहरू का शव उन के समीप से गुजरा तो लोग अपने को सम्भाल न सके, कई एक ने नेत्र ढक लिए, स्त्रियां सिसकने लग गईं। वे लोग जो सम्भवतः अपने सम्बन्धी की मृत्यु पर भी न रोए थे वे सब रोए और खूब रोए बिलख-बिलख कर रोए मानों उनका अपना ही कोई आत्मज उन से बिछड़ गया हो। 'नेहरू चाचा! नेहरू चाचा!... चाचा! वह बोलते क्यों नहीं' दूसरे ही क्षण एक और आवाज आई 'इतनी धूप में सो रहे हैं, क्या इनको गर्मी नहीं लगती, क्यों बताओ न भैया?' ऐसी-ऐसी आवाजें सुनकर भी जगत-चाचा न जाने क्यों नहीं मुंह खोल रहे थे जब कि पाषाण-हृदय भी इनसे द्रवित हो सकता था। आज विश्व ने अपना एक मात्र सहारा खो दिया। कैनेडी की मृत्यु के उपरान्त मानव के लिए यह एक गहरा घाव है। देश ने अपना महानतम नेता खो दिया और बच्चों का तो प्यारा चाचा चला जा रहा है आज निज अन्तिम यात्रा में।

इसी बीच गाड़ी रुकी लोगों की अश्रु भरी आंखें उत्तर-पश्चिम की ओर घूम गईं। किसी ने कहा:—वह देखो! संसद भवन जिसमें आ कर उद्घाटन भाषण देने हेतु नेहरू जी हाल ही में देहरादून से आए थे। वह भवन मानों उनके न होने पर उनको मूक श्रद्धांजलि अर्पित कर रहा है।

यह शव यात्रा का जलूस बढ़ता गया लाखों लोग आंखें बिछाए छः मील लम्बे मार्ग पै छाए हुए थे। तिलक पुल पर लोक मान्य तिलक की पाषाण निर्मित आंखें ठीक पं. नेहरू की निर्जीव आंखों के सामने थीं लोग धक से रह गए मानों एक दूसरे में मूक वाणी द्वारा वार्तालाप हो रहा हो। ठीक सवा चार बजे (सायं) शव यात्रा का यह विशाल-तम जलूस राजघाट के समीप पहुंचा। 'चाचा नेहरू अमर रहे' यह वाक्य शोक संतप्त जन समूह ने आद्रकण्ठ से उचारा कि इसी बीच ठीक चार बजकर छत्तीस मिनट पर संजय ने चिता में अग्नि प्रविष्ट की। दूसरे ही क्षण लोगों का हृदय-सम्राट, करोड़ों माताओं का आंखों का लाल, भीतजे-भतिजियों का प्यारा चाचा उनके देखते ही देखते लाल अग्नि की लपटों में था। वहां से हटते ही यह वाक्य स्मरण हो आया 'मेरा काल अभी निकट नहीं।'

इस में कोई संशय नहीं कि उनका भौतिक शरीर आज हमारे बीच नहीं परन्तु उनके नाम के आगे स्वर्गीय लिखते हुए लेखनी झिझकती है। आर्लबट ने म० गांधी की मृत्यु पर कहा था, आने वाली संतति बड़ी कठिनता से ही विश्वास करेगी कि ऐसी महान आत्मा ने भारत में जन्म लिया था' मेरे विचारानुसार ये वाक्य नेहरू जी की मृत्यु पर कहने पर और अधिक उपयुक्त बैठते हैं।

उनको अर्पित की गईं लाखों श्रद्धांजलियों में राष्ट्रपति जानसन की श्रद्धांजलि एक विशेष स्थान रखती है वह कहते हैं 'मैं, मेरा देश! इस शोक की वेला में भारत के साथ गहरी हमदर्दी प्रकट करता है श्री नेहरू की सेवा में इस से बड़ी श्रद्धांजलि और क्या हो सकती है कि हम विश्व में शांति बनाए रखें यह व्रत मैं ही सब से पहले लेता हूं मेरे देश के द्वारा विश्व में शांति भंग नहीं होगी मैं यह चाहता हूं कि शेष राष्ट्र भी इस का अनुसरण करें।

इस के अतिरिक्त उन करोड़ों लोगों की हृदय की आवाज जो मूक श्रद्धांजलि के रूप में प्रकाशित चाहे न हों दृष्टिगत अवश्य हैं इस का सब से बड़ा सबूत यही है कि दर्जनों ही देश विदेश में उन के देहान्त का समाचार सहन न करते हुए उन के साथ ही परलोक सिधार गए। मैं समझता हूं कि यह संसार में विलक्षण और अभूतपूर्व बात है। इस से नेहरू जी की प्रियता का सहज में ही आभास किया जा सकता है। लोगों के दिल में उन के प्रति अटूट प्यार था। ऐसे ही प्रेम-प्रदर्शन के उत्तर में उन्होंने एक बार कहा था, पाठगण। उन्हीं के ही शब्दों में पढ़िए:—

'मुझे जनता ने बहुत प्यार किया, इतना कि मैं इसे ध्यान नहीं कर सकता, मैं इस स्नेह के भार से दब गया हूं......जनता के प्रेम ने मुझे जनता का ऋणि बना दिया है......'

लाल किले की प्राचीर के आगे से जब भी गुजरता हूं, असंख्य नर-नारियों की भीड़ का दृश्य नेत्रों के आगे छा जाता है। कानों में उक्त शब्दों की बार २ पुनर्वृत्ति होती है लेकिन जब दृष्टि उस तिरंगे पर जाती है जिस को प्रधान मन्त्री ने पन्द्रह अगस्त के दिन लहराया था तो मन मसोस कर रह जाता हूं।

आर्यसमाज ओहरी चौक, बटाला (गुरदासपुर E.P.)

वार्षिक चुनाव ५ जुलाई सन् ६४ को आर्यसमाज मन्दिर में हो रहा है। सब मैम्बर अपना वार्षिक चन्दा २० जुन तक जमा करा देवें ताकि चुनाव में भाग ले सकें।

बलदेवसिंह
प्रधान आर्य समाज

आवश्यक सूचना

जिन ग्राहकों के चंदे अप्रैल मास में समाप्त हो चुके हैं उन्हें पत्र द्वारा सभा की ओर से सूचना दो चुकी है कृपया अपना चन्दा अप्रैल मास का भेजकर कृतार्थ करें।

व्यवस्थापक

श्रीचन्द्र सेनजी आर्य हितैषी का पंजाब से बाहर का कार्यक्रम

आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर होनहार प्रसिद्ध वक्ता पुराने अनुभवी कार्यकर्त्ता श्री पं. चन्द्रसेन आर्य हितैषी उपदेशक सभा सोनीपत निवासी पंजाब से बाहर के अन्य प्रान्तों में मध्य प्रदेश, राजस्थान, बम्बई आदी में प्रचारार्थ दो मास वास्ते जा रहे हैं । सभी प्रान्तों की प्रतिनिधि सभाएं व अधिकारी-गण तथा आर्य समाजें धर्म प्रेमी पंडित जी के भाषणों से लाभ उठाएं। इस सभा की आर्थिक अवस्था बड़ी शोचनीय है ईसाई पादरियों के हथ-कण्डों से सावधान करने तथा शुद्धि आदि वेद प्रचार कार्य में सभा सब से आगे रही है जनता ने हमेशा इस सभा का साथ दिया है अब भी जहां २ पंडित जी जाएंगे सभी आर्य बन्धु अपने कर्त्तव्य का पालन करेंगे तन मन तथा विशेष कर धन से सहयोग देकर पुण्य के भागी बनें। यह सभा सत्तर वर्ष से ऊपर आर्यजगत की सेवा कर रही है पंडित जी इस सभा के पुराने उपदेशक हैं भारत के हर प्रांत में शुद्धि आदि कार्य वास्ते इन्हें प्रचारार्थ भेजती है पूज्य महात्मा हंसराज जी ने इस सभा की स्थापना की, वर्षों इस के प्रधान रहे। वर्तमान आर्य नेता महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती भी अनेकों वर्ष इस के प्रधान रहे अब भी सभा को इनका पूरा सहयोग मिलता है यदि इस सभा की आर्थिक अवस्था ठीक रही तो और अधिक सेवा कर सकेगी मुझे पूर्ण विश्वास है कि मेरी प्रार्थना व अपील पर आर्य जनता ध्यान देगी।

विनीत—मन्त्री सभा

—

प्रिंसिपल बी०एस० बहल जी की सफल अमरीका यात्रा

(गतांक से आगे)

तथा उनके आगामी मार्ग को भी काफी सुगम बना देती है। बहल साहिब का कहना है कि भारत में हम अपने कालिजों में छात्रों की भरमार कर देते हैं। चाहे वह आगे पढ़ना चाहें अथवा नहीं। इसका परिणाम जहां माता पिता और छात्र के लिए अहितकर है वहां शिक्षण संस्थान को भी यश प्राप्त नहीं होता। इसका अच्छा ढंग यही हो सकता है कि दशम श्रेणी के पश्चात विद्यार्थी को इन्टर कालिजों में प्रविष्ट करा दिया जाए वहां उन्हें पता चल सकता है कि वह आगे पढ़ सकेंगे अथवा नहीं। इस से डिग्री कालेजों में छात्रों की भरमार भी कम हो जावेगी और साथ ही छात्र उत्तीर्ण संख्या में भी वृद्धि होगी।

अमेरिका के पश्चात् प्रिन्सिपल बहल १५ मई को लन्दन चले गए और वहां की प्रसिद्ध २ शिक्षण संस्थाओं के शिक्षा शास्त्रियों से मिले।

लण्डन में वैस्ट मिनिस्टर एब्बे, टावर आफ लण्डन, नेशनल गैलरी आफ आर्टस लंडन जू, आदि प्रसिद्ध ऐतिहासिक दर्शनीय स्थानों का भ्रमण किया। लण्डन की विश्व विख्यात आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी भी देखी।

इस प्रकार लगभग तीन महीने की शिक्षण प्रवास यात्रा कर मान्य प्रिंसिपल साहिब पुनः अपने पावन देश में लौट आएं।

श्री प्रिंसिपल बहल ने शिक्षा क्षेत्र में और विशेषतया अपने विद्यार्थियों में जो यश प्राप्त किया है वह पंजाब के निवासी अच्छी प्रकार जानते हैं। आप जिस स्थान पर भी रहे हैं उसी कालेज को अपने परिश्रम उसे चमका दिया है। अब तो शिक्षा के क्षेत्र में विदेशों से नए अनुभव और नई स्फूर्ति लेकर आए हैं। पूर्णाशा है कि जहां उनके इन अनुभवों से डी०ए०वी० कालेज जालन्धर के छात्र लाभ प्राप्त करेंगे, वहीं पंजाब के अन्य कालेज भी उनसे लाभ उठायेंगे। प्रभु से प्रार्थना है कि ऐसे योग्य शिक्षा शास्त्री को चिर आयु, यश और बल से भरपूर करें जिसमें नव-निर्माण की ओर बढ़ रहा देश शिक्षा में भी पूर्ण उन्नत हो सके।

—व्यवस्थापक (आर्यजगत)

राष्ट्र नायक पं० जवाहरलाल नेहरू के निधन पर सादर श्रद्धांजलि समर्पित

प्रणेता— कुंवर जयराम सिंह 'त्यागी' दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय, हिसार,

विश्व शान्ति के सत् उपदेशक
धन्य आपका गौरव गान।
स्वतन्त्रता के भव्य पुजारी,
कीर्ति आपकी अमर महान॥

अधःपतन देखा भारत का,
नेहरू तुमने मन माना
पराधीनता में जकड़ा था,
रोदन करता था नाना।

त्याग दिया परिवार जवाहर,
देश भक्त बन दीवाना।
चला जवाहर लाल जेल में,
कष्ट भोगने मन माना॥

झेले कष्ट सहे दुख भारी,
स्वतंत्रता उपलब्ध हुई।
त्याग, तपस्या, धैर्य शान्ति से,
भारत उपवन हरी हुई॥

आज राष्ट्र रोता है सुन कर,
असामयिक यह निधन तुम्हारा।
भारत मां रोदन करती है,
कहां गया प्रिय पुत्र हमारा॥

जीवन गाथा तेरी नेहरू,
सुर बालायें गायेंगी।
संसृति की सुर कोटि वाधियां,
सुरभित यश फैलायेंगी॥

श्रद्धांजलि अर्पित करता कवि,
सुखमय महा प्रयाण आपका।
चमके चारु चांदना बन कर,
नेहरू जीवन काव्य आपका॥

दो सिद्ध नाम मोती और जवाहर

पं० चन्द्रसेन जो आर्य हितैषी उपदेशक सभा सोनोपत निवासो

बन्धुओ वर्तमान युग में भी देव दयानन्द जी के बाद अनेकों महापुरुष इस भारत भूमि में हुए कोई धार्मिक विचारों का तथा आस्तिकता के पुजारी हुए, कोई केवल राजनीतिक क्षेत्र में चमके इन्हीं सभी में दयानन्द की जोत प्रकाश कर रही थी। मोती और जवाहर दोनों ही एक जान समझें। मोती से जवाहर बनते हैं वास्तव में आज से पचास वर्ष पहले श्री पं० मोतीलाल जी नेहरू ने भी इस भारत में अपना खूब नाम पाया। वकालत में भी राष्ट्र की सेवा करने में भी। इन्हीं के गौरवशाली लाल स्वर्गीय पं० जवाहरलाल नेहरू अनोखे रत्न हुए वैसे प्यारे जवाहर अपने पिता के काल में काफी चमके थे, पं० मोतीलाल भी अपने प्यारे को उन्नति की राह पर देख फूले न समाते थे वे समझते कि मेरा ये बेटा संसार में अवश्य नाम पायगा श्री गांधी के सम्पर्क में आने से सोने पर सुहागा चढ़ा। पं० जवाहरलाल अपने कट्टर विरोधियों में भी अपना विशेष स्थान रखने लगे, स्वतन्त्रता संग्राम में कभी किसी से पीछे नहीं रहें। अनेकों बार जेल गये महान कष्ट सहें, श्री गांधी जी इन पर बड़ा ही विश्वास रखते थे। चार पांच बार अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के प्रधान बनने का गौरव भी प्राप्त है। सन् १९४७ पन्द्रह अगस्त में भारत स्वतन्त्र हुआ सन् १९६४ अर्थात २५ मई जीवन की अन्तिम घड़ियों तक भारत के प्रधान मन्त्री बने रहे मृत्यु के हमले से कोई नहीं बचा, जिस सम्मान के साथ इन की अर्थी का जलूस था व संस्कार की रस्म अदा की गई देश विदेश से आये २ प्रतिनिधि आद करोड़ों व्यक्ति रोये प्यारे जवाहर पर, हमारे चाहे राजनीतिक विचार न मिलते हों पर ये सचाई है वे हमारे ही नहीं बल्कि विश्व के हितैषी थे ये विश्व में ही नेहरू खानदान को विशेष कर अपने प्यारे महान आदर्श देश भक्त पिता पं० मोतीलाल नेहरू के नाम को चमका गये दोनों ही सिद्ध नाम बन गये, इस लिये मैंने लिखा दो सिद्ध नाम मोती और जवाहर—

आदर्श विवाह

श्री ठा० दुर्गासिंह जी आर्य भजनोपदेशक आर्य प्रादेशिक सभा की सुपुत्री सरोज रानी का पाणिग्रहण श्री ठा० शंकरलाल जी मास्टर अलीगढ़ निवासी के सुपुत्र श्री महेन्द्र प्रतापसिंह जी के साथ २३ मई को वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ। विवाह कार्य श्री पं. ज्ञानचन्द जो शास्त्री तथा श्री पं. शिवचरण जी शास्त्री ने कराया। कई भजन-मडलियों ने अपने सुरीले भजनों से विवाह की शोभा को बढ़ाया। दहेज का अभाव ही इस विवाह की सबसे बड़ी विशेषता थी। यदि ऐसा ही अनुकरण हिंदू जाति करे तो विवाह की समस्या शीघ्र ही सुलभ हो सकती है।

जिला वेद प्रचारिणीसभा, होशियारपुर

वार्षिक चुनाव निम्न प्रकार से हुआ (१) प्रधान म. देवी चन्द जी (२) उप प्रधान प्रिं: राम दास जी तथा चौ. हरि राम जी (४) मन्त्री कै० बूटाराम जी (५) उप-मन्त्री ला. देव राज जी।

Members, Antrang Sabha

6. Pt. Rala Ram Ji, M.A., M.L.A
7. Bawa Shadi Lal Ji, Advocate
8. L. Jagan Nath Ji, Sondhi.
9. P. Thakur Das Ji, Pleader.
10. L. Milkhi Ram Ji, Advocate.
11. L. Som Raj Ji, B.A, L.L.B.
12. L. Jagdish Ram Ji, Iron Merchant.
13. P. Wazir Chand Ji, Principal UNA
14. P. Jagan Nath Ji, Sharda, Principal, Daulatpur.
15. P. Arjan Dass Ji, Joshi, Principal Kathgarh.

बूटा राम मन्त्री
होशयारपुर

आर्यसमाज पुलबंगश दिल्ली

साधारण अधिवेशन ३१-५-६४ गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ के बन्द होने पर रोष प्रकट करता है आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब शीघ्र इसे चालू करे आर्य जनता इस अन्याय को कभी सहन नहीं करेगी।

भाई भाई में अनबन

एक ही मां के दो बेटे
इक आर्य एक सनातन है
दोनों का माता की सेवा
बस लक्ष्य है तन मन अर्पन है
है केवल भेद भाव इतना
धनवान है इक निर्धन है
धन से माता को खुश करना
निर्धन के वास्ते अड़चन है
दुनिया की दृष्टि में होता
धनवान ही अच्छा सज्जन है
निर्धन का सदा दुखी रहना
निर्धनता के कारण मन है
मातृ सम दृष्टि में भी
निर्धन के प्रेम में उलझने है
इसीलिये दोनों भाइयों में
बढ़ती जाती अनबन है
निराकार साकार का झगड़ा
गड़बड़ जड़ और चेतन है
एक प्रभु का अलग अलग
दोनों आंखों को दरशन है
दोनों में ही विराजमान
चन्द्र वह सर्व शक्ति मन है

ले० नानक चन्द्र शर्मा

आंध्र प्रदेश की कन्या

आंध्र प्रदेश के ग्राम **KHANA MARNAR** जि. गुन्तूर की एक कन्या गुर्मादेवी आयु १८ वर्ष पिता का सुधाराओ कुछ समय से गृह कलह के कारण भागकर श्री नगर पहुंची। वहां की पुलिस ने आर्य-समाज वजीर बाग श्री नगर को पहुंचा दी। समाज के अधिकारियों ने इसाप्ताह तक उसकी देख रेख की तत्पश्चात् समाज के सेव० सरदार बाजासिंह जी के साथ उसे पठानकोट समाज में रवाना कर दिया। उन्होंने उस कन्या को जालन्धर प्रादेशिक सभा के पास भेज दिया। प्रातः १३ ता० को मन्त्री जी की आज्ञानुसार श्री हैड क्लर्क सभा ने आर्य अनाथालय फिरोजपुर में पहुंचा दी। अब वह सब तरह से सुरक्षित है।

दयानन्द-वचनामृत

'परमेश्वर तीनों कालों के व्यवहारों को यथावत् जानता है। वही सबका कारण, आनन्दमय और सुख स्वरूप है। सर्व शक्तिमान् परब्रह्म भी है वही है। 'ओ३म्', 'खम' आदि उसके नाम हैं। उसी में सब वेदों का तात्पर्य है। उसी की प्राप्ति कराने में सारे वेद प्रवृत्त हो रहे हैं। उसकी प्राप्ति के सम्मुख किसी भी पदार्थ की प्राप्ति उत्तम नहीं है। और जो जगत् का वर्णन, दृष्टान्त और वस्तुओं का उपयोग आदि प्रदर्शन किया गया है, वे सब भी परब्रह्म ही को प्रकाशित करते हैं।'

(स्वामी सत्यानन्द जी)

चुनाव

आर्य वीर दल पलवल

संरक्षक :—ला. धनपतराय जी, नगरनायक :—हकीम भिवानीदास जी, नायक:—श्री पृथ्वीराज जी आर्य, मा० ज्ञानचन्द जी, हरिश्चन्द्र जी, बौद्धिक नायक:—श्री वीरभानु जी आर्य, मन्त्री :—जगदीशचन्द्र आर्य कोषाध्यक्ष :—ला. डालूराम जी अन्तरंग सदस्य :—मा० सत्यपाल जी, मा० आनन्द स्वरूप जी, श्री हेमराज जी, श्री वेदप्रकाशजी ।

आर्य समाज साम्बा का वार्षिक चुनाव

२४-५-१९६४ को रात के ठीक १० बजे श्री मोहन लाल जी कोतवाल की अध्यक्षता में हुआ। जो इस प्रकार है ।

५
सराफ,

श्री व ला० परमानन्द जी, — श्री वेदप्रकाश वर्मा, उप-मन्त्री :— श्री ओमप्रकाश गुप्ता, कोषाध्यक्ष— श्री नानक चन्द जी शर्मा ।

वार्षिक संगीत सम्मेलन

आप को यह जान कर प्रसन्नता होगी कि वार्षिक संगीत सम्मेलन आर्य संगीत मंडल व आर्य संगीत कालिज का २१ जून, १९६४ को [illegible] मनाया जायेगा बाहिर के प्रसिद्ध गायक इस उत्सव में भाग लेंगे।

श्री गुरनाम सिंह पी० सी० एस० ए० डी० एम० साहिब इस की अध्यक्षता करेंगे।

नोट—जो विद्यार्थी इस उत्सव में भाग लेना चाहते हैं वह अपने

१५-६-६४ से पहले
।
एक छोटे लाल आर्य
जनरल सेक्ट्री
प्रैजीडैन्ट जे०आर०अग्गा एडवोकेट
श्री सत्यपाल जोइंट सेक्ट्री

आर्य कन्या महाविद्यालय बड़ौदा

परीक्षा परिणाम

हमारे स्वाधाम महाविद्यालय के इस वर्ष के C.P.ED के कोर्स में २२ कन्यायें बैठी थीं, २२ ही अच्छे नम्बरों से पास हो गई हैं परिणाम सौ प्रतिशत रहा। C.P.ED सरकार मान्य डिग्री है

हमारे सरकार मान्य शुद्ध आयुर्वेद महाविद्यालय में छः कन्यायें बैठी थी वो छः ही पास हो गई हैं। उस में भी सौ प्रतिशत परिणाम रहा।

B.S.C. में १४ कन्यायें बैठी थी जिन में ९ पास हुई हैं उस में एक फस्ट क्लास में और पांच सेकण्ड क्लास में उत्तीर्ण हुई हैं। परिणाम ६४ प्रतिशत रहा।

विशारद श्रेणी का परिणाम भी सुन्दर है २० बेनों में से लगभग १७ उत्तीर्ण हुई हैं।

इस वर्ष सरकार ने आयुर्वेद में तीस तथा सी० पी० एड. कोर्स में साठ कन्यायें दाखिल करने की अनुमति दी है। आयुर्वेद महाविद्यालय का कोर्स केवल एक ही वर्ष का है और आयुर्वेद प्रवीण डिग्री का सरकार मान्य कोर्स पांच वर्ष का है।

आर्य जगत् में विज्ञापन देकर लाभ उठाएं

डी० ए० वी० कालेज जालन्धर की प्री० मैडीकल कक्षा

का

शानदार परिणाम

पिछले सभी रिकार्ड तोड़ दिए—

विश्वविद्यालय में इस कालेज के निम्न छात्र—

(१) अनिल कुमार बौरी ४८६ अंक लेकर सर्वप्रथम रहे।

तथा

(२) श्री गुरजीतसिंह धालीवाल ४८३ अंक लेकर सब द्वितीय रहे

इस परीक्षा परिणाम में डी० ए० वी० कालेज जालन्धर ने निम्न प्रकार विशेष ख्याति प्राप्त की है :—

(१) सारे पंजाब प्रदेश में सर्वाधिक १२ छात्र मैरिट लिस्ट (विशेष योग्यता सूची) में रखे गए। इतनी अधिक संख्या अन्य किसी भी एक कालेज को प्राप्त नहीं हुई।

(२) ३० छात्र प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए। यह संख्या भी पंजाब के सभी अन्य कालिजों में सब से अधिक है।

(३) इस कालेज के इस परीक्षा में १५० छात्र प्रविष्ट हुए थे जिनमें कुल १७ अनुत्तीर्ण हुए और इस प्रकार परीक्षा परिणाम ८८.७ प्रतिशत रहा जब कि विश्वविद्यालय का ५८.७ प्रतिशत है।

आर्यजगत की ओर से हम इस कालेज के मान्य प्रिंसिपल श्री भीमसेन जी बहल के परिश्रम की प्रशंसा करते हैं तथा उनके सहयोगी प्राध्यापक गण सहित उन्हें इस शानदार परिणाम के लिए बधाई देते हैं।

व्यवस्थापक

महात्मा हंसराज साहित्य विभाग का

दृढ़ निश्चय

५० प्रतिशत कमीशन प्राप्त करें

नीचे लिखी हुई कुछ पुस्तकों पर विभाग ने ५० प्रतिशत कमीशन देना स्वीकार किया है

इस सुनहरे अवसर से

सभी स्कूल, कालिज, आर्य समाजें और उन की संस्थाएं

लाभ उठाकर सभा का हाथ बटायें

अमृतवाणी सजिल्द ।।) अजिल्द ।–) म० हंसराज जी का संक्षिप्त जीवन चरित्र (आनन्द स्वामी जी महाराज लिखित) कीमत ।) दयानन्द शतक (प्रिं० दीवान चन्द्र जी कृत) कीमत १) प्रभु दर्शन (आनन्द स्वामी जी लिखित) कीमत २।।) महर्षि दर्शन (प्रिं० दीवानचन्द्र जी कृत) कीमत २) वैदिक धर्म मुझे क्यों प्यारा है (प्रिंसीपल रामचन्द्र कृत) कीमत १।।) वैदिक धर्म की महत्ता (पं त्रिलोकचन्द्र जी शास्त्री लिखित) कीमत १२) रु० सैंकड़ा, सत्यार्थ प्रकाश हिन्दी भाष्य i, ii समुल्लास (श्री वाचस्पति जी एम० ए० कृत) कीमत प्रत्येक समुल्लास की १)।

नीचे की पुस्तकों पर 25/% कमीशन—

सत्यार्थ प्रकाश उर्दू ३।।) सभा का प्रकाशन, दयानन्द हिज लाईफ एन्ड वर्क (प्रिं० सूर्य भानु जी वायस चांसलर) कीमत १।।) जीवन ज्योति और गीता दिग्दर्शन कीमत क्रमशः ।।=), ।।) आने (प्रिं० दीवानचन्द्र जी कृत, स्वाध्याय संग्रह (प्रि० दीवान चन्द्र जी कृत) कीमत ।।) आने।

नोट—डाक खर्च ग्राहकों को देना होगा।

प्राप्तिस्थान—महात्मा हंसराज साहित्य विभाग A.P.P. सभा

जालन्धर शहर

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा [illegible] हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित कार्यालय—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टेलीफोन न० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd No P 121

एक प्रति का मूल्य १६ नये पैसे — वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक २६) १२ आषाढ २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०— २८ जून १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

न किष्टं कर्मणा नशत्

न कि: तम्—उस नरनारी को, ऐसे प्रभु के प्यारे को संसार में कोई भी अपने बल या शक्ति अथवा धनादि साधनों के द्वारा नाश नहीं कर सकता। उसका कोई भी बाल बांका नहीं कर सकता।

त्वं वृत्राणि हंसि

परमदेव! आप रुद्र रूप भी हो। आप ही तो अपनी शक्ति से सारे वृत्रों को, पापियों को, दुष्टों को मार देते हो। आप के नियम से पापी बच ही नहीं सकता।

वृत्रं हनति वृत्रहा

वह परमेश्वर वृत्रहा है—वृत्र को, दुष्ट को पापी को, अन्धकार फैलाने वाले को नष्ट कर देता है, मार देता है। उसकी मार से कोई भी पापी बच नहीं सकता वृत्र उससे बच नहीं पाते।

अ थ र्व वे द से

वे दा मृ त

अंगस्पर्श मन्त्रा:

ओम् वाङ् म आस्येऽस्तु। ओं नसोर्मे प्राणोऽस्तु ओं अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु। ओं कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु। ओं बाह्वोर्मे बलमस्तु। ओं अरिष्टानि मेऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु॥

पार० गृह्य० कां० १ कंडि ३ सूत्र २५

अर्थ—प्रभु जी! (वाक्) वाणी (मे) मेरे (आस्ये) मुख में (अस्तु) होवे (मे अक्ष्णो:) मेरी आंखों में (चक्षु:अस्तु) देखने की शक्ति हो (मे नसो:) मेरी नासिका में (प्राण: अस्तु) प्राण शक्ति हो (मे कर्णयो:) मेरे कानों में (श्रोत्रम् अस्तु) सुनने की शक्ति हो। (मे बाह्वो:) मेरी भुजाओं हाथों में (बलम् अस्तु) बल शक्ति हो। (अरिष्टानि) नीरोग हों (मे) मेरे (अंगानि) सारे अंग (तनू:) शरीर तथा (तन्वा सह) शरीर के साथ (सन्तु) होवें।

भाव:—भगवन्! इस जीवन के यज्ञ को प्रारम्भ करते हुए आप से यह प्रार्थना करता हूं कि जीवन यात्रा का यह सुन्दर शरीर रूपी रथ सदा ठीक रहे। मेरी वाणी वाणी बनी रहे। इस में बोलने की शक्ति बनी रहे। प्राण शक्ति बनी रहे। आंखों में देखने की शक्ति बना रहे। मैं कानों से सदा सुनता रहूं एवं शुभ सुनूं। हाथों में शक्ति बनी रहे। निर्बल न बनूं। आप की कृपा से मेरा सारा शरीर तथा इस के सारे अंग उपांग सदा स्वस्थ, नीरोग तथा शक्ति शाली बने रहें ताकि मैं इन साधनों के द्वारा संसार के इस महान यज्ञ में पूरा २ लाभ उठा सकूं—सं.!

ऋषि दर्शन

सर्वेभ्यो महत्तरम्

वह ब्रह्म सबसे महान् है। संसार में सूर्य आदि लोकान्तर भी बहुत बड़े हैं, जिनका ज्ञान प्राप्त करते मानव दिमाग चकरा जाता है। परन्तु ब्रह्म इन सबसे महान है, पूज्यतम है। उसी की पूजा करनी है।

प्रकाश स्वरूपम्

वही सर्वव्यापक महान् भगवान् प्रकाश स्वरूप है, ज्योतिर्मय है। जितने भी प्रकाश देने वाले पदार्थ विश्व में हैं, ये सारे उसी की आत्मा से भासित प्रकाशित हो रहे हैं। उसी की इनमें ज्योति है। उसी महान् सूर्य से चमकते हैं।

सर्वज्ञं कल्याणमयम्

वह ब्रह्म सर्वज्ञ है, सबकी सब क्रियाओं को जानने हारा है। उससे किसी भी वस्तु, भाव को गुप्त नहीं रखा जा सकता। वह परमात्मा कल्याणमय है, दयालु, दया के सागर हैं। सब पर दया करते रहते हैं।

भा ष्य भू मि का

अधिष्ठाता—संतोषराज सभा मंत्री

सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शा

धार्मिक चर्चा

सत्यं शिवम् सुन्दरम्—सत्यम्

(ले० श्री लाल चन्द्र जी मंसूरी)

-जो सदा एक सा रहता है जो अमर तत्व है जो अव्यय है अविनाशी है जिस में परिवर्तन नहीं होता, वह सत्य है। सत्य ही धर्म है और धर्म ही सत्य है।

'जो वह निश्चय धर्म है, वह निश्चय सत्य है इस लिए सत्य बोलते हुए को कहते हैं, धर्म बोलता है और धर्म बोलते हुए को यह कहते हैं सत्य बोलता है। निश्चय ही सत्य और धर्म एक ही हैं (शतपथब्राह्मण) मनुष्य यह प्रार्थना करे।

'हे ईश्वर! मुझे निश्चय सत्य दे और श्रद्धा दे। हे सर्व नियन्ता! दुराचार से मेरी रक्षा कर, और मुझे सदाचार में लगा' (तै० संहिता)

सत्येन लभ्य स्तपसा ह्येष आत्मा सम्यग्ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम्, अन्त शरीरे ज्योतिर्मयो हि शुभ्रो, यम्पश्यन्ति यतय क्षीण दोषा

मुण्डकोपनिषद् ३।१।५॥

वह आत्मा सत्यतप, सत्यज्ञान और ब्रह्मचर्य से ही सदा प्राप्त होता है। शरीर के अन्दर वह प्रकाशमय शुद्ध स्वरूप है जिसे निर्दोष मतिलोग देखते हैं।

सत्यम् ज्ञानम् अनन्तम् ब्रह्म॥

तै० उप० ब्रह्मवल्ली—१ परमात्मा

सत्यस्वरूप ज्ञानस्वरूप और अनन्ता है।

ब्रह्मणे नाम सत्यम्। छान्दोग्य

उप —३।४॥

परमात्मा का नाम सत्य है

सत्यब्रह्म देवा सत्य मेवोपासत॥

बृहदारण्यक उप ५।६।१

सत्य परमात्मा है देवजन सत्य स्वरूप परमात्मा को ही आराधते हैं

सत एक सोम्य एक मेवा द्वितीयम्

छा० उप० ६—१२

सत एक है सोम्य सतरूप ब्रह्म एक ही अद्वितीय है।

सत्यनाम परमात्मा का है और सत्यनाम आत्मा का भी है दोनों अविनाशी हैं अमर तत्व हैं आत्माचित् है परमात्मा भी चित है अर्थात आत्माचेतन है परमात्मा ज्ञानस्वरूप है। सत् और चित दोनों गुण आत्मा और परमात्मा में समान हैं। आत्मा अपने साथी परम सुहृद सदा एक ही हृदय में वास करने वाले परमात्मा को जब पहचानता है तो ज्ञानवान हो जाता है और उस से सब संशय छूट जाते हैं। सतस्वरूप आत्मा अपने साथी सत्यस्वरूप परमात्मा को भली प्रकार पहचान कर कृतकृत्य हो जाता है। आत्मा की शक्ति जभी तक अल्प है जब तक उसने अपना सबन्ध भगवान से अनुभव नहीं किया। भगवान से निरन्तर का सम्बन्ध पहचान कर आत्मा सशक्त हो जाता है और निर्भ्रान्त हो जाता है क्योंकि चेतन आत्मा ने अपने परम चैतन्य महा प्रभु से सम्बन्ध जान लिया और अब वह निरन्तर अपने परम मित्र के साथ निर्भय और निर्भ्रान्त होकर अपना कर्तव्य पूर्ण आत्म विश्वास से कर रहा है। भगवान नित्यानन्द है आत्मा भगवान के सामीप्य में आनन्द अनुभव करता है। आनन्द के अभिलाषी सभी मनुष्य इसलिए परम पुरुष परमात्मा की उपासना करते हैं और आत्मतृप्ति और नित्यानन्द और निरन्तर की प्रसन्नता प्राप्त करते हैं।

आत्मा सत्य शिवम् है यही गुण भगवान में हैं। भगवान सुन्दरम् भी है और पूर्ण है। आत्मा में सौंदर्य भगवान के साथ योग करने से मिलता है पूर्णता और सफलता भी भगवान के साथ मिलन का परिणाम है। भगवान सत्यम् शिवम् सुन्दरम् है। भगवान की उपासना से ही आत्मा में सौन्दर्य चमकता है।

शिवम्

परमात्मा परमपावन है। परमात्मा शिव है, परम कल्याणकारी सब के हितकारी हृदय विहारी हैं। परमात्मा सदा सब का कल्याण करता है। परमात्मा परम पवित्र है और परमात्मा की उपासना से मनुष्य पवित्र होता है। परमात्मा का उपासक कभी पाप के पंक में नहीं फंसता। परमात्मा सत्य स्वरूप और मंगलकारी है परमात्मा का भक्त सदा सत्य बोलता और सत्य सकल्प करता तथा सत्कर्म ही करता है। परमात्मा का भक्त अपने प्रभु के अनुकूल कभी किसी का अमंगल नहीं सोचता और ना ही अमंगल करता है। परमात्मा परम मंगलकारी, मंगल दाता और शोक ताप भयहारी है। परमात्मा की उपासना से मनुष्य में पुण्य जीवन का उदय होता है और विकास होता है। परमात्मा सर्वमंगलप्रद और परमसुखकारी है। परमात्मा नित्य सबका कल्याण करते हैं। परमात्मा परम उदार हैं परमात्मा से असीम प्रेम है। परमात्मा का प्रेम ही सकल सृष्टि का पोषण कर रहा है। परमात्मा की मंगलमयी दया ही सारे प्राणियों को आश्रय देती है। परमात्मा परम सुखदाता और परमानन्द के देने वाला है। परमात्मा का उपासक सदा मंगल-भाव ही धारण करता और मंगल-भाव ही प्रकट करता है और उसके सभी कार्य मंगल-प्रद होते हैं। परमात्मा के उपासक का आदर्श उसका भगवान ही है। वह अपनी जीवन चर्या में भगवान का ही अनुकरण करता है और संसार में [illegible] भावना द्वारा शान्ति की ही कामना करता है। शिव का उपासक सदा शिव सकल्प धारण करता है [illegible] कार्यों में ही संलग्न रहता है।

सुन्दरम्

सौन्दर्य और पूर्णता एक ही है। शरीर का सौन्दर्य आकर्षक है, किन्तु मन भी सुन्दर हो हृदय सुन्दर हो भावना सुन्दर हो कामना सुन्दर हो, विचार सुन्दर हों तो ऐसा व्यक्ति सभी को अपनी ओर आकर्षित करता है। ऐसे मनुष्य का व्यक्तित्व प्रभावशाली होता है। समाज में ऐसे व्यक्ति की चाहना होती है।

सुन्दर जीवन जिन साधनों से बनता है उनमें ब्रह्मचर्य मुख्य है। ब्रह्मचर्य वह आचरण है जिससे मनुष्य में सामर्थ्य बढ़ता है। पवित्र विचार और पवित्र आचरण से ही ब्रह्मचर्य पूर्ण होता है। ब्रह्मचारी की शक्ति सत्ज्ञान और सत्कर्म में ही व्यय होती है। ब्रह्मचारी हमारी संस्कृति और राष्ट्र परम्परा का प्रतीक है। उसमें देश परम्परागत सभ्यता सुरक्षित है। ब्रह्मचारी वीर्यवान तो होता ही है उसका वीर्यबल ज्ञान विज्ञान में लगता है। वह पवित्रता का मूर्तिमान स्वरूप होता है। देश का मान देशकी मर्यादाए उसमें सुरक्षित रहती हैं। ब्रह्मचारी का जीवन सुन्दर है उसमें अनुपम सौन्दर्य है उसमें आत्म-सम्मान है अभिमान नहीं, उसमें शक्ति है आतंक नहीं, ब्रह्मचारी बल निर्बल की रक्षा के लिए है उसकी प्राण शक्ति राष्ट्र में स्फूर्ति और पुरुषार्थ के प्रसार के लिए है। ब्रह्मचारी देश का गौरव है, राष्ट्र का भविष्य उसमें सुरक्षित है, ऐसा व्यक्ति सुन्दर है। वही मनुष्य सुन्दर है जिस के आचार विचार सुन्दर हों, जो विश्वास पात्र हो जिसे अपनी प्रतिज्ञा पूरी करने का [illegible]

(शेष पृष्ठ ११ पर)

दयानंद साल्वेशन मिशन होशियारपुर

(ले०—श्री रामदास जी प्रधान मिशन)

१९६३ के आरंभ में अखिल भारतीय दयानन्द साल्वेशन मिशन होशियारपुर, का विशेष ध्यान इस ओर आकर्षित किया गया जो हिन्दु पुरुष और स्त्रियां कुष्ट रोग से पीड़ित हो जाते हैं उन की सेवा और इलाज करने के लिये सिवाए ईसाइयों की संस्था के और कोई संस्था नहीं है हिन्दु कुष्ट रोगियों को मजबूरन ईसाई धर्म स्वीकार करना पड़ता है और अपने बच्चों, लड़के लड़कियों को सदा के लिये इसाइयों के सपुर्द कर देना होता है और ऐसे बच्चों को ऐसे वातावरण में रखा जाता है कि वे ईसाई बन जाते हैं।

१९६३ में ही एक ईसाई पादरी ने अमृतसर के शहर में परपंच रचा कि कोई किसी प्रकार का बीमार हो तो वह बीमार पर हाथ फेर कर और दुवा पढ़ कर उस रोगी का रोग निर्मुक्त कर देता है परन्तु शर्त यह कि ऐसा रोगी पहले ईसा मसीह पर अपना इमान लाए। थोड़े ही दिनों मे इस का इतना प्रभाव पड़ा कि उस पादरी के पास इलाज कराने के लिये सैकड़ों की संख्या में स्त्री, पुरुष और बच्चे जाने लगे। यह कोई देखने की कोशिश नहीं करता था कि किसी को आराम भी हुआ है या नहीं। बस एक भेड़ चाल सी चल गई।

इन हालात में आल इंडिया दयानन्द साल्वेशन मिशन, होशियारपुर ने अपना एक प्रसिद्ध प्रचारक ज्ञानी राम सिंह को इस बात के लिये नियत किया कि लोगों को इस भ्रान्ति से बचाए और भूठे पाखंड के प्रचार का विरोध करे। इस में अमृतसर की आर्य समाज लोहगढ़ के प्रधान ज्ञानी पिंडी दासजी और लक्ष्मणसर आर्य समाज के प्रधान श्री रुद्र दत्त जी ने पूरा २ सहयोग दिया जिस के फल स्वरूप पाखंड का प्रचार अमृतसर से हट कर कहीं और चला गया।

इन हालात में मिशन ने यह अति आवश्यक समझा कि रोगियों की सेवा की जाए। इसके लिए मार्च, १९६३ में तरनतारन में कुछ रोगियों की एक कालोनी स्थापित की गईं और उसकी चिकित्सा के लिए एक छोटा-सा चिकित्सालय (डिसपैंसरी) खोला गया जिसमें श्री बी० के० दास जी काम करते हैं, और श्री चरणदास जी जो खुद कुष्ट रोगी हैं, कुष्ट रोगियों में आर्यसमाज का प्रचार करते हैं और उनकी देख भाल करते हैं। इस काम के लिए इस समय मिशन दवाइयों की कीमत को मिलाकर २०० रु० माहवार खर्च उठा रहा है। इस काम को स्थायी बनाने के लिए व चलाने के लिए अमृतसर में निम्न लिखित सज्जनों की एक सब कमेटी कुछ समय से बनाई गई है।

(१) ज्ञानी पिंडीदास जी प्रेजीडण्ट।

(२) श्री रुद्रदत्त जी, वाईस प्रेजीडेण्ट।

(३) श्री रामजीदास तरनतारन सैक्रेटरी।

(४) स० प्रतापसिंह जी सूद।

(५) मिशन के प्रेजीडेंट जी।

(६) मिशन का सैक्रटरी।

इन सज्जनों का मिशन धन्यवादी है इन्होंने इस सेवा को प्रशंसा पूर्वक स्वीकार कर लिया है और पूरे यत्न से काम कर रहे हैं। चन्दा एकत्र करने का काम तथा संस्था को चलाने के लिए इन्होंने अपने जिम्मे ले लिया है। यह बहुत खुशी की बात है।

तरनतारन के कुष्ट रोगियों में कुछ ऐसे रोगी भी हैं जो भिक्षा के लिये कालोनी से बाहर नहीं जा सकते क्योंकि उनके हाथ पांव और दूसरी इन्द्रियां अधिक रोग ग्रस्त हैं इनके लिए लंगर खोला गया है। पिछली राम नवमी के के उत्सव पर इसका उद्घाटन ज्ञानी पिंडीदास जी ने किया था। उस समय मिशन की ओर से दो बोरी आटा और एक बोरी आटा किसी और दानी सज्जन ने दिया था। और रामनवमी के उत्सव से लंगर का नाम भी रामलंगर रखा गया। मैं सब दानवीरों को मिशन की ओर से प्रार्थना करूंगा कि वे इस काम के लिए ज्यादा से ज्यादा धन देकर मिशन और अमृतसर की सब कमेटी को इस योग्य बनाएं कि वे भारतवर्ष के तमाम कुष्ट रोगियों को ईसाई मत से बचा कर अपने हिन्दू धर्म को स्थिर रखें। यह काम महान है और इस के लिये दानियों की आहुति भी महान होनी चाहिये।

सत्यं, शिवम् सुन्दरम्

(पृष्ठ २ का शेष)

सुन्दर व्यक्ति वह है जिस में सब की कीर्ति सुरक्षित है, जो किसी का अपमान नहीं करता, किसी की निन्दा नहीं करता, वृथा किसी की चर्चा नहीं करता रहता जो आत्म-निरीक्षण करके अपनी त्रुटियें दूर करने का इच्छुक है वह सौंदर्य की साधना मे तत्पर है जो अपनी उन्नति के साथ दूसरों की भी उन्नति करता है उसका जीवन सुन्दर है।

सौंदर्य की भावना मनुष्य को पवित्र बनाती है उसे अपना व्यक्तित्व श्रेष्ठ करने की प्रेरणा करती है सौंदर्य की कामना एक सदिच्छा है किन्तु वह केवल शरीर के बनाव शृंगार में ही सीमित नहीं होनी चाहिये। शरीर सुगठित, सुडौल, स्वस्थ हो और साथ ही हृदय भी पवित्र हो और मनुष्य के व्यवहार से मेल बढ़े और सब का हित हो तो वह अवश्य एक सुन्दर मानव है। बिना सुन्दर आचरण के बिना पवित्र व्यवहार के, वह सब का प्रेमपात्र बन ही नहीं सकता। सौंदर्य, मानव जीवन का पूर्ण विकास है।

भगवान पूर्ण है नित्यानन्द है इसलिए परम सुन्दर है, प्रियतम है। भगवान परम शिव परम मंगलकारी है। भगवान कभी किसी का अनिष्ट नहीं करता। भगवान के न्याय में भी दया और उसकी दया न्याय युक्त है। भगवान इसीलिए सत्य शिवम् सुन्दरम् है। भगवान के नित्य सम्पर्क से हम आनन्द प्राप्त करते हैं। परम सुख लाभ करते हैं। भगवान का उपासक भगवान से मनुष्य अक्षय सुख पाता है ऐसा सुख और कहीं भी आत्मा को प्राप्त नहीं होता है। भगवत प्रेम और आनन्द आत्मा की अनुभूति का विषय है। भगवान सब का परमहित करते हैं। भगवान के आनन्द में पूर्ण चेतनता ज्ञान की वृद्धि और कर्तव्यशीलता है। भगवान का भक्त सदा कर्मयोगी होता है। इन्द्रिय सुखों मे तो मनुष्य कर्म त्यागी और कर्तव्य भ्रष्ट हो जाते हैं। भगवान का आनन्द अनुपम है। भगवान के आनन्द को पाकर मनुष्य कर्तव्यशील दक्ष और सुन्दर हो जाता है।

आर्य प्रादेशिक सभा का महात्मा हंसराज जयन्ती के बारे में अंतिम निर्णय

आर्य प्रादेशिक सभा की २१-६-६४ की अंतरंग सभा के निर्णयानुसार जयन्ती १७-१८-१९ अप्रैल १९६५ को जालन्धर नगर में मनानेका निश्चय किया गयाहै एतदर्थ जयन्ती को सुचारु रूप से मनाने के लिए भिन्न २ उप-सम्मतियां बनाई गई हैं। जो कि अपना २ काम शीघ्र आरंभ कर रही हैं। व्यवस्थापक

दयानन्द-वचनामृत

'जब तक सब प्रमाण (और) सुतर्क से सहायता न ली जावे, वेद-वाक्यों के पूर्वापर सम्बन्ध का ज्याकरण न जावे, शतपथ आदि ब्राह्मणों का, मीमांसा आदि शास्त्रों का तथा शास्त्रान्तरों का ठीक २ बोध न हो, परमात्म देव अपना अनुग्रह न करें, उत्तम सज्जनों की सुशिक्षा और बरतंन से निष्पक्ष न्याय बुद्धि और आत्म शुद्धि उपलब्ध न हो, महर्षियों के किये व्याख्यानों को न देखें भालें, तब तक मनुष्य के हृदय में यथार्थ वेदार्थ का प्रकाश नहीं हो सकता। सब आर्य विद्वानों का यह सिद्धान्त है कि प्रत्यक्षादि प्रमाणों से युक्त जो तर्क है, वही (वह भी) मनुष्यों के लिए ऋषि है।'

(स्वामी सत्यानन्द जी)

डी० ए० वी० कालेज जालन्धर के दो विद्यार्थियों ने

प्री० इंजीनियरिंग परीक्षा का पुनः रिकार्ड तोड़ा

गत वर्ष इसी कालेज के छात्र विनोद कंवरसिंह ने ५१७ अंक लेकर रिकार्ड स्थापित किया था।

[illegible] भी इसी कालेज के जवाहरलाल अग्रवाल और सुभाष कुमार [illegible] ने ५२५ अंक लेकर विश्व विद्यालय में सर्व प्रथम रहे

तथा

पुनः रिकार्ड स्थापित कर दिया

(१) डी०ए०वी० कालेज जालन्धर ने विश्वविद्यालय के प्रथम १८ स्थानों में से आठ प्राप्त किए।

(२) इस कालेज ने कुल २० में से ७ छात्रवृत्तियां प्राप्त कीं। किसी अन्य कालेज ने इतनी छात्रवृत्तियां प्राप्त नहीं कीं।

(३) इस कालेज के ७४ विद्यार्थी प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए।

(४) कुल ३०६ विद्यार्थी इस परीक्षा में बैठे थे जिन में से ५६ अनुत्तीर्ण रहे। इस प्रकार परिणाम ८१.४ प्रतिशत रहा जब कि विश्वविद्यालय का ४०.६ प्रतिशत है।

इस अद्भुत और अभूतपूर्व परिणाम का श्रेय कालेज के उत्साही प्रिं० भीमसेन जी बहल को है। हम उन्हें तथा उनके सभी प्राध्यापक गणों को बधाई देते हैं।

—व्यवस्थापक

निःसन्तान परिवार ध्यान से पढ़ें

यदि आप विवाह के बाद अब तक निःसन्तान हैं तो इस रोग के सफल चिकित्सक श्री प० श्यामसुन्दर जी स्नातक (महोपदेशक पंजाब प्रतिनिधि सभा) से मिलें या पत्र व्यवहार करें। श्री स्नातक जी भारत के अनेक परिवारों की सफलता पूर्वक चिकित्सा कर चुके हैं।

पूर्ण कोर्स ३ मास-पूर्ण व्यय २००

पता—श्याम सुन्दर स्नातक महोपदेशक पंजाब सभा

३०३ रानी बाग शकूर बस्ती देहली

महात्मा हंसराज साहित्य विभाग की

निम्न पुस्तकों पर 50/% कमीशन प्राप्त करें।

नवीन प्राचीन समाजवाद—

स्व० नारायण स्वामी जी महाराज लिखित। कीमत १/- मात्र

भारत देश के नवीन और प्राचीन समाजवाद में क्या अन्तर है इस विषय पर बारीक दृष्टि से अनुसन्धान किया गया है। भारत देश को समाजवाद की क्यों और कैसी आवश्यकता है इस का मनन करने के लिए उपरोक्त पुस्तक का अध्ययन आवश्यक है।

षट् दर्शन समन्वय—

स्व० बुद्धदेव जी मीरपुरी लिखित। १/२५ न.प.मात्र

छः दर्शनों में परस्पर कहां २ और कैसा संबन्ध है इसका विवेचन बड़ी [illegible] किया गया है। प्रमाणों सहित वर्णन बड़ा ही मार्मिक है। [illegible] के लेखक अनेक वर्षों तक [illegible] के महोपदेशक रहे हैं। आपकी यह पुस्तक [illegible] विचारों की जनता के लिए अति उपयोगी है।

(३) अमृतवाणी—कीमत वाईडिंग कलाथ की सुन्दर बढ़िया, जिल्द की ।।) अजिल्द पांच आने 'सुखमणि' के ढंग पर लिखी पुस्तक प्रत्येक हिन्दु परिवार के लिए प्रातः पठनीय है। स्वाध्याय के लिए अमूल्य निधि है। मन को एकाग्र करने का अनूठा साधन है।

स्कूलों कालेजों और आर्य संस्थाओं के छात्र छात्राओं तथा सर्व-साधारण हिन्दु मात्र के लिए उपरोक्त पुस्तकें अति उपयोगी हैं। २५/- से ऊपर के आर्डर पर ही ५०%कमीशन मिलेगा। डाक व्यय पृथक्।

प्राप्तिस्थान—महात्मा हंसराज साहित्य विभाग A.P.P. सभा जालन्धर शहर

शोक प्रस्ताव

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब, जालन्धर का यह अन्तरंग अधिवेशन राष्ट्रनायक, सब मन प्रिय, विश्व शान्ति के अग्रदूत महामना श्री जवाहर लाल जी नेहरू के आकस्मिक व असामयिक निधन पर खिन्न हृदय से शोक अनुभव करता है।

भारतीय स्वातन्त्र्य संग्राम के वीर सेनानी और स्वतन्त्र भारत के निर्माता नेता और निर्माता श्री जवाहर लाल नेहरू का हम से पृथक् हो जाना, जब कि हमारी सीमाओं पर शत्रु हर घड़ी हमें ललकार रहा है और जब कि युद्ध की भयावह विभीषिका से प्रत्येक मानव प्रताड़ित है, निस्सन्देह हम भारतीयों के लिये विशेषतया और मानव मात्र के लिए साधारणतया अति दुःखद है। श्री नेहरू जी ने विश्व राजनीति की डावां डोल तुला को अपनी तटस्थ नीति से सदा ही समावस्था रखा है इस लिए विश्व का मानव उन का सदा ऋणी रहेगा।

हम सभी सदस्य परमदेव परमात्मा के चरणों में नत मस्तक हो कर प्रार्थना करते हैं कि वे उस महान् आत्मा को सद्गति प्रदान करें, उन के दुःखी बन्धु बान्धवों, परिजनों तथा इन के दुःखी राष्ट्र को इस असह्य दुःख का सहन करने का बल प्रदान करें तथा हम सब भारतीयों को उन के चरण-चिन्हों पर चलकर देश निर्माण में जुट जाने की योग्यता एवं शक्ति प्रदान करें।

—ज्ञानचन्द भाटिया मन्त्री सभा

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्य जगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कन्या महाविद्यालय जालन्धर शहर से प्रकाशित साप्ताहिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टैलीफोन न० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd No P 1

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक २७) १९ आषाढ २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०– ५ जुलाई १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

इन्द्राय गायत मरुतः

हे विद्वान् लोगो ! उस इन्द्र का, अनन्तएश्वर्य वाले भगवान का गीत गाया करो। उसी की भक्ति और स्तुति किया करो। संसार के लोगों को भी उसी प्रभु का भक्त बना दो। प्रकृति पूजा छुड़वादो।

इन्द्र क्रतुं न आभर

हे मेरे इन्द्रदेव। हमें कर्मशील बना दो, हमारा जीवन क्रतुमय-यज्ञमय बन जाये, परोपकारमय कार्यों को करते रहें सुविचार हमें सदा प्राप्त होते रहें। हम यज्ञ भावना से देवत्व को पाते रहें।

ज्योतिरशीमहि

हम अपने जीवन में ज्योति और प्रकाश को पाते रहें। कभी अन्धकार से भरे पथ पर न ही भटकें। प्रकाश, विद्या और ज्ञान के प्रेमी बनकर जीवन को भी प्रकाशमय बनावें।

अ थ र्व वे द

वे दा मृ त

अग्न्याधान मन्त्र

ओम् भूर्भुवः स्वः। गोभि गृ० प्र० १ सू० ११

ओं भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना पृथिवीव वरिम्णा। तस्यास्ते पृथिवी देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे ॥ यजु अ० ३ म० ५

अर्थ—(भू) पृथिवीलोक (भुव) अन्तरिक्षलोक और (स्व) द्यौलोक (द्यौ इव भूम्ना) नक्षत्रों के साथ यथा आकाश शोभा देता है ऐसे (पृथिवी इव) पृथ्वी के समान (वरिम्णा) विशालता से है। (तस्या) उस (ते) तेरी (पृथिवी) हे पृथ्वी (देवयजनि) देवताओं की यज्ञ की भूमि (पृष्ठे) पीठ पर मैं (अग्निम्) अग्निदेव को (अन्नादम्) अन्न को भक्षण करने वाले को (अन्नाद्याय) उत्तम अन्न आदि के लिए (आदधे) स्थापित करता हू।

भाव.—यह पृथिवी देवयजनी है, देवताओं की यज्ञ की स्थली है। देवता इस पर यज्ञ करते हैं। दिव्य गुण वाले विद्वान् भी इसी भूमि पर अपने परोपकारमय कार्यों का विस्तार करते रहते हैं। जिस प्रकार नक्षत्रों से आकाश की शोभा होती है उसी प्रकार भूमि भी अपनी विशालता एवं नाना पदार्थों से शोभा देती है। हे पृथिवी! यज्ञ की पवित्र वेदी! मैं उत्तम अन्न आदि की उत्पत्ति, वृद्धि के लिए, धनधान्य की सम्पन्नता के लिए तेरी पीठ पर इस यज्ञ की पवित्र अग्नि को स्थापित करता हू। इस अग्नि के द्वारा मैं यज्ञ का परोपकार का काम करने चला हू। इसी यज्ञ से उत्तम २ अन्न की उत्पत्ति होती है। यज्ञ से नाना विध अन्न होते हैं। अग्नि को स्थापित करता हू —सं०

ऋषि दर्शन

शौचं बाह्याभ्यन्तरञ्च

शौच-सफाई शुद्धता पवित्रता दो प्रकार की है। बाह्य-बाहिर की और आभ्यन्तर अपने अन्दर की। केवल बाहर की या अन्दर की पवित्रता एकादेशी कहलाती है। दोनों ही प्रकार की पवित्रता पूरी शुद्धता होती है।

बाह्यं जलादिना

इनमें जो बाहरकी पवित्रता सफाई है, वह जल आदि से की जाती है। शरीर की मैल को दूर करने या धोने के लि पानी की आवश्यकता है। निम जल से बाहर की मैल दूर हो जाती है। स्नानादि बाहर की शुद्धि है।

रागद्वेषासत्यादित्यागेन

दूसरी सफाई अन्दर की है जहा पानी काम नहीं आता वह राग, द्वेष, असत्य आदि के त्यागने तथा प्रेम सत्य आदि को धारण करने से होती है। मन की सफाई जल से न होकर सत्यादि होती है।

भा ष्य भू मि का

अधिष्ठाता—संतोषगज सभा मंत्री सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र श

धार्मिक चर्चा—

हिंसा और अहिंसा का वैदिक स्वरूप

लेखक—पं० रविदत्त जी आर्य 'विद्यावाचस्पति' (दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय, हिसार)

इस समय आर्य जाति में हिंसा और अहिंसा के सम्बन्ध में बहुत संशय उत्पन्न हो रहा है। यदि वेदादि सत्य शास्त्रों में कही हुई अहिंसा पर आचरण करें, तो जितना जीवन में अपमान तथा कष्ट सहन करना पड़ता है, तथा जितनी दुर्गति होती है। उस से बच जायें। कई बार तो अपनी सम्पत्ति, सन्तान और जीवन से भी हाथ धोने पड़ते हैं। यदि अहिंसा को छोड़ कर हिंसा में प्रवृत्ति करते हैं तो धर्म के विरुद्ध होने से मन में दुःख उत्पन्न होता है। अतः कोई ऐसा मार्ग अपनायें जिस से कि जीवन दुःखमय न हो तथा अधर्म भी न हो। क्योंकि यजुर्वेद में अहिंसा का प्रतिपादन करते हुए, एक बड़ा सुप्रसिद्ध मन्त्र आता है कि—

ओ३म् इन्द्रो विश्वस्य राजति।
शन्नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे॥
(यजुर्वेद-अध्याय मंत्र)

अर्थात् हे! ऐश्वर्यशाली परमात्मन्! हे विश्व को धारण, पालन एवं शासित करने वाले प्रभो! सब मनुष्यों एवं पशुओं का शम् कल्याण कीजिये। इस के अतिरिक्त भी यजुर्वेद ने हमें अहिंसा का पाठ पढ़ाते हुए कितना सुन्दर बतलाया कि—

ओ३म् दृते दृꣳह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्। मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे॥

अर्थात् हे! ज्ञान प्रदाता विभु भगवन् मैं सब प्राणियों को मित्र की दृष्टि से देखूं। यहां इस वेद मंत्र में वैर त्याग कर सब प्राणियों के साथ प्रेम करने और उनके साथ प्रीति एवं कल्याण की भावना रखने का जो विचार दिया है यही वास्तविक अहिंसा है तथा इसी में संसार एवं मानव-समाज का कल्याण है। अहिंसा के विषय में मनु महाराज ने भी हमें शिक्षा देते हुए बताया है कि—

अहिंसयैव भूतानां कार्यं श्रेयोऽनुशासनम्। वाक् चैव मधुरा-श्लक्ष्णा, प्रयोज्या धर्ममिच्छता॥

अहिंसा अर्थात वैर बुद्धि को त्याग कर सब मनुष्यों का कल्याण का मार्ग बतलावें और सदा इस आधुनिक संसार में मधुर वाणी का प्रयोग करे, कटुवाणी कभी भी न बोले। इतना ही नहीं महाभारत में भी अहिंसा का प्रतिपादन करते हुए बताया है कि—

अहिंसा परमो धर्मस्तथा, अहिंसा परमो दमः।
अहिंसा परमं दानं, अहिंसा परमं तपः॥

अर्थात् महाभारत में तो अहिंसा को ही परम धर्म और परमदान तथा परम तप माना गया है। क्योंकि इसीमें मानव-समाज की उन्नति है। इसी प्रकार योग के कर्ता 'व्यास मुनि' ने भी अहिंसा को ही प्रथम स्थान दिया जैसा कि हम देखते हैं कि :—

'अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः'

अर्थात् इन पांच यमों में से अहिंसा प्रथम यम है। यदि अहिंसा जीवन में नहीं होगी तो उपासना जीवन में सफल नहीं हो सकती। इन कल्पित प्रमाणों से हम सिद्ध कर चुके हैं कि वेद शास्त्र एवं धर्म ग्रन्थों में मनुष्यों के कल्याणार्थ अहिंसा का बड़ा भारी महत्व बताया है। इसी प्रकार मानव-समाज की रक्षा हो सकती है। यदि इस अहिंसा रूपी पवित्र भावना को निकाल दिया जावे तो मानव-मात्र घोर संकट और दुःख सागर में डूब जावेगा। अतः मनुष्य अपने जीवन के कल्याणार्थ अहिंसा को अवश्यमेव अपनायें।

परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि हम अहिंसा तक ही सीमित रह जाए अपितु जीवन रक्षार्थ एवं राष्ट्र तथा देश व जाति की रक्षा के लिए हमें हिंसा का अवलम्बन भी लेना होगा अतः हिंसा के लिए भी वेद हमें बतलाता है कि :—

'ओ३म् प्रत्युष्टं रक्षः प्रत्युष्टा अरातयः'

अर्थात् राक्षस स्वभाव वाले और लुटेरे मनुष्यों को जला दो। यजुर्वेद में तो यहां तक आया है कि :—'ओ३म् अपेतो यन्तु पणयोऽसुम्ना देवपीयवः'

अर्थात् दुःख पहुंचाने वाले, विद्वानों की हिंसा करने वाले, असुर मनुष्यों को यहां से भगा दो। वेदों में तो यहां तक आया है कि पापी मनुष्यों को तो परमात्मा भी किसी प्रकार नहीं छोड़ता अर्थात् अवश्यमेव दण्डित करता है। मनु महाराज भी अपनी स्मृति में लिखते हैं कि :—

'आततायिनमायान्तं हन्यादेवाविचारयन्'

अर्थात् आग लगाने वाले, विष देकर मारने वाले, भूमि पर बल-पूर्वक कब्जा करने वाले, स्त्रियों को उठाकर ले आने वाले, इन छः प्रकार के पुरुषों को जो महा आततायी है बिना सोचे ही मार दे। हमारे आर्य जाति में श्री राम और श्री कृष्ण जी महाराज दो आदर्श पुरुष हुए हैं। ये दोनों भी अहिंसा की राह के पुजारी थे, परन्तु मानव-समाज की रक्षार्थ, दुष्टों के दमन करने के लिए उन्होंने भी हिंसा का आश्रय लिया। परन्तु मनु जी ने तो यहां तक लिख दिया कि :—

दण्डः शास्ति प्रजाः
सर्वा दण्ड एवाभिरक्षति।
दण्डः सुप्तेषु जागर्ति
दण्डं धर्मं विदुर्बुधाः॥

यदि दोषी को दण्ड न दिया जावे तो यह अहिंसा हानि-कारक होगी। संसार में दुःख का कारण बनेगी। इस लिए दुष्ट को मारने में कोई दोष नहीं। वाल्मीकी रामायण में आता है कि वे दयालु, क्रोध-रहित, विद्वानों के पुजारी, दीनों पर दया करने वाले, धर्म के मर्म को जानने वाले, संयमी एवं पवित्र चरित्र वाले मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् राम ने भी यह कहते हुए कि :—

गो ब्राह्मण हितार्थाय
देशस्य च हिताय च।
शरेणाऽसि विद्धाय
पपात च ममार च॥

अर्थात् गो ब्राह्मण और देश-हितार्थ मैं इस निन्दनीय वृत्ति वाली ताड़का एवं दुष्ट राक्षस विरोध तथा ऋषियों को कष्ट देने वाले दुष्ट रावण का वध करता हूं।

इसी प्रकार योगिराज कृष्ण के जीवन में भी आता है कि उन्होंने भी देशहितार्थ—दुष्ट शिशुपाल, मुर, पंचजन, निशुम्भ हयग्रीव, भौमासुर, शल्य और कंस इत्यादि दुष्टों को मारा और जरासन्ध कर्ण और दुर्योधन को मरवाया। परन्तु जिन महा-पुरुषों ने केवल हिंसा और केवल अहिंसा को अपनाया, वे तो हमारे आर्य जगत् में केवल दो ही महान् पुरुष हुए है जिन्होंने "अहिंसा परमो धर्मः" का डंका बजाया। वे थे महात्मा बुद्ध और वर्धमान महावीर। इनका कथन था कि अपनी अन्तर आत्मा से युद्ध करो बाह्य: युद्धों से कोई लाभ नहीं। अतः श्रेष्ठ मनुष्यों का तो यही कर्तव्य है कि वे अपने जीवन में केवल हिंसा अथवा केवल अहिंसा का अवलम्बन न लें।

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२१, ५ जुलाई १९६४ [अंक २७

संयुक्त सदाचार समिति

भ्रष्टाचार समाज हो या देश, परिवार हो या संस्था सब के लिए घातक है। आरम्भ में यह थोड़ी मात्रा में होता है, किन्तु रोग, अग्नि तथा शत्रु के समान यह बढ़ता २ सारे राष्ट्र को अपनी लपेट में लेकर उसको बिगाड़ देता है। यदि इसे प्रारम्भ से ही रोका न जाये अथवा इस के स्रोत को कड़े हाथों से बन्द न कर दिया जावे तो भ्रष्टाचार की मामूली सी धारा आगे चल कर भयानक बाढ़ बन कर राष्ट्र के जीवन को डुबो देती है। उसका सब कुछ हा पंक्ति बना देती एवं उस की निर्मल चादर को कलंकित करने में कोई कसर नहीं छोड़ती। यह एक घातक रोग है, भीषण पाप है, जड़ों को खोखला करने वाला विषैला कीट है, भीषण अन्दर का शत्रु है, जो अन्दर ही अन्दर बैठकर समाज के विशाल शरीर को निर्बल बना कर कभी तो मौत के बिस्तर पर डाल देता है। भ्रष्टाचार भारी अपराध है, भ्रष्टाचार करने वाला देश का बड़ा शत्रु है। यह एक अभिशाप है। भारतीय सभ्यता में भ्रष्टाचारी मनुष्य के पास भी कोई नहीं बैठता था, उसे देश का द्रोही मान कर दण्डित कर दिया जाता था। उसके लिए नरम व्यवहार नहीं था।

आज कुछ वर्षों से हमारे देश में भ्रष्टाचार की भयकर आंधी चल रही है। बड़े वेग से प्रवाह चल रहा है। ऊपर नीचे यह बीमारी फैलती जा रही है। कुलफी के समान इसका भी स्वाद प्यारा लगता है। बात यह है कि आज के युग में जीवन का मानदण्ड तथा प्रतिष्ठा का सूत्र धन को मिलता जा रहा है। जिस के पास चार पैसे हैं, उसी का आज मान है। प्रत्येक कार्य और क्षेत्र में धन को महत्व दिया जाता है। इस बात का कोई विचार नहीं किया जाता कि धन किस प्रकार से कमाया गया है। साधन की ओर किसी का भी ध्यान नहीं केवल धन होना चाहिए चाहे जैसे उचित अनुचित साधन बर्ते जायें। आचार एवं आचार वालों का कोई विचार नहीं होता। भ्रष्टाचार को प्रश्रय मिलता है। इसी का परिणाम आज सारे देश को भुगतना पड़ रहा है। हर बात का दुर्भिक्ष है। उत्तम व्यक्ति भी नहीं मिलते। रोग बढ़ रहा है।

भारत सरकार के गृहमन्त्री श्री नन्दा जी ने एक गैरसरकारी संस्था संयुक्त सदाचार समिति गठित कराई है जिस के लिए सारी संस्थाओं का सहयोग मांगा है इस की सारे देश में शाखाएं बन रही हैं। इसका काम भ्रष्टाचार को समाप्त करना होगा। हम इस शुभ पग उठाने के लिए श्री नन्दा जी को बधाई देते हैं। एक बात अवश्य कहना चाहते हैं कि यदि यह संस्था केवल समाचारपत्रों, कागजों या सम्मेलनों तक ही सीमित रही तब तो काम न चलेगा यदि क्रियात्मिक पग उठाया गया, जैसा कि हमारे मान्य गृहमन्त्री जी ने विश्वास दिलाया है तथा अपने दैनिक दरबारि काम से प्रतीत होता है कि ठोस पग उठाये जायेंगे—तो इस से सारे देश को बड़ा लाभ होगा। आर्यसमाज तो भ्रष्टाचार के विरुद्ध अपने आरम्भ काल से ही काम कर रहा है। हम आर्य समाजों के सारे सज्जनों से कहना चाहते हैं कि इस सदाचार समिति से अपना पूरा २ सम्पर्क स्थापित करें ताकि इस के द्वारा देश में फैले हुए व्यापक भ्रष्टाचार के इस महान् रोग को समाप्त करने का प्रयत्न किया जा सके। जिस कार्य में आर्यसमाज जैसी सक्रिय, निष्काम तथा पक्षपात रहित संस्था का सहयोग शामिल हो जाता है—उस संस्था से निश्चित लाभ होता है। आर्यसमाज जहां और जिस कार्य में भी भ्रष्टाचार का रूप देखे उसे इस समिति के सपुर्द कर देवें। बलपूर्वक उसके विरुद्ध काम करने पर जारे देवे ताकि देश में व्यापक यह महारोग कम हो सके। यह रोग इतना फैल गया है कि इसे दूर करने में समय लगेगा। फिर भी करना है, आर्यसमाज भ्रष्टाचार दूर करने में सक्रिय होकर नेतृत्व करे।

—त्रिलोकचन्द्र

सभा को उन्नत करें

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब जालन्धर का निर्वाचन सम्पन्न हो गया। मान्य अधिकारी तथा अन्तरंग सदस्यों की घोषणा हो चुकी। इस वार सारा निर्वाचन अधिवेशन में ही कर लिया गया। अच्छे २ सज्जनों के कन्धों पर प्रतिनिधियों ने उत्तरदायित्व डाला है सब को सभा के साथ पूरा २ हित है। सब को अपनी सभा पर मान है। यह सुन कर बड़ी प्रसन्नता है कि सभा के मन्त्री प्रिंसिपल ज्ञानचन्दजी भाटिया माडल टाऊन जालन्धर दैनिक रूप से तीन चार घण्टे सभा के कार्यालय में पधार कर अपने हाथ से लिखते तथा काम करते हैं। इस प्रकार समय देने से सभा का काम प्रगति करता रहेगा। समाजों तथा अपनी संस्थाओं के साथ सभा का पूरा २ सम्पर्क बना रहेगा। अधिकारियों तथा अन्तरंग सदस्यों ने सभा सेवा के लिए अपने कन्धों पर यह कार्य संभाला है तो अब विशेष परिश्रम करना होगा। सभा के काम को आगे ले जाने की बड़ी आवश्यकता है। चार पांच मान्य सज्जनों का एक ऐसा सभा का शिष्ट मण्डल बन जाये जो भिन्न २ जिलों के सभा के हितचिन्तकों, महात्मा हंसराज जी के परमभक्तों आर्य समाज के प्यारों का सहयोग ले कर वहां २ सभा की प्रचार, धन तथा संगठन की गतिविधि को तेज करने के लिए दौरा करे समाजों की प्रत्येक बात उन की आंखों के सामने आ जानी चाहिए। मान्य सज्जनों के इस प्रकार के शिष्टमण्डल के भ्रमण से सभा की शान बहुत ऊंची हो जायगी। समाजों का मस्तक ऊंचा होगा। हमारा संगठन और भी दृढ होता जाएगा। वेदप्रचार के लिए भी आर्थिक लाभ होगा। समाजों का भी उत्साह बढ़ता जाएगा। सभा के सारे मान्य अधिकारी तथा सदस्य सुलझे हुए तथा सभा के कार्यकर्ता अनुभवी हैं। उनका काफी समय समाज सेवा में बीता व बीत रहा है। इस बार सभा के काम को विशेष प्रगति पथ पर चलाने की योजना बनानी चाहिए। सभा का प्रचारक वर्ग सभा की सुन्दर सेना है। अब तो महात्मा हंसराज शताब्दी के विशाल आयोजन समारोह की भी आयोजना करनी होगी इतने त्यागी महान् जीवन दानी महापुरुष की शताब्दी का काम इस सभा ने अपने हाथ में लिया है। समय आ गया है जबकि सारे सज्जन सभा के

(शेष पृष्ठ ४ पर)

आर्य समाज की विभूति

श्री पं. देव प्रकाश जी पूर्व आचार्य दयानन्द संस्कृत अरबी विद्यालय अमृतसर सचमुच ही आर्य समाज के दिव्य रत्न, अत्यन्त तपस्वी त्यागी, साधक तथा अनथक कार्यकर्ता हैं। समाज में इन जैसे मौन रह कर सेवा में लगे रहने वाले कम हैं। जिन को न तन का ध्यान न धन की चिन्ता तथा न खानपान वस्त्र आदि का विचार है। ७६ वर्ष की आयु की यह समाज की विभूति कितना काम करती है, इस का परिचय उन्हीं को है जो उन के सम्पर्क में आ कर उन के निरन्तर काम को जानते व देखते हैं। आप अर्बी संस्कृत के विद्वान, बहुत उत्तम लेखक हैं। इस्लाम व ईसायत के बहुत बड़े ज्ञाता है। लगभग ३० वर्षों से निरन्तर मध्यप्रदेश के जंगलों में तथा उन स्थानों पर भीलों को ईसाईयों के पंजे से मुक्त कराने के लिए काम कर रहे हैं। लाखों भीलों को वापस शुद्ध कर के हिन्दु समाज में लाये हैं। उस इलाके में पं. जी को देवता माना जाता है।

आर्य समाज का शानदार, पूर्ण इतिहास लिखने का कार्य भी पं. जी ने संभाला है। आठ सौ पृष्ठों का यह सर्वांगीण इतिहास होगा। इस के लिए आज कल पंजाब अमृतसर में आये हुए हैं। हम सारे समाजों से प्रार्थना करेंगे कि इस दिव्य विभूति को पूरा २ सहयोग देवें—भारी काम पर लगे हैं—सं.

आर्यसमाज ततारपुर

श्री स्वामी मुनीश्वरानन्द जी वेदतीर्थ समाज के संन्यासियों में अच्छी कोटि में गिने जाने वाले विद्वान सन्यासी हैं। बड़ा मीठा सुन्दर बोलते हैं। उत्तम लेखक हैं, साधु स्वभाव के हैं। आपके पुरुषार्थ प्रेम उत्साह से हापुड़ के समीप ही ततारपुर ग्राम में एक सप्ताह के लिए प्रचार कथा का बड़ा सुन्दर आयोजन किया गया। स्वामी जी के प्रेम से इस बार आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर से प्रसिद्ध चिमटा-मंडली पं. राजपाल मदनमोहन जी तथा पं. त्रिलोक चन्द्र शास्त्री ततारपुर आए। दैनिक रूप में खूब प्रचार होता रहा जो कि रात को १२ बजे तक चलता। इसमें स्वामी जी महाराज के पं. त्रिलोक चन्द शास्त्री के प्रवचन होते तथा चिमटा-मण्डली के रसीले प्रभावशाली भजन होते थे। श्री अनूपसिंह मंडली भी खूब रौनक करती रही। सारे ग्राम की जनता भाग लेती रही। ग्राम में श्री महाशय रघुवीरसिंह जी तथा उनका सारा परिवार ही समाज के रंग में रंगा हुआ है। खाने पिलाने, निवास के प्रबन्ध में बड़ा प्रेम दिखाया। मन्त्री जी व खजांची जी का भी उत्साह था स्वामी मुनीश्वरानन्द जी का सारा प्रभाव है अन्तिम दिन यज्ञोपवीत भी हुए। सभा को वेदप्रचार व मार्ग व्यय भी मिला, सबको बधाई।

कादियां में यज्ञ

श्री बा० ज्ञान प्रकाश जी चोपड़ा इंजनीयर आर्यसमाज के बड़े प्रेमी हैं। आपका उड़ीसा में मिल इन्जनीयर हैं। इस बार लेखराम नगर कादियां में अपने परिवार की ओर से ऋग्वेद का महान यज्ञ किया। आधा ऋग्वेद पारायण गत वर्ष गाजियाबाद परिवार में किया गया था। अबकी प्रातः सायं दोनों समय बड़े सजे हुए मंडप में यह महायज्ञ होता रहा। सभा की ओर से पं० त्रिलोकचन्द्र शास्त्री आये थे। सारा मंडप नर-नारियों तथा युवकों से भर जाता था। पूर्णाहुति का दृश्य भी देखने वाला था। इन का सारा परिवार आर्यसमाज के रंग में रंगा हुआ है। परिवार के सारे छोटे बड़े बड़ी श्रद्धा से यज्ञ में शामिल होते रहे। युवक समाज के युवकों का उत्साह तथा समाज प्रेम यज्ञ में शोभा बढ़ाने का सहयोगी बनता रहा। देवियों का यज्ञ प्रेम भी प्रशंसनीय था। इस पूर्णाहुति पर श्री देसराज जी, प्रो० राधाकृष्ण जी आदि सज्जनों ने बधाई दी इस अवसर पर श्री ज्ञान-प्रकाश जी ने सभा के वेद प्रचार में ५०) रुपये भेंट किये। नगर की संस्थाओं को भी दान दिया। कुल १०१) रु० दान दिया गया। सब का लड्डूओं से सत्कार किया। इस यज्ञ के लिए बा० ज्ञान प्रकाश जी चोपड़ा उनकी देवी उनके माता पिता तथा भाई श्री रोशनलाल जी मन्त्री को सारे परिवार को बधाई।

वैदिक साधनाश्रम यज्ञ

श्री स्वामी सोमानन्द जी सरस्वती की अध्यक्षता में संचालित वैदिक साधनाश्रम गुरदासपुर में इस बार सामवेद पारायण महायज्ञ बड़े समारोह से ता० १५ जून से आरम्भ हो २१ जून रविवार पूर्णाहुति तक सम्पन्न हुआ। इस यज्ञ में दीनानगर से श्री पं० विद्यासागर जी शर्मा, श्री पं० वीरभद्र जी, सभा से पं० त्रिलोकचन्द्र शास्त्री, पं० जगत-राम जी वस्तीराम जी पधारे थे। प्रातः सायं दोनों समय यज्ञ तथा प्रचार चलता था। नगर से बड़े सम्भ्रांत परिवारों के सज्जन तथा माताएं बहिन यज्ञ में भाग लेती रहीं। श्रद्धा का कोई ठिकाना था। डी. ए. वी. स्कूल के मान्य प्रिंसिपल श्री ला० मुल्खराज जी तथा सारा स्टाफ. आर्य समाजें दोनों पाठशाला शकरगढ़ स्कूल गुरुकुल समाज तथा स्टेशन व मंडी के मान्य सज्जन बड़ी श्रद्धा का परिचय देते रहे। पं. विद्यासागर जी, पं. वीरभद्र जी के मीठे प्रवचन मंत्र पाठ चलते रहे। पं. जगत् राम जी के गीत व वस्ती राम जी की ढोलकी खूब चलती थी। पूर्णाहुति पर तो कमाल ही था। भण्डारा खूब चला। भारी भीड़ ने यज्ञ प्रसाद तथा भोजन किया। श्री बलदेव सिंह जी भण्डारी, श्री सखाभा जी दिन शान्ति जी आदि का प्रबन्ध बड़ा सुन्दर था। इस यज्ञ से सारा सप्ताह नगर में अमृत का प्रवाह चलता था। श्री स्वामी सोमानन्द जी के उत्साह से तथा स्वामी प्रकाशानन्द जी उपाध्यक्ष की कोशिश से बड़ी ही रौनक थी। ग्राम की जनता ने भी खूब श्रद्धा का परिचय दिया। बधाई।

सभा को उन्नत करें

(पृष्ठ ३ का शेष)

प्रत्येक कार्य में पूर्णरूप से हाथ बटायें।

आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब तथा डा. ए. वी. कालेज स्कूलों ने देश में हर क्षेत्र में बड़ा भारी काम किया तथा अब भी कर रहे हैं। जब भारत के स्वराज्य का इतिहास लिखा जायगा तो इन दोनों के सेवा कार्यों का स्वर्णाक्षरों में विशेष उल्लेख किया जाएगा। सारी संस्थाओं तथा समाजों का कर्तव्य है कि पूर्ववत् सभा को अपना सहयोग देते रहें और भी अधिक देवें। एक आवश्यक बात हम अपनी सभा तथा दयानन्द कालेज कमेटी के मान्य अधिकारियों से विशेष रूप से निवेदन करना चाहते हैं वह है सभा के तथा डी.ए.वी. कालेज कमेटी के विशाल कार्यों की अपना इतिहास लिखाना। जब से डा. ए. वी. कालेज निर्मित हुआ तथा जब से आर्यप्रदेशिक सभा की स्थापना हुई है तब से लेकर इन दोनों ने कितने महान् काय किए हैं। परन्तु इतिहास दोनों का नहीं लिखा गया। अतः पुराने और विशेषज्ञों से इनका अलग २ इतिहास लिखाया जाए। इस ओर भी ध्यान देना है। प्रभु सभा को उन्नत करने की सब शक्ति प्रदान करें।

—त्रिलोक चन्द्र

किसी ने सच कहा है कि महा-पुरुषों के विचारों को तत्कालीन जनता अपनी अदूरदर्शिता के कारण पूर्णतया समझ नहीं पाती और फलतः उनका प्रबल विरोध होता है, किन्तु कालांतर में उनके विचार सत्य सिद्ध होते हैं और आने वाली पीढ़ियां उन्हें सिर आंखों पर रख कर अपनाती हैं।

यही सिद्धांत स्वामी दयानन्द जी के विषय में शतप्रतिशत चरितार्थ होता है, उन्होंने देश की दुर्दशा से प्रभावित होकर राज-नीतिक, सामाजिक अथवा धार्मिक क्षेत्र में जो विचार प्रकट किये, उन्हें ही कार्यरूप में परिणत करने के लिये आज देश के बड़े बड़े नेता प्रयत्न कर रहे हैं।

देश का प्रतिनिधित्व करने वाली सब से बड़ी संस्था कांग्रेस है, जिस ने स्वराज्य प्राप्ति के लिये असख्य बलिदान किये। महर्षि ने भी सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि स्वराज्य के बिना कोई राष्ट्र उन्नति नहीं कर सकता। श्री जवाहरलाल नेहरू का नाम भारत को स्वतन्त्र कराने वाले मुख्य कर्णधारों की प्रथम पंक्ति में आता है, सन् १९२९ में जब आप को कांग्रेस का अध्यक्ष चुना गया तो आप ने पूर्ण स्वराज्य की मांग का प्रस्ताव पारित कराया। जिन के दिल में देश का दर्द होता है, वे स्वामी दयानन्द की भांति सुखसम्पत्ति के जीवन को लात मार कर कांटों का छत्र सिर पर रख लेते हैं। नेहरू जी का सारा परिवार इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। अनेक वर्षों के संघर्षों तथा आंदोलनों के पश्चात् हमें स्वतन्त्रता मिली और हम ने अपना संविधान बनाया। उस में श्री नेहरू आदि नेताओं ने जिस दृष्टिकोण को अपनाया उस में स्वामी दयानन्द की आत्मा बोलती है। 'हिन्दी हो राष्ट्रभाषा होने की अधिकारिणी है। अस्पृ-

श्री नेहरू और आर्य सिद्धांत

(श्री प्यारे लाल जी बेरी प्रिंसिपल साईंदास ए. एस. हायर सकण्डरी स्कूल, जालन्धर)

✻✻✻✻✻✻✻✻

श्यता राष्ट्र की जड़ों की घातक है। स्त्री शिक्षा तथा स्त्रियों को समान अधिकार दिये बिना देश प्रगति नहीं कर सकता। देश का प्रत्येक नाग-रिक योग्यता व कर्म के अनुसार उच्च से उच्च पद प्राप्त कर सकता है इस में लिंग, जाति, धर्म आदि किसी प्रकार की बाधा उपस्थित नहीं कर सकते फलतः आज हमारे देश में विभिन्न धर्मों, विभिन्न वर्गों तथा विभिन्न जातियों के पुरुष एवं स्त्रियां, राज्यपाल, राज-दूत, स्वास्थ्य मन्त्री आदि पर नियुक्त हैं। ये बातें ऋषि दयानन्द के सिद्धान्तों की सर्वतोमुखी विजय का प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

देश के दुर्भाग्य के कारण आज पण्डित नेहरू हमारे मध्य से भौतिक शरीर के विचार से सदा के लिये चले गये हैं किन्तु उनकी आत्मा सदा हमारे साथ रहेगी। स्वर्गवासी होने से दस वर्ष पहले २१ जून १९५४ को उन्होंने अपनी वसीयत लिख रखी थी। उस वसी-यत को पढ़ने से भी पता चलता है कि उनके हृदय में आर्य सिद्धान्तों के प्रति कितनी श्रद्धा तथा सम्मान था। वे उस में लिखते हैं—

"मैं नहीं चाहता कि मेरी मृत्यु के बाद मेरे लिये कोई श्राद्ध आदि धार्मिक रस्में की जाएं। मेरा इन रस्मों में विश्वास ही नहीं और फिर इन्हें रिवाज मात्र के लिये करना पाखण्ड के साथ साथ अपने आपको और दूसरों को धोखा देना है। मेरी यह अभिलाषा है कि मेरे शरीर को जलाया जाय और यदि मेरी मृत्यु भारत से बाहिर हो तो मेरी भस्म भारत लाई जाय।"

मैं चाहता हूं कि भारत के लोग शीघ्रातिशीघ्र अन्ध विश्वासों से छुटकारा पावें........

मेरी अस्थियां और भस्म का भाग प्रयाग संगम में प्रवाहित किया जाय, लेकिन बड़ा भाग विमान में रख कर आकाश से खेतों में गिरा दिया जाय, जहां किसान खेती करते हैं।

मैं किसी धार्मिक भावना के कारण अपनी भस्म का कुछ भाग गंगा में प्रवाहित करने के लिये नहीं कह रहा। यह केवल इस लिये कि गंगा के साथ मुझे बचपन से लगाव है। गंगा के साथ भारत की पुरातन स्मृतियां, आशंकाएं, गीत, विजय, पराजय सब कुछ सम्बद्ध हैं। गंगा हमारी सभ्यता और संस्कृति की प्रतीक है, वह मेरी भस्म को भारत के चरण धोने सागर तक पहुंचा देगी।'

इन पंक्तियों में जहां श्री नेहरू की देश के प्रति असीम तथा अगाध श्रद्धा भक्ति टपकती है, वहां आर्य सिद्धांतों के प्रति आस्था की झलक भी स्पष्ट दिखाई देती है। हमारा तो विश्वास है कि आज भारत तो क्या विश्व का प्रत्येक मानव ऋषि के सिद्धांतों से प्रभावित है और उस का ऋणी है। किसी कवि ने सत्य कहा :—

दयानन्द तेरे गुण सभी गा रहे हैं
कोई मुंह से माने न माने वह जाने।
मगर शिक्षा तेरी सभी पार हे हैं॥

——

किसी व्यक्ति को हानि पहुं-चाना स्वयं हानि उठाने की अपेक्षा बुरा है।

न्याय यह चाहता है कि किसी को हानि न पहुंचायी जाये।

केन्द्रीय आर्य स्त्री सभा चण्डीगढ़ का चुनाव

प्रधाना—श्रीमति सुशीला जी शर्मा, उपप्रधाना—श्रीमति लज्जा-वती जी शर्मा, मन्त्रिणी—श्रीमति विद्यावती जी चोपड़ा, उपमन्त्रिणी—श्रीमति राजरानी जी आहूजा, कोषा-ध्यक्ष—श्रीमति राजरानी जी बहल, निरीक्षिका—श्रीमति पुष्पा-वती जी चोपड़ा।

विद्यावती चोपड़ा

आवश्यक सूचना

१. आर्य कुमार परिषद् के प्रधान पूज्य स्वामी वेदानन्द जी सरस्वती के नेतृत्व में श्री ब्रह्मचारी राम स्वरूप जी व प्रो० रघुबीर सिंह जी के सहयोग से आर्य कुमारों का शिक्षण शिविर ३ से ७ जौलाई तक बूढा खेड़' (जिला संगरूर) में लग रहा है। यह स्थान पानीपत जीन्द रेलवे लाईन पर एक रेलवे स्टेशन है। सभी तैयारियां पूर्ण हो चुकी हैं। अब तक ८० सैनिकों के नाम आ चुके हैं। जो युवक भाग लेना चाहें वे शीघ्र ही अपने नाम भेज दें।

२. अपनी आर्य कुमार सभाओं का विवरण भी भेजने की कृपा करें।

राम प्रकाश एम.एस. सी. (आनर्ज)
चण्डीगढ़

गुरुकुल वैदिक आश्रम, वेदव्यास

पानपोस, जि० सुन्दरगढ़

वाग्वर्धिनी सभा का चुनाव

प्रधान—श्री देशपाल जी दीक्षित, मन्त्री—श्री सुखदेव जी छात्र, कोषाध्यक्ष—श्री देवव्रत जी छात्र, पुस्तकाध्यक्ष—श्री प्रेमसुख जी छात्र।

मन्त्री—सुखदेव

आर्यसमाज का सत्संग

प्रसिद्ध दार्शनिक डा० दीवान चन्द जी ने महात्मा हंसराज जी की जीवन कथा ने महात्मा जी की जीवन कथा में महात्मा जी हृदय स्पर्शी दृष्टान्त दिया है। आपने लिखा है कि लाहौर में मैंने अपना मकान बदला और योग से अगले रविवार ही साप्ताहिक सत्संग में देर से पहुंचा। सत्संग के पश्चात् महात्मा जी ने अंग्रेजी लोकोक्ति कि **Nearer the church farther from god** अर्थात् जितना मन्दिर के निकट हो उतना ही परमात्मा से दूर होता जाता है। स्मरण रहे कि डा० दीवानचन्द जी का नया मकान आर्यसमाज मन्दिर के अधिक निकट था।

क्या हममें अपने सत्संग के लिए इतना प्रेम, तड़प और आकर्षण है? क्या यह सत्य नहीं कि सत्संग संध्या के समय हमारे घरों में रेडियो के गन्दे सिनेमा गीत एकाग्रचित्त होकर सुने जाते हैं। महात्मा जी का इतना सत्संग प्रेम हमें आत्म निरीक्षण के लिए झंझोड़ता है। मैं तो व्यक्तिगत रूप में जिस दिन एक भी समय संध्या से चूक जाता हूं तो अपने आप हृदय मे ग्लानि और हीनता को अनुभव करता हूं।

वैदिक शिष्टाचार

गत लेख में मान्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज के चरित्र की एक झांकी दी थी। वैदिक शिष्टाचार क्या है इसको समझने के लिए आर्यसमाज के महान विभूति तपोधन महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज के जीवन की एक घटना पढ़िए। १९६२ के जून मास के दूसरे सप्ताह में दिल्ली जब कभी जाता हूं तो श्रद्धेय महात्मा जी के दर्शन का अवश्य प्रयास करता हूं। मैं आर्य समाज नया बांस में रात ठहरा। दिल्ली में यही समाज महात्मा

आर्यसमाज की कहानियां (३)

(ले०—श्री राजेन्द्र 'जिज्ञासु' दयानन्द कालेज शोलापुर)

जी का स्थान है। मेरे पास बिस्तर नहीं था। जून मास में इसकी दिल्ली में आवश्यकता भी क्या। श्री पं० आशानन्द जी ने मुझे कहा कि मुझ से एक दरी बिछाने के लिये ले लो। मैं ने उन का धन्यवाद किया और कहा कि आवश्यकता नहीं। रात्रि को देर से महात्मा जी पधारे। मैंने भी उठ कर नमस्ते की और आशीर्वाद लिया। महात्मा जी ने कुशलक्षेम ले कर भोजन तक सब कुछ पूछा। जब आप ने नंगी चारपाई पर मुझे सोते देखा तो बार बार न करने पर भी दरी चादर दी और तकिया बनाने के लिये भी एक वस्त्र दिया।

हम अपने पूज्य सन्त के जीवन की घटना को पढ़ कर सोचें कि क्या घर आये अतिथि को प्रेम पूर्वक जल भी पूछते हैं? समाजों के अधिकारी और सदस्य सोचें कि क्या उपदेशकों को चार पाई बिस्तर समय पर देते हैं?

इसी समय की बात है कि जब प्रातः मैं स्नान के पश्चात् उक्त समाज के दैनिक सत्संग में बैठा तो महात्मा जी ने वहां बैठे हुए अपने एक सिख श्रद्धालु को बुलाया (वह सज्जन अब कट्टर वैदिक धर्मी हैं) और कुछ बात कर के कहीं प्रोग्राम पर चल दिये। मैं समझ गया कि महात्मा जी ने मेरे प्रातराश का संकेत किया है। मैं यज्ञ संध्या के बाद और वेद उपदेश से पूर्व इसी कारण उठ कर चल दिया। वह सज्जन उठे और बोले कि हम ने तो आप विद्वानों से ही सुना है कि शान्ति पाठ से पूर्व न उठना चाहिए पर आप उठे हैं तो दूध आदि जो चाहें सो ले कर जायें। मैं ने धन्यवाद पूर्वक न की तो वह बोले कि महात्मा जी का आदेश है कि बिना खिलाए मत जाने दें। अब तो स्पष्ट हो गया कि जिस बात से बचने के लिये उठा वहीं हुई। विवश हो कर फिर यही कहा कि अच्छा सत्संग के बाद लूंगा।

आर्यजन! यह है उन महापुरुषों का चरित्र जिन के तप से आर्य समाज जीवित है अन्यथा घर में घुसे पदलोलुप और राजनैतिक दलों के दूत पूत जो 'समाज सेवा' कर रहे हैं वह सब को सुविदित ही है।

जिन का जीवन बोलता है :-

महानुभावो! हम साधारण मनुष्यों की वाणी बोलती हैं पर महापुरुषों का जीवन बोलता है। इस का प्रमाण महापुरुषों की जीवन की एक एक घटना है। इस तथ्य को स्पष्ट करने के लिये वीतराग ज्योति पुंज स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज के जीवन का एक उदाहरण लीजिए। श्री स्वामी वेदानन्द जी महाराज प्रधान पंजाब प्रांतीय आर्य कुमार परिषद् ने एक बार हिसार में सुनाया कि पश्चिमी पंजाब के मुलतान या मुजफ्फरगढ़ जिला की किसी ग्रामीण-समाज के उत्सव पर स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज पधारे। वहीं के किसी सज्जन ने स्वामी वेदानन्द जी को यह घटना सुनाई। स्वामी सर्वदानन्द जी वहां प्रायः प्रति वर्ष आया करते थे। वहां के नवयुवकों की वैदिक धर्म के प्रति श्रद्धा और कर्मठता साधु को खींच लेती थी।

नवयुवकों ने समाज मन्दिर के नवनिर्माण के लिये योजना बना कर धन संग्रह आरम्भ किया और स्वामी जी से उत्सव के अन्तिम भाषण में अपील करने को कहा। कोई पौन घण्टा समय रखा गया। महात्मा अपनी ही मस्ती में प्रवचन करते गये। नर-नारी आबाल वृद्ध जीवन रस का पान करते हुए मस्ती से झूम रहे थे पर मन्त्री महोदय और समाज के कर्मठ कार्य कर्त्ताओं के प्राण निकल रहे थे। कारण?

कारण यह था कि बाबा आध घण्टा बोल चुके फिर भी धन देने के लिये एक शब्द तक न कहा। कार्यकर्त्ता लोग सोच रहे थे कि हमें पता होता कि साधु इतना निर्मोही और अलिप्त है तो हम किसी साधारण वक्ता से ही अपील करवा लेते कुछ तो आता। अब क्या करें। उत्सव का अन्तिम भाषण भी तो यही था। बना बनाया खेल बिगड़ गया। धीरे धीरे ४० मिनट भी बीत गये। मन्त्री की जान निकलने लगी। बस पूछो न क्या बीती। जब भाषण समाप्त होने लगा तो साधु बोला लोगो यह है वैदिक धर्म और यह है आर्यसमाज का सन्देश यदि इस के अनुसार यहां के आर्यवीर कार्य करते हैं तो लोक उपकार के लिये इन को मन्दिर निर्माण के लिये धन देना तुम्हारा कर्त्तव्य है यदि यह अच्छे कार्य नहीं करते तो धन मत दो।

> आप हिन्दी साहित्य के उदीयमान लेखक हैं। अल्पकाल में ही भारत के अनेक प्रान्तों में विशेषतः पंजाब में पर्याप्त ख्याति पा चुके हैं, आपकी रचनाओं में स्वाभाविकता तथा निडरता का गुण विशेष रूप से पाया जाता है। आर्यजगत् में 'आर्यसमाज की कहानियां' नामसे उनकी तीसरी धारा प्रवाहित हो रही है। आर्यसमाज के महान समुद्र में गोता लगाने के बाद प्राप्त हुए सच्चे मोती हैं। जो कि इतिहास लेखकों के लिए नवीन खोज पूर्ण सामग्री है। —व्यवस्थापक

प्रस्तुत पत्र श्री पं० सत्यदेव जी विद्यालंकार प्रो० डी० ए० वी० कालिज जालंधर द्वारा लिखा हुआ हमें प्राप्त हुआ है। यह पत्र आर्य समाज के सिद्धांतों को लक्ष्य करके लिखा गया है आर्य समाज की आंखें खोलने वाला है। लेखक के अंतर्गत विचारों से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

· व्यवस्थापक

मान्य संपादक जी,

कुछ दिन हुए जालन्धर में पूज्य नेता, स्वर्गीय नेहरू जी के अस्थि कलश का जलूस निकला। लोगों ने, बड़ों और छोटों ने श्रद्धांजलि अर्पित की। समाचार पत्रों में पढ़ा कि अस्थियों का फूलों का ससम्मान प्रवाह त्रिवेणी-संगम इलाहाबाद में होगा। भस्मी देश की विभिन्न नदियों में प्रवाहित की जायगी तथा कुछ भस्मी विमानों द्वारा भिन्न २ स्थानों पर बिखरा दी जायगी। जहां उनका दाह संस्कार हुआ वहां एक सुन्दर समाधि-मन्दिर का निर्माण होगा, उस स्थान का नाम भी शान्ति वन रख दिया गया है।

पूज्य नेहरू जी महान थे, देश के प्राण थे तथा पिछले ३०-३५ वर्षों से देश की नौका के कर्णधार थे। देश-देशान्तर में उनके विचारों और व्यक्तित्व का प्रभाव था। उनका जितना भी सम्मान किया जाय, थोड़ा है। उनके प्रति जन जन की जो श्रद्धा है वह अनेक रूपों में प्रगट हुई है और अनेक रूपों में अभी अनेक वर्षों तक प्रगट होती रहेगी। उनके नाम से मार्ग बनेंगे, संस्थाएं बनेंगी, पुस्तकालय बनेंगे और सम्भवतः उनके और गांधी जी के विचारों के अध्ययन के लिए विश्व विद्यालय भी बनेंगे।

जो सम्मान एक महान नेता और दिव्य विभूति को प्राप्त होना चाहिए वह उन्हें अवश्य प्राप्त होगा इस में कोई सन्देह नहीं।

इस सम्पूर्ण प्रसंग को दो बातें मन से आती है जो विचारार्थ प्रस्तुत करता हूं। चाहता हूं कि और लोग भी इस पर अपने विचार दें।

पहली बात तो यह है कि पूज्य गांधी जी की मृत्यु के बाद उनके दाह-दग्ध के स्थान पर राजघाट नाम से समाधि-मन्दिर का निर्माण हुआ। नियमित रूप से तीर्थ स्थान की तरह पूजा दर्शन आदि का भी प्रबन्ध किया गया। आज पूज्य नेहरू जी के दाह-स्थान पर भी ऐसा ही होने जा रहा है। यह बात किस धर्म, शास्त्र या विचार के अनुसार है। हिन्दू धर्म के साधु सन्तों की समाधियां बनती हैं। वहां उनका शरीर गाड़ा हुआ होता है। ईसाई और मुसल्मान भी इसी प्रकार मकबरे या समाधि स्थान बनाते हैं। पर केवल दाह कर्म के स्थान को जहां अस्थि शेष या भस्म शेष कुछ भी नहीं पवित्र मान कर पूजा करना, पुष्पहार चढ़ाने, समाधि मंदिर बनाने तथा वार्षिक समारोह करने की यह एक नई पारटी चलाई जा रही है जिस का धार्मिक या सामाजिक कोई आधार नहीं। हमारे आर्य-नेता संसद में या बाहर इस बात का विरोध क्यों नहीं करते। क्यों कानों में तेल डालें वे इस अन्ध-विश्वास की नई परम्परा को देख रहे हैं।

एक और बात भी विचारणीय है। कोई भी आर्य समाजी भाई, छोटा या बड़ा भस्मी पर या दाह स्थान पर फूल माला कैसे चढ़ा सकता है? नमस्कार कैसे कर सकता है?

दूसरी बात मैं बहुत नम्रता से यह कहना चाहता हूं कि हम को और हमारे जैसे लाखों, करोड़ों व्यक्तियों को नेहरू जी से व्यक्तिगत रूप में परिचय प्राप्त करने का अवसर नहीं प्राप्त हुआ। वे लोग धन्य हैं जिन्हें यह सुअवसर प्राप्त हुआ। उनके लिखे संस्मरण पढ़कर मन में भावों का आवेश उठता है।

पर हमारे लिए और हमारे जैसे अनगिनत भारतीयों के लिए पिछले १७ वर्षों से नेहरू जी गवर्नमैंट थे। हमें उनके दर्शन, उनका परिचय, उनके प्रतिनिधि, डिप्टी कमिश्नर द्वारा, पोलीस अफसर द्वारा, टैक्सों के अफसरों द्वारा, सीमेण्ट, लोहा, कोयला, खांड आदि का प्रबन्ध करने वाले अफसरों के द्वारा होता था और हो रहा है।

बात बहुत कड़वी है पर तथ्य है। इस के लिए कौन उत्तरदायी है, ये अफसर या और कोई जिसने नेहरू जी के दिव्य और मधुर रूप-स्पर्श को हम तक, जनता तक नहीं पहुंचने दिया। जो कुछ जनता तक गवर्नमेंट का, नेहरू जी की गवर्नमेंट का रूप पहुंचा वह क्या मधुर है? न्यायमय है?

ये कुछ शब्द मैं विचार के लिए आर्य-हिन्दू जनता के सामने उपस्थित करना चाहता हूं। आशा है अन्य भाई भी विचार लिख भेजेंगे। भवदीय

सत्यदेव विद्यालंकार

प्रादेशिक सभा की आवश्यक सूचना

सभा की सुप्रसिद्ध चिमटा मंडली श्री राजपाल जी व मदन मोहन जी देहली गुड़गावां, राजिस्थान आदि समाजों में प्रचार रहे हैं। समाजें जहां इनके सुमधुर प्रचार से लाभ उठावें, वहां वेद प्रचार के लिए पूर्ण सहयोग दें।

निःशुल्क प्रकाशन की कृपार्थ नए बालकों का प्रवेश

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के विद्यालय विभाग में नए बालकों का प्रवेश अब हो रहा है। पढ़ाई १६ जुलाई से प्रारम्भ हो जाएगी। विद्याधिकारी उत्तीर्ण कर लेने के पश्चात बालक किसी भी कालेज में प्रवेश पा सकते हैं। प्रवेशार्थ प्रार्थना पत्र तथा नियमावली आचार्य गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय जिला सहारनपुर से मंगाए जा सकते हैं।

धर्मपाल विद्यालंकार

(स० मुख्याधिष्ठाता)

शुभ विवाह

आर्य समाज टोहाना के पुराने समासद महाशय चाननराम जी की सुपुत्री विमल का शुभ विवाह रामां मंडी निवासी चौधरी दिलाराम जी के सुपुत्र बाबू जगदीशचन्द्र जी बी. ए. एल. एल. बी. वकील के साथ टोहाना में १४ जून को पूर्ण वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ। पंडित मुरारीलाल जी शास्त्री ने संस्कार कराया और श्री बृजलाल गुप्त प्रधान आर्य समाज टोहाना के वर-वधु को आशीर्वाद दी।

सूचना

अमृतसर आर्यसमाज बाजार श्रद्धानन्द प्रतिदिन रात्रि के ८ बजे से १० बजे तक श्री पं० भगत राम जी भजनोपदेशक के भजनों के पश्चात श्री पं० रामकिशोर जी जी वैद्य शिक्षाप्रद वेदों की मनोहर कथा कर रहे हैं पधार कर लाभ उठावें।

बलदेव कृष्ण

पुरोहित

जहां भोग वहां रोग,

जहां पाप वहां सोग।

दयानन्द कालेज शोलापुर की अभूतपूर्व सफलता

इस वर्ष शिवाजी विश्वविद्यालय कोल्हापुर की प्री-डिग्री (पदवीपूर्व) परीक्षा में दयानन्द कालेज शोलापुर के छात्र श्री अरविन्द शिवराम बुरटे ने ८२०१ अंक प्राप्त करके सर्व-प्रथम स्थान पाया है। कालेज के १२ विद्यार्थियों ने ७० प्रतिशत से न उत्तीर्ण हुए हैं। इस अभूतपूर्व सफलता से दक्षिण में दयानन्द संस्थाओं को अद्वितीय यश प्राप्त हुआ है। बी. एस. सी. (ऑनर्स) में ग्यारह विद्यार्थी प्रथम श्रेणी में है। स्मरण रहे कि इन्टर में भी इसी कालेज का विद्यार्थी प्रथम रहा है।

एम. ए. हिन्दी में दयानन्द महाविद्यालय की कुमारी सुनन्दा रानडे सारे विश्वविद्यालय में द्वितीय स्थान प्राप्त किया है। इस महान सफलता का श्रेय प्राध्यापकवर्ग, विद्यार्थियों एवं आदर्श प्रबन्ध करने वाली डी. ए. वी. कालेज कमेटी को है।

दयानन्दब्राह्म महाविद्यालय हिसार

पहली जुलाई को खुल रहा है। यह विद्यालय एक उपदेशक विद्यालय है जिनमें छात्रों को सब प्रकार की सुविधा नहीं दी जाती है, अध्ययनव्यवस्था बहुत सुन्दर होगी। प्रवेश ३१ जुलाई तक होगा।

प्रवेशार्थी जुलाई के अन्त तक आने का प्रयत्न करें। शिक्षा प्राप्ति के पश्चात् आजीविकार्थ भी स्नातक को प्रचार कार्य के लिए वैतनिक रूप से नियुक्त किया जाता है।

—निवेदक ज्ञानचन्द आचार्य

डी. ए. वी. हाई स्कूल कमाही देवी (होशियारपुर) का शानदार परिणाम

मिडल में ६६ छात्र बैठे, ६२ पास हुए। प. ६४.२% मैट्रिक में ५८ में से ५० पास हुए। प.८६.२% इस शानदार सफलता का सेहरा स्कूल के मुख्याध्यापक श्री आर. पी. सेठी तथा उनके योग्य स्टाफ के सिर पर ही है। इलाके में प्रसन्नता की लहर दौड़ गई है।

—घनीराम कंवर मन्त्री
लोकल कमेटी

दयानन्द-वचनामृत

'माता-पिता ऐसा प्रयत्न सदा करते रहें जिससे उनकी सन्तान जितेन्द्रिय बने विद्या प्रेमी हो और सत्संग में रुचि रक्खे। उनमें रोने खीजने का स्वभाव न उत्पन्न होने दें, लड़ने झगड़ने की आदत न डालें। उनको सत्यमार्गी और निर्भय वीर बनावें। धैर्य रखना, सदा सुप्रसन्न वदन रहना आदि शुभ गुणों का विकास उनमें जैसे भी हो, करावें।'

(स्वामी सत्यानन्द जी)

आर्य हाईस्कूल नाभा उन्नति के पथ पर

यह विद्यालय डी. ए. वी. कालेज मैनेजिंग कमेटी देहली के तत्वावधान में चल रहा है। ला० रामनिरंजन जी खोसला के स्वर्ग सिधारने के कारण इस की गति-विधियों में कुछ शिथिलता दिखाई देने लगी थी। परन्तु श्री लाला चिमनलाल जी M. L. C. की बुद्धिमत्ता के कारण शीघ्र परिस्थितियों में सुधार कर दिया गया है अब जिस समय से श्रीमान लाला देशराज जी भाटिया ने इस विद्यालय का मुख्याध्यापक पद सम्भाला है इस की गतिविधियों में नवजीवन सा दिखाई देने लगा है। हैडमास्टर साहिब के सतत प्रयत्नों का ही यह शुभ परिणाम है कि इस वर्ष मैट्रिक परीक्षा का परिणाम आपके इस प्यारे विद्यालय का 86% से भी ऊपर रहा है। कई विषयों का परिणाम तो 90-95 शत प्रतिशत आया है। इस सारी उत्तमताके श्रेय स्कूल के मुख्याध्यापक लाला देशराज जी भाटिया व उनके सहयोगी योग्य स्टाफ को है। आशा है भविष्य में आप इस से भी अधिक उन्नति करते रहें।

सच बोलना सब प्रकार अच्छा है पर दोष लगाने में बुरा है।

बाहिर की सजधज से कोई व्यक्ति भलामानस नहीं कहा जा सकता।

नवीन छात्रों का प्रवेश

गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर में नवीन ब्रह्मचारियों का प्रवेश आरम्भ है। गुरुकुल में आधुनिक विषय इंगलिश, विज्ञान, गणित, भूगोल, इतिहास आदि के साथ-साथ प्राचीन धर्मशास्त्र, संस्कृत साहित्य, दर्शन, वेदादि के पठन की समुचित व्यवस्था है। अपने छात्रों के प्रवेश कराने के इच्छुक मुख्याधिष्ठाता कार्यालय से पत्र व्यवहार करें। योग्य छात्रों को विशेष सुविधा दी जा सकेगी।

भवदीय—मुख्याधिष्ठाता
गुरुकुल ज्वालापुर

हिंसा और अहिंसा का वैदिक स्वरूप

(पृष्ठ २ का शेष)

अपितु दोनों को साथ-साथ जीवन में स्थान दें।

अतः हमारे वर्तमान देश के शासकों को भी चाहिए कि वर्तमान संकट काल में केवल अहिंसा का परित्याग कर हिंसा के शस्त्र से दुरांत चीनियों का मुंह तोड़ कर देश की स्वाधीनता को सुरक्षित करें तथा सब से प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य बरते। इसी में मानव-मात्र का कल्याण है और तभी हम देश-जाति-राष्ट्र को उन्नत करने में समर्थ हो सकते हैं। अतः मानव मात्र को चाहिए कि वह अपने हृदय में देश-जाति एवं राष्ट्र की रक्षा का व्रत ग्रहण करके अपने जीवन में हिंसा और अहिंसा को साथ-साथ स्थान देकर अपने जीवन को कृतकृत करें। इसी में देश की सुरक्षा एवं स्वाधीनता सुरक्षित है और मानव समाज का कल्याण है।

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित, मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर.

टेलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक २८) २६ आषाढ २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०— १२ जुलाई १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

त्व न ऊती

हे परमेश्वर! आप हमारे सब के ही ऊती-रक्षक हैं। नाना प्रकार के कष्टों संकटों में, विपत्तियों की काली घटाओं में आप ही हमारे रक्षक हैं। उस समय आप के सिवाय और हमारी रक्षा कर भी कौन सकता है—

त्वमित न आप्यम्

और आप ही हमारे, हे जीवन धन प्रभो! आप्यम् प्राप्त करने के योग्य हैं। जिस के आप बन जाते हैं, उसे संसार में दूसरी और किसी भी वस्तु की आवश्यकता नहीं रहती। जिस के आप उसे क्या ताप?

मा न इन्द्र परावृणक

हे इन्द्र! हमें अपने से परे न हटाओ। अच्छे हैं या जैसे हैं, हैं तो आप के अमृत पुत्र। इस लिए आप से दूर रहकर हमें सुख शान्ति कहाँ मिल सकती है। अपनी अमृत वर्षा हम पर करते रहें।

अथर्ववेद

वेदामृत

ओ३म् उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहित्वमिष्टापूर्त्ते सं सृजेथा मयं च। अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत। यजु० अ० १५ मं० ५४

अर्थ—हे अग्निदेव! तू (उद्बुध्यस्व) प्रकट हो प्रदीप्त हो और (प्रतिजागृहि) जाग जा (त्वम्) तू (इष्टापूर्त्ते) यज्ञ याग आदि इष्ट और धार्मिक स्थान आदि बन वाना पूर्त्त (संसृजेथाम्) बनाओ (अस्मिन्) इस (सधस्थे) यज्ञ स्थान में (अधि उत्तरस्मिन्) उत्तम स्थान में विश्वे देवाः) सारे देव विद्वान (यजमानः च) और यजमान (सीदत) बैठें।

भाव :—हे यज्ञ के अचेतन अग्निदेव! मैंने तुझे स्थापित किया है। अब प्रकाशित हो जा, जागने की अवस्था को प्राप्त हो, जाग पड़। मैं इष्ट और पूर्त रूपी दोनों प्रकार के शुभ कर्म करने लगा हूं। यज्ञ से दोनों शुभ कार्य होते हैं। यज्ञ की यह भूमि बड़ी विचित्र है, बड़ी सुन्दर है, यह स्थान विशेष है। मैंने इष्ट और पूर्त रूपी शुभ कामों को करने के लिए अग्नि को स्थापित किया है। इस लिए हे विश्व देवों! सारे यज्ञ के प्रेमी विद्वान सज्जनो! दिव्य गुणों वाले देवो! तथा यज्ञ जैसे शुभ कार्य को करने वाला यजमान भी यहां यह वेदी पर बैठे। यज्ञ श्रेष्ठतम कर्म है। इस से बढ़ कर और कोई उत्तम कर्म नहीं है। यज्ञ की वेदी पर सब लोग बैठें। यज्ञ जैसे शुभ कर्म से सारे प्यार करते रहें—सं०

ऋषि दर्शन

सर्वानन्द वर्धकम्

वही परमेश्वर सब को सुख आनन्द के देने वाला है। इस संसार के चमकीले पदार्थों में अस्थायी सुख है, जो आज सुख है वही कल दुःख बन जाता है, पर ब्रह्म की भक्ति का सुख आनन्द तो गूंगा को मीठे स्वाद के समान वर्णन से परे है।

सर्वमिन्द्रिया दिकं जितम्

ऐसी स्थिति में सारी इन्द्रियां जीती जाती हैं तब ये जीवन को भटकाने, भरमाने की शक्ति नहीं रखती। उस काल में मनुष्य इन्द्रिय जित तथा मनोजित बन कर भक्ति पथ पर चलने लगता है।

सन्तोष : धर्मानुष्ठानेन

सन्तोष क्या है? जीवन में धर्मका, विशेष लाभदायक नियमों, मर्यादाओं का अनुष्ठान पालन करना सन्तोष कहलाता है। लोभ आदि में प्रवृत्त न होना परिश्रम के बाद मिली वस्तु पर प्रसन्न होना ही सच्चा सन्तोष कहलाता है।

भाष्य भूमिका

अध्यक्ष—श्री संतोषराज जी सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

अवतारवाद का सिद्धांत

(ले०—श्री जयदेव जी आर्य M.A. बेलरखा (संगरूर)

(गतांक से आगे)

अत: ईसाईयों के इतिहास में कोई ऐसा समय नहीं आया जबकि उन्होंने किसी अत्याचारी के अत्याचारों को इस लिए चुपचाप सहा हो कि ईसा स्वयं उनकी रक्षा करेगा। यद्यपि पोप की भ्रांति के कारण प्रोटेस्टैंट आदि मत चले अवश्य परन्तु वे ईसाइयत से पृथक् नहीं हुए। न ही उनका कोई ईसा के अतिरिक्त धर्म-गुरु बना और न ही बाइबिल से दूसरा कोई धर्म-ग्रन्थ। लगभग यही अवस्था यवनों की रही। उन्होंने कुरान के आदेश को मानकर सदा ही समस्त विश्व में इस्लाम के विस्तार के लिए सिरतोड़ प्रयत्न किया और मानवता के इतिहास में रोमांचकारी अत्याचार ढाए। इन के परिणाम स्वरूप हम देखते हैं कि विश्व में हिन्दुओं की अपेक्षा ईसाई तथा यवनों की संख्या कई गुणा बड़ी है और राष्ट्र के पश्चात् राष्ट्र ईसाई तथा यवन मत के मानने वाले हैं। इसके विपरीत हिन्दुओं के सोमनाथ जैसे प्रसिद्ध मन्दिर तोड़ डाले गए और हिन्दु पुजारी राजपूतों को यही सान्त्वना देते रहे कि हनुमान, शिव या भैरव आदि देवता आकर यवनों को मार डालेंगे अत: तुम्हें लड़ने की आवश्यकता नहीं। परिणाम स्वरूप उनकी भयंकर पराजय हुई और भारत का सम्मान मिट्टी में मिल गया। जिस अवतार वाद के सिद्धांत के मानने का इतना व्यापक प्रभाव पड़ा हो, उसकी वास्तविकता के विषय में विचार करना हमारा कर्तव्य है। यत: लोग अवतारवाद के सिद्धांत को वेद-शास्त्र सम्मत समझते हैं अत: पहले इसी मान्यता की जांच की जाएगी।

अवतारवाद का सिद्धांत अशास्त्रीय

धर्म का आदि स्रोत वेद है। वेद में ईश्वर का अज (उत्पन्न न होने वाला), अजर, अमर, रग रेशे व नाड़ी के बन्धन से मुक्त, शुद्ध, पवित्र, शरीर रहित, व्रण तथा शोक आदि से रहित बतलाया गया है। यजुर्वेद के अ० ४० में मन्त्र संख्या आठ इस प्रकार है :—

स परि अगात् शुक्रं अकाय
अव्रणं अस्नाविरं शुद्धं अपापविद्धं।
कवि: मनीषी परिभू: स्वयम्भू:
याथातथ्यत: अर्थान् व्यदधात्
शाश्वतीभ्य: समाभ्य: ॥

यहां ईश्वर को काया व्रण एवं स्नायु आदि से रहित बतलाया गया है और (परि अगात्) सब ओर पहुंचा हुआ भी कहा गया फिर यजु: ३२/३ में कहा है :—

न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम
महत् यश:

अर्थात् उस परमेश्वर की कोई प्रतिमा (उपमा, मूर्ति, समानता आदि) नहीं है। शिवपुराण और लिङ्गपुराण में स्पष्ट कहा है कि शिव ने अपने गण वीरभद्र द्वारा अवतारों में श्रेष्ठ नृसिंहावतार की खाल तक खिंचवा ली। इस से शिव की शक्ति विष्णु की अपेक्षा कहीं अधिक सिद्ध होती है। चौबीसों अवतार विष्णु के हुए हैं अत: वे सब शिव से निर्बल सिद्ध हुए। अत पुराणों का अवतार धारण करने वाला विष्णु वेद के उस अप्रतिम ईश्वर से सर्वथा पृथक् है जिस के गुणों का वर्णन उपरिलिखित तथा अनेक अन्य मन्त्रों द्वारा वेद में हुआ है। स्थाना भाव से इस विषय पर अधिक मन्त्र उपस्थित न कर के आगे विचार करना उपयक्त समझते हैं।

(क्रमश:)

वेद-मन्त्र

ओ३म् य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते यस्य प्रशिषं देवा: यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्यु: कस्मै देवाय हविषा विधेम।

शार्दूल विक्रीडित वृत्तम्—

दाता आप पुनीत ज्ञान-धन औ शारीरिकी शक्ति के।
विद्वान् लोग विशुद्ध ध्यान करते एकान्त में भक्ति हैं।
वेदादेश-स्वरूप शासन प्रभो! प्रत्यक्ष हैं मानते।
वेदाज्ञा-अनुकूल आश्रय धरें आजन्म ही मुक्ति है॥

द्रुतविलम्बित वृत्तम्—

निगम-शासन की अवहेलना।
मरण-जन्म दुखादय-हेतु है॥
तव सुशासन का शुचि मानना।
विमल भक्ति तथा सुख-हेतु है॥
सकल ज्ञान प्रदायक हे पिता!
तव सुभक्ति सदा प्रभु हे! करें॥
विमल वेद-ऋचा सुख दायिनी।
वदन से तव ही स्तुति को करें॥

विद्यासागर शर्मा, दयानन्द मठ दीनानगर

मधुकलश ७

१. सुख के अन्दर दुनियां भर ने मेरा ही गुणगाया
यूं ही आदर दिया हमेशा यूं ही शीश झुकाया
विपदों का आभारी हूं मैं तो मन से लेकिन
मेरा असली रूप इन्हीं ने मुझे सदा दिखलाया

२. सही बात को सिर दे कर भी साथी पूरा करना
हर दिन मौत कहां आती है एक रोज है मरना
ऊंचा है उद्देश्य अगरचे तब तो ठीक नहीं है
आलस कर के समय गंवाना जने जने से डरना

३. कदम देख कर रखे हमेशा, पिये छान कर पानी
राग द्वेष से दूर रहे जो बोले सच्ची वाणी
ज्ञानवान होने का दावा सब करते हैं लेकिन
जिस का मन से शुद्ध आचरण उस को समझो ज्ञानी

क्रमश:

—विजय 'निर्बाध'

आर्यसमाज गोरे गांव (बंबई)

(चुनाव) श्री दीवानचन्द जी साहनी प्रधान, श्री नरसिंहदेवजी मसीजा—उपप्रधान, श्री रघुनाथ वर्मा—मन्त्री श्री वेदमित्रजी—उपमन्त्री, श्री प्रभु-दयाल जी मलिक—कोषाध्यक्ष, श्री सत्यवीर गुलाटी—लेखा निरीक्षक, श्री शिव प्रसाद राम शर्मा—पुस्तकाध्यक्ष।

रघुनाथ—मंत्रीसमाज

सम्पादकीय–

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२१, १२ जुलाई १९६४ [अंक २८

आर्यसमाज आंदोलन चलाये

आर्यसमाज एक प्रगतिशील संस्था है। इस ने समय २ पर सारे देश का नानाविध सुधार के कार्यों में सफल नेतृत्व किया और अब तक भी करता आ रहा है। जब कभी किसी बुराई को पनपता देखता है, किसी मर्यादा का उल्लंघन होता हुआ सीमा से अधिक अनुभव करता है, या सामाजिक, राष्ट्रिय जीवन को खोखला करने वाली किसी व्यापक बीमारी का विषम होता हुआ देखता है, तत्काल सामने आकर सब को सचेत करता है। उसे रोकने के लिए बड़ा से बड़ा बलिदान करने में आगे रहता है। आर्यसमाज का सारा इतिहास इस बात का साक्षी है। यह बात इसके जीवन की परम्परा में शामिल रही है। बुराई के साथ कभी समझौता नहीं किया। अविद्या, अन्याय, अभाव को समूल नष्ट करने में इस ने दीक्षा ली हुई है।

भारत के विभाजन के बाद नैतिक रूप से राष्ट्र का जीवन ऊंचा नहीं उठ सका। नीचे की ओर ही गिरा है कई ऐसी बातें हुई जिन को देखकर लज्जा से सब का सिर नीचे झुक जाता है। आकाश बेल के समान ये बुराईयां बढ़ती गई हैं। जनता की जीवनदशा गिरती जा रही है। इन बुराईयों में, जिन के द्वारा भारत गिरावट के मार्ग पर बढ़ता जा रहा है, शराब का स्थान पहिला है। शराब का पीना किसी भी सम्प्रदाय के धर्मग्रन्थ में अच्छा नहीं माना गया किसी धर्मस्थान पर शराब नहीं पी जा सकती। शराब पीने वाले को किसी महापुरुष ने भी नहीं सराहा। वाममार्ग के सिवाय शराब की कहीं भी पूजा नहीं होती। किन्तु कितना अचम्भा है कि जिस शराब को सभी बुरा समझते हैं, उसी का इतना व्यापक प्रचार होता है। आज समाचारपत्रों में लिखा मिलता है कि अमुक नगर में, जिले में शराब की खपत आगे से सौ प्रतिशत, दो सौ प्रतिशत बढ़ गई है। इस की इतनी मांग है कि पूर्णरूप से सप्लाई नहीं की जा सकती। जब से पंजाब में शराब सस्ती हुई है खुल गई है, तब से लोगों की अवस्था कहां से कहां तक पहुंच गई है। ऐसा प्रतीत होता है कि सारा समाज शराबी बनता जा रहा है। सरकार को तो पैसे चाहिएं, चाहे उन को प्राप्त करने के लिए कैसे भी देश को गिराने वाले साधन क्यों न अपनाने पड़ें। देश को चाहे शराबी बनाना पड़े पर पैसे मिलने चाहिए। यह मनोवृत्ति है। जनता को रोकने के स्थान पर शराब सस्ती करके उनको शराबी बनाया जा रहा है। मनुष्यों के साथ २ अब तो लड़कियां स्त्रियां भी शराब पीने लगी हैं। यह है हमारे देश के जीवन का चित्र।

यह भयंकर बीमारी है, करोड़ों रुपये व्यय किये जा रहे हैं, परिवार के परिवार खोखले हो रहे हैं। इसे यदि जल्दी न रोका गया तो समाज का सारा ढांचा बिगड़ जाएगा। आर्य समाज के सिवाय और किसे कहा जाये। एक मात्र यही एक संस्था है जो इस प्रकार की व्यापक बुराई के साथ टक्कर ले सकता है। इस के विरुद्ध आंदोलन कर सकता है। अन्य सारे बहते प्रवाह में बहना जानते हैं पर आर्य समाज ऐसे प्रवाह को रोकना जानता है। आर्य समाज इस बढ़ती हुई बुराई को रोकने के लिए शीघ्र कोई सक्रिय पग उठाने का आयोजन करे। देश का धन, तन, स्वास्थ्य तथा चरित्र इस शराब के भारी कुएं में डूबता जा रहा है, इसे जल्दी बचाने की आवश्यकता है। विशेष सम्मेलन बुला कर इस के लिए एक आवश्यक समिति बना कर आंदोलन के द्वारा शराब रोकने का कार्य शीघ्र आरम्भ कर दिया जाये। —त्रिलोक चन्द्र

समाज की त्रिमूर्ति

राष्ट्र की सब से बड़ी राजनीति संस्था कांग्रेस को वर्तमान समय में तीन विशेष नेता मिले हैं जिन्हें जनता की ओर से त्रिमूर्ति के नाम से पुकारा जाने लगा है। इन में कांग्रेस के प्रधान श्री काम राज जी, प्रधानमन्त्री श्री शास्त्री जी तथा गृहमन्त्री श्री गुलजारी लाल नन्दा जी हैं। पूर्व प्रधान मन्त्री स्वर्गीय पण्डित जवाहर लाल जी नहरू के बाद इस त्रिमूर्ति ने कुछ विशिष्ट कार्य इन दिनों ऐसे कर दिये हैं, जिन की ओर अपने सारे देश का ध्यान आकर्षित हो गया! लोगों के मन में बहुत आशावाद की लहर पैदा होने लगी है। भारत के भावी जीवन की प्रगति तथा अनके समस्याओं को सुलझाने की दिशा में जनता की आंखें इन तीनों के सांझे प्रयत्नों की ओर टिकी हुई हैं। भगवान करे कि राष्ट्र के ये तीनों प्यारे नेता भारत को आगे २ ही आगे ले चलें तथा मातृभूमि का मानमस्तक ऊंचा करते रहें। प्रभु इन को दीर्घायु एवं स्वास्थ्य देवें।

भारत के सारे समाजों में आर्य समाज का स्थान बहुत ऊंचा है। यह सारे विश्व का सुधार करने के लिए स्थापित किया गया है। कृण्वन्तो विश्वमार्यम्—सारे जगत् को आर्य, श्रेष्ठ, आस्तिक और पवित्र जीवन का बनाना इस का कर्तव्य माना गया है। इतने थोड़े समय में जितना महान् काम आर्य समाज ने किया, और कौन कर सकता है? नाना प्रकार के क्षेत्रों में इस के विशाल काम को देख कर सब का श्रद्धा से मस्तक झुक जाता है। इस के महान् विविध क्षेत्री धार्मिक, राष्ट्रिय, सामाजिक एवं शिक्षा सम्बन्धी सर्वजनीन कामों को सुन कर अमेरिका से गत दिनों एक प्रोफैसर पति और पत्नी भारत में आर्य समाज की पूरी २ जानकारी लेने के लिए आये हुए थे। आर्य समाज अपने रूप में स्वयं ही एक आन्दोलन है, महान् संगठन तथा सार्वदेशिक आन्दोलन है।

समाज में बड़े २ तपस्वी, त्यागी, बलिदानी हुए हैं जिन का जीवन और कार्य एक प्रकाशस्तम्भ के समान है। इस समय भी जितने महान् नेता, तपस्वी, शिक्षाविशारद विद्वान, अनुभवी गण्यमान्य [illegible]

आर्य समाज के [illegible]

किसी के [illegible]

कुछ समय [illegible]

विशाल [illegible]

प्रकट [illegible]

[illegible]

आर्यसमाज के प्रसिद्ध विद्वान् शास्त्रार्थ केसरी, सुन्दर वक्ता तथा लेखक, आर्यप्रादेशिक सभा हित-चिन्तक पूर्व महामहोपदेशक श्री ठा० अमरसिंह जी आर्यपथिक के हापुड़ समाज में दर्शन किये। आज कल वहां के उपदेशक विद्यालय के आप आचार्य हैं। मैंने कभीर सभा के लिए समय देने की प्रार्थना की। बोले कि मैं तो हूं ही सभा का। पूज्य महात्मा हंसराज जी का मैं अनन्य भक्त हूं। सभा मेरी है मैं सभा का हूं। जब भी सभा मुझे याद करेगी सेवा के लिए प्रस्तुत हूं। मैंने लेखों के लिए प्रार्थना की। प्रसन्नता से स्वीकार करके आरम्भ का लेख लिख भी दिया। आर्य जगत में आपकी अब लेखमाला क्रम से आरम्भ हो जायगी। मान्य ठाकुर जी समाज के रत्न हैं। अब समाज में इन के समान केवल समाज के बारे में चिन्तन व कार्य करने वाले हैं भी कितने। मैं तो वह दिन देखना चाहता हूं जब ठाकुर जी अपनी आर्य प्रादेशिक सभा में साहित्य के कार्य पर बैठे होंगे—सं०

आर्य समाज में गीता क्या कभी वेद का स्थान ले लेगी ?

(ले०—श्री पं. अमरसिंहजी आर्य पथिक आचार्य उपदेशक, विद्यालय हापुड़)

आर्य समाज और वेद का अति घनिष्ट सम्बन्ध है। आर्य-समाज का साधारण से साधारण उपदेशक और भजनोपदेशक भी अपने प्रचार में अनेक बातों का खण्डन उनको वेद विरुद्ध बता कर करता है और जिन का मण्डन करता है उनको वेद के अनुकूल

जी जानता

कि हम

विरुद्ध

राजी

में

किनारे तक ही नहीं भूमण्डल में जहां कोई भी आर्य समाजी है वह विद्वान हो वा अविद्वान् थोड़ा पढ़ा वा कुछ भी पढ़ा हो पर सन्ध्या यदि करता है तो वेद मन्त्रों द्वारा ही करता है।

हवन—सर्वत्र आर्य समाजियों के यहां अग्निहोत्र वेद मन्त्रों द्वारा होता है। यहां तक कि जिन को देवनागरी लिखनी नहीं आती है उन्होंने तामिल, टैलगू, कन्नड़, मलयालम, गुजराती, उर्दू और सिन्धी तक में सन्ध्या और स्वन के मन्त्र छपवा लिये हैं अनपढ़ों ने सुनकर याद कर लिये हैं।

स्तुति प्रार्थनोपासना स्वस्ति वाचन शान्ति प्रकरण सभी वेद मन्त्रों द्वारा होते हैं।

गर्भाधान से ले कर अन्त्येष्ठि पर्यन्त सारे संस्कार वेद मन्त्रों से आर्यमात्र के घरों में होते हैं।

वेदों से यज्ञ करने की प्रथा भी आर्य समाज में पर्याप्त मस्त पा रही है। सम्पूर्ण यजुर्वेद से तो प्रायः यज्ञ होते ही हैं सामवेद, अथर्ववेद और ऋग्वेद पारायण यज्ञ भी बहुत होते हैं और चारों वेद से चतुर्वेद पारायण यज्ञ भी आर्यसमाजों और आर्यसमाजियों के घरों में होते हैं।

आर्यसमाजी सोते से उठता हुआ वह मन्त्र बोलता है सोते समय वेद मन्त्र बोलकर सोता है। स्नान करता हुआ वेद मन्त्र बोलता है और भोजन से पहिले वेद मन्त्र बोलता है।

पौराणिकों के भी बहुत विवा-हादि के आगे पीछे के कार्य आर्य समाजियों में होने लगे हैं पर अन्तर यह है कि पौराणिक पण्डित उन कृत्यों को कल्पित श्लोकों से कराते हैं आर्यसमाजी उनको भी वेद मन्त्रों द्वारा ही कराते हैं।

सीधे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि वैदिक धर्म ही आर्य समाज है और आर्यसमाज ही वैदिक धर्म है। आर्यसमाज और वैदिक धर्म ऐसे ही हैं जैसे साठ और तीन बीसी। आर्यसमाज से वेदों को पृथक नहीं किया जा सकता और वेदों से आर्यसमाज को।

कहीं भी कोई आर्यसमाजी सन्ध्या, हवन, स्तुति ,प्रार्थनोपासना स्वस्तिवाचन शांतिपाठ आदि गीता के श्लोकों से नहीं कराता।

गर्भाधान से जन्म तक और जन्म से मरण तक कोई संस्कार गीता के श्लोकों से नहीं होता है।

कोई भी यज्ञ यहां तक कि श्री कृष्ण जन्माष्टमी का यज्ञ भी गीता के श्लोकों से नहीं होता है।

कोई भी आर्यसमाजी अपने आपको वैदिकधर्मी बताने के स्थान में गीताधर्मी नहीं कहता है।

आर्य समाजों में कहीं भी 'वैदिक धर्म की जय' के स्थान में 'गीता धर्म की जय' नहीं बोली जाती है।

एक भी आर्यसमाजी ऐसा नहीं है जो वेद को 'ईश्वरीय ज्ञान मानने के स्थान में गीता को ईश्व-रीय ज्ञान' मानता और कहता हो।

आर्यसमाज में अधिक नहीं कुल दो तीन सज्जन ऐसे हैं जिनको काम काज तो कुछ है नहीं और हिन्दी अच्छी लिखनी आती है खाली बैठे बिठाये बिना कुछ किये कराये अपने आप को आर्यसमाज के सब से अधिक हितैषी और उनके अद्वितीय शुभचिन्तक तथा सब से अधिक विचार शील प्रकट करने के लिये आर्य सामाजिक पत्रों में इस प्रकार के भय उत्पादक लेख लिखते रहते हैं कि—हाय! आर्य-समाज में गीता वेद का स्थान ले रही है। एक सज्जन ने तो यह भी लिखा है कि—उपनिषद् भी धीरे २ वेद का स्थान लेती जा रही हैं।

पता नहीं ये लोग किस संसार में रहते हैं।

क्या कभी २ कोई उपदेशक अपने व्याख्यान में अन्य बहुत से वेद मन्त्रों स्मृतियों रामायण और महाभारत आदि के श्लोकों के साथ गीता का भी श्लोक बोलता देता है इतने साल से ही गीता ने वेद का स्थान ले लिया ?

अथवा कहीं २ कोई उपदेशक आर्य सिद्धांतों की पुष्टि में गीता का श्लोक बोलें या उसकी कथा कह दें तो गीता वेद के स्थान में आ गई !

आर्य समाज के साप्ताहिक और दैनिक सत्सङ्गों में भी सत्यार्थ-प्रकाश की कथा होती है तो सत्यार्थ प्रकाश ने वेदों का स्थान ले लिया है क्या ?

(क्रमशः)

हार्दिक वधाई

आर्य प्रादेशिक सभा के पूर्व कार्य कर्ता प्रधान श्री लाला इन्द्रसेन जी के सुपुत्र श्री विपिन बाबू के घर पुत्र रत्न ने जन्म लिया है। हम आर्य जगत् की ओर से श्री ला. इन्द्रसेन जी को उन के पोते के शुभ जन्म पर आन्तरिक वधाई देते हुए प्रिय शिशु के स्वास्थ्य एवं दीर्घायु होने की भगवान से मंगल कामना करते हैं। सारे परिवार को हार्दिक वधाई। सम्पादक

तन्त्रों की घृणित शिक्षा

(ले० श्री पिंडी दास जी ज्ञानी अमृतसर)

****

'पुराणों तथा तन्त्रों का घनिष्ठ सम्बन्ध' शीर्षक लेख के अन्त में जो कि आर्य जगत के चार अंकों में छप चुका है, हम ने प्रतिज्ञा की थी कि 'इस से आगे के अंकों में हम तांत्रिक शिक्षा का दिग्दर्शन कराते हुए पाठकों से निवेदन करेंगे कि ऐसी घृणित शिक्षा देने वाले ग्रन्थों को त्याज्य समझें।' उसी प्रतिज्ञा पूर्ति के लिये निम्न लिखित पंक्तियां पाठकों की भेंट करते हैं।

वस्तुतः तन्त्रों की घृणित शिक्षा ने आर्य जाति को कलङ्कित करने में सब से अधिक भाग लिया है इसी शिक्षा के कारण जादू, टोने, गंडे और तावीज़ों का प्रचार हुआ, इसी की दया से भूत, प्रेत, पिशाच, डाकिनी, शाकिनी, पैशाचिनी आदिओं की भ्रम मूलक उपासना आरम्भ हुई, इसी की कृपा से मद्य, मांस, पशु-बलि, नर-बलि आदि कुकर्मों का प्रचार हुआ और इसी के परिणाम स्वरूप जनता का आचार, विचार और आहार दिन प्रतिदिन भ्रष्ट होता चला गया। अस्तु। नीचे तान्त्रिक शिक्षा के नमूने उद्धृत किये जाते हैं—

वेद से विमुख करने की नीति

निर्वीर्याः श्रौत जातीया विषहीनोरगा इव।

सत्यादौ सफला आसन् कलौ ते मृत इव॥

महानिर्वाण तन्त्र उल्लास २ श्लोक १५

अर्थात्—जिस प्रकार विष हीन सांप प्रभाव हीन हो जाता है उसी प्रकार वैदिक मन्त्र वीर्य रहित हो गये हैं। सत्युग, त्रेता तथा द्वापर युगों में वे सफल थे, परन्तु अब कलियुग में मृतक समान हैं।

वेद शास्त्र पुराणानि सामान्य गणिका इव।

इयन्तु शाम्भवी विद्या गुप्ता कुल वधूरिव॥

कुलार्णव तन्त्र उल्लास ११ श्लोक ८५

अर्थात्—वेद, शास्त्र तथा पुराण साधारण गणिका की तरह (हीन) हैं और यह जो तन्त्र विद्या है वह नव-विवाहित वधू के समान गोपनीय है।

वाम मार्ग की श्रेष्ठता

कौलिकैः सह संसर्गं वसति कुल साधुषु।

कुर्वन्ति कौल सेवां ये न हि तान्बाधते कलिः॥

महानिर्वाण तन्त्र उल्लास ४ श्लोक ६२

अर्थात—जो लोग कौलिकों (वाममार्गी आचार्यों) के साथ रहते हैं, उनके निकट बसते हैं, उनकी सेवा करते हैं, उनके प्रति कलियुग कोई बाधा नहीं डाल सकता।

सत्यं सत्यं पुनः सत्यं सत्यं सत्यं मयोच्यते।

विनाह्यागम मार्गेण कलौ नास्ति गतिः प्रिये॥

महानिर्वाण तन्त्र उल्लास ८ श्लोक ७

अर्थात—हे प्रिये! (पार्वती) मैंने यह सत्य कहा है, सत्य कहा है और पुनरपि सत्य कहा है, सत्य कहा है सत्य कहा है कि आगम मार्ग (वाम मार्ग) के बिना कलियुग में कोई गति ही नहीं है।

ब्रह्मेन्द्रादित्य रुद्रादि देवता मुनि राक्षसाः।

कुल-धर्म-परा देवि मानुषेषु तु का कथा॥

महानिर्वाण तन्त्र उल्लास २ श्लोक २५

अर्थात्—हे देवि! (पार्वती) ब्रह्म, इन्द्र, सूर्य शिवादिक देवता, मुनि एवं राक्षस सब के सब वाम मार्ग का अनुष्ठान करते हैं तो फिर मनुष्यों का तो कहना ही क्या?

पन्थास्तु दक्षिणः श्रेष्ठो वाम श्रेष्ठतरो मतः।

यस्तु वामं विजानाति स एव परमो गुरुः॥

मेरु तन्त्र प्रकाश २० श्लोक ७५

अर्थात्—दक्षिण पन्थ श्रेष्ठ है, परन्तु वाम मार्ग उस से भी श्रेष्ठ है। जो वाम मार्ग को जानता है वही गुरु है।

श्री कृष्णो वाम मार्गेन्तु फाल्गुनाय उपदिष्टवान्।

मेरु तन्त्र प्रकाश २० श्लोक ८२

अर्थात्—श्री कृष्ण ने फाल्गुन (अर्जुन) को वाम मार्ग का उपदेश दिया।

वाम मार्गे द्रुतं सिद्धिः

मेरु तन्त्र प्रकाश २२ श्लोक ८४

अर्थात्—वाम मार्ग द्वारा शीघ्र सिद्धि की प्राप्ति होती है।

श्री प्रासाद परामन्त्रो जिह्वाग्रे यस्य तिष्ठति।

तस्य दर्शन मात्रेण श्वपचोऽपि विमुच्यते॥

कुलार्णव तन्त्र ३-२८

अर्थात्—इस (कुलार्णव) तन्त्र में वर्णित 'प्रासादपरा मन्त्र' जिसकी जिह्वा पर हो, उस साधक के दर्शन मात्र से चांडाल भी मुक्त हो जाता है।

श्री प्रासाद परामन्त्रं शतमष्टोत्तरं जपेत्।

मुच्यते ब्रह्महत्यादि महापापैश्च पंचभिः॥

कुलार्णव तन्त्र ३-३०-८

अर्थात्—जो साधक प्रासादपरा मन्त्र का एक सौ आठ बार जप करे, वह ब्रह्महत्यादि पांच महापापों से छूट जाता है। (क्रमशः)

समाज की त्रिमूर्ति

(पृष्ठ ३ का शेष)

समाज को भी त्रिमूर्ति की आवश्यकता है, जिन का प्रायः सारा समय सेवा में अर्पण हो। समाज में बड़े बड़े महापुरुष हैं जिन पर सबको श्रद्धा है। यदि ऐसे तीन सज्जन तनिक ध्यान देवें तो महान् उपकार हो सकता है। पंजाब में अपनी सभा के मान्य महानुभावों से नम्र निवेदन है कि आर्य प्रादेशिक सभा को उसी उच्चस्तर पर पहुंचा देवें जो इस की परम्परावती हुई है। समय देने वाले सज्जन मिले हैं, प्रसन्नता है ऐसी त्रिमूर्ति बन जाये जो इसे समुन्नत करे।

—त्रिलोक चन्द्र

सभा के अन्तरंग तथा प्रतिष्ठित सदस्य

आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब जालन्धर के मान्य अधिकारियों के नाम प्रकाशित हो चुके हैं। अन्तरंग सभा के निर्वाचित तथा प्रतिष्ठित सदस्यों के नाम १९६४ के लिए नीचे प्रकाशित किये जाते हैं :—

महात्मा आनन्द स्वामी जी।
महात्मा देवी चन्द जी होश्यारपुर।
कैप्टन केशवचन्द जी अमृतसर।
श्री ज्ञानी पिण्डी दास जी अमृतसर।
श्री प्रिं० देशराज जी महाजन जालन्धर।
श्री प्रिंसिपल चमनलाल जी दयानन्द कालेज अमृतसर।
प्रिं० भगतराम जी अमृतसर।
प्रिं० प्यारेलाल जी बेरी जालन्धर
प्रिं० चमनलाल जी अम्बाला
ला० ज्ञानचन्द जी त्रेहन जालन्धर
ला० शंकरदास जी त्रेहन जालन्धर
श्री बलदेवराज जी एम. सी. जालन्धर
वैद्य विद्यासागर जी अमृतसर
श्री एम० सी० जौली अम्बाला छावनी
श्री आशुराम जी चण्डीगढ़
श्री सन्तराम जी लुध्याना
,, हरवंस लाल जी मुजरिस दसूहा
,, प्रों. वेद प्रकाश जी जालन्धर
,, ओं प्रकाश जी बग्गा होश्यारपुर
,, राज कुमार जी देहली
,, पं. दुर्गा दास जी आर्य गजट जालन्धर
,, हरबंस लाल जी बसीकलां होश्यार पुर
,, मातु राम, जी अम्बाला
,, अमर सिंह जी अम्वाला
,, डा. मिलखी राम जी अम्बाला छावनी
,, बलदेव सिंह जी भंडारी एडोकेट गुरदास पुर
,, यश जी पूर्व शिक्षा मन्त्री मिलाप
,, कृष्ण लाल जी पुरानी मण्डी जम्मू
,, दरबारी लाल जी नई देहली
प्रिंसिपल सूर्यभानु जी उपकुलपति कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी
,, पं. दयाराम जी शास्त्री देहली
,, बृजलाल जी गुप्ता टोहाना
,, ला. परमेश्वरी दास बहल चंडी गढ़
,, गणेशदास जी करनाल शहर
प्रिं. ज्ञान चन्द जी हिसार

आर्यसमाज, पुराणी मण्डी, जम्मू

आर्य कन्या महाविद्यालय के शानदार परिणाम

जम्मू—आर्य कन्या महाविद्यालय जम्मू के परीक्षाफल गत वर्षों की भांति इस वर्ष भी बहुत शानदार रहे। मिडिल का नतीजा शत प्रतिशत रहा। मैट्रिक में ४१ में ४० लड़कियां पास हो गई। एक लड़की ने ६०४ नम्बर लेकर यूनिवर्सिटी की १५वीं पोजीशन प्राप्त की। ४० में से ३ फस्ट डवीजन और २६ ने सैकंड डवीजन प्राप्त की। शानदार नतीजा के लिये महाविद्यालय के योग्य प्रबन्धकर्ता श्री मुलखराज जी गुप्ता तथा प्रिंसीपल व सटाफ बधाई के पात्र हैं।

आर्यसमाज के पुराने महारथी [illegible] भक्त श्री ला. शंकरदास जी चल बसे

आर्यसमाज के जीवन पर्यन्त अनथक कार्यकर्ता, गम्भीर व मौन तपस्वी, ऋषि दयानन्द के अनन्य भक्त, वेद प्रेमी श्री ला० शंकरदास जी त्रेहन जालन्धर का ता० ८ जुलाई बुधवार प्रातः चार बजे उनकी अपनी कोठी लाजपत नगर कालोनी जालन्धर में ८५ वर्ष की आयु में स्वर्गवास हो गया। आप ने सारा जीवन आर्यसमाज की सेवा में बिता दिया। जालन्धर किला समाज के इस समय प्रधान थे। इस समाज के, जालन्धर के अपने स्कूल, कालेज तथा आर्य प्रादेशिक सभा के कार्य में आप ने बड़ी भारी सेवा की। आप एक तपस्वी थे। बड़े ही सौम्य तथा गम्भीर थे। इस वृद्धावस्था में किला समाज के विशाल मन्दिर के निर्माण में रात दिन एक किये हुए थे। समाज के पुराने स्तम्भों में थे। आपके चले जाने से आर्यसमाज, सभा तथा संस्थाओं को बड़ी क्षति पहुंची है। सारे नगर में आपके जीवन का प्रभाव था। सरकारी सर्विस में रहते भी समाज का बड़ा कार्य करते थे। महात्मा हंसराज जी के बड़े भक्त थे। धीरे २ हमारी समाज के पुराने महारथी जा रहे हैं। अभी उस महारथी प्रभावशाली स्वर्गीय मास्टर नन्दलाल जी के निधन के अश्रु सूखने न पाये थे कि ला० शंकरदास जी चले गये।

अर्थी का जलूस लाजपत नगर में उनके निवास स्थान से आरम्भ होकर जी. टी. रोड से होता हुआ नगर के श्मशान-घाट पर पहुंचा। अर्थी के साथ मोडल टाउन जालन्धर, साईं-दास हायर सैकंड्री स्कूल के अध्यापक, तथा जालधर नगर के प्रतिष्ठित नागरिक थे। दाह संस्कार विद्वद् मंडली ने पूर्ण वैदिक रीति से कराया। श्मशान घाट पर ही शोक सभा की गई जिस में उनकी आत्मा की सद्गति के लिए प्रार्थना की गई। तथा सारे परिवार के साथ गहरी समवेदना प्रकट की गई।

आर्य जगत के ग्राहकों से निवेदन है कि जिन ग्राहकों का मई मास का चन्दा नहीं आया वे शीघ्र ही अपना २ चन्दा एम० ओ० से भेज कर कृतार्थ करें।

दयानन्द विश्वविद्यालय की स्थापना

भारतवर्ष तथा बाहर की लगभग एक हजार डी० ए० वी० आदि आर्यसमाज की शिक्षण संस्थाओं को एक सूत्र में बांधने के उद्देश्य से भारत के सर्वोच्च न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश डा० मेहरचन्द जी महाजन के प्रधानत्व में दो वर्ष पूर्व 'सार्वभौम आर्यसमाज शिक्षण संस्था परिषद' का संगठन किया गया था। देहली में सन ६२ में उसके पहले सम्मेलन का सब से महत्वपूर्ण निश्चय एक दयानन्द विश्वविद्यालय की स्थापना था। ऋषि की जन्मभूमि टंकारा तथा शिक्षा स्थली मथुरा की तुलना में, ऋषि को निर्वाण भूमि तथा केन्द्रीय स्थान होने के अतिरिक्त अजमेर के प्रसिद्ध दयानन्द कालेज के पास पर्याप्त भूमि आदि होने के कारण देहली में तारीख २२ सितम्बर' ६३ को दयानन्द विश्वविद्यालय स्थापना समिति तथा परिषद की कार्यकारिणी की सम्मिलित बैठक में सर्व सम्मति से निश्चय किया गया कि यह विश्वविद्यालय अजमेर में स्थापित किया जाय। पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र, राजस्थान तथा देहली आदि के उपस्थित प्रतिनिधियों ने इस निर्णय का उत्साहपूर्वक स्वागत करते हुए उसे पूरा करने में सहायता देने का आश्वासन दिया। तारीख १३ जनवरी, १९६४ को डो० ए० वी० कालेज, कानपुर में परिषद के दूसरे सम्मेलन द्वारा सर्व सम्मति से इस निश्चय का समर्थन हो जाने के बाद अब उसे कार्यान्वित करना हम सब का पवित्र कर्त्तव्य हो जाता है।

यह स्पष्ट है कि केवल प्रस्ताव और निर्णय मात्र से इतना बड़ा कार्य पूरा नहीं हो सकता इसलिए 'दयानन्द विश्वविद्यालय कोष' की योजना बनाई गई है। हमें विश्वास है कि डो० ए० वी० आदि हमारी शिक्षण संस्थाएं तथा देश व बाहर को आर्यसमाजें, आय समाए तथा भाई बहन धन सग्रह से हमारा हाथ बटायेंगे। जसा पूर्व राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद, राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन और जवाहरलाल जी नेहरू आदि अनेक प्रसिद्ध व्यक्तियों के सम्मेलन को प्राप्त संदेशों से स्पष्ट है, आर्य जगत के अतिरिक्त प्रायः सर्वत्र आर्यसमाज व उसकी शिक्षण संस्थाओं की अनेकांगी सेवाओं तथा आधुनिक भारत के निर्माण में ऋषि दयानन्द के महान योगदान के प्रशंसक व समर्थक हैं, उन सब की उदार सहायता भी इस पवित्र कार्य में मिलेगी, यह मानकर हम चलते हैं।

धन संग्रह का काम नियमित रूप से हो इसके लिए रसीद के रूप में देने के लिए छपे हुए टिकट या कूपन प्रकाशित कियि किये गये हैं जो अवैतनिक मन्त्री, श्री दत्तात्रेय वाब्ले, प्रिंसिपल दयानन्द कालेज अजमेर से प्राप्त हो सकते हैं। शिक्षण संस्थाओं में विद्यार्थियों की संख्या के आधार पर प्रारम्भिक स्कूल में एक रुपया, हाई स्कूल में तीन रुपया तथा कालेजों में पांच रुपये प्रति विद्यार्थी के आधार पर चन्दा हो सकेगा, ऐसा लक्ष्य रखा गया है। डा० ए० वी० के पुराने विद्यार्थियों तथा अन्य व्यक्तियों के लिए बड़ी राशि के रसीद कूपन हैं जिन में दान दाता का नाम लिखने के लिए खाली स्थान है। चन्दे का प्रत्येक पैसा बैंक में जमा होगा, इसलिए दयानन्द विश्वविद्यालय कोष (Dayanand University Fund) इस शीर्षक से पंजाब नेशनल बैंक, मिन्टो रोड, देहली तथा स्टेट बैंक अजमेर में दो खाते खोले गये हैं। देहली में डा०मेहरचन्द जी महाजन तथा लाला हंस राज गुप्त और अजमेर में राजस्थान विधान सभा के अध्यक्ष श्री राम निवास जी मिर्धा तथा प्रिंसिपल वाब्ले के नाम से ये हिसाब हैं, अतः सारा एकत्रित चन्दा बैंकों में सीधा या उन में से किसी एक के द्वारा या उन्हें सूचना दे कर इस कोष में भेजना चाहिए।

दयानन्द विश्वविद्यालय के स्थापना का कार्य जहां बड़े महत्व का है, वहां कठिन भी है किन्तु हमें पूर्ण विश्वास है कि आप सब की सहायता व सहयोग से वह अवश्य पूरा होगा और इसी निश्चय से हम दस लाख की यह पहली अपील कर रहे हैं। वर्तमान अध्यापकों तथा विद्यार्थियों के अतिरिक्त डो० ए० वी० आदि इन संस्थाओं में शिक्षा लेकर हजारों विद्यार्थी जीवन के अनेक क्षेत्रों में सफलता और प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके हैं, हमें पूर्ण आशा है कि वे अपनी पुरानी मातृ संस्थाओं के प्रतीक और उस के इस गौरवपूर्ण विकास में अधिक से अधिक सहायता देंगे, क्योंकि यह प्रस्तावित दयानन्द विश्वविद्यालय न केवल उन के पुराने स्कूलों व कालेजों को प्रगति का द्योतक ही होगा बल्कि देश के शिक्षा क्षेत्र में उनकी दीर्घ व उपयोगी सेवा एक महान स्मारक भी बनेगा।

हम और देश के शिक्षा व सार्वजनिक क्षेत्र में कार्य करने वाले अनेक प्रमुख व्यक्ति यह अनुभव करने लगे हैं कि जिन उद्देश्यों और आदर्शों को लेकर लड़के लड़कियों की इन हजारों संस्थाओं को स्थापना की गई थी, स्वाधीन भारत को वर्तमान आवश्यकताओं के अनुरूप उन को ढाल कर और अधिक उपयोगी बनाने का कार्य इस प्रकार के विश्वविद्यालय के स्वतन्त्र वातावरण ही में सम्भव है। उदाहरण के लिए संस्कृत के भविष्य का प्रश्न हम ले सकते हैं। आर्य शिक्षण संस्थाओं की परम्परा के अनुसार यह दयानन्द विश्वविद्यालय न केवल स्त्रियों तथा शूद्रों आदि सब के लिए व्यवहार में भी संस्कृत ज्ञान के भंडार के द्वार खोल सकेगा बल्कि उसे ऋषि दयानन्द द्वारा बताये मार्ग द्वारा धार्मिक व सामाजिक क्रांति और बौद्धिक स्वतन्त्रता का आधार बनाने में भी समर्थ होगा। राष्ट्रभाषा हिन्दी के विकास तथा प्रचार के इलावा पूर्व तथा पश्चिम के समन्वय और प्राचीन तथा आधुनिक ज्ञान के उपयुक्त सामञ्जस्य का आवश्यक कार्य भी इसी प्रकार विश्वविद्यालय कहीं अधिक सफलता से कर सकता है।

इस प्रकार दयानन्द विश्वविद्यालय की यह योजना शिक्षा सुधार और विकास दृष्टि से महत्व की होने के सिवाय हमारे राष्ट्र और समाज के लिए भी एक उपयोगी सेवा होगी, इसलिए इस कार्य में हमें सब की सहायता व सहयोग मिलेगा, ऐसी आशा है।

मेहर चन्द महाजन, भारत के पू० मुख्य न्यायाधीश तथा अध्यक्ष, सार्वभौम आर्यसमाज शिक्षण संस्था परिषद

आर्य हाईस्कूल नाभा

डी. ए. वी. कालेज कमेटी नई देहली से सम्बन्धित हमारा आर्य हाईस्कूल नाभा बड़ा सुन्दर तथा प्रसिद्ध है। आज कल इस स्कूल के मैनेजर श्री ला० चमनलाल जी पूर्व एम. एल. सी. हैं। आप एक पुराने अनुभवी हैं, साईं दास एंग्लो वैदिक स्कूल जालन्धर जैसे विशाल स्कूल के प्रिंसिपल रहे हैं। सारा जीवन समाज की सेवा में बीता है नाभा स्कूल के प्रिंसिपल श्री ला० हंसराज जी भाटिया एम. ए. हैं। आप ने डी. ए. वी. हायर सैकंडरी स्कूल कादियान में निरन्तर २२ वर्ष अध्यापन का कार्य किया। योग्य, सदाचारी, सौम्य, नम्रता की मूर्ति तथा [illegible] परिश्रमी के आर्य पुरुष हैं। [illegible] सारा परिवार [illegible] समाज का विशेष भक्त व कार्यकर्ता है। हिसाब में तो आप कमाल हैं। कालेज कमेटी ने आप को कादियां से नाभा स्कूल का प्रिंसिपल बना कर भेजा है। आप के नाभा स्कूल में आने पर स्कूल की पढ़ाई व परीक्षा परिणाम में बड़ी भारी उन्नति हुई। इस वर्ष मैट्रिक का परिणाम ८७ प्रतिशत तथा आप का हिसाब परिणाम ९५ प्रतिशत रहा। ऐसा शानदार परिणाम गत कई वर्षों में नहीं निकला। समाज के काम में भी बड़ी रुचि लेते हैं। नाभा स्कूल ऊंचा हो गया।

दयानन्द कालेज शोलापुर

दिल्ली की डी. ए. वी. कालेज ट्रस्ट और प्रबन्ध कर्त्री सभा भारत की सब से बड़ी और प्राचीनतम शिक्षण संस्थाओं में से एक है। इस संस्था की ओर से शोलापुर में आर्टस और सायंस कालेज, कामर्स कालेज, एज्यूकेशन कालेज, और दो हाई स्कूल चलाये जा रहे हैं। शोलापुर में दयानन्द साय

कारण

...

मान्यता दे दी है। यह ला कालेज प्रातः तथा सायं दोनों समय (प्रातः ७ से ८-३० तथा सायं ७.०० से ८.३०) लगा करेगा। इस साल प्रथम वर्ष एल. एल. बी की कक्षा आरंभ हुई है।

प्रो. राजेन्द्र जिज्ञासु
दयानन्द कालेज शोलापुर

आर्यसमाज (का. वि. फिरोजपुर

चुनाव

श्री मेहर चन्द जी सभ्रवाल M.A.B.T. (प्रधान) श्री देस राज जी भसीन Avdocate श्री लक्ष्मण-दासजी कालड़ा (उपप्रधान) श्री ब्रह्मदत्त शर्मा (मन्त्री) श्री ओ३म प्रकाश जी बेहल (उप मन्त्री) श्री हरि देव जी (सहायक मन्त्री) श्री मेहर चन्द जी कटारिया (कोषाध्यक्ष) श्री मोहन लाल जी गुलाटी (पुस्तकाध्यक्ष) श्री चौ. अर्जुन दास जी सदस्य अन्तरंग सभा श्री पं. रघुवीर जी शास्त्री सदस्य अन्तरंग सभा

ब्रह्मदत्त शर्मा
आर्य समाज का. वि. फिरोजपुर

डी. ए.वी. कालिज जालंधर के प्री-यूनिवर्सिटी परीक्षा का परिणाम

नरेन्द्र एस. कल्यानी ५०७ नम्बर लेकर यूनिवर्सिटी के कम्पेयर ग्रुप में फर्स्ट क्लास में प्रथम स्थान प्राप्त किया। कृष्ण गोपाल चौधरी मैडिकल ग्रुप में ५६४ अङ्क लेकर यूनिवर्सिटी में प्रथम रहा। इसी प्रकार मैडिकल ग्रुप में तीसरे, चौथे, पांचवें स्थान भी इसी कालिज के छात्रों ने प्राप्त किए। नान मैडिकल ग्रुप में विनोद कुमार सिंघल ने जालन्धर डिवीजन में सब से ऊंचा स्थान प्राप्त किया। ६१४ अङ्क लेकर यूनिवर्सिटी में पांचवां स्थान प्राप्त किया।

१२ छात्र वृत्तियां, यूनिवर्सिटी की व ओपन गवर्नमैंट स्कालर शिप की प्राप्त की।

जो कि पंजाब के दूसरे कालिजों से दुगने से भी अधिक हैं।

२७ छात्र यूनिवर्सिटी की मैरिट में स्थान ले गए हैं।

४६ छात्र फस्ट डिवीजन में आए हैं जो कि स्टेट के सभी कालिजों से अधिक हैं।

इस कालिज ने नान मैडिकलग्रुप की ७२ प्रतिशत जबकि यूनिवर्सिटी की ४८.१ और मैडिकलग्रुप की ७१.१ प्रतिशत जबकि यूनिवर्सिटी की ४८.१ ह्युमिनीटीज ग्रुप की ५२.५ जबकि यूनिवर्सिटी की ५१.४ है। औसत प्राप्त की।

इसी कालिज के छात्र जय-गोपाल ने एम. ए. पोलिटीकल साईंस पार्ट फस्ट में प्रथम स्थान प्राप्त किया है जो कि अत्यन्त सराहनीय है।

इस प्रकार यह कालिज सभी विभागों में आदर्श रहा है इस कार्य कुशलता का श्रेय प्रिं० बी. एस. बहेल तथा उनके योग्य प्राध्यापकों को है। आर्य जगत की ओर से बधाई।

महाराष्ट्र प्रांत के लग्नशील आर्य तपस्वी चल बसे

गोंदिया—(महाराष्ट्र) के वयोवृद्ध प्रतिष्ठित नागरिक एवं गण्य-मान्य आर्य—श्री बा० महावीर प्रसाद जायसवाल का देहावसान लगभग ६० वर्ष की आयु में दिनांक ६ जून को हो गया। आप नगर के एक अत्यन्त प्रतिष्ठित, पुराने रईस एवं जाने-माने नागरिकों में से थे। आप ने आजन्म धर्म एवं समाज सेवा तथा परोपकार के कार्य किये। आपकी दान वीरता, धर्म परायणता और उदारता सर्व विदित व प्रख्यात है। आप साहित्य प्रेमी और स्वाध्यायशील थे तथा विद्वानों व सच्चे धर्मनिष्ठ व्यक्तियों का आदर करते थे। लगभग ५० वर्षों से आप उच्चकोटि की मासिक, पाक्षिक एवं साप्ताहिक वैदिक विचारधारा की अनेकों पत्र पत्रिकायें तथा वैदिक साहित्य की सैंकड़ों पुस्तकें बाहर से मंगाकर प्रचारार्थ मुफ्त वितीर्ण किया करते थे। अथवा लोगों को भेंट स्वरूप प्रदान किया करते थे। गोंदिया में ऐसा कोई स्वाध्याय एवं आर्य धर्म प्रेमी व्यक्ति न होगा जिसके पास स्वर्गीय बा० महावीर प्रसाद प्रदत्त चार, छः आर्य साहित्य की पुस्तकें अथवा पत्र-पत्रिकायें न हों।

आप गोंदिया आर्य समाज के महान हितैषी तथा दृढ़ आर्य समाजी थे। जिन्होंने आजन्म आर्य सिद्धांतों को माना व उन्हीं के अनुसार आचरण किया। आप का अन्त्येष्टि संस्कार आपकी इच्छानुसार पूर्ण वैदिक रीत्यानुसार किया गया। आपके अन्त्येष्टि संस्कार में नगर के सैंकड़ों गण्य-मान्य लोगों ने भाग लिया। श्मशान पर ही एक शोक सभा हुई जिस में दिवगत आत्मा की शांति तथा उनके दुखित परिवार को इस महान क्षति व दुःख के सहन करने की शक्ति प्रदान करने की परमात्मा से प्रार्थना की गई। इस अवसर पर आर्य समाज गोंदिया ने अश्रु भरे शब्दों में उनकी सुख शांति के लिए शोक प्रस्ताव पास किया।

प्रादेशिक सभा का वेद प्रचार कार्य

पं० प्रभुदयाल जी प्रभाकर तथा पं० हरिश्चन्द्र जी ने जुगलाना जिला हिसार तथा शादीपुर जिला संगरूर में कई दिन तक वेद प्रचार किया जिसकी जनता ने अति सराहना की इस के उपलक्ष्य में जुगलाना निवासियों ने १४८/- तथा शादीपुर ने १३२/- वेदप्रचारार्थ सभा को भेंट किए।

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मासिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टैलीफोन न० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 1

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक २९) ५ श्रावण २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०— १९ जुलाई १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

इन्द्र ज्येष्ठं न आभर

हे महान इन्द्र ! हमारे लिए बड़ा धन प्रदान करें, बड़ा ज्ञान दीजिए। ऐसा धन और ज्ञान जो हमें भी बड़ा बना दें। हमारे कामों को शुभ बना देवें। वह हमें छोटा बनाने वाला न हो, हमारी निन्दा का कारण न बने।

ओजिष्ठं पुपुरिश्रव:

हमें ऐसा श्रव :—ज्ञान प्रदान करें जो ओज वाला, बल शक्ति देने वाला हो जिसे पा कर हम बलवान व शक्तिशाली बनें तथा वह ज्ञान पुपुरि—हमें पूर्ण बनाने वाला हो। हमारे कामों को पूरा करने वाला हो।

इन्द्रो राजा जगत:

हे लोगो ! देखो वह इन्द्र भगवान इस सारे ससार का राजा है। वह इस सारे विश्व में प्रकाशित हो रहा है। सर्वत्र व्यापक हो रहा है। उस की महिमा उसका प्रकाश सर्वत्र प्रतीत होता है वही राजा है। उसे न भूला।

सा म वे द से

वे दा मृ त

समिदाधान के मन्त्रा:

ओ३म् अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्ते नेध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा इदमग्नये जातवेदसे-इदं न मम ॥

आश्वलयन १० कडिका अ० १ सूत्र १२

अर्थ—हे अग्ने ! (अयम) यह (ते) तेरा (इध्म) समिधाएं (आत्मा) आत्मा है (जातवेद:) हे अग्निदेव ! (तेन) इस से (इध्यस्व) प्रकाशित हो तथा (वर्धस्व) भली भान्ति बढ़ और (वर्धय) बढ़ा (च) और (अस्मान्) हम को यज्ञ करने वालों को बढ़ा (प्रजया) प्रजा से (पशुभि:) पशुओं से (ब्रह्मवर्चसेन) ब्रह्म बल से तथा (अन्नाद्येन) अन्न आदि की सामग्री से हमें बढ़ा (समेधय) बढ़ाता रह। (स्वाहा) यह हमारा वचन कथन सत्य होवे। (इदम) यह आहुति की वस्तु (अग्नये) अग्नि के लिये है (न मम) मेरे लिए नहीं है। सब प्रभु के अर्पण है।

भाव:—यज्ञ की अग्नि तभी प्रदीप्त होती है जब उस में काष्ठ आदि की आहुति डाली जायें। लकड़ियां अग्नि की आत्मा हैं इस के बिना अग्नि का जीवन नहीं चलता। हे अग्निदेव ! इन समिधाओं से खूब प्रदीप्त होकर हमें भी बलिदान की भावना से बढ़ने का सन्देश मिलता है। राष्ट्र की धर्म की तथा समाज की अग्नि भी तभी प्रदीप्त होती है जब उसको देशवासियों के जीवन की आहुतियां मिलती हैं। तभी प्रजा, पशु तथा तेज: शक्ति और जीवन के सारे पदार्थ मिलते हैं। जब बलिदान की भावना आती रहती है, तभी राष्ट्र व समाज कमजोर हो जाता है। जीवन धर्म, समाज व राष्ट्र अर्पण हो—सं०

ऋषि दर्शन

यदा चित्तं जतिम

जब इस मानव से चित्त लिया जाता है इसकी च समाप्त हो जाती है, या के विषयों के अर्थों से विरक्त हो जाता चित्त का दास न अपने वश में कर मनुष्य विजित जाता है।

तदिन्द्रियाणां

उस समय स्वय ही विषयों जाती हैं। सारी आंख, इन्द्रियों का का स्वयं उसकी र रक उ हो ज

चि

अधिष्ठाता—श्री संतोषराज जी

अवतारवाद का सिद्धान्त

ले० श्री जयदेव जी आर्य एम० ए० बेलरखा (संगरूर)

(गतांक से आगे)

कुछ लोगों का कहना है कि यह तो ठीक है कि वेद में ईश्वर के स्वरूप का ऐसा वर्णन हुआ है। ऐसा वर्णन तुलसीदास जी ने भी किया है—

पग बिन चलत सुनत बिनु काना।
कर बिन कर्म करत विधि नाना॥
आनन रहित सकल रस भोगी।
बिनु वानी वक्ता बड़ जोगी॥

परन्तु साथ ही अवस्था विशेष में ईश्वर के अवतार धारण करने का सिद्धांत भी माना गया है। इसके प्रमाण में वे कुछ मन्त्रों को उपस्थित कर उनके अर्थ ईश्वरावतार परक करते हैं। उन अर्थों के ठीक वा गलत सिद्ध करने में हमारा परस्पर मतभेद हो सकता है। अतः इन अर्थों की समीक्षा न करके हम एक अन्य पद्धति से इसका निर्णय कर सकते हैं। प्रथम बात तो यह कि इन अवतारों के कार्यों का
ण पुराणों में ही उपलब्ध
है और पूर्व दिए गए पुराण
ह विषयक वर्णन का स्पष्ट
होता है क्योंकि शिव न
ष्णु के समान है अपितु
धिक शक्तिशाली भी है।
वेद के बताए अनुसार
र, न व्रण, न अस्नाविर
और व्यापक अथवा
करने वाला) और
अर्थात् मूर्त्ति से
र का पुराणों
का वर्णन
वतारों का
पमान-
र को
यों
॥

पूर्वक मानने वाले अन्ध व्यक्ति का धैर्य छूट जाता है। यदि ऐसे आरोप '[जैसे कि कृष्ण के सम्मुख शिशुपाल ने भी उन पर नहीं लगाए थे पर फिर भी श्री कृष्ण ने उसका सिर काट लिया था] कोई निर्लज्ज व्यक्ति किसी सभ्य व्यक्ति के पूर्वज पर लगाए तो निश्चय ही वह उसका सिर धड़ से पृथक् कर डाले। पर शोक है कि आज तथा कथित अवतारों के अन्ध भक्त उन वर्णनों को, घृणा तो दूर रही, श्रद्धाभक्तिपूर्वक पढ़ते हैं और अपने आप को कृष्ण भक्त कहते हुए लज्जा भी अनुभव नहीं करते! शोक! महाशोक!! अस्तु–

दूसरी बात यह है कि जहां कुछ पौराणिक विद्वान् अवतारवाद की सिद्धि में कुछ वेद-मन्त्र उपस्थित करते हैं वहां वेदेतर समस्त वैदिक साहित्य अर्थात् ब्राह्मण तथा आरण्यक ग्रन्थ उपवेद, उपनिषद् तथा समस्त दर्शन-शास्त्रों में अवतार के सिद्धान्त की कल्पना किसी भी पौरस्त्य तथा पाश्चात्य विद्वान् ने नहीं की। इन ग्रन्थों में अवतार के सिद्धान्त की गन्ध भी नहीं है और खण्डन स्पष्ट है। ये समस्त ग्रन्थ वेद को परम प्रमाण मानकर चलते हैं और कोई भी व्यक्ति इनको वेद विरुद्ध कहने का साहस भी नहीं कर सकता। इससे स्पष्ट है कि इन ग्रन्थों के रचयिताओं को ईश्वरावतार का सिद्धान्त न तो स्वयं मान्य था और न ही उसे वेद सम्मत समझते थे। यदि वेद में अवतारवाद के सम्बन्ध में उन महान् ऋषियों और पौराणिक विद्वानों में मतभेद है निश्चय ही कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति इन तुच्छ लोगों को ऋषियों अधिमान देकर अवतार के सिद्धान्त को वेदसम्मत नहीं मान सकता। फिर एक और मजे की बात यह है कि श्री सायणाचार्य जैसे पौराणिक विद्वान् ने वराह, अर्जुन और कृष्ण तथा राम शब्दों से युक्त जिन मन्त्रों को अवतार के समर्थन में लगाया उनमें कईयों पर यास्क ऋषि जैसे सर्वमान्य वेदभाष्यकारों का भाष्य उपलब्ध है जिनमें उन्होंने अवतारवाद की कल्पना भी नहीं की है। यास्क ने स्पष्ट ही वराह का अर्थ मेघ कृष्ण तथा अर्जुन का काला तथा श्वेत और राम का अर्थ 'रात्रि का काला अन्धेरा' किया है। ऋग्वेद का १०/३/मन्त्र द्रष्टव्य है :—

सुप्रकेतैः द्युभिः अग्निः वितिष्ठन्
रुशद्भिः वर्णैः अभि रामं अस्थात्॥

पौराणिक के परम प्रामाणिक विद्वान् सायण ने इस का अर्थ किया है कि अग्नि अपने चमकते हुए तेजों से (सायं होम काल के समय) राम अर्थात् रात्रि के काले अन्धकार को (कृष्णं शार्वरं तमः) अभिभूत करके विराजमान होता है। यही अवस्था एक दूसरे मन्त्र की है जहां सायण ने वराह का अर्थ सोम किया है और वैसे भी मन्त्र का देवता सोम है (देखो ऋ० ९/९७/० तथा अथर्व० १२/१/४८)

एक और बात है कि अवतार के सिद्धान्त तथा मूर्तिपूजा का परस्पर गहन सम्बन्ध है और स्वामी विवेकानन्द ने भी (जो स्वयं मूर्तिपूजक थे) मूर्तिपूजा को वेद में अविद्यमान माना है। अतः वेद-मन्त्रों से अवतारवाद को सिद्ध करने का प्रयास निरर्थक है जो कभी सफल नहीं हो सकता।

ब्राह्मण ग्रन्थों के अन्तिम भाग ही [illegible] तथा उपनिषद् कहलाते हैं। उपनिषद् अपनी ब्रह्मविद्या के कारण समस्त विश्व के विद्वानों द्वारा प्रशंसा के पात्र हुए हैं। प्रायः सभी पौराणिक पण्डित अपने सर्वमान्य ग्रन्थ गीता को उपनिषद् रूपी गौ का दुग्ध मानते हैं। अतः ईश्वर के स्वरूप के विषय में उपनिषत्-प्रमाण हम सभी के लिए अविमान्य है। उनमें से मुण्डक उपनिषद १/७ में ईश्वर को अदृश्य, अग्राह्य, अगोत्र, नेत्र श्रोत्र से रहित, हाथ पांव से रहित, नित्य, विभु, सर्वव्यापक सुसूक्ष्म तथा अव्यय (परिवर्तन रहित) बतलाया गया है। इनमें अदृश्य तथा अव्यय शब्दों से सिद्ध हुआ कि वह अदृश्य है तथा उसमें परिवर्तन होकर वह कभी भी दृश्य नहीं हो सकता। जो अवतार थे उन्हें कितने ही लोगों ने अपनी आंखों से देखा अतः उपनिषदों की दृष्टि में वे कभी भी ईश्वर नहीं हो सकते, अन्य चाहे कुछ भी क्यों न हों। यही नहीं श्वेताश्वतर उप० में तो और भी स्पष्ट कहा है :—

न संदृशे तिष्ठति रूपमस्य,
न चक्षुषा पश्यति कश्चन एनं।
हृदा हृदिस्थं मनसा य एनं
एवं विदुः अमृतास्ते भवन्ति॥

उसके रूप का दर्शन नहीं हो सकता। कोई भी उसे आंख से नहीं देख सकता। हृदय में स्थित उसको मन तथा हृदय से ही देखते हैं। इसके साथ ही कहा :—

जन्मनिरोधं प्रवदन्ति यस्य,
ब्रह्मवादिनो हि प्रवदन्ति नित्यम्।

अर्थात ब्रह्मवादी नित्य ही उसके जन्म का निषेध कहते हैं इन प्रमाणों की उपस्थिति में सन्देह को कोई स्थान ही शेष नहीं रह जाता और यह बात स्पष्ट सिद्ध हो जाती है कि उपनिषदों को अवतारवाद का सिद्धान्त कदापि मान्य नहीं है।

(क्रमशः)

प्यारे दयानन्द की आर्यसमाज

(ले०पं०चन्द्रसैन जी आर्य हितैषी उपदेशक सभा सोनोपत निवासी

****

बन्धुओ, संसार में विरले महापुरुष होते हैं जिन्हें अपनापन नहीं सूझता परहित की बात सोचते हैं। जो परहित नहीं सोचते वे पाखण्ड के दलदल में फंस जाते हैं अपने पृथक सम्प्रदाय व मत चला जाते हैं भोले और कम अक्ल वाले ही उधर फंसते हैं सस्ती मुक्ति की आड़ में नमालूम क्या क्या गुल खिलाते हैं। इसी आधार के सैंकड़ों परपंची फिर रहे हैं अपने को महान और मुक्तिदाता समझते हैं पौराणिकों के अतिरिक्त राधा स्वामी मत, निरंकारी मत, झाड़ फूंक करने वाले। पराई स्त्रियों की लाज लूटने वाले, उनके सामने रास लीला रचाने वाले, अपने को कृष्ण कहने वाले दादा लेखराज आज आबू पर्वत पर अपना अनोखा सिनेमाघर खोले बैठे हैं जिस ने मायदेवी नाम की लाज को लूटा बस इस सांसारिक आनन्द को लूटने के लिये हजारों के घर बरबाद किये। आंख से आंख लड़ाना मुक्ति का द्वार माना, दूसरों को उपदेश करना कि गृहस्थ विकार क्षेत्र है और अपने भतीजे आदि की शादी करना ये दो रंगी चालें कैसी? ये रंग ढंग हमारी समझ से बाहर हैं। अगर यही विकारवाद चलता रहा तो नारी पुरुष दोनों समाप्त हो सकते हैं, परन्तु युग प्रवर्तक दयानन्द सरस्वती इन सब कुचालों से हजार कोस दूर थे वे मुक्ति शुभकर्मों के करने में मानते थे और बात भी सोलह आने ठीक है केवल गुरु का झूठा खा लेना पांव छू लेना किसी को गोदी में बिठा लेना मुक्ति का मार्ग नहीं माना। पुरानी वैदिक प्रणाली कितनी सुन्दर थी जिस प्रणाली को ब्रह्मा से जैमनी ऋषि तक ने माना है। प्यारे यागाइवर [illegible]ानन्द ने भी यही मार्ग बताया [illegible] उसी पर चलो अपनी इन्द्रियों [illegible] वश में करो सांसारिक स्वादों में न फसो शुभ कर्म करो कितना सीधा मार्ग है। लगभग सभी विचारशील सज्जनों ने इस मार्ग को अति सुन्दर माना है हमें ऐसा करना चाहिये नान्यः पन्था विद्यते अयनाय इस मार्ग के सिवाय और कोई मार्ग नहीं।

और भी इसाईमत और इस्लामी मत के रंग ढंग भी हम सभी के सामने हैं। जड़वाद की पूजा बढ़ती जा रही है अपने को आर्य कहने वाले भी बहुत से इस रंग में रंगे जा रहे हैं रोना किस-किस का रोये और कहां तक रोये। आज रोशनी के जमाने में और स्वतन्त्र भारत में ये रंग रलियां क्यों फैलें इसका दर्द किसी भी संस्था व मत को नहीं केवल प्यारे दयानन्द की आर्यसमाज को है और होना चाहिए पर आर्यों! आप स्वयं सोचें हम भी कहां जा रहे हैं। आज लोगों को आर्यसमाज का भय नहीं रहा जैसे पहले होता था आज तो गीदड़ भी शेर बनने को फिरता है। व्यभिचार भ्रष्टाचार आदि चहुं दिशाओं में फैल रहा है। देश द्रोही पैदा हो रहे हैं। आज शत्रु भारत की सीमा पार कर आया है आगे बढ़ने की धमकियां देता है ये गोरख धन्धा है। जिम्मेवार नेता भी बिल्ली को देख कबूतर की तरह आंखें मुन्दे बैठे हैं देश द्रोही हमारे घर में ही रह कर हमारा नाश करने पर तुला है मानो मानवता रूठकर चली गई है। सो आर्य बन्धुओं, हम तो धार्मिक सामाजिक और राजनीतिक तीनों तरह से गिरे जा रहे हैं मिटे जा रहे हैं आज आर्य कहलाने वाले भी अपने व्यक्तिगत झगड़ों से फुरसत नहीं पाते हालांकि भारतीय लोग आर्य समाज से ये आशा रखते हैं कि प्यारे दयानन्द की आर्यसमाज ही हर दृष्टिकोण से संसार का कल्याण व उद्धार कर सकता है पर आर्य समाज वाले कहां गलतान हैं सोचने की तो ये बात है। आर्य समाज की शक्ति और धर्म परायणता आदि का पता तो आर्यसमाज के सुनहरे दस नियमों को पढ़ने व ध्यान देने से पता लगता है मैं सभा की ओर से प्रायः भारत के सभी प्रान्तों में प्रचारार्थ जाता हूं और देश की बिगड़ी हालत देखता हूं तो मैं समझता हूं कि कोई स्वार्थी नेता या संस्था इन बुराईयों को कोई दूर नहीं करती। आर्य समाज में आज नवयुवक भी नहीं के बराबर हैं, बड़े देवता शक्ति से काम नहीं कर सकते हमें इन सब बातों पर विचार करना है, पुराने बुजुर्ग अपनी गद्दियां नहीं छोड़ते नवयुवकों को आगे आने नहीं देते और तो और काम करने वाले पर नुक्ताचीनी करते हैं गोया के उस की टांग खींच उसे दूर धकेलते हैं फिर बताओ देश का क्या बनेगा सम्प्रदायवादी सिर क्यों न उठाएं। प्यारे दयानन्द के तप को देखो वे हमारे लिये जिये और हमारे लिये जहर के प्याले पी संसार से चल दिये प्यारे दयानन्द के तप को बेकार मत जाने दो बल्कि ऋषि के कार्य को दूसरों ने किया। आरम्भ में आर्य समाज ने भी विरोधियों के छक्के छुड़ा दिये। संसार को सन्मार्ग दिखाया आज हमारे आलस्य से फिर पाप कुकर्म फैलने लगा है इस लिये प्यारे आर्य बन्धुओं समय को पहचानिये अपना सुदर्शनचक्र चलाइये प्यारे दयानन्द की आर्य समाज के झण्डे को ऊंचा लहराओ अपने निजि स्वार्थों व लीडर शिप को ताक में रख कर कन्धे से कन्धा मिला कर वैदिक प्रचार को बढ़ाओ सभाओं को धनादि से पूरा सहयोग दो ताकि ऋषि मिशन पूरा हो सके अधूरा न रहे आज जो छोटे मोटे पाखण्ड आडम्बर फैल रहे हैं इन्हें मिटाने की प्रतिज्ञा करें लोग झुकते हैं आप झुकाने वाले बनें इस लिये मैंने लिखा प्यारे दयानन्द की आर्य समाज।

आर्यसमाज, मालवीय पथ अमृतसर

पिछले ३ सप्ताह से आर्य समाज मालवी पथ में आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के भेजनोपदेशक श्री मेलाराम जी नित्य प्रति दैनिक सत्संग में अपने मनोहर भजनों द्वारा प्रचार कार्य करते रहे। जनता में आपके सुरीले गले तथा समयानुसार भजनों का बड़ा प्रभाव रहा।

गुरुकुल कांगड़ी में प्रवेश

गुरुकुल कांगड़ी के विद्यालय विभाग में छोटे बालकों का प्रवेश जुलाई मास में हो रहा है। गुरुकुल का प्राकृतिक वातावरण सुन्दर और स्वास्थ्य पद है। बालकों की शिक्षा और देख भाल का उत्तम प्रबन्ध है। गुरुकुल की उपाधियां सरकार और दूसरे विश्वविद्यालय द्वारा स्वीकृत हैं। सरकार ने गुरुकुल को विश्वविद्यालय भी घोषित कर दिया है। प्रवेशार्थ प्रार्थना पत्र आचार्य, गुरुकुल कांगड़ी, जिला सहारनपुर को भेजें।

आवश्यकता

प्रादेशिक उप सभा देहली को उसके निकटस्थ क्षेत्रों में वैदिक धर्म का प्रचार कराने के लिये एक योग्य अनुभवी, प्रभावशाली प्रचारक की आवश्यकता है। जो जनता पर वैदिक धर्म के सिद्धांतों का प्रभाव डाल सके और जनता के जीवन को धर्म के मार्ग पर ऊंचा ले जा सके। राजकुमार सभा मन्त्री

पं० चन्द्रसैन जी का वेद-प्रचार कार्य

(मध्य प्रदेश में)

आर्य प्रादेशिक सभा की ओर से सभा के योग्य वक्ता आर्य मिशनरी पं० चन्द्रसैन जी आर्य द्विवेदी सोनीपत निवासी आज कल मध्य प्रदेश में धर्म प्रचार कर रहे हैं एक सप्ताह जबलपुर गोरखपुर आर्यसमाज में दो परिवारों में और [illegible] वर्षा के बावजूद हाजरी काफी होती रही। सभा को भी आर्थिक सहयोग मिल रहा है। श्री म० हेमराज जी आर्य पूरा सहयोग दे रहे हैं। श्री ओबर जी, श्री कुमार जी, श्री चावला जी, तथा श्री भारत भूषण जी, आदि सज्जन विशेष धन्यवाद के पात्र हैं इस के बाद सागर भी ५ दिन रात्री को प्रचार होता रहा। श्री पं० विश्वनाथ जी इसके प्रधान हैं बड़ी योग्यता से समाज का कार्य चलता है जबलपुर सागर आदि स्थानों पर आर्य कार्य भी चालू कराया।

विदिशा (भेलसा) ऐतिहासिक नगर है यहां दो तीन दिन बहुत प्रभावशाली प्रचार हुआ श्री बाबूलाल जी आनन्द श्री मेधावी जी, डा० देशबन्धु जी आदि इस समाज के स्तम्भ हैं आज कल पंडित जी भोपाल तथा उज्जैन की तरफ गये हुए हैं यहां २ श्री पंडित जी जाएं सभी आर्य समाजें व बन्धु पूरा २ लाभ उठाएं तथा सभा को पूर्ण सहयोग दें।

श्री डा० अमरनाथ जी पाहवा आर्य समाज माधव नगर (उज्जैन) के प्रधान हैं प्रसिद्धदानी हैं समाज का कार्य बड़ी लगन वा उत्साह से करते हैं।

★

अपमान जनक मजाक राज्याधिकारी ध्यान दें

हमें बताया गया है, कि अमृतसर के सिनेमाओं में खेल समाप्त होने पर राष्ट्रीय गीत अर्थात् 'जन गण मन' का कौमी तिराना गाया जाता है, जो प्रशन्सनीय है परन्तु ज्यों ही राष्ट्रीय गीत आरम्भ होता है त्यों ही बाहिर निकलने के द्वार खोल दिए जाते हैं जिससे परिणाम स्वरूप लोग बाहिर को भागना आरम्भ कर देते हैं निस्संदेह इससे बढ़कर राष्ट्रीय गीत का अपमान नहीं हो सकता। यदि जनता के हृदयों में स्वदेश के प्रति प्रेम और मान के भाव विद्यमान हैं तो अपने राष्ट्रीय गीत के लिए भी अवश्य श्रद्धा होनी चाहिए।

सिनेमाओं के मालिकों तथा अधिकारियों को इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिए और ठीक राष्ट्रीय गीत के समय द्वार खोल देने की बजाए थोड़ा समय लोगों को शान्ति पूर्वक राष्ट्रीय गान में सम्मिलित होने का अवसर देना चाहिए, ताकि सिनेमाओं से अन्य कई प्रकार के अन्य विचैले और आचार हीनता के विचार लेने के साथ २ लोग अपने देश तथा देश के राष्ट्रीय गीत के प्रति [illegible] गुस्ताखी के कीटाणु भी साथ न लेते जाएं॥ —रुद्रदत्त शर्मा प्रधान आर्यसमाज लक्ष्मणसर अमृतसर

★

दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय, हिसार

पं० नरेन्द्र जी को केरल में प्रचारकार्य के लिए नियुक्त करने के पश्चात् अब पं० देशबन्धु जी को महाराष्ट्र में प्रचार कार्य के लिए [illegible]त किया गया है। महाराष्ट्र की ओर प्रस्थान के लिए उन्हें रविवार ५-७-६४ को विदाई दी गई। नगर के प्रतिष्ठित सज्जनों ने अवसर पर पधार कर उन को आशीर्वाद देते हुए उनका उत्साह वर्धन किया।

निवेदक—
रामविचार व्याचार्य

४२० से सावधान रहें

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के नाम से कई व्यक्ति धन संग्रह करते फिरते हैं। दानी सज्जन जब तक उनके पास गुरुकुल कांगड़ी का प्रमाण पत्र व रसीद बुक न हो दान हरगिज २ न दें और ऐसे धोखाबाज व्यक्ति को तुरंत पुलिस के हवाले कर दें।

सार्वदेशिक विद्यार्य सभा की परीक्षाएं

इस वर्ष श्रावणी पर होने वाली सार्वदेशिक विद्यार्थी सभा की परीक्षाएं दिनांक २२ और २३ अगस्त १९६४ के दिन शनिवार और रविवार को होंगी। सभी परीक्षार्थियों और केन्द्रों को सूचित किया जाता है कि वे शीघ्र ही परीक्षा फार्म इस कार्यालय से मंगाकर, भर कर परीक्षा शुल्क सहित ८ अगस्त १९६४ तक इस कार्यालय को भेज देवें। जो समाजें और संस्थाएं इन परीक्षाओं के केन्द्र खोलना चाहें शीघ्र ही कार्यालय से पत्र-व्यवहार करें। आर्य समाज और आर्य संस्थायें इन परीक्षाओं में अधिक से अधिक परीक्षार्थी भेजेंगी ऐसी हमें पूर्ण आशा है।

वैद्यनाथ शास्त्री
संयोजक
सार्वदेशिक विद्यार्य सभा

शोक प्रस्ताव

आर्यसमाज किला जालन्धर नगर के समस्त उपस्थित सदस्यों की यह बैठक आर्य समाज के प्रधान, अनथक कार्यकर्ता तथा दीन हितकारी श्री ला. शंकरदास जी नेहरू के आकस्मिक देहांत पर हार्दिक शोक प्रकट करती है।

श्री लाला जी अपने व्यवहार के कारण सर्वप्रिय तथा सर्वत्र सम्मानित थे। उन्हें अभिमान छू तक नहीं गया था। ऐसे सर्व गुणसम्पन्न व्यक्ति के स्थान की पूर्ति की आशा कम ही हुआ करती है।

यह बैठक प्रभु से प्रार्थना करती है कि वह दिवंगत आत्मा को सद्गति प्रदान करें तथा उनके समस्त परिवार, बन्धु-बांधवों इष्ट मित्रों तथा हम सब को इस अपार वियोग के सहन करने की शक्ति दें।

आनन्द सागर
मन्त्री आर्य समाज

आर्य समाज लक्ष्मणसर

आज प्रातः आर्य समाज लक्ष्मणसर के दैनिक सत्संग में श्री ला. शंकरदास जी नेहरू के निधन का समाचार बड़े दुख के साथ सुना गया और एक प्रस्ताव द्वारा ऐसे पुराने सुदृढ़ सरल स्वभाव एवं सात्विक वृत्तियों वाले महानुभाव के निधन पर आर्य समाज को हुई हानी के लिये गहरी चिन्ता तथा श्री लाला जी के परिवार के साथ हार्दिक सहानुभूति प्रकट की गई।

दयानन्द साल्वेशन मिशन होशियारपुर ने भी शंकरदास जी नेहरू प्रधान आर्यसमाज किला जालन्धर के निधन पर अति खेद प्रकट करते हुए उनकी आत्मा की शुभगति के लिए [illegible] इस समवेदना प्रकट करते हुए परमदेव प्रभु से प्रार्थना की।

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा और मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्य जगत कार्यालय महर्षि हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टैलीफोन न० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 1

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक ३०) १२ श्रावण २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०– २६ जुलाई १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

अधिक्षया विश्वरूपं यत्

इस अधिक्षया—धरती पर जितने भी विश्वरूपम्—अनेक प्रकार के नाना रूपों वाले यत्-जो भी पदार्थ मडल हैं, वस्तुएं हैं। भूमि, अन्तरिक्ष व द्युलोक में जो कुछ भी हमें ज्ञात या अज्ञात जगत् है, वह सबका राजा है।

ददाति दाशुषे वसूनि

वह इन्द्र उसी को देता है, वसूनि-धन से झोलियां भर देता है, उसे माला माल कर देता है, जो मनुष्य दानी होता है। दाशुषे-देने वाले को, परोपकार के काम में अर्पण करने को भर देता है। कजूस को नहीं

इन्द्रस्य रन्त्यम् बृहत्

वह इन्द्र का धन रन्त्यम्—बड़ा ही रमणीय है, सुन्दर है, और बृहत्—बड़ा है। भगवान् का भण्डार तो सदा भरा रहता है, कभी कम नहीं होता। पूर्ण इन्द्र का भण्डार भी सदा पूर्ण है। सुन्दर और भरा है।

सा म वे द से

वे दा मृ त

ओम् समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम्।
आस्मिन् हव्या जुहोतन स्वाहा। इदमग्नये इदं न मम॥

यजु० अ० ३ मन्त्र १

अर्थ—हे यज्ञशील पुरुषो! आप लोग (समिधा) समिधा से (अग्निम्) अग्नि को (दुवस्यत) प्रदीप्त करो तथा इसे (घृतैः) घृतों से (बोधयत) जगाओ (अतिथिम्) अतिथि को और (आस्मिन्) इस अग्नि में (हव्या) हवनीय पदार्थ (जुहोतन) आहुत करो। आहुतियां देते जाओ। (स्वाहा) यह वचन और कथन सत्य हो। यह आहुति की वस्तु अग्नि के लिए है मेरे लिए नहीं है।

भाव :—हे यज्ञ करने वालो! अग्नि के द्वारा यज्ञ करना है तो इसे समिधाओं से आहुतियों से भली-भांति प्रदीप्त करो, प्रकाशित करो तथा घृतों से इस को बढ़ाते जाओ इस अग्नि में हवन करने योग्य पदार्थों की आहुतियां देते चले जाओ। जितनी २ आहुति डाली जायेंगी, उतनी २ अग्नि की ज्वाला व प्रदीप्ति बढ़ती जायेगी। जब इसमें समिधा घृत तथा अन्य पदार्थों की आहुतियां पड़ती जायेंगी तब इस की ज्वाला ऊपर ही ऊपर होती जायेगी। आहुति के बिना अग्नि बुझ जाती है। राष्ट्र, समाज एवं धर्म की अग्नि को प्रकाशित करने के लिए भी यह आवश्यक है कि उस में जनता के द्वारा अपने जीवन का तथा समय २ पर तन, मन, धन की आहुति दी जाती रहे। समय २ पर भावना से भरे बलिदान किये जायें। जहां बलिदान दिया जाता है वहां जीवन चमकता है। इसके बिना राष्ट्र की अग्नि बुझ जाती है। राष्ट्रे बलिहृतः स्याम्—सं०

ऋषि दर्शन

परमेश्वरस्योपासना द्विविधा

परमेश्वर की उपासना दो प्रकार की मानी जाती है। क्योंकि परमेश्वर में अनन्त गुण हैं इस लिए उस की साधना, आराधना के भी विशेष करके दो प्रकार कहे जाते हैं। साधक दो प्रकार से उसे उपासते हैं।

सगुणा निर्गुणा चेति

एक उपासना सगुणरूपा है और दूसरी निर्गुणरूपा है। ब्रह्म सगुण भी है और निर्गुण भी है इसी प्रकार उस के उपासक भी उस की उपासना के सगुण तथा निर्गुण रूप में दो प्रकार मानते और कहते चले आरहे हैं।

शुक्रशुद्ध मिति सगुणोपासनम्

भगवान शुक्र हैं, शुद्ध पवित्र हैं, सर्वज्ञ व सर्व शक्तिमान हैं—इस प्रकार उस में अनन्त गुण हैं। इन गुणों के होने के कारण ब्रह्म का सोगुण कहा गया है—गुणैः सह वर्तते इति सगुणं ब्रह्म—गुणों से सगुण है।

भा ष्य भू मि का

अधिष्ठाता—श्री संतोषराज जी सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र श

धार्मिक चर्चा

'मृत्योर्माऽमृतं गमय'

श्रीमती सुवीरा देवी जी आर्य जालन्धर

प्रभु !' हमें मृत्यु से छुड़ा कर अमरता को ओर ले चलो।' इस वाक्य में हमारे जीवन का रहस्य छिपा पड़ा है। मृत्यु क्या है? कोवां ऽमृतो यस्य पुनर्न मृत्यु' वही मरा है जिसे फिर न मरना पड़े। बार-बार जन्म लेना, मरना, पुनः जन्म लेना फिर मरना! यह भी कोई जीवन है। वेद ने हमारे लिये एक लक्ष्य निर्धारित किया है उसे मोक्ष कहते हैं। मनुष्य का नाम पुरुष है पुरुषार्थ करने वाला। अपने पुरुषार्थ से वह जन्म मरण के बंधन को काट दे तभी मनुष्य जन्म सार्थक होता है कहा भी है—सजातो येन जातेन जाति वंशः समुन्नितम्। परिवर्त्तिनि संसारे मृतः को वा]न जायते। उसी का जन्म लेना सार्थक है जिस के कर्त्तव्यों से जाति तथा वंश का उत्थान हो। महान पुरुष अपने कर्मों से उस कीर्ति के भागी होते हैं और मर कर भी अमर हो जाते हैं। आज दयानंद, गांधो जवाहर अमर हैं। आओ हम भी देखें हम अपने इसी जीवन में अमरता को कैसे प्राप्त करें। वेद में इस के सात उपाय बताए हैं। १ सात्विक आहार-दूध दही घी फल फूल और हविष्यान्न सात्विक आहार हैं। मद्य मांस मछली तामसिक। सात्विक आहार सुख प्रीति को देने वाले शरीर को रुचिकर और सब जीव मात्र के लिये हितकर होते हैं इस के विपरीत मद्य मांस आदि शरीर में विकार उत्पन्न कर के तथा अन्य जीवों के घातक होने से दुःख दाई होते हैं। हविष्यान्न का अर्थ है यज्ञ-शेष। यज्ञो वै श्रेष्ठ तमं कर्म।' सब का भला करने की भावना। स्वार्थ का त्याग। इस के लिये सभी आर्य अपने घरों में अग्निहोत्र करते हैं अग्नि के मुख में डाला हुआ द्रव्य सूक्ष्म हो कर दूर दूर वायु में फैल जाता है जिस से पास पड़ौस के रहने वालों का भी स्वास्थ्य अच्छा रहता है परस्पर प्रीति बढ़ती है और मिल कर किया हुआ प्रीति भोजन सामाजिक सुख शान्ति बढ़ाने वाला होता है।

२. घर-घर जंगलों में या खुले स्थान में बने हों जिन में हवा पानी का सुभीता हो। आंगन में वाटिका हो और उसे जल से सींच कर फल फूल उगाए हों। जिन से घर में शाक सब्जी का निर्वाह हो सके। गृहपति, गृहणी, सन्तान सभी अपने गृह को सुन्दर स्वच्छ बनाए रखें और उस में (पंच महायज्ञ) संध्या, हवन माता पिता की सेवा, अतिथि-सत्कार तथा गो-पालन अदि की व्यवस्था हो 'जिस घर में धेनु सुखी, हृष्ट पुष्ट बलवान, वेद गान और यज्ञ हो सो घर स्वर्ग समान।'

३ चिन्ता की निवृत्ति-चिन्ता और चिता दोनों शब्द एक जैसे प्रतीत होते हैं पर चिता तो मुर्दे को जलाती है, चिन्ता जीवित मनुष्य को जला-जला कर राख कर देती है। चिन्ता से मनुष्य शोकातुर हो जाता है और शोक-ग्रस्त मनुष्य का स्वास्थ्य नष्ट हो जाता है। दुर्बलता आ जाती है जिस से वह उन्नतिशील नहीं बन सकता। अतः चिन्ता को कभी भी हृदय में स्थान नहीं देना चाहिए। धैर्यवान मनुष्य चिन्ता नहीं करते।

४ ब्रह्मचर्य—'ब्रह्मचर्य प्रतिष्ठायां वीर्यलाभः'। ब्रह्मचर्य से दिव्य बल प्राप्त होता है 'वीर्यं बाहुबलम्'। वीर्य में एक खास प्रकार की मस्ती होती है जो मनुष्य को सदैव प्रसन्न रखती है। ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्यु मुपाघ्नत्। ब्रह्मचर्य से देवताओं ने मृत्यु को भी जीत लिया। भीष्म पितामह शरशय्या पर पड़े हैं मृत्यु सिरहाने खड़ी है। आज्ञा होती है—देवी! अभी नहीं और छः मास ठहरो। जब सूर्य उत्तरायण में जायेगा तब मैं देह छोड़ूंगा। बाल-ब्रह्मचारी ऋषि दयानन्द निर्भय अपार अबोध जनता का विरोध सहते हुए भी मुस्कराते रहते हैं और भूले भटके लोगों को वेद का सत्य-मार्ग बताते रहते हैं।

५. सदाचार— सदाचारेण पुरुषः शत वर्षाणि जीवति' सदाचार द्वारा मनुष्य सौ वर्ष तक सुख शांति से जीवित रहता है। भ्रष्टाचार से अपनी आत्मा भी शत्रु बन जाती है 'आत्मैव आत्मनो बन्धु, आत्मैव रिपुरात्मनः। सदाचार जीवन है दुराचार मृत्यु! इसलिये शास्त्रों में संयम, व्रत, इन्द्रिय निग्रह लोभ आदि पर विजय प्राप्त करने के लिए मनुष्य को आदेश दिया है कठ उपनिषद् बताती है चमकीले ढकने से सत्य का पात्र बंद हुआ पड़ा है मनुष्य! इस ढकने को खोल दे। कभी लालच न कर। संसार में धन किस का है? रुपये पैसे के पीछे अपने चरित्र को बेच देने वाला व्यक्ति जीवित ही मर जाता है।

६. संगीत—हंसते गाते जीवन व्यतीत करना। सदा फूलों की भांति प्रसन्न रहना चाहिये। प्राचीन आर्य सदा कोई न कोई वैदिक-यज्ञ अनुष्ठान आदि में व्यस्त रहते थे। सस्वर मंत्रोच्चारण संगीत द्वारा गायन, नित्यकर्म, संस्कारों आदि में मित्रों सम्बन्धियों आदि सहित सम्मेलन करना तथा सभा समाजों में उत्सव आदि में विद्वानों, संगीतज्ञों, कलाकारों से सुन्दर मनोहर धर्मचर्चा श्रवण करना आदि का कार्यक्रम बनता ही रहता था। इस से विचारों में पवित्रता आती है और दीर्घायु प्राप्त होती है।

७. प्राणायाम—जैसे अग्नि में स्वर्ण तपाने से कुन्दन बन जाता है वैसे ही प्राणायाम से प्राण अपान वश में होकर बुद्धि सूक्ष्म हो जाती है और प्राणायाम को बढ़ाते-बढ़ाते योगी प्रत्याहार, धारणा ध्यान और अन्तिम सीढ़ी समाधि तक की अवस्था को पहुंच जाते हैं। उस आनन्द का वर्णन वाणी नहीं कर सकती उसे तो अपनी अन्तरात्मा में ही अनुभव किया जा सकता है।

संक्षेप से—इन ७ उपायों से मानव जीवन परमानन्द को प्राप्त कर सकता है। यह है—

मृत्योर्माऽमृतं गमय

गुरुकुल कांगड़ी विश्व विद्यालय हरिद्वार में प्रवेशार्थ प्रार्थना पत्र

गुरुकुल वेद तथा आर्ट्स कालेज में प्रवेश के लिये प्रार्थना पत्र आमंत्रित हैं। प्रथम वर्ष में प्रवेशार्थ योग्यता--(१) विद्याधिकारी (गुरुकुल) या (२) मैट्रिकुलेशन संस्कृत सहित या (३) पूर्व मध्यमा अंग्रेजी सहित (बनारस) या (४) विशारद (पंजाब यू०) अंग्रेजी में मैट्रिक सहित।

तृतीय वर्ष में प्रवेशार्थ योग्यता (१) विद्याविनोद (गुरुकुल) या (२) इन्टरमीडियेट संस्कृत सहित या (३) उत्तर मध्यमा अंग्रेजी सहित (बनारस) या (४) विशारद (पंजाब यू०) अंग्रेजी में इन्टर सहित। शिक्षा काल ४ वर्ष का है और उत्तीर्ण छात्रों को वेदालंकार, विद्यालंकार (बी० ए०) की उपाधि दी जाती है जो कि सरकार तथा विश्वविद्यालयों द्वारा स्वीकृत है। शिक्षा निःशुल्क है तथा वेद कालेज में प्रविष्ट अधिकारी छात्रों को कुछ छात्रवृत्ति भी दी जा सकती है। आचार्य प्रियव्रत

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार

सम्पादकीय–

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२१, २६ जुलाई १९६४ [अंक ३०

हाईकोर्ट और सुप्रीमकोर्ट

मनुष्यों तथा संस्थाओं के समय २ पर होने वाले आपसी मतभेदों, झगड़ों को निपटाने के लिए छोटे न्याय केन्द्रों के ऊपर हर प्रांत में एक हाईकोर्ट है तथा उनके भी ऊपर सारे देश में एक सुप्रीम न्यायालय है। इन सारे न्यायालयों में कार्य करने वाले न्याय के गौरवपूर्ण उच्चासन पर बैठे हुए जितने भी न्याय अधिकारी होते हैं—उनका किसी भी दल से सम्बन्ध नहीं होता। वे सारे पक्ष-पात रहित तथा निर्दलीय योग्य व्यक्ति होते हैं। उनके सामने केवलमात्र अपने सामने पेश होने वाले अभियोग की पूरी छानबीन करके विधान के अनुसार फैसला देना होता है। उनको न कोई खरीद सकता है और न ही प्रभावित कर सकता है। भारत में समय २ पर होने वाले इन न्याय-कार्यों को देखकर सब का मस्तक ऊंचा हो जाता है। इन के बिना पता नहीं देश की क्या अवस्था हो। ये न्यायधाम राष्ट्र के जीवन तथा नैतिकता का महान स्तम्भ हैं।

आर्य समाज एक जनतन्त्र पर आधारित संस्था व आंदोलन है। जनतंत्र में प्रत्येक को अपनी सम्मति देने का अधिकार होता है। वहां पक्ष-विपक्ष दोनों चलते हैं। बहुमत पर सारे निर्णय होते हैं। जनतन्त्र में मतभेद तथा झगड़े होने स्वाभाविक हैं। आर्यसमाज के कार्यों में भी कई बार मतभेद के साथ २ मनोभेद भी हो जाता है। कई बातों पर आकर लोगों के विचार बट जाते हैं। कई बार इनका कुछ दूसरा रूप भी सामने आ जाता है। अब तो ऐसी भी स्थिति सामने आ रही है जब कि हमारे आपसी झगड़े खुलमखुला समाचार पत्रों में आने लगते हैं। कचहरियों तक भी कई स्थानों पर परस्पर मुकद्दमे चलने लगे हैं। बड़े बूढ़े के बिना जो अवस्था किसी घर की होती है वही हालत इस समय सारे समाज की बनती जा रही है। इस का क्या कारण है। इस पर तो फिर कभी प्रकाश डाला जायगा। आज तो कोई किसी की नहीं मानता। जीवन में सेवाभाव के स्थान स्वार्थभाव बढ़ता आता है। जो स्थिति किसी समय भारत की थी कि अलग २ रियासतें बनी थीं। एक को दूसरे की चिन्ता नहीं थी। उसी प्रकार आज दयानन्द के नाम पर अलग २ स्टेट बन रही हैं। उन में अलग २ लोग बैठे अपने को ही बना रहे हैं। यदि यहां भी कोई दास कमीशन बैठे तो पता लगे कि दशा क्या है। पर ऐसे लोग हैं कहां ?

ऐसी दशा में आर्य समाज को समय २ पर इन झगड़ों को निप-टाने के लिए क्या किया जाना चाहिए। आये दिन के समाचारों को पढ़ कर लज्जा से सिर नीचे हो जाता है। जनता समाज के बारे में क्या सोचती व कहती है, सुना नहीं जाता। वही जानते हैं जिन को जनता से सम्पर्क रख कर काम करना पड़ता है हमारा निवेदन है कि आज सब से बड़ी आवश्यकता यह है कि इन मतभेदों, झगड़ों को निपटाने के लिए हर प्रान्त में विशेष कर पन्जाब में आर्यसमाज के हाईकोर्ट को जल्दी से जल्दी स्थापित किया जाये इस में योग्य, निर्दलीय, पक्षपातरहित, विशुद्ध आर्यसमाज के गिने चुने कुछ व्यक्ति हों, जो स्वार्थ में न आयें, प्रभावित न हों। समय २ पर सारे झगड़ों का निर्णय किया करें ताकि ये झगड़े न समाचार पत्रों में आयें और न कचहरियों में जायें। सब से ऊपर आर्य समाज का एक सुप्रीम कोर्ट बनाया जाये जिस में चोटी के परन्तु सर्वथा अलिप्त, निष्पक्ष तथा माने हुए व्यक्ति रखे जावें। इन का निर्णय सर्वमान्य हो। आज के समय आर्य समाज के झगड़ों को समाप्त करने का, संगठन को मजबूत करने तथा मनोभेद को दूर करने का यह आवश्यक कदम है। सब इस पर विचार करके क्रियात्मिक रूप देवें तभी भला है। अन्यथा दशा बिगड़ती जायगी —त्रिलोक चन्द्र

आर्यसमाज के नेताओं से

प्रायः यह शिकायत की जाती है कि आर्यसमाज में नवयुवक कम आते हैं। किसी सीमा तक यह बात ठीक है। परन्तु इस का कारण क्या है ? इस पर तो विचार करना पड़ेगा। रोग तो उपचार से ही दूर हो सकेगा। आज इन स्तम्भों में हम इस विशेष बात के बारे में आवश्यक निवेदन समाज के अपने मान्य नेताओं से करते हैं। हमारा अनुभव इस के विप-रीत है। वास्तव में तो यह देखने में आता है कि युवक तो बड़े आते हैं पर उनको परखने वाले, उनको उत्साह देने तथा समाज व संस्थाओं की उपयोगी बनाने वाले ऊपर के लोगों की भारी कमी है। ऐसे २ योग्य युवक मिलते हैं, जिन के पास ऊंची से ऊंची योग्यता होती है, कोई एम० ए० होता है, कोई शास्त्री, कोई ट्रेंड ग्रेजुएट होता। तथा कोई किसी काम में लगा हुआ। वे समाज में आते हैं, उन का जीवन समाज के रंग में रंगा होता है। उनको अपने क्षेत्र के संस्थानों में कार्य करने की प्रबल उमंग भी होती है। किन्तु खेद है कि उनका हाथ पकड़ने वाला कोई नहीं होता। उनके स्थान पर ऐसे युवकों को प्रोत्साहन एवं विशेषता दी जाती है जिन को आर्यसमाज से तनिक भी प्रेम नहीं होता। आर्यसमाज का उपहास करते हैं। वे आते हैं सारा वातावरण देख कर उदास होकर पीछे हट जाते हैं। उनकी शक्ति, उत्साह दूसरे क्षेत्रों में व्यय होती है। वे दिल को मसोस कर रह जाते हैं। काश आज के युग में इस युवाधन को परखने, प्यार करने तथा प्रोत्साहन करने वाला दिव्यात्मा महात्मा हंसराज जैसा, ला, साईंदास तथा प्र. मेहर चन्द जी जैसा होता तो इस सम्पत्ति से आर्य समाज मालामाल होता। पूर्णतः ऐसी बात नहीं। अब भी कुछ ऐसे नेता हैं जिन के दिल में ऐसे युवकों के लिए तड़प है, वे प्रोत्साहन देते हैं, युवकों को लाते हैं पर सीमित दशा में। ऊपर का विशाल क्षेत्र उन के पास नहीं है। इस लिए हमारा सारा समाज युवकों की शक्ति से रहित होता जाता है। हम इस अवस्था में अन्तर वेदना से आर्य समाज तथा विशाल संस्थाओं के मान्य नेताओं से प्रार्थना करना चाहते हैं कि ऐसे स्वयं ही तैयार होने वाले इन युवकों के संगठन की ओर ध्यान देवें। अपने सारे संस्थानों में यदि इस बात पर विचार करें कि कौन २ युवक ऊंचे स्तर पर जाने वाला है। अपने

(शेष पृष्ठ ६ पर)

आर्य समाज के प्राचीन पत्र
पं. भीमसेन शर्मा का आर्य सिद्धान्त

(ले. प्रो. भवानीलाल भारतीय एम. ए. अध्यक्ष हिन्दी विभाग, गवर्नमेंट कलिज, पाली)

महर्षि दयानन्द के शिष्य इटावा निवासी पं. भीमसेन शर्मा, जो कालान्तर में आर्य समाज त्याग कर सनातनधर्मी खेमे में चले गये थे, आर्य सिद्धान्त नामक मासिक पत्र इटावा से प्रकाशित करते थे। इस के मुख पृष्ठ पर संस्कृत का निम्नश्लोक लिखा रहता था।

सनातनं वेदपथं सुमण्डयंस्त्वनं तद्
च खण्डयन्।
विद्वेषिणो दस्युतरांश्च धर्षयत्सम्भ्यर्ता
धर्मिद प्रगर्जयत्॥

उन्होंने अपने इस पत्र को निम्न विशेषण दे रखे थे। सनातन आर्यमत, मण्डन, नवीन पाखण्ड-मत खण्डन, सत्सिद्धान्त प्रवर्तक, असत्सिद्धान्त निवर्त्तक, प्राचीन शास्त्र परिचायक, आर्य समाज सहायक। मुख पृष्ठ पर ही 'आब्रह्मन् ब्रह्मणो' वह वेद का राष्ट्रगीत भी छपता था तथा भीमसेन जी इस पत्र में पूर्व की भांति अपने को स्वामी दयानन्द का शिष्य लिखने में गौरव का अनुभव करते थे।

इस पत्र में मुख्यतया पं. भीम सेन जी के ही सैद्धान्तिक लेख प्रकाशित हुआ करते थे। उन संख्या भी अधिक ही होती थी और वे अधिकांश में धारावाहिक रूप से कई अङ्कों में क्रमशः छापते रहते थे। उदाहरण के लिये मंत्र भेद विचार' यह निबंध अक्टूबर १८८६ के अंक में प्रकाशित होना आरम्भ हुआ है और इसी अंक में समाप्त हो गया है। परन्तु 'आर्य समाज का भावी कर्तव्य' यह लेख मार्च १८८७ के अंक में समाप्त हुआ है। अक्टूबर १८८६ के अंक में ही सत्यार्थ विवेक का उत्तर छापना आरम्भ हुआ है। भीमसेन जी के इन लेखों को पढ़ने से ज्ञात होता है कि उन के महर्षि और आर्य समाज सम्बन्धी विचार उन दिनों पूर्ण तया दृढ़ थे। उदाहरणार्थ आर्य समाज का भावी कर्तव्य शीर्षक निबन्ध में वे लिखते हैं— 'हम स्वामी जो महाराज के स्वमंतव्यामन्तव्यादि नामक मूल सिद्धांत को ही प्रधान मंतव्य समझते हैं। उससे विरुद्ध हमारा कोई लेख का विचार स्वप्न में भी नहीं है, यदि हो तो उसको हम अपनी भूल मानेंगे।" (आर्य सिद्धांत जनवरी १८८७ पृष्ठ ४५)।

ऐसा ज्ञात होता है कि वर्ण-व्यवस्था को गुण कर्म स्वभावानुसार माने जाने की जो द्विविध व्याख्यायें बाद में आर्यसमाज के विद्वानों ने की और जिसके फलस्वरूप उत्तर-प्रदेश के आर्यों में मतभेद का सूत्रपात हुआ उसकी नींव भीमसेन जी के विचारों ने हो जमा दी थी। इसी लेख में 'स्वभाव' की व्याख्या करते हुये वे लिखते हैं—"स्वभाव उसका नाम है जो पूर्व जन्म के कर्मानुसार गर्भाधान समय में उसके शरीर में बनता है, बीच में स्वभाव नहीं बनता।" शायद 'स्वभाव' की इस विचित्र व्याख्या की आवश्यकता इस लिये पड़ी कि इस से वर्ण-व्यवस्था में 'जन्म' का भी किंचित महत्व स्वीकार किया जा सके। आर्यसमाज के इतिहास के मर्मज्ञों से यह बात अप्रकट नहीं है कि वर्ण-व्यवस्था सम्बन्धी इसी प्रकार के विचारों के कारण कविरत्न अखिलानन्द शर्मा को आर्य समाज त्यागना पड़ा था। इसके मूल में पं० भीमसेन ही ज्ञात होते हैं।

जिस सत्यार्थ विवेक के उत्तर की ऊपर चर्चा की जा चुकी है, यह उत्तर पहले पं० तुलसीराम स्वामी लिखा करते थे। 'सत्यार्थ विवेक' किन्हीं साधुसिंह नामक व्यक्ति का लिखा हुआ 'सत्यार्थप्रकाश' पर खण्डनात्मक ग्रन्थ था। ऐसा अनुमान होता है कि पं० तुलसीराम स्वामी और पं० भीमसेन शर्मा के बीच किन्हीं कारणों से मतभेद हो गया था। तभी तो ९ जनवरी १८८६ के आर्यसिद्धान्त में लिखते हैं 'हमारे पाठकों को स्मरण होगा कि आर्य सिद्धान्त में कुछ काल से सत्यार्थ विवेक का उत्तर पं० तुलसी राम स्वामी लिखा करते थे। अब उक्त स्वामी किन्हीं कारणों से मेरे समीप नहीं रहे इससे मैं (भीमसेन शर्मा) फिर से लिखना आरम्भ करता हूं। (पृ. ६४)

मार्च १८८७ के अंक में 'आर्यसमाज का भावी कर्तव्य' लेख समाप्त हुआ है। इसमें सार्वदेशिक सभा करने का प्रस्ताव लेखक की ओर से आया है। उस समय तक पंजाब, राजस्थान, पश्चिमोत्तर प्रदेश (वर्तमान उत्तरप्रदेश), बिहार बंगाल, मध्यप्रदेश और बम्बई इन प्रान्तों में प्रतिनिधि सभाओं की स्थापना हो चुकी थी। यद्यपि विधिपूर्वक सार्वदेशिक सभा की स्थापना १९०८ में हुई परन्तु पं० भीमसेन ने इसकी आवश्यकता पर बल देते हुए लिखा है जब तक आर्यसमाजों में कोई नायक सभा सार्वदेशिक न होगी तावत सर्वथा हलचल (पारस्परिक विरोध ले०) मिटनी दुर्लभ है।' पृ० ८४ इसी अंक में कर्णवेध संस्कार एक संक्षिप्त लेख है। तथा 'मांस भोजन विचार भाग ३' का उत्तर है। आर्यसमाज के इतिहास के पाठकों को स्मरण ही होगा कि आर्यसमाज के प्रारम्भिक काल में मांस भक्षण के औचित्य अनौचित्य को लेकर एक व्यर्थ का विवाद खड़ा हो गया था। जोधपुर के महाराजा सर प्रतापसिंह के संरक्षण में पं० ज्वालाचन्द्र शर्मा विद्याभास्कर ने मांस भोजन के समर्थन में २-३ पुस्तिकायें प्रकाशित की थीं (आमिष समीक्षा तथा मांस भोजन विचार) पं० भीमसेन को इस प्रश्न पर अपनी सम्मति देने के लिये सर प्रताप द्वारा जोधपुर आमंत्रित किया गया था और कोई आश्चर्य नहीं होता कि महाराजा सर प्रताप द्वारा धन का प्रलोभन पाकर भीमसेन मांस भोजन के समर्थन में अपनी सम्मति दे भी देते, परन्तु उसी समय पं० लेखराम ने उन्हें यह कह कर सावधान कर दिया कि यदि वे प्रलोभन में फंसे तो उनके सामाजिक जीवन का अंत हो जायगा। तदनन्तर पं० भीमसेन ने इन मांस समर्थन पुस्तिकाओं का क्रमशः खण्डन लिखा। यह उत्तर पृथक रूप से प्रकाशित भी हो चुका है तथा आर्य समाज, कृष्णपोल बाजार जयपुर के पुस्तकालय में उपलब्ध है।

जुलाई १८८७ के अंक से भीमसेन जी 'त्रयी विद्या' शीर्षक एक नवीन लेखमाला आरम्भ करते हैं। इस में उन्होंने 'ओम' पद की व्याख्या की है। इसी अंक से 'आर्यतत्व प्रकाश' भाग चार का उत्तर भी छपना आरम्भ हुआ है। १८८८ में ईसाइयों की ओर से यह 'आर्य तत्व प्रकाश' नामक पुस्तक वैदिक धर्म के खण्डन में छपवाया गया था। (क्रमशः)

वेद सप्ताह मनाने का सुझाव

प्रथम अगस्त से ३१ अगस्त सन् ६४ तक वेद सप्ताह मनायें। और सभा के साथ पत्र-व्यवहार करें ताकि सभा उचित प्रबन्ध कर सके। —व्यवस्थापक

आर्य समाज और उसके उपकार

(श्री मित्रसेन, जी आर्य एम० ए०, साहित्याचार्य ज्वालापुर)

समय समय पर परिस्थितियां परिवर्तित होती रहती हैं। कभी देश की उन्नति होती है तो कभी अवनति जब देश अवनति की ओर अग्रसर होता है तब तब नये नये सुधारक जन्म लेते हैं।

सृष्टि के आदि से आज तक सकल विश्व में अनेकों सुधारक उत्पन्न हुये हैं जिन्होंने अपने युग की परिस्थितियों के अनुकूल अपने विचारों के अनुसार सुधार कार्य किये। वे सदा संचालित रहें इस लिये अनेकों संस्थायें स्थापित हुई। उन संस्थाओं में से अनेकों संस्थायें अपने उद्देश्यों को भूल कर सकुचित हो गई और अनेकों काल कवलित हो गई।

अपने युग की भयंकर परिस्थितियों पर दृष्टिपात करके युग-प्रवर्तक, परमहंस, परिव्राजकाचार्य महर्षि दयानन्द सरस्वती ने कुरीतियों के सुधार के लिये आर्य समाज की स्थापना की। उन्होंने इसका उद्देश्य बताया 'संसार का उपकार करना' यह उस युग की सर्वप्रथम संस्था थी जिसने वसुधैव कुटुम्बकम् को मान्यता दी। मान्यता ही नहीं दी अपितु रचनात्मक रूप में भी उसने संसार का बहुत उपकार किया है।

जिस प्रकार आकाश में अनेकों तारागण विद्यमान हैं, कितना ही प्रयत्न किया जाए उनकी गणना नहीं हो सकती, ठीक इसी प्रकार अखिल विश्व के लिये महर्षि दयानन्द के अनेकों उपकार हैं जिन की गणना नहीं की जा सकती। किसी कवि ने यह समुचित पंक्तियां लिखीं

उपकार कितने हैं गिनाऊं,
मैं कहां तक आपको।
आर्य ही सारे हरेंगे,
विश्व के सन्ताप को॥

एक बार महर्षि दयानन्द ने विचार प्रगट करते हुये कहा था कि काम रहे चाहे नाम न रहे। आज उन की वाणी भी सत्य ही सिद्ध हुई। आर्य समाज द्वारा किये गये अनेकों कार्य ऐसे हैं जो संसार में आज भी प्रचलित हैं किन्तु उसके प्रवर्तक के रूप में आर्यसमाज को कोई नहीं जानता, जैसे नींव की ईंट को कोई नहीं देख पाता वैसे ही आर्यसमाज नींव की ईंट सिद्ध हुआ है। हमें यही देख कर प्रसन्नता होती है कि उसके द्वारा प्रारम्भ किये गये कार्य संसार में विद्यमान हैं।

जैसा कि हम पूर्व ही निवेदन कर चुके हैं कि आर्य समाज के अनगिनत कार्य हैं उपकार हैं, सब की गणना करना इन पृष्ठों में कठिन है। फिर भी हम उसके कुछ कार्यों का संक्षेप में वर्णन धारावाहिक रूप में करेंगे। आशा है इससे पाठकों को विशेष लाभ प्राप्त होगा।

जागृति की भावना

उन्नीसवीं शताब्दि और उस से पूर्व का कुछ समय भारतीय इतिहास में गिरा हुआ काल माना जाता है। वह काल ऐसा था जिस में भारत का सर्वतोभाव से पतन हो रहा था। आर्य अपने धर्म ग्रन्थ वेदों के नाम से ही परिचित थे, किन्तु उनमें क्या लिखा है, जीवन में उनका क्या महत्व है आदि की विषय में वे कुछ भी न जानते थे। यहां की भाषा संस्कृत और हिन्दी पतोन्मुख हो रही थी बाल विवाह आदि कुप्रथाओं के कारण आर्य जाति दिनोंदिन निर्बल होती जा रही थी, भयंकरता अपना तांडव नृत्य कर रही थी ऐसी परिस्थिति में भारत में एक महान सुधारक, योगी, राष्ट्र निर्माता महर्षि दयानन्द का जन्म हुआ।

महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज की स्थापना १० अप्रैल १८७५ई० में बम्बई सुधारवाद की भावनासे की इस प्रकार इस को स्थापित हुये लगभग ८८ वर्ष ही हुये हैं। इतना समय जातियों और धर्मों के इतिहास में विशेष महत्व नहीं रखता परन्तु आर्य समाज ने इतने काल में ही सुप्त आर्य जाति को जागृत कर दिया। इसका जन्म मत विशेष के रूप में नहीं अपितु सत्य के ग्रहण करने और असत्य के त्याग के लिये हुआ।

आर्यसमाज के आंदोलन का स्थान १९वीं सदी के आंदोलनों में विशिष्ट स्थान है। यह आंदोलन ब्राह्मसमाज के आंदोलन की भांति उग्र नहीं था और न मौलिक सिद्धांतों का परित्याग करने वाला था और न यह रूढ़ि तथा हठ पर ही आधारित था, वैदिक धर्म के मूल तत्व वेद, ईश्वर और कर्म आदि को सुरक्षित रखते हुये और समाज में प्रचलित कुप्रथाओं को दूर करके भारतीय जनता को जगाने का इस आंदोलन का परम लक्ष्य सैकड़ों वर्षों से व्यर्थ की रूढ़ियों और मानसिक गुलामी को सदा के लिये दूर कर देना तथा स्वतंत्रता का उद्घोश करना आर्य समाज का ही काम था। राष्ट्रीय महा सभा का जन्म भी न हुआ था, स्वतंत्रता शब्द का नाम भी कोई नहीं जानता था, उस समय स्वराज्य का उद्घोष और बच्चे बच्चे के मन में उसके प्रतिप्रेम उत्पन्न कर देना आर्य समाज का ही काम है।

वर्षों मठ और मन्दिरों की बुरी अवस्था देख कर तीर्थों के खोखलेपन का अनुभव करके आर्य समाज ने भारत की जनता में जागृति पैदा कर दी, जिस के परिणाम स्वरूप ही भारत में स्वराज्य आन्दोलन चला, और सफल भी हुआ। छुआछूत का भूत दूर हुआ, जनता के हृदय से दुर्बल भावनायें दूर हुई और उन के स्थान पर बल का संचार हुआ।

आर्य समाज के पूर्ववर्ती ब्रह्म समाज ने भी सुधार करने का प्रयत्न किया। परन्तु उस ने हिन्दू धर्म के विकास में बाधक झाड़ झंखाड़ों को जहां साफ किया वहां उसे के साथ मूल को भी काट डाला। वेद, शिखा और यज्ञोपवीत का कोई महत्व न समझा। परन्तु आर्य समाज ने उस के विपरीत वेदों के आधार पर ही हिन्दू समाज का संगठन किया और उन का पढ़ना पढ़ाना परम धर्म बताया। इस का परिणाम यह हुआ कि भारत का प्रत्येक निवासी जाग पड़ा और आर्य समाज के बताये हुये मार्ग पर चल पड़ा। भले ही आज कोई समाज का नाम आदर्श के रूप में भूल जावे, परन्तु यह सब को मानना ही पड़ेगा कि आज भारत में जो जागृति दिखाई पड़ती है उस का श्रेय आर्य समाज का ही है।

हम यह पूर्व ही निवेदन कर चुके हैं कि इस का उद्देश्य संसार का उपकार करना था परन्तु यहां हम स्थान भाव के कारण भारत में हुये कार्यों का ही दिग्दर्शन करा रहे हैं। आर्य समाज ने जहां जागृति का काम प्रारम्भ किया वहां उसे अभी अपने कार्य में और अधिक तीव्रता दिखानी है। क्योंकि अभी उसे संगठन शक्ति का प्रचार, वैदिक धर्म के प्रति निष्ठा, विधर्मी हुये भाइयों को लौटाना, वर्णाश्रमर्यादा को स्थापित आदि अनेक कार्यों से अभी जनता जनार्दन में जागृति लाने के लिये आज आर्य समाज की अतीव आवश्यकता है। अतः हमारा यह कर्तव्य हो जाता है कि इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये यथा शक्ति उन्हें सहायता दें। (क्रमशः)

तन्त्रों की घृणित शिक्षा

(ले०—श्री पिंडीदास जी ज्ञानी अमृतसर)

(गतांक से आगे)

सुरा दर्शन मात्रेण
सर्व पापैः प्रमुच्यते।
तद् गन्धाघ्राण मात्रेण
शतक्रतु फलं लभेत।
मद्य स्पर्शन मात्रेण
तीर्थ कोटि फल लभेत्।
देवि तत्पानतः साक्षा-
त्लमेन्मुक्ति चतुर्विधाम्॥
सुरा गंगा सुरा सिन्धुः
सुरा देवी सरस्वती।
सुरा गोदावरी रेवा
सुरैव परमम्पदम्॥

मेरु तन्त्र प्रकाश १ श्लो० ३८,३६,४०

अर्थात्—मद्य के दर्शन मात्र से सब पापों से विमुक्त हो जाती है। उसकी गन्ध को सूंघ लेने से एक सौ यज्ञों का फल प्राप्त हो जाता है। ३८।

सुरा के स्पर्श कर लेने से एक क्रोड़ तीर्थ का फल मिलता है। हे देवि! उसके पान कर लेने से साक्षात् चार प्रकार की—सायुज्य, सामीप्य, सादृश्य और सारूप्य—मुक्ति लाभ होती है। ३९।

सुरा ही गंगा है, सुरा ही सिंधु है, सुरा ही देवी सरस्वती है, सुरा ही गोदावरी है, सुरा ही रेवा है। सुरा ही परम पद है। ४०।

देखिए! तीर्थ, तप, दान, धर्म, कर्म, नियम, व्रत, पूजा-पाठ, होम-यज्ञ, श्राद्ध-तर्पण, पूजन-अर्चन, यहां तक कि परम पद भी शराब की बोतल में कैसे एकत्रित कर दिए गये हैं।

शक्त्युच्छिष्टं पिबेन्मद्यं
वीरोच्छिष्टं तु चर्वणम्।

मेरु तन्त्र प्रकाश १० श्लोक ३६६

अर्थात्—शक्ति (वामी जिस स्त्री को नंगी करके भैरवी चक्र में पूजते हैं) का जूठा मद्य और वीर (जिस वामी पुरुष को नंगा करके भैरवी चक्र में पूजा जाता है) जूठा 'खाजा' (शराब पीने के साथ जो कुछ खाया जाता है) खाना चाहिये।

नोट—वामियों की परिभाषा में निम्नलिखित पांच शक्तियां होती हैं।

राज वेश्या नागरीच
गुप्त वेश्या तथैव च।
देव वेश्या ब्रह्म वेश्याच
शक्तयः पंच प्रकर्तिताः

रुद्रयामल तन्त्र

सुरानिन्दन्ति ये मुढास्ते मूढा
जन्म जन्मनि। मेरु तन्त्र प्रकाश १० श्लोक ४५

अर्थात—जो मूर्ख मनुष्य सुरा की निन्दा करते हैं वह जन्म जन्मान्तरों में मूढ़ होते हैं!

द्वितीय मकार—मांस

मांसं तु त्रिविध प्रोक्तं ख
भूजलचरं प्रिये।
यथा सम्भवमप्येकं तर्पणार्थं
प्रकल्पयेत्॥
मांस दर्शन मात्रेण सुरा
दर्शनवत् फलम्।

कुलार्णव तन्त्र उल्ला ५ श्लो० ४४

अर्थात्—हे प्रिये (पार्वती)! मांस तीन प्रकार का कहा है—१. गगन विहारी पक्षियों का २. स्थल चर जीवों का और ३. जल चर जन्तुओं का। इन में से यथा सम्भव कोई एक तर्पण के लिये उपलब्ध किया जा सकता है। मांस के दर्शन मात्र से भी सुरा दर्शन वत् फल प्राप्त होता है।

अब्राह्मण नराणान्तु
मांसं सर्वोत्तमं मतम्।
मृगाणाञ्च तथा प्रोक्तं
तित्तिरादिक पक्षिणाम्॥

मेरु तन्त्र प्रकाश २० श्लोक १४३

अर्थात्—ब्राह्मण के अतिरिक्त अन्य मनुष्यों का मांस सर्वोत्तम कहा गया है। फिर मृगों और तित्तिरादिक पक्षियों का भी।

टिप्पणी—ब्राह्मण का मांस हराम क्यों जी! इसलिये कि घर को लगती है?

पशु बलिदान

स्ववामभागे सामान्यं
मण्डलं संचयेत्सुधीः।
सम्पूज्य स्थापयेत्तत्र
सामिषान्नं सुधान्वितम्॥
सर्वोपचारैः सम्पूज्य
बलिं दद्यात् समाहितः।
मृगच्छागश्च मेषश्च
लुलायः सुकरस्तथा।
शल्लकी शशको गोधा
कूर्मः खड्गो दश स्मृताः॥
अन्यानपि पशून्दद्यात्
साधकेच्छानुसारतः॥
सुलक्षणं पशुं देव्याग्रे संस्थाप्य
मन्त्रवित॥
अर्घ्योदकेन सम्प्रोक्ष्य धेनुमुद्रामृतीकृतम्।
ततः खड्ग समादाय कूर्चे बीजेन पूजयेत॥
इत्थं निवेद्य पशु भूमि संस्थं तु कारयेत।
देवीभाव परो भूत्वा हन्यात्तीव्र प्रहारतः॥
ततः कवोषणं रुधिरं बटुकेभ्यो बलिं हरेत।
एवं बलि विधिः प्रोक्तः कौलिकानां कुलार्चने॥
अन्यथा देवता प्रीतिर्जायते न कदाचन॥

महानिर्वाणतन्त्र उल्लास ६ श्लोक ५४,१०४,१०५,१०६,१०७, १११,११५,११६,११७,११८

अर्थात्—ज्ञानी पुरुष अपने वाम भाग में एक साधारण चौकोन मण्डल खैंच कर उस में मद्य मांसादि सहित अन्न स्थापन करे॥५४॥

इस प्रकार वाद्यादिक सर्वोपचारों से देवी की पूजा समाप्त कर सावधान हो, बलि करे॥१०४॥

मृग, छाग, मेष, भैंसा, वराह नाम एक पशु। शूकर, शल्लकी (सेही), शशक, गोह, कछुआ—ये दश प्रकार के ही पशु बलिदान के लिये श्रेष्ठ हैं॥१०५॥

इनके सिवाय साधक की इच्छानुसार और पशुओं का भी बली दिया जा सकता है॥१०६॥

मन्त्र जानने वाला साधक, सुलक्षण पशु को देवी के आगे रखकर अर्घ्य का जल छिड़क कर धेनु मुद्रा करे॥१०७॥

फिर तलवार लाकर कूर्च्च बीज (हूँ) से पूजन करे॥१११॥

इस प्रकार निवेदन करके पशु को भूमि पर लिटा दे॥११२

(क्रमशः)

आर्यसमाज के नेताओं से

(पृष्ठ २ का शेष)

विचारों के रंग में रंगा है, योग्य तथा कर्म है, तो बड़ा सुन्दर योग युवकों का मण्डल तैयार हो सकता है। बहुत बड़ी कमी पूरी हो जायगी। इस से आंखें बन्द नहीं की जा सकतीं कि आर्य समाज युवकों से खाली होता जा रहा है। संस्थाओं के वातावरण में वैसी स्थिति नहीं जैसी होनी चाहिए। योग्य तथा आस्था वाले अपने युवक स्थान २ पर भटकते फिरते हैं। ऊपर से एक ऐसी विशेष सज्जनों की समिति बननी चाहिए जो इस कार्य को अपने हाथ में ले तथा ऐसे योग्य युवकों की सूची तैयार करे जिन से भविष्य में बड़ा काम लिया जा सकता है। आर्य समाज का इतना व्यापक आन्दोलन है, संस्थाएं हैं, क्षेत्र हैं पर क्या हो रहा है—यह समझ नहीं आता

—त्रिलोक चन्द्र

वेद प्रचार कोष में मार्ग व्यय के अतिरिक्त

पांच सौ रुपए की थैली भेंट

राजौरी में धर्म प्रचार

जम्मू से पुंछ तक आर्य में अनेक स्थानों पर आर्यसमाज मन्दिर हैं परन्तु जीवित और सक्रिय समाजों में राजौरी और अखनूर का नाम विशेष उल्लेखनीय है। अखनूर समाज प्रतिवर्ष उत्साह से वार्षिकोत्सव किया करता है इसके अतिरिक्त वहां नियमित रूप से साप्ताहिक सत्सङ्ग भी होते हैं वर्ष में एक दो बार विशेष प्रचार की योजना भी बनाई जाती है इस वर्ष आर्य वीर दल की शाखा भी स्थापित हो गई है। समाज के कार्यकर्त्ताओं का उत्साह सराहनीय है।

राजौरी आर्यसमाज ने अपने जून ६३ के वार्षिकोत्सव पर पन्द्रह दिन के निरन्तर प्रचार कराने का सभा से वचन लिया था। सभा ने समाज के आग्रह पर अपनी सुयोग्य भजनमंडली श्री जगतराम, बस्तीराम जी सहित अपने प्रसिद्ध वक्ता एवम् व्याख्याता, श्री पं० ओम्प्रकाश जी को २२ जून से उधर भेज दिया। प्रशंसित प्रचारक मण्डल ने जिस अपूर्व उत्साह और लग्न से वहां प्रचार किया उसका यथेष्ट प्रभाव राजौरी निवासी जनता पर पड़ा। प्रतिदिन दोनों समय मध्याह्न २ से ३-४५ तक देवियों में और रात्रि ६ से ११ तक सार्वजनिक सभा में वैदिक धर्म का प्रचार होता रहा। देवियों और पुरुषों ने एक दूसरे से बढ़ कर प्रचार में अपनी रुचि दिखा कर समाज के संघटन को सुदृढ़ बनाया।

प्रति रविवार तीन बार सत्सङ्ग होते रहे। इस सारे आयोजन को सफल बनाने में परम पिता परमात्मा की असीम कृपा हमारे साथ रही एक बार भी सत्सङ्ग के अवसर पर वर्षा नहीं हुई वर्षा या तो पहले हो जाती थी या सत्सङ्ग के पश्चात्। इस प्रकार सारा प्रचार यज्ञ निर्विघ्न समाप्त हुआ।

समाज के प्रधान श्रीमती विमला बहिन, उपप्रधान ला० रूपचन्द जी एडवोकेट तथा लग्नशील—श्रद्धावान् ऋषि भक्त मन्त्री श्री महता ओम्प्रकाश जी तथा उनके सहयोगी सभी बधाई के पात्र हैं जिनकी तपस्या और कार्य कुशलता से धर्मप्रचार इस सुदूर और पिछड़े हुये प्रदेश में होता रहता है।

सभा को विशेष आर्थिक सहयोग देते हुये इस बार वेदप्रचार में पांच सौ रु० श्रद्धा से भेंट किये गए। मार्ग व्यय के छयासठ रुपये तथा आर्य जगत के १२) बारह रुपये इस राशि के अतिरिक्त देकर सभा को सम्मानित किया गया।

भगवान् राजौरी समाज की तरह सर्वत्र आर्य बन्धुओं में उत्साह एवम् श्रद्धा उत्पन्न करें ताकि वेद धर्म की दुन्दुभि बाजे—अविद्या का नाश और विद्या का प्रकाश हो।

—ओम्प्रकाश आर्योपदेशक

आर्यसमाज नाभा में वैदिक धर्म प्रचार

पिछले सप्ताह आर्य प्रादेशिक सभा के सुप्रसिद्ध भजनोपदेशक श्री पं० हजारी लाल जी नाभा में पधारे आप की उत्तम प्रचार शैली से आर्य हाई स्कूल नाभा के विद्यार्थियों तथा सारे स्टाफ ने खूब आनन्द लाभ उठाया। भिन्न-भिन्न मुहल्लों में रात्रि के समय आप का अत्यन्त प्रभावशाली प्रचार होता रहा। इस अवसर पर सभा को ४७ वेद प्रचारार्थ मिले।

—परमानन्द मन्त्री आर्यसमाज

उपकार ऋषि दे भुलना नईं

(रचयिता:—किशोरीलाल 'प्रेम' रेणुका, जिला सिरमौर हि.प्र.)

ऋषि दयानन्द जया सारे जग अन्दर,
नईं कोई भी सच्चा पीर होया।
लखां रंग के कपड़े फिरदे नें,
पर नईं उनां जया कोई फकीर होया॥

उनां ज्ञान दी जोत जगा कर के,
अज्ञान अन्धकार मिटा दित्ता।
ऊंच नीच दे भेद नूं दूर करके,
छूत-छात दा झगड़ा मिटा दित्ता॥

सच्च बोलणा न्याय दा पख करणां,
देणा किसी भी जीव नूं दुःख नाहीं।
सेवा प्रेम ते सब दा भला करणां,
इस तों बढ़ के ते कोई धर्म नाहीं॥

ऋषि मड़ी मसाणा ते कबरां ते,
मोयां मुरदयां दी पूजा हटा दित्ती।
ऐदे बदले सच्चे ईश्वर दी,
सारे जग नूं पूजा सिखा दित्ती॥

मोयां मां प्यो नूं नईं पहुंच सकदी,
इन्ना श्राद्धयां दे खांदयां खीर पूड़ी।
ऐ पाखन्ड फैलाया पाखन्डियां ने,
अपने खाण दे वास्ते खीर पूड़ी॥

महर्षि ने ऐ उपदेश कीता,
श्रद्धा नाल सेवा करो मा प्यो दी।
नाले पुन्न कमाओ नाले यश कमाओ
ते असीस भी लवो ज्यूंदे मां प्यो दी॥

निराकार अजन्मा अमूर्त है ओ
नां ओ जमदा ते न ओ मरदा ऐ।
तुस्वी मूरती उसदी बणांवदे की,
सारे जग नूं जेडा बणांवदा वे॥

हत्थ जोड़ के 'प्रेम' ऐ अर्ज करदा ऐ,
उपकार महर्षि दे भुलनां नईं।
महर्षि दे सच्चे अनुयायी बनके,
तुस्सां वेद प्रचार नूं भुलनां नईं॥

सात्विक दान

श्री पूज्य रलाराम जी एम. ए. प्रधान प्रादेशिक सभा को वेद-प्रचारार्थ निम्न सज्जनों ने दान दिया है २००/- श्री ज्ञानचन्द्र जी नारङ्ग प्रधान म्युनिसिपल कमेटी मुकेरियां, १००/- श्री जगदीशराम जी अग्रवाल, मैसर्ज रामजी मल राम गोपाल गौशाला बाजार होशियारपुर १००/- श्री राजेन्द्रनाथ जी गुप्त आयरन मरचैंट होशियारपुर

सभा की ओर से हम उपरोक्त महानुभावों का अतिशय धन्यवाद करते हैं।

ज्ञानचन्द भाटिया
सभा मन्त्री

सभा का वेद प्रचार

श्री प० चन्द्र सैन ३ हितैषी उपदेशक सभा, ने उज्जैन नगर में आज कल वेद प्रचार कर रहे हैं उज्जैन के अतर्गत मोती लाल नेहरू नगर में माधव नगर समाज के प्रधान ला अमर नाथ जी पाहवा के निवास स्थान पर एक सप्ताह तक वेद प्रचार हुआ। इसी नगर में श्री डी. एल. दत्ता वाईस चांसलर विक्रम यूनिवर्सटी, श्री लाजपत राय जी ठेकेदार आदि सज्जनों ने पूरा सहयोग दिया। प्रचार का प्रभाव अति उत्तम रहा। सभा को आर्थिक सहायता निम्न प्रकार से प्राप्त हुई। डा जी.ए. दत्ता ५१/- सेठ ईश्वरदास जी ५१/ ला. लाजपत राय जी ५४/- आर्य समाज सागर ३१/- इन सब का सभा की ओर से धन्यवाद।

आर्यसमाजें ध्यान दें

२४ अगस्त से ३१ तक वेद सप्ताह सभी समाजें प्रति वर्ष की भान्ति उत्साह से मनाएं इस अवसर पर सदस्यों में वितरण करने के लिए वैदिक धर्म का महत्व सभी ने छपवाया हुआ है जो कि १२/- सैंकड़ा मे मिलता है अधिक संख्या में मगवाकर सदस्यों में [illegible] से वितरण करें। कापी थोड़ी हैं अतः समय पर आर्डर भेजें।

—प्राप्ति स्थान मैनेजर म० हंसराज साहित्य विभाग A. P. P. सभा जालन्धर

श्री मास्टर आत्माराम जी की जीवनी सचित्र

मूल्य 1.65 N p डाक व्यय सहित जयदेव ब्रादर्ज आत्मा राम पथ बडोदा-१ से मगवाए।

आत्मा का कोई स्वरूप अथवा आकार है या नहीं ? मैं आत्मा का स्वरूप परमाणु रूप मानती हू। जो आत्मा का कोई स्वरूप नहीं यह सृष्टि में अनेक विध प्राणियों और इसमें सुखी-दुखी कैसे।

पुनर्जन्म किस का, मोक्ष किस का ? अच्छा बुरा कार्य कौन करता है ? कर्मानुसार अच्छा बुरा संस्कार किस पर पड़ता है ?

विरोधी कहते हैं कि जीवात्मा का आकार हो तो दीखता क्यों नहीं? सूक्ष्म दर्शक इसे क्यों नहीं देख पाते ! मैं कहती हू कि मरण पश्चात आत्मा अपना कर्मानुसार दूसरा जन्म धारण करने के लिए कहा से कहा चला जाता है। इनको पकड़ने वाला कौन समर्थ है। कि इसको पकड़कर सूक्ष्म दर्शक के पास ले जाए। यह आश्चर्य जनक बात है। पूरी रीति से समझ मे नहीं आती।

आत्मा के स्वरूप के सम्बन्ध में विद्वानों व वेद का प्रमाण देकर समाधान देने की कृपा करें।

शोक प्रस्ताव

आर्यसमाज लोहगढ़ (अमृतसर)

ला० शंकरदास जी त्रेहन जो आर्य सामाजिक कार्य कर्त्ताओं में निस्वार्थ रूप से सेवा करने वालों मे अग्रगण्य थे उनके निधन पर आर्यसमाज लोहगढ़ अमृतसर ने शोक प्रस्ताव पास किया।

ऐसे ही प्रस्ताव हिन्दुमहासभा अमृतसर तथा आल इण्डिया दयानन्द सालवेशन मिशन तरन-तारन शाखा ने अपने खास अधिवेशनों में पास किये।

हसराज महिला महा विद्यालय जालन्धर

हम हंसराज महिला महा-विद्यालय जालन्धर के प्राध्यापक तथा प्रिंसिपल विद्यालय की स्थानीय परामर्श दात्री सभा के वयोवृद्ध और कट्टर आर्य समाजी सदस्य श्री शंकरदास जी त्रेहन के निधन पर हार्दिक शोक प्रकट करते हैं और परम पिता परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि वह दिवगत आत्मा को शान्ति तथा सद्गति दे और उनके परिवार वालों को तथा हम सब आर्यसमाजी भाई और बहिनों को इस अपार कष्ट को धैर्य पूर्वक सहन करने की क्षमता दे

... प्रचारिणी सभा, होशियारपुर

जिला वेद प्रचारिणी सभा, होशियारपुर अपने माननीय सदस्य श्री शंकर दास जी त्रेहन, जालन्धर निवासी, की मृत्यु पर हार्दिक शोक तथा दुख प्रगट करती है। तथा प्रभु से प्रार्थना करती है कि लाला जी की पवित्र आत्मा को सद्गति प्रदान करें।

आर्यसमाज अलावलपुर जालन्धर

की ओर से आज दिनांक १२-७-६४ रविवार को ला० शंकर-दास प्रधान जिला आर्य समाज जालन्धर की मृत्यु पर शोक प्रस्ताव पास किया गया, जिस में इन महानुभाव के अभाव से आर्य समाज के अन्दर अभूतपूर्व स्थान रिक्त हो जाने का अनुभव किया गया। प्रभु से प्रार्थना की गई कि उनकी आत्मा को शांति एवं सद्-गति प्रदान करे, तथा उनके परिवार के ऊपर जो दुख आ पड़ा है, उसे सहन करने का शक्ति दे।

श्री ओम प्रकाश जी महोपदेशक सभा का वेद प्रचार कार्य

आप २७ जून से जम्मू के पहाड़ी इलाकों मे प्रचार कर रहे हैं। [illegible]री, अखनूर सांबा आदि प्रसिद्ध स्थानों में धूम धाम से प्रचार कार्य हो रहा है। अब तक सभा को वेद प्रचारार्थ निम्न धन की राशि प्राप्त हुई है। २१/- अखनूर से, ६/- अखनूर आर्य जगत के १२/- आर्य जगत के राजौरी से, २१/- आर्य समाज नौशेहरा, ४००/- आर्य समाज राजौरी। इन सब संस्थाओं व दानी सज्जनों का सभा की ओर से धन्यवाद।

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टैलीफोन न० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 12

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे 4-8-64 वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक ३१) ९ श्रावण २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०— २ अगस्त १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

वयं तवअनागस:

हे जगत् पिता ! हे हमारी प्यारी मात: वयं तव—हम सब तेरे हैं, तेरे बालक हैं। तेरे सिवाय और किसी के भी नहीं। अनागस :—बिना पाप के हो जायें। कृपा करो कि हमारा जीवन पाप पथ पर न चले।

त्वया वयं पवमानेन

हे देव ! हम आप के साथ ही रहें। क्योंकि आप पवमान हो, पवित्र करने वाले हो। तेरे साथ हम भी पवित्र हो जायंगे, हमारा जीवन, हमारे कर्म शुद्ध पवित्र हो जायेंगे। आप पवित्र तथा पवित्रकारी हो।

एना विश्वान्यर्य द्युम्नानि

हे अर्य ! परमेश्वर ! हमें विश्वानि-सारे हर प्रकार के धन भण्डार प्राप्त करावें। ऐसा धन देवें जो स्वयं भी चमका देवे। उचित साधनों से यश बढ़ाने वाला धन हमें प्रदान कीजिए

सा म वे द से

वे दा मृ त

ओम् सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन।

अग्नये जातवेदसे स्वाहा। इदमग्नये-इदं न मम।

यजु० अ० ३ मन्त्र २

अर्थ—हे यज्ञ करने वालो ! इस (सुसमिद्धाय) उत्तम रीति से प्रदीप्त होने वाली तथा (शोचिषे) अत्यन्त शुद्ध एवं दोषों को दूर करने वाले (जातवेदसे) पदार्थों में रहने वाले इस अग्नि के लिए (घृतं) घी (तीव्रम्) तेज (जुहोतन) आहुति के रूप में डालो। यह वचन और कथन ठीक है। प्रदीप्त अग्नि में आहुति देते रहो। इसे मन्द मत होने दो

भाव:—यह यज्ञ की अग्नि जब भलीभान्ति प्रदीप्त हो जाती है, तभी उस के द्वारा यज्ञ में दी जाने वाली आहुतियों से लाभ होता है। बुझी हुई अग्नि में डाली आहुति सर्वथा बेकार होती है। अग्नि प्रज्वलित हो जाने पर उसे और प्रकाशित करने के लिए घृत की आहुतियां दी जानी चाहिएं। ऐसा अग्निदेव ही आहुतियों को लेकर उनको सूक्ष्म बनाकर दूर २ तक पहुंचा देता है। राष्ट्र के यज्ञ की अग्नि की भी यही दशा होती है। देश में जब राष्ट्रिय ज्वाला जागती है उस में जीवन का बलिदान दिया जाता है। इस के बाद दूसरा बलिदान दिया जाने लगता है तभी उस से पूर्ण लाभ होता है। जब देश के लोग तन, मन, धन की भेंट करना जानते हैं। देश प्रेम की अग्नि को खूब बलिदानों से प्रदीप्त कर देते हैं तब राष्ट्र में जीवन पैदा होकर जन जन का कल्याण कर देता है। यज्ञ की अग्नि को घृत से तथा समाज की अग्नि को हम उत्सर्ग, त्याग से खूब तेज कर देवें—सं०

ऋषि दर्शन

वयं सदा सुखिन:

हे प्रभो ! हम सदा सुखी हों। हे परमेश्वर ! हम आप से ही यह प्रार्थना करते हैं कि हम सब आप के परमभक्त, परम-श्रद्धालु आप की कृपा से अपने जीवन में सदैव सुखी रहें। कभी दुःख का दर्शन न करें !

प्राणमयमन्नमयं बलं च

परमात्मन् ! हमें कृपा करके प्राणशक्ति अन्न के भण्डार तथा हर प्रकार की शक्ति प्रदान कीजिये। हम प्राणों की शक्ति वाले हों, बलवान् बनें तथा खाने पीने के पदार्थों से सदा माला-माल होवें। तीनों प्रसाद हमें प्राप्त होवें।

धर्ममार्गं ददातु

आप कृपा करते हुए हमारे लिए धर्म का मार्ग प्रदान करें। जीवन में हम धर्म के पथ पर ही आगे बढ़ते जायें कभी पाप मार्गी न बनें। धर्म मार्ग ही हमारे जीवन का पवित्र मार्ग होवे—

भा ष्य भू मि का से

अधिष्ठाता—श्री संतोषराज जी सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

चारवाक मत और उसकी समीक्षा

ले० ब्रह्मदेव विद्यावाचस्पति, शास्त्री विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान होशियारपुर

सृष्टि की उत्पत्ति से लेकर और महाभारत पर्यन्त संसार में वैदिक धर्म की ध्वजा व्योम में लहरा रही थी। परन्तु महाभारत का विनाशकारी युद्ध ने वैदिक धर्म को ऐसा धक्का पहुंचाया कि आज तक भी इसकी दशा सुव्यवस्थित रूप से न हो पायी। सांख्य शास्त्र में एक सूत्र आता है 'उपदेश्योपदेष्ट्रित्वात् तत्सिद्धि इतरथान्धपरम्परा' अर्थात् जब संसार के अन्दर अच्छे २ उपदेशक और विद्वान् होते हैं, तो धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि होती है और इनके अभाव में अन्धपरम्परा फैल जाती है। ठीक यही दशा हमारे भारत वर्ष की हुई। जब इस विनाशकारी महाभारत के युद्ध में बड़े २ तत्ववेत्ताओं ने अपने प्राणों का आहुतियां दे डालीं, तब वसुन्धरा विद्वानों एवं उपदेशकों से खाली हो गयी। इसका परिणाम यह हुआ कि भारतवर्ष के अन्दर अन्धपरम्परा फैल गयी। उसी अन्धपरम्परा के प्रवाह के समय एक वृहस्पति नामक पुरुष ने चारवाक मत की स्थापना की। अब मैं चारवाक मत की स्थापना करके उनका वैदिक धर्मानुसार समाधान करता हूं।

(१) ईश्वर—ईश्वर के विषय में चारवाकों का मत।

जैसे—सृष्टि का कर्ता ईश्वर नहीं। सृष्टि स्वयं बनती और बिगड़ती है।

समा—संसार के अन्दर हम नित्य प्रति देखते हैं कि बिना कर्ता के कोई भी कार्य सिद्ध नहीं होता। जैसे हम घड़ी को देखते हैं और देखकर अनुमान करते हैं कि इस का बनाने वाला कोई अवश्य होगा। निम्न से निम्न वस्तु भी बिना कर्ता के नहीं बन सकती तो इतना बड़ा ब्रह्माण्ड बिना कर्ता के कैसे बन सकता है। इस से सिद्ध हुआ कि इस संसार का बनाने वाला कोई अवश्य है वह परमात्मा है।

(२) यदि ईश्वर की हस्ती को न माना जाय और यह माना जाय कि यह संसार सदा से इसी प्रकार चला आरहा है और इसीप्रकार चलता रहेगा, तो इस में यह दोष आता है कि प्रकृति में स्वयं किसी वस्तु के बनने बिगड़ने, ज्ञानपूर्वक और नियमानुसार मिलाने का ज्ञान नहीं है। क्योंकि वह जड़ पदार्थ है। अतः बनाने बिगाड़ने और ज्ञानपूर्वक मिलाने वाली कोई अन्य चैतन्य शक्ति है। जैसे आप घड़ा को ले लिजिए—मिट्टी भी है पानी और चाक भी है परन्तु बिना कुम्भार के घड़ा नहीं बन सकता। क्योंकि वह जड़ पदार्थ है। जड़ पदार्थ स्वयं आपस में नहीं मिल सकते। जब तक कि कोई अन्य चैतन्य शक्ति उस को न मिलाए। इस से सिद्ध हुआ कि सृष्टि का बनाने वाला कोई अन्य चैत्यन्य असाधारण शक्ति है और वह परमात्मा है। इस से सिद्ध हुआ कि जो चारवाकों का यह सिद्धांत ठीक नहीं।

(२) जीव—जीव के विषय में चारवाकों का मत। जैसे—

जीवात्मा नाम का कोई अजर, अमर शाश्वत द्रव्य नहीं है। शरीर के साथ उत्पन्न होता है और शरीर के साथ विनष्ट हो जाता है।

समा.—(१) जब बाहरी और भीतरी तमाम इन्द्रियां क्लोरोफार्म द्वारा अथवा समाधि की अवस्था में बेकार हो जाती हैं तब भी जीव धारी जीवित रहता है। इस से पता चलता है कि शरीर के अन्दर कोई ऐसी शक्ति अवश्य है जो इन्द्रियों से बिलकुल भिन्न है। इन्द्रियों के बेकार हो जाने पर भी शरीर सड़ने गलने से बचा रहता है। जैसा कि समाधि अवस्था में देखा जाता है।

(२) जब मनुष्य गाढ़ी निद्रा में होता है और तमाम इन्द्रियां और मन अचेत रहता है। परन्तु जागने पर सोने वाला यह अनुभव करता है कि बहुत आराम से सोया। यह अनुभव करने वाला इन्द्रियों से पृथक् है और वही जीवात्मा है।

(३) एक मां बाप के दो बेटों का एक जैसा पालन पोषण हुआ और उन्होंने एक ही जैसी शिक्षा पाई परन्तु उन में से एक योग्य हो जाता है और दूसरा अयोग्य। ऐसा पिछले जन्मों के कारण होता है। संस्कार जीवात्मा के साथ शरीर में आता है। अतः इन सब बातों से सिद्ध हुआ कि जीवात्मा शरीर से भिन्न है।

इस विषय में वेद का भी प्रमाण दिया जाता है। जैसे वायुरनिलममृतं, यह वेद का मंत्र है। इस मंत्र के अन्दर वायु को जीवात्मा बतलाया है क्योंकि वाति गच्छतीति वायु, अर्थात् जो आता जाता है उसे वायु कहते हैं। यह जीवात्मा भी एक शरीर में आता जाता है। इस लिए इस का नाम भी वायु है। आगे कहा वह अमृतं वह अमृत है अर्थात कभी मरता नहीं है। इस विषय में बहुत से प्रमाण दिये जा सकते हैं परन्तु लेख बड़ा हो जायेगा। इसलिए इतना ही लिखकर समाप्त करता हूं। उपरिलिखित प्रमाणों से यह सिद्ध हो चुका की जीवात्मा भिन्न है। इस लिए चारवाकों का यह मत असत्य है।

(३) प्रकृति को मानते हैं—परन्तु अन्य सिद्धान्तों में मत भेद है। जैसे ४ प्रत्यक्ष प्रमाण को ही मानते हैं। अन्य को नहीं।

समा.—यदि केवल प्रत्यक्ष प्रमाण को ही माना जाय तो ठीक नहीं। संसार के अन्दर चारों प्रमाणों के बिना हम संसार के व्यवहारों क नहीं चला सकते। जैसे चारवाक मतावलंबी भाई के घर में एक पुत्र उत्पन्न हुआ। परन्तु उस बालक को यह पता नहीं कि यही हमारे माता पिता हैं। तो उनके मतानुसार उसके मातापिता नहीं हो सकते। क्योंकि वह तो केवल प्रत्यक्ष प्रमाण को ही मानते हैं। परन्तु इस स्थिति में उन्हें अन्य प्रमाणों का सहारा अवश्य लेना पड़ेगा। अर्थात शब्द प्रमाण का। न्याय दर्शन के अन्दर चार प्रमाण निम्नलिखित 'प्रत्यक्षानुमानोपमानशब्दाः प्रमाणानि'।

दूसरा उदाहरण जैसे—हम धूम को देखकर अग्नि का अनुमान करते हैं कि 'यत्र यत्र धूमः तत्र तत्र वह्निः' अर्थात जहां २ धूम होता है वहां २ अग्नि होती है। यदि हम केवल प्रत्यक्ष प्रमाण को ही माने तो ठीक नहीं। क्योंकि हम देखते हैं कि जहां २ धूम होता है वहां ३ अग्नि होती है। अतः प्रत्यक्ष प्रमाणों के अलावा भी हम लोगों एवं चारवाकों को मानना ही पड़ेगा।

(४) चारवाकों का मत है कि स्वर्ग नरक नहीं है।

समा.—पहले हमें जानना चाहिए कि स्वर्ग नरक किसे कहते हैं। सुख विशेष का नाम स्वर्ग दुःख विशेष का नाम नरक है। सुख और दुःख दोनों की अवस्था हम संसार में देखते हैं। हम पहले ही सिद्धकर आये हैं कि जीवात्मा अजर और अमर शरीर से भिन्न है। हम दोनों प्रकार के आदमी संसार में देखते हैं। एक बहुत ही दुःखी है

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२१, २ अगस्त १९६४ [अंक ३१

देवासुर संग्राम

संसार में देवासुर संग्राम चलता ही रहता है। दोनों की आपस में समय २ पर टक्कर होती है। दैवीशक्तियों के प्रचार से सुख शान्ति तथा आसुरी शक्तियों की प्रबलता से दुःख विपत्ति प्राप्त होती है। आर्यजन देवों के ही सदा से सहयोगी रहे हैं। वैसे तो यह विश्व एक निरन्तर होने वाले संघर्ष का स्थान है। देवता या आर्य वही है जो कदम २ संघर्ष के लिये तैयार रहता है। विश्व की दौड़ में जिस ने भी साहस का दामन छोड़ा वही पराजित हो गया। देव और आर्यजन विजय के लिए पैदा होते हैं पराजय के लिए नहीं। आसुरी विचारों का प्रतिकार करना ही देवों का काम होता है।

आज का युग तो बड़ा विषम है। इस में आसुरी भावनाओं का भारी प्रसार हो रहा है। नाना रूप धारण करके ये आसुरी विचार जीवन में स्थान बनाकर इसे विकृत बनाते जा रहे हैं। जिस का परिणाम आज सामने आ रहा है। शराब का पीना भी इसी का एक रूप है। भारत विभाजन से पूर्व शराब के बारे में अपनों की कैसी धारणा थी। अंग्रेज के राज्य में जनता शराब को बन्द कराने के लिए कितना संघर्ष करती थी, बड़े से बड़ा बलिदान देने को भी तैयार रहती थी। इसे रोकने में देश एकता के सूत्र में बन्धा हुआ था। परन्तु आज क्या अवस्था है। भावना ही बदल गई है। जो वस्तु बहुत बुरी थी, आज वह सोसायटी का एक सभ्यता का अंग बनता जा रहा है। न पीने वालों को भी शौक पैदा हो गया है। न जाने इसे पीकर कितने मोटर ट्रकों के चलाने वाले चालक मार्ग में कितने लोगों की हत्या मोटर दुर्घटनाओं से कर देते हैं। आज शराब वहां पर नहीं पहुंचा। वाममार्ग की यह सुरा जीवन का अङ्ग बनती जा रही है। देश का करोड़ों रुपया इस की भेंट हो रहा है। जीवन बिगड़ रहा है। हर वर्ष मोटे आंकड़ों के रूप में एक अरब ८६ करोड़ रुपये इस पर व्यय किये जाते हैं। यह है देश का दर्शन। शराब के रूप में आसुरी लीला बड़ी फैल रही है।

इस देवासुर संग्राम में आर्य-समाज ने अपना कर्तव्य निभाने में तैयार होना है। संघर्ष करके इसके विरुद्ध टक्कर लेनी है। लोग तो सुरा की सरिता में तन्मय होकर स्नान करने लगे हैं। उनको तो तन बदन में मस्ती आ रही है। पर आर्य समाज के लिए यह एक चुनौती है, चैलेंज है। चीनी आक्रामक के समान यह भीषण शत्रु भी सामने खड़ा होकर देश को खोखला करता जा रहा है। समाचारपत्रों में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली के महा-मन्त्री श्री ला० रामगोपाल जी शालवालों ने इस बारे में जो समयोचित वक्तव्य दिया तथा सभा के बम्बई अधिवेशन के बाद सारे देश में एक संगठित आंदोलन चलाने का विचार रखा है, उससे बड़ी प्रसन्नता हुई है। आर्य समाज के सिवाय चिन्ता है भी किसे ? समय है कि सारा आर्य समाज इस शराब के बहते प्रबल प्रवाह को रोकने के लिए ठोस, सक्रिय, प्रभावशाली पग उठाये, अभियान आरम्भ करे, देवासुर संग्राम में कूदे। तभी सारे देश का भला है। आर्यो ! तैयार रहो—त्रिलोकचन्द्र

माननीय सभाप्रधान

प्रिंसिपल पण्डित रलाराम जी एम.ए. एम.एल.ए. के कन्धों पर समाजों के मान्य प्रतिनिधियों ने सभा कार्य का दायित्वभार रखा है। इस का यह अर्थ नहीं कि अब सारे बाकी सज्जन मस्त हो कर बैठ जायें। सारा काम मान्य प्रधान जी और सभा मन्त्री जी ही करें। सारे सज्जन और समाजें ही तो सभा के प्रतिष्ठित अंग हैं। सब ने मिल कर ही इस विराट् शरीर का सारा काम करना है। काम भी तभी बन सकता है। हमें प्रसन्नता है कि मान्य प्रधान जी सभा की वेद प्रचार राशि के लिए प्रयत्न में लगे हैं। मुकेरियां तथा होशयारपुर के सज्जनों से सभा वेद प्रचार फंड में अपने प्रभाव से राशि भिजवाई है। यह उन की कृपा है कि सभा सेवा कार्य के लिए समय देते हैं।

सब शहरों में सभा के हितैषी तथा प्रेमी बैठे हैं इस बार की सभा अन्तरंग में सभा के काफी सज्जन आये हैं। अपने २ स्थान में बैठ कर ये सभा प्रेमी अपना प्रेमपरिचय देवें तो किस बात की कमी है। हम प्रत्येक शहर में बैठे सभा के हितैषी, महात्मा हंस राज जी के भक्तों से प्रार्थना करते हैं कि सभा की इस सेवा में भी जुट जायें अपने हां भी सभा प्रधान जी सभा मन्त्री जी को सादर निमन्त्रण देकर सभा का तन मन धन से सहयोग देवें—सं.

वेद सप्ताह आगया

वेद आर्यों का जीवन तथा परमधर्म है। वेद प्रचार की आर्य समाज ने दीक्षा ली है। आज के भोगवाद के विषैले युग में तो वेद प्रचार की बड़ी ही आवश्यकता है। आर्य समाज ही इस काम में लगा है। इस में भी थोड़े से व्यक्ति इधर चल रहे हैं। उंगलियों पर गिने जाने वाले मान्य संन्यासी महात्मा, वानप्रस्थ तथा उपदेशक मण्डलीक प्रचारक है। बाहर निकल कर निरन्तर दिन रात घूमना कम ही पसन्द किया जाने लगा है। फिर भी समाज जो कार्य कर रहा है उसका मुकाबिला कौन कर सकता है। प्रचारकों की बड़ी आवश्यकता है पर साधनों के अभाव में आर्य कहां से या कैसे लाये जायें, यह स्वयं एक समस्या है।

आर्य समाज के पर्वों में वेद सप्ताह, श्रावणी उपाकर्म पर्व एक महत्वपूर्ण पर्व है। इस दिन से वेदस्वाध्याय की दीक्षा ली जाती थी। परिवारों आश्रमों, वर्नो, संस्थाओं में वेद का अध्ययन चलता था। सारे राष्ट्र में वेद सप्ताह मनाते थे इस बार अगस्त ता० २३ तारीख से यह प्रारम्भ होगा। सारे आर्य समाज इसे धूमधाम से मनाने की योजना बनाएं। उस सप्ताह वेद प्रचार के निमित्त बहुत कुछ सभा को वेद प्रचार प्रसार के लिए देवें। वेद का सन्देश सुनावें—सं०

आर्य समाज हुशियारपुर

श्री स्वर्गीय ला० शंकरदास जी त्रेहन, जो कि सामाजिक क्षेत्र में निःस्वार्थ सेवी थे के निधन पर हार्दिक शोक प्रकट करता है तथा दिवंगत आत्मा की शुभगति व लिए उनके दुःखी परिवार को धैर्य प्रदान करने के लिये प्रभु से प्रार्थना करता है। लब्भूराम

मन्त्री समाज

आर्य समाज के प्राचीन पत्र

पं. भीमसेन शर्मा का आर्य सिद्धान्त

(ले. प्रो. भवानीलाल भारतीय एम. ए. अध्यक्ष हिन्दी विभाग, गवर्नमेंट कालिज, पाली)

(गतांक से आगे)

उस के तीन भागों का उत्तर पं. लेख राम ने दिया था। चतुर्थ भाग का उत्तर भीम सेन ने दिया है। आर्य सिद्धांत के अन्तिम पृष्ठों पर भीमसेन रचित पुस्तकों के विज्ञापन भी छापते थे। इस अंक के विज्ञापन से ज्ञात होता है कि पं. भीमसेन ने मनुस्मृति का भाष्य, गीता का भाष्य तथा भर्तृहरि के शतकत्रय पर भी भाष्य लिखा था। उस के अतिरिक्त उन्होंने 'पुनर्जन्म' तथा 'पुत्रकामेष्टि' शीर्षक पुस्तकें भी लिखी थीं।

अगस्त १८९७ के अंक में स्वामी शान्तानन्द नामक किन्हीं सन्यासी का लिखा हुआ 'ईशोपनिषद्' के प्रथम मंत्र की व्याख्या के रूप में दोहाबद्ध 'शान्तिशतक' नामक एक काव्य रचना प्रकाशित हुई है। इस अंक के अंतिम पृष्ठ पर श्री मद्दयानन्द विश्व विद्यालय पाठशाला इटावा के आय व्यय का विवरण छपा है। सम्भवतः यह पाठशाला स्वामी दयानन्द ने अपने जीवन काल में ही स्थापित की थी तथा यह जनता के चंदे से चलती थी पुस्तकों के विज्ञापन में 'स्थावर में जीव विचार' तथा 'यमयमी सूक्त' इन दो नवीन पुस्तकों की सूचना है।

अक्टूबर १८९७ के अंक में 'आर्य समाज का भावी कर्तव्य' यह विषय पुनः उठाया है। इस में लेखक की राष्ट्रीय भावनायें इस वाक्य द्वारा स्पष्ट रूप से व्यक्त हुई हैं जब वे लिखते हैं—'हम शुद्ध हृदय और मुक्तकण्ठ से वर्तमान अंग्रेजी गवर्नमेंट को सम्मति देते हैं कि वह धनाकर्षण को प्रधान उद्देश्य न माने। खर्च भी जितना बढ़ा है उस की सोच समझ के धीरे २ कम करे और ग्रामीणप्रजा जो अति दुखी है उस की पुकार सुने। खर्च कम करने की दशा में ग्रामीण प्रजा के शिर से बढ़े हुये कर का महाभार हल्का करना अति सुगम होगा। पृ. १८६ यह सत्परामर्श दे कर भी लेखक अंग्रेजी राज्य के भारत में अटल, निष्कण्टक तथा चिरस्थायी हो जाने की सम्भावना प्रकट करता है तथा यह भी स्पष्ट कर देता है कि यद्यपि आर्य सिद्धांत पत्र धर्म विषयक है परन्तु जिस उपाय से राजा व प्रजा सब को सुख स्वस्थता तथा शान्ति मिले वह धर्म से अलग कदापि नहीं हो सकता। पाठक देखेंगे, कि आर्य समाज की पुरानी पीढ़ी के लोगों के विचार धर्म तथा राजनीति के विषय में कितने स्पष्ट तथा क्रान्तिकारी थे। वे राजनीति को धर्म अभिन्न समझते थे। उस समय के लोग प्रत्यक्षतया अंग्रेजी शासन का विरोध करने में अपने आप को अक्षम पाते थे। इसी लेख में लेखक ने आर्य समाजियों का अंग्रेजी राज्य का शुभ चिंतक बनने की प्रेरणा दी है तथा सरकार को भी यह विश्वास दिलाया है कि आर्य समाज से उस का कुछ भी अनिष्ट होने की सम्भावना नहीं है।

नवम्बर १८९७ के अंक में 'ब्रह्मचर्य का तत्वव्याख्यान' शीर्षक एक नवीन लेख प्रारम्भ किया गया है। इस अंक में आर्य समाज अतरौली जिला अलीगढ़ के एक उपदेशक पं. बद्री प्रसाद जी के इटावा नगर में पं. भीमसेन से संस्कारविधि के अनुसार सन्यास लेने की सूचना प्रकाशित हुई है। परन्तु यह समझ में नहीं आया कि गृहस्थ पं० भीमसेन ने किसी व्यक्ति को सन्यास संस्कार की दीक्षा किस प्रकार दी? क्या गृहस्थाश्रमी व्यक्ति किसी सन्यासी की दीक्षा देकर उसका दीक्षा गुरु बन सकता है?

दिसम्बर १८९७ के अङ्क में टाइटिल के दूसरे पृष्ठ पर सनातन-धर्म के प्रसिद्ध उपदेशक पं० श्रद्धाराम फिल्लोरी को ७ पुस्तकों की समालोचना प्रकाशित हुई है। यह समालोचना केवल सूचना या विज्ञापन मात्र ही है। इन पुस्तकों में फिल्लोरी जी की 'भाग्यवती' नामक पुस्तक का भी उल्लेख है जिसे कई साहित्य समीक्षकों ने हिन्दी का प्रथम उपन्यास माना है। वस्तुतः यह स्त्री शिक्षा विषयक एक उपदेश प्रधान पुस्तक थी। कई वर्षों के पश्चात् अब यह पुनः पाकिट बुक के रूप में हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय काशी से छापी है। इस अङ्क में 'राजभक्ति' शीर्षक एक नवीन लेख प्रकाशित हुआ है। इस में अंग्रेजी राज्य की प्रशंसा गाने में लेखक ने कमाल कर दिया है। मन्वादि शास्त्रकारों को उद्धृत करते हुये राजभक्ति को प्रजा का परमधर्म बताया गया है। भीमसेन जी के अनुसार अंग्रेजी राज्य भारतीयों के लिये ईश्वरीय वरदान है। इस लेख में प्रस्तुत किये गये कई विचारों से आज हमारा सहमत होना नितांत अशक्य है। यथा लेखक के अनुसार यदि सरकार भारतवासियों को अंग्रेजों के तुल्य राजसेवादि में अधिकार प्रदान नहीं करती है तो वह उचित ही है क्योंकि अभी तक हम उतने योग्य कहां हुये हैं। यह तत्कालीन कांग्रेस की मांग का जवाब है जिस में कहा जाता था कि सिविल सर्विस में भारतवासियों का भी अधिकार होना चाहिये। भीमसेन जी का एक विचित्र तर्क यह भी है कि यदि भारतवासियों से अधिक अंग्रेज लोग उच्च पदों पर प्रतिष्ठित हैं तो यह उचित ही है क्योंकि जिस जाति का राज्य है उनके सजातियों का धर्मानुसार भी तो हम से हक अधिक हुई। परन्तु यह धर्मानुसार न होकर बंदर बांट ही कहलायगा।

पं० भीमसेन ने बलपूर्वक इस लेख में यह सिद्ध करने की चेष्टा की है कि स्वामी दयानन्द अंग्रेजी राज्य के विरोधी नहीं थे। इसके लिये उन्होंने पूर्वपक्ष में स्वामी जी का आर्याभिविनय में लिखा यह वाक्य उद्धृत किया है कि "अन्य देशवासी राजा हमारे देश में न हों तथा हम लोग पराधीन कभी न हों।" इसके समाधान में वे लिखते हैं कि स्वामी जी ने यह वाक्य एक त्रिकालाबाधित सत्य के रूप में लिखा है। यहाँ अंग्रेजी राज्य का विरोध करना उनका उद्देश्य नहीं है। पं० भीमसेन के मत से स्वामी जी को अंग्रेजी राज्य से द्वेष नहीं था। वे आर्याभिविनय के उक्त वाक्य की एक अन्य ही स्वकपोलकल्पित व्याख्या करते हैं और लिखते हैं कि इस वाक्य का अभिप्राय इतना ही है कि अंग्रेजों को भारत से उतनी ही ममता होनी चाहिये जितनी भारतवासियों को अपने देश से है। यदि वे अंग्रेज भारत को भी अपना घर ही समझेंगे तो उनके शासन का औचित्य सिद्ध हो सकता है। भीमसेन जी की इस टीका से हम सहमत कदापि नहीं हो सकते।

(क्रमशः)

शिक्षा में क्रान्ति का बिगुल

(गतांक से आगे)

देश में क्रान्ति उत्पन्न करके ही आर्य समाज शान्त न रह सका। उसने देखा कि भारतीयता उत्पन्न करने के लिये यह आवश्यक है कि बच्चे के मन पर ही संस्कार डाले जावें। लार्ड मैकाले का कथन था We must do our best to form a class which may be interpreters between us and the millions whom we govern, a class of persons Indians in blood and colour but English in taste, in opinion in morals and intellect.

अंग्रेजों ने यहां कालेज, स्कूल खोले जिनमें अध्यापक, कर्मचारी एवं प्रबन्धक ईसाई ही थे अतः उन का प्रयत्न रहता था कि बच्चों पर ईसाई धर्म का प्रभाव डाल कर ईसाई बनाया जावे। भलाईसाइयों के इन कार्यों को आर्य समाज कैसे सह सकता था।

३० अक्टूबर सन १८८३ को महर्षि दयानन्द का निर्वाण हुआ उसके बाद ही लाहौर में आर्य समाजियों की एक बैठक हुई। जिस में यह निश्चय किया गया कि ऋषि स्मृति को स्कूल और कालेजों द्वारा स्थायी रखा जाय। ऋषि दयानन्द भी शिक्षा कार्य को बहुत महत्वपूर्ण समझते थे, इसलिये उन्होंने सत्यार्थ-प्रकाश का दूसरा और तीसरा समुल्लास इसी प्रकरण पर लिखा। अपने आपने जीवन काल में भी अनेक पाठशालायें खोलीं। हां उनका शिक्षा का उद्देश्य और प्रणाली के सम्बन्ध में प्रचलित विचारों से अवश्य मतभेद था। संक्षेप में हम उन्हें यों कह सकते हैं :—

१—शिक्षा अनिवार्य होनी चाहिये। और यह राजनियम होना

आर्य समाज और उसके उपकार

(श्री मित्रसेन जी आर्य एम० ए०, साहित्याचार्य ज्वालापुर)

****

चाहिये कि पांचवे या आठवें वर्ष से आगे कोई अपने लड़कों और लड़कियों को घर में न रख सकें। पाठ शालाओं में अवश्य भेज दें। जो न भेजे वह दण्ड नीय हो।

२—शिक्षा का उद्देश्य है मानव का शरीरिक तथा आत्मिक विकास।

३—सामान्यतः शिक्षा देने का समय ५ या ८ वर्ष से २५ वर्ष तक का होना चाहिये।

४—शिक्षा काल में छात्र शरीर से स्वस्थ और स्वभाव से तपस्वी हो।

५—ज्ञान प्राप्ति के साथ साथ मनमें उच्च संकल्प हो।

६—आत्मिक उन्नति के लिये मनमें ईश्वर के प्रति श्रद्धा अवश्य हो।

७—शिक्षा निःशुल्क हो।

८—बच्चों को धार्मिक शिक्षा अवश्य दी जाय।

९—शिक्षा का माध्यम मातृ भाषा हो।

१०—शिक्षा में संस्कृत आदि के साथ विज्ञान उद्योग, कला कौशल की शिक्षा हो।

शिक्षा के इन लक्ष्यों के पूर्ण करने के लिये आर्य समाज ने भारत में सर्व प्रथम शिक्षा देने का कार्य प्रारम्भ किया। उसने इसके लिये दो मार्ग अपनाये। १. गुरुकुल मार्ग और २. कालेज मार्ग। यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि आज भारत में जितनी संख्या डी० ए० वी० स्कूल और कालेजों की है उतनी अन्यों की नहीं। कालेजों की स्थापना करने में महात्मा हंसराज जी, ला. साईं दास जी, ला. लाजपत राय आदि ने बहुत प्रयत्न किया। आज आर्य समाज द्वारा स्थापित दो विश्वविद्यालय तीस डिगरी कालिज, ३०० डी.ए.वी. स्कूल, २०० मिडिल स्कूल, २५० प्राइमरी स्कूल १५० रात्रि पाठशालायें ८० गुरुकुल, ४०० संस्कृत पाठशालें, १० कन्या गुरुकुल, ५ कन्या कालेज, ३०० कन्या पाठशालयें, ३० अनाथालय, ५० विधवाश्रम, ५० विशाल पुस्तकालय और सैकड़ों वाचनालय चल रहे हैं। आर्य समाज द्वारा संचालित शिक्षा कार्यों को देखते हुये १८ मार्च १९२७ को गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय के वार्षिकोत्सव पर महात्मा गांधी ने कहा था 'गवर्नमेंट के बाद आर्य समाज के शिक्षा विस्तार के कार्यों की मैं प्रशंसा करता हूं। शिक्षा, अध्यात्मिकता के क्षेत्र में आर्य समाज ने देश की सब से अधिक सेवा की है।'

श्री रंगा अय्यार ने Father India के पृष्ठ ७३ पर लिखा The Arya Samaj Schools aim at fostering national-lism even their critics recognise that they are genuine educational institutions, very different from political mush rooms which Non-copper-ation called into existence.

इस प्रकार हम देखते हैं कि आर्य समाज ने महर्षि दयानन्द के आदेशों के अनुसार अदर्शों का अनुसरण कर के शिक्षा क्षेत्र में अपूर्व क्रान्ति की है।

अछूतोद्धार

ऋग्वेद के मण्डल १० के ८ वें सूक्त में एक मन्त्र आता है :—

ब्राह्मणो ऽस्य मुख मासीद् बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रोऽ अजायत॥

इस मंत्र के आधार पर पूर्व काल में चार वर्ण माने जाते थे, उन्हीं वर्णों के भेद प्रभेद करके आज अनेकों जातियां बना ली जाती। तब भी कोई विशेष हानि न होती परन्तु दुख है कि इन जातियों ने आपस में रोटी बेटी का व्यवहार समाप्त कर दिया। उन्हें सार्वजनिक स्थानों जैसे कुंआ मन्दिर परचढ़ने नहीं दिया जाता था। उनके लिये शिक्षा प्राप्त करने का कोई अधिकार न था। उनके लिये 'स्त्री शूद्रोना धीयता' कहकर पढ़ने नहीं दिया जाता था। श्री शंकराचार्य जी का इस विषय मे विचार था।

——

अत्यन्त शोकजनक

बड़े खेद से यह दुःखद समाचार सुना जायगा कि श्री चौधरी हरिदत्त जी वर्मा व्यवस्थापक आर्य जगत् व साहित्य विभाग आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर का नौजवान सुपुत्र श्री सुरेन्द्र कुमार ता० २६ प्रातः सिविल हस्पताल में स्वर्गवास हो गया। अन्त्येष्टि संस्कार में सभा के मन्त्री श्री प्रिंसिपल ज्ञानचन्द जी भाटिया, श्री ला० सन्तोषराज जी, श्री मा० प्रकाशदेव जी, श्री कुन्दनलाल भाटिया, पं० जमनादास जी, पं० त्रिलोकचन्द शास्त्री, पं० राजपाल, ठा० दुर्गासिंह जी, श्री चरणदास जी तथा मुहल्ले के सज्जन एवं देवियां शामिल हुईं। चौधरी जी के परिवार पर यह वज्रपात है। प्रभु उनको धैर्य तथा दिवंगत आत्मा को शांति प्रदान करे। सं.

(गतांक से आगे)

देवी की भक्ति में परायण हो तीक्ष्ण प्रहार से पशु का वध करे ॥११६॥

तब गर्म गर्म (कोसा) रक्त की भैरव को बलि दे ॥११७॥

यह वामियों के लिये कुल पूजा के रूप्य बलि की विधि कही है क्योंकि और किसी प्रकार से देवता की प्रसन्नता नहीं होती ॥११८॥

तृतीय मकार-मत्स्य

उत्तमास्त्रिविधा मत्स्याः
शाल पाठीन रोहिताः।
मध्यमाः कण्टकैर्हीना
अधमा बहुकण्टकाः॥
तेऽपि देव्यै प्रदातव्या
यदि सुष्ठु विभूजिताः॥

महानिर्वाण तन्त्र उल्लास ६ श्लो० ७,८

अर्थात्—तीन प्रकार की मछलियां उत्तम कही हैं—शाल, पाठीन और रोहित। कांटों के बगैर जो मछलियां हैं वे मध्यम प्रकार की और बहुत कांटों वाली निकृष्ट प्रकार की।

वे भी (कांटों वाली) देवी को देनी चाहिये यदि अच्छी तरह से भुनी हुई हों।

चतुर्थ मकार-मुद्रा

मुद्रापि त्रिविधा प्रोक्ता
उत्तमादि विभेदतः।
चन्द्रबिम्बनिभं शुभ्रं
शालि तण्डुल सम्भवम्॥
यवगोधूमजं वापि
घृतपक्वं मनोरमम्॥६॥
मुद्रेयमुत्तमा मध्या
भृष्ट धान्यादि सम्भवा।
भृजिताम्यान्य बीजानि
अधमा परिकीर्तिता॥

महानिर्वाण तन्त्र उल्लास६श्लो०६,१०

अर्थात्—अच्छे चावलों, जौं और गेहूं की साफ और शुद्ध बनी हुई और घी में तली हुई मुद्रा उत्तम होती है। भृष्ट (भुने हुए) धान्यों से तैयार की हुई मध्यम और अन्य भुने हुए बीज आदि अधम मुद्रा कहलाते हैं॥१०॥

तन्त्रों की घृणित शिक्षा नं० ३

(ले०—श्री पिंडीदास जी ज्ञानी अमृतसर)

पंचम मकार-मैथुन

अकस्माच्च न सेवेत
बलेन कुलयोगिनीम्।
चक्र मध्ये स्वयं चुम्ब्यां
वा स्वतः प्राथिनीम् स्त्रियं॥

मेरु तन्त्र प्रकाश १० श्लो० ४६८

अर्थात्—कुलयोगिनी को अचानक बल से नहीं बल्कि भैरवी चक्र में स्वेच्छा पूर्वक रति की प्रार्थना करती हुई स्त्री का सेवन करे।

इति भावनया वामी
रतिं कुर्वन्नपि मुच्यते।

मेरु तन्त्र प्रकाश २० श्लोक० १४४

अर्थात्— इस भावना से (कि मैं शिव हूं और यह स्त्री पार्वती है) स्त्री के साथ मैथुन करता हुआ वामी छूट जाता है।

आत्म जाया तथा नार्य्यो यक्षिणी
प्रमुखाः पराः
वामिना तास्च भोक्तव्या
एष धर्म्मः सनातनः॥१६

अर्थात्—अपनी स्त्री या यक्षिणी आदि दूसरी स्त्रियां वामियों को भोगनी चाहियें यह सनातन धर्म है।

चाण्डालीनामपि स्त्रीणां स्पर्शे
दोषं न मानयेत १६२

अर्थात्—भैरवी चक्र में चाण्डाली स्त्रियों के साथ भी स्पर्श (मैथुन क्रिया में) दोष न माने।

मेरु तन्त्र प्रकाश २० श्लो० १६२

चक्रमध्य गताः सर्वे पुरुषाः
शिवरूपिणः
स्त्रियास्तर्पाश्च पार्वत्यस्तत्राद्वै दंन
कारयेत्

मेरु तन्त्र प्रकाश २० श्लोक ४६१

अर्थात्—भैरवी चक्र में गए हुए तमाम पुरुष शिव रूप हैं और सब स्त्रियां पार्वती रूपियी, इस लिए भेद नहीं करना चाहिये।

मद्य कुम्भ सहस्रै स्तु मांस भार
शतैरपि।
न तुष्यति महामाया भग
लिंगामृतं बिना॥ ४३

अर्थात्—शराब के हजारों घड़े हों और मांस के सैंकड़ों भार, मगर भग और लिंग के अमृत के बिना महामाया प्रसन्न नहीं होती॥ मेरुन तन्त्र प्रकाश २०

भगिनीं वा सुतां भार्य्यां
यो दद्यात् कुलयोगिने
मधुमत्ताय देवेशि
तस्य पुण्यं न गण्यते॥

कुलार्णव तन्त्र उल्लास ६ श्लो. ११६

अर्थात्—हे देवेशि (पार्वती) मद्योन्मत्त कुलयोगी (वाममार्गी) को जो पुरुष अपनी बहिन, पुत्री या स्त्री देता है, उसके पुण्य की गणना नहीं हो सकती।

शोक! महाशोक!! हमारी पावन जाति के उच्च मस्तिष्क में कैसा विकार उत्पन्न हो गया कि इस प्रकार की घृणित शिक्षा देने वाली पुस्तकों के भी मान्य ग्रन्थ मानने लग गई। प्रभु दया करे।

तारा मन्त्र जाप की विधि

रजस्वला भगं दृष्ट्वा
पठेदेकाग्र मानसः।
लभते परमं स्थानं
देवी लोके वरानने॥

अर्थात्—हे पार्वती! रजस्वला स्त्री की भग को देख कर एकाग्र चित्त से इस (तारा) मन्त्र का जो पाठ करे वह देवी लोक में परम स्थान को प्राप्त होता है। फिर—

वेश्या लतागृहे गत्वा
तस्याश्चुम्बन तत्परः।
तस्या योनौ मुखन्दत्वा
तद्रसं विलिहन् जपेत्॥

अर्थात्—वेश्या के लतागृह में जाकर उसके चुम्बन में तत्पर हो, उसकी योनि में मुंह लगा कर उसकी योनि के रस को चाटता हुआ जप करे।

कोई है जो उपरिलिखित उद्धरणों के गूढ़ आध्यात्मिक अर्थ बतलाने की कृपा करे! शोक तो इस बात का है कि स्वार्थी लोगों ने संसार को अन्ध परम्परा में फंसा रखा है। उन्हें यह बतलाया ही नहीं जाता कि तन्त्रों में लिखा क्या है और पुराणों के अन्दर क्या भरा है। लोग बेचारे अपनी अनभिज्ञता के कारण जो भी किसी पोप पाखण्डी से सुन लिया उसे 'बाबा वाक्यं जनार्दनः' समझ कर तथास्तु कह दिया। परमात्मा करे कि हमारी जाति के लोग अपने लिये स्वय पढ़ना, लिखना और विचार पूर्वक अपना मार्ग प्रशस्त करना सीखें ताकि स्वार्थियों के पंजे से निकल सकें और अज्ञानवश जिस अन्धकूप में स्वयं गिरे हुए हैं और देश तथा जाति के अधःपतन का कारण बने हुए हैं, उस से निकल कर संसार भर की प्राचीनतम अपनी आर्य जाति के पुनरुत्थान के साधन बन सकें।

★

मनुष्य जन्म का महत्व (२)

[लि०-पं० भक्त राम जी शर्मा (अफ्रीका वाले) जालन्धर]

मानव जन्म ही ऐसा जन्म है जिस में मुक्ति का द्वार खुलता है। इसी में मनोरथों के उद्यान फूलते हैं। मनुष्य जन्म ही एक जन्म है जिस में आत्मा काल के चक्र से निकल सकता है। काल की चंचल चोंच हमें न जाने कब चुन कर चुग जाए। अतः इस हीरे जैसे जन्म का शुभ कर्मों द्वारा लाभ उठाना चाहिए। यह समझ कर कि इसी क्षण काल के गाल का ग्रास हो जाना है धर्मोपार्जन में विलम्ब नहीं करना चाहिए। स्वर्णावसरबीतता जाता है। गुजरा हुआ एक क्षण भी नहीं लौटता। पश्चात्ताप ही पल्ले पड़ता है। मनुष्य जन्म की प्राप्ति ऐसी दुर्लभ है जैसे एक अन्धे को राज गृह नगर का द्वार मिलना कठिन हो गया था।

कहते हैं कि वह नगर बारह कोस लम्बा था। उस के चहुं ओर कोट (किला) था जिस का एक ही द्वार था। एकदा विशाली नगरी का रहने वाला एक अन्धा, भूख का सताया हुआ, राज गृह को इस आशा से चल पड़ा कि वहां दीनों को पुष्कल अन्न प्राप्त हो जाता है। जब वह क्रमशः चलता हुआ कोट की दीवार के पास पहुंच गया तो उस को एक पथिक ने बताया कि वह कोट की दीवार को हाथ लगा कर चलता चला जाये। जब द्वार आ जाये तब वहीं भीतर प्रवेश कर जाये। उस ने 'तथास्तु' कह कर दीवार के सहारे चलना आरम्भ कर दिया। चलते-चलते जब द्वार समीप आया तो अचानक उस के सिर में खुजली होने लग गयी। उस के एक हाथ में लाठी थी जिस की टेक के बल से वह चलता था और दूसरा हाथ दीवार को लगा कर रखता था कि कहीं द्वार न निकल जाये। उसने उस समय दीवार से लगा हुआ हाथ उठा कर सिर खुजलाना आरम्भ कर दिया। ऐसे ही सिर खुजलाता हुआ जब वह द्वार से सौ पांव आगे निकल गया तो उसने फिर दीवार को हाथ लगा लिया। इस प्रकार चलते हुए वह द्वार से कोसों दूर निकल गया। भूख, प्यास और श्रम से वह थक कर बहुत ही निराश होकर गिर पड़ा।

जैसे उस अन्धे को उस समय द्वार का पाना अति दुर्लभ था। ऐसे ही मनुष्य जन्म को खोकर प्राणी को फिर इस जन्म का प्राप्त करना महा दुर्लभ है।

दयानन्द-वचनामृत

'माता बालक को सदा उत्तम-उत्तम बातें सिखावे जिससे उसकी सन्तान सभ्य बन जाए, और किसी प्रकार की कुचेष्टा (कुव्यवहार) न कर सके। जब बच्चा बोलने लगे, तभी से उसकी माता ऐसे प्रयत्न करे जिससे बालक की जीभ कोमल होकर (सधकर) शब्दों का स्पष्ट उच्चारण करने लग जावे। जब बालक कुछ अधिक बोलने लगे, तब उसे सुन्दर, सुगम और सरल वाक्य बोलने सिखावे। छोटे बड़ों से, माता पिता से प्रतिष्ठित जनों से, राजा और विद्वानों से कैसे मिलना, वर्तना, सम्भाषण करना इसकी रीति-नीति की शिक्षा दे। बैठने उठने का सभ्याचार समझावे।'

(स्वामी सत्यानन्द जी)

दो-गीत

मिलन का संदेह

जीवन की क्षण भंगुर नौका,
भवसागर पार तरी न तरी।
तूफां में भवरें, मांझी को,
ना जाने राह मिली न मिली।१।
आकर्षित फेनिल सागर में,
हैं लोभ पाप के मच्छ बड़े।
माया की मोहक मीनों से,
जाने छुटकारा मिले न मिले।२।
नाना नदियों को सिन्धु मिला,
लहरों को उनका कूल मिला।
मालूम नहीं मुझ पंथिन को,
अपना पथ कहीं मिला न मिला।३।
ओ कर्णधार! इस दुनिया के,
पार करो मम नौका आके।
मैं अज्ञानी, मेरी विनती,
प्रभु! तुमको जान पड़े न पड़े।४।

—विजय लक्ष्मी आर्य बी.ए.
आर्यनगर जि. बदायूं

सन्देह का निराकरण

अस्थिर जीवनकी छोटी नौका,
भव सागर बीच मझधार रही।
ईश्वर-प्रेमी नाविक श्रम से,
तूफान से नौका पार हुई।१।
माना माया मीन, लोभ औ',
पाप के मच्छ हैं सागर में।
ईश्वर को सर्वस्व समर्पणकर,
पंकज समान विचरो जल में।२।
चन्दा चकोर को नहीं मिला,
दीपक पै पतंगा नित्य जले।
पर, प्रभु-प्रेम पन्थ पांथी को,
सीधा सच्चा सन्मार्ग मिले।३।
ओ! दुनिया के भोले प्राणी,
भगवान् भी सबको शक्तिमिले।
कण-कण में है वह रमा हुआ,
सब कुछ जाने स्वीकार करे।४।

—मित्रसेन आर्य एम.ए (उ.)
वानप्रस्थ आश्रम ज्वालापुर (हरिद्वार)

अपील

आर्यजगत की इस समय ग्राहक संख्या अति न्यून है प्रत्येक आर्य समाज और आर्य सज्जनों से प्रार्थना है कि इसकी ग्राहक संख्या में वृद्धि करना अपना कर्तव्य समझें और अधिक से अधिक ग्राहक बनाकर सभा की सहायता करें।

ज्ञानचन्द्र भाटिया
मन्त्री सभा

आर्यसमाज साम्बा में वेद प्रचार सप्ताह समारोह पूर्वक सम्पन्न

आर्यसमाज साम्बा की बाग-डोर जब से श्री रूपचन्द जी, श्री वेद प्रकाश जी तथा मास्टर नानक चन्द जी आदि सज्जनों के हाथ में आई है समाज में नवजीवन का संचार हो गया है। सभा के वार्षिक अधिवेशन पर समाज के कर्मठ मन्त्री श्री वेद प्रकाश जी तथा कोषाध्यक्ष श्री नानकचन्द जी जालन्धर पधारे तो विशेष आग्रह कर गए कि साम्बा में प्रचार की योजना शीघ्रातिशीघ्र बनाई जाए। समाज का उत्सव अप्रैल ६४ में हो चुका था परन्तु प्रचार के लिये उनका आग्रह बराबर बना रहा।वेद प्रचारकी इस लग्न को दृष्टि में रखते हुये सभा ने वहां वेद प्रचार सप्ताह के रूप में पचार कराना स्वीकार कर लिया और १६-७-६४ से २२-७-६४ तक श्री पं. ओम प्रकाश जी, श्री पं. जगत राम जी तथा श्री पं. वस्ती राम जी को वहां भेज दिया। जिस लग्न और उत्साह से समाज वालों ने प्रचार कराया वह उत्साह वर्धक था। नगर निवासी बन्धुवों का उत्साह भी दर्शनीय था। सभा को वेद प्रचार कोष में मार्गव्यय के अतिरिक्त एक सौ एक की थैली आदर पूर्वक भेंट की गई। आर्य सामज के सभी अधिकारी बधाई के पात्र हैं परमात्मा करे इन बन्धुवों में धर्म प्रेम की ज्योति जलती रहे और वेद धर्म का सारे क्षेत्र में उत्साह से प्रचार होता रहे।

ओमप्रकाश आर्योपदेशक

रजिस्टर्ड नं० पी० १२१

चरवाक मत और उसकी समीक्षा

(पृष्ठ २ का शेष)

और दूसरा सुखी दिखलायी देता है और उस दुःख सुख का अनुभव जीवात्मा करता है। इसलिए जो यह चारवाकों का मत है कि स्वर्ग नरक नहीं। इसमें यह बात भी हो सकती है कि स्वर्ग और नरक की परिभाषा को इन्होंने नहीं जाना। स्वर्ग और नरक कहीं आकाश में नहीं है न इसका विशेष कोई स्थान है। संसार में ही स्वर्ग है और नरक है।

(६) चारवाक मानते हैं कि सुन्दर स्त्रियों के साथ आलिंगन करना ही पुरुषार्थ का फल है।

समा०—यदि तुम लोग सुन्दर स्त्रियों के साथ आलिंगन करना ही पुरुषार्थ का फल मानते हो तो उन से उत्पन्न जो दुःख है उसे किसका फल मानोगे।

यह धारणा केवल विषय वासनाओं को उद्दीप्त करने के लिये है। इस से व्यभिचार आदि के प्रचार के अलावा और कुछ नहीं। अभी ऐसे-ऐसे बहुत से सिद्धांत हैं। परन्तु लेख अधिक बड़ा न हो जाए। इस लिए यहीं पर समाप्त करता हूं।

अतः लेख समाप्त करता हुआ आर्य सज्जनों से प्रार्थना करता हूं कि वेद के प्रचार के लिए अपने प्राणों की आहुती देनी पड़ेगी। जब तक वेद का प्रचार संसार के कोने-कोने में नहीं होगा तब तक आर्य जाती का कल्याण होना असंभव है।

आर्यसमाजों से विशेष निवेदन

वेद आर्य जाति का परमधर्म है। इस बार भी वेद सप्ताह धूम धाम से मनाकर वैदिक धर्म का पावन सन्देश सब तक पहुँचाने के लिए समाजों से विशेष निवेदन है कि ता० १६ अगस्त १९६४ से लेकर ६ सितम्बर तक मनाने के लिए योजना बनावें। तीन सप्ताह अलग-अलग रूप में समाजें मनाने का प्रबन्ध करें ताकि वेद का सन्देश दूर-दूर तक फैले। आर्यसमाजें सभा को शीघ्र ही सूचित करें ताकि अभी से ही समाजों के प्रचार का प्रबन्ध किया जा सके। देर से सूचना मिलने पर असुविधा होती है। अतः समाजें जिस सप्ताह प्रचार कराना चाहती हैं वे कृपया शीघ्र ही सूचित करें।

—ज्ञानचन्द्र भाटिया सभा मन्त्री

'वेदसार' पर सभा का प्रस्ताव

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पन्जाब जालन्धर का यह साधारण अधिवेशन श्री विश्व बन्धु जी द्वारा सम्पादित पुस्तक 'वेदसार' में वेद-मन्त्रों के रूप तथा पाठ में परिवर्तन को घोर घृणा तथा निन्दा की दृष्टि से देखता है। इस अधिवेशन की यह दृढ़ धारणा है कि वेद परम पावन ईश्वरीय वाणी है। उस में किसी प्रकार का संशोधन, परिवर्तन और परिवर्धन करने का किसी को अधिकार नहीं। यही कारण है कि सर्गारम्भ में आज तक यह अक्षुण्ण चले आ रहे हैं।

श्री पं० विश्व बन्धु जी का यह दुस्साहस समस्त आर्य जाति की पुनीत प्राचीन संस्कृति का मूलोच्छेदन है। अतः यह अधिवेशन—

१—पन्जाब विश्व विद्यालय साग्रह सानुरोध मांग करता है कि यह तुरन्त इस पुस्तक को पाठ्यक्रम से निकाल दे—

२—सरकार से यह मांग करता है कि इस पुस्तक की समस्त प्रतियां जहां भी प्राप्त हो सकें, तुरन्त जब्त की जावें, क्योंकि इस पुस्तक से समस्त आर्यजाति की भावनाओं को ठेस पहुंचती है।

(३) यह अधिवेशन समस्त आर्यसज्जनों से साग्रह निवेदन करता है कि विश्वेश्वरा नन्द वैदिक अनुसन्धान संस्थान जो कि निश्चित रुप से श्री पं० विश्वबन्धु जी की अध्यक्षता में आर्य समाज के सिद्धान्तों एवं भावनाओं के विरुद्ध संगठित रुप से कार्य कर रहा है, के साथ व्यवहार में परिवर्तन कर के इसे आर्य सिद्धान्ता नुकूल न बनाएं।

मंत्री A.P.P. सभा

★

गांधी मैमोरियल मिडिल स्कूल ठाकुरपुरा (अंबाला)

आज ता० १८-७-६४ को प्रातः आठ बजे गांधी मेमोरियल मिडल स्कूल में सब छात्र और अध्यापकों ने मिल कर स्वर्गीय श्री पं० जवाहरलाल की पवित्र स्मृति में शपथ ली कि हम सब अपने नेता जवाहरलाल की पवित्र स्मृति में तन से मन से तथा शक्ति देश की रक्षा करेंगे और बिना किसी जाति-पांति के भेदभावको भूलकर मिल-जुल रहेंगे। और जो कुछ भी देश के लिये हमारे नेता को प्रिय था हम भी वही करेंगे।

गौतम देव आर्य पुरोहित आर्य-समाज ठाकुरपुरा।

★

आर्य समाज मन्दिर, बाढ़ (पटना)

की यह सभा डाक्टर धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री के आकस्मिक निधन पर शोक प्रकट करते हैं। आप भारत के महान् शिक्षा शास्त्री आर्य नेता, प्रकांड विद्वान् और उच्च विचारक थे। आर्य देश की यह क्षति निकट भविष्य में पूर्ति होने की संभावना नहीं है ईश्वर उनकी आत्मा को शान्ति दें और उनकी परिवार वालों को वियोग सहन की शक्ति प्रदान करें।

—रामलखन आर्य मन्त्री आर्यसमाज

शोक समाचार

प्रादेशिक सभा की २६-७-६४ की अंतरंग सभा के प्रस्ताव के अनुसार श्री ला० देवव्रत जी मन्त्री आर्य समाज लारेंस रोड अमृतसर के पिता श्री म० रामदित्ता जी तथा श्री शंकरदास जी त्रेहन प्रधान आर्यसमाज किला जालन्धर के निधन पर दो मिनिट मौन रहकर गहरा शोक प्रकट किया गया तथा उनकी आत्मा की सद्गति वा अनेक परिवार को इसे दारुण कष्ट के सहन करने के लिए परमपिता से प्रार्थना की गई। तथा इस प्रस्ताव की एक कापी श्री देवव्रत को तथा श्री ज्ञानचन्द्र जी त्रेहन को भेजो जावे। —ज्ञानचन्द्र भाटिया मन्त्री सभा

हार्दिक वेदना

सभा के प्रसिद्ध पं. मेलाराम जी रेडियोसिंगर भजनोपदेशक की माननीया भरजाई तथा बहिन गोमा देवी के आकस्मिक निधन का अत्यन्त दुःखद समाचार सुन कर अत्यन्त दुःख हुआ। आर्य जगत तथा सभा के सारे प्रचारकों की ओर से हार्दिक संवेदना है। प्रभु परिवार को सहन शक्ति तथा दिवंगत आत्माओं को शान्ति प्रदान करें—सं.

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टेलीफोन नं० २०४७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 1:

एक प्रति का मूल्य १२ नये पैसे — वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक ३१) २९ श्रावण २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०— ? अगस्त १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

त्वमेतद्धारय:

प्रभो ! आपने ही जगत्-यह सारा चराचर जगत धारण किया हुआ है। आप के ही नियत नियमों में हर एक पदार्थ अपने २ काममें लगा हुआ है। आप ही इस सारे विश्व के धारक हो, नियामक हो।

इन्द्रो वज्री हिरण्यय:

लोगो ! वह इन्द्र भगवान वज्री-वज्र वाला, बड़ी भारी शक्ति वाला है और वह तेजस्वी है। उस की शक्ति से वज्रदण्ड से कोई भी तो बच कर जा नहीं सकता। उस की निरन्तर चलने वाली चक्की सब को पीसती है।

इन्द्र वाजेषु नोऽव

हे परमेश्वर ! आप वाजेषु-ज्ञान के तथा बल के कामों में हमारी रक्षा करें ! हम ज्ञान में किसी से कम न हों या कोई हमें दबा न सके, पराजित न कर सके। ज्ञान में व बल में बढ़ते जावें।

सा म वे द से

वे दा मृ त

ओ३म् तं त्वा समिद्भिरङ्गिरो घृतेन वर्धयामसि। बृहच्छोचा यविष्ठ्य स्वाहा॥ इदमग्नयेऽङ्गिरसे इदन्न मम॥ यजु० अ० ३ मन्त्र ३

अर्थ—हे अग्ने ! (तम्) उस (त्वा) तुझ को हम सब (समिद्भिः) समिधाओं से (अङ्गिर) अङ्ग में रहने वाले अग्ने ! (घृतेन) घी से (वर्धयामसि) हम बढ़ाते हैं प्रकाशित करते हैं। (बृहत्) बड़े हो (शोच) प्रकाशित होओ (यविष्ठ्य) अति शक्ति बल वाले हो। हे यज्ञ अग्ने ! तेरे में बड़ी शक्ति है तथा बड़े २ कार्यों को तेरे द्वारा सम्पादन किया जाता है।

भाव—यज्ञ की अग्नि को समिधाओं से बढ़ाया जाता है। समिधायें डालने से अग्नि खूब बढ़ता है, चमकता तथा प्रकाशित होता है। इस में घी आदि की आहुति पड़ने से प्रदीप्त होता है। अग्नि अचेतन देवों में बड़ा देव है। यह बड़े २ काम करता है। इस के द्वारा विश्व का बड़ा भला होता है। हमारे जीवन में भी अग्नि का बड़ा महत्व है। अग्नि के द्वारा ही तो हमारा जीवन चलता है। यदि अग्नि न हो तो आज ही सारा जीवन ठप्प हो जावे। इस यज्ञ की अग्नि को तो हम सदा समिधाओं से, घृत आदि से बढ़ाते रहें, प्रदीप्त करते रहें तथा देश की अग्नि को जीवनदान की आहुतियां डाल कर प्रकाशित करते रहें। देश की यह अग्नि भी बहुत बड़ा है। यह बड़ा काम करता है। इस को अपना जीवन भेंट देकर सदा बढ़ाते रहो। इस ज्वाला को कभी मन्द न होने देना। इसे सदैव बढ़ाते रहो—सं०

ऋषि दर्शन

विद्यादि श्रेष्ठधनम्

हे पिता ! हम आप के पुत्र याचना करते हैं कि हमें आप विद्या आदि का उत्तम धन प्रदान करें। केवल विद्वान न बनें वरन यह विद्या हमें अच्छे पथ पर ले चले। धन भी उत्तम कर्मों में लगने वाला हो, श्रेष्ठ हो।

ब्रह्मनिष्ठात्वम्

हमें ब्रह्म में निष्ठा हो, श्रद्धा हो, विश्वास हो। हम वेद के भी परम भक्त बनें तथा ज्ञान के अर्जन करने वाले हों। ज्ञानी बन कर अज्ञान के अन्धकार को दूर करने वाले हों। ईश्वर विश्वासी वेदप्रेमी तथा ज्ञान-श्रद्धालु बनें

सोत्तमशरीरेन्द्रिया:

हमारा शरीर उत्तम हो तथा सारी इन्द्रियां अपने २ उत्तम काम को करने वाली हों। शरीर रोग का घर न हो। परम इस के किसी अंग में भी विकार न होवे। स्वास्थ्य और प्रसन्नता से जीवन भरा हो।

भा ष्य भू मि का से

अधिष्ठाता—श्री संतोषराज जी सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शा।

धार्मिक चर्चा—

साकार निराकार-निर्णय

(ले०—श्री विद्यासागर शर्मा, दयानन्द मठ, दीनानगर)

आज इस वर्तमान युग में जो कि विज्ञान का युग कहा जाता है। ऐसे विज्ञान के युग में हमारे कुछ भाई ईश्वर को साकार निराकार दोनों प्रकार से मानते हैं। जिन भाइयों को ऐसो भ्रांत धारणा ईश्वर के विषय में है, उनकी यह कल्पना वेदादि शास्त्रों के विरुद्ध तथा बुद्धि के विरुद्ध होने से सर्वथा अमान्य है। क्योंकि साकारत्व व निराकारत्व ये दोनों गुण परस्पर विरोधी होने से एक द्रव्य में कभी भी नहीं रह सकते। जो एक द्रव्य में दोनों को मानते हैं उन से हम पूछते हैं कि ईश्वर साकार व निराकार एक समय में रहता है अथवा कालान्तर में? यदि वे कहें कि एक समय में रहता है तो एक वस्तु में एक समय में परस्पर विरोधी दो गुण कदापि नहीं रह सकते यह सर्वतन्त्र सिद्धांत है। यथा लोहे को लोहकार जब अच्छो प्रकार गर्म कर लेता है, तब वह लोहा ठण्ठा नहीं है और जब ठण्ठा है तब गर्म नहीं था। क्योंकि ये दोनों गुण परस्पर विरोधी हैं। वैसे हो ईश्वर जब साकार होगा तब निराकार नहीं व जब निराकार होगा तब साकार नहीं। अतः ये ईश्वर में नहीं घट सकता। यदि ईश्वर को साकारता मानने हो तो जो साकार हो वह व्यापक नहीं हो सकता, जो व्यापक नहीं तो सर्वज्ञादि गुण भी ईश्वर में नहीं घट सकते। क्योंकि परिमित वस्तु में गुण, कर्म, स्वभाव भी परिमित रहते हैं और सर्दी, गर्मी, क्षुधा, तृषा, रोग, दोष, छेदन, भेदन आदि से रहित नहीं हो सकता। क्योंकि साकार होने से उसके नाक, कान, आंख आदि अवयवों का बनाने हारा सयोजक दूसरा अवश्य होना चाहिए और जो संयोग से उत्पन्न होने वाला है उसको संयुक्त करने वाला निराकार, चेतन, अवश्यमेव होना चाहिए। जो कोई यहां ऐसा कहे कि ईश्वर ने स्वेच्छा से आप ही आप शरीर बना लिया तो भी यही सिद्ध होता है कि शरीर बनने से पूर्व निराकार था। अतः इस से यही निश्चित है कि ईश्वर में निराकारत्व ही घट सकता है साकारत्व नहीं।

स्वेच्छा शरीर की आशंका का निराकरण। यजुर्वेद में एक मन्त्र आता है कि—

स पर्यगाच्छुक्रमकायम व्रणमस्नाविरꣳशुद्धमपाप विद्धम।

कविर्मनोषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान्व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः॥ यजु० ४०।८।

जो ब्रह्म (शुक्रम्) शीघ्रकारी सर्वशक्तिमान (अकायम्) स्थूल, सूक्ष्म कारण शरीर से रहित (अव्रणम्) छिद्र रहित और अक्षत (अस्नाविरम्) नाड़ी आदि के सम्बन्ध रूप बन्धन से रहित (शुद्धम्) अविद्यादि दोषों से रहित होने से सदा पवित्र (अपापविद्धम) जो पाप युक्त, पाप कारी और पाप में प्रीति करने वाला कभी नहीं हो सकता (परि+अगात्) सब ओर से व्यापक है, जो कविः) सर्वत्र क्रान्त दर्शी (मनीषी) सब जीवों की मनोवृत्तियों को जान ने वाला (परिभूः) दुष्ट पापियों का तिरस्कार करने वाला (स्वयम्भूः) अनादि स्वरूप, जिस की संयोग से उत्पत्ति, वियोग से विनाश, माता पिता, गर्भवास, जन्म, वृद्धि और मरण नहीं होते वह परमात्मा (शाश्वतीभ्यः) [सनातन अनादि स्वरूप अपने २ स्वरूप से उत्पत्ति और विनाश से रहित (प्रजाभ्यः) प्रजाओं के लिए (याथातथ्यतः) यथार्थ भाव से (अर्थान्) वेद द्वारा सब पदार्थों को (वि+अदधात्) विशेषकर बनाता है। वही परमेश्वर सब लोगों को उपासना करने योग्य है।

पौराणिकों के मान्य स्वामी शङ्कराचार्य उपरोक्त मन्त्र में आये हुए अकायम्, अस्नाविरम् इन शब्दों का अर्थ ईशोपनिषद्-भाष्य में लिखते है कि—'अकायम शरीरो लिङ्गशरीर वर्जितः इत्यर्थः। अव्रणम क्षतम्। अस्नाविरं स्नावाः शिरा यस्मिन्न विद्यन्त इत्यस्नाविरम्। अव्रणमस्नाविर मित्याभ्यां स्थूल शरीर प्रतिषेधः। शुद्धं निर्मल मविद्यामल रहित-मिति कारण शरीर प्रतिषेधः॥ अशरीरी अर्थात् लिङ्ग शरीर से रहित। अव्रण अर्थात् अक्षत है। अस्नाविर, जिस में स्नायु अर्थात् शिराएं न हों उसे अस्नाविर कहते है। अव्रण और अस्नाविर इन दो विशेषणों से स्थूल शरीर का प्रतिषेध किया गया है।

और इन्ही उपर्युक्त शब्दों का उपटाचर्य ने 'शुक्लयजुर्वेद संहिता' के भाष्य में लिखा कि 'अकार्यं न विद्यते कायः शरीरं यस्यसः। अव्रणं काय रहितत्वा देव। अस्नाविरं स्नायु रहितमकाय त्वादेव। शुद्धमनुपहतं सत्वरज जस्तमोभिः। अकायम=जिस का शरीर नहीं है वह अकाय अव्रणम्=शरीर रहित। अस्नाविरम्=नाड़ियों से रहित अकाय। शुद्धम=सत्व, रज, तम इन तीनों गुणों से जो सदैव दूर रहता है।

यहां हम महीधर का भाष्य भी उपस्थित करना आवश्यक समझते हैं ता कि पौराणिक पण्डितों को भ्रान्त धारणा को प्रश्रय न मिले।

महीधर भाष्य शुक्लयजु०—'अकायोऽशरीरः। लिङ्ग शरीर वर्जित इत्यर्थं, अव्रणोऽक्षतः। अस्नाविरं शिरारहितः। अव्रणोऽस्नाविर इतिविशेषण द्वयेन स्थूल शरीर प्रतिषेधः। शुद्धोनिर्मलः। शङ्कराचार्य के अनुकूल ही महीधर ने अर्थ किया है।' अव्रण व अस्नाविर इन दो विशेषणों से स्थूल शरीर का निषेध है इतने विस्पष्ट शब्दों में वेद मन्त्र का भाष्य रहने हुए भी पौराणिक विद्वान शंका करते हैं कि वेद ने ईश्वर को अकाय कहा, इस के कहने से ही शरीर का निषेध हो जाता है, पुनः अव्रण व अस्नाविर कहने की क्या आवश्यकता थी? क्योंकि अकाय कहने से ही शरीर का न होना प्रतीत होता है। अतः अव्रण व अस्नाविर कहना अनावश्यक हुआ अतः इस से प्रतीत होता है कि ईश्वर का सुख दुःख रूप कर्म बन्धन में बांधने वाला शरीर नहीं किन्तु 'स्वेच्छा शरीर' है। (उत्तर) यह कल्पना बुद्धि संगत नहीं है, क्योंकि वेद जब ईश्वर को अकाय (शरीर रहित) कहता है। यदि वे इस पर अड़े रहें कि ईश्वर स्वेच्छा शरीर धारण करता है तो हम पहले कह आये हैं ईश्वर ने स्वेच्छा से ही आप ही आप शरीर बना लिया तो भी वही सिद्ध हुआ कि शरीर बनने से पूर्व निराकार था।

काय शब्द केवल शरीरार्थवाची ही नहीं है अपितु अन्यार्थ वाची भी है। देखो अष्टाध्यायी में एक सूत्र आता है कि—'निवासचिति शरीरोपसमाधानेष्वादेश्चकः' अ० ३। पा० ३। सू० ४१॥ काय शब्द निवास, चिति, शरीर और समाधान अर्थ में 'चिञ्' से 'घञ्' और 'च' को 'क' हो। (क्रमशः)

सम्पादकीय—

आर्य जगत

वर्ष २४] रविवार २०२१, १९ जुलाई १९६४ [अंक २९

महात्मा हंसराज जयन्ती

स्वर्गीय महात्मा हंसराज शताब्दी को पूरे समारोह से मनाने का अन्तिम निर्णय आर्य प्रादेशिक सभा के इस निर्वाचन अधिवेशन के बाद पहिली अन्तरङ्ग में पूरे विचार विनियम के पश्चात् कर दिया गया है। यह शताब्दी समारोह जालन्धर में ही किया जायगा। इस के लिए अप्रैल १९६५ की तिथियां निश्चित की गई हैं। महात्मा जी का जन्म दिन समारोह तीन दिनों का भारी आयोजन होगा। इस महान कार्य के लिए पूरी तैयारी का समय चाहिए। इस के निमित्त नानाविध आवश्यक उपसमितियों का भी गठन हो गया है। सभा ने अपनी ओर से पूरा प्रयत्न किया है कि अधिक से अधिक तथा सब स्थानों, संस्थाओं तथा समाजों के मान्य सज्जनों का सहयोग प्राप्त करने का प्रबन्ध कर लिया है। उस देवता की जयन्ती मामूली जलसा तो नहीं है, शानदार रूप में उन के अनुरूप ही मनानी होगी। इस के लिए सारी रूप रेखा सभा की ओर से जनता के सामने आ जायेगी। इस काम में सब ने ही प्रयत्न करना है। महात्मा जी जैसा त्यागी, तपस्वी नेता किसी एक का नहीं वरन् सब के थे। अतः अभी से सब को इस पवित्र काम में तन मन धन से जुट जाना चाहिए।

—सं०

कड़वी पर सच्ची बात

श्री पण्डित सत्यदेव जी विद्यालंकार एम. ए., डी. ए. वी. कालेज जालन्धर आर्यसमाज के गम्भीर मनीषियों में गिने जाते हैं। प्रवचन और लेखन दोनों में अत्यन्त गम्भीरता लिये रहते हैं। जो कहते या लिखते अन्तरात्मा से कहते हैं। बहते प्रवाह के साथ न बह कर तथ्य को प्रकट जि... ने में प्रवाह के प्रतिकूल भी प्रतिनि... है। यही उनके विचारों की रखों से ... है। आर्यजगत के गतांक है। इस स... समाज के मान्य... इत जी ने एक विशेष करके उनके स्वर्ग लिखकर सारे आर्य परिचय भी प्राप्त एक अत्यन्त सकता है। ... य प्रस्तुत कर आजकल कालिज... वह जाना ... वियों की वार्षिक परीक्षा... ने सिद्धान्त होने वाली हैं। सार्वदेशि... उनमें से कुछ आर्य युव...

पर अडिग रहकर इस प्रवाह का सामना करना दूसरी बात है। सबका ध्यान आकर्षित किया है। अभी-अभी भारत के महान् प्रधान मन्त्री श्री पं. जवाहरलाल जी नेहरू का स्वर्गवास हो गया। उस पर सारा विश्व रोया। उनकी अपने हाथों लिखी वसीयत के अनुसार उनका दाह संस्कार तथा भस्मी को भारत की भूमि में बिखेरा गया। परन्तु उनकी अस्थिओं, भस्म को लेकर जो भारी प्रदर्शन किया गया, कलशों पर न जाने कितनी पुष्प वर्षा, कितनी मालाएं कितना पूजन, विशेष गाड़ी में ले जाकर सारे मार्ग में तथा प्रयाग के संगम पर जो जो भारी आयोजन किया गया। तथा अस्थियों को लेकर सारे प्रान्तों में धूमधाम से सजाकर फिराया गया। उसके प्रति जनता की श्रद्धा स्वाभाविक थी। अपने नेता के प्रति श्रद्धा का यह मानसिक प्रदर्शन था जो किया गया।

किन्तु मान्य विद्यालंकार जी ने आर्यसमाजके सामने एक प्रश्न रखा है कि क्या यह अस्थि पूजन उनका जलूस निकाल कर ऐसा प्रदर्शन ठीक है? क्या देश में इस प्रकार से एक नई पाखण्ड प्रणाली को जन्म नहीं दिया जा रहा। इस को तो स्वर्गीय पण्डित नेहरू जी भी स्वयं नहीं मानते थे। ऐसी बातों पर उन की अपनी आस्था नहीं थी। यह तो और बात है। प्रश्न यह है कि इस प्रकार की अस्थि पूजन की ऐसी परिपाटी क्या उचित है? क्या यह भी सर्वथा जड़ पूजा की परम्परा नहीं आरम्भ हो गई। राजघाट पर नर नारी जा कर गांधी जी की समाधि की परिक्रमा कर के उस के सामने माथा टेकते हैं। अब शान्ति घाट पर जा कर भी पण्डित जी की समाधि पर माथा टेकने का काम आरम्भ होगा। यह नई परिपाटी चल पड़ी है। क्या यह राष्ट्र के लिए हितकर है। भावुकता का प्रवाह और है पर सिद्धांत की मर्यादा का प्रश्न सामने है। आर्य समाज की स्थापना प्रवाह में बहने के लिए नहीं हुई वरन् जनता को सतपथ पर चलाने के लिए हुई है। हम मान्य पण्डित विद्यालंकार जी के विचारों से पूर्णतया सहमत हैं। बात कटु पर सच्ची है। आर्य समाज को इस पर गम्भीरता से विचार कर प्रवाह में न बहना चाहिए।

—त्रिलोक चन्द्र

एक और नेता चले गए

श्री लाला शंकरदास जी जालन्धर प्रधान आर्यसमाज किला भी आंखें बन्द कर चले गए। समाज की भारी क्षति हो गई। आर्यसमाज में पुरानी पीढ़ी के महानुभाव हैं ही कितने। जितने भी ... द्वारा सारे आर्यसमाज ... ऊंचा है। उस गीत के शब्द इन वृद्ध महारथियों को देख कर स्मरण हो आते हैं—हम तुफान से लाये हैं किश्ती निकाल के, मेरे बच्चो रखना सम्भाल के। आर्य समाज की नौका भी बड़े२ तूफानों से गुजरी है। ऐसे २ वृद्ध महारथी ही बचा कर लाये हैं। परन्तु धीरे २ वे पुराने सज्जन भी आखें बन्द करते जा रहे हैं। ला० शंकरदास जी की गणना उन नाविकों में है।

स्वर्गीय लाला जी ने अपने जीवनकाल में समाज का बड़ा ही काम किया। गत समाज के जल्से पर मैंने निवेदन किया कि किला समाज का सुन्दर मन्दिर निर्माण का कार्य हाथ में लिया है। बड़ी प्रसन्नता है। बोले! जीवन में सब कुछ देखा, सेवा की। अब कोई भी इच्छा बाकी नहीं। एक इच्छा है कि अपनी आंखों के सामने किला समाज मन्दिर बनवा दिया जाये। उसी में रात दिन लगे थे। अब चले गये। उन से प्रेरणा लेकर उनके इस कार्य को पूर्ण करना है। सं०

आर्यसमाज, पुराणी मण्डी, जम्मू

साप्ताहिक सत्संगों में बढ़ती हुई रौनक

जब से आर्य समाज का नया चुनाव हुआ है, (अधिकारियों ने साप्ताहिक सत्सङ्गों को अधिक से अधिक रोचक बनाने का यत्न किया है—स्त्री पुरुषों के अतिरिक्त नौजवान लड़के और लड़कियां काफी संख्या में सम्मलित हो रही हैं—उपस्थिति २०० के लगभग तक पहुंच रही है—पं० हरिश्चन्द्र जो शास्त्री पुरोहित आर्य समाज के व्याख्यान और संस्कारों को कराने का ढङ्ग जनता को आर्यसमाज की ओर आकर्षित कर रहा है—

—कविराज विष्णुगुप्त प्रधानमन्त्री,

नोट—मनु महाराज ने पांच महा पाप यूं गिनाये हैं।

'ब्रह्महत्या सुरापानं
स्तेयो गुरवाङ्गनागमः।
महान्ति पातकान्या हु
संसर्गश्चापि तै सह॥

अर्थात् १. ब्रह्महत्या २. शराब पीना ३. चोरी करना ४. गुरु पत्नि से समागम ५. इन के साथ संसर्ग

सर्वेभ्यश्चोत्तमाः वेदाः
वेदेभ्यो वैष्णवं परम्।
वैष्णवा दुत्तमं शैवं
शैवाद्दक्षिणमुत्तमम्॥
दक्षिणादुत्तमं वामं वामात्
सिद्धांतमुत्तमम्।
सिद्धांतादुत्तमं कौलं
कौलात् परतरं न हि॥

कुलार्णव तन्त्र २-११-७, ८

अर्थात्—सब से उत्तम वेद, वेदों से उत्तम वैष्णव, वैष्णव से उत्तम शैव, शैव से दक्षिण, दक्षिण से वाम, वाम से सिद्धांत, सिद्धांत से उत्तम कौल और कौल से बढ़ कर कोई भी नहीं।

कतिपय यह के वामियों के छोटे बड़े सब सम्प्रदाय वेद से उत्तम और वेद उन सब से निकृष्ट हैं।

यो वा कुलाधिकं धर्मं
मज्ञानाद् भजति प्रिये।
ब्रह्महत्यादिकं पाप स
प्राप्नोति न संशयः॥

कुलार्णव तन्त्र ३-१२-५

अर्थात्—हे प्रिये (पार्वती)। जो पुरुष अज्ञान वश हो कर किसी अन्य धर्म को कुल धर्म(वाममार्ग) से उत्कृष्ट मानता है, वह निस्संदेह ब्रह्महत्या आदि महापापों को प्राप्त होता है।

तान्त्रिकों के पांच मकार

मद्यं मांसं च मत्स्यश्च
मुद्रा-मैथुन मेव च।
कुल मार्ग प्रविष्टेन
सदा सेव्यं सुदर्षिणा॥

मेरु तन्त्र प्रकाश १ श्लोक ५६

अर्थात्—मद्य, मांस, मत्स्य,

तन्त्रों की घृणित शिक्षा

(ले०—श्री पिंडीदास जी ज्ञानी अमृतसर)

(गतांक से आगे)

मुद्रा और मैथुन ये पांच मकार ('म' से आरम्भ होने वाले) हैं। कुलधर्म में प्रविष्ट होने वालों को सहर्ष इनका सेवन करना चाहिए।

मद्यं मांसञ्च मत्स्यञ्च
मुद्रा मैथुन मेवच।
मकार पञ्चकं देवि
देवता प्रीति कारकम्॥

कुलार्णव तन्त्र उल्लास १० श्लोक ५

अर्थात्—हे देवि! मद्य मांस, मछली, मुद्रा, और मैथुन—ये पांच मकार हैं जिन के सेवन से देवता प्रसन्न होते हैं।

मद्यं मांसं तथा मत्स्यं मुद्रामैथुन
मेवच।
शक्ति पूजा विधावाद्ये पंचतत्वं
प्रकीर्तितम्॥

महानिर्वाण तन्त्र उल्लास ५ श्लोक २२

अर्थात्—शराब, मांस मछली, मुद्रा तथा मैथुन शक्ति पूजा की विधि के आदि में सेवन योग्य पांच तत्व कहे गये हैं।

कितनी स्पष्ट स्वीकारोक्ति है वाम मार्ग की घृणित शिक्षा की, परन्तु कुछ दुराग्रही लोग संसार को धोखा देने के लिये कहने लग जाते हैं कि वस्तुतः इन शब्दों के गूढ़ आध्यात्मिक अर्थ अदीक्षित मनुष्यों की समझ में नहीं आ सकते। ऐसे लोगों की सन्तुष्टी के लिये हम स्वयं तन्त्रों में से कतिपय उद्धरण दे कर यह दर्शायेंगे कि स्वयं तन्त्र ग्रन्थ इन शब्दों का क्या अर्थ बतलाते हैं।

प्रथम मकार—मद्य

गौड़ी पैष्टी तथा माध्वी त्रिविधा
चोत्तमा सुरा सा वै नाना विधा
प्रोक्ता [ताल खजूर सम्भवा
तथा देश विभेदेन—
नाना द्रव्य विभेदतः।
बहुधेयं समाख्याता
प्रशस्ता देवतार्चने।

महानिर्वाण तन्त्र उल्लास ६ श्लो०२

अर्थात्—श्री महादेव ने कहा—गौड़ी, पैष्टी तथा माध्वी ये तीन प्रकार की उत्तम सुरा है। यह ताल खजूर और अन्य कई पदार्थों से पैदा होती है और अनेक प्रकार की होती है। देश भेद और द्रव्य नाम भेद से यह सुरा अनेक प्रकार की कही गई है। यह सब सुरा देव पूजा में श्रेष्ठ हैं। (टीका मुरादाबाद निवासी सुखानन्दात्मज पं० बलदेव प्रसाद मिश्र)।

यावन्न चालयेद् दृष्टि
यावन्न चालयेन्मनः।
तावत्पानं प्रकुर्वीत
पशुपानमतः परम्॥

महानिर्वाण तन्त्र उल्लास ६ श्लो० १९५

अर्थात्—जब तक दृष्टि न घूमने लगे, जब तक मन चलायमान न हो जाय, तब तक पीता जाय। इस से अधिक पशुपान है।

यावन्नैन्द्रिय वैकल्य
यावन्नो मुख विक्रया।
तावद् यः पिबते मद्यं
स मुक्तो नात्र संशयः॥
पीत्वा पीत्वा पुनः पीत्वा
यावत्पतति भूतले।
उत्थाय च पुनः पीत्वा
पुनर्जन्म न विद्यते॥
आनन्दात्तृप्यते देवी
मूर्च्छया भैरवः स्वय।
वमनात्सर्व देवाश्च
तस्मात् त्रिविधमाचरेत्

कुलार्णव तन्त्र उल्लास ७ श्लोक ९९, १००, १०१

अर्थात्—जब तक इन्द्रियों में विकलता न आये, जब तक मुख पर विकार प्रतीत न हो, तब तक जो मद्य पीता है, वह निस्संदेह मुक्त हो जाता है। मद्य पीकर फिर पिये, उसके बाद फिर पिये यहां तक कि पृथिवी पर गिर पड़े। उठ कर फिर भी जो पीता है उसे पुनर्जन्म नहीं होता॥

आनन्द से श्लोक ९९ में वर्णित विधि से जो पीता है उस से देवी की तृप्ति होती है और बेहोशी से—श्लोक १०० में कही विधि से—स्वयम् भैरव प्रसन्न होते हैं, और कै कर देने से तमाम देवता खुश होते हैं, अतः तीनों प्रकार से मद्य का सेवन करे। (क्यों जी इनका आध्यात्मिक गूढ़ार्थ क्या है?) (क्रमशः)

उपदेशक विद्यालय, तपोवन (देहरादून)

श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी के तत्वावधान में संचालित "वैदिक साहित्य विद्यालय" में नये वर्ष के लिए प्रवेश २० जुलाई से ७ अगस्त तक होगा। मैट्रिक में संस्कृत लिये हुए या प्राज्ञ, विशारद मध्यमा की योग्यता वाले छात्र प्रविष्ट हो सकते हैं। योग्य विद्यार्थियों के खान-पान, रहन-सहन और पठनादि का सारा भार विद्यालय की ओर से निःशुल्क होगा। विद्यार्थियों की आयु १८ से ३० वर्ष की होनी चाहिए। विद्यालय के आचार्य प्रसिद्ध विद्वान् शास्त्रार्थ महारथी श्री पं० जगदीश चन्द्र जी शास्त्री दर्शनाचार्य हैं। विद्यार्थियों के चरित्र सम्बन्धी परिचय पत्र किसी आर्यसमाज के मन्त्री या पदाधि० द्वारा प्रमाणित होना आवश्यक है।

प्रार्थना पत्र शीघ्र

नि०

कविराज ?

मंत्री वे

मनुष्य जन्म का महत्व

[लेखक—प० भक्तराम जी (अफ्रीका वाले) जालन्धर]

उस समय उस में लाखों मनुष्य निवास करते थे। वहां एक ऐसा भी ब्राह्मण रहता था जो प्रति दिन भिक्षा मांग कर अपना और अपनी पत्नी का पेट पाला करता था। एक बार किसी कारण विशेष से अयोध्या नरेश ने प्रसन्न होकर उस ब्राह्मण को कहा—'विप्र! मैं तुझे वरदान देता हूं। तू मुझ से जितना चाहे धन-धान्य मांग ले। मैं तुझे मुंह मांगा धन प्रदान करूंगा।' यह सुन कर ब्राह्मण बोला—'राजन। मुझे एक दिन का अवसर दीजिए। मैं अपनी भार्या से सम्मति ले लूं।' राजा ने उसे एक दिन का अवसर दे दिया। जब घर पर जाकर उसने अपनी पत्नी से पूछा कि क्या मांगा जाए तो उसने कहा—'पति देव! हम तो भिक्षु हैं। हमें धन सम्पत्ति से क्या प्रयोजन है।? हम दोनों को प्रतिदिन पका-पकाया भोजन मिल जाया करे तो बहुत उत्तम है। सो अयोध्या नरेश से तू यही मांग कि सारे कोस देश के मनुष्य, बारी.बारी, हम दोनों को भोजन करा दिया करें।' उसने अगले दिन जाकर राजा से वही वर मांगा। महाराजा ने आज्ञा दे दी—'आज से मेरे देश के सभी मनुष्य बारी से इस ब्राह्मण को भोजन कराया करें।' पहिले दिन महाराजा ने उसको अपने गृह पर, षट्रस युक्त स्वादुतम उत्तम भोजन जिमाया। राजा की रसोई के बने हुए, नाना व्यञ्जन युक्त पदार्थ खाकर उस दिन तो ब्राह्मण-ब्राह्मणी ने अपने अहोभाग्य समझे, अपने को स्वर्गीय सुख सम्पन्न माना, परन्तु जब दिनों दिन बारिएं बदलने पर उनको साधारण जनों का रूखा-सूखा नीरस अन्न मिलने लगा तो वे लगे राजा की रसोई का अति स्वादीला सरस भोजन स्मरण करने परन्तु राजा को बारी का दोबारा आना दुर्लभ जानकर उन्होंने बहुत ही पश्चाताप किया।

जैसे लाखों घरों की बारी भुगत कर उनके लिए राजा के घर की बारी का आना दुर्लभ था ऐसे ही एक बार मनुष्य जन्म खोकर फिर इसको पाना अतीव दुर्लभ है। अतःइसे व्यर्थ गंवाना नहीं चाहिए अपितु अधिकाधिक सफल बनाना चाहिए।

कपिल मुनि अपनी रचना 'सांख्य दर्शन' में लिखते हैं कि व्यवस्था से योनि तीन प्रकार की है। १—कर्म योनि २—उपभोग योनि ३—उभय योनि। इन तीनों में से 'कर्म योनि' वे ऋषि हैं जो सृष्टि के आदि में मुक्ति से लौट कर आते हैं। उन्हें 'कर्म योनि' इस लिए कहते हैं कि वे पूर्व जन्म के पुण्य और पाप के अभाव में दुःख सुख नहीं भोगते किन्तु कर्म ही करते हैं। उत्तम कर्मों से उत्तम और बुरे कर्मों के अनुसार बुरा फल उन्हें इस जन्म से अगले जन्मों में मिलता है और उनका वह जन्म पुनरपि तत्व ज्ञान के द्वारा मुक्ति प्राप्त होने के प्रयोजन से ईश्वर की दया से होता है परन्तु वे कर्म में स्वतन्त्र ही रहते हैं।

दूसरी योनि 'उपभोग योनि' है। वह ईश्वर के न्यायानुसार केवल दुःख सुख भोगने के अर्थ ही होती है। पाप पुण्य करने के लिए नहीं। जैसे पशु पक्षी आदि। तीसरी 'उभय योनि' दुःख सुख भोगने और कर्म करने के लिए भी होती है। जैसे मनुष्य। मनुष्य योनि सब योनियों में उत्तम मानी गयी है। मानव जन्म ही सारे विश्व में उत्तम है। इसकी महानता पशुओं और पक्षियों की भान्ति भोगी जीव बन जाना नहीं है और न ही तितलियों के समान गजगज कर रहना ही है। कीट-आदि योनियों में निरन्तर [illegible] ग और मर जाना ही होता [illegible] योनि है जिसमें मृत्यु [illegible] जा सकती है। [illegible] को मारती [illegible] म में ही [illegible] इसी

दयानन्द-वचनामृत

'इस प्रकार परमेश्वर की प्रार्थना और उपासना करनी चाहिए। तत्पश्चात् शौच हो, दतुवन कर, मुंह हाथ धो स्नान करना उचित है। एक वा डेढ़ कोस दूर एकान्त जंगल में जाकर योगाभ्यास की रीति से उपासना करे। घड़ी आधा दिन चढ़े तक घर में आ जाये और सन्ध्योपासना आदि नित्य कर्म यथा विधि करे। 'सन्ध्योपासना' में कम से कम तीन और अधिक से अधिक इक्कीस प्राणायाम विधि पूर्वक करने चाहिएं। 'जो मनुष्य धर्माचरण से ईश्वर और उसके आदेश में अति प्रेम करते हैं और हृदय-रूप विमल वन में रात दिन रहते हैं, वे परमेश्वर के समीप वास करते हैं।' (स्वामी सत्यानन्द जी)

आर्यसमाज, पुराणी मण्डी जम्मू

आर्य संस्कारों में रुचि

आर्यसमाज के दिन प्रतिदिन बढ़ रहे प्रचार के कारण वैदिक रीति से संस्कारों को कराने के लिये लोगों में काफी दिलचस्पी पाई जाती है—अतः इस सप्ताह आर्य समाज पुरानी मंडी के प्रधान मंत्री श्री कविराज विष्णु गुप्त जी के पौत्र का मुण्डन संस्कार पूर्ण वैदिक रीति से हुआ और ७ अन्य संस्कार भी पूर्ण वैदिक रीति से हुए। संस्कारों से जहां आर्य समाज का प्रचार हुआ वहां काफी धन भी दान के रूप में प्राप्त हुआ।

खिरकी बाजार भटिण्डा

आर्यसमाज खिरकी बाजार शैडवाली गली भटिण्डा की वार्षिक कथा व उत्सव ता० २७ जून से ५ जुलाई तक बड़े ही धूमधाम से सम्पन्न हुआ। आर्यसमाज के अन-थक कार्यकर्ता प्रधान श्री पं० बृजलाल जी शर्मा, मन्त्री श्री ला० सोमराज जी, श्री म० गिरधारी लाल जी तथा समाज के सारे सज्जनों का उत्साह बड़ा ही प्रशंसनीय था। इतनी गर्मी में भी पूरा सप्ताह चौक समाज के विशाल मैदान में खूब कथा प्रचार होता रहा। सभा की ओर से पं० त्रिलोकचन्द्र शास्त्री तथा ठा० दुर्गासिंह जी तूफान सम्मिलित हुए। कोकिल कण्ठ पं० बालकृष्ण जी भी पधारे। प्रतिदिन रात के ग्यारह बजे तक खूब रौनक होती रही। देवियों का उत्साह भी बड़ा उत्तम था। दूर दूर [illegible] आते थे। रविवार दिन [illegible] समारोह था। म० गि[illegible] जी की प्रधानता में मोह[illegible] सम्मेलन हुआ। जिस में [illegible] जी वैद्य, काशीराम [illegible] दुर्गासिंह जी, ब्र० वेदव्रत [illegible] त्रिलोकचन्द्र जी, पं० [illegible] जी ने विचार रखे। प्रस[illegible] हुआ। पं० बालकृष्ण [illegible] दुर्गासिंह जी ने खूब [illegible] सभा को मास व्यय, [illegible] रूप में (१११) रु० [illegible] को [illegible]

आर्य समाज में गीता क्या कभी वेद का स्थान ले लेगी।

(गतांक से आगे)

कई भाई तो अपने आपको ऋषि दयानन्द जी से भी अधिक विद्वान् और विचारवान् सिद्ध करना चाहते हैं जो बात ऋषि दयानन्द जी को भी कभी नहीं सूझी थी वह उनको सूझी है अर्थात् ऋषि दयानन्द जी तो गीता के कुछ भागों को प्रक्षिप्त मानते थे पर ये साक्षात्कृत धर्मा लोग सारी गीता को ही प्रक्षिप्त सिद्ध करने के लिए लम्बे लम्बे लेख और पुस्तकें लिख रहे हैं।

कोई कहते हैं कि—आर्यसमाज में महाभारत की कथा नहीं होनी चाहिए। ऐसे महानुभावों को चाहिए कि—मर्यादापुरुषोत्तम श्री राम, महाराजा दशरथ भरत लक्ष्मण सीता, श्री कृष्ण, भीष्म, युधिष्ठिर भीम अर्जुन आदि के नाम भी अपने व्याख्यानों में न लिया करें।

वास्तविकता यह है कि—वेद का स्थान अपना है स्मृति और इतिहास का स्थान भिन्न है, स्मृति और इतिहास अपने-अपने स्थान पर ही रहेंगे। आर्यसमाज में वेद का स्थान एक लाख गीता भी मिलकर कभी नहीं ले सकेंगी। पौराणिकों का बाबा आदम निराला है वहां भी बेचारी गीता वेद का स्थान नहीं ले रही वहां दुर्गासप्तशती के श्लोकों और तुलसीकृत रामायण की चौपाइयों के साथ स्वाहा शब्द जोड़ कर यज्ञ किया जा सकता है और दुर्गा सप्तशती तथा तुलसीकृत रामायण के ही पाठ बिठाये जाते हैं वेद के नहीं कभी पौराणिक दल की ओर से तुलसी रामायण के एक करोड़ पाठों का आयोजन हो रहा है।

आर्य समाज में वेद का स्थान कभी भी कोई ग्रन्थ नहीं ले सकेगा गीता बेचारी क्या लेगी।

आर्य समाज में किसी को ऐसा मिथ्या भ्रम कभी भी न फैलाना चाहिये न कभी किसी आर्य समाजी को ऐसे भ्रमों में फसना चाहिये।

राष्ट्र नायक जवाहर

(प्रणेता—विद्यासागर शर्मा, दयानन्द मठ, दीनानगर)

हे विश्वशान्ति के दिव्य पुजारी !
तव चरण-युगल में श्रद्धार्पित है।
हे पंच शील के नव-निर्माता।
तव चरण-युगल में श्रद्धार्पित है॥
निधन तुम्हारा हाय ! जवाहर।
जन-हृदयों को शोका कुल कर।
छोड़ बिलखता राष्ट्र-शिशु को।
चल दिया अकाण्ड में हाय ! जवाहर।
हे भारत-मां के लाल जवाहर।
वर दान मातृ का ले कर के तूं।
कठिन करों में चन्द्र हास ले।
निकल पड़ा समराङ्गण में तू॥
'स्वातन्त्र' शिशु की रक्षा करने।
उठा समर में योद्धा बन कर।
नव जात शिशु को आंच न आई।
तव अदम्य-साहस पुंज दिवाकर॥
आज बिलखती मातृ लाल को।
निश्चय पाने... दुखि. हृदय से।
भारत के हे दिव्य विनायक।
तेरे बिन जन दुःखी हृदय से॥
चरणों में काव्य कवि का।
अश्रु-स्रोत बन बह २ जाये।
सभी जनों की हृदय-वेदना।
काव्य कवि के में बह जाये॥
ए काव्यमय जीवन तेरा।
आदर्श बनें जनता के हेतु।
करें प्रदर्शन पथ जनता का।
सन्देश पुण्य का देने हेतु॥

आर्य साहित्य की ग्रन्थ सूची

प्रा. भद्रसेन जो दर्शनाचार्य वि. वै. शोध संथान होशयारपुर

मैं ने अपने गतलेख में आर्य साहित्य की ग्रन्थ सूचो के सम्बन्ध में कुछ विचार आर्य जनता और आर्य नेताओं की सेवा में रखने का प्रयास किया था। अच्छा हो सार्वदेशिक सभा के अधिकारी इस उपयोगी कार्य को अपने हाथों में लें। सार्वदेशिक सभा भारतवर्ष की तथा विदेश की आर्य समाजों को सूचना भेज कर उन के पुस्तकालयों के आर्य साहित्य की सूची मंगवा सकती है। आर्य समाजें आर्यवीर दलके या आर्य युवक समाज के आर्य युवकों के द्वारा यह कार्य सरलता से करवा सकते हैं, कि वे अपने अपने पुस्तकालय के साहित्य की पूर्ण ग्रंथ सूची बना कर सार्वदेशिक सभा को भेज दें। अपने यहां भी यदि उस ग्रन्थ सूची को प्रकाशित करवा कर रख लें तो आर्य सदस्यों की ज्ञानकारी और स्वाध्यायशालों को सहायता का एक अनूठा पग होगा। आर्य साहित्य के पुस्तक विक्रेताओं के सूची पत्रों और आर्यजगत् की पत्र पत्रिकाओं के पुराने अंकों से भी इस कार्य में सहयोग प्राप्त किया किया जा सकता है। प्रथम आज तक के आर्य साहित्य ने लेखकों के नामों का संकलन करना चाहिए, जिनका परिचय प्रान्तीय आर्य-प्रतिनिधि सभाओं के वार्षिक विवरणों से प्राप्त किया जा सकता है। इस समय विद्यमान आर्य समाज के मान्य लेखकों से प्रार्थना करके उनके स्वरचित ग्रन्थों का परिचय भी प्राप्त किया जा सकता है।

आजकल कालिजों के विद्यार्थियों की वार्षिक परीक्षाएं समाप्त होने वाली हैं। सार्वदेशिक सभा इनमें से कुछ आर्य युवकों को सहायता से इस कार्य को पूर्ण करवा सकती है। अथवा आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के अधिकारिगण इस कार्य के लिए दयानंद उपदेशक महाविद्यालय में एक मास का ग्रीष्म अवकाश होता है, छात्र ग्रीष्म अवकाश के दिनों में इस कार्य को पूर्ण करने के लिए विभिन्न-विभिन्न स्थलों पर जाकर ग्रन्थ सूची का निर्माण कर सकते हैं, अथवा विश्राम प्राप्त सज्जनों या वान-प्रस्थियों द्वारा इस कार्य को पूर्ण किया जा सकता है।

इस योजना की पूर्ति के लिए कार्य-कर्ता आर्य समाजों के तथा आर्य जगत् की शिक्षण संस्थाओं के पुस्तकालयों में जाएं, पुस्तकालयों के रजिस्टरों से तथा पुस्तकों से ग्रन्थ नाम-प्रकाश नाम विषय-भाषा और समय का संकेत कर लिया जाये। गुरुकुल कांगड़ी, ज्वाला पुर-झज्झर, सार्व देशिक सभा तथा विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान होश्यार पुर के पुस्तकालय अधिक उपयोगी हो सकते हैं, विश्व विद्यालयों के पुस्तकालयों से भी इस कार्य में सहायता ली जा सकती है। विदेशों के पुस्तकालयों **Libraires** की ग्रन्थ सूची पुस्तक रुप में होती है, जिन का लाभ भारतवर्ष के विश्व विद्यालयों के पुस्तकालयों से प्राप्त किया जा सकता है। यदि प्रत्येक आर्य-समाज और जिन के अपने व्यक्तिगत पुस्तकालय है। यदि वे सज्जन स्वग्रंथ सुची सार्वदेशिक सभा को भेज दें और सार्वदेशिक सभा इस सारी संकलित सामग्री को एक योग्य विद्वान को वर्णानुक्रम आदि की दृष्टि से एक ग्रन्थ का सम्पादन करा लें। इस प्रकार का उपयोगी ग्रन्थ आर्य समाज के इतिहास के लिए तथा लेखकों, वक्ताओं और शोध कर्त्ताओं के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकता है। आर्य जगत के उत्साही पत्र-पत्रिकाओं के सम्पादक और पुस्तक विक्रेता भी इस उपयोगी कार्य को अपने हाथ में ले सकते हैं

वस्तुतः सार्वदेशिक सभा और प्रान्तीय सभाओं को केन्द्रिय और प्रान्तीय स्तर पर इस प्रकार के संग्रहालयों और पुस्तकालयों का निर्माण करना चाहिये, जिन मे सम्पूर्ण आर्य साहित्य के साथ आर्य पत्र-पत्रिकाओं और आर्य समाज के इतिहास सम्बन्धी सामग्री, आर्य विद्वानों एवं आर्य नेताओं के चित्र तथा आर्य जगत से बाहिर की पत्र-पत्रिकाओं, और पुस्तकों की आर्य समाज सम्बन्धी सामग्री का संकलन किया जाये। यह कार्य आर्य समाज के इतिहास में तथा उस के इतिहास को जानने के लिए अत्यन्त उपयोगी हो सकता है आर्य नेताओं और जनता से मै सानुरोध प्रार्थना करता हूं कि वे आर्य साहित्य की ग्रन्थ सूची की ओर अपना ध्यान अवश्य दें। अन्यथा भविष्य में आने वाली पीढ़ियां हमारी इस उपेक्षा पर हमें अवश्य स्मरण किया करेगी, और तब तक आर्य समाज का बहुत कुछ साहित्य भूत के गर्भ में समा चुका होगा, तब इस ग्रंथ सूचि को बनाना अतीव कठिन होगा मैं पुनः आर्य जगत का ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहता हूं वह समय रहते हुए इस कर्तव्य के प्रति सचेत हों।

'अंध कूप'

(ले॰—श्री राम मूर्ति कालिया, एम. ए. देहली)

अंध कूप सोचा है तुम ने
क्या अस्तित्व तुम्हारा है,
जग विख्यात वंश है तेरा
क्यों सूख गयी जल धारा है?

क्या भूल गये, तेरे पुरखा
करते सुखी थके हारों को,
शुष्क बना, तू बना सहायक,
देता है सुख बटमारों को।

स्वामी ने किस हेतु बनाया
सो तू बिलकुल भूल चुका है,
सर्प, बिच्छु अब तुझ में बसते
जीवन यापन हेय बाना है।

त्याग सरसता, धिक्कार तुम्हें
जो नीरमता का बरण किया है,
मर्यादा और परम्परा का
तू ने तो अपहरण किया है।

इसी तरह जो बीता जीवन
कूड़ा करकट खाया तुम ने
बतलाओ फिर जग में रह कर
खोया या कुछ पाया तुम ने।

प्रेरित हो कर विगत काल से
सह लोगे तुम खोद खाद जब,
निश्चय है, जलधार बहेगी,
चमकेगा तेरा भविष्य तब।

आर्य जगत के पाठकों से निवेदन

आर्य जगत का इसे से अगला अंक अर्थात् १६. ८. ६४ का बंद रह कर २३. ८. ६४ का अंक वेद सप्ताह अंक के नाम से प्रकाशित हो रहा है जिस में वेद संबन्धी लेखों के अतिरिक्त आधुनिक की कविताएं भी प्रकाशित होंगी। सभी विख्यात संस्थाएं इस सांचे अंक के अधिक से अधिक से आर्डर दे कर २३ से ३१ अगस्त तक वेद सप्ताह के अवसर पर वितरण कर के वेद प्रचार कार्य को तीव्र गति दें।

व्यवस्थापक

नेपा नगर मध्य प्रदेश में वेद प्रचार

आर्य प्रदेशिक सभा के उपदेशक श्री पं० चन्द्रसैन जी आर्य हितैषी ने इस समाज में दो दिन प्रचार किया तथा २८-७-६४ को आर्य पुस्तकालय का उद्घाटन किया इस अवसर पर फोटो का भी प्रबन्ध था। प्रधान—श्री गणपतराय जोषी, मन्त्री—श्री भगवान सिंह जी, पुस्तकाध्यक्ष—श्री R. K. मलानी, श्री शिवशंकर जी शर्मा इस समाज के प्राण रूप हैं रात दिन अनथक परिश्रम से काम कर रहे हैं इन्हीं के पुरुषार्थ से समाज दिन प्रतिदिन प्रगति की ओर जा रही है।

आर्यसमाज खंडवा (म.प्र.) में वेदप्रचार

श्री पं० चन्द्रसेनजी आर्य हितैषी उपदेशक प्रादेशिक सभा ने इस समाज में २३ से २६ जुलाई तक वेद प्रचार किया। जिसका जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा। इसके साथ ०। श्री सुखराम जी आर्य के सङ्गीतमय भजनों का प्रवाह बहता रहा। २५/- वेदप्रचारार्थ प्राप्त हुए।

चुनाव

प्रधान—श्री रामचन्द्रजी तिवारी, श्री गिरधारीलाल जी शर्मा, श्री कैलाशचन्द्र जी पालीवाल प्रचार-मन्त्री—श्री रमेशचन्द्र शर्मा, कोषाध्यक्ष—सेठ चन्द्रा जी आर्य, पुस्तकाध्यक्ष—श्री गणेश प्रसाद जी शुक्ल, निरीक्षक—श्री अनंतराव जी रायकर।

अंतरङ्ग व प्रतिनिधि—रघुनाथसिंह जी, रामचन्द्र जी तिवारी, रामचन्द्र जी आर्य, रघुनाथसिंह जी वर्मा, रामकृष्ण जी पालीवाल, बी. एस. भंडारी, राजेन्द्र प्रसाद जी शुक्ल, बसंतलाल जी गुप्त।

रामचन्द्र आर्य
मंत्री समाज

आर्य समाज पुलबंगश देहली का वेद प्रचार कार्य

(क) समाज की ओर से ५०१/- की थैली पूर्वी पाकिस्तान के शरणार्थियों के लिए सार्वदेशिक सभा देहली को दी गई।

इस समाज का वार्षिकोत्सव १३. १४. १५ नवंबर सन ६४ को

(ग) पुरोहित जी द्वारा १०१/ संस्कारों से तथा एक घड़ी समाज के लिए प्राप्त हुई।

हम गणेश दास जी वानप्रस्थी के अति आभारी हैं।

सुरेश कुमार
मंत्री समाज

आर्यसमाज माटुंगा (बम्बई—१६)

८ और ६ अगस्त १६६४ को बम्बई में होने वाले सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा के वार्षिक अधिवेशन में सम्मिलित होने के लिए बाहर से आने वाले प्रतिनिधियों का नगर में स्वागतार्थ सेन्ट्रल तथा वेस्टर्न रेलवे के दादर स्टेशन पर माटुंगा आर्यसमाज के स्वयं सेवक प्रस्तुत रहेंगे। ओम् का झंडा लेकर प्लेट फार्म पर स्वयं सेवक उपस्थित रहेंगे और परिचय देने पर वे प्रतिनिधियों तथा आर्यार्थियों को उनके ठहरने वाले स्थान पर सुविधा पूर्वक पहुंचाने की व्यवस्था करेंगे। बम्बई सेंट्रल तथा वी० टी० स्टेशनों पर भी आर्यसमाज के स्वयं सेवक उपस्थित रहेंगे।

८ तथा ६ अगस्त को माटुंगा आर्यसमाज में एक डाक-घर स्थापित रहेगा जो कि अतिथियों प्रतिनिधियों की सुविधा के लिए दोनों दिन चौबीस घंटे सुविधा उपलब्ध करेगा। प्रतिनिधियों को ठहरने के लिए माटुंगा आर्यसमाज मन्दिर (सभास्थल) तथा उसके निकट ही व्यवस्था की गई है।

६ अगस्त रविवार को सायंकाल ५॥ से ८॥ बजे तक आर्य शांता कुंज में विद्वान अतिथियों के के प्रवचन की व्यवस्था की गई है। —ओंकारनाथ मंत्री

आर्य समाज सांबा

में एक सप्ताह तक वेद प्रचार श्री ओम् प्रकाश जी उपदेशक द्वारा हुआ। जिस का जनता पर बहुत ही अच्छा प्रभाव पड़ा। गृह सत्संग भी श्री दीनानाथ जी और श्री कश्मीरी लाला जी ने अपने घरों पर कराये जिस का स्त्रियों पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। १०१ रुपया वेद प्रचारार्थ सभा को भेंट किया गया।

वेद प्रकाश मन्त्री समाज

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उप-सभा दिल्ली

कार्यालय:—मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली

मान्यवर जी नमस्ते। आप को सूचित किया जाता है कि आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उप-सभा दिल्ली का वार्षिक साधारण अधिवेशन दिनांक ६ अगस्त रविवार को मध्याह्न २॥ बजे आर्य समाज मन्दिर (अनारकली) मन्दिर मार्ग नई दिल्ली में होना निश्चित हुआ है। आपसे उपसभा के मान्य सदस्य हैं, अतः आप प्रार्थना है कि समय पर अवश्य ही पधारने की कृपा करें।

विचारणीय विषय :—

(१) गत साधारण बैठक की कार्यवाही की सम्पुष्टि

(२) वार्षिक कार्य-विवरण तथा आय-व्यय का व्यौरा

(३) आगामी वर्ष का आनुमानिक पत्र

(४) उपसभा को सुदृढ़ बनाने पर विचार

(५) अधिकारियों का चुनाव

(६) अन्य विषय प्रधान जी की आज्ञा से

निवेदक
राजकुमार मन्त्री

आर्यसमाज राणी तालाब फिरोजपुर शहर

"आर्य समाज फिरोजपुर शहर का यह विशेष अधिवेशन सभी संस्थाओं के प्रबन्धकों से नम्र निवेदन करता है कि वह अपनी-अपनी संस्थाओं में आर्यसमाज के ज्योतिस्तम्भ महर्षि दयानन्द सरस्वती पूज्य महर्षि विरजानन्द जी, स्वामी श्रद्धानन्द जी, महात्मा हंसराज जी तथा पं० लेखराम आदि महान पुरुषों के चित्र अवश्य टंगवा दें ताकि आने वाले सज्जनों तथा छात्र छात्राओं के हृदय में अपने धर्म और महापुरुषों के प्रति श्रद्धा उत्पन्न हो। इन चित्रों के साथ सम्बन्धित महानुभावों के जीवन की चिरस्मरणीय सेवाओं का उल्लेख भी कर दिया जावे।

मदनजित् आर्य मंत्री
फिरोजपुर शहर

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टैलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P.

एक प्रति का मूल्य २५ नये पैसे   वार्षिक मूल्य ६ रुपये

17/9/65 वेद सप्ताह विशेषांक

वर्ष २४ अंक ३२-३३]   ५ भाद्रपद २०२१ रविवार दयानन्दाब्द १४०— २३ अगस्त १९६४   (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तयः

संश्रुतेन गमेमहि

हम वेद के अनुसार चलें। हमारा जीवन वेद के अनुकूल हो, हमारा पथ वेद पथ तथा हमारे कार्य वेद से अनुमोदित हों। जो कुछ सुनें उस पर आचरण करते रहें।

मा श्रुतेन विराधिषि

हम कभी भी वेद के प्रतिकूल न चलें। कथन, मनन, चिन्तन तथा जीवन का आचरण वेद के विपरीत न हो। जो भी सुनें उसे भुला न देवें, उस का विरोध न करें तथा उस से आंखें बन्द न करें।

देवदत्तं ब्रह्म गायत

यह वेद का ज्ञान देव का भगवान का दिया हुआ है। उस परमेश्वर की वाणी है। सब के लिए उस पिता का दिव्य एवं मीठा प्रसाद है। उस वेद का गान करो। वेद का गीत संगीत गाते रहो।

साम वेद से

वेदोद्धारक

महर्षि दयानंद सरस्वती

ऋषि दर्शन

जैसा ईश्वर पवित्र, सर्वविद्यावित्, शुद्धगुण कर्म स्वभाव, न्यायकारी, दयालु आदि गुणों वाला है, वैसे जिस पुस्तक में ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव के अनुकूल कथन हो, वह ईश्वरकृत अन्य नहीं और जिस में सृष्टिक्रम प्रत्यक्षादि प्रमाण आप्तों के और पवित्रात्मा के व्यवहार से विरुद्ध कथन न हो वह ईश्वरोक्त। जैसा ईश्वर का निर्भ्रम ज्ञान वैसा जिस पुस्तक में भ्रान्ति रहित ज्ञान का प्रतिपादन हो वह ईश्वरोक्त। जैसा परमेश्वर है और जैसा सृष्टिक्रम रखा है वैसा ही ईश्वर, सृष्टि, कार्य, कारण और जीव का प्रतिपादन जिस में होवे वह परमेश्वरोक्त पुस्तक होता है और जो प्रत्यक्षादि प्रमाण विषयों से अविरुद्ध शुद्धात्मा के स्वभाव से विरुद्ध न हो, इस प्रकार के वेद हैं।

सत्यार्थ प्रकाश से

अधिष्ठाता—श्री संतोषराज जी   सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शा[स्त्री]

वैसे तो इस समस्त विश्व में अनेक राष्ट्र हैं परन्तु भारत वर्ष का अपना ही एक विशेष स्थान है ग्रह उपग्रह असंख्य हैं परन्तु सूर्य का अपना ही महत्व है, नदियां असंख्यों हैं परन्तु पीयूषतोया गंगा की अपनी ही मान्यता है, योनियां अगणित हैं परन्तु मनुष्य योनि की महत्ता अपनी ही है, मनुष्य भी अनेक हैं परन्तु ब्राह्मण की श्रेष्ठता अपनी है, ब्राह्मण अनेक हैं परन्तु संन्यासी अलग ही शोभा प्राप्त करता है, संन्यासी भी बहुत हुए परन्तु ऋषि दयानन्द की महत्ता अलग ही है इसी प्रकार धर्म भी अनेक हैं परन्तु सत्यसनातन वैदिक धर्म की समानता कोई नहीं रखता।

वेद प्रति पादित धर्म को वैदिक धर्म कहा जाता है। वेद की मान्यता वही है जो सृष्टि नियम के अनुकूल है। वैदिक धर्म की सब से प्रमुख विशेषता यह है कि जो इस सृष्टि में त्रैकालिक सत्य है वही इस का मत है। वेद के उपदेश ने सृष्टि के आदि से प्राणिमात्र का कल्याण किया है, आज भी कल्याण करने की क्षमता है और भविष्य भी इसी सत्यता पर आधारित है।

वैदिक धर्म सार्व भौम धर्म है, वह समस्त विश्व के मनुष्य मात्र को सम्बोधित करता हुआ कहता है :—'शृण्वन्तु विश्वे अमृतस्य पुत्राः।' वेद का यह आह्वान किसी विशेष देश, जाति, स्थान अथवा रंग के लिए नहीं वह तो समस्त विश्व की अपनी सम्पत्ति है। विश्व की एक मात्र संस्था आर्य समाज को पूर्ण आधार वैदिक धर्म है, दूसरे शब्दों में वैदिक धर्म ही आर्य समाज है और आर्य समाज ही वैदिक धर्म है। इसी लिए इस के संस्थापक ऋषि दयानन्द ने आदेश दिया

सैद्धान्तिक चर्चा—

वैदिक धर्म

'वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है वेदका पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।' आर्यत्व प्राप्त करने के लिए अत्यावश्यक है वेद के आदेशों को अपने जीवन में धारण करना।

धर्म शब्द का मजहब, मत, पन्थ आदि शब्दानुसारी संकुचित अर्थ नहीं है धर्म अपने व्यापक अर्थ को ले कर चलता है। संसार में जो २ पुण्य हैं वही धर्म है और उन सब का आधार वेद है—

से यही स्वीकार किया है कि संसार के पुस्तकालयों में सब से प्राचीन ग्रन्थ ऋग्वेद है। इस के पश्चात् जितनी भाषाएं, ज्ञान एवं विज्ञान प्रचलित हुये उनका एकमात्र आधार वेद ही है। देखिए ऋग्वेद १०,७१,११।

बृहस्पते प्रथमं वाचो अग्रं,
यत्प्रैरत नामधेयं दधाना।
यदेषां श्रेष्ठं यदरिप्रमासीत्
प्रेणा तदेषां निहितं गुहाविः॥

अर्थात—हे बृहस्पते, अर्थात् महान् ज्ञान से युक्त वेद वाणी के स्वामी प्रभो! सृष्टि के आरम्भ में

> वैदिक धर्म क्या है? उसकी तुलना सांसारिक अन्य धर्मों के साथ विवेचनापूर्ण की है वैदिक धर्म का महत्व सप्रमाणों से सिद्ध करते हुए उसकी विशेषताओं पर भी सिंहावलोकन किया है। अंत में वैदिक धर्म को ही उच्चासन पर आरूढ़ किया है।
>
> —व्यवस्थापक

'वेदोऽखिलो धर्म मूलम्'

प्राचीन आर्ष ग्रन्थोंकी सम्मति और युक्ति अनुसार वेद ईश्वरीय ज्ञान है। ईश्वररचित संसारकी सब वस्तुएं अपने आप में पूर्ण हैं उन को प्रमाणित करने के लिए किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं। जैसे सूर्य को देखने के लिए किसी प्रकाश की आवश्यकता नहीं होती। वेद भी इसी प्रकार निर्भ्रान्त स्वतः प्रमाण हैं उसे किसी अर्थ प्रमाणकी आवश्यकता नहीं। वेद एक कसौटी है उस पर जो खरा उतरता है खरा और जो खोटा—वह खोटा।

ससार की भाषाओं और ज्ञान का आदि स्रोत वह वेद है। प्राचीन ऋषियों के मतानुसार तो वेद को सर्व प्राचीन ज्ञान माना ही जाता है साथ ही मोक्षमूलर आदि पाश्चात्य विद्वानों ने भी एक मत

आदिम ऋषियों ने जो सर्वप्रथम विभिन्न पदार्थों के नामों को धारण करने वाली. देने वाली वेद की वाणियों को प्रेरित किया प्रचारित किया वह वेद ज्ञान क्योंकि इन ऋषियों का श्रेष्ठत्व था क्योंकि इनका निष्पतत्व था इसलिए अपनी प्रेरणाये प्रेम से आपने इन के

(ले० विद्यावारिधि विद्याभानु 'शास्त्री' यमुना नगर)

हृदय और बुद्धि में रख दिया वही अन्य मनुष्यों के लिए प्रकट हुआ।

इसी प्रकार नौविद्या विमानवारादित्यादिग्रहोपग्रहगणितादि विज्ञान ज्ञान भी मूल रूप से वेद में प्रतिपादित है, वस्तुतः संसार के समस्त ज्ञान का भण्डार वेद है। जीवन के समस्त प्रश्नों का उत्तर और शंकाओं का समाधान वेद में विद्यमान है। आवश्यकता है अन्वेषण की खोज करने की। "सर्वं वेदे प्रतिष्ठितम्" सब कुछ वेद में है। जब सब कुछ वेद में है तो हमें अपने जीवन का कल्याण करने के लिए एक मात्र वैदिक धर्म की शरण में आएं और अपने पूर्वज ऋषि, मुनि, महात्माओं के समान अपने जीवन को उच्च और दूसरों के लिए आदर्श बनाए। तभी मनुस्मृति का यह आदेश सफल है और हमारी भारतीयता गौरवशालिनी है :—

"एतद्देश प्रसूतस्य,
सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन्,
पृथिव्यां सर्व मानवाः॥

महू छावनी और इन्दौर (M.P.) में धर्म प्रचार

आर्य प्रादेशिक सभा के उपदेशक श्री पं० चन्द्रसैन जी आर्य द्विवेदी पौने दो मास से मध्य भारत में वेद प्रचार कर रहे हैं। प्रसुप्त आर्य समाजों में वैदिक नाद के द्वारा जागृति पैदा कर रहे हैं। प्रत्येक समाज उनके व्याख्यानों का पूर्ण लाभ उठा रही हैं। और धन द्वारा वेद प्रचार कार्य में सभा को सहायता दे रही हैं। चार दिन महू छावनी में प्रचार होता रहा १२३/- वेद प्रचार के लिए प्राप्त हुए। इस समाज के म० जीतन दास जी, ला० सेवाराम जी, श्री राज गुरु जी शर्मा, श्रीमती करुणा देवी, बहिन सुशीला देवी, मंत्राणि द्रौपदी देवी इस समाज के अनथक कार्यकर्ता हैं जिन के पुरुषार्थ से समाज का कार्य सुचारु रूप से चल रहा है।

इसी प्रकार इन्दौर में भी कुछ दिन तक प्रचार कार्य होता रहा। सेठ सोमराज जी सिंधी, डा० उदय भानु जी इस समाज के प्राण हैं। दयानन्द गंज समाज में भी पंडित जी के भाषण होते रहे। इस समाज के सहयोग से इन्दौर समाज ने एक सौ के लगभग सभा को वेद प्रचारार्थ धन दिया।

भूखे को भोजन दो

वेद प्रचार आर्यसमाज का परम धर्म है, यही एक उद्देश्य आर्यसमाज का मुख्य है, शेष सारी बातें गौण हैं—परन्तु आज बात उल्टी हो गई है। वेद प्रचार फण्ड भूखा मर रहा है और इसकी ओर किसी की दया दृष्टि नहीं जाती। मैं आजकल श्रीनगर में हूं। आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा जालंधर से सूचना मिली कि वेद प्रचार फण्ड खाली है। मैंने आर्यसमाज वजीर बाग श्रीनगर के सुयोग्य प्रधान श्री ला० अमोलकराम जी से तथा पुरुषार्थी मंत्री श्री पं० गंजू जी से प्रार्थना की कि आर्यसमाज वजीर बागके पास १०-१२ हजार रुपया जमा है इसमें से दो हजार वेद प्रचार के लिए भेज दीजिए, उत्तर मिला कि भेजेंगे

> आर्यसमाज के प्रसिद्ध तपस्वी प्रभु के परमविश्वासी पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज आजकल श्रीनगरकी जनता को अपना उपदेशामृत पिला रहे हैं। 'आर्यजगत' पर आप की सदा कृपा रहती है। हमारे नम्रनिवेदन को स्वीकार करके इस विशेषांक के लिए अपना विशेष अमृत भरा सन्देश दिया है—

तो अवश्य परन्तु उत्सव के पश्चात्। मैंने कहा कि भूख तो अब सता रही है और आप रोटी तीन सप्ताह पश्चात् भेजेंगे। भूखे की अवस्था क्या होगी? तब बड़ी कृपा करके वह मान गए और उन्होंने दो हजार रु० सभा को भिजवा दिया। इसी प्रकार कितना ही आर्यसमाजों के पास धन जमा पड़ा होगा, यह बैंकों में पड़ा-पड़ा क्या वेद मंत्रों की व्याख्या कर सकेगा? जिन समाजों के पास धन जमा है वह कृपया शीघ्र वेद प्रचार निधिके लिए भेज दें ताकि सभा वेद प्रचार के कार्य को उत्साह से आगे बढ़ा सके—अमृतसर लोहगढ़ आर्यसमाज के कर्ता श्री ज्ञानी पिंडीदास जी ने मुझे लिखा कि मैं वहां वेद कथा करूं—मैंने उत्तर दिया कि कथा तो हो ही जायगी परन्तु वेद प्रचार के लिए कम से कम दो हजार रुपया सभा के पास पहुंचना चाहिए और ज्ञानी जी ने बड़ी प्रसन्नता से इसे स्वीकार किया और सत्य तो यह है कि अमृतसर में वेद प्रचार के ऐसे प्रेमी महानुभाव हैं जो दो-दो लाख रुपया सुगमता से वेद प्रचारके लिए दे सकते हैं—यह अमृतसर की पवित्र नगरी है जहां के रहने वाले बावा गुरुमुखसिंह जी ने मेरे गले में एक लाख एक रुपया के नोटों की माला डालकर कहा था, यह धन वेद प्रचार के लिए है। यह सुखद घटना कैसे घटी यह कथा भी सुन लीजिए—मैं जब आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पजाबसिंध बलोचिस्तान लाहौर का प्रधान था, सभा की स्वर्णजयन्ती मनाने का विचार उठा तभी सभा ने निश्चय किया कि जयन्ती पर वेद प्रचार के लिए एक लाख रुपया जमा किया जाये, मैं आर्यसमाज मन्दिर अनार-

(तपोमूर्ति पूज्य महात्मा आनन्द. स्वामी जी महाराज)

कली लाहौर में कुछ उदास मुद्रा में बैठा विचार कर रहा था कि यह एक लाख जमा कैसे होगा तो अकस्मात श्री बावा गुरुमुखसिंह जी अमृतसर से अपनी मोटर पर पधारे और मुझे खोजते हुए समाज मन्दिर में आ पहुँचे और मुझे उदास-सा देखकर कहने लगे. यह आज आपके स्वभाव के विरुद्ध आपको उदास क्यों देख रहा हूं—मुख मण्डल की वह प्रसन्नता कहां गई?" मैंने कहा बाबा जी वह विचारधारा में डूब गई है. मेरे ऊपर वेद प्रचार के लिए एक लाख रुपए जमा करने का बोझ डाल दिया गया है—यह सुनकर बाबा जी ने कहा, यह एक लाख तो अवश्य जमा हो जाएगा और जिस दिन यह एकलाख जमा होगा—उसी दिन मैं एक लाख रुपया और आपके अर्पण कर दूंगा—मेरी प्रसन्नता का स्रोत उमड़ पड़ा और १३ ही दिनों में सारे समाजों ने आर्य नर-नारियों ने धन की वर्षा शुरू कर दी और तब बाबा गुरुमुख सिंह जी ने बाबा प्रद्युमन सिंह ट्रस्ट की ओर से वेद प्रचार के लिए एक लाख रुपया प्रदान कर दिया। एक के स्थान में दो लाख रुपया वेद प्रचार फण्ड को प्राप्त हो गया। यदि इस दानी बावा परिवार में झगड़ा न हो जाता तो वेद प्रचार भूखा न रहता अब भी अमृतसर में ऐसे दानियों की कमी नहीं, जो वेद प्रचार फण्ड को भर सकते हैं परमात्मा उनके मन में प्रेरणा उत्पन्न करें ताकि आर्यसमाज का यह मुख्य उद्देश्य वेद प्रचार पूरा करने के लिए सभा पूरे उत्साह से कार्य करे और समाज की शिथिलता दूर हो।

मानस-यज्ञ

[आचार्य श्री मित्रसेन जी एम० ए० (उ०) ज्वालापुर]

धरा धाम धवलित अब होता शुभ श्रावण के आने से,
मन मोद प्रमोद मनाता फिरे अमृत-रस के पा जाने से,
घनघोर घटा घिरती नभ में जल गरज-गरज बरसा जाती।
चंचल चपला चमकी छाया में क्षणभंगुर जग है कह जाती॥
पत्र-पुष्प पावन फल पाकर तरु फूले नहीं समाते हैं,
चातक, चकोर, पिक भी हर्षित, नव नृत्य मयूर दिखाते हैं,
मधुर मनोहर शुभ बेला में हम सब मानस-यज्ञ करें।
स्वाहा का मंजुल मान, गान श्रुति मन्त्रों का मन ध्यान धरें॥
हृदय हमारा यज्ञ कुण्ड और सत्व शुद्ध समिधायें हों,
मनन अग्नि स्थापित करदें पूर्ण सभी इच्छायें हों,
धृति रूपी घृत साथ साथ हो शाकल्य विचारों का लेकर,
फिर स्वाहा संज्ञा स्वयं बनेगी सकल धरा को पावन कर।
मानस यज्ञ यह अखिल विश्व को स्वर्ग समान बनायेगा,
यही यज्ञ इस धरा धाम से अज्ञान अभाव मिटायेगा,
विज्ञान कला को उन्नति देकर शान्ति भाव फैलायेगा।
भव सागर से पार उतारे पावन पन्थ बनायेगा॥

प्रादेशिक सभा को वेद प्रचारार्थ धन जो इस सप्ताह प्राप्त हुआ

श्री पं. चन्द्रसैन जी द्वारा १५३/-
" " राजपाल मंडली द्वारा १५०/-
" " त्रिलोकचन्द्र जी शास्त्री द्वारा ५५१/-
" " " ४०/-
सेठ विरला जी द्वारा (बहाई मत प्रचार वाले) १२००/-

सम्पादकीय–

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२१, २३ अगस्त १९६४ [अंक ३३

राखी और जन्माष्टमी

तारीख तेईस अगस्त से ले कर तीस अगस्त तक को यह सप्ताह तीन पर्वों का समन्वय है। यह तीन पवित्र धाराओं का संगम है, त्रिवेणी का तीर्थ है। भारतीय तीर्थ तो जल का तीर्थ है किन्तु यह तीर्थ आध्यात्मिक है। गंगा यमुना सरस्वती के समान इस पर्व में भी तीन धाराओं का समावेश है। वेदसप्ताह या श्रावणी उपाकर्म की धारा में राखी तथा जन्माष्टमी के सुन्दर प्रवाह भी शामिल हो गए हैं। रक्षा बन्धन से आरम्भ होकर जन्माष्टमी तक यह पर्व चलता रहता है। भिन्न २ स्थानों पर जनमंडल की ओर से अपने २ ढंग से मनाया जाता है। इन पर्वों से जीवन में बड़ी शिक्षा मिलती है। आर्यसमाजों में प्रतिवर्ष धूमधाम से सम्पन्न होता है। वेद आर्यजाति के जीवन के लिए प्राण का काम करते हैं। वेद परमधर्म है, परम प्रमाण है। वेद प्रचार ही आर्यसमाज का सब से उत्तम कार्य है। इसी के लिए आर्यसमाज की स्थापना हुई। इस के देवता महर्षि दयानन्द ने अपना सारा जीवन वेद प्रसार के लिए भेंट कर दिया था। उसी वेदप्रचार की पवित्र परम्परा को लेकर समाज अपने काम में लगा हुआ है। सारी जनता को यही सन्देश देता है।

राखी बन्धन का पर्व भाई बहिन के सच्चे प्यार की अटूट कड़ी का परिचय देता है। यह भी कहा जासकता है कि ब्राह्मण इस रक्षासूत्र को लेकर अपनी जनता के हाथों पर बांधता है, प्रतिज्ञा करवाता है कि अपने जीवन में वेदधर्म प्रचार को सदा सामने रखना। यह रक्षा-सूत्र इसी लिए बांधा जाता है ताकि वेद के परमधर्म के रक्षण के लिए अपना सर्वस्व भी समर्पित कर देना। वेद के पठन पाठन में पूरा २ सहयोग देना। वेद के लिए हर प्रकार का उत्सर्ग करते समय आगे रहना। उस दिव्य महात्मा कृष्ण का जन्म दिन भी इसी बात की ओर संकेत करता है कि उस महापुरुष के जीवनस्तम्भ से किरणों का प्रकाश निकलता है। वेद प्रेम की ज्योति एवं राजनीति की सुगन्धि निकलती है। उस से भी बड़ा पाठ पढ़ने को मिलता है। इस प्रकार ये तीनों पर्व हमारे जीवन में बहुत कुछ देते हैं। चेतना के प्रतीक हैं।

आर्यसमाज से इस पर विशेष कहना है। क्योंकि उस ने भारी दायित्व सम्भाला है। उस के कन्धों पर विश्वनिर्माण का बड़ा भार है। समाजों में इन पवित्र पर्वों को मनाते हुए संकल्प करें। अपने कार्यों की पड़ताल करें, योजनाओं की देखभाल करें। सोचें कि वेद प्रचार के लिए वे क्या कर रहे हैं। अपने लिए तो बहुत कुछ करते हैं, बहुत बड़ा काम भी करते हैं, किन्तु वेद के लिए कितना करते, कितना देते तथा कितना ध्यान देते हैं? प्रत्येक यही चाहता और कहता है कि वेद का काम करने के लिए, वेद प्रचार के लिए दूसरे परिवारों के व्यक्ति निकलें, बाहर निकलें, बाहर घूमें, परिवार छोड़ें, भारी त्याग करें, बलिदान देवें। हमें कुछ न करना पड़े। तो कैसे काम चलेगा आर्यसमाज विद्वान योग्य तथा चरित्र वाले वेद प्रचारकों से खाली हो रहा है। संन्यासी विरले हैं। नहीं तो कई तो गृहस्थियों से भी बड़े गृहस्थी बन कर धनार्जन में लगे रहते हैं। निश्चिन्त व्यक्ति भी तो वेद प्रचार के काम के लिए नहीं निकलते। काम कैसे बनेगा। वेदप्रचार का कोष खाली है पर सिनेमा के थैले भरे हुए हैं। अपूज्य पूज्य बन रहे हैं। इस पर्व पर सभा के वेद प्रचार के कोष को भरने तथा समय देने का व्रत लेवें

—त्रिलोक चन्द

मन में सोचें

हम वेद प्रचार के लिए कितना बलिदान देते हैं? वेद हमारे लिए परम प्रमाण एवं परम धर्म का स्थान रखते हैं। भारतीय वेद भक्तों ने इस के प्रसार के लिए मन, धन के साथ २ अपना जीवन सर्वस्व भी भेंट कर दिया। इस युग के दिव्य देवता दयानन्द ने अपना भरा यौवन, जीवन दान कर के अपनी भस्मी तक भी समर्पित कर दी। हम वेद के स्वाध्याय, पठन पाठन के लिए कितना समय देते हैं, कितने पैसे देते तथा कितना सहयोग देते हैं? इस का उत्तर अपने दिल से पूछें। हमारे कितने परिवार ऐसे हैं जहां वेद की पुस्तकें हैं? यदि है तो उन को पढ़ने वाले कितने लोग हैं! हमारा अन्य सारा जीवन परिवार का काम चलता है। इस महंगाई में भी यथा गाड़ी चल ही रही है। खानपान परिधान, लेना देना, विवाह कार्य तथा मनोरंजन के सारे कार्य ही उसी प्रकार से अबाध गति से चलते हैं। घरों में बिजली के सुन्दर पंखों, कीमती रेडियो सेट तथा साज सज्जा की विपुल सामग्री के लिए भी धन मिल जाता है सुन्दर २ मकान भी निर्मित किये जाते हैं। आज के हिन्दु समाज में सारे ठाठ बाट का क्रम यथा पूर्व जारी है। किन्तु खेद यह है कि वेद के लिए तथा इस के प्रचार के लिए कुछ नहीं है। मन व्याकुल हो जाता है। शरीर को खूब भोजन खिलाया जाता है परमात्मा लिए के कुछ नहीं है। पत्तों को दिल खोल कर पानी दिया जा रहा है पर मूल का ध्यान ही नहीं। काम कैसे बनेगा। गाड़ी पटरी से उतर गई है। यह श्रावणी का पर्व इसी लिए आता है कि सारा समाज इस पर विचार करे। अपने जीवन में संकल्प करे, दीक्षा और व्रत आधरण करे। ऋषि दयानन्द के युग में भारतीयों के पास सब कुछ था पर वेद सर्वथा भूल गए थे। वेद को प्रमुखता देने के लिए जीवन भेंट किया। आर्य समाज की स्थापना की। वेद प्रचार का पवित्र कार्य इसे सौंपा। आज सिनेमा के लिए तो लाखों के भवन नगर २ में हैं पर वेद प्रचार के लिए आंखें बन्द हैं। क्या बनेगा! सब कुछ, है कमी किसी बात की भी नहीं है पर मन का भाव समाप्त होता जा रहा है। इस पर्व पर वेद के स्वाध्याय का व्रत लेवें। वेद प्रचार में समय देवें तथा सभा रूपी केन्द्र को दृढ़ बनाने के लिए इस पर्व पर उत्तम २ पुस्तकें दूसरों तक पहुंचावें। सभा का वेद प्रचार कोष भरने में कसर न रखें। हम मन में सोचें कि वेद के लिए क्या करते हैं। —त्रिलोक चन्द्र

★ जिस की अपनी बुद्धि नहीं उस का शास्त्र क्या कर सकते हैं। नेत्र हीन को शीशा क्या लाभ पहुंचायेगा?

★ हमें अधिक धनकी आवश्यकता नहीं है। नैतिक चरित्र की आवश्यकता है।

वेद विद्या की जाग्रति से क्या बनेगा ? ऐसा प्रश्न पूछा जाता है। जिस समय वेद विद्या इस भारत वर्ष में जाग्रत थी, उस समय यह भारत उच्च शिखर पर विराजमान था। उस समय की उन्नति के विषय में मनु महाराज ने कहा है—

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्व मानवाः ॥

इस भारतवर्ष में उत्पन्न हुए अग्रजन्मा विद्वान् से पृथिवी पर के सब मानव अपने २ व्यवहार कैसे करें इस विषय की शिक्षा प्राप्त करें। यह मनु महाराज का कथन इस इतिहास की साक्षी दे रहा है। कि उस समय भारतवर्ष सब अन्य देशों लोगों से अग्रसर था और सब अन्य देशों के तरुण यहां आते थे और उत्तम चारित्र्य के सम्बन्ध की उत्तम शिक्षा यहां प्राप्त करते थे। आज भारतवर्ष के तरुण अन्य देशों में जाते हैं और वहां शिक्षा पाते हैं। यह उलटी बात हो गई है। ऐसा क्यों हुआ इस का विचार करना आज भारतीयों का कर्तव्य है।

भारतवर्ष उस समय वेद विद्या में उत्तम प्रवीण था और आज वह वेद विद्या को भूला हुआ है। वेद विद्या के बारे में मनु महाराज लिखते हैं—

सेनापत्यं च राज्यं च
दण्ड नेतृत्वमेव च।
सर्वलोकाधिपत्यं च
वेदशास्त्रं विदर्हति ॥

सेनापति का कार्य, राज्य-शासन चलाने का कार्य न्यायाधीश का गुन्हगार को योग्य दण्ड देने का कार्य और सब लोगों के आधिपत्य के कार्य अर्थात् छोटे मोटे शासन व्यवस्था के कार्य वेदरूपी शास्त्र जानने वाला उत्तम-रीति से कर सकता है।

इस श्लोक में मनुमहाराज ने राज्य शासन के सभी कार्य वेद-

वेद की जाग्रति से क्या होगा?

ले॰ वेदमूर्ति श्री पं॰ सातवलेकर जी स्वाध्यायमंडल पारडी[सूरत]

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

रूपी शास्त्र को यथावत् जानने वाला कर सकता है ऐसा कहा है। इस मनु के विधान की व्याप्ति कितनी है देखिए—

सेनापत्यम्—सेनापति की सेना व्यवस्था, सेना संचालन सेना के साथ शत्रु पर हमला करना, शत्रुसेना ने हमला किया तो उस शत्रु का पराभव करना आदि सब सेनापति के कार्य वेदरूपी शास्त्र जानने वाला कर सकता है वेद में मरुत् देवता के सूक्तों में सेना की उत्तम व्यवस्था बनाने वाले सूक्तों में सेना की व्यवस्था का उत्तम वर्णन है।

राज्यम्—राज्यशासन करने के सब कार्य, छोटे-मोटे राज्य-शासन के कार्य अर्थात् ग्रामरक्षा से लेकर मुख्य मन्त्री तक के सब कार्य वेदशास्त्र उत्तमरीति से जानने वाला कर सकता है।

दण्ड नेतृत्वम्—न्यायाधीश के अपराधी को दण्ड देने के सब कार्य वेदशास्त्रको जानने वाला कर सकता है।

सर्वलोकाधिपत्यम्—राष्ट्रकी ग्रामाधिकारियों से लेकर राष्ट्र के मुख्यमन्त्री तक जितने भी शासनाधिकारी है उन सब के कार्य।

वेदशास्त्रवित् अर्हति—वेदरूपी शास्त्र जानने वाला उत्तम रीति से कर सकता है। वेद के उत्तम ज्ञान की यह योग्यता है। आज हम देखते हैं कि वेद जानने वाला ये कार्य यथायोग्य रीति से कर नहीं सकता। इसका का कारण यह है कि वेद की सुयोग्य पढ़ाई का कार्य आज कहीं भी नहीं हो रहा है। इस कारण वेद में अनेक विद्याएं हैं उनको कोई जान नहीं सकता।

मनुस्मृति में उक्त श्लोक से यह स्पष्ट रीति से मालूम होता है कि जिस समय उक्त श्लोक लिखा गया उस समय वेद के ज्ञान से सेनापति के कार्य, राज्य शासन के कार्य तथा न्यायधीश के कार्य वेद के ज्ञानी कर सकते थे। आज भी हम यत्न करें तो हमें ज्ञात हो सकता है कि सब कार्य अर्थात् सेना संचालन, राज्य शासन और न्यायदान [illegible] ब कार्य वेद का ज्ञानी करने [illegible] मर्थ होगा, यदि वेद का अध्ययन ठीक रीति से हो सकेगा।

इन्द्र के मन्त्र

इन्द्र देवताके तथा मरुत देवता के मन्त्रों के अध्ययन से सेना संचालन, युद्ध आदि का ज्ञान हमें प्राप्त हो सकता है।

मरुत् देवता—मरुतों का नाम सप्ती है क्योंकि प्रत्येक पंक्ति में मरुत् सात-सात रहते थे। यह सेना की रचना का ज्ञान है। प्रत्येक पंक्ति में सात-ऐसी पंक्तियां मरुतों की सात पंक्तियों में ४९ मरुत् होते थे। तथा प्रत्येक पंक्तिके दोनों ओर एक-एक पार्श्व रक्षक होता था कि उस की नियुक्ति सेना में जहां की गई है उस बाजू से शत्रु का हमला हो तो उससे अपनी पंक्ति का संरक्षण करे—प्रत्येक पंक्ति की दो बाजूएं होती हैं और प्रत्येक बाजू में एक-एक पार्श्वरक्षक होता था। सेना की ऐसी उत्तम व्यवस्था वेद के मन्त्रों के द्वारा बताई गई है। जहां ऐसी तैयार सेना होगी वहां शत्रु किस तरह आक्रमण कर सकता है ? मरुतों के सब मन्त्र सैन्यव्यवस्था करने का ही आदेश देते हैं।

इन्द्र के मन्त्रों में युद्धविषयक वर्णन किस तरह आते हैं देखिये—

वयं शूरेभिरस्तृभिरिन्द्र त्वया युजा वयम्। सासह्याम पृतन्यतः।
ऋ० १-८-४

हे इन्द्र ! त्वया युजा वयं—तेरे साथ रह कर हम शूरेभिः अस्तृभिः-शूरवीरों के साथ रह कर पृतन्यतः सासह्याम—सेना से हम पर हमला करने वाले शत्रु को पराजित करें।

शूरवीरों की सेना के साथ रह कर हम सेना से हमला करने वाले शत्रु का पराभव करें। शत्रु के पराभव करने का उपदेश है। शत्रु सेना के साथ हमला करता है। उस समय हमारे पास भी वैसी ही सेना चाहिए जिस से शत्रु पराभूत हो सके।

पुरांभिन्दुर्युवा कविर-
मितौजा अजायत।
इन्द्रो विश्वस्य कर्मणो
धर्ता वज्री पुरुष्टुतः ॥
ऋ० १-११-४

पुरां भिन्दुः—शत्रु की नगरियों को तोड़ने वाला अमितौजाः—अपरिमित शक्तिवाला युवा कविः—तरुण ज्ञानी सब कर्मों का करने वाला वज्री-वज्रधारी बहुत प्रशंसित इन्द्र है। यहां पुरांभिन्दु—नगरों को तोड़ने वाला वीर वर्णित है। शत्रु के नगरों को तोड़ना और अपना कब्जा करना यह आसानी से होने वाला कार्य नहीं है। यह एक ही वर्णन देखिये। शत्रु के नगर तोड़ने हैं तो अपनी तैयारी कैसी कितनी करनी चाहिए, इस का विचार कीजिए। शत्रु का सैन्य कितना है, नगर संरक्षण की तैयारी शत्रु ने की है या नहीं। शत्रु के पास गोला बारूद तथा अन्य शास्त्रास्त्र कैसे हैं। शत्रु के सैनिक किस प्रकार की लड़ाई करते हैं, शत्रु का स्थान कैसा है—इत्यादि बातों का विचार करके अपनी तैयारी करनी चाहिए अपनी तैयारी शत्रु से अच्छी रही तभी अपने विजय की सम्भावना हो सकती है अन्यथा पराजय।

(शेष पृष्ठ ११ पर)

वेद क्या हैं ?

[श्री पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए० प्रयाग]

आर्य समाज की भव्य विभूति श्री पं० गंगाप्रसाद जो उपाध्याय एम. ए. सचमुच ही समाज के जीवन के लिए महाधन हैं। अनेक भाषाओं के प्रकांड पण्डित हैं। साहित्य निर्माण में बड़ा भारी कार्य किया व कर रहे हैं। लिखने में कमाल प्राप्त है। आपके साहित्य से सैंकड़ों नहीं हजारों युवक आर्य समाज में आये। एक २ पुस्तक बड़ी कीमती निधि है। इस अवस्था में भी निरन्तर लिखते हैं। प्रभु सदा स्वस्थ रखें—सं०

प्रश्न—वेद क्या हैं ?

उत्तर—वेद चार अत्यन्त प्राचीन धर्म ग्रंथों के नाम हैं। पहला ऋग्वेद, दूसरा यजुर्वेद, तीसरा सामवेद और चौथा अथर्ववेद। इन से पुराना कोई अन्य धर्म शास्त्र नहीं है। जो अन्य धर्म ग्रन्थ बने हैं वे सब वेदों से पीछे हैं।

प्रश्न— वेदों को किसने बनाया है ?

उत्तर—वेदों को किसी मनुष्य ने नहीं बनाया। सृष्टि के आरम्भ में जब ईश्वर सृष्टि बनाता है तो मनुष्य मात्र की भलाई के लिए ऋषियों के हृदयों में वेदों का प्रकाश करता है। सृष्टि के आरम्भ में चार ऋषि हुए। एक का नाम अग्नि था। उस ऋषि के हृदय में ऋग्वेद का प्रकाश हुआ। दूसरे ऋषि का नाम वायु था, उसके हृदय में यजुर्वेद का प्रकाश हुआ। तीसरे ऋषि का नाम आदित्य था, उसके हृदय में सामवेद का प्रकाश हुआ। चौथे ऋषि का नाम अंगिरा था, उसके हृदय में अथर्व वेद का प्रकाश हुआ इन चारों ऋषियों ने परस्पर सहयोग से संसार के अन्य मनुष्यों में इन वेदों का प्रचार किया। फिर ऋषि होते गए जिन्होंने वेदमन्त्रों की व्याख्याएं कीं और दूसरे ग्रन्थ लिखे। इन सबको वैदिक शास्त्र कहते हैं।

प्रश्न—इसके लिए प्रमाण दीजिए ?

उत्तर—देखिए—यजु. अ. ३१ मन्त्र ७

तस्मात् यज्ञात् सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे।
छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद् यजुस्तस्मादजायत॥

उस सब के पूजनीय परमात्मा से ऋग्वेद, सामवेद, छन्द अर्थात् अथर्ववेद और यजुर्वेद उत्पन्न हुए।

प्रश्न—चार वेद अलग-अलग क्यों हैं ? धर्मग्रन्थ तो एक होना चाहिए था।

उत्तर—मूल वेद तो एक ही है। यह चार शाखाएं हैं, जैसे वृक्ष तो एक ही होता है परन्तु उस की शाखाएं, पत्ते, फूल और फल अलग-अलग होते हैं। उन सब में वृक्ष का ही रस काम करता है। इसी प्रकार मूल वेद तो ऋग्वेद ही है। शेष वेद उसी का रूपान्तर है। पूर्व मीमांसा में महर्षि जैमिनि ने लिखा है—

गीतिषु सामाख्या—पूर्व. मी. २-१-३६

अर्थात् ऋग्वेद के मन्त्र जब गान विद्या के नियमों के अनुसार गाए जाते हैं तो उनको 'साम' कहते हैं। केवल मन्त्रों को साम नहीं कहते। नियमानुसार गाए हुए मन्त्र 'साम कहलाते हैं। आदित्य महर्षिनेऋग्वेदके मन्त्रोंको गान विद्या के अनुसार स्वर ताल आदि से ठीक कर दिया। वही सामवेद कहलाया। जैसे सामवेद का पहला मन्त्र है—

अग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये। निहोता सत्सि बर्हिषि।
साम० पू० १-१-१

यह मूलतः ऋग्वेद के छटवें मंडल के सोलहवें सूक्त का दसवां मन्त्र है। दोनों वेदों में एक ही शब्द हैं एक ही ऋषि अर्थात भरद्वाज बार्हस्पत्य, एक ही देवता 'अग्नि,' एक ही छन्द गायत्री। उदात्त, अनुदात्त और स्वरित स्वर भी एक ही हैं। अर्थात् जो ऋग्वेद में अनुदात्त है वह सामवेद में भी अनुदात्त है। जो ऋग्वेद में स्वरित है वह साम में भी स्वरित है। केवल लेखन शैली में भेद है। ऋग्वेद में स्वर आड़ी और तिरछी लकीरों द्वारा बताये गये हैं। सामवेद में १, २, ३ आदि अंक दिये हैं। मन्त्र एक ही है। परन्तु सामवेद में गाने का ढङ्ग अलग है। इनके नाम हैं रथन्तर साम, बृहत् साम, वैरूप साम, वैराज साम, शक्वर साम, रैवतसाम—देखो यजुर्वेद अध्याय १० मन्त्र १०-१४ कुछ सामगानों के अलग २ नाम भी हैं। जैसे वामदेव्य गान, यज्ञायज्ञिय गान—देखो यजुर्वेद १२—४

गाने की शैली का नाम साम है। जिस ऋग्वेद की ऋचा पर वह सामगान किया जाता है वह ऋचा उस साम की 'योनि' कहलाती है। इस लिए यह नहीं समझना चाहिए कि ऋग्वेद अलग है और साम अलग। जो लोग केवल ऋग्वेद को पढ़ते थे गाते नहीं थे वे ऋग्वेदीय कहलाते थे। जो गाना जानते थे वे सामवेदीय कहलाते थे। इसी प्रकार ऋग्वेद के ही मन्त्रोंके आधार पर वायु ऋषि ने यज्ञ, क्रिया कौशल तथा व्यवहार के अन्य कृत्यों का प्रचार किया उसका नाम यजुर्वेद हुआ। अंगिरा ऋषि ने ऋग्वेद के आधारमूल कुछ मन्त्रों का विस्तार से वर्णन किया। उसमें चिकित्सा, कृषि, राष्ट्र, विवाह आदि कर्मों का विस्तार से वर्णन किया गया है। यह अथर्ववेद हो गया। ये चारों ऋषि समकालीन थे अर्थात् सृष्टि के आरम्भ में हुए। इसीलिए चारों वेदों में चारों का नाम आता है। देखो—

ऋक्सामाभ्यामभिहितौ गावौ।
ऋ. १०-८५-११

ऋक् और सामके समान दो गायें।

विश्वेदेवा अनु तत् ते यजुर्गुः।
ऋ. १० १२-३

सब देव पीछे से तेरे यजु का गान करते हैं।

अग्निर्जातो अथर्वणा विदद्विश्वानि काव्या। ऋ. १०-२१-५

अथर्वा से उत्पन्न हुई विद्या ने समस्त काव्योंका ज्ञान प्राप्त किया।

यहां ऋग्वेदमें साम, यजु और अथर्व का वर्णन है अब यजुर्वेद देखिये—

ऋक्सामयोः शिल्पे स्थः। यजु: ४-९
ऋक् और साम दो शिल्प हैं।

अथर्वभ्यो अवतोकान्—यजु:३०-१५

अब अथर्ववेद देखिए—

यत्र ऋषयः प्रथमजाः ऋचः साम यजुर्मही।
एकर्षिर्यस्मिन्नार्पितः स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः। अथर्व १०-७-१४

अर्थात् सब से पहले सृष्टि में उत्पन्न हुए ऋषियों ने ऋक्, यजुः, साम का ज्ञान प्राप्त किया।

सामवेद में तो प्रायः ऋग्वेद की ही ऋचाएं हैं।

इस प्रकार ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्वेद समकालीन हैं और एक ही वेद की चार शाखाएं हैं। इन को उपचार की भाषा में वेदत्रयी अथवा वेद चतुष्टय कहा जाता है। यही कारण है कि भिन्न-भिन्न प्रकरणों में वही मन्त्र बार-बार चारों वेदों में मिलते हैं। इस को पुनरुक्ति दोष न कह कर अनुवाद कहते हैं।

✤ संसार की बहुत ही अच्छी कला वह है जो मानव के सहयोग के लिए बरती जावे।

Scholars' opinions on the Vedas

(Shri. L. Devi Chand ji M. A. President

दयानन्द साल्वेशन मिशन होशियारपुर)

✻✻✻✻✻✻✻✻✻

The persian Scholar Dachangi writes in his book 'philosophy of zoroast rianism and comparative study of Religions' 'The Veda is a book of knowledge and Wisdom Comprising the book of nature, the book of religion, the book of prayers, the book of Morals and soon. The word Veda means wit, wisdom, knowledge and truly the Veda is condensed wit, wisdom and knowledge.'

'Readers of the Vedas, who do not know this wonderful characteristic feature of the Veda in determining the physical as well as the spiritual by means of the self same words, are apt to be misled by the false idea that the Veda books upon fire, air, the da wn, the sun and the other agents forces, phynomena or objects of nature as Deveine beings, to whom the Vedic Rishis, prayed for strength, health, wealth, long life, brave sons, rich possession and so on. But Vedas teach nothing but monotheism of purest kind, the belief that this universe manifests the love, might, wisdom and glory of God, who eternally evolves and dissolves alternately innumerable systems of worlds, for the benefit, discipline and well-being of jeevatmas, according to the eternal laws of nature (called Rit in the Vedas) and also according to the laws of karma.'

Jain Acharya kumudendu writes thus in his beok 'Bhoovaley' clib. 'The Rig Veda alone is eternal and the Word of God in the beginning. Various languages have been derived from it. The message of God is one and the same for the speakers of all languages.

Dr. RUSSEL WALLACE

Dr. Alfred Russel wallace writes in 'Social Environment and Moral progress.'

'In the earliest records which have come down to us from the past, we find ample indications that accepted standard of morality and the conduct resulting from these were in no degree inferior to these which prevail today.

The wonderful collection of hymns known as the Vedas is a vast system of religious teachings pure and lofty...

Re. MORRIS PHILLIP

Rev. Morris phillip writes in his book 'The Teachings of the Vedas.'

'After the latest researches into the history and chronology of book of old Testament we may safely call the Rig Veda as the oldest book, not only of the Aryan humanity, but of the whole world...'

We are Justified' therefore in cancluding that the higher and purer conceptions of the Vedic Aryans were the resutts of a primitive Divine Revelation.

PROFESSOR HEEREN

In his 'Historical Researches' writes. They (the Vedas) are without doubt the oldest works composed in sanskrit. The Vedas stand alone in their splendour, standing as beacon of Devine Light for the onword march of humanity,

FRENCH SCHOLAR

Mons Deos Delbos Says—

The Rig Veda is the most sublime conception of the great high ways of humanity,

Mr. JACCOLIAT

'Astonishing fact. The Hindu Revelation (Veda) is of all revelations the only one whose ideas are in perfact harmony with Modern Science, as it proclaims the slow and gradurl formation of the world.

(Mrs. WHEELER

The American lady Mrs. Wheeler Willax writes—

'We have all heard and read about the ancient religion of India. It is the land of the great Vedas, the most remarkable works containing not only religious ideas for a perfect life, but also facts which all the science has since proved true. Electricity, Radium, Airships, all seem to be known to the seers who found the Vedas.

(From Sama Veda Bhashya)

पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी को आर्यसमाज वज़ीरबाग श्रीनगर की ओर से

सभा वेद प्रचार में २०००) रु. भेंट

आज कल पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज श्रीनगर काश्मीर में जनता को अपने प्रवचनों का अमृतपान करा रहे हैं। सभा के लिए उन को बड़ा ध्यान रहता है। वहां आर्य समाज वजीर बाग श्रीनगर के मान्य सज्जनों को सभा वेद प्रचार में दो हजार रुपये तत्काल भिजवाने का संकेत किया। समाजों व संस्थाओं के पास धन जमा पड़ा हो किन्तु वेद प्रचार भूखा हो तो जमा का लाभ क्या? भूखे को भोजन दो—यह आप का आज का जनता के नाम दिव्य सन्देश है। आप की सेवा में समाज के अधिकारियों ने २०००) रु. की थैली सभा वेद प्रचार में सादर भेंट कर दी आप ने सभा को तत्काल भिजवा दी। तपोमूर्ति महात्मा जी का सभा को सदैव आर्शीवाद सहयोग प्राप्त है। वजीरबाग समाज का इस सात्विक कर्तव्य पालन पर धन्यवाद।

माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः

कुमारी सन्तोष आर्य एम० ए० एम० ओ० एल० चंडीगढ़

ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद—इन चारों वेदों में से अथर्ववेद अन्यतम तथा विशिष्ट है। ऋग्वेद आदि तीनों वेद तो आमुष्मिक, (पारलौकिक) तथा आध्यात्मिक फल के देने वाले हैं परन्तु अथर्ववेद ऐहिक फल का देने वाला है। अथर्ववेद का महत्व इस बात में है कि यह लोक-प्रिय विश्वासों, तत्कालीन प्रचलित प्रथाओं के ज्ञान प्राप्त करने का मूल्यवान स्रोत है। जाति का विज्ञान धर्म का इतिहास आदि के अध्ययन के लिये यह वेद अत्यधिक महत्वपूर्ण है। जीवन को सुखमय, आशापूर्ण तथा दुःख रहित बनाने के लिये जिन २ साधनों तथा उपायों की आवश्यकता होती है, उनकी सिद्धि के लिये नाना प्रकार के विधि विधानों, यज्ञ याग तथा अनुष्ठानों का विधान भी इस वेद में किया गया है।

सम्पूर्ण वेद विभिन्न प्रकार के सूक्तों में विभक्त हैं। पौष्टिकानि सुक्तानि, स्त्रीकर्माणी, भैषज्यानि, साम्मनस्यानि राजकर्माणि सूक्तानि आदि का विवेचन मुख्य रूप से मिलता है। परन्तु अथर्ववेद में 'भूमिसुक्त' एक भूयसी विशिष्टता से संवलित (युक्त) है। यूं तो अधिकांशतः इन समस्त सूक्तों में मिलने वाली भाषा शुष्क और नीरस सी है परन्तु भूमिसूक्त भाषा शैली तथा भाव की दृष्टि से नितान्त उत्तम, उदात्त, सरस तथा मधुर है। इस सूक्त में ६३ मन्त्रों में मातृरूपिणी भूमि की समग्र पार्थिव पदार्थों की जननी तथा पालन पोषण करने वाली के रूप में महिमा उद्घोषित की गयी है तथा इस में प्रजा को समस्त बुराईयों, अभद्र विचारों क्लेशों तथा विनाशकारी अनर्थों से बचाने तथा सुख-सम्पत्ति की सुमधुर वृष्टि के लिये प्रार्थना है।

इस सूक्त में मातृभूमि की बड़ी ही मनोहारी तथा रमणीय कल्पना की गई है। मातृभूमि का यह रुचिर वर्णन देशभक्ति की उत्तेजनात्मक प्रेरणा का मधुर विलास है। मातृभूमि वात्सल्य की साक्षात् प्रतिमा, ममतामयी मां के सदृश, एक सजीव रूप में हमारे सामने प्रस्तुत होती है।

'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः (१२।१।१२) सब की उत्पादक होने के कारण भूमि मेरी माता है और मैं उसी मातृभूमि का पुत्र हूं। यह वस्तुतः बड़ा ही उच्चतम भावना का स्नेहपूर्ण तथा प्रेरक मन्त्र है। इस भूमि क निर्माण तथा संरक्षण इत्यादि में देवताओं का सहयोग सदा जागरूक रहा है।

याम‍श्विनावमिमातां विष्णुर्यस्यां विचक्रमे। इन्द्रो यां चक्र आत्मनेऽनमित्रां शचीपतिः। सा नो भूमिर्विसृजतां माता पुत्राय मे पयः॥ १२।१।१०

जिसे अश्विनी देवताओं ने विष्णु ने अपने तीन पाद प्रक्षेपों को रखा, अथवा व्यापक परमात्मा ने जिस में नाना प्रकार की सृष्टि उत्पन्न की, इन्द्र ने जिसे शत्रुओं से रहित बनाया वह भूमि मुझे उसी प्रकार दूध दे जिस प्रकार माता अपने पुत्र को स्वतः अनुराग से दूध देती है। 'सा नो भूमिर्विसृजतां माता पुत्राय मे पयः' केवल मात्र इसी वाक्य में ही ममता का कितना गहरा समावेश है।

इस पृथिवी की आधारभूत वस्तुयें भौतिक न होकर आध्यात्मिक हैं।

'सत्यं बृहदृतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः पृथिवीं धारयन्ति। सा नो भूतस्य भव्यस्य पत्न्युरुं लोकं पृथिवी नः कृणोतु। १२।१।१

महान् सत्य, उग्र सत्यव्यवस्था, दीक्षा, तपस्या, ब्रह्म के तत्व से परिपूर्ण वेद का ज्ञान और यज्ञ—ये समस्त पृथिवी को धारण करते हैं। वह पृथिवी हमारे अतीत वर्तमान और भविष्यत के सम्पूर्ण कार्यों की स्वामिनी है। वह पृथिवी हमारे लिये विशाल स्थान प्रदान करे।

यह पृथिवी माता पशुओं, पक्षियों, मनुष्यों इत्यादि का आश्रय है, निवासस्थान है। समस्त जीव-जन्तुओं तथा प्राणियों का आधार है। शांति, साहस तथा अदम्य उत्साह के समग्र कार्य यहीं सम्पादित किये जाते हैं।

यस्यां पूर्वे पूर्वजना विचक्रिरे यस्यां देवा असुरानभ्यवर्तयन्। गवामश्वानां वयसश्च विष्ठा भगं वर्चः पृथिवी नो दधातु॥१२।१।५

जिस भूमि पर पूर्व-काल के श्रेष्ठ पुरुष नाना प्रकार के कार्य करते थे, जिस पर देवता असुरों का संहार तथा दमन करते हैं और जो पृथिवी गौओं, घोड़ों इत्यादि पशु-पक्षियों का विशेष रूप से निवास स्थान है वह भूमि हमारे लिये सौभाग्य तथा तेज प्रदान करे।

इस पृथिवी के गर्भ में बहुत कुछ छिपा है। हर प्रकार की धन-सम्पत्ति, ऐश्वर्य हम यहां से लेने में समर्थ हैं। जैसा कि एक मन्त्र वर्णित है—

विश्वम्भरा वसुधानी प्रतिष्ठा हिरण्यवक्षा जगती निवेशनी। वैश्वानरं बिभ्रती भूमिरग्निमिन्द्रऋषभा द्रविणे नो दधातु।१२।१।६

समस्त विश्व की भर्त्री तथा पोषिका यह पृथिवी सब ऐश्वर्यों की निधि है। सब की प्रतिष्ठा, सुवर्ण आदि धातुओं को अपनी कोख में धारण करने वाली समस्त संसार को अपने ऊपर बसाती है। वह सब की उत्पादिका भूमि अग्नि को धारण करती हुई हमें धनैश्वर्य में स्थापित करे।

इसी प्रकार पृथिवी के ऊपर प्रजा के नाचने कूदने इत्यादि का बड़ा स्वभाविक वर्णन उपलब्ध होता है। वस्तुतः 'भूमि-सूक्त' में पृथिवी का सर्वांगीण रूप प्रस्तुत किया गया है। पृथिवी के ऊपर स्थित नदियां, पर्वत, वृक्ष, लताय आदि सदा लाभदायक होवें। मनोहारी षड्-ऋतुओं का आगमन कल्याणकारी हो। पूज्यनीया, वन्दनीया, वरदा भूमि माता से प्रार्थना की गई है कि प्रजा को हानि पहुंचाने वाले पदार्थ हम से दूर भाग जायें तथा हमें कल्याण के दर्शन हों।

तथ्य तो यह है कि भूमिसूक्त, भाषा शैली तथा भावों की दृष्टि से एक उत्कृष्ट सूक्त है और साथ ही साथ यह अथर्ववेद कालीन राष्ट्रीयता, महानता तथा वास्तविक तत्वों का प्रतीक है। आज भी यह जन-मानस में उत्साह, उल्लास तथा उच्च भावनाओं का जन्मदाता है।

स्तुता मया वरदा वेदमाता—मन्त्रद्रष्टा ऋषि के मुखारविन्द से निकले यह उदगार कितने पवित्र और सच्चे हैं। जिसने वर देने वाली वेद-माता का स्तवन कर लिया उसने मानो यश, कीर्ति, सन्तान-सुख, ऐश्वर्य-सभी कुछ पा लिया। समस्त सिद्धियों का मूल वेद का स्वाध्याय, चिन्तन, मनन से निदिध्यासन तथा प्रवचन है। यह निःसंदेह एक अटूट सत्य है।

★ जो व्यक्ति गुरु और माता पिता की सेवा नहीं करता वह वह अत्यन्त कृतघ्न है।

★ प्राणीमात्र की सेवा करने का जो अवसर प्राप्त हो उसे हाथ से न जाने दो।

★ जनता को जो वचन दो उसे पूरा करो अन्यथा कहीं के न रहोगे।

वेदोऽखिलो मूल स्मृति शीले च तद्विदाम।
आचारश्चैव साधूनामात्मनस्तुष्टिरेव च॥

मनुस्मृति अ० २। श्लोक ६॥

समग्र वेद धर्म का मूल स्रोत है। यह भगवान् मनु का वचन है। मनु महाराज ने ही कहा है कि 'धर्म—जिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः' अर्थात् धर्म के जिज्ञासुओं के लिए बड़ा प्रमाण श्रुति (वेद) है। आर्यसमाज का धर्म 'वैदिक' है। आर्य कवि के निम्न लिखित पद्य कितने सुन्दर हैं :—

"आर्य हमारा नाम है,
'सत्य' हमारा कर्म।
'ओ३म्' हमारा देव है,
'वेद' हमारा धर्म॥

वेद विहित धर्म का पालन करने वाला वैदिक धर्मी है। वेद के ग्रहण से 'सर्वे पदा हस्ति पदे निमग्नाः' न्यायानुसार उन सब कर्मों का स्वतः ग्रहण हो जाता है जिनके करने का उसमें विधान है, जो कर्म वेदानुकूल हैं और जो संस्कार वैदिक हैं। इसी लिए मनु जी ने 'नास्तिको वेद निन्दकः' कह कर 'नास्तिक' का लक्षण वेद की निंदा करने वाला ही किया है। ईश्वर को न मानने वाला नहीं। वेद का आदेश ही धर्म है जिससे अभ्युदय-लोक और निःश्रेयस—परलोक की सिद्धि होती है। जो अर्थ और परमार्थ की प्राप्ति कराता है वह वैदिक धर्म है।

वैदिक धर्म के प्रचार तथा विस्तार के लिए ही महर्षि दयानन्द ने आर्य सेवक-सेना-संघ संगठित किया था। उस आर्य सेवक-सेना के सैनिकों को दस नियमों की दीक्षा दी थी ताकि उन पर चलते हुए भ्रम, भूल, भय और भेद-भाव उनके मार्ग में बाधक न हों, सकल संशय निवृत्त हो जाएं और वे मानवता की दिशा में पग बढ़ाएं। आर्यसमाज के दस नियमों में

आर्यसमाजी का परम धर्म

[पं० भक्तराम जी (अफ्रीका वाले) जालन्धर]

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

पहिले दो नियम और तीसरे नियम का एक बड़ा भाग विश्वास और मन्तव्य के द्योतक हैं और शेष सारे नियम उद्देश्य तथा कर्त्तव्य के प्रकाशक। तीसरा नियम तो आर्यसमाज की स्थापना का मूलाधार है। वह है—'वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।' इस में वेद के आंदोलन के लिए ही हमें आदेश है।

कई कर्मगौण धर्म होते हैं और वे धर्म का एक अङ्ग कहलाते हैं परन्तु धर्म का प्रधान अङ्ग एक ही हुआ करता है। इस दृष्टि से दीक्षित आर्यों का मुख्य धर्म वेद का पढ़ना—पढ़ाना और सुनना-सुनाना' ही है। धर्म के दूसरे अङ्ग आर्यों—अनार्यों में समान हैं परन्तु आर्यों का परम धर्म केवल मात्र 'वेद' है। इस परम धर्म का पालन न करने वाला 'आर्य समाजी' नाम का भी अधिकारी नहीं है। 'वेद' ही हम आर्य समाजियों को अन्य धर्मावलम्बियों से पृथक् करता है। आर्य समाज की विशेषता और आवश्यकता को यही सिद्ध करता है। आर्यसमाज की जीवन जड़ और इसकी स्थापना के महत्व का मूल यही परम धर्म 'वेद' है।

वेद प्रचारार्थ, आर्यसमाज, नगर-नगर और ग्राम २ में स्थापित किये गए और वेद के विस्तार के लिए ही आर्य प्रतिनिधि सभाओं की स्थापना हुई थी और आज अनेक स्थानों पर आर्य केन्द्रीय सभाओं और वेद प्रचार मण्डलों का भी निर्माण हो रहा है इसी उद्देश्य से। अनाथालय, विधवाश्रम कन्याविद्यालय, गुरुकुल, स्कूल और कालेज वेदप्रचार के ही साधन हैं। ८६ वर्ष बीत जानेपर भी 'वेद-वेद'की दुहाई के अनुसार वेदप्रचार का कार्य सन्तोष प्रद नहीं कहा जा सकता। क्या व्याख्यान, भजनों और समाचारपत्रों में वेद का शंखनाद करके ही हम आर्यों के कर्त्तव्य की इति श्री हो जायेगी? पूज्य आर्य नेता बतायें कि :—

(१) क्या आर्यसमाज की संस्थाएं अपने मार्ग से च्युत नहीं हो रही हैं?

(२) आर्यसमाज के शिक्षणालय कहां तक वेदप्रचार में सहायक हैं? क्या वे महर्षि दयानन्द का उद्देश्य पूरा कर रहे हैं?

(३) गुरुकुल नवीन पद्धति का आश्रय क्यों ले रहे हैं?

(४) आर्य समाज पाश्चात्य शिक्षा पर संस्कृत शिक्षा के उद्धार की अपेक्षा क्यों अधिक व्यय कर रहा है?

(५) शिक्षा संस्थाओं के भवनों पर करोड़ों रुपये खर्च हुए और हो रहे हैं। वेदानुसन्धान पर कितना व्यय किया जा रहा है? अनुसन्धान के लिए लाखों रुपये के ग्रन्थ चाहिएं। कहां है यह व्यवस्था?

(६) क्या आप को ज्ञात नहीं कि कतिपय प्रतिनिधि सभाओं की वेदप्रचार निधियों में एक भी पैसा नहीं और वे दूसरी निधियों के धन से वेदप्रचार की गाड़ी चला रही हैं? सम्पत्ति बेची जा रही है।

(७) क्या आप जानते हैं कि आर्यसमाज के अनेक अधिकारी एक२ वेद को ग्रन्थ साहिब अथवा भागवत पुराण के बराबर भारी समझते हैं? उन्होंने वेद के दर्शन तक नहीं किये। उसका स्वाध्याय तो एक ओर रहा।

(८) क्या आर्यसमाज के अधिकारियों के घरों में वेद पुस्तक हैं? होने तो चाहिएं प्रत्येक आर्य परिवार में। जब घर में सजावट की ओर वस्तुओं पर अपव्यय किया जाता है तो अपनी धर्म पुस्तक पर मितव्यय में अनुदारता क्यों? कभी उसे पढ़ने वाला भी जन्मेगा।

(९) महर्षि दयानन्द का वेद भाष्य वहां ही खड़ा है जहां वह छोड़ गये थे। स्वामी जी की शैली के अनुसार शेष वेदों के भाष्य के लिए क्या प्रयत्न हुआ है? स्वतन्त्र वेद भाष्य तो हुए हैं पर प्रामाणिक नहीं।

(१०) क्या वेद प्रचार की वेदी पर राजनीतिक व्याख्याताओं और अखबारी लैक्चरारों की संख्या दिनोंदिन बढ़ नहीं रही? प्रातःकाल समाचार पत्र पढ़ लेना ही वेद का स्वाध्याय समझा नहीं जा रहा!

है तो छोटा मुंह और बड़ी बात किन्तु यह कहना ही पड़ता है कि आज आर्य समाज की वेदी चूं-चूं का मुरब्बा बनी हुई है। कोई कुछ भी बोल जाये पर व्याख्यान कराये बिना उत्सव वा सत्सङ्ग की कार्यवाही अपूर्ण रहती है। क्या आर्यसमाजी वक्ता के अभाव में स्वामी जी के जीवन चरित्र या अन्य धर्म ग्रन्थ का पाठ पर्याप्त नहीं? व्याख्यान तैयार करना सुगम नहीं। पूज्य पं० शांति प्रकाश जी शास्त्रार्थ महारथी के शब्दों में साधारण व्याख्यान की त्यारी के लिए भी आठ दस मास चाहिएं। यहां तो संस्कृत से सर्वथा अनभिज्ञ, आर्य सिद्धांतों से बिल्कुल कोरे और वेदपाठी का ढांग करने वाले पर बोलने के शौकीन कों दो चार मिनट पहिले प्रार्थना कर समय पूरा करने के लिए त्यार कर लिया जाता है और वह भी अपना चाव

(शेष पृष्ठ १० पर)

वेदों का यथार्थ भाष्य

(पृष्ठ १४ का शेष)

दयानन्द की शैली से वशिष्ठ, जमदग्नि, अत्रि आदि शब्द ऐतिहासिक अर्थ न बताकर आध्यात्मिक अर्थ बताते हैं और इस प्रकार से आपने नित्य प्राकृतिक घटनायें मानकर वेदों को सर्वकालिक और सर्वजनीन सिद्ध किया। निरुक्तकार भी वेदों का ऐतिहासिक अर्थ नहीं मानता।

वैज्ञानिक अविष्कार

स्वामी दयानन्द का यह दृढ़ विचार था कि वेद में विज्ञान है। और उन्होंने अपने भाष्य में यथा स्थान इस का कुछ परिचय भी दिया है। परन्तु दुःख है कि वे अधिक दिन जीवित न रहे जिस के कारण प्रयोगात्मक विज्ञान का आविष्कार न हो सका, परन्तु उन के बाद के भाष्यकारों ने उनके इस कार्य को पूर्ण किया।

वैदिक देवता

आपके भाष्य को पढ़ने के पश्चात् वैदिक देवताओं के वास्तविक स्वरूप का पता चलता है। सायण आदि के अनुसार अग्नि, वायु, आदित्य देवता चेतन हैं जो अपने अपने मण्डल के अधिष्ठाता हैं। वेदान्ती भी इसी विचार की पुष्टि करते हैं, परन्तु स्वामी जी ने यौगिकरीति से इन के अर्थ उनके गुण समूह की दृष्टि से किये हैं। अथवा वे परमात्मा के वाची हैं। ऋषि के मत में तेतीस देवताओं की स्तुति वेद में नहीं है।

विनियोग मान्य नहीं

पूर्वकाल के भाष्यकारों ने वेद मन्त्रों के उचित और अनुचित विनियोग माने और उन्हें ही ध्यान में रखते हुए भाष्य किये। फलतः जो शब्द वेद मन्त्रों में हैं भी नहीं उन्हें खींचातानी करके डाला गया। जिस से अर्थ का अनर्थ हुआ। परन्तु ऋषि को मंत्रों का नियोग अन्य भाष्यकारों की भांति मान्य नहीं जिस से मन्त्रों का वास्तविक अर्थ प्रकाश में आया।

आधुनिक वेद भाष्यकार

आर्यसमाज ने ऋषि भाष्य का बहुत समान किया। वास्तव में यह सम्माननीय है ही। उसे पढ़ने के बाद वेदों पर श्रद्धा उत्पन्न हो जाती है इसलिए आर्यसमाज ने इनका बहुत प्रचार किया, जिससे वेदों का प्रचलन अधिक हुआ। आर्यसमाज ने ऋषि के पश्चात् अनेक वेद भाष्यकार भी दिए। कुछ अन्य मतावलम्बी अष्टकारों ने इनसे प्रेरणा प्राप्त की और भाष्य लिखे। इनमें योगी अरविन्द घोष, उस आनन्दकुमार स्वामी क्षेमकरणदास, तुलसीराम, जयदेव विद्यालंकार, दामोदर सातवलेकर आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। आर्यसमाज के कारण ही वेदों का प्रचलन भारत के घर-घर में हो गया है।

आर्यसमाजी का परम धर्म

(पृष्ठ ६ का शेष)

पूरा करने के लिए उपदेष्टा बनना स्वीकार कर लेता है।

कालेज व स्कूल कमेटियों और सभाओं में पक्षपात और अध्याय के कारण आर्य प्राध्यापकों और विद्वानों की भरती नहीं हो रही ! अस्तु ! वैदिक सिद्धांत सोना है पर उनके अनुसार हमारा आचरण सुहागे का काम देगा। आर्यों को कलह, विवाद, वितंडा अवज्ञा, लड़ाई झगड़ा और खींच-तान शोभा नहीं देती। सभाओं में तू तू, मैं मैं न होनी चाहिए। नोक-झोंक का नाम न हो। फूट-पिशाचिनी को त्यागना चाहिए। मनमुटाव होने न पाये। ये सब दोष वेदप्रचारक संस्था आर्यसमाज की उन्नति में बड़े बाधक हैं।

आज 'श्रावणी उपाकर्म' के पावनपर्व पर और वेदसप्ताह के आरम्भ में हम आर्य समाजियों को अपने घरों में चारों वेद (मूल) रखने और वेद का स्वाध्याय करने का प्रण करना चाहिए। ताकि हम-वेद से सत्य प्रकाश लेकर उसे संसार में फैलाने योग्य हो सकें।

स्तुति

वेद - विहित लोक - कर्म,
परम कम धर्म, मर्म
वेद ब्रह्म विज्ञ करन,
वेद मुक्ति जन्म-मरण।
विसद - सत्य-सिन्धु-सार,
आत्म ज्ञान मूलाधार,
वेद निहित दिव्य ज्योति,
है अपार ईश - पार !
वेद प्राण, श्वास, गात,
वेद ही अजात - जात,
वेद शास्त्र त्रस्त का त्र,
वेद मनुज - पानी - पात !
अङ्ग की उमङ्ग वेद,
सोम की तरङ्ग वेद,
पूर्ति व्यष्टि की,
अनङ्ग ज्ञान - हीन - वेद !

अशोक हिन्दुस्तानी

अमूल्य वचन

★ अत्याचार करना, गिरावट कलह मोल लेना, दूसरों के धन की इच्छा करना और अपने सम्बन्धियों से ईर्षा करना ये दुष्ट लोगों के लक्षण हैं। इन से बच कर रहो।

वेद का स्वाध्याय व्रत

ले०—श्री दयानन्द आर्य एम. ए. (Final)
साधु आश्रम होशियारपुर

वेदों का स्वाध्याय अमृत है, जीवन है। संसार के मत-मतान्तरों का अस्तित्व इसी कारण है कि वे वेद की आंशिक सत्यता को लेकर चलते हैं, यदि पूरी सत्यता अपना लें तो वे वेदोक्त धर्म से लाभ उठा सकते हैं। देवता दयानन्द ने लोगों को जगाकर वेदों का वेदत्व बताया। ऋग्वेद भाष्यभूमिका में वेद शब्द की उत्पत्ति करते लिखते हैं—

विदन्ति जानन्ति विद्यन्ते भवन्ति विन्दन्ति अथवा विन्दन्ते लभन्ते, विन्दन्ति विचारयन्ति, सर्वे मनुष्याः सर्वाः सत्यविद्या यैर्येषु वा तथा विद्वांसश्च भवन्ति ते वेदाः।

अर्थात वेद तो सत्य विद्यायें हैं जो ईश्वर प्रदत्त हैं।

स्वयं ग्रन्थ-साहिब में लिखा है असंख्य ग्रन्थ मुख वेद पाठ, दावा चले अन्धेरा जाए।

वेद-ज्ञान मतिपापां मनुस्मृति ने तो संसार को एक प्रमाण पत्र दे दिया कि 'नास्तिको वेदनिन्दकः।

अर्थात वेद की निन्दा करने वाला नास्तिक है। आज जो जैन-मतावलम्बी स्वयं को आस्तिक सिद्ध कर रहे हैं, उन्हें वेद-मत को धारण करना चाहिए, अन्यथा वे नास्तिक ही रहेंगे। ईश्वर के सच्चे स्वरूप का भी बिना वेद पढ़े नहीं जाना जा सकता। जो व्यक्ति प्रतिदिन वेद पढ़ता है, उसके अनुसार कर्म करता है वह जीवन के अतुल वैभव का स्वामी बन जाता है। जब से भारतियों ने मनुष्य कृत ग्रंथों का पाठ शुरू किया, तब से नानाविध रोगों ने उन्हें दबाया। वेद भोजनों का भोजन, तप का तप, ज्ञान का ज्ञान, पांडित्य की पराकाष्ठा, जीवन की सीमा आत्म-ज्ञान का उत्कर्ष, सुख का, तेज आनन्द को स्रोत है। वेद हैं तो आर्यसमाज हैं, वेद नहीं तो आर्य-समाज नहीं आर्यों का जीवन परखना हो तो पीतल या लोहे का निकष काम नहीं देगा, देखा, उसके लिए वेद का स्वाध्याय है। आर्य होकर भी जो वेद नहीं पढ़ता वह आर्य नहीं धोखा देता है। वेद की रक्षा मानवता की रक्षा है। केवल भोगवाद में सुख कहां? जीवन का क्या लाभ जो खाता है, पीता भी है परन्तु इस संसारी जीवन में जो दस मिंट बैठकर वेदाध्ययन नहीं करता। उस ऐश्वर्य से दरिद्र कुटिया भली है जहां वेदाचारी लोग रहते हैं। आर्यो! यह शिथिलता बनावटी क्यों?

'कृतं मे दक्षिणे हस्ते जयो मे
सव्य आहितः'

'अहमिन्द्रो न पराजिग्ये' का पाठ भूल गए? भूलना तो हुआ हो, जब वेद छोड़ दिया। वेदकी महिमा गाते हैं—

'वेद प्रणिहितो धर्मो ह्यधर्मस्त-
द्विपर्ययः।

(श्रीमद् भागवत)

ते मोह मृत्यवः सर्वे तथा
वेद विनिन्दकाः

(मार्कण्डेय पुराण १०।५८)

वेदमनच्याचार्योऽन्ते वासिन
मनुशास्ति।

(तैत्तिरीयोपनिषद् ७।११)

'Veda is the fountain head of knowledge.'

(पन्यभूराव गौड़)

आइए, वेद-सप्ताह नित्य आवे. प्रत्येक दिन हमारे लिए वेद सप्ताह हो। तभी हम आर्य होंगे नहीं तो वैसे पथ भ्रष्ट होंगे जिनके पास गति है पर चल नहीं सकते।

आर्य वीर

(ले०—राममूर्ति कालिया एम०ए०, ९०/७८,
मालवीनगर नई दिल्ली)

(१)

भारत की सांस्कृतिक ध्वजा फहरावे जग में,
था जगत गुरु जो, पुनः आज नेतृत्व करेगा,
नस-नस में ऋषियों का जिसमें रक्त भरा है
शान्ति हेतु वह आर्य वीर कर तृत्व करेगा।

(२)

संतप्त हृदयों का चीत्कार वह सुन ही रहा है,
दलितों दीनों का दुख तो अब उसका दुख है,
पाठ करेगा, दुहरायेगा, जग से कहेगा,
ऋषियों की वाणी में प्यारो सच्चा सुख है।

(३)

चमक दमक उस भौतिकता की टिक न सकेगी,
ऊब चुके हैं, भटक चुके उस जग के प्राणी,
दया करो, हे आर्य वीर, तुम उन दीनों पर,
पहुंचा दो उन कानों तक ऋषिओं की वाणी।

(४)

विह्वल मानवता पुत्री का मन बहलावो,
स्नेह सने शब्दों से उसको अब दुलरावो,
हे वरद वीर, हे आर्य वीर, यह कर्म कमावो,
ऋषिओं की वाणी को घर घर तक पहुंचावो।

वेद की जाग्रतिसे क्या होगा

(पृष्ठ ५ का शेष)

वेद का उपदेश हर एक बात में मिलता है। यहां हम ने युद्ध क्षेत्र का ही विचार किया है। परन्तु राज्य विषयक जितने प्रश्न हैं उन सब के उत्तर इसी प्रकार मन्त्रों से प्राप्त होते हैं। वेद का अध्ययन इसी दृष्टि से करना चाहिए। वेद का पठन करने से ही केवल यह ज्ञान नहीं हो सकता। वेद का अर्थ वेद मन्त्रों के पदों के अर्थ की संगति देखने से ठीक तरह मालुम हो सकता है। वेद विद्या की ऐसी जाग्रति भारत में हो और वेद के ज्ञान से जो उन्नति सम्भावित है वह भारत की उन्नति हो यही हम चाहते हैं।

धन्यवाद

१००० रु० का पवित्र दान

श्री चिमनलाल जी अरोड़ा प्रिन्सीपल डी. ए. वी. कालिज अमृतसर के हृदय में सभा के लिए विशेष प्रेम है। सभा की आर्थिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए उसे आप ने १०००/- की राशि भेंट की है जिस के लिए सभा उनकी अत्यन्त कृतज्ञ है।

ज्ञानचन्द भाटिया
मन्त्री सभा

★ चतुर मनुष्य विश्वास के पात्र होते हैं।

★ जो सब से प्रेम करे उसे देवता बनने में देर नहीं लगती।

आर्यसमाज चौक फिरोज़पुर का समारोह

वेदप्रचार सभा में ५५१) रु० की भेंट

★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★

आर्यसमाज चौक कालिज विभाग फिरोजपुर शहर आर्य प्रादेशक सभा पंजाब से सम्बन्धित बड़ी प्रसिद्ध समाजों में गिनी जाती है। इसका बड़ा ही सुन्दर एवं विशाल भवन दर्शनीय है। इस के निर्माता स्वर्गीय ला० काशीराम जी ने १९६३ में ही इसका एक ट्रस्ट भी बना दिया था। जिस के मैनेजर स्वर्गीय ला० अनन्तराम जी के सुपुत्र श्री ला० यशवन्तराय जी हैं। इस समाजके प्रधान आजकल महात्मा हंसराज जी के अनन्य भक्त, समाज के अतीव श्रद्धालु श्री ला० मेहरचन्द जी अग्रवाल एम. ए. रिटायर्ड हैडमास्टर तथा मन्त्री अत्यन्त सौम्यस्वभाव पं० ब्रह्मदत्त जी शर्मा हैं। समाजके सारे सज्जन बड़े प्रेमी तथा कर्मनिष्ठ हैं। यहां सुन्दर यज्ञशाला में दैनिक यज्ञ एवं सत्संग लगता है। आपने हर भगवान् मैमोरियल स्कूल के मान्य प्रिंसिपल श्री कालड़ा जी तथा सारे स्टाफ का भी सहयोग है तथा स्त्री आयसमाज की माताओं बहिनों का भी पूरा-पूरा उत्साह मिलता है प्रधाना मान्या माता सीतादेवी जी का उत्साह तथा दोनों स्त्री समाजों को प्रेम भी प्रशंसनीय है। सभा के प्रचार कार्यक्रम पर मैं इस समाज में ता० २६ जुलाई को वहां पहुंचा। मेरे साथ सभा के प्रसिद्ध भजनोपदेशक श्री ठाकुर दुर्गासिंह जी आय तूफान साथ थे। प्रातः काल तथा रात्र के समय एव दोनों स्त्री समाजों में भी निरन्तर कथा प्रचार होता था। फिरोजपुर शिक्षा का भारी केन्द्र है। प्रातःकाल वेद की सूक्तियों के प्रवचन बाद श्री ठाकुर जी के भजन होते थे तथा रात को कथा व ओजस्वी भजन भी होते थे। संगीताचार्य प्रो० देशबंधु जी के मस्त करने वाले संगीत भी होते थे। जनता का समाज के प्रति प्रेम देख कर मन प्रसन्न हुआ। समाज के मान्य सज्जनों का प्रभाव तथा उत्साह कमाल था। स्त्री समाजों तथा राणी तालाब का प्रेम भी उत्तम था। बोलने का आनन्द आता था। जनता समाज की आवाज बड़ी श्रद्धा से सुनती है। ठा० दुर्गासिंह जी के ओजस्वी भजनों में कड़क थी। देवियों का उत्साह भी शानदार था। माननीय प्रधान श्री मेहरचन्द जी अग्रवाल तथा मन्त्री श्री शर्मा जी पं० रघुवीर जी शास्त्री एम. ए. तथा सज्जनों के उत्साह से सभा के लिए हमारी प्रार्थना पर वेद· प्रचार के लिए ५५१) रु० की राशि इकट्ठी करके भेंट की गई। जिस में स्त्री समाज, समाज एव सज्जनों द्वारा समाजको अर्पित किया हुआ धनहै। माननीय प्रधान समाज ने बड़ा श्रद्धा से सभा का धन्यवाद करके यह राशि वेदप्रचार में भेंट की सारे समाजका अत्यन्त धन्यवाद श्री ला० हरिदेव जी ने इस अवसर पर वेद सूक्तियां छपवा कर प्रसाद रूप में बांटी। पूर्णाहुति पर तो खूब समारोह था। बहुत धन्यवाद। समाजें सभा के प्रति यही प्रेम दिखलाती रहें। हम बीमार भी हो गये। इस राशि का विवरण अलग भी दिया जा रहा है।

त्रिलोक चन्द्र

★

वेदार्थं जीवनं देयम्

✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱

पुस्तकं सत्यविद्यानां सर्वासां वेद ईरितम्।
पठनं पाठनं तस्य श्रवणं श्रावणं तथा॥

वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना, पढ़ाना सुनना सुनाना—

आर्याणां परमोधर्मः तपश्चापि महन्मतम्।
स एव चार्यो भवति यो हि वेदपरायणः॥

आर्यों का परम धर्म है। यह भारी तप भी है। वही आर्य होता है जो वेद में लगा हुआ है।

सर्वे रोगा विनश्यन्ती मानवानामसंशयम्।
कायजा मानसालोके राष्ट्रजा वेदधारणात्॥

वेद के धारण से मनुष्यों के शरीर, मन तथा राष्ट्र में पैदा होने वाले सारे रोग नष्ट होते हैं। यह निश्चित है।

वेदोवित्तं प्रिय नूनममूल्य ज्ञान सांचतम।
निर्धनो धनयुक्तोपि वेदहीनो नरो मतः॥

वेद ज्ञान से भरा अमूल्य और प्यारा धन है। वेद से हीन धनवान् मनुष्य भी कंगाल माना गया है।

तद् गृहं न गृहं यत्र वेद गान न गीयते।
तन्मनो न मनो यत्र वेदभावो न धीयते॥

वह घर-घर नहीं, जहां पर वेद का गान नहीं होता। वह मन मन नहीं, जहां वेदके लिए श्रद्धा नहीं है।

तद्वचो न वचो यत्र वेदवादो न नीयते।
तद्धि श्रोत्रं न च श्रोत्रं वेदपानं न पीयते॥

वह वाणी वाणी नहीं जहां वेद की चर्चा नहीं और वह कान कान नहीं जो वेदामृत नहीं पीते।

तद्धनं न धनं यत्र वेद संपन्न चीयते
तत्तु दान मदानं हि वेददानं न दीयते

वह धन धन नहीं जहां वेद की संपत्ति का चयन नहीं। जहां वेद का दान नहीं वह दान भी दान नहीं।

सर्गारम्भे मनुष्याणां दत्तं चक्षुस्सनातनम।
पश्यन्तु मनुजा वेदै वेंदा ज्ञानमया मतोः॥

सृष्टि के आरम्भ में मनुष्यों को वेद का नेत्र दिया ताकि सारे वेदचक्षु से देखें। वेद ज्ञान के भण्डार हैं।

रामः कृष्णश्च व्यासश्च गोतमः कपिलादयः।
अस्मिल्लोके दयानन्दः सर्वे वेद प्रचारकाः॥

श्रीराम, श्री कृष्ण, मुनिव्यास गोतम कपिलादि, ऋषि दयानन्द सारे वेद के प्रचारक थे।

आहुत समिधा रूपं सर्वस्वं जीवितं तथा।
वेदः प्रचारितस्तेन दयानन्देन धीमता

ऋषि दयानन्द वेद प्रचार के लिए अपना जीवन सर्वस्व समिधा बना कर आहुत कर दिया।

आक्रमणं भवत्यत्र वेदेषु सर्वतोऽधुना
वेदप्रिया हि पृच्छन्ति को वेदानुद्धारिष्यति ?

चारों ओर से वेदों पर होते आक्रमण को देखकर वेद प्रेमी पूछते हैं कि वेद रक्षा कौन करेगा ?

आर्याः! बद्ध परिकरा भवन्तः सम्भवन्तु हि।
वेद सत्रे पुनीते च पालनीयं वचस्तथा॥

आर्यो! आप कमर कस लेवें और इस पवित्र वेद सप्ताह के यज्ञ पर अपने प्रण को पालें।

—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

वेद का दिव्य सन्देश

(ले० श्री० पुरुषोत्तम लाल जी M.A वेद प्रकाश)

वेद के सन्देशों पर यदि मानव जाति आचरण करने का निश्चय कर ले तो कौन सी ऐसी समस्या है जिस का समाधान मानव समाज को प्राप्त नहीं होगा। सारे विकट और जटिलतम प्रश्न उसी प्रकार से विलीन हो जायेंगे जिस प्रकार से सूर्योदय से अन्धकार दूर हो जाता है। जितनी गम्भीरता से विचार करने का हम प्रयत्न करेंगे उतना ही यह असंदिग्ध हो जावेगा कि वेद का सन्देश आज भी उतना ही आवश्यक है जितना आवश्यक वह उस समय था जब वह सर्व प्रथम दिया गया था। इसी लिए वेद का सन्देश युगानुकूल है। वेदाध्ययन से मानव जाति को लाभ ही लाभ होने वाला है।

जिस समय ईस्ट इंडिया कम्पनी भारत में पैर जमा चुकी थी उस समय उसने वेदों को अंगरेजी में अनुवाद कराने के लिए नौ लाख रुपये का प्रबन्ध किया था और जर्मनी के विद्वान मैक्समूलर ने अपने जीवन के चालीस वर्ष वेदों को अंगरेजी अनुवाद के करने में होम दिये थे।

मैक्समूलर ने ही अपनी पुस्तक **India what it can Teach us** (भारत हमें क्या सिखा सकता है) में वेदों की महत्ता का गान करते हुए लिखा है—**I maintain that to everybody who cares for himself, for his history, for his ancestors for his intellectual development a study of Vedic Literature is indispensable ... Rigveda is full of lessons for the true student of mankind.** अर्थात मेरी यह धारणा है कि जो अपने बारे में सोचते हैं, अपने पूर्वजों तथा इतिहास के बारे में सोचते हैं, और बौद्धिक उन्नति के बारे में चिन्तन करते हैं, मनुष्य जाति के सच्चे विद्यार्थी के लिए ऋग्वेद सब शिक्षाओं से तथा यथार्थ उद्‌बोधनाओं से भरपूर है। मैक्स मूलर प्रत्येक व्यक्ति के लिए वेदाध्ययन परमावश्यक बताते हैं और यह आश्वासन देते हैं कि वेदाध्ययन से हमें सब शिक्षाओं की प्राप्ति होगी और जीवनोत्थान के लिए यथार्थ उद्‌बोधन प्राप्त होगा। जिन्हें बौद्धिक उन्नति की चिन्ता है उन के लिए तो यह एक अनिवार्य अध्ययन की कोटि में आता है। इसी प्रकार आयरलैंड के महान कवि तथा प्रसिद्ध दार्शनिक डा. जेम्स एच. कजिन्स अपनी पुस्तक **The path to peace** शान्ति का मार्ग—में वैदिक आदर्शों पर लिखते हैं।

On Vedic ideals alone it is possible to rear a new earth in the image and likeness of eternal heavens :—अर्थात वैदिक आदर्शों पर ही सत्य सनातन स्वर्गिक संसार का नवनिर्माण सम्भव है। डा. जेम्स आदर्शों की खोज करते हुए वैदिक आदर्शों तक पहुंच गये और उन की यह परम आस्था बन गई कि यदि संसार में स्वर्ग की की स्थापना करनी है तो वैदिक आदर्शों का प्रचार एवं प्रसार करना होगा और वैदिक आदर्शों को ही समाज, राष्ट्र तथा विश्व में प्रतिष्ठित करना होगा। यह बात स्पष्ट रूप से स्वीकार कर लेनी चाहिए कि आज भी यदि कोई व्यक्ति विद्वान् चाहे वह पौर्वात्य हो अथवा पाश्चात्य, वैदिक आदर्शों का गम्भीरता से अध्ययन करेगा तो वैदिक आदर्शों से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता।

श्री **W. D. Brown** अपनी पुस्तक **Superiority of Vedic Religion** वैदिक धर्म की महत्ता में वैदिक विज्ञान वाद पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं—**It (The Vedic Religion) is thoroughly scientific religion where science and religion go hand in hand.**

अर्थात् वैदिक धर्म वैज्ञानिक धर्म है और इसी धर्म में विज्ञान तथा धर्म में यथार्थ संगति दृष्टिगोचर होती है। यह वैदिक धर्म की बड़ी विशेषताओं में से एक विशेषता है। धर्म और विज्ञान को परस्पर विरोधी समझा जाता है परन्तु वैदिक धर्म तथा विज्ञान एक दूसरे के पूरक हैं। संसार में दोनों की आवश्यकता बनी रहने वाली है।...संसार के विचारवान वैज्ञानिकों ने धर्म तथा विज्ञान में अविरोध माना है और संसार के कल्याण के लिए धर्म तथा विज्ञान परस्पर पूरकता को अनिवार्य माना है इसी धर्म तथा विज्ञान का समन्वय तथा सामंजस्य का सन्देश वेद अनादि काल से हमें प्रदान कर रहा है। यह हमारे लिए गौरव की बात है।

जब यजुर्वेद की प्रति फ्रांस के प्रसिद्ध क्रांति—कारी विचारक वाल्टेयर को भेंट की गई तो इत्यादि में उन्होंने कहा—

For this valuable gift, the West will remain grateful to the East. अर्थात् इस बहुमूल्य भेंट से पश्चिम पूर्व का सदैव ऋणी रहेगा। हां! हां। भारतीयों के पास संसार को देने के लिए यदि कोई बहुमूल्य वस्तु है तो वह वेद है। यह वाल्टेयर हमें याद दिला रहा है। भारतीय अपनी सम्पत्ति को भुलाये बैठे हैं। उन्हें इस बात का ज्ञान भी नहीं रहा है कि उन के पास भी दुनिया को देने के लिए बहुमूल्य वस्तु पड़ी है। वेद को दुनिया को दे कर हम संसार का अत्यन्त उपकार करेंगे। संसार वेद को पा कर निहाल हो उठेगा। परन्तु हमें इस वेद रूपी बहुमूल्य भेंट को अत्यन्त नम्रता पूर्वक संसार को प्रस्तुत करना है। हमारे पास वेद रूपी सम्पत्ति है उसे सब को देने का प्रयत्न करें।

इस में लोक परलोक सुधार के लिए सारे विधि विधान मौजूद हैं। वेद केवल परलोक का ही विचार नहीं करता। इस लोक में भी सुख की प्राप्ति कैसे होगी इस का विचार मुख्यतः वेद प्रस्तुत करता है। वेद लोक परलोक दोनों में सम्मन्वय स्थापित करता है।

गुरुकुल वैदिक आश्रम

शुद्धि तथा विवाह

गुरुकुल वैदिक आश्रम वेदव्यास पो० राउर केला ४ (पानपो) जि० सुन्दर गढ़ उड़ीसा में २/७/६४ को एक जन्म जात ईसाई वनवासी परिवार की जिस में सात व्यक्ति थे शुद्धि की गई।

सुन्दर गढ़ निवासी श्री समुएल मुण्ड ईसाई की पुत्री श्रीमती सुवरदानी मुंडे २४ वर्षों या आइ सी पास को शुद्ध कर श्री नदिया बिहारी दास के साथ विवाह संस्कार श्री स्वामी शिवानन्द तीर्थ ने कराया इस समारोह में सुन्दर गढ़ के गण्यमान्य वकील सम्मिलित हुए आश्रम को २१ रुपये दक्षिणा में मिले।

ब्रह्मचारी वृषवीर
आठवीं कक्षा

उन्नीसवीं शताब्दि का काल ऐसा काल था जिसमें वेदों का सम्मान क्रमशः कम होता गया। पठन, पाठन की प्रणाली के बदले जाने का प्रभाव इन पर भी पड़ा, भले ही इन्हें भारत में हिन्दू-धर्म का धर्म ग्रंथ कहा जाता था परन्तु वेदों के ग्रन्थ विरलों के घर पर ही प्राप्त होते थे। कुछ व्यक्तियों को कंठ अवश्य थे परन्तु उनका अर्थ ज्ञान नहीं था। कुछ विदेशी विद्वानों ने वेदों को जनता के सम्मुख रखने का प्रयत्न किया परन्तु उन्होंने उनके अर्थ में पक्षपात से काम लिया, उन्होंने यह सिद्ध करने का प्रयास कि वेद गडरियों के गीत हैं। तो कुछ ने उन पर अनुरोध किया—

१. वैदिक काल में ऋषि लोगों को ज्योतिष का ज्ञान बिल्कुल न था।

२. न गणित आदि का ही उस समय आविष्कार हुआ था।

३. उन्हें ऋतुओं के प्राकृतिक चमत्कार व उनके नियम भी ज्ञात न थे।

४. अग्नि, वायु, इन्द्र, वरुण आदि को चमत्कारिक देवता समझ कर उन्हें प्रसन्न करने के लिए वे यज्ञ आदि करते थे।

५. उस समय सोमनाथ बहुत ही मादक पेय होता था उसे पीकर वे उसी के गुण गाने लगते थे।

६. जहां पूर्व पश्चिम दिशा में समुद्र था, वहां के ऋषि लोग कहते थे कि पानी से सूर्य निकलता है और फिर पानी में ही डूब जाता है। इत्यादि

इस का परिणाम यह हुआ कि शिक्षित व्यक्तियों की दृष्टि में आजकल के विद्वानों के बनाये निबन्ध, पुस्तक-संग्रह आदि की बातें प्रमाण। और पुराने वेद, वेदान्त, आरण्यक ब्राह्मण, स्मृति आदि ग्रन्थों की आज्ञा भी भी बन्द।

ऐसे समय में उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में एक ऋषि ने सिंह गर्जना

आर्यसमाज के उपकार

वेदों का यथार्थ भाष्य

(श्री मित्रसेन जी आर्य एम० ए०, साहित्याचार्य, ज्वालापुर)

★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★

की 'वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है।' तात्कालिक जनता ने वेदों पर उपरिलिखित आक्षेप दुहराये। और प्रमाण स्वरूप सायण, महीधर, उव्वट आदि के भाष्य भी उपस्थित किये। उस समय ऋषि ने उत्तर दिया कि 'सत्य विद्याओं के जानने के हेतु आवश्यकता इस बात की है कि मन्त्रों के यथार्थ अर्थ समझे जावें।' परन्तु यह कठिन कार्य है। क्योंकि वेद मन्त्रों के अनेक कार्थ हैं। किसी भाष्यकर्ता ने कोई अर्थ अपनाया तो किसी ने कोई और इस प्रकार से अरविन्द के शब्दों में वेद रहस्यात्मक ही बने रहे।

प्राचीन भाष्यकारों ने वेद भाष्य करने का प्रयत्न किया। किंतु इन सब के वेद भाष्य पढ़ने के पश्चात् वेदों पर श्रद्धा नहीं रह सकती। इन भाष्यकारों के अनुसार वेदों में पौराणिक कथाओं, गोमांस भक्षण, यज्ञ में बलि प्रथा तथा अनित्य इतिहास का वर्णन विद्यमान है। महीधर और उव्वट के छायानुवादी श्री ज्वाला प्रसाद मिश्र ने वेदों से ही सभी खुराफातों से सिद्ध करने का प्रयत्न किया।

ऐसे समय में आर्य समाज के संस्थापक ने गुजराती होते हुये भी वेदों का संस्कृत तथा हिन्दी में भाष्य करके वैदिक जगत् में क्रांति उपस्थित की। उनके प्रयत्न के परिणाम स्वरूप वेदों के प्रति जनता की श्रद्धा, विश्वास, प्रेम पुनः उत्पन्न हुआ। उन्होंने यजुर्वेद सम्पूर्ण और ऋग्वेद के सप्तम मंडल के ६१ सूक्त तक का भाष्य किया।

ऋषि भाष्य की प्रशंसा में योगी अरविन्द घोष लिखते हैं। "In the matter of vedic interpretation. I am convineed that whatever may be the final compete interpretation, Dayanand will be honoured as the first discoverer of the right class.

अर्थात्—वेद भाष्य के सम्बन्ध में, मेरा यह पूर्ण विश्वास है कि अन्तिम निर्णय के सर्वाङ्ग पूर्ण भाष्य चाहे कोई भी हो, परन्तु दयानन्द का भाष्य सब से प्रथम कोटि में प्रतिष्ठित होगा..."

दिवंगत पं० नरदेव शास्त्री, अपने "वेद और आर्य समाज" शीर्षक लेख में लिखते हैं:— "स्वामी दयानन्द जी ने वेदभाष्य भी किये हैं। और अपने वैदिक भाष्यों में पूर्ण प्रयत्न किया है कि वेदों में से इतिहास की गन्ध न आने पाये, उनके भाष्यों को देख कर स्पष्ट प्रतीत होता है कि उनको आमरण यही चिन्ता लगी रही कि "वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। "और इसी बात की सिद्धि के लिए उनका परम पुरुषार्थ रहा है।"

ऋषि ने वेद भाष्य करते समय अपनी शैली इस प्रकार की अपनाई—

वैदिक शब्द यौगिक है

उन्होंने वेदों में आये समस्त शब्दों को यौगिक माना है। अपने परम्परागत अर्थों को नहीं अपनाया, यही प्रणाली यास्क, शाकटायन आदि ने भी अपनाई है। निरुक्त में भी यही पाई जाती है। जब कि सायण आदि ने परम्परागत अर्थों को ही अपनाया है। तथा पुराण, इतिहास, स्मृति आदि से इसकी पुष्टि की है।

अनेकार्थ की शंका

वैदिक शब्दों के यौगिक मानने पर यह शंका उपस्थित होती है कि प्रत्येक शब्द अनेक धातुओं से बन सकता है और अनेकार्थाः हि धावः के आधार पर उनके अनेकार्थ होंगे अतः यौगिक अर्थ मानें तो शब्द शास्त्र के सिद्धान्त से उनका सम्बन्ध नहीं हो सकता। उत्तर में निवेदन है कि शब्द समानार्थक या नामार्थक होते हैं और वे चिरकाल के प्रयोग से जिन अर्थों में यौगिक दृष्टि से स्थिर और रूढ़ हो जाते हैं उन्हें ही ग्रहण किया जाता है। इसके अतिरिक्त प्रकरण और विशेषण को ध्यान में रख कर यौगिक अर्थ करना ही उचित प्रतीत होता है। यही कारण है कि ऋषि से पूर्ववर्ती कुछ भाष्यकारों के मत में अनेक मन्त्रों में यज्ञ और यज्ञ सामग्री, पात्र आदि का वर्णन है परन्तु महर्षि की शैली में यज्ञ की एक-एक वस्तु के अन्दर प्रकाश और उत्तम अर्थ प्रतीत होने लगता है।

त्रिविध प्रक्रिया

वेदों का अर्थ यास्क ने तीन प्रक्रियाओंसे माना है आध्यात्मिक, आधिदैविक, और आधिभौतिक, महर्षि ने भी इन्हीं त्रिविध प्रक्रिया के अनुसार अर्थकिया है। परन्तु उन्हें और अर्थों के साथ-साथ आध्यात्मिक अर्थविशेष रूप से रुचिकारक उनके मत से यज्ञ शब्द इन्हीं अर्थों से प्रयुक्त होता है।

ऐतिहासिक शैली मान्य नहीं

महर्षि दयानन्द के मत से वेद में एक भी ऐसा स्थल नहीं है जहां इतिहास हो। जबकि प्राक्वर्ती भाष्य कारों के मत में अनेक अनित्य इतिहास, वैयक्तिक इतिहास हैं, जिस से वेद सर्व कालिक और सर्वजनीन नहीं हो सकते। आचार्य

(शेष पृष्ठ १० पर)

वेदों की महत्ता

(ले॰—श्री पं॰ धर्मवीर जी वेदालंकार देहली)

****

प्रो॰ मैक्समूलर जैसे विद्वान् ने Vedic Hymns इत्यादि अपने ग्रन्थों में Rigved is the oldest book in the library of mankind इत्यादि वाक्यों द्वारा स्पष्टरूप से ऋग्वेद की मानवीय पुस्तकालय में सब से अधिक प्राचीनता को स्वीकार किया है। Teachings of the Vedas नामक ग्रन्थ के ईसाई लेखक पादरी फिलिप्स वेद की एकेश्वर पूजादि विषयक उच्च शिक्षाओं से यहां तक प्रभावित हुए हैं कि उन्होंने वैदिक शिक्षाओं को एक प्रारम्भिक ईश्वरीय ज्ञान का परिणाम स्वीकार किया है। उनके अपने शब्द ये हैं—We are Justified, there fore, in concluding that the higher and finer conception of the Vedic Aryans were the result of primitive Divine Revelation.

प्रो॰ मैक्समूलर आदि विद्वानों ने अपनी तरफ से पूरी कोशिश की है कि किसी तरह वेदों से एकेश्वरवाद न सिद्ध होने पाये, पर अनिच्छा से भी उन्हें यह स्वीकार करना पड़ा है कि वेदों के अन्दर किसी २ जगह ऐसे स्पष्टतौर पर एकेश्वर की पूजा का विधान किया है कि उस से इन्कार किया ही नहीं जा सकता। ऋग्वेद के हिरण्यगर्भ सूक्त का निर्देश करते हुए वे कहते हैं :—I add only one more hymn (Rig 1-121) in which the idea of one God is expressed with such power and decision that it will make us hesitate before we deny to the Aryan Nation an instinctive monotheism (History of Sanskrit literature) इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो दिव्यः स सुपर्णो गुरुत्मान्। एक सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्नि यमं मातरिश्वान माहुः ॥ ऋ. १-१६४-४६

यो देवानां नामधा एक एव... स एष वृदेक एव वेदों के निष्पक्षपात अनुशीलन से हमें पता लगता है कि केवल वेद ही है जो मनुष्यमात्र की सर्वतोमुखी उन्नति अर्थात् Harmonious development के साधनों का स्पष्ट रीति से उल्लेख करता है। केवल वेद ही है जिस में अत्यन्त महत्वपूर्ण शब्दों में वर्णित गुण कर्मानुसार चार वर्णों में मनुष्यजाति का विभाग संसार की समस्त कठिनाईयों व कठिन समस्याओं को हल कर के किसी भी जाति के सामूहिक जीवन को सुखमय—बना सकता है। वेद को छोड़ कर और कोई धर्म—ग्रन्थ ऐसा नहीं है जिस में श्रद्धा और तर्क, ज्ञान और कर्म भोग और त्याग का अत्यन्त सुन्दर मेल कर के मनुष्यमात्र के लिए उपयोगी क्रियात्मक मध्यमार्ग का स्पष्टरूप से प्रतिपादन किया गया हो। वेद के सिवाय कोई ऐसा धर्म ग्रन्थ नहीं जिस ने केवल न धर्म और भाषा का अपितु विज्ञान को भी मूल कहा जा सके और जिस में विज्ञान व प्रकृति नियम विरुद्ध बातों का सर्वथा अभाव हो। यहां तक कि उस में वर्णित सृष्टिक्रम को देख कर जैका-लियट सरीखे फ्रांसीसी विद्वान् लिखते हैं—Astonishing fact, the Hindu Reverl ation (Veda) is of all revelation the only one whose ideas are in perfect harmony with modern science as it proclaims slow and gradual formation of the world. अर्थात् बड़े आश्चर्य की बात है कि जितने भी इस समय ईश्वरीय ज्ञान के नाम से प्रसिद्ध ग्रन्थ मिलते हैं। उन में केवल वेद ही ऐसा है जिस के विचार आधुनिक विज्ञान के सर्वथा अनुकूल है। वैद्यक, ज्योतिष, Physics, Chemistry, गणित विज्ञान आदि अनेक विद्याओं का मूल वेदों में स्पष्ट तौर पर पाया जाता है। प्रसिद्ध आर्य विद्वान् डा॰ धर्म देव महता ने अपनी पुस्तक Some Positive Sciences In the Vedas में इस विषय पर बहुत अधिक प्रकाश डाला है।

जब हम भाषा विज्ञान के इस सिद्धांत को दृष्टि में रखते हैं कि विचारों और भाषा का नित्य सम्बन्ध है जैसा कि निम्नलिखित विद्वानों के लेखों से मालूम होता है तब हमें स्पष्ट रूप में भाषा का भी मूल ईश्वरीय मानना पड़ता है और उस के माने बिना हमारा गुजारा चल ही नहीं सकता।

हेर्डर नामक भाषाविज्ञ का कथन है—Withowt language man could never have come to his reason and sense.

शेलिंग ने कहा है—Without language it is impossible to conceive philosophical, may ever any human conciousness.

हीगल का कथन है—We think is names सर हैमिल्टन ने कहा है—Words make the pattern of thought. प्रसिद्ध विद्वान् मैक्स मूलर ने इस सिद्धांत को प्रबल युक्तियों से सिद्ध करते हुए इसे ही सारे भाषा विज्ञान और दर्शन शास्त्र का आधार बता कर यहां तक लिख दिया कि—We think in words must become the charter of all exact philosophy in future. भाषाओं के तुलनात्मक अनुशीलन से वैदिक भाषा भारतीय ही अपितु दूसरे देशों में प्रचलित सब भाषाओं की भी जननी है तथा किसी समय यही सब देशों में बोली जाती थी। 'बाप' हर्डिगर इत्यादि प्रसिद्ध भाषा विज्ञानियों ने भी At one time sanskrit was the one language spoken all over the world. आदि वाक्य लिख कर इसी का समर्थन किया है। ऋग्वेद में कहा है—यस्मिन् विश्वानि काव्या चक्रे नाभिरिव श्रिता। उस परमात्मा में सब वेद रूपी काव्य वैसे रहते हैं जिस प्रकार चक्र में नाभि रहती है। देवस्य पश्य काव्यं न ममार न जीर्यति परमात्मा का यह वेदरूपी काव्य देखो, वह कभी मरता नहीं न कभी जीर्ण होता है। यह सदा एक सा ही रहता है।

ज्ञान का बीज सृष्टि के आदि में दिया जाता है। ऐसे ऋषि जो पूर्व कल्प के कर्मों से अपने आप को इतना पवित्र बना चुके हैं कि उनका अन्तः चक्षु खुल गया है वह परमात्मा की करुणा से इस पवित्र अमृत को अपने विमल हृदयों द्वारा पीते हैं। उन्हीं की वाणी वेदवाणी होती है।

आर्यसमाज चौक फ़िरोपुर शहर में

सभा के वेद प्रचार के लिए निम्नलिखित सज्जनों ने इस प्रकार दान दिया है।

स्त्री समाज फिरोजपुर शहर	१००/-
श्री टेकचन्द जी रीडर	१००/-
श्री अर्जुन दास जी	२१/-
श्री मेहरचन्द जी अग्रवाल	५/-
श्री हरी देव जी	५/-
„ महादत्त जी	५/-
„ बनारसी जग्गा एडवोकेट	१०/-
„ ओ३म् प्रकाश जी बहल	५/-
„ महाशय मदनजित जी	५/-
„ सूरज लाल जी	२/-
„ राज कुमार जी	२/-
„ जवाहर लाल जी	२/-
„ मिढ़ा जी	२/-
„ देसराज जी मशीन	२/-
„ राम नाम जी बुक सैलर	२/-
„ देवराज जी	२/-
„ मेहरचन्द जी कटारीया	२/-
„ महता जी	२/-
„ मोहनलाल ओ३म्प्रकाश जी	२/-
„ बरकत राम जी	२/-
„ बांकेलाल जी	१/-
„ देश बन्धु जी	१/-
„ जोगेन्द्रपाल जी	१/-
„ रूढ़चन्द जी	१/-
„ वेद प्रकाश जी	१/-
„ नरेन्द्र कुमार जी	१/-
„ बूटा राम जी	१/-
„ बिहारी लाल जी	१/-
„ राम लाल जी मंगी	१/-
स्वतक ए-वम स्कूल	२१/-
	३०८/-
आर्यसमाज कालिज विभाग फिरोजपुर	२४३/-
	५५१/-

महादत्त शर्मा मंत्री

शोलापुर समाचार

(१) आर्य समाज शोलापुर के उत्साही प्रचार मन्त्री श्री संदीपान जी एवं श्री बाबूसिंह जी आर्य के प्रचार व प्रभाव से दो नवयुवकों ने, हिसार दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय में प्रविष्ट होकर वैदिक धर्म की सेवा करने का निश्चय किया है। दोनों युवकों को हिसार भेज दिया गया है। इससे पूर्व भी एक ब्रह्मचारी हिसार भेजा गया है। ३ अक्तूबर व तीन दीनानगर से प्रविष्ट कराए गए हैं।

(२) आर्य युवक समाज के सत्संग में कालेज के संध्या भवन में महाराष्ट्र के प्रमुख वैद्य, शास्त्रों के गम्भीर विद्वान एवं आयुर्वेदिक कालेज के प्रि० श्री बागेवाडीकर जी का अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण तथा प्रभावशाली भाषण हुआ।

—राजेन्द्र 'जिज्ञासु' प्रधान
आर्य युवक समाज

बधाई

प्रादेशिक सभा के हैड क्लर्क श्री पं० जमनादास जी के सुपुत्र श्री सिद्धूराम जी शर्मा एम. ए. फर्स्ट क्लास में उत्तीर्ण होकर रामगढ़िया कालिज फगवाड़ा में प्रोफैसर पद पर नियुक्त हुए हैं इसके लिए आर्यजगत की ओर से श्री पं. जमनादास जी सभा कार्यालय इंचार्ज को हार्दिक बधाई।

श्री पं. त्रिलोक चन्द्र जी शास्त्री बी. ए. महोपदेशक प्रादेशिक सभा के सुपुत्र श्री दयानन्द जी संस्कृत की एम. ए. की परीक्षा में २४१ नम्बर लेकर फस्ट डिवीजन प्राप्त की है। आर्यजगत की ओर से शास्त्री जी को अनेकशः बधाई।

—व्यवस्थापक

श्रुति में गान करो रे

श्री शरर एम०ए०

नक्षत्रों से आलोकित वह नभ का प्रांगण,
हरा भरा यह स्नेह सिक्त, धरती का बाना।
ऊषा का लाना सलज्ज स्मित अधर बन्ध पर,
अरुण सार्थी का गुलाल चहुं दिश बिखराना।
रवि शशि की यह आंख मिचौनी रैन दिवा की,
कालिन्दी-सी सरिता का बल खा-खा इठलाना।
सौरभ पूरित वन [illegible] के आंचल,
[illegible] का श्रान्त पथिक को धीर बन्धाना।
किसी सहृदय कवि का है यह काव्य मनोरम,
बादल के अवगुंठन में शशि का मुस्काना।
काव्य देख कवि को जानो, यदि जान सको रे।
उसके दिव्य गीतों का श्रुति में गान करो रे।

पंजाब सरकार के ध्यान योग्य

आर्य समाज जाखल का लगभग २,००० दो हजार रुपया किराये की बाबत शिक्षा विभाग के जिम्मे बाकी है और शिक्षा विभाग यह रकम देने को तैयार है परन्तु इस के लिये इसे P.W.D. का N.A.C. और Reasonable rent सर्टिफिकेट दरकार है जिस की लगभग पौने दो वर्ष से लिखा पढ़ी हो रही है अन्त में जिला शिक्षा अधिकारी हिसारने उपमंडलीय अधिकारी, P.W.D. संगरूर को चार पत्र GIV 64787/28.9.64 GIV 6278/18.1.64 GIV 45164/9.4.64 और GIV 51888/6.5.64 विशेष तौर पर लिखे सर्टिफिकेट तो क्या मिलता था याद दिलाने के बावजूद पत्र का उत्तर तक नहीं मिला मैं स्वयं भी उपरोक्त कार्यालय में गया परन्तु वैसे ही टरका दिया गया सच बात यह है कि उपमंडलीय अधिकारी Exctive Engineer Sangrur के कार्यालय के कर्मचारी कुछ भेंट चाहते हैं यह भेंट दे कौन? शिक्षा विभाग के पास कोई प्रोविजन नहीं और आर्य समाज ऐसे भ्रष्टाचार के विरुद्ध है बिना भेंट के प्रमाण पत्र नहीं मिलता और बिना प्रमाण पत्र के आर्य समाज का किराया नहीं मिलता। न मी मन तेल होगा न राधा नाचेगी आर्य समाज को इस रकम की वसूली का उपाय बताया जावे। यदि सरकार के ध्यान भ्रष्टाचार को जड़ से उन्मूलन कर देंगे हाथी के दान्त नहीं तो हमारे उपरोक्त सर्टिफिकेट मिलने में देरी क्यों।

मोहन लाल गुप्ता
प्रधान आर्य समाज जाखल

आर्यसमाज हिसार का चुनाव

श्री ला. फतहचन्द जी—प्रधान पं० जगन्नाथ जी—उपप्रधान चौ. नत्थन लाल जी—उपप्रधान नन्दलाल आर्य—मन्त्री, श्री रादेरोल जी—उपमन्त्री, पं० आशानन्द शर्मा जी—पुस्तकाध्यक्ष, मास्टर बरजीलाल जी—कोषाध्यक्ष, श्री दीनदयाल जी आर्य—आडीटर

—नन्दलाल मन्त्री

मुद्रक व प्रकाशक श्री ज्ञानचन्द्र जी आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर में मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टेलीफोन न० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 1:

एक प्रति का मूल्य १२ नये पैसे 25/8/64 वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक ३४) १५ भाद्रपद २.२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०— ३० अगस्त १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

मयिवर्चो अथो यशः

हे परमदेव! ऐसी कृपा करो कि मुझ में वर्च :—शक्ति, तेज भर दे और यश :—मुझे यश वाला कर दें मै बलवान कीर्ति वाला बनूं। निर्बल व निन्दा का पात्र न कभी बनूं। यह प्रसाद मुझे दे देवें।

अथो यज्ञस्य यत्पय:

और भी प्रसाद का दान देवे। जो भी यज्ञ का परोपकार का, शुभ कर्म तथा प्राणिमात्र की सेवा का पय: आनन्द है, सुख तथा प्रसाद है, वह भी हे प्रभो। मुझे प्रदान करें मै लोक सेवा में लगा रहूं।

द्यामिव दृंहतु

वह भगवान मुझे द्याम इव-द्युलोक के समान दृढ़ बना दे। चमकादे द्युलोक जैसे चमकता है, सूर्य का प्रकाश है उसी प्रकार ही वह प्रभु मुझे जीवन में, ज्ञान में तथा कार्यों में चमका देवें। तेजस्वी करे।

सा म वे द से

वे दा मृ त

जल प्रसेचन मन्त्रा:

ओम् अदितेऽनुमन्यस्व। ओम् अनुमतेऽनुमन्यस्व।

ओम् सरस्वत्यनुमन्यस्व। गोभि. प्र. १ सं. ३ सू. १-३

अर्थ :—हे अदिते—अखण्डनीय परमेश्वर! कृपा करते हुए मुझे (अनुमन्यस्व) शुद्ध अनुकूल मति प्रदान कर। हे प्रभो! आप मुझे (अनुमते) सर्वव्यापक ज्ञान के भण्डार (अनुमन्यस्व) उत्तम मति का प्रसाद दीजिये और हे (सरस्वति) सरस्वती सर्व विद्या के आदिमूल भगवन्। आप कृपा कर के मुझ भक्त को (अनुमन्यस्व) अनुकूल तथा हित करने वाली मति प्रदान करे। मेरी मति सदा आप की आज्ञा के अनुकूल हो, सब का हित करने वाली हो। प्रतिकूल उल्टी न बने।

भाव :—मनुष्य जीवन की विशेषता इस ज्ञान और मति से है। खाना पीना निद्रा आदि तो पशुपक्षियों और मनुष्यों में समान है। नरतन में ज्ञान ही अधिक है। यदि मानव की यही विशेष मति भी प्रतिकूल हो जायें, बुद्धि उल्टी बन जाये, अहित करने वाली हो जाए तो जीवन का सारा खेल ही बिगड़ जाता है। पागल नर पशु से भी बुरा व भयंकर होता है। जिस के पास अनुकूल मति है उसी के पास शक्ति है। इस लिए हे परमात्मन्। मै आप से अनुकूल मति प्रदान करने की पुन: प्रार्थना करता हूं। धन चला जाय, बल भी चाहे कम हो जाये, सुख भी चला जाये पर प्रभो मेरी सुमति न जाने पाये। यह मति उल्टी न होने पाये। जहां सुमति तहां सम्पति नाना। जहां कुमति तहां विपति निधाना। सुमति का दान दीजिए। सं.

ऋषि दर्शन

द्विविधं ज्ञानं भवति

ज्ञान दो प्रकार का होता है हमें अपने जीवन में जितना भी ज्ञान प्राप्त होता है, जितने भी पदार्थों का हम परिचय मिलता है, उन का जैसा कैसा भी ज्ञान मिलता है। उस के दो प्रकार माने गये हैं—और वे

प्रत्यक्षमानुमानिकं च

प्रत्यक्ष और अनुमान नाम से कहा जाता है। जो ज्ञान आंखों से देख कर पता लगता है, उसे प्रत्यक्ष कहा जाता है तथा जिस के प्रतिअनुमान किया जाता है, जैसे धूमको देख कर अग्नि का—वह अनुमान है।

सुख दुःखं च

यह जीवन में मिलने वाले सुख और दुःख भी इसी प्र... का है सुख को देख क...र्म के कारण बने बुरे ... का स्वयं ही अनुमा...या जा सकता है

...भू मि का से

अधिष्ठाता—श्री संतोषगज जी

स...—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

(गतांक से आगे)

अतः वेद के विशेषणादय से विस्पष्ट हो गया कि 'अकाय' शब्द का अर्थ शरीर रहित ही है। 'चीयतेऽन्नादिभिः चित्र+घञ—चाप—काय—ऐहे—वृद्धि अथा—देश+रच अ+इति प्रति वेवे—नकाय—अकाय—निराकारः। अतः स्वेच्छ-शरीर की कल्पना वेदविरुद्ध तथा व्याकरण से भी सिद्ध नहीं है। जब उस ब्रह्म को सर्वव्यापक, सर्वशक्ति मान, निराकार, अखण्ड, एकरस, सर्वान्तर्यामी इत्यादि अनेक नामों से कहते हैं, वहां अव्रण व अस्नाविर कहने में भी कोई दोष नहीं है और अनावश्यक भी नहीं है

शरीर का लक्षण महर्षि गौतम ने न्याय दर्शन में किया है कि 'चेष्टेन्द्रियार्थाश्रयः शरीरम्' अ. १। आ० १। सू०११॥ अर्थात जिसमें चेष्टाश्रय, इन्द्रियों का आश्रय और अर्थों का आश्रय अर्थात विषयों का आश्रय लिया जाता है उसे 'शरीर' कहते हैं तथा न्याय दर्शन के भाष्य में वात्स्यायन ऋषि ने भी कहा कि 'भोगायतन शरीरम 'अर्थात जिस में लोगों को साक्षात रूपमें भोगा जाय उसे शरीर कहते हैं।

सांख्य में कपिलाचार्य ने कहा—'पान्च भौति को देह: 'अ१।सू २७ अर्थात (देहः) मांसादिसे गठित देह स्थूल शरीर (पान्च भौतिकः) पांच भूतों से सिद्ध होने वाला या सम्पन्न होने वाला है। हम पौराणिकों से पूछते हैं कि आप लोग जो २४ अवतार मानते हैं यथा—सनक, वराह, नारद, नरनारायण, दत्तात्रेय, ऋषभदेव, पृथु, मत्स्य, कच्छप, मोहिनी, नरसिंह, वामन, [illegible]राम, रामचन्द्र, बलराम, श्रीकृष्ण [illegible] बुद्ध इत्यादि अवतारों के क्या [illegible] लक्षण वाले शरीर नहीं थे ? क[illegible] के निराकार साकार होते हुए पीते नहीं थे ? उन्हें [illegible] क्या वे खाते होता था ? यदि होता भी नहीं [illegible]वर

धार्मिक चर्चा—

साकार निराकार-निर्णय

(ले०—श्री विद्यासागर शर्मा, दयानन्द मठ, दीनानगर)

नहीं थे अपितु मनुष्य थे। यदि ईश्वर मानते हो तो ये सब कार्य ईश्वर में नहीं घट सकते प्रत्युत मनुष्य में घटते हैं। अतः वे मनुष्य थे ईश्वर नहीं। न ही परमेश्वर की आकृति होती है। क्योंकि न्याय दर्शन में गौतम मुनि कहते हैं—'आकृतिर्जाति लिङ्गाख्या' अर्थात् जो जाति को व उस जाति के उसके चिन्हों को प्रकट करने वाली है, उसे आकृति कहते हैं। और जिस की आकृति होती है उसकी जाति भी होती है। फिर प्रश्न उठता है कि जाति किसे कहते हैं ? तो न्याय में कहा कि 'समान प्रसवात्मिका जातिः' अर्थात अपने समान वर्ण वाले को जो उत्पन्न करने वाली हो, उसे जाति कहते हैं। यथा—गौ से गौ इत्यादि समान आकार के ज्ञान को प्रकट करने वाली अथवा अपने समान वंश को उत्पन्न करने वाली जो है, उसे जाति कहते हैं।

ईश्वर की आकृति मानने पर उस की जाति होगी व जाति होने से वह अपने समान अनेकों ईश्वर उत्पन्न करेगा। अनेक होने से लड़ाई झगड़े भी होंगे और एक ईश्वर भी न रहा, इस के मानने से व्यवस्था भङ्ग हो जाती है। अतः ईश्वर की आकृति न होती प्रत्युत ईश्वर आकृति रहित ही है।

ईश्वर के सम्बन्ध में यह कहा जाय कि—

'अविभक्तं च भूतेषु विभक्तमिवचस्थितम्' यह दृष्टांत परमेश्वर पर लगाया जाय तो आधा परमेश्वर निराकार व आधा साकार हो जायगा। नहीं तो यह बताना कठिन हो जायगा कि परमेश्वर का कितना भाग निराकार है और कितना साकार। इन दोनों भागों से ईश्वर सीमित व सीमाबद्ध हो जायगा। सीमा बद्ध तथा सीमित होने से उस के गुण, कर्म, स्वभाव भी सीमित हो जायेंगे, जब कि श्वेताश्वेतर उपनिषद्' में कहा गया कि—'परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञान बलक्रिया च।' अतः उपयुक्त दृष्टांत के लगाने से ईश्वर के दोनों रूप नाशवान् होंगे अर्थात् साकार होने पर निराकार रूप का नाश और निराकार होने पर साकार रूप का नाश हो जायगा। कौतूहल की बात यह है कि पौराणिक मत में ईश्वर के साकार निराकार ये दो ही रूप है और दोनों ही नाशवान्। जिस परमेश्वर के रूप का नाशवान् हुआ। इस प्रकार पौराणिक विद्वान् ईश्वर के साकार को सिद्ध करते२उस के अस्तित्व को ही मिटा बैठे।

गीता में श्री कृष्ण लिखते हैं कि—

सर्वतः पाणिपादं तत्सर्वतोऽक्षि
शिरोमुखम्।
सर्वतः श्रुति मल्लोके सर्वमावृत्य
तिष्ठति ॥ १३।१३ ॥

वह सब ओर से हाथ पैर वाला, एवं सब ओर से नेत्र शिर और मुख वाला तथा सब ओर से श्रोत्र (कान) वाला है। क्योंकि वह संसार में सबको व्याप्त करके स्थित है।

गोस्वामी तुलसी दास ने भी ठीक ही कहा कि—

बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना,
कर बिनु करम करई विधि नाना।
आनन रहित सकल रस भोगी,
बिनु वानी वक्ता बड़ जोगी॥
तन बिनु परस, नयन बिनु देखा,
ग्रहइ घ्राण बिनु बास असेषा।
अस्सि सब भांति अलौकिक करनी,
महिमा जासु जाई नहीं बरनी॥

जबकि श्री कृष्ण जी ने तथा तुलसीदास जी ने परमेश्वर का वास्तविक स्वरूप जो निराकार है उसको सम्मुख रखा है फिर भी ये पौराणिक विद्वान् ईश्वर का अस्तित्व मिटाने के पीछे हाथ धोकर पड़े हैं।

जो लोग ईश्वर के निराकार होने में सन्देह करते हैं, उन्हें चाहिए कि वे ईश्वर के वास्तविक स्वरूप को जानने का प्रयत्न करें। जैसे कि यजुर्वेद में कहा—'य आविवेश भुवनानि विश्वाः। ८।३६॥

अर्थात जो परमेश्वर समस्त्त्व लोकों में व्याप्त हो रहा है।

'स ओत. प्रोतश्च विभूः प्रजासु॥ यज० ३२।८॥ अर्थात वह परमात्मा विविध प्रकार से व्याप्त हुआ प्रजाओं में ओत-प्रोत हो रहा है। इसी प्रकार वेदों में तथा उपनिषदों में परमेश्वर के निराकार स्वरूप का प्रतिपादन तथा निरूपण किया हुआ है। यथा श्वेताश्वेतरोपनिषद् में कहा कि—

सर्वेन्द्रिय गुणाभासं सर्वेंद्रिय
विवर्जितम्।
सर्वस्य प्रभुमीशानं सर्वस्य शरणं
बृहत्॥ ३।१८ ॥

सम्पूर्ण इन्द्रियों के विषयों को जानने वाला है, परन्तु वास्तव में सब इन्द्रियों से रहित है तथा सब का वही शरण है।

और कठोपनिषद् में भी—

अशब्दमस्पर्शमस्वरूपमव्ययं
तथाऽरस नित्यम गन्धवत् च यत्।
अनाद्यनन्तं महतः परं ध्रुवं
निचाय्य तं मृत्युमुखात्प्र
मुच्यते ॥ १३।१५ ॥

वह ब्रह्म शब्द नहीं, जो कान से जाना जावें, स्पर्श नहीं, जो त्वचा से ग्रहण किया जावे, रूप नहीं, रूप नहीं, जो आंख से देखा जा सके, तथा इसी प्रकार रस नहीं जो जिह्वा से च खा जा सकें और गन्धवाला नहीं, जो नासिका से सूंघा जा सके।

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२१, ३० अगस्त १९६४ [अंक ३८

धर्मसंस्थापनार्थाय

महात्मा कृष्णचन्द्र जी महाराज के कई नाम और कई रूप हैं। महाभारत के पढ़ने से उनके पवित्र व आदर्श जीवन का चारु चित्र सब के सामने आ जाता है। कहीं उनका रूप गोपाल तो कहीं आदर्श सखा, किसी स्थान पर परमयोगी तो कहीं कर्मयोगी, कहीं पर ईश्वर तथा वेदों के परमभक्त और कहीं पर त्याग की सुन्दर सजीव प्रतिमा। इस प्रकार उनका सारा जीवन परिवार तथा सारे राष्ट्र के लिए अत्यन्त पवित्र एवं प्यारा है। प्रति वर्ष आई हुई जन्माष्टमी का पुण्य पर्व मनाते हुए सारा समाज उस दिव्य विभूति के जीवन गुणों का गान करता रहता है। महापुरुष समाज को चेतना, प्रेरणा व नवजीवन देते रहे हैं। अब भी उनके जीवन रूप प्रकाशस्तम्भ से नानाविध धवल किरणें निकलती हैं। आज फिर जन्माष्टमी आकर उसी महात्मा का स्मरण कराती है। उनके अन्य रूपों में एक रूप धर्मसंथापक का भी मिलता है। धर्म की स्थापना करने तथा अधर्म को समूल मिटाने के लिए उनका समय लगा है। इस ढंग से उनको उस युग का धर्माचार्य भी कहा जा सकता है। विचित्र हालत थी उस समय। भीष्म जैसा वीर पुरुष, द्रोणाचार्य जैसा शस्त्रशास्त्र का ज्ञाता, कृपाचार्य जैसा गुरु, कर्ण जैसा उदार एवं सारी परिस्थिति को समझने वाला स्वयं धृतराष्ट्र भी धर्म के पथ से विचलित हो गये थे। धन का स्वार्थ प्रधान बन चुका था। द्रौपदी का भरी सभा में घोर अपमान, अधर्म का सर्वत्र बोल बाला देख कर भी आंखें बन्द किए थे। धर्म को अधर्म ने सर्वथा दबा लिया था। धर्म का स्थान धन ने ले लिया था। धर्म के अनुकूल धन न था वरन् धन के इशारे पर आज कल के समान धर्म और धार्मिक लोग नाचते थे। धन ने धर्म एवं धर्मवालों को खरीद कर उन को अन्धा, बहिरा तथा गूंगा बना दिया था। सारा कार्य धनमय बन चुका था धन की मण्डी में सब का सब कुछ बिक चुका था पतन की पराकाष्ठा थी।

ऐसी अवस्था में महात्मा कृष्ण धर्म की स्थापना के लिए मैदान में उतरे। उन का यह जयघोष था— मैं साधनों की रक्षा करने दुष्टों, अन्याईयों का नाश करने एवं धर्म का स्थापन करने के लिए कार्यक्षेत्र में उतरता हूं। जिस का भी अधर्म व अधर्मी से सहयोग होगा उस से मैं टक्कर लूंगा। चाहे वह कोई और कितना बड़ा हो अपना भी क्यों न होवे। ऐसा ही किया भी। एक २ को चुन कर दलित किया। धर्माचार्य बन कर राष्ट्र को एक बना कर उस का शासन भी धर्मपुत्र को दिया। भारत को धर्म क्षेत्र बना दिखाया। उन का धर्मसंस्थापक के नाते यह धर्माचार्य का रूप हमें बड़ा ही प्यारा लगता है। तभी श्री कृष्ण धर्माचार्य भी हैं। आज फिर वैसी अवस्था हो रही है। धर्म और धर्मी टके २ को बिक रहे हैं धन पर धर्म का अंकुश नहीं है। आर्य समाज अपने विशेष प्रभाव के द्वारा फिर धर्म को अपना वही प्राचीन स्थान दिलाने के लिए आन्दोलन करता जाये। धन भी बड़ा जरुरी है। इस के बिना भी गाड़ी नहीं चलती, परन्तु इस पर धर्म की ब्रेक लगानी है। धर्म पताका गिरने न देना। आज इस पर्व पर उस दिव्य धर्माचार्य से सारा समाज उसी धर्मनिष्ठा के लिए प्राणों की बाजी लगा दे— धर्माचार्य श्री कृष्ण अमर रहें।

—त्रिलोक चन्द्र

सभा के शुभ-चि

सद्भाव पैदा की कभी के रूप में घरों को किया। कहीं कीर्तन

आर्य प्रादेशिक सभा में आरम्भ से ही एक विशेषता रही है कि विचारों में समय २ पर भेद प्रकट होने पर भी परस्पर मनों में अभेद ही होता है। सारे मिलकर सभा की उन्नति में लगे रहते हैं। यह युग भाग प्रधान है, भोगों में मानव समाज की भक्ति व रुचि है। उसी में जनता लगी रहती है। धर्म की ओर कम ध्यान दिया जाता है। आर्य समाज पैदा ही धर्म प्रचार के लिए है। सभा का तो कार्य ही यही है कि वेद प्रचार के द्वारा जन जन तक धर्म का सन्देश पहुंचाया जाय। इसके लिए प्रचारकों के मण्डल की आवश्यकता है। उनको भी निश्चिन्त करने के लिए साधन तो चाहिएं। वास्तव में यह काम सन्यासियों वानप्रस्थियों एवं निश्चिन्त लोगों का है। परन्तु सन्त विरले हैं, वानप्रस्थ अंगुलियों पर ही गिनने वाले हैं। जो निश्चिन्त भी हैं उनको तो दूसरों से भी अधिक चिन्ता है। प्रचारक बने तो कौन? अपने परिवार में किसी को भी कोई प्रचारक क्षेत्र में नहीं डालना चाहता। सब चाहते हैं, दूसरों के युवक प्रचारक बनकर धर्म प्रचार करें। फिर भी समाज का काम प्रभावशाली है इसका गौरव है।

हमारी सभा... और पाप का है कि इसे बड़े कहीं भक्ति चिन्तक मिले हैं, । उदारता से सभा अपने कर्तव्य पालन करने में सक्षम हो रही। आर्य जगत् के तपस्वी महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज के आगे किस का मस्तक श्रद्धा से नत नहीं होता? सभा को सदा सहयोग देते हैं। आड़े एवं विषमसमय में अपना हाथ रखते हैं। अभी २ आर्य समाज वजीरबाग श्रीनगर से दो हजार रुपये सभा में भिजवा दिये हैं। आर्य जगत् में प्रकाशित उन का दिल को तड़पा देने वाला लेख 'भूखे को भोजन दो' किसे प्रभावित नहीं करता। इसी प्रकार डी. ए. वी. कालेज जालन्धर के मान्य प्रिंसिपल श्रीयुत भीमसेनजी बहल ने अपने कालिज से बाहर सौ रुपये तथा अपनी ओर से एक सौ डाल कर तेरह सौ की राशि दी है। डी.ए. वी. कालेज अमृतसर के मान्य प्रिंसिपल श्रीयुत सी. एल. अरोड़ा ने भी एक हजार की राशि सभा को भेजी है। टोहाना के सभा प्रेमी श्री बृजलाल जी गुप्ता ने अपना सौ रुपया तथा उन के भ्राता श्री मिट्ठन लाल जी ने डेढ़ सौ रुपया, इस प्रकार ढाई सौ की राशि भिजवाई है। फिरोज पुर चौक समाज के मान्य प्रधान श्री ला. मेहर चन्द जी अग्रवाल ने अपने समाज के सज्जनों तथा माता सीता देवी जी स्त्री समाज के सहयोग से पांच सौ इक्यावन रुपये भेंट किये हैं। राजौरी समाज के मान्य भाई बहिनों ने भी पांच सौ रुपये भेजे हैं। सांबा से भी सौ रु० मिले हैं।

सभा का प्रचारक मडल कर्तव्य में परायण है। सभा के महामन्त्री श्री युत ज्ञान चन्द जी भाटिया दैनिक रूपसे सभा कार्यालय में काफी समय दे कर सभा को हर प्रकार से उन्नत करने में जुटे हुए हैं। माननीय प्रधान प्रिंसिपल पं. रलाराम जी एम. ए. सभा के लिए दौड़े फिरते हैं। यह सब देख कर मन प्रसन्न होता है। सारे कालेज, स्कूल, समाजें व सज्जन भी यदि ऐसी कृपा करें तो कमी क्या है।

—त्रिलोक चन्द्र

(गतांक से आगे)

अतः वेद के विशेषणादि कहते हैं ? हो गया कि 'अकायमव्रणम' से सिद्ध अर्थ शरीर रहित हो जिस से लोक न्नादिभिः चिव्र ... का सुझाव हो)

—देहे—वन स्वाभाविक गुणों का अ+ई जिसका होना ही वस्तु की सत्ता को स्थिर रखना है, यथा तेज और उष्णता अग्नि का धर्म है जहां यह होगी वहां गर्मी और तेज अवश्य होगा। इसी प्रकार मनुष्य जीवन के लिए शरीर के अंग और प्राण हैं परन्तु यदि कोई अंग कट जावे तो मनुष्य जीवन का नहीं होगा हां प्राणों के न रहने पर मनुष्य कदापि जीवित न रहेगा।

प्रश्न—जीवात्मा क्या है ?

उत्तर—जीव आत्मा एक स्वतंत्र सत्ता है जिस का धर्म ज्ञान और प्रयत्न है जैसा कि शास्त्रों में लिखा है। (इच्छा द्वेष प्रयत्न ज्ञान सुख दुःख आत्मनो लिंगानि) चूंकि जीव अल्पज्ञ है अतः अपने दुःखों को दूर करने के लिए आनन्द की प्राप्ति हेतु वह कर्म करता है और आवश्यकता का होना तथा उसकी पूर्ति के साधन का न होना ही दुःख है।

प्रश्न—जीव अल्पज्ञ क्यों है ?

उत्तर—एक देशी अर्थात परिच्छिन्न होने से (एक हालत में न रहने वाला)।

प्रश्न—जीव दुःखों से किस प्रकार छूट सकता है ?

उत्तर—परमेश्वर के जानने और उसकी आज्ञानुकूल करने से।

प्रश्न—ईश्वर एक है या अनेक?

उत्तर—ईश्वर एक है जैसा कि अथर्व वेद में लिखा है (सः एक वृदेक एव) और सारे संसार का एक मात्र वह पति है और सब का पूज्य उपास्य-देव है वह ही इस जगत का निर्माता है।

प्रश्न—ईश्वर के होने में क्या प्रमाण है ?

उत्तर—(क) संसार में जो वस्तु भी बनी हुई है उसके बनाने

सच्चा धर्म

(ले० श्री मदनजित जी आर्य फ़िरोजपुर शहर)

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

वाला अवश्य होता है चाहे वह वस्तु हमारे सामने न भी बनी हो, जैसे रोटी, खिलौने, मेज कुर्सी, छड़ी आदि इसी भांति पुस्तकें जो हम प्रायः पढ़ते हैं उनके लेखकों को यद्यपि हम ने नहीं देखा इस पर भी यह स्वीकार करना पड़ेगा कि किसी ने इनको अवश्य ही लिखा है। संसार में दो प्रकार की वस्तुएं दृष्टि गोचर होती हैं। एक मनुष्य दूसरी पशु आदि की बनाई हुई परन्तु कई ऐसी वस्तु भी बनी हुई दिखाई पड़ती हैं जिस को न तो किसी मनुष्य ने रचा और न ही पशु पक्षी ने, वह हैं सूर्य तथा चन्द्र, पृथ्वी पहाड़ आदि। जो हमारे पूर्वजों से भी पूर्व विद्यमान थे। यद्यपि हम ने ताज महल को नहीं देखा किन्तु हमारे पूर्वजों के कहने, लिखने मात्र से हम स्वीकार कर लेते हैं कि यह ताज महल भी किसी मनुष्य ने अवश्य बनाया होगा। इसी प्रकार इन सूर्य चन्द्र को भी कोई न कोई अवश्य बनाने वाला है चाहे हम ने या हमारे पूर्वजों ने उनको स्व चक्षु से न देखा हो।

मैं आप को एक दृष्टांत से समझाता हूं। तनिक स्व शरीर पर दृष्टि पात करें आप के शरीर के अंग किस ने बनाये ? क्या आपने इस संसार में कोई ऐसा कारखाना देखा है जहां मनुष्य के अंग इस प्रकार बनते हों आप यह तो कह देंगे कि मेरी माता के गर्भ में बने वाला कौन है ? माता को तो स्वयं पता ही नहीं होता कि मेरे गर्भ में लड़का है या लड़की, काला है या गोरा ? यदि माता इन अंगों की निर्माता होती तो निःसन्देह उन सब अंगों के प्रति ज्ञान रखती अतः सिद्ध हुआ कि इन सब अंगों को निर्माण करने वाली कोई और शक्ति है जिस को हम ईश्वर कहते हैं।

कई भाई कह देते हैं कि ये चीजें स्वयमेव ही बन जाती हैं तनिक इस पर ध्यान से विचार करें। मिट्टी से बरतन घड़ा आदि बनता है तो पहली अवस्था मिट्टी से क्या अपने आप घड़ा बन जावेगा ? कदापि नहीं हां कुम्हार के ज्ञान में घड़े की दोनों अवस्थायें अर्थात् मिट्टी और घड़ा विद्यमान थीं। इसी प्रकार हलवाई की दुकान पर घी, खांड, मैदा इत्यादि सब सामान पड़ा रहता है। क्या आपने आप कभी मिठाई बन जाती है ? कई भाई कह देते हैं कि जैसे एक बीज से वृक्ष स्वयमेव बन जाता है परन्तु वे यह नहीं सोचते कि यदि उस बीज की शक्ति नियम युक्त थी तो एक हद (सीमा) पर वह चलकर आगे क्यों बन्द हो जाती है ? अर्थात यदि आम की गुठली में तने, पत्ते फल फूल आदि बनाने की शक्ति है तो पुनः वह तखते मेज कुर्सी क्यों न बन गये। इसी प्रकार बिनौले से कपास तक बनने में सब अवस्थायें तो तय करलीं जो कठिन थीं और कपास से जो कपड़ा बनना आसान काम था वह बीज न बना सका। वहां उसका विकास क्यों रुक गया ? अतः यह सिद्ध हुआ कि किसी भी जड़ वस्तु में अपने आप गति करने या दूसरी वस्तु बनाने की शक्ति पूर्ण रूप में नहीं है।

कई भाई यह भी कह देते हैं कि संसार को बनाने वाली एक फर्जी सत्ता है अर्थात केवल विश्वास करने के लिए बनाली गई है। वस्तुतः संसार का कोई रचियता नहीं। सब कुछ कुदरत या नेचर से होता है। तनिक वे भाई ध्यान करें कि यह कुदरत या नेचर विशेष्य है या विशेषण, निर्माता है या निर्मित ? यदि नेचर उस सत्ता का नाम है जो संसार की सब वस्तुओं को बनाती है तो पुनः ईश्वर अथवा नेचर के नाम मात्र में ही भेद रह जावेगा और यदि नेचर शक्ति नहीं तो यह किस बला का नाम है ? क्या सूर्य का नियम पूर्वक उदय अस्त होना, गुलाब के पुष्प में कांटों का होना, अग्नि का जलना, वायु का चलना पानी बरसना इत्यादि जो भी कार्य हो रहे हैं नेचर शब्द के भीतर छिप गए तो यह निमित (कार्य रूप) सब हो गए पुनः इन का निर्माता कौन है ? यह विचारना पड़ेगा। आज कल के वैज्ञानिक जो सर्वदा प्रत्येक वस्तु की खोज में लगे रहते हैं उन्हों ने भी अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'साईन्स ऐंड रिलीजन' में पृष्ठ ४८ पर यह लिखा है—

To sum up this part of our argument we can say that scientific study most certainly shows us the presence in this physical universe of an order stability, Directing power and intelligibility and Capability of being understood by us. These qualities are not spontaneously produced. They do not come by chance. They are not the result of mere accident and intelligence. This Universe is not merely a thing, it is a thought and thought implies and necessitates a thinker. Hence there is in this Universe a supreme Thinker or Intelligence of which our intelligence is but the faint copy and image.

गीता और देश का निर्माण

(श्री ज्ञानसिंह जी, नई दिल्ली)

भारतीय साहित्य में गीता का स्थान बहुत महत्त्वपूर्ण है। श्री विनोबा भावे जी ने गीता से अपना सम्बन्ध बतलाते हुए लिखा है कि मेरा शरीर माता के दूध पर जितना पला है उससे कहीं अधिक मेरा हृदय व बुद्धि गीता माता के दूध से बने हैं। इसी पुस्तक के विषय में लिखा गया है कि जितने उपनिषद् हैं वह मानो गौऐं हैं। श्री कृष्ण स्वयं दूध निकालने वाला ग्वाला है। बुद्धिमान अर्जुन बछड़ा है। गीता अमृत रूपी दूध है। तिलक महाराज ने इस पुस्तक के बारे में लिखा है कि बातों के समान बालबोध ग्रन्थमें प्राप्त नहीं, इस ग्रन्थ में जीवात्मा की नित्यता पर जिस प्रकार प्रकाश डाला गया है किसी अन्य ग्रन्थ में मिलना कठिन है। ज्ञानयोग, कर्मयोग, व भक्ति योग के रहस्य को खोलकर दर्शाया गया है। कर्मयोग फिलासो की उलझनों को बहुत अच्छी प्रकार से हल किया गया है। यह जीवन फिलास्फीकी अद्वितीय व्याख्या है।

कर्म में लगे रहो—गीता में श्री कृष्ण कहते हैं कि मनुष्य कर्म करने के बिना रह ही नहीं सकता। कर्म करना उसका स्वभाव है हां यह बात अवश्य है कि यदि शुभ-कार्य नहीं करेगा तो इस बात की सम्भावना है कि वह अशुभ कामों की ओर आकृष्ट होगा। आगे वह कहते हैं कि मनुष्य का धर्म है कि काम करे, परिश्रम करो। दुनियां में परिश्रम कर के अपना रास्ता निकालो। आलस्य व प्रमाद का त्याग दो। श्री नेहरू जी का भी यही नारा था कि 'आराम हराम है।'

भाग्य नहीं पुरुषार्थ मुख्य है—मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता है। जैसा कर्म वह करता है वैसा ही फल मांगने का वह अधिकारी बन जाता है। वही उसका भाग्य बन जाता है। जब से हमारे देश के लोगों ने परिश्रम करना छोड़ दिया, देश का पतन हो गया। देश उद्योगिक कृषि, आर्थिक, व्यापारिक व राजनीतिक तौर पर बलहीन हो गया और फिर दासता की कड़ियों में बंधा रहा। दूसरे देशों ने जो भाग्य पर नहीं बल्कि अपने बाहुबल व बुद्धि पर विश्वास रखते थे परिश्रम किया और इसके फलस्वरूप उन्होंने पहाड़ों को चीरा नदियों पर पुल बांधे, समुद्रों की छाती पर जहाज बनाये. बिजली को सेवक बनाकर उससे नाना प्रकार की सेवाएं ली, विज्ञान की सारी उन्नति परिश्रम व पुरुषार्थ का फल है। वही जातियां उन्नति के शिखर पर पहुंचती हैं जो परिश्रम करती हैं। रुकावटों व विपरीत अवस्थाओं का सीना तानकर मुकाबला करती हैं और असफलता से हतोत्साह नहीं होती। किसी कवि ने ठीक कहा है—

वही लोग पाते हैं इज्जत जहां में,
जो करते हैं दुनियां में मेहनत ज्यादा।

देश का नवनिर्माण हो रहा है—स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त हमने इस परिश्रम व पुरुषार्थ के महत्व को समझा और देश के निर्माण का संकल्प किया। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए योजनायें बनायी गयी हैं, दो पंचवर्षीय योजनाएं पूर्ण हो गयी हैं जिन पर लगभग सात हजार करोड़ रुपये व्यय हो चुके हैं। तीसरी योजना चालू है जिस पर दस हजार दो सौ करोड़ रुपये के व्यय होने का अनुमान लगाया गया है। भाखड़ा जैसे बांध बांधे गये हैं। नहरों का जाल बिछाया जा रहा है। जल के अभाव में रेगिस्तान बने हुए इलाके हरे भरे हो गये हैं। अन्न की उपज बढ़ाने के लिए नये नये साधन उपयोग में लाये जा रहे हैं। लोहा तैयार करने के लिए बड़े-बड़े कारखाने लगाये गये हैं। कीमयाई खाद व दवाइयों के बनाने की फैक्टरियां लग गई हैं। तेल साफ करने, रेल गाड़ियां इंजन, मोटरों, हवाई जहाज व अन्य मशीनों के बनाने के कारखाने स्थापित किए गये हैं अथवा किये जा रहे हैं। बिजली का उत्पादन बढ़ाने के लिए भी प्रबन्ध किया गया है। बड़े-बड़े कल उद्योगों के अतिरिक्त घरेलू व छोटी छोटी दस्तकारियों को भी बढ़ावा दिया जा रहा है। सारांश यह है कि हर संभव यत्न किया जा रहा है कि देश अपनी आवश्यकताओं पूरा करने के लिए दूसरे देशों का मुंह न देखता रहे। अगर हो सके तो दूसरे देश हम से वस्तुएं खरीदें। देश में केवल अधिक धन पैदा करने की योजनायें ही नहीं बनाई बल्कि अज्ञानता व बीमारियों को भी दूर करने का प्रबन्ध किया गया है, स्थान २ पर अस्पताल स्थापित किये जा रहे हैं। स्कूलों व कालेजों में की संख्या में भी प्रतिदिन वृद्धि हो रही है।

गांवों की ओर विशेष ध्यान—देश की ८३ फी सदी साढ़े पांच लाख जनता गावों में रहती है। उन के जीवन के स्तर को उन्नत करने पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। गांव के निवासियों के अन्दर आत्मविश्वास और स्वावलंबन की भावना पैदा की जा रही है। जहां यह यत्न हो रह है कि देश में कारखानों की गिनती बढ़े अन्न की उपज वहां यह भी यत्न किया जा रहा है कि बढ़ता हुआ धन थोड़े से लोगों के पास ही इकट्ठा न होने पाये। अमीर ज्यादा अमीर व गरीब न होते जाएं। धन का वितरण समानता से हो।

दुराचार की सड़ान्द पैदा की कभी ब्रह्मकुमारियों के रूप में घरों को विशृंखलित किया। कहीं कीर्तन भूमि नाम पर पाखण्ड और पाप का बाजार गर्म किया तो कहीं भक्ति मुल्नाम पर भ्रष्टाचार ...

इस समय हमारे देश की कई समस्याओं में एक प्रमुखतम भ्रष्टाचार उन्मूलन की है जिस की ओर से आंखें नहीं बंद करनी चाहिए। यदि हम सही मानों में देश का निर्माण करना चाहते हैं तो आवश्यक है कि इस समय लगातार बढ़ रही भ्रष्टाचार, चोर बाजारी व खाद्य पदार्थों की मिलावट पर कड़ाई के साथ रोक लगायी जाए। कर्तव्य की अपेक्षा अधिकार पर बल न दिया जाए। केवल भौतिक उन्नति से काम नहीं चल सकता। चरित्र निर्माण के बिना हमारी आजादी भी खतरे में पड़ सकती है। इसी प्रकार भाषा साम्प्रदायिकता, जात पात, सत्ता परस्ती व स्वार्थ इत्यादि की बढ़ोतरी बहुत हानिकारक है। भोग विलास की और फैशन परस्ती में वृद्धि चिन्ताजनक है। नैतिक बन्धन ढीले हो रहे हैं। कोई देश केवल बड़े-बड़े भवनों, बान्धों, सड़कों व कारखानों से महान नहीं हो सकता। यह सब कुछ आवश्यक है परन्तु यह वस्तुएं बाहरी निर्माण हैं। आन्तरिक निर्माण अर्थात चरित्र निर्माण सब से प्रथम जरूरी है। एक प्राणहीन पर सुन्दर व विशाल शरीर की कोई कीमत नहीं। ठीक यही हालत उस राष्ट्र की है जिसके लोगों का चरित्र गिरा हुआ है। यूनानी दार्शनिक प्लेटो ने भी यही कहा है, राष्ट्र पहाड़ों व वृक्षों से नहीं बनते। बल्कि अपने नागरिकों के चरित्रों से बनते हैं। इस चरित्र निर्माण के कार्य में भी कृष्ण भगवान का उपदेश हमारी सहायता करता है। गीता में भगवान् कहते हैं निज धर्म अर्थात् अपने धर्म का कभी

(शेष पृष्ठ ६ ?)

योगेश्वर कृष्ण

...हितैषी (उपदेशक सभा)

(गतांक से आगे)

अतः वेद के विशेषणादकहते हैं ? हो गया कि 'अकायमव्रणमस्नाविर सिद्धि अर्थ शरीर रहित हो जिस से लोकन्नादिभिः चिव.. का सुयाग हो) —देहे—वन स्वाभाविक गुणों का य कहलाने वाला का... आज चार अरब के लगभग होगी, पर मानवता करोड़ों में होगी, वही संसार में ऊंचा स्थान पाते हैं उन्हीं की याद में मेले लगते हैं। जन्म दिवस व बरसियां मनाई जाती हैं। ये भारत भूमि ऐसी है जिसमें समय २ पर सच्चे मानव पैदा हुए, उनमें पराक्रमी उद्धारचरित मानव सम्पन्न गुण योगेश्वर कृष्ण आज जिन्हें ५१२६ वर्ष लगभग होते हैं। इनके काम इतने आदर्श भरे हैं जितना इस युग में महाराज कृष्ण का ऊंचा स्थान है उतना शायद किसी को इतना गौरव प्राप्त हो किसी भी महा-पुरुष की तुलना करना ठीक नहीं पर यह सचाई है महाराज श्री कृष्ण जैसा, मर्यादा पुरुषोत्तम कहलाने वाले श्री राम चन्द्र जी को भी स्थान प्राप्त नहीं, कृष्ण जी को सोलह कला सम्पूर्ण कहते हैं इस का अर्थ ये है जो एक आदर्श मानव में उच्च गुण हो वही महाराज कृष्ण में हैं। इस कलयुग कहलाने वाले समय में कितने मत ऐसे हैं जिन के संस्थापक कृष्ण बनने का दावा करते हैं। राम बनने का दावा नहीं करते क्योंकि श्री कृष्ण का स्थान चोटी का है पराक्रमी, दयालु, न्याय प्रिय और चरित्रवान योगीराज इतने उच्चे गुण किसी विरले ही महापुरुष में होंगे, महाभारत काल में दादा भीष्म जैसे भी महाराज कृष्ण का ही आदर करते थे आज हर व्यक्ति अपना नाम कृष्ण तो रखता है परन्तु दुर्योधन रखने में लज्जा करता है महाराज की गीता मुर्दा व्यक्ति में भी जीवन सा डाल देती है, परन्तु आज अन्ध श्रद्धालु भक्त

महाराज कृष्ण के नाम लेवाओं ने इन के नाम को कलंकित कर दिया है प्रेम सागर आदि पुस्तके पढ़ने से पता चलता है इन लोगों ने कितना कृष्ण को बदनाम किया कहीं किश्ती में सैर के बहाने कुब्जा को रगड़ते बताया सखियों के साथ रंग रलियां करते दिखाया होलीयों में रंग डालते दिखाया १६००० से ऊपर रानियां बताना ये महा मूर्खता की बात है। कोई होगा उस जमाना ऐसा और कृष्ण पर हम जिस कृष्ण की चर्चा कर रहे हैं वे हैं मानवता के स्वामी योगेश्वर कृष्ण जिन्होंने केवल एक ही विवाह किया वे भी रुकमणी से, १२ वर्ष ब्रह्मचर्य रह कर अपने जीवन को कुन्दन बनाया जिन के तेज से पापी कंस और जरासन्ध, शिशुपाल जैसे निर्दयी राजा लोग भी थरथराते थे। चरित्रहीन व्यक्ति में कभी तेज नहीं हो सकता। वर्तमान युग के निर्माता दयानन्द सरस्वती ने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में महाराज कृष्ण को योगीराज और आप्त पुरुष लिखा है यानी जिस पुरुष ने जीवन में कोई पाप न किया हो उसे आप्त पुरुष कहते हैं। महाराज कृष्ण अपने युग में एक आदर्श कृष्ण थे सारे संसार में सन्मान था आज जो भी उठता है कृष्ण बनता है हर आर्य प्रतिवर्ष महाराज की जन्माष्टमी हर गांव कस्बे और बड़े २ नगरों में आबादी के मुताबिक कृष्ण पैदा किये जाते हैं तथा इनकी झांकियां दिखाई जाती हैं। उतना ही ये देश गिरावट की ओर जाता है इन नकली कृष्णों से दुनिया नहीं बदलेगी जब असली एक ही कृष्ण जन्म लेगा तब इस बिगड़े हुए देश को सुधरता देखना इनके नाम की दुकानें जलाने वालों को भागते देखना मेरा देश महाभारत बनेगा। जैसा वे बड़ा महाभारत बनाना चाहते थे। वे तो छोटे २ राजाओं को समाप्त कर इस छोटे भारत को महाभारत बनाना उन का लक्ष्य था, पर अफसोस कृष्ण के अनुयायी महाभारत तो एक तरफ रहा देश के टुकड़े २ करते जा रहे है और कहते ये हैं हम महाराज कृष्ण के अनुयायी है ये सरासर श्री कृष्ण से धोखा है यदि अपने को कृष्ण के भक्त कहते हो तो सही अर्थों में कृष्ण की नीति अपनाओ पाकिस्तान, नेफा और लद्दाख की धरती तब आप को मिलेगी काश्मीर की समस्या कृष्ण के कर्मकाण्डी उपदेश से हल होगी, क्या हम ये सोचने का प्रयत्न करेंगे कि महाराज कृष्ण क्या थे और हम क्या है और वे कहां थे और वे कहां है तब मैं समझूंगा हम ने मानवता के स्वामी योगेश्वर कृष्ण को समझा।

रोहतक आर्यजगत के समाचार

वेद सप्ताह—दिनांक १७ अगस्त से २३ अगस्त (२ भाद्रों से ८ भाद्रों) तक श्री दयानन्द मठ में बड़ी धूमधाम से मनाया गया। जिस मे चोटी के विद्वान पधारे थे। कार्यक्रम प्रातः मध्यान्ह पश्चात तथा रात्री का रोचक बनाया गया था।

वेद सप्ताह-कृष्णजन्माष्टमी यह पर्व आर्यसमाज कालिज विभाग प्रधाना मोहल्ला में दिनांक २४ अगस्त से ३० अगस्त तक मनाया जावेगा जिस में पं० चन्द्रसेन जो उपदेशक वेद की कथा करेंगे।

गीता और देश का निर्माण

(पृष्ठ ५ का शेष)

त्याग न करो अर्थात् अपना कर्तव्य पालन एक ऐसी औषधि है जो बड़ी अद्वितीय है और इस के द्वारा सब समस्याओं को हल किया जा सकता है। यदि व्यापारी, कारखानादार, कारखानों में काम करने वाले लोग, सरकारी अफसर व कर्मचारी, पेशेवर लोग, अर्थात डाक्टर, वकील आदि अपना कर्तव्य ईमानदारी, मेहनत से पूरा करें और उस उत्तरदायित्व को जो उन्होंने अपने ऊपर ले लिया है ईमानदारी व नेकनीयती से पूरा करें तो चोर बाजारी व खाद्य वस्तुओं में मिलावट नहीं रहेगी। तब हड़तालों की भी आवश्यकता न रहेगी, न प्रदर्शन होंगे, रिश्वत आदि नाम को भी न रहें। हमारी देश निर्माण की योजनायें अधिक सफल होंगी। हमारा धन व्यर्थ नहीं जाएगा। गबन की कोई संभावना नहीं रहेगी। बीमारों दुखियों व निधनों की सेवा ज्यादा अच्छी तरह होगी। ईर्षा के भाव नहीं रहेंगे। असन्तोष के स्थान पर सन्तोष, निराशा के स्थान पर आशा की लहरें चलेंगी। देश उन्नतिशील होगा। वोटर और उम्मीदवार अपने अपने कार्यों का यदि अच्छी तरह पालन करें तो प्रजातन्त्र की बुनियाद अधिक दृढ़ हो जाएगी।।

सब से बड़ा धर्म राष्ट्रीयता—यदि प्रत्येक नागरिक अपने अपने कर्तव्य को निभाये तो दे आये दिन दृष्टिगोचर होने वाली फूट दलबन्दी, व झगड़े दिखाई नहीं देंगे।

हम अपने कर्तव्य का पालन करें यही गीता का संदेश है और यही देश निर्माण का साधन है।

न मृत्यवे अवतस्थे कदाचन (मैं कदापि नहीं मर सकता)।

मैं आत्मा हूं, शरीर नहीं।

श्री कृष्ण और नारि

(ले०—सुशीला आर्या एम. ए. कन्या गुरुकुल, नरेला)

यह अत्यन्त खेद तथा दुर्भाग्य की बात है कि योगीराज श्री कृष्ण जितने उच्चाचार के धनी थे उतना ही हम ने उन्हें पतन के गढ्ढे में धकेला। हिन्दी के तथा कथित भक्तिकाल तथा रीति काल के साहित्य में श्री कृष्ण विषयक अनेक कपोल कल्पित विवरणों द्वारा उन पर जो कीचड़ उछाला गया है उस से इन के दुग्ध धवल यशस्वी चरित्र का तो क्या बिगड़ना था परन्तु "चान्द पर थूको तो मुंह पर गिरता है" इस उक्ति के अनुसार हम अभागे अवश्य उन की ऊंचाई को छूने से वंचित रह गए। श्री कृष्ण जी के कट्टर शत्रु शिशुपाल ने शतशः गालियों में भी जिस आचार हीनता का दोष आप पर लगाने का दुःसाहस न किया वही कुत्सित और बीभत्स कलङ्क उन के उपासक तथा भक्त होने का दम भरने वाले हम ने सहज ही उन पर थोप पुनः लज्जा से सिर झुकाने के स्थान पर अपने को गौरव शाली समझा। कैसी विडम्बना है। विनाश काले विपरीत बुद्धि इसी का तो नाम है।

सौभाग्य कहिए कि महर्षि दयानन्द द्वारा सचेत किए जाने पर हम ने अन्य भूलों के साथ-साथ इसे भी समझा। सत्यार्थ प्रकाश में महर्षि ने लिखा है। 'श्री कृष्ण का चरित्र महाभारत में अत्युत्तम है।' स्वामी जी महाराज ने योगेश्वर कृष्ण को आप्त पुरुषों की कोटि में रख कर हमारी आंखें खोल दीं तथा उन के पदचिह्नों पर चलते हुए उन्नति करने का पथ भारतीयों के लिए प्रशस्त कर दिया।

पतनकाल के साहित्य में श्री कृष्ण पर लगाए सभी दोषों के मूल में उनकी नारी जाति के प्रति दृष्टि-कोण की भ्रमात्मकता है। उन पर अनेक गोपियों के सहवास असंख्य पत्नियों के पति होने का मिथ्यारोप करना लोगों का जन्म सिद्ध अधिकार बन गया था। तत्कालीन साहित्य पर एक विहङ्गम सी दृष्टि डालने वाला व्यक्ति भी श्री कृष्ण के वास्तविक उच्च चरित्र से विलग एक अत्यन्त घिनौनी धारणा उनके विषय में बनाने को बाधित हो जाता है। किन्तु तथ्य क्या है? उनका नारी के प्रति वास्तविक दृष्टिकोण एवं व्यवहार कैसा रहा यह विचार का विषय है।

एक व्यक्ति जितना ही अधिक विलासी एवं इन्द्रियों का दास होता है उसका नारी जात के प्रति उतना ही हीन दृष्टिकोण होता है इसके विपरीत ब्रह्म चर्य के प्रति अधिका-धिक लगाव तथा आस्था रखने वाला नारी को सदैव सम्मान की दृष्टि से देखता है। ऋषि के सम्बन्ध में भी यह परीक्षित सत्य है और यही योगीराज कृष्ण के विषय में प्रकट रूप से व्यक्त है। हमें भूलना न होगा कि वे गृहस्थ होते हुए भी ब्रह्मचर्य के प्रति प्रगाढ़ निष्ठा रखते थे। तभी तो उन्होंने विवाहोपरान्त भी पत्नी सहित बारह वर्ष तक कठोर ब्रह्मचर्य व्रत का पालन किया धन्य योगीराज! क्या ऐसे उच्च चरित्र का महापुरुष नारी को कभी भोग की वस्तु मान सकता है? कदापि नहीं?

जो लोग श्री कृष्ण पर अन्धा-धुन्ध गोपी सगम आदि निराधार आरोप करते हैं उन्हें याद रखना चाहिए कि किशोरावस्थासे इस प्रकार का जीवन व्यतीत करने वाले किसी भी व्यक्ति के लिए पत्नीव्रती ब्रह्म-चारी रहना कठिन नहीं अपित असम्भव है। उनका परवर्ती संयत और महान जीवन पूर्ववर्ती जीवन की जीती जागती झांकी प्रस्तुत करता है। सच तो यह है कि संसार में कोई भी आचारहीन व्यक्ति कभी उन्नति के शिखर पर आरूढ नहीं हो सकता। उनकी सर्वतोमुखी महानता उनकी सच्चरित्रता का अकाट्य प्रमाण है। कुछ लोग तो मृत्यु के पश्चात ही पूजे जाते हैं किन्तु वे अपने जीवन काल में ही शिष्टों द्वारा कैसे सम्मानित एवं पूजाई थे यह महाभारत पुकार कर कह रहा है।

वास्तव में श्री कृष्ण नारी का मान करते थे। वे एक अच्छे पुत्र थे। उन्होंने अपनी जननी को कष्ट-कारावास से मुक्ति दिलाई। वे एक अच्छे भाई थे। अपनी बहिन सुभद्रा के विवाह के प्रसङ्ग में वे थोथे मानापमान की भावना को को तिलांजलि देकर वीर वर अर्जुन को उसका हाथ पकड़ाना चाहते थे और यही हो कर रहा। वे एक निष्ठावान पति थे। देवी रुक्मिणी की भावनाओं को समझते हुए उन्होंने उनका आदर किया, उसे ठुकराया नहीं। पुनः नारी समागम का उच्च लक्ष्य स्वीकारकर ब्रह्मचर्यव्रत निर्वाह करने के उपरान्त प्रद्युम्न जैसे वीर पुत्र को जन्म दिया। नारी का अपमान उन्हे कदापि सह्य न था। स्वयं तो क्या औरों के द्वारा भी वे देवियों को प्रताड़ित होते न देख सकते थे।

खेद कि स्वयं नारी जाति ने उन्हें समझने में भारी भूल की है। अपने हितैषी को हमने घातक बना कर खड़ा कर दिया। क्या अनर्थ नहीं किए हमने उनके नाम पर कहीं देवदासियों के रूप में देश में दुराचार की सड़ान्द पैदा की कभी ब्रह्मकुमारियों के रूप में धर्म को विशृंखलित किया। कहीं कीर्त्तन के नाम पर पाखण्ड और पाप का बाजार गर्म किया तो कहीं भक्ति के नाम पर भोगवाद का डंका पीटा। निश्चय ही यदि नारी जाति खुली आंखों से उनके चरित्र का अध्ययन करे तो उनके सदृश हितैषी ढूंढे न पायगी। किन्तु उन्हें रसिया कह कर हमने जीवन के रस में विष घोल लिया। उन्होंने तो सदैव नारी जाति की मर्यादा रक्षा के लिए संघर्ष वा युद्ध किया किन्तु हम कृतघ्नों ने उनका मान मिट्टी में मिला दिया। यह एक कल्पणा-जनक कथा है। कृष्णचरित्र को पतन की ओर ले जाने में नारी ने गर्हित भाग लिया है जो उसके माथे पर एक बड़ा कलङ्क है। कर्त्तव्य तो हमारी माताओं का यह था कि कृष्ण जैसे पुत्रों को जन्म देती वे तो उल्टे उनके मुख पर कालिख पोतने को उतारू हो गईं और मनमानी की। अच्छा है आरतीय नारी अब भी होश करे सुबह का भूला नहीं कहलाता। अपने उपकारक को सही रूप को समझना और अपनी सन्तान को उनके पद चिन्हों पर चलने के लिए प्रेरित करना यही उनका जन्म-दिवस मनाने का सर्वोत्तम ढंग और महत्व पूर्ण लक्ष्य हमारे लिए हो सकता है। अन्यथा हम जहां हैं वहां भी न रहेंगे। हमारा उत्तरोत्तर पतनोन्मुख रुख इसकी प्रत्यक्ष साक्षी दे रहा है।

आर्य समाज मलोगढ़ा

१५ अगस्त सन १९६४ को मन-सार स्कूल में श्री नत्थु राम जी महाजन ने झंडा की रसम अदा करने के बाद स्कूल के बच्चों को इनामात दिये और मिठाई बांटी मनसार निवासियों ने बड़े उत्स से स्वतंत्रता दिवस मनाया।

नत्थूराम महाजन
आर्य समाज म-ड़ा

आर्य प्रादेशिक उपसभा देहली का चुनाव

प्रधान—श्री हरिश्चन्द्र जी एम० ए० प्रिंसीपल डी० ए० वी० H/S स्कूल चित्रगुप्त रोड नई देहली, उपप्रधान—श्री शांति नारायण जी प्रिंसीपल हंसराज कालिज देहली—६, श्री गणपतराय तलवाड़, श्री रामदास जी खोसला प्रि० डी० ए० वी० H/S स्कूल दरिया गंज देहली, मंत्री—श्री [illegible] जी शास्त्री ज्येष्ठाध्यापक डी० ए० वी० H/S स्कूल चित्रगुप्त रोड नई देहली, उपमंत्री—श्री रामनाथ जी सहगल पंजाब नेशनल बैंक पहाड़ गंज नई देहली, श्री दरबारी लाल जी एम० ए० अधीक्षक, श्री जैमुनी जी एम० ए०, कोषाध्यक्ष—श्री राम कुमार जी देहली, लेखा-निरीक्षक—श्री मेहरचन्द्र जी पुरी पंजाबी बाग देहली।

दरबारी लाल उपमंत्री

श्री आशुराम जी आर्य की सुपुत्री संतोष कुमारी एम.ए.

आर्यजगत के पाठकों को यह पढ़कर आश्चर्य होगा कि श्री आशुराम पुरोहित सैक्टर ८ चंडीगढ़ की सुपुत्री संतोषकुमारी ने १६ वर्ष की आयु में शास्त्री पास करके १७ वर्ष की आयु में संस्कृत की एम. ए. ५०३ नम्बर लेकर प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुई है। तथा १६॥ वर्ष की आयु में M.A. M.O.L. की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली है इस सफलता के लिए आर्यजगत की ओर से बधाई हो।

पं० चन्द्रसैन जी मध्य प्रदेश के भ्रमण से वापिस

आप लगभग दो मास का भ्रमण करके मध्य प्रदेश के प्रसिद्ध नगरों में वेद प्रचार का कार्य करते हुए पंजाब में वापिस पहुंच गए हैं। इस भ्रमण में आप ने सभा के लिए तथा आर्य जगत के लिए धन संग्रहार्थ काफी परिश्रम किया है। और उन्हें सफलता भी प्राप्त हुई है।

ले चक्र-सुदर्शन आ जाएं

(रचयिता—पिशोरीलाल प्रेम, रेणुका (हि०प्र०)

ऐ कृष्ण ! तूं फिर एक बार यहां, भारत में जन्म लेकर आएं !
भारत की हालत देख तेरी, आंखों में आंसू आ जाएं !!
घर-घर में गऊवें पलती थीं, और दूध की नदियां बहती थीं !
गऊओं के बजाय अब घर में, कुत्ते, मुर्गे पाले जाएं !!
सब दूध, मलाई, मक्खन, घी और फल-सब्जियां खाते थे !
अब भंग, अफीम, सुल्फे, गांजे, सिगरेट के नशे में खो जाएं !!
तब मांस-मदिरा का सेवन, करते थे केवल दानव ही !
अब तो मानव भी मांस-मदिरा, अण्डे तक चट कर जाएं !!
तब झूठ बोलना मुश्किल था, अब सत्य बोलना मुश्किल है !
जो झूठ बनाना जानते हैं, उनको सब सर पर बिठलायें !!
तब कंस, दुश्शासन, दुर्योधन को, समझा जाता, था !
अब ऐसे भ्रष्टाचारी जग में, सच्चे नेता कहलाएं !!
तब चोरी करने वालों के, हाथों को काटा जाता था !
अब तो बलेकिये चोरों को फूलों की माला पहनाएं !!
उपदेश तुम्हारी गीता का; सुनने वाला कोई नहीं !
अब सिनेमा-थियेटर के गीतों को, गली-गली फिरते गाएं !!
अब प्रेम की बंसी से कृष्णा, कम भ्रष्टाचार नहीं होगा !
यदि भ्रष्टाचार मिटाना हो, ले चक्र-सुदर्शन आ जाएं !!

आवश्यकता

आर्य प्रादेशिक सभा को कुछ योग्य उपदेशकों और भजनीकों की आवश्यकता है। वेतन योग्यतानुसार दिया जाएगा। सभी प्रार्थी अपने अपने प्रमाणपत्रों सहित प्रार्थनापत्र मंत्री प्रादेशिक सभा निकट कचहरी के पते पर भेजें। प्रमाण पत्रों में आयु, अनुभव, शिक्षा विवरण विस्तार सहित हो प्रार्थना पत्र १५ सितंबर तक आ जाने चाहिए।

मंत्री सभा

श्री कृष्णचन्द्र क्या थे ?

(लेखिका—सुशीला आर्या एम० ए०)

बतलाएं आपको हम श्री कृष्णचन्द्र क्या थे,
अवतार वे नहीं थे, भगवान भी नहीं थे,
नर किन्तु देवता थे।
दुष्टों के साथ टक्कर लेते उठा के चक्र,
पर दीन और दुखी के बेदर्द की दवा थे।
भारत की आन थे वे, गौओं के प्राण थे वे,
निर्बल निराश्रितों का बस आप आसरा थे।
वे कर्म के धनी थे, धर्मात्मा गुणी थे,
वे तेज मूर्ति भी थे, साकार सौम्यता थे।
वे खाण्ड की थे रोटी, तोड़ो जिधर से मीठी,
सुन मुग्ध हों जिसे जन, ऐसी मधुर कथा थे।
ले जन्म से मरण तक, कोई किया न पातक,
कहते ऋषि दयानन्द 'वे आप्त थे महा थे।'
दुष्टों का काल थे वे, भारत का भाल थे वे,
अज्ञान की निशा में नव ज्योति की प्रभा थे।
नीति निपुण अति थे, वे स्वस्थ थे सुमति थे,
होती विजय वहीं पर 'वे धैर्यधर जहां थे।'
अति खेद इसका हमको, समझा न हमने उनको,
परिणाम सामने है हम ठोकरें हैं खाते।
श्री भक्त यह आज धर लें, गुण उनके ग्रहण कर लें,
जन्माष्टमी सफल हो प्रति वर्ष जो मनाते।

निःसन्तान परिवार ध्यान से पढ़ें

यदि आप विवाह के बाद अब तक निःसन्तान हैं तो इस रोग के सफल चिकित्सक श्री पं० श्यामसुन्दर जी स्नातक (महोपदेशक पंजाब प्रतिनिधि सभा) से मिलें या पत्र व्यवहार करें। श्री स्नातक जी भारत के अनेक परिवारों की सफलता पूर्वक चिकित्सा कर चुके हैं।

पूर्ण कोर्स ३ मास-पूर्ण व्यय २००/-

पता—श्याम सुन्दर स्नातक महोपदेशक पंजाब सभा
३०३ रानी बाग शकूर बस्ती देहली

मुद्रक प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टेलीफोन न० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे 6-9-64 वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक ३५) २२ भाद्रपद २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०– ६ सितम्बर १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

यशो मा द्यावा पृथिवी

मुझे द्युलोक और पृथिवी लोक का यश प्राप्त होवे। मै जो भी मोटे २ कार्य करूं अथवा ज्ञान से भरे कर्म करूं अथवा साधारण जनता में रहूं या ज्ञानियों की समाज में दोनों लोकों में मेरा यश कीर्ति होती रही।

यशो मेन्द्र बृहस्पति

और मुझे इन्द्र तथा बृहस्पति का यश मिले। धनवान लोगों में तथा विद्वानों की सभा में मेरा यश होता रहे। मेरी कीर्ति सूर्य के समान चमकती रहे और वायु के समान हो, दूर २ तक फैलती जाये। निन्दा न हो।

यशो भगस्य विन्दतु

मुझे उस परमदेव प्रभु के भक्ति प्रसाद का भी यश प्राप्त होता रहे। जितना भी भक्त समाज हो, प्रभु के प्यारे हैं, उन में भी मेरी कीर्ति होवे। मैं भक्ति रस भी सदा पीता रहूं। प्रभु का भक्त भी बनूं।

सा म वे द से

वे दा मृ त

ओम् देव सवित: प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय। दिव्यो गन्धर्व: केतपू: केतं न: पुनातु वाचस्पतिर्वाचं न स्वदतु ॥

यजु० अ० ३० मं० १

अर्थ—हे (देव) दिव्यगुणों के भण्डार (सवित:) ऐश्वर्य युक्त परमेश्वर! कृपा करके आप (प्रसुव) उत्पन्न कीजिए (यज्ञम्) शुभ कर्म रूप यज्ञ को तथा (प्रसुव) उत्पन्न करें (यज्ञपतिम्) इस प्रकार के यज्ञपति को (भगाय) सुख ऐश्वर्य के लिए आप (दिव्य:) सब के प्रकाशक हैं, (गन्धर्व:) गौ भूमि के धारण करने वाले हैं तथा आप ही (केतपू:) ज्ञान विज्ञान को पवित्र करने वाले हैं। इसलिए देव! (केतम्) ज्ञान को (न:) हमारे (पुनातु) पवित्र करो (वाचस्पति:) वाणी का स्वामी प्रभु (वाचं न:) हमारी वाणी को (स्वदन्तु) मीठी बनाए।

भाव:—भगवान! आप की कृपा से शुभ कर्म रूपी सब का कल्याण करने वाले यज्ञ तथा उत्तम २ परोपकारी यज्ञपति उत्पन्न होते रहें। शुभ यज्ञों की वृद्धि होती रहे। ऐश्वर्य और सुख की वर्षा बरसती रहे। प्रभो! आप सारे दिव्य गुणों के भण्डार हैं, इस भूमि आदि के धारक हैं ज्ञान के पवित्र करने वाले हैं। हम आप के पुत्र है। प्राथना करते हैं कि हमारे ज्ञान को पवित्र बना दो। हमारा ज्ञान, विज्ञान किसी को मारने वाला, कष्ट पहुंचाने वाला तथा किसी का अहित करने वाला न हो अपितु सब का कल्याण मंगल करता रहे। हे वाणी के स्वामिन्। हमारी वाणी में मिठास भर देवें। दूसरों को मीठी लगने वाली वाणी बोलें। हमारी वाणी में कड़वापन न हो। मधुर व स्वादु वचनी बन जायें। —सं.

ऋषि दर्शन

स्त्रिया एक एव पति:

स्त्री का एक ही पति होता है। वैदिक मर्यादा में एक स्त्री का एक ही पति होता है। एक के अनेक पति होना वेद की मर्यादा के विपरीत, नितान्त असंगत है, जीवन की सीमा भी इस से टूटती है।

पुरुषस्यैकैव स्त्री च

इसी प्रकार एक पुरुष के लिए स्त्री भी एक ही होवे। यही वेद का विधान है। बहुनारी प्रथा का होना मर्यादा के विपरीत, कलह का कारण है। घर के नाश का हेतु है। पति पत्नी का विधान वेदसम्मत है।

एकवचनस्यैव निर्देशात्

वेद मन्त्रों में जहां भी स्त्री पुरुष के विवाह की या गृहस्थ की चर्चा आती है, वहां पर एक वचन का ही प्रसंग मिलता है। इस लिए पुरुष के लिए एक स्त्री तथा स्त्री के लिए एक पुरुष का ही विधान है—

भा ष्य भू मि का

अधिष्ठाता—श्री संतोषराज जी सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शा

परमात्मा के मेल से शक्ति तथा ऐश्वर्य की वृद्धि

[ले०—श्री लालचन्द जी, मंसूरी]

हम उस परम तत्व को जो सारी जगती का आधार है सब का आश्रय है सब में ओतप्रोत है सर्व-अन्तर्यामी है और सारी जगती में व्यापक है किन्तु उस से न्यारा है और अपने अमृतरूप में प्रतिष्ठित है, परमात्मा क्यों कहते हैं ?

वह आत्मा का आत्मा, जीवन का जीवन है। वही प्राणों का प्राण हृदयज्योति है और साथ ही विश्व-ज्योति है और है स्वप्रकाश। सब में है और सब को निरन्तर जीवन देता है और कभी अलग नहीं होता सदा साथ रहता है, इसलिए वह परमात्मा है।

हम सत्य और चित्त हैं। हम सत्य और शिव हैं। हम ज्ञान प्राप्त करते हैं भगवान ज्ञानस्वरूप हैं ज्ञानमय हैं। हम भी अमृत हैं अमरतत्व हैं अमर शक्ति हैं और चैतन्य शक्ति भी हैं हम में ज्ञान प्राप्त करने की क्षमता है भगवान तो शुद्धबुद्ध मुक्त स्वभाव आनन्दघन पूर्ण परमसुन्दर हैं। भगवान आनंद-स्वरूप आनन्दमय है। आनन्द और सौन्दर्य भगवान में पूर्ण है हम अणु हैं भगवान विभु है हम केवल अपने शरीर में ही व्यापक हैं भग-वान सारे ब्रह्मांड में प्रत्येक अणु में तथ्य प्रत्येक चर-अचर में हैं। भगवान अनन्त है असीम है। हम अल्पज्ञ हैं हमें तो अपनी आत्म-शक्ति तक का पता नहीं। हम जब अपने आपको जान जाते हैं तब हमारी क्षमता बढ़ती है हमारा साहस और उत्साह बढ़ता है भग-वान तो स्वयं ओजस्वरूप तेजस्वरूप हैं। भगवान से हमारा मेल होना अत्यावश्यक है बिना भगवान के मेल के हम में आनन्द पूर्णता और सौन्दर्य नहीं आता। आत्मा की शक्ति भी बहुत है परन्तु भगवान से मिले बिना आत्मशक्ति का पूर्ण विकास नहीं होता। भगवानसे मिलकर नित्य अपनी शक्तिका विकास करना मानव के लिए अनिवार्य है। मनुष्य की नैतिकता भी भगवान की निकटता के अनुभव करने से उस परम प्रभु से मैत्री करने से सुगम होती है, जो भगवान का सामीप अनुभव करता है और भगवान के गुणों को धारण करता है उस में अलौकिक सामर्थ्य आ जाता है।

भगवान के नाते हम सब आत्मीय हैं। भगवान की भक्ति से भगवान से सबन्ध अनुभव करने से आपस की अन्यता दूर हो जाती है। भगवान के उपासक ही भिन्नता में अभिन्नता अनुभव कर के महान कार्य करने में समर्थ हुए हैं। भगवान के नाते आपस का संगम सुगम है और सुलभ है। भगवान आपस में मेल कराने वाली परम शक्ति है। आस्तिक जन आपस में मेल उत्पन्न कर के समाज को शक्ति शाली बना देते हैं, अनन्यता में, ऐक्य में महाबल है। अन्यता में तो क्लेश और दुख ही है। अन्यता में सन्देह की वृद्धि है और आपस का ह्रास है। भगवान के सब में होने का नाता एक अटूट संबन्ध है आपस में मेल बढ़ाने की सुगम विधि भगवान को सब में पहचानना है।

वेदान्त वास्तव है ही सर्वहित के लिए अनन्यता की भावना से मिल कर कार्य करना। यही शिक्षा ऋग्वेद के अंतिम सूक्त में दी गई है भगवान से ऐश्वर्य मांगा गया है किन्तु भगवान ने आदेश दिया है कि परस्पर मिल कर चलो, मिलकर बातचीत करो। एक दूसरे को ठीक जानो और अपना अपना कर्तव्य पालन करो। मिलकर मनन करो मिलकर निश्चय करो। पारस्परिक उपकार को कर्तव्य जानकर करो। सर्वहित के संकल्प करो और सर्वहित के हो मिलकर कार्य करो। सबके हृदय एक हो परस्पर की सहायता सब की भरपूर उन्नति हो, यही वेद का सार है जो ऋग्वेद के अंतिम सुक्त में कहा गया है। एक दूसरे का सहयोग प्राप्त होनेसे सभी उन्नत हो सकते हैं। परिवार की सद् भावना और आपस का विश्वास ही सद्व्यवहार के रूप में सब को उन्नत करता है। लोग सभी बाह्य दृष्टि से पृथक पृथक हैं पर यह सत्य है कि वास्तव में सब में समानता है। विषमता ही दुख का कारण है। यद्यपि हम भिन्न भिन्न हैं पर हम सब में अभिन्नता है और वह है सब में एक सर्वअन्तर्यामी हृदयविहारी भगवान के कारण। आर्य तो है ही ईश्वर पुत्र उसका आचरण तो श्रेष्ठतम होना ही चाहिये। एक आर्य में अपने परमपिता के दिव्य गुण दीखने ही चाहिये क्योंकि आर्य ईश्वर पुत्र है। आर्यों की जिमेदारी बहुत है। भगवान ने आर्य को समृद्ध और ऐश्वर्यशाली रहने का आदेश दिया है और यह स्थिति आपस का हित करने से निश्चित है। आर्यों में एक दूसरे से प्रेम होना स्वभाविक है। उन में मनमुटाव क्यों हो ?

अन्यता को दूर करके आपस में अनन्यता का व्यवहार करें तो ऐश्वर्य तथा समृद्धि अवश्य ही सारे समाज और राष्ट्र में बढ़ेगी और सारा राष्ट्र शक्तिशाली होगा। आस्तिक मनुष्य का जीवन सदा नैतिक होता है। प्रेम की भित्ति है ही नैतिकता और आपस का पवित्र व्यवहार। हमें आपस की विषमता दूर करनी है और ऐक्य तथा मेल के द्वारा शक्ति बढ़ानी है तभी सभी सुखी हो सकेंगे और भोजन वस्त्र तथा स्थान की कमी दूर होगी। जो काम अकेला मनुष्य नहीं कर सकता वही काम एक सगठित समाज सुगमता से कर लेता है। हमें समाज में ऐक्य स्थिर और दृढ़ करना है यह काम आर्य समाज ही कर सकेगा, यही सर्वोदय है।

जनता में सवहित की भावना के लाने का सुगम उपाय है कि सभी आर्य अपने-अपने स्थान में सब से सच्चे हृदय से वर्ताव करें। पड़ोसी के सुख में प्रसन्न और दुख में सहायक हों तथा उपासना में

(शेष पृष्ठ ८ पर)

दयानन्द-वचनामृत

"जब पुत्र-पुत्री पांच वर्ष के हों, तब उन को देवनागरी अक्षर सिखाना आरम्भ करो देना चाहिए। अन्य देशीय भाषाओं के अक्षरों का अभ्यास कराना भी उचित है। तदनन्तर ऐसे मन्त्र, ऐसे श्लोक, ऐसे सूत्रादि गद्य-पद्य कण्ठस्थ करावें जिन से उनको अनेकानेक उत्तमोत्तम शिक्षाएं मिलें, उन की विद्या बढ़े और धर्म तथा परमेश्वर में प्रीति उत्पन्न हो। वे माता, पिता, आचार्यादि को सम्मान दें, ज्ञानी और अतिथि जनों का आदर आतिथ्य करें। राजा से, प्रजा से, कुटुम्ब से और बन्धु वर्ग से उचित बर्त्ताव करना सीख जावें, नौकर-चाकरों के साथ यथायोग्य व्यवहार कर सकें।"

(स्वामी सत्यानन्द जी)

सम्पादकीय–

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२१, ६ सितम्बर १९६४ [अंक ३५

महात्मा जी की अन्तर्वेदना

तपोमूर्ति पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज आर्यसमाज की एक दिव्य-विभूति हैं। उनका जीवन आरम्भ से ही सब को प्रेरणा देता रहा है। हर अवस्था में आनन्द में रह कर दूसरों को आनन्द पथ पर लाना ही उन के जीवन का ध्येय है। महात्मा जी के दर्शन में एक आकर्षण है, प्रवचन में जादू है तथा स्वभाव में सौम्यता, सरलता है, मन में करुणा का सागर उमड़ता है। आर्यसमाज की सेवा में जीवन लगा दिया है। जीवन में सब कुछ वैभव देखा व पाया है। शाही वातावरण में निवास किया है। परन्तु समय आने पर त्यागने में भी देर नहीं लगाई। आर्यसमाज में उनके समान घर परिवार त्याग कर निकल कर साधु बनने वाले और फकीर बन कर धर्म प्रचार के लिए स्थान २ फिरने वाले कितने हैं? निश्चिन्त लोग परिवारी कई हैं पर घर छोड़ना सरल नहीं। आर्य समाज को इसीलिए व्यक्तियों की कमी है। घर पर ही आंख खुलता और यहीं पर ही आंखें बन्द कर चल देते हैं। आश्रम का सिद्धांत किताबों व प्रवचनों में ही चलता है। आर्य प्रादेशिक सभा के बनाने में दिव्य देवता स्वर्गीय त्यागमूर्ति पूज्य महात्मा हंसराज जी के बाद जितना काम महात्मा आनन्द स्वामी जी ने किया है। उतना कोई न कर सका और न ही कोई कर सकेगा। उनके ही गले में एक लाख रुपये की वेद प्रचार के लिए रुपयों की माला डाली गई थी। एक लाख और भी समाजों ने उन की झोली में डाला था। ऐसा गौरव शायद ही किसी को मिल सकेगा। सभा के साथ महात्मा जी का सदा से सुसम्बन्ध है। समाज के साथ २ सभा के भी निर्माता हैं। बाहर घूम कर क्या २ अवस्था होती है। रात दिन प्रचार में क्या २ कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है—इन सारी बातों का पूरा २ अनुभव है। यही कारण है कि भारत के प्रचारक वर्ग के साथ उन का स्नेह है, सहानुभूति तथा प्यार रहता है। सब को उन का आशीर्वाद मिलता है।

अब भी आर्य प्रादेशिक सभा के वेद प्रचार के लिए उन का हित है। आज कल वे श्रीनगर समाज में कथा का अमृत पिला रहे हैं। वहां से सभा को दो हजार रुपये भिजवाते हुए आर्य जगत् के गत विशेष अंक में अपनी अन्तर्वेदना का भी लेख के रूप में लिख कर प्रकाशन किया है। समाजों व संस्थाओं के पास हजारों नहीं लाखों रुपये जमा पड़े हुए हैं। किन्तु सभा की वेद प्रचार निधि का बर्तन खाली है। यह भूखा है, इस के पास खाने के लिए नहीं है। किन्तु और स्थानों में लाखों रुपया भरा पड़ा है। महात्मा जी के कितने मार्मिक शब्द है कि वहां जमा पड़ा पैसा क्या वेद मन्त्रों की व्याख्या कर रहा है? जिस सभा ने प्रान्त व देश में वेद प्रचार का दायित्व लिया है। उस में भी कुछ है नहीं और अन्य स्थानों में कमी नहीं काम कैसे चलेगा। भूखा वेद प्रचार चलेगा कैसे? आर्य समाज वज़ीर बाग श्रीनगर के वेद प्रेमियों ने महात्मा जी को दो हजार रुपये सभा वेद प्रचार में भेंट कर दिये महात्मा जी ने वे तत्काल ही सभा को भिजवा कर लेख में सारे समाजों के सामने अपनी दिल की तड़प भी प्रकट कर दी। इतना बड़ी तपस्वी सभा के वेदप्रचार के लिए जनता से इतने मार्मिक शब्दों में लिखे आर्यसमाजों का कर्तव्य है कि इस तपोमूर्ति के आदेश का पालन कर के सभा के वेदप्रचार भण्डार भरने में दिल खोल कर लग जावें। वेदप्रचार का काम जितना उत्तम होगा उतना सभा प्रगति करती जायगी। हम इस पूज्य महात्मा के वचनों पर पुष्प चढ़ाएं —त्रिलोक चन्द्र

बाढ़ पीड़ितों की सेवा

इस बार वर्षा ने अपना बड़ा उग्र रूप दिखाया है। आये दिन समाचारपत्रों में जो भीषण समाचार निकलते हैं तथा उन क्षतिग्रस्त स्थानों, नगरों ग्रामों के चित्र प्रकाशित हो रहे हैं। उन से किस का दिल नहीं पसीज जाता। महंगाई ने तो पहले ही जनता की कमर तोड़ दी है। जीवन में प्रतिदिन काम में आने वाली वस्तुओं के भाव आकाश को छूने लगे हैं। परिवारों की क्या अवस्था है, सब के सामने है। इस पर बाढ़ों ने लाखों की फसलें नष्ट कर दी हैं। बड़ी भारी क्षति हो रही है। इलाके ही जल मग्न हो गये हैं। हमारे राज्य के नेता तथा मन्त्री अपना कर्तव्य पालन करते हुए भ्रमण करके सरकारी प्रबन्ध करने में लगे हुए हैं। इस आपत्ति के समय राजनीति का भेद लेकर चलने वाली संस्था जनता का हित नहीं चाहती। ऐसे समय भी अपना दलगत स्वार्थ सिद्ध करना चाहती है ऐसा कहना चाहिए।

बाढ़ ग्रस्त इलाकों में सेवाकार्य करना सब का परम कर्तव्य है। आर्य समाज तो ऐसे २ कार्यों में सदा आगे रहा है। सेवाव्रत में उसकी निष्ठा बनी रही है। इस विषम प्राकृतिक संकट के समय हम उन २ स्थानों, बड़े नगरों तथा सम्पन्न सज्जनों से कहना चाहते है कि यही समय है जब कि पीड़ित एवं क्षति ग्रस्त जनता की सेवा का सौभाग्य प्राप्त होता है। वहां २ की तथा अन्य भी समाजें व संस्थाएं इस संकटकाल में दिल खोल कर अपने इन लोगों की सेवा करने में लग जायें। सेवा के कई रूप हो सकते हैं। लंगर खोल दिये जायें, दवाईयों या वस्त्रों के द्वारा भी सेवा का कार्य हो सकता है। आर्यसमाज अपनी परम्परा के अनुसार इस समय भी स्थान २ पर किसी स्थान को सेवा केन्द्र बना कर सेवा कार्य प्रारम्भ कर देवे। जो जैसी सेवा कर सकता है, मानवता के नाते करने में लग जाये। सभाएं भी इस संकट विषम में अपने २ समाजों को इस ओर प्रेरणा देवें। ताकि इस समय जो सांझी विपत्ति आई है, उस में सेवा करके दूर करने का प्रयास किया जा सके। —त्रिलोक चन्द्र

अमूल्य वचन

★ क्रोध का प्रारम्भ पागलपन है और इस का परिणाम लज्जापन है।

★ सब से अच्छा दार्शनिक वह है जो सन्तुष्ट है।

★ कोई कार्य बदला लेने की नियत से न करो।

★ कोई ऐसा कार्य न करो जिसे दूसरों को करता देख कर तुम मुंह पिचका दो।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर के साप्ताहिक मुख पत्र आर्य जगत् के वेद सप्ताह अंक में आर्य समाज के तपोमूर्ति पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज का सभा के वेद प्रचार के कोष के बारे में बड़ा महत्वपूर्ण तथा अन्तस्तल से निकले उद्गारों से भरा मार्मिक लेख प्रकाशित हुआ है। इस में समाजों, संस्थाओं तथा वेद प्रेमियों को सम्बोधित कर के प्रभावशाली शब्दों में कहा गया है कि सभा की वेद प्रचार निधि तो खाली पड़ी है किन्तु समाजों व संस्थाओं के भण्डार भरे पड़े हैं। वेद प्रचार भूखा है, इसे भोजन दो। महात्मा जी को वेद से प्यार है। उन का सारा जीवन ही इसी पवित्र काम के लिए बीता है। संन्यासी बन कर तो रात दिन इसी वेद प्रचार में लगे हुए हैं।

मैं भी आर्य समाजों के सज्जनों से कुछ साफ शब्दों में बिना लगी लिपटी बात कहना चाहता हू। आर्य समाजें प्रचार करवाती हैं, धन भी इकट्ठा किया जाता है। परन्तु बड़े ही खेद से कहना पड़ता है कि समाजों का धन इधर उधर के कामों और इधर उधर के लोगों में खर्च कर दिया जाता है। अपनी सभा को वेद प्रचार के लिए देने में बहुत ही कम बचता है। इस के कई कारण हैं, जिस से हमारा सभा रूपी केन्द्र कमजोर हो गया है। आर्य समाजों में प्रचार के लिए बाहिर के कई साधु संन्यासी, विद्वान भी समय २ पर आते रहते हैं। किन्तु एक बात बड़ी ही विचित्र प्रतीत होती है महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज जैसे निस्पृह संन्यासी विरले हैं जिन को केन्द्र का ही ध्यान रहता है। आर्य समाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने जिन मठों का अपने ग्रन्थों और उपदेशों में जोरदार शब्दों में

भूखे को भोजन दे कौन ?

(ले. श्री पं. विद्यासागर जी वैद्य मन्त्री आर्य समाज लारेंस रोड अमृतसर)

✦✦✦✦✦✦✦✦✦✦✦✦✦✦✦✦✦✦✦✦

खण्डन किया था। आज हरेक साधु सन्त आर्य समाज में भी अपने २ अलग २ मठ, आश्रम या विद्यालय बना कर उन के लिए धन इकट्ठा करने निकल पड़ता है। कोई लकड़ी के लिए, कोई ईंटों के लिए तथा कोई लोहा खरीदने के लिए पैसे मांगता फिरता है। कोई अपना अलग आश्रम या डेरा बना कर उस के लिए हर प्रकार का सामान एकत्रित करने में लगा हुआ है। यदि गृहस्थियों परिवार वालों के मकानों, कोठियों के समान ही आर्य समाज के इन साधुओं ने भी अपने शानदार मकान कोठियां बना कर केवल नाम के लिए इन को आश्रम, मठ या अपना गुरुकुल पुकारना शुरू कर दिया तो कोई भेद नहीं। इन मठों या डेरों के लिए जगह २ जा कर सद्गृहस्थों, आर्यसमाजों से दिन रात पैसा मांग २ कर इन में लगाना है या उनके नाम से जमा करना है तो फिर संन्यासी बनने का क्या मतलब था। एक घर त्याग कर उस से भी बड़ा अपना घर बनाने वाली बात है। आर्यसमाजों का पैसा प्राय. ऐसे कामों में लग जाता है।

दूसरी बात यह है कि कई स्वतन्त्र सज्जन भी घूम २ कर समाजों में प्रवचन, कथाएं कर के बड़ा राशि ले जाते हैं। अचम्भा यह है कि ऐसे लोग भी अपने लिए ले जाते हैं जो सन्यासी बने हुए हैं या ऐसे सज्जन ले जाते हैं जिन का परिवार कोई नहीं किंतु परिवार वालों से भी उनको अधिक लिप्सा है। धन कमाने का मोह है। कहीं आश्रम हैं, मठ हैं, अपने २ कई नामों से डेरे हैं, कहीं गुरुकुल हैं और कहीं अलग २ वेद प्रचारिणी सभाएं खुली हैं जो अलग २ वेद प्रचार के रूप में धन इकट्ठा करती रहती हैं। ये संस्थाएं तथा लोग हैं जो समाजों से पुष्कल धन ले जाते हैं। आर्यसमाजें एवं परिवार तो धन का दान करने में कमी नहीं करते किन्तु सारा धन बाहिर चला जाता है। सभा रूपी केन्द्र निर्बल हो गया है। महात्मा जी के शब्दों में भूखा है। भोजन दूसरे खा जाते हैं, इसे कम मिलता है। इस कारण यह भी हानि उठानी पड़ती है कि साधनों के अभाव में सभा अपने योग्य प्रचारकों की संख्या बढ़ाने में कठिनाई अनुभव करती है।

योग्य व्यक्ति भी आजाद घूम कर प्रचार करना पसन्द करते हैं। क्योंकि उनको इस प्रकार बहुत कुछ मिल जाता है। यही कारण है जिस से सभा का वेद प्रचार भूखा है। इसे भोजन पर्याप्त मात्रा में नहीं मिलता। यह भूमि पूरी तरह से सिंचित नहीं हो रही, क्योंकि समाजों की दान धाराएं दूसरी भूमियों को सिंचन करने में लगी हुई हैं। यह है वास्तव में गम्भीर परिस्थिति जिस की ओर से जल्दी तथा आवश्यक ध्यान दिया जाये। पूज्य महात्मा जी का अन्तर्वेदना से भरा वह लेख छपवा कर समाजों में वितरित किया जाना चाहिए। समाजों का विशेष कर्तव्य है कि वे अपने केन्द्र सभा के वेद प्रचार को शक्ति शाली बनाने में पूरा २ सहयोग देवें। सभा का स्थान सर्वप्रथम है, अन्य सब कुछ गौण है। मेरे दिल में धर्म का प्रचार करने वालों के लिये श्रद्धा है। पर सभा की वर्तमान स्थिति को देखते हुए ऐसा करना अत्यावश्यक है। यदि हमारा केन्द्र कमजोर हो गया तो बड़ी क्षति होगी। आशा है कि सारी समाजें तथा सज्जन इस पर ध्यान दें और सभा के भूखे वेद प्रचार को भरने को प्रयत्न करें। स्वतन्त्र वृत्ति वालों तथा ऐसे २ मठाधीशों को प्रोत्साहन न देवें। अन्यथा आर्य समाज की भी वही अलग २ महन्तों, मठाधीशोंके समान दशा हो जायगी, जैसी स्वामी दयानन्द के पधारने से पहिले देश में थी। जिसे दूर करने के लिए महर्षि ने अपना सर्वस्व भी अर्पण कर दिया।

आर्यसमाज भरवाईं (चिंतपुरणी) जिला हुशियारपुर

का ४०वां वार्षिकोत्सव २ से ७ सितम्बर १९६४ तक बड़ी धूम-धाम से सम्पन्न हो रहा है। शिक्षा तथा सांस्कृतिक महासम्मेलन श्री महन्त लालदास जी डुमटाल धाम की अध्यक्षता में होगा। श्री लक्ष्मीधर जी धर्मशाला वालों की अमृत वर्षा होगी। इस के अतिरिक्त दोनों पंजाब की प्रसिद्ध सभाओं के उपदेशक व भजनीक इस अवसर पर पधार कर जनता को धर्म लाभ पहुंचाएंगे।

हरिश्चन्द्र सिद्धांत शास्त्री
प्रधान आर्य समाज

आर्य सज्जन आर्य-जगत के ग्राहक बनें औरों को बनायें

दक्षिण की दर्द भरी पुकार

(ले०श्री राजेन्द्र जिज्ञासु, प्राध्यापक, दयानन्द कालेज, शोलापुर)

****

अनादि ईश्वर का अनादि ज्ञान वेद सारे मानवों के लिये है। मानवों का यह छीना हुआ अधिकार दिलाने के लिये ऋषि तिल-तिल जले। जीवन आहुति तक दे दी। ऋषि के बाद भी अनेक वीरों ने बलिदान दिया। धरा, धाम में वेदप्रचार होना चाहिये। अपने देश में हम ने अपने ध्येय का ओर ध्यान न दिया तो राम कृष्ण, गौतम, कणाद, दयानन्द शिव प्रताप आदि विभूतियों का इतिहास में चर्चा भी न रहेगी।

आर्य समाज के प्रति लोगों का विश्वास है आवश्यकता इस बात की है कि दक्षिण में ५ केन्द्र बना कर तीव्र गति से कार्य किया जावे। महात्मा आनन्द स्वामी जी, पूज्य स्वा० ध्रुवानन्द जी एव महात्मा आनन्द भिक्षु जी के प्रभाव से एसे ५ साधु निकाले जा सकते हैं जो इन ५ केन्द्रों को शुरू करने में सारा समय दें। ये तीनों महात्मा स्वय बारी बारी वर्ष में चार चार मास दक्षिण में कार्य संचालन व मार्गदर्शन के लिये दें। सार्वदेशिक सभा को वेद के लिये यह भिक्षा ये महात्मा दे देंगे ऐसी आशा करनी चाहिये। पूज्य पं० नरेन्द्र जी जैसा स्वाधीनता संग्राम का बलिदानी वीर दक्षिण में आर्य-समाजकी विभूति है। उनके सक्रिय नेतृत्वमें हम आगे बढ़ेंगे यह निश्चित है। दक्षिण को क्षेत्रीय भाषाओं के उपदेशक भी निर्माण किये जा सकते हैं। शोलापुर समाज ने इस वर्ष तो बालक व युवक भिन्न भिन्न विद्यालयों में इस हेतु भेजे हैं। केरल में दयानन्द ब्रह्म महाविद्यालय हिसार के सुयोग्य स्नातक पं० नरेन्द्र जी ने इस वर्ष कार्य आरम्भ कर दिया है। वह हिन्दी, मलायम, तेलगू, तामिल, कन्नड व अंग्रेजी आदि भाषायें खूब जानते हैं। बीसियों नये व पुराने कार्य कर्ता मिल सकते हैं। आंधर, कर्नाटक व मराठवाडा में आर्य समाज का प्रभाव रहा है हमारे प्रमाद से भले ही आज शिथिलता हम पर प्रहार करने का प्रयास कर रही हो। चौडा मुंह किये परिस्थितियों से जूझने में हम सफल हो सकते हैं परन्तु सभायें और नेता लोग थोड़ा फाईलों प्रस्तावों एव भावनाओं से कुछ आगे तो निकले।

ईधर परिस्थितियां क्या विकट रुप धारण कर रही हैं इस पर क्या लिखूं। इस वर्ष अप्रेल में श्री स्वा० सुरेन्द्रानन्द जी महाराज को इधर का निमन्त्रण दिया। वह सारे दक्षिण में भ्रमण करने निकल पड़े उनका एक पत्र मान्य प्रि० भगवान दास जी को प्राप्त हुआ है। प्रि० साहिब के नाम उनका पत्र दक्षिण की दर्द भरी पुकार है। आप जन थोड़ा कलेजा थाम कर पढ़ें और फिर सोचें कि कुछ करना है या केवल जय घोष ही लगाने हैं। स्वामी जी ने लिखा है :—

'दक्षिण भारत में जहां तक रेल व मोटर गई वहां तक मैं जा सका हूं। शोलापुर के बाद बगलौर मैसूर, ऊटी, ऊटी में रामकृष्ण मठ, लिगायत मठ, कृष्णामूर्तिमठ, नारायण गुरुकुल, पौराणिकों के अनेक मन्दिर हैं, पर सब निर्जिव अवस्था में हैं। आर्य समाज शून्य है जैन मन्दिरभी हैं, हां। एक मास में मैंने यत्न किया है यदि धन हो और कार्यकर्ता हैं तो आर्य समाज का कार्य हो सकता है। यहां पर मारवाडियों के १ सौ घर हैं शिमला सम शहर है, रामेश्वरम, कन्याकुमारी, त्रिवेन्द्रम, ऐर्णकुलम, स्वामी शङ्कराचाय के जन्म स्थान कालडी, कोचीन, मंगलुर यहां पर नाथों का गोरखनाथ मठ है। लाखों की सम्पत्ति है। उड़पी यहां माधवाचार्य का जन्म स्थान है, आठ मठ हैं, यही महत्व के हैं, करोडों की सम्पत्ति है। समस्त क्षेत्र में ईसाई छाए हुये हैं। मैंने अनुभव किया है कि वहो हिन्दु ईसाई होने से बचे हैं। जिन का सम्बन्ध मठों से, आश्रमों से, मदिरों से रहा है, अतिरिक्त सब ईसाई हो चुके हैं। ईधर बीसियों आर्य समाज के कार्यकर्ता मिलें पर सब निराश दुखी है, कि जहां भी दो आर्य समाजी है तो उन मे भी परस्पर मत भेद हैं। जनता आर्य समाज क प्रति आस्था रखती है। दक्षिण क्षेत्र पर आर्य समाज को ध्यान देना चाहिये। अन्यथा दक्षिण क्षेत्र भारत से कट जायेगा। मुझे आप पर विश्वास है, आप कुछ करें, युवकों को प्रेरित करें। मेरा विचार है कि १६ अक्टूबर विजादशमी पर दक्षिण के युवकों का शोलापुर में एक सम्मेलन करें। मैं यहां से ११ को चल कर अगस्त को हैदरबाद पहुंच रहा हूं।'

अब क्या करना है इस के विषय में एक सुझाव मैंने ऊपर दिया है। शिरोमणि सार्वदेशिक ने भी अपने वार्षिक अधिवेशन में आंध्र, मैसूर, मद्रास व केरल इन चार प्रान्तों की एक सभा बना कर कार्य करने की योजना बनाई है। सार्वदेशिक का यह विचार प्रशंसनीय है। मेरा ५ केन्द्रों का विचार इस का पूरक है विरोधी नहीं। इसी एक केन्द्र के साथ यह ५ केन्द्र सम्बन्धित हों। इस के साथ साथ मैं आर्य जन का ध्यान मान्य प्रि० भगवान दास जी के आर्य पत्रों में प्रकाशित उस लेख की ओर दिलाना चाहता हूं जो आर्यसमाज व भारत के शीर्षक से गत वर्ष छपा था जिस में यह सुझाव दिया गया था कि १० आर्य नेताओं, विद्वानों एवं साधुओं का एक शिष्ट मण्डल वैदिक धर्म व आर्य समाज का सन्देश देने दक्षिण को निकले। दायित्वपूर्ण यह शिष्टमंडल सार्वदेशिक की ओर से हो। जिस से प्रेस व सुशिक्षित वर्ग पर बड़ा प्रभाव पड़ेगा। इसी प्रकार इधर से आर्य समाज के सेवकों का एक मण्डल उत्तर भारत जायें। बगाल आसाम, उड़ीसा की ओर भी एक जावे। इस से आर्य समाज देश की भावात्मक एकता को वह बल देगा जो सरकार एवं सारी राजनीतिक पार्टियां मिलकर भी न पहुंचा सके। क्योंकि सभी राजनैतिक पार्टियां प्रत्यक्ष या परोक्षरूप में क्षेत्रीय ढग से सोचती हैं और दुहाई एकता की देती है। क्षमा कीजिए यदि किसी को बुरा भी लगे तो भी मैं कहूंगा कि कोई भी राजनैतिक दल भारत की एकता, भारतीय संस्कृति एवं स्वाधीनता को नहीं बना सकता केवल महर्षि दयानन्द का आर्यसमाज ही यह कार्य कर सकता है। इस का एव कारण है। अराष्ट्रीय आसुरी प्रवृत्तियों-से, विदेशी पंचमंगी शक्तियों से बिना आर्यसमाज के कौन जूझ सकता है? इन पापियों को चाहियें वोट वोटों और नोटों के चक्कर से ऊपर हो कर सोचने वाला आर्य समाज सक्रिय बन आगे आये। अमृतसर से ले कर मद्रास तक बाम्बे से ले कर कलकत्ता गोहाटी तक देश का भला चाहने वाले मानवों का सहयोग हमें प्रा;

(शेष पृष्ठ ६ पर)

भारतवर्ष में लाखों ऐसे अभागे व्यक्ति हैं जो कुष्ट जैसे भयानक रोग मे ग्रस्त हैं। किसी के हाथों की उङ्गलियां झड़ जाती हैं किसी के पैरों की। कइयों के चेहरे इसके कारण अति भयकर और वीभत्स प्रतीत होने लगते हैं। अंगों में से पीप बहता रहता है जिस के कारण मक्खियां भिनभिनाती रहती हैं, समाज की दृष्टि में उन बेचारों का दर्जा बिल्कुल गिर जाता है। कोई उन्हें नज़दीक फटकने नहीं देता वे अपनी जीविका के लिये कोई उद्योग धन्धा नहीं कर पाते अतः दर-दर मांगना और ठोकरें खाना ही उनका एक मात्र सहारा रह जाता है, ईसाई लोग उनकी सेवा-शुश्रूषा करने के बहाने सहस्रों निःसहाय लोगों के धर्म पर डाका डालते और उन्हें ईसाई बनाते रहते हैं। यह देखकर श्री महयानन्द साल्वेशन मिशन होश्यारपुर तरनतारन शाखा की ओर से ईसाइयों के आश्रम के निकट राम मन्दिर कालोनी में (जहां पर कि सौ सवा सौ कुष्ट रोगी सपरिवार रहते हैं) डिस्पैंसरी खोल कर उनकी सेवा आरम्भ कर दी है। कुछ मास पूर्व उक्तकालोनी में पंजाब के कई स्थानों से रोग-ग्रस्त सज्जनों का सम्मेलन हुआ। इस अवसर पर मुझे भी सम्मिलित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। एलोपैथिक पद्धति से उन लोगों का इलाज तो होता ही है। मै इस टोह में था कि महर्षि दयानन्द द्वारा निर्मित आर्य समाज के तीसरे नियम के अनुसार वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है। इस में घृणित रोग कुष्ट को दूर करने का उपाय अवश्य वर्णित होना चाहिये। स्वाध्याय करते करते मेरी प्रसन्नता का कोई ठिकाना न रहा जब मैं ने अथर्व वेद पन्चम काण्ड के चतुर्थ सुक्त में एक के बाद दूसरा लगातार दस मन्त्र पा लिये। उन्हें अर्थ सहित पाठकों की सेवा में भेंट करता हूं। यदि आर्य विद्वानों ने इधर ध्यान देने की कृपा की और अनुसन्धान प्रिय अन्वेषकों ने समय देने की कृपा की तो हो सकता है कि इस रोग की जड़ काटने में सहायक हो सकें।

स्वाध्याय एवं अनुसंधान प्रिय आर्य विद्वानों की श्री सेवा में विचारार्थ

(ले०—श्री पिंडीदास जी ज्ञानी, अमृतसर)

****

मन्त्र ये हैं—

यो गिरिष्वजायथा वीरुधां बलवत्तमः। कुष्ठेहि तक्मनाशन तक्मानं नाशयन्नितः ॥५-४-१॥

अर्थात्—हे (कुष्ट) कूठ नाम के वृक्ष! तू (यः) जो (गिरिषु अजायथाः) पर्वतों में उत्पन्न होता है, इस कारण (वीरुधां बलवत्तमः) इसलिये लताओं में से सब से अधिक बलवान है सब वृक्षों से अधिक बलवान है। हे (तक्मनाशन) कुष्ट आदि रोगों को नष्ट करने वाले तू (इतः तक्मान नाशयन) इस देह में से कुष्ट आदि दुःखदायक रोग को नाश करता हुआ (आ इहि) हमें प्राप्त हो। स्मरण रहे कि राज निघण्टु में कुष्ट के सम्बन्ध में यूं लिखा है—

'कफमारुत रक्तजित त्रिदोष विष कण्डूश्च कुष्ट रोगांश्च नाशयेत'

अर्थात कूठ नाम की औषधि रक्त पित्त वात रूपी त्रिदोष का शमन करके खुजली और कुष्ट रोगों को नाश करती है।

सुपर्ण सवने गिरौ जातं हिमवतस्परि। धनैरभिश्रुत्वा यन्ति विदुर्हि तक्मनाशनम ॥५-४-२

अर्थात—जो पुरुष (तक्मनाशनम् हि विदुः) कुष्ट रोग नाशक इस को निश्चय पूर्वक जान लेते हैं वे इस को (हिमवतः परि) हिमालय के ऊपर (सुपर्ण सवने गिरौ) गरुड़ों के उत्पन्न करने वाले अत्युच्च गिरि शिखर पर भी (श्रुत्वा) इस का नाम सुनकर (धनः अभियन्ति) धन खर्च कर के भी पहुंचते हैं और उद्योग से इसे प्राप्त करते हैं।

अश्वत्थो देवसदनस्तृतीयस्यामितो दिवि।

तत्रामृतस्य चक्षणं देवाः कुष्ठमवन्वत ॥ ५-४-३

अर्थात्—दिव्य सदनः अश्वत्था दिव्य गुणों का आश्रय सूर्य, (इतः) तृतीयस्याम् दिवि) जो यहां से तीसरे द्यौ लोक में है (तत्र) वहां ही (अमृतस्य चक्षणं) अमृतरस का वास्तविक परिदर्शन होता है (देवाः) दिव्य किरणें (कुष्ठम् अवन्वत) कुष्ठ नामक औषधि को पुष्ट करती हैं।

हिरण्ययी नौरचरद्धिरण्य बन्धना दिवि।

तत्रामृतस्य पुष्प देवाः कुष्ठमवन्वत॥ ५-४-४

अर्थात्—(हिरण्ययी) तेजोमय (नौः) नाव के समान यह आदित्य (हिरण्य बन्धना) तेजो—द्रव्य से बंधी हुई (अचरत्) विचरती है। (तत्र अमृतस्य पुष्पं) वहां अमृत रस औषधियों के गुणकारी रस का पुष्प—पोषण सामर्थ्य है। (देवाः) दिव्य किरणें (कुष्ठम् अवन्वत) उस कुष्ठ औषधि को पुष्ट करती हैं।

हिरण्ययाः पन्थान आसन्नरित्राणि हिरण्यया।

नावो हिरण्ययीरासन याभिः कुष्ठं निरावहन ॥ ५-४-५

अर्थात्—इस सूर्य के (पन्थानः) किरणों के जाने मार्ग (हिरण्ययाः) ज्योतिर्मय (आसन) हैं और (अरित्राणि) समुद्र में नाव को खेने के लिये लगे चप्पुओं के समान सूर्य में लगी किरणें भी (हिरण्यया) स्वतः ज्योतिर्मय हैं और उन ज्योतिर्मय चप्पुओं के आश्रय पर विखरने वाली (नावः) सूर्यमय नौकाएं भी (हिरण्ययीः) ज्योतिर्मय हैं (याभिः) जिन से (कुष्ठं) कूठ नामक औषध को (निःआवहन्) खूब पुष्ट करते हैं।

(क्रमशः)

दक्षिण की दर्द भरी पुकार

(पृष्ठ ५ का शेष)

होगा। मुसलमान एवं ईसाई भी वेद के भक्त बन सकते हैं थोड़ा जन्म गत जाति पाति की दीवारों को तोड़ो। क्रान्ति की भावना से निर्माण करने के लिये समय का बलिदान दो।

साधुओं, नेताओं व विद्वानों के बाद आर्य समाज के युवकों का एक दलदक्षिणमें कालेजोंके अवकाश के समय निकले। लीडर टाईप के दर्शनीय युवक नहीं चाहिये। लगनशील विद्वान आय वीर चाहिये। अकेला पजाब ही यह मांग पूरी कर सकता है। श्री प्रो. उत्तम चन्द जी 'शरर' प्रो. राम प्रकाश जी रिसर्च स्कालर, श्री प्रो. रघुवीर सिंह जी, श्री प्रो. वेदव्रत जी, श्री प्रो. रमेश चन्द्र जी 'जीवन' श्री जयदेव जी, वेदाचार्य एम. ए. व श्री पं. भद्रसेनजी दर्शनाचार्य, श्री योगेन्द्र सिंह एम. एस. सी., जैसे कई सुयोग्य युवक हैं। यदि इन सब आर्य वीरों के साथ वेद के पूजनीय युवक विद्वान प्रो. भवानी लाल जी भारतीय एम. ए. (राजस्थान) हों तो बहुत सुन्दर है। उत्तर प्रदेश से ऐसे युवकों का दल बंगाल, बिहार उड़ीसा, आसाम जावे फिर दक्षिण के युवक उत्तर को आयें। क्या नेता व सार्वदेशिक इस पर विचारेंगे ?

——

मनुष्य जन्म का महत्व (४)

[लिखक पं. भक्त राम जी (अफ्रीका वाले) जालन्धर]

एक कवि क्या ही अच्छा कह गये—

चेत चेत रे बावरे,
चित्त में हो सुचेत।
चिन्तामणि इस जन्म को,
फैंक न चिड़ियां हेत॥

इस नरतन को पाना बच्चों का खेल नहीं। न जाने मानव चोले की प्राप्ति के लिए हमें कितनी बार जन्म लेना और दुःख भोगना पड़ा पर हम इस की महत्ता को समझ कर बुराइयों द्वारा इसे बिगाड़ रहे हैं। इस का मूल्य वही आंक सकते हैं जो इस को जपसिमरन में ज्ञान-ध्यान में सेवा-उपकार में और दान-पुण्य में बिताते हैं।

चढ़ाया करता था। एक दिन हल चलाते हुए उस के खेत में से एक गागर निकल आयी। उस ने उस का ढक्कन उठा कर देखा तो उस को उस गागर में गोल २ कंकड़ भरे हुए दीख पड़े। उस ने समझा कि पंछी उड़ाने के लिए अब कंकर नहीं ढूंढने पड़ेंगे। इन्हीं से खेत की रखवाली का काम चल जायेगा। वह प्रति दिन बाजरे के खेत की रक्षा मंच पर बैठ जाता और घुमानी में गागर के कंकड़ धर कर फैंकता और पक्षी उड़ाता रहता। वे कंकड़ खेत पर से हो कर पास ही बहती नदी में जा गिरते इस प्रकार एक २ करके जब वें सब कंकर फैंक चुका, केवल एक ही कंकर बचा हुआ था और उस को घुमानी में रखकर फैंकने ही लगा था कि देव योग से अचानक एक सन्त उसके सामने आ खड़ा हुआ। संत ने बड़े आश्चर्य चकित हो कर उस को कहा"चौधरी! तू तो घोर अनर्थ करने लगा है। इस को मत फैंक। यह तो बहुत मूल्य हीरा है। इस का मूल्य कम से कम दस हज़ार रुपये होगा।' हीरे का नाम सुन कर जाट मूर्छित हो भूमि पर गिर गया। संत ने पंखा करके जब उस को सचेत किया तो वह रोकर बोला—'मुनि जी! मैं तो बड़ा मन्दमति, मूर्ख और भाग्य हीन मनुष्य हूं। मैं ने ऐसे हीरे तो कई सौ, कंकर समझ कर फैंक दिये। यदि मैं उन के महत्व को जानता होता तो आज एक महा धनाढ्य मनुष्य माना जाता।' मुनि ने कहा—'सौम्य! 'गयी सो गई अब राख रही को।' जो हीरा तेरे हाथ में है अब इसी की रक्षा कर, उसी का लाभ उठा। खोये हुए अब तुझे मिलने दुर्लभ हैं।'

ऐसे ही समझना चाहिए कि मनुष्य जन्म की घड़ियां अनमोल हीरे हैं। जो जन इन को विषय वासना के भोग, लालसा के, मद-मान के, निन्दा चुगली के, वर विरोध के तथा वादविवाद के पक्षा उड़ाने के निमित्त, कालरूपी नदी में फैंक देते हैं वे महामूढ़मति मनुष्य हैं। ये घड़ियां काल नदी में गिर कर फिर नहीं लौटती अत. बीती बिसार कर आगे की सुध लेते हुए बचे (शेष) जीवन को सफल बनाना चाहिए।

वेद प्रचारिणी सभा होशिया पुर का वेद प्रचार

इस सभा के उपदेशक जिला होशियार पुर में स्थान २ पर समाजें स्थापित कर रहे हैं तथा दवाई व पुस्तकों आदि से प्रचार कार्य कर रहे हैं। गढ़ शंकर व सैला के आस-पास प्रचार कार्य में हकीम मुकन्दी लाल उत्साह से काम कर रहे हैं।

वेद गीत

(रचयिता—अरुण सरीन हुशियारपुर)

ऋषि की वाणी से निकले थे जो वचन महान,
मुझे बता ऐ जगत, कहां है उसकी खान?
जिस संगीत ने पुनरुत्थान था किया हमारा,
उस संगीत की कहां छिड़ी थी पहले तान?
जिस पुष्प की सुगन्ध से हम पुनः उठे थे,
उस पुष्प का बताओ कहां है जन्मस्थान?
मैं भी चाहता हूं कि जा-जा कर मैं—
करूं स्वयं उस देवामृत से मधुर स्नान।

सुनो, सुनाऊं तुम्हें प्रश्नोत्तर तुम्हारे, सुन लो,
वेद महान हैं उन महान वचनों की खान,
वेदों में से ही छिड़ा था वह संगीत—
जीवित हुए थे भारतीय कर जिसका पान,
उस सुगन्धित पुष्प का वेद ही जन्मस्थान है,
जिसकी सुगन्ध से विकसित यह भारत उद्यान,
यही नहीं, हमारी सभ्यता यहीं इन में छिपी है
तभी इन्हीं के बलबूते पाएं जग में हम मान।

वेद! सत्य ही तुम पूज्य हो, अतुल हो—
तुम्हें मैं नतमस्तक करता हूं शत-शत प्रणाम!
तुम से ही तो शिक्षा पा यह जगत टिका,
तभी भारत संग जगत करता है तेरा मान।
आज हमें बल दे कि हम गाएं तुझे—
ताकि हमारी अशुद्ध जिह्वा करे मधुरामृत पान,
मैं, मेरा देश पढ़ कर तुझे सत्यमार्गी हों,
औ, तुम संग करें जगत में अपना नाम।'

मधुकलश

(६)

हर दिल के अन्दर है पीड़ा हर पग में हैं छाले
दुनियां भर का दर्द बांट ल तकलीफें अपनाले
भले पड़ौसी की मुर्गी दे हम को हंस दिखाई
मगर हकीकत यह है घर घर चूल्हे हैं मटियाले

★

सदा श्रेय से बचते फिरते और प्रेय को अपनाते हैं
उस पर भी अंह देखिये खुद को ज्ञानी बतलाते हैं
बड़ा अजब है हाल यहां का बिल्कुल नहीं समझमें आता
पीड़ा हरते हैं परमेश्वर फीस डाक्टर ले जाते हैं

★

निर्बल, निर्धन, दुखी, को जो भी गले लगाता
उस के आगे झुक जाता है आ कर स्वयं बिधाता
बड़ा तरस आता है मुझ को इस दुनियां में उस पर
इन्सानों से नफ़रत कर के जो इन्सान कहाता

क्रमशः

—विजय निर्बाध

आवश्यकता

आर्य प्रादेशिक सभा को कुछ योग्य उपदेशकों और भजनीकों की आवश्यकता है। वेतन योग्यतानुसार दिया जाएगा। सभी प्रार्थी अपने-अपने प्रमाण पत्रों सहित प्रार्थना पत्र मंत्री प्रादेशिक सभा निकट कचहरी के पते पर भेजें। प्रमाण पत्रों में आयु, अनुभव, शिक्षा विवरण विस्तार सहित हो। प्रार्थना पत्र १५ सितम्बर तक आ जाने चाहिएं।

—मंत्री सभा

दयानन्द कालिज शोलापुर

आर्य जगत को यह जान कर अति प्रसन्नता होगी कि प्रो. राजेन्द्र जी 'जिज्ञासु' के परिश्रम से तीन छात्र दीनानगर आश्रम तीन गुरुकुल तथा दो दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार भेजे जा चुके हैं। और भी निकट भविष्य में भेजने का प्रबन्ध कर रहे हैं। राजेन्द्र जी के आने से जो कमी मेरे अस्वस्थ होने से पैदा हो गई थी वह दूर हो नहीं हुई अपितु आर्य जगत चमक उठा है।

भगवानदास
प्रिन्सीपल

सोनीपत में भयानक बाढ़

२१, २२-८-६४ की रात को सोनीपत में भयानक बाढ़ आई। बीसियों मील के अन्दर पानी ही पानी दिखाई देता था। लाजपत नगर, हेमनगर, सिंह कालोनी, मंडी कैम्प आदि सब अबादियां जल मग्न हो गईं हमारी सभा के उपदेशक श्री चन्द्रसैन जी आर्य हितैषी सोनीपत निवासी बेघर हो चुके हैं। १७ वर्ष के बाद एक बार फिर शरणार्थी बन गए हैं। हिन्दू जनता इस ओर विशेष ध्यान दें।

★

श्रावणी उपाकर्म एवं रक्षाबन्धन

आर्यसमाज खंडवा पूर्व निमाड़ में दि० २३-८-६४ को श्रावणी पर्व समारोह पूर्वक मनाया गया। बृहद यज्ञ प्रार्थना भजन आदि हुए। बाद में श्री डा० रघुनाथ सिंह जी वर्मा प्रधान जि० आ० स० द्वारा ध्वजारोहण कार्य सम्पन्न हुआ। हैदराबाद सत्याग्रह के अमर शहीदों को श्रद्धांजलि अर्पित की गई। अन्त में श्री पं० रामचन्द्र जी तिवारी प्रधान आर्य समाज ने पर्व की विशेषता पर एवं महर्षि के उपकारों पर प्रकाश डालते हुए सब का आभार प्रदर्शन किया।

इसी शुभावसर पर सिवनी मालवा के श्री देवी दयाल जी यादव का विवाह संस्कार श्रीमती रुक्मणी देवी के साथ सम्पन्न हुआ। उपस्थित सज्जनों ने वर वधु को आशीर्वाद दिया, प्रसाद वितरण एवं शान्ति पाठ के बाद विवाह संस्कार समाप्त हुआ।

रघुनाथ वर्मा
प्रधान
खंडवा

सार्वदेशिक विद्यार्य सभा की परीक्षाएं सितम्बर में

सार्वदेशिक विद्यार्य सभा की परीक्षाएं २२-२३ अगस्त ६४ को न हो कर अब १६-२० सितम्बर १९६४ को होंगी। इस तिथि को नोट कर लें। जो समाजें व संस्थाएं नए केन्द्र खोलना चाहें और दूसरे विद्यार्थी इस का लाभ उठा कर परीक्षाएं देना चाहें शीघ्र ही अपने प्रार्थना पत्र और आवेदन पत्र भर कर शुल्क के साथ इस कार्यालय को भेज देवें।

वैद्यनाथ शास्त्री
विद्यार्य सभा देहली।

...सूर्य सा [नेहरू]

(...वेदप्रकाश जी एम.ए. खन्ना)

जगमगाता सूर्य सा वह लाल प्यारा,
किस दिशा में जा छिपा हा, हा, हमारा,
शोक से अभिभूत जग भर हो गया है,
शांति का भण्डार दैवी खो गया है।
ढूंढते हैं चांद तारे वह कहां बेसहारे भाग्य मारे वह कहां है।
डूबते मंझधार सारे वह कहां है, जीतबाजी हाय हारे वह कहां है॥
प्रिय थी सेवा जिसे था प्यार प्यारा,
निज सदन में ज्यों सुखी त्यों बीच कारा।
मोम सा मृदु पर हिमालय सा सहारा,
भूमि नभ हर सिन्धु जिस ने छान मारा॥
वह कहां जिस ने हमें पतवार दी थी,
युद्ध के परिहार हित ललकार दी थी।
जो अकुंठित हो नहीं तलवार दी थी,
डट बढ़ो विश्राम को धिक्कार दी थी॥
है किधर वह दासता जिस ने भगा दो,
हर हृदय में सुप्त मानवता जगा दी।
छिन्नता में सन्धि मधुरिम सी लगा दी,
मित्रता की नष्ट, निज दौलत ठगा दी॥

(क्रमशः)

परमात्मा के मेल से शक्ति तथा ऐश्वर्य की वृद्धि

(पृष्ठ २ का शेष)

सभी मिल कर भगवान से आपस के प्रेम और सौहार्द को ही कामना करें। हम लोगों को प्रेम की साधना करनी चाहिये और वह प्रेममय भगवान के निमित्त सब के साथ जीवन के व्यवहार में सब के साथ निष्कपट वर्ताव करके ही हो सकेगी।

यह संसार भगवान ने प्राणियों के सुख के लिए रचा है। इसे मनुष्य ने दुखमय बनाया है हमें आर्यत्व के व्यवहार से इसे पुनः सुखी बनाना है यह काम प्रत्येक आर्य का है जो उसे करना है।

—ज्ञानचन्द

केन्द्रीय आर्यसभा कानपुर (U.P.)

ईसाई युवती हिन्दु बनी

कानपुर—आर्यसमाज गोविन्द नगर में एक २४ वर्षीय ईसाई युवती कु० हैलन टौमस को उनकी इच्छानुसार श्री देवीदास मन्त्री केन्द्रीय आर्य सभा कानपुर ने वैदिक धर्म में प्रवेश कराया। इस अवसर पर श्री आर्य ने गायत्री मन्त्र व अन्य वेद मन्त्रों का उच्चारण करा के वैदिक धर्म की विशेषताएं बताईं और उन का नया नाम कु० प्रीति रखा। श्री आर्य ने इस उच्च शिक्षित युवती को महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा रचित अमर ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश भी स्वाध्याय के लिए भेंट किया।

तत्पश्चात इस युवती का विवाह उसकी इच्छानुसार एक कुलीन परिवार के ग्रेजुएट युवक श्री प्रताप सिंह गुरहा के साथ कराया गया। उपस्थित सैंकड़ों नर नारियों ने इस जोड़े को आशीर्वाद दी।

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टैलीफोन न० ३०४७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 121

एक प्रति का मूल्य १२ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक ३६) २१ भाद्रपद २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०– १३ सितम्बर १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तयः

यशो मा प्रतिमुच्यताम्

हे परमात्मन ! ऐसी दया करें कि मुझे यश कभी भी न छोड़े। संसार में अन्य चाहे मुझे त्याग दें, मेरे से दूर हो जायें पर कीर्ति मुझे कभी न त्यागे। निन्दा मेरी कभी न होवे। मैं कीर्ति वाला बना रहूं।

यशस्वी अस्याः संसदः

मैं इस संसद का, समाज सभा का यशस्वी सभासद बन के रहूं। हर समाज में या किसी भी क्षेत्र की सभा हो अथवा राष्ट्र की संसद् हो वहां पर भी मेरा यश फैलता रहे। मेरे कामों की सर्वत्र कीर्ति हो।

अहं प्रवदिता स्याम्

मैं सदा ज्ञान की, हित की बात बोलने वाला बनूं। जब मैं समाज में या संसद में अपनी बात कहूं तब सारे लोग मेरे प्रभावशाली तथा हितकर वचनों का आदर मान करने वाले हों। वक्ता बनूं।

सा म वे द से

12/9/64 वे दा मृ त

ओ३म् अग्नये स्वाहा इदमग्नये इदं न मम। ओम् सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय इदं न मम। ओम् प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये इदं न मम। ओम् इन्द्राय स्वाहा। इदम् इन्द्राय इदं न मम॥ गो० गृ० प्र० १

अर्थ—(अग्नये) अग्नि के लिए मैं यह आहुति (स्वाहा) भेंट करता हूं। यह अग्नि के लिए है मेरे लिए नहीं (सोमाय) शांति दाता प्रभु के लिए अर्पण है। (प्रजापतये स्वाहा) उस प्रजापति परमेश्वर के लिए है। (इन्द्राय) उस ऐश्वर्य के स्वामी प्रभु के समर्पण है। यह मेरे लिए नहीं है। ये सारी आहुतियां उसी के लिए अर्पण हैं। इस में मेरा कुछ नहीं है।

भाव—परमात्मा को अनेक नामों से पुकारा जाता है। वह अग्नि है। सब को प्रकाश देता है। वही सोम है—शीतलता शांति का स्रोत है, वही परमेश्वर प्रजापति है, यह सारी उसी की प्रजा है, वह हमारा स्वामी है तथा वही इन्द्र है, सारे जड़चेतन देवों का राजा है। सारा ऐश्वर्य उसी का ही है। इस जगत् के ऐश्वर्य का वही मालिक है, इन्द्र है। हे देव ! मैं इस यज्ञ में जो आहुतियां दे रहा हूं। प्यारे पदार्थों की भेंट कर रहा हूं। यह सब कुछ आप का ही दिया हुआ है और आप के ही अर्पित किया जा रहा है। मेरा तो कुछ भी नहीं। सब तेरा ही तेरा है। तेरी दी हुई वस्तु तेरे अर्पण करता हूं। मैं मेरा यह कुछ नहीं जो कुछ है तोर। तेरा तुझ को सौंपते क्या लागत है मोर। आप का दिया आप के अर्पण हो—सं०

ऋषि दर्शन

एका राजार्य सभा

राज्य के कार्यों को ठीक ढंग से चलाने के लिए तथा प्रजा को सुखी बनाने के निमित्त पहिली राजार्य सभा बनानी चाहिए। जिस का काम सारे राज्य प्रबन्ध को चलाना है। राजनीति ठीक चले।

द्वितीया आर्य विद्या सभा

दूसरी सभा आर्य विद्या सभा बनानी चाहिए उसके द्वारा सारे राज्य में विद्या तथा शिक्षा का कार्य किया जाये। कोई भी अशिक्षित न रहे, इस की देख भाल तथा शिक्षा का प्रबन्ध आर्य विद्या सभा की ओर से होना चाहिए।

तृतीया आर्य धर्म सभा

तीसरी सभा का नाम आर्य धर्म सभा है उसका काम यह है कि सारे राज्य में धर्म की उन्नति का प्रबन्ध होता रहे। सारी जनता ठीक तथा सदाचार मार्ग पर चलती रहे, बुराई पनपने न पाये। आचार-विचार का उन्नति का प्रबन्ध आर्य धर्म सभा करती रहे।

भा ष्य भू मि का से

अधिष्ठाता—श्री संतोषराज जी सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

दर्शनों का स्वाध्याय

दुःख का वास्तविक कारण

दुःखों का वास्तविक कारण—हेयहेतु—योग दर्शन दूसरे अध्याय का १७वां सूत्र है। 'द्रष्टादृश्य संयोगो हेयहेतुः' द्रष्टा आत्मा और दृश्य—भिन्न २ दिखाई देने वाले पदार्थों का जो संयोग—विशेष योग है, वह त्याज्य, दुःख का कारण है और मीमांसा दर्शन २५७ सूत्र में कहा है—प्रपंच सम्बन्ध विलयो मोक्षः—अर्थात् इस जगत् प्रपंच के सम्बन्ध का वियोग है वही मोक्ष है। यही बात श्री कृष्ण महाराज ने गीता अध्याय ६ श्लोक २३ में कही है—

मान्नीय डाक्टर जी गम्भीर स्वाध्यायशील सज्जन हैं। दर्शनों पर गहरा सोचते हैं। मेरी प्रार्थना पर अपने विचार लेखों के रूप में 'आर्य जगत' के प्रेमी पाठकों के लिए देने स्वीकार किए हैं। आर्य जगत के कई गत अंकों में कुछ लेख छप चुके हैं। यह उस क्रम से आगे का लेख है—सं०

तं विद्यात् दुःख संयोग वियोग योग संज्ञतम्। यह जो संयोग है यही दुःख है और इस का वियोग ही योग अर्थात् परमानन्द से मिलना है। महात्मा गांधी इस के अर्थ में लिखते हैं—Disunion from all union with pain and union with the Supreme, that state should be known as yog. The man's spirit is so sunk in God in divin union that he loses all sese of distinction—and there remains a secret, still union, without cloud or colour. भाव यह है कि द्रष्टा चेतन पुरुष है और बुद्धि का स्वामी होकर उसका देखने वाला है। बुद्धि दृश्य बनकर गुणोंके परिणाम स्वरूप संसार को दिखाती है। अर्थात् बुद्धि में प्राप्त हुए सब धर्म, विषय, शरीर, इन्द्रियां आदि दृश्य हैं। इस पुरुष और बुद्धि का जो आसक्ति सहित अविद्या पूर्ण जो स्व-स्वामिभावयो भोग्य-भोक्ताभाव का सम्बन्ध है। उसके लिए ऊपर संयोग शब्द आया है। यही दुःखों का कारण है। सांख्य दर्शन के अन्तिम सूत्र में कपिल मुनि लिखते हैं—यस्वा तस्वा तदुच्छेदः पुरुषार्थः जैसे तैसे इस संयोग से निवृत्ति हो, वही परमपुरुषार्थ मुक्ति है।

यहां पर एक बात जानने योग्य है कि परमात्मा का समान सम्बन्ध दुःख का कारण नहीं है। सांख्य प्रथम अध्याय ५५ सूत्र में ऐसा वर्णन है। तद्योगोऽपि अविवेकात् न समानत्वम्। प्रकृति के जिस संयोग से पुरुष का बन्धन माना है, वह जीव की अल्पज्ञता के कारण अविवेकसे होता है। पदार्थों के साथ समान संसर्ग मात्र से बन्धन नहीं होता। अर्थात् सांख्य सिद्धान्त में अविवेक से होने वाले स्वामिभाव पदार्थ सम्बन्ध, संयोग को पुरुष के बन्धन का हेतु माना है। संसर्ग मात्र को नहीं। पंचशिखाचार्य जिन्होंने योगदर्शन का भाष्य किया है, लिखते हैं—कि दुःख के कारण संयोग को त्याग देने से अत्यन्त दुःख का प्रतिकार-नाश हो जाता है। यहां यह भी जान लेना चाहिए कि यह संयोग ही अस्मिता क्लेश है।

महर्षि कपिल सांख्य दर्शन के प्रथम अध्याय प्रथम सूत्र में लिखते हैं। अथ त्रिविधदुःखात्यन्त निवृत्तिरत्यन्त पुरुषार्थः— अर्थात् तीनों प्रकार के दुःखों की अत्यन्त निवृत्ति को परमपुरुषार्थ कहते हैं। इसलिए हमें हेय-दुःख और हेय का हेतु-दुःख का कारण हान-दुःख निवृत्ति तथा हानोपाय-निवृत्ति का साधन सब पर दार्शनिक (scientific) दृष्टि से विचार करना चाहिए और फिर उनका अपने जीवन में उपयोग करना चाहिए जैसे महात्मा गांधी गीता छटा अध्याय इंगलिश टीका पृष्ठ ७० पर लिखते हैं—This yog must show it self in life पहिले दुःख के वास्तविक स्वरूप पर कुछ विचार कर आये हैं। योगिराज पतंजलि महाराज समय के विचार से दुःखों को तीन प्रकार का वर्णन करते हैं। अर्थात् भूत, वर्तमान अनागत। वे कहते हैं कि केवल अनागत दुःख की निवृत्ति के लिये ही पुरुषार्थ करना चाहिए।

सूत्र २-१६ हेयं दुःख मनागतम्—क्योंकि भूत तो व्यतीत होने के कारण नाश हो ही गया है और वर्तमान दूसरे क्षण में भूत हो जाता है। इस लिए ये दोनों स्वय नाश हो जाते हैं। केवल आने वाले अनागत दुःख के नाश की चिन्ता करनी चाहिए। उसी की निवृत्ति आवश्यक है।

यहां यह शंका उत्पन्न होती है कि जो दुःख अभी उत्पन्न ही नहीं हुआ, उसका नाश कैसे हो सकता है। इस का उत्तर वैशेषिक दर्शन में महर्षि कणाद ने चौथे अध्याय प्रथम आह्निक के सूत्र में दिया है—

कारणाभावात् कार्य भावः

कारण के भाव से कार्य का भी भाव होता है और कारण के नाश होने से कार्य का नाश होता है।

इसी को अहंकार और अभिमान भी कहते हैं जिसका कारण अविद्या है। जो बुद्धि में लेश मात्र तम है, अन्धकार है और उस बुद्धि में ही वर्तमान है। व्यास ऋषि अपनी टीका में लिखते हैं कि जिस प्रकार लोक में दुःख देने वाले कारण की निवृत्ति-प्रतिकार का उपाय देखा जाता है, उसी प्रकार दुःखके कारण संयोग और संयोग की निवृत्ति का उपाय भी जान लेना चाहिए। जैसे पैर में कांटा चुभने पर पैर के तल में पीड़ा, कांटे का चुभना और कांटे पर पैर का न रखना या जूता डालकर पैर रखना—जो इन तीनों को संसार में जानता है वह उपाय करता हुआ कांटे के चुभने के दुःख को प्राप्त नहीं होता। ऐसे ही जो ताप्य, तापक और प्रतिकार इन तीनों पदार्थों को जानता है। वह कभी दुःख को प्राप्त नहीं होता। अर्थात् बुद्धि उपाधि के सम्बन्ध से पुरुष ताप्य-दुखी है। इन दोनों का सम्बन्ध या संयोग तापक है, दुःख देने वाला है और अविवेक ख्याति उसका प्रतिकार है।

यहां पर एक बात और जानने योग्य है कि ताप रूप जो क्रिया है, वह कर्म-चित्तवृत्ति में रहती है, कर्मों में परिणाम लाती है और कर्मकारक बुद्धि या चित्त में होती है।

(ले० श्री ड० शंकरदास जी लारेंस रोड अमृतसर)

इसीलिए चित्तवृत्ति निरोध का योग दर्शन में विधान है। क्योंकि दुःख ताप का कारण चित्त की वृत्तियों के रूप में चित्त या बुद्धि का परिणाम है। अर्थात् बुद्धिसत्व या चित्त विषयोंसे ही तप्त होता है। (क्रमशः)

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२१, १३ सितम्बर १९६४ [अंक ३६

आर्यसमाज को बेचो नहीं

आर्य समाज का विशाल आंदोलन उस सर्वमेधी देव दयानन्द सरस्वती का आरम्भ किया हुआ है जिसने अपना सर्वस्व ही समर्पण कर दिया था। संसार की कोई भी बड़ी से बड़ी शक्ति उनको अपने पथ से विचलित न कर सकी, भारी प्रलोभन आकर्षित न कर सका। और तो और जो अपने पिता से भी सत्य का परित्याग करने का समझौता न कर सका। ऐसा देवता और कहां झुक सकता था। तलवारें, विष के प्याले मृत्यु का भय भयभीत न कर सका। उदयपुर के एक लिंगमन्दिर की विपुल राशि, ओखलीमठ की ऊंची महन्ती तथा अन्य अनेक चमकीले तार बन्धन में न डाल सके। ऐसे दिव्य संस्थापक का स्थापित आर्य समाज भी अपने जीवन में उसी प्राचीन परम्परा को बनाये चला आरहा है। भारत के वायसराय लार्ड चैम्सफोर्ड ने धन की सहायता का सरकार की ओर से आर्य समाज को बड़ा प्रलोभन दिया। सरदार दयालसिंह मजीठिया ने डी. ए. वी. कालेज के नाम के साथ दयानन्द के नाम को हटा देने के लिए अथवा उसके आगे अपना नाम जोड़ देने के लिए लाखों रुपया आर्यसमाज को देने को कह दिया। परन्तु आर्यसमाज ने यह बात ठुकरा दी आर्यसमाज को आर्य, वेद प्यारे हैं। देवदयानन्द भी प्यारा है। पैसे के लिए इन को कैसे बेच देवे। बड़ा से बड़ा प्रलोभन ठुकरा कर अपनी परम्परा अक्षय रखी। आर्य समाज की प्रतिष्ठा, महत्ता का रहस्य भी इसी में है। आज हमारे डी.ए.वी. कालेज, स्कूल, पाठशालाएं तथा गुरुकुल उसी नाम, मान तथा शान से चल रहे हैं।

किन्तु लुधियाना के आर्यसमाजियों की ओर से धनिकों के चन्द टकों के प्रलोभन में अपने आर्य मैडिकल स्कूल को कालेज बनाने की धुन में उसके नाम से आर्य शब्द को हटा देने के समाचार से सारा आर्य जगत् क्षुब्ध हो उठा है। यदि मुझे अपना आर्य नाम छोड़ कर टके मिलते हैं और मैं इन टकों पर अपने पुरातन नाम को बेच देता हूं तो इस से बढ़ कर और पतन क्या हो सकता है। न ही ऐसे लोगों को पैसा के लिए आर्य शब्द को बेचने की आज्ञा दी जा सकती है। उनके हाथ में यह संस्था प्रबन्ध करने के लिए दी गई है न कि उनके नामों की नीलामी करने का उन को अधिकार है। आर्यसमाज को ऐसा कालेज नहीं चाहिए जिस में आर्य शब्द की आत्मा को ही बेच दिया हो। पैसों के लिए बेचने वालों की मनोवृत्ति का परिचय मिल गया है। यह केवल एक नगर या संस्था का प्रश्न नहीं, समूचे समाज की गैरत को चैलेंज है। हमें ऐसा कालेज नहीं चाहिए जिस में आर्य शब्द को ही छोड़ना पड़े। प्रसन्नता है कि इस समाचार पर सारा आर्य जगत् जाग उठा है। आर्य सार्वदेशिक सभा देहली के महामन्त्री श्री ला० रामगोपाल जी शाल वाले भागे २ लुध्याना गये सारी स्थिति देखी। लुध्याना के आर्य भाई भी तथा अमृतसर व अन्य समाजों के सज्जन भी रोष से भर गये हैं। प्रस्ताव भी पारित होने लगे हैं। आर्यसमाज लक्ष्मणसर अमृतसर के प्रधान श्री पं० रुद्रदत्त जी शर्मा ने तथा अन्य भाईयों ने लेख भी लिखे हैं आर्य प्रतिनिधि सभा भी सक्रिय है। आर्यो! सावधान हो जाओ यह कार्य सर्वथा न होने देना। पैसों के बदले आर्य को बेचने वाले ये कौन हैं? —त्रिलोकचन्द्र

एक उत्तम सुझाव

आर्यजगत के गत सप्ताह के अंक में आर्यसमाज लारेंस रोड अमृतसर के प्रचार मन्त्री श्री वैद्य विद्यासागर जी ने अपना एक विशेष लेख लिखा है, जिस में आर्य जगत के तपोमूर्ति मूर्धन्य संन्यासी महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज के लिखित वेदनाभरे लेख 'भूखे को भोजन दो' का बड़े ही सुन्दर शब्दों में समर्थन करके समाजों, संस्थाओं एवं परिवारों का ध्यान एक आवश्यक बात की ओर दिलाया है। कि आर्य समाजें अपना पैसा सभा के वेद प्रचार केन्द्र में देने की बजाय इधर उधर के गौण कामों तथा अनेक स्वतन्त्र वृत्ति से घूमने वाले अपना अलग२ मठ, मन्दिर, डेरा, आश्रम तथा गुरुकुल बनाकर उसके लिए रात दिन घूम २ कर पैसा जमा करने वाले लोगों व साधुओं को दे देती हैं। इन के डेरा गृहस्थियों से भी शानदार, इन का बैंक बेलेंस बहुत होता है। सभाएं इसलिए कमजोर हैं। वेद प्रचार पात्र खाली तथा प्रचारकों की कमी है। लोग जब आजाद घूम २ कर काफी पैसा जमा कर लेते हैं तब वेद प्रचार में कौन दे। इस स्थिति को बदलना है। केन्द्र का ध्यान करें। श्री वैद्य जी का बड़ा सुन्दर सुझाव है। समाजें यदि इस ओर ध्यान देंवे तो बड़ा लाभ होगा।

पूज्य महात्मा जी

आर्य जगत् के तपोमूर्ति महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज आर्य समाज वजीर बाग श्रीनगर में कथा करने के बाद जम्मू पधारे वहां पर आर्य समाज पुरानी मण्डी जम्मू में चार दिन जनता को उपदेशामृत कराने के बाद पठानकोट आर्य समाज में पूर्व नियत अपने कार्यक्रम पर पधारे वहां की जनता को पांच दिन तक निरन्तर अपने प्रभाव भरे आध्यात्मिक प्रवचनों से आत्मविभोर करते रहे। दोनों नगरों के नरनारियों ने जीवन में कितना रस पिया, आनन्द से कैसा आनन्द पाया—यह तो वहां की जनता जानती है। महात्मा जी की रसना में, जीवन में सचमुच जादू है।

जिस भाषा में चाहो

पंजाब में भाषा समस्या राजनीतिक कारणों से जटिल बना दी गई है। वैसे कोई समस्या न थी यदि हिन्दी को उसका समुचित स्थान दिया जाता। दोनों भाषाओं में सरकारी पत्र सूचनाएं आदि प्रकाशित होते तो प्रांत को दो रिजनों के बनावटी भागों में बांटने की आवश्यकता न होती। न कटुता बढ़ती। अब कामरेड रामकृष्ण जी की सरकार ने यह आदेश जारी किया है कि जिस भाषा में भी चाहे प्रार्थना पत्र दिये जा सकते हैं उसी भाषा में ही उत्तर मिलेगा। उत्तम बात है। जनता को चाहिए कि इससे पूरा २ लाभ उठायें। जो अपने हाथ में है उस से तो लाभ उठाना कर्तव्य है। केवल कोसना पर्याप्त नहीं वरन कर्तव्य भी पालना चाहिए।

—त्रिलोकचन्द्र

आर्यों के सामाजिक और वैयक्तिक जीवन में पर्वों का सदा से स्थान रहा है। धरा पर सभी मानव जातियां किसी न किसी प्रकार का पर्व मनाती ही हैं। पर्व शब्द का अर्थ पूरक भी है और ग्रन्थि भी है। वह जहां आनन्द से पूरित करता है, वह ग्रन्थि होने से धारक भी है। ईख के रस को ईख की ग्रन्थि सुरक्षित रखती है और बांस आदि की दृढ़ता को उन की गांठें स्थिर रखती हैं। इसी प्रकार शरीर की स्थिति स्थापकता शरीर की ग्रन्थियों द्वारा सुरक्षित है।

श्रावणी आर्यों के प्रसिद्ध पर्वों में से एक महान पर्व है। यह पर्व वैदिक पर्व है। इस का सीधा सम्बन्ध वेद के अध्यापन और अध्ययन करने वालों से है। गृह्यसूत्रों के अनुसार इस पर्व का सीधा सम्बन्ध वेद और वैदिकों से दिखलाया गया है। यह पर्व जहां पर्व है वहां यह गृह्यकर्म भी है। गृह्यसूत्रों के अनुसार श्रावण कर्म भी इसी अवसर पर होता है और उपाकर्म वेदाध्ययन का प्रारम्भ होता है। चार मास वर्षा के होते हैं। इन में वेदाध्ययन चलता रहता था और पौष में जा कर उत्सर्ग किया जाता है। इसी आधार को ले कर आर्य समाज ने वेदसप्ताह का इस अवसर पर आयोजन किया। वेद के अध्ययन के मार्ग को आचार्य महर्षि दयानन्द सरस्वती ने प्रशस्त किया अतः उन के द्वारा स्थापित वेद प्रचारक आर्य समाज का यह कर्तव्य ही है कि वह वेद के प्रचार को बढ़ावे। श्रावणी नाम इस पर्व का क्यों है? इस का उत्तर यह है कि श्रवण नक्षत्र से युक्त पूर्णिमा को यह पर्व होता है अतः यह श्रावणी है। इसी श्रावणी पूर्णिमा के आधार पर ही इस मास का नाम भी श्रावण मास है। इस श्रावणी की भी विधि है और वह गृह्यसूत्रों और हमारी पर्वपद्धति

जीवन का अंग—स्वाध्याय

(ले० श्री. पं० वैद्यनाथ जी आर्य शास्त्री देहली)

में लिखी है—जो प्रत्येक आर्य समाज को करनी चाहिए।

यह सब होने पर भी कुप्रथाओं और सुप्रथाओं के बीच में चलने वाले आर्यों में भी श्रावणी के वास्तविक स्वरूप के विषय में कहीं २ पर अनभिज्ञता ही दिखलाई पड़ती है। हमारे पत्र पत्रिकाओं में भी ऐसी बातें कभी २ निकल जाती हैं। दीपावली के विषय में राम की लंका विजय के बाद की दीपावली कारण बताई जाती है और होली के विषय में प्रह्लाद का सम्बन्ध जोड़ा जाता है। ये दोनों ही कल्पनाएं भ्रान्त और गलत हैं। वस्तुतः ये दोनों ही गृह्यकर्म हैं...

वेदाध्ययन का इस पर्व में सीधा सम्बन्ध है। श्रावणी मनाने का एक उत्तम तरीका यह है कि वेदादि सच्छास्त्रों का स्वाध्याय इस पर्व से अवश्य चालू किया जावे। स्वाध्याय जीवन का अंग होना चाहिए परन्तु ऐसे पर्वों के अवसरों से प्रेरणा ले कर ही यदि हम इस प्रवृत्ति को बढ़ावें तो अच्छा हो। आर्यों के जीवन का स्वाध्याय एक अंश है। स्वाध्याय से प्रमाद का हमारे शास्त्रों में निषेध है। स्वाध्याय (Self Study) का ज्ञान के परिवर्धन में बहुत बड़ा महत्व है। शतपथ ब्राह्मण ११-५-१ में स्वाध्याय की प्रशंसा करते हुए लिखा गया है कि स्वाध्याय करने वाला सुख की नींद सोता है, युक्तमना होता है, अपना परमचिकित्सक होता है, उस में इन्द्रियों का संयम और एकाग्रता आती है और प्रज्ञा की वृद्धि होती है। यहां पर ब्राह्मण ग्रन्थ का प्रत्येक शब्द महत्व से भरा हुआ है। पुनः उसी ब्राह्मण में ११-५-७-१० में कहा गया है कि स्वाध्याय न करने वाला अब्राह्मण हो जाता है अतः प्रतिदिन स्वाध्याय करना चाहिए और ऋग यजुः साम, अथर्व आदि को पढ़ना चाहिए जिस से व्रत का भंग न होवे। ब्राह्मण ग्रन्थ स्वाध्याय को अन्यव्रतों की भान्ति एक व्रत बतला रहा है। शतपथ में ११-५-६-२ इस स्वाध्याय का ब्रह्मयज्ञ कहा गया है। इस की वाणी जुहू है मन उपभृत् है, चक्षु ध्रुवा है और मेधा स्रुवा है, सत्य इस का अवभृथ है। ऋग्वेद में स्वयं इस का सुन्दर वर्णन है। वर्षाकाल में मेंडक बोलते हैं। एक की बोली को दूसरा दोहराता है। यह उपमा ऋग्वेद में वेदपाठी ब्राह्मण को दी गई है। वस्तुतः वेद का मण्डूक शब्द और यह उपमा निदर्शन का महत्व लिए है। इस से सुन्दर सम्मिश्रण वेदवाणी, मण्डूक की वाणी और मानसून मेघस्थ वाणी का और क्या हो सकता है।

श्रावणी के साथ नये यज्ञोपवीत के धारण और पुराने के छोड़ने की भी प्रथा जुड़ी हुई है।...यह भी एक गृह्यसूत्रों के आधार पर परिपाटी है कि प्रत्येक प्रधान उत्तम यज्ञयाग आदिकर्मों के समय नया यज्ञोपवीत धारण किया जावे। उसी आधार की पोषिका यह श्रावणी पर यज्ञोपवीत बदलने की प्रथा भी है यज्ञोपवीत का आर्यों के संस्कार और कर्मकाण्ड में बड़ा ही महत्व है। इस के तीन धागे गले में पड़ते ही वह पितृऋण, देव ऋण आदि वर्तव्यों से अपने को बन्ध आदि पद इस सम्बन्ध में विशेष महत्व के हैं। आचार्य कुल में विद्यार्थी लाया जाता है— इस कर्मपूर्वक अतः यह उपनयन है। यज्ञ आदि उत्तम कर्मों के लिए विद्यार्थी इस से प्रतिज्ञात और अधिकृत होता है अतः यह यज्ञोपवीत है। इस से अनुशासन और व्रतों के पालन की प्रतिज्ञा में बद्ध होता है अतः यह व्रतबन्ध है।

आर्य समाज पुरानी मंडी जम्मू में वेद सप्ताह की धूम

जम्मू आर्य समाज पुरानी मंडी जम्मू में प्रति वर्ष की तरह इस वर्ष भी वेद सप्ताह लगातार रक्षाबन्धन से ले कर श्री कृष्ण जन्माष्टमी तक बड़ी धूम धाम तथा श्रद्धा से मनाया प्रतिदिन प्रातः ६ से ६ शाम ५ से ६॥ रात्रि ८॥ से १० बजे श्री पं. हरिश्चन्द्र जी शास्त्री को अध्यक्षता में बड़ी सफलता पूर्वक हुआ। आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब के वेद प्रचार के अधिष्ठाता श्री पं. खुशीराम जी लगातार आठ दिन वेद और यज्ञ की महानता पर प्रभाव शाली व्याख्यानों और श्री पं. मेला राम जी भजनीक के प्रभु भजनों ने वह समा बांधे रखा कि कोई उठने का नाम न लेता। इस यज्ञ की एक विशेषता यह थी कि हजार रुपय से ऊपर खर्चा होने पर भी बिना किसी से मांगे दानी सज्जनों ने स्वयं दान दिया यज्ञ की पूर्ण आहुति के पश्चात् ऋषि लंगर में सैंकड़ों प्रेमियों ने प्रेम पूर्वक भोजन किया।

कविराज विष्णु गुप्त
प्रधान मंत्री

अमूल्य वचन

★ आत्मा अमर है इस लिए मैं अमर हूं।

★ आत्मा को हथियार काट नहीं सकते इस लिए मैं मशीन गनों के भय से स्वतन्त्र हूं।

★ शरीर वस्त्र के सदृश है। आत्मा उसे सदैव बदलता रहता है

आर्यसमाज के प्राचीन पत्र—

पं० भीमसेन शर्मा का आर्य सिद्धांत

(ले०—प्रो. भवानीलालजी भारतीय एम.ए. गवर्नमैंट कालिज पाली)

★★★★★★★★★★★★★★★★★★★

(गतांक से आगे)

शोक का विषय तो यह है कि यज्ञ में पशुहिंसा का विधान न मानने वाले पं० भीमसेन ही कुछ वर्षों पश्चात् चूरू निवासी सेठ माधव प्रसाद खेमका के यज्ञ कराने के सिलसिले में अपने पूर्व निर्धाय मत के विपरीत सम्मति बना बैठे और आर्यसमाज से सदा के लिये विमुख हो गये। ऐसे अस्थिर मति और स्वार्थान्ध मनुष्यों के विषय में क्या कहा जाए ?

दिसम्बर १८६८ के अङ्क में एक ही लेख 'गंगादि तीर्थत्व विवेचन' छापा है। यह पृथक् पुस्तक के रूप में भी मुद्रित हुआ है। इस में गंगादि नदियों में स्नान करने से पाप-निवृत्ति होती है, इस पक्ष का खण्डन किया गया है। इस लेख में 'इम में गंगे यमुने सरस्वति शुतुद्रि' (ऋ० १०-७५-५) जैसे वेद मन्त्रों का अर्थ लिखते हुये सिद्ध किया गया है कि वेदों में गंगा, यमुना आदि जो वही वाचक नाम आये हैं उनका यौगिक अर्थ ही अभीष्ट हैं। इन नामों से भारतवर्ष में प्रवाहित होने वाली नदियों से मंत्रकर्ता ईश्वर का अभिप्राय नहीं है।

उपर्युक्त विवेचन से पाठकों को पं० भीमसेन शर्मा तथा उनके द्वारा सम्पादित आर्य सिद्धांत मासिक पत्र का एक सामान्य परिचय मिल जायगा। डाक-व्यय सहित इस पत्र का वार्षिक मूल्य केवल सवा रुपया था। यह सरस्वती यंत्रालय इटावा में छपता था, तथा इसके टाइटिल के दूसरे पृष्ठ पर ग्राहकों की नामावली भी यदा-कदा प्रकाशित होती रहती थी। जब पं० भीमसेन शर्मा ने आर्य-समाज को त्याग दिया तो उन्होंने आर्य सिद्धांत का प्रकाशन बन्द कर दिया और उसके स्थान पर 'ब्राह्मण सर्वस्व' नामक पौराणिक विचारों का पोषक पत्र प्रकाशित करने लगे। 'आर्य सिद्धांत' की फाइलें आर्य-समाज विषयक पुरानी जानकारी देने की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं इसमें दो मत नहीं हो सकते।

हिन्दी संस्कृत परीक्षायें

स्व० स्वामी वेदानन्द जी एवं स्व० स्वामी आत्मानन्द जी द्वारा संस्थापित 'विरजानन्द संस्कृत परिषद्' गुरुकुल झज्जर (रोहतक) की हिन्दी एवं संस्कृत भाषा के माध्यम द्वारा धार्मिक परीक्षायें इस वर्ष नवम्बर मास के आरम्भ में होगी निश्चित तिथि की सूचना बाद में ही जायेगी। आवेदन पत्र भेजने की अन्तिम तिथि १५ सितम्बर कर दी गई है। शीघ्रता करें।

इस विषय में पाठविधि, नियमावली एवं परीक्षार्थी आवेदन पत्र निम्न पते से मुफ्त मंगवायें—

ब्र० दयानन्द वेदाचार्य परीक्षा मंत्री विरजानन्द संस्कृत परिषद् गुरुकुल झज्जर (रोहतक)

शुभ समाचार

जयदेव आदर्श बड़ोदा के मालिक श्री शांति-प्रिय जी के ६६वें जन्म दिवस पर ६६ व्यक्तियों को "वैदिक धर्म का महत्व" नामक पुस्तक श्रावणी पर्व पर निशुल्क बांटी गई।

प्रादेशिक सभा का वेद प्रचार कार्य

आर्य समाज पालमपुर—६ से १० सितम्बर तक पं० ओम प्रकाश जी महोपदेशक की कथा। ११ से १३ सितम्बर तक उत्सव सम्पन्न हो रहा है। पं० ओमप्रकाश जी उपदेशक सभा तथा मेलाराम जी, बस्तीराम जी व जगतराम जी भजनीक पधार रहे हैं।

रामनगर (करनाल)—में २ से १० सितम्बर तक ठा० दुर्गासिंह जी तुफान का भजनों द्वारा प्रचार।

माडलटौन पानीपत—६ से १० सितम्बर तक पं० खुशीराम जी की कथा व हजारी लाल जी के भजन, ११ से १३ सितम्बर तक उत्सव पर पं० त्रिलोकचन्द्र जी शास्त्री महोपदेशक सभा तथा राजपाल चिमटा मंडली व श्री पं० रलाराम जी प्रधान प्रादेशिक सभा पधार रहे हैं।

आर्य समाज लक्कड़ बाजार शिमला—१४ से १७ तक पं० खुशीराम जी शर्मा वेद प्रचार अधिष्ठाता की कथा तथा हजारी लाल जी के भजन होंगे। १८ से २० सितम्बर तक उत्सव सम्पन्न हो रहा। इस अवसर पर श्री प० रलाराम जी प्रधान सभा तथा राजपाल चिमटा मंडली पधार रही है।

कडाघाट—का उत्सव २१ से २३ सितम्बर तक सम्पन्न हो रहा है शिमला का स्टाफ इस जलसे पर पधार रहा है।

सलोगढ़ा—२४ से २६ सितम्बर तक सम्पन्न हो रहा है। कडाघाट का स्टाफ पधार रहा है।

३ से ६ तक मदीनादांगी, ६ से १२ तक मोखरा, १३ से १७ तक खरकड़ा, १८ से २२ तक नांदल, २३ से २७ तक चुड़ाली, नंदगढ़ के जलसे श्री मूराराम जी, पं० प्रभुदयाल जी व हरिश्चन्द्र जी की देख रेख में सम्पन्न हो रहे हैं। —ज्ञानचन्द्र भाटिया सभा मंत्री

गांव फरमाणा जिला रोहतक में वेद प्रचार

२७ से ३१ अगस्त तक वेद सप्ताह श्री प्रभुदयाल जी आर्य व हरिश्चन्द्र जी भजनीक के निरीक्षण में मनाया गया। व्याख्यानों व भजनों की झड़ी लगी रही। प्रातः यज्ञ की ध्वनि से सारा गांव गूंज उठा। यज्ञोपवीत भी धारण कराए गए। चौ० बेगराज जी प्रधान, सरपंच ला० बालकराम जी, पं० रामकिशन जी, चौ. बलबीर सिंह जी व चौ. नेकीराम जी का उत्साह सराहनीय था इस अवसर पर सभा को वेद प्रचारार्थ ५१/- दान मिले।

आर्य समाज रम्बौली (करनाल)

की तरफ से श्री पं० त्रिलोक चन्द्र जी शास्त्री के सुपुत्र श्री दयानन्द को संस्कृत की एम.ए. में प्रथम स्थान पाने पर तथा श्री आशाराम जी की सुपुत्री संतोष कुमारी के एम. ए. एम.ओ. एल. की परीक्षा में अच्छे अंक लेने पर बहुत२ बधाई हो। इस अवसर पर वेद प्रचारार्थ ५/- सभा को भेजे हैं।

मंगतराम
प्रधान आर्यसमाज

वेद क्या हैं ?

(ले०—श्री दीवानचन्द जी एम. ए. ६३ कानपुर छावनी)

२३ अगस्त, १९६४, के 'आर्य जगत' में श्री गंगाप्रसाद जी का लेख 'वेद क्या हैं ?' के शीर्षक के पीछे रचा है। मैं भी इस विषय पर कुछ कहना चाहता हूं। मैं श्री गंगाप्रसाद जी के दृष्टिबिन्दु को अपनाने में असमर्थ हूं। मतभेद तो एक गौण बात है, मुझे यह भी प्रतीत होता है कि श्री गंगाप्रसाद जी ने तथ्य की उपेक्षा भी की है।

अपने लेख के पहले भाग में श्री गंगाप्रसाद लिखते हैं—'सृष्टि के आरम्भ में जब ईश्वर सृष्टि बनाता है तो मनुष्यमात्र की भलाई के लिये ऋषियों के हृदयों में वेदों का प्रकाश करता है सृष्टि के आरम्भ में चार ऋषि हुए। अग्नि के हृदय में ऋग्वेद का प्रकाश हुआ, वायु के हृदय में यजुर्वेद का प्रकाश हुआ, आदित्य के हृदय में सामवेद का प्रकाश हुआ। और अगिरा के हृदय में अथर्ववेद का प्रकाश हुआ। यह विवरण वही है, जिस से हमें स्वामी दयानन्द ने परिचित कर दिया है। साधारण आर्य समाजी का यही मन्तव्य है। इस विवरण में निम्न दो बातें महत्व की बाते हैं—

(१) अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा—चारों ऋषि भी एक स्तर पर हैं। उन में से हर एक को परमात्मा ने सीधा अपना प्रकाश दिया।

कुछ मंत्र एक से अधिक वेदों में मिलते हैं। इस का अर्थ यही है कि परमात्मा ने इन के विषय का प्रकाश एक से अधिक ऋषियों के हृदय में किया।

अपने लेख के अन्तिम भाग में श्री गंगा प्रसाद जी ने इन दोनों मान्यताओं को त्याग दिया है, और चारों वेदों और चारों ऋषियों की स्थिति में भेद किया है। पश्चिमी विद्वान तो ऐसा भेद करते ही हैं, परन्तु साधारण आर्य समाजी इसे स्वीकार नहीं करते। श्री गंगा प्रसाद लिखते हैं—

'आदित्य महर्षि ने ऋग्वेद के मन्त्रों को गानविद्या के अनुसार स्वर ताल आदि से ठीक कर दिया वही सामवेद कहलाया। यह नहीं, समझना चाहिये कि ऋग्वेद अलग है और सामवेद अलग। इसी प्रकार ऋग्वेद के ही मन्त्रों के आधार पर वायु ऋषि ने यज्ञ किया कौशल तथा व्यवहार के अन्य कृत्यों का प्रचार किया, उसका नाम यजुर्वेद हुआ। अंगिरा ऋषि ने ऋग्वेद के आधारभूत कुछ मन्त्रों का विस्तार से वर्णन किया। यह अथर्ववेद हो गया।

इस प्रकार ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद समकालीन हैं और एक ही वेद की चार शाखायें हैं।

लेख के इस भाग का अर्थ यह है कि मौलिक वेद एक ही है। एक स्थान पर श्री गंगाप्रसाद ऋग्वेद को भी दूसरे वेदों की तरह इस एक वेद का अंश कहते हैं, दूसरे स्थान पर ऋग्वेद को मूल वेद कहते हैं, और अन्य तीन वेदों को संकलन का पद देते हैं। जो मन्त्र इन तीनों वेदों में ऋग्वेद से नहीं लिये गये, वे केवल आदित्य, वायु और अंगिरा की, व्याख्या के रूप में, अपनी रचना हैं। इन तीनों ऋषियों को सीधा परमात्मा की ओर से कोई प्रकाश नहीं मिला, इन्होंने ऋग्वेद पर जो उनके सम्मुख प्रस्तुत था, कुछ काम किया। वे प्रचारक मात्र थे।

मुझे यह विचार स्वामी दयानन्द और आर्य समाज के स्वीकृत विचार से बहुत भिन्न दीखता है। श्री गङ्गा प्रसाद के लेख में दो विरोधी दृष्टिकोण प्रस्तुत किये गये हैं—

एक में साधारण आर्यसमाजी हैं, दूसरे में पश्चिमी आलोचकों में खड़े हैं। यदि तो वेदों का पर्याप्त भाग मनुष्यों की रचना है, तो आर्य समाज की मौलिक धारणा कि वेद ईश्वर का दिया प्रकाश हैं, कहां रहेगी ?

मैंने आरंभ में कहा है कि श्री गंगा प्रसाद जी ने तथ्य को भीर उपेक्षा की हैं। उन के लेख को पढ़ क पाठक पर यह प्रभाव पड़ता है कि वेद लगभग सारे ऋगवेद के अन्तर्गत विद्यामान हैं, इनकी स्वतन्त्र स्थिति कुछ नहीं। यह विचार तथ्य से बहुत दूर है। यजुर्वेद को लें। इसमें १९७५ मन्त्र हैं। जो मन्त्र ऋगवेद में भी मिलते हैं, उनकी सख्या शायद ३०० भी न होगी। यह कहना कहां तक युक्तियुक्ति है कि यजुर्वेद ऋगवेद का संकलन मात्र है ?

मुझे आशा है श्री गंगाप्रसाद इस विषय पर अधिक विचार करेंगे। उनकी वर्तमान स्थिति में तो मुझे अनिश्चता और आन्तरिक विरोध दीखते हैं।

जगमगाता सूर्य सा (नेहरू)

श्री वेद प्रकाश जी **M. A.** खन्ना

देश के परदेश के ध्वज झुक गये हैं,
जिस निधन पर प्राण जग के रुक गये हैं।
अस्त रवि भी यों विभा देता रहेगा,
चांद तारे अवनि अम्बर जगमगे गा॥

सिमिट कर जिस में मनुजता आ गई थी,
प्रीति की जिस में मधुरता छा गई थी।
किस जगह स्वाधीनता का अतुल सबल ?
क्या लुटाता है वहां भी शान्ति परिमल ?

दुखित उर उर हर नयन में अश्रुधारा,
प्रीति सागर रूप धर जल धर पधारा।
जिस जगत हित कर गया हरश्वास अर्पण,
ज्योति ले देगा विभा हर काल हर क्षण॥

भूल पाए गा नहीं वह पंचशील,
वह सपेरा जिस ने भुजगावलि कीली।
मौख्य शंकर शिव हलाहल घोल पीली,
शत्रुता, रण-विपद् सुरसा नीच लीली।

हम न श्रद्धा के सुमन तक धर सकेंगे,
द्वेष छल तज प्रेम यदि न भर सकेंगे।
सतत सेवा में नहीं यदि मर सकेंगे,
शान्ति वधु को प्रेम बन ना वर सकेंगे॥

★ यदि पुराना वस्त्र (शरीर) उतार दिया जावे तो कुछ हानि नहीं क्योंकि उस के बदले में बिलकुल नया वस्त्र मिल जाता है।

★ आत्मा अमर है इस लिए मैं अमर हूं।

स्वाध्याय एवं अ[illegible] आर्य विद्वानों की सेवा [illegible]र्य

(ले० पिंडीदास [illegible]ज्ञानी अमृतसर)

✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱

(गतांक से आगे)

इमं मे कुष्ट पुरुषं तमा वह तं निष्कुरु । तमु मे अगदं कृधि ॥

५-४-६

अर्थात्—हे कुष्ट ! औषधे (मे) मेरे (इम) इस (पूरुषं) पुरुष को (आ वह) आरोग्यता को प्राप्त करो, (त निष्कुरु) उसको रोग से मुक्त कर और (तं उ मे अगदं कृधि) मेरे इस पुरुष को रोग-मुक्त बनाये रख ।

देवेभ्यो अधि जातोऽसि सोमस्यासि सखा हितः । स प्राणाय व्यानाय चक्षुषे मे अस्मै मृड ॥

५-४-७

अर्थात—हे कुष्ट औषधे ! तू (देवेभ्यः) देवगण किरण समूहों से (अधिजात. असि) रस प्राप्त करके उत्पन्न हुआ है । और (सोमस्य) सोमलता का (सखा) मित्र के समान उसी देश में उत्पन्न होने से अथवा (सोमस्य सखा) सोम औषधि के समान होकर उस का सखा (हितः) और गुण में उसी के समान हितकारी है । (सः) वह तू (प्राणाय) शरीर के प्राण और (व्यानाय) शरीर में व्यापक व्यान वायु और (मे अस्मै) मेरे इस (चक्षुषे) चक्षु दोष को भी दूर करके (मृड) सुखी कर ।

उदङ् जातो हिमवतः स प्राच्यां नीयसे जनम् । तत्र कुष्ठस्य नामान्युत्तमानि वि भेजिरे ॥ ५-४-८

अर्थात—तू (उदङ्) उत्तर दिशा में (जातः) उत्पन्न होता है और हे कुठ ! तू (हिमवतः) हिमालय से (प्राच्यां) प्राची दिशा में रहने वाले (जनं) जनपदों में (नीयसे) लाया जाता है (तत्र) वहां उस पूर्व देश में (कुष्ठस्य) कूठ के (उत्तमानि नामानि) उत्तम-उत्तम रूपों को (विभेजिरे) पृथक् पृथक् विभक्त कर देते हैं अर्थात् सब कूठ की जातियों में से उत्तम-उत्तम जातियों को छांट लेते हैं ।

उत्तमो नाम कुष्ठास्युत्तमो नाम ते पिता ।
यक्ष्मं च सर्वं नाशय तक्मानं चारसं कृधि ५-४-९

अर्थात्—हे (कुष्ठ) कूठ (ते नाम उत्—तमः) तेरा नाम उत्तम है । (ते पिता उत्-तमोनाम) तेरा पालक भी उत्तम सूर्य या पर्वत सब से ऊपर विराजमान है, या ऊंचा है, तू (सर्वं यक्ष्मं नाशय) समस्त यक्ष्म रोगों को नाश कर और (तक्मानं च) तक्मा, कोढ़ रोग को (अरसं) निर्बल, विष-रहित (कृधि) कर ।

शीर्षामय मुपहत्या-
मक्ष्योस्तन्वो इरपः ।
कुष्ठस्तत् सर्वं निष्करद्
दैवं समहवृष्ण्यम् । ५-४-१०

अर्थात्—मैं (शीर्षे आमयम्) सिर के रोग को और (अक्ष्योः तन्वः रपः) आंखों और शरीर के दोष को (उप-हत्याम्) विनाश करूं (कुष्ठः) कूठ औषध (दैवं वृष्ण्यं) दिव्य औषधि के समान प्रभावशाली पुष्टिकरण होने के कारण (सम अह) बड़ी उत्तम रीति से (तत् सर्वं) वह सब कुछ (निष्करत्) कर देता है ।

नोट—मन्त्रार्थ श्री पं० जयदेव शर्मा विद्यालङ्कार जी के अथर्ववेद भाष्य से लिये गये हैं ।

परमात्मा करे इन पंक्तियों को पढ़कर किसी रीसर्च स्कॉलर के हृदय में प्रेरणा हो और वह पयत्न करके कोई ऐसा चमत्कार पूर्ण आविष्कार करने में सफल हो जिस से सहस्रों कुष्ट रोगियों को इस घृणित रोग से छुटकारा प्राप्त हो सके ।

दयानन्द बचनामृत

'माता, पिता तथा अध्यापक जन बालक को चोरी जारी से बचने की शिक्षा दें । उन्हें ऐसी शिक्षा दें जिस से आलस्य (और) प्रमाद उन के निकट न आने पावे । उन में मिथ्या-भाषण का दोष कदापि न आने पावे । उन से हिंसा, क्रूरता, ईर्ष्या, द्वेष और मोह आदि दुर्गुण दूर हो जायें और वे सदाचारी बने'

स्वामी सत्यानन्द जी

मनुष्य जन्म का महत्व

[लेखक—पं० भक्तराम जी (अफरीका वाले) जालन्धर]

✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱

काशी जी में उपदेश देते समय एक पंडित ने मनुष्य जन्म की महत्ता विषयक एक दृष्टांत दिया था । एक घसियारा, घास की पोटली सिर पर उठाये नगर की ओर चला आ रहा था । उसके मार्ग में एक चिन्तामणि रत्न पड़ा हुआ चमक रहा था । वह घसियारा जब चलता हुआ उस रत्न के समीप आया तो उसको यह बात सूझी कि अंधों की भान्ति चल कर के देखना चाहिए कि वे कैसे चला करते हैं ? वह अपनी दोनों आंखें बन्द किये चलता हुआ उस स्थान से आगे निकल गया जहां वह रत्न पड़ा हुआ था । जब उसने आंखें खोलीं तो उसको पीछे से आता हुआ एक और पथिक आ मिला जिसके हाथ में रत्न चमचमा र .

पूछने पर जब उस घसियारे ने यह जाना कि इस के हाथ में चिन्तामणि है और उसको मार्ग में पड़ा हुआ वहां मिला है जहां से मैं आंखें बन्द करके आगे निकल आया हू तो वह अपने कर्म पर बहुत ही पछताया । उसने अपने आपको धिक्कारते हुए बड़े दुःख से कहा कि यदि मैं आंखें बन्द न करता तो यह रत्न मुझे मिल जाता इसकी प्राप्ति से मेरा सारा दारिद्र्य दूर हो जाता और मेरे ऐश्वर्य का पारावार न रहता ।

जैसे उसके उस समय के पश्चाताप से उसका कुछ कार्य सिद्ध नहीं हो सका, ऐसे ही जो जन प्रमादवश ज्ञान से, भक्ति से, ईश्वर भजन से और सुकृत कर्म करते आंखें मूद लेते हैं उनको फिर मानव तन प्राप्त करना महा कठिन हो जाता है ।

—

वेद प्रचारार्थ दान
मास सितम्बर १९६४

आर्यसमाज उकलाना जि.
हिसार २४/- रु०
,, बडेसरा ,, ५६/- ,,
,, मुलाना जि.
अंबाला ७०/- ,,
,, ठाकुर पुरा ,, २०/- ,,
,, माडलटौन ,, २००/- ,,
यमुनानगर
,, टिटौली जि.
रोहतक ६३/०० ,,
,, फरमाणा ,, ४५/- ,,
,, लक्ष्मणसर
अमृतसर १२५/- ,,
,, डा० यशवन्त सिंह पौंटा
(हिमाचल प्रदेश) १००/- ,,

—ज्ञानचन्द भाटिया

'आर्यजगत् की गैरत को चैलैञ्ज

लुधियाना मैडिकल स्कूल के कालज में परिवर्तन होने के शुभ समाचार से आर्यजगत में हर्ष की लहर दौड़ गई परन्तु इसके नाम के साथ से 'आर्य' शब्द उड़ा देने की दुःखद सुचना से हृदय को असह्य चोट लगी। हर ओर से इसके विरुद्ध रोष और विरोध प्रकट किया जा रहा है। किसी अदूरदर्शी अनार्य व्यक्ति को 'आर्य' शब्द से चिढ़ हो यह समझ में आ सकता है परन्तु हमारे विस्मय की सीमा न रही जब हमें ज्ञात हुआ कि इस के लिए आर्यसमाज लुधियाना के कार्यकर्ता जिम्मावार हैं जो इस संस्था की उन्नति के लिए 'आर्या' शब्द को कुर्बान करने के लिए तैयार हो गए हैं। संस्थावाद ने आर्यसमाज को कितनी हानि पहुँचाई है यह इसका मुंह बोलता चित्र है। संसार को आर्य बनाने के स्वप्न देखने वाले आर्य भाई इतनी सी बात के लिए, वर्षों से इस संस्था के साथ चले आ रहे 'आर्य' शब्द पर हड़ताल फेरने को तैयार हो जाएं, यह आर्यसमाज की हत-भाग्यता की पराकाष्ठा है।

आज से लगभग चालीस वर्ष पूर्व अमृतसर के आर्य सज्जनों ने दयानन्द की हस्पताल के नाम से एक ऐलोपैथिक हस्पताल जारी किया जो आज तक पूरी सफलता के साथ चल रहा है। इसके प्रबन्ध में बहुत-सी तबदीलियां आ चुकी हैं। इसके अधिकांश आर्य समाजी कार्यकर्ता इस संस्था से पृथक हो गये और उनके स्थान पर भिन्न-भिन्न विचारों वाले सज्जन सम्मिलित हो गए हैं, जिसका कुछ प्रभाव संस्था की नीति पर भले ही पड़ा हो, परन्तु नये प्रबन्धकों ने इस संस्था के नाम के साथ चले आ रहे दयानन्द शब्द को उड़ाने का विचार तक नहीं किया अपितु पुरानी प्रथा के अनुसार पर्चियों के पीछे आर्य समाज के नियम बराबर छपते चले आ रहे हैं। इस सद्भावना के परिणाम स्वरुप अमृतसर का यह हस्पताल दिन दुगनी और रात चौगुनी उन्नति कर रहा है। लुध्याना के आर्य मैडिकल कालज के अधिकारियों को इससे शिक्षा लेनी चाहिये। 'आर्य' शब्द एक बहुत ऊंचा और विस्तृत शब्द है, सभी हिन्दु तथा भारत वासी इसके अंतर्गत आ जाने के अतिरिक्त यूरोपियन देशों के अधिकांश लोगों के लिये गर्व का कारण है फिर न जाने, लुध्याना की इस संस्था के अधिकारियों को साम्प्रदायवाद से बहुत ऊंचे 'आर्य' शब्द में क्या आपत्ति दिखाई दी है विशेषतः जबकि वहीं लुध्याना में कृश्चियन मैडिकल कालज तथा गुरु नानक ऐञ्जिनियरिङ्ग कालज अपने साम्प्रदायिक नामों के साथ चल रहे हैं और उन्हें सरकार की ओर से अधिक से अधिक सहायता और सुविधायें मिल रही हैं। निसंदेह आर्य शब्द के विरुद्ध यह निर्णय कैरों शाही की साम्प्रदायिक नीति का परिणाम प्रतीत होता है, जिस पर पुनः विचार करके अधिकारियों को इसे शीघ्रातिशीघ्र रद्द करने की चेष्टा करनी चाहिये।

समस्त देश विशेषतः पंजाब की आर्य जनता के लिये यह विषय अत्यन्त चिन्ता और रोष का कारण बन रहा है। अनेकों आर्य भाई इसके लिये भूखहड़ताल करने और प्राणोंकी बाजी लगाने की तैयारियां कर रहे हैं। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री श्री लाला रामगोपाल जी शाल वाले तथा श्री वीरेन्द्र जी सम्पादक "प्रताप" स्वयं हालात का अध्ययन करने के लिये लुध्याना पहुंचे और इस में पूरी दिलचस्पी ले रहे हैं। श्री प्रोफैसर [illegible] आर्य प्रतिनिधि [illegible] इस के सम्बन्ध [illegible] स्कूल के अधिक [illegible] पर लाने का [illegible] देश भर की आर्य जनता एवं आर्य समाजों को अपने नेताओं की आज्ञा पर फूल चढ़ाने और हर सम्भव कुर्बानी करने के लिये तैयार रहना चाहिये।

हमें विश्वास है कि आर्य मैडिकल स्कूल के अधिकारी दूर दर्शिता और बुद्धिमत्ता से काम लेते हुए शीघ्र यह घोषणा कर देंगे कि "यह स्कूल कालज बनता है या नहीं, इसके साथ से "आर्य" शब्द किसी अवस्था में भी हटाया नहीं जायेगा" अन्यथा इसके विरुद्ध एक जबर्दस्त तोफान उठेगा, [illegible] से नहीं सम्भल [illegible]

[illegible] शर्मा
प्रधान आर्य समाज
[illegible]मयासर, अमृतसर

ईसाई व मुस्लिम दो युवतियों की शुद्धि व विवाह

आर्य समाज गोविन्द नगर कानपुर में एक ईसाई युवती कु० कहेरा व एक मुस्लिम युवती [illegible] की उनकी इच्छानुसार श्री देवीदास जी आर्य समासद महापालिका व मन्त्री केन्द्रीय आर्य सभा कानपुर ने शुद्ध करके वैदिक धर्म में प्रवेश कराया। और इन के नये नाम क्रमशः सुषमा व सावत्री रखा। लगभग २००० आदमियों की उपस्थिति में श्री आर्य ने उनको एक-एक प्रति सत्यार्थ प्रकाश भेंट करते हुए वैदिक धर्म की विशेषताएं बताई। इन का विवाह भी दो युवकों के साथ इनकी इच्छानुसार श्री सुशील कुमार श्री वास्तव व श्री प्रेम दास के साथ कराया गया।

देवीदास आर्य
मन्त्री

आवश्यकता

आर्य प्रादेशिक सभा को कुछ उपदेशकों और भजनीकों की आवश्यकता है। वेतन योग्यतानुसार दिया जायगा। सभी प्रार्थी अपने-अपने प्रमाण पत्रों सहित प्रार्थना पत्र मन्त्री प्रादेशिक सभा निकट कचहरी के पते पर भेजें। प्रार्थना पत्रों में आयु, अनुभव, शिक्षा विवरण विस्तार सहित हो। प्रार्थना पत्र १५ सितम्बर तक आ जाने चाहिएं।

—मन्त्री सभा

आर्ययुवक समाज डी.ए.वी. कालिज चण्डीगढ़ का चुनाव

प्रिंसीपल श्री त्रिलोकीनाथ जी—संरक्षक, „ जोगेन्द्रसिंह यादव—अध्यक्ष „ अभयराम मौर्य (प्री० इंजी०)—मन्त्री, श्री देश दीपक चौधरी (प्री०इंजी०)—उपमन्त्री श्री अनूपसिंह (पी०मैडी०)—अधिष्ठाता श्री बाबूराम गुप्ता—कोषाध्यक्ष, „ इन्दुशंकर सूद—प्रचारक, „ श्री केवल कृष्ण—अंतरंग सदस्य, श्री भूपसिंह अंतरंग सदस्य, श्री केसराम यादव—अंतरंग सदस्य, श्री भूपसिंह-सदस्य, विद्यार्थी सभा—कालेज श्री केसराम यादव—सदस्य विद्यार्थी सभा—कालेज।

—अभयराम मौर्य
मन्त्री आर्ययुवक समाज

शोक समाचार

प्रादेशिक सभा के उपदेशक श्री चन्द्रसैन जी आर्य हितैषी की पूज्या माता का कल ५-९-६४ को रात के ८॥ बजे स्वर्गवास हो गया है। आर्यजगत् स्वर्गीय आत्मा की सद्गति के लिए तथा उनके परिवार को धैर्य व शान्ति के लिए प्रभु से प्रार्थना करता है।

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित साप्ताहिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टैलीफोन न० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 12

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे 29-9-64 वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक ३८) १२ आश्विन २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०— २७ सितम्बर १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

वसन्त इन्नु रन्त्य:

हे लोगो ! जीवन में कभी उदास न होना। नाना प्रकार की अवस्थाएं आती रही हैं। देखो ! यह वसन्त ऋतु भी हमें प्यारा है, बड़ा सुन्दर है, रमणीय मालूम होता है। नानाविध रंगबिरंगे फूल खिलते हैं। और

ग्रीष्म इन्नु रन्त्य:

यह गर्मी की ऋतु भी हमें प्यारी है तपाने और झुलसाने वाली गर्मी से भी डरना न चाहिए। इस से भागना नहीं चाहिए। यह भी प्यारी समझो। जीवन में ऐसी दशा आने पर उदास निराश कभी मत हो जाना।

वर्षाण्यनु शरदो हेमन्त

वर्षा की मौसम हो या सर्दी हो या बरफ गिरा कर शून्य बना देने वाली हेमन्त की मौसम आ जाये—जीवन में सारी रमणीय हैं, सुन्दर व प्यारी हैं। रथ के पहिये के समान जीवन चक्र भी घूमता रहता है कभी वसन्त कभी हेमन्त सब प्रिय है।

सा म वे द से

वे दा मृ त

ओ३म् यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम्
अग्निष्टत्स्विष्टकृद्विद्यात्सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे।
अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वं प्रायश्चित्ताहुतीनां
कामानां समर्द्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा॥
इदमग्नये स्विष्टकृते इदं न मम॥ शतपथ कां. १४-९-४-२४

अर्थ—हे प्रभो ! (यत्) जो (अस्य) इस (कर्मणः) कर्म में यज्ञादि शुभ कर्म के बारे में मैंने (अत्यरीरिचम्) अधिक कर दिया है (यद्वा) अथवा (न्यूनम् इह) थोड़ा न्यूनता वाला यहां (अकरम्) किया है। (अग्निः) अग्निमय परमेश्वर (स्विष्टकृत्) इष्ट कार्यों को करने वाला (विद्वान्) जानता है (सर्वं स्विष्टम्) सारे इष्ट कर्मों को और वह प्रभु मेरे (स्विष्टम्) इष्ट कर्म को (सुहुतम्) उत्तम (करोतु) करे (मे) मेरे लिए। उस (अग्नये) अग्नि के लिए (स्विष्टकृते) उत्तम कर्मों का सम्पादन कराने वाले तथा (सुहुतहुते) भली भांति जिसे आहुत किया गया है (प्रायश्चित्ताहुतीनाम्) सारी प्रायश्चित्त की आहुतियों की और (कामानाम्) कामनाओं की (समर्द्धयित्रे) बढ़ाने के लिए हो ! (सर्वान्) सारे (कामान्) कामनाओं को (समर्द्धय) बढ़ाओ—

भाव:—हे प्रभो ! मैंने इस शुभ यज्ञादि कार्य में यदि कुछ ज्यादती कर दी है अथवा कोई कमी हो गई है, उसे आप भली-भांति जानते हो मेरे इष्ट कार्यों के आप ही प्रेरक हो, ये सारे आहुत हों। हे अग्निमय देव ! प्रत्येक कार्य की वृद्धि के लिए तथा कामनाओं की पूर्ति के लिए आप से ही आशी: मांगता हूं। आपकी कृपा सदा साथ हो—सं.

ऋषि दर्शन

सत्यं न्यायं विज्ञातवान्

जिस मनुष्य का जीवन सत्य से भरा है, न्याय और न्याय करने वाला है और ज्ञान से युक्त है। कभी किसी काम में असत्य नहीं कहता व करता, अन्याय नहीं करता तथा ज्ञान से परे नहीं होता है—

स राजसभामर्हति

ऐसा सत्यकर्मी, सत्यधर्मी, न्यायप्रिय ज्ञानी विद्वान ही राजसभा का सदस्य, अधिकारी तथा शासन के योग्य हो सकता है। ऐसे गुण वाले व्यक्ति ही राज्यसभा के सभासद होने या मन्त्रिमण्डल में जाने का अधिकारी हैं।

विदित सर्व व्यवहारान्

जिन लोगों को राज्य के भिन्न-भिन्न विभागों के कार्यों का ज्ञान है, चतुर हैं व योग्य हैं, जो राज्य के प्रबन्ध में तथा कार्यों में कुशल हैं—ऐसे निपुण लोगों, उत्तम अधिकारियों को ही राज्य के कार्यों में सदा लगाना चाहिए।

भा ष्य भू मि का से

अधिष्ठाता—श्री संतोषराज जी सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

आध्यात्मिक चर्चा—

ब्रह्म मुहूर्त्त और ब्रह्म यज्ञ

(प्रा० भद्रसेन जी दर्शनाचार्य वि० वै० शोध संस्थान होश्यारपुर)

(गतांक से आगे)

अब प्रश्न उपस्थित होता है कि मानव जीवन की दिनचर्या में सब से बड़ा कार्य कौन सा है? जिसको ब्रह्म मुहूर्त में स्थान देना चाहिए। इस दृष्टि से जब हम सांसारिक वस्तुओं पर विचार करते हैं, तब विचार के अनन्तर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि संसार की अन्य वस्तुओं की अपेक्षा आत्मा-अपनापन महान है। सांख्य दर्शन में कपिल मुनि जी ने जीवात्मा की सिद्धि के लिए अनेक युक्तियां दी हैं, उन में से एक युक्ति है 'परार्थत्वात्' संसार की जितनी प्राकृतिक वस्तुएं हैं वे सब परार्थ किसी दूसरे के लिए हैं अपने पन के लिए नहीं हैं जैसे खाट, मकान, वस्त्र आदि, वस्त्र का अपना स्वतः के लिए कोई प्रयोजन नहीं है, उस का उपयोग दूसरे के लिए होता है। इस युक्ति के आधार पर प्रस्तुत प्रकरण में हम कह सकते हैं कि आत्मा संसार की अन्य वस्तुओं की अपेक्षा श्रेष्ठ है, क्योंकि इन का उपयोग आत्मा के लिए है, आत्मा का इन के लिए नहीं। सांसारिक सब वस्तुएं साधन हैं, शरीर भी साधन है और आत्मा साध्य है, साधन की अपेक्षा साध्य सदा श्रेष्ठ होता है, क्योंकि साधन सदा ही साध्य की सिद्धि के लिए होता है। प्रतिदिन हम व्यवहार में देखते हैं कि प्रत्येक बुद्धिमान अवसर आने पर अन्य वस्तुओं की अपेक्षा आत्मा की प्रथम सुरक्षा करता है, अपितु आत्मा की रक्षा के लिए अन्य वस्तुओं का बलिदान करने के लिए भी सर्वदा उद्यत रहता है, विशेष रूप से आपत्ति काल में, इसी रहस्य को बोल चाल की भाषा में 'जान बची लाखों पायें' शब्दों द्वारा व्यक्त किया जाता है। अपितु धन की तो बात ही क्या पुत्र कलत्र को भी आत्मार्थ न्योछावर कर के 'जान बची लाखों पाये' को चरितार्थ किया जाता है। सम्भवतः किसी नीतिकार ने इसी भाव को 'आत्मार्थे पृथिवीं त्यजेत्' के द्वारा व्यक्त किया है। संसार में बन्दरी अपने बच्चों से सब से अधिक प्यार करती है, यहांतक कि यदि दुर्भाग्यवश बच्चा मर भी जाये पुनरपि उस को अपने से अलग नहीं करती चाहे उस में से दुर्गन्ध भी क्यों न उठने लग जाये। उस के सम्बन्ध में भी सुनने में आता है कि यदि रेगिस्तान में दोपहर के समय तपती रेत पर बन्दरी को छोड़ दिया जाये, वही बन्दरी जो अपने मृत बच्चे को अपने से अलग करने को तैयार नहीं होती थी, अपने प्राणों की रक्षार्थ और कोई चारा न देख कर जीवित बच्चे को अपने नीचे रख कर स्वयं उस के ऊपर बैठ जाती है। इस उदाहरण से आत्मा की महानता अन्य वस्तुओं को अपेक्षा सरलता से समझी जा सकती है।

बृहदारण्यक उपनिषद में आता है, याज्ञवल्क्य महर्षि जब संन्यास आश्रम में प्रवेश करने लगे तो उन्होंने अपनी पत्नी मैत्रेयी से कहा प्रिये! तुम दोनों आपस में घर की वस्तुएं बांट लो, कहीं मेरे बाद कभी विवाद न हो। मैत्रेयी ने पूछा-यदि धन धान्य से पूर्ण सारी पृथिवी मेरी हो जाये तो क्या मुझे वह वस्तु मिल जाएगी, जिसे प्राप्त करने के लिए आप उद्यत हैं? महर्षि ने कहा जैसे धन वालों का सानन्द जीवन होता है वैसे ही तेरा जीवन हो जायेगा परन्तु 'अमृतत्वस्य तु नाशास्ति वित्तेन' धन से अमरत्व प्राप्ति की आशा नहीं की जा सकती। महर्षि याज्ञवल्क्य के उत्तर को सुन कर मैत्रेयी ने जो स्वर्णिम शब्द कहे वे वस्तुतः ही भारतीय संस्कृति के लिए गौरव का विषय है। मैत्रेयी ने कहा—'येनाहं नामृता स्यां किमहं तेन कुर्याम, यदेव भगवान् वेद तदेव मे ब्रूहि' जिस को प्राप्त कर के मैं अमर न हो जाऊं, उस को प्राप्त करूं—मुझे तो अमरत्व के पथ का ही उपदेश कीजिये। महर्षि ने आत्म तत्व का उपदेश करते हुए समझाया कि संसार में व्यक्ति पति, पत्नी, पुत्र, धन आदि से 'आत्मनस्तु कामाय' अपने पन के लिए प्यार करता है, न कि उन के प्रयोजन के लिए। अतः आत्म तत्व का श्रवण-मनन और निदिध्यासन करना चाहिये।

जहां बृहदारण्य को पनिषद् के इस प्रकरण से आत्म तत्त्व की महिमा को समझा जा सकता है, वहां दूसरे प्रकार से भी आत्म तत्त्व की महानता को हृदयंगम कर सकते हैं। आज संसार का प्रत्येक व्यक्ति खून पसीना एक करके दिन रात धन कमाने में लगा हुआ है। यदि हम पूछते हैं, क्यों भाई! आप न तो मूसलाधार वर्षा की परवाह करते हैं, और न ही आप को गर्मी सर्दी की चिन्ता है, हर प्रकार की तकलीफ उठा कर यथा कथा जो आप धन कमाने में जुटे हुए हैं, यह सब किस लिए? तब प्रायः सब का एक ही उत्तर है, कि जिस से अपने और अपने परिवार के शरीर की पालना, पोषण कर सकें। हम यहां तक ये सोचने का कष्ट करते हैं कि हम इतने कष्ट उठाते हैं धन कमाने के लिए, धन कमाते हैं खाने पीने-पहने के लिए, और खाते-पीते

(शेष पृष्ठ ८ पर)

वेद मन्त्र

ओ३म् यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव।
य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

दुर्मिल वृत्त—

भव-सागर-तारक! धारक हे!
जगती जड़-चेतन-संहृत ये,
सब से पहिले तव राज प्रभो!
इक ही अनुशासन राजत है॥

दृढ़ जो प्राण-अप्राण्य-मही,
सुनियन्त्रित है महिमा स्वक से,
इस का भव-सागर तारक हे!
प्रभु तू इक भूप विराजत है॥

तोटक वृत्त—

नर औ सुरभी-तनु को रचते।
सुख-वैभव जीवन में भरते॥
हम जीव विशुद्ध बनें विचारें।
ध्रुव-धर्म धरें शुभ-भक्ति करें॥

विद्यासागर शर्मा दयानन्द मठ, दीनानगर (गुरदासपुर)

सम्पादकीय–

आर्य जगत

वर्ष २४] रविवार २०२१, २७ सितम्बर १९६४ [अंक ३८

कर्तव्य और अधिकार

आर्यसमाज एक सर्वजनीन तथा जागती हुई संगठित संस्था है। इसे अपने कर्तव्य पथ पर निरन्तर आगे बढ़ने का सदा ध्यान रहता है। समय और सरिता के प्रवाह के समान अपने कार्य में प्रगति करते हुए इसे किसी की भी प्रतीक्षा नहीं होती कि कोई इस के साथ चलता है या नहीं। समाज ने अपना निश्चित किया कर्तव्य निभाया तथा निभाता जा रहा है। साथ २ यह न्याय पर आधारित अधिकारों के लिए भी पूरी शक्ति से संघर्ष करता रहता है। दोनों बातें इस के जीवन में साथ २ चलती हैं। समाज स्वयं ही शानदार विशाल आंदोलन है। बिना किसी भी पक्षपात के अच्छी बातों की प्रशंसा तथा बुरी बातों का विरोध करने में आगे रहता है। यह विशेषता इस की परम्परा रही है। इस के लिए गौरव का विषय है। अखिल भारतीय कांग्रेस के प्रधान श्रीयुत कामराज जी अभी २ पंजाब के दौरे पर आये थे। उन का प्रधान के नाते इस प्रांत में प्रथम बार ही आना था। जनता ने बड़े चाव उत्साह से दिल खोल कर उनका सम्मान स्वागत किया। जहां २ गये वहां नगर खूब सजाये गये। सम्मान द्वार बनाये गए। लाखों की थैलियां भी भेंट की गईं। हमारे प्रांत की अपने अतिथि का दिल खोल कर स्वागत करना पुरानी परम्परा रही है। इस में सारा भारत अपनी परम्परा को निभाता आ रहा है। लाखों की भीड़ ने सम्मान किया। पुष्पमालाएं भेंट की। अमृतसर में उस दिन अपनी आंखों से सारा दृश्य देखा। श्री कामराज के प्रति लोगों की बड़ी श्रद्धा है आर्यसमाज ने भी अपना कर्तव्य शानदार ढंग से निभाया। अमृतसर में नगर व जिला की सारी आर्यसमाजों की संगठित संस्था केन्द्रीय आर्य सभा है। उस के प्रधान श्री केशवचन्द्र जी हैं। उस सभा में आर्यसमाज लारेंस-रोड, आर्य समाज लक्ष्मणसर, आर्यसमाज श्रद्धानन्द बाजार, आर्यसमाज लोहगढ़, पुतलीघर, माडलटाऊन, नवांकोट आदि सारे सज्जन हैं। बड़ा सुन्दर कार्यक्रम था उस दिन। श्री मान्यवर कामराज जी का स्वागत करने, मानपत्र भेंट करने तथा अपनी बातें बताने एवं महर्षि दयानन्द जी के अमर ग्रन्थ भेंट करने का बड़ा उत्तम आयोजन किया गया था। समय के पूर्व ही प्रबन्धकों से स्वीकृति ले रखी थी। आर्यसमाज श्रद्धानन्द बाजार के द्वार के बाहर बड़ी सुन्दर वेदी तथा स्वागत द्वार बनाया गया था। नगर के सारे समाजों के भाई बहिन भारी संख्या में उपस्थित थे। जब श्री कामराज जी की मोटर आकर रुकी तो भारत माता की जय, ऋषि दयानन्द की जय के साथ श्री कामराज जी का स्वागत करते हुए प्रधान श्री कैप्टन केशव चन्द्र जी ने पुष्पमालाएं सभा की ओर से उनके गले में डालीं। मन्त्री श्री गुरचरण दत्त जी ने भी माला डाली। अन्य सज्जनों ने भी बहिन भाग्यवती ने तिलक लगाया। श्री पं० रुद्रदत्त जी शर्मा ने मानपत्र पढ़ा। श्री प्रो० वेदव्रत जी एम० ए० ने श्री कामराज जी को अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश बड़ा तथा ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका भेंट की। अभिनन्दन पत्र भी भेंट किया गया। भारी भीड़ थी। बहुत ही प्रभावशाली दृश्य था। आर्यसमाज के संगठन, अनुशासन कार्य तथा प्रभाव को देखकर श्री कामराज जी तथा पंजाब के मुख्य मन्त्री श्री रामकृष्ण जी बड़े प्रभावित हुए। अमृतसर के आर्यसमाज के सारे मान्य भाई बहिनों का विशेष धन्यवाद किया गया। मानपत्र में समाज की मांगें हैं। —त्रिलोकचन्द्र

कमी केवल भावना की

****

आर्य समाज के पास किस बात की कमी है? वेद जैसा ईश्वरीय ज्ञान इस के पास है। महर्षि दयानन्द जैसा देवता इस का संस्थापक है। विशाल संगठन है। बड़े-बड़े त्यागी तपस्वी नेता इसके पास हैं। बड़ी भारी वेदी है संस्थाओं का जाल बिछा हुआ है। राजनीति, धर्म, शिक्षा, समाज सुधार आदि सब क्षेत्रों में इसके बड़े प्रसिद्ध विद्वान् कार्य करते हैं। संस्थाओं में पढ़ने वाले छात्र-छात्राओं की भारी संख्या है। ये हमारी शानदार छावनियां हैं। आज सारे देश में आर्यसमाज के कार्य के लिए सबके दिल में बड़ा ही मान है। जिसमें जीवन निर्माण के कार्य में देखा जाये आर्यसमाज के महारथी आगे ही आगे चलते तथा जनता का नेतृत्व करते दिखाई देते हैं। जो काम आर्यसमाज आज आरम्भ करता है, अन्य संस्थाएं उसी को बाद में आरम्भ करके समाज की दूर दर्शिता के सामने मस्तक झुका देती हैं। आर्यसमाज के लिए यह बड़े गौरव की बात है। किसी बात की भी कमी नहीं।

किन्तु-एक न्यूनता प्रतीत होने लगी है जिसके कारण समाजके कामों में पुराने युग की प्रगति दिखलाई नहीं देती। सब कुछ होते हुए भी गाड़ी तेजी के साथ आगे नहीं बढ़ती। वह है भावना की कमी। जितने भी पुराने युग के आर्य सज्जन हैं। उनके जीवन में इस वृद्धावस्था में भी कितना उत्साह, समाज प्रेम है—यह उनके पास बैठने से मालूम होता है। अमृतसर दयानन्द नगर लारेंस रोड के वृद्ध ला० जगतराम जी के अन्दर समाज के लिए कितनी लगन, उत्साह है, मनुष्य देख २ कर चकित हो जाता है। ब्रह्मा रंगून में उन्होंने कितना काम किया। अब शरीर से तो चाहे वृद्ध हैं पर इस हालत में भी मन व विचारों में यह समाज प्रेम कितना ठाठें मारता है यह देख कर तथा उनके विचार सुन कर मन गद्गद् प्रसन्न होता है। यह एक विचार है कि जब महात्मा हंसराज जयंती मनाई जाये तो पंजाब के इस प्रकार के पुराने समाज के दीवाने वृद्धों के सम्मान करने तथा उनके विचारों से प्रेरणा प्राप्त करने का भी एक सम्मेलन कार्यक्रम रखा जाये ऐसे सज्जनों से कितनी स्फूर्ति मिलती है। भावना कम होती जाती है। हमारे पास कितने स्कूल हैं, कालेज हैं, गुरुकुल तथा अन्य संस्थाएं हैं पर उन में भावना वाले कितने सज्जन हैं। यदि समाज प्रेम तथा धर्मभाव हो तो समाजों के साप्ताहिक सत्सङ्गों में इतनी भीड़ हो कि बैठने का स्थान भी न मिले। किन्तु ऐसी भावना वाले कम हैं। जब तक दिल में श्रद्धा न हो तो

(शेष पृष्ठ ६ पर)

जीवन को यज्ञमय बनाओ

(लेखक श्री भक्त राम जी अफ्रीका वाले जालन्धर)

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻:✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

आर्य समाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती यज्ञादि सुकर्मों में बड़ी श्रद्धा रखते थे। इन का प्रचार करने में वह सदा तत्पर रहते थे। 'यज्ञ' शब्द के तीन अर्थ हैं—देव पूजा, सङ्गति करण और दान 'देव' शब्द के अर्थ प्रकाश—स्वरूप, द्योतक—प्रकाशक के हैं। वेद-मन्त्रों को भी देव कहते हैं, क्योंकि इन से विद्याओं का प्रकाश होता है। 'देव' शब्द का अर्थ परमेश्वर भी है। परमात्मा ही से सूर्यादि प्रकाशक पदार्थ प्रकट हुए हैं। ज्ञानी जन भी अनेक गुणों और विद्याओं के प्रकाशक होते हैं इस लिए 'देव' शब्द विद्वानों के लिए भी प्रयुक्त होता है। यज्ञ में परमेश्वर और मन्त्रों हो को देव माना है। वैसे तो मुख्य देव एक ईश्वर ही है। ऋषि के मत में 'देव' शब्द के अर्थ माता पितादि भी हैं। उन का आदर-सत्कार, पूजन अर्चन देव-पूजा है। माता, पितर, आचार्य और अतिथि के अतिरिक्त पांचवां देव पत्नी के लिए पति है और पति के लिए पत्नी भी देवता है। अग्नि, पृथिवी, वायु, अन्तरिक्ष, आदित्य, द्यौः चन्द्रमा और नक्षत्र ये आठ वसु हैं। प्राण, अपान, व्यान, समान, उदान, नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त, धनञ्जय और ग्यारवां जीवात्मा, ये ग्यारह रुद्र हैं, बारह आदित्य (मास), इन्द्र अर्थात् विद्युत् और प्रजापति अर्थात् यज्ञ—ये ३३ देवता हैं।

'यज्ञ' शब्द का दूसरा अर्थ सगती करण है जिसका तात्पर्य है सन्तों सज्जनों और गुणी-ज्ञानी जनों का सत्संग करना, उनके वचनों और विचारों से लाभ उठाना, और दान-दक्षिणा से उन की सेवा-भक्ति करना। 'यज्ञ' का तीसरा अर्थ दान है। सब दानों में ज्ञान का दान अविनाशी और प्रधान है। अन्न, वस्त्र आदि के दान, विद्यादान की बराबरी तो नहीं कर सकते, परन्तु इस के सहायक अवश्य हैं। वे भो दान कहे जाते हैं। उत्तम दान वह है जो देश, काल और पात्र को देख कर दिया जाता है। दुर्भिक्ष में, दुःख में, दुर्दिन की पीड़ा में, आपत्काल और व्याधि-विपत्तियों में, सभी जन अन्न-जल, और वस्त्रादि के अधिकारी होते हैं। ऐसे संकट के समय में पात्र-कुपात्र का विचार उचित नहीं है। कीर्ति और स्वार्थ सिद्धि के लिए किया गया दान मध्यम कोटि का और निकृष्ट दान वह होता है जो अन्धा-धुन्ध देश, काल और पात्र का विचार करके किया जाता है, अपमान और तिरस्कार से दिया जाता है और धूर्त मूर्ख को व्यसनों के लिए दिया जाये। सुपात्र जनों. दीनों और असमर्थ व्यक्तियों को दिया गया दान ही सफल होता है। कुपात्र को देने से लाभ के स्थान में हानि होती है। वास्तविक दान वह है जो विद्या की वृद्धि के कामों में लगाया जाये, कला कौशल में व्यय हो, दीन अपाहज, रोगी, कोढ़ी और अनाथों को जिससे सहायता मिले।

दान, पुण्य, सेवा, उपकार, समाज सुधार, दीन हीन जन रक्षा और पालन आदि सभी कर्म 'यज्ञ' कहे गये हैं। परोपकार वह कर्म है जिससे सब मनुष्यों में से दुराचार और दुःख दूर हों, उनमें सदाचार और सुख बढ़े। जिस कर्म में सब का हित हो उसी कर्म को परोपकार कहते हैं और परोपकार ही यज्ञ है। उपकार कर्म से अपने आप को भी सुख मिलता है और यह कर्म मनुष्य कर्त्तव्य भी है। जनता के सुख के लिए यज्ञ किया जाता है और फल में यज्ञ कर्त्ता (यजमान) को भी आनन्द प्राप्त होता है। जनता के हितार्थ कूप, तड़ाग और बावड़ी लगाना, धर्म शालाएं और सराएं बनवाना, व्यायाम शालाओं, विधवा सहायक सभाओं, विधवाश्रमों, औषधालयों, सदावर्त्तों-अन्नसत्रों और अनाथालयों की स्थापना करना, असमर्थ जनों-अकाल व बाढ़ पीड़ितों में अन्न-वस्त्र बांटना, विधवाओं और असहाय गृहस्थों को गुप्त सहायता देना, स्नानागार बनाना, घाटों की रचना और दीन दुःखियों की सहायता करना यज्ञ है।

बृहदारण्यक उपनिषद् में मनुष्य लोक, पितृलोक और देव लोक तीन लोकों का वर्णन है और उन लोकों पर विजय प्राप्त करने के उपाय भी बताये गये हैं। 'यज्ञ' उपाय है पितृलोक जीतने का। यह समझना कि मैं सब के लिए हूं यज्ञ कहलाता है। जो महापुरुष अमर हो गये उन का जीवन यज्ञमय था। पुष्पवाटिकाएं, कूप, राज मार्ग, पार्क, कम्पनी बाग, समुद्र तट और अन्य सार्वजनिक स्थान मेरे तो बनाये हुए नहीं पर मैं उन से लाभ उठाता हूं। तो क्या मेरा यह नैतिक कर्त्तव्य नहीं कि मैं भी कृतज्ञता प्रकाशित करने के लिए कुछ दूसरों को भी उपकृत करूं? यह जगत् परस्पर उपकार के बन्धन में बन्धा हुआ है। सूर्य से असंख्य जीव-जन्तु उस की ज्योति से जीवन लाभ करते हैं। चन्द्रमा, तारागण, पृथिवी, मेघ, नदियां, स्रोत, वायु, पर्वत और बनस्पति आदि अपने लिए तो नहीं हैं? इन सब का अस्तित्व परोपकारमय है और वे सब पदार्थ अपनी रचना द्वारा पदार्थता का उपदेश दे रहे हैं। स्वार्थ उनके निकट तक नहीं फटकता। शरीर के प्रत्येक अङ्ग के परोपकार भाव का इस से उत्तम उदाहरण क्या हो सकता है कि एक खाद्य वस्तु अङ्ग-प्रत्यङ्ग के त्याग कर्म द्वारा रक्तरूप में सारे अङ्गों के लिए पोष्य पदार्थ बन जाती है।

हृदय-देश मे रक्त बनता है और हृदय का उसी रक्त से पोषण होता है पर वह स्वार्थ त्याग कर उसे अपनी जाति में वितरण कर देता है। स्वयं उसी से सन्तुष्ट होता है जो उस को अपने भाग का रक्तांश प्राप्त होता है। जब जड़ पदार्थ तक मनुष्यों को परोपकार के मूल मन्त्र का उपदेश दे रहे हैं तो क्या हम मनुष्यों का यह परम कर्त्तव्य नहीं कि हम अपने जीवनों को परोपकारी—यज्ञमय बनावें जिससे हमें स्वर्ग-सुख की प्राप्ति हो।

चिन्तपुरणी में वैदिक धर्म की धूम

१-६-६४ से ७-६-६४ तक यहां पचासवां वार्षिकोत्सव मनाया गया। जिसके उपलक्ष्य में श्री पंडित रामनाथजी यात्री की मंडली आर्य प्रतिनिधि सभा की रामायण की कथा बड़ी प्रभावशाली हुई। और ता० ७ को वैदिक संस्कृति महासम्मेलन हुआ। जिसके अध्यक्ष में श्री महन्त लाल जी दास डमटाल वाले थे इस शुभ अवसर पर श्री यात्री के प्रभावशाल भजन और भाषण हुए।

—हरिशचन्द्र शास्त्री
प्रधान समाज

★ इस परिवर्त्तनशील संसार में कौन नहीं जन्मता मरता परन्तु जन्म लेना उसी का सफल है जो वंश (जाति) को उन्नत करता है।

आर्यसमाज लक्कड़ बाजार शिमला का समारोह

कथा नगर कीर्तन तथा उत्सव की धूमधाम

प्रिंसिपल रलाराम जी सभा प्रधान को ५०१) भेंट

डी० ए०वी० स्कूल आर्यसमाज की विशाल छावनियां हैं तथा आर्यसमाज के पुराने वृद्ध मान्य सज्जनों में भारी धर्म प्रेम है। अपने स्कूलों में आर्यसमाज के गहरे रंग में रंगे हुए बैठे हुए प्रिंसिपल अपने जीवन के द्वारा अपने छात्रों, अध्यापकों तथा नगर की जनता पर कितनी छाप लगा सकते हैं। यह आर्यसमाज लक्कड़ बाजार शिमला तथा शानदार डी० ए० वी० स्कूल का कार्य देख कर भली भांति अनुमान लगाया जा सकता है। स्कूल के गौरवशाली प्रिंसिपल सत्य प्रकाश जी एम० ए० ने शिमला में इस संस्था को कितना ऊंचा प्रभावशाली बना दिया है इस का परिचय तो यह शिक्षा की छावनी देख कर ही मिल जाता है। चार हजार के लगभग छात्र हैं। नगर कीर्तन में इस सेना को बाजारों में भजन बोलते, जयघोष करते देख कर मस्तक ऊंचा हो जाता है। इसी प्रकार यहां समाज के प्रधान मान्य पं० पृथ्वीनाथ जी मनोत बड़े ही धर्मनिष्ठ, उत्साही तथा वेद भक्त हैं। नम्र तथा मीठी मूर्ति हैं। मन्त्री पं० मुन्नालाल जी शास्त्री तथा उनके सहयोगी पं० जयकृष्ण जी शास्त्री एवं सारा स्टाफ ही उत्साही है। बड़े गौरव की बात है।

इस वर्ष यहां आर्यसमाज लक्कड़ बाजार शिमला का वार्षिक धर्ममेला अपनी शान का अपना ही था। आर्य प्रादेशिक सभा के तपस्वी, सौम्यता की विनम्र मूर्ति, विद्या के गम्भीर स्कालर तथा ओजस्वी वक्ता श्री. प्रिंसिपल पं. रलाराम जी एम. ए. एम. एल. ए. स्वयं भी पधारे हुए थे। समाजों के उत्सवों में उनके पधारने से बड़ा ही उत्साह मिलता है। बड़ा ही समय देते हैं। रात हो दिन हो कष्ट उठाकर पहुंचते हैं। पानीपत जल्से पर भी गये यहां पधारे, अब कंडाघाट और बाद करनाल गुड़गांव पधारेंगे। समाजों के सज्जन आप के दर्शन कर के उत्साहित हो जाते हैं।

उत्सव से पूर्व सभा के वेद-प्रचार अधिष्ठाता श्री पं. खुशीराम जी शर्मा की बड़ी ही मधुर कथा हुई कथा में जादू है। पं. हजारीलाल जी के भजन होते थे। जल्से में आर्यसमाज के शास्त्रार्थ महारथी श्री मान्य ठा० अमरसिंह जी आर्यपथिक हापुड़ से ब्रह्मचारी वीरपाल जी के साथ भी पधारे। सभा से पं. त्रिलोकचन्द्र शास्त्री, प्रसिद्ध चिमटा मंडली पं. राजपाल मदनमोहन जी भी पधारे। कथा, नगर कीर्तन व जल्से में कमाल ही हो गया नगर में धूम मच गई। संजोली में भी प्रचार हुआ। आर्यसमाज की ओर से प्रिंसिपल रलाराम जी सभा प्रधानजी की सेवा में वेदप्रचार के लिए५०१)रु.की थैली भेंट की गई। इस उत्साह, लगन श्रद्धा को देखकर प्रधान श्री मनोत जी, प्रिंसिपल सत्यप्रकाश जी, सारा समाज व स्कूल बधाई का पात्र हैं। स्कूल के छात्रों ने उत्सव में, ऋषि लंगर की सेवा में कमाल कर दिया। बहिनों देवियों की श्रद्धा का तो कहना ही क्या?

आर्य कुमार सभा सत्संग—

बाल वेदामृत

व्रत पालक बनो

ओ३म् अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्।
इदमहमनृतात्सत्यमुपैमि॥

(य० अ० १। मं ५)

शब्दार्थ :—हे (व्रतपते) सत्य भाषणादि धर्मों के पालन करने और (अग्ने) सत्य उपदेश करने वाले परमेश्वर मैं। (अनृतात्) जो झूठ से अलग। (सत्यम्) वेद विद्या, प्रत्यक्ष आदि प्रमाण, सृष्टि-क्रम, विद्वानों का सग श्रेष्ठ विचार तथा आत्म की शुद्धि आदि प्रकारों से जो निर्भ्रम, किसी भी प्रकार के भ्रम से रहित, सर्वहित सब की भलाई तत्व अर्थात् सिद्धांत के प्रकाश कराने हारों से सिद्ध हुआ, अच्छी प्रकार परीक्षा किया गया। (व्रत) सत्य बोलना, सत्यमानना और सत्य करना है उसका (उपैमि) अनुष्ठान अर्थात् नियम से ग्रहण करने वा जानने और उसकी प्राप्ति की इच्छा करता हू। (मे) मेरे (तत्) उस सत्य व्रत को आप (राध्यताम) अच्छी प्रकार सिद्ध कीजिये जिस से कि (अहं) मैं उक्त सत्य व्रत के नियम करने को (शकेय) समर्थ होऊं। और मैं (इदं) इसी प्रत्यक्ष सत्य व्रत के आचरण का नियम (चरिष्यामि) करूंगा।

(ऋषिदयानन्द भाष्य)

भावार्थ—इस मन्त्र में एक ईश्वर भक्त मानव उस प्रकाशस्वरूप, सत्य का उपदेश करने वाले परम पिता परमात्मा से सत्य व्रत के पालन करने का सामर्थ्य मांग रहा है और सत्य को ग्रहण करने तथा झूठ को सवथा, सवदा त्याग करने के लिये शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक बल की प्रार्थना कर रहा है।

व्याख्या—यह वह मन्त्र है जिसका उच्चारण एक ब्रह्मचारी विद्यार्थी से तब पहले पहल कराया जाता है जब वह अपने गुरु के पास शिष्य बन कर विद्या प्राप्ति के लिए गुरुकुल (प्राचीन शिक्षा प्रणाली के अनुसार छात्रावास सहित शिक्षालय, स्कूल) में जाता है। इस मन्त्र के उच्चारण कराने से स्पष्ट है कि ब्रह्मचारी अर्थात विद्या प्राप्ति के लिए ब्रह्मचर्य पालन करने का व्रत लेने वाले विद्यार्थी से सब-प्रथम सत्य मानने, सत्य बोलने और सत्य कहने का व्रत कराया जाता है और कराया जाना भी चाहिये क्योंकि जब तक विद्यार्थी सत्य को ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने का व्रत नहीं ले लेता तब तक वह गुरु से विद्याग्रहण कर सकने में सफल नहीं हो सकता। विद्यार्थी जीवन को सफल बनाने के किये तप और ब्रह्मचर्य दो प्रधान साधन हैं इन दोनों साधनों की महिमा वेदों में अनेक स्थानों पर समझाई गई है। उसका वर्णन आगामी सप्ताहों में किया जावेगा। परन्तु एक महिमा क्या हजार महिमायें सुनाई जावें उनका कोई टिकाऊ परिणाम न निकलेगा जब तक कि उसके अनुसार श्रमल करने का, उन पर चलने का पक्का इरादा न कर लिया जावे। इसी पक्के इरादे का नाम वैदिक भाषा में 'व्रत' है। शायद आर्य कुमार अभी तक यही समझे बैठे हों कि एक छाक दाल-रोटी न खा कर दूसरी छाक फल, दूध, दही. पेड़े, कूटा की पकौड़ी खाने का नाम 'व्रत' है। (क्रमशः)

महंगाई क्या रंग लायेगी

(ले०—करनैलसिंह 'विद्यार्थी' विद्या वाचस्पति कादियां)

आज भारत में महगाई कहां तक पहुंच गई है इसका अन्दाजा ही नहीं लगाया जाता और कहां तक यह अभी बढ़ेगी यह कहने और लिखने से बाहिर है। वास्तव में देखा जाय तो स्वाधीनता के बाद किसी और चीज ने तो इतनी उन्नति नहीं की जितनी महंगाई ने की है। फिर हैरानगी वाली तो बात यह है कि भारत के नेता शुरू से ही इसको रोकने का भरसक प्रयत्न कर रहे हैं। पर फिर भी सब प्रयत्न असफल ही रह रहे हैं। इसका कारण क्या है, यह कभी फिर लिखूंगा समय मिला तो। अब तो हमने केवल देखना है कि महंगाई यदि इसी प्रकार जैसी कि वर्तमान समय में है बढ़ती गई तो एक समय ऐसा भी जल्दी से जल्दी पहुंचने वाला है (पहुंचेगा) जब हम अपनी स्वाधीनता से हाथ धो बैठेंगे। कारण यह कि लोगों ने कुछ न कुछ तो खाना होता ही है। आप ही सोचें कि एक परिवार वाला आदमी अपनी, अपने परिवार की उदर-पूर्ति के लिए क्या नहीं करता। और यदि इस मानव को खाने के लिए, पहनने के लिये कुछ न मिला तो वह क्या करेगा। फ्रांस, इंगलैंड आदि महान् देशों की क्रांतियां इसका सही हल बता देती है।

क्या हुआ था फ्रांस में, जब लोगों को कुछ भी खाने के लिए मिलता था, पहनने के लिए कुछ नहीं मिलता था। फ्रांस ने ऐसा इनकलाब ला खड़ा किया था जिस को रानी, राजा भी दूर न कर सके थे। और आखिर में उस रानी राजा की क्या हालत हुई थी यह इतिहास के पढने वाले जानते ही हैं।

एक मजदूर को जब सारा दिन कार्य करने के बाद भी अपने परिवार की जरूरतों को पूरा करने के लिये पूरी चीजें न मिल पावें तो वह क्या करेगा परिवार तो आखिर पालना है, बच्चों का भी योग्य पालन पोषण करना है यदि गेहूं ही पच्चीस अथवा तीस रु० मन मिलेगा तो उस बेचारे मजदूर की आधी से ज्यादा तनखा केवल गेहूं, चावल, दाल आदि में ही लग जायेगी और दूसरे सब कार्यों के लिये या तो वह डाके मारेगा, या कोई और साधन अपनायेगा।

मैं यह दावे से कहता हूं कि यदि दो बातों पर हमारी सरकार चलना अपना मुख्य कर्त्तव्य समझ ले तो भारत में कोई भी भ्रष्टाचार, महंगाई, बेकारी आदि अपना स्थान स्थापित नहीं कर सकती। वो दो बातें यह हैं कि एक तो सरकार अपने दण्ड विभाग को कठोर रखे। बहुत ही शान्ति के पुजारी न बने। और दूसरे सब को उन के लिये जरूरत वस्तुओं की सप्लाई योग्य करे, भेजे। ये दोनों बातों पर यदि ध्यान दिया जाये तो यहां प्रतिदिन जो चोरियों, डाकों, महंगाई, बेकारी, भ्रष्टाचार आदि की कहानियां सुनी जाती हैं वे सब पर लगाकर उड़ जायगी। पर स्मरण रहे अनाज सस्ते से सस्ते दामों पर मिलना चाहिये जिस से एक छोटे से छोटा मजदूर भी अपनी उदर-पूर्ति कर पावे। और दण्ड भी ऐसा होना चाहिये जिस पर लिहाज क्या होता है ऐसा तो होना ही नहीं चाहिये और अपराधियों को कठोर से कठोर दण्ड देकर दूसरों को यह दिखा देना चाहिये कि किसी अपराध की कितनी सजा है। यदि कोई आफिसर कोई गलती रिश्वत आदि लेता पकड़ा जाये (जैसा कि पंजाब के मुख्य मन्त्री श्री कामरेड ने पिछले दिनों एक को पकड़ा था) तो उसे मौत तक की भी सजा देना कोई बड़ा सजा नहीं क्योंकि दूसरों को तो इस से मत आ जाती है।

मेरा अपना विचार है कि आज जितने भी डाके चोरियां आदि बड़ों की अथवा छोटों की हो रही हैं उन सब के पीछे इसी महंगाई, बेकारी, दण्ड की न्यूनता ने ही अपना राज स्थापित कर लिया हुआ है।

पर सरकार शायद इसलिये इस महंगाई, बेकारी को जल्दी दूर नहीं कर रही कि जनसंख्या तो बढ़ गई है, बढ़ रही है और यह चीजों की कीमतें ही बढ़ती जावें तो कुछ जनसख्या तो कम होगी, भुखमरी से।

अतः विस्तार से न कहता हुआ मैं अन्त में यह कहना चाहता हूं कि जहां महंगाई है वहां ही चोरियां डाके, रिश्वत, भ्रष्टाचार है। अतः इन को दूर करने के लिये पहले महंगाई को दूर करें। यही जनता की सरकार से बिनती है।

आर्य समाज गोरखपुर (जबलपुर)

रजत-जयन्ती समारोह

२२ अक्तूबर से २५ अक्तूबर १९६४ तक बड़े उत्साह से मनाया जाना निश्चित हुआ है।

इस पुनीत अवसर पर पूज्यनीय श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज, श्री रामगोपाल जी शाल वाले तथा पंजाब की दोनों प्रतिनिधि सभाओं के उपदेशक भजनीकों की पधारने की आशा है।

इस अवसर पर महा कौशल क्षेत्र की आर्यसमाजों के मन्त्रियों प्रधानों का वेदप्रचार सम्मेलन का भी आयोजन किया जा रहा है। इसके सिवाय अन्य कई सम्मेलनों का आयोजन किया जा रहा है। इस अवसर पर समाज के मन्त्री श्री भारतभूषण नागपाल समस्त आर्यजगत से तन-मन-धन से सहयोग देने की अपील की है।'

—प्रकाशचन्द नागपाल

कमी केवल भावना की

(पृष्ठ ३ का शेष)

कैसे काम हो। इस ओर विशेष ध्यान दिया जाये तो कितने हमारे बच्चों को समाज का प्रेम पैदा हो जाये। इस में हमारा दोष है। भावना भरनी होगी—त्रिलोकचन्द्र

आर्य प्रेमी का शतक

अजमेर के वेदभक्त, यज्ञप्रेमी तथा प्रभुनिष्ठ हकीम श्री वीरूमल जी सचमुच ही एक आदर्शजीवन के आर्य हैं। उनके सुपुत्र श्री मोहन लाल जी आर्यप्रेमी व सारा परिवार ही यज्ञ का अनन्य प्रेमी है। उनके धर्म प्रेम को देख कर तो पुराने युग का स्मरण हो जाता है। आर्य प्रेमी मासिक निकाल कर पता नहीं हजारों की संख्या में वितरण करते हैं। वेद प्रेम तो उन में कूट २ कर भरा रहता है। वार्षिक महान यज्ञ तो उन का दर्शनीय होता है आर्य प्रेमी का इस बार अथववेद शतक बड़ा ही सुन्दर प्रकाशित किया है। गत वेद सप्ताह पर आप ने यह आप कर वेदप्रचार में बड़ा सहयोग दिया है। प्रभु उनकी इस वेद निष्ठा को बनाये रखें। इसके लिए उनको व वैद्य श्री मोहनलाल जी को बधाई—स०

गुरुकुल विद्यापीठ हरियाणा भैंसवाल कलां (जि. रोहतक)

बाढ़ की लपेट में

पिछले पांच वर्ष से गुरुकुल भैंसवाल निरन्तर बाढ़ का शिकार हो रहा है। यहां मकानों की इस अरसे में जो क्षति हुई है, उस का अनुमान कोई प्रत्यक्ष दर्शी ही लगा सकता है। गौ शाला की गौवें बिना चारे सख्त टापन्ना अवस्था में हैं। क्योंकि गुरुकुल का सारा चारा बाढ़ की लपेट में आ गया है। गुरुकुल के आश्रम पानी की मार से ध्वस्त प्राय हो गये हैं। गुरुकुल को काफी हानि पहुंची है। हमारी पंजाब सरकार से तथा दानी महानुभावों से प्रार्थना है कि वे विद्यापीठ की इस संकट काल में अवश्य मेव सहायता करें।

मुख्याधिष्ठाता

'आत्म-सुधा'

—अशोक 'हिन्दुस्तानी' अमृतसर

रे रूप-सुधा के नर-पूजक
कुछ आत्म-सुधा की सुध भी है ?
रे विश्व-मूर्ति के प्रतिपालक,
क्या आत्म-विभूति तुच्छ ही है ?

वह तीव्र-हुताशन निहित किए,
मलयित यह शीतल सलिल किए,
उस क्लेद्-खेद की अवनि को,
क्या चैन-शान्ति का रूख भी है ?

वह जलन ताप से युक्त पवन,
यह वात करे सुख-पुलकित मन,
क्या सरल क्लेद्-खेद की अवनि को,
क्या चैन-शान्ति का रूख भी है ?

वह जलन ताप से युक्त पवन,
यह वात करे सुख-पुलकित मन,
क्या सरल बाह्य-भीतर अन्तर—
को नहीं समझने में सुख है ?

यह क्षणिक वासना की तृप्ति,
जिससे भीतर की लौ बुझती,
होने दो दग्ध दिव्य-ज्योति,
जलता उसमें बस दुःख ही है !

फिर रूप-सुधा के मतवाले,
क्या आत्म सुधा की सुध भी है ?

—मधु कलश—

अकलमंद तो खड़े सुखते मूढ़ चढ़े सिंहासन
हंसों को सुनने पड़ते हैं अब कौवों के भाषण
रोना है तो सिर्फ यही अब दुनिया के अन्दर
घुटा हुआ है कण्ठ सत्य का पैसेका है शासन

×

श्रद्धा सी साकार एक दम तीन लोक से न्यारी
अबला नहीं परम बलवाली करुणा की अवतारी
होती नहीं कुरूपा किंचित कभी कहीं भी लेकिन
सुन्दर बनना नहीं जानती दुनियां की हर नारी

×

यह धरती सोना उगलेगी इसको पिला पसीना
दुनियांभर को सुधा बाट कर कालकूट खुद पीना
कायरता के साथ जिया तो जीते जी मर बैठा
लड़ते लड़ते मर जाना है सही अर्थ में जीना

क्रमशः

—विजय निर्बाध

विश्व-युद्ध की एक झांकी

(ले०—स्व० श्री बलराज जी)

खिकते-सिकते साढ़े पांच साल बीत गये पर बिचारे शरणार्थी आज भी सरदी में सुकड़े हुये सिसक सिसक कर सांस ले रहे हैं, जी नहीं रहे।

श्री चर्चिल का दिल भर आया। भर कर छलका। इस छलक ने शरणार्थियों को नौनिहाल कर दिया और चन्द दिनों में ही फिर से बसा दिया। चर्चिल की आंखों से आंसू टपके। टपकते ही मोती बन गये और शरणार्थियों के चरणों में आ गिरे—अपने रेशमी रूमाल में नहीं। जो जाति में ज्येष्ठ होते हैं उनको श्रेष्ठ कार्य करने का अवसर अधिक होता है। श्री चर्चिल ने उसी समय निश्चय कर लिया। घर लौटने के लिये रेलगाड़ी में बैठते ही उन्होंने एक पत्र अर्थ मन्त्री के नाम लिखवाया। उस में लिखा कि देश की रक्षा का भार जाति पर है। यदि दुश्मन की आग या बम्ब से कुछ लोगों की सम्पत्ति नष्ट हो जाती है तो यह भार केवल उन अभागों के कन्धों पर ही नहीं गिरना चाहिये जो दैवयोग से दुश्मन का निशाना बन गये, वरंच इन व्यक्तियों की हानि देश की हानि समझनी चाहिये और यह भार देश की सारी जनता को तुल्य रूप में सहन करना उचित है। साथ ही उन्होंने यह सुझाव भी रखा कि जिन लोगों की हानि हो गई है उनको पूरा हरजाना एक दम मिल जाना चाहिये। स्वभाविकतया अर्थमन्त्री इस सुझाव को पढ़ कर बहुत छटपटाये। उनका विचार था कि इतनी बड़ी जिम्मेदारी लेनी संभव नहीं। परन्तु श्री चर्चिल अपनी बात पर डटे रहे। परिणाम स्वरूप पन्द्रह दिन के अन्दर "युद्ध बीमे" की योजना तैयार हो कर एक मास के अन्दर लागू हो गई। क्या हमारी जाति में ज्येष्ठ श्री नेहरू साढ़े पांच साल के बाद भी इतिहास के इस पन्ने से शिक्षा ग्रहण करेंगे ?

आर्यसमाज पालमपुर तथा नगरोटा बगवां जि. कांगड़ा के महोत्सव सम्पन्न

आर्यसमाज पालमपुर में सभा के सुयोग्य महोपदेशक श्री पं० ओमप्रकाश जी की ६-९-६४ से वेद कथा होती रही साथ ही श्री पं० जगतराम, बस्तीराम जी की चिमटा मण्डली के सुरीले भक्ति भाव एवं वीर रस पूर्ण भजन जनता को अपनी ओर आकर्षित करते रहे। इस वर्ष पारिवारिक सत्सग का आयोजन भी किया गया जो कि आशातीत सफल रहा। महिला समाज का संघटन एवं समाज प्रेम विशेष प्रभावोत्पादक था। उत्सव में भी श्री स्वामी सोमानन्द जी महाराज तथा सभा के सुन्दर गायक श्री पं० मेलाराम जी रेडियो सिंगर ने सम्मिलित होकर चार चांद लगा दिए। उत्सव हर प्रकार से सफल रहा। इसे सफल बनाने में आर्य समाज के पुराने महारथी श्रीयुत महाशय दिवानचन्द जी डूंगूवाले—श्री स्वराज कुमार बाली, श्री गुजरमल जी, श्री रामनाथ जी गाडो, मलिक हरबंस लाल जी महाशय ठाकुरदास जी तथा महिला समाज की माताएं वा देवियां सभी एक मन होकर काम करते रहे। जनता ने भी प्रचार में भाग लेने में खूब रुचि दिखाई। सभा को मार्ग व्यय सहित ३००) तीन सौ रुपये भेंट किये गये।

आर्यसमाज नगरोटा बगवां

आर्यसमाज पालमपुर के पश्चात् १४-९-६४ से १८-९-६४ तक आर्यसमाज नगरोटा बगवां में श्री पं० ओमप्रकाश जी तथा श्री जगतराम, बस्तीराम जी की मण्डली ने प्रचार किया। वर्षा आदि के होने पर भी प्रचार पूर्ण रूपेण सफल रहा, म०

(शेष पृष्ठ ८ पर)

ब्रह्म मुहूर्त और ब्रह्म यज्ञ

(पृष्ठ २ का शेष)

हैं शरीर की रक्षा के लिए, परन्तु क्या कभी हमने यह भी सोचने का कष्ट किया है कि हम शरीर की रक्षा क्यों करते हैं ? हम प्रातः से सायंकाल तक और रात्रि की निद्रा भी शरीर की देख भाल के लिए करते हैं, पुनरपि इन सब कार्यों को करते हुए कदाचित ही हमारे मन में विचार आता होगा, कि हम शरीर की देख भाल क्यों करते हैं ? इस का प्रयोजन क्या है ? यह शरीर तो एक मकान या सवारी के समान है, जो कि आत्मा को स्व कर्मानुसार संसारवास या यात्रा के लिए प्राप्त हुआ है, यही तो कठोपनिषद के ऋषि ने समझाते हुए कहा है—'आत्मानं रथिनं विद्धि शरीर रथमेवतु' यह उचित ही है, हमें जहां संसार यात्रा की सफलता के लिए शरीर की देख भाल अवश्य करनी चाहिये, वहां इस सवारी में यात्रा करने वाले सवार का भी ध्यान रखना चाहिये। यदि हमने सवार की ओर बिल्कुल ही ध्यान न दिया तो सवारी की सारी सज्जा तो बिल्कुल व्यर्थ हो जायेगी।

अतः इस ब्रह्म मुहूर्त की महिमा को ध्यान में रखते हुए इस पवित्र समय का समुचित लाभ उठाने के लिए ब्रह्म यज्ञ—आत्म विकास के श्रम पथ का विचार और अनुष्ठान करना चाहिये, जिस से मानव जीवन के प्रयोजन को सार्थक किया जा सके।

.. .. सभा

की अंतरंग सभा का अधिवेशन श्री रलाराम जी एम. ए., एम. एल. ए. सभा प्रधान की अध्यक्षता में शनिवार १९-९-६४ को सभा कार्यालय में हुआ। जिसमें सर्व प्रथम निम्न प्रस्ताव पास हुआ।

श्री सुरेन्द्र कुमार जी सुपुत्र श्री हरिदत्त जी मैनेजर आर्यजगत तथा श्री पं. चन्द्रसैन जी आर्य हितैषी की पूज्य माता के आकस्मिक निधन पर शोक प्रस्ताव पारित किया गया जिस में परमदेव प्रभु से प्रार्थना की गई कि इन दिवंगत आत्माओं को सद्गति प्रदान हो तथा इनके वियोग से उनके परिवार को धैर्य प्रदान करने की प्रार्थना की गई। —ज्ञानचन्द मन्त्री सभा

वेद प्रचारार्थ दान मास सितंबर गत साप्ताह से आगे

आर्य समाज कक्कड़ माजरा	५०/-
,, ,, रसूलपुर	१५/-
,, ,, लाडूकपुर	१०/-
,, ,, रायपुर रानी	२५/-
,, ,, मा. टौ. पानीपत	५०१/-
स्त्री आर्य समाज मा. टौ. पानीपत	२५/-
आर्य समाज पालमपुर	२००/-
,, ,, नगरोटा बगुवां	१०१/-
,, ,, खरकड़ा	१०१/-
,, ,, का.वि. अंबालाशहर	१५०/-
,, ,, मोखरा	६२/-
,, ,, शकूर बस्ती	१५०/-
,, ,, पुरानी मंडी जम्मू	५०१/-
,, ,, पठानकोट	४००/-
,, ,, लारैंस रोड अमृतसर	५०१/-
,, ,, मद्दोना दोगी	६०/-
श्री परमेश्वरी महता फिरोजपुर छावनी	१५/-

दयानन्द-वचनामृत

बालकों को चाहिए कि आज्ञा पालन करें। निन्दा कभी न करें। सदा शान्त रहें। गुरुजनों से पूछने योग्य प्रश्न हाथ जोड़ कर पूछें। चमकी पन न दिखावें। वस्त्र स्वच्छ रखें। उत्तम जनों को सम्मान दें। अपने में कृतघ्नता और आलस्य-प्रमाद कदापि न आने दें। आत्मिक, मानसिक और शारीरिक बल बढ़ावें। माता, पिता तथा आचार्य अपनी सन्तान और शिष्यों को सदा सदुपदेश दें और यह भी कहें कि जो हमारे धर्म युक्त कर्म हैं, उन्हीं को आप ग्रहण कीजिए। जो दुष्ट कर्म हों उन्हें छोड़ दीजिये। जो जो सत्य समझिये, उसी का प्रकाश और प्रचार कीजिये। विद्यालय में सब विद्यार्थियों को समान खान पान, वस्त्र और आसन दिये जाने चाहिएं चाहे वे राज कुमार, राज कुमारी हों और चाहे दरिद्र जन की सन्तान। सभी को तपस्वी बनना उचित है।'

(स्वामी सत्यानन्द जी)

दयानंद साल्वेशनमिशन होशियारपुर

अप्रैल ६४ से अगस्त ६४ तक ५०४ विधार्थी शुद्ध किए गए। यह शुद्धि कार्य पंजाब बिहार उडीसा मध्य प्रदेश में हुआ।

६ परिवारों को क्रिश्चियन होने से बचाया तथा दो कन्याओं को ईसाइयों के पंजों से छुड़ाकर हिन्दु धर्म में प्रविष्ट किया गया।

शादीलाल मंत्री मिशन

आर्यसमाज नगरोटा

(पृष्ठ ७ का शेष)

विश्वम्भरनन्द जी के सुपुत्र श्री अशोकचन्द जी ही इस समाज के प्रधान हैं। जब भी कोई उपदेशक-प्रचारक वहां जाता है उसका हर प्रकार से सेवा करते हैं। सेवाभाव इस परिवार में कूट-कूट कर भरा हुआ है। भगवान इनको सा धर्म भाव एवम सेवाभाव सभी को प्रदान करें। प्रचार के पश्चात् १०१) वेद प्रचार में सभा को भेंट किए गए।

महात्मा हंसराज जयन्ती सम्बन्धी सूचना

आपको सूचित किया जाता है कि महात्मा हंसराज जयन्ती उपसमिति की एक आवश्यक बैठक ४ अक्तूबर १९६४ रविवार को ११ बजे दिन के आर्यसमाज अनारकली मन्दिर मार्ग नई देहली में हो रही है आप कृपया ठीक समय पर पधार कर दर्शन दें।

ज्ञानचंद्र मंत्री सभा

भूल सुधार

आर्य जगत के १६.९.६४ के अंक में 'जीवन का अंग स्वाध्याय' लेख प्रकाशित हुआ है। वह लेख सार्वदेशिक मासिक पत्रसे उद्धृत किया गया है। इसके लेखक मान्यवर आचार्य वैद्यनाथजी शास्त्री हैं।

आर्यसमाज दिल्ली छावनी चुनाव

श्री रामलाल जी मल्होत्रा, प्रधान, श्री वेद प्रकाश जी उपप्रधान, श्री धर्मचन्द जी शास्त्री मन्त्री, श्री जगन्नाथ जी सूद उपमन्त्री श्री निरंजन लाल गुप्त कोषाध्यक्ष।

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टैलीफोन नं० १०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 121

एक प्रति का मूल्य १२ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक ३९) १९ आश्विन २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०— ४ अक्तूबर १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

शिशिर इन्नु रन्त्य:

यह शिशिर-पतझड़ की ऋतु भी प्यारी है। जीवन में ऐसी अवस्था भी आजाती है जैसी पतझड़ में होती है। मनुष्य सम्पत्तिहीन सा बन जाता है। परन्तु इस दशा में भी निराश न होना चाहिए। साहस न त्यागे।

त्वा स्तुवन्ति कवय:

हे परमेश्वर ! आप की सारे कवि मेधावी, ज्ञानीजन सदा स्तुति करते हैं, जिन्ने भी बड़े २ विद्वान ज्ञानी नर हैं, वे सारे तेरा यशोगान गाते हैं। तेरा ही स्तवन करते हैं, स्तुति के गीत गाते रहते हैं—तेरे स्तोता है

अग्न आयूंषि पवस

हे प्रकाशमय प्रभो अग्निदेव आप कृपा कर के हमें आयु, स्वास्थ्य दीर्घजीवन प्रदान करें। आप की कृपा से हम दीर्घजीवी, यशास्वी कीर्तिवाले तथा शरीर वाले बन कर कार्य करते रहें—

सा म वे द से

वे दा मृ त

ओ३म् प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये इदन्नमय

अर्थ—यह (प्रजापतये) प्रजाओं के पालक और स्वामी परमेश्वर ! आप के लिए (स्वाहा) आहुत है, समर्पित है। (इदम्) यह आहुति उस (प्रजापतये) प्रजापति परमात्मा के लिए है, (इदं न मम) यह मेरे लिए नहीं है। उसी के अर्पण करता हूं।

भाव :—कर्मकाण्ड के ग्रन्थों में यह आहुति मौन हो कर देनी लिखी है। इस का कितना बड़ा रहस्य है मानव जीवन का गम्भीर और ऊंचा तत्व इस में छिपा हुआ है। जब कभी मनुष्य के पास धन तथा अन्य विशेष पदार्थ आ जाते हैं या कोई धनवान् आदि अपने धन में से दूसरों के लिए इच्छा अथवा अनिच्छा से दान के रूप में देने लगता है। यज्ञादि लोक हितकारी कामों में लगाता है, तो प्रायः अपने २ पदार्थों में, कामों में, आहुतियां देते समय उस के मन में यह विचार पैदा होता है कि यह काम मैं कर रहा हूं, यह दान मैं दे रहा हूं अथवा यह आहुति मैं ही दे रहा हूं। उसे अभिमान सा होने लगता है। ऐसी अवस्था में ऐसी मौन हो कर दी जाने वाली आहुति का उसे सन्देश मिलता है कि हे मानव ! अभिमान क्यों करता है। यह तेरे पास कुछ भी है, सब उसी परमेश्वर का दिया है। वही प्रजापति है। उसी की दी वस्तु तू देता है। मौन हो कर बोल—पिता जी। यह सभी कुछ आप का है। आप की दी वस्तु आप के निमित्त देता हूं। तेरी चीज़ तेरे अर्पण—सं.

ऋषि दर्शन

सत्य न्याय प्रकाशकान्

जिन के जीवन में सत्य है, जिन को सदा सत्य से प्यार है, जो अपने जीवन के आचार विचार के प्रकाश से प्रकाशित हो कर दूसरों को चमकाने वाले हैं। सत्य प्रेमी, न्याय प्रिय होते हैं। प्रत्येक काम में लब्ध प्रतिष्ठ हैं—

सर्वहितं चिकीर्षून्

जो सज्जन हैं, सारे राज्य की प्रजा का सदा हित करने वाले हैं। अपना ही स्वार्थ सिद्ध करने वाले नहीं वरन सारी प्रजा के हितैषी बन कर सब का भला करते हैं। हितचिन्तक बन कर परसेवा में लगे रहते हैं—

धर्मात्मन: सभासद:

सभाओं के इस प्रकार अधिकारी बनावें, राज्य के ऐसे २ अधिकारी बनाने चाहिएं जो धर्मात्मा हों। जिन के जीवन में सत्य धर्म का प्रेम हो। जिन के प्रत्येक काम में धर्म प्रमुख होता है। किसी भी प्रलोभन में आने वाले न हों। धर्मी होवें वे सदस्य बनें।

भा ष्य भूमि का से

अधिष्ठाता—श्री संतोषराज जी सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

पुरुष अविवेक से चित्त वा बुद्धि के आकार का रूप धारण करने वाला होने से पुनः पतित होता है। इस लिए पुरुष में उपादक वाप का संयोग है। वास्तव में पुरुष क्लेश आदि वाप नहीं है। चित्त में रहने वाले क्लेश पुरुष में अविवेक से आरोपित कर लिये जाते हैं। जैसे लड़ने वालों में जीतहार, लड़ाई घाव आदि होते हैं पर वह जीतहार स्वामी की होती है। क्योंकि राजा व सेना का परस्पर स्वस्वामिभाव सम्बन्ध है और उस जय पराजय के फल का भोक्ता है। इसी प्रकार बुद्धि और पुरुष का भी परस्पर स्वस्वामि भाव सम्बन्ध होने से चित्त या बुद्धि में वर्तमान दुःख क्लेश आदि का पुरुष का व्यवहार होता है। क्योंकि वह उस के फल का भोक्ता है जैसे सांख्यय सूत्र १-५८ में कहा है—

वाङ्मात्रं न तु तत्वं चित्त स्थित

क्लेश रूप दुःख आत्मा में केवल कथनमात्र हैं। वास्तव में उन की चित्त या बुद्धि में स्थिति है ऐसे ही कठोपनिषद् में २-३ में कहा है—

आत्मेन्द्रियमनोयुक्तं भुक्तेत्याहुर्मनीषिणाम् ज्ञानी लोग इन्द्रिय और मन से युक्त आत्मा को भोक्ता कहते हैं। इन्द्रियों से जो मुक्त नहीं है वह भोक्ता नहीं है। मेरे प्यारो! इस भ्रम में मत रहो कि पाप प्रारब्ध से होते हैं। पाप होते हैं तुम्हारा आसक्ति से, द्वेष सम्बन्ध से, जिन का फल तुम्हें भोगना पड़ेगा। एक बात और स्मरण रखो कि द्रष्टा आत्मा का दृश्य प्रपंच के साथ ज्ञान रूप संयोग दुःख का कारण नहीं है अपितु सुख दुःख मोह आत्मक दृश्य वाला बुद्धि के द्रष्टा साक्षी पुरुष का अविवेक संयोग है। वह दुःख का हेतु है। जिस से आत्मा और बुद्धि में विवेक न होने से अभिन्नता प्रतीत होती है। बुद्धि की सुख दुःख मोह रूपी वृत्तियों का पुरुष में अध्यारोप—तदाकारता होती है।

दर्शनों की चर्चा

दर्शन का स्वाध्याय

(ले० डा. शंकरदास जी लारेंस रोड़ अमृतसर)

****

सांख्यकारिका २० में कहा है कि इसी कारण द्रष्टा दृश्य के संयोग द्वारा जड़स्वरूप लिंग शरीर, चेतना-वाला सा भासता है। जैसे आग के सम्बंद से लकड़ी और इसी प्रकार प्रकृति के गुणों द्वारा सब कर्म होते हुए भी उदासीन साक्षी पुरुष कर्ता सा प्रतीत होता है। संयोग का और स्वरूप देखो। योग २-२३

स्वस्वामिशक्त्योः स्वरूपो

पलब्धि हेतु संयोगः

अर्थात् स्वशक्ति और स्वामि-शक्ति बुद्धि पुरुष के स्वरूप की उपलब्धि का जो कारण है, वह संयोग है। अर्थात् यह संयोग ही संयोग के वियोग का कारण है। इस संयोग के रहते हुए ही इसी संयोग को हटाने के लिएस्व० सेवक और स्वामी आत्मा के स्वरूप की प्राप्ति की जाती है। इस सूत्र पर व्यास महाराज टीका करते हैं। पुरुष स्वामी 'स्व' निज वस्तु रूप दृश्य स्व—से दर्शनार्थ संयोग करता है। उस सयोग से दृश्य की जो जो उपलब्धि होती है, वह भोग है। जब तक पुरुष इस प्रकृति के नाना दृश्य रूपों को देखता रहता है, तब तक भोगों को भोगता रहता है जब इन के दर्शन से विरक्त हो कर अपने स्वरूप दर्शन की ओर झांकता है, तब स्वरूप दर्शन हो जाता है। यह ही द्रष्टास्वामी के स्वरूप की उपलब्धि है। यही कैवल्य अर्थात् मोक्ष है। यही यथार्थ ज्ञान विज्ञान है। संयोग की इस अवस्था में सृष्टि करने का प्रयोजन नहीं रहता। अर्थात् प्रकृति और उस की विकृति फिर उस को फंसा कर सृष्टि नहीं कर सकती। जन्म मरण के चक्र में नहीं डाल सकती। क्योंकि उस आत्मा ने उस की अस्थिरता देख ली तथा जान ली है। इसी लिए संयोग वियोग का कारण कहा जाता है।

फिर अन्त संयोग की कोई आवश्यकता न रहने से उस का अभाव हो जाता है। यही पुरुष की कैवल्य अवस्था है। यहां दुःखों की अत्यन्त निवृत्ति और शाश्वत शान्ति (**Spiritual solace**) से परमानन्द की प्राप्ति होती है। इसी भाव को योगदर्शन के अन्तिम सूत्र ४-३४ में दर्शाया है।

पुरुषार्थ शून्यानां गुणानां प्रतिप्रसवः कैवल्यं स्वरूप प्रतिष्ठा वा चितिशक्तिरिति।

अर्थात् पुरुष के लिए स्वप्रवृत्ति-पुरुषार्थ से शून्य हुए कार्य कारण रूप गुणों का जो अपने कारण में लीन हो जाना है वह कैवल्य है। इस दशा में आत्मा को परमात्मा का अनुभव अवश्य होता है।

(क्रमशः)

****

आर्य जगत की उन्नति की चाह

ले० श्री मा. नानकचन्द जी सांबा

आर्य जाति चमक उठेगी, आर्य जगत उठाने से।
इस पत्र को हर आर्य के पास या घर पहुंचाने से॥
प्रति समाज सहयोग यदि दे, वार्षिक ग्राहक बढ़ाने से।
स्वामी जी की भक्ति पर श्रद्धा के फूल चढ़ाने से॥
कविताओं से और लेखों से, जनता को रुचि दिलाने से।
हिन्दी भाषा भी फैलेगी, आर्यजगत फैलाने से॥

****

शोलापुर में वैदिकधर्म प्रचार

आर्य समाज शोला पुर ने २२ अगस्त से ले कर ६ सितम्बर तक श्रावणी पर्व के उपलक्ष में दो सप्ताह के लिये वेद प्रचार का कार्यक्रम आयोजित किया परन्तु जनता की मांग पर यह कार्यक्रम तीन सप्ताह तक करना पड़ा। शोला पुर में तेलगु भाषा भाषी बधुओं भी भारी संख्या में रहते हैं। तेलगू भाषी धर्म प्रेमी बधुओं की मांग पर उन की बस्तियों में भी तेलगू भाषा में वैदिक धर्म के प्रचार के लिये श्री पं. केशव आर्य जी हैद्राबाद को निमन्त्रण दिया गया। पं. के जी व्याख्यान भिन्न-भिन्न मन्दिरों में कराये गये।

सत्याग्रह बलिदान दिवस एवं कृष्ण जन्माष्टमी के पर्व सोत्साह मनाये गये।

दो सप्ताह तक श्री पं. मदन-मोहन जी विद्यासागर का कथा होती रही।

वैदिक धर्म सम्बन्धी हिन्दी, मराठी, तेलगू व अंग्रेजी साहित्य की सैंकड़ों पुस्तकें लोगों ने आर्य-समाज के विक्री विभाग से खरीदीं। विद्यार्थियों को तो आर्य समाज शोलापुर आधे मूल्य पर वैदिक साहित्य देता है। श्रावणी के उपलक्ष में सब को आधे मूल्य पर साहित्य लेने की सुविधा दी गयी। इस अवसर पर अनेक प्रांतों के प्रतिष्ठित सज्जन पधारें।

उपमंत्री राजेन्द्र 'जिज्ञासु'
आर्यसमाज शोलापुर

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२१, ४ अक्तूबर १९६४ [अंक ३९

अपनों को बधाई और निवेदन

अभी २ पंजाब में ग्रेजुएट तथा अध्यापकों की सीटों पर यूनिवर्सिटी के लिए कुछ निर्वाचन हुए हैं। इन स्थानों के लिए अपनी भी संस्थाओं के कई मान्य योग्य सज्जन खड़े थे। उन में डी. ए. वी. कालेज अबोहर के तपस्वी प्रिंसिपल श्री नारायण दास जी ग्रोवर साईं दास एंग्लो हायर सैकंडरी स्कूल जालन्धर के योग्य प्रिंसिपल श्री प्यारेलाल जी बेरी डी. ए. बी. हायर सैकंडरी स्कूल अमृतसर के विद्वान प्रिंसिपल श्री भक्तराम जी तथा विक्टर आर्य हायर सेकंडरी स्कूल के धर्मनिष्ठ प्रिंसिपल श्री रामचन्द जी जावेदभी निर्वाचन के क्षेत्र में उतरे थे। मतदाताओं ने अपने इन सज्जनो की योग्यता तथा कार्यकुशलता को सामने रखते हुए अपना मत देकर इन को कामयाब बना दिया है। इन चारों मान्य अपने योग्य सज्जनों की शानदार सफलता पर हमें और सारे आर्य समाज को भारी हर्ष है। हम आर्य जगत की ओर से अपने सम्माननीय बन्धुओं को हार्दिक बधाई देते हैं। इस प्रकार के योग्य महानुभावों के विश्वविद्यालय समिति के सदस्य निर्वाचित हो जाने पर बड़ा भारी लाभ होगा। ये वहां पर बैठकर अपने सत्परामर्शों तथा प्रभाव से शिक्षा-सम्बन्धी कार्यों में बड़े ही उपयोगी बन सकेंगे। शिक्षा के क्षेत्र में काफी सुधार हो सकता है।

अपने विशाल अनुभव के पूर्व चीफ जस्टिस डा० मेहरचन्द जी महाजन ने इस के बारे में एक सारगर्भित लेख में स्पष्ट शब्दों में सरकार के नेताओं का ध्यान इस ओर आकर्षित किया है। भारत की परम्परा और अपने जीवन के लम्बे अनुभव के आधार पर इस तथ्य को बड़े ही सुन्दर शब्दों में प्रकट कर दिया है कि इस में कभी सफलता नहीं मिलेगी। क्योंकि आवश्यक बात की ओर ध्यान नहीं दिया जा रहा। मूल कारण पर विचार ही कोई नहीं कर रहा। श्री डा० महाजन जी ने लिखा है कि जब तक भारत सरकार के नेता देश की शिक्षण संस्थाओं मे बच्चों के लिए धर्म शिक्षा देने का प्रबन्ध नहीं करेंगे। स्कूलों में भारतीय परम्परा के उन धार्मिक आदर्शों की शिक्षा नहीं दी जायगी। उनके जीवन और विचारों पर आचार के धर्म का रंग चढ़ाने के लिए धार्मिक शिक्षा देने का निर्णय करके उसे क्रियात्मक रूप नहीं दिया जाएगा तब तक कुछ भी सुधार नहीं होगा।

मान्यवर डा० महाजन जी का सुझाव तथ्य-पर आधारित है। अनुभव से भरा है तथा बीमारी का वास्तविक इलाज है। आज हमारे देश के बच्चे यदि सत्य प्रेमी, आचारवान, राष्ट्रनिष्ठ, धर्मप्रेमी बन जाएं, तो इन से बना कल का भारत स्वय सुधर जायगा। भारत सरकार के नेताओं का कर्तव्य है कि वे इस महान् नेता के सुझाव को अपना कर इस सूत्र का प्रारम्भ करें, उतनी जल्दी सफलता होगी। यही मूल कारण है।

—त्रिलोक चन्द्र

आचार निर्माण का मूलसूत्र

****

आज भारत में फैलते हुए अनाचार के रोग को दूर करने के लिए भारत सरकार के बड़े २ नेताओं की ओर से प्रत्यक्ष रूप से बड़ा प्रयत्न किया जा रहा है। सम्मेलन जारी हैं, भाषणों का जोर है एव अनेक प्रकार की सदाचार प्रसारक समितियों का निर्माण हो कर जनता में बहुत कुछ किया जा रहा है। कहीं सर्वोदय समाज भारत सेवक समाज है, कहीं भारत साधु समाज का संगठन है तो कहीं सदाचार समिति का गठन किया गया है। पता नहीं अभी और किस संस्थान का आयोजन होगा। ये सब इसी लिए बनाया गया या बनाया जा रहा है ताकि राष्ट्र के जीवन का स्तर ऊंचा हो सके। भ्रष्टाचार की बीमारी समाप्त हो जाये। ये सारे प्रयास अच्छे हैं। इन के साथ सब को पूरा २ सहयोग देना चाहिए। किन्तु प्रश्न यह है कि इतनी संस्थाओं के बनने बनाने के बाद और इन पर लाखों करोड़ों रुपये व्यय करने पर भी देश के जीवन में किसी प्रकार का भी परिवर्तन नहीं हो रहा। तनिक भी भ्रष्टाचार में कमी नहीं हो रही। सब कुछ होने पर भी यह संक्रामक रोग की भान्ति अधिक फैल रहा है। बात यह है कि इस बीमारी का जो उपचार किया जा रहा है, उस मे ही भूल है। मूल की ओर ध्यान दिए बिना पत्तों पर पानी डालने से क्या होगा?

गत दिनों आजाद भारत के सर्वोच्च न्यायालय के प्रथम उच्च न्यायाधीश (सुप्रीम कोर्ट के प्रथम आधार पर बड़े उत्तम २ सुझाव दे दे कर क्षेत्र में समय २ पर जो न्यूनताएं आ जाती हैं, उन को दूर करने में पूरा २ प्रयास करते रहेंगे। वहां पर इन निर्वाचित सज्जनों से एक आवश्यक निवेदन भी कर देना चाहते हैं।

जिन मतदाताओं के द्वारा निर्वाचन हुआ है या जिन के सहयोग से आप यूनिवर्सिटी के इस ऊंचे स्थान पर पहुंचे हैं। उन के अधिकारों, कष्टों एव उचित मांगों का भी आप को पूरा २ ध्यान रखना होगा। आप उन के ही तो प्रतिनिधि बने हैं। आप ही उन के मुख हैं। उन की आवाज भी आप ही हैं। विश्वविद्यालय की समिति में बैठ कर यदि निर्वाचित व्यक्ति केवल मात्र अपने स्वार्थ को ही सामने रख कर अपने लिए सोचता, करता या अपने लाभ का ही ध्यान रखता है, तो इस से बढ़ कर मतदाताओं के प्रति और धोखा क्या हो सकता है। क्योंकि आज का युग तथा वातावरण ही कुछ ऐसा बन गया है कि लोग नाना स्थानों मे जाने के बाद जनता को भूल जाते हैं। लोगों का न बना कर अपना ही बनाने में लग जाते हैं। किन्तु हमें इस बात पर मान है कि ये चारों सज्जन जीवन में बहुत ऊंचे तथा समाजनिष्ठ हैं, मजे हुए हैं। इन से तो बड़ी २ आशाएं हैं। वहां प्रवाह में न बह कर एक शानदार उदाहरण प्रस्तुत करेंगे। पुनः दिल से बधाई दे कर कर्तव्य का ध्यान दिलाते हैं।

—त्रिलोक चन्द्र

सिनेमा—अधिक पुराने समय की बात मैं नहीं कहता तीस वर्ष पूर्व जबकि सिनेमा ने इतनी उन्नति नहीं की थी। उस समय के युवक और आज के युवक में भारी अन्तर है। तीस वर्ष पहले का युवक प्रातः सायं स्नान करते हुए, अथवा रात को सोते समय, दिन में या रात्रि में किसी न किसी समय अवश्य भगवान् का नाम ले लेता था। परन्तु आज का युवक तो भगवान की हस्ती से ही मुनकर है। दिन-रात के चौबीस घंटों में इसके मन और बुद्धि पर केवल अभिनेताओं और अभिनेत्रियों का ही आधिपत्य रहता है। हर समय फिल्मी गानों को ही गुनगुनाता रहता है। यदि उससे अपने महापुरुषों के जीवन-चरित्र के विषय में पूछो तो वह कुछ भी नहीं बता सकता। परन्तु यदि किसी अभिनेता या अभिनेत्री के विषय में पूछ लो तो वह उनके विषय में शीघ्र ही विस्तार से बहुत कुछ बता देगा। भारत के ये होनहार युवक गिरावट की ओर भागे जा रहे हैं। स्कूलों और कालिजों के कई विद्यार्थी फीस व किताबों के बहाने घर से सिनेमा के लिए पैसे ले लेते हैं। जिन युवकों और युवतियों को सिनेमा के लिए पैसे नहीं मिल सकते वे चोरी करने से भी संकोच नहीं करते। बहुत से निर्धन मजदूर जो कठिनता से दो या तीन रुपये दैनिक कमाते होंगे, शाम को वे भी सिनेमा-हाल में घुस जाते हैं। कई धनी लोग तो अपने सारे कुटुम्ब को साथ लेकर सिनेमा चले जाते हैं। इसका स्त्री-पुरुष और बाल-बच्चों पर कितना बुरा प्रभाव पड़ता है यह कहने की आवश्यकता नहीं।

कहते हैं कि 'सिनेमा' एक अच्छा 'आर्ट' है। मुझे भी इससे इन्कार नहीं। चाकू एक बड़े काम की चीज है परन्तु इसे किसी नादान बच्चे के

चरित्र-निर्माण में भारी रूकावटें

हाथों में दे दो तो वह इससे कोई अच्छा काम लेने के स्थान पर अपनी अंगुली ही काट लेगा। इस प्रकार फिल्मों का यह अच्छा 'आर्ट' भी चरित्रहीन व्यक्तियों के हाथों में आकर देश को पतन की ओर ले जा रहा है। जिन फिल्मों को सामाजिक और धार्मिक कहा जाता है, इश्क और मोहब्बत की चाशनी तो इनमें भी अवश्य होती है। अभी कोई ऐसा उदाहरण नहीं मिला कि कोई दुष्ट, अत्याचारी और अधर्मी व्यक्ति केवल मात्र सामाजिक और धार्मिक फिल्में देखकर सदाचारी और धर्मात्मा बन गया हो। वास्तविकता यह है कि जिस प्रकार धर्म के नाम पर दूसरे पाखंड चल रहे हैं इसी

व जाति का कुछ भला कर सके। परन्तु भारत के युवकों को सिनेमा ने इतना मदहोश कर दिया है कि उन्हें कोई भी अच्छी बात अच्छी नहीं लगती। हां, तो इस अच्छी कला सिनेमा के कारण बहुत से युवक अयाशी और फैशन प्रस्ती में योरुप के नौजवानों से भी आगे बढ़ गये हैं। स्त्रियां तो स्त्रियां हैं ही, पुरुष भी स्त्रियां बनने का यत्न कर रहे हैं। अपने शरीर को व्यायाम आदि से कठोर बनाने के स्थान पर कोमल और निर्बल बनाने में लगे में हुए हैं। स्त्रियों की तरह रंगीन भड़कीले कपड़े पहनना, दिन दिन में कई कई बार-संवारना, पाऊडर क्रीम, सुर्खी आदि का प्रयोग करना, क्या ये नवयुवकों के लिए

> श्री पिशोरी लाल जी प्रेम दृढ़ आर्य समाजी हैं इस का प्रमाण उन के इस लेख से पाठकों को मिलेगा। चरित्र निर्माण में आधुनिक काल में जो भारी रुकावटें आ रही हैं उन का दिग्दर्शन उपरोक्त लेख में किया गया है। यह लेख माला क्रमशः प्रकाशित होगी।
>
> व्यवस्थापक

प्रकार भले आदमियों को फंसाने के लिए फिल्मों को भी सामाजिक और धार्मिक रङ्ग दिया जाता है। बुद्धिमान् लोग यह अच्छी प्रकार से जानते हैं कि वर्तमान फिल्मों के द्वारा सामाजिक और धार्मिक प्रचार कदापि नहीं हो सकता। अयाशी, बुराई, पाप, ठगी, चोरी, मक्कारी, चालाकी, भ्रष्टाचार, ईश्क मोहब्बत, फेशन-प्रस्ती आदि का प्रचार तो इन फिल्मों के द्वारा हो सकता है। हो सकता क्या पर हो रहा।

प्रत्येक सुधारक युवकों और युवतियों को सिनेमा न देखने की शिक्षा देता है। ताकि भारत के युवक और युवतियां इश्क और मोहब्बत के तूफान से बचकर देश

शोभा की बात है? हर नौजवान आवारा बनने की कोशिश कर रहा है। क्या इन आवारा नौजवानों से देश और जाति के सुधार और रक्षा की कुछ भी आशा हो सकती है? वर्तमान सिनेमा क्या है, इश्क और मोहब्बत की ट्रेनिंग देने के स्कूल हैं। इन स्कूलों में ट्रेनिंग लेने वाले विद्यार्थी क्या ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन कर सकेंगे? क्या इनका आचार विचार शुद्ध रह सकता है? क्या वे (मातृवत परदारेषु) पराई स्त्री को अपनी माता के समान समझेंगे, इस उपदेश को सुन सकते हैं? कदापि नहीं, कदापि नहीं।

सांस्कृतिक-कार्यक्रम :—आरम्भ में फिल्मों के चलने से ड्रामों (नाटकों) का रिवाज कुछ कम हो गया था, परन्तु यह रिवाज सांस्कृतिक-कार्यक्रम की आड़ में फिर बढ़ रहा है। पहले तो केवल युवक ही नाटक करते थे परन्तु अब युवतियां भी युवकों के साथ ही नाटक-सभाओं (ड्रामैटिक-क्लबों) में काम करती हैं। इन युवक और युवतियों के मन के अन्दर छुपी हुई भावनाएं क्या हैं, क्या ये नाटक, सांस्कृतिक-कार्यक्रम सामाजिक-सुधार के लिए किये जाते हैं? कदापि नहीं। भावना यह है कि नाटकों में काम करने से जब कुछ अभ्यास हो जाए तब किसी फिल्म-कम्पनी में चले जाएं। नाटक-सभायें फिल्म-कम्पनियों के लिए अभिनेता और अभिनेत्रियां तैयार करने की पाठ शालाएं हैं। फिल्मों में तो फिर भी कुछ बुद्धिमान् अनुभवी आदमी काम करते हैं। परन्तु नाटकों में तो कम आयु के भोले-भाले युवक युवतियां ही साधारणतया काम करते हैं। इन का किसी उल्टे मार्ग पर पड़ जाना बहुत ही सरल है। नाटकों के करने और देखने के कारण बहुत से विद्यार्थी अपने स्कूल व कालिज का काम अच्छी प्रकार से नहीं कर सकते। आधी-आधी रात तक जाग कर अपने स्वास्थ्य को बिगाड़ लेते हैं। और शारीरिक व्यायाम और

श्री पिशोरीलाल जी प्रेम रेणुका
जिला सिरमौर, हिमाचल प्रदेश

खेलों में पूरा भाग नहीं ले सकते जिन से कि स्वास्थ्य बनता है।

एक बार मैं एक नगर में महात्मा जी के नाम से चलाये हुए गांधी-कालेज में एक सांस्कृतिक-कार्यक्रम देखने के लिए इस विचार से चला गया कि शायद इस कार्यक्रम का कोई बुरा प्रभाव नहीं क्योंकि यह गांधी-कालेज' में हो रहा है। वहां जा कर देखा कि मंच पर युवक और युवतियां इकट्ठे काम कर रहे हैं। (क्रमशः)

महर्षि दयानन्द और अर्थनेता

(ले० श्री सोताराम जी आर्य वस्त्र भण्डार हिसार)

महाभारत काल के पश्चात मानवजाति की विभिन्न गुत्थियों को प्राचीन वैदिक दृष्टिकोण से सुलझा कर मार्ग प्रशस्त करने वालों में महर्षि दयानन्द ही प्रमुख मनुष्य थे। वे जहां अध्यात्म सुधारक थे वहां एक महान शिक्षाशास्त्री भी थे। शिक्षाशास्त्र के जिन मौलिक आधारों का वर्णन महर्षि अपने अमर ग्रंथ सत्यार्थप्रकाश में कर गये, काश कि आज के शिक्षाधिकारी उनको अपनाकर भारत की सन्तति के भाग्य विधाता बन पाते। उनकी बात छोड़ भी दें, परन्तु अपने को महर्षि का अनुयायी कहने में गौरव अनुभव करने वाले आर्य जगत के शिक्षा विशेषज्ञों तथा संस्था शासकों ने उनकी जो गहरी उपेक्षा की वह क्या कम शोचनीय है। आर्यजगत के प्रसिद्ध वैदिक विद्वान श्री पं० बुद्धदेवविद्यालंकार अपने भाषणों में कहा करते हैं कि सम्प्रदायिक लोगों ने अपने धर्माचार्यों की वास्तविकता की उपेक्षा कर उन पर नया रंग चढ़ा दिया है। ठीक इसी प्रकार हमारे शिक्षासंस्थानों के अध्यक्षों ने भी अपने आचार्य महर्षि दयानन्द की आज्ञाओं की चिन्ता न कर मनमानी आरम्भ कर दी है। महर्षि ने सत्यार्थप्रकाश में लिखा है।

लड़कों की पाठशालाओं में ५ वर्ष की कन्या भी न जाने पावे। परन्तु आज हमारे दयानन्द कालेज में ५ वर्ष को छोड़िये यहां तो १६ १६ साल की कन्यायें बड़े ठाठ बाट से सज-धज कर इन्द्रलोक की परी बन कर धड़ल्ले के साथ जाती ही नहीं बल्कि छात्रों के साथ एक ही बैंच पर बैठ अध्ययन करती हैं। इस के साथ ही अधिकारी लोग सांस्कृतिक प्रोग्रामों के नाम पर उन्हें नचाकर छात्रों को विलासप्रिय बनने का अवसर एवं प्रोत्साहन देते हैं। क्या यह ही दयानन्द की शिक्षा है? न जाने दयानन्द शब्द को भी इन संस्थाओं के आगे क्यों जोड़ रखा है।

पाठकवर्ग भ्रम में न रहे मैं कोई स्त्री शिक्षा के विरुद्ध नहीं हूं। हां सहशिक्षा का घोर विरोधी हूं। कन्याओं को उनकी पाठशाला में खूब शिक्षा दो जिस से वे राष्ट्रीय कर्तव्यों का पालन कर सकें। सच्ची मातायें बन राष्ट्रीय सन्तति का निर्माण कर सकें। उनके लिये हमारे अधिकारी पृथक स्कूल कालिज चलायें जिस में सब कर्मचारी महिलायें ही हों। महर्षि ने शिक्षा को जीवन सुधार का आधार माना है। इसलिये शिक्षा में अन्य विषयों के साथ-साथ धर्म शिक्षा को अनिवार्य माना है।

आज दयानन्द कालेजों में धर्मशिक्षा का ढिंढोरा तो बहुत पीटा जाता है पर होता कुछ नहीं कहीं नाम मात्र को डर-डर कर पढ़ाते हैं। कि कभी सरकार अनुदान बन्द न कर दे। शेष रही सही कसर वे अध्यापक लोग पूरी कर देते हैं जो आजीविका तो कमाते हैं हमारे स्कूल और कालिजों में, लेकिन हमदर्दी रखते हैं जनसंघ, सोशलिस्ट या कम्युनिस्टों से। ऐसे छिपेरुस्तम आर्य समाज के घातक हैं।

अतः हमारे शिक्षणसंस्थाओं के अध्यक्ष तथा अधिकारी ध्यान दें तथा इस विनाशकारी सहशिक्षा के कलंक को दूर कर अपने असली आर्यत्व का परिचय देवें। अन्यथा सरकार भी वही माल तैयार कर रही है और आप भी। फिर आप ने स्कूल के साथ दयानन्द नाम जोड़ दिया तो क्या हुआ काम तो वही होता है जोकि पहले गुलामी के दिनों में होता आया है।

रोग और उसकी औषध

(पं० खुशीरामजी शर्मा वेद प्रचार अधिष्ठाता आर्य प्रादेशिकसभा)

वर्तमान युग विलासिता, सांप्रदायिक जातीयता एवं प्रांतयता का युग है। इन्हीं के प्रचार एवं प्रसार के साधन भी प्रायः उपलब्ध हैं। सभी समाचार पत्र एवं समुदाय इस दिशा में काफी सतर्क नजर आते हैं। कहीं ऐसी सूचना प्राप्त नहीं होती जिस में किसी धार्मिक गोष्ठी का वर्णन हो। बहुत कम दुकानें ऐसी मिलेंगी जिनकी शोभा धार्मिक महापुरुषों के चित्रों से बनी हो। अधिकतर सजावट नायक और नायिकाओं ने सम्भाली हुई है। इस प्रकार के वातावरण से स्पष्ट प्रतीत होता है कि मानव समाज का कलेवर भयानक महामारियों का शिकार हो चुका है। मन और मस्तिष्क पर इनका गहरा प्रभाव है। कहीं भी चार सज्जन मिल कर आत्मिक उन्नति की बात सोचते हों ऐसा बहुत कम देखने में आता है। हर स्थान पर यह गिरा वह उठा वह गिराया वह उठाया की चर्चा का बाजार गर्म रहता है। खानपान आराम सब इसकी भेंट हो चुका है। भोजन के प्रत्येक ग्रास में इस प्रकार विष हमारे रक्त की बूंद में और सांस का, रग में प्रविष्ट हो चुका है। मन मस्तिष्क इस विषैले मुख से भारी हो चुके हैं। मानव तड़प रहा है इस बोझ के मारे। परन्तु इसे उतारे कौन? महर्षि दयानन्द, सरस्वती जी महाराज ने इस की सर्वोत्तम औषधि खोजी और उस के प्रयोग से ससार ने आराम भी पाया। परन्तु बद परेहज बीमार फिर बीमारी का ग्रास बनता है। औषधि की मात्रा कम और परहेज अधिक होने से बिमारी जड़ से नहीं गई। रोग के परमाणु मानव समाज के शरीर में जीवित रहे। और अनुकूल वातावरण को प्राप्त कर पुष्ट होते जा रहे हैं। महर्षि के नुस्खे का प्रयोग बहुत कम होता गया और हो रहा है। इसी कारण उपरोक्त रोग मानव को बेचैन कर रहे हैं। बड़े प्रयत्न से और भयानक यातनायें सह कर महर्षि ने इस संजीवनी को प्राप्त किया था। विष के प्यालों के पान में ससार भर के विष को पी कर और मानव को वेद अमृत के घूंट पिला कर स्वयं महर्षि सदा के लिये तो गये थे। शरीर की राख को भी किसान के खेत में डलवा कर मानव तेरे लिये सब पूर्ण स्वाहा' का आदर्श उपस्थित कर गये। परन्तु उस वेदामृत की मात्रा इतनी कम होती जा रही है जिसे नगर ग्राम में रहने वाले प्रत्येक नर नारी आबाल वृद्ध के लिये प्राप्त करना दुर्लभ हो रहा है। यदि यही दशा रही तो धीरे २ समूचा समाज ही

(शेष पृष्ठ ६ पर)

है। ऋषि दयानन्द के अनुयायियों के लिये वही मार्ग शोभादायक हो सकता है कि जिस से भारत में आर्यत्व की महत्ता बढ़े और निष्पक्ष भावना से समाज का उत्तरोत्तर उत्थान होता चला जाय।

आर्यो सम्भलो। इस से पूर्व कि पानी सिर से ऊपर गुजरे आप अपने घर की सुध लो तथा स्वच्छ हो कर आर्य सिद्धांतों का अनुसरण कर के आर्य जगत में देदीप्यमान हो जाओ। यही मेरी हार्दिक अभिलाषा है। यही मेरे दिल की सच्ची तड़प है।

आर्यसमाज बरेटा मंडी

का उत्सव १७-१८-१६ अक्तूबर को समारोह से सम्पन्न हो रहा है।

हमारा प्रचार कार्य—
शिथिल क्यों ?

ले० ब्र० इन्द्रदेव जी 'मेधावी' गुरुकुल झज्जर (रोहतक)

**************:*************

आदिकाल से आर्य सत्यान्वेषण एवं सत्य प्रचार के प्रति बराबर जागरूक रहे हैं। देश की प्रतिकूल परिस्थितयों में भी आर्य विद्वज्जनों ने इस भावना का परित्याग नहीं किया। यही एक ऐसा अविछिन्न आधार बना रहा है जिस पर भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता पूर्ण रूपेण आधारित रही है। आदि सृष्टि के वेद ज्ञान अनन्तर काल में उसके प्रचार प्रसार तथा कालान्तर में ह्रास एवं प्रत्येक प्रकार के उत्थान पतन की अवस्थाओं में भी इस वैदिक विचारधारा का अस्तित्व निरन्तर अक्षुण्ण बना रहा है। पौराणिक काल में इस पावन प्रणाली के मन्द पड़ने से हमारे राष्ट्र में ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व में भयंकर अविद्या अन्धकार छा गया था। महर्षि कपिल के 'उपदेश्योपदेष्टृत्वात् तत्सिद्धिः इतरथाऽन्ध परम्परा' शब्द चरितार्थ हो उठे थे। अर्थात उपदेश्य उपदेशक परम्परा से ही ज्ञान का प्रचार हो सकता है। सच्चे उपदेशकों के अभाव में लोक में अन्धपरम्परा प्रचलित हो जाती है। जिस से मानव समाज को अति कष्ट रूप घोर नरक के दर्शन करने पड़ते हैं।

इस लम्बी अज्ञान रात्रो के पश्चात् महर्षि दयानन्द जी महाराज ने वैदिक सत्य धर्म की प्रचार प्रणाली को पुनः स्थापित किया। वैदिक भानु के उदय होते ही दिवांधों में भगदड़ मच गई। महर्षि की दिव्य ललकार को सुनकर लोगों की निद्रा खुली, आलस्य दूर भागा, और सभी क्षेत्रों में क्रांति हो कर भारत में नई चेतना आ गई। इस दिव्य वैदिक ज्ञान को प्राप्त कर जीवन प्राप्त होने वाले व्यक्तियो ने अपना परस्पर मिल कर संगठन बनाया। महर्षि ने इसका नाम आर्य समाज रखा। आर्य समाज के नेताओं ने अपने आचार्य महर्षि दयानन्द के तेजस्वी गुणों की स्थापना अपने हृदय में की थी। अतः उन्होंने जिस भी क्षेत्र में पदार्पण किया सफलता ने उनके चरण चूमे। उसी प्रचार के आधार पर सम्पूर्ण राष्ट्र ने सजग हो कर अंग्रेजों के पंजों से भारत को स्वतन्त्र किया। और हमें हर प्रकार के विकास का अवसर प्राप्त हुआ। आर्य समाज का वह प्रचार कार्य चलते हुये भी अनेक कारणों से हमारा लक्ष्य कुछ धूमिल सा होने लगा। और आज हम सभी अपने इस परम पावन कार्य में शिथिलता का अनुभव कर रहे हैं।

हमारे अन्दर अपने आचार्य दयानन्द तथा उन के पश्चात होने वाले नेताओं के समान लक्ष्य तक पहुंचने की आतुरता नहीं रही। वास्तव में हम लोग अनृत का खण्डन करते २ आत्म निरीक्षण के अभाव में स्वयं भी आचरण से अनृत के पोषक ही बन गये हैं। तो क्या हमें इस पावन कार्य में सफलता न मिले? राष्ट्र में अन्याय अनाचार उत्तरोत्तर बढ़ाता रहे। हमारी जन्म भूमि में ही वैदिक संस्कृति सभ्यता के साथ खिलवाड़ की जावे? राष्ट्र में जीवन डालने वाले सिद्धान्तों की अपेक्षा एवं उपहास हो? हम सब निद्राण मनुष्य के समान ऊंघते हुए से इस सारे दृश्य को देखते रहें और हृदय में थोड़ी वेदना भी न उठे? वस्तुतः आज हमारा आलस्य ही सत्य प्रचार बाधा बन कर उपस्थित है। आओ हम इस आलस्य को छोड़ कर वेद का मुख्य साधन अपनी वाणी को संस्कृत करें।

सामन्य लोग वाणी के दिव्य स्वरूप को नहीं जानते किन्तु अथर्ववेद के ब्रह्म गवी सूक्त में एक अन्याय कारी महाबलवान राजा को एक सीधा सरल ब्राह्मण अपने इस वाणी रूपी दिव्यास्त्र द्वारा किस प्रकार नष्ट कर सकता है, इस का बहुत रोचक वर्णन किया है। अपने राजकीय वैभव से मदोन्मत राजा एक तपस्वी ब्राह्मण की वाणी को अकिन्चनमान कर उस की उपेक्षा कर देता है। उस के हितोपदेशों को नहीं सुनता। वह अपनी आसुरी शक्तियों द्वारा उस ब्राह्मण की गौ को नष्ट कर देना चाहता है। किन्तु वही वाणी विष युक्त सर्पिणी के समान भयकर रूप धारण कर लेती है। जिस से सारे राज्य में विरोध की अग्नि भड़क उठती है। और अन्त में उस बेचारे तपस्वी ब्राह्मण की अनायास बिजय हो जाती है। इस प्रकरण में वाणी को १ धनुष के रूप में वर्णित किया है। और सूक्त के आठवें मन्त्र में धनुष की तीन विशेषताएं बताई गई। जो कि आर्य समाज के प्रचार कार्य को सफल बनाने के लिये हमारे लिये विशेष ध्यान देने योग्य हैं।

१. हृदय बल— वाणी को अमोघ बनाने के लिये हृदय बल सर्व प्रथम वस्तु है। मन्त्र में हृदय बल को धनुष कहा है। जिस वाणी के पीछे हृदय बल होता है, वह सदा प्रभावोत्पादक हो जाती है। जब हम यह कहते हैं कि 'वह सच्चे दिल से बोलता है? यह शब्द उसके अन्तस्तल से निकले हैं" तब उन वाक्यों का महत्व बहुत बढ़ जाता है। मनुष्य के हृदय में सत्याचरण से बल संग्रहीत होता है। जो लोग सदा सत्य बोलते हैं उनकी वाणी में जादू सा प्रभाव होता है। विरोधी लोग भी उनकी वाणी पर विश्वास करते हैं।

(क्रमशः)

१–जिह्वा ज्या भवति कुल्मलं वाङ्
नाडीका दन्तास्तपसाभिदिग्धा।
तेभिर्ब्रह्मा विध्यति देवपीयून्
हृद्बलै धंनुर्भि र्देवजूतैः॥
अथर्व० ५-१८-८।

रोग और उसकी औषध

(पृष्ठ ५ का शेष)

कहीं वंचित न हो जाये? तब दशा क्या होगी। इस का अनुमान महर्षि के प्रादुर्भाव से पूर्व सदी की ओर दृष्टिपात करने वाले सज्जन स्वयं कर सकते हैं। वेद का पवित्र प्रचार ही मानवता का आधार है दानवता लिये यही अमोघ अस्त्र बन सकता है। बाकी सभी साधन दुर्बल हैं। अमनचैन के सभी दावे हार कर किसी अज्ञात कोने में घुट कर सिमट कर लोप होते जा रहे हैं। प्रकाश घोर निशा निराशा की गोद की खोज कर रहा मानव चहुं ओर से असहाय और व्याकुल तथा भय भीत हो रहा है।

मानव जीवन के पलों को सुख चैन में बदलाने के लिये केवल वह प्रचार की मात्रा को प्रचुर मात्रा में उपलब्ध करवाना श्रेयस्कर होगा। इस के लिये प्रत्येक आर्यजन के लिये गम्भीरता से विचार करना आवश्यक है। जितने विचार हम प्रति पल अपने आहार व्यवहार पर करते है उस से अधिक नहीं तो उतना प्रयत्न तो करना ही चाहिये। इस के बिना कोई ठिकाना नहीं। मानव इच्छुक है उसे प्रचुर मात्रा मे वेदामृत पिलाने का प्रयत्न सभी को मिल कर करना चाहिये। और इस दिशा में प्रत्येक साधन को जुटाने का सभी को पूर्ण प्रयत्न करना चाहिये।

आर्य कुमार सभा सत्संग—

आज वेदामृत-व्रत पालक बनो

(प्रो० किशोरी लाल गुप्त एम० ए० कृत बाल वेदामृत से)

(गतांक से आगे)

★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★

इों एक अर्थों में व्रत है क्योंकि हम इरादा कर लेते हैं कि आज केवल एक बार भोजन करेंगे फल आदि के सिवाय अन्य अन्न न खायेंगे। किन्तु यह तो 'व्रत' की ए. बी. सी. डी. है, सब से छोटे दर्जे का व्रत है। असली 'व्रत' यह है—इरादा कर लो कि आज से सिग्रेट न पियेंगे, झूठ न बोलेंगे, किसी की चीज न चुराएंगे, किसी को गाली न देंगे, सिनेमा नहीं जायेंगे, कुसंगति में न फंसेंगे, अपने बड़ों को सदा हाथ जोड़ कर नमस्ते करेंगे, उनका आशीर्वाद लेंगे, उनकी बतलाई हुई शिक्षाओं पर चलेंगे, माता पिता और गुरुजनों (अध्यापकों) की आज्ञा पालन करेंगे, नित्य व्यायाम करेंगे, सन्ध्या करेंगे, स्वाध्याय करेंगे, नित्य स्नान करेंगे, दांत साफ रखेंगे, साफ वस्त्र पहनेंगे समय पर भोजन करेंगे, मिर्च खटाई और मसालों से बचेंगे, ब्रह्म मुहूर्त में प्रातः ५ बजे उठ कर वायु सेवन (सैर) करने बस्ती से बाहर जाया करेंगे, आदि आदि जितनी अच्छी बातें हैं उन से प्रेम करेंगे, और जितनी बुरी और अनुचित बातें हैं उनसे बचेंगे ये सब वास्तविक (असली) 'व्रत' हैं। यदि इनपर आर्य कुमार चल सकें तो वे सच्चे 'व्रतपाल' बन जावेंगे।

प्यारे आर्य कुमारो! जब तुम्हें सवेरे जल्दी उठकर पाठ याद करना होता है, तो, रात को माता जो से यह कह कर सोते हो 'जल्दी उठा देना' माता वही करती है जो तुम दिल से चाहते हो। इस माता से कहीं अधिक ध्यान हमारा 'विश्व-धात्री मां' रखती है। उसे कीड़ी से लेकर कुंजर (हाथी) तक की फिक्र है। संसारी मां केवल दो आंखें रखती है, 'विश्व मां' के सहस्र नेत्र (हजारों आंखें हैं) अनन्त नेत्र हैं और (वे भी साधारण नेत्र नहीं, दिव्य नेत्र हैं। उसे घट घट की खबर है। हमारी सच्ची लगन को, शुभ इच्छाओं को, वह देवी मां झट ताड़ जाती है। यदि तुम अच्छे २ व्रत पालन कर सकने की शक्ति उस दयावती, कृपा शीला 'मां' से मांगोगे, वह बड़ी प्रसन्नता से तुम्हें अपने व्रत को पाल सकने की आत्मिक शक्ति, मानसिक बल अवश्यमेव प्रदान करेंगे। यह वेद मन्त्र इसी प्रकार की प्रार्थना करने की शिक्षा दे रहा है।

इस मन्त्र में 'अग्नि' शब्द का प्रयोग बड़ा ही उपयुक्त हुआ है। इस बात का जानना बड़ा कठिन है कि कौन सा काम उचित है और कौन सा अनुचित। एक ही बात आज उचित समझी जा सकती है, और कल को अनुचित। देश काल और पात्र का ज्ञान होना आवश्यक बात है। इसका ठीक ज्ञान उसी शक्ति को हो सकता है, जो सर्वज्ञ है। हमारी आत्मा अपना प्रकाश, उचित अनुचित, पाप पुण्य, बुराई भलाई का ज्ञान उसी तेज, प्रकाश और ज्ञान के भंडार 'अग्नि देव' (परम पिता परमात्मा) से प्राप्त करती है। वही शक्ति हम को असत्य मार्ग से हटा कर सत्यपथ (सचाई के रास्ते) पर चलाती है। जब तक उसका प्रकाश हमें न होगा हम (अन्+ऋत) असत्य बातों की तरफ झुके रहेंगे।

आर्य कुमार सभा

(श्री श्याम लाल आर्य दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार)

★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★

अत्यन्त हर्ष का विषय है कि हिसार नगर में २४ मई सन १९६४ को आर्य जगत के सुप्रसिद्ध कार्य कर्त्ता श्री राजेन्द्र जी जिज्ञासु एम० ए० प्राध्यापक दयानन्द कालेज शोलापुर के द्वारा आर्य कुमार सभा की स्थापना हुई, आर्य कुमार सभा दिन प्रतिदिन उन्नति के पथ पर अग्रसर हो रही है। इस सभा को भली-भांति चलाने में आर्य जगत के उदीयमान वेद-वेत्ता श्री पं० सत्यप्रिय जी शास्त्री प्राध्यापक दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय तथा ओजस्वी वक्ता श्री प० रामविचार जी एम० ए० उपाचार्य दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय सलग्नशील हैं।

इसके साथ ही साथ आर्य समाज की भावी आशा श्री कुंवर जयराम सिंह जी त्यागी आर्य कुमार सभामें जाकर अपने ओजस्वी भाषण से आर्य कुमारों के हृदयों में वेद एवं आर्य समाज के उद्देश्यों के मंत्र फूंककर हिसार नगर में प्रशंसनीय कार्य कर रहे हैं—

श्री राजेन्द्र मोहन जी बी० एस० सी० तथा सुखदेव जी आय दोनों महानुभाव कुमार सभा में महान कार्य रहे हैं इन दोनों सज्जनों से आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि भविष्य में आर्य जगत का पथ प्रदर्शन करेंगे। इन्हीं महान विभूतियों के फलस्वरूप कुमार सभा की वर्तमान उपस्थिति लगभग ६० है।

बन्धुओ यह ठीक है कि हिसार ही नहीं अपितु अखिल पंचनद आर्य समाज का गढ़ रहा है और वर्तमान समय में भी है, परन्तु दुःख के साथ लिखना पड़ रहा है पंजाब भूतपूर्व पंजाब नहीं रहा है वास्तवमें पंजाबने ला.लाजपतरायजी तथा महात्मा हंसराज जैसे महान रत्नों को जन्म दिया था तब पंजाब के प्रत्येक बच्चे का हृदय वैदिक भावनाओं से ओत-प्रोत था।

लेकिन आज Sunday समाजियों ने आर्यसमाज का भट्ठा बिठा दिया वे तो केवल Sunday को आकर समाज को उपस्थिति बढ़ा देते हैं और Sunday समाजी बनकर वास्तविक आर्यसमाजी बनतेर वृद्धावस्था समीप आ गयी और शिर के बाल भी सफेद हो गये। परन्तु आर्य समाज की भावी आशायें अपने बच्चों के प्रति कोई ध्यान नहीं देते हैं अतः मैं उनसे प्रार्थना करूंगा कि वे अपना कर्तव्य समझते हुये अपने बच्चों अपने निकट आय कुमार सभा में अवश्य मेव प्रेषित किया करें।

भारतवर्ष के प्रत्येक प्रांत के प्रत्येक जिले के आर्य समाज के प्रधान का परम कर्तव्य है कि समाज सत्संग के साथ हो साथ आर्य कुमार सभा भी चलाकर आर्य कुमारों को यथोचित शिक्षा देकर उन्हें कुपथ से हटाकर वेद-पथिक बनाने का सफल प्रयास करें क्यों आर्यसमाज व राष्ट्र क्या है छोटे २ बच्चों की वैदिक भावनायें तो ही राष्ट्र व आर्य समाज है।

अतः मैं हिसार नगर निवासियों विशेषरूप से कह देना चाहता हूं कि यदि आप हिसार नगर में वेद और महर्षि दयानन्द के सिद्धांतों को गुंजाना चाहते हो तो अपने बच्चों को अवश्यमेव कुमार सभा में प्रेषित किया करें।

★★

आर्यो होशियार रहो

जगत् गुरु श्रीशंकराचार्य के प्रा रक्षा के प्रयोजनसे दो जैनी उनके शिष्य बने और ऐसेही भारतको हड़प करने के लिये चाउ एन आई ने यहां आ कर हिन्दी चीनी भाई भाई के नारे लगवाये तो ठीक इस प्रकार शिकारी कबूतरों और चिड़ियों के मारने के हेतु प्रथम दाने डालते हैं और पश्चात् उन को पकड़ते हैं।

आर्यो। जिस भी किसी को आर्य समाज का सदस्य बनायें प्रथम यह देखना चाहिये कि उस का आर्य समाज के प्रति कितना प्रेम है और उसकी भावना किस प्रकार की है और आर्य समाज के सत्संगों में कितनी उपस्थिति है। क्या उस पर कुछ प्रभाव पड़ता है या नहीं। यदि आप बिना परीक्षा के किसी व्यक्ति को सदस्य बनाओगे तो ठीक उसी प्रकार से आप की दशा होगी जिस प्रकार से श[illegible] की दशा हुई थी।

लुधियाने का उदाहरण [illegible] के सामने है, यदि लुधियाने [illegible] आर्यसमाज के अधिकारी सच्चे आर्य होतेतो आर्य नामको बेचनातो बहुत दूर है उन के सामने इस प्रकार से कहने को किसी की हिम्मत नहीं होती।

हे आर्यो। राष्ट्र के सच्चे सजग प्रहरी बन कर जागो।

प्रथम तो लुधियाने के व्यक्तियों के बचे हुए आर्य नाम को वापिस लो फिर समस्त भारत के आर्य समाजों की खोज करो कि कोई इस प्रकार का व्यक्ति तो नहीं है जो आर्य समाज को बदनाम कर रहा हो।

सीताराम आर्य
आर्य वस्त्र भण्डार हिसार

आर्य समाज [illegible] गढ़ की दिनाङ्क २०-८-६४ की यह सार्वजनिक सभा पंजाब तथा केन्द्रीय सरकार से प्रार्थना करती है कि

पंजाब के अन्दर अन्न के बढ़ते संकट तथा दूध और घी के उत्तरोत्तर बढ़ते हुये अभाव के सन्मुख दूध देने वाले गौ आदि पशु धन का निकास इस प्रांत से एक दम बंद होना चाहिये। जिस के लिये सारा पंजाब दुखी है।

यह सभा भारत सरकार और विशेष कर पंजाब सरकार से विनय पूर्वक प्रार्थना करती है कि चण्डीगढ़ में गौ रखने की स्वतन्त्रता सर्व साधारण को होनी चाहिये। गौ रखने के प्रतिबंध को पंजाब सरकार शीघ्रतया वापिस लेकर कृतार्थ करे।

[illegible]वतः भारत की पवित्र भूमिए सर्वप्रथम नगर है जहां गौ जैसे [illegible]मृत [illegible] प्राणी के रखने पर प्रतिबंध लगाया गया है। जो कि भारतीय परम्परा सभ्यता और संस्कृति के विरुद्ध है। गौमाता शारीरिक आत्मिक, सामाजिक और आर्थिक उन्नति की जन्म दाता होने के कारण विगत लाखों वर्षों के इतिहास महानात्माओं, आचार्यों, राजाओं, बादशाहों, गुरुओं और पीर पैगम्बरों की दृष्टि में सदा पूज्य तथा पवित्र मानी गई है। अतः कृपया इस प्रतिबंध को हटा कर शुद्धि और सफाई के उचित प्रशिक्षण द्वारा राज धानी के सभी घरों में गौ रखने की सुविधा दे कर दूध बढ़ाने के उत्साह को जगाया जाये। साथी ही चरागाहों की व्यवस्था भी विशाल होनी चाहिये।

आशुराम पुरोहित समाज

[illegible] सलोगड़ा (H.P.)

[illegible]५ सितम्बर तक ठाकुर [illegible] तुफान भजनोपदेशक सभा [illegible] गीतों द्वारा वैदिक धर्म का प्रचार हुआ निकट के गावों से भी जनता धर्म चर्चा सुनने के लिए आती रही। श्रवणार्थियों पर अच्छा प्रभाव पड़ा। मन्त्री आर्य समाज

आर्य समाज सैक्टर ८ चण्डीगढ़

६ से ८ नम्वबर तक अपना वार्षिक उत्सव बड़ी धूमधाम सेमना रहा है ८-११-६४ को स्त्री समाज का उत्सव होगा। १-११-६४ से श्री ओमप्रकाश जी महोपदेशक आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा की मनोहर कथा होगी तथा साथ २ साम वेद पारायण यज्ञ होगा। ६-११-६४ को नगर कीर्तन होगा। इस अवसर पर अनेक संन्यासी महात्मा तथा उपदेशक पधार रहे हैं।

आशुराम पुरोहित

आर्य समाज पुलबंगश देहली

का सालाना जलसा १३-१४-१५ नवम्बर को सम्पन्न हो रहा है। गत मास में पं० गणेशदत्त जी वानप्रस्थी ने १६ संस्कार कराए तथा चिरंजीत लाल जी से इगलैंड जाकर मद्य मांस आदि प्रयोग न करने की प्रतीज्ञा कराते हुए उनको कुछ पोस्टर इंगलैंड जाकर बांटने के लिए दिए।

सुरेश कुमार मंत्री सभा

आर्य समाज श्री रामानगर में वेद प्रचार

आर्य समाज में श्री बालकृष्ण जी शर्मा ने रामायण की कथा की तथा १५ से २० सितम्बर तक नगर के मुख्य २ भागों में रामायण द्वारा प्रचार होता रहा जिस का जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा। मन्त्री आर्यसमाज।

आर्य समाज कंडाघाट की ओर से

सभा प्रधान प्रिंसिपल रालाराम जी एम० ए० के गले में रुपयों की माला डाली गई

आर्य समाज कंडाघाट (शिमला) के प्रधान बा. जयलालजी एडवोकेट ने सभा के वेद प्रचार के लिए तपोमूर्ति प्रिंसिपल पण्डित रलाराम जी एम. ए. एम. एल. ए. के गले में दस २ रुपयों की माला पिरो कर पुष्पमाला अर्पित सम्मान सहित समाज के जल्से पर पहिनाई गई।

नेहरू निधन

(श्री वेदप्रकाश जी एम.ए. खन्ना)

कर गया निर्धन हमें, नेहरू निधन,
कह रहा है विश्व छाया शोक घन,
वह प्रबल तूफान था, जब चल दिया,
उड़ गया उजड़ा प्रलय, संग्राम वन।

आर्यसमाज साम्बा (जम्मू)

१. ने अपनी बैठकमें पं० चन्द्र सेन जी उपदेशक की पूज्य माताके निधन के उपलक्ष्य में शोक प्रस्ताव पारित किया।

२. स्वामी परमात्मा नंद जी ने ८ से ६ नवम्बर तक प्रचार किया

वेद मुनि जी ३ से ६ अक्टूबर तक आर्य समाज सांबा में वेद कथा करेंगे सभी धर्म प्रेमी ठीक समय पर पधार लाभ उठायें।

वेद प्रकाश [illegible]

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड. जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मासिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टैलीफोन न० २०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 1

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे 9.10.64. वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक ४०) २६ आश्विन २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०- ११ अक्तूबर १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

आसुवोर्जमिषं च नः

परमदेव ! हमें आप ऊर्ज बल शक्ति तथा इषम्-अन्न आदि धनपदार्थ आसुव-प्रदान कीजिए। हम आपके भक्त सदा बलवान बनें तथा धन वाले बन कर जीवन यात्रा में सदा सफलता प्राप्त कर सकें।

आरे बाधस्व दुच्छुनाम्

जो लोग बुरे हैं, कुत्ते के समान लम्बी जीभ वाले हैं, हर काम में लोभ की मात्रा जिनकी बढ़ी हुई है ऐसे लोगों को हम से परे कर दो। भगवन! ऐसे लोग हमें सता न सकें। पास न आवें।

अदृशन्नस्य केतव:

जो लोग ज्ञानी हैं, दूरदर्शी हैं वे उस परमेश्वर की महिमा की झंडियां सदा देखते हैं। उन को सर्वत्र परमेश्वर के दर्शन होते हैं। सच्चे आस्तिक एवं प्रभुभक्त हैं। वसे कभी नहीं भूलते।

सा म वे द से

वे दा मृ त

ओ३म् भू भुर्वःस्वः। अग्न आयूंषि पवम आसुवोर्जमिषं च नः। आरे बाधस्व दुच्छुनां स्वाहा॥ इदमग्नये पवमानाय इदन्न मम॥ ऋक् मडल ९ सूक्त ६६ मं. १९

अर्थ—हे (भूः) प्राणों से प्यारे (भुवः) दुःखों के नाशक (स्वः) सुखरूप परमेश्वर! (अग्ने) हे प्रकाशमय देव! आप कृपा करते हुए (आयूंषि) जीवन आयु को (पवस) शुद्ध पवित्र कर दो हमें दीर्घायु बनाओ। और हमें (आसुव) प्रदान करें (ऊर्जं) बल शक्ति तथा (इषम्) अन्न आदि उत्तम पदार्थों को (नः) हमारे लिए देवें। तथा (आरे) दूर (बाधस्व) कर देवें (दुच्छुनाम) दुष्टों कुत्तों के स्वभाव वाले राक्षसों को—(स्वाहा) यह मेरा वचन सत्य होवे। (इदम) यह आहुति(अग्नये) अग्निदेव के लिए हो (पवमानाय) पवित्र करने वाले के लिए (इदम् न मम) यह मेरा नहीं है आप का ही है—

भाव :—हे विश्वदेव! प्रकाश दाता प्रभो! आप सारे, विश्व के आधार हो, सब दुःखों को दूर कर के सुखों के प्रदाता हो। कृपा करो कि हम लम्बी आयु वाले बनें। मौत हमें अपने पंजे में जल्दी न जकड़ सके। हमारा जीवन सब प्रकार से पवित्र बन जाये। आप की कृपा से हमें उत्तम बल और धनादि मिलते रहें जो दुष्ट हैं, जिन का स्वभाव कुत्तों जैसा है, ऐसे काटने वाले नर चोले में फिरने वाले, हानि पहुंचाने वाले राक्षसों को हम से दूर भगा देवें। प्रभो! यह आप की दी वस्तु आप के अर्पण है। मेरा तो इस में कुछ भी नहीं है—सं.

ऋषि दर्शन

यस्मिन् देशे विद्वांस:

जिस देश में, जिस राज्य में शासन के काम में विद्वान, धर्मी तथा न्याय के प्यारे लोग होते हैं। राज्य के तन्त्र को भली-भांति समझते हैं। ज्ञान के प्रकाश में जिनका मार्ग प्रशस्त होता है। कथनी और करनी समान है।

यज्ञानुष्ठानेन च

और जहां पर, जिस राष्ट्र में यज्ञों का शुभ कर्मों का, परोपकार रूप शुभ कार्यों का अनुष्ठान करने वाले सज्जन होते हैं। जहां पर परोपकार का काम करने वाले उत्तम प्रकृति के लोग हैं जहां निस्वार्थी लोग हैं।

तत्रैव प्रजा: सुखिय:

उस देश में, उस राज्य में सारी प्रजा, सारे लोग अत्यन्त सुखी होते हैं। यह स्वाभाविक ही है। जहां पर उत्तम सज्जन होते हैं, वहां पर जनता का हर प्रकार का जीवनमें सुख होता है। हर विभाग में स्तर ऊंचा होता है।

भा ष्य भू मि का से

अधिष्ठाता—श्री संतोषराज जी सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शा।

मन्त्रार्थ में सहायक

(ले०-श्री पं. सत्यप्रिय जी शास्त्री सिद्धान्त शिरोमणि)
—प्राध्यापक—दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार—

इस युग में वेद का वास्तविक स्वरूप उपस्थित करने का सर्वप्रथम श्रेय महान महर्षि दयानन्द को को है। उनसे पूर्व वेद मन्त्र केवल मात्र कर्मकांड वर्णन परक मात्र ही समझे जाते थे। ऋषिवर दयानन्द ने ही अपने अलौकिक भाष्य द्वारा वेद के त्रिविधार्थ को प्रक्रिया का सूत्रपात किया। वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक के सिद्धान्त की ओर धर्म प्रिय जनता का ध्यान आकृष्ट किया। उन्होंने अंगो पांग व्याकरण एवं निरुक्त तथा ब्राह्मण ग्रन्थों के मौलिक अध्ययन के आधार पर वेदार्थ किया। उन्होंने मन्त्रों के ऋषि, देवता, छन्द एवं स्वरों की उपेक्षा नहीं की, अपने भाष्य में उन्हें स्थान दिया। वर्तमान युग के कुछ वेद विदाभास मन्त्रों के ऋषि, देवता, छन्द एवं स्वरों को बादाम के छिलके कहकर तुच्छ, एवं अनुपयोगी बताते हैं। इसी विषय में कुछ विचार किया जाता है। ऋषि शब्द के निर्वाचन करते हुए लिखा है 'साक्षात्कृतधर्माण ऋषियो बभूवु.' 'ऋषि दर्शनात् स्तोमान ददर्श इत्यौपमन्यवः' अर्थात् मन्त्रों के अर्थों की यथार्थता का आचरण द्वारा प्रत्यक्ष करने वाले होने से ऋषि कहाते हैं। प्रत्येक वेद मन्त्र का जो ऋषि अंकित है वह उस का द्रष्टा है न कि निर्माता। क्योंकि निर्माता हो तो कई मन्त्रों के २८ तथा २९ ऋषि हैं, तो क्या इतने ऋषि मिल कर एक ही मन्त्र रचना में समर्थ हो सके जब कि दूसरी ओर एक सूक्त का एक ही ऋषि है। इतना ही नहीं एक सूक्त के तो 'शतवैखनशा.' ऋषि है। अर्थात् सौ वखानश हैं। ये ऋषि भी यौगिक हैं, रूढ़ि नहीं हैं। उस २ अर्थ के प्रत्यक्षदर्शी होने से उस २ संज्ञा के अधिकारी हुये, अतः ऋषि भी मन्त्र के अर्थज्ञान में सहायक हैं। वेद मन्त्रों का दूसरा शीर्षक होता है देवता। ऋक्सर्वानुक्रमणिका में लिखा है 'यातेना (मन्त्रेणो) च्यते सा देवता॥ अर्थात् मन्त्र में जिस विषय का वर्णन हो, वह उस का देवता कहाता है। मन्त्र के प्रति पाद्यविषय **Subject Matter** का दूसरा नाम देवता है। मन्त्रार्थ में इस की उपेक्षा कितनी घातिका होगी, यह प्रत्यक्ष सिद्ध है। इस के साथ यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि मन्त्रों के ऋषि एवं देवताओं का परस्पर बड़ा घनिष्ट सामंजस्य है। क्योंकि वैसा आचरण कर के तदनुरूपसंज्ञा वाला ऋषि होता है यथा शिवसकल्प ऋषि तथा मन देवता है मन के यथार्थज्ञान तथा तदनुसार आचरण से शिव संकल्प होता है, शिव संकल्प से ही मन ठीक होता है। इसी प्रकार ऋग्वेद के एक सूक्त का ऋषि "भिक्षु" है और देवता धनान्न दान प्रशसा" अर्थात् भिक्षु-याचक ही यथार्थ रूप में धनान्नदान की प्रशंसा कर सकता है इत्यादि सर्वत्र समझ लेना।

तीसरा शीर्षक मन्त्रों पर छन्द होता है। छन्दशास्त्र के अनुसार जिस छन्द में जितने अक्षर, ह्रस्व दीर्घादि क्रम से होते हैं, वह उसका छन्द होता है। यथा गायत्री, त्रिष्टुप्, जगती उष्णिक् आदि। इसका भी परोक्षरूप से अर्थ से सम्बन्ध होता है। इस में इतना कहना है कि आज हमारे यहां मन्त्रोच्चारण में छन्दशास्त्र की दृष्टि से जितना ध्यान दिया जाना चाहिये था, उतना नहीं दिया गया तथा अब भी नहीं दिया जा रहा है। जब कि श्लोक जिन में कि मालिनी, द्रुतविलम्बित, शिखरिणी, शार्दूलविक्रीड़ित आदि छन्दो भेद होने से उनके गाने के प्रकार में सर्वथा भेद होता है तो फिर विभिन्न छन्दों वाले मन्त्र एक तान से ही क्यों गाये जाये। क्या छन्दोभेद से उनके गाने में अन्तर न होना चाहिये। आज इस ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिये। आशा है वेद का ढिंढोरा पीटने वाले आर्य विद्वान, संस्थायें तथा सभायें इस ओर विशेष ध्यान देगी। चतुर्थ शीर्षक स्वर का होता है। वेद में दो प्रकार के स्वर होते हैं। एक तो उदात्तानुदात्तस्वरित भेद से व्याकरण से सम्बन्धित एवं दूसरे गाने के काय में प्रयुक्त षड्ज, ऋषभ, गान्धारादि भेद से सात ये दोनों अर्थ मे सहायक हैं। देखिये यजुर्वेद में आता है 'भ्रातृव्यस्यवधाम' भ्रातृव्य शब्द के दो अर्थ भतीजा तथा शत्रु होते हैं, जहां व्यन प्रत्यय हो वहां स्वरित होने से भतीजा अर्थ होगा। परन्तु इसे वैयाकरण जान सकेगा, यह सीधा अर्थ से सम्बन्धित है। इसके जाने बिना अर्थ करने वाला तो 'सवाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति यथेन्द्रशत्रुः स्वरतोऽपराधात्' के अनुसार वेद का हिंसक है। दूसरे स्वर भी अर्थ के परिचायक हैं। उनमें उत्तरोत्तर स्वर की कठोरता होती है। स्वर कठोरता एवं कोमलता भावों की अभिव्यक्ति में सहायक है। जसे कोई राजनीति, विषय पर बोलता है तो वह शांतरस में नहीं होता, वैसे ही प्रातःकाल के सत्संग में अध्यात्म प्रवचन करने वाला भी वीर रस वा रौद्ररस में नहीं बोलेगा। इसी दृष्टि से स्वर मन्त्रोक्त विषय पर प्रकाश डालते हैं। इस प्रकार प्रत्येक वेद मन्त्रों के चारों शीर्षक व्यर्थ न होकर उसके अर्थ की अभिव्यक्ति में परम सहायक सिद्ध होते हैं।

वेद मन्त्र

ओ३म् येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढ़ा येन स्वः स्तभित येन नाकः।
यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥४॥
यजु० अ० ३२। मं० ६॥

द्रुतविलम्बित वृत्तम्—

अतुलनीय पदार्थ सुदीप्तिवान,
कमलिनी-कुल-वल्लभ से यथा।
परम तीक्ष्ण-स्वभाव सुयुक्त जो,
अवनि धारण की रच के तथा॥
सुख-सुवैभव औ शुचि मोक्ष को,
सतत धारण है तुमने किया।
विमल अम्बर में सब लोक को,
सुदृढ़-बन्धन में दृढ़ है किया॥
विहग अम्बर में उड़ते यथा,
सकल लोक तथा स्वक शक्ति से।
भ्रमणशील किया रच के उसे,
सब नियन्त्रित है निज शक्ति से॥
सकल मानव के कमनीय हे!
तुम प्रभो! सुखदायक हो सदा।
परम ब्रह्म! पिता! तव प्राप्ति को,
हम विशेष सुभक्ति करें सदा॥

प्रणेता—विद्यासागर शर्मा दयानन्द मठ, दीनानगर

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२१, ११ अक्तूबर १९६४ [अंक ४०

राष्ट्रपिता के तीन सन्देश

गत दो अक्टूबर शुक्रवार को सारे भारत की जनता ने राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी की जन्मजयन्ती मनाई। समारोह सम्पन्न हुए। लोगों ने अपने २ स्थानों पर श्रद्धा से भरे विचारों का प्रचार किया। राजघाट देहली पर तो विशेष चहल पहल थी। प्रार्थनाएं तथा गीतों की धुनें भी बजाई गईं। सरकार और जनता दोनों ने मिल कर बापू के प्रति आस्था से पूर्ण श्रद्धांजलियां प्रस्तुत कीं, सारे देश में उस दिन अवकाश रहा। महात्मा गान्धी सब के थे। राष्ट्र के नेता, कर्णधार एवं नायक थे। जिस बात को कहते थे उसे सब से पूर्व स्वयं करते थे। जनता को जिस पथ पर चलाना चाहते थे उस पर सब से पहले स्वयं चलते थे। जिस बलिदान के मार्ग पर सारे राष्ट्र को ले जाना चाहते थे उस अग्निकुण्ड में सबप्रथम अपने आप को डाल दिया करते। उन की कथनी करनी थी और करनी कथनी बनी हुई थी। कई बातों में मतभेद होते हुए भी उनके त्याग, बलिदान एवं निष्ठा के सामने सब ने मस्तक झुका दिया। प्रतिवर्ष उन की जयन्ती सारे देश में चेतना भर देती है।

महात्मा गान्धी का जीवन चमकता हुआ ज्योतिःस्तम्भ है। अनेक प्रकार की विशेषताएं जीवन में ओतप्रोत हैं। जब २ उन की जयन्ती आती है तो प्रत्येक भारत वासी और विदेशियों के सामने उन के तीन विशेष गुण तो आ ही जाते हैं। यही सब के लिए जीवन सन्देश का काम कर जाते हैं। राष्ट्रपिता गान्धी जी के सारे जीवन काल में स्थान २ पर ये तीनों बातें मिलती है कि वह सत्यनिष्ठ थे, सरलता सादगी के साक्षात् पुतले थे और सेवा के व्रती थे। इनको ऐसे भी कहा जा सकता है कि सत्यनिष्ठा, सरलता एवं सेवा उनके जीवन के विशिष्ट अङ्ग थे। सत्य दो अर्थों में आता है। एक तो ब्रह्म के अर्थ में आता है। सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म। भगवान् के नामों में सत्य की गणना भी की जाती है। दूसरा सत्य जीवन का शाश्वत गुण है जिसे धारण कर लेने पर सारे कार्य सिद्ध हो जाते हैं। महात्मा जी के जीवन में सत्य रूप प्रभु के लिए प्रेम कूट २ कर भरा था। उनका प्रतिदिन प्रभु उपासना से आरम्भ होता तथा अन्त भी प्रार्थना के साथ ही होता था। Truth is God and God is Truth - सत्य प्रभु और प्रभु सत्य है। परमात्मा के परमभक्त थे। राजनीतिक नेता होकर भी वे परम आस्तिक थे। परमात्मा के अटल विश्वासी थे। सत्य के प्यारे थे। असत्य से उनको भारी घृणा थी। उनके जीवन में स्वयं लिखी उनकी सत्य की घटनाएं आंखें खोल देती हैं। सादगी के पुतले थे। उनका खानपान सादा, वेशभूपा तो सादगी की पराकाष्ठा तक पहुँची थी। वासनिवास सादा। सेवा का व्रत अपने जीवन में धारण करके देशसेवा, समाज सेवा, प्राणिमात्र की सेवा में अपने को अर्पित कर दिया। उनके इन तीन सन्देशों को यदि उनके अनुयायी अपने जीवन में धारण कर लेवें—सत्य-सरलता और सेवा को आदर्श मान लेवें तो राष्ट्र कहां से कहां पहुंच जाए।

—त्रिलोकचन्द्र

नैतिकता के तीन उपाय

(श्री प्रिंसिपल रलाराम जी एम. ए. सभा प्रधान)

****

आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब जालन्धर के मान्य तपोमूर्ति, सरलता की सजीव प्रतिमा प्रिंसिपल रलाराम जी एम. एम. एस. एल. ए. आर्य समाज कंडाघाट (शिमला) के वार्षिक महोत्सव पर आज के नैतिकपतन के प्रवाह को रोकने का भावपूर्ण भाषण देते हुए कहा—

आज का विश्वव्यापी नैतिक पतन सब के सामने है इस ने जन जीवन को सब ओर से खोखला करना शुरु किया हुआ है। किसी भी क्षेत्र में देखा जाए वहीं पर पतन का प्रभाव दिखलाई देता है। सब इसे रोकने का प्रयास करने में लगे हुए हैं। जब तक यह रुकता नहीं तब तक न व्यक्ति का भला हो सकता है और न ही विश्व में शान्ति स्थापित की जा सकती है। नैतिकपतन एक भयंकर रोग है जिस से सारा समाज बीमार बनता जाता है। भूकम्प जल की बाढ़ या वायु का भीषण भी उतनी हानि नहीं पहुंचा सकता, जितनी हानि यह भ्रष्टाचार कर के रख देता है। बाहिर के शत्रु से यह भ्रष्टाचार का शत्रु बड़ा भयंकर होता है। वह अन्दर ही अन्दर उत्पात मचा कर देश को बिगाड़ देता है। यदि समय पर इसे रोका न गया तो आगे चल कर परिणाम बड़ा भयंकर हो जाता है। इस लिए इस का रोकना प्रत्येक भाई बहिन का कर्तव्य है। इसे रोकने के लिए विशेष रूप से तीन प्रकार के साधन प्रयोग में लाये जाते हैं। अथवा ऐसा भी कहा जा सकता है कि तीन उपायों से नैतिकता के वर्तमान समय के पतन को रोका जा सकता है।

१. राजदण्ड २. समाज दण्ड ३. धार्मिक जीवन या धर्मभावना किसी प्रकार की बुराई को रोकने के लिए राजदण्ड भी या विधान भी एक आवश्यक साधन होता है। किन्तु राजदण्ड से सारी बुराईयां नहीं रोकी जा सकती हैं विधान का अपना महत्वपूर्ण स्थान है, इस का भी अपना प्रभाव होता है। किन्तु विधान से बाहर की बुराई नीचे दब जाती है, अन्दर चली जाती है। रोग के मूल का नाश नहीं होता। इस प्रकार समाजदण्ड से भी काफी कार्य होता है। समाज की दृष्टि में गिरा हुआ व्यक्ति तो अपने बुराईयों का अनुभव करने लगता है। यदि समाज दण्ड प्रबल है तो बुरे लोग गुप्त रूप से बुराई कर सकते हैं। समाज दण्ड जितना-जितना प्रभाव पूर्ण होता जाता है, बुराई को उतना उतना प्रथम मिलना बन्द होने लगता है। किन्तु तीसरा उपाय धार्मिक भावना का ऐसा है, जिस से बुराई मूल सहित उखड़ जाती है। धर्मभाव मनुष्य के मन के विचार बदल देता है। अन्दर से जीवन में परिवर्तन कर देता है। मन के बदल जाने से स्वयं ही सारा जीवन बदल जाता है। इसी लिए धर्म की बड़ी आवश्यकता है। यह साधन सारे उपायों में सबसे प्रभावपूर्ण है। धर्मप्रचार इसी लिए बड़ा जरूरी है।

विशेष लेख–

मृतक श्राद्ध और मेरा सब से पहला शास्त्रार्थ

★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★

स्मरण सन् १९१९ की बात है कि—मैं पिण्डीघेब जिला अटक (वतमान जिला कैम्बलपुर पाकिस्तान) के उत्सव पर गया था। उत्सव के दूसरे दिन दो साथी पण्डितों को साथ लेकर प्रातःकाल ही एक पौराणिक पण्डितम्मन्य उत्सव स्थान में आये और कहने लगे कि आज मध्यान्होत्तर वा कल मुझ को शास्त्रार्थ करने के लिये समय दे दीजिये मैं शास्त्रार्थ करूंगा। आर्य समाज की ओर से पूछा गया कि आप किस विषय पर शास्त्रार्थ करना चाहते हैं? तो उन्होंने कहा कि शास्त्रार्थ का विषय मैं पहले नहीं बताऊंगा, जब शास्त्रार्थ करने को खड़ा हो जाऊंगा तभी आप को शास्त्रार्थ के विषय का पता लगेगा। आर्य समाज की ओर से बार २ कहा गया कि विषय अभी बता दीजिये शास्त्रार्थ चाहे आज दोपहर बाद करना वा कल पर विषय तो आज ही और अभी बताइये। पर वह विषय बताने को तैयार न हुआ। और भी कहा गया कि—शास्त्रार्थ का यही ढङ्ग है कि—शास्त्रार्थ के नियम दोनों ओर से पहले निश्चय हों फिर दोनों पक्ष के विद्वान् तैयारी करके नियत विषय तथा निश्चित समय पर शास्त्रार्थ किया करते हैं। वह किसी नियम को नहीं मानते थे अपनी बात पर अड़े हुए थे, उनको इस अनुचित हठ को देख कर हमारी ओर से उनको यह कह दिया गया कि पूरा विषय नहीं बतावेंगे तो शास्त्रार्थों का समय आपको नहीं दिया जायगा। वह तीनों उठकर जाने लगे तो मुझको ऐसा लगा कि हमारा शिकार हमारे वश में आया हुआ भी वश से निकल जाता है उस समय मुझ में जोश बहुत था होश उतना नहीं था, मैंने अपने लोगों की उचित बात को काटकर कह दिया कि शास्त्रार्थ का समय इनको आवश्य दे दिया जाए, विषय बताएं चाहे न बताए जिन विषयों पर शास्त्रार्थ होते हैं उन्हीं में से कोई विषय होगा, उनसे पृथक् कोई विषय ये कहां से ले आएंगे? शास्त्रार्थ की तैयारी न की जायेगी तो भी शास्त्रार्थ कर लिया जाएगा।

मेरी यह जोश भरी बात मेरे साथी उत्सव में आए हुए विद्वानों को अच्छी नहीं लगी और उनको यह ठीक ही अनुभव हुआ कि—मैंने यह छोटे मुंह बड़ी बात कर दी है। मेरी बात पर कुछ क्रुद्ध होते हुए मेरे साथी मुझ से बड़े उपदेशकों ने कहा कि आप में इतना जोश है तो आप ही शास्त्रार्थ कर लेना! मैंने मुस्कराते हुए और अपने साथी माननीय विद्वानों का सम्मान करते हुए नम्रता से कह दिया कि शास्त्रार्थ मैं कर लूंगा।

दूसरे समय वह तीनों पण्डित आगए उत्सव के पण्डाल में आशा से बहुत अधिक भीड़ हो गई। तीनों पौराणिक पण्डितों को एक मेज़ सैट तीन कुर्सियां जो उनके लिए रखी गई थी उनको दे दी गईं।

शास्त्रार्थ आरम्भ करने के लिए उनको कह दिया गया उन तीनों में से शास्त्रार्थ के लिये जो एक उत्सुक थे उन्होंने शास्त्रार्थ आरम्भ कर दिया नाम उनका ठीक ठीक याद नहीं पर शायद पं० गंगादत्त जी शास्त्री उनका नाम था। उन्होंने यजुर्वेद अध्याय १९ के दो मन्त्र बोले—

उपहूताः पितरः सोम्यासो बर्हिष्येषु निधिषु प्रियेषु।
त आगमन्तु त इह श्रुवन्त्वधि ब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान्॥

यजु० १९।५७ अथर्व १८।३।४५

आयन्तु नः पितरः सोम्यासोऽग्निष्वात्ताः पथिभिर्देवयानैः।
अस्मिन्यज्ञे स्वधया मदन्तोऽधिब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान्॥

यजु० १९।५८

पण्डित जी ने इन मन्त्रों में मृत पितरों के बुलाने और उनके आने तथा उनके श्राद्ध का भोजन खाकर तृप्त होने आदि का वर्णन बताया। और कहा इन मन्त्रों में मरे हुए पितरों के श्राद्ध का स्पष्ट विधान है पर आर्य समाजी लोग मृतक श्राद्ध को नहीं मानते और उसका खण्डन करते हैं इस लिये आर्य समाजी ✻✻ स्पष्ट ही वेद विरोधी और नास्तिक हैं। मृतक श्राद्ध सर्वथा वेदानुकूल है मुझ को आज भरी सभा में यह बताया कि—इन मन्त्रों को आर्य समाज मानता है या नहीं? (क्रमशः)

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

आचार्य अमर सिंह जी आर्य पथिक आर्यसमाज की दिव्य विभूति हैं। विधर्मियों के साथ शास्त्रार्थ में कमाल कर देते हैं। तर्क शक्ति और प्रमाणों के तो भण्डार हैं। आर्यजगत के महान विद्वानों में आपकी गणना होती है। सिद्धांतवाद के माननीय महारथी हैं। आपका यह विशेष लेख आर्य जगत के प्रेमी पाठकों के लिए सुन्दर प्रसाद है—सं०

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

शास्त्रार्थ महारथी ठा० अमरसिंह जी आर्यपथिक हापुड़

सोलन ब्रूरी में प्रचार

आर्य समाज कण्डाघाट के जल्से के बाद मान्यवर प्रिंसीपल रलाराम जी सभा प्रधान जी की आज्ञानुसार सोलन ब्रूरी सोलन में धर्म प्रचार के लिए कंडाघाट वाला सारा स्टाफ आगया। सभा के वेद प्रचार अधिष्ठाता श्री पं० खुशीराम जी शर्मा, पं० त्रिलोकचन्द शास्त्री, पं०राजपाल जी मदनमोहन जी चिमटा मडली, पं० हजारी लाल जी वहां पर पहुंचे। सोलन ब्रूरी के मालिक मान्य श्री एन. एन. मोहन जी सचमुच अत्यन्त धार्मिक, प्रभुप्रेमी तथा ऋषि दयानन्द के परमभक्त हैं। आपके विचार बड़े ही ऊंचे तथा जीवन बड़ा ही ऊंचा है। लाखों करोड़ों में खेलते हुए भी जीवन में धर्म के लिए भारी रुचि लेते हैं वेदों के यज्ञ भी कराते हैं। जीवन में अध्यात्म भावना कूट २ कर भरी हुई है। वहां पर माता तारावन्ती जी की नम्रता, सेवाभावना, अनथक धर्म प्रचार की लगन देख कर तो पुराने धर्मयुग का स्मरण हो आया। श्री गुलाटी जी का सारा परिवार भी धर्म के रंग में रंगा हुआ है। मोहन क्लब में दो दिन धर्म प्रचार होता रहा। श्री पं० खुशीराम जी की मधुर कथा, पं० राजपाल मदन जी व पं० हजारी लाल जी के मीठे गीत, पं० त्रिलोकचन्द शास्त्री का उपदेश हुआ। ब्रूरी के भाई बहिनों का धर्म भाव, गम्भीरता तथा सहयोग देखकर मन बड़ा प्रसन्न हुआ। माननीय तारावन्ती जी की नम्रता व जीवन के सामने तो मस्तक झुक जाता है। सभा के लिए वेद प्रचार दिया गया। विशेष धन्यवाद!

★ सिंह यद्यपि बच्चा भी हो तो भी मद से मत्त तथा क्रोध वाले हाथी को पछाड़ देता है। तेजस्वियों का यह स्वभाव ही है, अवस्था का कुछ सम्बन्ध नहीं रहता।

'एक संस्मरण—हम क्या करें ?'

(लि० प्रो० योगेन्द्र सिंह जी यादव अध्यक्ष आर्य युवक समाज डी. ए. वी. कालिज चंडीगढ़)

नवम्बर सन १९६२ ई०, मैं डी० ए० वी० कालज जालन्धर का छात्र था। 'महात्मा आनन्द स्वामी जी आये हैं।'

कहने वाले ने जाने किसे कहा था पर पास से गुजरते समय यह शब्द मेरे भी कानों ने सुने। जब कानों का काम पूरा हो गया तो मेरा मन (जिसे योगेश्वर कृष्ण तक ने 'चंचल' विशेषण से विभूषित किया है) कैसे शान्त रहता। स्वामी जी के आगमन की सूचना पाते ही मन में एक प्रतिक्रिया हुई—मिल लूं। मस्तिष्क ने हामी भरी और पांव अनायास ही लाजपतराय छात्रावास की ओर बढ़ चले।

फोन नं० ढूंढना न पड़ा क्योंकि प्रादेशिक सभा-भवन को प्रायः ही फोन करना पड़ता था, अतः फोन नं० मैंने पास ही दिवार पर पैन्सिल से लिख छोड़ा था। और इस प्रकार उन सब अंकों में, जो कि मनचलों ने विभिन्न सिनेमागृहों होटलों और फोटोग्राफरों के फोन नं० अंकित कर रक्खे थे, एक की वृद्धि और हो गई थी।

'नमस्ते जी' मैंने कहा।

'स्वामी जी हैं ?'

'बाहर गये हैं—आने वाले ही हैं।'

'उनके साधारण लोगों से मिलने का समय क्या है भला।'

'क्या कहा—चला आया, अच्छा मुझे पहुंचा ही समझो।'

टेलिफोन के पास रखे डब्बे में १५ पैसे डाले, रजिस्टर की खाना पूरी की और कुछ ही मिनटों में मेरी किराये की साइकिल ग्रांड ट्रंक रोड पर दौड़ रही थी।

साइकिल खड़ी की और हरिदास जी ने मुझे स्वामी जी के कमरे तक पहुंचा दिया।

कुल मिलाकर पांच-छह जिज्ञासु बैठे थे प्रणाम कर एक कोने में बैठ गया मैं।

'गो रक्षा' पर पं० मेहरचन्द जी आर्यवीर वाले स्वामी जी से विचार-विमर्श कर रहे थे। स्वामी जी ने आवेश से कहा, 'तुम लोग किस मुंह से गो-रक्षा की बात करते हो, कितने आर्यसमाजियों के घरों में गौ है ?

आपके घर है ? उन्होंने मेहरचन्द जी से पूछा।

प० मेहरचन्द जी हिन्दी रक्षा सत्याग्रह के दिनों फिरोज पुर जेल में पड़ी लाठियों की मार पश्चात हाथों की शक्ति खो बैठे हैं सो उन के हाथ हिलते ही रहते हैं, दूसरे स्वामी जी कुछ आवेश में थे अतः वह कांपने से लगे।

'गांव में जब तक रहे घर में गौ थी पर जब से जालंधर आये हैं कुछ परिस्थितिएं ऐसी हो गई हैं कि.....' पं० जी ने सारा दोष परिस्थितियों के सिर मढ़ दिया। वस्तु में बातक कितनी सच्ची है। हम गौ के विषय को लेकर लड़ने मरने की तो साचा करते हैं परन्तु घर में गौ रखने का विचार शायद सपने में भी न आया हो। एक ओर हम अच्छी २ नस्ल के कुत्ते ढूंढ कर, मंगवा कर पालते हैं परन्तु दूसरी ओर गौ-पालन का परिस्थितियों के सिर मढ़ने का चेष्टा करते हैं।

बात मेरे अन्तर को लगी पर उद्विग्न होने का कोई कारण न था क्योंकि मेरे जैसे देहातो के घर तो एक की जगह दो दो गौएं हैं। मैं तो अपना पलड़ा दूसरों की अपेक्षा भरी पाकर प्रसन्न था (मानव मन का सहज वृति है यह)।

स्वयं को अपराधी सा अनुभव करते हुए पं० जी उठ खड़े हुये। पांच-दस मिनट में ही दूसरे भक्त जन भी एक २ कर के खिसक गये। मैं अपने ही विचारों में तल्लीन था

'युवक क्या सोच रहे हो ?' मेरी विचार श्रृंखला टूटी जैसे सोया जाग पड़ा होऊं। मैंने प्रश्न किया, 'स्वामी जी, आर्य समाज का भविष्य कैसा है ?'

'अत्यन्त उज्ज्वल।' कह कर वे कुछ रुके और मेरे कुछ बोल पाने से पूर्व ही फिर कहने लगे,' किसी भी समाज का भविष्य उस के नियमों और उद्देश्यों पर आधारित होता है। ऋषि द्वारा बनाये गये आर्य समाज के दश नियम और उद्देश्य सार्वभौमिक हैं। हमारी नींव सुदृढ़ है घबराने का कोई कारण नहीं।'

'पर हो क्या रहा है इस से भी तो आंखें नहीं मूंदी जाती,' मैं तड़प सा उठा।

'बस प्रतिवर्ष एक जैसी ही फसल नहीं हुआ करती। आज फसल को कीड़ा लग गया है, जो फल सड़ गये हैं उन का झड़ जाना ही श्रेयस्कर है। बगीचे को पुनः हरा भरा देखना है तो नई पौध को कीड़ों से बचाना होगा। अपना काय किये चलो, परमपिता अवश्य सफलता प्रदान करेंगे।'

मेरे Genetics और Heredity के ज्ञान ने स्वामी जी की बात की पुष्टी की। एक बीज जिस में पौदे को बहुत लम्बा बढ़ने का गुण निहित है, खाद आदि न मिलने से हो सकता है एक पीढ़ी में पौदा उतना लम्बा न बढ़ सके परन्तु अगली पीढ़ी में यदि फिर हम अभीष्ट खाद आदि देवें तो पौदा पूरी लम्बाई तक बढ़ेगा।

मस्तिष्क ने सोचा, 'हमारा अतीत कितना गौरवमय है। हम वर्तमान का निर्माण करें, भविष्य की चिन्ता हमें क्यों सताये ? वर्तमान में ही तो भविष्य निहित है, हर आने वाला क्षण, जो भविष्य अभी वर्तमान में बदल जायेगा तो क्यों न हम वर्तमान को उज्ज्वल बना कर हर भूत में बदल जाने वाले वाले क्षण को अपने अतीत की उसी गौरव श्रृंखला में पिरो देवें।'

दयानन्द-वचनामृत

'इस प्रकार परमेश्वर की प्रार्थना और उपासना करनी चाहिए। तत्पश्चात् शौच हो, दतुवनकर, मुंह हाथ धो स्नान करना उचित है। एक वा डेढ़ कोस दूर एकान्त जंगल में जाकर योगाभ्यास की रीति से उपासना करे। घड़ी आधी घड़ी दिन चढ़े घर आजाए और सन्ध्योपासना आदि नित्य कर्म यथाविधि करे। सन्ध्योपासना में कमसे कम तीन और अधिक से अधिक इक्कीस प्राणायाम विधि-पूर्वक करने चाहिएं। जो मनुष्य से ईश्वर धर्माचरण और उसके आदेश में अति प्रेम करते हैं और हृदय रूप विमल वन में रात दिन रहते हैं, वे परमेश्वर के समीप वास करते हैं।' (स्वामी सत्यानन्द)

अमूल्य वचन

★ विद्या मनुष्य की शोभा और छुपा हुआ धन है। विद्या गुरुओं का गुरु है। पर देश में विद्या भाई बन्धु होती है। विद्या परम देवता है। विद्या ही राजाओं में पूजी जाती है न कि धन। विद्या हीन पशु समान है।

(गतांक से आगे)

विद्वान लोग सत्य[1] से ही अपने देवयान-दिव्य-मार्ग का विस्तार करते हैं। योग शास्त्र के प्रवर्तक महर्षि पतंजलि ने सत्य का विशेष महत्व वर्णन किया है। सत्य बोलने से वाणी अमोघ[2] हो जाती है। सब कार्य संकल्पानुसार सिद्ध होते हैं। योगभाष्यकार महर्षि व्यास भी इस विषय में अति उत्तम वर्णन करते हैं। वे इस सूत्र का भाष्य करते हुये लिखते हैं यदि कोई सत्यवादी मनुष्य किसी को कहे कि 'तू[3] धार्मिक बन, तुझे सुख मिले, तो धार्मिक बन जाता है और उसे सुख मिलता है। सामान्य मनुष्य इस सत्य के दिव्य स्वरूप पर विश्वास नहीं करते।

वाणी की सत्यता से प्राप्त शक्ति का उदाहरण महर्षि दयानन्द जी के जीवन में भी उपलब्ध है। एक अमीचन्द नामक तहसीलदार मद्य मांस वैश्यागमन आदि नीच कार्यों में फंसा हुआ था। किन्तु उस का स्वर अति मधुर था। एक दिन महर्षि के चरणों में उस के गाने की प्रशंसा करते हुये दुश्चरित्रता का का वर्णन किया। महर्षि का आदेश पा कर अमी चन्द ने अति मधुर स्वर में भक्ति रस का भजन वहां सभा में सुनाया। भजन को सुन कर महर्षि अति प्रसन्न हुये। सभा समाप्ति पर जब अमीचन्द महर्षि को नमस्कार कर जाने लगे तब महाराज ने अपनी अमोघ शक्ति का प्रयोग करते हुये कहा अमीचन्द तू है तो हीरा पर कीचड़में पड़ा है।' यदि मद्य पान आदि को छोड़ दे तो तेरा कल्याण हो सकता है।

१—सत्येन पन्था विततो देवयानः। २—सत्य प्रतिष्ठायां क्रिया फला श्रयत्वम् ३—धार्मिको भूया इति भवति, स्वर्गं प्राप्नुहीति प्राप्नोति अमोघा अस्य वाग्भवति।

हमारा प्रचार कार्य—

शिथिल क्यों ?

ले०—ब्र. इन्द्रदेव जी 'मेधार्थी' गुरुकुल झज्जर (रोहतक)

इन शब्दों से अमीचन्द का जीवन पवित्र बन गया। अतः वाणी की सफलता में हृदय बल और हृदय बल के लिये सत्य धारण आवश्यक है,

२. देवजूत—वाणी का दूसरा विशेषण मन्त्र में देवजूत है। अर्थात वाणी दिव्य भावों से प्रेरित होनी चाहिये। जो लोग स्वार्थ को सिद्ध करने मात्र के लिए बोलते हैं वे वाणी का दुरुपयोग करते हैं। इसीलिये व्याकरण महाभाष्यकार महर्षि पतंजलि मुनि ने निःस्वार्थ भाव से विद्या ग्रहण का विधान किया है। आजकल प्रचारक अथवा नेताओं के व्याख्यानों का प्रभाव क्यों नहीं पड़ता। श्रोता एक कान को छोड़कर दूसरे कान से कैसे निकाल देते हैं? क्या उनकी वक्तृताओं में न्यूनता होती है? अथवा व्याख्यान प्रवाह में सामयिक उतार चढ़ाव नहीं होता? स्वर भाव इत्यादि चेष्टा सभी कुछ तो प्रभावोत्पादक होते हैं। फिर भी प्रभाव न पड़ने में श्रोताओं की योग्यता के अभाव के साथ यह भी कारण है वक्ता महानुभाव की वाणी देवजूत नहीं होती। यह वक्तृता दिव्य भावों से प्रेरित न होकर स्वार्थ सिद्धि के लिये किया कलाप मात्र होता है। जब वक्ता किसी दिव्य विचार से प्रभावित हो कर बोलता है तब उन शब्दों में ओज पैदा हो जाता है वह वाणी देवजन होने के कारण श्रोताओं के हृदय में सीधी घुस जाती है।

लोकमान्य तिलक वक्तृत्व कला की दृष्टि से बहुत खराब बोलते थे। किन्तु उन का प्रभाव अत्यधिक पड़ता था नैपोलियन आक्रमण के समय अपने युवकों के समक्ष कुछ इने गिने शब्द ही बोलते थे। और वही शब्द युवकों में प्राण फूंक देते थे। वीर वर सुभाष के 'तुम मुझे खून दो मैं तुम्हें आजादी दूंगा' शब्द सुन कर युवकों के समक्ष 'करो या मरो का सिद्धान्त नाच उठता था। इटली के लोग कहते हैं मेजिनी की कलम में जादू था।[1]

फिर महर्षि दयानन्द जी से तो आप सभी परिचित ही हैं। उन्हें उस समय 'जादूगर बाबा' कहते थे। बड़े २ ऐंठू पण्डित गर्व में भर कर जब महाराज के पास शास्त्रार्थ के लिये जाते तो उन की देवजत वाणीको सुन कर उनकी बोलती बन्द हो जाती थी। तथास्तु कह कर मूर्तियों को गंगा यमुना में प्रवाहित कर देते थे। इन विचित्रताओं का कारण देवजूत वाणी ही है।

३. तप—वाणी की अमोघता का तीसरा साधन तप है। जिस प्रकार बाण को तीक्ष्ण बनाने के लिये उस के अग्रभाग को अग्नि में तपा कर विविध विषों में बुझाना पड़ता है, उसी प्रकार हमारी वाणी रूपी धनुष भी तप रूपी अग्नि में तपाया जाता है। योग-दर्शन के अनुसार अच्छे कार्योंको करने के लिये विघ्न स्वरूप सुखदुःखादि द्वन्दों का सहन करना तप है। और तपस्या[2] द्वारा शरीर इन्द्रियों के सब दोष दूर हो जाते हैं। जो मनुष्य अपने विचारों के लिये जितना अधिक कष्ट उठता है, उस के स्वर में उतना ही शक्ति आ जाती है। स्वामी श्रद्धानन्द जी के शब्दों में 'जो मनुष्य अपने सिद्धांतों के लिये बलिदान हो सकते हैं उन्हीं के सिद्धांत संसार में फैलते हैं।' जिन्होंने राष्ट्र की स्वतन्त्रता के लिये कारावास की यातनाए सही हैं, उनके व्याख्यान का प्रभाव भी जनता पर अधिक पड़ता है। और लोग उनके समर्थक बन जाते हैं।

महर्षि दयानन्द जी ने गुरुवर श्री स्वामी बिरजानन्द से विद्या प्राप्त कर कुम्भ मेले पर हरिद्वार में पाखण्ड-खण्डनी पताका लहराई, और निरन्तर शास्त्रार्थों व्याख्यानों एवं विज्ञापनों से प्रचार किया। किन्तु मेले की समाप्ति पर अभी तो मेरे ही अन्दर त्याग तप की कमी है—कह कर सर्वस्व का दान कर तपस्या में प्रवृत्त हो गये। और पुनः अपनी तपः पूत वाणी से दिग्विजय करने में सफल हुए।

१—ब्राह्मणेन निष्कारणो धर्मं षडङ्गो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च।

महात्मा हंसराज जयन्ती

की उपसमिति की एक बैठक चार अक्तूबर रविवार को ११ बजे आर्य समाज अनारकली मंदिर मार्ग में श्री पं० रलाराम जी प्रधान आर्य प्रादेशिक सभा की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई जिस में भिन्न २ समाजों के ७० के लगभग सदस्य उपस्थित थे। जिन में श्री डाक्टर मेहरचन्द्र जी महाजन, पं० दयाराम जी शास्त्री, प्रिन्सपल हरिश्चन्द्र जी आदि महानुभावों के नाम उल्लेखनीय हैं। अनेक विचार विमर्श के बाद निश्चय हुआ कि जयन्ती के लिए ५ लाख रुपए की अपील की जाए और इस राशि से महात्मा हंसराज साहित्य विभाग की ओर से वेदों के संबंध में साहित्य प्रकाशित किया जाए। सभा के पत्र आर्य जगत को अधिक उपयोगी बनाया जाए इस राशि से कुछ योग्य उपदेशक और भजनीक रखे जाएं जो सम्पूर्ण देश में भ्रमण करके विधर्मियों की बढ़ती लहर को रोक कर वैदिक धर्म का प्रचार कर सकें।

चरित्र-निर्माण में भारी रूकावटें

(लेखक–श्री पिशोरीलाल जी प्रेम, रेणुका, जिला सिरमौर)

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

(गतांक से आगे)

एक युवती जब अपना 'पार्ट' (PART) कर रही थी तब पर एक नौजवान ने अपने कुत्सित विचारों को प्रदर्शित करने के लिए ऊंचे स्वर में कुछ कहा (आवाजा-कसा)। इस पर कालेज के प्रिंसिपल साहब को बहुत क्रोध आया। उन्होंने कहा यह सिनेमा-हाल नहीं है, यहां इस प्रकार की आवाजें कसना बड़े शर्म की बात है। अफसोस यह है कि मुझे यह मालूम नहीं हो सका कि यह आवाजा किसने कसा है, नहीं तो मैं उस आदमी को टांग से पकड़ कर बाहिर घसीट ले जाता और उसकी खूब मुरम्मत करता।

मैं अति नम्रता से पूछना चाहता हूं कि उस नौजवान को अपनी कुत्सित भावनाओं का प्रदर्शन करने का अवसर किसने दिया। क्या प्रिंसिपल साहब ने युवक और युवतियों को मंच पर लाकर स्वयं ही उस नौजवान को अपनी कुत्सित भावनाओं के प्रदर्शन करने का अवसर नहीं दिया? क्या दूसरे कई नौजवानों के मन में भी इस प्रकार की बुरी वासनाएं न उत्पन्न हुई होंगी? यदि आज महात्मा जी जीवित होते तो वे अपने नाम से चलाए हुए इस कालेज में युवतियों को मंच पर लाने की अनुमति देते?

सहशिक्षा

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वति जी सत्यार्थप्रकाश के तीसरे समुल्लास में लिखते हैं 'लड़कों और लड़कियों की पाठशाला एक दूसरे से दो कोस दूर होनी चाहिए। उन में जो अध्यापक वा अध्यापिका हों अथवा भृत्य आदि हों, कन्याओं की पाठशाला में सब स्त्रियां हों और लड़कों की पाठशाला में सब पुरुष हों। स्त्रियों की पाठशाला में पांच वर्ष का लड़का और पुरुषों की पाठशाला में पांच वर्ष की लड़की भी न जावे।

महर्षि ने ऐसा क्यों लिखा? महर्षि दूरदर्शी थे। वे जानते थे कि जिस देश के लोग ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं वह शक्तिशाली और तेजस्वी होते हैं और जो ब्रह्मचर्य का पालन नहीं करते वे निर्बल और निस्तेज होते हैं। सहशिक्षा के होते हुए ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना कठिन ही नहीं अपितु असम्भव भी है। बड़े २ विद्वान और तपस्वी जबकि काम वासना में फंस जाते हैं तो साधारण व्यक्ति का क्या कहना। और जब चारों ओर से कामवासना को, भड़काने वाला वातावरण हो और परस्पर पढ़ने से बातचीत और मेल-मिलाप का अवसर भी सरलता से मिल सकता हो, यौवन की मस्ती हो, विवेक बुद्धि कम हो, ऐसी अवस्था में क्या नौजवान युवक और युवतियां अपने आपको सम्भल सकती हैं? घी को आग के पास रख कर यह आशा रखना कि घी न पिघले, यह असम्भव है। योरोप वाले तो इसका दुष्परिणाम देख चुके और अब इसके विरोधी हो रहे हैं परन्तु भारतवासी देश का विनाश करने के लिए इस घृणित योजना का अन्धाधुन्ध अनुकरण कर रहे हैं। सहशिक्षा वाले स्कूलों या कालेजों में अपने बच्चों को पढ़ाना जान बूझ कर अपनी भोली-भाली मासूम सन्तान को जलती हुई आग में धकेलना है। यदि भारत में सहशिक्षा को शीघ्र बन्द न किया गया तो इस के दुष्परिणाम से देश की सभ्यता एवं संस्कृति नष्ट होने से बच नहीं सकेगी। अब भी समय है सम्भलने का। (क्रमशः)

आर्यजगत्, शास्त्रार्थ महारथी प्रगल्भ वक्ता आर्यसमाज के मूर्धन्य नेता पं. आत्माराम जी अमृतसरी को कैसे भूल रहा है।

(ले०–यशोदाकुमारी, आचार्या आर्य कन्या महाविद्यालय बड़ौदा)

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

कार्योदय के कुछ अंकों में पंजाब के आर्यसमाज के इतिहास पर सुन्दर दृष्टिपात होता रहा है, उनको पढ़ने से अनेक पुराने चित्र दृष्टि के सामने उपस्थित होते हैं और गौरवपूर्ण स्मृतियां स्मृतिपट पर अंकित होती हैं।

पर दुःख के साथ हमने अनुभव किया कि लेखक महोदय राजरत्न राजमित्र मास्टर आत्माराम जी अमृतसरी को विस्मरण कर रहे हैं।

मास्टर जी पं. लेखराम, पं. गुरुदत्त जी विद्यार्थी महात्मा मुंशीराम जी, महात्मा हंसराज जी तथा लाला लाजपत राय जी के समकालीन थे। उन्होंने पंजाब आर्यप्रतिनिधि सभा में मन्त्री रूप में काम किया था। पं. लेखराम जी की महर्षि की जीवनी उन्होंने पूरी की थी, तथा गुरुमुखी और उर्दू में सत्यार्थ प्रकाश का अनुवाद भी किया था वह शास्त्रार्थ महारथी थे और मौलवी सनाउल्ला के साथ उन के शास्त्रार्थ जग प्रसिद्ध थे। उत्तर प्रदेश में नगीने का शास्त्रार्थ आर्य समाज के इतिहास में एक महत्वपूर्ण शास्त्रार्थ था। उत्तर प्रदेश में भी उन्होंने स्वतंत्र प्रचारक के रूप. महात्मा दर्शनानन्द जी, पं. गंगा पति शर्मा श्री यथा सिंह शर्मा के साथ काम किया था।

स्वामी नित्या नन्द जी के परामर्श से १९०८ में वह बड़ौदा चले आये जहां अनेक आर्य समाजी कार्यों के वह प्रवर्तक बन कर रहे। वह महाराजा बड़ौदा और महाराजा कोल्हापुर के गुरु के रूप में थे उन की प्रेरणा से ही महाराजा कोल्हापुर ने अपनी कालिज एवं शिक्षण संस्थाएं उत्तर प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा को सौंपी थीं। बड़ौदा राज्य के प्रगतिशील कार्यों व कानून बनवाने में उन का बड़ा हाथ था।

गुजरात के आर्य समाज के कार्यों की नींव उन्होंने ही डाली थी ऐसे प्रतिभाशाली नेता की जन्म जयति आषाढ़ी कृष्णा पड़ी एकम में पड़ती है।

आर्य समाज ऐसे महानलेखक, शास्त्रार्थ महारथी, प्रगल्भ वक्ता जिन का सारा कुटुंब आर्य समाज की सेवा में अर्पित किया भूलने लगे यह परिस्थिति दुःखद है।

शुभ विवाह

आर्यजगत के प्रसिद्ध लेखक तथा दृढ़ आर्यसमाजी श्री पिशोरी लाल जी 'प्रेम' रेणुका (H.P.) निवासी की सुपुत्री कुमारी वीर बाला का पाणिग्रहण संस्कार श्री आर० राय देहली के सुपुत्र चिरजीव सुखदेव जी के साथ ११ अक्तूबर सन ६४ रविवार दिन के १-३० बजे अम्बाला छावनी में पूर्ण वैदिक रीति से सम्पन्न हो रहा है। आर्य जगत की ओर से वर वधू को अनेकशः बधाई।

आर्यसमाज हांसी (हिसार) में वेद प्रचार

हांसी में २५-६-३४ से ४-१०-६४ तक प्रादेशिक सभा के प्रसिद्ध भजनीक ठा० दुर्गासिंह जी तूफान का उपदेशों व भजनों द्वारा वेद-प्रचार हुआ। समाज के प्रधान जी ने १५१/-वेद प्रचारार्थ दान दिया। प्रचार का प्रभाव अति उत्तम रहा।

डी. ए. वी हाई स्कूल बहराम पुर का शानदार नतीजा

इस स्कूल के चार छात्रों ने संसारी लाल महाजन सुरेन्द्र कुमार महाजन बलदेव राज महाजन, तथा गोपाल सिंह राजपूत ने हाई स्कूल छात्रवृत्ति ले कर इस स्कूल की शान ऊंची की है इस उन्नति का श्रेय श्री हैडमास्टर तिलक राज जी महाजन व उन के परिश्रमी स्टाफ पर है।

इस सफलता की लहर उस इलाके में बिजली के समान फैल गई है। तथा वहां की जनता इस सफलता से अति प्रभवित हुई है। श्री दीना नाथ जी मैनेजर स्कूल के उत्तम प्रबंध का परिणाम है।

नर लाल सैनी
बहरामपुर

आर्य प्रादेशिक सभा को वेद प्रचारार्थ दान

श्री मा० प्रकाशदेव जी १०/-
आ० स० रामनगर (करनाल) ११/-
,, प्रेमनगर (करनाल) १०१/-
,, सलोगड़ा(H.P.)५१-२५N.P
,, नांदल (रोहतक) ८०/-
,, अलाहर (करनाल) १०/-
,, हांसी (हिसार) १५१/-
,, लक्कड़ बाजार(शिमला)५०१/-
,, मोडलटौन गुड़गावां १५१/-
,, कंडाघाट १०१/-
,, कांगड़ा १३०/-

आर्य जगत के पाठकों से निवेदन

पाठकों से निवेदन है कि आर्यजगत का ऋषि निर्वाण अंक दीपमाला के अवसर पर पुस्तकाकार में प्रकाशित में हो रहा है यह अंक पाठकों को दीवाली से तीन-चार दिन पूर्व पहुंच जाएगा। ११-१०-६४ के अंक [illegible] १८, और २५ [illegible] के अंक [illegible] रहेंगे। उसके [illegible] निर्वाण [illegible] अंक पाठकों [illegible] से पहुंचेगी। दीपमाला अंक [illegible] १ नवम्बर का सम्मिलित अंक होगा। पाठक नोट करलें। —व्यवस्थापक

धर्मनिष्ठ ला. देवदत्त जी

दीनानगर के धर्मनिष्ठ, अत्यन्त सौम्यमूर्ति, समाज के दीवाने आदर्श जीवन श्री ला. देवदत्त जी प्रधान आर्यसमाज दीनानगर का दु:खद देहावसान का शोकजनक समाचार सुनकर दिल एकदम बैठ गया। मन नहीं मानता कि वह आदर्श परिवार का आदर्श देवता सचमुच ही चला गया। उनके बारे में जो भी लिखा जाये थोड़ा है। आर्य कौन ? इस [illegible] और [illegible] में यदि देखना हो तो उनका [illegible] जा सकता था। दीनानगर समाज के सम्मुख प्राण थे। उनका सारा परिवार चौबीस घंटों के लिए एक खुला अतिथि सत्कार का घर है समाज को सारे गुरदासपुर जिले को उनके जाने से भारी धक्का लगा है मुझे तो सदा उनकी सौम्यमूर्ति मीठी वाणी, नम्रता आकृति कभी नहीं भूल सकती। उनका मुख सदा मुस्कराता ही रहता था। हम आर्यजगत् की ओर से उन के इस शोकजनक निधन पर सारे परिवार से हार्दिक समवेदना प्रकट करके भारी क्षति सहन करने के लिए प्रभु से धैर्य प्रदान करने तथा दिवंगत आत्मा को शान्ति प्रदान करने की प्रार्थना करते हैं। उन के चिरंजीव सुपुत्र श्री जयचन्द्र जी से सहानुभूति प्रकट करते हैं। —सं.

Mehr Chand Polytechnic Jullundur City.

The Arya Yuwak Samaj has been organized in the Mehr Chand Poly technic, Jullundur City. The enrolement of the members has been started. The Opening Ceremoney will be performed on 11th of October 1964 at 6 P.M. in the Mehr Chand Polytechnic Hostel, Prof. [illegible] has very kindly conscnted to give away the Parwachna. The Opening Ceremoney will be performed by Shri Chanchal Dass Ji, Director, Mehr Chand Polytechnic, Jullundur City.

आर्यसमाज प्रेमनगर-करनाल का वार्षिकोत्सव

ता. २५ से २७ सितम्बर ६४ तक समारोह पूर्वक सम्पन्न

आर्य समाज प्रेमनगर—करनाल के उत्साही आर्य वीर श्री वीरूराम जी तथा उनके सभी सहयोगी अपनी समाज सेवा—वैदिक धर्मानुराग तथा कर्मठता के लिए प्रसिद्ध हैं। इस बार के उत्सव पर जिस लग्न और श्रद्धा से इस समाज के वीरों-वृद्धों और देवियों तथा आर्य कुमारों ने काम किया वह अनुकरणीय था। उत्सव से पूर्व सभा के महोपदेशक श्री पं० ओम्प्रकाश जी की सुन्दर वेद कथा होती रही साथ ही श्री कुंवर जगतराम जी, बस्तीराम जी की मण्डली के वीररस पूर्ण भजन होते रहे। उत्सव पर प्रसिद्ध वैदिक विद्वान श्री स्वामी समर्पणानन्द जी स्वामी वेद मुनि जी, श्री पं० क्षितीश कुमार जी वेदालंकार, श्री प्रो० उत्तमचन्द जी शरर सभा के सुयोग्य गायक श्री पं० मेलाराम जी रेडियो सिंगर श्री पं० ब्रह्मानन्द जी की चिमटामण्डली और देहली उपसभा के प्रसिद्ध गायक श्री पं० हरिदत्त जी ने पधार कर उत्सव को हर प्रकार से सफल बनाया।

सभा को वेदप्रचार मध्ये १०१) प्राप्त हुये।

हिन्दी रक्षा समिति का एक सच्चा अलौकिक चल बसा

आर्यजगत में यह खबर बड़े शोक से सुनी जाएगी कि ला० देवदत्त जी चौधरी प्रधान आर्य समाज दीनानगर का देहान्त २-१०-६४ शुक्रवार रात के १०॥ बजे अचानक हृदय-गति बन्द होने से हो गया। मृत्यु के समय उनके तीनों लड़के जयचन्द्र जी और पृथ्वी चन्द और डा०हरिदास जी मौजूद थे। उन्होंने अपने लड़कों को इकट्ठा रहने का उपदेश दिया। और कहा कि इस आर्य घराने में कोई भी आर्य सिद्धांतों के विरुद्ध आडम्बर न रचाया जाए।

पगड़ी की रसम ७-१०-६४ को बुधवार ४ बजे शाम को आर्य समाज दीनानगर में अदा की जायगी। बलदेवराज मन्त्री
आर्यसमाज दीनानगर

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टेलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd No P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे — वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक ४४) २३ आश्विन २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०— ८ नवम्बर १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तयः

ज्योतिष्कृदसि सूर्य

हे महान् सूर्य परमेश ! आप ही तो सब स्थानों पर ज्योति करने वाले हो। आप का ही प्रकाश सर्वत्र फैला है। आप ही सब पदार्थों को चमकाते हैं। प्रकाश के स्वामी हो सब को ज्योति देते हो।

त्वं वरुण पश्यसि

हे वरुण प्रभो ! आप सर्वत्र व्यापक हो कर सब कुछ देखते हो। अनन्त नेत्र हो। हम कोई बात और कोई काम किसी गुप्त स्थान पर जा कर भी करें, आप उसे जानते हो और देखते हो। आप से क्या गुप्त है।

तरणि र्विश्वद र्शतः

देव ! आप तरणि :—नौका हो। इस भवसागर से पार जाने के लिए आप ही आप की भक्ति, उपासनरूप नाम आप नौका का काम करता है। सब के दर्शनीय हो। सब से परम सुन्दर हो। जीवन आधार हो।

सा म वे . से

वे दा मृ त

ओ३म् भू भुर्वः स्वः। अग्नि ऋर्षिः पवमानः पांचजन्यः परोहितः। तमीमहे महागयं स्वाहा। इदमग्नये पवमानाय इदन्न मम ॥ ऋक् मंडल ९ सूक्त ६६ मं. २०

अर्थ—हे जगत् के आधार, दुःखनाशक तथा सुखरूप ईश्वर ! आप अग्निः हैं—पूजनीय हैं (ऋषिः) सब कुछ देखने वाले हैं तथा (पवमानः) पवित्र करने वाले हो (पांचजन्यः) सब के नेता हो। इस लिए हम (तम्) उस आप को (ईमहे) प्राप्त हों (महागयम्) सब के आश्रय हो। यह आहुति पवित्र करने वाले अग्निदेव के अर्पण हो। इस में मेरा कुछ भी नहीं है। सब कुछ आप का ही है।

भाव :—परमात्म देव ! आप अग्नि हैं। सब के पूजन योग्य हैं, आप ऋषि हैं, सब के सब कामों को जानने तथा देखने वाले हैं। पवमान हैं, सब को शुद्ध पवित्र करने वाले हैं तथा पांचजन्य हैं, सब के हितकारी हैं, पुरोहित भी आप ही हैं। आप ही सब के नेता, जीवन पथ के दर्शक हैं। आप के सिवाय और हमारा कौन सच्चा हितकर हो सकता है। हे देव ! आप महागय हो, यह जितना भी सारा संसार है, इस के आधार, आश्रय आप ही हैं। आप को ही हम प्राप्त करना चाहते हैं। आप का आश्रय पा कर हमें फिर जीवन में और क्या चिन्ता हो सकती है ? प्रभो ! यह दी गई आहुति मेरी नहीं सब कुछ आप का ही है, आप का ही दिया है, आप के अर्पण है। —सं.

ऋषि दर्शन

मनुष्यः सौम्यगुण सम्पन्नः

जो मनुष्य सौम्य है, शान्ति स्वभाव का है, अत्यन्त गम्भीर है, जिस के जीवन में, वाणी में, मन में तथा व्यवहार और कार्यों में निरन्तर सौम्यपन और गम्भीरता के गुण भरे हुए हैं। दिव्य गुण से भर पूर है।

सकल विद्या युक्तः

और सारी विद्याओं, ज्ञान से भरा हुआ है। राज धर्म की तमाम प्रक्रिया को जानने वाला है। नाना प्रकार की अवस्था में क्या करना है इस सारे भेद को जानता है।

सभाध्यक्षत्वेन स्वीकृतः

ऐसे व्यक्ति को ही सभा का राजा नेता मानना तथा बनाना चाहिए शासन के ऊंचे आसन पर इस प्रकार के ही शासक को बिठाना चाहिए। तभी सारे राष्ट्र का भला होता है।

भा ष्य भू मि का से

अधिष्ठाता—श्री संतोषराज सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

महर्षि दयानन्द के आगमन से पूर्व आर्यों में ब्रह्म यज्ञ अर्थात् संध्या वन्दन के सम्बन्ध में अनेक भ्रांत धारणाएं प्रचलित थीं। अन्य विषयों की भांति प्रभु-भक्ति के सम्बन्ध में भी कोई नियमित पद्धति संचालित न थी। सब लोग अपने-अपने संप्रदाय के नेताओं की आज्ञानुसार विविध प्रकार के ढोंग रचते और स्वांग भरते दिखाई देते थे। कोई सन्ध्या का नाम लेकर एक बार कुछ संस्कृत श्लोकों अथवा मन्त्रों का उच्चारण कर लेना पर्याप्त समझता था, कोई दो बार और कोई तीन बार। कोई बैठकर ईश्वरोपासना करने को कहता था; तो कोई खड़े होकर अभीष्ट सिद्धि का यत्न करता था; कोई ताली पीट कर चित्त को प्रसन्न कर लेता था तो कोई दायें से बायें और बायें से दायें घूम कर अपने आप को कृतकृत्य समझ लेता था। अजीब धमा-चौकड़ी मची हुई थी यहां तक कि कई व्यक्ति तो ईश्वरोपासना को प्रमत्त-प्रलाप अथवा मूर्खों को फांसने का साधन मात्र उद्घोषित करते थे। विलक्षण असमंजस में आर्य जाति ग्रस्त थी कि भगवान दयानन्द ने आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत का पालन कर के, वेदादि सच्छास्त्रों का गम्भीर स्वाध्याय किया और वर्षों की आत्मानुभूति के पश्चात् उद्घोषित किया कि परम पिता परमात्मा के साक्षात्कार का सीधा, सुन्दर, सरल साधन सन्ध्या है। आप ने वेद मन्त्रों का ऐसा सुन्दर संगठन कर के हमारे समक्ष उपस्थित किया कि यदि हम विधि पूर्वक इन मन्त्रों द्वारा ईशोपासना कर सकें तो आध्यात्मिक, आधि दैविक और आधि भौतिक त्रिविध—दुःखों का अत्यन्ताभाव हो सकता है।

धार्मिक चर्चा—

ब्रह्मयज्ञ (संध्या) प्रसारक महर्षि दयानन्द की जय

(ले०—श्री पिन्डी दास जी, शास्त्री आर्य समाज लोह गढ़ अमृतसर)

महर्षि ने दो बार सन्ध्या का विधान करते हुए जन साधारण के हृदय पटल पर यह बात अङ्कित करने का सफल प्रयत्न किया है कि हमारे पूर्व पुरुषा—ऋषि-मुनि, गुरु-आचार्य, राजा-महाराजा—सब प्रतिदिन दोनों संधिवेलाओं में सांसारिक कार्य-कलापों का परित्याग कर के प्रभु चरणों में नत-मस्तक होना अपना नैतिक कर्त्तव्य समझते थे। दो काल सन्ध्या का विधान-श्रुति, स्मृति, सदाचार—सब स्थानों पर उपलब्ध होता है। भोगवाद की मृग मारीचिका के पीछे सरपट भागने वाला आधुनिक जन समुदाय सन्मार्ग से भटक गया है। और श्रद्धा विहीन हो जाने के कारण बात २ के लिए युक्ति और प्रमाण ढूंढता है। ऐसे महानुभावों की सन्तुष्टि के लिए हम नीचे सच्छास्त्रों के कतिपय प्रमाण उद्धृत करने जा रहे हैं ताकि पता चल सके कि 'सन्ध्या करो, सन्ध्या करो का जो उपदेश महर्षि दयानन्द ने हमें दिया, वह किस प्रकार प्राचीन आर्य संस्कृति का प्रतीक है और हमारे महापुरुष मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम और योगीराज भगवान कृष्ण तथा अन्य ऐतिहासिक पुरुष किस प्रकार इस वैदिक विधि का परिपालन किया करते थे—

१. महर्षि दयानन्द सन्ध्या का अर्थ करते हुए पंच महायज्ञ विधि में लिखते हैं—'सन्ध्यायन्ति' भली प्रकार ध्यान करते हैं वा ध्यान किया जाय परमेश्वर का जिस में, वह संध्या। सो रात और दिन के संयोग समय दोनों सन्ध्याओं में सब मनुष्यों को परमेश्वर की स्तुति प्रार्थना और उपासना करनी चाहिये।'

२. संध्यामुपासते ये तु सततं शंसित व्रताः। विधूत पापास्ते सर्वे यान्ति ब्रह्म सनातनम् ॥

याज्ञवल्क्य स्मृति

अर्थात्—जो व्यक्ति निरन्तर नियम पूर्वक सन्ध्या का अनुष्ठान करते हैं, वे सर्वथा पाप मुक्त होकर सनातन ब्रह्मलोक को प्राप्त होते हैं।

३. सन्ध्यामुपासितो येन तेन विष्णुरुपासितः। दीर्घमायुः स विन्देत स विन्देत सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥

योगि याज्ञवल्क्य

अर्थात—जिसने सन्ध्या की उसने सर्वव्यापक परमात्मा की उपासना कर ली। उसके समस्त पाप छूट गये और उसे दीर्घ आयु की प्राप्ति हो गई।

४. सन्ध्या येन न विज्ञाता सन्ध्या येनानुपासिता। जीवन्नेव भवेच्छूद्रो मृतःश्वाचाभिजायते।

देवी भागवत ११-१६-६

अर्थात—जिसे सन्ध्या का ज्ञान नहीं है और जो सन्ध्योपासना नहीं करता, ऐसा ब्राह्मण जीवन में ही शूद्र हो जाता है और मर कर कुत्ते की योनि पाता है।

५. सन्ध्या हीनोऽशुचिर्नित्यमनर्हः सर्व कर्मसु। यदन्यत् कुरुते कर्म न तस्य फल भाग्भवेत् ॥

अर्थात्— संध्या हीन मनुष्य सदा अपवित्र बना रहता है किसी शुभ कर्म के योग्य नहीं रहता, जो भी अन्य कर्म करता है उसका फल भी उसे नहीं मिलता।

६. सन्ध्या लोपस्य चाकर्ता स्नान शीलश्च यः सदा तं दोषा नोपसर्पन्ति गरुत्मन्तमिवोरगाः ॥

महर्षिकात्यायन ११-१६

अर्थात्—जो सन्ध्याओं त्यागा नहीं करता और नित्य स्नान करता है, दोष (पाप अपराध आदि) उसी तरह उस के निकट नहीं आते जैसे गरुड़ के पास सांप ही काम सन्ध्या ही हो सकती है।

सायं प्रातश्च यः सन्ध्यामुपास्ते शुद्ध मानसः जपन् ही पावनी देवी गायत्री वेद मातरम् ॥ तथा सम्भावितो देव्या ब्राह्मणो धूत किल्बिषः न सीदेत् प्रतिगृह्णानो ह्यपि पृथ्वीं ससागरम् ॥ अग्निपुराण

अर्थात्—जो ब्राह्मण शुद्ध चित्त हो कर प्रातः-सायं—दोनों समय—सन्ध्योपासना करता है और वेद माता पवित्र कारिणी ज्योतिर्मयी गायत्री के जाप द्वारा जिस के पाप प्रक्षालित हो गये हैं वह यदि सागर सहित समस्त पृथिवि का भी दान दे दे, तो भी उसे कोई कष्ट नहीं होता।

८. कुर्वन्तोपीह पापानि त्वां ध्यायन्ति पावनि उभे सन्ध्ये न तेषांहिविद्यते देविपातकम् गायत्र्यास्तु पर नास्ति दिविचेह न पावनम्

अग्निपुराण में ब्रह्मा ने गायत्री से कहा—

अर्थात्—हे पावन करने वाली देवि गायत्री! पाप कर्म करने वाले मनुष्य भी दोनों समय— सायं प्रातः — यदि सन्ध्या करते और तुम्हारा जाप करते हैं, उन्हें पाप-ताप नहीं लगता, क्योंकि तेरे समान पवित्र करने वाला कोई भी साधन न इस लोक में है न पर लोक में।

६. न तिष्ठति तु यः पूर्वां नोपास्ते यश्च पश्चिमाम्।

स शूद्र वद् वहिष्कार्यः सर्वस्माद् द्विज कर्मणः ॥ मनु० २-१०३

१०. नोपतिष्ठति तु यः पूर्वां नोपास्ते यस्तु पश्चिमाम्।

स शूद्र वद् बहिः कार्यः सर्वस्माद् द्विज कर्मणः ॥ ब्रह्म वैवर्त्त पुराण ब्रह्मखण्ड-० २६.५६

अर्थात्—जो द्विज प्रातः और सायं—दोनों समय—सन्ध्योपासना नहीं करता, उसे समस्त द्विजोचित कर्मों से शूद्र की तरह बहिष्कृत कर देना चाहिये—

(शेष पृष्ठ ७ पर)

सम्पादकीय

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२१, ८ नवम्बर १९६४ [अंक ४४

आर्यो ! सावधान !!

इसी वर्ष के नवम्बर अन्त में बम्बई में सारे संसार के ईसाईयों का एक भारी विश्व सम्मेलन होने जा रहा है। आज के युग में उन को अपना सम्मेलन करने के लिए और तो किसी ईश्वर के देश ने अपने राष्ट्र में करने की स्वीकृति नहीं दी। किन्तु भारत की सरकार ने दे दी है। सारे विश्व के ईसाई उन दिनों प्रमुख प्रतिनिधियों के रूप में हजारों की संख्या में वहां पर इकट्ठे होंगे। लाखों करोड़ों रुपये पानी की तरह बहाने का प्रयत्न किया जायगा। पता नहीं भारतीय जनता को वारों का प्रलोभन देने के लिए क्या २ होगा ! आज के भारत में ईसाई किस प्रकार का प्रलोभन दे कर प्रचार करते हैं। क्या २ हथकण्डे प्रयोग में लाते तथा लोगों की निर्धनता व सरलता से कैसा अनुचित लाभ उठाते हैं। यह तो नियोगी रिपोर्ट को पढ़ कर भली भांति पता लगाया जा सकता है। खेद यह है कि भारत का हिन्दु समाज अपने २ छोटे दलों में बटा हुआ है। उसे अपनी चिन्ता है, घर की चिन्ता है पर उसे देश के हिन्दु समाज के अधिकार की तनिक भी चिंता नहीं। ईसाईमत का प्रवाह कितनी तेजी से करोड़ों रुपये व्यय कर के, नाना प्रकार के साधनों, स्कूलों, हस्पतालों तथा अन्य गुप्त उपायों से भारत के निर्धन लोगों को विधर्मी बना कर अपने पंजों में दबा रहा है, इसका सर्वसाधारण हिन्दु जनता को पता नहीं पता लगे भी तो उस कान के में जूं भी नहीं रेंगती। उसे अपने निजी कामों से ही अवसर नहीं मिलता। आर्य समाज की आंखें सब ओर लगी हुई हैं। अपनी सीमित शक्ति से उनसे स्थान २ पर टक्कर लेता है। इस के पास अमर शहीद पं. देव प्रकाश जी के समान तपस्वी देव हैं जो बीसियों वर्षों से भीलों के जंगल में बैठ कर कितना काम कर रहे हैं। हिन्दु इस काम के लिए पैसा भी तो नहीं देता। निर्वाचनों में लाखों का व्यय कर देंगे पर जाति की रक्षा के लिए कौड़ी भी नहीं। बम्बई में होने वाले ईसाईयों के इस विश्वसम्मेलन पर लाखों ट्रैक्ट छपवा कर उन ईसाईयों में बांटे जायें उन के हर काम पर निगरानी रखी जाये अभी से समाज का विशेष सम्मेलन इस विचार पर निर्णय के लिए शीघ्र बुलाया जाये।

—त्रिलोक चन्द्र

देवासुर संग्राम

विजयादशमी और दीवाली आई चली गई। प्रतिवर्ष ही सारा देश यह पवित्र पर्व बड़े समारोह व उल्लास से मनाता है। दशहरा में शस्त्र पूजा के महान् रूप में तथा उत्तरी भारत में रावण के विशाल बनाने की शकल में करोड़ों की संख्या में मनाती है। भारत के बाहिर भी इसे किसी न किसी रूप में मनाया ही जाता है। लाखों रुपये व्यय किए जाते हैं। राजधानी देहली में तो इसका समारोह और भी शान से होता है। विदेशों के दूतावासों के बड़े व्यक्ति भी इसे देखने देखने आते हैं। उस दिन सारा राष्ट्र ही एक विचित्र वातावरण में अपने को अनुभव करता है। किन्तु इतना परिश्रम तथा व्यय करने के बाद लोगों के जीवन में परिवर्तन कितना होता है ? कितने नरनारी ऐसे होते हैं जो कि इस अवसर पर कुछ शिक्षा लेकर मन में संकल्प धारण करते हैं ? अब तो यह एक प्रकार का खेल तमाशा सा बन गया है। थोड़े समय के लिए जनता मन को प्रसन्न कर लिया करती है। मेले और तमाशे के समान यह भी उसी रूप में बदल गया है।

वास्तव में यह भी एक देवासुर संग्राम है। दो शक्तियों की भारी टक्कर है, दो विचारों का संघर्ष है, दो राष्ट्रों के भिन्न-भिन्न सिद्धान्तों की भीषण जंग-सी है। दो प्रकार के Ideals आदर्श सबके सामने आते हैं। उनमें परस्पर एक बड़ा भारी युद्ध है। इसको देवों और असुरों का समर कह सकते हैं। भोगवाद से भरी हुई कोरी भौतिक प्रवृत्तियां एक ओर हैं जो कि मानवजीवन को केवल खाने पीने, मौज मनाने के लिए संसार में आने का उद्देश्य मानकर चलती हैं यह संसार केवल भोगों को भोगने के लिए है, यह शरीर एवं इसकी सारी इन्द्रियां विषय वासनाओं को भोगने के लिए ही प्राप्त हुई हैं। कोई ईश्वर नहीं, कोई धर्म नहीं, कोई-मर्यादा नहीं तथा नहीं है कोई भी परलोक या कर्मों का फल भोगने के लिए दूसरा जन्म। इस जीवन में जितने भोग भोग सकते हो, भोग लो, मौज मेला मना लो साधनों के उचित अनुचित की कोई चिन्ता नहीं है। यह सिद्धान्त आसुरी है। इसे मानने वाले असुर कहलाते हैं। एक युग में लंका का साम्राज्य इस सिद्धान्त का प्रमुख केन्द्र था। मदिरा, मांस, मैथुन का वहां खुला प्रचार था। जीवन के ये अंग बन चुके थे। लंकाधिपति रावण इस का नेता था। सारे देश का वातावरण ऐसा बन गया था। इसी लिए लंका को उस युग में असुरराज्य कहा जाता था।

इसके विपरीत राम की पवित्र अयोध्या को देवों का राज्य कहा जाता था। उनका सिद्धान्त दैवी सिद्धान्त था। धर्म, ईश्वर, परलोक, जीवन मर्यादा, मानवता से उनको प्यार था। वे देवता थे। हर बात में शुद्ध थे। सारे दैवी गुण थे। देवता राम इस देश के प्रतीक थे। इन दोनों विचारों का युद्ध था। रावण के पास भारी व भयंकर अस्त्र-शस्त्र, बलवती सेना, ऐश्वर्य भण्डार, विज्ञान के केन्द्र, साम्राज्य भोग्य पदार्थों की भरमार थी। किन्तु धर्म के प्रतीक श्रीराम ने अपनी दैवी शक्तियों को संग ले कर असुरों को उन के घर लंका में जा कर पराजित किया। धर्म की पाप पर विजय हुई असुरों को देवों ने परास्त कर दिया भोगवाद भक्तिवाद के सामने टिक न सका। तब से ले कर भारतीय जनता प्रतिवर्ष इस लाखों वर्ष देवासुर संग्राम करती कराती रहती है। परन्तु क्या जीवन भी बदलता है या नहीं ! आज का भारत व विश्व किस ओर जा रहा है। हम अपने से पूछें कि हम अपने विचारों के साथी हैं या भोगवादी रावण के पक्ष में हैं ? मन से पूछो। परिवार के, बाजारों के, नगरों के वातावरण से पूछो कि रामभक्त हैं या रावण भक्त ? आसुरी विचार आज भी प्रबल हैं। अभी देवासुरसंग्राम करना होगा।

—त्रिलोक चन्द्र

आर्य समाज और खाद्य संकट

(श्री सुरेश चन्द्र वेदालंकार एम,ए,एल.टी.डी,वी. कालेज, गोरखपुर)

आर्य समाज एक धार्मिक संस्था होने के साथ-साथ समाज सेवी संस्था भी है। प्राय: धार्मिक संस्थायें अपने धर्म के रीति रिवाजों और कर्मकांडों की रक्षा तथा उन में बाधा डालने वालों के प्रति संघर्ष के लिए होती हैं। धर्म के नाम पर बनी हुई मुस्लिम लीग, जमाते इस्लामी आदि संस्थायें मैं धर्म के नाम पर अधिकार मानती हैं परन्तु समाज सेवी संस्थाओं का कर्तव्य इतना ही नहीं होता। इन का कर्तव्य यह भी होता है कि समय आने पर अपने आप को समाज की सेवा और सार्वजनिक कार्यों के लिए तत्पर कर दे। आर्य समाज ने दलितों और पीड़ितों के लिए बहुत कुछ किया। कारण यह था कि उस के नेताओं मे स्वार्थ की भावना कम और परार्थ की भावना अधिकथी।अत.वे लोग जनता पर पड़ने वाली प्रत्येक विपत्ति मे साथ देते थे। पर आज आर्य समाज में नेताओं का अभाव है। ऐसे नेताओं का जो समाज के कार्य कर सकें, जनता की सेवा कर सकें। यही कारण है कि आज आर्य समाज की प्रगति मन्द हो रही है।

आज देश के सामने खाद्य संकट भीषण रूप मे उपस्थित है। खाद्य सकट है या नहीं यह तो भगवान् जाने। परन्तु देश में जनता के सामने यह समस्या अवश्य है कि वह अपना भोजन कैसे प्राप्त करे। उत्तर प्रदेश के पूर्वीय जिलों जिस को उपेक्षा भारत सरकार और उत्तर प्रदेश सरकार दोनों ने रा कर रखी है आज गांवों में लोग तड़प तड़प कर क्षीण होते जा रहे हैं। यदि रोगादि से जनता की मृत्यु हो जाती तो शायद इतना कष्ट नहीं होता जितना आज हो रहा है। मैं आर्य समाज जैसी समाज सेवी संस्था के अधिकारियों से अनन्य भावना से प्रश्न करना चाहता हूं कि भला बताइए इस खाद्य संकट पर आपने आपकी प्रतिनिधि संस्थाओं ने सार्वदेशिक सभा ने कुछ सोचा भी, सोचा तो आर्यसमाज के अधिकारियों ने क्या कदम उठाया सार्वदेशिक सभा ने शराब-बन्दी करने का निश्चय किया। कार्य बड़ा अच्छा था परन्तु क्या जनता ने आपके इस आन्दोलन के प्रति रुचि दिखाई, क्या सार्वदेशिक के आदेश पर किसी भी आर्यसमाज ने इस आन्दोलन के प्रति सभ्यता का प्रदर्शन किया? नहीं किया। क्यों कि आर्यसमाज के नेता एवं प्रतिनिधि-संस्थाओं ने इस खाद्य सकट या ऐसी ही समस्याओं से अपने को दूर कर लिया है तथा अपने को केवल स्वामी जी को नाम रटने वाली संस्था के रूप में अपने को प्रारम्भ कर दिया है अत जनता की रुचि भी हमारे प्रति कम हो गई।

आप कहेंगे कि आर्यसमाज खाद्य संकट के प्रति क्या कर सकता है? यह एक प्रश्न है जो मुझ से पूछा जा सकता है। मैं इसका यह उत्तर दूंगा कि खाद्य संकट का हल यदि आर्यसमाज को नहीं सूझ रहा है तो वह संस्था अपने भविष्य के विषय में निश्चिन्त नहीं हो सकती। खाद्य संकट का सम्बन्ध खाद्य की कमी से है। परन्तु क्या सचमुच देश में खाद्य की कमी है। अभी हमने एक वक्तव्य पढ़ा था उसमें लिखा था कि जितना गेहूं भारत में पैदा होता है उसका आधा गेहूं केवल अमेरिका ने भारत को दिया है और आस्ट्रेलिया,कनाडा तथा दूसरे देशों से जो गेहूं आ रहा है वह इससे अलग है। ऐसी दशामें गेहू की कमी की बात साधारण जनों के मन में बैठती नहीं। पर हमें अपनी स्वतंत्रता की चिन्ता होती है जो देश भोजन के मामले में इस प्रकार दूसरे राष्ट्रों पर निर्भर है क्या वह अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा कर सकता है और जिस देश की जनता भूख से तड़प रही है क्या उस के सामने भारत के भविष्य का कोई चित्र आ सकता है? आज कुछ लोगों का और सरकार के अधिकारियों का कहना भी है कि देश में खाद्य की कमी नहीं परन्तु खाद्य पदार्थों का हमारे व्यापारियों ने आप सचय कर लिया है। इस का मतलब है कि खाद्य की उतनी कमी नहीं जितनी की कमी बनाई गई है और इस प्रकार आर्यसमाज का कार्य शुरु हो जाता है कि वह जनता के चरित्र निर्माण की ओर अग्रसर हो। वह अपने आदर्शजीवन द्वारा भूखी जनता में आत्मविश्वास पैदा करे और अन्न सचय की प्रवृत्ति से रोके तथा बड़े अन्नसचय कारियों से छिपे गल्ले को निकलवाने का प्रयत्न करे। यदि वह इन कार्यों को नहीं करता है तो आर्य-समाज जन-सेवा के कार्य से दूर होगा। यदि वह जनता की समस्याओं पर सोचता भी नहीं तो उसकी उपयोगिता सन्देह का विषय बन जायेगी। हम चरित्र निर्माण और अनाचार के दूर करने की आशा सरकार के अधिकारियों से नहीं कर सकते और भारत सेवक समाज तथा साधु समाज जैसी सरकार निमित संस्थाओं से नहीं कर सकते। इसकी आशा तो हम आर्यसमाज और केवल आर्य समाज से कर सकते हैं। अत: स्वामी दयानन्द के बलिदान के दिन जन सेवा की भावना से हमें भी खाद्य सकट आदि समस्याओं को सुलझाने का व्रत लेना चाहिए। यदि हमने इस दिशा में कदम बढ़ाया तो हमारी उपयोगिता नष्ट हो आएगी यह युग की मांग है। दीपावली पर यह विचारना आवश्यक है।

सभा प्रधान प्रिंसिपल रलाराम जी एम.ए. को वेद प्रचारार्थ थैलियां भेंट

आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर के प्रधान तपोमूर्ति पं. रलाराम जी एम.,एम.ए. की सेवा में आर्य समाज दयालपुरा करना आर्य समाज गुड़गांव माडल टाऊनकी ओर से चारसौ रुपये की थैलियां भेंट की गई।

आर्य सज्जन आर्य-जगत के ग्राहक बनें औरों को बनायें

शोक समाचार

आर्य समाज मालवीय नगर के प्रधान श्री बलराम जी कालड़ा जो कि दो मास से अस्पताल में बीमार थे ५-१०-६४ को अचानक स्वर्गवास हो गया परमात्मा से प्रार्थना है कि उनकी पवित्र आत्मा को सद्गति प्रदान करें और उनके सम्बन्धी और परिवार के लोग जो इस महान वियोग से दुखी हैं उन को सहन शीलता देवें।

आर्यसमाज मालवीय नगर

डा, आर; कुकेजा
मन्त्री

आर्य संस्कृति के रक्षक

(ले०—श्री डा० धर्मदेव जी धर्मसाला (कांगड़ा)

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

पुरातन सनातन और पुनीत भारत की संस्कृति बड़ी उज्ज्वल है। पश्चिम में यूनान से रोम और रोम से योरप और अमेरिका संस्कृति की धारा अरब के मार्ग से गई। यूनान और रोम मिट गए। साथ २ उनकी संस्कृति भी मिट गई। योरप यूनानी संस्कृति की पूर्ण रूप से नकल आज तक न कर सका। यद्यपि भौतिक उन्नति कर ली, परन्तु आत्मा को भूल गया। इस लिए आज संसार में अशांति है! परन्तु भारत की वैदिक संस्कृति आज भी स्थिर है एवं सदा स्थिर रहेगी। हमारी सभ्यता के प्रासाद की बुनियाद अमर वेद ज्ञान पर है। इस में उपनिषद्, दर्शन शास्त्र, सूत्र ग्रन्थ, स्मृतियां और काव्य ग्रन्थ हैं। रामायण, महाभारत, कथा सरित-सागर, कविसम्राट कालिदास, बाणभट्ट, भवभूति, भारवि आदि। जहां ये ग्रन्थ हमें धार्मिक प्रेरणा देते हैं, वहां भौतिकवाद से भी सर्वथा अछूता नहीं रखते। इस लिए इनकी महानता है। हम नित्य सन्ध्या, यज्ञ, स्वाध्याय, दान पुण्य करते हुए आत्मविद् बनने के आदर्शों की ओर जाते हैं। भारत संस्कृति की सहस्रधाराएं हैं।

कालचक्र में पिस कर यवनों और म्लेच्छों ने हमारी सुन्दर सभ्यता को मलियामेट कर दिया। ज्ञान से भरपूर हमारे ग्रन्थों को हमाम में झोंक दिया। फिर भी उसे लोप न कर सके। क्यों? भारत में समय २ पर विभूतियां उत्पन्न हुईं जिन्होंने अपने तप त्याग से संस्कृति का रक्षण किया। जब लोग दुःखों से परास्त हो कर गृहस्थ धर्म से विमुख हो कर भिक्षु बनते चले गए। जब स्थान २ पर मूक पशुओं की बलि चढ़ाई जाती थी। तभी श्री शंकराचार्य का आगमन हुआ। उन्होंने बुद्धमत को खदेड़ कर वेदान्त की लहर चलाई। इस के बाद सन्त रामानुज रामानन्द, वल्लभाचार्य, कबीर नानक जी ने प्रेम व भक्ति का पथ दिखाया। निबलों को बल दिया। जब पश्चिम से भारतीय संस्कृति पर आक्रमण हुआ तो महर्षि दयानन्द पधारे। अन्दर व बाहिर दोनों प्रकार के आक्रमणों से संस्कृति की रक्षा की। किस प्रकार से? हम ने पाषाण व धातु की मूर्तियों को अपना इष्ट देव बना कर सब कुछ उन के अर्पण कर दिया। मथुरा व सोमनाथ के विशाल मन्दिर भेंटकर दिए। स्वामी जी ने सन्मार्ग दिखलाया। एक प्रभु की आराधना सिखलाई। मूर्तिकार मूर्ति से बड़ा है। मूर्ति को नहीं अपितु मूर्तिकार को अपनाओ। विश्व में न उलझो वरन् विश्वपति के प्यारे बनो। जब पंचभौतिक देह नष्ट हो गया तो उसके गुणों को स्मरण करो। हमारे पूर्वज चल बसे। उन का श्राद्ध नहीं करना। उन के गुणों को अपनाना तथा उन से शिक्षा ग्रहण करना ही सच्चा श्राद्ध है। मनुष्य की जहां शारीरिक सन्तति होती है वहां मानसिक पुत्र भी होते हैं। शरीर तो नष्ट हो जाता है परन्तु मन की विचार धारा मृत्यु के बाद भी निर्मल हो कर प्रवाहित होती रहती है। हम कपिल, कणाद, गौतम आदि मुनियों के शरीर नहीं देख सकते किन्तु उन के शास्त्रों द्वारा उन के दर्शन कर सकते हैं। स्वामी जी ने बतलाया कि झूठा मृतक श्राद्ध मत करो। पितरों की सच्ची शिक्षा धारण करना उनकी पूजा है। स्त्री रत्न है। उनके पठन-पाठन का द्वार बन्द मत करो। ज्ञान का शीतल स्रोत सबके लिए बह रहा है। जो सुपात्र है वह ज्ञान स्रोत में स्नान करता है। हमने पुरुषों के लिए तो ज्ञान भण्डार खोल दिये पर स्त्री जाति के लिए बन्द करके पाप किया है। सब परमात्मा की अमर सन्तान हैं। भला हो स्वामी जी का, जिनकी कृपा से स्त्रियों के लिए भी विद्या का बन्द द्वार खुल गया। स्वामी जी बाल विवाह के घोर विरोधी थे। भारतवासियों से कहा करते थे कि आप स्वराज्य कैसे प्राप्त करोगे। क्योंकि आप गुड्डे-गुड्डियों की शादी करके निर्बल सन्तान पैदा करने के कारण बने हो। मनुष्य और पशु दोनों सन्तान पैदा करते हैं। परन्तु पशु केवल सन्तान पैदा करते हैं पर मनुष्य सन्तति पैदा करके उसे बनाते हैं। उसे उत्तम शिक्षा, उत्तम संस्कार तथा पवित्र भावनाएं देकर ऊंचा करते हैं।

वेद परमात्मा का सच्चा ज्ञान है। वेद से बढ़कर और कोई ग्रन्थ नहीं। वेद ही अनादि सत्य का स्रोत हैं। इसलिए वेद पढ़ो-पढ़ाओ। वेदानुकूल ग्रन्थों का स्वाध्याय करो। वेदों को पढ़ने के लिए अठारह प्रकार की विद्याएं सीखो। वेद से ज्योति प्राप्त करो। इसके प्रकाश से विश्व को आलोकित करो। यह स्वामी जी की परमशिक्षा है।

अपनी भाषा ही प्यारी है, श्रेष्ठ है पवित्र है। दूसरों की भाषा पढ़ो जरूर पर उसके दास न बनो। आर्य भाषा परमात्मा की पवित्र वाणी है। इसका व्याकरण क्या है! मानों मोतियों की सच्ची माला है। एक मनका तोड़ो तो सारी माला ही टूट गई। एक अक्षर निकाल दो, तो सारा व्यर्थ हो जाएगा। ऐसा गुंथा हुआ व्याकरण किसी भी भाषा का नहीं है। अपनी भाषा के बिना स्वराज्य का क्या अर्थ है? अपनी देव वाणी को ऊंचा करो। स्वामी जी ने गुजराती होते हुए भी हिन्दी को अपनाया। क्योंकि इसमें राष्ट्र भाषा होने के गुण हैं। इसका सारा श्रेय स्वामी जी को है। आज हमें इन सब बातों का संकल्प लेना होगा। भारत की अनेक मुखी संस्कृति के रक्षक उस महर्षि के पथ पर चलने चलाने से ही आज का अशान्त विश्व शान्ति लाभ कर सकेगा। यह काम आर्यों को करना है। संसार आर्य समाज की ओर देख रहा है।

—

सभा को वेद प्रचारार्थ धन

आर्यसमाज रामनगर करनाल ११/-
" सलोगढ़ा (H.P.) ५१/-
" प्रेमनगर करनाल १०१/-
" नांदल (रोहतक) ८०/-
" अलाहर (का. वि.) करनाल १०/-
" लक्कड़ बाजार शिमला ५०१/-
" माडल टौन गुड़गावां १५१/-
" कंडाघाट (H.P.) १०१/-
" हांसी (हिसार) १५१/-
" कांगड़ा १३०/-
व्यायामशाला सोनीपत २२५/-
आ० स० अखनूर २०१/-
" मोडल टौन पानीपत १२०/-
" मिर्चपुर (हिसार) २८/-
" लजवाना (संगरूर) १५/-
" नारनौंद (हिसार) ३६/-
भैणी सुरजन (रोहतक) ८८/-
" बरेटा मंडी (हिसार) २७/-
" दयालपुरा करनाल २५०/-

करनाल, गुड़गांव, भिवानी के उत्सव

प्रि० रलाराम जी सभा प्रधान को थैलियां भेंट

उत्साह तथा उल्लास का उमड़ता दृश्य

****

आर्यसमाज दयालपुरा करनाल का वार्षिकोत्सव बड़े ही समारोह से मनाया गया। यहां पर डी. ए. वी. कालेज फार वोमेन, आर्य गर्ल्स स्कूल डी.ए.वी. स्कूल, अनाथालय जैसी बड़ी २ शानदार संस्थाएं हैं। जल्से का जलूस तो कमाल का था हजारों छात्रों छात्राओं के जय घोषों और वीरता भरे गीतों से सारा नगर ध्वनित हो उठा था। डा.गणेशदास जी प्रधान, श्री. बा. मामचन्द जी मन्त्री, श्री. बा. रामधन जी तपस्वी, प्रिंसिपल जी, प्रि. मेलारामजी वर्क चौ. हुकमचन्द जी, भागीरथ कुमार जी, पं. विश्वम्भरदत्त जी आदि समाज के उत्साही सज्जनों के विशेष उत्सास का दृश्य देखने वाला था। जल्से में प्रि. रलाराम जी एम. ए. सभा प्रधान कुंवर सुखलाल जी आर्य मुसाफिर, ठा. अमरसिंह जी आर्य पथिक, पं. त्रिलोकचन्द्र शास्त्री, प्रो उत्तमचन्द जी शरर, मान्य स्वामी वेदमुनि जी, पं. राजपाल मदन मोहन जी चिमटामंडली आदि पधारे। जल्सा हर प्रकार से उत्तम रहा। सभा को वेद प्रचार के लिए प्रिंसिपल रलाराम जी एम. ए. की सेवा में ७५०) रु. भेंट किए गए।

एक दिन स्त्री समाज का सदर के अपने सुन्दर मंदिर में जल्सा हुआ। बहिन सत्यावती जी मन्त्राणी के उत्साह से वहां की बहिनों में बड़ी जागृति है। भारी उत्साह है। स्त्रीसमाजों को प्रेरणा मिलती है।

आर्यसमाज नया बाजार भिवानी को जल्से का तो क्या कहना। उपस्थिति देखकर तो मन उछल पड़ा। तपस्वी श्री० शिव करण जी प्रधान, नेत्र विशेषज्ञ श्री. डा० गिरधारी जी, श्री पं० देशबन्धु जी शास्त्री एम. ए., श्री रामनाथ सुग्रीव जी मन्त्री थोड़े से किंतु अनथक महारथियों के अनथक कार्य को देखकर सारे बधाई देते थे। संकीर्तन निराला था। उत्सव ने नगर को जीवन दे दिया। जनता का सागर ही उमड़ता था। इसमें स्वा० भीष्म जी, प्रिंसिपल देवराज जी गुप्ता दयानन्द कालेज हिसार, पं० मुरारी लाल जी शास्त्री आर्य-मुसाफिर हिसार, पं० त्रिलोकचन्द शास्त्री स्वा. बेधड़क जी, पं० राज-पाल मदन जी चिमटा मण्डली पं० प्रभुदयाल हरीश जी मंडली रोहतक आदि पधारे अनाथालय के बच्चों ने तथा उत्तमीबाई' आर्य-कन्या पाठशाला की बच्चियों ने भी कमाल कर दिया, देवियों का उत्साह भारी था। बहिन स्वदेश जी मुख्याध्यापिका उत्तमीबाई कन्या स्कूल ने स्कूल द्वारा पूरा-पूरा सह-योग दिया। मार्ग व्यय के अति-रिक्त सभा को १०१) रु० वेदप्रचार तथा ८४) रु० आर्य जगत् का चन्दा १९६७ तक मिला। यह पहला समाज है जिसने दो वर्षों का आगामी चन्दा भी दिया अर्थात् १९६७ तक का। श्री शिवकरण जी प्रधान का सारा परिवार ही समाज के कार्य में लगा था। मान्य शास्त्री देशबन्धु जी एम. ए. तो समाज के स्तम्भ हैं। सबको बधाई। आर्य-समाज माडल टाऊन गुड़गोंव का जल्सा भी बड़ा ही शानदार था। श्री महाशय मूलचन्द जी तो समाज की मस्ती में रंगे हुए हैं। मन्त्री जी व सारे प्रेमी हैं। सभा के मान्यवर प्रधान प्रिंसीपल रलाराम जी एम. ए. एम. एल. ए. वहां पधारे। वेदप्रचार अधिष्ठाता पं० सुधीराम जी शास्त्री पं० हजारीलाल जी भी पधारे। जनता ने धर्म सरिता में खूब स्नान किया। अमृतपान भी किया। समाज की ओर से सभा के वेदप्रचार में मान्यवर पं० रलाराम जी प्रधान की सेवा में थैली भेंटकर सम्मानित किया गया। जल्सा हर दिशा में सफल रहा। समाज का सारा परिवार बड़ा प्रेमी उत्साही है।

आर्य हाई स्कूल नाभा में

भिवानी व हिसार से होते हुए मैं तथा पं. राज पाल मदनमोहन चिमटा मंडली प्रचार के लिए आर्य समाज नाभा आर्य हाई स्कूल में आये। प्रातः तो स्कूल के विद्या-र्थियों में तथा रात को आर्य समाज कालिज विभाग की ओर से स्कूल के विशाल हाल में प्रचार होता था। यहां स्कूल में जब से योग्ता, अनुभव, सादगी की सजीव मूर्ति श्री ला. देस राज जी भाटिया एम. ए. मुख्याध्यापक बन कर आये हैं तब से स्कूल का कायाकल्प हो गया है। कादियां में होते हुए इन्होंने वहां स्कूल व समाज की जो शानदार सेवा की जितनी प्रशंसा की जाये थोड़ी है। सारा परिवार ही समाज व धर्म के रंग में रंगा है। नाभा का स्कूल व समाज ऊंचे हो गये हैं। समाज भी खूब चलने लगा है। समाज के मन्त्री श्री परमानन्द जी सचमुच समाज के दीवाने हैं। बड़ा प्रेम है। श्री पं० धर्म देव जी शास्त्री अपनी सभा की प्रसिद्ध मंडली पं. राजपाल जी के बड़े भ्राता हैं। समाज के स्तम्भ ही हैं। दोनों समय खूब प्रचार होता रहा। मंडली के प्रभाव शाली भजन होते थे। स्कूल व समाज का काम देख कर प्रसन्नता है। श्री देसराज जी मुख्याध्यापक तथा उन के सहयोगी उत्साह से काम करते हैं। श्री हैडमास्टर भाटिया जी, पं. धर्म देव जी शास्त्री, मन्त्री परमानन्द जी की त्रिमूर्ति कार्य को आगे ले जा रही है। माननीया माता जी ने यहां बड़ा कार्य किया है। अनथक काम करने वाली हैं। समाज के प्रधान श्री बत्रा जी को भगवान पूर्ण स्वास्थ्य देवें। वेद प्रचार व मार्ग व्यय में ४६) रु. मिले।

धर्म-शिक्षा पुरस्कार प्रति-योगिता परीक्षा १९६४

"आर्य विद्या सभा, डी.ए.वी. कालेज प्रबन्ध कर्तृसभा, चित्र गुप्त मार्ग, नई दिल्ली के तत्वावधान में इस वर्ष धर्मशिक्षा पुरस्कार प्रति-योगिता परीक्षा चार दिसम्बर १९६४ को होनी निश्चित हुई है. उक्त सभा से सम्बन्धित सभी शिक्षयालय ६टी से ११वीं कक्षा तक सर्वप्रथम आठ-आठ छात्र इस परीक्षा में भेजने के अधिकारी हैं। प्रवेश पत्र नियमानुकूल संस्थाओं के प्रधानाध्यापकों द्वारा १५ नवम्बर १९६४ तक उक्त सभा के कार्यालय में पहुँच जाने चाहियें। प्रत्येक श्रेणी में प्रथम आने वाले आठ २ परीक्षार्थियों को सभा की ओर से नकद पुरस्कार व सफल रहने वाले छात्रों को प्रमाणपत्र प्रदान किये जाते हैं।

सभा से सम्बन्धित सभी छात्रा-लयों में चरित्र निर्माण व धर्मशिक्षा हेतु डी. ए. वी. कालेज प्रबन्धकर्तृ सभा द्वारा आयोजित पाठविधि के अनुसार धर्म-शिक्षा पुस्तकों को पढ़ाने का प्रबन्ध किया जाता है. धर्माभिलाषी सज्जन इस नैतिक व धर्मशिक्षा से लाभ उठाने के लिये अपनी सन्तानों को इन संस्थाओं में प्रवेश करा अपने कर्तव्य का पालन करने की कृपा करें।"

निवेदक—देवराज महाजन
एजुकेशनल एडवाईज़र

महर्षि दयानन्द का जादू सिर पर चढ़कर बोलने लगा

(ले०—श्री पिंडीदास, जी ज्ञानी अमृतसर)

❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋

(दीवाली अंक पृष्ठ ४३ से आगे)

९. तत्तु पक्वं समाज्ञाय निष्टप्त छिन्न शोणितम्। लक्ष्मणः पुरुष व्याघ्रमथ : राघवमब्रीत् ।।

अयोध्या कांड सर्ग ५६ श्लोक २७

अर्थात्— रक्त विकार नाश करने वाले उस गजकन्द को भली भान्ति पका हुआ जानकर लक्ष्मण ने पुरुषसिंह श्री रघुनाथ जी से कहा।

१०. अय सर्वः समस्ताङ्गः शृतः कृष्ण मृगो मया। देवता देव संकाश यजस्व कुशलोह्यसि ।।

अयोध्या काण्ड सर्ग ५६ श्लोक २८

अर्थात्—यह काले छिलके वाला गजकन्द जो विगड़े हुए सभी अंगों के ठीक करने वाला है, मेरे द्वारा सम्पूर्णतः पका दिया गया है। अब आप वास्तु देवताओं का यजन कीजिये, आप इस कार्य में कुशल हैं।

११. तिष्ठन्तु सर्वदाशाश्च गगा मन्वाश्रिता नदीम्। बल युक्ता नदी रक्षा मांस मूल फलाशनाः ।।

अयोध्या कांड सर्ग ८४ श्लोक ७

अर्थात्—सभी मल्लाह नदी की रक्षा करते हुए गंगा के तट पर ही खड़े रहें और नाव पर रखे हुए फल मूल आदि का ही आहार करके आज की रात बिताएं।

१२. इत्युक्त्वोपायनं गृह्य मत्स्य-मांसे मधूनि च। अभिचक्राम भरतं निषादाधिपति गुहः ।।

अर्थात्—यों कह कर निषाद राज गुह 'मत्स्यण्डी' (मिश्री) फल के गूदे और मधु आदि भेंट की सामग्री लेकर भारत के पास गया।

१३. सुरां सुरापाः पिबत पायसं च बुभुक्षिताः। मांसानि च मेध्यानि भक्षयन्तां यो यदिच्छति ।।

अयोध्या काण्ड सर्ग ९१ श्लोक ५२

अर्थात्—(वे भरत के सैनिकों को पुकार-पुकार कर कहती थीं)— 'मधु का पान करने वाले लोगो! लो यह मधु-पान कर लो। तुम में से जिन्हें भूख लगी हो वे सब लोग यह खीर खाओ। और परम पवित्र फूलों के गूदे प्रस्तुत हैं, इनका आस्वादन करो। जिसकी जो इच्छा हो वही भोजन करो।

१४. वाप्यो मैरेय पूर्णाश्च मृष्ट मांसचयैर्वृताः। प्रतप्त पिठरैश्चापि मार्गे मायूर कौक्कुटैः ।।

अयोध्या काण्ड सर्ग ९२ श्लोक ७०

अर्थात्—भरत की सेना में आए हुए निषाद आदि निम्न वर्ग के लोगों की तृप्ति के लिए वहां मधु से भरी हुई बावड़ियां प्रकट हो गई थीं, तथा उनके तटों पर तपे हुए पिठर (कुण्ड) में पकाए गए मृग, मोर और मुर्गों के स्वच्छ मांस भी ढेर के ढेर रख दिए गए थे।

पाठक वृन्द! देखा आपने कि देव दयानन्द का जादू कैसे काम कर गया है यह उसी का चमत्कार है कि—

९. छिन्न शोणितम्' की व्युत्पत्ति इस प्रकार है—'छिन्न शोणित रक्त विकार रूपं रोग जातं येन सः तम्।' गजकन्द रोग विकार नाशक है। यह वैदिक में प्रसिद्ध है। मदनपाल निघण्टु के 'षट दोषादि कुष्ठ हन्ता' आदि वचन से भी यह चर्म दोष तथा कुष्ट आदि रक्त विकार का नाशक है।

१०. 'समस्ताङ्ग' की व्युत्पत्तियों समझनी चाहिये—'सम्यग् मवन्ति अस्थानि अङ्गानि येन सः।

१२. यहां मूल में 'मत्स्य' शब्द 'मत्स्यण्डी' अर्थात् मिश्री का वाचक है। 'मत्स्यण्डी' इस शब्द का एक अंश 'मत्स्य' है, अतः नाम के एक अंश के ग्रहण से सम्पूर्ण नाम का ग्रहण किया गया है।

'सुराघट सहस्रेण'—सहस्रों देव दुर्लभ पदार्थ, 'मांस भूतौदन'—राजकीय भाग से रहित पृथ्वी वस्त्र और अन्न ऐणेय मांस गजकन्द का गूदा 'मृगं'—गजकन्दकृष्ण मृगं—काले छिलके वाला गजकन्द छिन्न शोणित-रक्त विकार दूर करने वाला मांस मूल—फलों का गूदा और मूल मत्स्यमांस मधूनि—मिश्री फल के गूदे और मधु मांसानि सुमेध्यानि—परम पवित्र फलों के गूदे बन गये हैं और प्रमाण संख्या १४ में जहां परिवर्तन नहीं किया जा सका, वहां 'भरत की सेना में आये हुए निषादादि निम्न वर्ग के लोगों की तृप्ति के लिये' के शब्द बढ़ा कर मृग मोर और कुक्कुट के मांस तथा शराब से भरी हुई बावड़ियों से छुटकारा प्राप्त करने का यत्न किया गया है।

बोलो वेदोद्धारक, यज्ञ प्रसारक, भ्रमभूल निवारक, जगत् निस्तारक भगवान दयानन्द की जय।

ब्रह्मयज्ञ संध्या प्रसारक महर्षि दयानन्द की जय

(पृष्ठ २ का शेष)

११. एतदक्षरमेतां च जपन् व्याहृति पूर्वकम्। सन्ध्योर्वेद विद् विप्रो वेद पुण्येन युज्यते—

अर्थात्—व्याहृति (भूः, भुवः, स्वः) के साथ इस अक्षर गायत्री का प्रातः सायं—दोनों समय—सन्ध्या काल में जप करने वाले ब्राह्मण को समस्त वेद पाठ का फल प्राप्त होता है।

१२. पूर्वां सन्ध्यां जपंस्तिष्ठेत् सावित्रीमर्कदर्शनात्। पश्चिमां तु समासीनः सम्यगृक्ष विभावनात्

मनु २—१०१

अर्थात्—प्रातः काल सन्ध्या कर के सुर्योदय पर्यन्त और सायं काल सन्ध्या कर के तारे दिखाई देने तक गायत्री का जप करना चाहिये।

१३. सायं प्रातस्तु यो सन्ध्यां सम्यग्नित्य उपासते नावं वेदमयीं कृत्वा तरन्ते तारयन्ति च ।।

१४. ब्राह्मणा नाम मात्रेण तेऽपि पूज्या युधिष्ठर किं पुनर्यस्तु संध्ये द्वे नित्यमेवोपतिष्ठते ।।

१५. सन्ध्यामुपासते ये वै नित्यमेव द्विजोत्तमाः ते यांति नर शार्दूल ब्रह्म लोके न संशय : ।।

महाभारत आश्वमेधिक पर्व युधिष्ठिर के प्रति श्री कृष्णोक्ति

अर्थात्—जो प्रतिदिन प्रातः-काल दोनों समय—विधिवत् सन्ध्योपासना करते हैं, वेदमयी नौका का सहारा लेकर इस संसार समुद्र से स्वयं भी तर जाते हैं और दूसरों को भी तार देते हैं।

हे युधिष्ठिर! नाम मात्र के ब्राह्मण भी पूज्य हैं, फिर उन विप्रों का कहना ही क्या जो दोनों समय नित्य सन्ध्योपासना करते हैं, वे निस्सन्देह ब्रह्म लोक को प्राप्त होते हैं।

सन्ध्या के तीन प्रकार

१६. उत्तमो तार को पेता मध्यमा लुप्त तारका कनिष्ठा सूर्य सहिता प्रातः सन्ध्या त्रिधा स्मृता उत्तमा सूर्य सहिता मध्यमा लुप्त भास्करा कनिष्ठा तारकोपेता सायं सन्ध्या त्रिधा स्मृता ।।

देवी भागवत ११-१६-४, ५०

अर्थात्—तारों की छाया में की जाने वाली सन्ध्या उत्तम, तारों के लुप्त होने पर मध्यम और सूर्योदय पर निकृष्ट प्रातः सन्ध्या के ये तीन प्रकार हैं।

आर्य समाज शोलापुर

श्री अम्बादास जी आईगोले उपमन्त्री आर्य समाज शोलापुर की माता जी के निधन पर श्री परदेशी जी के पिता जी की मृत्यु पर व सुप्रसिद्ध मराठी साहित्यकार मामा वारेरकर जी के निधन पर आर्य समाज ने शोक प्रस्ताव पारित किया।

श्री ओ३म्कार नाथ जी बम्बे ने आर्यसमाज शोलापुर को दो पंखे दान दिये, श्री रमेश जी शोलापुर ने एक पंखा दिया। इन दानी महानुभावों का धन्यवाद किया गया।

राजेन्द्र जिज्ञासु उपमन्त्री समाज

आशा की तीसरी [illegible]

(ले०पं. राम विचार जो उपाचार्य द. ब्राह्म महाविद्यालय, हिसार)

****

श्रेष्ठ आचार्य ज्ञान चन्द्र जी के अचार्यत्व में महाविद्यालय सर्वांगीन उन्नति कर रहा है। उन के तप, त्याग और पुरुषार्थ के परिणाम श्री नरेन्द्र जी को केरल में प्रचारार्थ भेजा गया। पं. नरेन्द्र जी केरल में सुचारू रूप से वैदिक धर्म के प्रचारकार्य में संलग्न हैं। उन्होंने मलयालम में दो ट्रैक्टों का भी प्रकाशन कराया है। Aryan youth League के नाम से एक संगठन की भी स्थापना की है।

विद्यालय के दूसरे स्नातक श्री पं. देश बन्धु जी को भी महाराष्ट्र में प्रचारकीय के लिए भेजा गया था। वे भी आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य दक्षिण आधीन वैदिक धर्म के प्रचार कार्य को कर रहे हैं।

११ अक्तूबर को विद्यालय के तीसरे स्नातक श्री पं० गोविन्द प्रसाद जी बिहार निवासी हैं। वे ऋषि प्रेम, समाज सेवा और प्रचारात्मक भावनाओं से ओत प्रोत हैं। वैदिक धर्म के सिद्धांतों के विशेष ज्ञान के लिए वे बिहार से निकले थे। अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए वे श्रद्धेय महात्मा आनन्द स्वामी जी द्वारा संस्थापित उपदेशक विद्यालय, तपोवन में शिक्षा प्राप्त करते रहे। तत्पश्चात उन्होंने आर्य समाज के सुप्रसिद्ध विद्वान, तार्किक शिरोमणि श्रीयुत पं. अमर सिंह जी से भी कलकत्ता में वैदिक धर्म के सिद्धांतों के ज्ञानोपार्जन का अवसर प्राप्त किया। यह उन का सौभाग्य था जो उन्होंने इस अवसर से विशेष लाभ उठाया। सितम्बर १९६१ में आचार्य जी उन्हें कलकत्ते से यहां लाए। यहां आ कर विद्याध्ययन में वे प्रविष्ट हुए। विद्यालय में दो वर्ष तक शिक्षा प्राप्त करते रहें। शिक्षा-काल में उन्होंने विनेयशालिता, अनुशासन पालकता और नियम बद्धता का परिचय दे कर अपने आप को शुभ गुणों से अलंकृत किया। अपनी शिक्षा को और विकसित करने के लिए वे पटियाला में शास्त्री परीक्षा की तैयारी में संलग्न रहे।

वे बाईबल से भी विशेष परिचय रखते हैं। बिहार में जहां वे वैदिक धर्म के प्रचार कार्य को अग्रसर करेंगे। वहां ईसाई मत के निरोध का भी भरसक प्रयत्न करेंगे। उन का दृढ़ निश्चय है कि वैदिक धर्म के प्रचार कीय में मैं अपने समस्त जीवन को होम कर दूं। उन्होंने अपना कार्य क्षेत्र रांची को बनाना निश्चित किया है क्योंकि रांची के अन्दर ईसाई पादरियों ने बहुत ऊधम मचा रखा है। ऐसे क्षेत्र का निर्वाचन ही सिद्ध कर रहा है कि वे किस साहस के व्यक्ति हैं? जीवन में क्या करना चाहते हैं?

विदाई में नगर के प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने पधार कर उन का उत्साहवर्धन किया और शुभ आशीर्वाद दिया। ईश्वर कृपा करें ताकि वे अपने उद्देश्य में पूर्ण रूपेण सफल हों।

नाम करण संस्कार

प्रादेशिक सभा के उपदेशक श्री प्रभु दयाल जी आर्य के सुपुत्र का शुभ नाम करण संस्कार ५ अक्टूबर को उन के निवास स्थान पर श्री धर्मी राम जी व श्री पं. पोहकर सिंह जी ने वैदिक विधि से कराया। बच्चे का नाम दिनेश कुमार रखा गया। इस अवसर पर प्रभु दयाल जी ने २५/- वेद प्रचार के लिए सभा को और ५/- पोजी समाज को दान दिए।

नव जात शिशु

प्रादेशिक सभा के महोपदेशक श्री पं. चन्द्र सैन जी आर्य हितैषी के घर चिर काल के पश्चात एक नवीन नेहात्मा पुत्र के रूप में जन्म लिया है। आर्य जगत की ओर से श्री प्रभु दयाल जी व पं. चन्द्र सैन जी को बहुत बधाई हो परम पिता परमात्मा दोनों बालकों को दीर्घायु प्रदान करें।

दयानन्द साल्वेशन मिशन होशियार पुर

सूचना मिलने पर कि कांकर्णी महाराष्ट्र में इसाइयत ने खास तौर पर आक्रमण किया है और भोले भोले हिन्दुओं को लोभ आदि दे कर ईसाई बना रहे हैं। आल इंडिया दयानन्द साल्वेशन मिशन होशियारपुर ने अपने उपदेशक श्री मोहन लाल जी आर्य को वहां प्रचारार्थ भेज दिया है। आशा है कि वहां के हिन्दु और आर्य समाजी उन को पूरा-पूरा सहयोग देंगे।

राम दास
प्रधान मिशन।

आर्य समाज युसफसराय (ग्रीन पार्क नई दिल्ली का चुनाव

श्री सोमनाथ जी रावल प्रिंसीपल जी की अध्यक्षता में २०-९-६४ को इस प्रकार हुआ।

प्रधान—श्री विष्णु सहाय पूर्व प्रिंसीपल, उपप्रधान—श्री देव राज जी कोहड़ श्री रघुवीर सिंह जी आर्य, मुख्य मंत्री—श्री शालिगराम जी गौतम, संयुक्त मंत्री—श्री राम कृष्ण जी शास्त्री, श्री महावीर सिंह जी, कोषाध्यक्ष—श्री सदानन्द जी चानना, सहायक कोषाध्यक्ष—श्री प्यारे लाल जी प्रचार मंत्री—श्री नरेन्द्र कुमार जी पाण्डे, पुस्तकाध्यक्ष—श्री सोहे लाल जी, महिला संगठन मंत्राणि—श्रीमति कृष्णा ठकराल अतरंग सदस्य—श्री सोम नाथ जी रावल प्रिंसीपल—श्री वेद पाल जी खन्ना श्री प्यारे लाल जी वर्मन् श्री एस. डी. पाण्डे।

भवदीय—शालिग्राम गौतम
मुख्य मंत्री

शोक समाचार

आर्य समाज नाभा के सत्सङ्ग में श्री [illegible] समाचार हार्दिक [illegible] के साथ सुना गया कि [illegible] राम जी पुरोहित की धर्म पत्नी का स्वर्गवास हो गया है। पं. जी की देवी जी आर्य स्त्री समाज कादियां के प्रधानी इस वृद्धावस्था में पं. गंगा राम जी आर्य समाज के कार्यों में रात दिन संलग्न रहते हैं उन के वियोग से आर्य समाज को भारी हानि हुई है। परम पिता प्रभु दिवङ्गत आत्मा को सद्गति प्रदान करें। पूज्य पं. जी को धैर्य तथा शान्ति प्रदान करें। इसी प्रकार आर्य स्कूल नाभा में भी शोक प्रस्ताव पारित हुआ।

मंत्री आर्य समाज कालेज विभाग नाभा

★ विद्या ददाति विनयम् (विद्या से नम्रता आती है।

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टैलीफोन न० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे 14-11-64. वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक ४५) ३० आश्विन २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०— ५ नवम्बर १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

इन्द्रमभिप्रगायत

हे मनुष्यो! इन्द्र का सारे जगत के स्वामी भगवान का अभि-भलीभांति श्रद्धा भर मन से प्रगायत-गायन करो। मानव जीवन पाकर प्रात. सायं उसी भण्डारी का गायन करते रहो। जगतपति को न भूलो।

म त्वा ममत्तु

हे मानव! वह परमात्मा त्वा-तुझ को ममत्तु-आनन्द मे रखे। दुःख कष्टों को दूर करके सदा सुखी बना देवे। जीवन में सदा आनन्द ही आनन्द मिलता रहे। आनन्द से आनंद ही मिले।

वाजे वाजे हवामहे

हे देव प्रभो! हम आपके भक्त आपको वाजे वाजे हर बलशाली शुभ कार्य में यज्ञ में, प्रत्येक स्थान और समय में पुकारते हैं, बुलाते हैं, आपका स्तवन करते हैं। नायक मानते हैं।

सा म वे द से

भाग्य भरोसे बठे रहना मानव मन का भ्रम है,
वरना इस दुनिया के अन्दर कौन किसीसे कम है।
रह रह कर कहता है कोई अन्तर मन मे बैठा,
रुको नहीं तुम बढते जाओ जब तक दम मे दम है॥

कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी इंग्लैंड के विद्यार्थी
पं० जवाहरलाल जी नेहरु

ऋषि दर्शन

एक: स्तोतुं योग्य:

वही एक परमेश्वर सबकी स्तुति के योग्य है। सबको उसी की ही स्तुति करनी चाहिए। उसके बिना प्रकृति के पदार्थों की स्तुति करना मनुष्यता का भारी अपमान है केवल परमेश्वर की स्तुति करो।

उपासनायोग्योऽस्ति

वही परमदेव ही उपासना के योग्य है। हम उसके अमृत पुत्र हैं। उसीकी गोद में बैठें उसके पास बैठें। प्रकृति के पास तो बहुत-बहुत बठते हैं पर उस जगदीश के पास बैठने से ही फल मिलेगा।

समाश्रियितुं योग्य:

लोगो! उसीका आश्रय लो, सहारा पकड़ो। जीवन मे वही प्रभु ही आश्रय के योग्य है। जो उस का आश्रय लेता है, जीवन मे तर जाता है। अन्य आश्रय डुबाते हैं।

भा ष्य भू मि का से

अधिष्ठाता—श्री संतोषराज सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

धार्मिक चर्चा—

उपनिषद् विद्या

श्रीवेदमुनिजी परिव्राजक अध्यक्ष वैदिकसंस्थान वालाबाली (बिजनौर)

★✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳★

उपनिषदों में कठोपनिषद का अपना पृथक महत्व है। कठोपनिषद का मुख्यस्थल है गुरु शिष्य संवाद में गुरु यम तथा शिष्य नचिकेता हैं। यम तथा नचिकेता ऐतिहासिक व्यक्ति थे या नहीं यहां हम इस विवाद में नहीं पड़ना चाहते। प्रश्न तो यहां उपनिषद का है इतिहास का नहीं।

नचिकेता का अर्थ है न जानने वाला अर्थात जिज्ञासु। जिज्ञासा उसे ही होती है जो जानता न हो जानने वाले को जिज्ञासा होने का प्रश्न ही क्या? यम का अर्थ है मृत्यु। ऋग्वेद के ब्रह्मचर्य सूक्त में कहा गया है आचार्योमृत्यु आचार्य मृत्यु होता है। शिष्य के द्वारा आचाय के सम्मुख अपने पन को, स्व की अनुभूति को मिटा देना पड़ता है अतः आचाय मृत्यु है। जिस प्रकार मृत्यु से जन्म का संबन्ध जुड़ा रहता है अर्थात् जैसे मृत्यु के पश्चात् जीवात्मा नवीन जन्म को प्राप्त होता है ठीक इसी प्रकार शिष्य भी आचाय के द्वारा स्व को. अपने पन को मार कर नवीन योग्यता को प्राप्त करता है, अपनी जड़ता (मूर्खता) को समाप्त करता और विद्या की उपलब्धि करता है जिसे शिष्य का नवीन जन्म अथवा दूसरा जन्म कहना सर्वथा उचित है। इस प्रसंग में मृत्यु आचार्य है तथा जीवात्मा न जानने वाला होने के कारण जिज्ञासु अर्थात शिष्य है एतदर्थमेव जिज्ञासा प्रकट करता है। किसी महापुरुष ने कहा भी है— 'असली है गुरुद्वार वहीं जहां काल गुरु मैं चेला' मृत्यु सचमुच गुरु है और आत्मा चेला। मृत्यु ही है जिस का ध्यान मानस में आते ही मानव स्व और विश्व, स्व जीवन और संसार के विषय में, इह लोक और परलोक के विषय में विचार करने लग जाता है।

संसार में देखा जाता है कि जब लोग किसी व्यक्ति की अन्त्येष्टि करके श्मशान से लौटते हैं तो उस समय मन में कुछ संकल्प-विकल्प उठते हैं, वह क्या है? वह वही तो है जो मृत्यु के कार्य को प्रत्यक्ष देख कर ज्ञान उत्पन्न होता है, जो मृत्यु के (यम के) द्वारा आत्मा (नचिकेता) को ज्ञान प्रदान किया जा रहा होता है, जो आचार्य का शिष्य को उपदेश होता है अतः यही यथा प्रतीत होता है कि यम-नचिकेता दोनों आचार्य और शिष्य आत्मा तथा मृत्यु हैं। आगे चल कर इस प्रकरण में यम ने नचिकेता को अग्नि भी कहा है। अगृ, अगि, इण धातुओं से अग्नि शब्द सिद्ध होता है जिस का अर्थ है गति करने वाला। आत्मा गति करता है, शरीर भी आत्मा के कारण ही गति करता है और फिर इस शरीर से उस शरीर में तथा इस लोक से उस लोक में गति करता है अतः आत्मा अग्नि है। शतपथ ब्राह्मण में तो स्पष्ट ही कहा है 'आत्मैवाग्निः' आत्मा ही अग्नि है अतः आचार्य के द्वारा नचिकेता का यह वरदान प्राप्त करना अत्यन्त सार्थक है।

यदि हम में से प्रत्येक मृत्यु से उसी प्रकार जिज्ञासा करे जिस प्रकार शिष्य आचार्य से करता है तो नचिकेता और यम के संवाद का प्रत्यक्ष हो सकता है। प्रत्यक्षीकरण सर्वोत्कृष्ट है, आइए हम भी थोड़ी देर के लिए प्रत्यक्षीकरण का लाभ तथा आनन्द लें।

आचार्य ने कहा आत्म रथी हैं. इन्द्रियां घोड़े हैं। विषय मार्ग हैं विषय मार्ग पर घोड़े दौड़ रहे हैं, सरपट भागे जा रहे हैं रथ को लेकर। रथी का कार्य है घोड़ों को अधिकार में रखना अन्यथा पता नहीं रथ का क्या बने? कहा नहीं जा सकता घोड़े किस गढ़े में रथ को लेकर डाल दें, पता नहीं किस विषय में फंसा दें अतः सावधान। सावधान हो और अग्र बुद्धि से कार्य कर तथा पिण्ड अर्थात् शरीर में इन्द्रियों की और ब्रह्मांड में पंचभूतों की डोर पकड़कर आगे आगे चल। तू तो अग्नि है, अग्नि कहते हैं आगे चलने वाले को, तू पीछे क्यों चलता है? समस्त महाभूतों को पीछे रख, इनके मार्ग पर मत चल इन्हें आपनेमार्ग पर चला। इनके लुभावने रूप को देखकर मत फिसल अपितु इनको अपने अनु-अनुकूल बना। इनके भोग में मत फंस इनको आवश्यकतानुसार केवल आवश्यकता पूर्ति के लिए प्रयोग कर।

उपर्युक्त प्रकार चलने से इन्द्रियों के पीछे छिपे जीवात्मा तथा प्रकृति के पीछे छिपे परमात्मा के तु दर्शन कर सकेगा। तुझे अपने में; स्व में स्व शरीर में, स्व इन्द्रियों के पीछे कार्य करने वाली शक्ति आत्म तत्व के दर्शन होंगे, आत्मानुभूति होगी और सांसारिक विषय भोगों, भौतिक भोगों के पीछे छिपे तथा उनमें व्याप्त परमात्मा के दर्शन होंगे उसकी प्राप्ती होगी। जीवन की यात्रा जिसमें आत्मा रथी है और शरीर तथा इन्द्रिां घोड़े हैं पिण्ड अर्थात् शरीर में आत्मा तक और ब्रह्माण्ड में परमात्मा तक पहुंचने के लिए है।

स्थिति बड़ी विचित्र है। मनुष्य संसार की प्रत्येक वस्तु का नाश होते देखता है और फिर उन्हीं नाशवान वस्तुओं में चिपटा रहता है उस से आगे जाने का प्रयत्न नहीं करता। यक्ष ने युधिष्ठिर से पूछा—'किमाश्चर्यमतः परम' परम आश्चर्य क्या है? धर्मराज युधिष्ठिर ने कहा यही कि हम देखते हैं कि संसार की कोई वस्तु किसी के भी साथ नहीं जाती किन्तु फिर भी लिप्त होते जाते हैं इन्हीं वस्तुओं में। क्यों जी? इस से बढ़ कर भी कोई आश्चर्य हो सकता है क्या?

ऋग्वेद में कहा है 'पश्यन्न ददर्श' देखते हुए नहीं देखते। यदि देखते होते तो समस्या का समाधान हो गया होता। जिन्होंने वास्तव मे देखा इस परिवर्तन शील जगत् को उनकी समस्या हल हुई और वह अमरत्व को प्राप्त हो गये। एक हम हैं कि हमारी दृष्टि आगे जाने को तैयार नहीं। कभी-कभी तो ऐसा प्रतीत होने लगता है कि हम आचार्य यम के सम्मुख उपस्थित ही नहीं हैं अपितु स्वय आचार्य की स्थिति में हैं किन्तु थोड़ी देर के पश्चात् फिर वही स्थिति, फिर वही माया-मोह, फिर वही पुत्रैषणा, वित्तैषणा, लोकैषणा ऐसा क्यों होता है? इसका क्या कारण है? गहराई में जाने पर एक ही उत्तर मिलता है और वह यह कि हमने अपने अग्नि स्वरूप को नहीं पहचाना जिसे कठोपनिषद् ने नचिकेता कहा है। हम नचिकेता (न-चिकेता) न जानने वाले तो हैं ही किन्तु साथ ही हम अग्नि भी हैं। यदि हमने अपने स्वरूप को देख लिया होता, यदि हम स्वयं को समझ गये होते तो हमारी स्थिति कुछ और ही होती। हम में ऋषित्व होता, हम ऋषि होते, हम साक्षात कर चुके होते, जिज्ञासा का समाधान हो गया होता।

(क्रमशः)

★ यदि विधाता हंसों पर क्रुद्ध हो जायें तो केवल उनका कमल वन का विलास नष्ट कर सकते हैं परन्तु दूध और जल को पृथक् करने का गुण वह भी छुड़ा नहीं सकते।

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२१, १५ नवम्बर १९६४ [अंक ४५

आर्यो ! तय्यार रहो

आर्य समाज स्वयं जगाने वाला एक विशाल आन्दोलन है। प्रारम्भ से ही इसे नाना प्रकार के मोर्चों पर लड़ना पड़ा है। अज्ञान, अन्याय और अभाव से भरा हुआ किसी प्रकार का भी क्षेत्र हो आर्य समाज ने डट कर सामना किया तथा अब भी किये जा रहा है। मानवता का रक्षक बना है। सारे देश को झकझोड़ कर जगाता रहता है। सारी मानवता एवं जीव सृष्टि के कष्टों को दूर करने का इसके दिल में सच्चा दर्द है हर आपत्ति के समय आर्य समाज ही सब से आगे आता है। समय २ पर उठते तूफानों का मुकाबिला करने के लिए यह डट जाता है। आज फिर सारे देश के सामने एक भारी संकट आ गया है।

इसी नवम्बर मास की तारीख २८ से ले कर ६ दिसम्बर तक भारत की विशाल नगरी बम्बई में सारे संसार के ईसाईयों का बड़ा भारी विश्व ईसाई सम्मेलन होने जा रहा है। समाचार पत्रों में इस के बारे में जोरदार शब्दों में लिखा जा रहा है। यह सम्मेलन कितना बड़ा होगा इस बात का इसी बात से अनुमान लगाया जा सकता है कि इस में सारे देशों से बड़े २ पादरी मिशनरी शामिल होने आ रहे हैं। तीस हजार के लगभग पादरी आयेंगे स्वयं कैथोलिक चर्च के धर्म गुरु पोप पाल भी वैटिकन रोम से चल कर इस में भाग ले रहा है। बम्बई में कितना इस के लिए प्रबन्ध किया जा रहा है! स्कूलों कालेजों में इनके ठहरने का प्रबन्ध किया जा रहा है। हमारी धर्मनिरपेक्ष मोतियों वाली सरकार भी प्रबन्ध में हिस्सा ले रही है। इस में पोपपाल २६ लाख रुपयों की वस्तुएं बांटेगा। पता नहीं चमकीले प्रलोभनों के कैसे २ तारों को फैलाया जायगा। क्या कुछ होगा इस का अनुमान अभी से निशानियां देखकर किया जा सकता है। हमें किसी संस्था द्वारा अपने विचारों के प्रचार पर किसी प्रकार की आपत्ति नहीं, सारे अपने प्रचार में आज़ाद हैं। किन्तु जिस ढंग से इस का आयोजन हो रहा है और जिस शैली से हमारी सरकार भी इस में रुचि ले रही है, उस पर हम को आपत्ति है। प्रसन्नता इस बात की है कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने इस भय के बारे में समाज और हिन्दू समाज का ध्यान आकर्षित कर दिया है। बम्बई में भी इस के बारे में कई जल्से हो रहे हैं। आर्य समाज के सिवाय देश पर आने वाली इन भारी विपत्तियों को देख कर चिन्ता भी किसे है? आर्य प्रादेशिक सभा के अधिकारियों मान्यवर श्री ज्ञानचन्द जी मन्त्री सभा ने भी आर्य जगत के दीपमालांक में इस ओर समाज का विशेष ध्यान दिलाया है। हिन्दू जगत को चिन्ता नहीं कि क्या हो रहा है। उसकी बला से कुछ हो जाये। अमृतसर में जो वेद सर्व शाखा सम्मेलन हो रहा है—यदि यह बम्बई करते तो क्या अच्छा था। हिन्दू सिनेमा बनवा सकते हैं, विवाहों पर भारी व्यय कर सकते हैं, राग रङ्गों में खर्च कर देते हैं। इधर उधर के ऐसे वैसे कामों में पैसा लगा देते हैं। अभी गत दिनों अमृतसर के एक कारखानेदार ने एक विवाह में ६ लाख रुपये व्यय किए। बिजली का खर्च ही उस में २५ हजार रुपये फूंक डाले पर ईसाईमत के इस होने वाले इस विचार आक्रमण को रोकने के लिए उनके पास एक पैसा भी नहीं है। आर्यसमाज मैदान में आया है। इस मोर्चे पर आर्य समाज डट गया है। आर्यो! तैयार रहो। कमर कस लो। इस आने वाले भारी तूफान का बलपूर्वक मुकाबिला करना है। इसके लिए अपने धन की तिजोरियां भी खोल दो। आर्य प्रादेशिक सभा की झोली भर दो ताकि इस ईसायत के प्रवाह को रोका जा सके।

—त्रिलोकचन्द्र

वेद को खोलने वाला दयानन्द

भारतीय नेताओं की श्रद्धांजलियां

आर्य केन्द्रीय सभा देहली की ओर से दीप माला पर्व पर महर्षि निर्वाण दिवस बड़े पैमाने पर मान्यवर स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज की प्रधानता में मनाया गया। बड़ी भारी जनता की उपस्थिति थी। इस विशेष अवसर पर राष्ट्र के गृहमन्त्री श्री युत गुलजारी लाल जी नन्दा, पुनर्वास मन्त्री श्री महावीर त्यागी, उपविदेश मन्त्री श्री राजा दिनेश सिंह जी ने पधार कर महर्षि दयानन्द के दिव्य कार्यों की भूरि २ प्रशंसा करते हुए अपनी २ श्रद्धांजलियां पेश कीं। गृहमन्त्री श्रीयुत नन्दा जी ने अपने आन्तरिक भावों का प्रकाशन करते हुए कहा—

महर्षि दयानन्द ने भारतीय समाज के जीवन में एक नया मोड़ दिया। उन्होंने एक नई जागृति और नई जिन्दगी का सन्देश दिया। महर्षि दयानन्द ने हमें बताया कि वह धर्म क्या, जिस के मानने वाले गुलाम और गरीब रहें। श्री महावीर त्यागी जी ने अपने ओजस्वी भाषण में कहा—मैं ने बचपन से ही आर्य समाज की शिक्षा से उत्साह पाया था और उसी से प्रेरित हो कर कांग्रेस में शामिल हुए थे। खिलाफत आन्दोलन के समय आगरा क्षेत्र में ८८ प्रतिशत पुरुष और ९२ प्रतिशत स्त्रियां आर्य समाजी थीं। महर्षि ने धर्म का वास्तविक स्वरूप हमारे सामने रखा और स्वराज्यरूपी पेड़ बोया। महात्मा गांधी ने उसी स्वराज्य के लिए काम किया और हमें आजादी दिलवाई। राजा दिनेश सिंह जी ने अपनी आंतरिक श्रद्धा प्रकट करते हुए कहा—महर्षि ने कोई नया धर्म नहीं बताया बल्कि वेद के पुराने धर्म को ही फिर से प्रगति के मार्ग पर ला कर खड़ा कर दिया। आर्यसमाजी पिता का पुत्र होने पर गौरव प्रकट हुए आर्य समाजी भाईयों से अनुरोध किया कि वे ऋषि के मार्ग पर सच्चाई से चलते हुए देश को शक्तिशाली बनाने का आज संकल्प करें।

बम्बई में ईसाई प्रचारकों का अधिवेशन

(ले० श्री पृथ्वीचन्द्र जी एम. ए. गीतानगर हुशियारपुर)

★✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱★

भारत में आज धर्म निरपेक्ष गणतन्त्र जनतन्त्र राज्य है। धर्म निरपेक्ष राज्य में ऐसे मेले होने नहीं चाहियें परन्तु हो रहा है एक मेला आज भारत को ऐसे मेलों की आवश्यकता नहीं, भारत में धर्म पहले से ही बहुत हैं, संख्या में तो यहां अनेकों धर्म हैं। फिर ईसाई धम तो पूरा धर्म भी नहीं। वेद में पूरा धर्म विहित है, धर्म प्रेमियों के लिये सदा के लिये वैदिक धर्म सर्व श्रेष्ठ धर्म है, सारे संसार के व्यक्तियों के लिए सर्वकाल के लिये इस से बढ़कर और कोई सर्वांगपूर्ण धर्म न है, न हो सकेगा, न हो था। परन्तु इस धर्म से भटक जाने पर ही संसार पर अनेकों कष्ट आए और यदि अब भी संसार के लोग इस धर्म की उपेक्षा करेंगे, तो संसार के लोगों का उद्धार कदापि न होगा। इस वैज्ञानिक युग में, वैदिक धर्म, जो कि वैज्ञानिक धर्म है, को अपना लेने से ही संसार के प्राणिमात्र की रक्षा तथा कल्याण हो सकेगा, अन्यथा नहीं।

बम्बई में होने वाले ईसाई प्रचारकों के अधिवेशन से भारतवासी आर्य धर्मावलम्बियों को डरना नहीं चाहिये।

आर्यसमाजें जो नगर में वार्षिक उत्सव करती हैं, यदि उन उत्सवों पर व्यय किये जाने वाले धन से अब के ईसाई मेले के समीप बम्बई में अपना शिविर लगा कर धर्म का वैदिक रूप उन ईसाई के मुकाबले में जनता के सामने रखें तो उपयुक्त होगा।

शास्त्रार्थ महारथी जो समाज के पास हैं, उनको उस ईसाइयों के अधिवेशन में शास्त्रार्थ के लिए भेजा जावे। ईसाइयों से शास्त्रार्थ किया जावे ईसाइयों को अपने वैदिक धर्म की खूबियों से, उस मेले में परिचित कराया जावे तथा जो ईसाई आर्य धर्म में आना चाहें उन्हें आर्य धर्म में प्रवेश कराया जावे।

उक्त मेले में आर्य साहित्य बांटा जावे। एवं ईसाइयों का सच्चा कल्याण किया जावे। ईसाई लोग सत्य के ग्रहण करने में पीछे रहने वाले नहीं हैं। केवल उन तक सत्य पहुंचाना जरूरी है। "एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः, स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्याम् सर्व मानवः" के मनुमहाराज के इस श्लोक को आर्य समाजें चरितार्थ करने के लिये अपने सद्धर्म को ईसाई सम्मेलन के प्रस्तुत करें।

ईसाई लोगों का आम ख्याल है कि ईसा उनके लिये एक नई दुनियां रच रहा है, जहां वे सब सुख पूर्वक रहेंगे। यदि यह दुनियां किसी प्रकार की हो सकती है तो केवल विचारों की ही हो सकती है, अतः ईसाई लोगों को धर्म—पूर्ण धर्म—वैदिक धर्म—के विचार दिये जाने चाहियें। उन्हें वैदिक धर्म से अवगत कराना चाहिये।

विश्व ईसाई सम्मेलन

आर्क बिशप द्वारा विरोध

आर्य जनता कर्तव्य का पालन करे

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री श्री ला. रामगोपालजी शाल वाले का आह्वान

✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱

२८ नवम्बर से दिसम्बर ६ तक बम्बई में होने वाले विश्व ईसाई सम्मेलन का विरोध न केवल देशभक्त भारतीय और सर्व सामान्य आर्य हिन्दू प्रजा ही कर रही है, अपितु बड़े-बड़े ईसाई पादरी भी इसका विरोध कर रहे हैं।

इण्डियन नेशनल चर्च प्राइवेट एवं आर्क बिशप श्रीयुत सन्त विलियम्स (बम्बई) ने भी पोप के रोम के नाम एक अपील निकाल कर इस सम्मेलन का विरोध किया है, साथ ही इस सम्मेलन में भाग लेने के लिए भारत न आने की उनसे प्रार्थना की है। विरोध का कारण बताते हुए उन्होंने लिखा :—

हम भारतवासी सांसारिक वैभव से नहीं अपितु आध्यात्मिक वैभव से प्रभावित होते हैं। इसलिए भारत में इस सम्मेलन के लिए बहुत कम उत्साह है। आर्थिक लाभ की दृष्टि से ही इस सम्मेलन का बहुत ढिंढोरा पीटा जा रहा है।

दुर्भाग्य से भौतिक कारणों से पाश्चात्य जगत का भारत और संभवतः समस्त पूर्वीय जगत के साथ सम्पर्क स्थापित हो गया है। इस ३८ वीं विश्व ईसाई कांग्रेस को पाश्चात्य जगत का जो मार्ग दर्शन और आर्थिक सहयोग मिल रहा है। उसको भारत की सर्व सामान्य प्रजा आदर नहीं करती, क्योंकि उनका उद्देश्य उन पर अधिक स्पष्ट नहीं है।

इस सम्मेलन के दुष्प्रभाव के निराकरण और विदेशी पादरियों के प्रचार से टक्कर लेने के लिये आर्य समाज मैदान में उतर आया है। बम्बई में श्री सेठ प्रतापसिंह शूर जी वल्लभदास प्रधान सार्वदेशिक सभा की अध्यक्षता में यह कार्य सुसंगठित एवं व्यापक रूप में हो रहा है। साहित्य का निर्माण और प्रकाशन हो रहा है। प्रेस सम्मेलन हो रहे हैं। स्थान २ पर बड़ी २ सभाओं का आयोजन हो कर व्याख्यानों का सिलसिला आरम्भ हो गया है। इस कार्य पर प्रति-दिन सहस्रों रुपया खर्च किया जा रहा है।

बम्बई के केन्द्र के अतिरिक्त सार्वदेशिक सभा के कार्यालयों द्वारा साहित्य की तैयारी पूरे बल के साथ की जा रही है। शीघ्र ही आवश्यक साहित्य प्रकाशित हो कर आ जायगा और बम्बई भेज दिया जायगा।

गत रविवार को दिल्ली की समस्त आर्य समाजों के संगठन केन्द्रीय सभा की एक बैठक में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री ने सभा की इस विषयक योजना को लोगों के समक्ष रखा। बैठक में इस कार्य के प्रति बड़ा उत्साह था। भारतीय सीमाओं नागा-लैण्ड, गोवा तथा भारतीय वन्य प्रदेशों आदि में ईसाई पादरियों की अराष्ट्रिय एवं आर्य संस्कृति विरोधी प्रगतियों को देखते हुए जनता में इस सम्मेलन के विरुद्ध बड़ा रोष व्याप्त है।

आर्यों और हिन्दुओं को इस कार्य को अधिक से अधिक सफल बनाने के लिए सार्वदेशिक सभा के हाथ दृढ़ करने चाहिएं और धन की सहायता तत्काल भेजनी चाहिए।

समय है अब भी संभल जाओ

(ले०—श्यामलालार्य विद्यावाचस्पति उपमंत्री आर्य युवक समाज दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार)

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

पाठक वृन्द! लेखनी लिखते हुये कांपती है कि २८ नवम्बर १९६४ से होने वाले ईसाइयों के विश्वसम्मेलन में लगभग ४॥ हजार गायों पर चमचमती मशीनें चलाकर भोजनार्थ वध होगा।

ऐ मेरे देश के लोगों! क्या तुम योगिराज महात्मा कृष्ण को भूल गये? क्या तुम महाभारत में शत्रु दल को नष्ट करने वाले महान शस्त्रज्ञ अर्जुन के गांडीव धनुष को भूल गये? आर्यों! विदित होता है कि १९वीं शताब्दी के युगनिर्माता महर्षि दयानन्द सरस्वती को भूल गये? यदि वास्तव में आप कृष्ण के आदर्शों पर चलना चाहते हैं तो कृष्ण तरह येनकेन प्रकारेण आप को गौओं की रक्षा करनी होगी। भारतीय युवको यदि आप को अर्जुन का गांडीव धनुष याद है तो समर-प्राङ्गण में चलकर शत्रुओं को रोक कर विजयी बनो। और यदि महर्षि दयानन्द सरस्वती का स्मरण है तो महर्षि दयानन्द कृत गोकरुणा निधि उठाओ और पालन करो।

माननीय भारतीय प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर जी शास्त्री तथा राष्ट्रपति राधाकृष्णन महोदय! समाचार पत्रों से विदित हुआ है कि भारतीय सरकार बम्बई में होने वाले ईसाइयों के विश्व-सम्मेलन में ८७ लाख रुपया व्यय करेगी। परन्तु भारतीय सरकार के लिये महान लज्जा की बात है। शास्त्री जी गांवों में जाकर देखो बेचारे गरीब कृषकों की क्या अवस्था हो रही है। इधर हमारी भारतीय सरकार जनता के पुरुषार्थ से उपार्जित धन-राशि को ईसाईयों के सम्मेलन में पानी की तरह प्रवाहित करेगी। यह कुकृत्य भारतीय सरकार के लिये महान निन्दनीय है। महान दुःख है कि भारतीय प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर जी शास्त्री तथा राष्ट्रपति राधा कृष्णन् वहां जाकर आशीर्वाद देकर हिन्दू जाति (आर्यजाति) हिंदू धर्म और भारत की स्वतन्त्रता स्थिर रखने में महान घातक सिद्ध होंगे।

शास्त्री जी! रोम के पोप का २६ लाख रुपया गरीब जनता में व्यय करने का मुख्य प्रयोजन यह होगा कि हिन्दुओं को (आर्यों को) हिन्दू धर्म से पतित करके अपने चंगुल में फंसाकर ईसाई पादरी बनाया जाए।

शास्त्री जी! क्या महात्मा गांधी के १९४२ में भारत छोड़ो का नारा भूल गए?

विदित हो महात्मा गांधी ने १९४२ में भारत छोड़ो का नारा सर्वप्रथम बम्बई में ही लगाया था जिस के फलस्वरूप गोरे पादरियों को भारत वसुन्धरा से जाना पड़ा। परन्तु खेद है कि आप जैसे गांधी के पदचिह्न पर चलने वाले उसी बम्बई नगर में ईसाईयों के सम्मेलन में जा कर ८७ लाख रुपया व्यय कर के आशीर्वाद दे कर भारत की जड़ों को खोखला करने में तत्पर हो रहे।

ऐ भारतीय शासन कर्ता! क्या मिस्टर जिन्ना को भूल गये? यदि भारतीय सरकार की यही नीति रही तो—निश्चित रूपेण जिस प्रकार मि. जिन्नाने पाकिस्तान लिया उसी प्रकार आज नहीं तो कल ईसाई पादरी भी भारत में ही ईसा के देश की मांग करेंगे। इस लिये भारतीय सरकार को इस विषय में गहन गवेषणात्मक ढंग से कर विचार विनिमय करना चाहिये।

भारतीय वीरो! भगवान वेद ने कितना सुन्दर कहा कि अहं शत्रुहोऽसानि अर्थात मैं शत्रु हन्ता बनूं। अहं राष्ट्रस्या भी वर्गे निजो भूयासमुत्तमः अर्थात मैं राष्ट्र को स्वतन्त्र कराने में सब से आगे रहूं। सा नो भूमिर्गोष्वप्यन्ने दधातु। अर्थात मातृभूमि हमें बहुत गौवें और अन्न देवे। अतः आप सब का कर्तव्य है कि संभलो और वेद की आज्ञा का पालन करो।

चरित्र निर्माण में भारी रुकावटें नं० ३

ले० श्री पिशोरी लाल जी 'प्रेम' रेणुका जिला सिरमौर (P.H.)

(गतांक से आगे)

सहशिक्षा—महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वति जी सत्यार्थ प्रकाश के तीसरे समुल्लास में लिखते हैं लड़कों और लड़कियों की पाठशाला एक दूसरे से दो कोस दूर होनी चाहिए। उन में जो अध्यापक या अध्यापिकाएं हों अथवा भृत्य आदि हों, कन्याओं की पाठशाला में सब स्त्रियां हों और लड़कों की पाठशाला में सब पुरुष हों। स्त्रियों की पाठशाला में पांच वर्ष का लड़का और पुरुषों की पाठशाला में पांच वर्ष की लड़की भी न जाने पावे।

महर्षि ने ऐसा क्यों लिखा? महर्षि दूरदर्शी थे। वे जानते थे कि जिस देश के लोग ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं वो शक्तिशाली और तेजस्वी होते हैं और जो ब्रह्मचर्य का पालन नहीं करते वे निर्बल और निस्तेज होते हैं। सहशिक्षा के होते हुए ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना कठिन ही नहीं अपितु असम्भव भी है। बड़े २ विद्वान और तपस्वी जबकि काम-वासना में फंस जाते हैं तो साधारण व्यक्ति का क्या कहना और जब चारों ओर से काम वासना को भड़काने वाला वातावरण हो और परस्पर पढ़ने से बातचीत और मेल-मिलाप का अवसर भी सरलता से मिल सकता हो, यौवन की मस्ती हो विवेक बुद्धि कम हो, ऐसी अवस्था में क्या नौजवान युवतियां अपने आपको संभाल सकती हैं? घी को आग के पास रखकर यह आशा रखना कि घी पिघले, यह असंभव है। योरोप वाले तो इसका दुष्परिणाम देख चुके और अब इसके विरोधी हो रहे हैं परन्तु भारतवासी देश का विनाश करने के लिए घृणित योजना का अन्धा-धुन्ध अनुकरण कर रहे हैं। सह-शिक्षा वाले स्कूलों या कालेजों में अपने बच्चों को पढ़ाना जान बूझकर अपनी भोली-भाली मासूम सन्तान को जलती हुई आग में धकेलना है। यदि भारत में सहशिक्षा को शीघ्र बन्द न किया गया तो इसके दुष्परिणाम से देश की सभ्यता एवम् संस्कृति नष्ट होने से बच नहीं सकेगी। अब भी समय है संभलने का (क्रमशः)

आवश्यकता

आर्य अनाथालय फिरोजपुर के लिए बच्चों की निगरानी वास्ते एक सुपरिन्टेंडेंट की और कन्याओं की देखभाल के लिए एक महिला सुपरिन्टेंडेंट की आवश्यकता है वेतन योग्यतानुसार दिया जाएगा। पत्र व्यवहार अधिष्ठाता आर्य अनाथालय फिरोजपुर से करें।

बम्बई की रोमन कैथोलिक ईसाइयों की कानफ्रैंस और हमारा कर्तव्य।

(ले० श्री महात्मा देवी चन्द्र जी M.A. प्रधान वेद प्रचारिणी सभा होशियारपुर)

आठ सौ वर्ष पहले ईसाई पादरियों ने भारत वर्ष में ईसाइयत का प्रचार आरम्भ किया था। लालच, लोभ, जाइज़ व न जाइज़ साधनों से पादरियों ने इतने समय में एक क्रोड़ से भी अधिक हिन्दुओं को भारत वर्ष में ईसाई बना लिया है। निर्धन लोगों में पानी की तरह रुपया बहा कर उनको ईसाई बनाया जाता है। जो धर्म सच्चाई और नियमों के महत्व के नाम से लोगों को आकर्षित नहीं करसकता वह धर्म ऊंचा नहीं हो सकता। वह लोगों के आचरण को ऊंचा नहीं कर सकता। वैदिक धर्म ने अपने फैलाव के लिये कभी भी कमीने साधन प्रयोग नहीं किये जो कि ईसाई पादरी इस्तामाल कर रहे हैं।

सेंट जेवियर, सेंट पाल, और कई विदेशी पादरी भारत वर्ष में आये और उन्होंने निर्धन, अनपढ़ हिन्दुओं को अपने वैदिक धर्म से वंचित किया।

मैक्स मूलर साहिब अपने पत्रों में भारत वर्ष को ईसाई मत स्वीकार करने की रट लगाते रहे हैं। वह वेदों को अंजील, कुरान और जिन्दावस्था से नीचा बयान करते हैं। हर एक पादरी की यही इच्छा है कि समस्त जगत ईसाई हो जाये और शेष सभी मतों का नाश हो जाये। पादरी लोग दिलीलों पर हमारी स्वतन्त्रता के विरुद्ध हैं। नागालैंड में अमरीका और इंगलैंड के पादरी बैठे हैं और नागा लोगों को भारतवर्ष के विरुद्ध उकसाते हैं और एक स्वतन्त्र ईसाई स्टेट भारत में बनानी चाहते हैं। फिजो का पादरी स्काट से घना सम्बन्ध है। इन पादरियों के प्रचार से नागालैंड की चार लाख की आबादी में से ६०% ईसाई बन चुके हैं जिन्होंने हमारी सरकार का नाक में दम में कर दिया है। कतल और लोगों को लूटने की घटनायें वह हुआ करते हैं। पाकिस्तान उनको शस्त्र आदि देता है। हमारी सरकार की नर्म नीति का यही परिणाम है कि नागा लोगों के हौसले बढ़ गये हैं। वह प्रतिदिन अपनी मांगें बढ़ाते जाते हैं और भारत सरकार के साथ समझौता करने के लिए तैयार नहीं हैं।

हमारी सरकार की धर्म निरपेक्ष नीति ने ईसाई पादरियों के हौंसले बढ़ा दिये हैं। अंग्रेजी हकूमत के समय भारत वर्ष में विदेशी पादरियों की संख्या १८०० थी परन्तु इस समय वह संख्या ५२०० है। हमारी सरकार विदेशी पादरियों पर कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाती जितने आना चाहें आ जायें और देश की जनता को ईसाई बना लें। यह बात ठीक नहीं है यदि भारत में ईसाइयों की संख्या बढ़ जाये और हिन्दुओं की संख्या कम हो जाये तो सरकार को एक दिन भयानक राजनैतिक खतरे का सामना करना पड़ेगा। ईसाई लोगों की हमदर्दी इंगलैंड और अमरीका के साथ होगी और उन की बढ़ती हुई संख्या का परिणाम यही हो सकता है।

चीन ने सभी ईसाई पादरियों को अपने देश से निकाल दिया है। पाकिस्तान में भी उन पर प्रतिबन्ध लगाया गया है। परन्तु हमारी सरकार उन पर प्रतिबन्ध लगाना जरूरी नहीं समझता।

दो साल हुए चीन ने भारत वर्ष पर आक्रमण किया उस का देश वासियोंऔर सरकार नेडटकरमुकाबला किया। ५६ क्रोड़ रुपया लोगों ने N.D.F. में दिया। परन्तु जो धार्मिक आक्रमण बम्बई में २८-११-१९६४ को होगा उस की चिन्ता सरकार को नहीं है और न ही देश वासियों को है। स्वकीय आर्य समाजों और हिन्दु धर्म के प्रेमियों के पत्रों में यह सूचनायें छप रही हैं। कि समस्त जगत के रोमन कैथोलिक पादरी तीस हजार की संख्या में बम्बई में कानफ्रैंस कर रहे हैं। यह कानफ्रैंस २८-११-१९६४ से लेकर ६-१२ १९६४ तक रहेगी पांच लाख आदमियों की इस कानफ्रैंस में शामिल होने की आशा है। इस कानफ्रैंस का क्या विषय है सिवाये इसके कि भारत वर्ष को कैसे ईसाई बनाया जाए। जब दूसरे देशों ने इस कानफ्रैंस को करने की आज्ञा नहीं दी थी भारत सरकार ने क्यों दी है। मुझे यह जानकर हैरानी हुई कि हमारे प्रधान राधा कृष्णन जी ने रोमन के पोप पाल को इस कानफ्रैंस में शामिल होने का निमन्त्रण दिया है। जब हमारी सरकार की नीति धर्म निरपेक्ष है तो फिर धार्मिक कामों में क्यों दखल देती है। धर्म निरपेक्ष होने का तो यह मतलब है कि न किसी धर्म की सहायता और न किसी मत का विरोध करे। बम्बई के मेजर ने सौदागरों को लिखा है कि इस कानफ्रैंस को सफल बनाने के लिए हर प्रकार की सहायता दें। सीमिंट की हमारे देश में बहुत कमी है। परन्तु इस कान्फ्रैंस के लिए सात हजार टन सीमिंट हमारी सरकार ने देना स्वीकार किया है। पचास से ज्यादा महमानों को भोजन नहीं दिया जा सकता परन्तु यह कानून कानफ्रैंस पर लागू नहीं होगा। इस कानफ्रैंस पर पचास लाख रुपया व्यय होगा कि ईसाई मत भारत में पहले से भी अधिक ओर से फैलाओ के लिये हमारी सरकार की सहायता की जिम्मेवार होगी। सुना है कि हमारे प्रधान और केंद्रीय मन्त्री भी इस कानफ्रैंस में शामिल होंगे। भारत वर्ष को अधिक जन संख्या का मत हिन्दु धर्म है। यदि हमारी सरकार की ओर से भी किसी तरह की कानफ्रैंस की सहायता दी जायेगी तो हमारी सरकार की नीति धर्म निरपेक्ष नहीं रहेगी। परन्तु Pro-christian होगी। सुना है कि Exchange प्राप्त करने के लिए इस कानफ्रैंस को आज्ञा दी गई है। परन्तु हजारों लोगों का धर्म छिन जाने की हानी को सरकार अनुभव नहीं करती। परन्तु कुछ लाख रुपया Exchange में प्राप्त करने को ज्यादा महत्ता देती है। यह नीति मुझे पसंद नहीं है। कार्डिनल ग्रेशस आर्क बिशप बम्बई में रोम के पोपपाल को बुलाने का प्रयत्न कर रहे हैं।

यह कानफ्रैंस तो जरूर होगी। रुक नहीं सकती परन्तु हमारा धर्म है कि हम इस का विरोध करें। आल इण्डिया दयानन्द साल्वेशन मिशन होश्यारपुर ने इस समय पर अपना कैम्प बम्बई में लगाने का निश्चय किया है। सार्वदेशिक सभा ने भी इस समय पर प्रचार करने का निश्चय किया है। लिटरेचर ईसाई धर्म के सम्बन्ध में ट्रैक्ट आदि बांटे जाएंगे। भोले-भाले लोगों को ईसाई बनने से रोका जाएगा।

स्वतन्त्रता के पश्चात १७ वर्ष में ४४ लाख हिन्दु ईसाई बनाये जा चुके हैं। परन्तु हमारी सरकार और पोलिटीकल नेताओं को इस की कोई चिन्ता नहीं है। बम्बई की प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा ने भी सहायता देनी स्वीकार की है।

(क्रमशः)

आर्य प्रतिनिधि सभा श्रद्धानन्द बाजार अड्डा होशियारपुर में

ईसाई निरोध सम्मेलन

आर्यसमाज ईसाई पादरियों को राष्ट्रघातक बम्बई सम्मेलन का पूरी शक्ति से मुकाबला करेगा

जालन्धर के प्रसिद्ध आर्यनेता श्री जगदेवसिंह जी सिद्धान्ती संसद सदस्य की सिंह गर्जना

जालन्धर ६ नवम्बर आर्य समाज, श्रद्धानन्द बाजार (अड्डा होशियारपुर) में ईसाई निरोध सम्मेलन में आर्यसमाज के महान नेता श्री जगदेवसिंह जी सिद्धांती संसद सदस्य ने प्रबल शब्दों में घोषणा की कि आर्य समाज ईसाई पादरियों के राष्ट्र विरोधी बम्बई सम्मेलन का पूरी शक्ति से मुकाबला करेगा। आपने कहा कि जब कभी देश पर किसी प्रकार का संकट आता है तो आर्यसमाज राष्ट्र रक्षा कार्य में सब से आगे होता है। पंजाब के आर्यसमाज का तो इस प्रकार के कार्य में विशेष हाथ रहता है। इसीलिए आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने पूरी शक्ति के साथ ईसाई प्रचार निरोध आंदोलन आरम्भ कर दिया है। बम्बई में विश्व ईसाई सम्मेलन के अवसर पर लाखों की तादाद में साहित्य हिन्दी, अंग्रेजी और फ्रेंच भाषा में छपवा कर सारे देश में बांटा जायेगा और ईसाई पादरियों के कुचक्रों से देश को सावधान किया जायेगा। भारत के गृहमन्त्री श्री गुलजारीलाल नन्दा ने सभा के अधिकारियों को यह आन्दोलन स्थगित करने की अपील की है किन्तु सभा के प्रधान प्रो० रामसिंह जी और मन्त्री श्री रघुवीरसिंह शास्त्री ने उन्हें स्पष्ट शब्दों में बता दिया है कि ईसाई सम्मेलन से भारत को ईसा स्थान बना कर पुनः पराधीन करने का प्रोग्राम है। इसलिए आर्यसमाज राष्ट्र रक्षा के लिये पीछे कदम नहीं हटा सकता। इंगलैण्ड और अमरीका ने राष्ट्र संघ में जब काश्मीर के विषय में भारत का साथ नहीं दिया, तो इंगलेंड और अमरीका से आने वाले विदेशी पादरी भारत के हितैषी नहीं हो सकते। आपने आर्यसमाज के कार्यकर्त्ताओं से अपील की कि प्रत्येक कार्य-कर्ता को अपने अपने क्षेत्र में ईसाईयों की राष्ट्र विरोधी चालों से जनता को सचेत करना चाहिए। और घर-घर तक आर्यसमाज का साहित्य पहुंचा कर ईसाईपादरियों की नीतियों का खण्डन करना चाहिए।

सम्मेलन में पं० नन्दलाल जी वैदिकमिशनरी और रामलाल गुप्ता सदस्य नगर पालिका ने भी भाषण दिए और एक प्रस्ताव द्वारा मांग की कि ईसाई के विदेशी प्रचार को प्रोत्साहन न दिया जावे और इनको गतिविधियों पर पाबन्दी लगाई जावे। यदि इस अनर्थ को रोका न गया तो भारत में धार्मिक शान्ति भंग होने की भारी आशंका है। जिसका उत्तरदायित्व इस स्थिति में पाप पाल और विदेशी ईसाई पादरियों पर होगा।

—केदार नाथ आर्यकृते रामचन्द्र जावेद सभा उपमन्त्री

प्रेमनगर करनाल का वार्षिक चुनाव

प्रधान—डा० जसवन्त रायजी, उपप्रधान—दीवान सरदारीलालजी, व चौ० जयकिशन जी, मन्त्री—श्री ईश्वरचन्द्र जी सरदाना, खजांची—श्री जगदीशचन्द्र जी,।

—ईश्वरचन्द्र सरदाना मन्त्री समाज

श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री मंत्री आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का नई दिल्ली में प्रेस वक्तव्य

श्री लाल बहादुर शास्त्री ने चौपाटी बम्बई के मैदान में भाषण देते हुए विश्व ईसाई सम्मेलन की वकालत कर जन मानस की भावना को ठेस पहुंचाई है।

प्रधान-मंत्री के इस वक्तव्य से देश में विदेशी पादरियों की अराष्ट्रीय गतिविधियों को निश्चित रूप से बल मिलेगा।

प्रधान-मंत्री का यह वक्तव्य कार्डिनल ग्रेसयास से हुई उनकी ताजा भेंट का परिणाम है। वस्तुतः इस से राष्ट्र को उन अराजक तत्वों को भारी प्रोत्साहन मिला है जो १७ वर्षों से भारत की संस्कृति को मिटाने के लिये और सुरक्षा को दुर्बल करने में लगे हैं।

जनता का संदेह अब और भी दृढ़ हो गया है कि इस ईसाई सम्मेलन की आड़ में भारी षड्यन्त्र छिपा है और इन कूटनीतिक जाल में दुभाग्य से हमारे देश के प्रधान-मंत्री व उच्च अधिकारी भी आगये हैं।

देश में इस विश्व ईसाई सम्मेलन के तीव्र बढ़ते हुये विरोध को देख कर कैथोलिक कांग्रेस के आयोजकों के हाथ पैर फूलने लग रहे हैं। क्योंकि वे अनुभव कर रहे हैं कि बिना सरकारी सहयोग के यह कैथोलिक कांग्रेस एक ढकोसला बन कर रह जायेगी।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

चुनाव

आर्यसमाज मलकागज देहली में पं० गणेशदत्त जी वान प्रस्थी की अध्यक्षता में निम्न चुनाव सम्पन्न हुआ।

प्रधान—श्री सुभाषचन्द्र जी, मन्त्री—श्री रमेशचन्द्र जी, उप-मन्त्री—नरेन्द्रकुमार जी।

—खिरायतीलाल मंत्री आर्यसमाज

आर्य विद्या सभा

डी०ए०वी०कालेज प्रबन्धकर्तृ सभा नई दिल्ली

सूचना

आर्य जनता व संस्कृत-प्रेमियों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि आर्य विद्या सभा सम्बन्धित डी. ए. वी. कालेज प्रबन्धकर्तृ सभा, चित्रगुप्त मार्ग, नई दिल्ली ने अपने गत वार्षिक अधिवेशन में संस्कृत शिक्षा को अपने विद्यालयों में प्रोत्साहित करने के निमित्त (१०००) की राशी आधुनिक वर्ष में व्यय करने की अनुमति प्रदान की थी।

आर्यसमाजों, संस्थाओं व अन्य सभी सज्जनों से जो इस विषय में रुचि रखते हों, सानुरोध प्रार्थनाकी जाती है कि वह शीघ्रातिशीघ्र अपने-अपने क्षेत्र में विचार करने के उपरान्त अपनी शिक्षा संस्थाओं में संस्कृत शिक्षा के प्रोत्साहनार्थ अपने सुझाव व योजनाएं भेजने की कृपा करें, आपके सहयोग से ही सभा अपने इस ध्येय में सफल होने की आशा कर सकती है।

—देवराज महाजन एजुकेशनल एडवाईजर आर्य विद्या सभा

'आदर्श विवाह'

साधारणतया आदर्श विवाह उसे कहते हैं जो वैदिक रीति से हो। परन्तु वैदिक विचार पद्धति इतनी लोक प्रिय हो चुकी है-कि कई लोग आर्य समाजी न होते हुए भी वैदिक रीति से ही विवाह संस्कार कराना अच्छा समझते हैं। इस लिए केवल वैदिक रीति से विवाह संस्कार का होना और इस के साथ हर प्रकार का आडम्बर फिजूल खर्ची और दिखावे का होना (जैसे बहुत ज्यादा बिजली चांदनियां, कनात, फर्नीचर, कराकरी, बैंड, बाजे, गैस, मोकिया, आतिशबाजी, नाच आदि पर हजारों रुपए केवल मात्र दिखावे के लिए फूंक देना) इसे आदर्श विवाह नहीं कहा जा सकता। हजारों रुपए का दहेज ले लेना भी आदर्श विवाह नहीं है। आदर्श विवाह कैसे होना चाहिए। इसकी एक झांकी मैं पाठकों के सम्मुख रखना चाहता हूं।

११.१०.६४ को दिन के २ बजे आर्य समाज पंजाबी मुहल्ला अम्बाला छावनी में महाशय दीवान चन्द जी की दोहती श्री पिशोरी लाल जी 'प्रेम' की सुपुत्री कुमारी वीर बाला आर्या का शुभ विवाह देहली के श्री आर. राय के सुपुत्र चिरञ्जीव श्री सुख देव जी के साथ पूर्ण वैदिक रीति से हुआ। कोई आडम्बर नहीं, दिखावा नहीं, फिजूल खर्ची नहीं, दोनों पक्षों के स्त्री पुरुष इस प्रकार आर्य समाज में आए जिस प्रकार समाज के सत्संग में अथवा किसी उत्सव में आते हैं। वर पक्ष वाले भी बारात के रूप में बैंड बाजों के साथ सज धज कर नहीं आए। वैसे ही साधारण रूप में कार में बैठ कर आ गए कन्या पक्ष वालों ने वेद मन्त्रों से उनका स्वागत किया औ

विवाह संस्कार आरम्भ हो गया। अम्बाला छावनी की पांचों आर्य समाजों के सभासद स्त्री पुरुष अथवा और भी सैंकड़ो प्रतिष्ठित लोग उस समय उपस्थित थे। जैसे कि आर्य समाज का कोई उत्सव हो रहा हो। इस शुभ अवसर पर आर्य केन्द्रिय सभा दिल्ली के मन्त्री श्री रामनाथ जी ने अपने संक्षेप से भाषण में कहा :—यदि हमारा समाज इस पुकार सादगी से विवाह संस्कार ...ी हमारे बहुत से कष्ट क्लेश दूर हो सकते हैं। कन्याओं के विवाह की चिन्ता जो-कि हमें दिन रात खाए जा रही है उस चिन्ता से भी मुक्त हो सकते हैं। समाज में जो भ्रष्टाचार बढ़ रहा है वो भी कम हो सकता है। हम अपनी सन्तान को ऊंची शिक्षा भी दे सकते हैं।

विवाह संस्कार की समाप्ति पर उपस्थित स्त्री पुरुषों का साधारण चाय द्वारा सत्कार किया गया। और वर वधू आदि को कार में बिठाकर विदा किया गया। इस विवाह में पहली बात यह थी—कि ये विवाह बिल्कुल सादगी से सम्पन्न हुआ। दूसरी बात यह—कि वर पक्ष वालों ने कोई दहेज नहीं लिया उन्होंने पहले से ही यह कह दिया था—कि हम कोई भी चीज दहेज में नहीं लेंगे। इस प्रकार बिना दहेज लिए वर पक्ष वाले सैंकड़ों प्रतिष्ठित स्त्री पुरुषों की उपस्थिति में अति सम्मान, प्रतिष्ठा, प्रसन्नता और स्वाभिमान के साथ विदा हुए। जनता ने इस आदर्श विवाह की बहुत प्रशंसा की। सारे नगर में इस विवाह की धूम मची हुई है।

रमेश चन्द्र मन्त्री आर्यसमाज
पंजाबी मुहल्ला
अम्बाला छावनी

नेहरू जी की स्मृति में

(ले०—श्री राममूर्ति जी कालिया, एम.ए., नई दिल्ली)

देश प्रेम से सना हृदय, छिप कहां गया है?
परहित में रत शांति दूत, चल कहां दिया है?
नेतृत्व छोड़ दुनिया से, तुम रूठे क्यों कर,
इतना प्रेम दिया जन को, औ किस ने लिया है?

(२)

आज धरती का कण कण फिर तुम्हें पुकारे,
नन्हें मुन्नों को सचमुच नेहरू के प्यारे।
युवकों के हृदय गगन के थे तुम तारे,
दलितों, क्षुधितों के तुम केवल एक सहारे।

(३)

भारत मां की चाह तुम्हें फिर गोद उठावे,
कह कर अपना लाल, तुम्हें फिर से दुलरावे।
संभालो छोटो बन्दुक, निज टोपी पहनो,
बड़े बनो फिर बोलो, "भाइयो और बहनो"

(४)

मूक चाह में छिपी हुई जन जन की वाणी,
कल कल करते याद तुम्हें भारत के पानी।
लिये लालिमा लाल फूल औ लाल किला भी,
करने को तैयार खड़े तेरी अवगानी॥

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा को वेद प्रचारार्थधन

धर्मशाला (कांगड़ा) १०१/-
खाडा खेड़ी (हिसार) २६/-
पट्टी (अमृतसर) १५०/-
ला० अनन्तराम जी नरवाणा १००/-
ला. वेदप्रकाश जी धनौला (संगरूर) १००/-
ला. दयाकिशन राम स्वरूप (हिसार) ६०/-
श्री रामकरण जी उचाना मंडी ७७/-
मोहनलाल जी आर्य बड़ोदा ११/-
श्री देसराज जी ठेकेदार कादियां १०/-
श्री वजीर चन्द्र जी महेन्द्र c/o वेद प्रकाश जी मलहोत्रा १०/-
डा. नरेन्द्रनाथ लखनपाल जी मुकेरियां २५/-
वैद्य विद्यासागरजी (अमृतसर) ५३/-
श्री प्रभु दयाल जी प्रभाकर (पौली) २५/-
जगदीश मित्र जी आर्य (रोहतक) २२५/-
प्रो० सत्यदेव जी (जालन्धर) १०/-

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मासिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टैलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे 20 11-64 वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक ४६) ८ मार्गशीर्ष २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०— २२ नवम्बर १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

देवं राध जनानाम्

वह परमेश्वर सारे जनानाम्—लोगों का राधः—पूजा और आराधना के योग्य है उसी देव को—देवों के देव महादेव की ही उपासना आराधना करो—पूजा करो। उसके स्थान पर किसी और को न पूजो।

संभक्तेन गमेमहि

हम सब भक्तेन—भजने के योग्य उस भगवान् की संगति में बैठें, चलें तथा उसी के आदेश पर चलते रहें। वह पिता है और हम उसके बच्चे हैं। उसीका भजन करें उसी के उपासक बनकर लाभ उठावें।

रथं समनसा नियच्छतम्

हे लोगो! आपने इस शरीर के रथ को मन के साथ रोको! अपनी इन्द्रियों को वश में करो। इनके दास मत बनो। इधर-उधर मत घूमने दो। सारा रथ वश में करके सुमार्ग पर चलाते रहो

सा म वे द से

वे दा मृ त

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यं दधद्रयिं मयि पोषं स्वाहा॥ इदमग्नये पवमानाय इदन्न मम॥ ऋक् मंडल ९ सूक्त ६६ मं० २१

अर्थ—हे सब के आधार (भुवः) दुःखनाशक (स्वः) सुखमय भगवन! हे (अग्ने) अग्निदेव परमेश्वर! आप कृपा करके (पवस्व) पवित्र करें (स्वपाः) आप सब के पालने वाले हो (अस्मे) हमारे लिए (वर्चः) वर्चस तेज तथा (सुवीर्यं) उत्तमशक्ति बल (दधत) धारण करायें प्रदान करें तथा (रयिम्) उत्तम धन ऐश्वर्य (मयि) मेरे में (पोषम्) पोषण शक्ति को भी दीजिए। हमें धन दौलत, बल शक्ति, वर्चस तेज तथा स्वस्थ व पुष्ट करने वाली शक्ति प्रदान करें। आप ही तो इन के प्रदाता हो। इन से मालामाल कर दो।

भावः—हे देव! अनन्त दानी भगवन! प्रकाशमय अग्निदेव! कृपा करो। आप सदा पवित्र हो। सब को पवित्र करनेहारे हो। आपकी कृपा से हम सब पवित्र बन जावें। जो भी हमारे जीवन में मलिनता है उसे दूर कर देवें। हमें उत्तम तेज प्रदान करें, हम तेजस्वी वर्चस्वी बनें। आपकी दया से हम जीवन में काम आने वाले धन वैभव आदि उत्तम ऐश्वर्य से मालामाल हो जावें। हमारा शरीर सदा स्वस्थ पुष्ट हो। हम शक्तिशाली बनें। यह सब आपकी कृपा से ही मिल सकता है। आपकी वस्तु आपके अर्पण ही है—सं०

ऋषि दर्शन

नमस्कर्तुं योग्योऽस्ति

वही भगवान् ही नमस्कार योग्य है। लोग भोले बन कर इधर-उधर ईंट पत्थरों की बनी वस्तुओं के सामने मनुष्य होकर भी मस्तक झुकाते हैं। केवल प्रभु को ही नमस्कार करना चाहिए।

सर्वस्य जगतोऽधिराजा

वह भगवान् इस सारे जगत का जड़ हो या चेतन, का राजा है स्वामी है। सर्वव्यापक हो रहा है। उसका नियम सर्वत्र चलता है। उसकी महिमा का हर स्थान पर दर्शन हो रहा है।

ऐश्वर्यस्य दातासि

हे महान् देव! आप ही हमें सारा ऐश्वर्य का भण्डार प्रदान करने हो हमें हर प्रकार की वस्तुएं देते हो। आप इन्द्र हो यह सारा राज्य आपका ही तो है। इसके दाता मालिक आप ही हो।

भा ष्य भू मि का से

अधिष्ठाता—श्री संतोषराज सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

धार्मिक चर्चा—

ब्रह्मयज्ञ प्रसारक महर्षि दयानन्द की जय

(ले०—श्री पिन्डो दास जी, ज्ञानी आर्यसमाज लोहगढ़ अमृतसर)

इससे पूर्व का भाग ८-११-६४ के अंक में पढ़ें

✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱

(गतांक से आगे)

इसी प्रकार सूर्य्य के होते होते जो सायं सन्ध्या की जाय, वह उत्तम सूर्य्यास्त पर मध्यम और तारों के उदय होने पर कनिष्ठ-सायं सन्ध्या के ये तीन भेद हैं।

अब वाल्मीकीय रामायण के कुछेक प्रमाण देखिये।

ऋषि विश्वामित्र यज्ञ रक्षार्थ राम-लक्ष्मण को अपने आश्रम की ओर ले चले। मार्ग में सरयू-गंगा संगम पर रात काटी। प्रातः काल उठ कर राम को सम्बोधन कर के बोले—

१७. कौसल्या सुप्रजा राम पूर्वा सन्ध्या प्रवर्तते, उत्तिष्ठ नर शार्दूल कर्त्तव्यं दैवमाह्निकम्

बाल काण्ड अध्याय २३ श्लोक २

अर्थात्—हे कौसल्या के अच्छे बच्चे! पूर्व कालिक सन्ध्या का समय हो गया है। हे पुरुष सिंह! उठ और दैनिक कृत्यों का अनुष्ठान कर।

१८. तस्यर्षे परमोदारं वचः श्रुत्वा नरोत्तमौ स्नात्वा कृतोदकौ वीरौ जेपतुः परम जापः

बाल० २३-३

अर्थात्—उस परमोदार ऋषि विश्वामित्र के वचनों को सुनकर दोनों उत्तम पुरुष—राम तथा लक्ष्मण—ने स्नान किया और परम जप (ओं) का जाप किया।

ऋषि विश्वा मित्र ने कहा—

१९. इहवासः परोऽस्माकं सुखं वत्स्यामहे निशाम्। स्नाताश्च कृतजप्याश्च हुत हव्या नरोत्तम॥

बाल० २३-१७

अर्थात्—यहां हम रात भर परम सुख पूर्वक निवास करेंगे (और प्रातः) स्नान कर के जप करेंगे और तत्पश्चात् हवन यज्ञ का अनुष्ठान करेंगे।

तत्पश्चात् गंगा पार हो कर

२०. ततः प्रभाते विमले कृताह्निकमरिन्दमौ।

बाल० २४-१

अर्थात्—तब विमल प्रभात होने पर दोनों निष्पाप—राम लक्ष्मण—ने दैनिक कृत्यों—(सन्ध्या, हवन आदि) का अनुष्ठान किया मार्ग में राम-लक्ष्मण को इतिहास कथा सुनाते ऋषि विश्वामित्र जा रहे थे कि आश्रम वासी तपस्वियों ने उनका आगमन देख कर, तीनों का आतिथ्य किया। तब

२१. सत्कारं स मनुप्राप्य कथाभिरभिरंजयन् यथार्हं मजपन् सन्ध्यामृषयते समाहितः॥

बाल० २४-२०½

अर्थात्—यथोचित सत्कार कर के उन मुनियों ने अतिथियों का भान्ति भान्ति की कथा-वार्ताओं द्वारा मनोरंजन किया। फिर उन महर्षियों ने एकाग्रचित्त हो कर यथावत् सन्ध्या वन्दन एवं जप किया।

जब आश्रम में पहुंच कर विश्वामित्र ने यज्ञ की दीक्षा ले ली। तब श्री राम और लक्ष्मण ने प्रभात वेला में...

२२. प्रभात काले चोत्थाय पूर्वां सन्ध्यामुपास्य च

बाल० २९-३१

अर्थात्—श्री राम लक्ष्मण ने प्रभात समय उठ कर प्रातः काल की पूर्वा सन्ध्या का अनुष्ठान किया

तत्पश्चात् अग्नि होत्र करने के लिये बैठे हुए विश्वामित्र को नमस्कार किया।

शोणभद्र नदी को पार कर के विश्वामित्र आदि ने गंगा जी के तट पर रात्रिवास किया। जब रात बीती और प्रभात हुआ, तब वह श्री राम से इस प्रकार बोले—

२४. सुप्रभाता निशा राम पूर्वा सन्ध्या प्रवर्तते उत्तिष्ठोत्तिष्ठ भद्रं ते गमनायाभि रोचय॥

बाल० ३५-२

अर्थात्—श्री राम! रात बीत गई। सवेरा हो गया। तुम्हारा कल्याण हो, उठो और चलने की तैयारी करो।

२५. तच्छ्रुत्वा वचनं तस्य कृत पूर्वाह्णिक क्रियः गमनं रोचयामास वाक्य चेदमुवाच ह॥

बाल० ३५-३

अर्थात्—मुनि की बात सुन कर पूर्वाह्न काल की क्रिया—सन्ध्या वन्दन आदि—पूर्ण कर के श्री राम चलने को तैयार हो गये और इस प्रकार बोले आगे जाकर हंसो तथा सारसों से सेवित पुण्य सलिला भागीरथी का दर्शन करके श्रीराम जी के साथ समस्त मुनि बहुत प्रसन्न हुए। वहां स्नानादि करके।

२६. हुत्वा चैवाग्नि होत्राणि प्राश्य चामृतवद्धविः। विविशुर्जाह्नवी तीरे शुभा मुदित मानसाः॥

बाल० ३५-१०

अर्थात्—अग्निहोत्र करके अमृत तुल मीठे हविष्य का भोजन किया। तदनन्तर वे सभी कल्याणकारी महर्षियों ने प्रसन्न चित्त होकर गंगा जी के तट पर डेरे डाल दिये।

विश्वामित्र ने श्री राम को गंगावतरण की कथा सुनाई और कहा कि महाराज भगीरथ वापस अपने नगर को लौटे। प्रजा प्रसन्न हुई। यह कह कर विश्वामित्र मुनि ने कहा—

२७. एष ते राम गङ्गाया विस्तरोऽभिहितो मया। स्वस्ति प्राप्नुहि भद्रं ते सन्ध्या कालोऽति वर्तते॥

बाल० ४४-२०

अर्थात्—श्री राम! यह गंगा की कथा मैंने तुम्हें विस्तार के साथ सुनाई है। तुम्हारा कल्याण हो। अब जाओ, मंगलमय सन्ध्या वन्दन आदि का सम्पादन करो। देखो सन्ध्या काल बीता जा रहा है।

गंगावतरण की कथा सुनकर श्री राम-लक्ष्मण की वह रात इस अद्भुत कथा पर विचार करते ही व्यतीत हुई। तत्पश्चात्

२८. ततः प्रभाते विमले विश्वामित्रं तपोधनम्
उवाच राघवो वाक्यं कृताह्निक मरिंदम॥

बाल० ४५. ५.

अर्थात्—निर्मल प्रभात होने तपोधन विश्वामित्र जी जब सन्ध्या वन्दन आदि नित्य कर्म से निवृत्त हो चुके तब शत्रु दमन श्री राम ने उनके पास जाकर कहा—

श्री राम वन को गए। पुरवास भी साथ चले। पिता की आज्ञा का स्मरण करते हुए भगवान राम चले जा रहे थे।

आर्यसमाज गोविन्दनगर, कानपुर

आर्यजगत् को सूचित किया जाता है कि श्री देवीदासजी श्री जाति भूषण जी. श्री द्वारिका नाथ जी, तथा श्री कोषराज जी को आर्य-समाज के अधिकारियों के विरुद्ध मिथ्या प्रचार करने, अनियमित तथा अवैधानिक कार्य करने और आर्यसमाजों में वैमनस्य फैलाने के कारण आर्यसमाज की सदस्यता से ५ वर्ष के लिए पृथक कर दिए गये हैं।

भवदीय :—मोहनलाल मन्त्री

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२१, २२ नवम्बर १९६४ [अंक ४६

क्या आप जानते हैं ?

कि इसी मास नवम्बर की तारीख २८ से ले कर ६ दिसम्बर तक बम्बई में सारे राष्ट्रों के कैथोलिक ईसाईयों का एक विश्व सम्मेलन होने जा रहा है। उस में लगभग तीस हजार ईसाई पादरी सारे देशों से इकट्ठे हो रहे हैं। हमारे भारत की सरकार अपने आप को धर्म निरपेक्ष कहती है, पर इस साम्प्रदायिक सम्मेलन के लिए बड़ी २ सुविधाएं दे रही है। इस ईसाई सम्मेलन के समाचार से सारे हिन्दु समाज में एक तहलका सा मच गया है। पोप पाल जी शामिल हो रहे हैं। हथियार के प्रहार की अपेक्षा विचारों की मार भयानक होती है। ईसाई मत का प्रचार जिस भी किसी देश में हुआ, वहां पहिले पादरी मिशनरी दल के दल बन कर गये! उस के बाद उस राष्ट्र की जनता को मत परिवर्तन की तारों में जकड़ते गए। भारतीय हिन्दुसमाज की निर्धनता, सरलता से दूसरों ने अनुचित लाभ उठाया। इस का प्रमाण सरकार की ओर से नियत किए जांच कमीशनों से भली भान्ति मिल जाता है। ईसाई लोग लाखों नहीं करोड़ों रुपये पानी की तरह बहा देते हैं। अब भी हिन्दु समाज को ईसाइ बनाने के लिए विदेशों से करोड़ों रुपया तथा अन्य सामान आता है। ईसाई लोग अपने धन के जोर से भोले लोगों को अपने जाल में फंसाते हैं। हिन्दु समाज व्यक्तिगत जीवन के लिए तो सोचता है पर समाज के रूप में वह बहुत कम विचारता है यहां तो ब्रह्माकुमारी मत, आनन्द पुरी मत, राधास्वा. मत या अन्य पौराणिक पन्थ के लोगों के सामने अपने मत को फैलाने के लिए ही विचार है। उन को इस बात की चिन्ता नहीं कि राम भक्तों के टोले का बन क्या रहा है? पौराणिक पण्डित भी आर्यसमाज को कोसने में ही अपनी उदरपूर्ति समझते हैं। उनकी जाने बाला कि बम्बई में कितना भयानक विचारों का वह आक्रमण होने लगा है। उनका धन गंगा या प्रयाग के स्नान में ही लगता है। अथवा पहाड़ों पर देवी देवों के धामों पर जाकर खीर-पूड़ी खाने खिलाने में ही लग रहा है। उनको ऐसे-ऐसे विचारों के आक्रमणों की चिन्ता ही नहीं है। वे जाति से बाहिर निकालना तो जानते हैं पर मिलाना पाप समझते हैं नहीं तो भारत की यह दुर्दशा न होती। राम लीला व रासलीला तथा ऐसे वैसे कामों में पैसा बहाने में धर्म समझते हैं। इस बात ने जाति को किस अवस्था पर पहुँचा दिया। सबके सामने है। राजनैतिक दल भी अपनी-अपनी राजनीति की खिचड़ी दलिया पकाने में ही रात-दिन लगे रहते हैं। उनका धर्म तो आजकल वोट और नोट बन गया है।

ऐसी विषम अवस्था में आर्य भाईयो और बहिनो! आपके सिवाय और कौन है जो इस मोर्चे पर अपने आपको प्रस्तुत कर सकता है हमें प्रसन्नता है कि आर्यसमाज जागकर इस दिशा में सारी जनता को भी जगाने के काम में लग गया है। बम्बई में भी हलचल है। इस अवसर पर लाखों की संख्या में ट्रैक्ट प्रकाशित करके ईसाईयों में बांटने होंगे अंगरेजी, हिन्दी आदि नाना भाषाओं में ट्रैक्ट प्रकाशित होने चाहिएं। इस सम्मेलन में बाहर से आने वाले ईसाईयों को भारतीय सन्देश देने के लिए भारी प्रयत्न किया जाए। वेद का सुन्दर सन्देश उनके मनों पर अंकित किया जाए संगठित प्रयत्न होना चाहिए। सभा इस काम में प्रयत्नशील है इसकी बड़ी प्रसन्नता है। आर्य-प्रादेशिक सभा पंजाब जालन्धर की ओर से भी इस दिशा में बड़ा सुन्दर काम हो रहा है। प्रत्येक नर-नारी, समाज, संस्था, परिवार तथा व्यक्ति का कर्तव्य है कि दिल खोलकर इस धर्म यज्ञ में सभा को अपनी आहुति दें ताकि सभा इस ईसाई सम्मेलन के समय वेद का सच्चा सन्देश विधर्मियों को दे सके। —त्रिलोकचन्द्र

आर्यसमाज और सदाचारसमिति

भारतीय जनता में व्यापक नानाक्षेत्रों के भ्रष्टाचार को दूर करने के लिए माननीय गृहमन्त्री श्री नन्दा जी द्वारा सदाचार समिति का निर्माण किया गया ताकि इस के द्वारा जनता में सदाचार का वातावरण पैदा किया जा सके। विचार बड़ा शुभ है। इस में राष्ट्र का कल्याण भी है। प्रत्येक प्रान्त में इस समिति की प्रांतीय शाखा का गठन किया गया है। पंजाब में इस के नेता प्रांत के पूर्व मुख्य मन्त्री तथा उसके बाद आन्ध्र प्रांत के गवर्नर श्री भीमसेन जी सच्चर नियत किए गए हैं। श्री सच्चर जी पुराने अनुभवी नेता हैं। उनका जीवन कार्य सब से प्रशंसा प्राप्त करता रहा है। उनके बारे में किसी समय भी कोई बात नहीं सुनने को मिली। पंजाब में इस समय समिति को उपयुक्त नेता ही मिला है। समिति के सामने कार्य भी तो बड़ा भारी है। आज जीवन का हर पहलू दूषित हो गया है। सर्वत्र मिलावट व भ्रष्टाचार का प्रखर प्रवाह चल रहा है। रोग भयानक बन गया है। भ्रष्टाचार जड़ें पकड़ चुका है। इस के लिए बड़ा भारी परिश्रम करना पड़ेगा। यदि मान्यवर श्री सच्चर जी ने इस उत्तरदायित्व को सम्भाला है तो उन्हें इस में लग जाना पड़ेगा। भारत सरकार उन्हें लंका का दूत बना कर भेज रही है। फिर सदाचार समिति का काम कैसे चलेगा। इतने महान काम को तो श्री सच्चर जैसे महान व्यक्तित्व वाले नेता ही कर सकते हैं। उनके लंका चले जाने पर आशाएं धूमिल हो जायेंगी। बाकी समितियों की भान्ति यह समिति भी कागजों में या कभी २ समाचार-पत्रों में ही रह जायगी। काम लिया है तो करना ही होगा। इस से प्रांत का बड़ा कल्याण होगा।

आर्यसमाज तो एक सर्वांगीण व विशाल आंदोलन है। इस में जीवन निर्माण तथा विश्व सुधार का प्रत्येक पहलू आजाता है। यह समाज स्वयं ही सदाचार समिति है जिसका प्रत्येक सदाचार की आज भी सजीव प्रतीक है। फिर भी राष्ट्र के जीवन को सुन्दर बनाने के लिए जो सदाचार समिति गठित की गई है। हम पंजाब के आर्यसमाज से निवेदन करना चाहते हैं कि उन का प्रत्येक घटक, संस्था तथा परिवार पूर्ण रूप और पूरी शक्ति से सदाचार समिति को सहयोग देवे ताकि राष्ट्र का जीवन शुद्ध पवित्र बन सके।

त्रिलोक चन्द्र

आर्यसमाज के रहते ईसाई षड्यन्त्र सफल नहीं हो सकता

(ले०—श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी की घोषणा)

नई दिल्ली १७ नवम्बर—पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती ने गतदिवस आर्यसमाज अनारकली (रीडिंग रोड) नई दिल्ली के वार्षिक उत्सव पर आयोजित विराट ईसाई विरोध सम्मेलन के अध्यक्षपद से भाषण देते हुए घोषणा की कि आर्यसमाज के होते हुए ईसाइयों के षड्यन्त्र सफल नहीं हो सकते। उन्होंने कहा कि स्वयं महात्मा गांधी ने अपने पत्र 'यंग इंडिया' में भी ईसाई प्रचार का कड़ा विरोध किया था।

इस अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मन्त्री श्री रघुवीरसिंह शास्त्री ने कहा कि हमारा दृढ़ संकल्प है कि हम प्रत्येक मूल्य पर इन विदेशी पादरियों से देश की रक्षा करेंगे। सभा ने बम्बई म ईसाई सम्मेलन पर हिन्दी अंगरेजी फ्रेंच आदि भाषाओं में साहित्य प्रकाशित करके भारी संख्या में वितरण करने की पूर्ण तैयारी कर ली है। सभा की तरफ से संचालित अराष्ट्रीय ईसाई प्रचार निरोध समिति के संयोजक प० आरतेन्द्रनाथ साहित्यालंकार ने घोषणा की कि बम्बई में हो रहे ईसाई सम्मेलन में पधार रहे पोपाल के नाम रजिस्टर्ड पत्र द्वारा सभा की ओर से ३६ प्रश्नों को उत्तरार्थ भेज दिया गया है और साथ ही उन्हें शास्त्रार्थ के लिए खुला चैलेंज दे दिया गया है। उन्होंने कहा कि प्रत्येक नागरिक को पूर्ण शक्ति के साथ इस राष्ट्र घातक सम्मेलन को असफल बनाने में सभा को तन, मन, धन, से पूर्ण सहयोग देना चाहिए। आदेशिक सभा के प्रधान श्रि० रलाराम जी ने कहा कि ईसाइयों की सफलता का कारण हमारी सामाजिक त्रुटियां हैं। उन्हें दूर करना चाहिए। सम्मेलन में खूब जोश था। आर्यसमाज के नेताओं द्वारा पोप को भेजे गए चैलेंज का तालियों से स्वागत किया। इस अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की ओर से ईसाईनिरोध प्रचार सम्बन्धी ट्रैक्ट वितरित किए गए।

आर्य प्रादेशिक सभा का महत्व पूर्ण प्रस्ताव

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा की अंतरंग सभा में १३.११.६४ को निम्न प्रस्ताव पास हुआ।

ईसाइयों की ओर से बम्बई में होने वाले सम्मेलन पर विचार हुआ तथा निश्चय हुआ कि सार्वदेशिक सभा से प्रार्थना की जाए कि इस के बारे में यथोचित कार्यवाही करे। सार्वदेशिक सभा प्रादेशिक सभा से जिस प्रकार की भी सहायता मांगेगी वह दी जाएगी।

सभी की ओर से हर समाज को आदेश पत्र भेजे जाए कि वह २६.११.६४ को इस तरह का प्रस्ताव पास करें 'कि सार्वदेशिक सभा सम्मेलन को शास्त्रार्थ के लिए आवाहन करे और इस का पूरा २ प्रबंध करें।

ज्ञानचन्द भाटिया
मंत्री सभा

२८ नवम्बर से ६ दिसम्बर तक अराष्ट्रीय ईसाई-प्रचार निरोध सप्ताह मनायें।

आर्य नेता श्री रघवीरसिंह शास्त्री, मंत्री आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की अपील।

भारत में विदेशी पादरियों के षड्यन्त्र समाप्त करने के लिये देश की जनता जाग उठी है। २८ नवम्बर से ६ दिसम्बर तक बम्बई में होने वाले विश्व ईसाई सम्मेलन के दुष्परिणामों से सभी राष्ट्रीय नागरिक चिंतित हैं और सरकार द्वारा की गई इस ऐतिहासिक भूल का परिष्कार करने के लिये उपाय सोच रहे हैं।

आर्य समाज द्वारा सभी से ६ दिसम्बर तक अराष्ट्रीय ईसाई प्रचार निरोध सप्ताह मनाने की प्रार्थना की गई है। इस पूरे सप्ताह में देश की जनता को इस खतरे से परिचित कराने के लिये जलस प्रभात फेरियों,आदि का आयोजन किया जाना चाहिये जन सभायें कर के मांग करनी चाहिये कि विदेशी पादरी भारत छोड़ें और सरकार अपने गुप्तचर विभाग द्वारा इन की जांच कराये।

सप्ताह की सफलता के लिये पोस्टर-इश्तिहार व अन्य आवश्यक सामग्री सर्वत्र भेजी जा रही है। जिन्हें अधिक की आवश्यकता हो वे (बिना मूल्य) पत्र लिख कर ईसाई निरोध कार्यालय आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, १५ हनुमान रोड़ नई दिल्ली से मंगा सकते हैं।

सभा की ओर से ४ ट्रैक्ट अंग्रेजी में और ४ हिन्दी में तैयार हो चुके हैं। अमर शहीद श्रद्धेय श्री स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा लिखित ३६ प्रश्न भी छप कर तैयार हैं। संसार का बड़े से बड़ा पादरी भी महान नेता के इन प्रश्नों का उत्तर देने का साहस नहीं रखता है। यह सभी ट्रैक्ट भी सभा कार्यालय से बम्बई में बांटे जा रहे हैं।

समय की मांग और कर्तव्य की पुकार है कि देश की जनता, राष्ट्र विरोधी षड्यन्त्रकारी विदेशी पादरियोंको देश से निकालने के लिये आर्य समाज के नेतृत्व में खड़ी हो जाये।

हमारा अभियान तब तक जारी रहेगा जब तक भारत में विदेशी पादरियों के षड्यन्त्र रहेंगे।

आर्य प्रादेशिक सभा की विशेष सूचना

अंतरंग सभा के तारीख १३.११.६४ के अनुसार सभा का साधारण वार्षिक अधिवेशन ३१.१.६५ को होना निश्चित हुआ है समाजों से प्रार्थना है कि वे अपना दशांश ३१.१२.६४ तक सभा कार्यालय में भेजने की कृपा करें। इस तिथि तक जिन समाजों का दशांश नहीं प्राप्त होगा उन के प्रतिनिधियों को अधिवेशन में सम्मलित होने की आज्ञा नहीं होगी।

मंत्री—सभा

आवश्यकता

चोट पर नमक

लेखक—श्री सत्यवीर जी शास्त्री शोलापुर

संस्कृत में एक कहावत है विद्वद्-जन: विजानाति विद्वद्‌जन परीश्रम: । विद्वान ही विद्वानों के परीश्रमों को जानते हैं । विद्वान बनने के लिए कितनी तपस्या करनी पड़ती है कितना विनम्र होना चाहिएं, कितनी धारणाशक्ति की आवश्यकता होती है, वे ही जान सकते हैं जो विद्वान बने हों ।

ठीक उसी प्रकार चोट लगी हो और उस पर कदाचित नमक गिर गया तो कितना दर्द होता है इसका अनुभव स्वयं चोट वाला ही कर सकता है या जिसे अनुभव हो वही जान सकता है ।

क्या यही स्थिति मेरे दक्षिण की नहीं है क्या ? है कैसे ?

निर्लोभी संन्यासी स्वामी सुरेन्द्रानन्द जी का आगमन सोलापुर में गर्मी के साथ-साथ ग्रीष्म ऋतु के प्रारम्भ में एप्रल मास में हुआ । सोलापुर के निवासियों को उन्होंने अपनी निर्भयवाणी से वैदिक धर्म के प्रति ललकारा । जीवन का सन्देश दिया । वेद के प्रमाण दिए । त्याग का धैर्य दिया । निर्भयता का वरदान दिया ।

बहुत दिनों से एक लगन स्वामी जी को सता रही थी एक बार दक्षिण का दौरा कर आऊं न जाने पंजाब में रहते हुए कई बार उन्होंने इच्छा प्रकट की थी । परन्तु समय के साथ ही कार्य पूरा होता है और वह उनकी चिराभिलाषा एक बार पूर्ण हुई । शोलापुर से मई मास में दौरा आरम्भ किया और सितम्बर मास में फिर से शोलापुर आकर समाप्त किया । स्थान स्थान के दृश्य, नगर नगर की विशेषताएं, मन्दिर मन्दिर की विविधताएं, पुजारियों की नवीनताएं आदि सब कुछ देखा ।

स्वामी सुरेन्द्रानन्द जी एक निर्भीक संन्यासी हैं । धन का लोभ तो लेशमात्र भी नहीं है, यही कारण है कि शोलापुर से बंगलोर मदुरा, रामेश्वरम्, त्रिवेन्द्रम्, मैंगलोर मद्रास आदि की सफर स्वयं खर्चा करते हुए की, वैदिक दृष्टि से सम्पूर्ण स्थानों का निरीक्षण किया और अन्त में इस निर्णय पर पहुंचे ।

पंजाब के उत्सवों एवं जलूसों को देखते हुए विदित होता था कि विश्व ही आर्य समाज बन गया हो । थोड़ी देर के लिए "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" का नारा पूर्ण हो गया सा प्रतीत होता था, किन्तु दक्षिण को देखते हुए यह विचार स्वप्नसा नष्ट हो गया । यहां तक की दक्षिण के लोग रामकृष्ण से प्रतिदिन विमुख हो रहे हैं । फिर वेद की बात तो दूर ही रही । स्वामी जी को बड़ा ही आश्चर्य हुआ जब उन्होंने देखा कि समुद्र किनारों में बसने वाले हजारों मछुवों के गलों में ईसाईयत का चिन्ह लटक रहा है । उनके लिए सब कुछ मसीहा ही हैं ।

स्वामी शंकराचार्य जी का जन्म स्थान "कालडी" तो पूर्ण रूपेण ईसाई बना हुआ है । इससे और हमारे दक्षिण की क्या स्थिति होगी । कालडी में शंकराचार्य महाविद्यालय तथा ईसाई महाविद्यालय भी हैं । स्वामी जी ने शंकराचार्य महाविद्यालय के प्राध्यापक से पूछा क्यों जी । आप का क्या कर्तव्य है उसने उत्तर दिया केवल ड्यूटी बजाना । यही प्रश्न ईसाई प्राध्यापक से पूछा जाने पर उत्तर मिला सर्व प्रथम मेरा कर्तव्य धर्म का प्रचार और बाद में पढ़ाना ।

स्वतन्त्रता के उपरान्त जातीय संगठन बढ़ने लगा । छोटा से छोटी मानव कल्पित जातियों ने संगठन बना लिए । इसका चुनाव के लिए भी अच्छा उपयोग होने लगा, आर्यसमाजी भी अपनी अपनी बिरादरियों में जा मिले, फिर रहा कौन आर्यसमाजी ? जिनके हृदय में ऋषि की ज्योति, स्वामी श्रद्धानंद जी की श्रद्धा, महात्मा हंसराज जी का त्याग पं० गुरुदत्त जी की लगन पण्डित लेखराम जी का रुधिर जिनके नसों में फड़क रहा है वे ही आर्य नौका को आगे बढ़ा रहे हैं ।

प्रथम तो दक्षिण में आर्यसमाज का विकास हुआ ही नहीं । दूसरा ईसाईयत का प्रचार अधिक ही है । तीसरा इस में भी बम्बई में पोप का आगमन हो क्या यह चोट पर नमक छिड़कने के समान नहीं है ? है तो हमें क्या करना चाहिए ।

बम्बई की रोमन कैथोलिक ईसाइयों की कानफ्रैंस और हमारा कर्तव्य ।

(ले०—श्री महात्मा देवी चन्द्र जी एम. ए. होशियारपुर)

(गतांक से आगे)

सनातन धर्मी जैन और सिक्ख भाइयों से मैं अपील करूंगा कि इस कानफ्रैंस के भयानक परिणामों से बचाने के लिये मिल कर काम करें । सभी सोसोटिओं को मिल कर एक क्रोड़ भारतीय जो ईसाई बन चुके हैं । उन को वापस लिया जाये । महात्मा गन्धी ईसाई पादरियों की धार्मिक सरगर्मियों को पंसद नहीं करते थे । उन का ख्याल था कि सेवा के ख्याल से पादरी काम करें तो का उन कोई डर नहा है परन्तु यह सेवा निष्काम हो यदि इस सेवा के नीचे कमाना भाव छुपा हुआ है । कि हर प्रकार से जाइज और नजाइज साधनों से लोगों को अपने वैदिक धर्म से वंचित किया जाए तो यह निहायत इतराज करने योग्य है पादरिया ने महात्मा गान्धी जी की अपील को रद्द कर दिया था । वह स्कूल, कालिज, हस्पताल पाठशालयों, यतीम खाने अपाहज आश्रम और ईसाई संस्थाएं केवल इसलिए खोलते हैं कि हिन्दु लोगों को ईसाई बनाया जाए । कोई देश भक्त, कोई वैदिक धर्म का प्रेमी इस घटना को शान्ति से सहन नहीं कर सकता । क्या डा० की भविष्य वाणी ठीक हो जाएगी कि ८०० वर्ष में अखिल भारत ईसाई बन जायेगा । हमारा धर्म है कि पुरानी वैदिक हिन्दु सभ्यता को बचाने के लिए राम-कृष्ण क नाम लेवों के धर्म की रक्षा के लिए हम एकत्र होकर कानफ्रैंस का विरोध करें । और जब-तक एक करोड़ हिंदुओं को ईसाइयत से न छुड़ा लें तब तक आराम न करें ।

जो भाई इस काम के लिए धन से सहायता करना चाहते हैं वह अपना दान ला० रामदास जी प्रधान, आल इण्डिया दयानन्द साल्वेशन मिशन, होशियारपुर को शीघ्र अति शीघ्र भेजने का कृपा करें ।

दयानन्द निर्वाण दिवस एवं दीपावली पर्व

आर्यसमाज खंडवा में दिनांक ३-११-६४ को दयानन्द निर्वाण-दिवस एवं दीपावली पर्व समारोह पूर्वक मनाया गया पव पद्धति के अनुसार वृद्ध यज्ञ प्रार्थना भजन के बाद महर्षि दयानन्द के जीवन सम्बन्धि सुखराम आर्य ने भजन सुनाये । तत्पश्चात श्री पं० रामचन्द्र जी तिवारी प्रधान आर्यसमाज खंडवा ने (पर्व की विशेषता पर एवं ऋषि दयानन्द महान थे) भाषण दिया । शान्ति पाठ के बाद कार्यक्रम समाप्त हुआ ।

—रामचन्द्र मन्त्री
आर्यसमाज खण्डवा

(गतांक से आगे)

मैं उत्तर देने को खड़ा होगया और मैंने कहा कि आर्य समाज इन मन्त्रों के एक २ शब्द और एक २ अक्षर को मानता है और इन दो ही मन्त्रों को नहीं चारों वेदों के एक २ अक्षर को आर्यसमाज मानता है इसलिये आर्य समाज विशुद्ध वैदिक धर्म है अवैदिक और नास्तिक मत कदापि नहीं है। जो दो वेद मन्त्र आपने बोले हैं उन में मृतक श्राद्ध की गन्ध भी नहीं है मृतकों का नाम तक नहीं है। इन दोनों मन्त्रोंमें जीवित पितरों को बुलाने उनको अपनी बातें सुनाने उन से उपदेश मांगने और उन से रक्षा की कामना करने आदि का वर्णन है।

प्रथम मन्त्र में कहा है वह हमारे बुलाये हुए पितर सोम रस पीने वाले पितर यहां आवें, हमारी प्रार्थना तथा हमारे प्रश्नों को सुनें जो कुछ पुत्रों के लिये कहना योग्य है वह कहें और हमारी रक्षा करें।

दूसरे मन्त्र में कहा गया है हमारे पितर भूले पुरुषों के मार्गों से आवें हमारे यज्ञ में भोजन करके प्रसन्न हों हमको उपदेश दें और हमारी रक्षा करें।

इस मन्त्र में पितरों के जो लक्षण कहे हैं वह जीवितों में ही घट सकते हैं मृतकों में कदापि नहीं। जीवित ही बुलाए जा सकते हैं। यदि कोई किसी को कहे कि— अमुक व्यक्ति को बुलाओ, यदि उसी नाम का कोई मर गया हो और उसी नाम का कोई जीवित हो तो वह वह नहीं पूछेगा कि— इस नाम के मरे हुए को बुलाऊं या जीवित को! यदि कोई ऐसा पूछे तो उसको सुनने वाले लोग पागल ही बतायेंगे। सभी कहेंगे कि—पागल। बुलाया तो जीवित को जा सकता है। मरने वाला जब मर रहा था तब बूंद पानी और औषधि भी नहीं पी सकता था जो

मृतक श्राद्ध और मेरा सबसे पहला शास्त्रार्थ

(ले०—शास्त्रार्थ महारथी ठा० अमरसिंह जी आर्य पथिक हापुड़)

पीता था वह ही मुंह से बाहर निकल आता था, वह मरा हुआ सोमरस आदि कैसे पी सकता है अतः सोमरस आदि पीने वाला भी जीवित ही होगा। जब कोई मरता है तब उसके स्त्री पुत्रादि कहते हैं कि—कुछ हमारी भी सुनो! कुछ हमको भी कहजाओ! वह किसी की सुनता है न किसी को कुछ कहता है शरीर अभी जलाया नहीं गया इस दशा में भी जो न सुनता न बोलता है वह शरीर के नष्ट हो जाने जलाए जाने के पीछे बिना शरीर के बोलेगा भी और सुनेगा भी ऐसा कोई भी बुद्धिमान मनुष्य नहीं मान सकता है। बुद्धि पूर्वा वाककृतिर्वेद' (मीमांसा) वेद के वाक्य बुद्धि पूर्वक हैं स्पष्ट ही इन मन्त्रों में जीवित पितरों की सेवा करने और उनसे उपदेशादि ग्रहण करने का वर्णन है मृतकों का वर्णन उन मन्त्रों में नहीं है।

मैं यह कह कर बैठा और पौराणिक पण्डित गङ्गादत्त जो वा गङ्गा प्रसाद जी जो थे वह खड़े हुए और मेरे किये प्रश्नों और विवरणों का कुछ भी खडन न करते हुए मुझ से पूछने लगे कि—आपने जो दो वेद मन्त्रों के अर्थ सुनाया है है यह किस प्राचार्य का किया हुआ है?

मैंने तत्काल उत्तर दिया कि— यह अर्थ मेरा है यदि इस में आप कोई दोषापत्ति कर सकते हैं या इसका खण्डनकर सकते हैं तो करिये और बताइये कि इन मन्त्रों में वह कौन से शब्द हैं जिन का अर्थ मृतक पितर होता है?

मेरी बात का कुछ भी उत्तर न दे कर उक्त पंडित जी ने हंसते मुस्कराते हुए कहा कि हम तो श्री शङ्कराचार्य जी का भाष्य सुना रहे हैं और मेरी ओर हाथ से संकेत कर के कहा कि। ये श्रीमान् अपना किया अर्थ सुना रहे हैं। (जनता से पूछा कि। आप लोग इन के किये अर्थों को महत्व देंगे वा जगद्गुरु श्री शङ्कराचार्य जी महाराज के भाष्य को?

मैं तत्काल खड़ा हो गया और मैंने कहा कि—

सभां वा न प्रवेष्टव्यं वक्तव्यं वासमं जसम्।

अब्रुवन् विब्रुवन्वापि नरो भवति किल्विषी॥

भगवान मनु कहते हैं कि सभा है झूठी बात को सुन कर चुप रहने का उस का समर्थन करने पर मनुष्य पापी हो जाता है।

श्री शङ्कराचार्य जी महाराज ने किसी भी वेद वा वेद मन्त्र पर भाष्य नहीं किया और श्री पण्डित भरी सभा में उन का वेद भाष्य बता कर झूठ बोल रहे हैं। मैं इन के साथ बैठे हुए दोनों विद्वानों से पूछता हूं मैं आशा करता हूं ये दोनों असत्य नहीं बोलेंगे। कृपा कर के बतलायें कि श्री शङ्कराचार्यजी ने किस वेदपर भाष्य किया है और वह कहां पर छपा है। पहिले तो दोनों उन पण्डितों ने जो पौराणिक शास्त्रार्थ कर्ता के साथ थे उठने और कुछ बोलने में संकोच किया पर मैंने जब बार-बार आग्रह किया और जनता ने भी उनका उत्तर सुनना चाहा तो दोनों खड़े हो गये और दोनों ने ऊंचे स्वर में घोषणा की कि जगद्गुरू श्री शंकराचार्य जी ने किसी भी वेद वा वेद मन्त्र पर भाष्य नहीं किया। उनके ऐसा कहते ही सारा मण्डप वैदिक धर्म की जय ऋषि दयानन्द की जय पंडित अमरसिंहजी की जय से गूंज उठा। मुझको आर्यसमाज के प्रधान रिटायर्ड तहसीलदार श्री ला० अमीरचन्द जी तथा आर्य समाज के मन्त्री श्री बा० नत्थूराम जी एडवोकेट ने गोद में उठा लिया। बस मेरा शास्त्रार्थ महारथी और शास्त्रार्थ केसरी बनने का उसी दिन से सूत्रपात हो गया।

इसी १ अक्तूबर सन १९६४ को मुझ को उपदेशक बने ४६ वर्ष व्यतीत हो गये और ४७वां वर्ष आरम्भ हो गया। आज मैं गौरव और गर्व के साथ घोषणा करता हूं कि सारे भारत भरमें एक भी पौराणिक पण्डित ऐसा नहीं है जो मृतक श्राद्ध पर शास्त्रार्थ कर सके।

मेरा देश भर के पौराणिक पण्डितों को खुला चैलेंज है कि कोई भी पण्डित मेरे सम्मुख मृतक श्राद्ध को वेदानुकूल सिद्ध करे। मेरा दावा है कि आर्य समाज ने इन विषयों में दिग्विजय प्राप्त कर ली है। पितृ पितर का अर्थ जीवित ही माता पिता आदि हैं मरे हुए नहीं इस पर जीवित पितर नामकी मेरी पुस्तक में सवासौ प्रमाण हैं। उसका खण्डन कोई भी पौराणिक पण्डित नहीं कर सका न कर सकेगा। वह पुस्तक प्रत्येक आर्य के पास होनी चाहिए। उस पुस्तक को हाथ में लेकर बड़े से बड़े पौराणिक पंडित को मृतक श्राद्ध पर परास्त किया जा सकता है।

वेदों का पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना आर्यों का परम धर्म है

आर्यसमाज माडलटाऊन यमुनानगर महोत्सव

संकीर्तन का ठाठें मारता हुआ भव्यसागर

प्रिंसिपल रलाराम जी सभा प्रधान को थैली भेंट

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

यमुना नगर का जिस प्रकार माडल टाऊन एक सुन्दर और सम्पन्न नगरी है, उसी प्रकार वहां आर्य समाज भी सचमुच आदर्श रूप में ही शानदार काम कर रहा है। समाज की अपनी बड़ी प्रसिद्ध शिक्षण संस्थाएं चल रही हैं। डी. ए. वी. हाईस्कूल है, डी.ए.वी. गर्ल्स कालेज, डी. ए. वी. गर्ल्स स्कूल और शिशु पाठशाला है। हजारों छात्र छात्राएं इन में शिक्षा लेती हैं। आर्य समाज के कार्यकर्ता बड़े ही धर्मनिष्ठ, अत्यन्त उत्साही तथा प्रभावशाली होने के कारण समाज एवं संस्थाओं को बड़ा ऊंचा किए जा रहे हैं अधिकारी कार्यकर्ताओं की टोम परिवार के समान मिल कर काम करती है। देवियों का उत्साह और लग्न भी प्रशंसा के योग्य हैं। आर्य कुमारों तथा युवकों का समाज प्रेम बड़ा उत्तम है। यह समाज हर प्रकार से उन्नति के पथ पर आगे ही बढ़ता जा रहा है। समाज के कर्मयोगी सज्जनों में सौम्यमूर्ति सेठ चमनलाल जी प्रधान, श्री महाजन जी मन्त्री, श्री मनोहरलाल जी साहनी मैनेजर स्कूल, श्री चण्डोक जी श्री दीवान राजपाल जी, श्री वोहराजी, श्री भाटिया जी, श्री गांधी जी, माता सुदर्शना जी, श्री दौलतराम जी, बहिन शन्नोदेवी जी आदि सारे ही प्रभावशाली समाज की उन्नति में लगे हुए हैं।

उत्सव से पूर्व सुन्दर यज्ञशाला में वेद का पारायण यज्ञ भी होता था जिसमें ब्र०सत्यप्रियजी,गम्भीर विद्वान पं०रक्षापालजीपं०विद्याभानुजी शास्त्री शामिल थे। सभा की प्रसिद्ध मंडली पं० राजपाल मदन मोहन जी के सुरीले भजन होते थे। नगर संकीर्तन कमाल का था। बहुत बड़े जलसे को देख कर नगर की जनता गद्‌गद् प्रसन्न हो रही थी जयघोषों व संगीतों से नगर गूंज उठा।

इस उत्सव में स्वा० सत्यानन्द जी, प्रिंसिपल पं० रलाराम जी एम. ए. एम. एल. ए. प्रधान आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर, आचार्य प्रियव्रत जी वेद वाचस्पति गुरुकुल कांगड़ी, पं० त्रिलोकचन्द्र जी शास्त्री, आचार्य शिवकुमार जी शास्त्री, पं० राजपाल मदन मोहन जी चिमटा मंडली, पं० भद्रपाल जी, बहिन सुवीरा जी आदि पधारे। तपोमूर्ति प्रिंसीपल रलाराम जी सभा प्रधान जी के दो भाषण बड़े ही प्रभावशाली हुए। उन में आर्य समाज का जनता को विशेष सन्देश मिला। पूर्णाहुति का दृश्य बड़ा मनोहर था। समाज के प्रधान सेठ चमनलालजी ने इस अवसर पर बड़ा मार्मिक सन्देश दिया। युवक सम्मेलन भी श्री स्वामी प्रेमानन्द जी की प्रधानता में सम्पन्न हुआ। रविवार को विशाल ऋषि लंगर तो कमाल का था। हजार के लगभग ने मिल कर भोजन किया। बहिन शन्नोदेवी जी उपाध्यक्षा पंजाब विधान सभा ने भी सन्देश दिया। उत्सव हर प्रकार से कमाल का था बच्चों का कार्यक्रम भी भव्य था। सभा को वेद प्रचार में सभा के वपस्वी, सौम्यमूर्ति महान् विद्वान् प्रधान प्रिंसिपल रलाराम जी एम. ए. की सेवा में ४०१) रु० भेंट किए गए। सभा के स्टाफ को मार्ग व्यय इस से पृथक मिला। जल्सा खूब सफल रहा। इस का श्रेय समाज के सारे सज्जनों को है। सौम्यमूर्ति सेठ चमनलाल जी प्रधान समाज व उनके सारे सहयोगियों को बधाई हो। स्त्री समाज का जलसा भी समारोह से हुआ।

चरित्र निर्माण में भारी रुकावटें

(ले०—श्री पिशोरीलाल जी प्रेम, रेणुका जिला सिरमौर हि०प्र०)

(नं० ४)

(गतांक से आगे)

मदिरापान—शराब खाना खराब, यह एक कहावत है जिस ने शराब पी उसने अपने घर का नाश कर लिया, वह न माता पिता का रहा न स्त्री न सन्तान का हो सका। शराब के नशे में मदहोश होकर व्यक्ति हर प्रकार को बुराई और पाप करने में प्रवृत्त हो जाता है। बुरे से बुरा व्यक्ति भी होश की हालत में ऐसे दुष्कर्म कदापि नहीं करेगा जो वह नशे के घोड़े पर सवार होकर कर लेता है।एक शराबी चरित्रवान कभी नहीं हो सकता। एक सरकारी कर्मचारी जो कि सौ या डेढ़ सौ रुपए मासिक वेतन से अधिक नहीं लेता, जिसने परिवार का पालन-पोषण भी करना है, ऐसे व्यक्ति के लिए यह कैसे सम्भव है कि वह बिना रिश्वत लिए प्रतिदिन शराब पी सके। इसी प्रकार मेहनत मजदूरी करने वाले या छोटे दुकानदार आदि लोग जिन की आय कम है वे जब तक बेईमानी से धन न कमावें, रोजाना शराब कैसे पी सकते हैं। कई लोग इस बहकावे में आ जाते हैं कि अल्पमात्रा में औषधी के रूप में इसका सेवन लाभदायक है परन्तु बहुत से बड़े बड़े डाक्टरों की ये सम्मति है कि मदिरा पान प्रत्येक अवस्था में मनुष्य के लिए हानिकारक है क्यों कि इसमें अल्कोहल (Alcohal) नाम का विष होता है। अल्कोहल (Wine) वाईन में १०% बियर (Bear)में ३%व्हिस्कि Whisky ब्रांडी (Brandi) में ४०% तक की मात्रा में होता है। तात्पर्य यह है कि प्रत्येक किस्म की शराब में अल्कोहल की न्यून या अधिक मात्रा का प्रयोग होता है। जितना जिसमें अल्कोहल ज्यादा होगा उतनी ही वह तेज होगी। डा० डेक (Dr. Dack) लिखते हैं, अल्कोहल एक सूक्ष्म जहर है जो शीघ्र ही शरीर में फैल जाता है और रक्त नस व मस्तिष्क की कार्य-प्रणाली में बाधा पहुंचाता है। सूजन पैदा करता है। कभी-कभी सारे शरीर को अत्यन्त हानि पहुंचाता है।' प्रोफैसर हैटिंजग (Prof. Hatzing) लिखते हैं,' शराब पीने की आदत मस्तिष्क का एक रोग है और ८०% हत्या की घटनाएं शराब पीने के कारण होती हैं।" मि० प्लेटन (M. Pleten) लिखते हैं, अल्कोहल शरीर के केन्द्रस्थल पर भयानक असर डालती है। यही कारण है कि शराब पीने वालों में से बहुत से पागल हो जाते हैं।" शराबियों की सन्तान प्रायः मूर्ख होती है तथा मिरगी, तपेदिक, पागलपन इत्यादि रोगों में ग्रस्त रहती है। शराब पीने वाले प्रायः निर्बल होते हैं। इससे न केवल स्वास्थ्य ही बिगड़ता है अपितु इसके अन्य बहुत से भयानक परिणाम होते हैं। शराब का आदी घर बार बेच कर भी शराब पीने से नहीं हिचकिचाता उसके बाल बच्चे भूखे मरते हैं और वह स्वयं कौड़ी-कौड़ी को मोहताज हो जाता है। अपनी परिश्रम से कमाई हुई दैनिक आय को रात को कलाल को दे आता है। नशे की अवस्था में नाली में गिर जाता है कुत्ते मुंह चाटते हैं फिर भी वह लज्जाहीन बन कर शराब खाने चला जाता है। (क्रमशः)

पुस्तक समीक्षा

लड़खड़ाते जीवन (उपन्यास)

प्रकाशक— जयदेव आदर्श आत्माराम पथ बड़ोदा-१।

लेखक—आचार्य शिवपूजनसिंह कुशवाहा, पथिक B.A. कानपुर।

कीमत 50 N. P.—पृष्ठ संख्या 48।

मानव जीवन किस प्रकार अनेक परिस्थितियों में परिवर्तित होता है इसका ज्वलंत उदाहरण देखना हो तो उपरोक्त पुस्तक का पठन कीजिए। उपन्यास का नायक निशानाथ किस प्रकार सुरा और सुन्दरियों के कुचक्र में फंस कर जीवन में लड़खड़ाता है और अंत में इसका किस प्रकार उद्धार होता है यह उपन्यास में पढ़िए। वास्तव में लेखक महोदय ने भारतीय सह-शिक्षा का दुष्परिणाम बड़े रोचक और मार्मिक शब्दों दर्शाया है।' 'यथा [illegible] की उक्ति को चरितार्थ किया है निशानाथ का [illegible] जीवन [illegible] रहा है। [illegible] मानव को मदिरा और [illegible] के चंगुल में न फंस कर कृत्रिम प्रेम से किनारा करते हुए अपने जीवन को संयमी बनाने का लक्ष्य रख कर इस पुस्तक की रचना की है।

उपन्यास की भाषा सरल शैली आकर्षक तथा शिक्षादायक है पुस्तक सम्पूर्ण पढ़े बिना नहीं छोड़ी जाती जैसे २ पढ़ते जाएंगे उत्सुकता बढ़ती जाएगी।

प्राप्ति स्थान—जयदेव आदर्श आत्माराम पथ बड़ोदा—१

मधु कलश

(११)

जिन्हें समय ने मार रखा है उनको तुम मत मारो
सम्भव हो तो आगे बढ़कर गिरतों को उबारो
अगर बुराई से बचना है इस दुनिया में तुमको
बने-बने की चिन्ता छोड़ो खुद को जरा सुधारो

★

रह-रह करके तरह-तरह से मुझे वक्त ने तोला
फिर भी विचलित हुआ नहीं मैं जरा नहीं मन डोला
इसका रंज नहीं करता मैं मौन रहा मैं कैसे
मुझे रंज इसका होता है मैं ज्यादा क्यों बोला

★

मोटा खाना और पहनना कुछ अभिशाप नहीं है
सच कहता हूं मानवता की दौलत माप नहीं है
यूं तो पाप बहुत हैं भाई इस दुनिया के अन्दर
पराधीनता से बढ़ करके लेकिन पाप नहीं है

—विजय 'निर्बाध'

आर्यसमाज (सैक्टर ८) चंडीगढ़

बम्बई में होने वाले ईसाई सम्मेलन विरोधी प्रस्ताव

This meeting of all the Arya Samajists held on 25th October, 1964 at Chandigarh views with great misgiving and anxiety the Eucharist Conference of the Roman Catholic Church about to take place in the last week of November and early December this year in Bombay and Goa. This Conference has been described in the bulletin published by the organisers, (Volume II, page 6) as a crusade by the Christ's army for the conquest of India. About twenty to thirty thousand Roman Catholics of the highest rank such as cardinals, archbishops and bishops are to assemble in India from foreign countries on this occasion. This is something un-precedented in our history. This appears to be a part of a deep-laid plan to convert thousand of Hindus, Muslim & Sikhs to Christianity. This Conference is bound to have an adverse effect on the future development of Goa. This is a situation fraught with grave danger for India. We appeal to our country men to alert and not to be taken in by the pious profession, but oppose strongly the machinations of the foreign missionaries who aim at undermining our national unity and solidarity. We humbly request the Govt. of India to take timely steps not to give any kind of help or encouragement to the sponsors of this Conference so that this menace to our culture and freedom may be averted. The foreign missionaries are also exploiting our already unhappy situation on account of food scarcity. The meeting appeals to the public to take all the necessary steps to save our culture and freedom at this critical time in our history.

१००० रु० का व्यय

संस्कृत शिक्षा व अध्ययन को आर्य विद्यालयों में प्रोत्साहित करने का निश्चय।

आर्य संसार व संस्कृत-प्रेमियों को यह जानकर प्रसन्नता व संतोष होगा कि आर्य विद्या सभा, दयानन्द कालेज प्रबन्धकर्तृ सभा, चित्रगुप्त मार्ग नई दिल्ली ने अमृतसर में हुए अपने गत वार्षिक अधिवेशन में संस्कृत अध्ययन व शिक्षा-संस्थाओं में प्रोत्साहित करने के निमित्त एक हजार रु० की राशी आधुनिक वर्ष में व्यय करने की अनुमति प्रदान की थी।

अतः आर्य स्कूलों के प्रधानाध्यापकों, अन्य शिक्षा संस्थाओं व संस्कृत-प्रेमी आर्य सज्जनों व सभी आर्य समाजों से जो इस विषय में रुचि रखती हों, सानुरोध प्रार्थना की जाती है कि वह अपनी सुविधानुसार शीघ्रातिशीघ्र अपने-अपने क्षेत्रों में विचार करने के उपरान्त इस सम्बन्ध में अपने सुझाव व योजना भेजने की कृपा करें, ताकि सभा उन पर विचार कर इस ओर अपने लक्ष्य की पूर्ति में अग्रसर हो सके।

निवेदक—देशराज महाजन
(एजुकेशनल एडवाईजर)

विज्ञापन

बा [illegible] बार—बिट्रेवर ठाकुर त्रिलोकसिंह B. A., B. T. मुकाम तलवाड़ा जिला होशियारपुर नोटिस बनाम—

डी. पी. सहगल H. No १३६ गली नं. ४ सैंट्रलटौन जालन्धर शहर।

आपको सूचित किया जाता है कि आपके और लेबर एण्ड कंट्रेक्शन सोसाइटी तलवाड़ा के दरमियान जो लेन-देन का झगड़ा है उसके फैसले के लिए तारीख १-१२-६४ मुकर्रर की जाती है हाजिर होवें।

—त्रिलोकसिंह हैडमास्टर
पबलिक हाई स्कूल तलवाड़ा
जिला होशियारपुर))

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२१, २९ नवम्बर १९६४ [अंक ४७

आर्यो ! आ ही गया

क्या आ गया ? आप के पंजाब प्रान्त में केन्द्रीय नगर जालन्धर के विशाल आर्य समाज किला मुहल्ला का वार्षिक महोत्सव आ गया है। इसी महीने के अगले सप्ताह में तारीख २७ नवम्बर शुक्रवार से २९ नवम्बर रविवार तक आर्य समाज किला मुहल्ला जालन्धर नगर की ओर से बड़े ही समारोह से मनाया जा रहा है। समाजों का वैसे तो प्रत्येक उत्सव अपने रूप में स्वय एक मेला होता है। किन्तु बात यह है कि किला समाज केन्द्र का विशाल समाज है। लाहौर अनारकली के समान इस का भी सारे पंजाब में एक महत्पूर्ण स्थान है। यह बात इस लिए है कि यह समाज अब केन्द्र का रूप धारण कर गया है। जालन्धर मे हमारी बड़ी २ शिक्षण संस्थाओं की डी. ए. वी. कालजे, हंसराज महिला कालेज, साईंदास हायर सकेंडरी स्कूल, दयानन्द माडल स्कूल आयुर्वेदिक कालेज, दयानन्द टैक्निकल कालेज आदि जैसी छावनियां मौजूद हैं। आर्य समाज के नेता यहां बैठे हैं। आर्य प्रादेशिक सभा का केन्द्रीय कार्यालय भी यहां है। इस का जल्सा विशेष रूप से सम्पन्न होता है। चारों ओर से अपने स्कूलों व समाजों से बड़ी संख्या में युवक, भाई बहिनें शामिल होते हैं। बड़े २ नेता महात्मा विद्वान इस में पधार कर अमृतपान कराते हैं। मान्य प्रसिद्ध फिलास्फर डा. दीवान चन्द जी एम. ए. कान पुर ९०-९२ वर्ष की इस अवस्था में वर्ष में एक बार इसी विशेष अवसर पर आर्य समाज किला जालन्धर के मान्य अधिकारियों की नम्र तथा निरन्तर श्रद्धाभरी प्रार्थना पर पधार कर जनता को एक वर्ष के लिए जीवन प्रसाद देते हैं। पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी का भी अमृतपान मिलता है। सारे नगर में उन दिनों एक मेला-सा ही लगा होता है।

आने वाले इस महोत्सव की तैयारी प्रारम्भ है। समाज के वृद्ध होकर भी युवा नेता डा० हुकुमचन्द जी भल्ला, ला० सन्तोषराज जी पूर्व मन्त्री सभा, प्रिंसिपल प्यारा-लाल जी बेरी, मान्य प्रिंसिपल भीमसेन बहल, मान्य प्रिंसिपल आनन्द जी, मान्या प्रिंसिपल रलाराम जी प्रधान सभा, प्रिंसिपल ज्ञान-चन्द जी भाटिया सभा मन्त्री प्रिंसिपल अत्रिदेव जी आदि सारे ही समाज के सज्जन इस के प्रबन्ध में लगे हुए हैं। किला समाज का सुन्दर मन्दिर भी बन सा गया है। इस अवसर पर तारीख २३ नवम्बर सोमवार से जल्से के उपलक्ष्य में कथा प्रारम्भ हो जाएगी। शुक्रवार को विशाल जलूस ठाठें मारता हुआ चलेगा। बाहिर के आर्य भाई बहिनें अभी से उन दिनों में इस में शामिल होने की तैयारी कर रखें। सारे काम छोड़ कर भी आना होगा। संगठन व शक्ति का परिचय मिलता है। यदि उन दिनों एक दो दिनों के लिए स्कूलों में अवकाश करा दिया जावे तो अध्यापक व कई युवक भी आ सकते हैं। इस का सारा प्रोग्राम अधिकारी सज्जन प्रकाशित कर देंगे। सारे सज्जन अभी से तैयारी रखें।

—त्रिलोकचन्द

आर्यसमाज लोहगढ़ का भव्य समारोह

महात्मा आनन्द स्वामी को वेद प्रचारार्थ २४००) रुपये की थैली भेंट

आर्यसमाज लोहगढ़ अमृतसर का वार्षिकोत्सव एक मेले का रूप धारण कर गया है। पुराने युग का स्मरण करा देता है। इस वर्ष यह महोत्सव अमृतसर नगर में अपना भारी प्रभाव डाला गया है विशेषता यह है कि समाज के साथ वाली जो भूमि पड़ी थी वह ले ली गई तथा वेदपारायण यज्ञ की शानदार वेदी भी इसी स्थान पर बनाई गई थी। समाज के पुराने महारथी ज्ञानी पिण्डीदास जी प्रिं० सी.एल. जी अरोड़ा दयानन्द कालेज अमृतसर, प्रो० वेदव्रत जी एम० ए० मन्त्री आदि सारे सज्जनों के परिश्रम से जल्सा ठाठ का हो गया। आर्यजगत के प्रसिद्ध तपस्वी सन्त महात्मा आनन्द स्वामी जी की कथामृत का प्रवाह चलता रहा। जनता ने अमृतपान किया। यज्ञ में श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी एटा वाले तथा वेद का सस्वर पाठ करने वाले पं० ज्योतिस्वरूप जी आदि पधारे थे। प्रातःकाल यज्ञ और रात को कथा होती थी जल्से में पूज्य महात्मा जी, स्वा० ब्रह्मानन्द जी वीर यज्ञदत्त जी, स्वा० सोमानन्द जी, पं० चन्द्रसेन जी, पं० धर्मपाल जी शामिल हुए।

एक ईसाई निरोध सम्मेलन हुआ जिस में श्री कृष्ण लाल जी **M.L.A.** श्री जगदेव जी सिद्धांती **M.P.** पं. धर्म पाल जी **M.C.** पं. रुद्रदत्त जी शर्मा प्रधान लक्ष्मण सर समाज ज्ञानी पिण्डी दास जी ने विचार प्रकट किए प्रस्ताव भी पारित किया गया। जल्सा हर प्रकार से शानदार था। पूज्य महात्मा जी की सेवा में सभा से वेद प्रचार के लिए २४००) रु. की थैली भेंट की गई। सफलता की सब को बधाई।

आर्य समाज लोहगढ़ अमृतसर का 'प्रस्ताव'

आर्य समाज के तत्वावधान में हो रहे अमृतसर के नागरिकों का यह सम्मेलन बम्बई में २८ नवम्बर १९६४ से ६ दिसम्बर १९६४ तक होने वाली इन्टरनैशनल यूकेरिस्टिक कांग्रेस अर्थात् अन्तर्राष्ट्रीय कैथोलिक सम्मेलन को भारतीय राष्ट्रीयता के लिए हानिकारक एवं देशहित के विपरीत समझता है। पिछले कई वर्षों से विदेशी मिशनरियों की गतिविधियों के कारण भारत के अनेक प्रान्तों में ऐसा विषाक्त वातावरण का निर्माण हुआ है जो भारत की अखण्डता एवं राष्ट्रीय एकता के लिये अत्यन्त घातक है। इसी मनोवृति के कारण देश को नागालैण्ड एवं झारखंड की समस्याओं से दो चार होना पड़ा है। आने वाले मिशनरी समुदाय द्वारा आर्थिक बल पर बम्बई की निर्धन जनता को ३०, ३० रुपया प्रतिदिन का लालच देकर धर्मभ्रष्ट करने की सम्भावना है। अतः यह सम्मेलन जहां भारत की राष्ट्रवादी जनता से ईसाई हथकंडों से सावधान रहने का अनुरोध करता है, वहां भारत सरकार से बलपूर्वक मांग करता है कि अराष्ट्रीय तत्वों से देश को बचाने के लिए इन के कार्यक्रमों को किसी प्रकार का सहयोग या प्रोत्साहन न दें-अन्यथा

(शेष पृष्ट ६ पर)

राजधानी का मनोरम मन्दिर

(त्रिलोक चन्द्र शास्त्री सम्पादक)

नई दिल्ली भारत की राजधानी है। यहां अनेकों भवन तथा पुरातन इतिहास के सुन्दर स्थान हैं। सबका अपना-अपना महत्व बना हुआ है। आर्यों के लिए भी बड़े भव्य केन्द्र हैं। शिक्षा संस्थाओं का एक लम्बा जाल बिछा हुआ है। भारत में सब से पहली तथा राष्ट्रीय शिक्षण संस्थाओं की माता कही जाने वाली दयानन्द कालेज प्रबन्ध कमेटी का कार्यालय भी यहीं है। इसके माननीय प्रधान आजाद भारत के सुप्रीमकोर्ट के प्रथम मुख्यन्यायाधीश डाक्टर मेहरचन्द जी महाजन जैसी दिव्यविभूति भी यहीं निवास करती हैं। मन्दिर मार्ग नई दिल्ली में अभी-अभी नये बने आर्यसमाज अनारकली रीडिंग रोड के विशाल सुन्दर मनोरम मन्दिर को देखकर किस का मन गद्-गद् प्रसन्न नहीं हो जाता? आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब जालन्धर और डी. ए. वी. कालेज कमेटी से सम्बन्धित संस्थाओं में इसका स्थान बहुत ऊंचा है। माननीय डाक्टर महाजन जी ने अपने अन्य समाज प्रेमी साथियों को साथ लेकर इस भव्य मन्दिर के निर्माण में जिस श्रद्धा, प्रेम, निष्ठा परिश्रम एवं भावना का आदर्श उपस्थित किया है। उसकी छवि अमिट बनी रहेगी। आर्यजगत् के परम तपस्वी, अध्यात्मवाद की अनुपम प्रतिमा महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज ने भी इस दिशा में बड़ा काम किया है। कौन भुला सकता है। मन्दिर का विशाल हाल संगमरमर का निर्मित है। दीवारें व छत देखकर तो आंखें ऊपर की ऊपर ही रह जाती हैं। कण-कण में श्रद्धा भरी है। वर्तमान प्रधान श्री गणपतराय जी तलवाड़ की प्रेरणा-भरी प्रधानता में तथा निरन्तर अनेक वर्षों से दिन रात एक करके इस धर्मकार्य में लगे हुए महान् विद्वान् सरलता की सचमुच जीती जागती मूर्ति प० दयाराम जी शास्त्री एम.ए. के मन्त्रित्व में, दूसरे सारे प्रेमी गण्यमान्य समाज प्रेमियों के उत्साह से इस का वार्षिकोत्सव भी एक मेले का रूप धारण करता जा रहा है।

इस बार का तो यह कथा व महोत्सव कमाल की अवस्था तक पहुंच गया। राजधानी के हर विभाग के बड़े २ नेता सम्पन्न प्रतिष्ठित एवं जज प्रिंसिपल मिनिस्टर पूर्व गवर्नर तक भी इस समाज के सभासदों के पवित्र परिवार में शामिल हैं। इसलिए इस के जल्से में विशेषता रहती है। कथा व जलूस ऐसा प्रतीत होता था, जैसे बहुत ऊंचे स्तर पर एक महासम्मेलन हो रहा हो जिस में बहुत ऊंचे नर-नारी शामिल हों। पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी का इस समाज के साथ बड़ा प्यार है। उनके व्यक्तित्व में आकर्षण, वाणी में जादू, मन में अध्यात्म प्रवाह तथा जीवन में प्रभाव है। प्रतिवर्ष प्रायः कथा महात्मा जी की ही होती है। मान्य डाक्टर महाजन जी का प्रेम और प० दयाराम जी शास्त्री मन्त्री की प्रार्थना उनको ले ही आती है। कथा में क्या वातावरण, क्या मीठा रस और क्या विचित्र जादू होता है। यह तो आंखें देखने वाली देखतीं व सुनने वाले कान सुनते हैं, रसना अमृत पीती है। बाहर मोटरकारों की पंक्ति लगी होती है। ब्रह्मचारी महेश जी व दीपक जी के मधुर संगीत भी मस्ती फैला देते हैं। इस बार कथा में विशेष जादू था। महात्मा जी एक प्रकार के जादूगर ही हैं। जनता सजे हुए पण्डाल में मन्त्रमुग्ध रहती है प्रातः काल विद्वान् मान्य पं. जैमिनि जी शास्त्री एम. ए. की अध्यक्षता में वेद पारायण का यज्ञ चलता रहा। कथा और जल्से में बड़ी ही रौनक थी। इसमें आर्यसमाज के तपस्वी दर्शन केसरी फिलास्फर डा० दीवानचन्द जी एम.ए. कानपुर तपोमूर्ति आचार्य ज्ञानचन्द जी एम. ए. हिसार, सौम्यता की सजीव प्रतिमा प्रिंसिपल रलाराम जी एम. ए. प्रधान आर्य प्रादेशिक सभा, ओजस्वी वक्ता प्रिंसीपल देवराज जी गुप्ता दयानन्द कालेज हिसार, कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी के वायस-चांसलर प्रिंसिपल सूर्यभानु जी एम. ए. आदि नेता विद्वान पधारे। सभा की प्रसिद्ध मंडली पं. राजपाल मदन मोहन जी, पं. मेलाराम जी संगीतोपदेशक सभा पं. हरिदत्त जी भजनोपदेशक आए। मुझे भी शामिल होने का सौभाग्य मिला। पूज्य महात्मा जी तो जल्से के स्तम्भ थे ही। ब्र. महेश जी व दीपक जी भी थे। कार्यक्रम में प्रत्येक बैठक अपने अन्दर विशेष प्रभाव रखती थी युवक सम्मेलन भी अपने ढंग का था। कुमारों व युवकों ने समय बान्ध दिया। प्रिंसीपल हरिश्चन्द्र जी संयोजक को बधाई। अराष्ट्रीय ईसाई निरोध सम्मेलन तो अपूर्व था। बड़ा उत्साह व जोश था। महात्मा जी प्रधानता में सम्पन्न हुआ। आयसमाज की आवाज का बड़ा प्रभाव है। बड़ा ही सफल था। आर्यसमाज का लोग इसके लिए बधाई दे रहे थे। भारत के फिलास्फर आर्यजगत् के नेता डा० दीवानचन्द जी का भाषण अपनी निराली छाप छोड़ गया। यज्ञ की पूर्णाहुति हो या रात का वेद सम्मेलन हो अथवा किसी समय का भी कार्यक्रम हो—बड़े ही प्रभावपूर्ण स्तर का था। समाज की चेतना चारों ओर प्रतीत होती थी। इ बार का ऋषि-लंगर का भारी विशाल दृश्य तो भूलेगा नहीं। ढाई हजार नर-नारी बैठे हुए जिसमें एक विशाल समाज परिवार के रूप में मिलकर भोजन कर रहे थे, उस समय का चित्र देखकर आर्यसमाजके संगठन व श्रद्धा का पता लगता था। यह मुल्कराज जी भल्ला जैसे सात्विक देवता समाज प्रेमी दानी आज भी इस समाज को मिले हुए हैं। जिस लंगर में २५ सौ लोगों ने भोजन किया। इसका सारा व्यय इस अकेले धर्मनिष्ठ सज्जन श्री भल्ला जी ने अपनी ओर से दिया। उदारतापूर्वक कह दिया कि जितनों को खिला सकते हो खिलाओ। इतनी बड़ी संख्या में लोगों को भोजन परोसने वाले सज्जनों ने भी तो सेवा में कमाल कर दिया। प० दयाराम जी शास्त्री मन्त्री, श्री सोमनाथ जी गुप्ता, श्री तलवाड़ जी प्रधान, श्री दरबारीलाल जी, अध्यापक व स्कूलों के बच्चों ने बड़ी सेवा की। कौन है जो श्री भल्ला जी जैसे उदार आर्य पुरुष की प्रशंसा न करेगा? आर्यसमाज अनारकली के पास ऐसी-ऐसी सम्पत्ति भी तो हैं।

एक सप्ताह निरन्तर मेला-सा लगा रहा। कितने जीवन पलटे होंगे। कितनों ने अमृतपान किया होगा और प्रेरणा पाई होगी। कुमार युवकों विद्वानों सब भाई बहिनों के लिए आत्म प्रसाद मिला। आंखों देखा दृश्य व कानों सुने वचन नहीं भूलेंगे। यह मन्दिर राजधानी का धर्म स्तम्भ है। इस अपूर्व सफलता में मान्य नेता डाक्टर महाजन जी को हार्दिक बधाई खाना पीना भी भुला कर दिन रात काम में लगे हुए समाज की सौम्यमूर्ति प० दयाराम शास्त्री मन्त्री व सारे समाज प्रेमियों को बहुत२ बधाई हो ज्योति जगती रहे।

बम्बई की रोमन कैथोलिक कांग्रेस

ले०—श्री पं० रुद्रदत्त जी शर्मा प्रधान आर्यसमाज लक्ष्मणसर अमृतसर

****

समस्त देश की ओर से जबरदस्त प्रोटेस्ट उठने के बावजूद बम्बई में होने वाली रोमन कैथोलिक कांग्रेस को हमारी सरकार की ओर से बढ़चढ़ कर सहयोग देने की तैयारियों में रत्ति भर भी फर्क नहीं आया ! कौन नहीं जानता कि पिछले कई वर्षों के इतिहास में ईसाइयों तथा विशेषतया इस रोमन कैथोलिक वर्ग के ईसाइयों ने भारत के अन्दर किस तरह धोखा, फरेब, लालच, डर, जुल्म और अत्याचार द्वारा ईसाइयत का प्रचार किया। पारलियमैंट द्वारा नियुक्त की गई न्योगी कमीशन तथा अन्य जिमेवार महानुभावों द्वारा की गई तहकीकात से सिद्ध हो चुका है कि ईसाइयों को स्कूलों, कालेजों, हस्पतालों तथा अनाज कपड़ा आदि बांटने के द्वारा भारतीय जनता की सेवा सर्वथा धोखे की टट्टी है और इसके भीतर एक ही लक्ष्य कार्य कर रहा है कि अधिक से अधिक संख्या में ईसाइयों के रूप में अपने एजैण्ट बनाकर देश को पहले धार्मिक तौर पर फिर राजनैतिक तौर पर दास बनाया जाये।

यह देश की इन्तिहाई बदकिस्मती है कि यहां जनता की आवाज को कोई कीमत नहीं। जो सरकार जनता की आवाज को ठुकराने की आदी हो जाती है वह ज्यादा देर तक नहीं चल सकती और न इसे सत्तारूढ़ रहने का अधिकार ही रहता है। यही कारण है कि आज जनता भारत सरकार की नीति से बेजार हो उठी है काश्मीर में अब्दुल्ला और उसके साथियों को भारत विरुद्ध घृणा की आग भड़काने की खुली छुट्टी दे रखी है। काश्मीरी मुसलमानों की मिन्नते खुशामदें करने, उन्हें रिश्वत के रूप में उचित व अनुचित रियायतें देने और अपना पृथक विधान, पृथक प्रधान तथा पृथक झण्डा तक की आज्ञा देकर उनके दिमाग को आकाश पर चढ़ा रखा है। केरल और गवा में ईसाइयों की बहुसंख्या अपना राज्य स्थापित करने का यत्न कर रही है नागालैंड में इन्हीं ईसाइयों की ओर से बगावत का झण्डा ऊंचा किया हुआ है। कई वर्षों से वहां मारकाट व आग लगाने का क्रम जारी है और हमारी सरकार की ओर से सरदार स्वर्ण सिंह अब भी यह घोषणा कर रहें हैं कि उन के साथ जो शान्ति वार्तालाप का क्रम जारी है और इस वार्तालाप में नागाओं को बगावत की शिक्षा देने वाले उनके सब से बड़े गुरुघंटाल पादरी सकाट को चौधरी बनाया गया है।

हमारी सरकार की ओर से गम्भीर से गम्भीर स्थितियों की ओर से आंखें व कान बन्द करके बैठे रहने की नीति अत्यन्त खतरनाक सिद्ध हो रही है। पिछले दिनों कलकत्ता की एक मस्जिद में एक इमाम ने न्यायालय मे ब्यान देते हुए यह माना था कि उसने एक वर्ष के समय में १० हजार हिन्दुओं को मुसलमान बनाया। बाकी देश में इन मुसलमानों और ईसाइयों की ओर से कितना अन्धेर मचाया जा रहा है। आर्यसमाज और इसके नेता समय पर इस बारे में चेतावनी देते रहते हैं। परन्तु हमारी सरकार अपनी गद्दियों को बचाने के लिए सैकुलेरिजम की ऐनकें लगाए हुए यह समझ रही है कि विदेशियों और विधर्मियों की ओर से किये जा रहे यह आक्रमण केवल हिन्दु जाति के लिए ही हानिकारक हैं। परन्तु उन्हें यह समझ लेना चाहिए कि देश के भीतर ईसाइयों व मुसलमानों की संख्या जिस ढंगसे बढ़ रही है यह सफिफ्थ काल इकट्ठा रहा है जो एक दिन भारत की स्वतन्त्रता को चुनौती देगा और तब इनकी यह गद्दियां भी न बच सकेंगी। किसी कवि ने ठीक ही कहा है :—

बचोगे न तुम और साथी तुम्हारे
अगर नाव डूबी तो डूबोगे सारे

आज हमारे शासकों, नेताओं तथा धार्मिक, सामाजिक व राजनैतिक संस्थाओं को मिलकर इस प्रश्न पर ठण्डे मन के साथ विचार करना होगा कि हमारे देश रूपी वृक्ष की जड़ों में लग रहे इस घुन को किस तरह ठीक किया जाए। इतने से नहीं कि संसार में मतावलम्बियों को अपने विचारों के प्रचारका पूर्ण अधिकार है परन्तु हमारी सरकारकी सेकुलर नीति तथा देश में बढ़ रही महंगाई, बेकारी व निर्धनता का अत्यन्त अनुचित लाभ उठाते हुए ईसाई प्रचारकों ने विदेशों से आ रहे करोड़ों रुपयों के बल पर इस अधिकार का सर्वथा दुरुपयोग किया है। नगर-नगर ग्राम-ग्राम में ईसाई स्कूलों, कालेजों व हस्पतालों द्वारा अनेकों युवकों व युवतियों के धर्म भ्रष्ट होने की घटनायें हमारे सन्मुख आती रहती हैं। स्वर्ण हिन्दु युवकों को उच्च-शिक्षा तथा नौकरियों के लोभ से और बेचारे हरिजन और अन्य पिछड़ी जातियों में रुपया, कपड़ा, अनाज, दूध के डिब्बे तथा बिस्कुट आदि बांट कर उन में ईसाइयत तथा अराष्ट्रियता का प्रचार किया जा रहा है। सब से अधिक दुःख की बात यह है कि ईसाइयों (अंग्रेजों) के अपने राज्य में जहां ईसाइयत का इस तरह तेजी के साथ प्रचार नहीं हो सका था जिस तेजी से स्वतन्त्रता प्राप्त होने के पश्चात हो रहा है। आर्य समाज के प्रसिद्ध नेता श्री लाला देवीचन्द जी एम० ए० ने पिछले दिनों जो आंकड़े तैयार किये उन से पता लगता है कि इटली, स्पेन, पुर्तगाल, आस्ट्रेलिया, इंगलैंड तथा अमेरिका से आए पादरियों द्वारा प्रति मास हजार हिन्दुओं को ईसाई बनाया जा रहा है।

भारत तथा भारतीयता से हित रखने वाले प्रत्येक नर-नारी का कर्तव्य है सम्मिलित एवं संगठित शक्ति द्वारा देश पर छा रहे इन विदेशी बादलों को दूर करने का व्रत लें और तब तक शान्ति से न बैठें जब तक इन ईसाई हो चुके करोड़ों भाइयोंको फिरसे अपने पूर्वजों के वैदिक धर्म में न ले आयें और एक-एक विदेशी पादरी को श्रीयुत पादरी स्टोकस की तरह शुद्ध करके स्वामी सत्यानन्द के रूप में सच्चा वैदिक मिशनरी न बना लें। स्टोकस एक प्रसिद्ध यूरोपियन पादरी भारत में ईसाइयत के प्रचार में तीव्रता लाने का दृढ़ संकल्प लेकर आया। उसने शिमला में अपना हैड क्वार्टर बनाया परन्तु आर्य समाज के सम्पर्क में आते ही न केवल स्वयं शुद्ध हो गया अपितु बाकी जीवन वैदिक धर्म के प्रचार के लिये अर्पित कर दिया।

आर्यसमाज शोलापुर

१५-११-६४ को रविवार के दिन आर्यसमाज, शोलापुर की ओर से श्री S.N. जमादार साहिब एडवोकेट की अध्यक्षता में राष्ट्र-वीर लाजपत राय का बलिदान पर्व सोत्साह मनाया गया। मराठी के प्रसिद्ध वक्ता प्राध्यापक फड़कुले जी ने लाला जी की समाज सेवा, राष्ट्र सेवा पर सविस्तार प्रकाश डाला। श्री चौधरी भगवानदास जी ने लाला जी को श्रद्धांजली भेंट करते हुए धार्मिक जगत में आर्य समाज द्वारा पैदा की गई क्रांति की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की। प्राध्यापक राजेन्द्र जिज्ञासु ने लाला जी व आर्यसमाज की ऐतिहासिक सेवाओं व महत्ता पर प्रकाश डा-

राजेन्द्र जिज्ञासु उपमन्त्री

आर्यसमाज किला जालन्धर का कार्यक्रम

आर्यसमाज विक्रमपुरा (किला) जालन्धर शहर का उत्सव ता० २७ से २९ नवम्बर ६४ को हो रहा है। उसका कार्यक्रम नीचे संक्षेप से दिया जा रहा है।

शुक्रवार ता० २७ नवम्बर

रात को विशाल कविदरबार होगा।

शनिवार ता० २८ नवम्बर

प्रातः—दो प्रवचन होंगे। एक स्वामी विज्ञानानन्द जी तथा दूसरा पं० ओ३म् प्रकाश जी आर्य महोपदेशक आर्य प्रादेशिक सभा।

दोपहर :—भाषण पं० त्रिलोक चन्द्र शास्त्री आर्य प्रादेशिक सभा। प्रिंसिपल ज्ञानचन्द जी एम. ए. आचार्य दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय।

रात्री :—प्रिंसिपल पं० रलाराम जी एम. ए. एम. एल. ए. प्रधान आर्य प्रादेशिक सभा तथा वीरयज्ञ दत्त जी।

रविवार ता० २९ नवम्बर

प्रात :—प्रिंसिपल देवराज जी गुप्ता एम. ए. दयानन्द कालेज हिसार तथा श्री यश जी पूर्व शिक्षा मन्त्री पंजाब।

दोपहर :—को अराष्ट्रिय ईसाई निरोध सम्मेलन का विशाल आयोजन होगा।

रात :—प्रवचन प्रसिद्ध फिलास्फर डा० दीवानचन्द जी एम. ए. कानपुर तथा श्री सन्त श्याम जी पराशर एम. ए.।

आर्य समाज विक्रम पुरा (किला) जालन्धर

आर्य समाज विक्रमपुरा (किला जालन्धर नगर का वार्षिकोत्सव २७ २८ और २९ नवम्बर शुक्र, शनि और रविवार को बड़े समारोह से साईं दास ए० ऐस० हायर सैकण्डरी स्कूल के अन्दर विशाल मैदान में मनाया जा रहा है। जिसमें बड़े २ विद्वान महोपदेशक एवं भजनीक पधारेंगे। २७ नवम्बर २ बजे बाद दोपहर साईंदास स्कूल से एक बड़ा जलूस निकलेगा। इस के उपलक्ष्य में २३ से २६ नवम्बर तक प्रतिदिन प्रातः ५ बजे से ७ बजे तक प्रभात फेरी हो रही है और २३ से २६ नवम्बर तक प्रतिदिन वेदों की कथा विक्रमपुरा आर्य समाज में रात के पौने आठ बजे से सवा नौ बजे तक हो रही है। और २३ से २९ नवम्बर तक एक बड़ा महान हवन यज्ञ प्रतिदिन प्रातः ७ बजे से ९ बजे तक हो रहा है। विस्तृत कार्यक्रम का अवलोकन करें। विशेषतया ईसाई मत विरोध सम्मेलन जो २९ नवम्बर २ बजे बाद दोपहर से ५ बजे तक साईंदास स्कूल में होगा वह सम्मेलन बहुत महत्वपूर्ण होगा। जिसमें तमाम हिन्दु जाति अर्थात् सनातनी, सिख, जैन आदि उच्च कोटि के विद्वान अपने-अपने विचार प्रकट करेंगे। और बम्बई में ईसाई विश्व सम्मेलन जो २८ नवम्बर से ६ दिसम्बर तक हो रहा है जो केवल मात्र हिन्दु जाति को लालच देकर और ३६ लाख लाख रुपया व्यय करके ईसाई बनाने के उद्देश्य से हो रहा है। जिसमें ३० हजार पादरी ईसाई विदेश से आकर शामिल होंगे उनके भोजन के लिए लगभग साढ़े चार हजार गाएं काटी जाएंगी। और भारत में आकर पाकिस्तान की तरह एक और ईसाई स्थान की मांग की जावेगी, जो आज नहीं तो कल बन जाएगा। परन्तु हमारी सरकार महात्मा गांधी के उस नारे को भूल गई जो उन्होंने बम्बई में पहली बार १९४२ में भारत छोड़ो' का लगाया था, जिसके कारण उनको भारत छोड़ना पड़ा मगर इसके होते हुए भी वह इसमें शामिल होकर आशीर्वाद देगी इन बातों पर विचार करना है।

वेद भाष्यकार

ऋषि दयानन्द और सायण

(श्री पं० भवानीलाल जी 'भारतीय', एम० ए० गवर्नमेंट कालेज पाली (राजस्थान)

निरुक्तकार यास्क ने लिखा है :
स्थाणुरयं भारहारः किलाभूद-धीत्य वेदं न विजानाति योऽर्थम्। योऽर्थज्ञ इत्सकलं भद्रमश्नुते नाकमेति ज्ञानविधूत पाप्मा। अर्थात् जो मनुष्य वेदों को पढ़कर उनके अर्थों को नहीं जानता, वह उस भारवाही पशु के तुल्य है, जो बिना जाने ही फल फूल आदि का बोझ उठा रहा है परन्तु जो अर्थज्ञ है, वह सकल कल्याण को प्राप्त होता है तथा ज्ञान से पवित्र होकर अन्त में मोक्ष सुख को भी प्राप्त करता है।

हमारे देश में कई शताब्दियों तक यह धारणा प्रचलित रही कि वेद मंत्रों का कोई अर्थ नहीं होता। उनका कर्मकांड परक विनियोग ही जानना चाहिये। यास्क के युग में भी कौत्स जैसे व्यक्ति थे। जिन का कथन था कि मन्त्रों का कोई अर्थ नहीं होता। परन्तु यास्क की सम्मति इस के विपरीत थी। उन्होंने कौत्स के मत का अपने ग्रन्थ में बड़े समारोह पूर्वक खण्डन किया है और यह सिद्ध किया है, कि वेद मंत्र सार्थक हैं, परन्तु उनका रहस्य जानने के लिये विद्या, त्याग तथा तपस्या का बल चाहिये।

यास्क के वेद सम्बन्धी विचारों से ऋषि दयानन्द पूर्णतया सहमत थे। उनका यह दृढ़ विश्वास था कि वेदार्थ का ज्ञान परिश्रम साध्य है, और उसके लिए प्राचीन शास्त्रीय परम्परा में पूर्ण व्युत्पन्न होना आवश्यक है। परन्तु विचारणीय यह है कि वेदार्थ के लिये किन २ शास्त्रों की सहायता अपेक्षित है और वेद भाष्यकार को किन २ विद्याओं में पारंगत होना चाहिये। जब इस बात पर विचार करते हैं तो हमारे समक्ष वह समग्र साहित्य उपस्थित हो जाता है जिसकी रचना प्राचीन ऋषियों ने वेदार्थ के स्पष्टीकरण के लिये की थी। ब्राह्मण, निरुक्त, व्याकरण, प्रातिशाख्य आदि वे ग्रन्थ हैं जो वेदार्थ में अत्यन्त सहायक हैं। स्वयं ऋषि दयानन्द ने अपनी वेदभाष्य भूमिका के भाष्यकरण शंका समाधान विषय में लिखा है— (क्रमशः)

आर्यसमाज लोहगढ़ का भव्य समारोह

(पृष्ठ तीन का शेष)

इससे उत्पन्न होने वाले दुष्परिणामों का सब उत्तर दायित्व केन्द्रीय सरकार पर होगा।

यह सम्मेलन अपने आर्य नेताओं को पूरा विश्वास दिलाता है कि इस सम्बन्ध में जो भी उपयुक्त कार्यक्रम वह प्रारम्भ करेंगे भारतीय जनता उनको पूरा सहयोग देगी।

टैलीफोन न० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक ४८) २२ मार्गशीर्ष २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०— ६ दिसम्बर १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

तुभ्यं धावन्ति धेनव:

प्रभो! हमारी ये धेनव:—स्तुति करने वाली वाणियां स्तुतियां तुभ्यम्-तेरे लिए ही धावन्ति दौड़ती हैं। हम जितना भी स्तुतिगान करते हैं। यह सारा आपके लिए है।

कृधि नो यशसो जने

हमारे देव! कृपा करो! नः-हमें जो आप के उपासक हैं, यशस:-यश कीर्ति वाले कृधि-कर दीजिए जने-सारे जनमंडल में यशस्वी बना देवें। हम कीर्ति वाले बन कर रहें। आप ऐसी कृपा करें।

विश्वा अप द्विषोजहि

परमेश्वर! हमारे अन्दर या बाहर के जितने भी द्विषे-शत्रु विरोधी या द्वेषी हैं वैन विश्वा-सब को अप-दूर भगा देवें न अहि-नाश कर देवें। कोई भी शत्रु न रहने पाये ताकि विश्व को हानि न हो।

सा म वे द से

वे दा मृ त

ओ३म् त्वं नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडोऽवयासिसीष्ठाः। यजिष्ठो वन्हितमः शोशुचा नो विश्वा द्वेषांस प्रमुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा ॥

इदमग्नि वरुणाभ्यां इदन्न मम ॥

ऋक् मंडल ४ सूक्त १ मं० ४

अर्थ—हे अग्ने—प्रकाशमय देव! (त्वं) आप (नः) हमें (वरुणस्य) स्वीकार करने के योग्य (विद्वान्) (देवस्य) देव का (हेडः) अश्रद्धा, अनादर का भाव है उसे (अवयासिसीष्ठाः) दूर कर दीजिये। अपना प्रेम पैदा करें। आप (यजिष्ठः) यज्ञमय हो पूजनीय हो तथा (वन्हितमः) सब के धारक हो, सब से श्रेष्ठ हो। आप (शोशुचानः) सदा प्रकाशमय तेजस्वी हो। कृपा करके (विश्वा) सारे (द्वेषांसि) दुष्टभावों को (प्रमुमुग्धि) पूर्णरूप से हटा देवें, दूर कर देवें (अस्मत्) हम से (स्वाहा) यह मेरा कथन सत्य हो। यह आहुति प्रभु की अग्नि व वरणीय वरुण रूप शक्तियों के लिए है मेरे लिए नहीं है।

भाव:—अग्नि स्वरूप! संसार के चमकीले चित्र में फंसकर हम आप से दूर हो जाते हैं। आपके प्रति आस्था कम होकर भोगों में भक्ति बढ़ जाती है। कृपा करो पिता जी! अपनी भक्ति का भाव प्रदान करें। आप पूजनीय हैं, श्रेष्ठतम हैं तथा विश्व के धारक हो, पवित्र करने वाले हो, जितने भी द्वेष के भाव हैं जिन से हम गिरते जाते हैं वे हम से दूर कर दीजिए। आपके हम परम भक्त बन कर जीवन में ऊंचे उठ सकें—सं०

ऋषि दर्शन

सदा सुखदाः सौम्याः

राज्यसभा में जो लोग आये वे सदा दूसरों को सारी प्रजा को सुख देने वाले होवें। गम्भीर तथा नम्रस्वभाव वाले शान्त प्रकृति के होने चाहिए। उद्दण्ड अभिमानी स्वभाव के न होवें।

राजकर्मास्ति तद् द्विविधम्

यह जो राज्य चलाने का काम है, रोज धर्म या शासन है, यह दो प्रकार का होता है राष्ट्र के राज्य विधान के दो ही रूप हुआ करते हैं। दोनों ही बड़े आवश्यक हैं। शासन रथ के दो पहिए हैं।

एकं सहस्वद् द्वितीय मुग्रवत्

उन दोनों में एक तो शान्ति व प्रेम है और दूसरा उग्रता से दण्डविधान है। राज्य का काम चलाने के लिए शान्ति की भी आवश्यकता है तथा दंड भी जरूरी होता है केवल एक से काम नहीं चला करता।

भा ष्य भू मि का से

अधिष्ठाता—श्री संतोषराज जी सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

(गतांक से आगे)

जब भगवान ने अपना आश्रम बना लिया तब वहां।

४१. कृत्वाभिषेकं रामस्तु सीता सौमित्रिरेव च।
तस्मात् गोदावरी तीरात्
ततो जग्मुः स्वमाश्रमम्॥
आश्रमं तमुपागम्य
राघवः सह लक्ष्मणः।
कृत्वा पौर्वाह्णिकं कर्म
पर्णे शालामुपागमत्॥
अरण्य काण्ड १७-१,२

अर्थात्— स्नान करके श्रीराम लक्ष्मण और सीता तीनों ही—उस गोदावरी तट के अपने आश्रम में लौट आये॥१॥

इस आश्रम में आकर लक्ष्मण सहित श्रीराम ने पूर्वाह्न काल के सन्ध्या हवन आदि कार्य पूर्ण किये और पर्ण शाला में आकर बैठे॥२॥

बज्रांग वली हनुमान सीता माता का खोज करते लंका भर में घूम गये, कोई पता न चला। तब नदी के तीर पर पहुँच कर सोचने लगे कि यदि सीता जीवित है और है भी कहीं निकट ही तो—

४२. सन्ध्या कालमनाः
श्यामा ध्रुवमेष्यति जानकी
नदीं चेमां शुभ जलां
सन्ध्यार्थे वर-वर्णिनी
सुन्दर काण्ड १४-४९

अर्थात्—यह प्रातः काल की सन्ध्या का समय है, इस में मन लगाने वाली श्यामा यौवन। जनक नन्दिनी सीता सन्ध्या के लिए इस पुण्य सलिला नदी के तट पर अवश्य पधारेगी।

४३. यदि जीवति सा देवी
ताराधिप निभानना
आगमिष्यति सावश्य
मिमां शीत जलाम् नदीम्॥
सुन्दर कांड १४-५१

अर्थात्—यदि चन्द्रमुखी सीता जीवित है तो वे इस शीतल वाली

धार्मिक चर्चा—

ब्रह्मयज्ञ प्रसारक महर्षि दयानन्द की जय

(ले०—श्री पिण्डीदास जी ज्ञानी आर्य समाज लोहगढ़ अमृतसर)

****

सरिता के तट पर (सन्ध्या के लिये) अवश्य पदार्पण करेंगी।

जब सीता को दूसरी बार बनवास मिला तो वह महर्षि बाल्मीकी के आश्रम में रहती थीं। शत्रुघ्न उस आश्रम में आये। उसी रात सीता के दोनों जुड़वें पुत्र कुश और लव का जन्म हुआ। यह समाचार सुनकर शत्रुघ्न को इतनी प्रसन्नता हुई कि वह वर्षा ऋतु की रात बात की बात में व्यतीत हो गई तब—

४४. प्रभाते सुमहावीरः
कृत्वा पौर्वाह्णिकीं क्रियाम्
मुनिं प्रांजलिरामन्त्र्य
ययौ पश्चान्मुखः पुनः
उत्तर कांड ६६-१४

अर्थात्—सवेरा होने पर पूर्वाह्न काल का कार्य—सन्ध्या वन्दन आदि करके महा-पराक्रमी शत्रुघ्न हाथ जोड़ मुनि से विदा ले पश्चिम दिशा की ओर चल दिये।

भगवान श्री कृष्ण और संध्या महाभारत के कुछ प्रमाण

जब भगवान श्री कृष्ण सन्धि दूत बनकर हस्तिनापुर की ओर जा रहे थे, रास्ते में वृकस्थलनामी स्थान के पास पहुंचने पर—

४६ वृकस्थलं समासाद्य
केशवः पर वीरहा।
प्रकीर्णे रश्मावादित्ये,
व्योम्नि वै लोहितायति॥
अवतीर्य रथात्तूर्णं कृत्वा
शौचं यथा विधि।
रथमोचनमादिश्य
सन्ध्यामुपविवेश ह॥
उद्योग पर्व०अध्याय८४ श्लोक २०-२१

अर्थात—शत्रु वीरों का संहार करने वाले भगवान श्री कृष्ण जब वृकस्थल में पहुंचे, उस समय नाना किरणों से मण्डित सूर्य अस्त होने लगे और पश्चिम के आकाश में लाली छा गई। तब भगवान ने शीघ्र रथ से उतर कर उसे खोलने की आज्ञा दो और विधि पूर्वक शौच स्नान करके सन्ध्योपासना करने में लग गये।

जब भगवान् श्री कृष्ण हस्तिनापुर को जाने लगे तब—

४५. ततो व्यपेत तमसि,
सूर्ये विमल वर्द्धने॥६
मङ्गल्याः पुण्यनिर्घोषा
वाचः शृण्वंश्च सूनृता।
ब्राह्मणानां प्रतीताना-
मृषिणामिव वासवः॥८
कृत्वा पूर्वाह्णिकं कृत्यं
स्नातः शुचिरलंकृतः।
उपतस्थे विवस्वन्तं
पावकं च जनार्दनः॥६
उद्योग० अध्याय ८३

अर्थात्—तदनन्तर जब रात्रि का अन्धकार दूर हुआ और निर्मल आकाश में सूर्य देव के उदित होने पर भगवान जनार्दन ने सब से पहले प्रातःकाल ऋषियों के मुख से मंगल पाठ सुनने वाले देवराज इन्द्र की भांति विश्वस्त ब्राह्मणों के मुख से परम मधुर मंगल कारक पुण्याह वचन सुनते हुए स्नान किया। फिर उन्होंने पवित्र वस्त्राभूषणों से अलङ्कृत हो सन्ध्या वन्दन, सूर्योपस्थान एवं अग्निहोत्र आदि पूर्वाह्न कृत्य सम्पन्न किए।

भगवान श्रीकृष्ण विदुर गृह में थे। दुर्योधन तथा शकुनि द्वारा बुलाये जाने पर वहां से चलते समय—

४८. तत उत्थाय दाशार्हं
ऋषभः सर्व सात्वताम्
सर्वमावश्यकं चक्रे प्रातः
कार्यं जनार्दनः॥५
कृतोदकानुजप्यः सहुताग्निः
समलङ्कृतः।
ततश्चादित्य मुद्यन्त
मुपातिष्ठत माधवः॥६
अथ दुर्योधनः कृष्णं
शकुनिश्चापि सौबलः
सन्ध्यां तिष्ठन्तमभ्येत्य
दाशार्हमपराजितम्॥७
उद्योग० अ० ६४

अर्थात्—तब समस्त यदुवंशियों के शिरोमणि दाशार्ह श्री कृष्ण ने शय्या से उठकर प्रातः काल का समस्त आवश्यक कर्म क्रमशः सम्पन्न किया॥५॥

सन्ध्या तर्पण और जप करके अग्नि होत्र करने के पश्चात् माधव ने अलंकृत होकर उदय काल के सूर्य का उपस्थान किया॥६॥

इसी समय राजा दुर्योधन और सुबल पुत्र शकुनि भी सन्ध्योपासना में लगे हुए अपराजित वीर दाशार्ह नन्दन श्री कृष्ण के पास गये॥७॥

वृकस्थल में रात्रि व्यतीत करके हस्तिनापुर की ओर चलने से पूर्व प्रातः उठकर—

४७. प्रातरुत्थाय कृष्णस्तु
कृतवान सर्वमाह्निकम्।
ब्राह्मणै रभ्यनुज्ञातः
प्रययौ नगरं प्रति॥१॥
उद्योग० अ० ७६

अर्थात्—वृकस्थल में प्रातः उठ कर भगवान् श्री कृष्ण ने सारा नित्य कर्म (शौच, सन्ध्या, अग्नि होत्र) पूर्ण किया। फिर ब्राह्मणों की आज्ञा ले कर हस्तिनापुर की ओर चले।

पाण्डवों की सन्ध्या करना

सन्धि यात्रा से लौट कर जब भगवान् श्रीकृष्ण उपप्लव्य नगर में आये और हस्तिनापुर का समस्त वृत्तान्त पाण्डवों को सुनाकर विश्राम करने के लिए निजस्थान पर गये।

(क्रमशः)

आर्य जगत

वर्ष २४] रविवार २०२१, ६ दिसम्बर १९६४ [अंक ४८

भारत की संस्कृति सारे विश्व को जीवन पाठ पढ़ाती है

आज की योजनाओं में चरित्र निर्माण योजना नहीं है

तपस्वी संत श्री. श्याम जी पराशर एम. ए. का भाषण

श्री युत सन्त श्याम जी पराशर एम. ए. भारत के विद्वानों में प्रसिद्ध हैं। लिखने और बोलने की दोनों शक्तियां प्रभु से मिली हुई हैं। आर्यसमाज किला के जल्से में विशाल जनसमुदाय में प्रभावशाली भाषण देते हुए आपने कहा—

आर्यसमाज सारे देश के समाज का चौकीदार है। स्वामी दयानन्द जी युगपुरुष हैं। कई लोग समझते हैं कि आर्यसमाज का काम समाप्त हो गया है। ऐसा कहना मानना भारी भूल है। आर्यसमाज की बड़ी आवश्यकता है। आज देश में कपड़े, लोहे फौलाद आदि के बड़े २ कारखाने बन रहे हैं, किन्तु मानव निर्माण करने का कोई भी केन्द्र नहीं। अरबों खर्बों रुपयों की योजनाओं में मनुष्य बनाने की एक भी योजना नहीं है। यह काम आर्य समाज को करना है। आज के समय में हम तो साकार निराकार के झगड़े में पड़े हुए हैं। ईश्वर को मानते तो दोनों हैं। पर आप जानते हैं कि अब तो ऐसा वर्ग पैदा हो चुका है जो ईश्वर को मानता ही नहीं है। नास्तिकता का प्रवाह बढ़ता चला आ रहा है। यह काम समाज ने करना होगा। भारत का चरित्र कितना ऊंचा था। सोचें कि बनवास तो राम को मिला था लक्ष्मण को नहीं। यदि उस समय आज की ६४ स्टेशन की मांग होती तो कहती कि राम जाते हैं तो जाने दो तुम राज्य पर अधिकार कर लो। पर रामायण की माँ उस पवित्र युग की न थी। आर्यसमाज पिछले युग को साथ लेकर वर्तमान युग से मिलाना चाहता है। सुमित्रा ने कहा—भरत ! यदि राम वन में जाते हैं तो तुम्हारा अयोध्या में मैं कोई काम नहीं। राम ने रावण को चरित्र बल से जीता, केवल शस्त्रों ने नहीं। हमारा राष्ट्र महान् है। हमारा धर्म परिपूर्ण है।

शिव हमारा देश है और पद्धति इस की संस्कृति है। दुर्गा की वीरता आदि दस भुजाएं हैं। विदेशियों ने हमारे ग्रन्थों में आये शब्दों के उल्टे २ अर्थ करके भ्रम में जनता को डालने का प्रयास किया है पर वे सफल न हो सके। आर्य समाज की सब से बड़ी आवश्यकता यह है कि भारतीय सरस्वती संस्कृति को गङ्गा में जो बरसाती पानी आकर मिल गया है उसका फिल्टर कर दें। आज देश का चरित्र गिरता जा रहा है। इसे ठीक करना है। भविष्य क्या होगा ? आज तो भारत को इंगलैंड व अमरीका बनाने का प्रयत्न किया जाने लगा है। आज मर्यादाएं समाप्त हो रही हैं। गङ्गा जी जब तक मर्यादा में रहती है तभी तक वह माता है और जब ही मर्यादा टूट जाए तो वह डायन बन जाती है। देश में गुरु शिष्य की मर्यादा ऊंची थी आज केवल Money is the goal of life धन ही जीवन का उद्देश्य बन गया है। सब कुछ समाप्त होता जा रहा है। आज धन से लड़का मिल सकता है पर पुत्र नहीं मिलता। औरत मिल सकती पर धर्मपत्नी नहीं, ऐनक मिलती पर आंख नहीं। पलंग मिलता पर नींद नहीं। गीता मिलती पर ज्ञान नहीं। मूर्ति मिल सकती पर भगवान नहीं। बादाम मिलते पर ताकत नहीं। पाउडर मिलता पर सुन्दरता नहीं। चित्र मिल सकता है चरित्र नहीं। शान मिल सकती पर मान नहीं। आसक्ति मिलती पर शक्ति नहीं। मानव मिल सकता है पर मानवता नहीं मिल सकती। एक धनी ने ढाई हजार नोटों को जला कर एक मित्र के लिए चाय बनाई पर उस में मीठा नहीं डाला। उसने कहा कि इस में दो पैसे का मीठा भी डाल लिया होता।

भारत की सभ्यता में सन्तों का स्थान पहिली पंक्ति में था और धनिकों का दूसरी पंक्ति में। किंतु अब धनिक पहिली पंक्ति पर आ गए हैं सन्त पीछे कर दिए गए हैं। यदि यह देश सन्तों के हाथ में होता तो वर्तमान पतन की अवस्था न होती। बर्थ कंट्रोल के स्थान पर Self Control करना चाहिए वेद में तो प्रजा मांगने की प्रार्थनाएं आती हैं हां पुत्र मांगो लड़का मत मांगो। ऋषियों ने तो १६ संस्कार बनाए पर आज केवल डैम बनाए जाते हैं। हमारी सभ्यता में पूर्व आश्रम जमा का है, दूसरा तफरीक का, तीसरा गुणन का और चौथा भाग करने का है। आज का खेल और ही बन गया है। देवता नहीं रहे, धर्म कम हो रहा है। धर्म तथा ईश्वर के आधार पर देश ऊंचा उठ सकता है। धर्म के बिना चरित्र नहीं बनता। (Morality without Dharam cannot stand.) पिछला युग वर्तमान काल के साथ मिलाना है। आर्य समाज को यह काम करना होगा।

महोत्सव का प्रसाद

आर्यसमाज (किला) विक्रमपुरा जालन्धर शहर का महान वार्षिकोत्सव गतसप्ताह सम्पन्न हो गया। कथा, यज्ञ, जलूस तथा जल्से का समारोह हर प्रकार से धूमधाम से हुआ। श्री ज्ञानी पिण्डीदास जी अमृतसर ने बड़ा ठोस प्रस्ताव इस में पेश करके उस पर बड़ा ही प्रभावशाली भाषण दिया। कानपुर से प्रसिद्ध फिलास्फर श्री डाक्टर दीवान चन्द जी एम. ए. कानपुर का फिलास्फी से भरा प्रवचन भी कमाल का था। एक से एक भाषण जीवन प्रद था। ऋषि लंगर का प्रबन्ध भी सुन्दर था। धर्म की सरिता बहती रही इसके लिए वयोवृद्ध श्री डाक्टर हुकमचन्द जी भल्ला तथा सारे समाज के, विशाल संस्थाओं नगर की सारी समाजों एवं आसपास के प्रेमियों को बधाई हो। नेताओं के प्रवचनों का मीठा प्रसाद आर्यजगत के प्रेमी भाईयों बहिनों की सेवा में कुछ इस अंक में और कुछ अग्रिम अंक में दे रहे हैं। हंसराज महिला कालेज की छात्राओं ने वेदमंत्रों के मधुर उच्चारण में मन्त्र मुग्ध कर दिया।

—त्रिलोक चन्द्र

दयानन्द महाविद्यालय, शोलापुर की सफलता

दि० ६ नवम्बर को अजमेर में अखिल भारतीय आंतर महाविद्यालयीन हिंदी वादविवाद प्रतियोगिता सम्पन्न हुई। दयानन्द महाविद्यालय ने ट्राफी जीत ली। कु० चन्द्रकला डागा तथा श्री नान्नवकर रा. गो. ने प्रतियोगिता में भाग लिया था। कु० डागा को प्रथम पुरस्कार मिला।

भगवानदास—आचार्य

भाषा, धर्म और संस्कृति के आधार पर राष्ट्रनिर्माण करें

आर्यसमाज महर्षि दयानन्द के स्वप्न को साकार बनाएं

पंजाब के पूर्व शिक्षामन्त्री श्री यश जी का भाषण

आयसमाज (किला) विक्रमपुरा जालन्धर के महोत्सव में भागी जनसमुदाय में अपना ओजस्वी भाषण आरम्भ करते हुए श्री. यश जी एम. एल. ए. पूर्व शिक्षा मन्त्री ने कहा—

आर्य समाज के सन्मुख वक्त का सब से बड़ा चैलेंज देश में राष्ट्रीयता की भावना को मजबूत बनाना है।

आर्यसमाज इस चैलेंज को स्वीकार करने में समर्थ है और ऐसा करके वह न केवल भारत के भविष्य को निश्चित एवं सुरक्षित बना सकता है बल्कि महर्षि दयानन्द द्वारा सौ वर्ष पूर्व राष्ट्र निर्माण के लिए की गई एक कल्पना का भी साकार कर सकता है।

आज देश का जो ढांचा खड़ा है उसमें इस बात की कोई गारंटी नहीं कि अवांछित लागों के आगे आने से देशवासी आपस में लड़ना-झगड़ना शुरू नहीं कर देंगे। देश की वर्तमान तस्वीर इस बात का संकेत है कि चाहे हम अध्यात्मवाद और समाज सुधार की कितनी ही बातें करें, हमारा भविष्य तब तक असुरक्षित है और सुरक्षा अनिश्चित है जब तक राष्ट्र का निर्माण नहीं होता देश में एकता का अभाव है। चीन के आक्रमण के तुरंत बाद लोगों में एकता आई लेकिन भय से आई एकता पर हम भरोसा नहीं कर सकते। आज भी लोगों में प्रांतीय भावनाएं हैं, भाषा और धर्म के नाम पर उन्माद है।

महर्षि दयानन्द ने देश-वासियों में राष्ट्रीयता की भावना लाने के लिए कुछ कल्पनाएं की जो दुर्भाग्य से अभी तक साकार नहीं हुई। महात्मा गांधी और श्री नेहरू तथा अन्य राजनैतिक नेताओं ने अपने ढंग से राष्ट्र के निर्माण के लिए प्रयत्न किए लेकिन राष्ट्रीयता की पकड़ आज उतनी मजबूत नहीं है जितनी होनी चाहिए।

****

इतिहास के उस दौर में, जिस में पृथ्वीराज चौहान, महाराणा प्रताप, शिवाजी मरहटा, गुरु गोविंदसिंह और टीपू सुलतान जैसे बहादुर सेनापति पैदा हुए, ये सभी वीर एवं साहसी योद्ध एक संयुक्त मोर्चा बना कर नहीं लड़ सके। इन में से कोई मेवाड़ के लिए, कोई महाराष्ट्र के लिए और कोई पंजाब या मैसूर के लिए लड़ा। यदि ये सभी समूचे भारत के लिए लड़ते तो भारत का इतिहास कुछ और होता। महर्षि दयानन्दने इतिहासके इसी दौर को अपने सामने रख कर एक सौ वर्ष पूर्व महारानी विक्टोरिया के सन्मान में दिल्ली में आयोजित एक दरबार के अवसर पर एक राष्ट्र के निर्माण का प्रयस किया और इस सिलसिला में देश-भर से सभी धर्मां के अनुयायियों की एक सभा बुलाई लेकिन बात सिरे न चढ़ी। यदि महर्षि का वह प्रयास सफल हो जाता तो आज के भारत का नक्शा कुछ दूसरा ही होता।

भाषा, धर्म और संस्कृति ही एक राष्ट्र का आधार बन सकते हैं। भारत जैसे देश में भाषा राष्ट्र को एक सूत्र में बांधने में बहुत बड़ा योगदान कर सकती है। हिन्दी को राष्ट्र भाषा स्वीकार किया गया है अब इस को राजभाषा के रूप में ग्रहण करने का विरोध सिर्फ वही लोग कर रहे हैं जिन के अपने कुछ निहित स्वार्थ हैं। यह कहना सरासर गलत है कि अंग्रेजी भारत की एक संयोजक भाषा है। यह विचार तो कुछ राजनीतिज्ञों या अफसरों का हो सकता है आम जनता का नहीं।

श्री यश ने राष्ट्र भाषा के साथ-साथ एक राष्ट्र लिपि बनाने का भी सुझाव दिया और कहा कि इस से भाषा के सम्बन्ध में अनेक बड़ी समस्याएं हल हो जाएगी। संस्कृति के बारे में उन्होंने कहा कि नाच गाना संस्कृति नहीं है। संस्कृति वास्तव में हमारे जीवन के आधारभूत संस्कार है। चाहे भारत के विभिन्न भागों के लोगों का पहरावा और खाना-पीना भिन्न-भिन्न हैं तथापि संस्कृति एक है। जहां तक धर्म का सम्बन्ध है हमारे देश में अनेक धर्मों के लोग हैं लेकिन मेरा यह निश्चित मत है कि आर्य समाज के दस नियमों को आधार बनाकर समूचे विश्व को एक सुत्र में बांध सकते हैं

महर्षि दयानन्द ने समाज-सुधार का एक क्रान्तिकारी कार्यक्रम पेश किया और अपने महान प्रयत्नों से समाज का कायाकल्प भी किया। उन्होंने सहायता, प्यार और सेवा से ओत-प्रोत एक समाज की रचना को अपना लक्ष्य बनाया। महर्षि के कार्यक्रम को न केवल आर्य समाज ने बल्कि सभी समाज सुधारक संस्थाओं ने एक या दूसरे रूप में स्वीकार किया और पिछले १०० वर्ष में समाज ने जो उन्नति की है उसका कहीं उदाहरण नहीं मिलता।

आर्य जगत रोहतक के समाचार

कार्तिक मास सं० वि० २०२१ की ५ से ८ तिथि तक भारत की २० करोड़ नारियों की सरताज श्रीमती स्वामिनी विद्या-उत्तमा जी यति बी. ए. बी. टी. प्रभाकर ने रोहतक के वैदिक भक्ति आश्रम, आर्य धन्वंती कन्या हाईस्कूल, आर्य स्त्री समाज बाबरा तथा आर्यसमाज प्रधाना मोहल्ला में अपना प्रवचन दिया।

महर्षि निर्वाणोत्सव के उपलक्ष्य में आर्यसमाज प्रधाना मोहल्ला की ओर से तीन दिन तक विविध मोहल्लों में प्रभात फेरी निकाली गई।

मग्घर मास सं० वि० २०२१ की प्रथमा से एकादश तिथि तक दूसरी बार स्वामिनी विद्या-उत्तमा जी ने अपने शारीरिक दुःख की चिन्ता न करके चार दिन वैदिक भक्ति आश्रम, चार दिन आर्य समाज प्रधाना मोहल्ला तथा एक दिन आर्य समाज बाबरा, आर्य स्त्री समाज शिवाजी कालोनी तथा आर्यसमाज माडल टाऊन में वेद बजा कर अपने वचन का परिपालन किया। निःसंदेह पूज्या स्वामिनी जी भगवान दयानन्द जी के पथ की अनुगामिनी हैं और एक वेद-प्रचार की पीड़ा लिये जहां तहां घूम रही हैं।

(विद्यार्थी रोहतक निवासी)

अदालती नोटिस

सीनियर सबजज हिसार—

श्रीमती शान्तिदेवी विधवा वजीरचन्द्र साकन दायमा तहसील जिला हिसार बनाम रिश्तेदारान

दरखास्त बराए सार्टिफिकेट जान नशीनी तरका वजीर चन्द्र मुत्तवफी बराए ४३५३/५

चूंकि अवामुनास (जनरल पबलिक) ने मुकद्दमा में दिवानी न्यायालय की डिग्री के इन्तकाल द्वारा इन्तकाल धारी होने के आधार पर इस न्यायालय में उक्त डिग्री के निष्पादन के लिए प्रार्थना पत्र पेश किया है। ईसलिए आपको सूचना दी जाती है कि आप इस न्यायालय में दिनांक २६. १२. ६४. को उपस्थित हों और यदि डिग्री के जारी न किए जाने के सबन्ध में आप को कोई आपत्ति हो तो उसे पेश करें।

दस्खत
सीनियर सबजज हिसार

ऋषि दयानन्द ने संस्कृति के गौरव को जागृत किया

हमें किसी के भय से भयभीत होने की ज़रूरत नहीं

आर्य प्रादेशिक सभा के प्रधान प्रिंसिपल रलाराम जी एम. ए. एम. एल. ए. का भाषण

***************°***********

आर्यसमाज किला विक्रमपुरा जालन्धर के वार्षिकोत्सव पर विशाल पिण्डाल में आर्यप्रादेशिक सभा पंजाब जालन्धर के मान्य प्रधान सौम्य मूर्ति प्रिंसिपल रलाराम श्री एम. ए. एम. एल. ए. ने अपना ओजस्वी भाषण देते हुए कहा—

आर्यसमाज को धार्मिक व सामाजिक क्षेत्र में कार्य करते हुए शताब्दी होने लगी है। इस अर्से में स्वामी दयानन्द जी ने देश के लिए क्या विशेष देन दी है? यह विचारना चाहिए जब ऋषि ने कार्य आरम्भ किया, उस समय का भारत भयंकर प्रतीत होता है। उस समय हम बड़े निराश थे। कारण स्पष्ट है। मुसल्मानों का आक्रमण हुआ। हम कितने पामाल हुए। परोपकार की भावना व्यक्तिगत जीवन में हो सकती है पर राजनीतिक जीवन में कोई आक्रान्ता हम पर दया करेगा? ऐसा मानना भूल थी। एक हजार वर्षों तक हम अपने को सम्भाल न सके। मध्यकाल के भारत का इतिहास भयानक है। इतने समय तक कौन दास रहा है? सभ्यता में तो कोई भी देश हमारी तुलना में आ ही नहीं सकता। इंगलिस्तान रोम के अधीन रहा पर उसकी दासता भी ३०० वर्षों तक ही रही। पर हम तो हजार वर्ष दास रहे। इस पर नितान्त विचार करते रहना चाहिए कि क्या कारण थे? मुस्लिमराज्य में हम परतन्त्र भी रहे अपमानित भी बड़े हुए, किन्तु एक विशेषता बनी रही कि हमने अपनी संस्कृति को नहीं छोड़ा राजनीति दासता थी पर संस्कृति के प्रति हमारे अन्दर हीनभावना कभी नहीं आई हमने उनकी संस्कृति को भारतीय संस्कृति से बेहतर नहीं समझा। किन्तु अंगरेजी राज्य में यह अवस्था बदल गई। तब जो भी भारतीय पढ़ गया वह समझता था कि हमारे पास रखा ही क्या है? पढ़े लिखे परिवार ईसाईयों में चले गये। हिन्दु के पांव मुस्लिम शासन में तो नहीं उखड़े किन्तु अंग्रेजी शासन में उखड़ गए। हीन भावना ने हमें उस समय पराजित सा कर दिया था। और लाला लाजपतराय जी के पिता जी पांच पांच नमाज पढ़ते थे। वह कहते थे कि मुझे एकेश्वरवाद मिलता ही इस्लाम में है (Oneness of God) का विचार हिन्दुधर्म में है ही नहीं।

भगवान् को हिन्दुसमाज का मिटना मंजूर न था। स्वामी दयानन्द जी ने इस हीनता की घटिया मनोवृत्ति को बदला। वेद के द्वारा हिन्दुसमाज को जगाया। कहा कि ईश्वर की एकता का सिद्धान्त सब से पूर्व वेद में ही मिलता है। एक सद्विप्रा बहुधा वदन्ति एक ही परमेश्वर के अनेक नाम हैं। कोई उसे अग्नि कह कर पुकारता है, कोई उसे यम, रुद्र आदि से याद करता है गीता में भी आता है वायुर्यमोऽग्नि :—वही वायु, यम, अग्नि, वरुण आदि नाम से याद किया जाता है। यह संस्कृति से गौरव करने की बात दयानन्द की देन है। यह सब से बड़ा उपकार है कि संस्कृति के रूप में हीन भावना को समाप्त कर दिया। राजनीतिक भावना में भी उनका महान् स्थान है। सत्यार्थ प्रकाश में सुनहरे शब्दों में लिखा कि विदेशी राज्य चाहे कितना ही अच्छा क्यों न हो, वह अपने राज्य की समता नहीं कर सकता। भारत के उस समय के वायसराय लार्ड नार्थब्रुक के साथ बातचीत में स्पष्ट कह दिया कि आप के राज्य के यहां कायम रहने की मैं कभी प्राथना नहीं कर सकता (**Dayanand cannot pray for foreign rule in India.**) सारे समाज की हीनभानवा को बदल कर हमारा मस्तक गौरव से बहुत ऊंचा कर दिया। हम संस्कृति में किसी भी पश्चिमी देश के आभारी नहीं हैं। हमारा इस दिशा में सिर मान से ऊंचा हो है सारे देश में इस प्रकार की उदास भावना स्वामी दयानन्द ने पैदा की हमें इस महान उपकार के लिए कृतज्ञ रहना चाहिए। उन्होंने अंग्रेजों की चमकीली संस्कृति का पर्दा फाश कर दिया। हमें अब अपनी सभ्यता पर मान है और सदा होना चाहिए। इस समय भारत में एक करोड़ के लगभग ईसाई हैं। केरल व नागालैण्ड में उनकी अधिकता है। आज भी ईसाई प्रचार की बड़ी चर्चा है। बात यह है कि यह समस्या केवल धार्मिक नहीं है अपितु सामाजिक तथा राजनीतिक हैं। **It is not a religious problem, but it is a social and econominal problem.** लाखों व्यक्ति हम से अपमानित हो कर चले गए। हम ने उन से इन्सानों का व्यवहार नहीं किया। मानव ने मानव को ठुकराया। यह हमारी कमजोरी थी। बाइबल को पढ़ कर ईसाई बनने वाले बहुत विरले हैं व्यवहार से ठुकराये जाने तथा आर्थिक दशा में गिरे लोग बहुत गए। अंगरेज तो अछूत-स्थान भी बनाना चाहता था पर स्वामी दयानन्द के प्रचार तथा बाद में महात्मा गांधी के मरणव्रत के महान् पग से उसे सफलता न मिल सकी। ये हिन्दुसमाज का अंग बने रहे। **Soclal Justice and epuality** होनी जरूरी है। वर्गों का विभाग जन्म से न था पर काम से बना पर बाद में गिरावट आ गई। स्वामी जी ने इस बुराई को भी रोक कर समाज में सब को समान स्थान दिलाया। स्वामी जी का उत्तराधिकारी आर्यसमाज ही है। आज बहुत बड़े काम करने की आवश्यकता है। हमें चाहिए कि सरकार पर जोर देवें कि इन पिछड़ी जातियों की आर्थिक अवस्था ठीक करे? इन को आर्थिक सहायता दे। इससे वे उधर नहीं जायेंगे। यह समानता की भावना भी स्वामी दयानन्द की देन है। आर्यसमाज को हर प्रकार का सहयोग देवें।

★★

सभा मन्त्री जी की उदारता

आर्य प्रादेशिक सभा के महा मन्त्री प्रिंसिपल ज्ञानचन्द जी भाटिया ने आर्यजगत सभा पत्र के चार ग्राहकों के लिए आधी कीमत अपनी उदारता से अपनी जेब से देनी स्वीकार की है। ये चार ग्राहक शोलापुर महाराष्ट्र के श्री प्रो. राजेन्द्र जी जिज्ञासु एम. ए. दयानन्द कालेज की इच्छा पर है। मान्य सभा मन्त्री जी का आर्य जगत इस उदारता का बड़ा आभारी है। अन्य समाजों व सज्जनों से प्रार्थना है कि वे भी श्री मन्त्री सभा जी के समान उदारता का परिचय देकर सभा को सहयोग देते रहें—सं०

सभ्य संसार के समक्ष एक आवश्यक प्रश्न

संसार के प्रत्येक मानव में यह प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है कि वह उत्तरोत्तर उत्कृष्टतासे उत्कृष्ट पथ की ओर अग्रसर होने को समुद्यत रहता है। निर्बुद्धि मनुष्य भी सदैव के लिए हीनावस्था में पड़े रहना पसन्द नहीं करता। यह और बात है कि साधनों के अभाव तथा उचित पथ प्रदर्शन न मिलने से वह प्रगति पथ पर पग रखने से विवश रहे। परन्तु उत्कृष्टावस्था को प्राप्त करना तो प्रत्येक मनुष्य का लक्ष्य होता ही है।

यह उत्कृष्टता उसे सत्यमार्ग के ग्रहण करने से ही प्राप्त होती है, जिसे ग्रहण करना, मानव मात्र का परम कर्त्तव्य है। जो सत्य मार्ग को जान कर भी असत्य मार्ग में पड़े रहते हैं वे आत्म हत्यारे हैं। इसी लिये आर्यसमाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द ने आर्य-समाज के चतुर्थ नियम में लिखा है कि—

"सत्य को ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने के लिये सवदा उद्यत रहना चाहिये।"

अतः यदि कोई अपनी उन्नति तथा किसी धर्म की सत्यता को समझ-बूझ कर अपना धर्म परिवर्तन करता है तो हमें कोई आपत्ति नहीं। और हमें ही क्यों, हमारा तो विश्वास है कि संसार के किसी भी विचारशील निष्पक्ष एवं सभ्य कहे जाने वाले व्यक्ति को कोई भी आपत्ति नहीं हो सकती। परन्तु जब यही धर्म परिवर्तन न किसी व्यक्ति तथा समाज की निर्धनता, अज्ञानता तथा अविकसित अवस्था से अनुचित लाभ उठाते हुए किया जाता है अथवा करने का प्रयत्न किया जाता है तो हम बल पूर्वक पूछना चाहते हैं कि क्या संसार का कोई भी विचारशील सभ्य एवं निष्पक्ष व्यक्ति इस प्रकार के धर्म परिवर्तन के प्रयत्न को उचित कहने का साहस कर सकता है? हमारा निश्चित मत है कि सभ्य संसार की ओर से इसका उत्तर न कार में ही हो सकता है।

भारत में अखिल भारतीय ईसाई सम्मेलन

जो बम्बई में इसी नवम्बर मास २४ तिथियों में हो रहा है भारत की अबोध एवं धर्म ज्ञान से अपरिचित जातियों को इसी प्रकार पथभ्रष्ट करने का एक कुत्सित प्रयत्न है। ईसाइयों का अब तक का भारत में धर्म परिवर्तन का कार्य अनेक प्रकार के छल, प्रपंच तथा प्रलोभनों के सहारे ही चलता रहा है। इन छल प्रपंचों का वर्णन हम यहां नहीं कर रहे हैं क्योंकि इसके लिये स्थान और समय अपेक्षित है। यथा स्थान इसका विवरण अवश्य दिया जायगा। यहां इतना संकेतमात्र पर्याप्त होगा कि भारत में ईसाईमत में परिवर्तन के लिए प्रत्येक सम्भव छल प्रपंचों प्रत्येक प्रकार के प्रलोभनों का प्रयोग तथा मानवों की प्रत्येक विवशता से अनुचित लाभ उठाने का यथेष्ट प्रयत्न किया जाता रहा है जिसके फलस्वरूप लाखों मनुष्य धर्म भ्रष्ट किये गये।

लें० श्री पं० देवप्रकाश जी
उज्जैन मध्यभारत

> श्री पं० देवप्रकाश जी उज्जैन आर्यसमाज के बड़े ही तपस्वी अनथक कार्यकर्ता हैं। आप अरबी, फारसी के प्रकांड पंडित हैं अरबा संस्कृत विद्यालय अमृतसर के आचार्य रहे हैं। सादगी की सजीव मूर्ति हैं। मौन होकर वर्षों तक मध्यप्रदेश में काम कर रहे हैं। हजारों भीलों को ईसाईयों से छुड़ा कर वापिस धर्म में लाए हैं। आप प्रसिद्ध लेखक भी हैं।

मेरा अपना अनुभव

मैंने जीवन के २७ वर्ष भील प्रांत में बिताये हैं, जहां सहस्रों भील रहते थे। इन में से अधिकांश ईसाई बना लिये गये हैं। एक दिन मैंने रावटी के पादरी से कहा, जिन हजारों भीलों को आपने ईसाई बनाया है क्या वे यीशु का नाम भी ठीक ठीक बोल सकते हैं? यदि बोल सकते हों तो किसी से ठीक ठीक उच्चारण करवा कर बतलाइये। पादरी साहब क्या उत्तर देते। वे विवश थे। कोई यीशु का नाम लेना जानता ही न था। ऐसी दशा में हम ससार के सभ्य पुरुषों के सामने यह प्रश्न रखना चाहते हैं कि क्या इस प्रकार का धम परिवर्तन किसी भी दशा में मानवोचित कहा जा सकता है?

यदि नहीं, तो हम प्रत्येक सभ्य व्यक्ति से सानुरोध प्रार्थना करेंगे कि वे ईसाइयों के इस कुत्सित प्रयत्न का यथाशक्ति विरोध करें।

पोप पाल आज बम्बई पहुंचेंगे

राष्ट्रपति स्वागत करेंगे

बम्बई—राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन कल शाम ५ बजे पोप पाल का यहां पहुंचने पर स्वागत करेंगे। पोप यहां ३ दिन ठहरेंगे। वह ३ दिसम्बर की दोपहर को राजभवन में राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन से तथा उपराष्ट्रपति डा० जाकिर हुसैन और प्रधानमन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री से मिलने जाएंगे। राष्ट्रपति उसी दिन शाम ४ बजे पोप से मिलने जाएंगे।

"अपील"

दानी सज्जनों की सेवा में निवेदन है कि रोहतक नगर में विदेशी पादरियों के काले कारनामों का मुकाबला करने के लिए पिछले अठारह वर्षों से यत्न किया जारहा है।

इस समय तक पादरियों के जाल से "तीन लड़कियां" और "दस लड़के" छुड़ाए हैं, और "तीन परिवार ईसाई होने से बचाए हैं। लड़कों को प्राइमरी तक और दो लड़कों को प्रभाकर तक एवम् एक लड़की मैट्रिक तक शिक्षा दिला कर नरसिंग कोर्स दिलाया, अब वह सरकारी नौकरी करती है। इसी प्रकार एक लड़की प्राइमरी तक दूसरी आंठवीं में शिक्षा पा रही है। एक लड़का हिन्दी टाईप सीख रहा है।

मगर पादरी भी हाथ पर हाथ धर कर नहीं बैठा हुआ, अपितु अपनी सारी शक्ति झोंकी हुई है। आवश्यकता है कि वेद भगवान के साथ प्यार रखने वाले या भारत का हित चाहने वाले अपनी शुभ कमाई से नकदी, कपड़ा, अनाज तथा दवाईयां भेज कर हमें सहयोग दें, ताकि हम दुखियों के दुःख दूर कर सकें।

किशोरी लाल
प्रधान आर्यसमाज
प्रधाना मोहल्ला
भवानी दास
कार्य वाहक मन्त्री
आर्यसमाज प्रधान मोहल्ला
सुरजीत कौर प्रचारिका
मकान नं० ६७१ बी, ६
आर्य गली
रोहतक

आर्यसमाज (किला) विक्रमपुरा जालन्धर का भव्य समारोह

सारे नगर में आर्यसमाज अमर रहे का जय जयकार समाज की शक्ति का ठाठें मारता हुआ भव्य जलूस

पंजाब की केन्द्रीय आर्यसमाज (किला) विक्रमपुरा जालन्धर शहर का वार्षिकोत्सव महान मेला ता० २७ नवम्बर से २९ नवम्बर रविवार तक साईंदास एंग्लो वैदिक हायर सैकंडरी स्कूल के विशाल तथा सुन्दर सजे हुए पिण्डाल में बड़ी ही धूमधाम से सम्पन्न हो गया। यह महोत्सव सारे प्रांत का जलसा माना जाता है। इसकी भारी तैयारी की जाती है। उत्सव से पूर्व समाज के अपने नवनिर्मित मन्दिर के विशाल हाल में सोमवार रात से आर्य प्रादेशिक सभा के उपदेशक पं० त्रिलोकचन्द्र शास्त्री की वेद कथा पं. मेलाराम जी रेडियो सिंगर के सुरीले भजन होते थे। पं० ज्ञानचन्द जी के भी भजन हुए। एक रात पं० राजपाल मदन मोहन चिमटा-मंडली के मीठे भजन भी हुए। प्रातःकाल यजुर्वेद का भव्य यज्ञ चलता रहा। बाद में स्वामी विज्ञानन्द जी रोहतक वालों की अध्यक्षता में हुआ।

शुक्रवार दोपहर बाद स्कूल के पहले विशाल मैदान से आर्य समाज का शानदार जलूस निकला। सर्वप्रथम समाज के प्रधान श्रीयुत लाला सन्तोषराज जी के हाथों द्वारा ओ३म् ध्वजा लहराई गई। उनके गले में फूलों के बहुत हार डाले गए। महिला कालेज की छात्राओं ने बड़ा मीठा ध्वज गीत गाया। इस के बाद जलूस आरम्भ हुआ। आर्यसमाज की कितनी भारी शक्ति व संगठन है, कितनी बड़ी २ संस्थाओं की विशाल छावनियां इसके पास मौजूद हैं, कितनी लगन, उत्साह, जोश है—इन सब का परिचय मिलता था। जलूस में सब से आगे घोड़े पर ओ३म् पताका लिए वीर युवक था। पीछे साईंदास स्कूल का बैंड मीठी धुनें बजा रहा था। फिर स्काऊट, साईकल, चिमटा भजनमंडली साईंदास स्कूल के शहर व बस्ती नौ, ए. एस. हाई स्कूल बलाचौर, डी. ए. वी. स्कूल नकोदर, डी. ए. वी. स्कूल अलावलपुर, डी. ए. वी. स्कूल करतारपुर, लभूराम दोआबा हाई स्कूल जालन्धर, दयानन्द माडल-स्कूल जालन्धर, चिमटामंडली अम्बाला छावनी, मेहरचन्द टैक्नीकल कालेज जालन्धर, दयानन्द आयुर्वैदिक कालेज जालन्धर, डी. ए. वी. कालेज जालन्धर, स्थानीय आर्यसमाजें, आर्यसमाज किला, आर्य युवक समाज डी. ए. वी. कालेज जालन्धर के हजारों युवक जलूस में शामिल थे। प्रतीत होता था कि आर्यसमाज की विशाल छावनियां जा रही हैं। संस्थाओं, समाजों तथा नगर के गण्यमान्य सज्जन शामिल थे। सारा शहर आर्यसमाज अमर रहे, ऋषि दयानन्द की जय, भारत माता की जय से गूंज उठा। स्थान-स्थान पर दुकानों से, चौकों तथा बाजारों से जलूस पर पुष्प वर्षा की गई। आर्य समाज की इस शक्ति, संगठन अनुशासन तथा जोश को देखकर किस का मन नहीं उछलता था। आर्य समाज कितना महान् काम कर रहा है, उस ने नगर २ में कितना जागरण किया है, संस्थाओं का कितना शानदार बल है, नगर की सब समाजों का कितना प्रेम है। इस जलूस से सारी बातों का परिचय मिलता था। सारा वातावरण मस्ती से भरा हुआ था। जनता स्थान २ पर स्वागत कर रही थी। भारत में अब भी समाज के प्रति सब को बड़ी भारी निष्ठा है। कुमारों, युवकों का उत्साह देखकर दिल प्रसन्न होता था। ऐसा प्रतीत होता था कि सारे नगर में आर्यसमाज का बोलबाला है। आर्यसमाज के सारे भाई बहिनें जब उत्साह भरे गीत गाते हैं तब जीवन में जागृति पैदा हो जाती है। भजनों, जयकारों से सारा वातावरण निनादित हो उठा। समाज के मस्ताने मन्त्री श्री आनन्द सागर आर्य का तो बोलते २ गला ही बैठ गया। जलूस हर प्रकार से सफल था।

आर्यसमाज फिरोजपुर चौंक की ओर से पूज्य महात्मा आनन्दस्वामी जी की सेवा में सभा वेदप्रचार में एक हजार रु० की थैली भेंट

आर्य समाज चौक बाजार फिरोजपुर शहर में आर्य जगत् के प्रसिद्ध तपस्वी सन्त पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज की अमृत बरसाने वाली कथा हुई। जनता ने अमृतपान किया। समाज के प्रधान श्री. ला. मेहर चन्द जी पूर्व प्रिंसिपल ने समाज की ओर से आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर के वेद प्रचार में एक हजार रुपयों की थैली भेंट की।

वेदों का पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना आर्यों का परम धर्म है

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा को वेदप्रचारार्थ धन।

श्री पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज की प्रेरणा से सितम्बर ६४ से नवम्बर ६४ तक सभा वेद प्रचारार्थ लगभग १८००० रुपया प्राप्त हुआ इसके लिए सभा उनकी अत्यन्त कृतज्ञ है।

महंत वैष्णवदासजी बड़वाल २००/-
आर्यसमाज भवानी १११/-
,, जोधपुर १०१/-
,, मंडी (H.P.) २६./७५
,, करणपुर(राजस्थान)११४/-
,, गंगानगर ,, १०१/-
,, टोहाना २५/-
,, लोहगढ़(अमृतसर)२५११/-
,, लारेंसरोड अमृतसर ५०/-
,, फतेहाबाद(अमृतसर)१०१/
,, चिड़ी (रोहतक) १३६/-
,, अखनूर २२/-
,, का. बि. नाभा ३१/-
,, पांडुसर नाभा ११/-
,, गुरुकुल सैक्शन नाभा ११/-
,, शान्तिनगर सोनीपत २०/-
,, माडलटाऊन यमुना नगर ४०१/-
वैद्य विद्यासागर जी (अमृतसर) ३६/-
,, सैक्टर ८ चण्डीगढ़ ५००/-
,, चौंक फिरोजपुर ५००/-
आर्यसमाज मंदिर ट्रस्ट सोसाइटी फिरोजपुर ५००/-
दयानन्द मोडल स्कूल जालन्धर १००/-
डी.ए.वी.H/S स्कूल चण्डीगढ़ २००/-
आर्यसमाज मोडलटौन लुधियाना ३००/-
,, देवराल (हिसार) १५/-
डी. ए. वी. कालिज हिसार ५००/-
,, हाईस्कूल मंगवाल २०/-
श्री मनोहरलाल जी मरवाहा बम्बई, द्वारा श्री पूज्य आनन्द स्वामी जी १००००/-

ावश्यकता

(ले०-पं० चन्द्रसेन जी आर्य हितैषी, उपदेशक आर्यप्रादेशिक सभा)

बन्धुओ, आज स्वतन्त्र भारत में जो त्रुटियां नहीं होनी चाहिये चाहे वे धार्मिक, राजनीतिक व समाजिक के नाम की हैं वे सभी हम में घर करती जा रही हैं। यही कारण है, हमारा आचार विचार गिरता जा रहा है रोशनी से अंधेरा दूर होता है पर इस विज्ञानता के प्रकाश में भी संसार पतन की ओर जा रहा है। कारण वैदिक मर्यादाओं को छोड़ना एवं भूलना ही मैं समझता हूं, इसी ओर भूल के कारण हम लोग वर्षों नहीं सदियों तक विदेशी मुट्ठीभर सात समुद्र पार के लोगों के आधीन रहे, उनकी मीठी नीति में फंस कर अपनी पुरानी आर्य मर्यादा को ताक में रख दिया, अपने देश में भी कई ढौंगी लीडर बने अपने देश और वैदिक संस्कृति को ले डूबे क्षत्री वीर कहलाने वालों की तलवारें म्यानों में पड़ गई उनको जंग खा गई। कई नाना ढंग के मजहब चले भोले हिन्दू लोग उधर चल दिये इस दुर्दशा को एक निडर वीतराग योगी वैदिक संस्कृति का रक्षक देवता स्वरूप दयानन्द सरस्वती ने देखा और इस का सुधार करने का बीड़ा उठाया, भारत के प्राय: सभी नगरों और प्रान्तों में इस वीर शेर ने अपना गौरव दिखाया वैदिक मान मर्यादा का दिग्दर्शन कराया विरोधी अपने पापों के कारण इस साधु का सामना न कर सके। सभी के पांव लड़खड़ा गये स्वतन्त्रता की सर्वप्रथम इस देवता ने आवाज उठाई सभी विचारशील विद्वान नेतागण इस के तेज को स्वीकार करते हैं वे मानते हैं देव दयानन्द के कारण [illegible] जो हमें मिला है। [illegible] वैदिक [illegible] प्रसार के लिये प्यारे [illegible] साधु दयानंद ने आर्यसमाज की स्थापना की आर्यसमाज ने अपने जन्मकाल से लेकर आज तक अपना जीवन संघर्षमय बिताया है ये तो आर्य समाज के इतिहास को पढ़ने से पता लगता है।

लोग आर्यसमाज की ओर झुके और वे लोग झुके जो रात दिन दयानन्द और आर्य समाज को अत्यन्त बुरा समझते थे वे समझ गये आर्य समाज की वैदिक विचार धारा के बिना हमारा कल्याण नहीं होगा। इसी कारण वे समझ आने पर आर्य समाज के अच्छे खासे सेवक नेता बने, उन में पूज्य महात्मा हंसराज जी एक हैं जिनकी शताब्दी आर्य समाज १९६५ में मनाने चला है। आर्यों को लोग बड़ी श्रद्धा से देखते थे वास्तव में आर्य समाज ने भारत को नहीं बल्कि संसार को प्यारे दयानन्द का बताया वेद सन्देश सुनाया, धार्मिक सामाजिक और राजनीतिक तीनों दृष्टि कोणों से जगत का भला किया है। पर आज पता नहीं क्यों फिर आर्य समाज से निराश होने लगे हैं। अन्य वितंडावाद में फंस पर अपने गौरव को घटा रहे हैं। मैं कहता हूं आज भी पहले से अधिक आर्य समाज की आवश्यकता है इस के सुन्दर दस नियम जीवन को ऊंचा बना देने वाले हैं नान्य:पन्था विद्यते अयनाय इस मार्ग के बिना और मार्ग नहीं है। हमें दयानन्द के मिशन के प्रति श्रद्धा और विश्वास रखना चाहिये, ये सच्चाई है मैं आर्य समाज के बिना जनता का कल्याण असम्भव सा समझता हूं। स्वतन्त्र भारत में भ्रष्टाचार फैल रहा है इसे आर्यसमाज एवं आर्य समाजी ही दूर कर सकते हैं हां हमें दयानन्द की विचारधारा की सुरक्षा काम समझ कर करना चाहिए तब देश का सुधार हो सकता है, वर्तमान सरकार नेता व अधिकारी भी ये समझते हैं कि आर्य समाज ही इस देश के सुधार कार्य को भली प्रकार से कर सकता है। बाम्बे में विश्व इसाई सम्मेलन होने वाला है इसका भारत वासियों पर क्या प्रभाव हो सकता है इस गहराई को हम समझने का प्रयत्न करें इस सम्मेलन करने वालों का मुकाबला केवल आर्य समाज ही कर सकता है। इस समय हिन्दु जाति आर्य समाज की ओर देख रहा है। कि आर्य समाज इस समय क्या पग उठाता है। काश्मीर की समस्या नागालैंड की गुत्थी कैसी उलझी हुई है भाषा का प्रश्न भी हमारा मुख्य है कहीं [illegible] का नारा है देश को सुदृढ़ और संगठित करने का प्रश्न है और भी कई बातें हैं पाकिस्तान की नित नई धमकियां और पूर्वी बङ्गाल का संकट है। चीन की नङ्गी तस्वीर भी सामने है इन सब संकटों में आर्य समाज को जागरुक होना है, हमें भी आपस की दलबन्दी पर गम्भीरता से विचार करना होगा मेरे विचार में आज आर्य समाज की पहले से भी अधिक आवश्यकता है क्यों आवश्यकता है इस पर कुछ रोशनी मैं डाल चुका हूं आगे आप भी विचार करें समय की गति से जागें। आपसी मनमुटाव जो भी हो मिटा दें भविष्य में आर्यसमाज का काम करना अपने जीवन का लक्ष्य समझें इस लिये मैंने लिखा आर्यसमाज की आवश्यकता।

आर्य समाज श्री गंगा नगर का वार्षिकोत्सव

आर्य समाज श्री गंगानगर का २५ वां वार्षिकोत्सव दिनांक ११-१२ तथा १३ दिसम्बर १९६४ को पूर्ण सफलता से मनाया जायेगा। ११-१२-६४ को नगर संकीर्तन का आयोजन किया गया है। इस उत्सव को सानन्द सम्पन्न करने के लिए आर्य जगत के सुप्रसिद्ध विद्वान व उपदेशक यहां पहुँच रहे हैं जिन में से श्री प्रकाशवीर जी शास्त्री संसद सदस्य श्री स्वामी रामेश्वरानन्द जी संसद सदस्य आदि महानुभाव पधार रहे हैं। मन्त्री आ०स० श्री गंगानगर

यज्ञ प्रचार और संस्कार

गुरुकुल वैदिक आश्रम वेदव्यास पो० पानपोष जि०सुन्दरगढ़ उड़ीसा ने देवग्राम राऊर केला मेला में २० से २३ तक श्री स्वामी शिवानन्द तीर्थ जी की अध्यक्षता में सामवेद पारायण यज्ञ हुआ तथा स्वामी [illegible] जी का प्रवचन हुआ। ब्रह्मचारी सत्यदेवादि के भजन हुए। २३-११-६४ को श्री सेठ [illegible] जी पुराना स्टेशन राऊर केला की माता अस्सी वर्षीया श्रीमती इन्दिरा देवी जी का अन्त्येष्टि संस्कार पूर्ण वैदिकविधि से सम्पन्न हुआ। मारवाड़ी समाज ने अधिक संख्या में भाग लिया। इस संस्कार का लोगों पर अच्छा प्रभाव पड़ा।

भवदीय
ब्र० सुखदेव आर्य

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मासिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टैलीफोन न० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक ४६) २२ मार्गशीर्ष २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०— १३ दिसम्बर १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

मधुर स्वादु प्रसाद

प्रत्येक नर-नारी अपने आप से पूछे कि मैं प्रभु के चरणों में कब जाऊंगा ? उसके पास कौन-सी भेंट ले कर जाना होगा तथा प्रसन्न चित्त होकर हंसता-हंसता कब पहुंचूंगा। संसार का सारा वैभव और यह शरीर भी यहीं पर रह जाएंगे। साथ ही देंगे मेरे साथ तो जीवन में किए हुए शुभ कर्मों की सम्पत्ति ही जाएगी ! जो साथ जाता है उसको संचित करने का ध्यान करो। धोबी के समान केवल दूसरों के कपड़े न धोते रहो वरन् अपने मन के मलिन वस्त्र भी धोते रहो।

—प्रसिद्ध फिलास्फर डा० दीवान चन्द जी एम. ए. कानपुर।

आर्यसमाज (किला) विक्रमपुरा जालन्धर का शानदार महोत्सव

सोमवार ता० २३ नवम्बर से लेकर २६ नवम्बर रविवार तक बड़े हो समारोह से सम्पन्न हुआ। यज्ञ, कथा, प्रभातफेरी तथा भव्य जलूस निकला। सारे नगर में जागृति, चेतना, उत्साह और जीवन का जीता जागता दृश्य। आर्यसमाज की संस्थाओं, समाजों, नेताओं विद्वानों व रागियों का शक्तिशाली संगठन। युवकों का उमड़ता हुआ जोश। नेताओं के दिव्य सन्देश। गत अंक में भी प्रसाद दिया गया है। इस अंक में भी दिया जा रहा है। लाभ उठाएं।

व्याख्यानों को पढ़ कर अपने जीवन में आचरित करें तभी उत्सव की सफलता है और विद्वानों का उत्सव में पधारना भी लाभदायक सिद्ध होगा।

स्वामी दयानन्द की बड़ी देन

भारत की जनता ने अतीत युग में बड़ी विपत्तियों का समय देखा है। विदेशियों से अपमान भी सहा है। दासता की चक्की में भी पिसते रहे हैं। पश्चिमी सभ्यता के चमकीली तारों में यह देश अपनी संस्कृति से आंखें मूंदने लगा था। हर बात में हमें पश्चिम अच्छा प्रतीत होता था स्वामी दयानन्द सरस्वती की सब से बड़ी देन भारतीयों को यह है कि उन्होंने हमें अपनी पुरातन सनातन संस्कृति का गौरव प्रदान किया। मानसिक दासता के बन्धन काटे। आज हमें अपनी हरेक बात पर मान है।

प्रिंसीपल रलारामजी एम.ए. एम. एल. ए. सभा प्रधान

अधिष्ठाता—श्री संतोषराज जी सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

धार्मिक चर्चा–

ब्रह्मयज्ञ प्रसारक महर्षि दयानन्द की जय

(ले०–श्री पिण्डीदास जी ज्ञानी आर्य समाज लोहगढ़ अमृतसर)

****

(गतांक से आगे)

४९. विसृज्य सर्वान् नृपतीन्
विराट् प्रमुखास्तथा ।
पाण्डवा: भ्रातर: पञ्च
भानावस्तं गतेऽसति ॥ ३
सन्ध्यामुपास्य ध्यायन्तस्त
मेवगत मानसा:
आनाय्य कृष्णं दाशार्हं
पुनर्मन्त्रममन्त्रयन ॥ ४

उद्योग ० अ० १४७

अर्थात्—तदनन्तर सूर्यास्त होने पर पांचों भाई पाण्डव विराट् आदि सब राजाओं को विदा कर सन्ध्योपासना करने के पश्चात् भगवान् श्री कृष्ण ही में मन लगा कर कुछ काल तक उन्हीं का ध्यान करते रहे। फिर दाशार्ह कुल भूषण श्री कृष्ण को बुलाकर उनके साथ गुप्त मन्त्रणा करने लगे।

पाण्डव सेनाओं का सन्ध्या वन्दन

५०. सन्ध्यां तिष्ठत्सु सैन्येषु
सूर्यस्योदयनं प्रति
प्रावात् सपृषतो वायुनिरभ्रे
स्तनयित्नुमान् ।

भीष्म पर्व अ० १६ श्लोक १७

अर्थात्—सूर्योदय के समय सभी सैनिक सन्ध्योपासना कर रहे थे। बिना बादल के ही बूंदों के साथ वायु चलने लगी। उसके साथ मेघ की सी गर्जना भी होती थी।

अर्जुन—जयद्रथ युद्ध के समय जयद्रथ के पिता महाराज वृद्ध क्षेत्र सन्ध्या में मग्न थे—

५१. एतस्मिन्नेव काले तु,
वृद्ध क्षत्रो मही पति:
सन्ध्यामुपास्ते तेजस्वी,
सम्बन्धी तव मारिष
उपासीनस्य तस्याथ कृष्ण
केशं सकुण्डलम् ।
सिन्धुराजस्य मूर्धानमुत्सङ्गे
समापातयत् ॥

द्रोण पर्व अध्याय १६४-१२६-१२७

अर्थात्—इसी समय आपके सम्बन्धी तेजस्वी राजा वृद्ध क्षत्र सन्ध्योपासना कर रहे थे। सन्ध्योपासना में बैठे हुए वृद्धक्षत्र के अंक में उस बाण ने सिंधुराज जयद्रथ का वह काले केशों वाला कुण्डल मण्डित मस्तक डाल दिया।

५२. अथाप्लुतोऽम्भस्यमले यथा विधि:
क्रिया कलापं परिधाय वाससी।
चकार सन्ध्योपगमादि सत्तमो,
हुतानलो ब्रह्म जजाप वाग्मत:॥६॥

श्रीमद्भागवत स्कन्ध १० अध्याय ७०

अर्थात्—विधि पूर्वक शुद्ध जल में स्नान करके वस्त्र पहन भगवान श्री कृष्ण ने सन्ध्योपासन हवन तथा जप का अनुष्ठान किया।

प्रिय पाठक वृन्द ! हम ने इस लेख में यह अंकित किया है कि महर्षि दयानन्द के कार्य क्षेत्र में अवतीर्ण होने के समय देश में सन्ध्या वन्दन के लिये बहुत न्यून आस्था थी, जो थी भी वह अनियमित, अण्ड-बण्ड और ऊल-जलूल थी। महर्षि ने वैदिक वाङ्मय का आलोडन करके कुछ एक मन्त्रों का ऐसा अनुपम संग्रह किया, और ऐसी विधि का उल्लेख किया कि यदि विधि पूर्वक इस पर आचरण किया जाय तो आध्यात्मिक, आधिदैविक एवं आधिभौतिक दु:खों से छुटकारा प्राप्त किया जा सकता है।

हमने अनेक प्रमाणों को उद्धृत करके यह दर्शाने का यत्न किया है कि हमारे पुरातन-प्राचीन वाङ्मय में कितना महत्व वर्णित है कि सन्ध्या दो ही काल में करना शास्त्र सम्मत हैं, कि सन्ध्या तीन प्रकार की—उत्तम, मध्यम, कनिष्ठ—होती है; कि इसका वर्गीकरण किस दृष्टि से किया गया है; कि सन्ध्या करने का क्या महात्म्य है; और कि सन्ध्या करने वाले को क्या फल प्राप्त होता है।

इन प्रमाणों के अतिरिक्त श्री मद्वाल्मीकीय रामायण के अनेकों प्रमाण उद्धृत करके दर्शाया गया है कि मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् राम का जीवन सन्ध्या मय था; कि लक्ष्मण, सीता और शत्रुघ्न भी सन्ध्या किया करते थे।

श्री मद्भागवत और महाभारत के प्रमाणों के अवलोकन से भगवान् श्री कृष्ण जी की सन्ध्या में अटूट श्रद्धा प्रकट होती है; कि पाण्डव वीर भी सन्ध्या में तल्लीन रहते थे; कि युद्धस्थली में भी पाण्डव सेनाएं समय पर सन्ध्या किया करती थीं, और सिंधुराज वृद्ध क्षत्र सन्ध्या की वेला व्यतीत होने देना उचित नहीं समझते थे।

(शेष पृष्ट ८ पर)

मधु कलश

फली न फोड़ो भूले से भी यूं ही वक्त गंवाओ,
इस काया को कष्ट नहीं दो तिल भर नहीं हिलाओ।
कुछ भी अगर नहीं बनना है इस जीवन में तुम को,
सब कामों को छोड़ छाड़कर कोरी गप्प लड़ाओ॥

★ ★ ★

कभी किसी को अलग स्वयं रंच मात्र मत जानो,
जीवनमात्र में एक आत्मा बसती है, पहचानो।
ईश्वर का भय अनुभव करने लगे आदमी जिस दिन,
उसी रोज से उदय ज्ञान का उसके मन में आनो॥

★ ★ ★

नफे और घाटे की बातें मन में ही मत लाओ,
दो रंगी को आग लगा दो एक रंग हो जाओ।
सच्चाई तो स्वत: सिद्ध है कहना सुनना क्या है,
प्राणों की चिन्ता को छोड़ो प्रण को सदा बचाओ॥

—विजय निर्बाध

श्री प्रिंसीपल भगवान दास जी एम० ए० का सार्वदेशिक सभा के नाम पत्र

पूज्य मन्त्री जी,
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
रामलीला मैदान, नई दिल्ली

सादर नमस्ते !

सेवा में निवेदन है कि आर्य समाज के अनथक कार्यकर्ता और यात्री श्री हरिचन्द्र जी प्रधान आर्य समाज ओराद तथा आर्य समाज के माननीय नेता डा० दास जी को सरकार ने एक आज्ञा द्वारा २५ नवम्बर से ६ दिसम्बर तक स्थानबद्ध कर दिया है। कारण कोई दिया नहीं पर ऐसा प्रतीत होता है कि यह पोप के भारत आने के सम्बन्ध में ही है। यह तो दो ही कार्यकर्ताओं के बारे में सूचना मिली है हो सकता है कि और भी आर्यसमाजी नेताओं तथा कार्यकर्ताओं पर ऐसे प्रहार किये गये हों।

भारत वर्ष में धार्मिक स्वतन्त्रता एक विशेष नागरिक अधिकार शताब्दियों से चला आ रहा है। केवल एक ईसाई पोप के भारत में पधारने पर आर्य समाज के प्रचार कार्य पर इस प्रकार प्रतिबन्ध लगाना कहां तक उचित हैं यह बात शिरोमणि सभा को अवश्य आर्य जनता के पथप्रदर्शन के लिए सोचनी चाहिये तथा जो निश्चय सभा करे उस निश्चय को जनता तथा सरकार के सामने शीघ्र अति शीघ्र रखना चाहिये। धन्यवाद !

सेवक—भगवानदास प्रधान
आर्यसमाज, सोलापुर

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२१, १३ दिसम्बर १९६४ [अंक ४९

देवता की याद

देवता उसे कहा जाता है, जो अपना जीवन लोक सेवा में भेंट कर देता है। स्वयं चमक कर औरों को चमकाता है, स्वयं ऊंचे स्तर पर रह कर विश्व को ऊंचा ले जाना चाहता है। महापुरुष युग के देवता ही होते हैं। आर्यसमाज की देव-माला के मनोरम मनकों में स्वर्गीय सर्वमेधी पूज्य महात्मा हंसराज जी भी एक दिव्य मनके थे। वह भी देवता थे। उनके जन्म को सौ वर्ष बीतने लगे। शताब्दी होने लगी। आर्य प्रादेशिक सभा के संस्थापक थे। दयानन्द कालेज के प्रथम तपस्वी प्रिंसिपल तथा बाद में कमेटी के प्रधान थे। उनकी सौ वर्षीय जयन्ती का सभा ने निर्णय कर दिया कि धूमधाम से मनानी है। गत दिनों आर्यसमाज अनारकली रीडिंग रोड नई देहली के महोत्सव पर मान्यवर जस्टिस डा० मेहरचन्द जी महाजन से भी निवेदन किया कि उस देवता की जयन्ती धूमधाम से मनायें। सारे सज्जनों के दर्शन हुए। वे तो बड़े प्रेम श्रद्धा से लगे हैं। सभा प्रधान तपोमूर्ति प्रिंसिपल पं० रलाराम जी एम० ए० एम० एल० ए० भी सारे जल्सों पर आकर अपने भाषणों में इस जयन्ती को सक्रिय बनाने की सुन्दर चर्चा करते रहते हैं। आर्यजगत के प्रसिद्ध सन्त महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज भी पूर्ण सहयोग पूर्वक आशीर्वाद दे रहे हैं। सारी जनता तैयार है। अभी उस दिन रात को मान्य ला० सन्तोषराज जी पूर्व मन्त्री सभा के घर पर बैठे इस बारे में उनके मन में बड़ी तड़प देखी। किस प्रकार से धनसंग्रह किया जाये—बड़ी उत्तम बातें करते रहे। उस देवता की जयन्ती भी उसी अनुरूप मनानी चाहिए। सब का ध्यान इस ओर लगा है। सभा के मान्य मन्त्री प्रिंसिपल ज्ञानचन्द जी भाटिया भी इस दिशा में प्रयत्नशील हैं। सब के मन में उत्साह भरा है। समारोह से मनानी होगी। मामूली जल्सा नहीं होना। शताब्दी को शताब्दी का रूप देना चाहिए। देहली में मान्य साधु स्वभाव श्री ला० देसराज जी पूर्वमन्त्री सभा तो जयन्ती का दृश्य देखने के दीवाने बने हैं। इसके लिए कार्य आरम्भ कर देना चाहिए। कुछ आवश्यक बातें ये हैं।

जयन्ती मनाने के लिए सबका सहयोग लेना है। पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी ता० १५ से १७ दिसम्बर इसी को ला० इन्द्रसेन जी पूर्व उपप्रधान सभा के परिवार में स्वर्गीय मास्टर नन्दलाल जी के जन्म दिवस पर यज्ञ व कथा करने जालन्धर पधार रहे हैं। जालन्धर के मान्य अधिकारी सज्जनों के लिए यह सुअवसर है कि वे महात्मा जी के पास बैठ कर उन से भी समारोह सम्पन्न कराने के सुझाव व सहयोग लेवें। एक विशेष बैठक किसी समय इस काम के लिए बुलानी चाहिए जो हमारे सज्जन तटस्थ हैं, उनको भी बुला कर मिला कर चलना है। हमें सब का सहयोग लेना है। महात्मा जी सब के थे। उनकी याद में भी सारे मिल जावें। आवश्यक है।

—त्रिलोकचन्द्र

ओ३म् की पताका को सदा ऊंचा रखो

आर्य समाज के सामने अभी भारी काम है

(श्री० लाला संतोषराज जी किला समाज प्रधान का प्रवचन)

श्री लाला सन्तोषराज जी आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब जालन्धर के वर्षों महामन्त्री रहे हैं। अब भी सभा के मान्य कोषाध्यक्ष हैं आर्यसमाज (किला) विक्रमपुरा जालन्धर शहर के प्रधान हैं। मौन होकर कार्य में लगे रहना स्वभाव है। समाज के वार्षिकोत्सव पर विशाल जनसमुदाय के सामने ओ३म् ध्वजा को लहराते हुए मार्मिक भाषण में कहा—

अभी हंसराज महिला कालेज की छात्राओं ने 'झंडा-ऊंचा रहे हमारा' का सुरीला गीत गाया है। वास्तव में हमने अपने जीवन में प्रभु नाम की इस पुण्य पताका को तन-मन धन से ऊंचा रखना है। आज संसार में अनेक प्रकार के मतमतान्तरों के झण्डे हैं। किन्तु उनके इतिहास के पीछे कुछ विचित्र बातें भी जुड़ी हुई हैं। इस्लामी झण्डा अपने साथ तलवार लेकर गया। जहां-जहां भी गया वहां संग्राम का बाजार गर्म किया गया। इसी प्रकार ईसायत का झण्डा भी अपने साथ युद्ध को साथ लेकर चला! पश्चिम में इस झण्डे वालों ने वर्षों पर्यन्त संग्राम जारी रखा। इसे **Holy war** या **Crusade** कहकर पुकारा गया। ईसायत का पुराना इतिहास इस बात का गवाह है। नाना देशों में संग्राम हुए, रक्तधारायें बहीं। किन्तु हमारी पताका शान्ति, मानवता, प्रेम एवं विश्वजनीन सन्देश ले कर गई। भारत की संस्कृति आज भी जावा, सुमात्रा, चीन, जापान, योरुप के देशों में जीवन शान्ति का सन्देश देती है। यह झण्डा प्रभु नाम का है। इस से 'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः'— विश्वप्रेम का सन्देश मिलता है। हमारे महापुरुषों ने इसी पताका को विश्व में लहराया था। आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द ने फिर से ओ३म् के जीवन आकाश में फहराया। इसे ऊंचा रखो।

तीन आवश्यक बातों का ध्यान रखना है। पहली यह कि हर अवस्था में भगवान् का नाम जीवन में ऊंचा रखना है। भोग वाद में फंसकर प्रभु को भूलना मत दूसरी बात यह है कि हम गतवर्ष का सारा विवरण देखें कि क्या पाया और क्या गवाया। आर्य समाज एक विशाल मानसरोवर है। उसी की एक धारा किला समाज है। सारा वर्ष समाज ने सत्संग, यज्ञ, संस्कार तथा अन्य लोकोपकारक काम किए। परन्तु श्री लाला शंकरदास जी वृद्ध हो कर भी अनथक समाज के महान् कार्यकर्ता को हम ने खो दिया। आर्यसमाज किला को बनवाना आरम्भ किया पर बीच में आंखें बन्द कर के चले गए। समाज के लिए उन का चले जाना भारी क्षति है। तीसरी बात यह है आर्य समाज ने अभी बड़ा काम करना है बहुत कुछ सुधार का काम करना होगा। आज भी बड़े २ तूफान सामने हैं, उनका सामना करना है। आइए! आज प्रभु का नाम लेकर इस आने वाले महान् कार्य के लिए संकल्प करें। समाज सेवा में तन मन धन का बलिदान कर सकें।

—

परमेश्वर ! मेरे जीवन रथ को आगे ही आगे ले चलें

संसार के किसी भी पदार्थ पर अहंकार मत करो

प्रिंसिपल देवराज जी गुप्त एम० ए० दयानन्द कालेज हिसार का प्रवचन

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

प्रिंसिपल देवराज जी गुप्ता एम० ए० प्रिंसिपल दयानन्द कालेज हिसार आर्यसमाज की प्रसिद्ध विभूतियों में से एक हैं। इस छोटी सी आयु में आपने बड़ी प्रतिष्ठा पाई है बोलते हैं तो मन्त्रमुग्ध सा कर देते हैं मन और वाणी का समन्वय हो जाता है। जिला समाज के जल्से पर भक्तिभरा मधुर प्रवचन देते हुए कहा—वेद में एक मन्त्र में भक्त के द्वारा भगवान से प्रार्थना की गई है कि मेरे मालिक ! मेरा जीवन रथ आगे ले चलो। यह पीछे न रह जाये। वेद में दो प्रकार से उपदेश मिलता है। एक तो सीधा परमात्मा के द्वारा उपदेश है और दूसरा ढंग यह है कि मनुष्य के द्वारा भगवान से प्राथना के रूप में उपदेश मिलता है इस मन्त्र में मानव परमेश्वर से प्रार्थना कर रहा है कि सच्चे पिता जी ! मेरा यह जीवन का रथ ससार यात्रा में पीछे रह गया है। कृपा करके इसे आगे ले चलो ताकि मैं पिछड़ न जाऊं मेरी मंजिल कौन सी है, मैं हिम्मत हारता जा रहा हूं। मैं निराश होकर कहता हूं कि प्रभो ! आप मौन क्यों हो ? मेरी पुकार सुनते क्यों नहीं। ऐसी प्रार्थना प्रत्येक नरनारी अपने जीवन में किया करती है। जिस का रथ पीछे रहता है। मैं जानता हूं कि मैं कितने पानी में हूं। दुनिया में कोई बड़ा नहीं। मैं अपनी बीमारी को जानता हूं। मुझे बदहज़मी है; औरों को भी। सत्तर प्रतिशत अधिक खाने से बीमार होते हैं। जो लोग दुनिया में आए वे भी निराश हो गए।

नैपोलियन ने सारे योरुप में तहलका मचाया था एक ने कहा था— **Europe is ringing your power.** पर जिस ने अपनी शक्ति का उचित प्रयोग नहीं किया वह उदास होगा ही। अन्त की अवस्था में उस ने भी आंसू बहा कर कहा था कि मेरे वस में नहीं। मैं तो स्वय को भी आजाद नहीं रख सका आज वह मेरी शक्ति, विजय कहां है, जिस के बल पर मैं जीतता रहा। सारे देश मेरी मुट्ठी में थे, मेरा प्रभाव मानते रहे, भयभीत होकर मेरे सामने सिर झुका देते थे। वह मेरा सब कुछ समाप्त हो चुका है। अब तो मैं अपना भी स्वामी नहीं हूं। मेरा खाना पीना, उठना सोना तक भी दूसरों के अधीन है। मुझे भारी पराजय मिली है। हिटलर अपने आप को Aryan वंश का मान कर चला। हाथ में शक्ति आने से योरुप की भूमि को कुचलता गया। तूफान में सब को लपेट लिया। चैम्बरलेन जैसा प्रधानमन्त्री भी उसके चरणों में दूसरे महायुद्ध में गिरा। महाराजा बर्लिन जाते हुए डरते थे। उसने कितना अत्याचार किया। चंगेजखां का अत्याचार किसे स्मरण नहीं आता ? स्त्रियों बच्चों को आग में जलवा दिया। अन्त में कहा कि मेरा दिल घबरा रहा है मैंने बड़े-बड़े लोगों का जीवन पढ़ा है। टीचर बना, प्रोफैसर बना, अब प्रिंसीपल भी बना हूं। किन्तु मैं अपने जीवन में क्या बन पाया ? इसका कितने लोगों को विचार आता है। कोठियां हैं, कारें हैं, भूमि तथा ऐश्वर्य भी है, परन्तु जीवन का तेरा रथ किस स्थान पर खड़ा है। आगे बढ़ रहा है या पीछे तो नहीं रह गया। यह जीवन का सबसे बड़ा प्रश्न है। अपने से पूछो कि मेरा रथ पीछे क्यों है ? महात्मा कबीरने कितना सुन्दर कहा है कि—

नारी से क्यों लड़ता कि नाड़ी तेरे बस में नहीं। मनुष्य इस बात का अहंकार करता है कि मेरे पास इतना ठाट-बाट है। मेरे कपड़े अच्छे हैं, मेरा बूट सुन्दर है। शराब पीकर तो सभी गिरते हैं पर तू तो बिना शराब पिए गिर रहा है।

मैं शरीर की निन्दा नहीं करता। शरीर है तो इसके लिए खाना-पीना भी चाहिए। यात्रा के लिए और भी आवश्यक वस्तुएं होनी चाहिए। किन्तु जब सीमा का अतिक्रमण हो जाए। लालच और अहंकार का बोल-बाला हो जाए, तब अवस्था क्या बनेगी। इस पर विचार करना आवश्यक हो जाता है। अधिक लोभ अथवा वस्तुओं का अहंकार मनुष्य के जीवन रथ को आगे बढ़ने से रोक देता है। पीछे डाल देता है। ये मार्ग की रुकावटें हैं जिनको दूर करना सबका कर्तव्य है। हम तो घरपर पता नहीं कितनी व्यर्थ चीजें इकट्ठी कर देते हैं। घर अजायब-घर बनाकर रख देते हैं। कहा है—दर्पण में मुखड़ा क्या देखे। मन में तो प्रकाश नहीं है फिर जीवन की सिद्धि कैसे मिलेगी शरीर पर पांच कोट कोई नहीं पहनता, पर मानसिक तौर पर पांच कोट पहने हुए हैं। आज राष्ट्र का रथ पीछे हो गया है। ऐश्वर्य तो ज्ञानवल से आयेगा। जरूरत से ज्यादा पैसा दुर्बादित पैदा करता है। मिट्टी से बच्चा पैदा होता है, मिट्टी में मिलना है, अतः इसे खूब मिट्टी में खेलने दो। राम जी को बनवास मिला प्रसन्न हुए कि ऋषियों के आश्रमों की धूलि माथे पर लगाऊंगा। फकीरी का जीवन बिताऊंगा। आज तो सारे राष्ट्र की रक्षा करने वालों की स्वयं ही रक्षा की जाने लगी। हे प्रभो ! ऐसा वैभव दो जो ज्ञान पैदा करे। प्रकृति की नहीं आत्मा की पूजा करो जो अपने हाथ के बनाए पत्थर के आगे झुकता है, वह आत्मा का मूल्य क्या समझेगा। आत्मा को किसी मूल्य पर भी नहीं बेचना चाहिए। बड़े घन से नहीं होते। कबीर धन-वान के परिवार में पैदा नहीं हुए थे राष्ट्र निर्माण के लिए जीवन की आवश्यकता है। जब तक ऐसी जीवनियां नहीं बनाई जाती, जो ऐश्वर्य का प्रलोभन ठुकरा कर बुद्ध, नानक और दयानन्द के समान जीवन रथ को आगे २ ले चलें, तब तक राष्ट्र निर्माण नहीं हो सकेगा। सदा देखते रहो कि जीवन रथ आगे जा रहा है या पीछे जाता है। मालिक से प्रार्थना करो कि मेरा रथ आगे ले चलो।

आर्यसमाज पुलबंगश दिल्ली

का वार्षिकोत्सव १३, १४, १५ नवम्बर को हुआ ५ दिन आचार्य कृष्णा जी की तथा अन्य उच्च-कोटि के विद्वानों के भाषण हुए।

१५० रुपयों की थैली ईसाई निरोध के लिए दी गई।

आर्य कुमारों का सुन्दर प्रोग्राम हुआ और भर की कुमार सभा ने भाषण प्रति योगिता पर चांदी का शील्ड जीता।

प्रचार कार्य पं० गणेशदत्त जी श्री वानप्रस्थी जी ने आनरेरी तौर पर अमूल्य सेवा की।

वैदिक रीति से संस्कार कराए १७/- संस्कारों से दान आए	६६६६
आर्य समाजों में उपदेश दिए	५२
घरों में दैनिक यज्ञ कराए	८
मुफ्त पोस्टर बांटे	१३५००

अपनी समाज में साल भर दैनिक यज्ञ और वेद कथा की ३००

पूज्य वानप्रस्थी जी का भरी सभा में पुष्प मालाओं से धन्यवाद किया गया।

—सुरेश कुमार मन्त्री

ईसाईयों के बढ़ते हुए तूफान पर डट कर सामना करो

आर्यसमाज ही इस चैलेंज का उत्तर दे सकता है

महामना लाला देवीचन्द जी एम० ए० प्रधान होश्यारपुर का प्रवचन

आर्यसमाज के वृद्ध नेता पूज्य ला० देवीचन्द जी एम० ए० प्रधान दयानन्द साल्वेशन मिशन होश्यारपुर आर्यसमाज के पुराने युग के चमकते प्रकाशस्तम्भ हैं। सारा जीवन आर्यसमाज की सेवा में, शिक्षा प्रसार तथा शुद्धि के काम में भेंट कर दिया है। यजु: व साम वेद का अंगरेजी में भाष्य करके अब अथर्व के भाष्य में लगे हैं। प्रभु सदा स्वस्थ रखे ताकि चारों वेदों का भाष्यपूर्ण कर सकें। आर्य समाज किला जालन्धर के ईसाई निरोध सम्मेलन की आपने अध्यक्षता करते हुए अपने ओजस्वी भाषण देते हुए कहा—

ख्वाजा हसन निजामी ने अपनी पुस्तिका 'दावते इस्लाम' में लिखा था कि हिन्दु धर्म गैरतबलीगी धर्म रहा है दूसरे मत के लोगों को हिन्दु धर्म में लाने की बात तो स्वामी दयानन्द ने सिखाई है। इन से पहले कभी किसी दूसरे को हिंदु नहीं बनाते थे। इस में तबलीगी भाव है ही नहीं। ख्वाजा साहिब का ऐसा कहना और लिखना सर्वथा गलत है। वेद का धर्म एक पूर्ण तथा सार्वभौमिक तबलीगी धर्म रहा है। यजुर्वेद में आता है—यथेमां वाचं कल्याणीम् व कृण्वन्तो विश्वमार्यम्—हे लोगो ! सारे संसार में वेद का प्रचार करके उन को वैदिक धर्मी बनाओ। आर्य बनाओ। परमात्मा आज्ञा देते हैं कि वेद मन्त्रों को अपने मुंह में भरकर बादलों के समान सर्वत्र वेदोपदेश की वर्षा करते रहो। ख्वाजा साहिब को तो वेद का पता नहीं। वह सर्वथा गलत बात लिखते व कहते रहे।

भविष्य पुराण में लिखा है कि कण्व ऋषि ने मिस्र देश के हजारों लोगों को शुद्ध करके आर्य बनाकर भारतीयों में मिला दिया। शक हूण आदि जातियां बाहर से भारत में आईं और भारत की हिन्दु-जाति में ही मिल गईं। भारतीयों ने सब को अपने धर्म में दीक्षित कर लिया। शिवा जी के काल में बापूराव के अधीन शुद्धि सभा बनाई गई थी जिस के द्वारा बहुत से गैर-हिन्दु हिन्दु बन गए। शिवा जी ने ऐलान किया कि जो हिन्दु गैर-हिन्दु से हिन्दु बने गये लोगों से बुरा सलूक करेगा उसे कैद व दण्ड दिया जायगा। उस समय बहुत से हिन्दु-धर्म में आ गए। सरहिन्द के धनपतराय ने बहुत से मुसलमानों को गायत्री मन्त्र से हिन्दु बनाया। सिकन्दर लोधी ने कहा कि तुम्हें फांसी मिलेगी। पर वह धर्म काम में लगा रहा। उसे फांसी पर लटका दिया गया। शाहजहां के राज्य में इलाहाबाद के एक हिन्दु ने मुसलमान शुद्ध किए। इस पर उसे जीवित जला दिया गया। शाबास उन ब्राह्मणों की, जिन्होंने धर्म का यह काम किया।

भारत में जब पहला ईसाई पादरी आया। उस ने एक हजार हिन्दु ईसाई बनाए। सेंट जेवियर ने ईसाई बनाए। चीन, लंका से तो पादरी निकाल दिए गए, किन्तु भारत की सरकार ने खुली छुट्टी दे रखी है। करोड़ों रुपए हिन्दुओं को ईसाई बनाने के लिये विदेशों से इनको मिलते हैं। उनके प्रचार में हमें आपत्ति नहीं, पर वे धन का लालच देकर हिंदु को ईसाई बनाने में हमें भारी आपत्ति है। आप नियोगी रिपोर्ट तथा जस्टिस डी. ए. की रिपोर्ट पढ़ देखो कि ये कैसे हथकण्डों से धर्म परिवर्तन करते हैं। खेद है कि हमारी सरकार ने इस का कोई action नहीं लिया। ये लोग हिन्दुओं को दबाव और लोभ देकर ईसाई बनाते हैं। ये सारे भारत को ईसाई बनाना चाहते हैं। बम्बई में हुआ सम्मेलन भी इसी की एक कड़ी है। हिन्दुओं को पतित करने में कमीने हथियार प्रयुक्त किए जाते हैं। इनके हाथ खून से रंगे हैं। इनको सहयोग व सुविधा देना तो सैक्युरिज्म की धज्जियां उड़ाना है। वह धर्म ही क्या है जो सच्चाई से न फैलाया जाए। इनके स्कूल कालेज कष्ट निवारण के लिए नहीं खोले जाते पर नुमायशी हैं। अन्दर इनका भाव ईसाई बनाना होता है। एक भील ने चालीस रुपए ईसाई से लिए। वह आर्य बन गया। उस ईसाई ने उसे मारा। मैंने भील को चालीस रुपए भेजे तब छोड़ा। पिस्तौल लेकर डराने से ईसाई बनाए जाते हैं। निर्धनता और हमारी लापरवाही से उनको ईसाई बनाने का मौका मिलता है। हिन्दु जाति आंखें बन्द कर सोती है। आर्यसमाज जागता है। ईसाईयों के हर षड्यंत्र को असफल बनाकर रख देता है।

आज हमारी सरकार सैक्युलर हो कर भी धन की हिमायत कर रही है। समझ नहीं आता क्यों हो रहा है। जब कि पोप पाल ने स्वयं कहा है कि मैं एक मजहबी रहनुमा बन कर भारत आ रहा हूं। ये ईसाई भारत के लिए खतरा बने हुए हैं। केरल और नागालैंड में क्या हो रहा है। जितने ईसाई बढ़ेंगे उतना देश को खतरा बढ़ेगा धर्म का प्रचार करने में हमें कोई चिन्ता नहीं, किन्तु उसकी आड़ में भारतीयता को समाप्त करना चाहते हैं। आर्यसमाज इसी लिए उनका विरोध करता है। वेद में कही गई तिस्रो देवी: तीन देवियों इला. सरस्वती मही—मातृभूमि, मातृभाषा, मातृसंस्कृति की पूजा आर्य समाज करता चला आया है। गान्धी जी गोलमेज कांफ्रेंस में जब लण्डन गए तो पोप से मिलने गए—पर पोप ने मिलने से इन्कार कर के गान्धी जी का अपमान किया। जो इनका अपमान करता है, वह भारत का मान कैसे करेगा ईसाई शास्त्रार्थ के सामने नहीं आते क्योंकि वे अपनी कमजोरी को जानते हैं।

मैं हिन्दुओं से कहता हूँ कि आर्यसमाज को धन से शक्तिशाली बना दो। यही सारे समाज का पहरेदार है। इसे धर्म व देश की संस्कृति की चिन्ता है। इसे शक्तिशाली बना दो ताकि इस तूफान का डट कर मुकाबिला करें।

महर्षि दयानन्द की जन्म भूमि टंकारा

के यात्रियों के लिए वापसी टिकट की सुविधायें प्राप्त हों

रेलवे अधिकारी ध्यान दें।

वेद पथिक पं. धर्मवीर जी आर्य झण्डाधारी ने अपने एक पत्र में रेलवे मंत्री से यह मांग की है कि महर्षि दयानन्द की जन्मभूमि टंकारा में जाने वाले समस्त यात्रियों की महा-शिवरात्रि के पवित्र पर्व पर वापसी टिकट की सुविधायें प्रदान कर महर्षि दयानन्द के प्रति अपने परम कर्तव्य का पालन करें।

इस संबन्ध में रेलवे मंत्री भारत सरकार से आर्य नेताओं के एक प्रतिनिधि मंडल के साथ प. धर्मवीर जी आर्य झण्डाधारी शीघ्र मिलेंगे।

मंत्री टंकारा सहायक समिति
आर्यसमाज करोलबाग
नई दिल्ली

जीवनमें सदा ऊपरकी ओर देखो नीचे नहीं

मानव जीवन केवल भोग भोगने को नहीं मिला

प्रसिद्ध फिलास्फर डाक्टर दीवानचन्दजी एम.ए. कानपुर का प्रवचन

आर्यसमाज (किला) विक्रमपुरा जालन्धर के वार्षिक महोत्सव में आर्यजगत् के प्रसिद्ध फिलास्फर आगरा यूनिवर्सिटी के पूर्व उपकुलपति प्रिंसिपल डाक्टर दीवानचन्द जी एम. ए. कानपुर ने अपने फिलास्फी से भरपूर गम्भीर भाषण में कहा—वेद में एक मन्त्र आता है—कदा तन्वा सं भवेम...मैं शरीर से पूछता हूं कि कब प्रभु के चरणों में जाना होगा। क्या लेकर जाऊंगा। कब अच्छे मन से प्रभु के समीप जाऊंगा। तीन प्रश्न पूछे गए हैं। पहला—कि मैं अपने शरीर से पूछूं कि कब प्रभु के पास जाऊंगा। दूसरा यह कि क्या भेंट लेकर जाना होगा और तीसरा यह कि प्रसन्न चित्त हो कर जाऊंगा। कई लोग हाथ दिखाते हैं परन्तु यदि मुझे रुपये भी ज्योतिषी दे तो भी नहीं दिखाऊंगा। पहले इस पर विचार करें कि मैंने कब तक जीना है? मकान का ऐसा किराएदार मिल जाये जो ज्यादा किराया देवे। हरेक यही सोचता है कि यदि मैं नहीं रहूंगा तो जालन्धर भी नहीं रहेगा। यह भ्रम है। हमारे चले जाने से सारी चीजें उसी प्रकार बनी रहेंगी। कितना जीना चाहता हूं यह शरीर से पूछा जा सकता है। शरीर तो पीछे की बात बता सकता है। जब मैं लाहौर कालेज में था तो मुझे बीमारी की एक दिन की भी छुट्टी की भी आवश्यकता नहीं पड़ी। सोचा कि देखूं कि बुखार में क्या हालत होती है। बुखार को मैंने निमन्त्रण दिया, दो दिन के लिए ज्वर आ गया। मैं लड़कों से कहा करता था कि बीमार मत हो। यदि होना ही है तो गर्मी की छुट्टियों में हो लिया करो। या इतवार को हो जाया करो। जिस प्रकार से हमारा शरीर चल रहा है, उससे पूछो कि कब तक जीना है। जीने की क्या योजना बनानी है और कौन-सी भेंट जाते समय मैं भगवान् के पास ले जाऊंगा। ये कपड़े, पुस्तकें, छड़ी और सारा सामान यहीं पड़ा रह जाएगा। कानपुर में एक मित्र से पूछा कि आपके बनाए मकान तो लड़कों ने सम्भाल लिए। लड़कियां दामाद ले गए। पुत्रों को बहुएं सम्भाल बैठीं। आप के पास क्या है। अपने लिए क्या बनाया। मकान आदि तो उनके लिए बनाए और बेईमानी अपने लिए बनाई। क्या तमाशा है। आज भ्रष्टाचार का बड़ा ज़ोर और शोर है। श्री नन्दा जी सारे देश की बात कहते हैं। यू० पी० में ५१ जिले हैं। एक जिला ही ऐसा बनाकर दिखा दो कि जिसमें भ्रष्टाचार न हो। कानपुर में मैंने धोबी से पूछा कि दूसरों के मैले कपड़े धोते तुम्हें २० वर्ष हो गए पर तुम्हारे अपने कपड़े मैले हैं। अपने भी धो लिया करो वह बोला कि आप व्याख्यान देते हो कि यह करो। पर आप भी करते हो या नहीं। मैं भी धोबी हूं और आप भी धोबी हैं। आज सारे एक दूसरे से कहे जा रहे हैं। स्वयं आचरण करने वाले थोड़े हैं।

आर्य सभ्यता को यह श्रेय प्राप्त था कि इस में शुद्ध आचरण बिताते थे। ला० साईंदास जी तीन मन्त्रियों में से एक थे। उनका लड़का सुन्दरदास इस साईंदास स्कूल जालन्धर का पहला हैडमास्टर था। वह अपनी आय का दस प्रतिशत देते थे। १२० रुपयों में १२ रुपये मासिक समाज को दिया करते। चीफकोर्ट में काम करते थे। महीने के बाद जब वेतन मिलता तब पहले घर न जाकर सीधे समाज जाते और वह १२ रुपये देकर फिर घर जाते। वे इन तेरह रुपयों को अपना समझते ही नहीं थे। यह जीवन का निर्मलपना था। खानपान में छोटी सी मक्खी अन्दर चली जाये तो वह न स्वयं पचती है और न खाने को पचने देती है। इसी प्रकार बेईमानी और रिश्वत की कमाई भी मक्खी है—न पचती और न दूसरे धन को पचने देती है। निकल ही जाता है। बेटे स्त्री आदि सब से नजदीकी सम्बन्धी हैं। रिश्वत या बेईमानी के धन से हम इन को भी बेईमान बनाते जा रहे हैं। हैं। केवल धोबी न बनो अपितु अपने कपड़ों को भी धोना सीखो। शीशा अपने सामने रख कर देखा करो कि मेरी आकृति कैसी बनती जा रही है। अपने को बनाओ। अपना कमरा साफ रखो। यदि प्रत्येक भाई बहिन अपने को साफ कर ले तो सारा देश स्वयं साफ हो जायगा। मुश्किल यह है कि हरेक दूसरे को तो धोना चाहता है; साफ करने में जोर शोर से लगा हुआ है, पर अपने कपड़े मैले रखता है। अपनी सफाई की ओर उसका तनिक भी ध्यान नहीं है। यही कारण है कि देश बनता नहीं। इसी लिए सुधार नहीं हो रहा। हर एक अपने आप से पूछा करे कि मैं अपने जीवन में उस परमात्मा के पास क्या ले जाऊंगा। जीवन को यज्ञमय बनाओ। वेद में उपदेश दिया गया—आयुर्यज्ञेन कल्पताम्। जीवन यज्ञ के अर्पण कर दो।

यज्ञ तीन प्रकार के हैं। प्रातः का नाम वसुयज्ञ है। जो दुपहर किया जाए रुद्र यज्ञ है तथा जो साय के समय होता है उसे आदित्य यज्ञ माना गया है। तीनों समय जो मन्त्र पढ़े जाते हैं उनकी वसुसाम रुद्रसाम तथा आदित्यसाम बोला जाता है। वहां पर शब्द आते हैं—लोकद्वारम्...लोक के द्वार को खोल दो। इसके लिए जो भी अवसर मिल सकता है, उससे पूरा-पूरा लाभ उठाया जाए। इन तीनों यज्ञों के नाम में इनके अर्थ आते हैं। प्रातः के यज्ञ की विशेषता वसु शब्द में आ जाती है। दोपहर के यज्ञ की बात रुद्र शब्द में निहित है तथा साम यज्ञ की परिभाषा आदित्य के शब्द से भली प्रकार मिल जाती है। यज्ञ के ये तीनों समय और शब्द बड़े ही महत्व के हैं। वैदिक साहित्य में यही भारी विशेषता है कि उसके शब्दों में बड़ा रहस्य भरा पड़ा है। मनुष्य बार २ यही कहता रहे कि मैं जीवन में यज्ञ कर रहा हूं, यज्ञ कर रहा हूं। प्रातः वसु यज्ञ में लगा हूं, दोपहर को रुद्र यज्ञ में लगा हूं तथा सायं आदित्य यज्ञ में संलग्न हूं। तीनों यज्ञ में अपने जीवन में कर रहा हूं। जीवन भी इन यज्ञों को करने में मिला है। (अपूर्ण)

आर्यो ! इस आक्रमण को रोकना है

आर्यसमाज आज भी जागरुक आन्दोलन है

ईसाई निरोध सम्मेलन का समारोह

आर्यसमाज (किला) विक्रमपुरा जालन्धर शहर के वार्षिकोत्सव में रविवार दोपहर को ईसाई निरोध सम्मेलन प्रसिद्ध नेता महामना ला॰ देवीचन्द जी एम. ए. प्रधान दयानन्द साल्वेशन-मिशन होश्यारपुर की प्रधानता में बड़े ही समारोह से सम्पन्न हुआ इसमें आर्यसमाज के पुराने महारथी ज्ञानी पिण्डीदास जी आर्यसमाज लोहगढ़ अमृतसर, श्री ५० ओ३म्प्रकाश जी महोपदेशक सभा, श्री कुन्दनलाल जी चूनियां वाले, श्री प्रकाशदेव जी पूर्व हैडमास्टर, श्री दयानन्द आर्य साधु आश्रम होशियारपुर ने अपने-अपने विचार इस समय ईसायत के बढ़ते हुए तूफान के सम्बन्ध में प्रकट किए मान्यवर ज्ञानी पिण्डीदास जी ने इस बारे में एक आवश्यक प्रस्ताव प्रस्तुत किया जो बाद में सर्वसम्मति से जयघोष के साथ पारित हो गया। सारे सज्जनों ने ओजभरी भाषा में होने वाले कैथोलिक चर्च के सम्मेलन का जो प्रभाव भारतीय जनता पर पड़ेगा तथा भारत सरकार सैक्युलर होकर भी इस साम्प्रदायिक सम्मेलन को दे रही है। उसकी ओर सारी जनता का ध्यान दिलाया। आर्यसमाज इसके लिए जो कुछ इस दिशा में प्रचार तथा साहित्य बांटने का कार्य कर रहा है। सारा विवरण प्रस्तुत किया।

श्री ज्ञानी जी ने प्रभाव भरे अपने भाषण में इस पर बोलते हुए कहा कि सैक्युलरिज्म का अर्थ **Anti Hinduism** है। सैक्युलर। मां के न बाप के हैं। ये सैक्युलर हिन्दु के लिए धर्म निरपेक्ष बन गये हैं। ईसाइयों की कांग्रेस सभी ईसाई देशों में होती रही हैं। आज भारत में ५५०० ईसाई मिशनरी हैं जब कि पहले केवल २००० ही थे। इस सम्मेलन के लिए बाहर से आने वाले लोगों को ठहराने के लिए बम्बई महाराष्ट्र के तमाम स्कूल कालेज बन्द कर दिये गये हैं। महात्मा गांधी जी के ये अनुयायी इस सम्मेलन में शामिल होने वाले ईसाई मिशनरियों के लिए विदेशी शराब तथा गोमांस का प्रबन्ध कर रहे हैं। हम ने इस तूफान का डट कर सामना करना है। हमारे पास वेद जैसा ईश्वरीय ज्ञान है। श्री राम, कृष्ण, व्यास दयानन्द जैसे महापुरुष हैं। आर्यसमाज का द्वार शास्त्रार्थ के लिए उनके वास्ते खुला है। आर्य समाज के परम त्यागी तपस्वी सर्वस्व भेंट करने वाले महात्मा हंसराज, बलिदानी वीर स्वामी श्रद्धानन्द जी, अमर शहीद पं० लेखराम जी आर्य मुसाफिर सरीखे देवता क्या ईसाई पैदा कर सकते हैं। आर्यसमाज के सैनिकों ने आरम्भ काल से ही इस प्रकार के बड़े २ तूफानों का सामना किया है। अब भी सामना कर रहा है। जनता को चाहिए कि समाज को मजबूत करे।

आल इंडिया दयानन्द साल्वेशन मिशन होशियारपुर

की ओर से १२ हरिजन छात्रों को जो कि हाईस्कूल अथवा हायर सैकन्डरी स्कूल में शिक्षा पाते हों, प्रत्येक को ६/- मासिक छात्र वृति देनी स्वीकार की है प्रार्थी १५ दिसम्बर तक अपने २ प्रार्थना पत्र ऊपर दिए पते पर भेजें।

वेद प्रचार के महान् लक्ष्य की ओर बढ़ते चलो

गायत्री जाप जीवन में शान्ति भर देता है

पूज्य स्वामी विज्ञानानन्द जी महाराज का प्रवचन
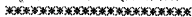
स्वामी विज्ञानानन्द जी महाराज (आचार्य सत्यभूषण जी रोहतक वाले) आर्यसमाज की विभूति हैं। किलासमाज के वार्षिकोत्सव पर यज्ञ के ब्रह्मा के आसन पर विराजमान थे। उत्सव में शान्त वातावरण में गायत्री को लेकर गम्भीर मुद्रा में प्रवचन देते हुए कहा—

यजुर्वेद में मन्त्र आता है—

चत्वारि शृंगा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य। त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्यां आविवेश। यजु :—

वेद में कई बातें पहेली और प्रश्नोत्तर रूप में भी आते हैं। इस मन्त्र में विलक्षण वृषभ का वर्णन है। वृषभ सुख की वर्षा करने वाले का नाम है पश्चिम वालों ने ऐसे २ मन्त्रों के रहस्य को नहीं समझा। स्वामी दयानन्द ने बुद्धि का ताला खोल दिया। यह मन्त्र यज्ञपरक भी है और गायत्री परक भी है। बड़ा ही सुन्दर इस में उपदेश मिलता है। यज्ञ को पिता और गायत्री को माता कहा गया है। पिता से अधिकार व माता से प्यार मिलता है। गायत्री चारों वर्णों के लिए है। सबको अधिकार है। इसके चार शृंगों का अर्थ यह है कि यह मन्त्र चारों वर्णों और आश्रमों के लिए है। प्रत्येक वर्ण तथा आश्रम में रहने वाला इस मन्त्र का पाठ कर सकता है। प्रभु का संसार सब के लिए है। किसी के लिए है। और किसी के लिए नहीं—ऐसी बात नहीं। चारों के लिए समान है।

त्रयोऽस्य पादा :—इस के तीन पैर हैं। इसका भाव यह है कि इसके तीन भाग हैं। भूः भुवः स्वः। ओ३म् के भी तीन भाग हैं। अ उ म्। अ से भूः, उ से भुवः म से स्वः। भूः प्राण प्यारा, भुवः दुःख नाशक तथा स्वः सुख स्वरूप है। अ से सृष्टि, उ से स्थिति, म से प्रलय है। इस प्रकार से ये तीन गायत्री के पाद हैं। द्वे शीर्षे—दो सिर वाला है। इसका सम्बन्ध लोक व परलोक से है। दोनों के लिए सुख देता है। यही इसके दो सिर हैं। गायत्री से लोक की सिद्धि भी और परलोक का सुख भी मिलता है।

सप्तहस्तासः—इसके सात हाथ हैं। इसका अर्थ यह है कि गायत्री माता अपने पुत्र-पुत्रियों को सात प्रकार के पदार्थ देती है। इसे वेदमाता भी कहा है स्तुता मया वरदा वेद माता—इसमें सात पदार्थों की प्राप्ति का सन्देश मिलता है। आयु :—प्राण-प्रजा कीर्ति, पशु, द्रविण, ब्रह्मवर्चस—ये सात—गायत्री से फल मिलते हैं। यही इसके सात हाथ हैं।

त्रिधा बद्ध :—यह वृषभ तीन स्थानों से बन्धा हुआ है। ज्ञान-कर्म-उपासना—ये तीन वेद की सुन्दर प्रक्रियाएं हैं। विश्व का ज्ञान पाकर कर्म करते हुए प्रभु की उपासना करना तीन बातें हैं। जीवन इन तीन बातों के लिए है। यह यज्ञ भी और गायत्री भी मनुष्यों में रहते हैं। इसे वृषभ कहा गया है। क्योंकि सुख की वर्षा करता है। जाप करने वालों पर सुख की वर्षा करता रहता है। इस प्रकार इस मन्त्र में कितना सुन्दर उपदेश मिलता है। हमें गायत्री का सार्थक जाप करना चाहिए।

पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी जालन्धर शहर में

बड़े सौभाग्य का समाचार है कि आर्य जगत् के प्रसिद्ध तपस्वी सन्त पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज ता० १५ दिसम्बर मंगलवार से १७ दिसम्बर वीरवार तक जालन्धर में पधार रहे हैं। श्री ला० धर्मपाल जी, श्री ला० इन्द्रसेन जी पूर्व कार्यकर्ता प्रधान सभा अपने स्वर्गीय पूज्य पिता मास्टर नन्दलाल जी के जन्म दिवस पर अपने परिवार में वेद का यज्ञ तथा महात्मा जी की मधुर कथा करा रहे हैं। महात्मा जी इस यज्ञ के अध्यक्ष होंगे तथा मधुर प्रवचनों का अमृत पिलाएंगे। जालन्धर की जनता के सौभाग्य हैं। समारोह में पधार कर अमृत पान करेगी।

आर्यप्रादेशिक सभा को वेद प्रचारार्थ धन

आर्यसमाज सौथ एक्सटैंशन दिल्ली	१०१/-
,, का. वि. गुरदासपुर	१६५/-
,, पौली (संगरूर)	१२/-
,, हिसार	१०/-
,, जुगलान (हिसार)	४५/-
,, समाना (रोहतक)	५०/-
,, नन्दगढ़ (चुड़ाली)	२०/-
स्त्री आ.स. नेताजी नगर देहली	१०/-
आर्यसमाज नकोदर	१००/-

महात्मा जी का सभाप्रेम

पूज्य महात्मा आनन्दस्वामी जी महाराज के मन में सभा से कितना प्रेम है। जहां वे पञ्जाब में समाजों के उत्सवों, कथाओं के लिए अपना अमूल्य समय देते हैं, वहां आप सभा की अवस्था को देख कर उस के वेद प्रचार के लिए भी कितना धन भिजवाते हैं। इस बात का पता सभामन्त्री प्रिंसिपल ज्ञानचन्द जी भाटिया के आर्य जगत् के गतांक में विवरण से पता लगता है। महात्माजी ने सभा को अपनी उदारता से १८००० हजार रुपये वेदभाष्य व वेद प्रचार निधि में भिजवाए हैं। महात्मा जी को सभा में काम करने वाले प्रचारकों का कितना ध्यान रहता है। उनकी कृपा ही है।

आर्यसमाज साम्बा

श्री दुर्गादास गुप्ता उप-प्रधान समाज को उपप्रधान पद से खारज किया जाता है क्यों कि समाज के चुनाव से लेकर आज तक वह समाज के सदस्य नहीं बने और न ही सत्संगों में आते हैं। दूसरा—श्री ओमप्रकाश जी सदस्य समाज को उप-मन्त्री बनाया गया था। वह यह पद स्वीकार नहीं करते, इसलिए उनकी जगह ठाकुर सरदारसिंह जी को उप-मन्त्री बनाया जाता है।

—वेदप्रकाश वर्मा मन्त्री

आर्यसमाज मंडी हिमाचल का प्रस्ताव

भारत में ईसाइयों की अराष्ट्रिय तथा आपत्तिजनक गतिविधियों पर आर्यसमाज मंडी हिमाचल प्रदेश का एक विशेष अधिवेशन दिनांक २९. ११. ६४. श्री कैप्टन इन्द्रसैन जी की प्रधानता में हुआ। जिसमें निम्नलिखित प्रस्ताव सर्व सम्मति से पास किया गया।

आर्य समाज मंडी हिमाचल प्रदेश का यह विशेष अधिवेशन धर्म के नाम पर ईसाइयों की अराष्ट्रीय आपत्तिजनक गतिविधियों पर चिन्ता प्रकट करता है। और आर्यों की शिरोमणी सभा "सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा से प्रार्थना करता है कि बम्बई में हो रहे विश्व ईसाई सम्मेलन के अवसर पर ईसाइयों को शास्त्रार्थ के लिए आह्वान किया जाए और इसके प्रबन्ध की सुव्यवस्था की जाए।

२. आर्यसमाज मंडी हिमाचल प्रदेश का यह अधिवेशन सार्वदेशिक सभा से यह भी प्रार्थना करता है कि विश्व ईसाई सम्मेलन के पश्चात शीघ्रातिशीघ्र बम्बई में या अन्य उपयुक्त स्थान पर एक अखिल भारतीय सम्मेलन का आयोजन करे जिस से ईसाइयों की अराष्ट्रीय गतिविधियों से भारतीय जनसाधारण को सचेत किया जाए और बम्बई में हो रहे ईसाई सम्मेलन के कुप्रभाव को दूर किया जा सके।

मन्त्री आर्यसमाज मण्डी
(हिमाचल प्रदेश)

ब्रह्म यज्ञ प्रसारक....

(पृष्ठ २ का शेष)

और पुत्र पर घोर संकटापन्न स्थिति आ जाने पर भी सन्ध्या सम्बन्धी अपने नियम पालन में शिथिलता नहीं दिखाते थे। अतः हमें भी उचित है कि शास्त्र प्रमाणों और पूर्व पुरुषा के आचार से शिक्षा ग्रहण करते हुए, तन-मन से सन्ध्योपासन में तत्पर रहें और देव दयानन्द का, जिन्होंने सन्ध्या सम्बन्धी चिरविस्मृत तथ्य को पुनः हमारे सामने बल एवं निष्ठा पूर्वक उपस्थित किया, हार्दिक धन्यवाद देते हुए उनकी जय-जयकार मनाएं।

समाप्त

शुभ सूचना

श्रीमान् जी सादर नमस्ते!

आपको विदित हो कि पूज्य पिता स्वर्गीय श्री मास्टर नन्दलाल जी की पुण्यस्मृति के पालन में तीन दिन १५ से १७ दिसम्बर तक सामवेद पारायण यज्ञ करा रहे हैं। यह प्रतिदिन प्रातः ८ बजे से १० बजे तक हुआ करेगा। यज्ञ के ब्रह्मा पूज्यपाद महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती होंगे। इसलिए आप से सविनय प्रार्थना है कि यज्ञ में परिवार सहित पधार कर लाभ उठावें और हमें अनुग्रहीत करें। प्रतिदिन यज्ञ के बाद पूज्य महात्मा जी का प्रवचनामृत का प्रवाह भी चलेगा।

धर्मपाल, इन्द्रसैन, सत्यपाल, प्रेमपाल, राजकुमार, मदनलाल

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मासिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर।

टलीफोन न० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक ५०) ६ पौष २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०– २० दिसम्बर १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

सदा हवन्ते विश्वपतिम्

जो लोग ज्ञानी हैं, प्रभु के प्यारे भक्त हैं। वे सदा उस विश्वपतिम् सारे संसार के स्वामी तथा विश्व के रक्षा करने वाले परमात्मा को ही हवन्ते-पुकारते हैं। उसी का भजन करते हैं। उसी के उपासक होते हैं।

असि होता न ईड्य:

प्रभो! आप होता हैं। इस सारे-संसार में आपका ही महान यज्ञ हो रहा है। आप इस सारे यज्ञ के होता हो और नः-हमारे लिए ईड्य:-स्तुति के योग्य हो। आपकी स्तुति हम लोग किया करें।

मित्रं वयं हवामहे

हम उस भगवान को बुलाते हैं, जो हमारा मित्र है। इस संसार के मित्र, साथी तो कष्ट आ पड़ने पर साथ छोड़ जाते हैं। पर प्रभु ऐसा परम मित्र है जो सदा हमारे अंग संग रह कर सुखी करता है।

सा म वे द से

वे दा मृ त

ओ३म् स त्वं नो अग्नेऽवमो भवोती ने दिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ। अव यक्ष्व नो वरुणं रराणो विहि मृळीकं सुहवो न एधि स्वाहा॥ इदमग्नि वरुणाभ्यां इदन्न मम॥

ऋक् मंडल ४ सूक्त १ मं. ५

अर्थ—हे अग्निरूप परमात्मन्! (स त्वं) वह आप (नः) हमारे (अवमः) समीप हो और (ऊती) रक्षक बने हो। तथा आप (नेदिष्ठः) बड़े समीप हो (अस्याः) इस (उषसः) प्रभात के (व्युष्टौ) यज्ञादि पवित्र कार्यों में हमारे समीप हो। प्रभो! आप (अवयक्ष्व) हमें लगाए रखें (नः) हमें (वरुण) उत्तम ग्रहण करने योग्य बल आदि को (रराणः) प्रदान करते हुए (विहि) प्रकाश से भर दीजिए (मृळीकम्) आनन्द देने वाले ज्ञान को दें तथा (सुहवः) सुख के भण्डार तथा सुख-पूर्वक बुलाने के योग्य हैं (नः) हमें (एधि) हर प्रकार से बढ़ाते रहें।

भाव—परम देव! आप हमारे रक्षक हैं, पूज्य देव हैं। अत्यन्त समीप हैं। प्रत्येक जीवन के शुभ यज्ञ में, पवित्र कर्मों में सदा हमारे पास हैं। हम ही आपको भूल जाते हैं पर आप तो सदा हमारे निकट हैं। कृपा करें हे वरुण देव! हमें बल शक्ति प्रदान करे। हमें प्रकाश के पथ पर चलाते रहें। हम अन्धकार में भटकते २ भटक गये हैं, बड़ी बड़ी ठोकरें खा चुके हैं। आप सुखों के भण्डार हैं हमें सुख का प्रसाद दीजिए। बड़े दुःख उठा लिए हैं। हमें सब प्रकार से बढ़ाते रहें—सं०

ऋषि दर्शन

क्षत्रस्य धर्मस्य स्वरूपम्

राज्य में पापी अपराधी दुष्ट को कड़ा दण्ड देना क्षत्रिय का उस शासन को चलाने वाले का धर्म का लक्षण है। दण्ड देना उसके धर्म और कर्तव्य में शामिल है।

उत्तमकर्मकारिभ्य आनंदकर:

राज्य के नायक का यह धर्म है कि जो उत्तम काम करने वाले हैं, उन के लिए आनन्दकारी बन जाये। नियमों का पालन करने वालों को तो सुखी बनाता रहे तथा—

दुष्टेभ्यो दुःखप्रद:

जो नियम विधान व कानून को तोड़ कर राज्य में गड़बड़ मचाते हैं, उनको दुःख देवे कड़ा दण्ड देवे। नर्मी उन से कभी न वर्ते। कड़ा वर्ते।

भा ष्य भू मिका से

अधिष्ठाता—श्री संतोषराज जी सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

मानव जीवन वसु रुद्र आदित्य तीन यज्ञों के लिए है

भगवान् के पास प्रसन्न मन होके जाना है

(प्रसिद्ध फिलास्फर डा० दीवानचन्द जी एम० ए० कानपुर)

(प्रवचन का दूसरा भाग)

आर्यसमाज की मान्य विभूति प्रसिद्ध फिलास्फर डा० दीवानचन्द जी एम० ए० कानपुर आर्यजगत की विशिष्ट विभूतियों में से हैं। आपने आर्यसमाज किला विक्रमपुरा जालन्धर के वार्षिकोत्सव पर जो गम्भीर प्रवचन दिया था। उसका कुछ भाग तो आर्यजगत के जल्से के भाषणों में प्रकाशित किया गया है। शेष का दिव्य प्रसाद इस अंक में दिया जा रहा है। पाठक लाभ उठायें—सं०

जीवन को शास्त्रों में यज्ञमय कहा गया है। हम निरन्तर यज्ञ करते जा रहे हैं। यज्ञ के बड़े २ तीन भाग हैं। पहला वसुयज्ञ २. रुद्र यज्ञ तथा तीसरा आदित्य यज्ञ कहा है। वसुयज्ञ—वह है जो जीवन की आरम्भ की अवस्था में होता है। पूर्व की आयु के २५ वर्ष तक किया जाता है। वसु का अर्थ बसाने वाला है। इस यज्ञ के द्वारा मनुष्य अपने वास निवास का Settel होने का प्रबन्ध करता है। उसने जो कुछ बनाना है, जिस स्थान या अवस्था पर उसने पहुंचना है, जो भी जीवन का उसने मार्ग अपनाना है। वह इसी अवस्था में मनुष्य करता है। यह आयु उस की निश्चित दशा का निर्णय करने वाली होती है। प्रत्येक अपना इस अवस्था में रहने का स्थान बनाता है। उस ने किस काम को अपने जीवन का लक्ष्य बनाना है। आयु के समय को किस प्रकार से आराम पूर्वक बिताता है, उसका निर्धारण इसी आयु में करना होता है। इसीलिए इस यज्ञका नाम भी वसुयज्ञ है। मैंने अपने जीवन का यह समय पढ़ने लिखने में लगाया। अध्ययन को मैंने अपना प्रयोजन निश्चित किया। इस वसुयज्ञ में हरेक जमा करना सीखता है। शक्ति, स्वास्थ्य, विद्या, आचार तथा और भी अनेक उपयोगी तत्वों को जमा करता जाता है। यह बसाने वाला यज्ञ माना गया है।

दूसरा रुद्र यज्ञ है। जीवन के दूसरे भाग में चलता है। यह परिश्रम करने की अवस्था है। गृहस्थ का यज्ञ माना गया है। घर के कार्यों के लिए कितनी दौड़-धूप करनी होती है। सारा समय परिश्रम के मार्ग पर चलते हैं। आलस्य प्रमाद से गृहस्थी का काम नहीं चलता। फिर भी एक राष्ट्र होता है। उसके लिए सारा प्रबन्ध करना होता है। रुद्रयज्ञ तप का, कठोर परिश्रम का तथा रुलाने वाला यज्ञ हुआ करता है। कभी मकान का, सन्तान का एवं खाने-पीनेके समान की चिन्ता में गृहस्थी लगा रहता है। यह यज्ञ बीच के समय में होता है। जो गृहस्थी हो कर घर के कार्यों में घबरा जाते हैं। विपत्तियों का सामना करने में दिल छोड़ देते हैं। वे रुद्र यज्ञ को करने वाले नहीं होते। इस आयु में कठिन परिश्रम करना आवश्यक है। इस यज्ञ के बिना घर का काम कभी चल ही नहीं सकता वसुयज्ञ की भान्ति रुद्र यज्ञ भी कर्तव्य है।

तीसरा यज्ञ आदित्य यज्ञ कहलाता है। यह आनन्द भोगने की अवस्था है। यह यज्ञ बुढ़ापे की आयु में किया जाता है। आदमी निश्चिन्त हो जाता है। घर का सारा काम अपने पुत्रों पर डाल कर स्वयं मस्त हो जाता है। अब उसे किसी प्रकार की चिन्ता नहीं होती आदित्य का अर्थ लेना भी है। इस उमर में मौज लेता है। वानप्रस्थ तथा सन्यास का आश्रम होता है उसे कोई भी तो चिन्ता नहीं सताती उसका मन शान्त हो जाता है। यज्ञ अर्थ दूसरों के लिए देना है। दान में तो कुछ अभिमान हो जाता है किन्तु यज्ञ में यह गर्व भी जाता रहता है। सर्वथा निस्पृह बन कर परोपकारी बनना होता है।

स्वामी दयानन्द मथुरा में गुरु विरजानन्द से पढ़ने आए गुरु बोले कि अपने रहने व खाने का प्रबन्ध कर लो। तब वहां नगर के एक व्यक्ति ने स्वामी दयानन्द को भुने चने देने शुरू कर दिए। एक ने एक पाव दूध का प्रबन्ध कर दिया। तीसरे ने चार आने तेल के लिए नियत कर दिये। क्या ये आदमी जानते थे कि जिस साधु को हम ये थोड़ी सी सहायता देते हैं, वह इतना महान बन कर देश व विश्व का इतना भारी कार्य करेगा? उन का भी यह यज्ञ ही था। स्वामी दयानन्द को बनाने में उन का भी सहयोग प्राप्त है—ऐसा मानना ही चाहिए। परोपकार का जब यज्ञ कर रहे हो, यदि बीमारी आवे या मौत भी आ खड़ी हो- तो उसे कहो —कि मैं तो यज्ञ कर रहा हूं। अभी चली जा। मुझे टायफाइड हुआ मैंने उसे कहा कि मैं तो अभी यज्ञ कर रहा हूं। ले चल कर क्या करेगी —अभी वापस चली जा।

तीसरा प्रश्न यह है कि भगवान् के पास किस दशा में जाऊंगा। क्या रोते-रोते? नहीं—वेद कहता है कि सुमना:—हंसते प्रसन्न होकर ही जाना है। मैं जालन्धर पहुंचा तो उत्तर पड़ा यह विचार करके कि कहीं किला आगे न निकल जाए या मैं आगे न निकल जाऊं। जब मंजिल आ जाए तो हंसते-हंसते छोड़ दो। रोने का क्या काम? स्वामी जी के पास जब मौत आई तो भक्तों ने पूछा कि अब क्या हाल है? बोले—तीस दिन के बाद आज आराम का दिन मिला है। मैं ईश्वर इच्छा में हूं। यही आदित्य यज्ञ है। कोई आसक्ति न होवे। एक युवक की सगाई हो गई तो उसका गुरु बोला—अब हम से गए। शादी होने पर कहा—अब तुम अपने माता-पिता से गये। बच्चा पैदा होने पर कहा कि अब तुम अपने आप से भी गए। सब कुछ सन्तान के लिए होता है। सारी आयु इन झमेलों में लगा रहता है। आदित्य यज्ञ करते ही नहीं। इस संसार से रोते न जाओ, हंसते २ जाओ।

जब आयगा यमका राजा,
मैं कहूंगा आजा आजा।
हो चुके सब मेरे काजा।

ऐसी स्थिति जीवन की बनानी चाहिए। यह सब कुछ भगवान् का है, उसी का दिया हुआ है। इस से पूरा २ लाभ उठाते रहो। परन्तु आसक्त मत हो जाओ। तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा—त्यागभाव से भोगो। तीनों यज्ञ करो। अन्त में शांतमन हंसते २ प्रभु के पास जाना चाहिए। जीवन का यही लक्ष्य है।

भूल सुधार

आर्य जगत् के १३-१२-६४ के अंक में पुलबंगश समाज की सूचना में संस्कारों की संख्या १७६ के स्थान पर केवल १७ छप गई है तथा दान की संख्या ६६६ के स्थान पर ६६६६ छप गई है पाठक नोट कर लें।

—व्यवस्थापक

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२१, २० दिसम्बर १९६४ [अंक ५०

बलिदान के पथ पर

प्रति वर्ष दिसम्बर का मास सारे समाज को महान बलिदान का पुनीत पाठ पढ़ाता है। इस महीने की २३ ता० को आर्यसमाज के एक महान देवता नेता ने जनूनी यवन के हाथों पिस्तौल की तीन गोलियों को अपने सीने पर खाकर सारी जनता को देश, धर्म एवं समाजसेवा के पथ पर चलने वालों को बलिदान का मार्ग दिखाया था। उस दिन से लेकर आज तक सारा समाज उस अमर बलिदानी वार का अमर दिवस समारोह पूर्वक मना कर उस प्रकाश स्तम्भ से जीवन में नानाविध सन्देश की किरणें लेता चला आ रहा है। यह दिवस बहुत कुछ सीखने, विचारने तथा उत्सर्ग का दीक्षा लेने का दिवस है। यह बलिदान यज्ञ है। जिस देवता ने अपने रक्त की अन्तिम बिन्दु भी धर्म तथा समाज के लिए अर्पित कर दी, उस का यह अमर दिवस प्रत्येक समाज को बड़े समारोह से अपना जीवन कर्तव्य मानकर मनाना चाहिए।

यतिवर हुतात्मा श्रद्धानन्द का जीवन एक चमकता दमकता जीवन है। उन में अनेक प्रकार की विशेषताएं थीं। सब से पहली बात निर्भयता थी। स्वामी जी का सारा जीवन निर्भयता का प्रतीक बना हुआ था। महर्षि दयानन्द जी के दर्शनों के बाद जब उनके जीवन ने भारी पलटा खाया तथा समाज के कार्य में सारा समय दे दिया। उस समय से लेकर अन्तिम अवस्था तक उनके प्रत्येक काम में निर्भयता तो कूट २ कर भरी हुई थी। उनके जीवन के राष्ट्रीय क्षेत्र में भी निडरता का बड़ा प्रभाव पड़ा। उस समय जब वह कांग्रेस में काम करते थे तब उन की बातचीत, लेखों तथा भाषणों में इस निर्भयपन का परिचय मिलता है। भय तो उनको छू तक नहीं गया था। अमृतसर जलियांवाला बाग के निर्दयपूर्ण गोलीकांड के बाद भयभीत भारतीयों का नेतृत्व करने के लिए अमृतसर अधिवेशन में उनकी निर्भय गूंजने वाली ललकार आज भी सब को जीवन चेतना का पाठ पढ़ाती है। आर्यसमाज के कार्यों में उनकी निर्भयता सर्व प्रसिद्ध ही है। स्वामी जी परमनिष्ठावान् थे। गुरुकुल कांगड़ी की विशाल सर्वतोमुखी संस्था उनकी निष्ठा का परिचय देती है। उस युग में उस वीरात्मा ने आर्यसमाज का नेतृत्व जिस शान से निडर होकर किया। वह इतिहास के पृष्ठों में एक अमर अध्याय बन चुका है। उस समय समाज की आवाज सारे देश में गूंजती थी। इस का भारी प्रभाव व दबदबा था निर्भयता इसके जीवन में काम करती थी। दूसरा महान गुण स्वामी जी के जीवन का बलिदान था। अपना सब कुछ समाज के अर्पण कर दिया। उनकी बलिदान गाथा अमर बन चुकी है। समाज के निमित्त शरीर भी दे दिया। हम २३ ता० दिसम्बर को उनका बलिदान दिवस मनाते हैं। उस दिन ये दोनों विशेष गुण हमारे जीवन में आने चाहिएं

आनन्द पाने का मार्ग

(पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज)

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

आर्यजगत् के प्रसिद्ध परम तपस्वी सन्त पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज मधु के भण्डार हैं। उनका सब कुछ मधुमय है। शरीर मधुमय, वाणी के प्रवचन मधुमय, दर्शन मधुमय तथा सत्संग भी मधुमय है। उनके ग्रन्थ भी मधु की निधियां हैं। सारा जीवन मधुमय है। समय-समय पर जगत के पाठकों को उनके मधुर तथा अमृतमय वचन प्रवचनों का प्रसाद अमृतपान कराया जाता है—सं.

वास्तविक आनन्द को पाने का मार्ग क्या है ? इस रहस्य को समझकर आनन्द के स्रोत के पास पहुंचो। एकाग्र होकर ध्यान लगाकर उसको देखो; जिसकी सविता शक्ति भूः, भुवः, स्वः के इस चक्र को चला रही है जो स्वयं भी भूः, स्वः, सत् चित् आनन्द है परन्तु इसे देखने के लिए पहली आवश्यकता है कि अपने चित्त की वृत्तियों को रोको। चित्त को कहो कि अब और किसी ओर जाना नहीं। उस सच्चिदानन्द की ओर जाना है। और कुछ देखना नहीं केवल उसको देखना है। और कुछ सोचना नहीं, केवल उसको सोचना है। और कुछ पाना नहीं केवल उसको पाना है। चित्त की वृत्ति को रोककर किसी एक स्थान पर कोई सहारा बनाओ।

हमारे भीतर स्थान हैं, जहां ध्यान लगाया जा सकता है। एक हृदय जहां सीने की हड्डियां आकर छाती में मिलती हैं, वहां सबसे निचली पसलियों के मिलने के स्थान पर। दूसरा 'आज्ञाचक्र' दोनों भ्रूवों के मध्य, नाक के ऊपर माथे में जो स्थान है वहां। तीसरे ब्रह्मरन्ध्र में तालु से ऊपर सिर की हड्डी के नीचे, मस्तिष्क और खोपड़ी के मध्य एक रिक्त स्थान है वहां—इन तीन में किसी भी स्थान पर ध्यान लगाओ। परन्तु एक बात स्मरण रखो। ध्यान के स्थान को बार २ बदलो मत। एक स्थान चुन कर फिर उसे छोड़ो मत। और वहां अपने लिए कोई सहारा बनाओ। ध्यान का सहारा बनाओ। ऐसी वस्तु का निर्णय करो जिसका तुम ध्यान कर सको। अच्छे सहारे दो हैं—एक प्रकाश दूसरा ओम्—यह अक्षर जो ईश्वर का निजनाम है। महर्षि पतञ्जलि ने योगी के लिए जब कहा कि वह ध्यान करे और जब यह भी कहा कि उस परम ब्रह्म का ध्यान करे तब साथ ही कहा—

तस्य वाचकः प्रणवः

ओम् ही उसका नाम है। दूसरे शास्त्रों ने भी कहा—

ओमित्येवं ध्यायत आत्मानम्

आत्मा को, उस ईश्वर का ध्यान करना हो तो ओम् का ध्यान करे और सामवेद ने दूसरी बात कह दी—

(शेष पृष्ठ ६ पर)

हम भी आर्य समाज की आवाज को, वेदप्रचार के काम को निर्भय होकर आगे ही आगे ले जाने का संकल्प करें तथा धर्म कार्यों के अपने जीवन में से तन, मन, धन का बलिदान करने में सदा तत्पर रहें। हम देखें कि हम समाज के लिए क्या देते हैं ? अपनी आमदनी का कितना भाग धर्म प्रचार के लिए देते हैं। क्या एक बच्चे को धर्म के काम में डाला है—सोचें।

—त्रिलोकचन्द्र

भारत सुरक्षा नियम का शिकार

आर्य समाज के तपःपूत देशभक्त हरिश्चन्द्र जी पदयात्री

ले० श्री राजेन्द्रजी जिज्ञासु, प्राध्यापक, दयानन्द कालेज सोलापुर

✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱

२५ नवम्बर की रात्रि को महाराष्ट्र के मराठवाड़ा विभाग के लोकप्रिय समाज सेवी तरुण तपस्वी हरिश्चन्द्र जी ने अपना विशेष व्यक्ति भेज कर मुझे सूचना दी कि उनको भारत सुरक्षा नियम के अनुसार ६ दिसम्बर तक स्थान बन्द कर दिया गया है। सरकारी आदेश में स्थानबद्धता का कोई कारण नहीं दिया गया परन्तु स्पष्ट प्रतीत होता है कि यह सब कुछ पोप महोदय के भारत आगमन के उपलक्ष किया गया है। श्री पूज्य हरिश्चन्द्र जी ने मुझे आज्ञा दी कि मान्य आचार्य भगवान दास जी से परामर्श कर के सूचित करो कि मैं यह आज्ञा भंग करूं या न। अविलम्ब मैं आचार्य जी के निवास स्थान पर पहुँचा और इस विषय में उन का आदेश मांगा। आचार्य जी ने आज्ञा दी कि वह भारत सुरक्षा नियम न तोड़ें। उस पत्र को पाकर हमें आशंका हुई कि महाराष्ट्र के कुछ और भी आर्य समाजी नेता व कार्यकर्ता भारत सुरक्षा नियम का अवश्य शिकार बने होंगे। आज २६-११-६४ को सूचना मिली है कि लातूर के मूर्धन्य आर्य समाजी नेता डाक्टर डी० आर० दास जी भी स्थानबद्ध कर दिये गये हैं।

इन दोनों महानुभावों के जीवन से पाठकों को परिचित कराने के उद्देश्य से यह संक्षेप लिख रहा हूं। श्री हरिश्चन्द्र जी आर्यसमाज के एक तरुण तपस्वी हैं। ३५-३६ वर्ष के लगभग आप की आयु है। आप निज़ाम स्टेट में पैदा हुए। बालकाल से ही धार्मिक वृत्ति के हैं। मिडल तक आपने शिक्षा पाई। श्री महात्मा गांधी हुतात्मा श्रद्धानन्द जी महाराज, महात्मा सुकरात व श्री टालस्टाय की जिवनियां पढ़कर आप को लोक सेवा की लगन लगी। आपको कहीं से सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ पढ़ने को मिल गया। ऋषि दयानन्द के इस ग्रंथ ने आपके विचारों में क्रांति पैदा कर दी। आपने अपने ग्राम औराद में एक प्राईमरी शाला खोलकर ज्ञान दान का कार्य आरम्भ कर दिया। निज़ाम की तानाशाही के विरुद्ध आपने जन जागरण और स्वतन्त्रता आन्दोलन में भाग लेना आरम्भ कर दिया।

आप आर्यसमाज के प्रचार में जुटे रहते थे इसी कारण आपका जीवन सदा संकट में रहा परन्तु आपकी कठोर साधना से सारा ग्राम आर्य समाजी बन गया। अपने ग्राम में ही नहीं दूर-दूर तक आप गुरु जी के नाम से विख्यात हो गए। उन दिनों गांधी टोपी पहनना रज़ाकारों के अत्याचारों को निमन्त्रण देना था। आप यद्यपि पगड़ी पहनते हैं पर हैदराबाद के मुक्ति आन्दोलन में आपने गांधी टोपी जानबूझकर पहननी आरम्भ कर दी। आपकी लोकप्रियता व जन-शक्ति के कारण रज़ाकार आपका वध न कर सके। आप प्राईमरी में पढ़ने वाले अपने छात्रों में इतनी तीव्र भावनाएं भरा करते थे कि उनके एक पुराने शिष्य ने मुझे बताया कि गुरु जी हमें कहा करते थे कि यदि कोई रज़ाकार शाला की ओर आये तो अपनी लकड़ी की तख्तियों व सलेटों से सब उसको पीट दो।

आप गोआ के मुक्ति आंदोलन में अपने ग्राम से आय वीरों का एक जत्था लेकर गोआ सत्याग्रह में सम्मिलित हुए। आप पर गोली चलाई गई आप लेट कर गोआ की पुर्तगाली बस्तियों में घुस गये। गोआ के पुर्तगाली ईसाई शासकों ने लाठी प्रहार करके आपकी हड्डियां तोड़ दीं। आज तक आप के कंधे उन चोटों की मार से पूरे स्वस्थ नहीं हो पाये।

आप पंजाब के हिन्दी रक्षा आन्दोलन में जत्था लेकर गये; मार्ग में ग्वालियर स्टेशन पर वहां के दुर्ग की ओर संकेत करके आप अपने साथियों से बोले न जाने महारानी झांसी तांतिया टोपे एवं नेता जी सुभाष चन्द्र इत्यादि कितने वीरों ने रक्त देकर भारत को स्वच्छन्द कराया है यह कह कर आप फूट-फूट कर रो पड़े और देर तक रोते रहे। जिस से पता चलता है कि उन के हृदय में मातृभूमि का कितना प्यार है।

निज़ाम राज्य में जब वह युवकों को स्वतन्त्रता का पाठ पढ़ाया करते थे तो गुलामी के गहरे संस्कारों के कारण वे पूछते थे कि स्वतन्त्रता क्या होती है। इस प्रकार जहां स्वतन्त्रता की कल्पना भी लोग नहीं कर सकते थे आपने सर्वस्व फूंक कर राष्ट्रीय चेतना पैदा की। आप ब्रह्मचारी हैं। पद यात्रा करके वैदिक धर्म का प्रचार करते रहते हैं। आप का विस्तृत स्वाध्याय है। आप कहा करते हैं कि पुस्तकालय मेरा प्राण है।

आप सदाचार की प्रतिमा हैं। अटल ईश्वर विश्वासी हैं। एक बार मैंने आप को महात्मा लिख दिया तो आप ने मिलने पर कहा कि मेरा जीवन अभी इतना पवित्र नहीं कि आप मुझे महात्मा कहें। आप निर्भीकता का सजीव स्वरूप हैं। जब रज़ाकारों का आतंक था तब आप ने अपने ग्राम के एक बड़े वृक्ष पर ओ३म् का झण्डा लहरा कर कहा कि जो इसे उतारने आयेगा मैं उसको जीवित नहीं छोड़ूंगा। किसी को साहस न हुआ कि वहां से आर्यसमाज का झण्डा उतार दे।

(शेष पृष्ठ ६ पर)

दयानन्द-वचनामृत

"बालकों को चाहिए कि वे दृढ़ प्रतिज्ञ हों, यह स्मरण रक्खें कि प्रतिज्ञा भङ्ग करना, वचन देकर न पालना, बड़ा भारी पातक है। वे सदा कृतघ्नता रूप दोष से दूर रहें, क्रोध न करें, कटु वचन उच्चारण न करें। सच्चे, शीतल और मधुर वचन ही बोलें। बहुत बकबक और वितण्डावाद का स्वभाव न बनावें। उचित, हित और मित भाषी बनें। बड़े बूढ़ों को सम्मान दें, उनको आते देख उठ खड़े हों। अभ्यागमन पूर्वक उनका स्वागत करें। पहिले 'नमस्ते' निवेदन करके उनको उच्चासन पर बैठावें। तत्पश्चात् उनके सामने उत्तम आसन पर आप भी बैठें। सभा-समाज में, अपनी योग्यता के अनुसार, पहिले ही ऐसे स्थान पर बैठें जहां से कोई उठा न सके। किसी से वैर विरोध न बांधें। धनी होने पर भी गुणों के ग्रहण और दोषों के परित्याग का स्वभाव न छोड़ें। सज्जनों का सत्सङ्ग करें, दुर्जनों से दूर रहें। अपने माता-पिता और आचार्य की तन, मन और धनादि उत्तमोत्तम पदार्थों से प्रीति पूर्वक सेवा करें'।"

(स्वामी सत्यानन्द जी)

(पृष्ठ से आगे)

नोट—इस से पूर्व का भाग २६ नवम्बर के अंक में पढ़िए।

'और जो मेरा यह भाष्य बनाता है, सो तो वेद, वेदांग, ऐतरेय, शतपथ ब्राह्मणादि ग्रन्थों के अनुसार होता है, क्योंकि जो जो वेदों के सनातन व्याख्यान हैं उनके प्रमाणों से बनाया है, यही इस की अपूर्व विशेषता है।'

परन्तु वेदार्थ की समस्या केवल ग्रन्थों के प्रयोग या उनके उदाहरण दे देने मात्र से ही समाप्त नहीं हो जाती, शतपथ, निरुक्त, अष्टाध्यायी आदि का प्रमाण और उन से अपने मत की पुष्टि करने का प्रयत्न तो सायण ने भी किया है। उसके वेद भाष्य में भी हम ब्राह्मण, निरुक्त आदि ग्रन्थों के सैंकड़ों उदाहरण देखते हैं। फिर क्या बात है कि सायण और दयानन्द की वेदार्थ पद्धति में मौलिक अन्तर है। तब हमारे समक्ष प्रश्न आता है, आर्ष अनार्ष बुद्धि तथा दृष्टिकोण का।

निरुक्तकार ने ऋषियों को मन्त्रद्रष्टा और धर्म का साक्षात्कर्ता कहा है। ऋषि वे होते हैं जो मन्त्रों के गूढ़ तात्पर्य को अपनी योग समाधि जन्य अलौकिक प्रतिभा से समझ लेते हैं और मानव हितार्थ संसार में उस दैवी सत्य का प्रचार करते हैं। यह ऋषित्व के गुण ऋषि दयानन्द में पूर्णतया चरितार्थ होते हैं। दयानन्द उसी कोटि के ऋषि थे और उन में हम उसी आर्ष प्रतिभा का चमत्कार देखते हैं जो वसिष्ठ, वामदेव आदि मंत्र द्रष्टा ऋषियों में थी। ऋषि के जीवन में हम पढ़ते हैं कि वे १८-१८ घण्टे तक की अखण्ड समाधि लगाया करते थे और ईश्वर साक्षात्कार किया करते थे। उनका वेद भाष्य भी आर्ष प्रतिभा और योग-जन्य सहजानुभूति का परिणाम था। यह तो इसी बात से सिद्ध होता है

वेद भाष्यकार

ऋषि दयानन्द और सायण

(श्री पं० भवानीलाल जी 'भारतीय', एम० ए० गवर्नमेंट कालेज पाली (राजस्थान)

कि जब २ उन्हें किसी मन्त्रके भाष्य को लिखने में कोई कठिनाई होती तब वे वेद भाष्य लेखन कार्य स्थगित कर एकान्त कोठरी में प्रविष्ट होकर समाधिस्थ हो जाते थे। समाधि के के पश्चात उस वेद मंत्र का रहस्य उनके लिये हस्तामलकवत् हो जाता था, और वे पुनः वेद भाष्य लिखाने के कार्य में संलग्न हो जाते थे।

अतः यह स्पष्ट है कि ऋषि दयानन्द का भाष्य जहां एक ओर ब्राह्मण, निरुक्त, व्याकरण आदि वेदार्थ के सहायक आर्ष ग्रन्थों का आधार लेकर खड़ा है वहां दूसरी ओर उसके मूल आधार के रूप में ऋषि की वह क्रांतदर्शी प्रतिभा भी विद्यमान है जिसके अभाव में वह आर्ष रचना न होकर एक शाब्दिक खिलवाड़ मात्र रह जाता आज ऋषि दयानन्द के अनुयायियों के हृदय में इस भाष्य की जो प्रतिष्ठा है, उसका कारण यह नहीं है कि यह भाष्य उनके गुरु की कृति है अपितु यह वस्तुतः एक आदर्श ऋषिकृत भाष्य है, जिसकी रचना पूर्ण आर्ष पद्धति पर हुई है।

सायण में हमें आर्ष प्रतिभा का पूर्ण अभाव दिखाई देता है। सायण के वेद भाष्य के मूल में कोई मौलिक प्रेरणा कार्य नहीं कर रही थी। उस ने अपने आश्रयदाता राजा की आज्ञा पाकर ही वेद भाष्य के लिए लेखनी उठाई। ऐसी दशा में हम सायण के वेद भाष्य से किसी अपूर्वता की आशा नहीं कर सकते। ऋषि होना तो दूर सायण का जन्म तक ऐसे युग और वातावरण में हुआ था, जहां वैदिक धर्म के प्रति श्रद्धा की एक क्षीण रेखा मात्र शेष रह गई थी। परिस्थिति तो दयानन्द के लिए भी विशेष अनुकूल नहीं थी परन्तु उन्होंने जो वेद धर्म की उन्नति, और वेदों की पुनः प्रतिष्ठा को ही अपने जीवन का लक्ष्य बनाया था, इसलिये यदि सच्चे वैदिक ज्ञान की प्राप्ति के लिए जनता उनकी ओर से आशान्वित थी, तो इस में कुछ भी विचित्रता नहीं है।

दयानन्द और सायण के वेदार्थ में सहायक उपकरणों में हमें एक और भिन्नता दिखाई देती है। दयानन्द के कार्य क्षेत्र में पदार्पण करने से पूर्व ही उन्हें अपने गुरु विरजानन्द से एक कसौटी मिल गई थी और वह थी आर्ष अनार्ष ग्रंथों की पहचान। इसी को उन्होंने अपने आन्दोलन का आधार बनाया और भारत में एक अपूर्व धार्मिक क्रान्ति का आरम्भ किया। यही कारण था कि ऋषि ने वेदानुकूल आर्ष ग्रंथों को ही प्रमाण स्वीकार किया। सायण के पास इस आर्ष अनार्ष विवेचिनी बुद्धि का सर्वथा अभाव था। उसने यदि एक ओर ब्राह्मण और निरुक्त आदि आर्ष ग्रन्थों का आश्रय लिया है तो साथ ही कपोल कल्पित सूत्र ग्रन्थों, अनार्ष स्मृतियों और आधुनिक पुराणों की भी सहायता लेकर वेदार्थ को विकृत करने में कोई कसर नहीं उठा रखी। सायण के भाष्य में जो हिंसा युक्त यज्ञ विधान, अश्लीलता, अंधविश्वास और रूढ़ियों के पोषण का भाव मिलता है, उसका कारण उसकी अनार्ष ग्रन्थों का अनुसरण करने वाली विचारधारा है। हमारा यह दृढ़ विश्वास है कि यदि सायण के पास भी आर्ष अनार्ष विवेचिनी बुद्धि होती तो उसका भाष्य इतना दोष-पूर्ण और गर्हित नहीं होता।

महात्मा जी का प्रसाद

परमसन्त महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज अपना अमूल्य समय निकाल कर तीन दिनों के लिए जालन्धर पधारे श्री ला० इन्द्रसेन जी पूर्व कार्यकर्ता प्रधान सभा के परिवार में स्वर्गीय मास्टर नन्दलाल जी के स्मृतिदिवस के उपलक्ष्य में प्रातःकाल ता० १५ से १७ दिसम्बर तक सामवेद का महान यज्ञ महात्मा जी के ब्रह्मत्व में सम्पन्न होता था तथा रात को प० मेलाराम जी रेडियो सिंगर के मधुर भजनों के बाद ठीक साढ़े आठ बजे से साढ़े नौ बजे तक पूज्य महात्मा जी का बड़ा मीठा, रसीला, जीवन निर्मित करने वाला आध्यात्मिक उपदेश होता था। सारे मन्त्र मुग्ध हो जाते थे। पाठकों को यह स्वादु प्रसाद क्रमशः अगले अंक से तथा समारोह का समाचार भी दिया जायगा।

वेदों का पढ़ना पढ़ाना
सुनना सुनाना
आर्यों का
परम धर्म है

आर्यसमाज के उपकारी कार्य

राष्ट्रभाषा हिन्दी का प्रचार

(ले०—श्री मित्रसेन जी आर्य एम० ए० साहित्याचार्य)

****

सौभाग्य से आर्य भाषा (हिन्दी) आज राष्ट्रभाषा के पद पर सुशोभित है। इसका प्रचार देश विदेशों में हो गया है जिस से उसे बहुत सम्मान प्राप्त हुआ। इस की उन्नति के लिये जिन संस्थाओं ने कार्य किया उन में आर्य समाज का नाम प्रमुख है।

भारत वर्ष के धार्मिक उपदेशकों ने अपने उपदेश जनभाषा में देना आवश्यक समझा। भविष्य द्रष्टा ऋषि ने गुजराती होते हुये, संस्कृत का अद्वितीय पण्डित होते हुये भी लुप्त प्राय वैदिक धर्म का पुनरुत्थान करने के लिये हिन्दी को ही अपनाया। यह उस समय की बात है जब इसे पढ़ने पढ़ाने के लिये अयोग्य समझी जाती थी। संयुक्त प्रान्त शिक्षा विभाग के अध्यक्ष एस. एस. हैवेल ने कहा था 'यह अधिक अच्छा होता यदि हिन्दू बच्चों को उर्दू सिखाई जाती, न कि एक ऐसी बोली में विचार प्रकट करने का अभ्यास कराया जाता जिसे अन्त में एक दिन उर्दू के सामने सर झुकाना पड़ेगा।'

ऐसे भयंकर समय में ऋषि ने आर्य समाज के द्वारा हिन्दी का प्रचार किया। और प्रत्येक आर्य के लिये हिन्दी जानना अनिवार्य कहा। (आर्य समाज के उपनियमों में एक इस आशय का भी उपनियम है।) उन्होंने अपने सभी ग्रन्थ हिन्दी ही में लिखे हिन्दी के प्रचार में आर्यसमाज के योगदान को देखते हुए श्री रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा 'संयुक्त प्रान्त के पश्चिमी जिले और पंजाब में आर्यसमाज के प्रभाव से हिन्दी गद्य का प्रचार बड़ी तेजी से हुआ।' 'आर्य समाचार' और 'भारत सुदशा प्रवर्तक' नामक दो समाचार ऋषि के उत्साह देने पर निकलने प्रारम्भ हो गए थे।

उस समय जबकि प्रचार के आधुनिक साधन विद्यमान न थे, ऋषि ने पैदल घूम-घूम कर इसी भाषा में प्रचार किया वे इसे (जब राष्ट्र भाषा का नाम न था) आर्य भाषा कहते थे। एक बार एक पंजाबी भक्त ने हिन्दी न समझने की कठिनाई बताते हुए स्वामी जी के ग्रंथों का उर्दू अनुवाद करने की आज्ञा मांगी तब ऋषि ने कहा, भाई मेरी आंखें तो उस समय को देखने के लिये तरस रही हैं जब काश्मीर से कन्या कुमारी तक सब भारतीय एक भाषा को समझने और बोलने लग जायगे जिन्हें सचमुच मेरे भावों को जानने का इच्छा होगी वे इस आर्य भाषा को सीखना अपना कर्तव्य समझेंगे अनुवाद तो विदेशियों के लिये हुआ करता है।'

ऋषि दयानन्द के इसी आदर्श का आर्य समाज ने अनुकरण किया है। आर्य समाज के सभी संगठन हिन्दी प्रचार के लिए इस प्रकार बांटे जा सकते हैं—

१. आर्य समाज—सारे भारत वर्ष में आज लगभग २००० से अधिक आर्य समाजें हैं इनके सदस्यों की संख्या लगभग ३ करोड़ है। प्रत्येक समाज वार्षिकोत्सव, पुस्तकालय, वाचनालय, रात्रिपाठशालाओं आदि के रूप में हिन्दी का प्रचार करता है।

२. प्रतिनिधि सभा में—सभी प्रान्तों की पृथक्-पृथक् प्रतिनिधि सभायें हैं। जो कालेजों, गुरुकुलों, का संचालन करती हैं। इनमें हिन्दी अनिवार्य है, समस्त कार्य हिन्दी में होता है। इनके अनेकों समाचार-पत्र हिन्दी में निकलते हैं।

३. शिक्षा संस्थायें—शिक्षा क्षेत्र में क्रान्ति नामक लेख दे चुके हैं।

४. आर्य कुमार सभायें—भारत वर्ष में लगभग ४०० आर्य कुमार सभायें कार्य कर रही हैं तथा भारतवर्षीय आर्य कुमार, परिषद् की परीक्षाएं भी संचालित हैं। जिनका माध्यम हिन्दी है। कुमार सभाओं द्वारा कुमारों में हिन्दी प्रचार किया जाता है।

५. महिला समाज और अनाथालय—इनमें भी इन्हीं प्रकारों से हिन्दी प्रचार होता है।

(क्रमशः)

महात्मा जी का प्रोग्राम

पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज इस ८१ वर्ष की आयु में भी धर्मप्रचार के लिए कितना समय देते हैं। आप के व्यस्त प्रोग्राम से इस का परिचय मिल जाता है। आप का प्रोग्राम यह है :—

१८ से २२ दिसम्बर	जवाहरनगर नई देहली
२४ से २७ ,,	धनबाद (बिहार)
२८ दिस. से ३ जनवरी १९६५ तक	आर्यसमाज कार्नवालिस स्ट्रीट कलकत्ता
८ जनवरी से २० तक	सूरत (सौराष्ट्र)
२१ से २८ जनवरी	बम्बई
३० जनवरी से १३ फर्वरी	मद्रास
१५ फर्वरी से २६ फर्वरी	बम्बई
२८ फर्वरी से ३ मार्च	टंकारा

भारत सुरक्षा नियम का शिकार

(पृष्ठ ४ का शेष)

आर्य समाज के उस तपापूत को सरकार ने भारत सुरक्षा नियम अनुसार स्थानबद्ध किया है जो भारत की रक्षा व स्वतन्त्रता के लिये सवस्व फूंक चुका है। उसके खीने के पसीने से नहीं अपितु अपने रक्त से स्वराज्य संग्राम में राष्ट्र के उपवन को सींचा है। मराठवाड़ा के स्कूलों व कालेजों में आज भी घूम घूम कर वह देश सेवा व सदाचार की भावनायें युवकों में भरता रहता है। युवक श्रद्धा से उनके चारों ओर उपदेश अमृत का पान करने के लिए एकत्रित हो जाते हैं।

ऋषि दयानन्द के ऐसे बांके वीरों को दमनचक्र से दबाया न जा सकेगा। डा० डा० आर० दास जी के विषय में इतना ही पर्याप्त है कि वह आर्य समाज के वयोवृद्ध नेता हैं। आजकल प्रचार में जुटे रहते हैं।

डरेंगे न पिस्तौल के वार से हम।
न पीछे हटें धर्म प्रचार से हम॥
मिटे न मिटाने से हस्ती हमारी।
न होगी दबाने से पस्ती हमारी॥

(पृष्ठ ३ का शेष)

घुमन्तं धीमहि

उस प्रकाश का ध्यान करो। उस चमकने वाली, जगमगाती ज्योति का। इसलिए दोनों में से किसी का ध्यान कीजिए, इस में अन्तर नहीं पड़ता। ओम् का ध्यान करने वाला भी अन्त में देखता है कि उस अक्षर का स्थान एक ज्योति ले रही है। धीरे २ बढ़ती जाती है।

विचार तरंग नं० (१)

ले०श्रीराम मूर्ति जी कालिया, एम.ए. मालवीयनगर, नई दिल्ली

सर्वव्यापक भगवान का संसार के जीवों पर बहुत अनुग्रह है। सर्वसाधनों के काम. दुर्लभ मानव तन की देन उसकी कृपा का ही फल है। भगवान कारण रहित दयाल हैं। सूर्य, चन्द्रमा, जल एवं वायु जैसे दुर्लभ और प्राणदायक वस्तुओं के निर्माण के लिये कभी किसी ने प्रार्थना की हो ऐसा सुनने में आया नहीं। ये सब तो उसकी अहैतुकी कृपा के फलस्वरूप ही हैं। इतनी कृपाओं के होने पर भी कुछ और मांगने के लिये जीव नितान्त तत्पर रहता है। प्रार्थना वृत्ति से मन सदा ओत-प्रोत रहता है। प्रार्थनाओं की यह वृत्ति नाना प्रकार के पूजनों का स्वरूप धारण कर लेती है। इन्हीं प्रार्थनाओं से ईश्वर को रिझा लेने का संकल्प कर जीव संसार में परिवर्तन लाने की सोचता है। कभी २ तो प्रार्थनाओं के नाना विधान करता ही है यह जीवन की अन्तिम अवस्था को प्राप्त करता है।

प्रार्थनाओं पर संसार टिका है, ऐसी कई लोगों की मान्यता है। कविवर बच्चन का तो कहना है कि पंछियों के मनुहार के फलस्वरूप ही सूर्य किरणें उगती हैं। क्षितिज की उसांसें भरने से ही चन्द्रमा की किरणें मुसकराती हैं और 'जब भीग नहा चुकता अम्बर, अपनी आंसु की धारा से, तब क्षण भर को चंचल चपला अपना मुखड़ा दिखलाती है।' इस विचार से कई लोग सहमत होंगे। हां, उनका अपना अधिकार है।

प्रार्थनाओं से कृतज्ञता के भावों को प्रदर्शित करना सराहनीय है और ईश्वर के प्रति ऐसा करना हमारा धर्म है। इन प्रार्थनाओं से हमारा मन सन्तुष्ट होता है और जीवन में गति आती है। यह गति का आना ही जीवन है। मनुष्य के जीवन में परिवर्तन आता है। प्रार्थनाओं में शक्ति है कि वह प्रार्थी के जीवन में परिवर्तन ला सके किन्तु जो परिवर्तन प्रार्थी संसार में लाना चाहता है वह प्रार्थना नहीं अपितु उसे स्वयं लाना होगा। महान पुरुषों को उनके अपने पुरुषार्थों के बल पर सफलता मिलती है, साधनों के बल पर नहीं। 'क्रिया सिद्धिः सत्वे भवति महतां नोपकरणे' ठीक हो तो कहा है।

> श्री राममूर्ति जी कालिया हृदय के भावुक हैं। हृदय के अन्तस्थल से निकले हुए विचार मानसिक जीवन को ऊंचा ले जाने वाले हैं हृदय पटल पर गहरा व स्थाई प्रभाव डालते हैं। वर्तमान भोगवाद के युग में प्रकाश स्तम्भ का काम करने वाले हैं यह विचारधारा आपकी सेवामें प्रति मास दो बार आया करेगी। अवश्य पढ़ें लाभ उठाएं। —व्यवस्थापक

अमूल्य वचन

जिस प्रकार फल होने पर वृक्ष नम्र हो जाते हैं, नवीन जल भरने से मेघ झुक जाता है वैसे ही सत् पुरुष भी सम्पत्ति पाकर उद्धत नहीं होते अपितु अधिक नम्र हो जाते हैं। सारांश यह कि परोपकारी जीवों का यह स्वभाव ही होता है।

आर्य समाजों के जल्सों का समारोह

जीवन जागृति का जीता जागता दृश्य

सभा के प्रधान जी की सेवा में थैलियां भेंट

आर्य समाज साऊथ Extention नई देहली में मान्य म. किशन चन्द जी मन्त्री समाज बड़े ही उत्साही, ऋषिभक्त एवं समाज के अनथक प्रेमी हैं। उन के तथा श्री दीवान चन्द जी प्रधान, श्री सयाल जी, श्री खैरायती लाल जी, गोयल जी आदि सारे सज्जनों के उत्साह से पहला वार्षिकोत्सव धूम धाम से मनाया गया। शान दार कवि-दरबार तथा स्त्री समाज का जल्सा भी हुआ। जल्से में सभा के प्रधान मान्य प्रिंसिपल रलाराम जी एम.ए. त्रिलोकचन्द शास्त्री, प० राजपाल मदनमोहन प्रसिद्ध चिमटा मंडली सभा से पधारे थे। वेदप्रचार सभामें सभा प्रधान प्रिंसीपल रलाराम जी एम. ए. की सेवा में सम्मान-पूर्वक थैली भेंट की गई। प्रधान जी के दो भाषण हुए।

आर्यसमाज गुरदासपुर

मान्य श्री बलदेवसिंहजी भण्डारी एडवोकेट; स्वामी सोमानन्द जी महाराज, प्रिंसिपल मुल्कराज जी डी. ए. वी. स्कूल, ला० मोतीराम जी एडवोकेट, श्रीयुत महता जी श्री मा० रामसरनजी मन्त्री समाज, सारा स्कूल तथा गलहाईस्कूल आदि के पुरुषार्थ से इस वार भी समाज का जल्सा बड़े समारोह से सम्पन्न हो गया। सभा के वेद प्रचार अधिष्ठाता पं० खुशीराम जी शर्मा की अपूर्व मीठी कथा व ठा० दुर्गासिंहजी तूफान व पं० राजपाल मदनमोहन जी प्रसिद्ध चिमटा-मण्डली के भजन होते रहे। जल्से में पूज्य स्वा० सर्वानन्द जी दीनानगर, पं० त्रिलोकचन्द्र शास्त्री, ओजस्वी वक्ता प्रो. वेदीराम जी शर्मा एम. ए, डी. ए. वी. कालेज जालन्धर, पं० चन्द्रसेन जी आर्य हितैषी आदि पधारे। स्कूल के बच्चों व मान्य अध्यापकों का बड़ा उत्साह था नगर की दूसरी समाज के सज्जन भी पधारे। प्रबन्ध बड़ा ही सुन्दर था। मार्ग व्यय के अतिरिक्त १६५ रु. सभा को भेंट किए गए। मा. रामसरन जी मन्त्री, श्री भण्डारी जी, मान्य प्रिंसिपल मुल्कराज जी, मा. देसराज जी, श्री कोल्ही जी, बहिन शान्ति जी, मान्य वृद्ध महारथी—सब को बधाई हो—

आर्यसमाज अम्बाला शहर

आर्यसमाज अम्बाला शहर का वार्षिकोत्सव धूमधाम से सम्पन्न हो गया। कथा में स्वा. सत्यानन्द तथा पं. हजारी लाल जी काम करते रहे जल्से में यति विद्योत्तमा जी, प्रिंसिपल रलाराम जी M. A., M. L. A. प्रधान आर्य प्रादेशिक सभा, पं. त्रिलोक चन्द शास्त्री, पं. राजपाल मदनमोहन चिमटा-मंडली, पं. चन्द्रसेन जी, पं. अमर सिंह जी अध्यक्ष अम्बाला मंडल की मंडली, व सत्यप्रिय जी आदि पधारे जलूस भी बड़ा भारी था। अपने सारे स्कूल कालेज व सारी समाजें शामिल थीं। ऋषि लंगर की भी खूबधूम थी। समाज के सारे सज्जन बहिनों में खूब उत्साह था। १५०) रु० वेदप्रचार सभा में सभा के प्रधान प्रिंसिपल रलाराम जी एम.ए. की सेवा में भेंट किए गए।

आर्य स्त्री समाज अम्बाला

स्त्री आयसमाज अम्बाला शहर ने भी अपना उत्सव बड़े उत्साह

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

आपको विदित ही है कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभान्तर्गत विद्यार्य सभा, आर्य सिद्धान्त विशारद, आर्य सिद्धांत भूषण आर्य सिद्धान्त रत्न ये तीन परीक्षाएं गत कई वर्ष से चला रही है जिन में प्रतिवर्ष सैंकड़ों परीक्षार्थी सम्मिलित होते हैं। अब तक सहस्रों विद्यार्थी इन परीक्षाओं को [illegible] कर चुके हैं। इन परीक्षाओं को अधिकाधिक लोक प्रिय बनाने की आवश्यकता है और इस कार्य में आपका सहयोग अपेक्षित है। आप अपने समाजों को प्रेरणा करें कि वे इन परीक्षाओं में अधिक से अधिक छात्र छात्राओं को बिठाने का आयोजन करें।

भवदीय
रामगोपाल
सभा मन्त्री

ऋषि निर्वाण दिवस

आर्यसमाज जोगेन्द्रनगर में दिनांक ३-११-६४ को प्रातः साढ़े दस बजे तक 'यज्ञ हुआ। साढ़े दस से १२॥ बजे तक ऋषि निर्वाण-पर्व बड़ी धूमधाम से श्री सत्यानन्द जी हरिद्वार की अध्यक्षता में मनाया गया। जिसमें अनेक विद्वानों ने अपने-अपने विचार ऋषिदयानन्द सरस्वती तथा भारतीय संस्कृति के महत्व पर प्रकट किये। अन्त में श्री स्वामी जी ने अध्यक्ष पद से ऋषि दयानन्द [illegible] पर भाषण दिया। अन्त में मन्त्री समाज ने सब आगंतुकों का धन्यवाद किया।

—मुरारीलाल मन्त्री आर्यसमाज

मेला कपाल मोचन पर वेद प्रचार की धूम

०अमरसिंहजी अध्यक्ष अम्बाला मंडल के द्वारा सम्पन्न

यह मेला जगाधरी तहसील बिलासपुर कस्बा के पास प्रत्येक वर्ष कार्तिक पूर्णिमा को बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। इस अवसर पर समस्त भारत के विभिन्न प्रान्तों से स्त्री व पुरुष धार्मिक भावनायें लेकर वहां एकत्र होते हैं। इस बात को ध्यान में रखते हुए कि इस प्रकार से बड़े दूर २ प्रांतों तक यह ऋषि दयानन्द का पावन सन्देश पहुंच जाता है। सभा इस मेले को अत्यन्त महत्व देती है। पूर्व वर्षों की भांति इस वर्ष भी सभा की ओर से १४ नवम्बर १९६४ से १९-११-६४ तक विशाल वेद प्रचार कैम्प लगा कर निरन्तर ६ दिन तक प्रातः वेद का सन्देश जनता को सुनाया गया।

२.—हवन यज्ञ उपदेश भजनों आदि का सुन्दर प्रबंध था इसके इलावा ऋषि लंगर का भी प्रबंध था। जिसमें हजारों स्त्री पुरुष प्रतिदिन भोजन पाते थे। आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के उपदेशक व भजनीकों ने पूर्ण सहयोग दिया।

व्यवस्थापक

आर्य विद्या सभा, चित्रगुप्त मार्ग नई दिल्ली

आगामी तीन वर्षीय (१९६४-६७ ई०) सदस्यता के लिए आर्य माध्यम शिक्षा संस्थाओं को सभा के विधानानुसार प्रतिनिधि भेजने का अधिकार।

आर्य विद्या सभा, चित्रगुप्त मार्ग, नई दिल्ली से सम्बन्धित निम्नलिखित माध्यम शिक्षा-संस्थाओं से इस विज्ञप्ति द्वारा प्रार्थना की जाती है कि वह उनके नाम के सम्मुख दी हुई संख्या के अनुसार अपनी २ स्थानीय प्रबन्धक कमेटी व स्टाफ के सदस्यों में से सभा के विधान धारा तीन के अनुसार अपने प्रतिनिधियों के नाम सभा की आगामी तीन वर्षीय (१९६४-६७ ई०) सदस्यता के लिये शीघ्र ही भेजने की कृपा करें। इस सम्बन्ध में प्रधानाध्यापकों को डाक द्वारा पार पत्र भेज दिये गये हैं।

इन प्रतिनिधियों के अतिरिक्त सभा के विधानानुसार समस्त सम्बन्धित स्कूलों के प्रधानाध्यापक व कन्या स्कूलों की प्रधानाध्यापिकायें अथवा प्रबन्धक महोदय भी सभा के सदस्य होंगे।

अन्य विशेष सूचना के लिये सभा के कार्यालय से पत्र-व्यवहार करें।

नोट—संस्थाओं के नाम व उनकी संख्या २७-१२-६४ के अंक में पढ़ें।

देवराज महाजन
एजुकेशनल एडवाइजर

शोक प्रस्ताव

आर्य समाज खन्डवा के भूतपूर्व कोषाध्यक्ष वा [illegible] कार्यकर्त्ता सेठ राकनिवास जी अग्रवाल का दि. ४-१२-६४ को अचानक देहावसान हो गया। आर्य समाज खन्डवा का एक बहुत बड़ा सहयोगी तथा कर्मठ कार्यकर्त्ता इस संसार से उठ गया।

हम ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि वह दिवंगत आत्मा को शान्ति एवं उनके दुखी परिवार को शोक सहन करने की शक्ति प्रदान करें।

हम सब आर्यगण अपनी श्रद्धांजली अर्पित करते हैं।

कैलाशचन्द्र पालीवाल
आर्य समाज, खन्डवा

ऋषि बोधोत्सव (शिवरात्री) महापर्व

(१ मार्च १९६५)

महर्षि दयानन्द जी सरस्वती की जन्म-भूमि टंकारा को स्पेशल रेलगाड़ी देहली जंकशन से टंकारा (गुजरात)

सभी आर्य भाई-बहिनों को यह जानकर अत्यन्त हर्ष होगा कि इस वर्ष महर्षि दयानन्दजी की जन्म-भूमि टंकारा के लिए देहली से स्पेशल रेलगाड़ी की व्यवस्था की गई है। यह यात्रा ट्रेन-टंकारा समिति के तत्वावधान में २६-२-६५ ई० की रात्रि को देहली से चलकर २८-२-६५ को प्रातः टंकारा पहुंच जाएगी। इस कार्यक्रम में आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली राज्य के माननीय पदाधिकारियों का पूर्ण सहयोग रहेगा।

देहली से टंकारा का एक ओर का मार्ग व्यय २६ रु० होगा।

टंकारा से अन्य यात्रा सोमनाथ आदि के लिए किराया बस द्वारा ४५ रुपया होगा।

अब तक ५०० ऋषि भक्तों ने टंकारा जाने के लिए अपना रेल किराया भेज कर सीटें बुक करा ली हैं अन्य सज्जन जो जाने के इच्छुक हों वे भी किराया भेजने की शीघ्रता करें और अपनी सीटें बुक करा लें। स्पेशल ट्रेन के प्रत्येक डिब्बे में [illegible] पूरा प्रबंध होगा।

धन निम्न पते पर भेजें। [illegible] टंकारा सहायक समिति दिल्ली कार्यालय आर्यसमाज करोलबाग देहली।

—विशम्भरदास मन्त्री
टंकारा सहायक समिति दिल्ली

आर्यसमाजों के जल्सों...

(पृष्ठ ७ का शेष)

से किया। प्रधाना माता राम प्यारी जी, बहिन पुष्पावती जी, सत्यवन्ती, सावित्री जी, शारदा जी कौशल्या जी आदि के परिश्रम से बड़ा सुन्दर काम हो गया। चण्डीगढ़ से बहिन सत्या जी पधारी। स्त्री समाज की माताओं बहिनों का जल्सा देख कर मन बड़ा प्रसन्न होता था। कार्यक्रम रोचक था।

मुद्रक व प्रकाशक श्री खुशोधराज जी आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा [illegible] निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

टलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधिसभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे — वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २४ अंक ५१) १३ पौष २०२१ रविवार—दयानन्दाब्द १४०— २७ दिसम्बर १९६४ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

सखित्वमावृणीमहे

परमेश्वर ! हम सब तेरे प्यारे पुत्र पुत्रियां बन कर आप से आप के इस सखित्वम्-परम-सखा परममित्र बनने के प्रसाद का आवृणीमहे-चाहते हैं। आप हमारे परममित्र बन जायें तो हमें और क्या चाहिए।

न: सोम मृडय

प्रभुदेव ! आप सोम हैं-ताप संताप को दूर करने वाले हो। सारे संकटों को काटने वाले आप ही हैं। सुख शान्ति के दाता हो। कृपा करते हुए न:—हमें मृडय—सुखी बना दो। सदा आप की कृपा से सुख मिले।

न: पुनान आभर

परमदेव ! आप सदा पवित्र हैं, शुद्ध हैं, पुनान:—निर्मल हैं। हम भी तो आप के बच्चे हैं। आप की कृपा के बिना हमें पवित्र कौन बना सकता है। शुद्ध कौन कर सकता है पवित्र कर दीजिए—

सा म वे द से

वे दा मृ त

ओ३म् इमं मे वरुण श्रुधि हवमद्या च मृडय ।
त्वामवस्युराच के स्वाहा ॥ इदं वरुणाय इदन्न मम ॥

ऋक् मंडल १ सूक्त २५ मं. १९

अर्थ:—हे देव ! (इमम्) इस (मे) मेरे (वरुण) वरण करने के योग्य हे वरुण रूप परमेश ! (श्रुधि) सुनें (हवम्) मेरे स्तवन एवं भावना भरी पुकार को (अद्य) आज इस समय (च) और मुझ को (मृडय) सुखी बना देवे। मैं आपका आराधक (त्वाम्) तुझ को (अवस्यु) रक्षण प्राप्त करने की इच्छा वाला मैं आपका (आचक) स्तवन भजन करता हूं। (स्वाहा) यह मेरा वचन सत्य होवे। यह सब वरुण प्रभु के लिए है, मेरे लिए नहीं है।

भाव :—हे वरुण देव। आप ही तो जीवन में वरण, ग्रहण और स्वीकार करने के योग्य हैं। आपके सिवाय और किसे व क्यों वरुण कहा जाए ? मेरी पुकार सुनने वाले ! मैं कब से पुकार कर रहा हूं, कितनी देर से टेर सुना रहा हूं। कितने समय से आपकी आराधना में लगा हुआ हूं। मेरी अब तो टेर पुकार सुन लो। आज ही हे पिता जी मेरी टेर पर ध्यान देकर मुझे सुखी बना दीजिए। मेरे जीवन की तमाम विपत्तियां भाग जाएं, संकट टल जाएं। आपके बिना दुःख नाशक एवं सुखदायक और दूसरा कौन हो सकता है। मैं आपका ही तो हूं, अमृतपुत्र हूं। आप पिता और माता हैं। मैं तो सदा आपके द्वारा रक्षण चाहता हूं। आप रक्षक हैं। मैं रक्षित हूं। आपकी स्तुति में लगा हूं। प्रभो ! कृपा कर दो नाथ ! मेरी हर ओर से रक्षा कर सुख देवें—सं.

ऋषि दर्शन

निर्बलानां रक्षकम्

यह क्षत्रिय राजा का राज्य कर्म तथा शासन का जो धर्म है वह निर्बलों की रक्षा करने वाला होता है राजा को चाहिए कि निबलों की पूरी २ रक्षा करता रहे।

उत्तमं सुखकारकम्

यह सारे देश की प्रजा के जीवन के लिए उत्तम सुख का देने वाला होता है। नियम का जिस में पालन होता है ऐसा राष्ट्र सदा सुख से मालामाल होता जाता है वीर राजा सदा सुखदायक होता है।

क्षत्रं सर्वस्मात्कर्मणो बृहत्

क्षत्रिय का धर्म, राज्य शासन सारे कार्मों में बड़ा है। उत्तम वीर राजा के राज्य में सारे धर्म के काम जारी होते हैं। प्रजा सुख शान्ति से निवास किया करती है। इसलिए उत्तम कर्म है।

भा ष्य भू मि का से

अधिष्ठाता—श्री संतोषराज जी — सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

आर्यसमाज के प्रसिद्ध नेता स्वर्गीय मास्टर नन्दलाल जी जालन्धर के जन्म-दिवस पर उनके मान्य सुपुत्रों श्रीयुत धर्मपाल जी, ला. इन्द्रसेन जी पूर्व कार्यकर्ता प्रधान आर्यप्रादेशिक सभा, श्री सत्यपाल जी, श्री प्रेमपाल जी सारे परिवार ने तारीख १५ दिसम्बर से १७ दिसम्बर ६४ को अपने परिवार में सामवेद का महायज्ञ का समारोह पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज के ब्रह्मत्व में रखा। रात को कथा में महात्मा जी ने जो मधुर प्रवचन दिया। वह जगत् के प्रेमी पाठकों के लिए दिया जा रहा है। लाभ उठावें—सं.

सामवेद उपासना का वेद है। इसमें उपासना का बड़ा ही सुन्दर सन्देश मिलता है। यह भक्ति प्रधान वेद माना गया है। अध्यात्मवाद का भण्डार है। भगवान् को कवि कहकर पुकारा जाता है। वेद भी काव्य है, परमात्मा की कविता तो कमाल की है। वेद में कितना उत्तम उपदेश दिया है।

दूतं वो विश्ववेदसम्

जीवन में जो कुछ भी मिलता है। वह मानव यही समझे कि सब मेरे कल्याण के लिए है। वह यह कभी सुन्दर सुन्दराणाम् होते हैं तो कभी-कभी भीषणं भीषणानाम बन जाते हैं। हमें कभी सुख मिलता है और कभी दुःख। यदि मनुष्य दुःख में घबरा जाए और परमेश्वर को गालियां देने लगे तो यह भारी भूल है। मैंने भगवान को गालियां देने वाले लोग देखे हैं। थोड़ी-सी आपत्ति आई नहीं कि परमात्मा को बुरा भला कहना शुरू कर देते हैं। यह तो भगवान को मानना नहीं। जितनी विपत्तियां, कष्ट क्लेश आते हैं। ये भी हमारे भले के लिए होते हैं। इन में ही मानव जीवन की परीक्षा होती है। यदि कष्टों में मानव घबरा जावे तो समझ लेना चाहिए कि प्रभु पर अटल विश्वास नहीं है। भगवान का पूर्ण विश्वासी बड़े से बड़े कष्ट में कभी नहीं घबराता। प्रभु के भक्त की यही सब से बड़ी पहिचान है कि दुःख विपत्तियों में भी एक रस रहता है। मैं अपने सम्बन्ध में कहता हूं कि प्रभु के अटल विश्वास ने सारे परिवार को राष्ट्र विभाजन के समय जलती अग्नि की ज्वाला से बचाया। सामने खड़ी मौत के मुख में नहीं जाने दिया। मैं अनुभव के आधार पर सच कहता हूं कि परमात्मा का अटल विश्वास बड़ी से बड़ी मुसीबत से भी पार कर देता है। हम जब घबरा जाते हैं तो इस में हमारा ही दोष है परमात्मा तो सदा हमारा रक्षक व सहारा है। हम ही उसे भुला देते हैं। घबराकर विपत्तयों में फंस जाते हैं। कष्ट क्लेश भी तो परमात्मा की कृपा से आता है। जिसने सहन कर लिया, वह परीक्षा में पास हो जाता है।

भगवान् पर अटल विश्वास रखो

(पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी का मधुर प्रवचन)

विश्व वेदसम्

भगवान् धन सम्पत्ति प्रदान करते हैं, पर प्रभु के प्यारे को कभी अभिमान नहीं होता। वह सब कुछ भगवान् का दान समझता है। उसे मद नहीं चढ़ता। एक कवि ने सुन्दर लिखा है। कनक कनक तें सौगुनी—स्वर्ण आदि में नशे से बहुत अधिक मादकता है। इसे पा कर मनुष्य पागल बन जाता है। मद में भर कर प्रभु को भूल बैठता है। वेद में धन या अन्न की निन्दा कहीं नहीं की गई। शास्त्रों में अन्नं बहु कुर्वीत—कहा गया है। अन्न अधिक प्राप्त करो। धन के बारे में तो वेद में त्याग पतयो रयीणाम् आदि कितने ही सुन्दर आदेश मिलते हैं। पर यह दौलत कही गई है। दो लातों वाली। एक लात तो आते समय मार कर मनुष्य को अकड़ा देती है तथा दूसरी लात मार कर उसे लज्जित कर के भाग जाती है। इस का आना भी बुरा है और जाना भी बुरा है। भगवान् देखता है कि मनुष्य के पास धन सम्पदा के आने पर अभिमान तो नहीं आ गया। मास्टर नन्दलाल जी को धन सम्पत्ति के होने पर भी रत्ती भर अभिमान न था। बड़े ही सरल व नम्र थे। प्रभु भक्तकी यह निशानी है कि सुख सम्पत्तियों में उसे मद नहीं चढ़ता। वह इसे प्रभु का महान् दान समझ कर और भी परमेश्वर का प्यारा बनता जाता है। आप तनिक विचार तो करें कि मनुष्य को अभिमान हो भी किस लिए। कौन सा ऐसा पदार्थ है जिस पर गर्व किया जा सकता है। धन भूमि, मकान आदि को आने दीजिए। यह अपना शरीर, जिस को बनाने सजाने के लिए इतना समय लगाया जाता है, यह भी तो सदा नहीं रहता, न इस की भरी जवानी सदा बनी रहती है। न यह अन्त समय किसी के साथ जाता है। चार दिन का यह यौवन, जीवन का वैभव है। इसे पाकर अभिमान करना कितनी मूर्खता है। कवि ने कहा है—दो दिन की जिन्दगी पै न इतना उछल के चल। दुनिया है चल चलाऊ कि रस्ता संभल के चल। मानव! किस पर मद करता है। बड़े-बड़े राजे महाराजे आये और चले गए। अपना २ चक्र चलाकर मौत की गोदी में सो गए। अभिमानी भी अपने साथ एक तिनका तक भी नहीं ले गए। फिर अभिमान किस बात पर, किस लिए? भगवान् देखता है कि मनुष्य सम्पत्ति पाकर नशे में तो नहीं गिर गया। इस लिए प्रभु पर अटल विश्वास रखने के लिए यह आवश्यक है कि अभिमान कभी न करो।

आर्य केन्द्रीय सभा करनाल

ईसाई पादरियों के हथकन्डों से सावधान

ईसायत के प्रचार के अनोखे तरीके पाखंड की हद।

करनाल में ईसाई पादरियों ने भोली-भाली हिन्दू जनता को अपने जाल में फंसाने के लिए पथ-भ्रष्ट रास्ता अपनाया है अपने एजंटों द्वारा यह प्रचार किया कि पादरी साहब प्रार्थना द्वारा हर प्रकार का रोग ठीक करते हैं संतान हीनों को सन्तान और नेत्र हीनों को नेत्र देते हैं हर प्रकार का शारीरिक रोग प्रार्थना से दूर करते हैं। आस-पास के हजारों नर-नारी गिरजा घर में एकत्र होते रहे और पादरी साहब बीमार और दुखियों की लाचारी का लाभ उठा कर उनमें बाईबल और ईसाइयत का प्रचार करते और दान का वास्ता देकर धन भी बटोरते रहे परन्तु आराम किसी दुखी प्राणी को न आया। आर्यसमाज के कार्यकर्ताओं ने खुला चेलेंज किया परन्तु कोई परवाह नहीं की। आर्यसमाज ने मुकाबले पर प्रचार करके जनता की रहनुमाई की। पादरियों के प्रभाव को कम किया। आर्यसमाज और भारत सरकार को भारी चेतावनी है। वह ईसाई पादरी विदेशी सरकारों के एजंट हैं जो ईसायत के प्रचार द्वारा भारत पर विदेशी शासन के स्वप्न ले रहे हैं।

मामचन्द आर्य मन्त्री
आर्य केन्द्रीयसभा करनाल

आर्य जगत्

वर्ष २४] रविवार २०२१, २७ दिसम्बर १९६४ [अंक ५१

उत्तर प्रदेश नेता बना

यह शुभ समाचार कितनी प्रसन्नता से सुना जाएगा कि उत्तर प्रदेश की सरकार ने यह घोषणा कर दी है कि इस आने वाले २६ जनवरी के गणतन्त्र के पवित्र दिवस से सरकार का सारा कार्य राष्ट्रभाषा हिन्दी में प्रारम्भ कर दिया जायगा। राष्ट्रभाषा के तथा भारतीय विधान के सारे प्रेमियों को इस समाचार से हर्ष क्यों न होगा? आज हम कह सकते हैं कि राष्ट्रभाषा को पूर्णरूप से सरकारी कामकाज में लागू करने में उत्तर प्रदेश सारे देश का नेता बना है। उत्तर प्रदेश यदि देखा जाये तो वैसे भी भारत का प्रमुख प्रांत ही है। हमारी ऐतिहासिक नदियां गङ्गा यमुना सरस्वती की त्रिवेणी की धाराएं भी यहां पर हैं। महाकवि सूर व तुलसी ने भी यहां पर ही अपना काव्य रस सारे देश को पिलाया। विशाल पवित्र नगरियां भी यहां पर हैं। भारतीय आकाश में चमकने वाले दिव्य सूर्य जीवन मर्यादा पुरुषोत्तम राम तथा गोपाल कृष्ण भी तो इसी धरती पर हुए। गुरु विरजानन्द सरीखे देवता ने अपने प्यारे शिष्य देव दयानन्द को वेदप्रचार में जीवन दीक्षा भी मथुरा में दी थी। राष्ट्रकवि मैथिली, निराला, पन्त, महादेवी वर्मा तथा प्रसाद भी यहीं की विभूति हैं। भारत के पूर्व तथा वर्तमान प्रधानमन्त्री भी इसी पवित्र भूमि की देन हैं। स्वराज्य में इस भूमिका का बड़ा भारी हाथ है। यह प्रांत नेता बना रहा है। सन ५७ का स्वराज्य आन्दोलन भी यहीं से आरम्भ हुआ था। सत्तरह वर्षों के बाद राष्ट्रभाषा हिन्दी को सरकारी काम काज में लागू करने में भी उत्तर प्रदेश ने सारे देश को Lead किया है। इस कर्तव्य पालन की आस्था में हम उत्तर प्रदेश की सरकार को हार्दिक बधाई देते हैं। इस से अन्य प्रान्तों को भी प्रेरणा मिलेगी तथा यह हीनभावना दूर होने की भावना बढ़ेगी कि अंगरेजी के बिना काम नहीं चलाया जा सकता।

आज सतरह वर्ष देश को विदेशी सत्ता से अलग हुए हो गए परन्तु राष्ट्रभाषा के साथ जो भी खिलवाड़ किया जा रहा है। उस पर किसे दुःख नहीं होता। एक बच्चा १६ वर्ष के बाद एम० ए० कर लेता है। किन्तु कितना दुःख है कि सतरह वर्ष के बाद भी आज भारतीय नेता कहते फिरते हैं कि अंगरेजी के बिना काम नहीं चल सकता। कितनी बड़ी मानसिक दासता है। राष्ट्रभाषा का कितना अपमान है। हम उत्तर प्रदेश के इस उचित पग का स्वागत करते हुए अन्य प्रान्तों से भी राष्ट्रभाषा के मान के नाते उन से भी अपने२ प्रान्तों में इसे लागू करने की आशा करते हैं। पंजाब की जनता से कहेंगे कि अपना कामकाज हिन्दी में आरम्भ करें।

—त्रिलोकचन्द्र

यह अनुपम दृश्य

गत दिनों आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब के कार्यकर्ता प्रधान श्री ला. इन्द्रसेन जी के परिवार में जो १५ दिसम्बर से १७ दिसम्बर तक जो सामवेद का महान यज्ञ तथा कथा सम्पन्न हुआ। वह दृश्य अनूठा ही था। आर्यजगत् के परम सन्त तपस्वी महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज ने अपने अत्यन्त व्यस्त समय से समय निकालकर इस यज्ञ का ब्रह्मा बनना स्वीकार किया। प्रातःकाल यज्ञ चलता तथा रात को पूज्य महात्मा जी का मधुर स्वादु एवम् अध्यात्मवाद भरा प्रवचन चलता महात्मा जी के जीवन व वाणी में सचमुच भारी आकर्षण तथा जादू है। दोनों समय कितनी उपस्थिति, नर-नारियों की श्रद्धा तथा परिवार में ला. धर्मपाल जी, ला. इन्द्रसेन जी, ला. सत्यपाल जी प्रेमपाल जी सारे भ्राताओं में सात्विक भावना से यज्ञादि के इस कार्यक्रम में कितनी श्रद्धा थी—रात की कथा में कितनी मस्ती होती थी—यह दृश्य भूलेगा नहीं। सनातनधर्मी तथा सिख सज्जन भी प्रेम से सबसे पहले पधारते थे। सच है कि जहां महात्मा आनन्द स्वामीजी आजाएं वहां का क्या-क्या आनन्द विभोर हो जाता है। तीन दिन अमृतप्रवाह ही चलता रहा। जो देखा भूलेगा नहीं और जो सुना याद रहेगा। हम श्री ला. इन्द्रसेन जी के सारे परिवार को बहुत-बहुत बधाई देते हैं।

प्रोफेसर शरर जी

प्रोफेसर उत्तम चन्द जी शरर एम. ए. आर्य कालेज पानीपत्त आर्य समाज के चमकते सितारे हैं। युवकों के संगठन में भारी काम कर रहे हैं। सुन्दर लेखक व ओजस्वी वक्ता हैं। गत दिनों आप को एक किसी भाषण के आधार पर पकड़ लिया गया। अभियोग चल रहा है जमानत पर रिहा हैं। चूंकि मुकद्दमा शुरु है इसलिए इस पर तो टिप्पणी नहीं करना चाहते। हां—आर्य समाज से बलपूर्वक कहना चाहते हैं कि उन के केस पर पूर्णरूप से सहयोग देवे। ताकि ऐसे योग्य सज्जन उत्साह पूर्ण हो कर अपने अभियोग की हर प्रकार की तय्यारी कर सकें। कोई न्यूनता नहीं रहनी चाहिए।

शोक समाचार

होशियार पुर डी. ए. वी. कालेज कमेटी के प्रधान श्री चौधरी बलवीर सिंह जी के पिता जी का तथा अभी २ उनकी माता जी का निधन का दुःखद समाचार सुन कर हार्दिक दुःख हुआ। एकदम दोनों आघात हुए। चौधरी जी के साथ इस महान् दुःख में आर्य जगत् बहुत दुःखी है। प्रभु से दिवंगत आत्माओं की शान्ति के लिए प्रार्थना करता है। लेखराम नगर कादियां के तपस्वी योग्य सच्चे ब्राह्मण पं गंगाराम जी शर्मा की मान्या धर्म पत्नी के स्वर्गवास के दुःखद समाचार से वज्रपात ही हुआ। स्वर्गीया देवी जी कितनी सात्विक, प्रभुनिष्ठ, समाज की अनथक काम करने वाली थीं। उनके बिना समाज सूना हो गया है। श्री पण्डित जी को नहीं सारे समाज को भारी धक्का लगा है। उन पर वज्रपात में हार्दिक समवेदना है प्रभु पण्डित जी को इस वज्रपात पर धैर्य प्रदान करें। देवी जी की आत्मा को शान्ति देवें।

आल इंडिया दयानन्द

साल्वेशन मिशन होशियारपुर

वर्तमान महंगाई के कारण अपने कर्मचारियों को जिनका वेतन महंगाई सहित सौ रुपया या इससे कम है, उन्हें १-११-१९६४ से लेकर ३१-३-१९६५ तक पांच रुपए मासिक अधिक देना स्वीकार किया है।

आपका शुभचिन्तक,
रामदास
प्रधान मिशन।

स पर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरं शुद्धमपापविद्धम् । कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः ॥

यजु० ४०-८ इस का अर्थ परमात्मा के स्वरूप को प्रतिपादित करने वाला है। जैसे—

वह (ईश्वर) सर्वव्यापक जगदुत्पादक शरीर तथा शारीरिक विकारों से रहित और नाड़ी और नस के बन्धनों से भी रहित शुद्ध, सर्वज्ञ, अन्तर्यामी, सनातन, स्वयं सिद्ध अपनी सनातन प्रजा के लिये सनातन विद्या का बोध कराता और कर्म फल का विधान करता है वह सब जगह परिपूर्ण है। यह ईश्वर के स्वरूप का वर्णन जो वेद ने किया है कैसा यथार्थ और विज्ञान युक्त है। मगर अब जरा ईसाईयों के खुदा का स्वरूप भी देख लीजिये खुदा ने जब जगत बनाया तो ठीक देख लिया कि अच्छा है किन्तु अभी बहुत देर नहीं हुई थी तो खुदा (यहोवा) ने देखा कि मनुष्यों की बुराई पृथिवी पर बहुत बढ़ गई है...तो यहोवा पृथिवी पर मनुष्य के बनाने से पछताया और वह मन में अति खेदित हुआ। सो यहोवा ने सोचा, कि मैं मनुष्य को जिसे मैंने सिरजा है, पृथिवी के ऊपर से मिटा दूंगा, क्या मनुष्य, क्या पशु क्या रेंगने वाले जन्तु, क्या आकाश के पक्षी सब को मिटा दूंगा। क्यों कि मैं इनके बनाने से पछताता हूं। उत्पत्ति ६-५-६-७-८ देखिये कैसा विचित्र खुदा है। मनुष्योंने उसके विचार में कुछ गड़बड़ की उनके साथ चरिन्दों परिन्दों कीड़े मकौड़ों को मिटाने पर कटिबद्ध हो गये और मिटाने के पश्चात् प्रसन्न कैसे हुए यह भी जरा देखें:—

'खुदा ने पानी बरसाकर सब का विनाश कर दिया सिवाए नूह की नाव के। जब पानी सूखा तो नूह की नाव भी किनारे पर लगी तो नूह ने कुछ चरिन्दे और परिन्दे

ईश्वर का स्वरूप

(ले०—श्री पं० देव प्रकाश जी उज्जैन मध्य प्रदेश)

अग्नि में बली देकर खुदा की भेंट किये तो खुदा ने खशनूदी की बू सूंघो...और फिर कहा कि फिर सारे जानदारों को न मारूंगा। उत्पत्ति ८-२० से २२ तक कोई सभ्य और ठीक मस्तिष्क वाला मनुष्य यदि ऐसे स्थान से गुजरे जहां आग में मांस जलता हो, तो उसकी दुर्गन्ध से उसका दिमाग बेकरार हो जाएगा किन्तु ईसाई का खुदा है कि मांस जलने की बदबू से बड़ा आनन्दित होता है और फिर यहां तक ही नहीं अपितु प्रसन्न होकर यह प्रतिज्ञा की कि फिर सारे जानदारों को न मारूंगा उत्पत्ति ८-२० से २२ तक फिर कैसा निर्बल विचार रखने वाला खुदा-अभी तो वह कह रहा था सब प्राणधारियों को खतम कर दूंगा, और अब कह रहा है कि अब न मारूंगा।

क्षणे रुष्टः क्षणे तुष्टः रुष्टः तुष्टः क्षणे क्षणे।
अव्यवस्थित चित्तानां प्रसादोऽपि भयंकरः

ठीक यही हालत ईसाईयों के खुदा की है एक क्षण में रूठ जाता है एक क्षण में सन्तुष्ट हो जाता है ऐसा खुदा क्या खुदा हो सकता है जो चाहे तो सब बेगुनाहों को मौत के घाट उतार दे और जो चाहे तो पापियों को स्वर्ग में डाल दे ऐसे खुदा का क्या भरोसा न जाने और क्या उपद्रव कर दे।

ईसाई खुदा शरीरधारी है

याकूब अकेला रह गया तब कोई पुरुष आकर पौ फटने लौं उस से मल्ल युद्ध करता रहा... उसने कहा तेरा नाम अब याकूब न रहेगा इस्राएल रक्खा गया है, क्योंकि तू परमेश्वर से और मनुष्य से भी युद्ध करके प्रबल हुआ है... तब याकूब ने यह कह कर उस स्थान का नाम फनी एल रक्खा कि परमेश्वर को आमने सामने देखने पर भी मेरा प्राण बच गया है। उत्पत्ति ३२-२४ से ३२ तक।

ईसाइयों का खुदा भी खूब जिन्दा दिल है मन की मौज आई तो रात भर कुश्ती ही करने में जुट गये, परन्तु न जाने आज कल निराशता क्यों आ गई कि कुश्ती करना तो दूर रहा किसी के साथ हाथ मिलाने भी नहीं आता। हो सकता है कि ऐसा शरीर धारी खुदा कहीं विनाश के चक्कर में ही न आ गया हो।

खुदा खाता पीता भी है

जब खुदा शरीर धारी है तो खाना पीना भी उसके लिये आवश्यक है सो बाइबल के कर्त्ता ने इसको भी पूरा कर दिया, जैसे इब्राहीम मम्रे के बांजों के बीच कड़ी घाम के समय तम्बू के द्वार पर बैठा हुआ था, कि—

यहोवा ने उसे दर्शन दिया

(दो और साथ थे) 'तब दौड़ कर इब्राहीम उनके पास गया, और कहा', हे प्रभु यदि मुझ पर तेरी अनुग्रह की दृष्टि है तो अपने दास के पास से चला न जा, थोड़ा-सा जल लाया जाये और अपने पांव धोओ और वृक्ष के तले बैठ जाओ, और फिर मैं रोटी का एक टुकड़ा ले आऊं' और उस से तुम अपने-अपने जीव को ठंडा करो...उन्होंने कहा जैसा तू कहता है वैसा ही कर सो इब्राहीम ने तंबू में सारा के पास फुर्ती से आकर कहा तीन सआ मैदा फुर्ती से गन्ध, और फुलके बना, फिर...कोमल और अच्छा बछड़ा लेकर अपने सेवक को दिया और उसने फुर्ती से उसको पकाया और वह बछड़ा जो उसने पकाया था, लेकर उनके आगे धर दिया... और वे खाने लगे। तब उन्होंने इब्राहीम से उस की पत्नी सारा के विषय में पूछा कि कहां है तो उस ने कहा तंबू में है, उसने कहा मैं बसन्त ऋतु में फिर तेरे पास आऊंगा, और तेरी स्त्री सारा पुत्र जनेगी। यह सुन कर सारा हंसी...तब यहोवा ने इब्राहीम से कहा, सारा यह कह कर क्यों हंसी...क्या यहोवा के लिए कोई काम कठिन है। उत्पत्ति १८-१ से १५ तक आगे १६ से ३३ तक इब्राहीम और यहोवा की बातचीत है इस से खुदा का भोजन करना भी सिद्ध है।

खुदा की अंगुली भी है

जब परमेश्वर मूसा से सीनै पर्वत पर ऐसी बात कर चुका, तब उसने उसको अपनी अंगुलीसे लिखी हुई साक्षी देने वाली पत्थर की दोनों पटियायें दीं निर्गमन ३१-१८ कहां तक लिखा जावे ईश्वर के शरीरधारी होने के लिए तो सारी बाइबल भरी पड़ी है पाठक महोदय विचार करें कि ऐसी पुस्तकों को मानने वाला मत कभी सच्चा हो सकता है—

परीक्षा परिणाम

आर्य विद्या विद्यालय बड़ौदा द्वारा १२-१२-६४को स्नातिका परीक्षा का परिणाम घोषित किया गया निम्न छात्रायें भारती समलंकृता "तथा" व्यायामाचार्या घोषित की गईं। उनका क्रमानुसार नाम—

(१) कु० शैला शामराव प्रथम श्रेणी
(२) आशालता बाबूराव द्वितीय „
(३) कु० दयावती शामजी भाई „
(४) „ सविता शामजी भाई „
(५) „ शशि नागजी भाई „

शांतिप्रिय
मन्त्रीणा

चेतना की ज्वाला व अतीत की समाधि

ले०—श्री राजेन्द्र जी 'जिज्ञासु' दयानन्द कालेज शोलापुर

आर्य जगत के प्रेमियों को यह सुविदित ही है कि दक्षिण भारत में वैदिक धर्म पर सर्वप्रथम वेद प्रकाश जी का बलिदान हुआ था। वेद प्रकाश जी के वीर गति पाने पर बलिदानों की शृंखला ऐसी चली कि संसार देख कर दंग रह गया। अनेक प्रकार से आर्य वीरों ने वीर गति पाई। यहां तक बीदर जिला के गोविन्द राव जी को निजाम के रजाकार गुण्डों ने जीवित आग में फेंक कर जला दिया। मैं पूर्व भी आर्य जगत के ऋषि अंक में लिख चुका हूं कि उनका अपराध यही था कि वह हैदराबाद के स्वराज्य के लिए संघर्ष कर रहे थे। वह हैदराबाद का भारत में विलय चाहते थे। देश भक्त आर्य वीर जल मरा परन्तु मातृ भूमि के हितों की रक्षा के पथ से विचलित न हुआ। समय आने पर उनके जीवन व बलिदान की अमर कहानी आर्य जगत में सविस्तार लिखूंगा।

श्री वेद प्रकाश की जन्म-स्थली ऐतिहासिक दृष्टि से हम आर्यों के लिए आकर्षण का कारण है परन्तु इससे भी बढ़कर उसके उत्साही नागरिकों का धर्म प्रेम हमें आकर्षित करता है। मान्य आचार्य भगवान् दास जी ने शहीद की नगरी गंजोटी पर कुछ वर्ष पूर्व आर्य जगत में एक लेख भी लिखा था। मैं वहां तीन बार हो आया हूं। नगरी के आर्यकुमार, आर्य सज्जन श्रद्धालु व उत्साही हैं। जन-संख्या ४५०० है। हिंदी सत्याग्रह में वहां से ४० वीर जेल गए थे। महाराष्ट्र के इस भाग में आर्य समाज के तपस्वी त्यागी समाज सेवी श्री हरिश्चन्द्र जी ग्राम-ग्राम नगर-नगर घूम-घूम कर स्कूलों व कालिजों में युवकों से सम्पर्क जोड़ कर प्रचार करते रहते हैं। ऐसा त्यागी मूक सेवक लाखों में कहीं एक होता है। आप गंजोटी के पास औराद गांव के निवासी हैं।

मैं विजय दशमी के राष्ट्रीय पर्व पर गंजोटी औराद गया। गंजोटी के श्री कृष्ण विद्यालय के उत्सव पर कला प्रदर्शनी किस स्तर की थी इस को कल्पना उत्तर भारत के पाठक कर ही नहीं सकते। छठी से लेकर ११वीं तक के छात्रों की कला में इतनी रुचि देखकर मैं दंग रह गया। पंजाब में तो बड़े २ नगरों में भी सम्भवतः ऐसे २ कलाकार न मिलें। महाराष्ट्र में कला प्रेम स्वाभाविक है। परिवार से ही कला के संस्कार मिलते हैं।

कला प्रदर्शनी की मुख्य विशेषता यह थी कि सारी कला राष्ट्रीय सांस्कृतिक एवं शैक्षणिक दृष्टि से थी। 'भारत दर्शन' नाम की एक झांकी आठवीं के छात्रों ने दिखाई वह तो कमाल की थी। इसी प्रकार दसवीं के एक कक्ष में विज्ञान सम्बन्धी जानकारी देने का एक उत्तम प्रयास था। हुतात्मा वेद प्रकाश का बलिदान समय का एक चित्र मेरे भावुक हृदय को प्रभावित किये बिना न रह सका। मेरे नयन सजल हो गये।

विजय दशमी के उपलक्ष में नगर कीर्तन व सभा में दो से तीन हजार व्यक्ति सम्मिलित हुए। उत्साह का कोई ठिकाना न था। श्री रामचन्द्र जी, महर्षि दयानन्द की, स्वामी श्रद्धानन्द जी, ला० लाजपतराय, महाराज शिवाजी, वीर वेदप्रकाश, हुतात्मा श्यामलाल एवं आर्यसमाज के बीसियों शहीदों व नेताओं के जय कारे लगाते हुए कालेज व स्कूलों के छात्र, आर्य वीर दल में स्फूर्ति फूंकने वाले वीर व ग्राम के नेता एक अद्भुत दृश्य प्रस्तुत कर रहे थे।

यहां पर उल्लेख करना आवश्यक है कि इस नगर के आर्य वीर दल को श्री काशीनाथ जी के रूप में एक सदाचारी, गुणी व सिद्धान्त प्रेमी तरुण मिला है। श्री काशीनाथ बी०ए० के विद्यार्थी हैं। गंजोटी आर्यसमाज की गतिविधियों का आधार यही युवक हैं। यदि निरन्तर प्रयत्न किया जावे तो इस नगरी को आदर्श आर्य नगरी बनाया जा सकता है। अबाल वृद्ध पर वैदिक धर्म व आर्य समाज की छाप है।

नगर में आर्य समाज के लिए कितना उत्साह व प्यार है इस का परिचय इस बात से मिलता है कि विजय दशमी के कुछ समय बाद मैं सपरिवार गंजोटी भ्रमण के लिए गया। मान्य प्रिं० भगवान दास जी के परिवार के भी कुछ सदस्य थे। हम सब ने सोचा कि भ्रमण के लिये गांव के बाहर घूम फिर कर बाद में आर्य समाज का मंदिर वेद प्रकाश जी का बलिदान स्थान आदि देखेंगे और आर्य बन्धुओं से मिलेंगे। नदी के तट पर हम भोजन कर रहे थे कि एक आर्य कुमार दौड़ता हुआ आया। गांव के किसी सज्जन ने मुझे देखकर समाज में सूचना जा दी। आर्य वीरों का पता चल गया। हम ने भ्रमण किया। जिस प्रेम का परिचय वहां आर्य परिवारों ने दिया वह अकथनीय है। जाति पाति के बंधनों व रूढ़ियों के कीचड़ में फंसे धंसे नामधारी आर्य क्या अनुभव कर सकते हैं कि परिवार सम्बन्धियों व प्रदेश से दूर आर्य समाज रूपी परिवार के सदस्य के कारण किस अभिन्नता व आत्मीयता का अनुभव हमें वहां हुआ। गंजोटी का प्रेम हृदय में ऐसा प्रविष्ट हो गया है कि बार-बार शहीदों के नगर जाने को जी चाहता है। सचमुच चेतना की ज्वाला देखी।

मुझे अवकाश के दिनों में कोल्हापुर जाने का भी अवसर मिला। वहां दो सप्ताह रहा। विश्वविद्यालय का शिविर था। कोल्हापुर के राजा शाहू जी शिवाजी महाराज के वंशज थे। परोपकारणी सभा के वह अध्यक्ष भी रहे। वहां प्रसिद्ध आर्य शिक्षा शास्त्री प्रिंसिपल डा० बालकृष्ण जी ने वैदिक धर्म प्रचार का किसी समय महान कार्य किया। श्रद्धेय उपाध्याय जी एवं डा० अविनाशचन्द्र जी वसु ने भी वहां सेवा की। जन-मानस पर आज भी डा० बालकृष्ण जी की छाप है। कोल्हापुर मेरे लिये गौरवमय अतीत की समाधि थी। वहां आर्यसमाज के प्रसार के लिए मैंने जो कुछ हो सका किया। एक कर्मठ आर्य संन्यासी मुक्तानन्द वहां रहते हैं। वह यद्यपि अल्प शिक्षित हैं पर लगनशील व त्यागी हैं।

उन के तपोबल से आर्य समाज की चर्चा वहां है। वह व्यक्तिगत सम्पर्क रखकर साहित्य बांटते रहते हैं। भूखे, नंगे रह कर भी आर्य समाज की सेवा कर रहे हैं। समाज को वहां अब भी १लाख के लगभग की सम्पत्ति है।

मैंने भी वहां कुछ साहित्य बांटा। औराद के श्री हरिश्चन्द्र गुरु जी जिनकी ऊपर चर्चा की गई है इनके वहां कुछ शिष्य M. A. व M. Sc. आदि कक्षाओं में पढ़ते हैं। कुछ दयानन्द कालेज शोलापुर के पुराने छात्र हैं। इन से सम्पर्क जोड़ा। इन युवकों ने वेद सन्देश सुनाने में मेरा लाभ उठाया। वहां समाज सेवा का कुछ दायित्व उन्होंने स्वयं संभाला। अभी उन में से एक का आचार्य भगवान दास जी को एक पत्र भी आया है। जिस में मार्ग दर्शन मांगा गया है।

(शेष पृष्ठ ६ पर)

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के गत साधारण अधिवेशन तारीख २३-२-६४ में सर्व सम्मति से स्वीकृत

प्रस्ताव

गत प्रकाशन में कुछ भूल हो जाने के कारण पुनः प्रकाशित हो रहा है।

आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाबका यह साधारण अधिवेशन श्रीविश्व बन्धु जी द्वारा सम्पादित पुस्तक 'वेदसार में वेदमंत्रों के रूप में तथा पाठ में परिवर्तन को घोर घृणा तथा निंदा की दृष्टि से देखता है (इस अधिवेशन की दृढ़ धारणा है कि वेद परम पावन ईश्वरीय वाणी है उसमें किसी प्रकार का संशोधन, परिवर्तन, और परिवर्धन करने का किसी को भी अधिकार नहीं। यही कारण है कि सर्गारंभ से आज तक अक्षुण्ण चले आ रहे हैं।

श्री विश्व बंधु जी का यह दुस्साहस समस्त आर्य जाति की पुनीत प्राचीन संस्कृति का मूलोच्छेदन है अतः यह अधिवेशन :—

(१) पंजाब विश्व विद्यालय से साग्रह सानुरोध मांग करता है कि वह तुरन्त इस पुस्तक को पाठ्यक्रम से निकाल दे।

(२) सरकार से यह मांग करता है कि इस पुस्तक की समस्त प्रतियां जहां भी प्राप्त हो सकें, तुरन्त जब्त की जावें, क्योंकि इस पुस्तक से समस्त आर्य जाति की भावनाओं को ठेस पहुंचती है।

(३) यह अधिवेशन समस्त आर्य सज्जनों से साग्रह निवेदन करता है कि 'विश्वेश्वरानन्द वैदिक अनुसन्धान जो कि निश्चित रूप से श्रा पं. विश्वबन्धु जी की अध्यक्षता में आर्यसमाज के सिद्धान्तों के विरुद्ध संगठित रूप से कार्य कर रहा है, के साथ कोई सम्बन्ध न रखें जब तक कि वह इस व्यवहारमें परिवर्तन करके इसे आर्य सिद्धान्तानुकूल न बनाए।

प्रस्तावक—ज्ञानी पिंडीदास

अनुमोदक—पं० रुद्रदत्त

सर्वसम्मति से स्वीकृत

चेतना की ज्वाला व अतीत की समाधि

(पृष्ठ ५ का शेष)

उपरोक्त शिविर में साठ प्राध्यापक विभिन्न स्थानों से आए थे। सबको प्रायः यह तो ज्ञान था कि आर्यसमाज एक सुधारवादी संस्था है जिसके कट्टर देश भक्त, निर्भीक एवं सुशिक्षित बुद्धिवादी तथा बलीदानी वृत्ति के होते हैं। आर्यसमाज शुद्धि करता है। यह भी प्रायः बहुतों को पता है पर आर्यसमाज वेद को परम धर्म मानता है यह केवल उन्हीं इने-गिने प्राध्यापकों को पता था जिन तक प्रिं० भगवानदास जी पहुंच सके या जिन तक उनके द्वारा वैदिक सन्देश पहुंचा। एक दिन चर्चा करते समय कोलाहपुर के प्राध्यापक जोशी (जो संस्कृत व मराठी के एम०ए० हैं और M. E. D. भी हैं) कुछ शंकाएं कर बैठे मैंने उत्तर में वेद के कई मन्त्र व सुक्तियां सुनाईं तो वह दंग रह गए हैं। आपका वेद का इतना अध्ययन है? मैं बोला मैं आर्यसमाज का साधारण व्यक्ति हूं पण्डित नहीं, संस्कृतज्ञ भी नहीं पर परम धर्म वेद है इसलिए कुछ वेद को समझता हूं। बोले! अरे आर्य समाज वेद को इतना पवित्र मानता है तो फिर तो प्रत्येक हिन्दु को आर्यसमाजी बनाना नहीं तो यह जाति नहीं बच सकती। मैंने कहा कि वेद विरुद्ध कोई बात हमें मान्य नहीं तब उनकी और भी श्रद्धा हुई लोग ऋषि को सुनना चाहते हैं पर सुनाए कौन?

आर्य समाज श्री गंगानगर का २५ वां वार्षिकोत्सव सम्पन्न

आर्य समाज श्री गंगानगर राजस्थान का पच्चीसवां वार्षिकोत्सव दिनांक ११-१२ तथा १३ दिसम्बर को सफलता पूर्वक सम्पन्न हो गया इस उत्सव में आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान एवं आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के महोपदेशकों के अतिरिक्त आर्य जगत के सुप्रसिद्ध विद्वान एवं संसद सदस्य श्री प्रकाश वीर जी शास्त्री तथा संसद सदस्य श्री स्वामी रामेश्वरानन्द जी महाराज भी पधारे थे। आप के सुन्दर विचारों से स्थानीय जनता बड़ी ही प्रभावित हुई।

मंत्री

आर्य समाज श्री गंगानगर

प्रिंसिपल पं. रलाराम जी एम. ए. एम. एल. ए. प्रधान सभा का दिव्य सन्देश

आज के भोगवादी युग में आर्यसमाज को बड़ा भारी काम करना है। जीवन में चारों ओर अशांति है, वातावरण ठीक नहीं, बुराईयां फैल रही हैं। धन प्रधान बनता जा रहा है। आचार का कुछ और ही ढङ्ग हो गया है। आर्यसमाज ने बड़ा संघर्ष किया है। अब भी उस काम को जारी रखना है। आर्य भाई बहिनें उत्साह से अपना कर्तव्य निभाते जावें।

शोक प्रस्ताव

आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर ने दैनिक प्रताप के मालिक श्री वीरेन्द्र जी एम. ए. तथा श्री के० नरेन्द्र जी एम. ए. की पूज्या माता जी के शोक जनक निधन पर अपनी ता० २० दिसम्बर ६४ की विशेष अन्तरंग सभा की बैठक में इस सम्बन्ध में यह शोक प्रस्ताव पास किया है—

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर की ता० २०-१२-६४ की अन्तरंग सभा की यह बैठक दैनिक प्रताप के मालिक श्री वीरेन्द्र जी एम. ए. तथा श्री के. नरेन्द्र जी एम. ए. की पूज्या माता जी के दुःखदायक निधन पर अत्यन्त शोक प्रकट करता है। इस सम्वेदना को सभा अपनी सम्वेदना मानती है। सारे परिवार के साथ गहरी सहानुभूति है। स्वर्गीया समाज-सेवा में बढ़चढ़ कर भाग लेती रहीं। उनके निधन से समाज की बड़ी क्षति हुई है। प्रभु से प्रार्थना है कि दिवंगत आत्मा को शांति प्रदान करें तथा सारे दुःखी परिवार को इस भारी दुःख को सहन करने की शक्ति प्रदान करें।

ज्ञानचन्द

मन्त्री आर्यप्रादेशिक सभा, जालन्धर

स्वर्गीय मा. नन्दलाल जी की याद में

जालन्धर में स्वर्गीय मास्टर नन्दलाल जी आर्य समाज के बहुत बड़े नेता थे। डी. ए. वी. कालेज तथा आर्य प्रादेशिक सभा के परिवार में उनका स्थान उन गिने चुने नेताओं में होता था। डी. ए. वी. कालेज कमेटी के प्रधान रह चुके थे। जालन्धर में डी. ए. वी. कालेज तथा अपनी सारी संस्थाओं, आर्यसमाज किला आर्य प्रादेशिक सभा के संचालन में पूज्य मास्टर जी का बहुत बड़ा योगदान है। समाज के महान् स्तम्भ थे। उन का परिवार आर्य परिवार है। उन के सारे सुपुत्र आर्य समाज के बड़े भक्त तथा प्रतिष्ठा सम्पन्न हैं। ला. इन्द्रसेन जी तो सभा के कार्यकर्ता और प्रधान भी रह चुके हैं।

अपने पूज्य स्वर्गीय पिता जी के जन्मदिवस के स्मृति दिन को समारोह से मनाने के लिए अपने घर पर सामवेद का महान् यज्ञ किया। तथा कथा का प्रबन्ध किया परम तपस्वी सन्त पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जो यज्ञ के ब्रह्मा थे। रात को महात्मा जी की अमृतभरी कथा होती थी। गत १५ से १७ दिस. तक अमृत गंगा ही चलती रही। यज्ञ में पं. रविदत्त जी शर्मा पं. चंडी प्रसाद जी, पं. त्रिलोक चन्द शास्त्री शामिल थे। पूज्य महात्मा जी की जादू भरी कथा से पूर्व पं. मेला राम जी देहिया सिंगर के मीठे भजन तथा ब्रह्मचारी महेश जी के मस्त बनाने वाले गीत होते थे। सारा विशाल समास्थान खचाखच भरा रहता था। नगर के नरनारी पधारते रहे। परिवार में श्री ला० धर्मपाल जी, ला. इन्द्रसेन जी, ला० सत्यपाल जी, ला० प्रेमपाल जी सारे भाई तथा इनके घर का छोटा बड़ा धर्म के रंग में रंगा हुआ कितनी श्रद्धा से इस कार्य में लगा हुआ था। इसे देखकर तो चित्त प्रसन्न होता था। धन होते हुए भी इतनी सात्विकता, सरलता तथा श्रद्धा भावना।

पूज्य महात्मा जी की कथा स्वयं एक जादू है। मस्ती भर देती है। पूर्णाहुति के दिन तो सारा वातावरण कितना सुन्दर बना था। पूज्य महात्मा जी का सारे परिवार को शुभाशीर्वाद बड़ा प्रभावशाली व मीठा था। स्वर्गीय मास्टर नन्दलाल जी के प्रति अपने दिल के उद्गारों को प्रकट करने में सनातनधर्म के प्रसिद्ध विद्वान पं. सीताराम जी शास्त्री, सरदार हरिसिंह जी, पं. रविदत्त जी, मा० जगन्नाथ जी, पं. त्रिलोक चन्द शास्त्री, म० कुन्दनलाल जी, पं० चण्डीप्रसाद जी के० शिवराम जी ने भाग लिया। सबका धन्यवाद प्रकट करते हुए परिवार की ओर से जब ला० इन्द्रसेन जी बोले तो गला भर आया, आंखें भर आईं, बोलते-बोलते रुक गए। सबकी आंखों में आंसू आ गए। मार्मिक दृश्य था। यह समारोह स्मरण रहेगा। आने वाले सब नर-नारियों का हर प्रकार से सम्मान सत्कार करने में कोई न्यूनता नहीं थी। खूब यज्ञ शेष बांटा गया—स्वर्गीय दृश्य था।

आर्य समाज के उपकारी कार्य

(गतांक से आगे)

६. प्रचार कार्य—वैसे तो आर्य समाज का कोई भी सदस्य ऐसा नहीं जो हिन्दी प्रचारक न हो, फिर भी इस के वैतनिक और अवैतनिक हजारों उपदेशक हिन्दी का प्रचार करते हैं। दक्षिण, आसाम, बिहार आदि की भयकर जातियों में और विदेशों में भी इन लोगों ने प्रचार किया और कर रहे हैं। करोड़ों ट्रैक्ट मुफ्त बांटे जाते हैं।

७. पत्र-पत्रिकायें—आर्यसमाज ने ही हिन्दी में पत्रिकायें निकालने की पहल की थी और आज सैंकड़ों, हजारों की संख्या में देश-विदेशों में दैनिक साप्ताहिक, अर्द्ध साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक, त्रैमासिक, वार्षिक और अर्द्ध वार्षिक पत्रिकायें निकलती हैं, आर्यसमाज ने देश को अनेक अन्य पत्रकार आलोचक दिये।

८. हिन्दी साहित्य— हिन्दी साहित्य के भण्डार को भरने में आर्य समाज के ही लेखकों का विशेष हाथ रहा है। आर्यसमाजी विद्वानों ने उत्कृष्ट पुस्तकें लिखकर हिन्दी जगत में पुरस्कार और पदक प्राप्त किये हैं। हिन्दी में अनेकों श्रेष्ठ साहित्यकार आर्य समाज की देन हैं।

शुद्धि आन्दोलन

पाकिस्तान बन जाने के बाद भी अंग्रेजों के भारत निष्कासन के पश्चात् जनगणना के आंकड़ों से पता चलता है कि हिन्दुओं की संख्या दिन प्रतिदिन कम होती जा रही है और हाल की जन-गणना से यह दुखद बात प्रकट हुई है कि भारत में बौद्ध मतावलम्बी बहुत बढ़े हैं। ये कुछ निम्न जाति (शूद्र) कहे जाने वाले लोग ही बने हैं। इधर ईसाइयों की संख्या भी दिन-प्रतिदिन वृद्धि को प्राप्त होती जा रही है। यह समस्या केवल आंख बन्द कर लेने की नहीं है अपितु यह एक गम्भीर समस्या है। आर्य समाज की स्थापना से पूर्व भी अनेक हिंदू विधर्मी हो गए थे। इसी को देखकर आर्यसमाज ने शुद्ध आन्दोलन का पुनरुद्धार किया।

श्री पं० मित्रसेन जो आर्यसमाज की आने वाली पीढ़ी के होनहार युवक हैं। समाज के सिद्धांतों, कार्यों तथा आप दर्शनों के गंभीर विचारक हैं, आपकी सैद्धांतिक रचनाएं समाचार पत्रों में प्रकाशित होती रहती हैं। आर्य सिद्धान्तों पर आपकी छोटी बड़ी लगभग दस पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। आर्य जगत में समाज कार्यों से सम्बन्धित लेखमाला पिछले अंकों से प्रकाशित हो रही है। उसी का अवशिष्ट अंश इस लेख में पढ़िए।

—व्यवस्थापक

वेद प्रमाण

कुछ संकीर्ण विचार वालों ने इसका बहुत विरोध किया उन्होंने इसे वेदों के विपरीत आचरण बताया। परन्तु वेद तो डंके की चोट से शुद्धि की घोषणा करता है;—

दैव्याय कर्मणे शुन्धध्वं देव यज्याय।
यद्वोऽशुद्धा पराजघ्नुरिदं वः तत् शुन्धामि॥ यजु० १।१३॥

अर्थात्—हे विद्वानों! दिव्य गुण सम्पादन करने वाले शुभ कर्मों और देव यज्ञ या परोपकार करने के लिए अशुद्धों (पतितों) को शुद्ध करो। उन्हें कहो हे अशुद्धो (पतितो) तुमको जो दोष

(शेष पृष्ठ ८ पर)

आर्यसमाज के उपकारी का

(पृष्ठ ७ का शेष)

गिराते हैं या पतित करते हैं, तुम्हारे उन दोषों को मैं शुद्ध करता हूं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि वेद भी शुद्धि की आज्ञा देता है। फिर क्यों न उन्हें शुद्ध किया जाय पाठको! यदि आर्य समाज शुद्धि आन्दोलन को न अपनाता तो पता नहीं कितने लाख विधर्मी हो जाते। एक बहुत बड़े विचारक ने कहा था। कि अगर आर्य समाज न होता तो आज आधे से अधिक हिन्दुओं के सिर पर हमें चोटी भी दिखलाई न पड़ती और थोड़े ही दिनों में हिन्दुस्तान हिन्दू-स्थान न रह कर यवन स्थान हो जाता। इस कारण वेद के कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' नारे को आर्य समाज ने अपनाया।

आर्य समाज की शुद्धि संस्थायें

शुद्धि आन्दोलन की सफलता के लिये आर्य समाज ने अखिल भारतीय शुद्धि सभा, दयानन्द सालवेशन मिशन, अन्तर्राष्ट्रीयनिरोध समिति आदि अनेक संस्थाओं को जन्म दिया। जिन्होंने सैकड़ों वनिता आश्रम खोले हुए हैं, जहां अब तक हजारों हिन्दू स्त्रियों को, जिनका अपहरण कर लिया गया था, कार्यकर्ताओं ने अपने प्राण संकट में डाल कर बचाया और उन्हें उनके वास्तविक अभिभावकों के पास पहुँचाया। जब तक आश्रम की ही ओर से निःशुल्क भोजन,

— — ६।

इन संस्थाओं ने अब तक लगभग २० सहस्र मलकाने आड़, मूल जाट, गूजर तथा जोगी शुद्ध किये। लाखों भील, गौंड, सन्थाल जो कि ईसाई बन चुके थे शुद्ध किया। गया। हरिजन, जाट तथा जिन्हें अधबोटे ठाकुर कहा जाता है उन उन लोगों को लाखों की संख्या में शुद्ध करके हिन्दू समाज में मिलाया।

इस प्रकार से प्यारे पाठको! आर्य समाज ने अनगिनती उपकार मानवजाति के प्रति किये हैं। कहां तक कहें देश, जाति और समाज सुधार का ऐसा कोई भी काम न होगा जिस का प्रारम्भ आर्यसमाज से न हुआ हो। जैसे बाल विवाह निरोध, विधवा विवाह विधान, मादक वस्तु निषेध, शिक्षा विस्तार, हिन्दू संगठन, समाज सुधार, स्वदेशी प्रचार; वैदिक विचार, धर्मोपचार, शुद्धि [illegible], अनाथ रक्षा, हिन्दी प्रचार आदि। और अब इस से भी अधिक आवश्यक तथा देश को अतीव भयंकर निम्न कार्य करने हैं।

१. नास्तिकता की लहर का विरोध।

२. साम्यवाद की लहर का निरोध।

३. पाश्चात्य सभ्यता की लहर से भारत को बचाना।

अतः आवश्यकता है [illegible] की कि ओ भावी भारत वाहक युवको! युवतियो! वृद्धो और महिलाओ! आओ इस पावन ओम् पताका के नीचे वेदों की छत्र छाया में आर्य समाज के कन्धे से कन्धा भिड़ाकर हम देश, जाति और समाज की सेवा करें।

जो चाहे अधिक रस,
सीख ईख ते लेय।
जो तोसों अनसर करें,
ताहि अधिक रस देय॥

आर्य विद्या सभा, चित्र गुप्त मार्ग नई दिल्ली

(गतांक से आगे)

नाम संस्था	संख्या प्रतिनिधि
डी. ए. वी. अमृतसर	१२
ए. एस. अहमदपुर	२
ए. एस. अम्बाला नगर	११
डी. ए. वी. अम्बाला छावनी	३
„ बटाला	३
डी. ए. वी. बलाचौर	४
म. हंसराज [illegible]	३
डी. ए. वी. चण्डीगढ़	७
„ दसूआ	४
„ गुरदासपुर	७
„ गढ़दिवाला	२
सी. ए. वी. हिसार	३
साईं दास जालन्धर नगर	२१
„ बस्ती नौ „	४
डी. ए. वी. कन्या गुरदासपुर	१
साईं दास कन्या जालन्धर नगर	५
डी. ए. वी. कलानौर	१
डी. ए. वी. कांगड़ा	४
डी. ए. वी. करतारपुर	३
चकवाल नेशनल, कुराली	३
जी. ए. मेंगवाल	२
ए. एस. नकोदर	५
इरकौर कन्या पानीपत	१
डी. ए. वी. कादियां	३
देवकौर कन्या „	२
[illegible]	२
पब्लिक हिन्दु	१
जी. एस. ए. यमुना नगर	४
डी. ए. वी. पट्टी	२
जी. एम. आर्य कन्या पट्टी	२
जी. ए. वी. सलथाना	१
डी. ए. वी. शिमला	५
आर्य मण्डी फूल	१
आर्य नाभा	२
डी. ए. वी. डेरा बस्सी	१
आर्यकन्या फिरोजपुर छावनी	२
डी. ए. वी. बहरामपुर	१
„ चित्रगुप्त मार्ग नई दिल्ली	१
„ दरया गंज, दिल्ली	१
„ बेयर्ड रोड, नईदिल्ली	१
„ प्रथम „	१
„ द्वितीय „	१
भागीरथी देवी कन्या बाजार-सीताराम, दिल्ली	१
वैदिक नर्सरी, चित्र गुप्त मार्ग नई दिल्ली	१
धनपत मल्ल, रूपनगर नई दिल्ली	२
ए. एस. पुवकरी	१

भूल सुधार

२०-१२-६४ के अंक दयानन्द सालवेशन मिशन की सूचना में छात्रवृत्ति सभी जाति के छात्रों के लिए है। केवल हरिजन छात्रों के लिए ही नहीं। पाठक नोट कर लें।

—व्यवस्थापक

अमूल्य वचन

कामातुराणां न भयं न लज्जा।
कामी पुरुष को न भय और न लज्जा होती है।

माता जी चल बसीं

दैनिक प्रताप के मालिक श्री वीरेन्द्र जी एम. ए. जालन्धर, श्री के. नरेन्द्र जी एम. ए. देहली की पूज्या माता जी के देहान्त का दुःखद समाचार सुनकर सबको भारी शोक व दुःख हुआ। माता जी ने जीवन में भारी समाज की सेवा की। श्री वीरेन्द्र जी व नरेन्द्र जी जैसे पुत्र रत्नों को समाज की भेंट किया। अभी स्वर्गीय महाशय कृष्ण जी के स्वर्गवास का दुःख मना रहे थे कि अब माता जी भी आंखें बन्द कर गईं। इस भारी कष्ट में आर्यजगत् श्री वीरेन्द्र जी नरेन्द्र जी तथा सारे परिवार के दुःख में दुःखी है प्रभु से दिवंगत आत्मा की शान्ति की प्रार्थना करता है। भारी क्षति में अमवाम परिवार को सहन शक्ति प्रदान करें—सं.

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मासिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

CHAPTER XXIV

THE ATLANTIC CHARTER

My Original Draft of the Atlantic Charter – The President's Proposed Alterations – Our Discussions of the 11th – Need to Safeguard Imperial Preference – The Atlantic Islands – Our Agreement about Policy Towards Japan – My Reports of August 11 to the Foreign Office and the Cabinet – The Cabinet's Prompt Reply – Final Form of the Atlantic Charter – A Joint Anglo-American Message to Stalin – My Memorandum about American Supplies – Mr. Purvis Killed in a Plane Accident – Report of August 12 to the Cabinet – Congratulations from the King and Cabinet – Report to Australian Prime Minister – Voyage to Iceland – I Return to London, August 19.

PRESIDENT ROOSEVELT told me at one of our first conversations that he thought it would be well if we could draw up a joint declaration laying down certain broad principles which should guide our policies along the same road Wishing to follow up this most helpful suggestion, I gave him the next day, August 10, a tentative outline of such a declaration. My text was as follows·

JOINT ANGLO-AMERICAN DECLARATION OF PRINCIPLES

The President of the United States of America and the Prime Minister, Mr Churchill, representing His Majesty's Government in the United Kingdom, being met together to resolve and concert the means of providing for the safety of their respective countries in face of Nazi and German aggression and of the dangers to all peoples arising therefrom, deem it right to make known certain principles which they both accept for guidance in the framing of their policy and on which they base their hopes for a better future for the world

First, their countries seek no aggrandisement, territorial or other.

Second, they desire to see no territorial changes that do not accord with the freely expressed wishes of the peoples concerned

Third, they respect the right of all peoples to choose the form of government under which they will live They are only concerned to defend the rights of freedom of speech and thought, without which such choice must be illusory

Fourth, they will strive to bring about a fair and equitable distribution of essential produce, not only within their territorial boundaries, but between the nations of the world.

Fifth, they seek a peace which will not only cast down for ever the Nazi tyranny, but by effective international organisation will afford to all States and peoples the means of dwelling in security within their own bounds and of traversing the seas and oceans without fear of lawless assault or the need of maintaining burdensome armaments.

Considering all the tales of my reactionary, Old World outlook, and the pain this is said to have caused the President, I am glad it should be on record that the substance and spirit of what came to be called the "Atlantic Charter" was in its first draft a British production cast in my own words

August 11 promised to be a day of intense business.

Prime Minister to Admiralty 11 Aug 41

Utmost strength to be put on deciphering telegrams from here during next twenty-four hours.

At our meeting in the morning the President gave me a revised draft, which we took as a basis for discussion The only serious difference from what I had written was about the fourth point (access to raw materials) The President wished to insert the words "without discrimination and on equal terms". The President also proposed two extra paragraphs.

Sixth, they desire such a peace to establish for all safety on the high seas and oceans

Seventh, they believe that all the nations of the world must be guided in spirit to the abandonment of the use of force Because no future peace can be maintained if land, sea, or air armaments continue to be employed by nations which threaten, or may threaten, to use force outside of their frontiers, they believe that the disarmament of such nations is essential They will further the adoption of all other practicable measures which will lighten for peace-loving peoples the crushing burden of armaments

Before we discussed this document the President explained that his idea was that there should be issued simultaneously in Washington and London, perhaps on August 14, a short statement to the effect that the President and the Prime Minister had held conversations at sea, that they had been accompanied by members of their respective staffs, that the latter had discussed the working out of aid to the democracies under the Lend-Lease Act, and that these naval and military conversations had in no way been concerned with future commitments other than as authorised by Act of Congress The statement would proceed to say that the Prime Minister and the President had discussed certain principles relating to the civilisation of the world and had agreed on a statement of them. I deprecated the emphasis which a statement on these lines would lay on the absence of commitments This would be seized on by Germany and would be a source of profound discouragement to the neutrals and to the vanquished We also would not like it. I very much hoped therefore that the President could confine the statement to the positive portion which dealt with the question of aid to the democracies, more especially as he had guarded himself by the reference to the Lend-Lease Act. The President accepted this.

There followed a detailed discussion of the revised text of the declaration Several minor alterations were easily agreed. The chief difficulties were presented by Points 4 and 7, especially the former With regard to this, I pointed out at once that the words "without discrimination" might be held to call in question the Ottawa agreements, and I was in no position to accept them. This text would certainly have to be referred to the Government at home, and, if it was desired to maintain the present wording, to the Governments in the Dominions I should have little hope that it would be accepted. Mr. Sumner Welles indicated that this was the core of the matter, and that this paragraph embodied the ideal for which the State Department had striven for the past nine years. I could not help mentioning the British experience in adhering to Free Trade for eighty years in the face of ever-mounting American tariffs We had allowed the fullest importations into all our colonies Even our coastwise traffic around Great Britain was open to the competition of the world All we had got in reciprocation was successive doses of American Protection. Mr. Welles seemed to be a little taken aback. I then

said that if the words "with due respect for their existing obligations" could be inserted, and if the words "without discrimination" could disappear, and "trade" be substituted for "markets", I should be able to refer the text to His Majesty's Government with some hope that they would be able to accept it The President was obviously impressed. He never pressed the point again

As regards the generalities of Point 7, I pointed out that while I accepted this text, opinion in England would be disappointed at the absence of any intention to establish an international organisation for keeping peace after the war I promised to try to find a suitable modification, and later in the day I suggested to the President the addition to the second sentence of the words "pending the establishment of a wider and more permanent system of general security"

* * * * *

Continuous conferences also took place between the naval and military chiefs, and a wide measure of agreement was reached between them I had outlined to the President the dangers of a German incursion into the Iberian peninsula, and explained our plans for occupying the Canary Islands—known as Operation "Pilgrim"—for countering such a move I then sent to Mr. Eden a summary of this discussion.

Prime Minister to Foreign Office 11 Aug 41

The President has received a letter from Dr Salazar, in which it is made clear that he is looking to the Azores as a place of retreat for himself and his Government in the event of German aggression upon Portugal, and that his country's age-long alliance with England leads him to count on British protection during his enforced stay in these islands

2 If however the British were too much occupied elsewhere he would be willing to accept assistance from the United States instead The President would be well disposed to respond to such an appeal, and would like the British in the circumstances foreseen to propose to Dr Salazar the transference of responsibility. The above would also apply to the Cape Verdes.

3 I told the President that we contemplate the operation known as "Pilgrim", that we might be forced to act before a German violation of the peninsula had occurred, and that while this was going on we should be very busy. I pointed out that "Pilgrim" would almost,

though not absolutely certainly, provoke a crisis in the peninsula, and asked whether our having set events in train by "Pilgrim" would be any bar to his acceptance of the responsibility indicated in paragraph 1 He replied that as "Pilgrim" did not affect Portugal it made no difference to his action.

4 He would feel justified in taking action if the Portuguese islands were endangered, and we agreed that they would certainly be endangered if "Pilgrim" were to take place, as the Germans would have all the more need to forestall us there

5 In these circumstances he would none the less be ready to come to the aid of Portugal in the Atlantic islands, and was holding strong forces available for that purpose.

I have shown foregoing to President, who agreed that it was a correct representation of the facts.

* * * * *

We then, on the same day, turned to the Far East The imposition of the economic sanctions on July 26 had caused a shock in Tokyo. It had not perhaps been realised by any of us how powerful they were Prince Konoye sought at once to renew diplomatic talks, and on August 6 Admiral Nomura, the Japanese Special Envoy in Washington, presented to the State Department a proposal for a general settlement Japan would undertake not to advance farther into South-East Asia, and offered to evacuate Indo-China on the settlement of "the China incident" (such was the term by which they described their six-years war upon China) In return the United States were to renew trade relations and help Japan to obtain all the raw materials she required from the South-West Pacific. It was obvious that these were smoothly worded offers by which Japan would take all she could for the moment and give nothing for the future. No doubt they were the best Konoye could procure from his Cabinet. Around our conference table on the *Augusta* there was no need to argue the broad issues. My telegram sent from the meeting to Mr. Eden gives a full account of the matter·

Prime Minister to Foreign Secretary 11 Aug 41

The position about Japan is as follows:

President proposed to Japan some time ago neutralisation of Indo-China and Siam under joint guarantee of United States, Japan, Britain, China, and others Japanese reply, which will be cabled you fully as soon as more urgent messages have been dealt with, agrees to the

principle of no encroachment upon Siam and military withdrawal from Indo-China, but adds a number of conditions fundamentally unacceptable For instance, the withdrawal to take place after the China incident is settled, meaning thereby after Chiang Kai-shek is strangled, and further requiring recognition of Japan's preponderant position in these regions, also requiring United States to abstain from all further military preparations in these regions, and seeking lifting of the economic sanctions

2 President's idea is to negotiate about these unacceptable conditions and thus procure a moratorium of, say, thirty days in which we may improve our position in Singapore area and the Japanese will have to stand still But he will make it a condition that the Japanese meanwhile encroach no farther and do not use Indo-China as a base for attack on China He will also maintain in full force the economic measures directed against Japan These negotiations show little chance of succeeding, but President considers that a month gained will be valuable I pointed out of course that the Japanese would double-cross him and would try to attack China or cut the Burma communications However, you may take it that they consider it right to begin the negotiations on these lines, and in view of what has passed between United States and Japan it will be necessary to accept this fact

3 In the course of these negotiations President would renew his proposals for neutralisation of Siam as well as Indo-China

4 At the end of the Note which the President will hand to the Japanese Ambassador when he returns from his cruise in about a week's time he will add the following passage, which is taken from my draft

> "Any further encroachment by Japan in the South-West Pacific would produce a situation in which the United States Government would be compelled to take counter-measures, even though these might lead to war between the United States and Japan"

He would also add something to the effect that it was obvious that, the Soviet being a friendly Power, United States Government would be similarly interested in any similar conflict in the North-West Pacific

5 I think this is entirely good, and that we should associate ourselves therewith and endeavour to get the Dutch to join in full agreement, because either the Japanese will refuse the conditions the President prescribes—namely, continuance of the economic sanctions and no movement on the Japanese part and no invasion of Siam—or alternatively they will go on with their military action while lying about it diplomatically

In this case the conditions indicated by the final passage just quoted [in paragraph 4] would come into play with great force, and the full effect of parallel declarations could be realised The Soviet Government should also be kept informed. It might be dangerous to tell the Chinese what we are doing for them, though they might be assured in general terms that we have had their security in mind in all that we have done

6 On all these grounds I consider that we should endorse the proposed course of action, and that the Dominions should be told about it and made to see that it is a very great advance towards the gripping of Japanese aggression by united forces

* * * * *

To Mr. Attlee I sent a comprehensive summary of all the main points under discussion

Prime Minister to Lord Privy Seal 11 Aug 41

Have reached satisfactory settlement about Naval Plan No 4 [the United States Navy to take over the America-Iceland stretch of the Atlantic]

Secondly, President is prepared to take very helpful action corresponding with, or consequent upon, Operation "Pilgrim"

Thirdly, he intends to negotiate with Japan on the basis of a moratorium for, say, a month, during which no further military movements are to be made by Japan in Indo-China and no encroachment upon Siam He has agreed to end his communication with a very severe warning, which I drafted

Fourthly, the President wishes to issue at the moment of general release of meeting story, probably 14th or 15th, a Joint Declaration signed by him and me, on behalf of His Majesty's Government, of the broad principles which animate the United States and Great Britain at this favourable time I send you herewith his draft of the statement, which you will see is not free from the difficulties attaching to all such declarations The fourth condition would evidently have to be amended to safeguard our obligations contracted in Ottawa and not prejudice the future of Imperial Preference This might fall into its place after the war in a general economic settlement, with decisive lowering of tariffs and trade barriers throughout the world But we cannot settle it now For the sake of speedy agreement I have little doubt he will accept our amendments

The seventh paragraph is most remarkable for its realism The President undoubtedly contemplates the disarmament of the guilty nations, coupled with the maintenance of strong united British and American armaments both by sea and air for a long indefinite period

Having regard to our views about the League of Nations or other international organisations, I would suggest the following amendment after the word "essential"

"pending the establishment of a wider and more permanent system of general security"

He will not like this very much, but he attaches so much importance to the Joint Declaration, which he believes will affect the whole movement of United States opinion, that I think he will agree

It would be most imprudent on our part to raise unnecessary difficulties We must regard this as an interim and partial statement of war aims designed to assure all countries of our righteous purpose, and not the complete structure which we should build after victory

You should summon the full War Cabinet, with any others you may think necessary, to meet to-night, and please let me have your views without the slightest delay Meanwhile full accounts are being sent you immediately on the other points, together with Cadogan's report of the conversation I fear the President will be very much upset if no Joint Statement can be issued, and grave and vital interests might be affected

I had purposed to leave afternoon 12th, but we have both now postponed departure twenty-four hours

I had only finished dictating the telegrams about 2 p.m., and that I should have had in my hands within the next twelve hours the War Cabinet's most helpful reply reflects credit on all concerned I subsequently learned that my telegrams had not reached London until after midnight, and that many of the Ministers had already gone to bed. Nevertheless a War Cabinet meeting was summoned for 1 45 a m, and there was a full attendance, including Mr. Peter Fraser, Prime Minister of New Zealand, who was in England at the time. As a result of a full discussion they sent me a telegram just after 4 a m, welcoming the proposal and suggesting a further version of Point 4 (non-discrimination in world trade) and the insertion of a new paragraph dealing with social security. Meanwhile I had heard that the President had accepted all the amendments I had suggested to him on August 11.

* * * * *

On August 12, about noon, I went to see the President to agree with him the final form of the Declaration. I put to the President the Cabinet's revised version of Point 4, but he preferred to adhere to the phrasing already agreed, and I did not

press him further on this point. He readily accepted the insertion of the new paragraph about social security desired by the Cabinet. A number of verbal alterations were agreed, and the Declaration was then in its final shape.

JOINT DECLARATION BY THE PRESIDENT AND THE PRIME MINISTER

August 12, 1941

The President of the United States of America and the Prime Minister, Mr Churchill, representing His Majesty's Government in the United Kingdom, being met together, deem it right to make known certain common principles in the national policies of their respective countries on which they base their hopes for a better future for the world

First, their countries seek no aggrandisement, territorial or other

Second, they desire to see no territorial changes that do not accord with the freely expressed wishes of the peoples concerned

Third, they respect the right of all peoples to choose the form of government under which they will live, and they wish to see sovereign rights and self-government restored to those who have been forcibly deprived of them

Fourth, they will endeavour, with due respect to their existing obligations, to further the enjoyment by all States, great or small, victor or vanquished, of access, on equal terms, to the trade and to the raw materials of the world which are needed for their economic prosperity

Fifth, they desire to bring about the fullest collaboration between all nations in the economic field, with the object of securing for all improved labour standards, economic advancement, and social security

Sixth, after the final destruction of the Nazi tyranny they hope to see established a peace which will afford to all nations the means of dwelling in safety within their own boundaries, and which will afford assurance that all the men in all the lands may live out their lives in freedom from fear and want

Seventh, such a peace should enable all men to traverse the high seas and oceans without hindrance.

Eighth, they believe that all the nations of the world, for realistic as well as spiritual reasons, must come to the abandonment of the use of force Since no future peace can be maintained if land, sea, or air armaments continue to be employed by nations which threaten, or may threaten, aggression outside of their frontiers, they believe, pending

the establishment of a wider and more permanent system of general security, that the disarmament of such nations is essential They will likewise aid and encourage all other practicable measures which will lighten for peace-loving peoples the crushing burden of armaments

It was only after this that I received the telegram giving the results of a further meeting of the Cabinet on the morning of August 12 This telegram made clear the reasons for the misgivings which the Cabinet felt on the subject of Point 4. But I felt that the final text with the words "with due respect for their existing obligations", governing as they did the whole paragraph, sufficiently safeguarded our position.

The profound and far-reaching importance of this Joint Declaration was apparent. The fact alone of the United States, still technically neutral, joining with a belligerent Power in making such a declaration was astonishing. The inclusion in it of a reference to "the final destruction of the Nazi tyranny" (this was based on a phrase appearing in my original draft, amounted to a challenge which in ordinary times would have implied warlike action Finally, not the least striking feature was the realism of the last paragraph, where there was a plain and bold intimation that after the war the United States would join with us in policing the world until the establishment of a better order

* * * * *

The President and myself also drew up a joint message to Stalin·

12 Aug 41

We have taken the opportunity afforded by the consideration of the report of Mr Harry Hopkins on his return from Moscow to consult together as to how best our two countries can help your country in the splendid defence that you are making against the Nazi attack We are at the moment co-operating to provide you with the very maximum of supplies that you most urgently need Already many shiploads have left our shores, and more will leave in the immediate future

We must now turn our minds to the consideration of a more long-term policy, since there is still a long and hard path to be traversed before there can be won that complete victory without which our efforts and sacrifices would be wasted

The war goes on upon many fronts, and before it is over there may be yet further fighting fronts that will be developed Our resources, though immense, are limited, and it must become a question as to

COPY NO: 1

MOST SECRET

NOTE: This document should not be left lying about and, if it is unnecessary to retain, should be returned to the Private Office.

PROPOSED DECLARATION

The President of the United States of America and the Prime Minister, Mr. Churchill, representing His Majesty's Government in the United Kingdom, being met together, deem it right to make known certain common principles in the national policies of their respective countries on which they base their hopes for a better future for the world.

First, their countries seek no aggrandisement, territorial or other;

Second, they desire to see no territorial changes that do not accord with the freely expressed wishes of the peoples concerned.

Third, they respect the right of all peoples to choose the form of government under which they will live, and they wish to see self-government restored to those from whom it has been forcibly removed.

Fourth, they will endeavour, with due respect to their existing obligations, to further the enjoyment by all peoples of access, on equal terms, to the trade and to the raw materials of the world which are needed for their economic prosperity.

Fifth, they support fullest collaboration between Nations in economic field with object of securing for all peoples freedom from want, improved labour standards, economic advancement and social security

Sixth, they hope to see established a peace, after the final destruction of the Nazi tyranny, which will afford to all nations the means of dwelling in security within their own boundaries, and which will afford assurance to all peoples that they may live out their lives in freedom from fear.

Seventh, they desire such a peace to establish for all safety on the high seas and oceans.

Eighth, they believe that all of the nations of the world must be guided in spirit to the abandonment of the use of force. Because no future peace can be maintained if land, sea or air armaments continue to be employed by nations which threaten, or may threaten, aggression outside of their frontiers, they believe that the disarmament of such nations is essential pending the establishment of a wider and more permanent system of general security. They will further the adoption of all other practicable measures which will lighten for peace-loving peoples the crushing burden of armaments.

Private Office.
August 12, 1941

Facsimile of the original draft of the Atlantic Charter, showing Mr Churchill's corrections in red

where and when those resources can best be used to further to the greatest extent our common effort This applies equally to the manufactured war supplies and to raw materials

The needs and demands of your and our armed services can only be determined in the light of the full knowledge of the many factors which must be taken into consideration in the decisions that we make In order that all of us may be in a position to arrive at speedy decisions as to the apportionment of our joint resources, we suggest that we prepare for a meeting to be held at Moscow, to which we would send high representatives who could discuss these matters directly with you If this conference appeals to you, we want you to know that, pending the decisions of that conference, we shall continue to send supplies and materials as rapidly as possible.

We realise fully how vitally important to the defeat of Hitlerism is the brave and steadfast resistance of the Soviet Union, and we feel therefore that we must not in any circumstances fail to act quickly and immediately in this matter of planning the programme for the future allocation of our joint resources.

* * * * *

Lord Beaverbrook had been keen to accept my invitation, which I sent while on the outward voyage At the same time I needed Mr Purvis, who was in any case returning to Washington I considered that the combination of Beaverbrook and Purvis, who in many ways represented Canada, would give us the best chance of coping with the painful splitting of supplies between Great Britain and Soviet Russia which was desirable and also inevitable I also hoped that Beaverbrook would be able to spur and enlarge the whole scale of American production In anticipation of their arrival I drafted a memorandum, which will be found among the Appendices.* Beaverbrook and Purvis started from Prestwick in different aeroplanes within a few hours of one another It was an even chance who went in either plane. Beaverbrook arrived safely at the Newfoundland airport, and joined me after a long train journey early on the 12th. Purvis and all with him were killed by one of those sinister strokes of fortune which make a plane fly into a hill of no great height within a few minutes of taking off Purvis was a grievous loss, as he held so many British, American, and Canadian threads in his hands, and had hitherto been the directing mind in their harmonious com-

* Appendix I, p 762

bination When Max arrived I told him this shocking news. He was silent for a moment, but made no comment. It was war-time

★ ★ ★ ★ ★

The following telegram summarises the result of our final conference.

Prime Minister to Lord Privy Seal 12 Aug 41

Please thank Cabinet for amazingly swift reply I put your alternative Clause 4 to President, but he preferred to stick to the phrasing already agreed I do not myself see any real difference Phrase about "respect for existing obligations" safeguards our relations with Dominions We could not see how competition of cheap labour would come in, as all countries preserve the right of retaining or imposing national tariffs as they think fit pending better solutions

2 The President cordially accepted your new paragraph 5, but you will see that the reference to "want" comes in where the President originally wished it—at the end of paragraph 6 A few verbal flourishes not affecting substance have been added

3 We have laid special stress on the warning to Japan which constitutes the teeth of the President's communication One would always fear State Department trying to tone it down, but President has promised definitely to use the hard language

4 Arrival of Russia as a welcome guest at hungry table and need of large supplementary programmes both for ourselves and the United States forces make review and expansion of United States production imperative President proposes shortly to ask Congress for another five billion dollars Lend-Lease Bill President welcomes Beaverbrook's arrival at Washington, and I am convinced this is the needful practical step See also the Roosevelt-Churchill message to dear old Joe I think they will send Harriman to represent them, and I should propose that Beaverbrook should go for us to Moscow, or wherever Russian Government is We do not wish conference in Russia to start before latter part of September, by when it is hoped we shall know where the Russian front will lie for the winter

5. They are sending us immediately 150,000 more rifles, and I look for improved allocations of heavy bombers and tanks I hope they will take over whole ferry service and deliver both in England and in West Africa by American pilots, many of whom may stay for war-training purposes with us

6 Your promptness has enabled me to start home to-day, 12th President is sending American destroyers with us, who are not considered escort but will chip in if any trouble occurs Franklin Junior is serving on one of them, and has been appointed Liaison Officer to

me during my day in Iceland (C),* where there will be a joint review of British and American forces.

7 Lord Beaverbrook is now proceeding with Harriman by air to United States

8 I trust my colleagues will feel that my mission has been fruitful I am sure I have established warm and deep personal relations with our great friend

Before sailing homewards I received a message of congratulation from the King During the voyage I replied to this and other telegrams

Prime Minister to His Majesty the King 13 Aug 41

Most grateful to Your Majesty for good wishes Lord Privy Seal will submit full text of all telegrams recording business I have established with President most cordial personal relations, and trust Your Majesty will feel that results justify mission President has given me personal letter, which I shall hope to deliver to you at luncheon on Tuesday, 19th

And to Mr. Attlee, who telegraphed on behalf of the Cabinet

Prime Minister to Lord Privy Seal 13 Aug 41

Many thanks for your kind message I am delighted you will broadcast statement and declaration yourself Please make a definite break between the preliminary statement and the actual text by saying, "I will now read the actual text of the Joint Declaration" I do not consider any comment will be required from me, as announcement is itself sufficient to fill the newspapers I might broadcast on the Sunday night following my return, when reaction in United States to our meeting and Joint Declaration will be apparent

Any necessary guidance can be given to the Press confidentially, but they will surely see that Joint Declaration proposing final destruction of Nazi power and disarmament of aggressive nations while Britain and United States remain armed is an event of first magnitude. It would be well to let this soak in on its own merits on friend and foe

2 For your secret information, President is remaining at sea until end of week in order to cover my return I told him this was not necessary, but he insisted

3 We shall be most interested to know how it is all taken

4 I read with much pleasure your admirable war statement at end of session

* To avoid confusion with Ireland, I had directed that Iceland was always to be written by the British authorities as Iceland (C) This was indeed a necessary precaution

I sent the following message to Mr. Menzies, Prime Minister of Australia:

15 Aug 41

You have no doubt seen the relevant cables about Atlantic meeting I trust you approve of what was accomplished. President promised me to give the warning to Japan in the terms agreed Once we know this has been done we should range ourselves beside him and make it clear that if Japan becomes involved in war with United States she will also be at war with Britain and British Commonwealth. I am arranging this with Eden, and you will be advised through the regular channels. You should note that the President's warning covers an attack upon Russia, so that perhaps Stalin will line up too, and of course the Dutch If this combined front can be established, including China, I feel confident that Japan will lie quiet for a while It is however essential to use the firmest language and the strongest combination.

2 United States Navy is effectively taking over America–Iceland stretch of Atlantic, thus giving us relief equal to over fifty destroyers and corvettes, soon to be available for home waters and South Atlantic

The voyage to Iceland was uneventful, although at one point it became necessary to alter course owing to the reported presence of U-boats near by Our escort included two United States destroyers, in one of which was Ensign Franklin D. Roosevelt, Jnr, the President's son. On the 15th we met a combined homeward-bound convoy of seventy-three ships, all in good order and perfect station after a fortunate passage across the Atlantic. It was a heartening sight, and the merchant ships too were glad to look at the *Prince of Wales.*

We reached the island on Saturday morning, August 16, and anchored at Hvals Fiord, from which we travelled to Reykjavik in a destroyer. On arrival at the port I received a remarkably warm and vociferous welcome from a large crowd, whose friendly greetings were repeated whenever our presence was recognised during our stay, culminating in scenes of great enthusiasm on our departure in the afternoon, to the accompaniment of such cheers and hand-clapping as have, I was assured, seldom been heard in the streets of Reykjavik

After a short visit to the Althingishus, to pay respects to the Regent and the members of the Icelandic Cabinet, I proceeded to a joint review of the British and American forces. There was a long march past in threes, during which the tune "United States

Marines" bit so deeply into my memory that I could not get it out of my head I found time to see the new airfields we were making, and also to visit the wonderful hot springs and the glass-houses they are made to serve. I thought immediately that they should also be used to heat Reykjavik, and tried to further this plan even during the war. I am glad that it has now been carried out I took the salute with the President's son standing beside me, and the parade provided another remarkable demonstration of Anglo-American solidarity

On return to Hvals Fiord I visited the *Ramillies*, and addressed representatives of the crews of the British and American ships in the anchorage, including the destroyers *Hecla* and *Churchill*.

As darkness fell after this long and very tiring ordeal we sailed for Scapa where we arrived without further incident early on the 18th, and I reached London on the following day.

CHAPTER XXV

AID TO RUSSIA

Russian Valour and the Approaching Winter – Lord Beaverbrook Champions Aid to Russia – Our Sacrifices of Vital Munitions – The Beaverbrook-Harriman Mission – My Letter to Stalin of August 29 – His Reply – Interview with Ambassador Maisky – An Air of Menace – My Answer to Stalin – I Communicate My Anxieties to Roosevelt – Letter to Sir Stafford Cripps of September 5 – Further Message from Stalin – A Fantastic Suggestion – My Response – Lord Beaverbrook Sails for Archangel in the "London" – My Letter to Stalin of September 21 – The Beaverbrook Mission in Moscow – A Grim Reception – Cordial American Contacts – Protocol for Supplies to Russia – Continuous Cycle of Convoys to Archangel – Insistent Demands in Moscow for the Second Front – The Crisis of the Struggle in Russia – My Telegram to Sir Stafford Cripps of October 28 – A Plain Statement – Winter Casts its Shield Before the Russian Armies – Mrs Churchill's "Aid to Russia" Fund.

TWO months had now passed on the Russian front, and terrific blows had been struck by the German armies. But by now there was another side to the tale. Despite their fearful losses Russian resistance remained tough and unbending. Their soldiers fought to the death, and their armies gained in experience and skill. Partisans rose up behind the German fronts and harassed the communications in a merciless warfare. The captured Russian railway system was proving inadequate; the roads were breaking up under the heavy traffic, and movement off the roads after rain was often impossible. Transport vehicles were showing many signs of wear. Barely three months remained before the dreaded Russian winter. Could Moscow be taken in that time? And if it were, would that be enough? Here then was the fateful question. Though Hitler was still elated by

the victory at Kiev, the German generals might well feel that their early misgivings were justified. There had been four weeks of delay on what had now become the decisive front. The task of "annihilating the forces of the enemy in White Russia" which had been given to the Central Army Group was still not done.

But as the autumn drew on and the supreme crisis on the Russian front impended the Soviet demands upon us became more insistent.

* * * * *

Lord Beaverbrook returned from the United States having stimulated the already powerful forces making for a stupendous increase in production. He now became the champion in the War Cabinet of Aid to Russia. In this he rendered valuable service. When we remember the pressures that lay upon us to prepare the battle in the Libyan desert, and the deep anxieties about Japan which brooded over all our affairs in Malaya and the Far East, and that everything sent to Russia was subtracted from British vital needs, it was necessary that the Russian claims should be so vehemently championed at the summit of our war thought. I tried to keep the main proportion evenly presented in my own mind, and shared my stresses with my colleagues. We endured the unpleasant process of exposing our own vital security and projects to failure for the sake of our new ally—surly, snarly, grasping, and so lately indifferent to our survival.

On the way home from Iceland I had felt that when Beaverbrook and Averell Harriman got back from Washington and we could survey all the prospects of munitions and supplies they should go to Moscow and offer all we could spare and dare. Prolonged and painful discussions took place upon the details on the lines of our joint offer of August 12. The Service departments felt it was like flaying off pieces of their skin. However, we gathered together the utmost in our power, and consented to very large American diversions of all we longed for ourselves in order to make an effective contribution to the resistance of the Soviets I brought the proposal to send Lord Beaverbrook to Moscow before my colleagues on August 28 The Cabinet were very willing that he should present the case to Stalin, and the President felt himself well represented by Harriman.

I therefore informed Lord Beaverbrook

Prime Minister to Lord Beaverbrook 30 Aug 41

I wish you to go to Moscow with Mr Harriman in order to arrange the long-term supply of the Russian armies This can only be achieved almost entirely from American resources, though we have rubber, boots, etc. A large new installation must be made in the United States Rate of supply is of course limited by the ports of entry and by the dearth of shipping When the metre-gauge railway from Basra to the Caspian has been doubled in the spring this will be an important channel It is our duty and our interest to give the utmost possible aid to the Russians, even at serious sacrifices by ourselves. However, no large flow can begin till the middle or end of 1942, and the main planning will relate to 1943. Your function will be not only to aid in the forming of the plans to help Russia, but to make sure we are not bled white in the process; and even if you find yourself affected by the Russian atmosphere I shall be quite stiff about it here I am sure however you are the man for the job, and the public instinct has already endorsed this.

The decision to send Harriman means that Hopkins does not feel well enough to go himself There is no point in sending Eden at the present time.

As to the date, we are in the hands of the Americans, but we must act in a *bona fide* spirit and not give occasion for anyone to say we have been fooling the Russians or playing for delay It will be necessary to settle the date of the conference in the next few days I do not think a fortnight one way or the other makes any difference, as 90 per cent of its work must relate to long-term projects

As a preliminary to this mission I outlined the position in general terms in a letter to M Stalin.

29 Aug 41

I have been searching for any way to give you help in your splendid resistance pending the long-term arrangements which we are discussing with the United States and which will form the subject of the Moscow Conference Maisky has represented that fighter aircraft are much needed in view of heavy losses We are expediting the 200 Tomahawks about which I telegraphed in my last Our two squadrons should reach Murmansk about September 6, comprising 40 Hurricanes You will, I am sure, realise that fighter aircraft are the foundation of our home defence, besides which we are trying to obtain air superiority in Libya, and also to provide for Turkey so as to bring her on our side Nevertheless, I could send 200 more Hurricanes, making 445 in all, if your pilots could use them effectively. These would be eight- and twelve-gun Hurricanes, which we have found

very deadly in action. We could send 100 now and two batches of 50 soon afterwards, together with mechanics, instructors, spare parts, and equipment, to Archangel Meanwhile arrangements could be made to begin accustoming your pilots and mechanics to the new type if you will send them to air squadrons at Murmansk If you feel this would be useful orders will be given here accordingly, and a full technical memorandum is being telegraphed through our Military Air Mission.

2 The news that the Persians have decided to cease resistance is most welcome Even more than safeguarding the oilfields, our object in entering Persia has been to get another through route to you which cannot be cut For this purpose we must develop the railway from the Persian Gulf to the Caspian and make sure it runs smoothly with reinforced railway material from India. The Foreign Secretary has given to Maisky for you the kind of terms we should like to make with the Persian Government, so as to have a friendly people and not be compelled to waste a number of divisions merely guarding the railway line Food is being sent from India, and if the Persians submit we shall resume payment of the oil royalties now due to the Shah. We are instructing our advance-guards to push on and join hands with your forces at a point to be fixed by the military commanders somewhere between Hamadan and Kasvin. It would be a good thing to let the world know that British and Russian forces had actually joined hands In our view it would be better at this moment for neither of us to enter Teheran in force, as all we want is the through route. We are making a large-scale base at Basra, and we hope to make this a well-equipped warm-water reception port for American supplies, which can thus surely reach the Caspian and the Volga region

3 I must again express the admiration of the British nation for the wonderful fight the Russian armies and Russian people are making against the Nazi criminals General Macfarlane was immensely impressed by all he saw at the front A very hard time lies before us, but Hitler will not have a pleasant winter under our ever-increasing air bombardment I was gratified by the very firm warning Your Excellency gave to Japan about supplies via Vladivostok President Roosevelt seemed disposed, when I met him, to take a strong line against further Japanese aggression, whether in the South or in the North-West Pacific, and I made haste to declare that we would range ourselves upon his side should war come I am most anxious to do more for Chiang Kai-shek than we have hitherto felt strong enough to do. We do not want war with Japan, and I am sure the way to stop it is to confront those people, who are divided and far from sure of themselves, with the prospect of the heaviest combination

On the evening of September 4 M. Maisky called to see me to deliver M. Stalin's reply. This was the first personal message since July.

Premier Stalin to Prime Minister 4 Sept 41

Personal message of Premier Stalin to Premier Churchill

I express thanks for promise *to sell** to Soviet Union a further 200 fighters in addition to the 200 previously promised I do not doubt that the Soviet aviators will succeed in mastering them and putting them into use.

I have however to say that these aeroplanes, which apparently cannot be put into use quickly and at once, but at different periods and in separate groups, will be incapable of effecting serious changes on the Eastern Front They will be unable to effect serious changes not only because of the large scale on which the war is being waged, which necessitates the continuous supply of a large quantity of aeroplanes, but chiefly because the situation of the Soviet forces during the last three weeks has considerably deteriorated in such important areas as the Ukraine and Leningrad.

As a matter of fact, the relative stabilisation at the front which we succeeded in achieving about three weeks ago has broken down during the last week, owing to transfer to Eastern front of thirty to thirty-four fresh German infantry divisions and of an enormous quantity of tanks and aircraft, as well as a large increase in activities of the twenty Finnish and twenty-six Roumanian divisions Germans consider danger in the West a bluff, and are transferring all their forces to the East with impunity, being convinced that no second front exists in the West, and that none will exist Germans consider it quite possible to smash their enemies singly first Russia, then the English

As a result we have lost more than one-half of the Ukraine, and in addition the enemy is at the gates of Leningrad.

These circumstances have resulted in our losing Krivoi Rog iron ore basin and a number of metallurgical works in the Ukraine, we have evacuated one aluminium works on Dnieper river and a further aluminium works at Tikhvin, one motor and two aircraft works in the Ukraine, two motor and two aircraft works at Leningrad, and these works cannot be put into operation in the new localities in less than from seven to eight months.

This has weakened our power of defence and faced the Soviet Union with a mortal menace The question arises how to emerge from this more than unfavourable situation.

I think there is only one means of egress from this situation—to establish in the present year a second front somewhere in the Balkans

* Author's italics.

or France, capable of drawing away from the Eastern Front 30 to 40 divisions, and at the same time of ensuring to the Soviet Union 30,000 tons of aluminium by the beginning of October next and a *monthly* minimum of aid amounting to 400 aircraft and 500 tanks (of small or medium size)

Without these two forms of help the Soviet Union will either suffer defeat or be weakened to such an extent that it will lose for a long period any capacity to render assistance to its Allies by its actual operations on the fronts of the struggle against Hitlerism

I realise that this present message will cause dismay to Your Excellency. But what is one to do? Experience has taught me to look facts in the face however unpleasant they are, and not to fear to express the truth however unwelcome it may be. The Persian affair has in fact turned out pretty well. The joint operations of the British and Soviet forces predetermined the issue. So it will be in future as long as our forces act jointly But Persia is but an episode The issue of the war will not of course be decided in Persia

The Soviet Union, like England, does not desire war with Japan. The Soviet Union does not consider it possible to violate agreements, including its treaty of neutrality with Japan But if Japan violates this agreement and attacks the Soviet Union she will meet with a due rebuff on the part of the Soviet forces.

Finally, allow me to express thanks for the admiration you have expressed at the actions of the Soviet forces, which are waging a bloody war with the robber hordes of Hitlerite bandits for our common cause of liberation.

* * * * *

The Soviet Ambassador, who was accompanied by Mr. Eden, stayed and talked with me for an hour and a half. He emphasised in bitter terms how for the last eleven weeks Russia had been bearing the brunt of the German onslaught virtually alone. The Russian armies were now enduring a weight of attack never equalled before. He said that he did not wish to use dramatic language, but this might be a turning-point in history. If Soviet Russia were defeated how could we win the war? M. Maisky emphasised the extreme gravity of the crisis on the Russian front in poignant terms which commanded my sympathy. But when presently I sensed an underlying air of menace in his appeal I was angered. I said to the Ambassador, whom I had known for many years, "Remember that only four months ago we in this Island did not know whether you were not coming in against us on the German side. Indeed, we thought it quite likely that you

would. Even then we felt sure we should win in the end. We never thought our survival was dependent on your action either way. Whatever happens, and whatever you do, you of all people have no right to make reproaches to us." As I warmed to the topic the Ambassador exclaimed, "More calm, please, my dear Mr Churchill," but thereafter his tone perceptibly changed.

The discussion went over the ground already covered in the interchange of telegrams. The Ambassador pleaded for an immediate landing on the coast of France or the Low Countries I explained the military reasons which rendered this impossible, and that it could be no relief to Russia. I said that I had spent five hours that day examining with our experts the means for greatly increasing the capacity of the Trans-Persian railway I spoke of the Beaverbrook-Harriman Mission and of our resolve to give all the supplies we could spare or carry Finally Mr Eden and I told him that we should be ready for our part to make it plain to the Finns that we would declare war upon them if they advanced into Russia beyond their 1918 frontiers M Maisky could not of course abandon his appeal for an immediate second front, and it was useless to argue further.

* * * * *

I at once consulted the Cabinet upon the issues raised in this conversation and in Stalin's message, and that evening sent a reply.

Prime Minister to Monsieur Stalin 4 Sept 41

I reply at once in the spirit of your message Although we should shrink from no exertion, there is in fact no possibility of any British action in the West, except air action, which would draw the German forces from the East before the winter sets in There is no chance whatever of a second front being formed in the Balkans without the help of Turkey I will, if your Excellency desires, give all the reasons which have led our Chiefs of Staff to these conclusions They have already been discussed with your Ambassador in conference today with the Foreign Secretary and the Chiefs of Staff Action, however well-meant, leading only to costly fiascos would be no help to anyone but Hitler

2 The information at my disposal gives me the impression that the culminating violence of the German invasion is already over and that winter will give your heroic armies a breathing-space This however is a personal opinion

3. About supplies We are well aware of the grievous losses which Russian industry has sustained, and every effort has been and will be made by us to help you I am cabling President Roosevelt to expedite the arrival here in London of Mr Harriman's Mission, and we shall try even before the Moscow Conference to tell you the numbers of aircraft and tanks we can jointly promise to send each month, together with supplies of rubber, aluminium, cloth, etc For our part we are now prepared to send you, *from British production*, one-half of the monthly total for which you ask in aircraft and tanks We hope the United States will supply the other half of your requirements We shall use every endeavour to start the flow of equipment to you immediately

4 We have given already the orders for supplying the Persian railway with rolling-stock to raise it from its present capacity of two trains a day each way up to its full capacity, namely, twelve trains a day each way This should be reached by the spring of 1942, and meanwhile will be steadily improving Locomotives and rolling-stock have to be sent round the Cape from this country after being converted to oil-burners, and the water supply along the railway has to be developed. The first forty-eight locomotives and 400 steel trucks are about to start

5 We are ready to make joint plans with you now Whether British armies will be strong enough to invade the mainland of Europe during 1942 must depend on unforeseeable events It may be possible however to assist you in the extreme North when there is more darkness We are hoping to raise our armies in the Middle East to a strength of three-quarters of a million before the end of the present year, and thereafter to a million by the summer of 1942 Once the German-Italian forces in Libya have been destroyed all these forces will be available to come into line on your southern flank, and it is hoped to encourage Turkey to maintain at the least a faithful neutrality Meanwhile we shall continue to batter Germany from the air with increasing severity and to keep the seas open and ourselves alive

6. In your first paragraph you used the word "sell". We had not viewed the matter in such terms and have never thought of payment Any assistance we can give you would better be upon the same basis of comradeship as the American Lend-Lease Bill, of which no formal account is kept in money

7 We are willing to put any pressure upon Finland in our power, including immediate notification that we will declare war upon her should she continue beyond the old frontiers We are asking the United States to take all possible steps to influence Finland.

I thought the whole matter so important that I sent simul-

taneously the following telegram to the President while the impression was fresh in my mind.

Former Naval Person to President Roosevelt 5 Sept 41

The Soviet Ambassador brought the subjoined message to me and Eden last night, and used language of vague import about the gravity of the occasion and the turning-point character which would attach to our reply Although nothing in his language warranted the assumption, we could not exclude the impression that they might be thinking of separate terms The Cabinet have thought it right to send the attached reply. Hope you will not object to our references to possible American aid. I feel that the moment may be decisive We can but do our best.

With kindest regards . . .

The Soviet appeal was very naturally supported by our Ambassador in Moscow in the strongest terms. To this also I sent what I deemed a reply which would arm him in future arguments

Prime Minister to Sir Stafford Cripps 5 Sept 41

If it were possible to make any successful diversion upon the French or Low Countries shore which would bring back German troops from Russia, we should order it even at the heaviest cost All our generals are convinced that a bloody repulse is all that would be sustained, or, if small lodgments were effected, that they would have to be withdrawn after a few days The French coast is fortified to the limit, and *the Germans still have more divisions in the West than we have in Great Britain,** and formidable air support The shipping available to transport a large army to the Continent does not exist, unless the process were spread over many months The diversion of our flotillas to such an operation would entail paralysis of the support of the Middle Eastern armies and a breakdown of the whole Atlantic traffic It might mean the loss of the Battle of the Atlantic and the starvation and ruin of the British Isles Nothing that we could do or could have done would affect the struggle on the Eastern front From the first day when Russia was attacked I have not ceased to press the Chiefs of Staff to examine every form of action. They are united in the views here expressed

2 When Stalin speaks of a front in the Balkans you should remember that even with the shipping then available in the Mediterranean it took us seven weeks to place two divisions and one armoured brigade in Greece, and that since we were driven out the whole of the Greek and many of the island airfields have been occupied by the

* Author's subsequent italics

German and Italian Air Force and lie wholly outside the range of our fighter protection I wonder that the losses sustained by our shipping and the Fleet in the evacuations of Greece and Crete have been forgotten The conditions are far more adverse now than then, and our naval strength is reduced.

3. When you speak of "a superhuman effort" you mean, I presume, an effort rising superior to space, time, and geography Unfortunately these attributes are denied us.

4 The situation in the West would be entirely different if the French front were in being, for then I have no doubt the invasion of Russia would have been impossible because of the enormous counter-attacks that could be immediately launched No one wants to recriminate, but it is not our fault that Hitler was enabled to destroy Poland before turning his forces against France, or to destroy France before turning them against Russia

5. The 440 fighter aircraft which we have taken from our seriously diminished reserve are no doubt petty compared with the losses sustained by the Russian Air Force. They constitute however a painful and dangerous sacrifice on our part. The attacks by the Royal Air Force both by day and by night are maintained with our utmost strength, and the even character of the fighting above the French coast shows the high degree of air-power still possessed by the Germans in the West

6 Nothing that we could do or could have done can affect the terrible battle proceeding on the Russian front. Arrangements can still be made to provide for the campaign of 1942 The route established through Persia will be opened to the full, and whatever can be found and shipped from British resources, and from American resources which would otherwise have come to Britain, will be sent as fast as possible. I am pressing President Roosevelt to send Mr. Harriman here at the earliest moment in order that the Russians may know what aid they may expect in 1942 to compensate for the losses sustained by their munitions industry and make their plans accordingly. Meanwhile I am sending a reply to Stalin's telegram to-day, and this present message is solely for your own guidance. I sympathise keenly with your feelings as you watch the agony of Russia at close quarters, but neither sympathy nor emotion will overcome the kind of facts we have to face.

In response to one of Stalin's requests I sent on September 9 the following telegram to our Ambassador in Moscow:

Please inform M Stalin from Prime Minister that we are arranging to supply 5,000 tons of aluminium from Canada as soon as arrange-

ments for shipment are completed, and 2,000 tons monthly thereafter. First shipments will be via Vladivostok, unless Persian route would be preferable to Russian Government

On September 15 I received another telegram from Stalin

In my last message I stated the viewpoint of the Soviet Government that the establishment of a second front is the most fundamental remedy for improvement of the situation with regard to our common cause In reply to your message, in which you stress once more the impossibility of a second front at the present moment, I can only reiterate that the absence of a second front simply favours the designs of our common enemy

I have no doubt that the British Government desires to see the Soviet Union victorious and is looking for ways and means to attain this end If, as they think, the establishment of a second front in the West is at present impossible, perhaps another method could be found to render to the Soviet Union an active military help?

It seems to me that Great Britain could without risk land in Archangel twenty-five to thirty divisions, or transport them across Iran to the southern regions of the U S S R In this way there could be established military collaboration between the Soviet and British troops on the territory of the U S S R A similar situation existed during the last war in France The arrangement mentioned would constitute a great help. It would be a serious blow against the Hitler aggression

It is almost incredible that the head of the Russian Government with all the advice of their military experts could have committed himself to such absurdities It seemed hopeless to argue with a man thinking in terms of utter unreality. He continued

I thank you very much for your promise to render us assistance by the monthly deliveries of aluminium, tanks, and aircraft

I can only welcome the intention of the British Government to render this assistance in aluminium, tanks, and aircraft not on the usual commercial basis [but] of comradeship and collaboration I hope the British Government will have ample opportunity of being convinced that the Soviet Government understands how to appreciate the help received from its ally

One remark in connection with the memorandum delivered on September 12 to M Molotov by the British Ambassador in Moscow Sir Stafford Cripps In this memorandum it is said "If the Soviet Government were compelled to destroy its naval vessels at Leningrad in order to prevent their falling into the enemy hands, His Majesty's Government would recognise after the war claims of the Soviet

Government to a certain compensation from His Majesty's Government for the restoration of the vessels destroyed."

The Soviet Government understands and appreciates the readiness of the British Government to make partial compensation for the damage sustained by the Soviet Union in case the Soviet vessels at Leningrad should actually be destroyed. There can be no doubt that such a course will be adopted should the necessity arise. However, the responsibility for this damage would not be Britain's, but Germany's. I think therefore that the damage after the war should be made good at the expense of Germany.

I sent the best answer I could to this message.

Prime Minister to M. Stalin 17 Sept 41

Many thanks for your message. The Harriman Mission has all arrived, and is working all day long with Beaverbrook and his colleagues. The object is to survey the whole field of resources so as to be able to work out with you a definite programme of monthly delivery by every possible route, and thus help repair as far as possible losses of your munitions industries. President Roosevelt's idea is that this plan should cover up till the end of June, but naturally we shall go on with you till victory. I hope the conference may open in Moscow on the 25th of this month, but no publicity should be given till all are safely gathered. The routes and method of travel will be signalled later.

2. I attach great importance to opening the through route from Persian Gulf to Caspian, not only by railway, but by a great motor road, in the making of which we hope to enlist American energies and organisation. Lord Beaverbrook will be able to explain the whole scheme of supply and transportation, he is on the closest terms of friendship with Harriman.

3. All possible theatres in which we might effect military co-operation with you have been examined by the Staffs. The two flanks, north and south, certainly present the most favourable opportunities. If we could act successfully in Norway the attitude of Sweden would be powerfully affected, but at the moment we have neither the forces nor the shipping available for this project. Again, in the south the great prize is Turkey, if Turkey can be gained another powerful army will be available. Turkey would like to come with us, but is afraid, not without reason. It may be that the promise of considerable British forces and supplies of technical material in which the Turks are deficient will exercise a decisive influence upon them. We will study with you any other form of useful aid, the sole object being to bring the maximum force against the common enemy.

4 I entirely agree that the first source from which the Russian Fleet should be replenished should be at the expense of Germany Victory will certainly give us control of important German and Italian naval vessels, and in our view these would be most suitable for repairing losses to the Russian Fleet

* * * * *

On October 25 I replied to the Ambassador about the fantastic proposals of twenty-five to thirty British divisions being landed at Archangel or Basra.

Prime Minister to Sir Stafford Cripps (Moscow) 25 Oct 41

You were of course right to say that the idea of sending "twenty-five to thirty divisions to fight on the Russian front" is a physical absurdity It took eight months to build up ten divisions in France, across the Channel, when shipping was plentiful and U-boats few. It is with the greatest difficulty that we have managed to send the 50th Division to the Middle East in the last six months. We are now sending the 18th Division by extraordinary measures All our shipping is fully engaged, and any saving can only be made at the expense of our vital upkeep convoys to the Middle East or of ships engaged in carrying Russian supplies The margin by which we live and make munitions of war has only narrowly been maintained Any troops sent to Murmansk now would be frozen in darkness for the winter.

2 Position on the southern flank is as follows Russians have five divisions in Persia, which we are willing to relieve. Surely these divisions should defend their own country before we choke one of the only supply lines with the maintenance of our forces to the northward. To put two fully armed British divisions from here into the Caucasus or north of the Caspian would take at least three months They would then only be a drop in the bucket.

* * * * *

Meanwhile the Beaverbrook-Harriman talks in London were completed, and on September 22 the Anglo-American Supply Mission set off in the cruiser *London* from Scapa Flow through the Arctic Sea to Archangel, and thence by air to Moscow. Much depended upon them I furnished Lord Beaverbrook with general instructions, which were approved by my War Cabinet colleagues on the Defence Committee. This document, which is of importance, will be found among the Appendices. In addition I gave Lord Beaverbrook the following letter to deliver personally to Stalin

21 Sept 41

My dear Premier Stalin,

The British and American Missions have now started, and this letter will be presented to you by Lord Beaverbrook. Lord Beaverbrook has the fullest confidence of the Cabinet, and is one of my oldest and most intimate friends He has established the closest relations with Mr Harriman, who is a remarkable American, wholeheartedly devoted to the victory of the common cause. They will lay before you all that we have been able to arrange in much anxious consultation between Great Britain and the United States

President Roosevelt has decided that our proposals shall, in the first instance, deal with the monthly quotas we shall send to you in the nine-months period from October 1941 to June 1942, inclusive. You have the right to know exactly what we can deliver month by month, in order that you may handle your reserves to the best advantage.

The American proposals have not yet gone beyond the end of June 1942, but I have no doubt that considerably larger quotas can be furnished by both countries thereafter, and you may be sure we shall do our utmost to repair as far as possible the grievous curtailments which your war industries have suffered through the Nazi invasion I will not anticipate what Lord Beaverbrook will have to say upon this subject

You will realise that the quotas up to the end of June 1942 are supplied almost entirely out of British production, or production which the United States would have given us under our own purchases or under the Lend-Lease Bill. The United States were resolved to give us virtually the whole of their exportable surplus, and it is not easy for them within that time to open out effectively new sources of supply. I am hopeful that a further great impulse will be given to the production of the United States, and that by 1943 the mighty industry of America will be in full war swing For our part, we shall not only make substantially increased contributions from our own existing forecast production, but also try to obtain from our people an extra further effort to meet our common needs You will understand however that our Army and its supply which has been planned is perhaps only one-fifth or one-sixth as large as yours or Germany's Our first duty and need is to keep open the seas, and our second duty is to obtain decisive superiority in the air These have the first claims upon the man-power of our 44,000,000 in the British Islands We can never hope to have an army or army munition industries comparable to those of the great Continental military Powers. None the less, we will do our utmost to aid you

General Ismay, who is my personal representative on the Chiefs of Staff Committee, and is thoroughly acquainted with the whole field

of our military policy, is authorised to study with your commanders any plans for practical co-operation which may suggest themselves

If we can clear our western flank in Libya of the enemy we shall have considerable forces, both air and army, to co-operate upon the southern flank of the Russian front.

It seems to me that the most speedy and effective help would come if Turkey could be induced to resist a German demand for the passage of troops, or, better still, if she would enter the war on our side You will, I am sure, attach due weight to this

I have always shared your sympathy for the Chinese people in their struggle to defend their native land against Japanese aggression Naturally we do not want to add Japan to the side of our foes, but the attitude of the United States, resulting from my conference with President Roosevelt, has already enforced a far more sober view upon the Japanese Government I made haste to declare on behalf of His Majesty's Government that should the United States be involved in war with Japan Great Britain would immediately range herself on her side I think that all our three countries should, as far as possible, continue to give aid to China, and that this may go to considerable lengths without provoking a Japanese declaration of war

There is no doubt that a long period of struggle and suffering lies before our peoples, but I have great hopes that the United States will enter the war as a belligerent, and if so I cannot doubt that we have but to endure to conquer

I am hopeful that as the war continues the great masses of the peoples of the British Empire, the Soviet Union, the United States, and China, which alone comprise two-thirds of the entire human race, may be found marching together against their persecutors, and I am sure the road they travel will lead to victory

With heartfelt wishes for the success of the Russian armies and the ruin of the Nazi tyrants,

Believe me,

Yours sincerely,

WINSTON S. CHURCHILL

* * * * *

On September 28 our Mission arrived in Moscow. Their reception was bleak and discussions not at all friendly. It might almost have been thought that the plight in which the Soviets now found themselves was our fault The Soviet generals and officials gave no information of any kind to their British and American colleagues. They did not even inform them of the basis on which Russian needs of our precious war materials had

been estimated. The Mission was given no formal entertainment until almost the last night, when they were invited to dinner at the Kremlin It must not be thought that such an occasion among men preoccupied with the gravest affairs may not be helpful to the progress of business. On the contrary, many of the private interchanges which occur bring about that atmosphere where agreements can be reached But there was little of this mood now, and it might almost have been we who had come to ask for favours

One incident preserved by General Ismay in an apocryphal and somewhat lively form may be allowed to lighten the narrative. His orderly, a Royal Marine, was shown the sights of Moscow by one of the Intourist guides. "This," said the Russian, "is the Eden Hotel, formerly Ribbentrop Hotel. Here is Churchill Street, formerly Hitler Street. Here is the Beaverbrook railway station, formerly Goering railway station Will you have a cigarette, comrade?" The Marine replied, "Thank you, comrade, formerly bastard!" This tale, though jocular, illustrates none the less the strange atmosphere of these meetings.

* * * * *

In contrast with all this my American contacts were increasingly cordial

Former Naval Person to President Roosevelt 22 Sept 41

Your cheering cable [to Mr Harriman] about tanks arrived when we were feeling very blue about all we have to give up to Russia. The prospect of nearly doubling the previous figures encouraged everyone The Missions have started in great goodwill and friendship

Kindest regards

Prime Minister to Mr Harry Hopkins 25 Sept 41

Now that our Missions are on their way to Moscow, it may be profitable to survey the field covered by the discussions in London

2 The offers which we both are making to Russia are necessary and worth while There is no disguising the fact however that they make grievous inroads into what is required by you for expanding your forces and by us for intensifying our war effort You know where the shoe will pinch most in the next nine months

We must both bend our efforts to making good the gaps unavoidably created We here are unlikely to be able to expand our programmes much above what is already planned I earnestly hope that you will be able to raise the general level of yours by an immediate short-term effort.

3. You will have heard that good progress was made in the discussions on overall requirements for victory A joint memorandum giving estimated eventual requirements, as far as we can foresee them, was drawn up, and is being taken back to Washington by General Embick. Further work on this will have to be done in Washington, and an estimate of what is required to maintain Russian resistance will have to be added Would it be possible to try to reach in the second half of 1942 the output now planned for the first half of 1943? If such an attempt were successful it would not only lay the foundations for the victory programme, but would help to meet more speedily than otherwise the short-term requirements of us both It would also enable greater help to be given to the Russians in the second half of 1942

On October 2 I heard from the President about American plans for future tank and aircraft production. From July 1942 to January 1943 the United States would allocate 1,200 tanks a month to England and Russia together, and during the next six months 2,000 a month. The American Mission in Moscow had been told to promise the Russians 400 tanks a month as from July 1, and an increased number after that date after discussion with our representatives.

The United States would be able to fulfil this increased commitment as her tank production was being doubled, to reach a figure of over 2,500 tanks a month.

The President also informed me that he had undertaken to supply Russia with 3,600 front-line aircraft between July 1, 1942, and July 1, 1943, over and above those already agreed upon

* * * * *

In the end a friendly agreement was reached in Moscow. A protocol was signed setting out the supplies which Great Britain and the United States could make available to Russia within the period October 1941 to June 1942. This involved much derangement of our military plans, already hampered by the tormenting shortage of munitions. All fell upon us, because we not only gave our own production, but had to forgo most important munitions which the Americans would otherwise have sent to us Neither the Americans nor ourselves made any promise about the transportation of these supplies across the difficult and perilous ocean and Arctic routes. In view of the insulting reproaches which Stalin uttered when we suggested that the convoys should not sail till the ice had receded, it should be noted that all we

guaranteed was that the supplies would "be made available at British and United States centres of production". The preamble of the protocol ended with the words, "Great Britain and the United States will give aid to the transportation of these materials to the Soviet Union, and will help with the delivery"

On October 4 Lord Beaverbrook telegraphed to me:

> The effect of this agreement has been an immense strengthening of the morale of Moscow The maintenance of this morale will depend on delivery . . .
>
> I do not regard the military situation here as safe for the winter months I do think that morale might make it safe.

We gave our treasures, and they were accepted by those who were fighting for their lives

Prime Minister to Lord Beaverbrook (at Moscow) 3 Oct 41

Heartiest congratulations to you and all The unity and success proclaimed is of immense value No one could have done it but you Now come home and make the [one group undecipherable] stuff Impossible to restrain the feeling of optimism here

Prime Minister to Lord Beaverbrook (at sea) 6 Oct 41

We have not lost an hour in making good your undertakings I have sent the following telegram to Stalin

Prime Minister to Premier Stalin 6 Oct 41

I am glad to learn from Lord Beaverbrook of the success of the Tripartite Conference at Moscow. *Bis dat qui cito dat* We intend to run a continuous cycle of convoys, leaving every ten days. Following are on the way and arrive Archangel October 12

20 heavy tanks
193 fighters (pre-October quota)

Following will sail October 12, arriving October 29:

140 heavy tanks.
100 Hurricanes
200 Bren carriers.
200 anti-tank rifles and ammunition
50 2-pounder guns and ammunition

Following will sail October 22nd

200 fighters
120 heavy tanks.

Above shows the total of the October quota of aircraft, and 280 tanks will arrive Russia by November 6 The October quota of Bren

carriers, anti-tank rifles, and 2-pounder anti-tank guns will all arrive in October Twenty tanks have been shipped to go via Persia, and fifteen are about to be shipped from Canada via Vladivostok. The total tanks shipped will therefore be three hundred and fifteen, which is nineteen short of our full quota This number will be made up in November. The above programme does not take into account supplies from United States.

2 In arranging this regular cycle of convoys we are counting on Archangel to handle the main bulk of deliveries I presume this part of the job is in hand Good wishes.

Although General Ismay was fully empowered and qualified to discuss and explain the military situation in all its variants to the Soviet leaders, Beaverbrook and Harriman decided not to complicate their task by issues on which there could be no agreement. This aspect was not therefore dealt with in Moscow. Informally the Russians continued to demand the immediate establishment of the Second Front, and seemed quite impervious to any arguments showing its impossibility. Their agony is their excuse Our Ambassador had to bear the brunt.

It was already late autumn. On October 2 the Central Army Group of von Bock renewed its advance on Moscow, with its two armies moving direct on the capital from the south-west and a Panzer group swinging wide on either flank. Orel on October 8 and a week later Kalinin on the Moscow-Leningrad road were taken. With his flanks thus endangered and under strong pressure from the central German advance, Marshal Timoshenko withdrew his forces to a line forty miles west of Moscow, where he again stood to fight. The Russian position at this moment was grave in the extreme. The Soviet Government, the Diplomatic Corps, and all industry that could be removed were evacuated from the city over five hundred miles farther east to Kuibyshev. On October 19 Stalin proclaimed a state of siege in the capital and issued an Order of the Day: "Moscow will be defended to the last." His commands were faithfully obeyed. Although Guderian's armoured group from Orel advanced as far as Tula, although Moscow was now three parts surrounded and there was some air bombardment, the end of October brought a marked stiffening in Russian resistance and a definite check to the German advance

* * * * *

I continued to sustain our Ambassador in his many trials and hardships and his lonely, uphill task.

Prime Minister to Sir Stafford Cripps (Kuibyshev) 28 Oct 41

I fully sympathise with you in your difficult position, and also with Russia in her agony. They certainly have no right to reproach us They brought their own fate upon themselves when, by their pact with Ribbentrop, they let Hitler loose on Poland and so started the war They cut themselves off from an effective second front when they let the French Army be destroyed If prior to June 22 they had consulted with us beforehand, many arrangements could have been made to bring earlier the great help we are now sending them in munitions We did not however know till Hitler attacked them whether they would fight, or what side they would be on We were left alone for a whole year while every Communist in England, under orders from Moscow, did his best to hamper our war effort. If we had been invaded and destroyed in July or August 1940, or starved out this year in the Battle of the Atlantic, they would have remained utterly indifferent. If they had moved when the Balkans were attacked much might have been done, but they left it all to Hitler to choose his moment and his foes That a Government with this record should accuse us of trying to make conquests in Africa or gain advantages in Persia at their expense or being willing to "fight to the last Russian soldier" leaves me quite cold If they harbour suspicions of us it is only because of the guilt and self-reproach in their own hearts.

2. We have acted with absolute honesty We have done our very best to help them at the cost of deranging all our plans for rearmament and exposing ourselves to heavy risks when the spring invasion season comes. We will do anything more in our power that is sensible, but it would be silly to send two or three British or British-Indian divisions into the heart of Russia to be surrounded and cut to pieces as a symbolic sacrifice. Russia has never been short of man-power, and has now millions of trained soldiers for whom modern equipment is required. That modern equipment we are sending, and shall send to the utmost limit of the ports and communications

3. Meanwhile we shall presently be fighting ourselves as the result of long-prepared plans, which it would be madness to upset We have offered to relieve the five Russian divisions in Northern Persia, which can be done with Indian troops fitted to maintain internal order but not equipped to face Germans I am sorry that Molotov rejects the idea of our sending modest forces to the Caucasus. We are doing all we can to keep Turkey a friendly neutral and prevent her being tempted by German promises of territorial gain at Russia's expense Naturally we do not expect gratitude from men undergoing such

frightful bludgeonings and fighting so bravely, but neither need we be disturbed by their reproaches There is of course no need for you to rub all these salt truths into the Russian wounds, but I count upon you to do your utmost to convince Russians of the loyalty, integrity, and courage of the British nation.

4 I do not think it would be any use for you and Macfarlane [head of our military mission to Russia] to fly home now I could only repeat what I have said here, and I hope I shall never be called upon to argue the case in public. I am sure your duty is to remain with these people in their ordeal, from which it is by no means certain that they will not emerge victorious Any day now Hitler may call a halt in the East and turn his forces against us

Here we may for the present leave the unfolding of the Hitler-Stalin drama Winter now cast its shield before the Russian armies

* * * * *

My wife felt very deeply that our inability to give Russia any military help disturbed and distressed the nation increasingly as the months went by and the German armies surged across the steppes. I told her that a Second Front was out of the question and that all that could be done for a long time would be the sending of supplies of all kinds on a large scale. Mr Eden and I encouraged her to explore the possibility of obtaining funds by voluntary subscription for medical aid. This had already been begun by the British Red Cross and St John's, and my wife was invited by the Joint Organisation to head the appeal for "Aid to Russia". At the end of October, under their auspices, she issued her first appeal

There is no one in this country whose heart has not been deeply stirred by the appalling drama now going on in Russia We are amazed at the power of the Russian defence and at the skill with which it is conducted We have been moved to profound admiration for the valour, the tenacity, and the patriotic self-sacrifice of the Russian people And above all, perhaps, we have been shaken with horror and pity at the vast scale of human suffering. . . .

Among the supplies we have already sent to Russia are 53 emergency operating outfits, 30 blood-transfusion sets, 70,000 surgical needles of various kinds, and 1,000,000 tablets of M and B. 693 This drug is the wonderful new antiseptic which has revolutionised the treatment of many diseases caused by germs In addition to these, we have sent half a ton of phenacetin and about seven tons of absorbent cotton-wool. And this is of course only a beginning. . . .

We have declared our aim to be £1,000,000, and we have made a good start. Already the fund totals £370,000, and it is only twelve days old Our gracious and beloved King and Queen, in sending a further £3,000 to the Red Cross last week, expressed a wish that £1,000 of their joint gift should be allocated to the Aid to Russia Fund They have set a characteristic example

Much depends upon employers, and I would like to say this wherever the employer provides the facilities to get the fund started the workers come gladly with their weekly pennies Thus, from the King and Queen to the humblest wage-earner and cottage-dweller, we can all take part in this message of goodwill and compassion Between the cottage and the palace, between those who can spare only pennies and a great imaginative benefactor like Lord Nuffield—who can send a cheque for £50,000—there are millions of people who would like to share in this tribute to the Russian people

A generous response was at once forthcoming For the next four years she devoted herself to this task with enthusiasm and responsibility. In all nearly eight million pounds were collected by the contributions of rich and poor alike. Many wealthy people made munificent donations, but the bulk of the money came from the weekly subscriptions of the mass of the nation. Thus through the powerful organisation of the Red Cross and St John's and in spite of heavy losses in the Arctic convoys medical and surgical supplies and all kinds of comforts and special appliances found their way in unbroken flow through the icy and deadly seas to the valiant Russian armies and people.

CHAPTER XXVI

PERSIA AND THE MIDDLE EAST

Summer and Autumn 1941

Anglo-Soviet Requirements from Persia – Need for Joint Action – General Wavell's Strong View – Mr. Eden's Minute of July 22 – My Caution and Inquiries – Report of the Lord President's Committee – Decision to Act with Russia – Opposing Forces – The Fighting Begins – The Shah Submits – Conditions Imposed on the Persian Government – Abdication of the Shah and Accession of His Young Son – Anglo-Soviet Accords – Development of the New Supply Route to Russia – Convoys to Malta – The German View of Mediterranean Fighting – Need for Surface Forces at Malta – Birth of "Force K" – Design for a Mobile Reserve – I Appeal to the President – His Prompt Response – American Transports for Two British Divisions – His Aid in the Atlantic – Growing Strength of the Army of the Nile – Anxieties of the Chiefs of Staff – My Note of September 18 – Priority for the Desert Battle – My Telegram to General Smuts of September 20 – My Note on Battle Tactics – Restoration of Artillery – Guns versus Tanks – "Flak" Protection for Ground Troops – Relations of Army and Air Commanders in Battle.

THE need to pass munitions and supplies of all kinds to the Soviet Government and the extreme difficulties of the Arctic route, together with future strategic possibilities, made it eminently desirable to open the fullest communication with Russia through Persia The Persian oilfields were a prime war factor An active and numerous German mission had installed itself in Teheran, and German prestige stood high. The suppression of the revolt in Iraq and the Anglo-French occupation of Syria, achieved as they were by narrow margins, blotted out Hitler's Oriental plan. We welcomed the opportunity of joining hands with the Russians and proposed to them a joint campaign.

I was not without some anxiety about embarking on a Persian war, but the arguments for it were compulsive. I was very glad that General Wavell should be in India to direct the military movements

On July 11, 1941, the Chiefs of Staff were asked by a Cabinet Committee to consider the desirability of joint military action in conjunction with the Russians in Persia in the event of the Persian Government refusing to expel the German community at present employed in that country On July 18 they recommended that we should adopt a firm attitude in dealing with the Persian Government. This view was also strongly held by General Wavell, who had telegraphed the War Office on the previous day in the following terms

The complaisant attitude it is proposed to adopt over Iran appears to me incomprehensible It is essential to the defence of India that Germans should be cleared out of Iran now. Failure to do so will lead to a repetition of events which in Iraq were only just countered in time It is essential we should join hands with Russia through Iran, and if the present Government is not willing to facilitate this it must be made to give way to one which will To this end the strongest possible pressure should be applied forthwith while issue of German-Russian struggle is in doubt .

On the 21st I replied to General Wavell·

Cabinet will consider Persian situation to-morrow I am in general agreement with your view, and would like to give Persians an ultimatum from Britain and Russia to clear out the Germans without delay or take the consequences Question is what forces we have available in case of refusal

The Chiefs of Staff advised that action should be confined to the south, and that we should need at least one division, supported by a small air component, to secure the oilfields. This force would have to come from Iraq, where we had already insufficient troops even for internal security. They concluded that if a force had to be sent into Persia during the next three months it would have to be replaced from the Middle East.

In a minute of July 22 the Foreign Secretary sent me his view of the situation:

I have been giving further consideration this morning to the problem of pressure upon Iran The more I examine the possibilities of doing

this the clearer it becomes that all depends upon our ability to concentrate a sufficient force in Iraq to protect the Iranian oilfields It would be highly dangerous even to begin economic pressure until we were militarily in a position to do this, for the Shah is fully conscious of the value of the oilfields to us, and if he sees trouble with us brewing he is likely to take the first step

Reports, apparently reliable, have reached us of Iranian concentrations on the Russian frontier, on the Iraqi frontier, and in the area of the oilfields. I hope that every effort will be made to strengthen our forces in Iraq at the earliest moment If we can do this before the Russians suffer a severe reverse in the South there is a reasonable chance of imposing our will on the Iranians without resort to force But we must not move diplomatically ahead of our military strength or we shall court disaster

There is a further factor which increases the need for the early reinforcement of Iraq Should Russia be defeated we shall have to be ready to occupy the Iranian oilfields ourselves, for in such an eventuality German pressure on the Iranians to attempt to turn us out would be irresistible

* * * * *

I was not satisfied that this Persian operation had received the co-ordinated planning essential to its eventual success On July 31 therefore on the eve of my voyage to Placentia I gave instructions that a special committee should be set up under the Lord President for this purpose.

I cannot feel that this operation, involving war with Persia in the event of non-compliance, has been studied with the attention which its far-reaching character requires While agreeing as to its necessity, I consider that the whole business requires exploring, concerting, and clamping together, as between the Foreign Office and the War Office, and between the Middle East Command and the Government of India. We must not take such grave steps without having clear-cut plans for the various eventualities For instance, what happens if the Persian troops around and about the Ahwaz oilfields seize all Anglo-Persian Oil Company employees and hold them as hostages? What attitude is expected from the Bakhtiari and the local inhabitants? What happens to British residents in Teheran? Is there any danger of the oil-wells being destroyed rather than that they should fall into our possession? We must be very careful not to commit an atrocity by bombing Teheran. Are our available forces strong enough to occupy the Ahwaz oilfields in the face of local and official Persian opposition? How far

north do we propose to go? What aerodromes are available? How is the railway to be worked if the Persians refuse to help?

These and many other questions require to be thought out. It would be well if the Lord President with the Secretaries of State for Foreign Affairs, War, and India reviewed the whole matter and reported to the War Cabinet during the early part of next week. Meanwhile all necessary action of a preparatory character should proceed. I am in favour of the policy, but it is of a very serious character, and should not be undertaken until the possible consequences and alternative situations have been thoroughly surveyed and careful, detailed plans made and approved.

I was sure that the similarity of the names, Iran and Iraq, would lead to confusion

Prime Minister to Foreign Secretary, Sir Edward Bridges, and General Ismay 2 Aug 41

In all correspondence, it would be more convenient to use the word "Persia" instead of "Iran", as otherwise dangerous mistakes may easily occur through the similarity of Iran and Iraq In any cases where convenient, the word "Iran" may follow in brackets after Persia.

Formal correspondence with the Persian Government should of course be conducted in the form they like.

And later

Prime Minister to Minister of Information 29 Aug 41

Do try to blend in without causing trouble the word Persia instead of Iran

I am indeed glad to learn that the Persian Government have now (1949) adopted officially this change.

During my absence at sea this committee reported to me by telegram the results of their work, which had meanwhile been approved by the War Cabinet It was clear from their message of August 6 that the Persians would not meet our wishes regarding the expulsion of German agents and residents from their country, and that we should have to resort to force The next stage was to co-ordinate our plans, diplomatic and military, with those of the Russians. On August 13 Mr. Eden received Mr. Maisky at the Foreign Office, and the terms of our respective Notes to Teheran were agreed. This diplomatic move was to be our final word Mr Maisky told the Foreign Secretary that "after the presentation of the memoranda the Soviet Government would be ready to take military action, but they would not

take such action except in conjunction with us." On receiving this news I minuted (August 19), "I think the Russian view is reasonable, and we ought to move with them while there is time"

We were now committed to action. In the event of stronger Persian resistance than had been anticipated we had to consider the possibility of further reinforcement of the Middle East area On August 24, on the eve of our planned advance into Persia, I sent the following minute to the Chiefs of Staff·

It is essential that more reinforcements should be set in motion eastwards at once. Is it true that the 10th Indian Division has not got a British battalion to each brigade? If so, three battalions of British troops should be sent to join General Quinan by the fastest possible route. As General Auchinleck proposes to remain inactive in the Western Desert for many weeks, he should be directed to move larger forces eastwards than are at present arranged At least the equivalent of one extra division, including the three British battalions aforesaid, should be set in motion now If all goes well they can easily be countermanded Let me know what forces are likely to be available in Egypt Where is the last brigade of the 50th Division? Surely Cyprus is in no immediate danger

In view of the recalcitrance of the Persian Government, General Quinan, who was commanding in Iraq, had been ordered on July 22 to be ready to occupy the oil refinery at Abadan and the oilfields, together with those 250 miles farther north near Khanaqin. The joint Anglo-Soviet Note of August 17 met with an unsatisfactory reply, and the date for the entry of British and Russian forces into Persia was fixed for the 25th. The Imperial forces in the Abadan sector, under General Harvey, comprised the 8th Indian Infantry Division; in the Khanaqin sector, under General Slim, the 9th Armoured Brigade, one Indian regiment of tanks, four British battalions, and one regiment of British artillery. The supporting air forces consisted of one Army Co-operation, one fighter, and one bomber squadron The first objective was the capture of the oilfields, the second, to advance into Persia and, with Russian co-operation, to control Persian communications and secure a through route to the Caspian. Opposition on the southern front could be expected from two Persian divisions, with sixteen light tanks, and in the north from three divisions.

The capture of the Abadan refinery was made by an infantry brigade, which embarked in naval craft at Basra and landed at dawn on August 25. The majority of the Persian forces were surprised but escaped in lorries. Some street fighting took place and a few Persian naval craft were captured. At the same time other troops of the 8th Division captured the port of Khurramshahr from the landward side, and a force was sent north towards Ahwaz. As our troops were approaching Ahwaz news of the Shah's "Cease fire" order was received, and the Persian general ordered his troops back to barracks In the north the oilfields were easily captured, and General Slim's force pushed thirty miles along the road towards Kermanshah. They were now faced however with the formidable Pai-tak Pass, which if held by determined troops would have been a definite obstacle. To deal with this a column was sent to turn the position from the south After overcoming some opposition these troops reached Shahabad, behind the Persian defence, on August 27. This movement, combined with some bombing, proved too much for the defenders of the pass, who abandoned their positions hastily. The advance on Kermanshah was resumed, and on the 28th the enemy were found again to be drawn up on a position across the road. But just as the attack was about to be launched a Persian officer arrived with a white flag and the campaign was over Our casualties were 22 killed and 42 wounded.

Thus ended this brief and fruitful exercise of overwhelming force against a weak and ancient state. Britain and Russia were fighting for their lives. *Inter arma silent leges* We may be glad that in our victory the independence of Persia has been preserved.

* * * * *

Persian resistance had collapsed so swiftly that our contacts with the Kremlin became again almost entirely political. Our main object in proposing the joint Anglo-Russian campaign in Persia had been to open up the communications from the Persian Gulf to the Caspian Sea We hoped also, by this direct co-operation of British and Soviet forces, to establish more intimate and friendly relations with our new Ally. We were of course both agreed on the expulsion from Persia or capture of all Germans and the wiping out of German influence and intrigues in Teheran and elsewhere. The deep and delicate questions about oil,

OPERATIONS IN PERSIA

Communism, and the post-war future of Persia lay in the background, but need not, it seemed to me, impede comradeship and goodwill.

Prime Minister to General Ismay, for C O S Committee 27 Aug 41

Now that it seems that the Persian opposition is not very serious, I wish to know what are the plans for pushing on and joining hands with the Russians and making sure we have the railway in working order in our hands We do not simply want to squat on the oilfields, but to get through communication with Russia We have made certain proposals to the Shah, but these may be rejected, or the Russians may not agree to them What therefore are the plans to join hands

with the Russians, and what are the troop movements foreseen in the next week by our different forces?

Prime Minister to General Wavell 30 Aug 41

I am so glad the Persian adventure has prospered There is now no reason why you should not return home as you proposed. I am deeply interested in your railway projects, which are being sedulously examined here.

Everyone here is delighted you have had another success.

General Wavell's visit to London was however shelved by the need for his presence in Teheran I also hoped that, speaking Russian fluently as he did, he might become an important link with the Soviet High Command.

Prime Minister to General Wavell 1 Sept 41

I agree with Chiefs of Staff that your presence in Teheran at present would be helpful to Bullard [the British Minister] in dealing with military requirements and for ensuring that Russian influence is kept within reasonable bounds

Prime Minister to Sir R. Bullard (Teheran) 3 Sept 41

We cannot tell how the war in these regions will develop, but the best possible through route from the Persian Gulf to the Caspian will be developed at the utmost speed and at all costs in order to supply Russia It is very likely that large British forces will be operating in and from Persia in 1942, and certainly a powerful Air Force will be installed

We hope it will not be necessary, in the present phase at any rate, to have an Anglo-Russian occupation of Teheran, but the Persian Government will have to give us loyal and faithful help and show all proper alacrity if they wish to avoid it At the present time we have not turned against the Shah, but unless good results are forthcoming his misgovernment of his people will be brought into the account Although we should like to get what we want by agreement with the Persian Government and do not wish to drive them into active hostility, our requirements must somehow be met, and it ought to be possible for you to obtain all the facilities we require, bit by bit, by using the leverage of a possible Russian occupation of Teheran There is no need to fear undue Russian encroachments, as their one supreme wish will be to get the through route for American supplies

Prime Minister to Premier Stalin 16 Sept 41

I am most anxious to settle our alliance with Persia and to make an intimate efficient working arrangement with your forces in Persia There are in Persia signs of serious disorder among tribesmen and of

breakdown of Persian authority. Disorder, if it spreads, will mean wasting our divisions holding down these people, which again means burdening the road and railway communications with movements and supplies of aforesaid divisions, whereas we want to keep the lines clear and improved to the utmost in order to get supplies through to you Our object should be to make the Persians keep each other quiet while we get on with the war. Your Excellency's decisive indications in this direction will speed forward the already favourable trend of our affairs in this minor theatre

* * * * *

Prime Minister to Lord Beaverbrook (on Mission to Russia) 21 Sept 41

General Wavell proposes to go to Tiflis via Baghdad on his return to India. He speaks Russian, and I contemplate his directing, or possibly, if the forces grow large enough, commanding, the right hand we shall give to the Russians in and about the Caspian basin in the forthcoming campaign It is therefore important that he should confer with high Russian military authorities on the whole position of their southern flank and in Persia.

You may bring this into your discussions, and see that the most is made of it

Prime Minister to Premier Stalin 12 Oct 41

Our only interests in Persia are, first, as a barrier against German penetration eastward, and, secondly, as a through route for supplies to the Caspian basin If you wish to withdraw the five or six Russian divisions for use on the battle-front we will take over the whole responsibility of keeping order and maintaining and improving the supply route I pledge the faith of Britain that we will not seek any advantage for ourselves at the expense of any rightful Russian interest during the war or at the end In any case, the signing of the Tripartite Treaty is urgent to avoid internal disorders growing, with consequent danger of choking the supply route General Wavell will be at Tiflis on October 18, and will discuss with your generals any questions which you may instruct them to settle with him

Words are useless to express what we feel about your vast heroic struggle We hope presently to testify by action.

* * * * *

All arrangements with the Russians were smoothly and swiftly agreed. The conditions imposed on the Persian Government were, principally, the cessation of all resistance, the ejection of Germans, neutrality in the war, and the Allied use of Persian communications for the transit of war supplies to Russia The

further occupation of Persia was peacefully accomplished. British and Russian forces met in amity, and Teheran was jointly occupied on September 17, the Shah having abdicated on the previous day in favour of his gifted twenty-two-year-old son. On September 20 the new Shah, under Allied advice, restored the Constitutional Monarchy, and his father shortly afterwards went into comfortable exile and died at Johannesburg in July 1944. Most of our forces withdrew from the country, leaving only detachments to guard the communications, and Teheran was evacuated by both British and Russian troops on October 18. Thereafter our forces, under General Quinan, were engaged in preparing defences against the possible incursion of German armies from Turkey or the Caucasus, and in making administrative preparations for the large reinforcements which would arrive if that incursion seemed imminent

The creation of a major supply route to Russia through the Persian Gulf became our prime objective. With a friendly Government in Teheran ports were enlarged, river communications developed, roads built, and railways reconstructed Starting in September 1941, this enterprise, begun and developed by the British Army, and presently to be adopted and completed by the United States, enabled us to send to Russia, over a period of four and a half years, five million tons of supplies.

* * * * *

We can now return to the dominant theatre of the Mediterranean.

Both sides used the summer to reinforce the armies in the Libyan desert. For us the replenishment of Malta was vital The loss of Crete deprived Admiral Cunningham's fleet of a fuelling base near enough to bring our protecting sea-power into action. The possibilities of a seaborne assault on Malta from Italy or Sicily grew, though, as we now know, it was not until 1942 that Hitler and Mussolini approved such a plan. Enemy air bases both in Crete and Cyrenaica menaced the convoy route from Alexandria to Malta so seriously that we had to depend entirely on the West for the passage of supplies In this task Admiral Somerville, with Force H from Gibraltar, rendered distinguished service The route the Admiralty had judged the more dangerous became the only one open. Fortunately at this time the demands

of his Russian invasion compelled Hitler to withdraw his air force from Sicily, which gave a respite to Malta and restored to us the mastery in the air over the Malta Channel. This not only helped the approach of convoys from the West, but enabled us to strike harder at the transports and supply ships reinforcing Rommel.

Two considerable convoys were fought through successfully The passage of each was a heavy naval operation. In July a convoy of six supply ships reached Malta, and seven empty vessels were brought out Two nights later the Italians delivered their only heavy attack upon Valetta harbour, with about twenty E-boats and eight midget submarines. The harbour defences, manned largely by Maltese, destroyed almost the whole attacking force in spite of its daring. In September another convoy of nine transports came through, with the loss of only one, under a very strong escort, comprising the battleships *Prince of Wales* and *Rodney*, the *Ark Royal*, five cruisers, and eighteen destroyers. Besides these main convoys, a number of other supply ships reached the island In all thirty-two ships out of thirty-four came in safely after much peril and gallant conduct This nourishment enabled the fortress not only to live but to strike During the three months ending with September forty-three Axis ships, of 150,000 tons, besides sixty-four smaller craft, were sunk on the African route by British aircraft, submarines, and destroyers, acting from Malta In October over 60 per cent. of Rommel's supplies were sunk in passage This may well have played a decisive part in the Desert struggle of 1941.

* * * * *

In September, as we now know, the German admiral serving with the Italian High Command reported:

> Now, as ever, the British Fleet dominates the Mediterranean. . . The Italian Fleet has been unable to prevent operations by the enemy's naval forces, but, in co-operation with the Italian Air Force, it did prevent the Mediterranean route being used for regular British convoy traffic
>
> The most dangerous British weapon is the submarine, especially those operating from Malta In the period covered there were thirty-six submarine attacks, of these nineteen were successful . . Owing to the weakness of the Italian Air Force in Sicily, the threat from Malta to the German-Italian sea route to North Africa has increased

in the last few weeks . . . Moreover, almost daily attacks on Tripoli are made from Malta Recently the Italian seaports in Sicily have been visited by British aircraft more frequently than before. . . The formations of the Italian Air Force now stationed in Sicily and North Africa are insufficient to stop the British Air Force and naval operations . I again issue an urgent warning against an under-estimate of the dangers arising from the situation at sea in the Mediterranean.

* * * * *

My anxieties about the Desert delay and the reinforcements reaching Rommel were not allayed by the success of the measures described, and I urged even greater efforts upon the Admiralty. I desired specially that a new surface force should be based upon Malta

Prime Minister to First Sea Lord. General Ismay to see 22 Aug 41

Will you please consider the sending of a flotilla, and, if possible, a cruiser or two, to Malta, as soon as possible.

2 We must look back to see how much our purpose has been deflected There was the plan, considered vital by you, of blocking Tripoli harbour, for which *Barham* was to be sacrificed There was the alternative desperate proposal by the C.-in-C. Mediterranean to bombard it, which was afterwards effected without the loss of a man or a single ship being damaged There was the arrival of Mountbatten's flotilla in Malta All this took place several months ago. It would be well to get out the dates How is it that the urgency of this matter has declined? How is it that we are now content to watch what we formerly thought unendurable, although it is going forward on a bigger scale against us?

3 The reason why Mountbatten's flotilla was withdrawn from Malta was less because of the danger there than for the needs of the Cretan affair, in which the flotilla was practically destroyed. We have thus lost sight of our purpose, on which there was such general agreement, and in which the Admiralty was so forward and strong

4 Meanwhile three things have happened First the Malta defences have been markedly strengthened in the air and A.A. guns, and the German air forces have been drawn away to some extent to Russia Secondly, the Battle of the Atlantic has turned sharply in our favour, we have more anti-U-boat craft, and we are to expect a substantial relief through American action west of the 26th meridian affecting our destroyers and corvettes Thirdly, General Auchinleck is disinclined to move before November

5 Are we then to wait and allow this ever-growing reinforcement, mainly of Italians and of supplies, to pile up in Libya? If so, General

Auchinleck will be no better off, relatively to the enemy, when at last he considers himself perfectly ready than he is now

6 I shall be glad to hear from you over the week-end, and we could discuss it at the Staff meeting on Monday night

The policy was accepted, though time was needed to bring it into force In October a striking force known as "Force K", comprising the cruisers *Aurora* and *Penelope* and the destroyers *Lance* and *Lively*, was formed at Malta. This presently rendered important and timely service

* * * * *

I had at this time wider aims. In war it is always desirable, though not always possible, to plan ahead The lull which followed Auchinleck's decision to delay his offensive and the successful Persian campaign offered an opportunity From every point of view I desired at this time to reinforce the East to the utmost shipping limit. I could not tell what would happen in the impending Desert battle, nor how the Russian front in the Caucasus would hold. There was always, besides, the menace of Japan, with all its potential peril to Australia and New Zealand I wished to have two more British divisions moving eastward If these could be rounding the Cape about the end of the year we should have something substantial in hand for unknowable contingencies. Here would be, in fact, that mobile reserve, that "mass of manœuvre", which alone could give superior options in the hour of need. I had learnt about this in a hard school where lessons are often only given once.

It therefore became my ambition to make assurance doubly sure by throwing in another two divisions for the Desert army, as well as to have a mobile reserve for other needs or chances in the Middle East. For this we had no shipping All that could be spared from the Atlantic struggle was employed in convoys round the Cape or from Australia or India Even Leathers could offer no solution But I felt sure, from the increasing cordiality in my correspondence with the President, that he would lend me some fast American transports. Nor, as will be seen, was I wrong. This could not of course operate for a good many months, but I longed to have something in hand moving through the Indian Ocean for one or other of the various disagreeable emergencies which might come upon us

Prime Minister to C I G S and Minister of Shipping 22 Aug 41

Let me have a scheme prepared that we could consider Monday night, for sending two more complete infantry divisions to the Middle East, at the earliest moment Let me know what shipping will be required Some of the lorries can surely go direct from the United States from the great numbers now being loaded When these figures have been supplied I will ask President Roosevelt for the loan of this shipping for this particular purpose, and I dare say I can get it

As a modification of the above, the divisions could go to Halifax or New York, and re-embark there upon American ships. The Minister of Shipping should throw himself into this plan, and let me have a report from all angles. I am convinced that by the end of November we should have two more divisions in that theatre, though whether they would operate in Persia, Iraq, or the Middle East Command must depend upon circumstances Let me also have the time-table of the movement of the 1st Armoured Division to the Middle East

The intricate details were thrashed out with Lord Leathers and the Chiefs of Staff

Prime Minister to General Ismay 26 Aug 41

Pray make arrangements with Lord Leathers and the War Office Movements Branch to further this reinforcement in the light of our discussion last night Ingenuity and contrivance must be used to minimise the demand I must make upon the President The request will be for one round voyage of a certain number of ships from America to this country, to the Middle East, and back to the United States They ought to have them at their disposal again in January or in February If *Normandie* could be taken over transhipment might be possible at Trinidad, which would release earlier some of the smaller liners Arrangements for reception in the Middle East, involving transhipment to smaller vessels, must also in that case be considered

Let me have the best plan possible, and focus the outstanding points of difficulty, so that I can myself preside over the final conference. Imports may be cut

I now appealed to the President.

Former Naval Person to President 1 Sept 41

The good results which have been so smoothly obtained in Persia puts us in touch with the Russians, and we propose to double, or at least greatly improve, the railway from the Persian Gulf to the Caspian, thus opening a sure route by which long-term supplies can reach the

Russian reserve positions in the Volga basin Besides this there is the importance of encouraging Turkey to stand as a solid block against a German passage to Syria and Palestine. In view of both these important objectives, I wish to reinforce the Middle East armies with two regular British divisions, 40,000 men, in addition to the 150,000 drafts and units which we are carrying ourselves between now and Christmas We cannot however manage to find the whole of the shipping by ourselves. Would it be possible for you to lend us twelve United States liners and twenty United States cargo ships manned by American crews from early October till February? These would come carrying cargo to United Kingdom ports under any flag arrangement convenient If they could arrive here early in October we would send them forward as additions to our October and November convoys to the Middle East

2 I know, Mr President, from our talks that this will be difficult to do, but there is a great need for more British troops in the Middle East, and it will be an enormous advantage if we can hold Turkey and sustain Russia, and by so doing bar further advance eastward by Hitler. It is quite true that the loan of these liners would hamper any large dispatch of United States forces to Europe or Africa, but, as you know, I have never asked for this in any period we can reasonably foresee in the near future

3 It is for you to say what you would require in replacements of ships sunk by enemy action Hitherto we have lost hardly anything in our well-guarded troop convoys I am sure this would be a wise and practical step to take at the present juncture, and I shall be very grateful if you can make it possible

This produced a most helpful and generous response "I am sure," said the President on the 6th, "we can help with your project to reinforce the Middle East army. At any rate I can now assure you that we can provide transport for twenty thousand men." He said that these ships would be United States naval transports manned by Navy crews, and that the American Neutrality Act permitted public ships of the Navy to go to any port The United States Maritime Commission would besides this arrange to place ten or twelve additional ships in the North Atlantic to run between American ports and Great Britain, so that we could release ten or twelve of our British cargo ships for the voyage to the Middle East. "I am loaning you," he said, "our best transport ships. Incidentally I am delighted you are going to reinforce the Middle East"

Former Naval Person to President Roosevelt 7 Sept 41

I am indeed grateful for your prompt response to my appeal about Middle East shipping, and very glad you like the policy. I am also planning to send seventeen more squadrons of fighter aircraft to the same theatre

2 In my telegram about supply help for Russia, I meant to add "If they keep fighting it is worth it, if they don't we don't have to send it" We are hitting ourselves very hard in tanks, but this argument decided me

3. We all await with profound interest your promised statement for Monday I am speaking Tuesday in the House.

At the same time the President brought into operation the agreements which he had made with me at Placentia to intervene more directly in the Atlantic.

* * * * *

I now proceeded to use the President's invaluable gift of transports to the best advantage

Prime Minister to Colonel Hollis, for C O S Committee 17 Sept 41

All possible must be done to accelerate the movement and turn-round of the fast American transports in order to secure to us the benefits of a second trip The sailing of these transports from America must not be delayed for the sake of carrying the Canadian armoured troops To carry them is convenient, but not essential The delay of reloading of these ships in U K ports from October 23 to November 15 cannot be accepted An evolution should be made of putting No. 1 extra division on board in the shortest time. At least a fortnight should be saved on this if it can be reconciled with convoy movements

2 The Field State of the Army of the Nile is good This is not surprising considering they are taking nearly five months' rest from all fighting The sixty British battalions average 880, and the forty-five artillery regiments are only short by 9 per cent It is inconceivable that more than a quarter of this artillery can be heavily engaged in continuous bombardment during the next four months Drafts for the artillery cannot therefore have high priority The six Tank Transporter and sixteen Standard M T companies deserve a high place This applies also to the naval relief, to the Indian reinforcements and to the artillery, etc , for the two new Indian divisions in Iraq 10,000 to 20,000 drafts for the infantry can be worked in as convenient, and there may be some specialist items in the R.A.S.C. (Royal Army Service Corps) field which are urgently needed Let us remember, however, that nothing can now get there before

"Crusader". Malaya can wait, and West Africa can be fitted in or not as convenient The problem we have to settle is one of priority.

3. The supreme object to be aimed at is to send British divisions Nos. 1 and 2 to the Middle East in accordance with the proposal made to President Roosevelt. Spreading the movement over another month or two, especially if we get the American second trip, will surely provide for all the desiderata. There is no question of saying that anything *never* goes.

4 I look to the Air Ministry to make the existing squadrons in Middle East go forward with their expansion to 62½ squadrons

5 I should be grateful if these points could be woven into a revised programme of reinforcement for the Middle East, and I shall be very glad to discuss any difficulties outstanding with the C.O S. Committee to-night or to-morrow night

* * * * *

Although the Chiefs of Staff had agreed to the dispatch of the two additional divisions to the East, there were misgivings Various dangers were pressed upon me. I still assigned priority to Auchinleck's offensive.

Prime Minister to Colonel Hollis, for C O S. Committee 18 Sept 41

It is our duty to take a view about whether serious fighting will take place or not in the interval before all convoys arrive It should not be assumed that the risk of this is evenly spread over the whole period, and that at any given moment we must provide the maximum addition of effective fighting strength It would seem that the only serious fighting to be expected is our long-delayed offensive in the Western Desert, for which nothing more [*i e*, not yet dispatched] can now arrive in time However, should this offensive succeed, very great strain will be thrown upon the transport (R A S C) services, including specialised units, either to hold the ground gained or to make an ambitious leap forward to the west In these circumstances I am disposed to meet, if possible, the R A S C requirements, which at first I thought excessive 13,500 are provided in the C O S minute, 4,000 more could be obtained by delaying the five infantry battalions promised to India in the October convoy There seems more urgency in the former than in the latter case. India is no doubt very thin, but on this new showing they will still receive 7,900—namely, three battalions plus drafts for expansion This is a considerable infusion of British troops Therefore I wish the five battalions, 4,000, to be delayed till the New Year, and the 4,000 passages saved devoted to reinforcement of the R.A.S.C. for Middle East. It should be explained to India

at Headquarters that the delay is only a short one and that the expansion programme should proceed

2 It is difficult to see from what quarter and by what line of advance other "serious fighting" will develop in the period covered by our convoys to the end of 1941 and their arrival by the end of February 1942 In this five-month period it is not likely that Turkey will open the door to a German invasion of Syria, and still less likely that, if she refuses, a way through Asia Minor can be forced by the enemy Unless there is a complete collapse of Russia, the Germans will be chary of embarking on a major war with Turkey, costing perhaps another million men. Therefore I cannot see the risk of invasion of Syria, Palestine, etc., from the north as likely to be operative before the winter is over—say, March This is also the view which has been taken in various C O S papers

3 The only other route by which serious attack can fall upon us is through the Caucasus and across the Caspian This presupposes the mastery of the Black Sea, in which the Russians have at present an overwhelming naval superiority, involving the capture of Sebastopol and also of Novorossisk, the subsequent traversing of the Caucasus from Batum to Baku, or alternatively a movement north of the Black Sea and through the Caucasus from north to south This would be a prohibitive winter operation. A third possibility would be a German march round the Caspian, forcing the line of the Volga and destroying the last reserve armies of Russia This is plainly an operation impossible to complete within the next six months, unless we assume the surrender or collapse of Russia Unless this happens, the Caspian, strongly held by Russian naval forces, must remain a great shield to the northward

4 Therefore, in order to bring about the "serious fighting" suggested, Turkey and/or Russia must yield in the period mentioned, or the Germans must force their way from Anatolia or through the Caucasus or round the north of the Caspian A sensible, practical view of the admitted uncertainties of war should exclude all these possibilities before the spring of 1942

5. I cannot therefore accept the theory of continuous even risk from day to day, and I consider that we are justified in relying upon no "serious fighting" other than in the Western Desert in this theatre till March 1942, unless of course we choose to take the offensive In these circumstances I feel free to give proper weight to the major political-strategic issues involved in the broad decision to send two additional divisions in the van of the reinforcements

6 What are these considerations? First, the moral need of our having a substantial, recognisable British stake and contribution in the

Middle East, and freeing ourselves from the imputation, however unjust, of always using other people's troops and blood Secondly, the effect produced upon Turkey by our being able to add two divisions to the forces already mentioned in the Staff conversations, thus appreciably increasing the chances of influencing Turkish action Thirdly, the basis of my appeal to the President, which I do not wish upset Fourthly, the possibility that these two divisions may move in by Basra, in order to give an effective right hand to the Russian reserve forces to the north of the Caspian

The various alternatives will remain open to us in the three months during which these divisions will be in transit . .

* * * * *

As usual I kept Smuts informed

Prime Minister to General Smuts 20 Nov 41

Am sending two divisions and about 80,000 other reinforcements to Middle East between now and Christmas To help in this I have had to beg loan of American transports from Roosevelt, which has been kindly given If we can clear up Cyrenaica we shall have substantial forces to give right hand to Russia in Caspian region and/or influence action Turkey. This last regard as our most immediate prize Hope at least to procure Turkish resistance to German demands for passage through Anatolia. Meanwhile Beaverbrook and Harriman are leaving for Moscow. We have had to make terrible sacrifices in tanks and aircraft and other munitions so sorely needed If Russians stay in it is worth it. If they quit we don't have to send it. Hope to reach total of twenty-five divisions from Caspian to Nile during 1942 I doubt very much whether Russians would be wise to press us to cumber the Trans-Persian railway, which we are rapidly developing, with movement and supply of the few divisions we could actually send into Russia. All these matters will be discussed at Moscow and studied by our Staffs Will keep you informed

* * * * *

All our minds were constantly turned to the Desert I may recur to the note I had written on the voyage to Placentia in the first week of August about the impending Desert operations I showed my draft to the Chief of the Imperial General Staff and to General Brooke, Commander-in-Chief of our Home Forces They both expressed their full concurrence, subject to a few minor alterations not affecting the principles involved.

I circulated this paper to various high commanders as from

October 7, 1941. The ruling given in paragraph 4 about the military and air commands was made operative by telegrams to General Auchinleck and Air Marshal Tedder, defining their relation and affirming the supremacy of the military commander over the use to be made of the Air Force, both during a battle and in its preparatory phase. This rule prevailed henceforward in the British Service, and was later independently developed by the United States

A NOTE BY THE MINISTER OF DEFENCE

Renown awaits the Commander who first in this war restores Artillery to its prime importance upon the battlefield, from which it has been ousted by heavily armoured tanks For this purpose three rules are necessary:

(*a*) Every field gun or mobile A A gun should carry a plentiful supply of solid armour-piercing tracer shot thus every mobile gun will become an anti-tank gun, and every battery possess its own anti-tank protection

(*b*) When guns are attacked by tanks they must welcome the occasion. The guns should be fought to the muzzle. Until the approaching tanks are within close range batteries should engage them at a rapid rate of fire with H.E * During this phase the tracks of the tanks are the most vulnerable target At close quarters solid A P † shot should be fired; this should be continued so long as any of the detachments survive The last shot should be fired at not more than ten yards' range It may be that some gun crews could affect to be out of action or withhold their fire, so as to have the superb opportunity of firing A P at the closest range.

(*c*) It may often happen as a result of the above tactics, especially when artillery is working with tanks, that guns may be overrun and lost Provided they have been fought to the muzzle, this should not at all be considered a disaster, but, on the contrary, the highest honour to the battery concerned The destruction of tanks more than repays the loss of field guns or mobile A A. guns. The Germans have no use for our captured guns, as they have a plethora of their own types, which they prefer. Our own supplies are sufficient to make good the deficiencies

The principle must be established by the Royal Artillery that it is not good enough for tanks to attack a group of

* High explosive
† Armour-piercing

> British batteries properly posted, and that these batteries will always await their attack in order to destroy a good proportion of tanks Our guns must no more retreat on the approach of tanks than Wellington's squares at Waterloo on the approach of hostile cavalry.

2. The Germans made a practice from the beginning of their invasion of France, and have since developed it consistently, of taking what they call "flak" artillery with their most advanced parties and interspersing all their armoured and supply columns with it We should do the same. The principle should be that all formations, whether in column or deployed, should be provided with a quota of A.A guns for their protection. This principle is applicable to columns of all kinds, which should be freely supplied with machine-guns, as well as with Bofors as the supply of these weapons becomes more plentiful.

3 250 Bofors are now being sent to General Auchinleck for him to use in the best possible way with all his columns, and at all the assembly points of his troops or refuelling stations required in the course of offensive operations.

Nevermore must the Army rely solely on aircraft for its protection against attack from the air. Above all, the idea of keeping standing patrols of aircraft over moving columns should be abandoned It is unsound to "distribute" aircraft in this way, and no air superiority will stand any large application of such a mischievous practice.

4 Upon the Military Commander-in-Chief in the Middle East announcing that a battle is in prospect, the Air Officer Commanding-in-Chief will give him all possible aid irrespective of other targets, however attractive Victory in the battle makes amends for all, and creates new favourable situations of a decisive character The Army Commander-in-Chief will specify to the Air Officer Commanding-in-Chief the targets and tasks which he requires to be performed, both in the preparatory attack on the rearward installations of the enemy and for air action during the progress of the battle It will be for the Air Officer Commanding-in-Chief to use his maximum force for these objects in the manner most effective This applies not only to any squadrons assigned to Army Co-operation permanently, but also to the whole air force available in the theatre.

5 Bombers may, if required, be used as transport or supply machines to far-ranging or outlying columns of troops, the sole object being the success of the military operation As the interests of the two Commanders-in-Chief are identical it is not thought that any difficulty should arise. The Air Officer Commanding-in-Chief would naturally lay aside all routine programmes and concentrate on bombing the

rearward services of the enemy in the preparatory period. This he would do not only by night, but by day attacks with fighter protection In this process he will bring about a trial of strength with the enemy fighters, and has the best chance of obtaining local command of the air What is true of the preparatory period applies with even greater force during the battle All assembly or refuelling points or marching columns of the enemy should be attacked by bombers during daylight with strong fighter protection, thus bringing about air conflicts not only of the highest importance in themselves, but directly contributing to the general result.

General Montgomery was not one of those to whom the paper was sent, and it was not till after I met him in Tripoli in 1943, after the victory of the Eighth Army at Alamein eighteen months later, that I chanced to show him a copy "It is as true now," he wrote, "as when it was written " Renown by then had certainly attended his restoration of artillery to its position upon the battlefield.

CHAPTER XXVII

THE MOUNTING STRENGTH OF BRITAIN

Autumn 1941

Review of Our Military Position – My Minute of October 4 – Need to Preserve the Military Efficiency of the Home Forces – Restrictions upon Air Defence of Great Britain – Immense Advance in Our Air Fighter Strength – Limitations on Our Bombing Offensive – Army Strength My Directive of October 9 – The Problem of Man-power, My Memorandum of November 6 – I Question the Invasion Menace – A Plan for the Home Guard – General Embick's Mission and Report – My Comments Thereupon – Our Atlantic Life-line – The President's "Shoot First" Order, September 11 – Telegram to General Smuts – Greater Safety of the Convoys – Sinking of the "Reuben James", October 31 – Our Air Offensive in the Bay of Biscay – A Submarine Surrenders to an Aeroplane – The Sea Routes to Russia – Our First Convoy to Russia, August 12 – The Focke-Wulf Mastered – We Develop the Escort Carrier – Our Foremost U-Boat Killer – U-Boats in the Mediterranean – War on the German Surface Raiders – British Power in the Autumn of 1941 – Table of Shipping Losses.

AS the winter approached the strength and organisation of the Army in 1942 had to be reviewed in a new light of circumstances We could not be sure that Germany had not by now constructed many varieties of landing and tank-landing craft for invasion. We ourselves were doing this on an ever-increasing scale. Surely her need was even greater. We could not be certain in October that, having smitten and hurled back the Russian armies in the first phase of his onslaught, Hitler might not suddenly halt and take up a winter position as he was

first advised to do by his host of generals Having made preparations in good time, might he not switch back twenty or thirty divisions across his lateral roads for a spring invasion of Britain? It was not even known whether he had not sufficient good troops still remaining in the Western theatre. It also seemed possible that the German Air Force could very rapidly be made to shift its weight back again from the East to the West At any rate, we must be ready for such a sudden change. Sir Alan Brooke, Commander-in-Chief of the Home Forces, was responsible for representing this vital need He was quite right to set forth the claims of Home Defence, and this was certainly done by him and his powerful staff in a most vigorous fashion. They demanded large numbers of men, and confronted us with grisly reductions of fighting units if these were not forthcoming It fell on me as Minister of Defence with the Chiefs of Staff to decide the true apportionment of our already heavily strained man-power and woman-power.

Prime Minister to Secretary of State for War and C I G S 4 Oct 41

I was greatly disturbed by the statement of C -in-C Home Forces that he would have to reduce his standard divisional formations to 11 fully mobile divisions, apart from 3 in Ireland, by the spring This destruction of more than half our Army would be intolerable, and the Cabinet should certainly have been warned by you before any such situation even approached the limits of discussion

2 There is no sort of warrant or necessity for such mutilation of the Army Apart from active operations, the impending losses in the winter through normal wastage cannot exceed 60,000 men, and an intake of more than that number has been arranged The 26 standard divisions and the 9 county divisions and the 7 armoured divisions, including the Guards (forming), are not on any account to be reduced If new units are required easement may be found in the 4 or 5 independent brigades and the 12 unbrigaded battalions

3 Please investigate the Commander-in-Chief's statement at once, and give me your report upon it In the meantime the following rule must be observed No existing divisional formation is to be reduced in standard or converted to a different form without my express authority, obtained in each case beforehand in good time. I must also be informed of any new units you wish to create in substitution for existing units, and any important changes in the establishments, whether in personnel or equipment Let me have a list of any that are now in progress or in prospect

At the same time I did all in my power to uphold the efficiency of the Home Forces, and to ward off from them the many specious and plausible demands that were made upon them by the civil departments.

Prime Minister to Secretary of State for War 5 Oct 41

I do not approve the idea of using the Army to dig land drains or for other work of this character during the winter It is not the case that the Air Force have a similar scheme. Their proposal is to send 8,000 skilled technicians of the R.A F., in uniform, on loan to the factories for about six months Their case is entirely different from that of the Army, and I think their plan is a good one.

2. Military considerations should rule your thoughts, and you should not yield to the weak elements in the country who do not understand that quality, efficiency, smartness of bearing, high discipline, are the vital characteristics of an armed force that may have to meet the Germans

3 In any emergency like heavy air raids or the harvest the Army should of course give immediate and generous aid. But we shall want all our men in the spring, and every unit in the highest state of readiness There may even be operational demands before the spring Your responsibility is to have them all ready like fighting cocks, in accordance with the directions which I give as Minister of Defence Parades, exercises, and manœuvres, the detailed development of the individual qualities of sections, platoons, and companies, continual improvement and purging of the officers of middle rank, courses and competitions of all kinds, should occupy all ranks. There should be plenty of marching with bands through towns and industrial districts The monotony should be relieved by more generous leave being granted both to officers and men Facilities for transport to the towns for amusement should be elaborated, as a little fun in the counterpart of the hard training which must be exacted. We need regular units of the highest type, and not a mud-stained militia that is supposed to turn out and take a hand in the invasion should it come. I pointed out to the House last week the dangers of yielding to soft, easy, and popular expedients, and the dark places into which we have been led thereby

* * * * *

The main source from which our man-power for mobile fighting troops could be sustained was of course the anti-aircraft batteries and other air defence units under General Pile's command The fear of renewed air attacks on an even larger scale had led to demands for actual increases in our Air Defence. I

resisted these tendencies, and began again to argue the case against the invasion danger, which nevertheless always lurked in my mind.

Prime Minister to Colonel Hollis, for C O S. Committee

AIR DEFENCE OF GREAT BRITAIN

Directive by the Prime Minister

October 8, 1941

We cannot state how severe the air raids will be this winter or what the danger of invasion will be in the spring. These two vultures will hang above us to the end of the war We must be careful that our precautions against them do not unduly weaken our Mobile Field Army and other forms of our offensive effort

2 It would seem reasonable to fix the total of Air Defence of Great Britain (A D G B) personnel at its present figure of 280,000, plus any additional recruitment of women that they can attract This will give them at least 30,000 more than what we got through the air raids with last year. The proposed addition of 50,000, [making] a total of 330,000, cannot be supplied Many more high- and low-ceiling guns are coming to hand now. Some of these might be mounted in additional batteries, but unless A.D G.B. can contrive by praiseworthy thought and ingenuity to man them within the limits of the personnel mentioned they will have to be kept in care and maintenance.

3 Having regard to the parity now existing between the British and German Air Forces, and the Russian factor, it is unlikely that the enemy will make heavy and continuous air attacks on Great Britain in combination with or as a prelude to invasion He would need to save up for that . . .

4 A D G.B. must therefore become as flexible as possible and keep static defence at a minimum For this purpose as large a proportion as possible of A D.G B should be in a mobile form General Pile should prepare schemes for giving the utmost reinforcement of mobile flak to General Brooke's army. Sometimes they must take their guns from the site In other cases a duplicate set of mobile guns may be made available . Thus we can shift the weight from one leg to the other as the need requires

6 Above all, we cannot go on adding gun to gun and battery to battery as the factories turn them out, and so get an ever larger proportion of our limited trained man-power anchored to static and passive defence.

7 General Pile should be assisted in every way to prepare schemes for increasing the mobile flak of the Army and reinforcing the coast

batteries, while at the same time, without any addition (apart from women) to his numbers (280,000), maintaining the indispensable minimum which served us so well last year

8. The Chiefs of Staff Committee is requested to advise, and consider what proposals should be made to give effect to the foregoing principles

*   *   *   *   *

Our air fighter strength had now made an immense advance, and not only gave increased security against invasion but opened other prospects to strategic planning.

Prime Minister to C.A.S. 1 Sept 41

I was delighted to see in the last return that we have practically 100 fighter squadrons (99½) in the Metropolitan Air Force The vast changes in the war situation arising from the arrival of Russia as a combatant, and the improvement of our position in the Middle East, including Persia, make me inclined to a large further reinforcement of the Middle East to influence Turkey and/or sustain Russia on her southern flank My thought is turning to the dispatch of as many as twenty fighter squadrons complete to the Iraq-Persia and Syrian theatre It may be these squadrons would come into action against German bombers and dive-bombers while defending territories under our control or that of our Allies, and that we should then reproduce the favourable conditions of fighting which enabled us to inflict such heavy losses upon the Germans when they made their air attack upon us last year in the Battle of Britain This might be a more paying business than the very hard struggles in France, which of course we must continue as occasion serves. This force would have to go by long sea route round the Cape, and could not come into action till the end of the year It should take with it the effective organisation of one or two control centres (like No 11 Group), so that the full power of the fighter defence could be manifested It would not leave the country till the invasion period is over It is of course additional to all you have in hand for the East.

I shall be obliged if you will have this situation examined in all its bearings, and let me know about numbers of personnel required, what demands on shipping, and what you think of this important transference of war power Such forces operating north and south of the Caspian would be a gigantic contribution to Russia's war effort, and allied with bomber forces might long dispute the eastward advance of the Germans The Indian Air Force would come into action in the same areas.

I never ceased to do my utmost to increase and stimulate the production of bombers, which lagged far behind even the most moderate claims of their partisans.

Prime Minister to Lord President of the Council 7 Sept 41

I have been deeply concerned at the slow expansion of the production of heavy and medium bombers. In order to achieve a first-line strength of 4,000 medium and heavy bombers, the Royal Air Force require 22,000 to be made between July 1941 and July 1943, of which 5,500 may be expected to reach us from American production The latest forecasts show that of the remaining 16,500 only 11,000 will be got from our own factories If we are to win the war we cannot accept this position, and, after discussion with the Minister of Aircraft Production and Sir Charles Craven, I have given directions for a plan to be prepared for the expansion of our effort to produce a total of 14,500 in the period instead of 11,000. This can only be done by a great concentration of effort and by making inroads on our other requirements Materials and machine tools should not present an insuperable difficulty, and there will be enough pilots to fly the aircraft The crux of the matter will be the provision of sufficient skilled labour to set up the machines and to train great numbers of fresh men and women This skilled labour can only be found at the expense of other projects

I have asked the Minister of Aircraft Production to draw up a plan for this new programme and to state the demands he must make for its fulfilment I have also asked him to make suggestions as to how these demands could be met. I have asked the Secretary of State for Air to adjust his programme for the expansion of the Royal Air Force to fit the new production programme This will give some easement in the preparation of airfields, the manufacture and filling of bombs, etc., since the full first-line strength will be achieved rather later than is at present planned.

I wish you to take the plan which the Minister of Aircraft Production will produce, to convene such Ministers as may be concerned, and to prepare for my consideration proposals for implementing the plan It will be necessary to show what the effect on our other activities will be It may be necessary to slow up the Admiralty programme or to reduce the flow of equipment for the Army Above all, it will certainly be necessary drastically to curtail the building of the great number of new factories, which are now in the early stages of construction, or which are about to be started, and which absorb so much labour, not only in their erection but in the fabrication of the materials they require You should call for a return of all such factories, showing the object for which they are intended, the date when they were started

and the state of their progress, and the year and month in which they are likely to come into operation. Other long-term projects must give way to the overriding need for more bomber aircraft.

I regard this subject as a major factor in the war at the present time, and I should like to receive your preliminary proposals in a fortnight Thereafter you must watch over the progress of the scheme, and I will hold periodic conferences to stimulate action.

* * * * *

At the same time I was forced to cool down the claims which some of our most trusted officers put forward in their natural ardour. Coastal Command was particularly hard hit by the cuts which we were forced to make in its expected scale of expansion My task at this time was to fight on all the administrative fronts at once, and amid conflicting needs to advise the Cabinet upon the right solution.

Prime Minister to C.A.S. 7 Oct 41

We all hope that the air offensive against Germany will realise the expectations of the Air Staff Everything is being done to create the bombing force desired on the largest possible scale, and there is no intention of changing this policy. I deprecate however placing unbounded confidence in this means of attack, and still more expressing that confidence in terms of arithmetic It is the most potent method of impairing the enemy's morale we can use at the present time. If the United States enters the war it would have to be supplemented in 1943 by simultaneous attacks by armoured forces in many of the conquered countries which were ripe for revolt. Only in this way could a decision certainly be achieved. Even if all the towns of Germany were rendered largely uninhabitable it does not follow that the military control would be weakened or even that war industry could not be carried on.

2 The Air Staff would make a mistake to put their claim too high. Before the war we were greatly misled by the pictures they painted of the destruction that would be wrought by air raids. This is illustrated by the fact that 250,000 beds were actually provided for air-raid casualties, never more than 6,000 being required. This picture of air destruction was so exaggerated that it depressed the statesmen responsible for the pre-war policy, and played a definite part in the desertion of Czechoslovakia in August 1938. Again, the Air Staff, after the war had begun, taught us sedulously to believe that if the enemy acquired the Low Countries, to say nothing of France, our position would be impossible owing to the air attacks. However, by not paying too

much attention to such ideas we have found quite a good means of keeping going.

3. It may well be that German morale will crack, and that our bombing will play a very important part in bringing the result about But all things are always on the move simultaneously, and it is quite possible that the Nazi war-making power in 1943 will be so widely spread throughout Europe as to be to a large extent independent of the actual buildings in the homeland

4. A different picture would be presented if the enemy's Air Force were so far reduced as to enable heavy accurate daylight bombing of factories to take place. This however cannot be done outside the radius of fighter protection, according to what I am at present told One has to do the best one can, but he is an unwise man who thinks there is any *certain* method of winning this war, or indeed any other war between equals in strength The only plan is to persevere

I shall be delighted to discuss these general topics with you whenever you will.

* * * * *

I now arrived at general conclusions about the strength and character of the Army at which we should aim for 1942, as well as upon the man-power measures necessary to sustain it. I obtained the agreement of the authorities concerned to the following programme and consequential measures which were enforced.

ARMY STRENGTH

Directive by the Minister of Defence

October 9, 1941

We have now in the United Kingdom (including Northern Ireland) 26 standard motorised infantry divisions and the Polish Division, total 27, well equipped with guns and transport, with an average strength of about 15,500 men, with 10 corps organisations and corps troops (61,000). There are 8 county divisions for work on the beaches, averaging about 10,000, without artillery other than coast artillery and with little transport We have 5 armoured divisions and 4 Army tank brigades; the whole comprising 14 armoured brigades (with 5 divisional elements), 4 brigade groups with artillery and transport, 7 infantry brigades, and 12 un-brigaded battalions; furthermore, 8 aerodrome defence battalions and the 100,000 men in the Home Defence and Young Soldiers battalions

2. It is proposed to transform this organisation into 27 standardised divisions (hereinafter to be called Field Divisions), plus the Polish Division (which will have an armoured element), total 28, and to

increase the armoured forces to 7 armoured divisions with 8 Army tank brigades, the whole comprising 22 armoured brigades (with 7 divisional elements). The 4 brigade groups are to remain Instead of the 8 county divisions and other units mentioned above, there will be 13 brigades, plus the equivalent of 2 Ally brigades, and 8 "detached battalions", the foregoing constituting the Home Field Army, which can thus be reckoned the equivalent of 45 divisions In addition, there will still be the 8 aerodrome battalions and the Home Defence and Young Soldiers battalions.

3 The object of these changes is to increase the war-power of the Army, particularly in armoured troops, and to provide additional field, anti-tank, and flak artillery, including that required for 5 additional Indian divisions, to be formed during 1942 For this last purpose also it will be necessary to provide up to 17 British battalions for the Indian Army

4. No reduction in the force mentioned in para. 2 is compatible with our war needs To maintain it during the next nine months, *i e*, to July 1, 1942, and also to maintain the drafts for the Army of the Middle East, for India, and for our garrisons in Iceland, Gibraltar, Malta, and Hong Kong, etc, with a normal wastage of 50,000 a quarter, there must be provided an intake to the Army of 278,000 men. Measures are being taken to provide this. The Army also requires at least 142,000 more women above the 63,000 already recruited.

I then set forth in detail our forces at home and abroad. The conclusion shows the strength of our military resources and deployment before the supreme events which brought the United States into the war The directive continues

10 If we estimate our Army in divisions or their equivalent, the general layout for 1942 is as follows

United Kingdom	45
Anti-aircraft divisions	12
Army of the Nile	16
Army of India in Iraq and Persia	9
Army of India at home	8
Fortress garrisons	7
Native African divisions	2
Grand total	99

11 It is our duty to develop, equip, and maintain all these units during 1942

* * * * *

Besides manning the forces, heavier demands were now put forward on behalf of the expanding munitions factories and workshops. If the country's morale was to be sustained the civil population must also be well nourished. Mr. Bevin at the Ministry of Labour and National Service used all his knowledge and influence as an experienced trade union leader to gather the numbers required It was already obvious that man-power was the measure alike of our military and economic resources. Mr. Bevin, as the supplier of labour, and Sir John Anderson, Lord President of the Council, together devised a system which served us in good stead up to the end of the war, and enabled us to mobilise for war work at home or in the field a larger proportion of our men and women than any other country of the world in this or any previous war. At first the task was to transfer people from the less essential occupations. As the reservoir of man-power fell all demands had to be cut. The Lord President and his Man-power Committee adjudicated, not without friction, between competing claims. The results were submitted to me and the War Cabinet

The first of these man-power surveys came before the War Cabinet in November. I put before my colleagues my own reflections on the main issues presented to us in the Lord President's review. Obviously we must now cast a heavy burden on women.

MAN-POWER

Memorandum by the Prime Minister

November 6, 1941

It may be a convenience to my colleagues if I set out the provisional views which I have formed on some of the major issues which we have to settle

The age of compulsory military service for men should be raised by ten years, to include all men under 51 While this might not make very many men available for an active fighting rôle, it would assist the Minister of Labour in finding men for non-combatant duties in the Services

The possibility that the age should be raised again later on need not be excluded, but it would seem that an increase of ten years in the upper limit would be sufficient at the moment.

2. The case for calling up young men at 18½, instead of 19, seems fully established Indeed, I would go further and call them up at 18 if this would make any substantial contribution

3. On the whole, I am not yet satisfied, in view of the marked dislike of the process by their Service menfolk, that a case has been established for conscripting women to join the Auxiliary Services at the present time Voluntary recruitment for these Services should however be strongly encouraged.

4 Should the Cabinet decide in favour of compelling women to join the Auxiliary Services, it is for consideration whether the method employed should not be by individual selection, rather than by calling up by age groups. The latter system would inevitably discourage women from joining up until their age group was called

5 The campaign for directing women into the munitions industries should be pressed forward. The existing powers should be used with greater intensity . .

6 Employers might well be encouraged, in suitable cases, to make further use of the services of married women in industry. This would often have to be on a part-time basis, and means must be found to ease the burden on women who are prepared to perform a dual rôle.

* * * * *

It was inevitable that the whole question of an invasion would have to be argued out again, and I addressed myself to this task with increasing conviction that it would not happen. At the same time the process was healthy and led to important judicious dispositions of our available strength. Enormous requests were now made by the Home Command for armour, and tales of heavy German construction of tank-landing craft received some credence. No one can understand without reading the papers written at the time how hard was the strain, and how easy it was to make decisions which might be tragically falsified by events I was like a keeper in the Zoo distributing half-rations among magnificent animals Luckily they knew I was an old and friendly keeper

Prime Minister to C I G S. 3 Nov 41

All experience shows that all Commanders-in-Chief invariably ask for everything they can think of, and always represent their own forces at a minimum. . . It is only a few months ago that I saw with pleasure that we might have a thousand tanks available to meet an autumn invasion Now we have got two thousand or more, and at least another fifteen hundred should be available by the spring, making 3,500

General Brooke should organise these in the best possible way, bearing in mind that for Home Defence against invasion the utmost possible should be put in the front line of formations, and that the reserve need not be on the scale required in the Middle East.

2. While I am calling for the most vigorous measures to resist invasion in the spring, I am of course very sceptical of the stories that are told about its scale The evidence which supports the tale of the 800 flat-bottomed vessels, each carrying at 8 knots 10 tanks, rests on the flimsiest foundation—viz , an agent saw some of these vessels being made at one place, and he thought others were being made at other places to the number of 800 If there is any other evidence behind this story, let me have it

3 With the improvements in photography and the increased power in the air very formidable resistance should be made to the assembly of large numbers of vessels in the river-mouths of the Low Countries Now that we have the command of the air over the Pas de Calais, it is not seen how Dunkirk, Calais, and Boulogne can be used for the purposes of invasion All shipping gathered in these harbours and the smaller ones could be bombed by daylight under fighter cover This was not the case last year

4 There can be no question of our going back on our promises to Russia If of course Archangel freezes up we must do our best by other routes But it is far too soon to raise any such issues now, when the ink is hardly dry on our promise, and we have been unable to do anything else to help the Russians . .

I thought it necessary to have a scheme which would enable a selected proportion of the Home Guard to be used as military formations in the event of invasion.

Prime Minister to Secretary of State for War 23 Nov 41

It is thought that the invasion danger will manifest itself gradually by the assembly in the ports and river-mouths of large numbers of ships and landing-craft, and also by troop movements on a great scale At a certain stage in these proceedings, which may conceivably take months and after all may only be a blind, we should have to proclaim the "Alert" If this moment were rightly chosen it should be about a fortnight before zero day It is not intended that the whole of the Home Guard should thereupon cease their civilian occupations, but only that a special section of them should be called out and embodied, like the Militia used to be

2 The rest of the Home Guard would not be called out until a few days before zero hour, as far as we can tell, or perhaps only when the embarkation of the invaders had already begun They would however increase their vigilance between the "Alert" and the alarm

3 The special section I have in mind would of course consist, not of persons under 18 and over 60 years, but of the great mass of hefty manhood now in reserved occupations who are not allowed to join

the Army but have volunteered for the Home Guard. This class would attend additional drills, and would be paid for attendance at these drills They would not come out whole-time till the "Alert" There is no need to make heavy weather of the proposal by forming brigades with the War Office standards of equipment. They would be armed with rifles, machine-guns, and Bren carriers. They can be organised in battalions They would not alter their characteristic civilian and voluntary status until the "Alert".

Pray let me have definite proposals on the scale of four battalions in each corps area

* * * * *

I welcomed the keen interest which the United States military chiefs took in the defence of our Island, which they already regarded as the bastion of American security We have seen how they feared lest in our efforts to hold the Middle East we should endanger our safety at home In September and October an American officer, General Embick, was sent over by General Marshall, and I cordially invited him to go round all our home and beach defences and report fully the conclusions which he formed, both to me and to his own Government. General Embick was a most capable critic, and a good friend to Britain I felt from the first however that he was unduly alarmist. Towards the end of November he produced his report, and I print my comment upon it as I wrote it at the time.

Prime Minister to General Ismay, for C.O.S. Committee 23 Nov 41

This report by General Embick on the British defence system proceeds on the assumption of the strength of invasion which has been adopted here as a basis for our preparations These were no doubt imparted to General Embick, but I must make it clear that though these data may be accepted in order to keep our defence up to the mark, they do not rest on any solid basis other than that of prudent apprehension. . . .

The great fault of this paper, as of many studies about invasion, is that it ignores the time-sequence of events. An invasion on so vast a scale could not be prepared without detection. Not only 800 alleged landing-craft, but many other vessels and large ships, would have to be assembled in the river-mouths and harbours Aerial photography would reveal this process, and the Air Force would subject them to the heaviest bombing during what might well be a fortnight or more. From Dunkirk to Dieppe our air strength is now sufficient to enable us to make daylight attacks under fighter air cover When the difficulties

of embarkation have been surmounted it will still be necessary to marshal these ships and bring them across the sea By that time it is reasonable to expect that naval resistance will be available in a very high form General Embick assumes that there will be no warning, and that all our small craft will be engaged in the Battle of the Atlantic But this is incorrect, once the scale of the invasion is raised above the level of heavy raids Let me have a time-table (on one sheet of paper) of what the Navy will do on each day from the "Alert" on Day 1 to Day 20, and what forces will be in hand

The whole of this preliminary but indispensable phase plays no part in General Embick's thought, yet in it is comprised the main and proved defence of the Island from invasion. Wishing to train our Army and keep it keen, we have, naturally, stressed what happens after the enemy lands, but the Royal Navy and Royal Air Force are responsible for shattering the assembly of the Armada and for striking into it decisively in passage There must be no lifting of this obligation off these two Services

* * * * *

We could as the year 1941 drew to its end—and unforeseeable climax—also survey the course of the mortal U-boat war with solid reassurance The favourable tendencies which I had unfolded in Secret Session in Parliament at the end of June had become more plain with every week. Our resources were mounting By July we had been able to institute continuous, if slender, escort for our convoys throughout the North Atlantic, and on the route to Freetown. While Germany was straining every nerve to multiply her U-boats, active co-operation by the United States was becoming a reality. Our new weapons, though still in their infancy, and the effective tactical combination of our sea and air forces in the task of killing U-boats, were improving The seagoing Radar equipment on which so much depended had been put into production, not without risk of failure, straight from the drawing-board. We still had to rely on evasion at sea as our principal means of defence The day when we could court attack was still far ahead

On September 4 the United States destroyer *Greer* was unsuccessfully attacked by a U-boat while proceeding independently to Iceland A week later, on September 11, the President issued his "shoot first" order. In a broadcast he said. "From now on, if German or Italian vessels of war enter the waters the protection of which is necessary for American defence they do so at their

own peril. The orders I have given as Commander-in-Chief to the United States Army and Navy are to carry out that policy at once." On September 16, for the first time, direct protection was given to our Halifax convoys by American escorts. This brought instant relief to our hard-pressed flotillas. But two months elapsed before the President succeeded in freeing his hands from the neutrality laws, by which American ships could not carry goods to Britain nor even arm themselves in their own defence.

I kept General Smuts informed.

Prime Minister to General Smuts 14 Sept 41

I am content with President's action, which can only be judged in relation to actual naval movements concerted at our meeting. His line runs from North Pole down 10th meridian to about Faroes, then trends away south-west to 26th meridian, which is followed to the equator. He will attack any Axis ship found in this vast area. Sixteen U-boats have cut up one of our convoys in last few days off the tip of Greenland, nearly a thousand miles inside the prohibited zone. When I asked that American destroyers should be sent from Iceland to help our escorts, they went yesterday at once, and, had the U-boats not vanished meanwhile, Anglo-American forces would have been in action together against them. United States assumption of responsibility for all fast British convoys other than troop convoys between America and Iceland should enable Admiralty to withdraw perhaps forty of the fifty-two destroyers and corvettes we now keep based on Halifax and concentrate them in home waters. This invaluable reinforcement should make killing by hunting groups other than escorts possible for the first time. Hitler will have to choose between losing the Battle of the Atlantic or coming into frequent collision with United States ships and warships. We know that he attaches more importance to starving us out than to invasion. American public have accepted the "shoot at sight" declaration without knowing the vast area to which it is to be applied, and in my opinion they will support the President in fuller and further application of this principle, out of which at any moment war may come. All the above is for your own most secret information.

* * * * *

Although five times as many U-boats were now operating as in 1940 our shipping losses were greatly reduced. No merchant ship in the fast Halifax convoys was sunk between July and November. The slow convoys sailing from Sydney, Cape

Breton Island, for which British and Canadian escorts remained solely responsible throughout the voyage, were also free from attack in July and August. In September however there was the seven days' combat from Greenland to Iceland, mentioned in my cable to General Smuts, with a pack of over a dozen U-boats Sixteen ships out of sixty-four in the convoy were sunk, and two U-boats. On October 31 the immunity of the Halifax convoys from attack was at last broken, and the American destroyer *Reuben James* was torpedoed and sunk with severe loss of life. This was the first loss suffered by the United States Navy in the still undeclared war. In August the limits on the number of ships sailing in any one convoy were removed The fast and slow convoys were often combined for part of their voyage, and on August 9 a combined convoy comprising a hundred ships came safely in For the three months up to the end of September the weekly average of imports was nearly a million tons, an increase of about 80,000 tons a week.

Our air patrols watching the German cruisers in Brest noticed that the U-boats based on Biscay ports normally made the passage to and from these bases on the surface and along fairly well defined routes across the Bay of Biscay. Here was an opportunity for our Coastal Command, but to make full use of it two needs had to be met The first was the problem of identification Although our airborne Radar was now yielding modest results we had no means of identifying targets at night until, a little later, the development of an aircraft searchlight solved the problem. The second need was an airborne weapon which would sink a U-boat The bomb and the depth-charge with which our aircraft were armed were not sufficiently accurate or deadly for the fleeting opportunities of attack which offered. Nevertheless during the three months ending with November twenty-eight attacks were made By December the enemy was forced to cross the dangerous area of the bay either in darkness or underwater Thus the time during which a U-boat could hunt was reduced by about five days.

In August a Hudson aircraft of Coastal Command attacked a U-boat with depth-charges in the Western Approaches. The U-boat was injured and unable to dive, and the crew attempted to man their gun, but the Hudson with her own machine-guns drove them below, and for the first time in war a submarine

hoisted the white flag and surrendered to an aeroplane A heavy sea was running and no surface vessel was near, but the Hudson maintained relentless watch over her prize Aid was summoned, and the next day the U-boat was towed by a trawler to Iceland. She was later commissioned into the Royal Navy The incident is unique.

* * * * *

A new burden was now laid upon the British Navy. The need to aid Russia focused attention upon the sea routes to Archangel and Murmansk Towards the end of July Vian—now an Admiral —had been ordered to reconnoitre Spitzbergen. He landed a force to demolish the coal dumps and rescue the few Norwegians who had been pressed into German service Three loaded German colliers were also captured in this neatly executed operation. About the same time fifty-six aircraft from the carriers *Furious* and *Victorious* gallantly attacked German shipping in the ports of Petsamo and Kirkenes at the top of the North Cape. Some damage was done, but sixteen of our planes were lost, and the operation was not repeated.

On August 12 the first "P Q." convoy of six ships for Russia sailed from Liverpool by Iceland to Archangel. Henceforward convoys to North Russia ran regularly once or twice a month They were strongly escorted and not yet interfered with by the enemy When Archangel became icebound Murmansk was used There was too much jubilation and publicity about the successful passage of supplies to the Russian Army, and heavy forfeits were to follow in another year

* * * * *

With the Russian entry into the war the German air attacks on shipping near our coasts somewhat lessened The Focke-Wulf ranged widely, but our fighter-catapult ships, devised for this very danger, were now coming out, and soon gained successes. The converging homeward routes from Gibraltar and Sierra Leone became the target of German air and U-boat attacks, costing us during August and September thirty-one ships and three escort vessels Among these was the famous destroyer *Cossack* of *Altmark* and *Bismarck* fame The first true escort carrier, H M.S. *Audacity*, operating six aircraft from a flying deck, came into action in September, and immediately proved the value of her

type. Not only could she destroy or drive off the Focke-Wulf, but by air reconnaissance in daylight she could keep the U-boats down and give timely warnings about them The *Audacity* became the model on which in later years large numbers of vessels were built in the United States to play a vital part in the U-boat war and later in amphibious operations

The *Audacity* herself had a short career. She was sunk by a U-boat on December 21 after a most gallant action while escorting a homeward-bound convoy from Gibraltar. Commander F. J Walker, who commanded the convoy escort, greatly distinguished himself on this occasion in a combat lasting several days and nights, during which four U-boats were destroyed out of about nine, besides two Focke-Wulfs. One night his ship, the *Stork*, pursued and rammed a U-boat in the darkness. The two ships were side by side and so close together that the 4-inch guns of the *Stork* could not be sufficiently depressed and the guns' crews were "reduced to fist-shaking and roaring curses", until depth-charges did their work. Commander Walker was promoted and became our foremost U-boat killer. Before his untimely death from illness in 1944 he and the several groups he commanded had sunk twenty U-boats, six of them at one go

Further relief was given to us in the Atlantic Ocean by the German decision to send U-boats into the Mediterranean Five of these were destroyed in the Straits of Gibraltar, and six others damaged and forced to return, but twenty-four successfully made the passage, and, as will be seen in a later chapter, became a grievous factor there

* * * * *

War on our ocean commerce was also maintained by the disguised German merchant ships The Australian cruiser *Sydney* encountered "Raider G" off the west coast of Australia. The German, thanks to his disguise, succeeded in enticing his adversary to point-blank range before opening fire Both ships were sunk Twenty-five Germans were picked up later, and others eventually landed in Western Australia Of the *Sydney's* crew of over seven hundred none survived This was a sombre sacrifice in lonely waters

A few days later "Raider C", which had destroyed twenty ships, of about 140,000 tons in all, was caught and sunk in the

South Atlantic by the cruiser *Dorsetshire* The losses inflicted by the disguised German surface raiders, of whom there were from first to last nine, were as follows

	No of Ships Sunk	*Gross Tons*
1940 . .	54	366,644
1941 . .	44	226,527
1942 . .	30	194,625
1943 . .	6	49,482

We had therefore solid reasons even in 1941 for satisfaction at the whole trend of the ocean war upon our commerce In November 1941 our losses from U-boats fell to the lowest figure since May 1940 In spite of all Hitler's boasts and the multiplication of his U-boat and air strength and our ever-increasing convoys at sea, British and Allied shipping losses in 1941 were hardly greater than in 1940. Of course there were more targets on both sides, but the number of U-boats sunk by us (including Italian) rose from forty-two in 1940 to fifty-three in 1941 The table at the end of the chapter deserves careful study

Thus on the eve of a supreme change in the war we had made formidable increases in our military power and were still steadily advancing both in actual strength and in the mastery of our many problems We felt ourselves strong to defend our Island, and able to send troops abroad to the utmost limit of our shipping We wondered about the future, but, after all we had surmounted, could not fear it Invasion had no terrors, and at the same time our life-lines across the ocean grew safer, broader, more numerous and more fruitful. Our control of the approaches to the Island grew better every month The threatened stranglehold of the German Air and U-boats had been broken, and the enemy was driven far from our shores Food, munitions, and supplies arrived in an ever-expanding stream The output of our own factories increased every month The Mediterranean, the Desert, and the Middle East were still in peril, but in the closing days of November on land and sea and in the air we felt thankful with the way the war had so far gone

TOTAL LOSSES, IN GROSS TONS, OF BRITISH, ALLIED, AND NEUTRAL MERCHANT SHIPS AND FISHING VESSELS BY ENEMY ACTION

(Numbers of ships in brackets)

Corrected to May 1, 1949

Period	*U-boat*	*Mine*	*Surface Craft*	*Aircraft*	*Other and Unknown Causes*	*Total*
Sept 3 to Dec 31, 1939	423,769 (116)	262,697 (79)	61,337 (15)	2,949 (10)	7,253 (4)	758,005 (224)
1940	2,186,158 (471)	509,889 (201)	511,615 (94)	580,074 (192)	202,806 (100)	3,990,542 (1058)
1941	2,162,168 (429)	229,838 (108)	495,077 (113)	970,481 (324)	332,717 (167)	4,190,281 (1141)

CHAPTER XXVIII

CLOSER CONTACTS WITH RUSSIA

Autumn and Winter 1941

Anglo-Soviet Relations – Difficulties of Military Concert – Our Efforts to Help in the Caucasus – Question of Our Declaring War on Finland, Roumania, and Hungary – My Telegram to Stalin of November 4 – His Reply, November 8 – Mr. Eden's Conversation with the Soviet Ambassador, November 20 – I Offer to Send Mr Eden to Moscow – Stalin Accepts – I am Reluctant to Face the Breach with Finland, Roumania, and Hungary – My Appeal to Field-Marshal Mannerheim – Mr. Eden's Mission to Moscow – My Directive of December 5 – 'The First Failure of a German Blitzkrieg.

TWO themes now dominated our relations with the Soviet Union. The first was the vague and unsatisfactory state of our consultations on military matters, and the second the Russian request that we should sever relations with the Axis satellites, Finland, Hungary, and Roumania. As we have seen, little progress had been made in the former direction during the recent meetings in Moscow. About the first, on November 1 I sent the following minute to the Foreign Secretary

Prime Minister to Foreign Secretary 1 Nov 41

I was not aware that we had ever taken the line that there should be no consultation on military matters. On the contrary, did we not tell them definitely we would consult on military matters? Certainly I wrote a paper for Lord Beaverbrook's guidance* which dealt entirely with the military situation apart from that of supply General Ismay was sent to Russia for the purpose of embarking on the military discussion It could have made no difference in fact, as there is no practical step of any serious importance which can at present be taken He might have explained by facts and figures how very foolish and

* See Appendix J, p 764

physically impossible was the suggestion that we should send "twenty-five or thirty divisions" to the Russian front. He could have explained how even moving two or three divisions in at either end of the Russian front would choke the communications needed for Russian supplies. On the other hand, I do not see why these conversations did not take place at some time or other in the conference. Undoubtedly Lord Beaverbrook and Stalin touched upon the military issue.

General Wavell has already been to Tiflis without finding anyone in authority to speak to him. He speaks Russian well, and it might well be that he should undertake a journey to Moscow. It is only by the southern flank that we could enter for many months to come.

Anyhow, let us get the facts straightened out.

P.S.—You should see Wavell's telegram just received, showing how even two divisions at or north of Tabriz will completely choke the Trans-Persian railway.

I felt that if only a machinery of military consultation could be established the problem of joint operations could be discussed in a reasonable manner which would not lead to misunderstanding. The unsatisfactory nature of the existing position is clear from my following minute:

Prime Minister to General Ismay, for C.O.S. Committee 5 Nov 41

We do not know when the Germans will arrive in the Caucasus, nor how long it will be before they come up against the mountain barrier. We do not know what the Russians will do, how many troops they will use, or how long they will resist. It is quite certain that if the Germans press hard neither the 50th nor the 18th British Division could be on the spot in time. We are held in a grip by the delay in "Crusader", and it is not possible to see beyond that at the present moment. I cannot feel any confidence that the Germans will be prevented from occupying the Baku oilfields, or that the Russians will effectively destroy these fields. The Russians tell us nothing, and view with great suspicion any inquiries we make on this subject.

2. The only thing we have it in our power to do is to base four or five heavy bombing squadrons in Northern Persia to aid the Russians in the defence of the Caucasus, if that be possible, and if the worst happens to bomb the Baku oilfields effectively and try to set the ground alight. These squadrons will of course require fighter protection. Neither the bombers nor the fighters can be provided till after "Crusader" and its consequences can be judged. A plan should however be made based on a large transference of air from Libya to Persia, so as to deny the oilfields to the enemy as long as possible. Pray let this be done during the next week, so that we can see what is involved.

One cannot tell how long the Russians will retain the command of the Black Sea, although with their forces it is inexcusable that they should lose it

* * * * *

The question of our breaking off relations with Finland had first been raised, as we have seen, by M Maisky in his interview with me on September 4 * I knew this was a subject on which the Russians felt strongly. The Finns had taken the opportunity of the German attack on Russia to renew hostilities on the Karelian front in July 1941. They hoped to regain those territories lost by the Treaty of Moscow the previous year. Their military operations in the autumn of 1941 represented a grave threat not only to Leningrad, but also to the supply lines from Murmansk and Archangel to the Russo-German front. Both the American Government and ourselves had since August been warning the Finns in severe terms of the possible consequences of the situation Their attitude was that they needed the disputed province of Eastern Karelia for their own security against Russia, and the history of the previous two years lent strength to their view But now that Russia was engaged in a life-and-death struggle with Germany it was clearly impossible for the Allies to allow the Finns, acting as a German satellite Power, to cut Russia's main northern lines of communication with the West

The position of Roumania was similar to that of Finland. The Russians had occupied the Roumanian province of Bessarabia, and thereby gained control of the mouth of the Danube, in June 1940. Now, under the leadership of Marshal Antonescu, and in alliance with Germany, the Roumanian armies had not only reoccupied Bessarabia, but had bitten deep into the Black Sea provinces of Russia, as the Finns were doing in Eastern Karelia The Hungarians also, in a key position astride the communications of Central and South-Eastern Europe, were of direct assistance to the German war effort

But I was by no means certain that a declaration of war was the correct method of dealing with the situation There was still a possibility that, under pressure from the United States and ourselves, Finland would agree to fair and reasonable peace terms. In the case of Roumania at least there was every reason to believe that the dictatorial régime of Antonescu would not

* See p 406

last indefinitely I decided therefore to address myself again to Marshal Stalin on both the question of military planning and co-operation and that of avoiding a declaration of war against these Axis satellite Powers.

Prime Minister to Premier Stalin 4 Nov 41

In order to clear things up and to plan for the future I am ready to send General Wavell, Commander-in-Chief in India, Persia, and Iraq, to meet you in Moscow, Kuibyshev, Tiflis, or wherever you will Besides this, General Paget, our new Commander-in-Chief, secretly designated for the Far East, will come with General Wavell General Paget has been in the centre of things here, and will have with him the latest and best opinions of our High Command These two officers will be able to tell you exactly how we stand, what is possible and what we think is wise They can reach you in about a fortnight Do you want them?

2 We told you in my message of September 6 that we were willing to declare war on Finland Will you however consider whether it is really good business that Great Britain should declare war on Finland, Hungary, and Roumania at this moment? It is only a formality, because our extreme blockade is already in force against them My judgment is against it, because, first, Finland has many friends in the United States and it is prudent to take account of this fact Secondly, Roumania and Hungary these countries are full of our friends, they have been overpowered by Hitler and used as a cat's-paw, but if fortune turns against that ruffian they might easily come back to our side A British declaration of war would only freeze them all and make it look as if Hitler were the head of a grand European alliance solid against us Do not, pray, suppose it is any want of zeal or comradeship that makes us doubt the advantage of this step Our Dominions, except Australia, are reluctant Nevertheless, if you think it will be a real help to you and worth while, I will put it to the Cabinet again

3 I hope our supplies are being cleared from Archangel as fast as they come in A trickle is now beginning through Persia We shall pump both ways to our utmost Please make sure that our technicians who are going with the tanks and aircraft have full opportunity to hand these weapons over to your men under the best conditions At present our Mission at Kuibyshev is out of touch with all these affairs They only want to help These weapons are sent at our peril, and we are anxious they shall have the best chance An order from you is necessary

4 I cannot tell you about our immediate military plans, any more than you can tell me about yours, but rest assured we are not going to be idle

5 With the object of keeping Japan quiet we are sending our latest battleship, *Prince of Wales*, which can catch and kill any Japanese ship, into the Indian Ocean, and are building up a powerful battle squadron there I am urging President Roosevelt to increase his pressure on the Japanese and keep them frightened so that the Vladivostok route will not be blocked

6 I will not waste words in compliments, because you know already from Beaverbrook and Harriman what we feel about your splendid fight. Have confidence in our untiring support

7 I should be glad to hear from you direct that you have received this telegram

On November 11 M. Maisky brought to me Stalin's chilling and evasive reply to this message.

M Stalin to the Prime Minister 8 Nov 41

Your message received on November 7.

I fully agree with you that clarity should be established in the relations between the U S S R and Great Britain. Such a clarity does not exist at present The lack of clarity is the consequence of two circumstances

(*a*) There is no definite understanding between our two countries on war aims and on plans for the post-war organisation of peace

(*b*) There is no agreement between the U S S R and Great Britain on mutual military assistance against Hitler in Europe

As long as there is no accord on both these questions there can be no clarity in the Anglo-Soviet relations More than that to be frank, as long as the present situation exists there will be difficulty in securing mutual confidence. Of course the agreement on military supplies to the U S S R has a great positive value, but it does not settle, neither does it exhaust, the whole problem of relations between our two countries. If the General Wavell and the General Paget whom you mention in your message will come to Moscow with a view to concluding agreement on the two fundamental questions referred to above, I naturally would be happy to meet them and to discuss with them these questions. If however the mission of the Generals is confined to the questions of information, and to the consideration of secondary matters, it would not be, I think, worth while to intrude upon the Generals. In such a case it would also be very difficult for me to find the time for the conversations

2. It seems to me that an intolerable situation has been created in the question of the declaration of war by Great Britain on Finland,

Hungary, and Roumania The Soviet Government raised this question with the British Government through the secret diplomatic channels Quite unexpectedly for the U S S R., the whole problem, beginning with the request of the Soviet Government to the British Government and ending with the consideration of this question by the U S A. Government, received wide publicity The whole problem is now being discussed at random in the Press—friendly as well as enemy And after all that the British Government informs us of its negative attitude to our proposal Why is all this being done? To demonstrate the lack of unity between the U S S R. and Great Britain?

3 You can rest assured that we are taking all the necessary measures for speedy transportation to the right place of all the arms coming from Great Britain to Archangel The same will be done with regard to the route through Persia In this connection may I call your attention to the fact (although this is a minor matter) that tanks, planes, and artillery are arriving inefficiently packed, that sometimes parts of the same vehicle are loaded in different ships, [and] that planes, because of the imperfect packing, reach us broken?

* * * * *

Even Stalin seems after a while to have felt that he had gone too far in the tone of this communication, which I had not attempted to answer. The silence was expressive On November 20 the Soviet Ambassador in London called on Mr Eden at the Foreign Office. The following is Mr Eden's record of the conversation as sent in a telegram to Sir Stafford Cripps, now at Kuibyshev

The Soviet Ambassador asked to see me this afternoon, when he said that he had received instructions from M Stalin, who had asked him to convey to me that in sending his recent message to the Prime Minister he had only practical and businesslike questions in view It had certainly not been M Stalin's intention to cause any offence to any members of the Government, and least of all to the Prime Minister.

M Stalin was very busy indeed with affairs at the front, and had had virtually no chance to think of anything else but affairs at the front He had raised important practical issues about mutual military assistance in Europe against Hitler and the post-war organisation of peace. These questions were very important, and it was very undesirable to complicate them by any personal misunderstanding or feelings M Stalin had also overcome certain personal feelings in pursuing the line he had taken, because the Finnish business had greatly hurt him and the whole of the Soviet Union. "My Fatherland," said M Stalin, "finds itself in a humiliating position Our request was made secretly.

Then the whole thing was published, and also the fact that His Majesty's Government did not consider it possible to accept the Soviet request This has put my country in a humiliated position, and has had a depressing effect on the minds of my people " M Stalin had felt himself hurt by this, but, in spite of this, he still pursued only one end to reach an agreement on mutual military assistance against Hitler in Europe and the post-war organisation of peace

Stalin's answer had made it clear that purely military talks would have little concrete result in the present state of mind of the Russian leaders The almost hysterical note of Stalin's message about Finland showed the gap in understanding between our two countries I proposed therefore to make a further attempt to smooth out relations between us by offering to send Mr. Eden himself on a mission to Russia. It was in this sense that I telegraphed to M Stalin on November 21

Many thanks for your message, just received At the very beginning of the war I began a personal correspondence with President Roosevelt, which has led to a very solid understanding being established between us and has often helped in getting things done quickly My only desire is to work on equal terms of comradeship and confidence with you

2 About Finland I was quite ready to advise the Cabinet to declare war upon Finland when I sent you my telegram of September 4. Later information has made me think that it will be more helpful to Russia and the common cause if the Finns can be got to stop fighting and stand still or go home, than if we put them in the dock with the guilty Axis Powers by a formal declaration of war and make them fight it out to the end However, if they do not stop in the next fortnight and you still wish us to declare war on them, we will certainly do so I agree with you that it was very wrong that any publication should have been made We certainly were not responsible

3 Should our offensive in Libya result, as we hope, in the destruction of the German-Italian army there, it will be possible to take a broad survey of the war as a whole, with more freedom than has hitherto been open to His Majesty's Government

4 For this purpose we shall be willing in the near future to send the Foreign Secretary, Mr Eden, whom you know, via the Mediterranean to meet you at Moscow or elsewhere He would be accompanied by high military and other experts, and will be able to discuss every question relating to the war, including the sending of troops not only into the Caucasus but into the fighting line of your armies in the south. Neither our shipping resources nor the communications will

allow large numbers to be employed, and even so you will have to choose between troops and supplies across Persia.

5 I notice that you wish also to discuss the post-war organisation of peace. Our intention is to fight the war in alliance with you and in constant consultation with you to the utmost of our strength, and however long it lasts, and when the war is won, as I am sure it will be, we expect that Soviet Russia, Great Britain, and the United States will meet at the council table of the victors as the three principal partners and agencies by which Nazism will have been destroyed. Naturally, the first object will be to prevent Germany, and particularly Prussia, breaking out upon us for the third time The fact that Russia is a Communist State and Britain and the United States are not, and do not intend to be, is not any obstacle to our making a good plan for our mutual safety and rightful interests The Foreign Secretary will be able to discuss the whole of this field with you

6 It may well be that your defence of Moscow and Leningrad, as well as the splendid resistance to the invader along the whole Russian front, will inflict mortal injuries upon the internal structure of the Nazi régime We must not count upon such good fortune, but simply keep on striking at them to the utmost with might and main

M. Stalin replied two days later, and in a calmer tone

23 Nov 41

Many thanks for your message I sincerely welcome your wish as expressed in your message to collaborate with me by way of personal correspondence based on friendship and confidence. I hope this will contribute much to the success of our common cause

2 On the question of Finland, the U S S R. never proposed anything else—at least, in the first instance—but the cessation of the military operations and the *de facto* exit of Finland from the war If however Finland refuses to comply even with this in the course of the short period you indicated, then I believe the declaration of war by Great Britain would be reasonable and necessary Otherwise an impression may be created that there is no unity between us on the question of war against Hitler and his most ardent accomplices, and that the accomplices of Hitler's aggression can do their base work with impunity With regard to Hungary and Roumania, we can perhaps wait a little while

3 I support by all means your proposal of an early visit to the U S.S R. by the Foreign Secretary, Mr Eden I believe our joint consideration and acceptance of an agreement concerning the common military operations of the Soviet and British forces at our front, as well as speedy realisation of such an agreement, would have a great positive value. It is right that consideration and acceptance of a plan

concerning the post-war organisation of peace should be founded upon the general idea of preventing Germany, and in the first place Prussia, once more from violating peace and once more plunging peoples into terrible carnage

4 I also fully agree with you that the difference of the State organisation between the U S S R on the one hand and Great Britain and the United States of America on the other hand should not, and could not, hinder us in achieving a successful solution of all the fundamental questions concerning our mutual security and our legitimate interests. If there are still some omissions and doubts on this score I hope they will be cleared away in the course of the negotiations with Mr Eden

5. I beg you to accept my congratulations on the successful beginning of the British offensive in Libya

6 The struggle of the Soviet armies against Hitler's troops remains tense In spite however of all the difficulties the resistance of our forces grows and will grow Our will to victory over the enemy is unbending

* * * * *

As a result of Stalin's pressing appeal it was decided to go ahead with arrangements to deliver an ultimatum with a time limit to the Finns, and also to Roumania and Hungary I was most reluctant to be forced into this position, as the following minutes show

Prime Minister to Foreign Secretary 28 Nov 41

You seem to be taking it for granted that war will be declared on all three Powers [Finland, Roumania, and Hungary] on December 3 I do not wish this decision to be taken till we know what Finland will do Moreover, the 3rd is too soon The 5th is a fortnight after my telegram to Stalin I am only to-night sending my telegram to Mannerheim We must leave reasonable time for a reply

My opinion about the unwisdom of this measure remains unaltered, and I still have hopes that the Finns will withdraw. I was not aware that this step would be taken at this juncture.

Prime Minister to Foreign Secretary 29 Nov 41

Finland and Co I don't want to be pinched for time if there is a chance of Finland pulling out of the big war See also my telegram to Stalin [of November 21], which says, "if they do not stop in the next fortnight *and you still wish us to declare war on them* ." Procedure therefore should be as follows If we have not heard by the 5th that the Finns are not going to pull out, or have heard they are contumacious, we then telegraph to Stalin saying that "*if he still wishes it*"

we will declare war forthwith The Roumanian and Hungarian declarations will follow, also in accordance with whatever he may desire.

* * * * *

Meanwhile I thought it worth while, with the knowledge and agreement of the Soviet Government, to make a final and personal appeal to the Finnish leader, Field-Marshal Mannerheim.

Prime Minister to Field-Marshal Mannerheim 29 Nov 41

I am deeply grieved at what I see coming, namely, that we shall be forced in a few days out of loyalty to our ally Russia to declare war upon Finland If we do this, we shall make war also as opportunity serves Surely your troops have advanced far enough for security during the war and could now halt and give leave It is not necessary to make any public declaration, but simply leave off fighting and cease military operations, for which the severe winter affords every reason, and make a *de facto* exit from the war. I wish I could convince Your Excellency that we are going to beat the Nazis I feel far more confident than in 1917 or 1918 It would be most painful to the many friends of your country in England if Finland found herself in the dock with the guilty and defeated Nazis My recollections of our pleasant talks and correspondence about the last war lead me to send this purely personal and private message for your consideration before it is too late

On December 2 I received Field-Marshal Mannerheim's answer.

Field-Marshal Mannerheim to Prime Minister Churchill 2 Dec 41

I had yesterday the honour to receive through the intermediary of the American Minister at Helsinki your letter of November 29, 1941, and I thank you for your courtesy in sending me this private message I am sure you will realise that it is impossible for me to cease my present military operations before my troops have reached positions which in my opinion would give us the security required I would regret if these operations, carried out in order to safeguard Finland, would bring my country into a conflict with England, and I will be deeply grieved if you will consider yourself forced to declare war upon Finland It was very kind of you to send me a personal message in these trying days, and I have fully appreciated it.

This reply made it clear that Finland was not prepared to withdraw her troops to her 1939 frontiers, and the British Government therefore went ahead with the arrangements to declare

war. Similar action followed in regard to Roumania and Hungary.

* * * * *

It was against such a background that preparations were made for Mr Eden's mission to Moscow He was to be accompanied by General Nye, Vice-Chief of the Imperial General Staff. A general review of the war in both its military and general aspects was to be undertaken in these talks in Moscow, and if possible the alliance was to be put on a formal and written treaty basis

On December 5 I drew up a general directive for the Foreign Secretary, reviewing certain aspects of the military situation as seen from our side The battle in the Desert, which will presently be described, was already at its height

5 Dec 41

The prolongation of the battle in Libya, which is drawing in so many Axis resources, will probably require the use both of the 50th and 18th British Divisions, which we had hoped might be available for the defence of the Caucasus or for action on the Russian front In the near future therefore these divisions cannot be considered available The best form which our aid can take (apart from supplies) is the placing of a strong component of the Air Force, say ten squadrons, on the southern flank of the Russian armies, where, among other things, they can help protect the Russian naval bases on the Black Sea. These squadrons will be withdrawn from the Libyan battle at the earliest moment when success has been gained The movement of their ground personnel and stores will not unduly choke the Trans-Persian communications, as would be the case if infantry divisions were sent The High Command in the Middle East has been ordered to make plans for this movement, the completion of which will of course depend upon the facilities afforded for detailed reconnaissance

2 The attitude of Turkey becomes increasingly important, both to Russia and to Great Britain The Turkish army of fifty divisions requires air support. We have promised a minimum of four and a maximum of twelve fighter squadrons to Turkey in the event of Turkey being attacked In this event we might require to withdraw some of the squadrons proposed to be sent into action on the Russian southern front The best use of our aircraft on both shores of the Black Sea and the types to be employed require to be decided according to circumstances by consultation between the British and Russian Governments and Staffs

* * * * *

During these interchanges the urgency of the military crisis on the Russian front had diminished. Hitler had determined on one more great effort, and on November 13 he issued orders for an "autumn campaign" to take Moscow before the end of the year. The plan was opposed by Bock and Guderian, who suggested that the armies should dig in for the winter They were overruled. Some small progress was made on the flanks during the latter part of November, but the main attack in the centre, launched on December 4, broke down completely, not only on account of the stubborn resistance of the garrison and of the inhabitants, but also because of the extreme cold which had now set in Automatic weapons failed to function, aircraft and tank motors could not be started. With inadequate winter clothing the German soldiers were half frozen

Like the supreme military genius who had trod this road a century before him, Hitler now discovered what Russian winter meant He bowed to inexorable facts. Instructions were given for the troops to withdraw to a better line in rear, though they were to resist any Russian attacks in the meanwhile These attacks were not lacking For the rest of the year they were continuous, and the German armour both north and south of Moscow was forced back until by December 31 the front was stabilised on a line running north and south sixty miles from the city, from which they had already been within twenty miles In the north the Germans had had no better fortune Leningrad indeed had been completely cut off, and was closely invested in the south by the Germans and in the north by the Finns But all assaults had been repulsed. There was more to show in the south. Rundstedt had once reached Rostov and rounded the corner to the Caucasus. Here he had overreached himself and was beaten back forty miles. Nevertheless he had advanced five hundred miles The southern industrial area of Russia and the rich wheatlands of the Ukraine were behind him. Only in the Crimea were there still Russians to dislodge or destroy

Thus in the six months' campaign the Germans had achieved formidable results and had inflicted losses on their enemy which no other nation could have survived. But the three main objectives which they had sought, Moscow, Leningrad, the lower Don, were still firmly in Russian hands. The Caucasus, the Volga, and Archangel were still far away. The Russian Army,

far from being beaten, was fighting better than ever, and would certainly grow in strength in the coming year. The winter had fallen The long war was certain.

All the anti-Nazi nations, great and small, rejoiced to see the first failure of a German Blitzkrieg. The threat of invasion to our Island was removed so long as the German armies were engaged in a life-and-death struggle in the East. How long that struggle might last no one could tell. Hitler at least was still confident of the future. The many arguments he had had with his generals during the autumn, and their failure to satisfy his far-reaching intentions, led to the removal of the Commander-in-Chief, Brauchitsch. Rundstedt went too Henceforward Hitler took personal command of the armies in the East, confident in his generalship, and with high hopes of an early Russian collapse in 1942.

* * * * *

Our discussions with the Soviets, which seemed in their later stages to be progressing favourably, have anticipated the launching by General Auchinleck of his offensive in the Desert which has next to be described Both discussions and offensive were alike relegated to a different plane by the Japanese attack upon the United States at Pearl Harbour on December 7. We shall return to them in due course amid a vastly different grouping of world forces.

Algiers, Oran—or to Sicily or Sardinia. Such are the advantageous options open to naval power. What other plan of active offensive warfare was open to Britain and the Empire by themselves during 1942? How could we engage the Germans on a large scale? What schemes would offer to us so many choices, which are so desirable amid the uncertainties of war? It might be beyond our single-handed strength. It might go wrong. But at any rate it did not endanger our life-lines across the Atlantic or our power to defend ourselves from invasion at home.

It is one thing to see the forward path and another to be able to take it. But it is better to have an ambitious plan than none at all. All turned first on the success of General Auchinleck's long-prepared offensive in the Western Desert. All had to be reviewed in relation to the unknown dangers which would be opened upon us by a German penetration to the Caspian, or their possible movement through Turkey in the same direction, or into the Middle East—Syria, Palestine, Persia, and Iraq. But throughout I regarded all these as comparatively unlikely possibilities. In the event this proved the correct view. I carried with me in the pursuit of these conjectural schemes at every stage the convictions and support of the Chiefs of Staff, and of my Ministerial colleagues on the Defence Committee and in the War Cabinet. In the end all were fulfilled in the exact order designed, but not until 1942 and 1943, and in very different and more favourable circumstances than those we could foresee in October 1941.

* * * * *

While all these speculations influenced opinion in our secret circles I was determined that the preparation of the apparatus and plans for the invasion of the Continent should not slacken. Sir Roger Keyes had now reached the age of seventy. He had performed invaluable service in building up the Commandos and in pressing forward the design and construction of invasion craft. His high rank as Admiral of the Fleet and strong personality had created a certain amount of friction in the Service departments, and I reached the conclusion with much regret on personal grounds that the appointment of a new and young figure at the head of the overseas organisation would be in the public interest. Lord Louis Mountbatten was only a captain in the Royal Navy, but his exploits and abilities seemed to me to fit him in a high

degree for the vacant post He was at this time on a special mission to the United States, where he was received with great consideration He cruised with the Pacific Fleet, and on his return to Washington had long discussions with the President, to whom he was authorised to disclose what we were doing in preparations for landings on the Continent and the plans I harboured The President showed him the greatest confidence and invited him to stay at the White House Before this visit could take place I had to summon him home.

Prime Minister to Lord Louis Mountbatten 10 Oct 41

We want you home here at once for something which you will find of the highest interest

Prime Minister to Mr Harry Hopkins 10 Oct 41

We want Mountbatten over here for a very active and urgent job Please explain to the President how disappointed he was not to be able to fulfil the invitation to the White House with which he had been honoured He will seek an audience before leaving

* * * * *

I had been vexed by a final delay of nearly a fortnight which General Auchinleck demanded in order to perfect his arrangements

Prime Minister to General Auchinleck 18 Oct 41

Your telegram confirms my apprehensions. Date was mentioned by you to Defence Committee, and though we felt the delay most dangerous we accepted it and have worked towards it in our general plans It is impossible to explain to Parliament and the nation how it is our Middle East armies have had to stand for 4½ months without engaging the enemy while all the time Russia is being battered to pieces. I have hitherto managed to prevent public discussion, but at any time it may break out. Moreover, the few precious weeks that remain to us for the exploitation of any success are passing No warning has been given to me of your further delay, and no reasons I must be able to inform War Cabinet on Monday number of days further delay you now demand

Moreover, the Lord Privy Seal leaves Monday for United States, carrying with him a personal letter to the President. In this letter, which would be handed to Mr Roosevelt for his eye alone and to be burnt or returned thereafter, I was proposing to state that in the moonlight of early November you intended to attack. It is necessary for me to take the President into our confidence, and thus stimulate

his friendly action. In view of the plans we are preparing for "Whipcord",* I am in this letter asking him to send three or four United States divisions to relieve our troops in Northern Ireland, as a greater safeguard against invasion in the spring I fixed the date of the Lord Privy Seal's mission in relation to the date you had given us Of course, if it is only a matter of two or three days the fact could be endured It is not however possible for me to concert the general movement of the war if important changes are made in plans agreed upon without warning or reason Pray therefore telegraph in time

The date was finally fixed for November 18, as General Auchinleck desired

* * * * *

Feeling the way the President's mind was probably moving, I determined, on the eve of Auchinleck's considerable venture in the Desert, to lay my whole thought before him Mr. Attlee, now generally recognised as Deputy Prime Minister, was to visit Washington to attend the International Labour Conference, and I sent by his hand to the President the letter which follows It will become evident that this fell in very closely with the march of Mr Roosevelt's own thought.

PRIME MINISTER TO PRESIDENT

20 Oct 41

PART I

My dear Mr President,

Some time this fall General Auchinleck will attack the German and Italian armies in Cyrenaica with his utmost available power † We believe his forces will be stronger than the enemy's in troops, in artillery, in aircraft, and particularly in tanks His object will be to destroy the enemy's armed and above all armoured forces, and to capture Benghazi as quickly as possible

2 Should this operation prosper the plans which have been prepared for a further rapid advance upon Tripoli may be carried out Should success attend this further effort important reactions may be expected which it is provident to study in advance.

3 General Weygand may be stirred into joining in the war, or the Germans may make demands upon him or Vichy for facilities in French North Africa which may force him into the war

4 To profit by these contingencies we are holding a force equivalent to one armoured and three field divisions ready with shipping from

* The invasion of Sicily

† The actual date and the code-name "Crusader" were given in a separate note

about the middle of November. This force could either enter Morocco by Casablanca upon French invitation or otherwise help to exploit in the Mediterranean a victory in Libya

5 In order to cover effectively these preparations we have prepared large-scale plans for a descent upon the Norwegian coast, and also for a reinforcement of the Russians in Murmansk There is substance as well as shadow in these plans.

6 It seems therefore probable that we shall have to send away from Great Britain four or even five divisions, besides the 18th Division, which will arrive at Halifax on November 7 on its journey round the Cape to Suez. We must expect that as soon as Hitler stabilises the Russian front he will begin to gather perhaps fifty or sixty divisions in the West for the invasion of the British Isles We have had reports, which may be exaggerated, of the building of perhaps 800 craft capable of carrying eight or ten tanks each across the North Sea and of landing anywhere upon the beaches Of course there will be parachute and airborne descents on a yet unmeasured scale One may well suppose his programme to be 1939, Poland, 1940, France; 1941, Russia, 1942, England, 1943——? At any rate, I feel that we must be prepared to meet a supreme onslaught from March onwards

7. In moving four or five divisions, including one armoured division, out of the United Kingdom in these circumstances we are evidently taking risks Should events happily take the course assumed in the earlier paragraphs of this letter, and should we in fact reduce our forces at home to the extent mentioned, it would be a very great reassurance and a military advantage of the highest order if you were able to place a United States Army Corps and Armoured Division, with all the air force possible, in the North of Ireland (of course at the invitation of that Government as well as of His Majesty's Government), thus enabling us to withdraw the three divisions we now have for the defence of Great Britain, besides the troops in Iceland, which are now being relieved

8 We should feel very much freer to act with vigour in the manner I have outlined if we knew that such a step on your part was possible Moreover, the arrival of American troops in Northern Ireland would exercise a powerful effect upon the whole of Eire, with favourable consequences that cannot be measured It would also be a deterrent upon German invasion schemes I hope this may find a favourable place in your thoughts I do not suggest that any decision should be taken until we see the result of the approaching battle

After some paragraphs dealing with questions of command and the relations of air and naval services to the Army, my letter continued

PART II

13 All my information goes to show that a victory in Cyrenaica of the British over the Germans will alter the whole shape of the war in the Mediterranean Spain may be heartened to fight for her neutrality A profound effect may be produced upon the already demoralised Italy Perhaps, most important of all, Turkey may be consolidated in her resistance to Hitler We do not require Turkey to enter the war aggressively at the present moment, but only to maintain a stolid, unyielding front to German threats and blandishments As long as Turkey is not violated or seduced, this great oblong pad of poorly developed territory is an impassable protection for the eastern flank of our Nile Army If Turkey were forced to enter the war we should of course have to give her a great deal of support which might be better used elsewhere, either in French North Africa or in the Caucasus We are making promises of support to Turkey (contingent on the military situation) which amount to between four and six divisions and twenty or thirty air squadrons, and we are actively preparing with them the necessary airfields in Anatolia But what Turkey requires to keep her sound is a British victory over Germans, making all promises real and living

14 These dispositions, as I have set them out, do not allow us *in the next six months* to make any serious contribution to the Russian defence of the Caucasus and Caspian basin. The best help we can give the Russians is to relieve the five Russian divisions now crowded into Northern Persia If these are brought home and used in the battle I have pledged the faith of Britain to Stalin that no rightful Russian interest shall suffer and that we will take no advantages in Persia at their expense I do not however see how, in the period mentioned, we can put more than a symbolic force into the Caucasus and the Russians retain a similar representation in Persia. The Russians much disturb Persia by their presence, their theories, and their behaviour, and the outbreak of disorders would mean that we should have to spread three or four British-Indian divisions to keep open the communications from the Persian Gulf to the Caspian These communications, which are a vital part of our joint Aid to Russia policy, would thus be largely choked by the need of supplying the extra forces I have been trying to get the Russians to see this point

15 In my telegram of July 25, 1941, which I sent you before our Atlantic meeting, I spoke of the long-term project for 1943 of the simultaneous landing of say 15,000 tanks from hundreds of specially fitted ocean-going ships on the beaches of three or four countries ripe for revolt I suggested that the necessary alterations could easily be made at this stage to a proportion of your merchant ships now building

on so vast a scale I now send you the drawings prepared by the Admiralty, which illustrate the kind of treatment the vessels would require. You will see that it is estimated only to add about £50,000 to their cost, and I suppose a proportionate delay. It seems to me that not less than 200 ships should be thus fitted. There is sufficient time, as we cannot think of [executing] such a plan before 1943 But the essential counterpart of the tank programme you have now embarked upon is the power to transport them across the oceans and land them upon unfortified beaches along the immense coastline Hitler is committed to defend I trust therefore, Mr. President, that this will commend itself to you.

16 I send you a short note which I have made upon the use of artillery, both field and flak This has its bearing upon the approaching offensive described in Part I, as well as upon the organisation of our Home Army to meet invasion * All the authorities are agreed upon the principles set forth, and you are very welcome to show this paper, should you think it worth while, to your officers

17. I also send, for your own personal information, a note I have made on the structure, present and future, of the British and Imperial armies which we are endeavouring to organise in 1942 † Of course the figure of about a hundred divisions does not, as is fully explained, mean a hundred mobile standard field divisions Some are garrison, some are anti-aircraft, and some are equivalents in brigade groups Broadly speaking however it represents a much more considerable deployment of military strength than we had planned at the outbreak of the war This has been rendered possible by the fact that we have not been engaged to any serious extent since the losses of Dunkirk, and that munitions and reserves have accumulated instead of being expended on a great scale

18 I have not referred to the Japanese menace, which has seemed to grow so much sharper in the last few days, nor to the splendid help you are giving us in the Atlantic, because we discussed these great matters so fully at our meeting, and events are now telling their own tale in accordance with our anticipations I still think however that the stronger the action of the United States towards Japan the greater the chance of preserving peace Should however peace be broken and the United States become at war with Japan, you may be sure that a British declaration of war upon Japan will follow within the hour. We hope to be able before Christmas to provide a considerable battle squadron for the Indian and Pacific Oceans

19 Lastly, Mr President, let me tell you how I envy the Lord Privy

* See p 446
† See p 452

Seal in being able to fly over to the United States and have a good talk with you. My place is here, and therefore I have taken this opportunity of writing you so long a letter. Might I ask that all reference to the forthcoming operations shall be kept absolutely secret, and for yourself alone? For this purpose I have separated the first part of the letter [containing the actual date of our offensive] from the rest, in the hopes that after reading it you will speedily consign it to the flames

With kindest regards and every good wish,

Believe me, Mr. President,

Your sincere friend,

WINSTON S. CHURCHILL

* * * * *

I also exposed these designs fully to the Middle East Commanders-in-Chief through the Minister of State, in order that they might realise that "Crusader", the battle they were about to fight, might open to us a continuing path, and also to emphasise once again the urgency of their offensive. This paper, addressed to a different quarter, presents another aspect of the same conception as my letter which Mr Attlee, in full accord, was bearing to the President.

Prime Minister to Minister of State 25 Oct 41

No one can assume that Germany will continue to be inextricably engaged in Russia during the winter It is far more probable that in a month or so the front in Russia, except in the south, will be stationary. Russia, through loss of munitions capacity, will have been reduced [temporarily] to a second-rate military Power, even if Moscow and Leningrad are held At any time Hitler can leave, say, one-third of his armies opposite Russia and still have plenty to threaten Great Britain, to put pressure upon Spain, and to send reinforcements to discipline Italy, as well as pushing on in the East

2. No one must suppose therefore that things will be better for us next year or in the spring On the contrary, for "Whipcord" [Sicily] it is probably a case of "Now or never" In my view, by the end of December these prospects will be indefinitely closed.

3 Hitler's weakness is in the air The British Air Force is already stronger than his, and, with American aid, increasing more rapidly The Russian Air Force is perhaps two-thirds of the German, well organised in depth and quite good. Even when the Italian Air Force is counted for what it is worth, Hitler has not enough Air for the simultaneous support of the operations open to his armies However,

the main part of the British Air Force has to be kept at home against invasion and is largely out of action.

4 It is therefore of importance to us to seek situations which enable us to engage the enemy's Air Force under favourable conditions in various theatres at the same time Such an opportunity is presented in a high degree by "Whipcord"

5 If we can before January secure the combination of airfields—Tripoli, Malta, Sicily, and Sardinia—and can establish ourselves upon them, a heavy and possibly decisive attack can be made upon Italy, the weaker partner in the Axis, by bombers from home based on the above system of airfields. The lack of aerodromes in Italy north of Sicily should make this possible. All air fighting in this new theatre is a direct subtraction from the enemy's normal air effort against Great Britain, against the Nile Valley, and in support of his south-eastward advance

6 Other advantages would be gained from British air predominance in the Central Mediterranean Subject to what is said in paragraph 9, the sea route from the Mediterranean would be opened to strongly escorted convoys, with all the savings in shipping accruing therefrom, as well as the stronger support of Eastern operations

7 The reaction upon France and French North Africa following such achievements, including the arrival of British forces on the Tunisian border, might bring Weygand into action, with all the benefits that would come from that

8. The foundation of the above is of course a victorious "Crusader". You ought to welcome the very powerful diversion of enemy strengths, particularly air strengths, which "Whipcord" would bring, provided it runs concurrently with "Acrobat" [the British conquest of Tripolitania]. Nothing gives us greater safety or baffles the enemy more than the sudden simultaneous upspringing of a great variety of targets This applies particularly in the few weeks which remain while the enemy is disentangling his surplus air forces from the Russian theatre and re-equipping them for action elsewhere As I am sure you realise, a slow advance in Libya by gradual stages after full preparation, making everything sure as you go, while nothing else happens anywhere, ensures the maximum of opposition, and certainly gives the time for it to be brought to bear Such a course would certainly give ample time for the strong German reinforcement of Sicily and for further domination of Italy by German troops I hope you feel, as I do, the fleeting character of the opportunity presented and how short is the breathing-space which now remains before Germany, having tidied up her front against Russia, can redispose her forces in other theatres It is, as you truly say, "a question of timing"

9. What will be the enemy's reaction to our attempt to gain a zone of air predominance in the Central Mediterranean and thus to open the passage? To bring superior air-power to bear will take him time, in view of the disposition of the airfields which will remain to him in Italy. Therefore he will need to put pressure on Spain to procure the closing of the Straits of Gibraltar. We are led to believe that the Spaniards will resent and resist any invasion of their country by the Germans, who are hated by the morose and hungry Spanish people. A British victory in "Crusader" will powerfully affect the mood of the Spanish Government. Hitler no doubt can force his way through Spain, just as he can dominate Italy. His deterrent is found in the political sphere. His aim is to establish a United States of Europe under the German hegemony and the New Order. This depends not only upon the conquest, but even more upon the collaboration, of the peoples. Nothing will more effectively destroy such hopes than the continuance of the murders and reprisals, slaughter of hostages, etc., which is now going on in so many countries. It will be a very serious step for him to take to add Spain and Italy to the already vast subjugated and rebellious areas over which his troops are spread.

10. For all the above reasons the close synchronisation of "Crusader" and "Whipcord" and their intimate connection seem highly desirable. On the other hand, it must be realised that we shall not be able to remain inactive except for the advance in Libya. I am confronted with Russian demands for a British force to take its place in the line on the Russian left flank at the earliest moment. It will not be possible in the rising temper of the British people against what they consider our inactivity to resist such demands indefinitely. If therefore it were decided to abandon "Whipcord" or alternative action in French North Africa at French invitation, as mentioned in Chiefs of Staff paper, it would be necessary to make preparations soon for moving a substantial force into Russia.

11. Your further comments should reach us by Monday night, when Defence Committee will meet.

* * * * *

The Commanders-in-Chief at Cairo took a different view. They looked to the defence of the Delta and the Canal, of Basra and the Caucasus, and the "bastion of the Taurus range" as the first essentials. They did not consider Sicily either practicable or necessary. Their minds lay right-handed and to the East, and should it be decided to move westward and should our efforts prosper they preferred the occupation of Bizerta to any attempt on Sicily. I fully understood their reasoning, which was strongly

supported by General Wavell from India. They expressed their conclusions in a telegram on October 27 embodying the arguments I have set forth

In consequence I abandoned the idea of an attack on Sicily ("Whipcord")

Prime Minister to General Ismay, for C O S Committee 28 Oct 41

In view of the Middle East latest telegram and of your own decisive abandonment of the project "Whipcord", which you advocated and which I espoused, I now consider that plan at an end

2 A force equivalent to two divisions and one armoured division should however stand ready to exploit "Crusader" and "Acrobat" should they be successful There is no reason, unless hope be a reason, to expect that General Weygand will invite us into Bizerta or Casablanca as the result of our impending operations Should he do so, we must be ready to profit by so great a turn of fortune The same Commanders should study this case forthwith, and it should be concerted with Middle East H Q , and especially with Admiral Cunningham.

3 The situation might arise either through the effect of a British victory, if gained, on French morale, or, which is not to be excluded, by a German demand on Pétain for the use of this theatre in consequence of the loss of Tripoli, actual or probable

4 The name of this operation will be "Gymnast"

5. It is important to know at once what orders should be issued to convert "Whipcord" into "Gymnast", so as to make the least possible inroads upon shipping, and, secondly, what the demands upon shipping would be and their full effect.

6 I have received advices from America that our friends there are much attracted by the idea of American intervention in Morocco, and Colonel Knox talked to Lord Halifax about 150,000 United States troops being landed there We must be ready, if possible, with a simultaneous offer, or anyhow a British offer, to General Weygand at any moment which seems timely after a success in "Crusader" This might turn the scale in our favour The offer should therefore be couched in most effective terms I will not myself address the President on the subject until after results of "Crusader" are apparent

7 I have had a letter from him by Lord Louis Mountbatten, in which he expresses lively interest in Tangier This should also be examined, but it evidently raises very great complications with the Spaniards and the French, and it would be wrong to sacrifice the chance of French co-operation for the sake of it.

Apart from dropping the Sicily project, we all held firmly to

our estimate of values and chances, and I had no difficulty in procuring a united decision.

Prime Minister to General Ismay, for C O.S Committee and C I G S 2 Nov 41

While fully understanding General Wavell's point of view, we have definitely decided to play the sequence, "Crusader", "Acrobat", "Gymnast" There can be no going back on this

Our plan, if everything prospered, was therefore the clearance of Cyrenaica by the defeat of Rommel's army, the advance to Tripoli, and, with the French help and invitation, if forthcoming, the entry into French North-West Africa The Sicily project was dependent upon the favourable outcome of the first two, and would be an alternative to the third. All this was however so speculative that I did not wish to continue the strategic argument with the Middle East Command.

Prime Minister to Minister of State 11 Nov 41

I could find no answer but silence to your and Auchinleck's telegrams about "Crusader" No view can be taken of the future until we know how this goes A battle is a veil through which it is not wise to peer

* * * * *

It may be well to see in the afterlight what was passing in the enemy's mind

In July 1941 the German Army Planning Staff had made a study of future operations, called Plan "Orient", to overthrow the British position in the Middle East Their major assumption was that the Russian war would come to a successful end in the autumn If so—a big "If"—a Panzer Corps from the Caucasus would drive southwards through Persia in the winter of 1941–42. From Bulgaria, if Turkey were acquiescent, a force of ten divisions, half of them armoured and motorised, would traverse Anatolia into Syria and Iraq. If Turkey resisted double that strength would be needed, and in consequence the plan would have to wait till 1942 The German and Italian forces in Africa were given only the third place Their rôle during the summer and autumn of 1941 was to be purely defensive, except that Tobruk was to be taken By the winter their losses in men and equipment would be made up, and then, when the general assault

was made on Persia and Iraq, and our attention and forces were distracted, the Axis army in Libya would advance on Cairo

The African adventure had never been favoured by the German High Command. German forces had only been sent to stop the Italian rout. When this was checked, and we were driven back, the success did not lead to any change of heart The sea voyage across the Mediterranean, with its perils from submarines and air attacks from Malta, was not to their liking North Africa would always remain a minor theatre, owing to the "greater difficulties in reinforcement which would be experienced by the Axis as compared with the Allies". Nor was co-operation with Italians, on land, sea, or air, particularly attractive to German minds. It was only with grudging acquiescence that Rommel's shortages were made up If the enemy had chosen they could have spared and ferried, at an accepted cost, the forces necessary to make our position untenable It will presently be seen how it was that Malta, their chief obstacle, was never assaulted No doubt their heavy loss in Crete was a deterrent

★ ★ ★ ★ ★

A letter sent at the beginning of August 1941 from the German War Staff to the generals commanding the West, North, and South Groups outlined the objectives which would be pursued on the morrow of a Russian defeat

(a) Strengthening of the armed forces in North Africa with a view to rendering possible the capture of Tobruk In order to permit the passage of necessary transports attacks by the German Air Force on Malta should be resumed

Provided that weather conditions cause no delay and the service of transports is assured as planned, it can be assumed that the campaign against Tobruk will begin in mid-September

(b) Plan "Felix" [i e, the seizure of Gibraltar, with the active participation of Spain] must be executed in 1941

(c) Should the campaign in the East be over, and Turkey comes to our side, an attack on Syria and Palestine in the direction of Egypt is contemplated, after a minimum period of 85 days for preparation . . .

★ ★ ★ ★ ★

The autumn and winter months were therefore our opportunity. The German Air was gone from Sicily. The Russian

front lapped up the fuel needed for the Italian Fleet During August 33 per cent of the supplies and reinforcements to Rommel were lost. In October this important figure rose to 63 per cent The Italians were pressed to organise an alternative route of supply by air At the end of September Mussolini undertook to carry reinforcements by air to Tripoli at the rate of fifteen thousand men a month, but by the end of October only nine thousand had arrived Sea transport to Tripoli was at the same time brought to a standstill, and only a few convoys ran our blockade and reached Benghazi The October losses at last however forced the German High Command to send oil to the Italian Navy A far more important step was also taken Admiral Doenitz reluctantly agreed to move twenty-five German U-boats from the Atlantic struggle into the Mediterranean Here was a real stroke, the consequences of which were not long to be delayed

In the interval our control exercised from Malta was decisive, and the activities of "Force K", which the Admiralty, at my desire, had created there, yielded rich prizes On the night of November 8, acting on an aircraft report, they pounced upon the first Italian convoys since the resumption of traffic, consisting of seven merchant ships, escorted by six destroyers, two cruisers, and supported by four other destroyers All the merchant ships were quickly annihilated One destroyer was sunk and another damaged by our cruisers. The Italian cruisers took no part in the affair I sent this good news to the President.

Former Naval Person to President Roosevelt 9 Nov 41

The destruction between Italy and Greece of the Axis convoy destined for Benghazi is highly important both in itself and in its consequences It is also noteworthy that the two Italian heavy cruisers would not face our two 6-inch light cruisers, nor their six [actually four] destroyers our two

I have also an increasingly good impression of the Moscow front

Once more the convoys were suspended, and Rommel had good reason to complain to the German High Command

*General Rommel to O K W** 9 Nov 41

1 The tempo of the transport of troops and supplies to North Africa has been reduced still more To the end of October 1941 of the

* Oberkommando des Wehrmacht, Supreme Command of the German Army

60,000 tons of supplies promised by the Italians only 8,093 tons have reached Benghazi Of those troops originally intended for the attack on Tobruk about one-third of the artillery and various important communications units will not arrive from Europe even by November 20 Furthermore, it is uncertain when the twenty 15.5-cm guns bought from France in Tunis will arrive. . Of the requested three Italian divisions for an attack in November only one will be available, and that below strength

* * * * *

But now our interval of immunity and advantage came to its end The U-boats arrived upon the scene. On November 12, while returning to Gibraltar after flying more aircraft into Malta, the *Ark Royal* was struck by a torpedo from a German U-boat. All attempts to save the ship failed, and this famous veteran, which had played such a distinguished part in so many of our affairs, sank when only twenty-five miles from Gibraltar This was the beginning of a series of grievous losses to our Fleet in the Mediterranean and a weakness there which we had never known before. All was however now ready for our long-delayed offensive, and it is to the Western Desert that we must now turn.

* * * * *

On November 15 I sent General Auchinleck a message from the King for him to use "if, when, and as" he thought fit·

Prime Minister to General Auchinleck 15 Nov 41

I have it in command from the King to express to all ranks of the Army and Royal Air Force in the Western Desert, and to the Mediterranean Fleet, His Majesty's confidence that they will do their duty with exemplary devotion in the supremely important battle which lies before them. For the first time British and Empire troops will meet the Germans with an ample equipment in modern weapons of all kinds· The battle itself will affect the whole course of the war. Now is the time to strike the hardest blow yet struck for final victory, home, and freedom The Desert Army may add a page to history which will rank with Blenheim and with Waterloo The eyes of all nations are upon you. All our hearts are with you May God uphold the right!

CHAPTER XXX

OPERATION "CRUSADER" ASHORE, ALOFT, AND AFLOAT

Sense of Drama Absent from Modern Battles – The Opposing Armies and Plans – The Eighth Army Attack – Surprise Achieved – The First Three Days – The XIIIth Corps Pierces the Frontier Line – General Auchinleck's Account of the Battle – Rommel's Daring Stroke – The Swaying Struggle – Auchinleck Flies to the Desert Headquarters – His Orders to General Cunningham Save the Battle – His Decision to Replace General Cunningham – My Letter to the President of November 20 – The Vichy Danger – Naval Attacks upon the Enemy Convoys – Resolute Advance of the New Zealand Division to Sidi Rezegh – Rommel Retreats, Abandoning His Frontier Garrisons – Tobruk Relieved – Losses in the Battle – Gloom in Rome – Naval Disasters – "Ark Royal" and "Barham" Sunk – "Human Torpedoes" Attack in Alexandria Harbour – "Queen Elizabeth" and "Valiant" Heavily Damaged – "Force K" Stricken – Loss of the "Neptune" – Virtual Elimination of the British Eastern Mediterranean Fleet – Hitler Brings Back Air-Power from Russia to Sicily – Our Nadir in the Mediterranean.

DESCRIPTIONS of modern battles are apt to lose the sense of drama because they are spread over wide spaces and often take weeks to decide, whereas on the famous fields of history the fate of nations and empires was decided on a few square miles of ground in a few hours The conflicts of fast-moving armoured and motorised forces in the Desert present this contrast with the past in an extreme form

Tanks had replaced the cavalry of former wars with a vastly more powerful and far-ranging weapon, and in many aspects their manœuvres resembled naval warfare, with seas of sand instead of salt water The fighting quality of the armoured
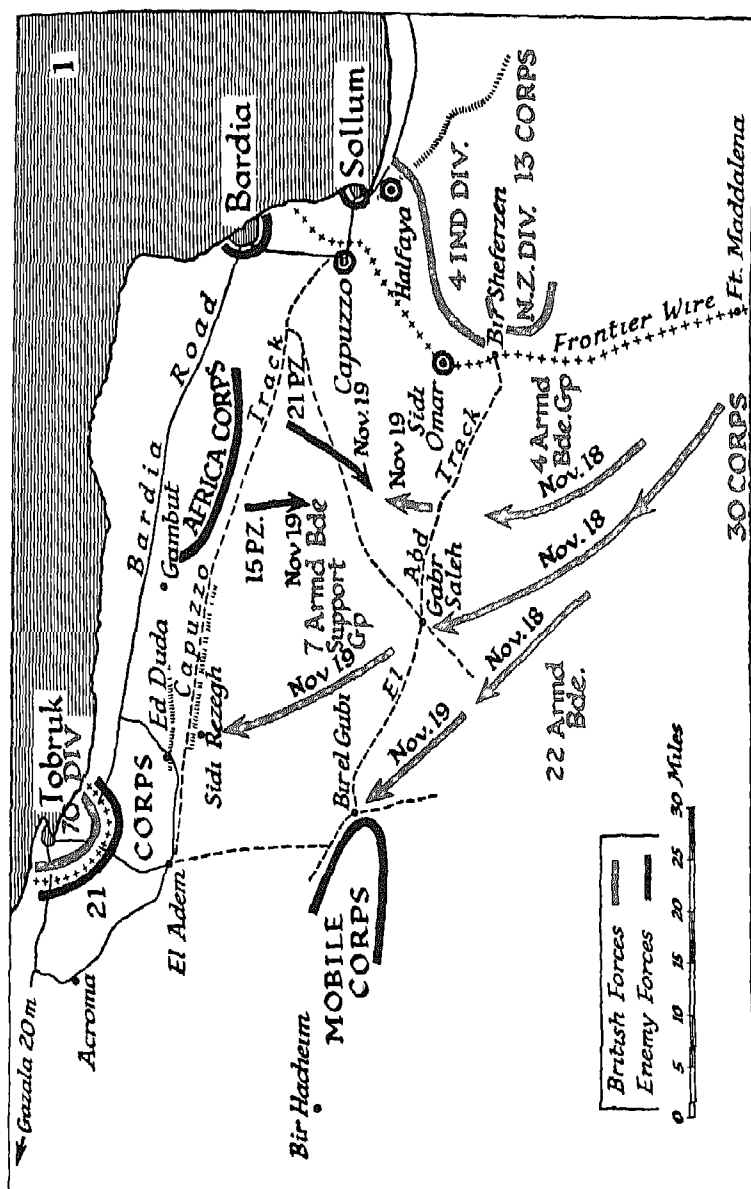
ENEMY DISPOSITIONS Nov.18. OPENING PHASE Nov.18-19

column, like that of a cruiser squadron, rather than the position where they met the enemy, or the part of the horizon on which he appeared, was the decisive feature Tank divisions or brigades, and still more smaller units, could form fronts in any direction so swiftly that the perils of being outflanked or taken in rear or cut off had a greatly lessened significance. On the other hand, all depended from moment to moment upon fuel and ammunition, and the supply of both was far more complicated for armoured forces than for the self-contained ships and squadrons at sea. The principles on which the art of war is founded expressed themselves therefore in novel terms, and every encounter taught lessons of its own.

The magnitude of the war effort involved in these Desert struggles must not be underrated Although only about ninety or a hundred thousand fighting troops were engaged in each of the armies, these needed masses of men and material two or three times as large to sustain them in their trial of strength. The fierce clash of Sidi Rezegh, which marked the opening of General Auchinleck's offensive, when viewed as a whole, presents many of the most vivid features of war The personal interventions of the two Commanders-in-Chief were as dominant and decisive and the stakes on both sides were as high as in the olden times.

* * * * *

General Auchinleck's task was first to recapture Cyrenaica, destroying in the process the enemy's armour, and, secondly, if all went well, to capture Tripolitania. For these purposes General Cunningham, who was to command the newly named Eighth Army, was given the XIIIth and the XXXth Corps, comprising, with the Tobruk garrison, about six divisions, and three brigades in reserve.* The total British tank strength was 724, including 367 cruisers with another 200 in reserve The Royal Air Force was to intensify its action for a month beforehand, so as to harry the hostile communications and gain mastery in the air for the

* The following was the composition of the Eighth Army

XIII Corps (Godwin-Austen)
4th Indian Division
New Zealand Division
1st Army Tank Brigade

XXX Corps (Norrie)
7th Armoured Division
(7th Armoured Brigade,
22nd Armoured Brigade)
4th Armoured Brigade Group
1st South African Division (two brigades)
22nd Guards Brigade Group

battle. Under Air Vice-Marshal Coningham, the Western Desert Air Force consisted of sixteen fighter squadrons, twelve medium bomber, five heavy bomber, and three Army Co-operation squadrons. Out of 1,311 modern combat aircraft on the strength 1,072 were serviceable, in addition to ten squadrons operating from Malta

Seventy miles behind Rommel's front lay the garrison of Tobruk, comprising five brigade groups and an armoured brigade This fortress was his constant preoccupation, and had hitherto prevented by its strategic threat any advance upon Egypt. To eliminate Tobruk was the settled purpose of the German High Command, and all preparations possible had been made to begin the assault upon it on November 23. Rommel's army comprised the formidable Afrika Corps, consisting of the 15th and 21st Panzer Divisions and the 90th Light Division, and seven Italian divisions, of which one was armoured The enemy tank strength was estimated at 388, but, as we now know from enemy records, was actually 558 Of the medium and heavy, two-thirds were German and carried heavier guns than the 2-pounders of our tanks The enemy were moreover 'markedly superior in anti-tank weapons The Axis Air Force consisted of 190 German aircraft, of which only 120 were serviceable at the moment of attack, and over 300 Italian aircraft, of which possibly 200 were serviceable

* * * * *

The Eighth Army, under General Cunningham, was to attack with its two corps and drive west and north towards Tobruk, whose garrison was at the same time to make a heavy and violent sortie towards them. For this purpose the XIIIth Corps was to engage and hold the enemy frontier defences from Halfaya to Sidi Omar, and outflank and surround them, thus cutting off all the troops who held them, and then march towards Tobruk. Meanwhile the XXXth Corps, which contained almost the whole of our armour, was to sweep widely on the Desert Flank, seeking to find and fight the mass of Rommel's armour, and at least to occupy them so that the XIIIth Corps was shielded

* * * * *

In spite of the immense preparations complete tactical surprise was achieved. The Axis army was in process of taking up

fresh positions for the attack on Tobruk due for November 23. In order to strike at the brain and nerve-centre of the enemy's army at the critical moment, fifty men of the Scottish Commando, under Colonel Laycock, were carried by submarine to a point on the coast two hundred miles behind the enemy's line The thirty who could be landed in the rough sea were formed into two parties, one to cut telephone and telegraph communications, and the other, under Lieut-Colonel Keyes, son of Admiral Keyes, to attack Rommel's house At midnight on the 17th one of the Headquarters houses was broken into and a number of Germans were shot, but Rommel himself was not there. In the close fighting of a pitch-dark room Keyes was killed. The award of a posthumous Victoria Cross was the tribute to his conduct.*

* * * * *

Early on November 18, in heavy rain, the Eighth Army leapt forward, and, according to their plan, the XIIIth Corps curled round the enemy positions on the frontier, while the XXXth Corps, meeting at first with no resistance, pressed upwards from the south to Sidi Rezegh This ridge, about a hundred feet high, is almost a cliff on its northern side, dominating the Capuzzo track, Rommel's main line of communications from west to east Near it lies a very large airfield Southwards, although not a conspicuous feature, it gives a good view over the undulating desert It was judged by both sides to be the key to the whole battle area and the essential step to the relief of Tobruk

For the first three days all went well. On the 19th what was thought to be the bulk of the German armour moved south from the coastal zone where they had been lying, and next day met our 4th and 22nd Armoured Brigades fifteen miles west of Sidi Omar The British 7th Armoured Division in its search for the enemy became widely dispersed. One of its brigades (the 7th) and the Support Group took Sidi Rezegh These and other units were successively attacked by the Afrika Korps, whose armour had been kept more concentrated During the whole of the 21st and 22nd a savage struggle raged, mainly around and upon the

* The sea was too rough for the re-embarkation of the survivors of the two raiding parties, and under fierce pursuit Colonel Laycock ordered them to scatter and hide in the broken country Only Colonel Laycock and Sergeant Terry who had been conspicuous in the attack on the German Headquarters, eventually regained our lines, after five weeks of privation and desperate adventures

FIRST BATTLE OF SIDI REZEGH

airfield. Into this arena virtually all the armour on both side was drawn, and surged to and fro in violent struggles under the fire of rival batteries The stronger armament of the German tanks and the larger numbers they brought to the points of collision gave them the advantage. In spite of the heroic and brilliant leadership of Brigadier Jock Campbell the Germans prevailed, and we suffered more heavily than they in tanks On the night of the 22nd the Germans recaptured Sidi Rezegh General Norrie, commanding the XXXth Corps, having lost two-thirds of his armour, ordered a general withdrawal of twenty miles in order to reorganise his command in the area north of the El Abd track This was a heavy setback

* * * * *

On the night of the 19th Auchinleck telegraphed to me· "It now seems certain that the enemy was surprised and unaware of the imminence and weight of our blow Indications, though these have to be confirmed, are that he is now trying to withdraw from area of Bardia-Sollum. Until we know the area reached by our armoured troops to-day it is not possible to read the battle further at the moment. I myself am happy about the situation. . . ." Tedder also reported. "The present phase in the air battle appears to be going satisfactorily. The exceptional storms on the 17/18th upset our plans for neutralising the German fighters, but they also helped to limit enemy air action during the first two days. Another fourteen Ju.87's were burnt on the ground yesterday There were fifty-six heavy bomber sorties at night. Malta included Benghazi among its targets Ten tons of ammunition were flown up to the 4th Armoured Brigade."

* * * * *

Meanwhile on November 21, the enemy armour being committed to battle, General Cunningham ordered the XIIIth Corps to advance. The 4th Indian Division had already curled round Sidi Omar On its left the New Zealand Division, under General Freyberg, moved north, and reached the outskirts of Bardia, thus severing the communications of all the frontier garrisons They captured the headquarters of the Afrika Korps, and on the 23rd nearly regained Sidi Rezegh, from which their comrades of the 7th Armoured Division had just been driven. On November 24 Freyberg concentrated the bulk of the New Zealanders five miles

to the east of the airfield. On this day therefore our armoured forces were reorganising after their repulse from Sidi Rezegh The sortie from Tobruk had been launched, and was fighting hard against German infantry, but had not broken through. The New Zealand Division stood before Sidi Rezegh after a triumphant march. The enemy frontier garrisons had been cut off, and their armour, having won its battle against the XXXth Corps, lay to the north of El Gubi Very heavy blows and severe losses had been exchanged, and the battle hung in the balance.

* * * * *

No better account can be given of this battle than is contained in General Auchinleck's final dispatch, which was published in the *Gazette* in 1948

Since the Panzer divisions now seemed to be committed to battle and were reported to be losing a considerable number of tanks, General Cunningham allowed the signal to be given for the Tobruk sorties to begin and for the XIIIth Corps to start operations On November 21 however our difficulties began. The enemy, as was to be expected, reacted at once to the threat to Sidi Rezegh, and his armoured divisions evaded the 4th and 22nd Armoured Brigades The whole of the enemy armour then combined to drive us from this vital area and to prevent help reaching the Support Group and the 7th Armoured Brigade, which were isolated there Neither of these formations was designed to carry out a prolonged defence, and it is greatly to their credit that they managed to do so, unaided, throughout the 21st The 5th South African Infantry Brigade, which was expected to reach the scene before the development of the enemy attack, failed to do so, partly owing to the opposition of the Ariete Armoured Division and partly because of inexperience in handling the very large number of vehicles with which it took the field

Next day all three armoured brigades joined in the defence of the area But our tanks and anti-tank guns were no match for the German, although they were fought with great gallantry, and on the evening of November 22 the XXXth Corps was compelled to retire, having lost two-thirds of its tanks and leaving the garrison of Tobruk with a huge salient to defend.

The enemy rounded off his success in spectacular fashion. In a night attack he surprised and completely disorganised the 4th Armoured Brigade, whose hundred tanks represented two-thirds of our remaining armoured strength On the 23rd he practically annihilated the 5th South African Infantry Brigade, one of the only two infantry

ı the 24th with his armoured divisions he
troke to the frontier Before this it had
irst reports had grossly exaggerated enemy
ıt least as many tanks as we had and better,
ecover more from the battlefield, which

ance of strength between the opposing
a most critical situation.

* * * *

atic episode which recalls "Jeb" Stuart's
1862 on the York Town peninsula in
r. It was however executed with an
as an army in itself, and whose destruc-
d the rest of the Axis army Rommel
ical initiative and to force his way east-
th his armour in the hope of creating
ıg so much alarm as to prevail upon our
e struggle and withdraw. He may well
the fortune which had rewarded his
· preceding Desert battle of June 15 and led
treat at the crucial moment How nearly
vill be apparent as the story proceeds.
er part of the Afrika Korps, still the most
ield, and thrust down the El Abd road or
rowly missing the headquarters of the
great dumps of supplies, without which
nued the fight On reaching the frontier
lumns, some of which turned north and
on twenty miles into Egyptian territory
our rearward areas and captured many
however made no impression on the 4th
y were pursued by detachments hastily
Armoured Brigade, the Support Group,
e Above all our Air Force, which had
ree of mastery in the air above the con-
him all the time and all the way Rom-
y unsupported by their own Air Force,
troops had known and endured when it
minated the battle skies On the 26th all

ROMMEL'S RAID Nov.24-28. SECOND BATTLE OF SIDI REZEGH Nov.29-30

the enemy's armour turned northwards and sought haven in and near Bardia Next day they hurried off to the west, back to Sidi Rezegh, whither they were urgently summoned. Rommel's daring stroke had failed, but, as will now be seen, only one man—the opposing Commander-in-Chief—stopped him.

* * * * *

It may be of interest to cite some extracts from the daily telegrams which reached me during this period from Auchinleck and Tedder. On the 21st Auchinleck sent favourable news. "With luck the earth is stopped and the hounds in full cry." And later in the day: "Engagements between the 22nd Armoured Brigade and enemy armoured forces at El Gubi on November 18 heavier than earlier reports showed, and apparently resulted in our losing about forty cruiser tanks, of which many have since been repaired, against estimated enemy losses of fifty-five. Sidi Rezegh is held by the Support Group of the 7th Armoured Division and the 5th South African Infantry Brigade. Tobruk garrison made its sally this morning. . . . It is very difficult to arrive at a firm estimate of the enemy tank losses, as the battle has moved and is moving with such great speed . . . A marked feature of operations to date has been our complete air supremacy and excellent co-operation between ground and air." On the 22nd he summed up his report: "Prospects of achieving our immediate object, namely, the destruction of the German armoured forces, seem good" And later: "Spirit and dash shown by commanders and troops have been remarkable. In my opinion Cunningham has so far fought this extremely complicated battle with great skill and daring. . . . I think much depends on whether a substantial proportion of tanks of the 15th German Armoured Division took part with the 21st Armoured Division in the armoured battles of the last four days, or whether this division is still more or less intact. I hope for the first, but cannot yet be certain" On the 23rd a somewhat darker impression was conveyed: "It looks as if the battle is moving to its climax. Some at any rate of the German tanks north of El Gubi succeeded in breaking out. Our troops at Sidi Rezegh were being strongly pressed yesterday from east and west by enemy reported to have a hundred tanks in action. . . ."

These fragmentary quotations show the impressions prevailing

almost from hour to hour at the Supreme Headquarters, and are of course a very small part of the reports which they sent

* * * * *

The heavy blows we had received and the impression of disorder behind our front, caused by Rommel's raid, led General Cunningham to represent to the Commander-in-Chief that a continuation of our offensive might result in the annihilation of our tank force, and so endanger the safety of Egypt This would mean acknowledged defeat and failure of the whole operation At this decisive moment General Auchinleck intervened personally. At Cunningham's request he flew with Air Marshal Tedder to the Desert Headquarters on November 23, and, with full knowledge of all the dangers, ordered General Cunningham "to continue to press the offensive against the enemy". By his personal action Auchinleck thus saved the battle and proved his outstanding qualities as a commander in the field

To me he telegraphed on the 24th from the Advanced Headquarters

> On arrival I found Cunningham perturbed at the situation, owing to the very small number of our tanks reported still in running order Apparently five days' continuous fighting and manœuvring resulted in considerable disorganisation and losses from enemy action and mechanical breakdowns in our armoured division There are sure to be reasons for this, but they do not matter now . In his attack yesterday evening the enemy used Italian tanks, which I take as evidence that he is running short of his own I am convinced that he is fully stretched and desperate, and that we must go on pressing him relentlessly We may immobilise temporarily at least practically all our tanks in the process, but that does not matter if we destroy all his The fact that he has abandoned Sidi Omar and Sollum garrisons to their fate and that we have already taken over three thousand prisoners, including a thousand Germans, . . is significant I have accordingly ordered General Cunningham to attack with all available resources, regain Sidi Rezegh, and join hands with Tobruk garrison, which is to co-operate by attacking the enemy on its front. Commanders and troops in great heart, and New Zealand Division is concentrated in front of Sidi Rezegh with Infantry tanks. The enemy is fighting desperately, but we always expected that.

I replied at once:

Prime Minister to General Auchinleck 25 Nov 41

Yours of 24th I cordially endorse your view and intentions, and His Majesty's Government wish to share your responsibility for fighting it out to the last inch, whatever may be the result It is all or nothing, but I am sure you are the stronger and will win

2 You have no doubt had my message about the rest of the 1st Armoured Division landing at Suez to-day Ram it in if useful at earliest without regard for future Close grip upon the enemy by all units will choke the life out of him

3 Am immensely heartened by your magnificent spirit and will-power Say "Bravo" to Tedder and R A.F. on air mastery.

* * * * *

On Auchinleck's return to Cairo on the 25th he telegraphed to me: "I have decided to replace General Cunningham temporarily by General Ritchie, my present Deputy Chief of Staff This is not on account of any misgiving as to the present situation in my mind, but because I have reluctantly concluded that Cunningham, admirable as he has been up to date, has now begun to think defensively, mainly because of our large tank losses Before taking this drastic step I gave the matter prolonged and anxious consideration and consulted the Minister of State on my return this afternoon I am convinced that I am right, though I realise the undesirability of such a step at present on general grounds. I will try and minimise publicity as much as possible."

In his official letter to General Cunningham, Auchinleck wrote "I have formed the opinion . . . that you are now thinking in terms of defence rather than offence, and I have lost confidence in your ability to press to the bitter end the offensive which I have ordered to continue."

The Minister of State, Oliver Lyttelton, explained and strongly supported the Commander-in-Chief's decision. To him I telegraphed at once

Prime Minister to Minister of State 25 Nov 41

General Auchinleck's authority over all commanders is supreme, and all his decisions during the battle will be confirmed by us Your action and attitude highly approved Communicate [this] to General Auchinleck

Here I shall leave this incident, so painful to the gallant officer concerned, to his brother the Naval Commander-in-Chief, and to General Auchinleck, who was a personal friend of both I

particularly admired General Auchinleck's conduct in rising superior to all personal considerations and to all temptations to compromise or delay action.

* * * * *

At this point in the battle I must turn aside to record some other closely related events. On November 20, while the news was still good, I sent an account to the President urging him to do all in his power to keep Vichy motionless in these cardinal days.

Former Naval Person to President Roosevelt 20 Nov 41

The approach and deployment of our forces in Libya has been most successful, and the enemy was taken by surprise Only now does he realise the large scale of our operations against him Heavy fighting between the armoured forces seems probable to-day Orders have been given to press what is now begun to a decision at all costs The chances do not seem to be unfavourable

2. It would be disastrous if Weygand were to be replaced by some pro-Hun officer just at the moment when we are likely to be in a position to influence events in North Africa both from the East and from home I hope you will try your utmost to persuade Vichy to preserve Weygand in his command If this cannot be achieved some friendly figure from retirement, like General Georges, might be agreed upon I have not seen Georges since the collapse, but I have reason to believe his heart is sound. I knew him very well Anyhow, Mr President, Tunis and all French North Africa might open out to us if we gain a good victory in Libya, and we must be ready to exploit success I am afraid, on the other hand, lest Hitler may demand to occupy Bizerta in view of possible danger to Tripoli. It is now or never with the Vichy French, and their last chance of redemption

* * * * *

It was vital also at this moment to cut off Rommel's fuel supply, and I therefore telegraphed both to General Auchinleck and the Naval Commander-in-Chief urging that a blow should be struck at the enemy communications

Prime Minister to General Auchinleck 23 Nov 41

When one sees the invaluable cargoes of fuel now being directed upon Benghazi, and the enemy air concentration at Benina, it would seem that quite exceptional risk should be run to sterilise these places, even for three or four days The enemy's fear of this operation is obviously well founded The only time for such a venture is while he is in the throes of the battle. Chance of success will diminish as

soon as he has been able to reinforce with troops withdrawing or escaping from the battle zone There is a lot to be picked up cheap now, both at Benghazi and west of Agheila, which will rise in price enormously once the main battle is over I am sure you will be considering this. Please remember how much they got by brass and bluff at the time of the French collapse What is the mission of the Oasis force?

Prime Minister to Admiral Cunningham, Commander-in-Chief Mediterranean 23 Nov 41

I asked the First Sea Lord to wireless you to-day about the vital importance of intercepting surface ships bringing reinforcements, supplies, and above all fuel, to Benghazi Our information here shows a number of vessels now approaching or starting Request has been made by enemy for air protection, but this cannot be given owing to absorption in battle of his African air force All this information has been repeated to you I shall be glad to hear through Admiralty what action you propose to take. The stopping of these ships may save thousands of lives, apart from aiding a victory of cardinal importance.

The Admiral replied to me personally forthwith

Yours of the 23rd I am naturally very much alive to vital importance of Benghazi supply route, and First Sea Lord will by now have told you dispositions which were already in hand to deal with situation Our first move was to hold up enemy convoys by means of threats from the forces at each end of Mediterranean, and this has had considerable success Now that convoys are resuming sailings they will be attacked by surface air and submarine forces Unfortunately the reported absorption of the German Air Force in land battles to which you refer has not been borne out in practice, and a very lively interest is being taken by the enemy in our movements Conversely, our main weakness in reconnaissance forces is adding a heavy hazard to work of our light forces, who have of necessity to operate without close support if use is to be made of their speed

He did his utmost, but it was from Malta that the most effective blow was struck. On the night of the 24th the cruisers and destroyers of Force "K" sallied forth and caught the two oil transports on which the enemy counted highly To Auchinleck I was able to send this good news:

25 Nov 41

We sent *Aurora* and *Penelope* out from Malta last night, and duly sank the two vital oil transports *Procida* and *Maritza* The Admiral is after the others

* * * * *

While Rommel was engaged with the Afrika Korps on his audacious but costly excursion through the communications and rear of the British Eighth Army, Freyberg and his New Zealanders, supported by the 1st Army Tank Brigade, pressed hard upon Sidi Rezegh. After two days of severe fighting they recaptured it Simultaneously the garrison of Tobruk resumed its sortie and captured Ed Duda On the night of the 26th contact was established between the Tobruk garrison and the relieving force. Some units of the New Zealand Division and the XIIIth Corps Headquarters entered beleaguered Tobruk. This situation brought Rommel back from Bardia. He fought his way to Sidi Rezegh, attacked in flank by the reorganised 7th Armoured Division, now mustering 120 tanks He recaptured Sidi Rezegh. He drove back the 6th New Zealand Brigade with crippling loss They and the 4th Brigade, except for two battalions which joined up with the Tobruk garrison, were withdrawn south-eastwards to the frontier, where the heroic division re-formed after losing more than three thousand men. The Tobruk garrison, again isolated, held on by a bold decision to all the ground gained

General Ritchie now regrouped his army so as to bring the garrison of Tobruk under the XIIIth Corps and to pass the New Zealand Division into reserve El Adem, in a valley fifteen miles west of Sidi Rezegh, lay also upon the main east-to-west communications of the enemy, and was now the objective. Both our corps were used. The XIIIth advanced from Ed Duda, and the XXXth came up from the south During these preparations Rommel made a final thrust to rescue his frontier garrisons It was repulsed. The general retreat of the Axis army to the Gazala line then began.

* * * * *

Our telegrams continued to flow. On the 26th Auchinleck said "The news to-day is so far scanty, but good Tobruk garrison was within sight of the New Zealanders this morning, and I have just heard that the latter recaptured Sidi Rezegh. Fierce fighting continues. Enemy armoured and motorised forces are still apparently milling around in our rear areas between Bardia, Sheferzen, and Halfaya, but with little result. It is now certain that this armoured and motorised thrust was a raid to divert our attention from Tobruk. It has failed signally."

About General Cunningham's replacement he added: "I am

most grateful to you for your support. In this, as in everything else, I cannot tell you what it means to us, and it is not to be measured in terms of armoured divisions or anything else. Rommel is not done yet, but we have regained the initiative, I feel, and I trust we shall keep it"

Prime Minister to General Auchinleck 26 Nov 41

You are no doubt constantly considering the movement forward of reserves towards the battle zone I am well aware that this is conditioned by transport and how important it is for you to do the work with the minimum mouths to feed. I should be glad however to know what you have in reserve Suppose you need another division, or two or three brigades, where would you get them from? You could, I suppose, if necessary, bring a brigade of the 50th Division back from Baghdad

Please let me know your resources and ideas

Auchinleck replied that, on account of the difficulty of maintaining them in the Desert, it was more a question of being able to replace tired troops by fresh ones than of adding new formations, though he would of course be glad to have more troops forward to ensure momentum He was bringing one infantry brigade group of the 50th Division into the G H Q reserve, but did not think it necessary to recall the other two brigade groups, which were on their way to Iraq.

Although I cordially approved what had been done in the High Command, I thought it a pity that Auchinleck did not take it over himself instead of entrusting it to one of his staff officers, as yet unproved in the field

Prime Minister to General Auchinleck 27 Nov 41

C I G S and I both wonder whether, as you saved the battle once, you should not go up again and win it now Your presence on the spot will be an inspiration to all However, this of course is entirely for you to judge

He replied:

I considered very carefully whether I should not myself take Cunningham's place in command of the Eighth Army I realise well what hangs on this battle, but concluded that I was more useful at G.H Q , where I could see the whole battle and retain a proper sense of proportion I shall go forward to visit [Ritchie] of course, as required

Neither I nor the C I.G.S. was convinced, but we did not pres our point

Auchinleck's message of the 30th concluded: "Our supply column reached Tobruk morning of 29th The Commander of XIIIth Corps' [General Godwin-Austen] birthday message to you is, 'Corridor to Tobruk clear and secure. Tobruk is as relieved as I am.'"

On December 1 Auchinleck went himself to the Advanced Headquarters, and remained for ten days with General Ritchie He did not assume the command himself, but closely supervised his subordinate This did not seem to me the best arrangement for either of them However, the power of the Eighth Army was now predominant, and on December 10 the Commander-in-Chief could tell me· "Enemy is apparently in full retreat towards the west. El Adem is taken South African and Indian troops joined hands there with British from Tobruk, and I think it now permissible to claim that the siege of Tobruk has been raised We are pursuing vigorously in fullest co-operation with the Royal Air Force."

* * * * *

We now know from German records that the enemy losses in the "Crusader" battle, including the garrisons now cut off at Bardia, Sollum, and Halfaya and later made prisoners, were about 13,000 Germans and 20,000 Italians, a total of 33,000, together with 300 tanks. The comparable British and Imperial Army losses in the same period (November 18 to mid-January) were 2,908 officers and men killed, 7,339 wounded, and 7,457 missing; total, 17,704, together with 278 tanks Nine-tenths of this loss occurred in the first month of the offensive.

* * * * *

Here then we reached a moment of relief, and indeed of rejoicing, about the Desert war The German records show the gloom that descended on military circles in Rome

2 Dec 41

> The situation in North Africa demands the utmost efforts to supply the German forces, to replenish the considerable losses, and to bring up first-rate reinforcements With the present position at sea, air transport must be the main carrier across the Mediterranean

And again on December 4

The Duce speaks of freeing Bizerta as the only means of overcoming transport difficulties The occupation of Malta is not possible He does not believe that Libya can be held much longer without supply through Tunisia. The situation for the Axis in the Mediterranean and North Africa is critical because the supply routes were not kept open in time. Past decisions have been strongly influenced by the campaign against Russia

The Fleet was at all times a vital factor in the Desert war. By destroying Axis supplies and sustaining the Eighth Army in its advance, the Royal Navy as well as the Royal Air Force had helped to bring Rommel's armies to the brink of ruin But now at this crucial moment our naval power in the Eastern Mediterranean was virtually destroyed by a series of disasters

* * * * *

The impact of the U-boats in the Mediterranean was heavy. The *Ark Royal* was gone A fortnight later the *Barham* was struck by three torpedoes and capsized in as many minutes with the loss of over 500 men More was to follow On the night of December 18 an Italian submarine approached Alexandria and launched three "human torpedoes", each controlled by two men They penetrated the harbour while the boom gate was open for the passage of ships. They fixed time-bombs, which detonated early on the morning of the 19th under the battleships *Queen Elizabeth* and *Valiant*. Both ships were heavily damaged and became a useless burden for months Thus in the course of a few weeks the whole of our Eastern battle fleet was eliminated as a fighting force. I have yet to tell of the loss in another theatre of the *Prince of Wales* and *Repulse* We were successful in concealing the damage to the battle fleet for some time. In Secret Session a good deal later I said to the House of Commons· "In a few weeks we lost, or had put out of action for a long time, seven great ships, or more than a third of our battleships and battle-cruisers"

But Force "K" was also stricken. On the very day of the Alexandria disaster news reached Malta of an important enemy convoy heading for Tripoli. The cruisers *Neptune*, *Aurora*, and *Penelope*, with four destroyers, at once went out to catch them Approaching Tripoli our ships ran into a new minefield The *Neptune* was hard hit, and both the other cruisers were damaged,

but were able to steam away. Presently the destroyer *Kandahar* entered the minefield to rescue the crew of the *Neptune*, but she too struck a mine and became helpless The *Neptune*, drifting in the minefield, struck two more mines and sank Only one man of her crew of over 700 survived—and he as a prisoner of war after four days on a raft, on which his captain, R C O'Connor, and thirteen others perished The *Kandahar* remained afloat and eventually drifted clear of the minefield, and the next night the destroyer *Jaguar* found her, and saved most of her company

The German Staff comment on this incident is instructive "The sinking of the *Neptune* may be of decisive importance for holding Tripolitania. Without this the British force would probably have destroyed the Italian convoy There is no doubt that the loss of these supplies at the peak of the crisis would have had the severest consequences"

Thus was extinguished the light of Force "K". The cruiser *Galatea* had also been sunk by a German U-boat. All that remained of the British Eastern Mediterranean Fleet was a few destroyers and the three cruisers of Admiral Vian's squadron

Up to the end of November our combined efforts by land, sea, and air had prevailed in the Mediterranean We had now suffered fearful naval losses. And now on December 5 Hitler, realising at last Rommel's mortal peril, ordered the transfer of a whole Air Corps from Russia to Sicily and North Africa A new air offensive against Malta was launched under General Kesselring's direction. The attacks on the island reached a new peak, and Malta could do no more than struggle for life. By the end of the year it was the Luftwaffe who held the mastery over the sea routes to Tripoli, and thus made possible the refit of Rommel's armies after their defeat. Seldom has the interaction of sea, air, and land warfare been so strikingly illustrated as in the events of these few months

But now all paled under the stroke of world events.

CHAPTER XXXI

JAPAN

Japan and the Nineteenth Century – A Prodigy of Adaptation – Old Japan Veiled – Inscrutable – The Hierarchy of the Japanese Army – And of the Navy – German and British Tuition – The Commercial Classes – The Japanese Constitution of 1889 – The "New Genro" – The Anti-Comintern Pact, 1936 – The Hitler-Stalin Non-Aggression Pact of August 1939 – Japanese Tensions after the Fall of France – Prince Konoye at the Helm – The Tripartite Pact – Winter Reflections on British Resistance – The Ferment Grows – The Emperor and the Imperial Princes – The Effect of Anglo-American Economic Sanctions of July 26, 1941 – British Constant Anxieties – Our Danger of having to Fight Japan Alone – My Minutes of August 25 and 29 – Naval Dispositions – My Report to Australia, New Zealand, and South Africa – Prince Konoye Resigns, October 1941 – General Tojo in Command – Appeal from Chiang Kai-shek – My Telegram to President Roosevelt of November 5 – And his Reply – My Telegram to General Smuts, November 9 – Speech at the Guildhall, November 10 – My Minute to the Foreign Secretary, November 23 – The President's Account of his Negotiations – The Modus Vivendi and the Ten-Point Note – Mr Hull's Decision – Limitations of British Knowledge – "Magics" – My Telegram of November 30, 1941 – The Die is Cast, December 1 – My Minute of December 2, 1941 – Threat to the Kra Isthmus – A Tremendous Episode in American History – United Attitude of the American Leaders – "The Lord Hath Delivered Them into Our Hands" – Guilt of Japan – One Advantage of Madness.

THE moment had come when in the long, romantic history of Japan the most fearful plunge was to be made Not since 1592, when the war lord Hideyoshi resolved to embark on mortal conflict with China and used sea-power to invade Korea, had any such fateful step been taken A strong continuity of

tradition and custom had guided the redoubtable islanders of the Far East across the centuries. Valour, discipline, and national spirit, never divorced from the mystic, had maintained the stamina of this stern and hardy Asiatic race. Europe had first heard of their existence from Marco Polo about A D. 1300 The religion of the Japanese nation was a form of Buddhism The later incursion of the Christian missionaries, the devotion of their converts, and their fierce-fought extermination had been an episode little noticed in Europe. The merciless slaughter of the Christian population, numbering over a quarter of a million, took twenty-four years, and was finished around the year 1638. After this deed Japan plunged into strict seclusion, and had remained almost unknown for many generations when the nineteenth century with its own strident challenges broke upon the world. There had been a spell of complete isolation The arts, culture, and faith of the Japanese had supported a rigid structure of society. Science, machinery, and Western philosophies did not exist for them.

But the steam-engine altered the proportions of the globe, and about a hundred years ago ships arrived from across the ocean spaces and knocked at the well-barred feudal doors of Japan with weapons and ideas. For some time after Commodore Perry's American squadron had paid its unwelcome visit in 1853 a British or American gunboat could enforce the will of a British or American Government upon the external behaviour of the Japanese State With the foreign warships came the revelation of the wonderful tricks which the White Man had found out, and which he was prepared to teach or sell The gaunt and grave civilisation of the thirteenth century was presented with that of the nineteenth, grinning, prosperous, and well armed.

★ ★ ★ ★ ★

Uncle Sam and Britannia were the god-parents of the new Japan In less than two generations, with no background but the remote past, the Japanese people advanced from the two-handed sword of the Samurai to the ironclad ship, the rifled cannon, the torpedo, and the Maxim gun, and a similar revolution took place in industry. The transition of Japan under British and American guidance from the Middle Ages to modern times was swift and violent. China was surpassed and smitten. It was with

amazement that the world saw in 1905 the defeat of Czarist Russia, not only on the sea, but by great armies transported to the mainland and winning enormous battles in Manchuria. Japan now took her place among the Great Powers. The Japanese were themselves astonished at the respect with which they were viewed "When we sent you the beautiful products of our ancient arts and culture you despised and laughed at us, but since we have got a first-class Navy and Army with good weapons we are regarded as a highly civilised nation" But all they had added was the trappings and panoply of applied science. All was on the surface. Behind stood Old Japan. I remember how in my youth the British caricaturists were wont to depict Japan as a smart, spruce, uniformed messenger-boy. Once I saw an American cartoon in quite a different style. An aged priestly warrior towered up, august and formidable, with his hand upon his dagger

I do not pretend to have studied Japan, ancient or modern, except as presented to me by the newspapers and a few books and in the official documents I saw in the many departments of State in which I have served I was on her side in the Russo-Japanese War. I welcomed the Anglo-Japanese Treaty which had preceded it. At the Admiralty during the First World War I rejoiced in the Japanese accession to the Allies and at the extirpation of Germany from the Far East It was with sorrow that in 1921 I became a party to the ending of the British alliance with Japan, from which we derived both strength and advantage But as we had to choose between Japanese and American friendship I had no doubts what our course should be.

* * * * *

In war and policy one should always try to put oneself in the position of what Bismarck called "the Other Man". The more fully and sympathetically a Minister can do this the better are his chances of being right The more knowledge he possesses of the opposite point of view, the less puzzling it is to know what to do. But imagination without deep and full knowledge is a snare, and very few among our experts could form any true impression of the Japanese mind It was indeed inscrutable The old and new societies, with the chasm of the ages between them, were intermingled and reacted upon each other in ways that no foreigner could understand Indeed, it is doubtful whether Japan knew her

own mind, or what forces in her nature would predominate in the hour of decision.

The hierarchy of the Japanese Army formed a series of concentric circles united by the Samurai tradition, which inspired all its chiefs and their subordinates to die for the military honour of Japan and to face each man's court of ancestors with confidence But as Japan emerged from long seclusion into the vast world which opened about her and blithely placed lethal weapons of hitherto unimagined power in the hands of her warriors there also formed with cold, slow growth the design to master Asia, and perhaps thereafter lead that continent to the conquest of the world There was even talk of "the Hundred Years Plan", though this was but the impelling background to continually changing conditions and events

The strongest check on the power and ambitions of the Army, in the period after the outbreak of the Second World War, came from the Navy. In the nineteenth century the Japanese Army was trained by German instructors, and the Navy by British This left lasting differences of mentality, which were emphasised by the conditions of Service life. Army officers hardly ever went abroad—except to make war—and cultivated a more narrowly arrogant, nationalist spirit than naval officers, who frequently visited foreign ports and knew something of the world outside Japan. Whereas also the Army was conscious of its capacity to defeat or hold its own against any military forces existing in the Far East, or which could get there, the Navy was painfully aware of its inferiority in fleet strength to the British and American Navies, especially for action outside Japanese home waters Thus the Navy tended to be more cautious and moderate in outlook than the Army.

The commercial classes had no official recognition or organisation like the Army or Navy, nor had they ever a single policy common to all the various financial, industrial, and trading interests by which they lived. Their influence was exerted partly through the political parties in the Diet, and partly through connections with Court circles. In general, the commercial interests were opposed to serious warlike adventures, but some of them, particularly those with investments in China, supported the Army in expansionist policies The masses of the Japanese people tended in a crisis to support the Army rather than the liberal

bourgeois leadership, because of the Army's traditional prestige and the popular belief that it was the custodian of the national interest against the aims of private capitalists.

* * * * *

By the Japanese Constitution of 1889 the making of treaties, the declaration of war, and conclusion of peace lay within the prerogative of the Emperor and were not subject to control by the Diet. The Emperor also had the supreme command of the armed forces. He was however supposed to exercise his authority on the advice of the Army and Navy Chiefs of Staff and to conduct foreign policy on the advice of the Cabinet The Cabinet under the Japanese Constitution was not responsible to the Diet, though it needed a majority in both Houses to legislate. It was for the Emperor to choose and appoint the Prime Minister. By custom he did so on the advice of a body of "elder statesmen", or Genro Early in the present century there were several Genro, but they died without being replaced, until in 1940 only Prince Saionji was left After he died at the end of that year the nomination was made by a conference of all ex-Premiers, known as the "New Genro", of whom in 1941 there were eight

The Army and Navy Ministers of the Cabinet had to be respectively a general and an admiral on the active list If a Prime Minister could not find a general or an admiral to hold these offices he could not form or maintain a Cabinet, and professional spirit was so strong that no general or admiral would serve as Army or Navy Minister in a Cabinet whose policy was strongly disapproved of by his Service. Thus the Army and Navy Staffs were able to exert a continual and at times decisive influence on policy by withdrawing, or threatening to withdraw, the Service Ministers from a Cabinet.

* * * * *

In 1936 Japan had concluded with Germany the Anti-Comintern Pact, which was originally negotiated by the Japanese War Ministry, with Ribbentrop representing the Nazi Party, behind the backs of both the then Foreign Ministers This was not yet an alliance, but it provided the basis for one In the spring of 1939 the Army Minister in the Cabinet headed by Baron Hiranuma tried to conclude a full military alliance with Germany. He failed owing to the opposition of the Navy Minister, Admiral

Yonai. In August 1939 Japan was not only engaged in the war in China which had begun in July 1937, but was also involved in localised hostilities with Russia about the boundary between the newly created state of Manchukuo and Outer Mongolia Along and behind this smouldering front large armies lay When, on the eve of the European war, Germany made her Non-Aggression Pact with Russia without consulting or informing Japan, her Anti-Comintern partner, the Japanese felt with reason that they had been ill-used. Their dispute with Russia fell into the background and Japanese resentment against Germany was strong. British support and sympathy for China had estranged us from our former ally, and during the first few months of the European war our relations with Japan were already by no means friendly. There was however in Japan little or no enthusiasm for Germany.

The Hiranuma Cabinet "lost face" on account of the German-Soviet Pact and had to resign It was succeeded by a Cabinet under General Abe, who, although an Army man (retired), was reckoned a moderate, and he in January 1940 was replaced by Admiral Yonai, who as Hiranuma's Navy Minister had opposed the alliance with Germany. Under the Abe and Yonai administrations Japan's policy was neutrality in Europe combined with the prosecution of Japan's own war in China. But soon supreme convulsions shook the world. With the fall of France and the Low Countries under Hitler's onslaught, and the prospect of the invasion and destruction of Britain in the autumn of 1940, long-cherished, glittering schemes sprang from dreamland into reality. Was Japan to gain nothing from the collapse of France, of Holland, and it might well be of Britain, with all their vast possessions in East Asia? Had not her historic moment come? Deep passions stirred in Army and Nationalist political circles. It was demanded that Japan should at once begin to move south and seize French Indo-China, Malaya, and the coveted Dutch East Indies. To force this policy the Army Minister, General Hata, withdrew from the Cabinet, and thus compelled Admiral Yonai to resign his Premiership.

The sober and prudent elements, which Japan has never lacked, were hard pressed to maintain their control. In Yonai's place the Genro nominated Prince Konoye, an aristocrat in the prime of life who had close connections with the Imperial Court, but was also on good terms with the leaders of the Army Prince Konoye

held office from July 1940 to October 1941. He was a highly respected and extremely subtle politician, whose method was to give the Army symbolic satisfactions without ever allowing it to drag the country into a major war During the summer of 1940 Prince Konoye managed to restrain the Army from making any attack on British or Dutch possessions. On the other hand, he agreed to put pressure on Vichy France for air bases in Northern Indo-China, and in September he concluded the Tripartite Pact with Germany and Italy. This instrument bound Japan to enter the European war on the Axis side if America should enter it on behalf of Britain.

Meanwhile other great events became apparent By the end of November 1940 the result of the Battle of Britain and Hitler's recoil from his invasion boasts were recognised in Japan as facts of the first order. The successful British air attack on the Italian Fleet at Taranto, throwing modern first-class battleships out of action for many months, profoundly impressed the Japanese Navy with the power and possibilities of the new air arm, especially when combined with surprise. Japan became convinced that Britain was by no means finished. She was undoubtedly going on, and indeed growing stronger. There was a widespread feeling that the Tripartite Pact had been a mistake Always there loomed the fear of united action by the British Empire and the United States, with its combination of the two strongest navies afloat and with resources which, once developed, were measureless and incomparable This danger seemed to draw ever nearer. In the spring of 1941 Konoye obtained the agreement of his Cabinet to open conversations with the United States for the settlement of outstanding issues between the two countries. It is worthy of note that on this occasion General Tojo, as Army Minister, supported the policy of Konoye against the Foreign Minister, Matsuoka, whose protests that such talks with America would be contrary to the German alliance were thus overruled.

* * * * *

Nevertheless the ferment in Japanese minds grew constantly more intense Beneath the normal modernised processes of their political life thousands of officers and persons occupying responsible, if minor, positions seemed to hear

> Ancestral voices prophesying war.

Must they not be worthy of their fathers, who had paid with interest the vengeance they owed to the Mongols of the thirteenth century, whom they had identified with the Russia of the Czars? This prodigious feat of the preceding generation incited their sons to the utmost daring. And here was the whole world in storm and flux New forces and new Titans had appeared There was to be a "New Order" in Europe Was this not the time to have a "New Order" in Asia? Within all this framework lay plans evolved with minute and patient care and brought up to date with every change in the movement of world catastrophe It was claimed by the Army leaders that *they* should be the authority to select the moment when the signal should be given They could certainly assert that if Japan was to strike at all the best opportunity—the fall of France—had already been missed by cautious or craven politicians

The Emperor and the Imperial Princes, around whom gathered the highest aristocracy, were against an aggressive war They had too much to lose in a violent era Many of them had travelled and met their equals in foreign courts They admired the life of Europe and feared its power and that of the United States. They admired the secure majesty of the English monarchy They leaned continuously upon their skin-deep parliamentarianism, and hoped they might continue to reign or rule in peace But who should say what the Army would do? No patriarchate, no Emperor, no dynasty could separate themselves from it The Emperor and the Princes were for peace and prudence, but had no wish to perish for such a cause.

* * * * *

The drastic application of economic sanctions in July 1941 brought to a head the internal crisis in Japanese politics Conservative elements were shocked and the moderate leaders scared The domestic prestige of the Japanese Army as a constitutional factor in shaping Japanese policy was already involved Hitherto the Navy had exerted its restraining force But the embargoes which the United States, Britain, and Holland had enforced cut off from Japan all supplies of oil, on which the Navy, and indeed the whole war-power of Japan, depended The Japanese Navy was at once forced to live on its oil reserves, and at the outbreak of the Pacific war had in fact consumed four out of eighteen

months' supply. It was evident that this was a stranglehold, and that the choice before them was either for Japan to reach an agreement with the United States or go to war. The American requirements involved Japanese withdrawal not only from their new aggression in Indo-China, but from China itself, where they had already been fighting at heavy expense for so long. This was a rightful but a hard demand In these circumstances the Navy associated itself with the Army in the policy of war if an acceptable diplomatic agreement could not be obtained. The fact that the Navy had now developed its air arm to a high pitch of offensive capacity hardened them in this course of action.

The tense debate within the ruling circles in Japan was prolonged throughout the summer and autumn. The supreme question of facing war with the United States was, we now know, discussed on July 31, on the morrow of the embargoes It was clear to all the Japanese leaders that the time for choice was short Germany might win the war in Europe before Japan had realised any of her ambitions. The conversations between the Japanese and American Governments continued. The Japanese conservative politicians and the Imperial Court hoped to obtain terms which would enable them to control their war party at home. The State Department at Washington believed, as I did, that Japan would probably recoil before the ultimately overwhelming might of the United States.

* * * * *

The reader has seen how from the first day of the war our anxieties about Japan weighed relentlessly upon us Her appetites and opportunity were alike obvious We wondered why she had not struck at the moment of the French collapse. Afterwards we drew breath more freely, but all the time we were at our utmost stress and strain to defend the British Island from destruction and carry on the war in the Western Desert I confess that in my mind the whole Japanese menace lay in a sinister twilight, compared with our other needs. My feeling was that if Japan attacked us the United States would come in If the United States did not come in we had no means of defending the Dutch East Indies, or indeed our own Empire in the East. If, on the other hand, Japanese aggression drew in America I would be content to have it On this I rested. Our priorities during 1941

stood: first, the defence of the Island, including the threat of invasion and the U-boat war, secondly, the struggle in the Middle East and Mediterranean, thirdly, after June, supplies to Soviet Russia, and, last of all, resistance to a Japanese assault It was however always understood that if Japan invaded Australia or New Zealand the Middle East should be sacrificed to the defence of our own kith and kin. This contingency we all regarded as remote and improbable because of the vast abundance of easier and more attractive conquests offered to Japan by Malaya, Siam, and above all the Dutch East Indies. I am sure that nothing we could have spared at this time, even at the cost of wrecking the Middle Eastern theatre or cutting off supplies to the Soviet, would have changed the march of fate in Malaya. On the other hand, the entry of the United States into the war would overwhelm all evils put together

It must not be supposed that these broad decisions were taken unconsciously or without profound and constant heart-searching by the War Cabinet and their military advisers.

* * * * *

As time passed and I realised the formidable effect of the embargoes which the President had declared on July 26, and in which we and the Dutch had joined, I became increasingly anxious to confront Japan with the greatest possible display of British and American naval forces in the Pacific and Indian Oceans Naval forces were all we could spare. Narrowly did we scan our resources.

On August 25 I sent a minute to the First Sea Lord about the formation of an Eastern Fleet and setting out my views regarding its composition. I felt strongly that it should be possible in the near future to place a deterrent squadron in the Indian Ocean, and that this should consist of the smallest number of the best ships The First Sea Lord replied that the Admiralty plan was to build up a force in Ceylon by the beginning of 1942, comprising the battleships *Nelson* and *Rodney*, the battle-cruiser *Renown*, and the small aircraft-carrier *Hermes* The *Ark Royal* would follow later, but not until April Meanwhile the four "R" class battleships would be sent to the Indian Ocean as escorts for troop convoys In his memorandum the First Sea Lord dwelt on the overriding importance of the Atlantic theatre, where he

considered it essential to retain all three of our latest battleships of the *King George V* class to guard against a possible break-out by the *Tirpitz*.

I did not like these dispositions. The use of the old "R." class for convoy work was good against 8-inch-gun cruisers, but if the enemy were prepared to detach a fast modern battleship for raiding purposes they and their convoys would become an easy prey. In their present state these old ships would be floating coffins It would therefore be necessary to have one or two fast capital ships to deter the Japanese from detaching individual heavy raiders.

I ended my correspondence with the Admiralty as follows·

29 Aug 41

. . . I must add that I cannot feel that Japan will face the combination now forming against her of the United States, Great Britain, and Russia, while already preoccupied in China It is very likely she will negotiate with the United States for at least three months without making any further aggressive move or joining the Axis actively. Nothing would increase her hesitation more than the appearance of the force I mentioned, and above all a *K G V* This might indeed be a decisive deterrent *

* * * * *

It was decided to send as the first instalment of our Far Eastern Fleet both the *Prince of Wales* and the *Repulse*, with four destroyers, and as an essential element the modern armoured aircraft-carrier *Indomitable*. Unhappily the *Indomitable* was temporarily disabled by an accident. It was decided in spite of this to let the two fast capital ships go forward, in the hope of steadying the Japanese political situation, and also to be in relation to the United States Pacific Fleet. Our general naval policy was to build up under the remote cover of the main American Fleet in the Pacific a British Eastern Fleet based on Singapore, which by the spring of 1942 would comprise seven capital ships of varying quality, one first-class aircraft-carrier, ten cruisers, and twenty-four destroyers. Admiral Sir Tom Phillips, till now our trusted Vice-Chief of the Naval Staff, was selected for command, and hoisted his flag at Greenock on October 24.

* * * * *

* For those who wish to study this matter in more detail, the correspondence which passed between me and the First Sea Lord at this time is printed in Appendix K For reasons which could not at this time be foreseen, the *Prince of Wales* and not the *Nelson* or *Rodney* was sent

At the end of October I telegraphed to the Prime Ministers of Australia, New Zealand, and South Africa, and gave them details of our proposed naval dispositions in the Far East

I am still inclined to think that Japan will not run into war with A B C D [American-British-Chinese-Dutch] Powers unless or until Russia is decisively broken Perhaps even then they will wait for the promised invasion of the British Isles in the spring. Russian resistance is still strong, especially in front of Moscow, and winter is now near

2 Admiralty dispositions had been to build up towards the end of the year *Rodney*, *Nelson*, and four "R.s", based mainly on Singapore. This however was spoiled by recent injury to *Nelson*, which will take three or four months to repair

3 In the interval, in order further to deter Japan, we are sending forthwith our newest battleship, *Prince of Wales*, to join *Repulse* in Indian Ocean This is done in spite of protests from the Commander-in-Chief Home Fleet, and is a serious risk for us to run *Prince of Wales* will be noticed at Capetown quite soon. In addition the four "R." battleships are being moved as they become ready to Eastern waters. Later on *Repulse* will be relieved by *Renown*, which has greater radius.

4 In my view, *Prince of Wales* will be the best possible deterrent, and every effort will be made to spare her permanently. I must however make it clear that movements of *Prince of Wales* must be reviewed when she is at Capetown, because of danger of *Tirpitz* breaking out and other operational possibilities before *Duke of York* is ready in December

* * * * *

In October Prince Konoye laid down his burden. He had asked for a personal meeting with Roosevelt at Honolulu, to which he hoped to bring his military and naval chiefs, and thus bind them to what might be settled. But his proposal had been declined by the President, and Army opinion became increasingly critical of this wise statesman. His place was taken by General Tojo, who became Prime Minister, War Minister, and Home Minister at the same time. General Tojo, who after the war was hanged by the conquerors, according to modern practice, said at his trial that he himself took over the Home Ministry because "he faced a fearful trend foreboding internal confusion if peace was decided upon instead of war". At the Emperor's behest he renewed diplomatic negotiations with the United States, but under a secret understanding with members of his Government that Japan would go to war if the Cabinet representations were

rejected. When in November 1941 Tojo and the Chiefs of the General Staff informed the Emperor that war might be necessary the sovereign expressed the hope that still further efforts might be made to avert this calamity, but told Tojo that "if the state of affairs is as you have described it there will be no alternative but to proceed with the preparations for operations."

* * * * *

At the beginning of November I received an agitated warning of further Japanese action in China from General Chiang Kai-shek. He thought that the Japanese were determined upon an attack from Indo-China to take Kunming and cut the Burma Road. He appealed for British aid by air from Malaya. He concluded.

You might feel at a first glance that this would involve you in a war with Japan while you are fighting with such courage in Europe and the Middle East I see things otherwise. I do not believe that Japan feels that she has the strength to attack so long as the resistance of China persists, but once she is rid of this she will attack you as and when it suits her. . China has reached the most critical phase of her war of resistance Her ability to defend the land approaches to Singapore and Burma now depends primarily on British and American willingness to co-operate in the defence of Yunnan If the Japanese can break our front here we shall be cut off from you, and the whole structure of your own air and naval co-ordination with America and the Netherlands East Indies will be gravely threatened in new ways and from a new direction I should like to express with all the strength at my command the conviction that wisdom and foresight demand that China be given the help that I have indicated Nothing else can ensure alike the defeat of Japan and success of countries now resisting aggression. I eagerly await your reply.

I could do little more than pass this to the President.

Former Naval Person to President Roosevelt 5 Nov 41

I have received Chiang Kai-shek's appeal addressed to us both for air assistance You know how we are placed for air strength at Singapore None the less, I should be prepared to send pilots and even some planes if they could arrive in time

2 What we need now is a deterrent of the most general and formidable character The Japanese have as yet taken no final decision, and the Emperor appears to be exercising restraint When we talked
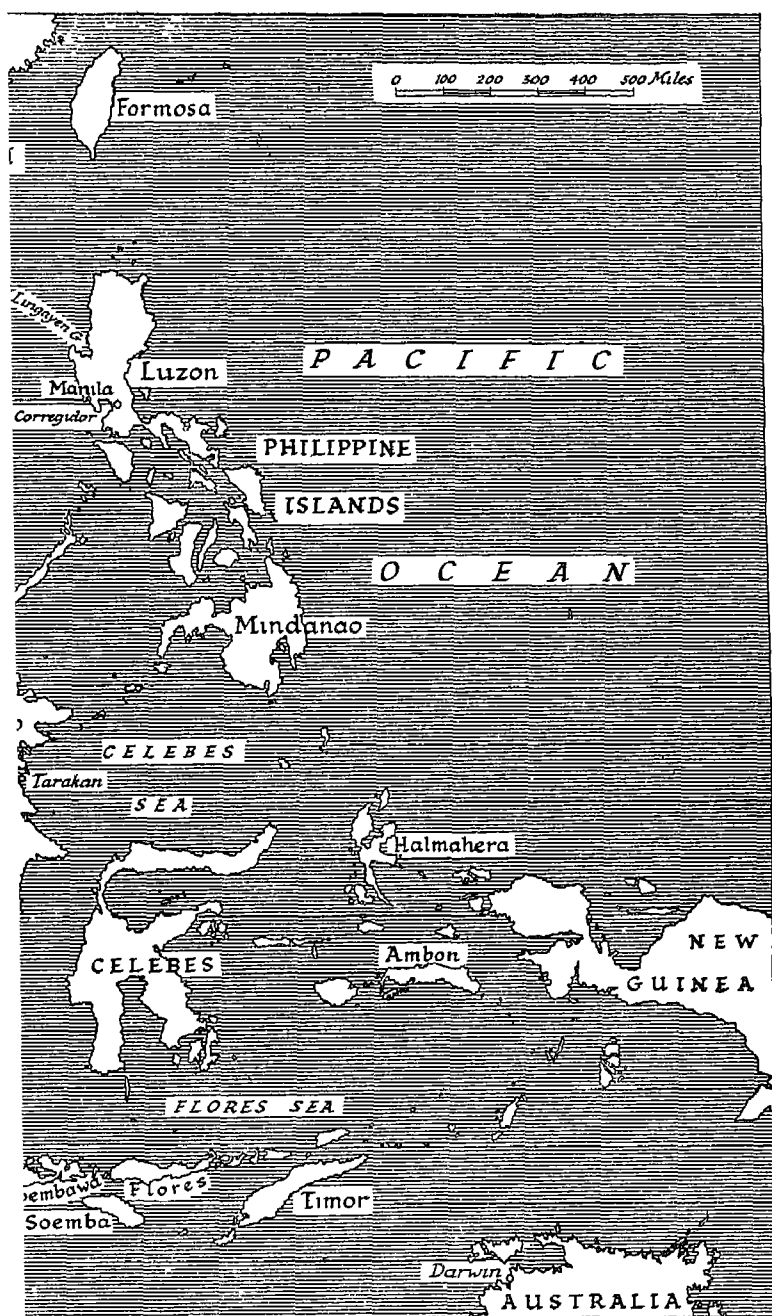
about this at Placentia you spoke of gaining time, and this policy has been brilliantly successful so far But our joint embargo is steadily forcing the Japanese to decisions for peace or war

3 It now looks as if they would go into Yunnan, cutting the Burma Road, with disastrous consequences for Chiang Kai-shek The collapse of his resistance would not only be a world tragedy in itself, but it would leave the Japanese with large forces to attack north or south

4 The Chinese have appealed to us, as I believe they have to you, to warn the Japanese against an attack in Yunnan I hope you might think fit to remind them that such an attack, aimed at China from a region in which we have never recognised that the Japanese have any right to maintain forces, would be in open disregard of the clearly indicated attitude of the United States Government We should of course be ready to make a similar communication

5 No independent action by ourselves will deter Japan, because we are so much tied up elsewhere But of course we will stand with you and do our utmost to back you in whatever course you choose. I think myself that Japan is more likely to drift into war than to plunge in Please let me know what you think

The President replied on November 9 that while it would be a serious error to under-estimate the gravity of the threat, he doubted whether preparations for a Japanese land campaign against Kunming would warrant an immediate Japanese advance in the immediate future. He would do what he could by Lend-Lease aid to China and the building up of the American Volunteer Air Force there He felt that in Japan's mood any "new formalised verbal warning or remonstrance" might have at least an even chance of producing the opposite effect "The whole problem will have our continuing and earnest attention, study, and effort."

I did my best to comfort the Generalissimo by repeating the substance of this guarded answer

There was no course for us but to continue with our naval plans in the Far East and to leave the United States to try by diplomatic means to keep Japan as long as possible quiet in the Pacific

* * * * *

I wrote to General Smuts, who had raised larger issues

9 Nov 41

I do not think it would be any use for me to make a personal appeal to Roosevelt at this juncture to enter the war At the Atlantic meeting I told his circle that I would rather have an American declaration of

war now and no supplies for six months than double the supplies and no declaration When this was repeated to him he thought it a hard saying We must not underrate his constitutional difficulties. He may take action as Chief Executive, but only Congress can declare war. He went so far as to say to me, "I may never declare war, I may make war. If I were to ask Congress to declare war they might argue about it for three months" The Draft Bill without which the American Army would have gone to pieces passed by only oné vote. He has now carried through the Senate by a small majority the virtual repeal of the Neutrality Act. This must mean, if endorsed by the other House, constant fighting in the Atlantic between German and American ships. Public opinion in the United States has advanced lately, but with Congress it is all a matter of counting heads Naturally, if I saw any way of helping to lift this situation on to a higher plane I would do so. In the meanwhile we must have patience and trust to the tide which is flowing our way and to events.

* * * * *

On November 10 at the annual Guildhall banquet, which the Prime Minister by custom attends, I said:

I must admit that, having voted for the Japanese alliance nearly forty years ago, in 1902, and having always done my very best to promote good relations with the Island Empire of Japan, and always having been a sentimental well-wisher to the Japanese and an admirer of their many gifts and qualities, I should view with keen sorrow the opening of a conflict between Japan and the English-speaking world.

The United States' time-honoured interests in the Far East are well known They are doing their utmost to find ways of preserving peace in the Pacific. We do not know whether their efforts will be successful, but should they fail and the United States become involved in war with Japan it is my duty to say that the British declaration will follow within the hour.

Viewing the vast, sombre scene as dispassionately as possible, it would seem a very hazardous adventure for the Japanese people to plunge quite needlessly into a world struggle in which they may well find themselves opposed in the Pacific by States whose populations comprise nearly three-quarters of the human race If steel is the basic foundation of modern war, it would be rather dangerous for a Power like Japan, whose steel production is only about seven million tons a year, to provoke quite gratuitously a struggle with the United States, whose steel production is now about ninety millions; and this would take no account of the powerful contribution which the British Empire can make. I hope therefore that the peace of the Pacific will

be preserved in accordance with the known wishes of Japan's wisest statesmen But every preparation to defend British interests in the Far East, and to defend the common cause now at stake, has been and is being made

* * * * *

On November 20 Japan forwarded to Washington her "final word". Although it was clear from these proposals that Japan was in effect attempting merely to obtain the fruits of victory without war, the United States Government felt obliged to make one last diplomatic offer. We were informed of the Japanese Note and were asked for our views. On November 23 I wrote in a minute to the Foreign Secretary:

Prime Minister to Foreign Secretary 23 Nov 41

Our major interest is. no further encroachments and no war, as we have already enough of this latter. The United States will not throw over the Chinese cause, and we may safely follow them in this part of the subject We could not of course agree to an arrangement whereby Japan was free to attack Russia in Siberia I doubt myself whether this is likely at the present time I remember that President Roosevelt at the Atlantic Conference himself wrote in, "There must be no further encroachment in the North" I should think this could be agreed [with the Americans] The formal denunciation of the Axis Pact by Japan is not, in my opinion, necessary. Their stopping out of the war is in itself a great disappointment and injury to the Germans We ought not to agree to any veto on American or British help to China But we shall not be asked to by the United States.

Subject to the above, it would be worth while to ease up upon Japan economically sufficiently for them to live from hand to mouth —even if we only got another three months These however are only first impressions

I must say I should feel pleased if I read that an American-Japanese agreement had been made by which we were to be no worse off three months hence in the Far East than we are now

* * * * *

On November 25 the President cabled to me an account of the negotiations The Japanese Government had proposed to evacuate Southern Indo-China, pending a general settlement with China, or a general restoration of peace in the Pacific, when Japan would be prepared to withdraw altogether from Indo-China. In return the United States was to supply Japan with petroleum, to refrain from interfering with Japan's efforts to

restore peace in China, to help Japan to obtain the products of the Netherlands East Indies, and to place commercial relations between Japan and the United States on a normal basis. Both sides were to agree to make no "armed advancement" in North-East Asia and the Southern Pacific

The American Government, in its turn, was proposing to make a counter-offer, accepting in general the terms of the Japanese Note, while outlining specific conditions to be attached to the Japanese withdrawal from Southern Indo-China and making no mention of the position in China. The United States was prepared to accept a limited economic arrangement modifying the original freezing order. For instance, petroleum could be shipped on a monthly basis for civilian needs only. This American proposal would be valid for three months on the understanding that during this period a general settlement covering the whole Pacific area would be discussed

When I read the draft reply, which was, and is still, called the "*modus vivendi*", I thought it inadequate. This impression was shared by the Dutch and Australian Governments, and above all by Chiang Kai-shek, who sent a frantic protest to Washington I was however deeply sensitive of the limits which we must observe in commenting on United States policy on an issue where decisive action lay with them alone I understood the dangers attending the thought "The British are trying to drag us into war" I therefore placed the issue where it belonged, namely, in the President's hands, and, mentioning only the Chinese aspect, sent him the following cable.

Former Naval Person to President Roosevelt 26 Nov 41

Your message about Japan received to-night Also full accounts from Lord Halifax of discussions and your counter-project to Japan . Of course it is for you to handle this business, and we certainly do not want an additional war There is only one point that disquiets us What about Chiang Kai-shek? Is he not having a very thin diet? Our anxiety is about China If they collapse our joint dangers would enormously increase We are sure that the regard of the United States for the Chinese cause will govern your action We feel that the Japanese are most unsure of themselves

This message of course arrived in Washington at dawn of the same day it was dated. Mr. Hull says in his memoirs

During the night a cable came in for the President from Mr Churchill commenting on our *modus vivendi*. Obviously influenced by Chiang Kai-shek's cable to him, the Prime Minister wondered whether the Generalissimo was not getting "rather meagre rations" under the *modus vivendi*. China, he said, was the cause of his being anxious, and the Chinese collapse would hugely augment our common danger. After talking this over again with the Far Eastern experts of the State Department I came to the conclusion that we should cancel out the *modus vivendi*. Instead we should present to the Japanese solely the ten-point proposal for a general settlement, to which originally the *modus vivendi* would have been in the nature of an introduction. Although the *modus vivendi* proposals contained only a little "chicken feed" in the shape of cotton, oil, and a few other commodities in very limited quantities as compared with the unlimited quantities the Japanese demanded, it was manifest that there would be widespread opposition from American public opinion to supplying Japan even limited quantities of oil. The Chinese were violently opposed, the other interested Governments either unfavourable or luke-warm. The slight prospect of Japan's agreeing to the *modus vivendi* therefore did not warrant assuming the risks involved in proceeding with it, especially the risk of collapse of Chinese morale and resistance, and even of disintegration.

★ ★ ★ ★ ★

We had not heard up to this moment of the "Ten-Point Note", which not only met our wishes and those of the associated Governments, but indeed went beyond anything for which we had ventured to ask. On this same 26th Mr Hull received the Japanese envoys at the State Department. He did not even mention to them the *modus vivendi* about which the President had telegraphed to me on the 23rd. On the contrary, he handed them the "Ten-Point Note". Two points of this were as follows:

The Government of Japan will withdraw all military, naval, air, and police forces from China and Indo-China.

The Government of the United States and the Government of Japan will not support—militarily, politically, economically—any Government or régime in China other than the National Government of the Republic of China, with capital temporarily at Chungking.

The envoys were "dumbfounded", and retired in the greatest distress. This may well have been sincere. They had been chosen largely on account of their reputation as peace-seeking and

moderate men who would lull the United States into a sense of security till all was decided and all was ready. They knew little of the whole mind of their Government They did not dream that Mr Hull was far better informed on this than they were. From the end of 1940 the Americans had pierced the vital Japanese ciphers, and were decoding large numbers of their military and diplomatic telegrams. In the secret American circles these were referred to as "*Magics*". The "Magics" were repeated to us, but there was an inevitable delay—sometimes of two or three days—before we got them. We did not know therefore at any given moment all that the President or Mr. Hull knew I make no complaint of this.

That same afternoon the President sent the following message to the High Commissioner of the Philippines:

> Preparations are becoming apparent . . for an early aggressive movement of some character, although as yet there are no clear indications as to its strength or whether it will be directed against the Burma Road, Thailand, Malay peninsula, Netherlands East Indies, or the Philippines Advance against Thailand seems the most probable I consider it possible that this next Japanese aggression might cause an outbreak of hostilities between the U S and Japan . . .

* * * * *

When on November 29 our Ambassador, Lord Halifax, visited the State Department Mr. Hull said to him that the danger from Japan "hung just over our heads" "The diplomatic part in our relations with Japan is now virtually over. The matter will now go to the officials of the Army and Navy, with whom I have talked . . . Japan may move suddenly and with every possible element of surprise. . . My theory is that the Japanese recognise that their course of unlimited conquest, now renewed all along the line, probably is a desperate gamble and requires the utmost boldness and risk" He added "When Churchill received Chiang's loud protest about the *modus vivendi* it would have been better if he had sent Chiang a strong cable to brace up and fight with the same zeal as the Japanese and Americans were displaying Instead he passed the protest on to us without objection on his part . "

I did not know that the die had already been cast by Japan or how far the President's resolves had gone.

Former Naval Person to President Roosevelt 30 Nov 41

It seems to me that one important method remains unused in averting war between Japan and our two countries, namely, a plain declaration, secret or public as may be thought best, that any further act of aggression by Japan will lead immediately to the gravest consequences I realise your constitutional difficulties, but it would be tragic if Japan drifted into war by encroachment without having before her fairly and squarely the dire character of a further aggressive step I beg you to consider whether, at the moment which you judge right, which may be very near, you should not say that "any further Japanese aggression would compel you to place the gravest issues before Congress", or words to that effect We would of course make a similar declaration or share in a joint declaration, and in any case arrangements are being made to synchronise our action with yours Forgive me, my dear friend, for presuming to press such a course upon you, but I am convinced that it might make all the difference and prevent a melancholy extension of the war

Both he and Tojo were already far ahead of this. So were events

* * * * *

On the 30th, shortly after noon (American time), Mr Hull visited the President, who had on his desk my cable of the same date, sent overnight.* They did not think my proposal of a joint warning to Japan would be any good Nor can we be surprised at this when they had already before them an intercept from Tokyo to Berlin, also dated November 30, telling the Japanese Ambassador in Berlin to address Hitler and Ribbentrop as follows

Say very secretly to them that there is extreme danger that war may suddenly break out between the Anglo-Saxon nations and Japan through some clash of arms, and add that the time of the breaking out of this war may come quicker than anyone dreams

I received the decode of the telegrams on December 2. It required no special action from Britain. We must just wait. The Japanese carrier fleet had in fact sailed on the 25th with the whole naval air force which was to attack Pearl Harbour. Of course it was still subject to restraining orders from Tokyo.

* * * * *

* The reader need not be puzzled by the datings of the telegrams, so long as they are in their proper sequence I worked up till two or three in the morning (British time), and any message I sent took two or three hours to code and decode Nevertheless any message which I drafted before I went to bed would reach the President almost instantaneously for practical purposes—*i e*, when he woke up, or was, if need be, awakened.

At an Imperial Conference at Tokyo on December 1 the decision was taken to go to war with the United States. According to Tojo's testimony at his trial, the Emperor did not utter a word. For the following week a deadly hush settled in the Pacific The possibilities of a diplomatic settlement had been exhausted. No act of military aggression had yet occurred. My deepest fear was that the Japanese would attack us or the Dutch, and that constitutional difficulties would prevent the United States from declaring war. After a long Cabinet on December 2 I sent a minute to the Foreign Secretary embodying our conclusions.

Prime Minister to Foreign Secretary 2 Dec 41

Our settled policy is not to take forward action in advance of the United States Except in the case of a Japanese attempt to seize the Kra Isthmus there will be time for the United States to be squarely confronted with a new act of Japanese aggression If they move, we will move immediately in support If they do not move, we must consider our position afresh .

A Japanese attack on the Dutch possessions may be made at any time This would be a direct affront to the United States, following upon their negotiations with Japan We should tell the Dutch that we should do nothing to prevent the full impact of this Japanese aggression presenting itself to the United States as a direct issue between them and Japan. If the United States declares war on Japan, we follow within the hour If, after a reasonable interval, the United States is found to be incapable of taking any decisive action, even with our immediate support, we will nevertheless, although alone, make common cause with the Dutch.

Any attack on British possessions carries with it war with Great Britain as a matter of course

* * * * *

British Intelligence and air reconnaissance, which were vigilant, soon perceived movements and activity showing that "Japan is about to attack Siam, and that this attack will include a sea-borne expedition to seize strategic points in the Kra Isthmus". We reported this to Washington A series of lengthy telegrams passed between us and our Commander-in-Chief in the Far East, and also with the Australian and American Governments, about whether we should take forestalling action to protect the Kra Isthmus. It was rightly decided, both on military and political grounds, that we should not complicate the course of

events by striking first in a secondary theatre. On December 6 it was known both in London and Washington that a Japanese fleet of about thirty-five transports, eight cruisers, and twenty destroyers was moving from Indo-China across the Gulf of Siam. Other Japanese fleets were also at sea on other tasks.

* * * * *

A prodigious Congressional Inquiry published its findings in 1946 in which every detail was exposed of the events leading up to the war between the United States and Japan and of the failure to send positive "Alert" orders through the military departments to their fleets and garrisons in exposed situations Every detail, including the decoding of secret Japanese telegrams and their actual texts, has been displayed to the world in forty volumes The strength of the United States was sufficient to enable them to sustain this hard ordeal required by the spirit of the American Constitution.

I do not intend in these pages to attempt to pronounce judgment upon this tremendous episode in American history We know that all the great Americans round the President and in his confidence felt as acutely as I did the awful danger that Japan would attack British or Dutch possessions in the Far East and would carefully avoid the United States, and that in consequence Congress would not sanction an American declaration of war The American leaders understood that this might mean vast Japanese conquests, which, if combined with a German victory over Russia and thereafter an invasion of Great Britain, would leave America alone to face an overwhelming combination of triumphant aggressors. Not only would the great moral causes which were at stake be cast away, but the very life of the United States, and their people, as yet but half awakened to their perils, might be broken. The President and his trusted friends had long realised the grave risks of United States neutrality in the war against Hitler and all that he stood for, and had writhed under the restraints of a Congress whose House of Representatives had a few months before passed by only a single vote the necessary renewal of compulsory military service, without which their Army would have been almost disbanded in the midst of the world convulsion Roosevelt, Hull, Stimson, Knox, General Marshall, Admiral Stark, and, as a link between them all, Harry Hopkins,

had but one mind. Future generations of Americans and free men in every land will thank God for their vision.

A Japanese attack upon the United States was a vast simplification of their problems and their duty. How can we wonder that they regarded the actual form of the attack, or even its scale, as incomparably less important than the fact that the whole American nation would be united for its own safety in a righteous cause as never before? To them, as to me, it seemed that for Japan to attack and make war upon the United States would be an act of suicide. Moreover, they knew, earlier than we in Britain could know, the full and immediate purpose of their enemy. We remember how Cromwell exclaimed when he watched the Scottish army descending from the heights over Dunbar, "The Lord hath delivered them into our hands"

Nor must we allow the account in detail of diplomatic interchanges to portray Japan as an injured innocent seeking only a reasonable measure of expansion or booty from the European war, and now confronted by the United States with propositions which her people, fanatically aroused and fully prepared, could not be expected to accept. For long years Japan had been torturing China by her wicked invasions and subjugations Now by her seizure of Indo-China she had in fact, as well as formally by the Tripartite Pact, thrown in her lot with the Axis Powers. Let her do what she dared and take the consequences.

It had seemed impossible that Japan would court destruction in war with Britain and the United States, and probably Russia in the end. A declaration of war by Japan could not be reconciled with reason. I felt sure she would be ruined for a generation by such a plunge, and this proved true But Governments and peoples do not always take rational decisions. Sometimes they take mad decisions, or one set of people get control who compel all others to obey and aid them in folly. I have not hesitated to record repeatedly my disbelief that Japan would go mad. However sincerely we try to put ourselves in another person's position, we cannot allow for processes of the human mind and imagination to which reason offers no key.

Madness is however an affliction which in war carries with it the advantage of SURPRISE.

CHAPTER XXXII

PEARL HARBOUR!

Sunday, December 7, at Chequers – My American Guests – Nine o'Clock News on the Wireless – Japan Attacks the United States – I Call the President – My Message to Mr. de Valera – I Rejoice – The Certainty of Victory – I Decide to Go to Washington – Letter to the King – The President's Anxiety about the Return Voyage – British Declaration of War on Japan – My Letter to the Japanese Ambassador – Parliament Approves the Declaration of War Unanimously – Mr. Duff Cooper's Appointment – Magnitude of the American Disaster – The Stroke in the Philippines – Hitler's Astonishment – We Discuss the Employment of the "Prince of Wales" and the "Repulse" – Admiral Phillips's Adventurous Plan – Air Support Lacking – The Admiral Withdraws – Tries Again – The Deadly Japanese Attack – "All Sunk Beneath the Wave" – The Morning Brings Fearful News – My Preparations for Departure – My Statement to the House, December 12 – Mr. Eden Starts on His Mission to Moscow – I Tell Him Some News.

IT was Sunday evening, December 7, 1941. Winant and Averell Harriman were alone with me at the table at Chequers I turned on my small wireless set shortly after the nine o'clock news had started. There were a number of items about the fighting on the Russian front and on the British front in Libya, at the end of which some few sentences were spoken regarding an attack by the Japanese on American shipping at Hawaii, and also Japanese attacks on British vessels in the Dutch East Indies. There followed a statement that after the news Mr. Somebody would make a commentary, and that the Brains Trust programme would then begin, or something like this. I did not personally sustain any direct impression, but Averell said there was something about the Japanese attacking the Americans, and, in spite

of being tired and resting, we all sat up. By now the butler, Sawyers, who had heard what had passed, came into the room, saying, "It's quite true. We heard it ourselves outside. The Japanese have attacked the Americans." There was a silence. At the Mansion House luncheon on November 11 I had said that if Japan attacked the United States a British declaration of war would follow "within the hour". I got up from the table and walked through the hall to the office, which was always at work. I asked for a call to the President. The Ambassador followed me out, and, imagining I was about to take some irrevocable step, said, "Don't you think you'd better get confirmation first?"

In two or three minutes Mr. Roosevelt came through. "Mr. President, what's this about Japan?" "It's quite true," he replied "They have attacked us at Pearl Harbour. We are all in the same boat now" I put Winant on to the line and some interchanges took place, the Ambassador at first saying, "Good," "Good"—and then, apparently graver, "Ah!" I got on again and said, "This certainly simplifies things. God be with you," or words to that effect We then went back into the hall and tried to adjust our thoughts to the supreme world event which had occurred, which was of so startling a nature as to make even those who were near the centre gasp. My two American friends took the shock with admirable fortitude We had no idea that any serious losses had been inflicted on the United States Navy. They did not wail or lament that their country was at war. They wasted no words in reproach or sorrow. In fact, one might almost have thought they had been delivered from a long pain

* * * *

Parliament would not have met till Tuesday, and the Members were scattered about the Island, with all the existing difficulties of communication. I set the office to work to ring up the Speaker, the Whips, and others concerned, to call both Houses together next day I rang the Foreign Office to prepare to implement without a moment's delay a declaration of war upon Japan, about which there were some formalities, in time for the meeting of the House, and to make sure all members of the War Cabinet were called up and informed, and also the Chiefs of Staff and the Service Ministers, who, I rightly assumed, had had the news.

This done, my thought turned at once to what has always lain near my heart To Mr. de Valera I sent the following message

8 Dec 41

Now is your chance Now or never! A nation once again! I will meet you wherever you wish

I thought also of struggling China, and telegraphed to Chiang Kai-shek

8 Dec 41

The British Empire and United States have been attacked by Japan. Always we have been friends now we face a common enemy

We also sent the following

Prime Minister to Mr Harry Hopkins 8 Dec 41

Thinking of you much at this historic moment —WINSTON, AVERELL.

* * * * *

No American will think it wrong of me if I proclaim that to have the United States at our side was to me the greatest joy. I could not foretell the course of events I do not pretend to have measured accurately the martial might of Japan, but now at this very moment I knew the United States was in the war, up to the neck and in to the death So we had won after all! Yes, after Dunkirk, after the fall of France, after the horrible episode of Oran, after the threat of invasion, when, apart from the Air and the Navy, we were an almost unarmed people; after the deadly struggle of the U-boat war—the first Battle of the Atlantic, gained by a hand's-breadth; after seventeen months of lonely fighting and nineteen months of my responsibility in dire stress We had won the war. England would live, Britain would live, the Commonwealth of Nations and the Empire would live. How long the war would last or in what fashion it would end no man could tell, nor did I at this moment care. Once again in our long Island history we should emerge, however mauled or mutilated, safe and victorious. We should not be wiped out. Our history would not come to an end. We might not even have to die as individuals. Hitler's fate was sealed. Mussolini's fate was sealed. As for the Japanese, they would be ground to powder. All the rest was merely the proper application of overwhelming force. The British Empire, the Soviet Union, and now the United

States, bound together with every scrap of their life and strength, were, according to my lights, twice or even thrice the force of their antagonists. No doubt it would take a long time. I expected terrible forfeits in the East; but all this would be merely a passing phase. United we could subdue everybody else in the world. Many disasters, immeasurable cost and tribulation lay ahead, but there was no more doubt about the end.

Silly people, and there were many, not only in enemy countries, might discount the force of the United States. Some said they were soft, others that they would never be united. They would fool around at a distance. They would never come to grips. They would never stand blood-letting. Their democracy and system of recurrent elections would paralyse their war effort. They would be just a vague blur on the horizon to friend or foe. Now we should see the weakness of this numerous but remote, wealthy, and talkative people. But I had studied the American Civil War, fought out to the last desperate inch. American blood flowed in my veins. I thought of a remark which Edward Grey had made to me more than thirty years before—that the United States is like "a gigantic boiler. Once the fire is lighted under it there is no limit to the power it can generate". Being saturated and satiated with emotion and sensation, I went to bed and slept the sleep of the saved and thankful.

* * * * *

As soon as I woke I decided to go over at once to see Roosevelt. I put the matter to the Cabinet when we met at noon. On obtaining their approval I wrote to the King.

December 8, 1941

Sir,

I have formed the conviction that it is my duty to visit Washington without delay, provided such a course is agreeable to President Roosevelt, as I have little doubt it will be The whole plan of the Anglo-American defence and attack has to be concerted in the light of reality. We have also to be careful that our share of munitions and other aid which we are receiving from the United States does not suffer more than is, I fear, inevitable The fact that Mr Eden will be in Moscow while I am at Washington will make the settlement of large-scale problems between the three great Allies easier.

These reasons were accepted by my colleagues in the Cabinet unanimously to-day, and I therefore ask Your Majesty's permission

to leave the country. I should propose to start quite soon, in a warship, and to be absent altogether for about three weeks I shall take with me a staff on the same scale as I took to the Atlantic meeting

During my absence the Lord Privy Seal will act for me, assisted by the Lord President of the Council, the Chancellor of the Exchequer, and other members of the War Cabinet I would propose that during this period the three Service Ministers should temporarily sit with the War Cabinet While I am away the Foreign Office will report to the Lord President, and the Defence Committee to the Lord Privy Seal I shall of course be constantly in touch by wireless with all that goes on, and can give decisions whenever necessary. I should propose to take with me the First Sea Lord and the Chief of the Air Staff, as the concert of all our arrangements with the Americans on a high level is all-important

I hope I may receive Your Majesty's approval of this course. I am, of course, keeping my intention secret.

With my humble duty,

I remain Your Majesty's most devoted, faithful servant and subject,

WINSTON S CHURCHILL

PS —I am expecting that Germany and Italy will both declare war on the United States, as they have bound themselves by treaty to do so I shall defer proposing my visit to the President until this situation is more clear

The King gave his Assent.

* * * * *

Former Naval Person to President Roosevelt 9 Dec 41

I am grateful for your telegram of December 8. Now that we are, as you say, "in the same boat", would it not be wise for us to have another conference? We could review the whole war plan in the light of reality and new facts, as well as the problems of production and distribution I feel that all these matters, some of which are causing me concern, can best be settled on the highest executive level It would also be a very great pleasure to me to meet you again, and the sooner the better.

2 I could, if desired, start from here in a day or two, and come by warship to Baltimore or Annapolis. Voyage would take about eight days, and I would arrange to stay a week, so that everything important could be settled between us. I would bring Pound, Portal, Dill, and Beaverbrook, with necessary staffs

3. Please let me know at earliest what you feel about this.

The President feared that the return journey would be dangerous. I reassured him.

Former Naval Person to President Roosevelt 10 Dec 41

We do not think there is any serious danger about the return journey. There is however great danger in our not having a full discussion on the highest level about the extreme gravity of the naval position, as well as upon all the production and allocation issues involved I am quite ready to meet you at Bermuda, or to fly from Bermuda to Washington I feel it would be disastrous to wait for another month before we settled common action in face of new adverse situation, particularly in Pacific I had hoped to start tomorrow night, but will postpone my sailing till I have received rendezvous from you I never felt so sure about the final victory, but only concerted action will achieve it Kindest regards.

The next day I heard again from the President. He said that he was delighted that I was coming to stay at the White House He felt that he could not leave the country himself Mobilisation was taking place, and the naval position in the Pacific was uncertain. He felt sure that we could work out all the difficulties connected with production and supply. He emphasised again the personal risk of my journey, which he thought should be carefully considered.

* * * * *

The War Cabinet authorised the immediate declaration of war upon Japan, for which all formal arrangements had been made. As Eden had already started on his journey to Moscow and I was in charge of the Foreign Office I sent the following letter to the Japanese Ambassador

Foreign Office, December 8th

Sir,

On the evening of December 7th His Majesty's Government in the United Kingdom learned that Japanese forces without previous warning either in the form of a declaration of war or of an ultimatum with a conditional declaration of war had attempted a landing on the coast of Malaya and bombed Singapore and Hong Kong

In view of these wanton acts of unprovoked aggression committed in flagrant violation of International Law and particularly of Article 1 *of the Third Hague Convention relative to the opening of hostilities, to which both Japan and the United Kingdom are parties, His Majesty's Ambassador at*

Tokyo has been instructed to inform the Imperial Japanese Government in the name of His Majesty's Government in the United Kingdom that a state of war exists between our two countries

I have the honour to be, with high consideration,

Sir,

Your obedient servant,

WINSTON S CHURCHILL

Some people did not like this ceremonial style But after all when you have to kill a man it costs nothing to be polite

* * * * *

Parliament met at 3 p m., and in spite of the shortness of notice the House was full Under the British Constitution the Crown declares war on the advice of Ministers, and Parliament is confronted with the fact. We were therefore able to be better than our word to the United States, and actually declared war upon Japan before Congress could act The Royal Netherlands Government had also made their declaration In my speech I said.

It is of the highest importance that there should be no underrating of the gravity of the new dangers we have to meet, either here or in the United States The enemy has attacked with an audacity which may spring from recklessness, but which may also spring from a conviction of strength The ordeal to which the English-speaking world and our heroic Russian Allies are being exposed will certainly be hard, especially at the outset, and will probably be long, yet when we look around us over the sombre panorama of the world we have no reason to doubt the justice of our cause or that our strength and will-power will be sufficient to sustain it.

We have at least four-fifths of the population of the globe upon our side We are responsible for their safety and for their future. In the past we have had a light which flickered, in the present we have a light which flames, and in the future there will be a light which shines over all the land and sea.

Both Houses voted unanimously in favour of the decision.

* * * * *

I thought it necessary at this juncture that Mr Duff Cooper, who had returned to Singapore, should be at once appointed Resident Minister for Far Eastern Affairs.

Prime Minister to Mr. Duff Cooper 9 Dec 41

You are appointed Resident Cabinet Minister at Singapore for Far Eastern Affairs You will serve under, and report directly to, the War Cabinet, through its Secretary You are authorised to form a War Council, reporting first its composition and the geographical sphere it will cover. This will presumably coincide with the geographical sphere of the military Commander-in-Chief Your principal task will be to assist the successful conduct of operations in the Far East (*a*) by relieving the Commanders-in-Chief as far as possible of those extraneous responsibilities with which they have hitherto been burdened, and (*b*) by giving them broad political guidance

2 Your functions will also include the settlement of emergency matters on the spot, where time does not permit of reference home You will develop a local clearing-house for prompt settlement of minor routine matters which would otherwise have to be referred to separate departments here On all matters on which you require special guidance you will, provided there is time, refer the matter home You will in any case report constantly to His Majesty's Government.

3. When Captain Oliver Lyttelton was appointed Minister of State at Cairo it was laid down that this did not affect the existing responsibilities of His Majesty's Representatives in the Middle East, or their official relationships with their respective departments at home. The same will apply in the Far East The successful establishment of this machinery depends largely on your handling of it in these early critical days

4. With your knowledge of the various public departments and of Cabinet procedure, it should be possible for you to exercise a powerful, immediately concerting influence upon Far Eastern affairs Telegraph to me at once your concrete proposals and the form in which you would like your appointment and its scope to be defined and published. All good luck and kindest regards We must fight this thing out everywhere to the end

Duff Cooper addressed himself to these new duties with vigour and clarity of thought, but the arrangements we made at Washington with the United States for a Supreme Commander in the Far East to my regret made his office redundant, and a little more than a fortnight later I instructed him to return home He was unlucky not to be allowed to go down fighting.

* * * * *

We were not told for some time any details of what had happened at Pearl Harbour, but the story has now been exhaustively recorded.

Until early in 1941 the Japanese naval plan for war against the United States was for their main fleet to give battle in the waters near the Philippines when the Americans, as might be expected, fought their way across the Pacific to relieve their garrison in this outpost. The idea of a surprise attack on Pearl Harbour originated in the brain of Admiral Yamamoto, the Japanese Commander-in-Chief. Preparation for this treacherous blow before any declaration of war went forward with the utmost secrecy, and by November 22 the striking force of six carriers, with a supporting force of battleships and cruisers, was concentrated in an unfrequented anchorage in the Kurile Islands, north of Japan proper. Already the date of the attack had been fixed for Sunday, December 7, and on November 26 (East longitude date) the force sailed under the command of Admiral Nagumo. Keeping far to the northward of Hawaii, amidst the fog and gales of these northern latitudes, Nagumo approached his goal undetected. Before sunrise on the fateful day the attack was launched from a position about 275 miles to the north of Pearl Harbour. Three hundred and sixty aircraft took part, comprising bombers of all types, escorted by fighters. At 7.55 a.m. the first bomb fell. Ninety-four ships of the United States Navy were present in the harbour. Among them the eight battleships of the Pacific Fleet were the prime targets. The carriers, with strong cruiser forces, were fortunately absent on missions elsewhere.

The story of this attack has often been vividly related. It is sufficient here to state the salient facts and to note the ruthless efficiency of the Japanese airmen By 8.25 a.m. the first waves of torpedo and dive-bombers had struck their blow. By 10 a.m. the battle was over and the enemy withdrew. Behind them lay a shattered fleet hidden in a pall of fire and smoke, and the vengeance of the United States. The battleship *Arizona* had blown up, the *Oklahoma* had capsized, the *West Virginia* and *California* had sunk at their moorings, and every other battleship, except the *Pennsylvania*, which was in dry dock, had been heavily damaged. Over two thousand Americans had lost their lives, and nearly two thousand others were wounded. The mastery of the Pacific had passed into Japanese hands, and the strategic balance of the world was for the time being fundamentally changed.

* * * * *

Our American Allies had yet another set of misfortunes. In the Philippines, where General MacArthur commanded, a warning indicating a grave turn in diplomatic relations had been received on November 20. Admiral Hart, commanding the modest United States Asiatic Fleet, had already been in consultation with the adjacent British and Dutch naval authorities, and, in accordance with his war plan, had begun to disperse his forces to the southward, where he intended to assemble a striking force in Dutch waters in conjunction with his prospective allies. He had at his disposal only one heavy and two light cruisers, besides a dozen old destroyers and various auxiliary vessels. His strength lay almost entirely in his submarines, of which he had twenty-eight. At 3 a.m. on December 8 Admiral Hart intercepted a message giving the staggering news of the attack on Pearl Harbour. He at once warned all concerned that hostilities had begun, without waiting for confirmation from Washington. At dawn the Japanese dive-bombers struck, and throughout the ensuing days the air attacks continued on an ever-increasing scale. On the 10th the naval base at Cavite was completely destroyed by fire, and on the same day the Japanese made their first landing in the north of Luzon. Disasters mounted swiftly. Most of the American air forces were destroyed in battle or on the ground, and by December 20 the remnants had been withdrawn to Port Darwin, in Australia. Admiral Hart's ships had begun their southward dispersal some days before, and only the submarines remained to dispute the sea with the enemy. On December 21 the main Japanese invasion force landed in Lingayen Gulf, threatening Manila itself, and thereafter the march of events was not unlike that which was already in progress in Malaya, but the defence was more prolonged.

Thus the long-nurtured plans of Japan exploded in a blaze of triumph. But this was not the end.

* * * * *

The dispatch of the Japanese Ambassador to Berlin tells of his visit to Ribbentrop.

The day after Pearl Harbour at one o'clock I called on Foreign Minister Ribbentrop and told him our wish was to have Germany and Italy issue formal declarations of war on America at once. Ribben-

trop replied that Hitler was then in the midst of a conference at General Headquarters [in East Prussia], discussing how the formalities of declaring war could be carried out so as to make a good impression on the German people, and that he would transmit your wish to him at once and do whatever he was able to have it carried out properly.

Both Hitler and his staff were astonished. Jodl tells at his trial how Hitler "came in the middle of the night to my chart room in order to transmit this news to Field-Marshal Keitel and myself. He was completely surprised". On the morning of December 8 however he gave the German Navy orders to attack American ships wherever found This was three days before the official declaration of war by Germany on the United States.

* * * * *

I convened a meeting, mostly Admiralty, in the Cabinet War Room at ten o'clock on the night of the 9th to review the naval position. We were about a dozen. We tried to measure the consequences of this fundamental change in our war position against Japan We had lost the command of every ocean except the Atlantic. Australia and New Zealand and all the vital islands in their sphere were open to attack. We had only one key weapon in our hands. The *Prince of Wales* and the *Repulse* had arrived at Singapore They had been sent to these waters to exercise that kind of vague menace which capital ships of the highest quality whose whereabouts is unknown can impose upon all hostile naval calculations How should we use them now? Obviously they must go to sea and vanish among the innumerable islands. There was general agreement on that

I thought myself they should go across the Pacific to join what was left of the American Fleet. It would be a proud gesture at this moment, and would knit the English-speaking world together We had already cordially agreed to the American Navy Department withdrawing their capital ships from the Atlantic. Thus in a few months there might be a fleet in being on the west coast of America capable of fighting a decisive sea battle if need be. The existence of such a fleet and of such a fact would be the best possible shield to our brothers in Australasia. We were all much attracted by this line of thought. But as the hour was late we decided to sleep on it, and settle the next morning what to do with the *Prince of Wales* and the *Repulse*.

Within a couple of hours they were at the bottom of the sea.

* * * * *

The tragedy of these ships, in which Chance played so fatal a part, must now be told

The *Prince of Wales* and *Repulse* had reached Singapore on December 2. On December 5 Admiral Tom Phillips arrived in Manila by air to discuss possible joint action with General MacArthur and Admiral Hart. Admiral Hart agreed that four American destroyers should join Phillips's flag Both Admirals felt that neither Singapore nor Manila could at the moment be a suitable base for an Allied Fleet. Next day news came that a large Japanese seaborne expedition had entered the Gulf of Siam. It was clear that decisive events were at hand. Phillips got back to Singapore on the morning of the 7th. Soon after midnight on the 8th it was reported that a landing was actually in progress at Kota Bharu, and later that other landings were being made near Singora and also at Patani (see map). A major invasion of Malaya had begun *

Admiral Phillips judged it his duty to strike at the enemy while they were disembarking At a meeting of his senior officers all agreed that it was impossible for the Navy to stand out of the battle at this critical stage. He reported his intentions to the Admiralty He requested the Singapore Air Command to move fighters to our northern airfields, and requested the utmost help from our meagre Air Force—namely, reconnaissance 100 miles north of his squadron on December 9, reconnaissance off Singora from daylight on December 10, and fighter protection over Singora on the morning of December 10 This last all-important aid could not be given, first because of the expected attack on Singapore, and secondly because the northern airfields were already untenable. The Admiral had sailed at 5 35 p m on the 8th with the *Prince of Wales* and *Repulse* and the destroyers *Electra*, *Express*, *Vampire*, and *Tenedos* when this signal reached him. It

* The Japanese attacks in Malaya and the Far East occurred within a few hours of that on Pearl Harbour This is not readily apparent owing to the different times kept The following table shows the sequence of events, related to Greenwich time

	Local Time	*Greenwich Time*
First landing in Malaya .	12 25 a m , Dec 8	4 55 p.m , Dec 7
Attack on Pearl Harbour	8 00 a m , Dec 7	6 30 p m , Dec. 7
First air raid in the Philippines	Dawn, Dec 8	9 00 p m , Dec 7
First air raid in Hong Kong	8 00 a m , Dec 8	11 30 p.m , Dec 7

added the warning that large Japanese bomber forces were based in Southern Indo-China. As the frequent rain squalls and low cloud were unfavourable for air action, Phillips resolved to press on. On the evening of the 9th the weather cleared, and he soon had reason to believe that he was being shadowed by enemy aircraft. The hope of surprise was gone, and heavy air attacks must be expected the next morning near Singora. At this Admiral Phillips reluctantly abandoned his daring enterprise, and after dark turned homewards He had certainly done his best, and all might have yet been well. About midnight however by a hard mischance another enemy landing was reported at Kuantan, more than 150 miles south of Kota Bharu. Admiral Phillips thought it unlikely that his force, last sighted by the enemy on a northerly course, would be expected so far south by daylight on the 10th. After all he might achieve surprise. He accepted the risk and turned his ships towards Kuantan.

Japanese records make no claim to have sighted the British squadron from the air on the 9th, but a submarine reported them steering north at 2 p.m. The Japanese 22nd Air Flotilla, based near Saigon, was loading bombs for an attack on Singapore. They immediately exchanged bombs for torpedoes and decided to make a night attack on the British ships. They found nothing, and returned to their base by midnight. Before dawn on the 10th another Japanese submarine reported that the British were steering south, and at 6 a.m. a searching force of nine Japanese aircraft set forth, followed an hour later by a powerful striking force of eighty-four bombers and torpedo bombers, organised in waves of about nine aircraft each.

The report of the landing at Kuantan proved false, but as no amending message had been sent from Singapore the Admiral remained expectant, until soon after daylight the destroyer *Express* reached the harbour and found no sign of the enemy. Before resuming their southerly course the squadron spent some time in searching for a tug and other small craft which had been sighted earlier. But now the crisis came and fortune was hard. The Japanese air fleet had ranged as far south as Singapore without sighting anything. It was returning home on a northerly course, which by chance led them straight to their quarry.

At 10.20 a.m. a shadowing aircraft was sighted by the *Prince of*

Wales, and soon after 11 a m. the first wave of bombers appeared The enemy attacked in successive waves. In the first the *Repulse* received one hit from a bomb which caused a fire, but this was soon under control and the ship's speed was not impaired. In the second the *Prince of Wales* was struck simultaneously by what seemed to be two torpedoes close together, which caused very severe damage and flooding Both port propellers were put out of action, and the ship was never again under complete control. The *Repulse* was not hit in this attack. A few minutes later another wave closed in on the *Repulse*, and again she escaped damage The ships by now had become somewhat separated, and Captain Tennant, having made an emergency signal to Singapore, "Enemy aircraft bombing", turned the *Repulse* towards the Admiral

At 12 22 p.m. another attack proved fatal to both capital ships. After successfully avoiding a number of torpedoes the *Repulse* was struck amidships. Soon afterwards, in yet another attack, a torpedo wrecked her steering gear, and then in quick succession three more torpedoes found their mark Captain Tennant realised that his ship was doomed. He promptly ordered all hands on deck, and there is no doubt that this timely action saved many lives. At 12.33 p.m the *Repulse* turned over and sank The *Prince of Wales* had received two more torpedo hits at about 12 23 p.m , and another shortly afterwards. Her speed was reduced to eight knots, and she too was soon in a sinking condition. After another bombing attack, which scored one more hit, she capsized and sank at 1 20 p.m The destroyers rescued two thousand officers and men out of nearly three thousand The Commander-in-Chief, Admiral Sir Tom Phillips, and his Flag-Captain, John Leach, were drowned.

* * * * *

In reply to certain questions of the Chiefs of Staff about why no fighter aircraft were sent from Singapore to aid the squadron, it was confirmed that Admiral Phillips did not signal his change of plan on the 9th, as he was keeping wireless silence. His position on the morning of the 10th was not therefore known in Singapore till Captain Tennant's emergency signal was received at noon Fighters were then sent at once They arrived only in time to witness the sinking of the *Prince of Wales*.

In judging the actions of Admiral Phillips during these calamitous days it should be emphasised that there were sound reasons for his belief that his intended attack at Kuantan would be outside the effective range of enemy shore-based torpedo bombers, which were his chief anxiety, and that he would only have to deal with hastily organised strikes by ordinary long-range bombers during his retirement. The distance from the Saigon airfields to Kuantan was four hundred miles, and at this date no attacks by torpedo bombers had been attempted at anything approaching this range The efficiency of the Japanese in air warfare was at this time greatly under-estimated both by ourselves and by the Americans

* * * * *

I was opening my boxes on the 10th when the telephone at my bedside rang It was the First Sea Lord. His voice sounded odd He gave a sort of cough and gulp, and at first I could not hear quite clearly "Prime Minister, I have to report to you that the *Prince of Wales* and the *Repulse* have both been sunk by the Japanese—we think by aircraft Tom Phillips is drowned" "Are you sure it's true?" "There is no doubt at all" So I put the telephone down, I was thankful to be alone. In all the war I never received a more direct shock The reader of these pages will realise how many efforts, hopes, and plans foundered with these two ships As I turned over and twisted in bed the full horror of the news sank in upon me There were no British or American capital ships in the Indian Ocean or the Pacific except the American survivors of Pearl Harbour, who were hastening back to California Over all this vast expanse of waters Japan was supreme, and we everywhere were weak and naked

I went down to the House of Commons as soon as they met at eleven that morning to tell them myself what had happened.

I have bad news for the House which I think I should pass on to them at the earliest moment. A report has been received from Singapore that H M S *Prince of Wales* and H M S. *Repulse* have been sunk while carrying out operations against the Japanese in their attack on Malaya No details are yet available except those contained in the Japanese official communiqué, which claims that both ships were sunk by air attack

I may add that at the next sitting of the House I shall take occasion

to make a short statement on the general war situation, which has from many points of view, both favourable and adverse, undergone important changes in the last few days

* * * * *

All plans were now being made in secret for my starting for the United States on the 14th. The intervening ninety-six hours were crowded On the 11th I had to make a full statement to the House upon the new situation. There was much anxiety and not a little discontent with the long-drawn battle in Libya, which evidently hung in the balance. I did not at all conceal the prospect that very severe punishment awaited us at the hands of Japan On the other hand, the Russian victories had revealed the fatal error of Hitler's Eastern campaign, and winter was still to assert its power. The U-boat war was at the moment under control, and our losses greatly reduced. Finally, four-fifths of the world were now fighting on our side. Ultimate victory was certain In this sense I spoke

I used the coldest form of factual narration, avoiding all promises of early success. I ended thus:

Naturally, I should not be prepared to discuss the resulting situation in the Far East and in the Pacific or the measures which must be taken to restore it. It may well be that we shall have to suffer considerable punishment, but we shall defend ourselves everywhere with the utmost vigour in close co-operation with the United States and the Netherlands. The naval power of Great Britain and the United States was very greatly superior—and is still largely superior—to the combined forces of the three Axis Powers. But no one must underrate the gravity of the loss which has been inflicted in Malaya and Hawaii, or the power of the new antagonist who has fallen upon us, or the length of time it will take to create, marshal, and mount the great force in the Far East which will be necessary to achieve absolute victory

We have a very hard period to go through, and a new surge of impulse will be required, and will be forthcoming, from everybody We must, as I have said, faithfully keep our engagements to Russia in supplies, and at the same time we must expect, at any rate for the next few months, that the volume of American supplies reaching Britain and the degree of help given by the United States Navy will be reduced The gap must be filled, and only our own efforts will fill it I cannot doubt, however, now that the 130,000,000 people in the United States have bound themselves to this war, that once they have settled down to it and have bent themselves to it—as they will—as

their main purpose in life, then the flow of munitions and aid of every kind will vastly exceed anything that could have been expected on the peace-time basis that has ruled up to the present Not only the British Empire now but the United States are fighting for life, Russia is fighting for life, and China is fighting for life Behind these four great combatant communities are ranged all the spirit and hopes of all the conquered countries in Europe, prostrate under the cruel domination of the foe. I said the other day that four-fifths of the human race were on our side It may well be an under-statement Just these gangs and cliques of wicked men and their military or party organisations have been able to bring these hideous evils upon mankind It would indeed bring shame upon our generation if we did not teach them a lesson which will not be forgotten in the records of a thousand years

The House was very silent, and seemed to hold its judgment in suspense. I did not seek or expect more.

* * * * *

During the night of December 7–8 Mr. Eden had sailed from Scapa Flow on his journey to Moscow while the news of Pearl Harbour was actually breaking upon us. There would have been time to turn him back, but I considered his mission was all the more important in consequence of the new explosion The relations between Russia and Japan and the inevitable reshuffling of all American supplies of munitions both to Russia and Britain raised large issues, which were also delicate. The Cabinet took this view strongly. Eden continued his voyage, and I kept him well informed. There was plenty to tell.

Prime Minister to Mr. Eden (at sea) 10 Dec 41

Since you left much has happened United States have sustained a major disaster at Hawaii, and have now only two battleships effective in Pacific against ten Japanese They are recalling all their battleships from the Atlantic. Secondly, according to American sources, we are going to be heavily attacked in Malaya and throughout Far East by Japanese forces enjoying command of the sea Thirdly, it seems to me certain that Italy and Germany will declare war on United States Fourthly, magnificent Russian successes at Leningrad, on whole Moscow front, at Kursk and in South, German armies largely on defensive or in retreat, under terrible winter conditions and ever-strengthening Russian counter-attacks Fifthly, Auchinleck reports tide turned in Libya, but much heavy fighting lies ahead on this our

second front. Sixthly, urgent necessity to reinforce Malaya with aircraft from Middle East.

2 In view of above you should not offer ten squadrons at present time Everything is in flux with United States supplies, and I cannot tell where we are till I get there

3 Hope you are better We are having a jolly [*sic*] time here

And further as I embarked:

Prime Minister to Mr. Eden (at sea) 12 Dec 41

The loss of the *Prince of Wales* and *Repulse*, together with United States losses at Pearl Harbour, gives Japanese full battle-fleet command of Pacific. They can attack with any force overseas at any point. Happily area is so vast that the use of their power can only be partial and limited We think they will go for Philippines, Singapore, and the Burma Road. It will be many months before effective superiority can be regained through completion of British and American new battleships The United States, under shock of Pacific disaster and war declarations, have embargoed everything for the present I hope to loosen this up, but in present circumstances, with a Russian victory and our new dangers, we cannot make any promises beyond our agreed quota of supplies You should point out what a grievous drain the aeroplanes are to us, with all these demands for fighters in the East On the other hand, accession of United States makes amends for all, and with time and patience will give certain victory . .

Am just off.

CHAPTER XXXIII

A VOYAGE AMID WORLD WAR

Our Voyage in the "Duke of York" – My Party – Our Signals and Contacts with Home – Should We Press the Soviets to Declare War on Japan? – Mr Eden's Conversations with Stalin and Molotov, December 16–18 – Stalin's Views on the Post-War Settlement – Soviet Claim to the Baltic States – My Protests are Supported by the Cabinet – Further Moscow Conversations – Russia and Japan – A Friendly Parting – Our Relations with Vichy Blessing or Cursing – The Japanese Attack on Hong Kong – Devoted Resistance of the Garrison – Capitulation – Japanese Landings in Malaya – My Telegram to Wavell, December 12 – A Grave Strategic Issue – Duff Cooper's Advice and My Convictions – Progress of the Desert Offensive – Rommel Retreats to Agheila – The German Air Force Returns to the Mediterranean – Anxieties about United States Policy – Lord Beaverbrook's Optimism – Unfounded Fears.

MANY serious reasons required my presence in London at this moment when so much was molten I never had any doubt that a complete understanding between Britain and the United States outweighed all else, and that I must go to Washington at once with the strongest team of expert advisers who could be spared It was thought too risky for us to go by air at this season in an unfavourable direction Accordingly we travelled on the 12th to the Clyde. The *Prince of Wales* was no more. The *King George V* was watching the *Tirpitz*. The newborn *Duke of York* could carry us, and work herself up to full efficiency at the same time. The principals of our party were Lord Beaverbrook, a member of the War Cabinet, Admiral Pound, First Sea Lord, Air-Marshal Portal, Chief of the Air Staff, and Field-Marshal Dill, who had now been succeeded by General Brooke as Chief of the Imperial General Staff. I was

anxious that Brooke should remain in London in order to grip the tremendous problems that awaited him In his place I invited Dill, who was still in the centre of our affairs, trusted and respected by all, to come with me to Washington. Here a new sphere was to open to him.

With me also came Sir Charles Wilson, who had during 1941 become my constant medical adviser. This was his first voyage with me, but afterwards he came on all the journeys. To his unfailing care I probably owe my life. Although I could not persuade him to take my advice when he was ill, nor could he always count on my implicit obedience to all his instructions, we became devoted friends. Moreover, we both survived.

It was hoped to make the passage at an average of 20 knots in seven days, having regard to zigzags and détours to avoid the plotted U-boats. The Admiralty turned us down the Irish Channel into the Bay of Biscay. The weather was disagreeable There was a heavy gale and a rough sea The sky was covered with patchy clouds. We had to cross the out-and-home U-boat stream from the Western French ports to their Atlantic hunting grounds There were so many of them about that our captain was ordered by the Admiralty not to leave our flotilla behind us, but the flotilla could not make more than six knots in the heavy seas, and we paddled along at this pace round the South of Ireland for forty-eight hours. We passed within four hundred miles of Brest, and I could not help remembering how the *Prince of Wales* and the *Repulse* had been destroyed by shore-based torpedo aircraft attack the week before The clouds had prevented all but an occasional plane of our air escort from joining us, but when I went on the bridge I saw a lot of unwelcome blue sky appearing However, nothing happened, so all was well The great ship with her attendant destroyers plodded on. But we became impatient with her slow speed On the second night we approached the U-boat stream. Admiral Pound, who took the decision, said that we were more likely to ram a U-boat than to be torpedoed by one ourselves The night was pitch-black So we cast off our destroyers and ran through alone at the best speed possible in the continuing rough weather We were battened down and great seas beat upon the decks. Lord Beaverbrook complained that he might as well have travelled in a submarine

Our very large deciphering staff could of course receive by

wireless a great deal of business. To a limited extent we could reply. When fresh escorts joined us from the Azores they could take in by daylight Morse signals from us in code, and then, dropping off a hundred miles or so, could transmit them without revealing our position. Still, there was a sense of radio claustrophobia—and we were in the midst of world war.

* * * * *

All our problems travelled with us, and my thoughts were with the Foreign Secretary, also at sea and hastening in the opposite direction. The most urgent question was our policy about asking the Soviet Government to declare war on Japan. I had already sent Mr Eden the following telegram

12 Dec 41

Before you left you asked for views of Chiefs of Staff on the question whether it would be to our advantage for Russia to declare war on Japan Chiefs of Staff considered views are as follows

> Russian declaration of war on Japan would be greatly to our advantage, provided, but only provided, that the Russians are confident that it would not impair their Western front either now or next spring

They then set forth in considerable detail the pros and cons On the balance they emphasised the prime importance of avoiding a Russian breakdown in the West.

I continued to the Foreign Secretary:

If your discussions lead you to the opinion that the Russians would be prepared to declare war on Japan, it is for consideration whether the exercise of any pressure required should be by the Americans rather than ourselves

As a postscript to him after his arrival in Moscow I added

In view of evident strong wish of United States, China, and I expect Australia, that Russia should come in against Japan, you should not do anything to discourage a favourable movement if Stalin feels strong enough to do so. We should not put undue pressure upon him, considering how little we have been able to contribute.

And the next day·

It may well be that recent successes on the Russian front may make Stalin more willing to face a war with Japan The situation is changing

from day to day in our favour, and you must judge on the spot how far and how hard it is wise to press him

During our voyage I received from Mr Eden, soon at Moscow, a series of messages setting forth the Soviet ideas on other matters with which he had been confronted on arrival

The substance of these messages is summarised in his own words in the full dispatch, dated January 5, 1942, which he wrote on his return

> At my first conversation with M Stalin and M. Molotov on December 16 M Stalin set out in some detail what he considered should be the post-war territorial frontiers in Europe, and in particular his ideas regarding the treatment of Germany. He proposed the restoration of Austria as an independent State, the detachment of the Rhineland from Prussia as an independent State or a protectorate, and possibly the constitution of an independent State of Bavaria He also proposed that East Prussia should be transferred to Poland and the Sudetenland returned to Czechoslovakia He suggested that Yugoslavia should be restored, and even receive certain additional territories from Italy, that Albania should be reconstituted as an independent State, and that Turkey should receive the Dodecanese, with possible adjustments in favour of Greece as regards islands in the Ægean important to Greece Turkey might also receive certain districts in Bulgaria, and possibly also in Northern Syria In general the occupied countries, including Czechoslovakia and Greece, should be restored to their pre-war frontiers, and M Stalin was prepared to support any special arrangements for securing bases, etc , for the United Kingdom in Western European countries—*e g* , France, Belgium, the Netherlands, Norway, and Denmark As regards the special interests of the Soviet Union, M Stalin desired the restoration of the position in 1941, prior to the German attack, in respect of the Baltic States, Finland, and Bessarabia The "Curzon Line" should form the basis for the future Soviet-Polish frontier, and Roumania should give special facilities for bases, etc , to the Soviet Union, receiving compensation from territory now occupied by Hungary
>
> In the course of this first conversation M Stalin generally agreed with the principle of restitution in kind by Germany to the occupied countries, more particularly in regard to machine tools, etc , and ruled out money reparations as undesirable. He showed interest in a post-war military alliance between the "democratic countries", and stated that the Soviet Union had no objection to certain countries of Europe entering into a federal relationship, if they so desired
>
> In the second conversation, on December 17, M Stalin pressed for

the immediate recognition by His Majesty's Government of the future frontiers of the U S.S.R., more particularly in regard to the inclusion within the U S.S R of the Baltic States and the restoration of the 1941 Finnish-Soviet frontier He made the conclusion of any Anglo-Soviet Agreement dependent on agreement on this point I, for my part, explained to M Stalin that in view of our prior undertakings to the United States Government it was quite impossible for His Majesty's Government to commit themselves at this stage to any post-war frontiers in Europe, although I undertook to consult His Majesty's Government in the United Kingdom, the United States Government, and His Majesty's Governments in the Dominions on my return This question, to which M. Stalin attached fundamental importance, was further discussed at the third meeting on December 18

In the forefront of the Russian claims was the request that the Baltic States, which Russia had subjugated at the beginning of the war, should be finally incorporated in the Soviet Union There were many other conditions about Russian imperial expansion, coupled with fierce appeals for unlimited supplies and impossible military action As soon as I read the telegrams I reacted violently against the absorption of the Baltic States

Prime Minister to Lord Privy Seal 20 Dec 41

Stalin's demand about Finland, Baltic States, and Roumania are directly contrary to the first, second, and third articles of the Atlantic Charter, to which Stalin has subscribed There can be no question whatever of our making such an agreement, secret or public, direct or implied, without prior agreement with the U S The time has not yet come to settle frontier questions, which can only be resolved at the Peace Conference when we have won the war

2. The mere desire to have an agreement which can be published should never lead us into making wrongful promises Foreign Secretary has acquitted himself admirably, and should not be downhearted if he has to leave Moscow without any flourish of trumpets The Russians have got to go on fighting for their lives anyway, and are dependent upon us for very large supplies, which we have most painfully gathered, and which we shall faithfully deliver

3 I hope the Cabinet will agree to communicate the above to the Foreign Secretary. He will no doubt act with the necessary tact and discretion, but he should know decisively where we stand

The Cabinet shared my view, and telegraphed accordingly To Mr. Eden I replied as follows.

Prime Minister (at sea) to Foreign Secretary (at Moscow) 20 Dec 41

Naturally you will not be rough with Stalin. We are bound to United States not to enter into secret and special pacts. To approach President Roosevelt with these proposals would be to court a blank refusal, and might cause lasting trouble on both sides.

2 The strategic security of Russia on her western border will be one of the objects of Peace Conference The position of Leningrad has been proved by events to be of particular danger The first object will be the prevention of any new outbreak by Germany The separation of Prussia from South Germany, and actual definition of Prussia itself, will be one of the greatest issues to be decided But all this lies in a future which is uncertain and probably remote We have now to win the war by a hard and prolonged struggle To raise such issues publicly now would only be to rally all Germans round Hitler

3 Even to raise them informally with President Roosevelt at this time would, in my opinion, be inexpedient This is the sort of line I should take, thus avoiding any abrupt or final closing of interviews Do not be disappointed if you are not able to bring home a joint public declaration on lines set forth in your Cabinet paper. I am sure your visit has done utmost good and your attitude will win general approval

This voyage seems very long.

Mr Eden's account gives in his own words the ending of his talks with Stalin in Moscow.

We took leave of one another in a very friendly atmosphere. After my explanations M. Stalin seemed fully to understand our inability to create a second front in Europe at the present time. He showed considerable interest in the progress of our Libyan offensive, and regarded it as most desirable to knock out Italy, on the principle that the Axis would collapse with the destruction of its weakest link.

He did not consider that he was yet strong enough to continue the campaign against Germany and also to provoke hostilities with Japan. He hoped by next spring to have restored his Far Eastern army to the strength which it had before he had been obliged to draw upon it for the West. He did not undertake to declare war on Japan next spring, but only to reconsider the matter then, although he would prefer that hostilities should be opened by the Japanese, as he seemed to expect might be the case.

* * * * *

The most acute issue however that lay in our minds in foreign relations at this moment was France. What would be the effect on Vichy France of the American declaration of war between the

United States and Germany? In Britain we had our relations with de Gaulle The United States Government—and particularly the State Department—were in close and helpful touch with Vichy Pétain, held in the German grip, was ailing Some said he must undergo an operation for enlarged prostate gland Weygand had been recalled from North Africa to Vichy and dismissed from his command Admiral Darlan was, it seemed, on the crest of the wave. Moreover, Auchinleck's success in Libya and beyond opened on the highest level all questions about French North Africa. Would Hitler, rebuffed in the Desert and halted in Russia, insist upon sending German forces, not now through Spain, but by sea and air into Tunis, Algeria, Morocco, and Dakar? Would this, or some of it, be his rejoinder to the entry of America into the war?

There were indications that Admiral Darlan might succeed or supersede Pétain, and the Foreign Office had received surreptitious inquiries as to how he would stand with us and our great Ally. These baffling possibilities involved our whole naval position—the Toulon fleet, the two unfinished battleships at Casablanca and Dakar, the blockade, and much else On our journey in the train from Chequers to the Clyde I had sent a minute on the naval aspects to the First Sea Lord in his adjoining compartment

13 Dec 41

I hope we may make together a joint offer of blessing or cursing to Vichy, or, failing Vichy, to French North Africa

We cannot tell yet how France will have been affected by the American entry. There are also the hopes of favourable reactions from a Libyan victory. Above all, the growing disaster of the German armies in Russia will influence all minds. It may well be that an American offer to land an American Expeditionary Force at Casablanca, added to the aid we can give under "Gymnast", would decide the action of French North Africa (and incidentally Madagascar) At any rate, it is worth trying I don't want any changes in our dispositions about "Gymnast" or "Truncheon" until we know what the reply of Vichy will be

It must be borne in mind that the United States would be generally in favour of North and West Africa as a major theatre for Anglo-American operations

To General Smuts I said

20 Dec 41

I thought it my duty to cross the Atlantic again, and hope in a few days to confer with President Roosevelt on the whole conduct of the war. I hope of course to procure from him assistance in a forward policy in French North Africa and in West Africa This is in accordance with American ideas, but they may well be too much preoccupied with the war with Japan I will keep you informed.

* * * * *

Meanwhile the fighting proceeded in all the theatres, old and new I had no illusions about the fate of Hong Kong under the overwhelming impact of Japanese power But the finer the British resistance the better for all. Hong Kong had been attacked by Japan at nearly the same moment of time as Pearl Harbour The garrison, under Major-General Maltby, were faced with a task that from the outset was beyond their powers. The Japanese employed a force of three divisions, against which we could muster six battalions, of which two were Canadian. In addition there was a handful of mobile artillery, the Volunter Defence Corps of civilians, two thousand strong, and the coast and anti-aircraft guns defending the port Throughout the siege the Japanese enjoyed undisputed mastery of the air. An active Fifth Column among the native inhabitants was no small help to the enemy.

Three battalions of the garrison, with sixteen guns, were deployed on the mainland in order to delay the assailants until demolitions had been carried out in the port of Kowloon. They were soon heavily attacked, and on December 11 were ordered to withdraw to the island This was skilfully accomplished during the ensuing two nights under conditions of much difficulty.

Prime Minister to Governor and Defenders of Hong Kong 12 Dec 41

We are all watching day by day and hour by hour your stubborn defence of the port and fortress of Hong Kong You guard a link between the Far East and Europe long famous in world civilisation. We are sure that the defence of Hong Kong against barbarous and unprovoked attack will add a glorious page to British annals

All our hearts are with you in your ordeal Every day of your resistance brings nearer our certain final victory.

The enemy's preparations for crossing the mile-wide stretch of water between the mainland and the island took some days, during which they systematically shelled, bombed, and mortared

our positions. On the night of December 18 they made their first landing, and successive reinforcements pushed actively inland The defenders were forced back step by step by attacks of ever-growing strength, their own numbers diminished by heavy casualties. They had no hope of reinforcement or succour, but they fought on

Prime Minister to Governor, Hong Kong 21 Dec 41

We were greatly concerned to hear of the landings on Hong Kong Island which have been effected by the Japanese We cannot judge from here the conditions which rendered these landings possible or prevented effective counter-attacks upon the intruders There must however be no thought of surrender Every part of the island must be fought and the enemy resisted with the utmost stubbornness

The enemy should be compelled to expend the utmost life and equipment There must be vigorous fighting in the inner defences, and, if the need be, from house to house Every day that you are able to maintain your resistance you help the Allied cause all over the world, and by a prolonged resistance you and your men can win the lasting honour which we are sure will be your due

These orders were obeyed in spirit and to the letter Among many acts of devotion one may be recorded here On December 19 the Canadian Brigadier Lawson reported that his headquarters were overrun; fighting was taking place at point-blank range, he was going outside to fight it out. He did so, and he and those with him were killed For a week the garrison held out. Every man who could bear arms, including some from the Royal Navy and Royal Air Force, took part in a desperate resistance. Their tenacity was matched by the fortitude of the British civilian population On Christmas Day the limit of endurance was reached and capitulation became inevitable. Under their resolute Governor, Sir Mark Young, the colony had fought a good fight. They had won indeed the "lasting honour" which is their due

* * * * *

Another set of disasters loomed upon us in Malaya The Japanese landings on the peninsula on December 8 were accompanied by damaging raids on our airfields which seriously crippled our already weak air forces and soon made the northerly aerodromes unusable At Kota Bharu, where the beach defences were manned by an infantry brigade extended over a front of

thirty miles, the Japanese succeeded in landing the greater part of a division, though not without heavy casualties inflicted both by our troops on shore and from the air After three days of stiff fighting the enemy were firmly established on land, the near-by airfields were in their hands, and the brigade, which had lost heavily, was ordered to withdraw southwards.

Farther north on that same December 8 the Japanese had made unopposed landings at Patani and Singora Dutch submarines, boldly handled, sank several of their ships There was no serious fighting until December 12, when the enemy with one of their finest divisions made a successful attack on the 11th Indian Division north of Alor Star, inflicting severe losses

★ ★ ★ ★ ★

Before leaving I had telegraphed to General Wavell, Commander-in-Chief India

12 Dec 41

You must now look East Burma is placed under your command You must resist the Japanese advance towards Burma and India and try to cut their communications down the Malay peninsula We are diverting the 18th Division, now rounding the Cape, to Bombay, together with four fighter squadrons of the R A F, now *en route* for Caucasus and Caspian theatre We are also sending you a special hamper of A A and A T. guns, some of which are already *en route* You should retain 17th Indian Division for defence against the Japanese Marry these forces as you think best and work them into the Eastern fighting front to the highest advantage

2 It is proposed at a convenient moment in the near future by arrangement between you and Auchinleck to transfer Iraq and Persia to the Cairo Command The Russian victories and Auchinleck's Libyan advance have for the time being relieved danger of German irruption into the Syrian-Iraq-Persian theatre The danger may revive, but we have other more urgent dangers to meet

3. I hope these new dispositions arising from the vast changes in the world situation of the last four days will commend themselves to you I shall endeavour to feed you with armour, aircraft, and British personnel to the utmost possible, having regard to the great strain we are under Pray cable me fully your views and needs

And also.

Prime Minister to Lord Privy Seal, and to General Ismay, for C O S Committee 13 Dec 41

Pray do all in your power to get men and materials moving into

India, and reinforce with air from the Middle East as soon as the battle in Libya is decided in our favour An effort should be made to send armoured vehicles at the earliest moment after a Libyan decision

Prime Minister to Governor of Burma 13 Dec 41

Wavell has been placed in charge of military and air defence of Burma We have diverted 18th Division, four fighter squadrons, and A A and A T guns, which were rounding the Cape, to Bombay for him to use as he thinks best. The battle in Libya goes well, but I cannot move any air from there till decision [in the battle] is definitely reached All preparations are being made to transfer four to six bomber squadrons to your theatre the moment battle is won

Every good wish.

* * * * *

A grave strategic choice was involved in the tactical defence of the Malay peninsula. I had clear convictions which I regret it was not in my power to enforce from mid-ocean.

Prime Minister to General Ismay, for C O S Committee 15 Dec 41

Beware lest [that] troops required for ultimate defence Singapore Island and fortress are not used up or cut off in Malay peninsula Nothing compares in importance with the fortress. Are you sure we shall have enough troops for prolonged defence? Consider with Auchinleck and Commonwealth Government moving 1st Australian Division from Palestine to Singapore Report action

I was glad to find that our Minister of State, Mr. Duff Cooper, had independently reached the same conclusion.

Prime Minister to General Ismay, for C O S Committee 19 Dec 41

Duff Cooper expresses the same anxieties as I conveyed to you in my message beginning "Beware". Duff Cooper's proposal to concentrate on defence of Johore for the purpose of holding Singapore conforms exactly to view taken by Dill here

2 After naval disasters to British and American sea-power in Pacific and Indian Oceans we have no means of preventing continuous landings by Japanese in great strength in Siam and the Malay peninsula It is therefore impossible to defend, other than by demolitions and delaying action, anything north of the defensive line in Johore, and this line itself can only be defended as part of the final defence of Singapore Island fortress and the naval base

3 The Commander-in-Chief should now be told to confine himself to defence of Johore and Singapore, and that nothing must compete with maximum defence of Singapore This should not preclude

his employing delaying tactics and demolitions on the way south and making an orderly retreat

4. You do not say who is now Commander-in-Chief Far East Has Pownall got there? If not, where is he? He should fly there at earliest moment

5 It was always intended that all reinforcements diverted from the Cape to India should be used by Wavell for the defence of Burma or sent forward to Far East Command as situation requires Your action in diverting the anti-aircraft guns and fighter squadrons is fully approved

6 18th Division can similarly be used by Wavell either for his own needs or to help Far East Command But why stop there? If 18th Division is sent eastward it would seem wise to get at least one Australian division moving into India to replace it

7 Please say what you are doing and how you propose to overcome the growing difficulties of sending reinforcements into Singapore Also, what has been done about reducing number of useless mouths in Singapore Island? What was the reply about supplies?

★ ★ ★ ★ ★

It is not possible to pursue the story to its conclusion in this volume The tragedy of Singapore must presently unfold itself. Suffice it here to say that during the rest of the month the Indian Division fought a series of delaying actions against the enemy's main thrust down the west coast of the peninsula. On December 17 the enemy invaded Penang, where, despite demolitions, a considerable number of small craft were seized intact These later enabled him to mount repeated flank attacks made by small amphibious forces. By the end of the month our troops, several times heavily engaged, were in action near Ipoh, a full hundred and fifty miles from the position they had first held, and by then the Japanese had landed on the peninsula at least three full divisions, including their Imperial Guard. In the air too the enemy had greatly increased his superiority The quality of his aircraft, which he had speedily deployed on captured airfields, had exceeded all expectations We had been thrown on to the defensive and our losses were severe On December 16 the northern part of Borneo also was invaded, and soon overrun, but not before we had succeeded in demolishing the immense and valuable oil installations In all this Dutch submarines took toll of the enemy ships

★ ★ ★ ★ ★

While we sailed the seas General Auchinleck's battle in the Desert went well The Axis army, skilfully evading various encircling manœuvres, made good its retreat to a rearward line running southward from Gazala On December 13 the attack on this position was launched by the Eighth Army. This now comprised the 7th Armoured Division, with the 4th Armoured Brigade and Support Group, the 4th British-Indian Division, the Guards Brigade (motorised), the 5th New Zealand Brigade, the Polish Brigade Group, and the 32nd Army Tank Brigade. All these troops passed under the command of the XIIIth Corps headquarters. The XXXth Corps had to deal with the enemy garrisons cut off and abandoned at Sollum, Halfaya, and Bardia, which were fighting stubbornly The enemy fought well at Gazala, but their desert flank was turned by our armour, and Rommel began his withdrawal through Derna to Agedabia and Agheila. They were followed all the way by all the troops we could keep in motion and supplied over these large distances

With the first week in December came a marked increase in the hostile air-power. The 1st German Air Corps was withdrawn from the Russian theatre and arrived in the Mediterranean. The German records show that their strength rose from 400 (206 serviceable) on November 15 to 637 (339 serviceable) a month later. The bulk went to Sicily to protect the sea route to North Africa, but over the desert dive-bombers, escorted by the highly efficient Me. 109 fighters, began to appear in increasing numbers The supremacy which the Royal Air Force had gained in the first week of the battle no longer ruled. We shall see later how the revival of the enemy air-power in the Mediterranean during December and January and the virtual disappearance for several months of our sea command was to deprive Auchinleck of the fruits of the victory for which he had struggled so hard and waited too long.

* * * * *

Everyone in our party worked incessantly while the *Duke of York* plodded westwards, and all our thoughts were focused on the new and vast problems we had to solve. We looked forward with eagerness, but also with some anxiety, to our first direct contact as allies with the President and his political and military advisers. We knew before we left that the outrage of Pearl Harbour had stirred the people of the United States to their
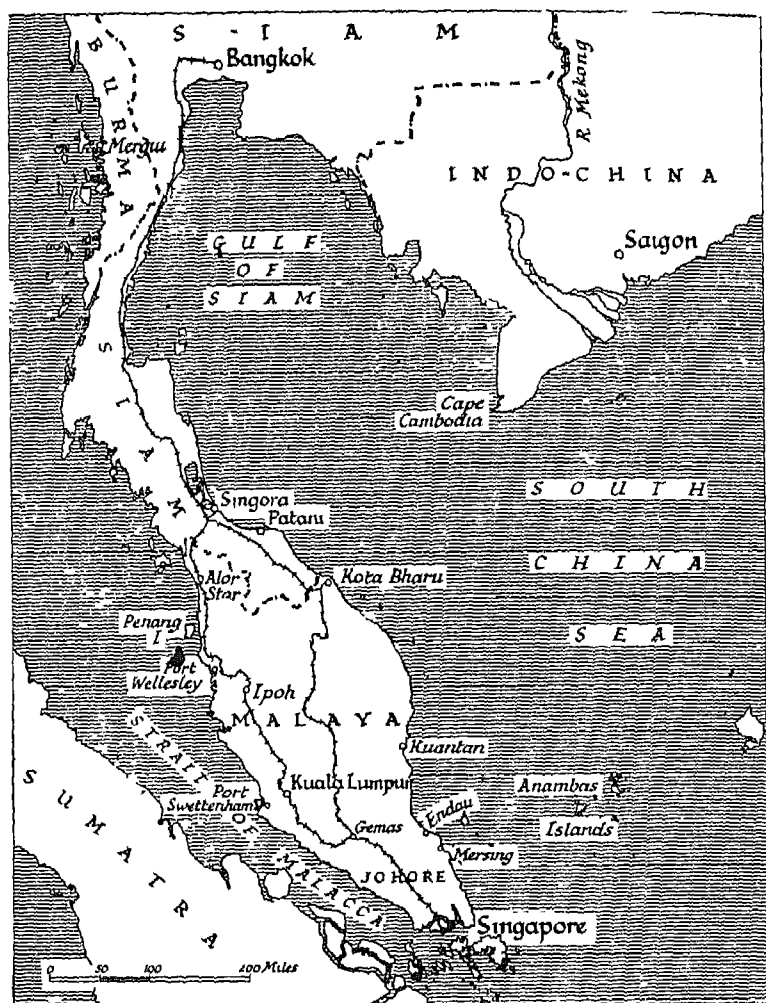
MALAYA

depths. The official reports and the Press summaries we had received gave the impression that the whole fury of the nation would be turned upon Japan. We feared lest the true proportion of the war as a whole might not be understood. We were conscious of a serious danger that the United States might pursue the war against Japan in the Pacific and leave us to fight Germany and Italy in Europe, Africa, and in the Middle East.

I have described in a previous chapter the enduring, and up to this point growing, strength of Britain. The first Battle of the Atlantic against the U-boats had turned markedly in our favour We did not doubt our power to keep open our ocean paths. We felt sure we could defeat Hitler if he tried to invade the Island We were encouraged by the strength of the Russian resistance We were unduly hopeful about our Libyan campaign But all our future plans depended upon a vast flow of American supplies of all kinds, such as were now streaming across the Atlantic Especially we counted on planes and tanks, as well as on the stupendous American merchant-ship construction. Hitherto, as a non-belligerent, the President had been able and willing to divert large supplies of equipment from the American armed forces, since these were not engaged This process was bound to be restricted now that the United States was at war with Germany, Italy, and above all Japan. Home needs would surely come first? Already, after Russia had been attacked, we had rightly sacrificed to aid the Soviet armies a large portion of the equipment and supplies now at last arriving from our factories. The United States had diverted to Russia even larger quantities of supplies than we otherwise would have received ourselves We had fully approved of all this on account of the splendid resistance which Russia was offering to the Nazi invader

It had been none the less hard to delay the equipment of our own forces, and especially to withhold vitally needed weapons from our army fiercely engaged in Libya We must presume that "America first" would become the dominant principle with our Ally We feared that there would be a long interval before American forces came into action on a great scale, and that during this period of preparation we should necessarily be greatly straitened This would happen at a time when we ourselves had to face a new and terrible antagonist in Malaya, the Indian Ocean, Burma, and India Evidently the partition of supplies would require profound attention and would be fraught with many difficulties and delicate aspects Already we had been notified that all the schedules of deliveries under Lend-Lease had been stopped pending readjustment. Happily the output of the British munitions and aircraft factories was now acquiring scope and momentum, and would soon be very large indeed. But a long array of "bottlenecks" and possible denials of key items, which

4
Roads
Tracks
Cirene
Derna
Bomba
Gazala
Tobruk
Benghazi
Barce
Marawa
Mechili
Acroma
Bardia
Sollum
Sidi Barrani
C Y R E N A I C A
Soluch
Msus
Capuzzo Track
Bir el Gubi
Antelat
El Abd Track
Ft Maddalena
Agedabia
E G Y P T
Frontier
Agheila
0
50
100
150 Miles
Giarabub
R.C.

CYRENAICA
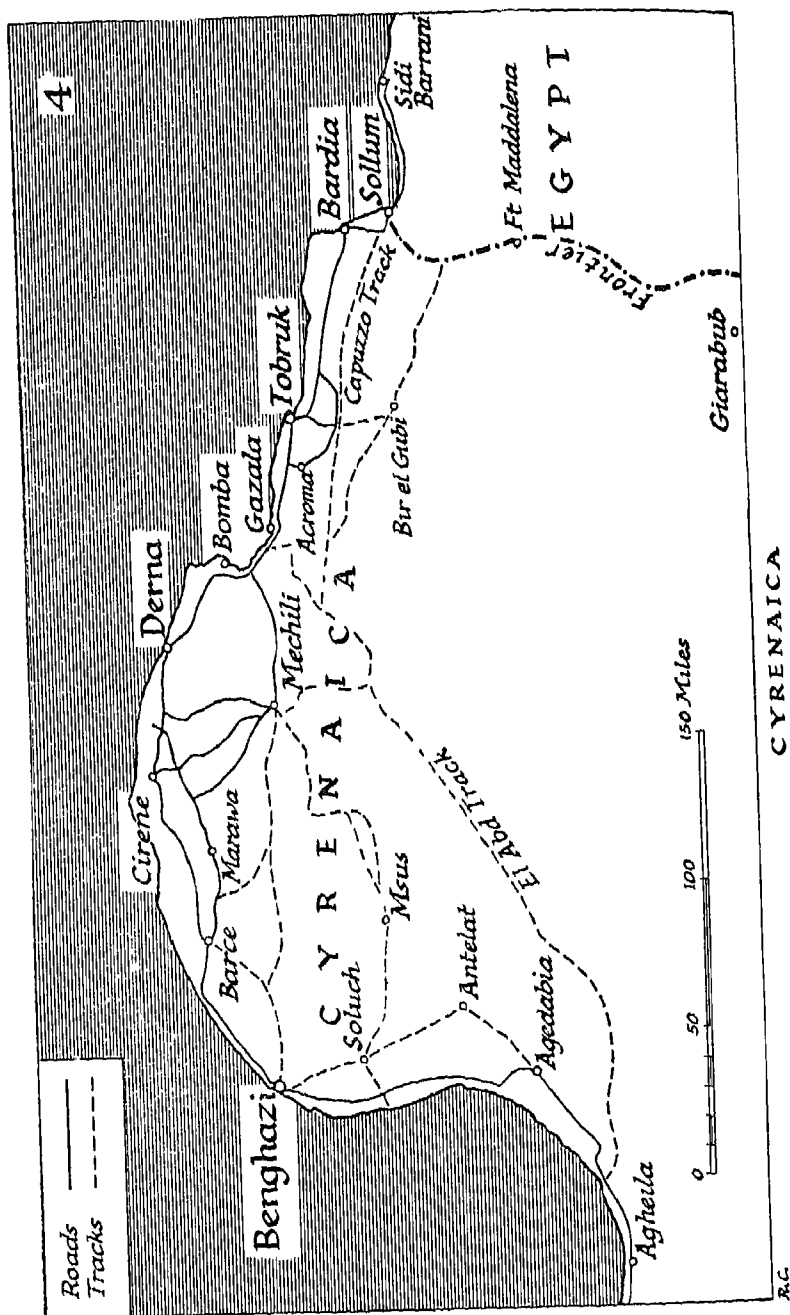
would affect the whole range of our production, loomed before our eyes as the *Duke of York* drove on through the incessant gales. Beaverbrook was, as usual in times of trouble, optimistic. He declared that the resources of the United States had so far not even been scratched, that they were immeasurable, and that once the whole force of the American people was diverted to the struggle results would be achieved far beyond anything that had been projected or imagined. Moreover, he thought the Americans did not yet realise their strength in the production field. All the present statistics would be surpassed and swept away by the American effort. There would be enough for all. In this his judgment was right.

All these considerations paled before the main strategic issue. Should we be able to persuade the President and the American Service chiefs that the defeat of Japan would not spell the defeat of Hitler, but that the defeat of Hitler made the finishing off of Japan merely a matter of time and trouble? Many long hours did we spend revolving this grave issue. The two Chiefs of Staff and General Dill with Hollis and his officers prepared several papers dealing with the whole subject and emphasising the view that the war was all one. As will be seen, these labours and fears both proved needless.

CHAPTER XXXIV

PROPOSED PLAN AND SEQUENCE OF THE WAR

My Three Papers for the President – Part I, The Atlantic Front – Hitler's Failure and Losses in Russia – My Ill-founded Hopes of General Auchinleck's Victory in Cyrenaica – Possible German Thrust Through the Caucasus – Urgent Need to Win French North Africa – British and American Reinforcements for North Africa – Request for American Troops in Northern Ireland – Request for American Bomber Squadrons to Attack Germany from Great Britain – Possible Refusal by Vichy to Co-operate in North Africa – The Consequential Anglo-American Campaign of 1942 – Our Relations with General de Gaulle – The Spanish Problem – The Main Objectives of 1942 – Part II, The Pacific Front – Japanese Naval Superiority – Their Resources a Wasting Factor – Our Need to Regain Superiority at Sea – British Offer to America of the "Nelson" and the "Rodney" – The Warfare of Aircraft-Carriers – Vital Need to Improvise – Danger of Creating Too Large an American Army – My Assertion of the Need for Large-Scale Operations on the Continent – Part III, The Campaign of 1943 – Possible Situation at the Beginning of 1943 – West and North Africa in Anglo-American Control – Turkey Effectively in the Allied Front – A Footing Gained in Italy and Sicily – Need to Prepare for Landings in Western and Southern Europe – Major Assault in 1943 – Largely an Amphibious Operation – Continuous Preparation by Bombing of Germany and Italy – Hope of Ending the War in 1943 or 1944 – Staff Concurrence with My Views – All the Objectives Ultimately Achieved – A Fortunate Delay in the Final Assault

THE eight days' voyage, with its enforced reduction of current business, with no Cabinet meetings to attend or people to receive, enabled me to pass in review the whole war as I saw and felt it in the light of its sudden vast expansion.

I recalled Napoleon's remark about the value of being able to focus objects in the mind for a long time without being tired—"*fixer les objets longtemps sans être fatigué*". As usual I tried to do this by setting forth my thought in typescript by dictation In order to prepare myself for meeting the President and for the American discussions and to make sure that I carried with me the two Chiefs of Staff, Pound and Portal, and General Dill, and that the facts could be checked in good time by General Hollis and the Secretariat, I produced three papers on the future course of the war, as I conceived it should be steered Each paper took four or five hours, spread over two or three days. As I had the whole picture in my mind it all came forth easily, but very slowly In fact, it could have been written out two or three times in long-hand in the same period. As each document was completed after being checked I sent it to my professional colleagues as an expression of my personal convictions. They were at the same time preparing papers of their own for the combined Staff conferences I was glad to find that although my theme was more general and theirs more technical there was our usual harmony on principles and values. No differences were expressed which led to argument, and very few of the facts required correction. Thus, though nobody was committed in a precise or rigid fashion, we all arrived with a body of doctrine of a constructive character on which we were broadly united.

The first paper assembled the reasons why our main objective for the campaign of 1942 in the European theatre should be the occupation of the whole coastline of Africa and of the Levant from Dakar to the Turkish frontier by British and American forces The second dealt with the measures which should be taken to regain the command of the Pacific, and specified May 1942 as the month when this could be achieved It dwelt particularly upon the need to multiply aircraft-carriers by improvising them in large numbers. The third declared as the ultimate objective the liberation of Europe by the landing of large Anglo-American armies wherever was thought best in the German-conquered territory, and fixed the year 1943 as the date for this supreme stroke

I gave these three papers to the President before Christmas I explained that while they were my own personal views, they did not supersede any formal communications between the Staffs.

I couched them in the form of memoranda for the British Chiefs of Staff Committee. Moreover, I told him they were not written expressly for his eye, but that I thought it important that he should know what was in my mind and what I wanted to have done and, so far as Great Britain was concerned, would try to bring to action. He read them immediately after receiving them, and the next day asked whether he might keep copies of them. To this I gladly assented

Although I had not had any formal reply to my letter of October 20 on these subjects* which Mr. Attlee had presented, and did not indeed expect one, I felt that the President was thinking very much along the same lines as I was about action in French North-West Africa In October I could only tell him what our British ideas and plans were while we remained alone. We were now Allies, and must act in common and on a greater scale I felt confidence that he and I would find a large measure of agreement and that the ground had been well prepared. I was therefore in a hopeful mood

PART I

THE ATLANTIC FRONT

16 Dec 41

Hitler's failure and losses in Russia are the prime fact in the war at this time We cannot tell how great the disaster to the German Army and Nazi régime will be. This régime has hitherto lived upon easily and cheaply won successes. Instead of what was imagined to be a swift and easy victory, it has now to face the shock of a winter of slaughter and expenditure of fuel and equipment on the largest scale

Neither Great Britain nor the United States have any part to play in this event, except to make sure that we send, without fail and punctually, the supplies we have promised. In this way alone shall we hold our influence over Stalin and be able to weave the mighty Russian effort into the general texture of the war

†2 In a lesser degree the impending victory of General Auchinleck in Cyrenaica is an injury to the German power. We may expect the total destruction of the enemy force in Libya to be apparent before the end of the year This not only inflicts a heavy blow upon the Germans and Italians, but it frees our forces in the Nile Valley from the major threat of invasion from the west under which they have long dwelt Naturally, General Auchinleck will press on as fast as

* See p 482

† This paragraph was to be falsified by General Auchinleck's later defeats At this time we had good grounds for hope

possible with the operation called "Acrobat", which should give him possession of Tripoli, and so bring his armoured vanguard to the French frontier of Tunis He may be able to supply a forecast before we separate at Washington.

3 The German losses and defeat in Russia and their extirpation from Libya may of course impel them to a supreme effort in the spring to break the ring that is closing on them by a south-eastward thrust either through the Caucasus or to Anatolia, or both However, we should not assume that necessarily they will have the war energy for this task The Russian armies, recuperated by the winter, will lie heavy upon them from Leningrad to the Crimea They may easily be forced to evacuate the Crimea There is no reason at this time to suppose that the Russian Navy will not command the Black Sea Nor should it be assumed that the present life-strength of Germany is such as to make an attack upon Turkey and a march through Anatolia a business to be undertaken in present circumstances by the Nazi régime The Turks have 50 divisions, their fighting quality and the physical obstacles of their country are well known Although Turkey has played for safety throughout, the Russian command of the Black Sea and the British successes in the Levant and along the North African shore, together with the proved weakness of the Italian Fleet, would justify every effort on our part to bring Turkey into line, and are certainly sufficient to encourage her to resist a German inroad *While it would be imprudent to regard the danger of a German south-west thrust against the Persian-Iraq-Syrian front as removed, it certainly now seems much less likely than heretofore*

4 *We ought therefore to try hard to win over French North Africa, and now is the moment to use every inducement and form of pressure at our disposal upon the Government of Vichy and the French authorities in North Africa* The German setback in Russia, the British successes in Libya, the moral and military collapse of Italy, above all the declarations of war exchanged between Germany and the United States, must strongly affect the mind of France and the French Empire Now is the time to offer to Vichy and to French North Africa a blessing or a cursing A blessing will consist in a promise by the United States and Great Britain to re-establish France as a Great Power with her territories undiminished. It should carry with it an offer of active aid by British and United States expeditionary forces, both from the Atlantic seaboard of Morocco and at convenient landing-points in Algeria and Tunis, as well as from General Auchinleck's forces advancing from the east. Ample supplies for the French and the loyal Moors should be made available Vichy should be asked to send their fleet from Toulon to Oran and Bizerta and to bring France into the war again as a principal.

This would mean that the Germans would take over the whole of France and rule it as occupied territory. It does not seem that the conditions in the occupied and the hitherto unoccupied zones are widely different. Whatever happens, European France will inevitably be subjected to a complete blockade. There is of course always the chance that the Germans, tied up in Russia, may not care to take over unoccupied France, even though French North Africa is at war with them.

5. If we can obtain even the connivance of Vichy to French North Africa coming over to our side we must be ready to send considerable forces as soon as possible. *Apart from anything which General Auchinleck can bring in from the east, should he be successful in Tripolitania, we hold ready in Britain (Operation "Gymnast") about 55,000 men, comprising two divisions and an armoured unit, together with the shipping. These forces could enter French North Africa by invitation on the twenty-third day after the order to embark them was given.* Leading elements and air forces from Malta could reach Bizerta at very short notice. *It is desired that the United States should at the same time promise to bring in, via Casablanca and other African Atlantic ports, not less than 150,000 men during the next six months.* It is essential that some American elements, say 25,000 men, should go at the earliest moment after French agreement, either Vichy or North African, had been obtained.

6. It is also asked that the United States will send the equivalent of three divisions and one armoured division into Northern Ireland. These divisions could, if necessary, complete their training in Northern Ireland. The presence of American forces there would become known to the enemy, and they could be led to magnify their actual numbers. The presence of United States troops in the British Isles would be a powerful additional deterrent against an attempt at invasion by Germany. It would enable us to nourish the campaign in French North Africa by two more divisions and one complete armoured division. If forces of this order could be added to the French Army already in North Africa, with proper air support, the Germans would have to make a very difficult and costly campaign across uncommanded waters to subdue North Africa. The North-West African theatre is one most favourable for Anglo-American operations, our approaches being direct and convenient across the Atlantic, while the enemy's passage of the Mediterranean would be severely obstructed, as is happening in their Libyan enterprise.

7. It may be mentioned here that we greatly desire American bomber squadrons to come into action from the British Isles against Germany. Our own bomber programme has fallen short of our hopes. It is formidable and is increasing, but its full development has been

delayed. It must be remembered that we place great hopes of affecting German production and German morale by ever more severe and more accurate bombing of their cities and harbours, and that this, combined with their Russian defeats, may produce important effects upon the will to fight of the German people, with consequential internal reactions upon the German Government. The arrival in the United Kingdom of, say, twenty American bomber squadrons would emphasise and accelerate this process, and would be the most direct and effective reply to the declaration of war by Germany upon the United States. Arrangements will be made in Great Britain to increase this process and develop the Anglo-American bombing of Germany without any top limit from now on till the end of the war.

8. We must however reckon with a refusal by Vichy to act as we desire, and on the contrary they may rouse French North Africa to active resistance. They may help German troops to enter North Africa, the Germans may force their way or be granted passage through Spain, the French fleet at Toulon may pass under German control, and France and the French Empire may be made by Vichy to collaborate actively with Germany against us, although it is not likely that this would go through effectively. The overwhelming majority of the French are ranged with Great Britain, and now still more with the United States. It is by no means certain that Admiral Darlan can deliver the Toulon fleet over intact to Germany. It is most improbable that French soldiers and sailors would fight effectively against the United States and Great Britain. Nevertheless, we must not exclude the possibility of a half-hearted association of the defeatist elements in France and North Africa with Germany. In this case our task in North Africa will become much harder.

A campaign must be fought in 1942 to gain possession of, or conquer, the whole of the North African shore, including the Atlantic ports of Morocco. Dakar and other French West African ports must be captured before the end of the year. Whereas however entry into French North Africa is urgent to prevent German penetration, a period of eight or nine months' preparation may well be afforded for the mastering of Dakar and the West African establishments. Plans should be set on foot forthwith. If sufficient time and preparation are allowed and the proper apparatus provided, these latter operations present no insuperable difficulty.

9. Our relations with General de Gaulle and the Free French movement will require to be reviewed. Hitherto the United States have entered into no undertakings similar to those comprised in my correspondence with him. Through no particular fault of his own his movement has created new antagonisms in French minds. Any action which the United States may now feel able to take in regard to him should

have the effect, *inter alia*, of re-defining our obligations to him and France so as to make these obligations more closely dependent upon the eventual effort by him and the French nation to rehabilitate themselves. If Vichy were to act as we desire about French North Africa, the United States and Great Britain must labour to bring about a reconciliation between the Free French (de Gaullists) and those other Frenchmen who will have taken up arms once more against Germany If, on the other hand, Vichy persists in collaboration with Germany and we have to fight our way into French North and West Africa, then the de Gaullists' movement must be aided and used to the full

10. We cannot tell what will happen in Spain *It seems probable that the Spaniards will not give the Germans a free passage through Spain to attack Gibraltar and invade North Africa* There may be infiltration, but the formal demand for the passage of an army would be resisted If so, the winter would be the worst time for the Germans to attempt to force their way through Spain Moreover, Hitler, with nearly all Europe to hold down by armed force in the face of defeat and semi-starvation, may well be chary of taking over unoccupied France and involving himself in bitter guerrilla warfare with the morose, fierce, hungry people of the Iberian peninsula Everything possible must be done by Britain and the United States to strengthen their will to resist The present policy of limited supplies should be pursued

The value of Gibraltar harbour and base to us is so great that no attempts should be made upon the Atlantic islands until either the peninsula is invaded or the Spaniards give passage to the Germans

11 *To sum up, the war in the West in 1942 comprises, as its main offensive effort, the occupation and control by Great Britain and the United States of the whole of the North and West African possessions of France, and the further control by Britain of the whole North African shore from Tunis to Egypt, thus giving, if the naval situation allows, free passage through the Mediterranean to the Levant and the Suez Canal These great objectives can only be achieved if British and American naval and air superiority in the Atlantic is maintained, if supply lines continue uninterrupted, and if the British Isles are effectively safeguarded against invasion*

* * * * *

My second paper on the Pacific war was only completed after we had landed

PART II

THE PACIFIC FRONT

20 Dec 41

The Japanese have naval superiority, which enables them to transport troops to almost any desired point, possess themselves of it,

and establish it for an air-naval fuelling base The Allies will not have for some time the power to fight a general fleet engagement Their power of convoying troops depends upon the size of the seas, which reduces the chance of interception. Even without superior sea-power we may descend by surprise here and there But we could not carry on a sustained operation across the seas We must expect therefore to be deprived one by one of our possessions and strong-points in the Pacific, and that the enemy will establish himself fairly easily in one after the other, mopping up the local garrisons

2 In this interim period our duty is one of stubborn resistance at each point attacked, and to slip supplies and reinforcements through as opportunity offers, taking all necessary risks If our forces resist stubbornly and we reinforce them as much as possible, the enemy will be forced to make ever larger overseas commitments far from home, his shipping resources will be strained, and his communications will provide vulnerable targets upon which all available naval and air forces, United States, British, and Dutch—especially submarines—should concentrate their effort It is of the utmost importance that the enemy should not acquire large gains cheaply; that he should be compelled to nourish all his conquests and kept extended, and kept burning up his resources

3. The resources of Japan are a wasting factor. The country has long been overstrained by its wasteful war in China They were at their maximum strength on the day of the Pearl Harbour attack If it is true, as Stalin asserts, that they have, in addition to their own Air Force, 1,500 German aeroplanes (and he would have opportunities of knowing how they got there), they have now no means of replacing wastage other than by their small home production of 300/500 per month Our policy should be to make them maintain the largest possible number of troops in their conquests overseas, and to keep them as busy as possible, so as to enforce well-filled lines of communication and a high rate of aircraft consumption If we idle and leave them at ease they will be able to extend their conquests cheaply and easily, work with a minimum of overseas forces, make the largest gains and the smallest commitments, and thus inflict upon us an enormous amount of damage It is therefore right and necessary to fight them at every point where we have a fair chance, so as to keep them burning and extended

4 But we must steadily aim at regaining superiority at sea at the earliest moment This can be gained in two ways first, by the strengthening of our capital ships The two new Japanese battleships built free from Treaty limitations must be considered a formidable factor, influencing the whole Pacific theatre It is understood that two

new American battleships will be fit for action by May Of course, all undertakings in war must be subject to the action of the enemy, accidents, and misfortune, but if our battleship strength should not be further reduced, nor any new unforeseen stress arise, we should hope to place the *Nelson* and the *Rodney* at the side of these two new American battleships, making four 16-inch-gun modern vessels of major strength Behind such a squadron the older reconstructed battleships of the United States should be available in numbers sufficient to enable a fleet action, under favourable circumstances, to be contemplated at any time after the month of May The recovery of our naval superiority in the Pacific, even if not brought to a trial of strength, would reassure the whole western seaboard of the American continent, and thus prevent a needless dissipation on a gigantic defensive effort of forces which have offensive parts to play *We must therefore set before ourselves, as a main strategic object, the forming of a definitely superior battle fleet in the Pacific, and we must aim at May as the date when this will be achieved*

5 Not only then, but in the interval, the warfare of aircraft-carriers should be developed to the greatest possible extent We are ourselves forming a squadron of three aircraft-carriers, suitably attended, to act in the waters between South Africa, India, and Australia The United States have already seven regular carriers, compared with Japan's ten, but those of the United States are larger *To this force of regular warship aircraft-carriers we must add a very large development of improvised carriers, both large and small In this way alone can we increase our sea-power rapidly. Even if the carriers can only fly a dozen machines, they may play their part in combination with other carriers We ought to develop a floating air establishment sufficient to enable us to acquire and maintain for considerable periods local air superiority over shore-based aircraft and sufficient to cover the landing of troops in order to attack the enemy's new conquests Unless or until this local air superiority is definitely acquired, even a somewhat superior fleet on our side would fight at a serious disadvantage We cannot get more battleships than those now in sight for the year 1942, but we can and must get more aircraft-carriers It takes five years to build a battleship, but it is possible to improvise a carrier in six months Here then is a field for invention and ingenuity similar to that which called forth the extraordinary fleets and flotillas which fought on the Mississippi in the Civil War* It must be accepted that the priority given to seaborne aircraft of a suitable type will involve a retardation in the full-scale bombing offensive against Germany which we have contemplated as a major method of waging war This however is a matter of time and of degree We cannot in 1942 hope to reach the levels of bomb discharge in Germany which we had prescribed for that year, but we shall surpass

them in 1943 Our joint programme may be late, but it will all come along And meanwhile the German cities and other targets will not disappear While every effort must be made to speed up the rate of bomb discharge upon Germany until the great scales prescribed for 1943 and 1944 are reached, nevertheless we may be forced by other needs to face a retardation in our schedules. The more important will it be therefore that in this interval a force, be it only symbolic, of United States bombing squadrons should operate from the British Isles against the German cities and seaports.

The paragraphs which follow, dealing with the acquisition of air bases, with Russian intervention, with convoy protection in the Pacific, and with the use to be made of Singapore, need not be reprinted here. Finally.

12 We need not fear that this war in the Pacific will, after the first shock is over, absorb an unduly large proportion of United States forces. The numbers of troops that we should wish them to use in Europe in 1942 will not be so large as to be prevented by their Pacific operations, limited as these must be *What will harm us is for a vast United States Army of ten millions to be created which for at least two years while it was training would absorb all the available supplies and stand idle defending the American continent* The best way of preventing the creation of such a situation and obtaining the proper use of the large forces and ample supplies of munitions which will presently be forthcoming is to enable the Americans to regain their naval power in the Pacific and not to discourage them from the precise secondary overseas operations which they may perhaps contemplate.

* * * * *

So many tales have been published of my rooted aversion from large-scale operations on the Continent that it is important that the truth should be emphasised I always considered that a decisive assault upon the German-occupied countries on the largest possible scale was the only way in which the war could be won, and that the summer of 1943 should be chosen as the target date It will be seen that the scale of the operation contemplated by me was already before the end of 1941 set at forty armoured divisions and a million other troops as essential for the opening phase When I notice the number of books which have been written on a false assumption of my attitude on this issue, I feel bound to direct the attention of the reader to the authentic and

responsible documents written at the time, of which other instances will be given as the account proceeds.

PART III

THE CAMPAIGN OF 1943

18 Dec 41

If the operations outlined in Parts I and II should prosper during 1942 the situation at the beginning of 1943 might be as follows.

(a) United States and Great Britain would have recovered effective naval superiority in the Pacific, and all Japanese overseas commitments would be endangered both from the assailing of their communications and from British and American expeditions sent to recover places lost.
(b) The British Isles would remain intact and more strongly prepared against invasion than ever before
(c) The whole West and North African shores from Dakar to the Suez Canal and the Levant to the Turkish frontier would be in Anglo-American hands

Turkey, though not necessarily at war, would be definitely incorporated in the American-British-Russian front The Russian position would be strongly established, and the supplies of British and American material as promised would have in part compensated for the loss of Russian munitions-making capacity It might be that a footing would already have been established in Sicily and Italy, with reactions inside Italy which might be highly favourable

2 But all this would fall short of bringing the war to an end The war cannot be ended by driving Japan back to her own bounds and defeating her overseas forces The war can only be ended through the defeat in Europe of the German armies, or through internal convulsions in Germany produced by the unfavourable course of the war, economic privations, and the Allied bombing offensive As the strength of the United States, Great Britain, and Russia develops and begins to be realised by the Germans an internal collapse is always possible, but we must not count upon this Our plans must proceed upon the assumption that the resistance of the German Army and Air Force will continue at its present level and that their U-boat warfare will be conducted by increasingly numerous flotillas

3 We have therefore to prepare for the liberation of the captive countries of Western and Southern Europe by the landing at suitable points, successively or simultaneously, of British and American armies strong enough to enable the conquered populations to revolt By themselves they will never be able to revolt, owing to the ruthless counter-measures that will be employed, but if adequate and suitably

equipped forces were landed in several of the following countries, namely, Norway, Denmark, Holland, Belgium, the French Channel coasts and the French Atlantic coasts, as well as in Italy and possibly the Balkans, the German garrisons would prove insufficient to cope both with the strength of the liberating forces and the fury of the revolting peoples It is impossible for the Germans, while we retain the sea-power necessary to choose the place or places of attack, to have sufficient troops in each of these countries for effective resistance In particular, they cannot move their armour about laterally from north to south or west to east, either they must divide it between the various conquered countries—in which case it will become hopelessly dispersed—or they must hold it back in a central position in Germany, in which case it will not arrive until large and important lodgments have been made by us from overseas

4 We must face here the usual clash between short-term and long-term projects War is a constant struggle and must be waged from day to day It is only with some difficulty and within limits that provision can be made for the future Experience shows that forecasts are usually falsified and preparations always in arrear Nevertheless, there must be a design and theme for bringing the war to a victorious end in a reasonable period All the more is this necessary when under modern conditions no large-scale offensive operation can be launched without the preparation of elaborate technical apparatus

5 We should therefore face now the problems not only of driving Japan back to her homelands and regaining undisputed mastery in the Pacific, but also of liberating conquered Europe by the landing during the summer of 1943 of United States and British armies on their shores Plans should be prepared for the landing in all of the countries mentioned above The actual choice of which three or four to pick should be deferred as long as possible, so as to profit by the turn of events and make sure of secrecy

6 In principle, the landings should be made by armoured and mechanised forces capable of disembarking not at ports but on beaches, either by landing-craft or from ocean-going ships specially adapted The potential front of attack is thus made so wide that the German forces holding down these different countries cannot be strong enough at all points An amphibious outfit must be prepared to enable these large-scale disembarkations to be made swiftly and surely The vanguards of the various British and American expeditions should be marshalled by the spring of 1943 in Iceland, the British Isles, and, if possible, in French Morocco and Egypt The main body would come direct across the ocean

7. It need not be assumed that great numbers of men are required.

If the incursion of the armoured formations is successful, the uprising of the local population, for whom weapons must be brought, will supply the corpus of the liberating offensive. Forty armoured divisions, at 15,000 men apiece, or their equivalent in tank brigades, of which Great Britain would try to produce nearly half, would amount to 600,000 men. Behind this armour another million men of all arms would suffice to wrest enormous territories from Hitler's domination. But these campaigns, once started, will require nourishing on a lavish scale. Our industries and training establishments should by the end of 1942 be running on a sufficient scale.

8. Apart from the command of the sea, without which nothing is possible, the essential for all these operations is superior air-power, and for landing purposes a large development of carrier-borne aircraft will be necessary. This however is needed anyhow for the war in 1942. In order to wear down the enemy and hamper his counter-preparations, the bombing offensive of Germany from England and of Italy from Malta, and if possible from Tripoli and Tunis, must reach the highest possible scale of intensity. Considering that the British first-line air strength is already slightly superior to that of Germany, that the Russian Air Force has already established a superiority on a large part of the Russian front and may be considered to be three-fifths the first-line strength of Germany, and that the United States resources and future development are additional, there is no reason why a decisive mastery of the air should not be established even before the summer of 1943, and meanwhile heavy and continuous punishment [be] inflicted upon Germany. Having regard to the fact that the bombing offensive is necessarily a matter of degree and that the targets cannot be moved away, it would be right to assign priority to the fighter and torpedo-carrying aircraft required for the numerous carriers and improvised carriers which are available or must be brought into existence.

9. If we set these tasks before us now, being careful that they do not trench too much upon current necessities, we might hope, even if no German collapse occurs beforehand, to win the war at the end of 1943 or 1944. There might be advantage in declaring now our intention of sending armies of liberation into Europe in 1943. This would give hope to the subjugated peoples and prevent any truck between them and the German invaders. The setting and keeping in movement along our courses of the minds of so many scores of millions of men is in itself a potent atmospheric influence.

I read this paper during our voyage to the Chiefs of Staff on the day it was written. The following is from the note of our conference.

The Prime Minister said he wished the Chiefs of Staff to examine the whole of this note, which he intended to use as the basis of his conversations with the President He thought it important to put before the people of both the British Empire and the United States the mass invasion of the continent of Europe as the goal for 1943 In general the three phases of the war could be described as

(i) Closing the ring
(ii) Liberating the populations
(iii) Final assault on the German citadel

I found my professional colleagues in full agreement with these views, and generally with those set forth in the other papers, which indeed summed up the results of our joint study and discussion of the war problem as it had now shaped itself

* * * * *

Reviewing these three documents, with which, in the after-light, and taken as a whole, I am content, it will be seen that they bear a very close correspondence to what was actually done by Britain and the United States during the campaigns of 1942 and 1943. I eventually obtained the President's agreement to the expedition to North-West Africa (Operation "Torch"), which constituted our first great joint amphibious offensive It was my earnest desire that the crossing of the Channel and the liberation of France (the operation then called "Round-up", which was subsequently changed to "Overlord") should take place in the summer of 1943

While however it is vital to plan the future, and sometimes possible to forecast it in certain respects, no one can help the time-table of such mighty events being deranged by the actions and counter-strokes of the enemy All the objectives in these memoranda were achieved by the British and United States forces in the order here set forth My hopes that General Auchinleck would clear Libya in February 1942 were disappointed He underwent a series of grievous reverses which will presently be described. Hitler, perhaps encouraged by this success, determined upon a large-scale effort to fight for Tunis, and presently moved above two hundred thousand fresh troops thither through Italy and across the Mediterranean. The British and American Armies therefore became involved in a larger and longer campaign in North Africa than I had contemplated. A delay of four months

was for this reason enforced upon the time-table. The Anglo-American Allies did not obtain control of "the whole of the North and West African possessions of France, and the further control by Britain of the whole North African shore from Tunis to Egypt", by the end of 1942 (Part I, para. 11). We obtained these results only in May 1943. The supreme plan of crossing the Channel to liberate France, for which I had earnestly hoped and worked, could not therefore be undertaken that summer, and was perforce postponed for one whole year, till the summer of 1944.

Subsequent reflection and the full knowledge we now possess have convinced me that we were fortunate in our disappointment. The year's delay in the expedition saved us from what would at that date have been at the best an enterprise of extreme hazard, with the probability of a world-shaking disaster. If Hitler had been wise he would have cut his losses in North Africa and would have met us in France with double the strength he had in 1944, before the newly raised American armies and staffs had reached their full professional maturity and excellence, and long before the enormous armadas of landing-craft and the floating harbours (Mulberries) had been specially constructed. I am sure now that even if Operation "Torch" had ended as I hoped in 1942, or even if it had never been tried, the attempt to cross the Channel in 1943 would have led to a bloody defeat of the first magnitude, with measureless reactions upon the result of the war. I became increasingly conscious of this during the whole of 1943, and therefore accepted as inevitable the postponement of "Overlord", while fully understanding the vexation and anger of our Soviet Ally.

Once it became certain that we could not cross the Channel till 1944 the need of forcing the campaign in the Mediterranean was clear. Only by landing in Sicily and Italy could we engage the enemy on a large scale and tear down the weaker at least of the Axis partners. It was for the express purpose of securing this decision that I obtained the President's consent for General Marshall to come with me from Washington to Algiers in May 1943. All this will be recounted in detail as the actual events occur.

CHAPTER XXXV

WASHINGTON AND OTTAWA

Arrival at the White House – A Hearty Welcome – A Whirl of Business – Anglo-American Intervention in French North Africa – My Report to the War Cabinet of Our First Discussion – Design of the Grand Alliance – Mr. Hull and the Free French – Mr. Knox and Wake Island – Australian Anxieties – My Report to Mr Curtin of December 25 – Christmas at the White House – I Address Congress – An Impressive Experience on Boxing Day – The South-West Pacific Command – General Wavell Appointed – An Unpromising Task – I Prolong my Stay – Journey to Ottawa – Address to the Canadian Parliament, December 30 – Sir Harry Lauder – A Forecast of the War Future – New Year's Eve in the Train.

IT had been intended that we should steam up the Potomac and motor to the White House, but we were all impatient after nearly ten days at sea to end our journey. We therefore arranged to fly from Hampton Roads, and landed after dark on December 22 at the Washington airport There was the President waiting in his car. I clasped his strong hand with comfort and pleasure. We soon reached the White House, which was to be in every sense our home for the next three weeks. Here we were welcomed by Mrs Roosevelt, who thought of everything that could make our stay agreeable

I must confess that my mind was so occupied with the whirl of events and the personal tasks I had to perform that my memory till refreshed had preserved but a vague impression of these days The outstanding feature was of course my contacts with the President. We saw each other for several hours every day, and lunched always together, with Harry Hopkins as a third We talked of nothing but business, and reached a great measure of agreement on many points, both large and small. Dinner was a

more social occasion, but equally intimate and friendly. The President punctiliously made the preliminary cocktails himself, and I wheeled him in his chair from the drawing-room to the lift as a mark of respect, and thinking also of Sir Walter Raleigh spreading his cloak before Queen Elizabeth. I formed a very strong affection, which grew with our years of comradeship, for this formidable politician who had imposed his will for nearly ten years upon the American scene, and whose heart seemed to respond to many of the impulses that stirred my own. As we both, by need or habit, were forced to do much of our work in bed, he visited me in my room whenever he felt inclined, and encouraged me to do the same to him. Hopkins was just across the passage from my bedroom, and next door to him my travelling map room was soon installed. The President was much interested in this institution, which Captain Pim had perfected. He liked to come and study attentively the large maps of all the theatres of war which soon covered the walls, and on which the movement of fleets and armies was so accurately and swiftly recorded. It was not long before he established a map room of his own of the highest efficiency.

The days passed, counted in hours. Quite soon I realised that immediately after Christmas I must address the Congress of the United States, and a few days later the Canadian Parliament in Ottawa. These great occasions imposed heavy demands on my life and strength, and were additional to all the daily consultations and mass of current business. In fact, I do not know how I got through it all.

* * * * *

A record has been preserved of our first discussion on the night of the 22nd. I immediately broached with the President and those he had invited to join us the scheme of Anglo-American intervention in French North Africa. The President had not of course at this time read the papers I had written on board ship, which I could not give him till the next day. But he had evidently thought much about my letter of October 20. Thus we all found ourselves pretty well on the same spot. My report home shows that we cut deeply into business on the night of our arrival.

Prime Minister to the War Cabinet and C.O.S. Committee 23 Dec 41

The President and I discussed the North African situation last

Beaverbrook, and Lord Halifax also took part in the discussion

2. There was general agreement that if Hitler was held in Russia he must try something else, and that the most probable line was Spain and Portugal *en route* to North Africa Our success in Libya and the prospect of joining hands with French North African territory was another reason to make Hitler want, if he could, to get hold of Morocco as quickly as possible. At the same time, reports did not seem to suggest threat was imminent, perhaps because Hitler had enough on hand at the moment.

3. There was general agreement that it was vital to forestall the Germans in North-West Africa and the Atlantic islands. In addition to all the other reasons, the two French battleships, *Jean Bart* and *Richelieu*, were a real prize for whoever got them. Accordingly, the discussion was not *whether*, but *how*

4 Various suggestions were made:

(*a*) The United States Government might speak in very serious and resolute terms to Vichy, saying that this was final chance for them to reconsider their positions and come out on the side that was pledged to restoration of France As a symbol of this Pétain might be invited to send Weygand to represent him at an Allied conference in Washington

(*b*) An approach might be made to Weygand in the light of a North African situation fundamentally changed by British advance and by United States entering into war and their willingness to send a force to North Africa.

5 It was suggested, on the other hand, that the effect of such procedure might be to extract smooth promises from Pétain and Weygand, the Germans meanwhile being advised of our intentions, and that, accordingly, if these approaches were to be made, it would be desirable to have all plans made for going into North Africa, *with or without invitation.** I emphasised immense psychological effect likely to be produced both in France and among French troops in North Africa by association of United States with the undertaking Mr Hull suggested that it might well be that a leader would emerge in North Africa as events developed.

The President said that he was anxious that American land forces should give their support as quickly as possible wherever they could be most helpful, and favoured the idea of a plan to move into North Africa being prepared for either event, *i.e*, with or without invitation

6. It was agreed to remit the study of the project to Staffs on

* Author's italics

assumption that it was vital to forestall the Germans in that area and that the Libyan campaign had, as it was expected to do, achieved complete success. It was recognised that the question of shipping was plainly a most important factor.

7. I gave an account of the progress of fighting in Libya, by which the President and other Americans were clearly much impressed and cheered.

8. In the course of conversation the President mentioned that he would propose at forthcoming conference that United States should relieve our troops in Northern Ireland, and spoke of sending three or four divisions there. I warmly welcomed this, and said I hoped that one of the divisions would be an armoured division. It was not thought that this need conflict with preparations for a United States force for North Africa.

* * * * *

The first major design which was presented to me a day or two later by the President was the drawing up of a solemn Declaration to be signed by all the nations at war with Germany and Italy, or with Japan. The President and I, repeating our methods in framing the Atlantic Charter, prepared drafts of the Declaration and blended them together. In principle, in sentiment, and indeed in language, we were in full accord. At home the War Cabinet was at once surprised and thrilled by the scale on which the Grand Alliance was planned. There was much rapid correspondence, and some difficult points arose about what Governments and authorities should sign the Declaration, and also on the order of precedence. We gladly accorded the first place to the United States. The War Cabinet very rightly did not wish to include India as a separate sovereign Power. Mr. Hull was opposed to the insertion of the word "authorities" by which I meant to cover the Free French, at that time in disgrace with the State Department.

This was the first time I had met Mr. Cordell Hull, with whom I had several conversations. He did not seem to me to have full access at the moment to the President. I was struck by the fact that, amid gigantic events, one small incident seemed to dominate his mind. Before I left England General de Gaulle had informed us that he wished to liberate the islands of St. Pierre and Miquelon, which were held by the Vichy Governor, Admiral Robert. The Free French naval forces were quite capable of doing this, and the Foreign Office saw no objection. However, as it appeared later on, the American State Department wished the occupation

to be made by a [illegible]
Gaulle to refrain, and he certainly said he would do so. Nevertheless he ordered his Admiral Muselier to take the islands. The Free French sailors were received with enthusiasm by the people, and a plebiscite showed a 90 per cent. majority against Vichy.

This made no impression on Mr. Hull. He considered that the policy of the State Department had been affronted. He issued a statement on Christmas Day saying, "Our preliminary report shows that the action taken by the *so-called** Free French ships at St. Pierre and Miquelon was an arbitrary action contrary to the agreement of all parties concerned, and certainly without the prior knowledge or consent in any sense of the United States Government." He wanted to turn the Free French out of the islands they had liberated from Vichy. But American opinion ran hard the other way. They were delighted in this grave hour that the islands had been liberated, and that an obnoxious radio station which was spreading Vichy lies and poison throughout the world, and might well give secret signals to U-boats now hunting United States ships, should be squelched The phrase "so-called Free French" was almost universally resented.

Mr Hull, whose sterling qualities I recognised, and for whom I entertained the highest respect, in my opinion pushed what was little more than a departmental point far beyond its proportions The President in our daily talks seemed to me to shrug his shoulders over the whole affair After all, quite a lot of other annoyances were on us or coming upon us. Strongly urged by our Foreign Office, I supported General de Gaulle and "so-called" Free France. Chapters have been written about this incident in various American and French books, but it did not at all affect our main discussions.

* * * * *

One afternoon Mr Knox, Secretary for the Navy, came into my room in great distress. He said, "You have had plenty of disasters I would like you to tell me how you feel about the following. We ordered our fleet to fight a battle with the Japanese to relieve Wake Island, and now within a few hours of steaming the Admiral has decided to turn back What would you do with your Admiral in a case like this?" I replied, "It is dangerous to meddle with Admirals when they say they can't do

* Author's italics

things. They have always got the weather or fuel or something to argue about." Wake Island fell that day, having been desperately defended by a handful of United States Marines, who inflicted far heavier losses than their own numbers upon the Japanese before they were killed or captured.

* * * * *

Every allowance must be made for the state of mind into which the Australian Government were thrown by the hideous efficiency of the Japanese war machine. The command of the Pacific was lost, their three best divisions were in Egypt and a fourth at Singapore. They realised that Singapore was in deadly peril, and they feared an actual invasion of Australia itself. All their great cities, containing more than half the whole population of the continent, were on the sea-coast. A mass exodus into the interior and the organising of a guerrilla without arsenals or supplies stared them in the face. Help from the Mother Country was far away, and the power of the United States could only slowly be established in Australasian waters. I did not myself believe that the Japanese would invade Australia across three thousand miles of ocean, when they had so much alluring prey in their clutch in the Dutch East Indies and Malaya. The Australian Cabinet saw the scene in a different light, and deep forebodings pressed upon them all. Even in these straits they maintained their party divisions rigidly. The Labour Government majority was only two. They were opposed to compulsory service even for Home Defence. Although the Opposition was admitted to the War Council no National Government was formed.

I cabled to Mr. Curtin as follows:

Prime Minister to Prime Minister of Australia 25 Dec 41

On Japan coming into the war we diverted at once the 18th British Division, which was rounding the Cape in American transports, with President's permission, to Bombay and Ceylon, and Mr. Roosevelt has now agreed that the leading [British] brigade in the United States transport *Mount Vernon* should proceed direct to Singapore. We cancelled the move of the 17th Indian Division from India to Persia, and this division is now going to Malaya. A week ago I wirelessed from the ship to London to suggest that you recall one Australian division from Palestine either into India to replace other troops sent forward or to go direct, if it can be arranged, to Singapore. I have

up the forces needed for the defence of Singapore and Johore approaches in attempting to defend the northern part of the Malay peninsula They will fall back slowly, fighting delaying action and destroying communications

2 The heavy naval losses which the United States and we have both sustained give the Japanese the power of landing large reinforcements, but we do not share the view expressed in your telegram to Mr Casey of December 24 that there is the danger of early reduction of Singapore fortress, which we are determined to defend with the utmost tenacity

3. You have been told of the air support which is already on the way. It would not be wise to loose our grip on Rommel and Libya by taking away forces from General Auchinleck against his judgment just when victory is within our grasp We have instructed Commanders-in-Chief Middle East to concert a plan for sending fighters and tanks to Singapore immediately the situation in Libya permits

4 I and the Chiefs of Staff are in close consultation with the President and his advisers, and we have made encouraging progress Not only are they impressed with the importance of maintaining Singapore, but they are anxious to move a continuous flow of troops and aircraft through Australia for the relief of the Philippine Islands, if that be possible Should the Philippine Islands fall the President is agreeable to troops and aircraft being diverted to Singapore He is also quite willing to send substantial United States forces to Australia, where Americans are anxious to establish important bases for the war against Japan General Wavell has been placed in command of Burma as well as India, and instructed to feed reinforcements arriving in India to Malayan and Burmese fronts He, like everyone else, recognises the paramount importance of Singapore General Pownall has now arrived He is a highly competent Army officer

5. You may count on my doing everything possible to strengthen the whole front from Rangoon to Port Darwin I am finding co-operation from our American allies. I shall wire more definitely in a day or two

* * * * *

Simple festivities marked our Christmas. The traditional Christmas tree was set up in the White House garden, and the President and I made brief speeches from the balcony to enormous crowds gathered in the gloom. I venture to reprint here the words that I used, as they seemed to rise so naturally in my mind on this occasion and in these surroundings.

I spend this anniversary and festival far from my country, far from my family, yet I cannot truthfully say that I feel far from home. Whether it be the ties of blood on my mother's side, or the friendships I have developed here over many years of active life, or the commanding sentiment of comradeship in the common cause of great peoples who speak the same language, who kneel at the same altars, and, to a very large extent, pursue the same ideals, I cannot feel myself a stranger here in the centre and at the summit of the United States. I feel a sense of unity and fraternal association which, added to the kindliness of your welcome, convinces me that I have a right to sit at your fireside and share your Christmas joys.

This is a strange Christmas Eve. Almost the whole world is locked in deadly struggle, and, with the most terrible weapons which science can devise, the nations advance upon each other. Ill would it be for us this Christmastide if we were not sure that no greed for the land or wealth of any other people, no vulgar ambition, no morbid lust for material gain at the expense of others, had led us to the field. Here, in the midst of war, raging and roaring over all the lands and seas, creeping nearer to our hearths and homes, here, amid all the tumult, we have to-night the peace of the spirit in each cottage home and in every generous heart. Therefore we may cast aside for this night at least the cares and dangers which beset us, and make for the children an evening of happiness in a world of storm. Here, then, for one night only, each home throughout the English-speaking world should be a brightly lighted island of happiness and peace.

Let the children have their night of fun and laughter. Let the gifts of Father Christmas delight their play. Let us grown-ups share to the full in their unstinted pleasures before we turn again to the stern task and the formidable years that lie before us, resolved that, by our sacrifice and daring, these same children shall not be robbed of their inheritance or denied their right to live in a free and decent world.

And so, in God's mercy, a happy Christmas to you all.

The President and I went to church together on Christmas Day, and I found peace in the simple service and enjoyed singing the well-known hymns, and one, "O little town of Bethlehem", I had never heard before. Certainly there was much to fortify the faith of all who believe in the moral governance of the universe.

* * * * *

It was with heart-stirrings that I fulfilled the invitation to address the Congress of the United States. The occasion was important for what I was sure was the all-conquering alliance of

the English-speaking peoples. I had [illegible]
Parliament before. Yet to me, who could trace unbroken male descent on my mother's side through five generations from a lieutenant who served in George Washington's army, it was possible to feel a blood-right to speak to the representatives of the great Republic in our common cause. It certainly was odd that it should all work out this way, and once again I had the feeling, for mentioning which I may be pardoned, of being used, however unworthy, in some appointed plan.

I spent a good part of Christmas Day preparing my speech. The President wished me good luck when on December 26 I set out in the charge of the leaders of the Senate and House of Representatives from the White House to the Capitol. There seemed to be great crowds along the broad approaches, but the security precautions, which in the United States go far beyond British custom, kept them a long way off, and two or three motor-cars filled with armed plain-clothes policemen clustered around as escort. On getting out I wished to walk up to the cheering masses in a strong mood of brotherhood, but this was not allowed. Inside the scene was impressive and formidable, and the great semicircular hall, visible to me through a grille of microphones, was thronged.

I must confess that I felt quite at home, and more sure of myself than I had sometimes been in the House of Commons. What I said was received with the utmost kindness and attention. I got my laughter and applause just where I expected them. The loudest response was when, speaking of the Japanese outrage, I asked, "What sort of people do they think we are?" The sense of the might and will-power of the American nation streamed up to me from the august assembly. Who could doubt that all would be well?

I ended thus:

Members of the Senate and members of the House of Representatives, I turn for one moment more from the turmoil and convulsions of the present to the broader basis of the future. Here we are together facing a group of mighty foes who seek our ruin; here we are together defending all that to free men is dear. Twice in a single generation the catastrophe of world war has fallen upon us; twice in our lifetime has the long arm of Fate reached across the ocean to bring the United States into the forefront of the battle. If we had kept together after

the last war, if we had taken common measures for our safety, this renewal of the curse need never have fallen upon us

Do we not owe it to ourselves, to our children, to mankind tormented, to make sure that these catastrophes shall not engulf us for the third time? It has been proved that pestilences may break out in the Old World which carry their destructive ravages into the New World, from which, once they are afoot, the New World cannot by any means escape Duty and prudence alike command, first, that the germ-centres of hatred and revenge should be constantly and vigilantly surveyed and treated in good time, and, secondly, that an adequate organisation should be set up to make sure that the pestilence can be controlled at its earliest beginnings before it spreads and rages throughout the entire earth.

Five or six years ago it would have been easy, without shedding a drop of blood, for the United States and Great Britain to have insisted on fulfilment of the disarmament clauses of the treaties which Germany signed after the Great War, that also would have been the opportunity for assuring to Germany those raw materials which we declared in the Atlantic Charter should not be denied to any nation, victor or vanquished That chance has passed. It is gone. Prodigious hammer-strokes have been needed to bring us together again, or, if you will allow me to use other language, I will say that he must indeed have a blind soul who cannot see that some great purpose and design is being worked out here below, of which we have the honour to be the faithful servants It is not given to us to peer into the mysteries of the future Still, I avow my hope and faith, sure and inviolate, that in the days to come the British and American peoples will for their own safety and for the good of all walk together side by side in majesty, in justice, and in peace.

Afterwards the leaders came along with me close up to the crowds which surrounded the building, so that I could give them an intimate greeting, and then the Secret Service men and their cars closed round and took me back to the White House, where the President, who had listened in, told me I had done quite well.

* * * * *

At Washington intense activity reigned. During these days of continuous contact and discussion I gathered that the President with his staff and his advisers was preparing an important proposal for me. In the military as in the commercial or production spheres the American mind runs naturally to broad, sweeping, logical conclusions on the largest scale. It is on these that they

foundation has been planned on true and comprehensive lines all other stages will follow naturally and almost inevitably The British mind does not work quite in this way. We do not think that logic and clear-cut principles are necessarily the sole keys to what ought to be done in swiftly changing and indefinable situations. In war particularly we assign a larger importance to opportunism and improvisation, seeking rather to live and conquer in accordance with the unfolding event than to aspire to dominate it often by fundamental decisions. There is room for much argument about both views The difference is one of emphasis, but it is deep-seated.

Harry Hopkins said to me, "Don't be in a hurry to turn down the proposal the President is going to make to you before you know who is the man we have in mind." From this I saw that the question of forming a supreme Allied command in South-East Asia and drawing boundary lines was approaching

The next day I was told that the Americans proposed that Wavell should be chosen I was complimented by the choice of a British commander, but it seemed to me that the theatre in which he would act would soon be overrun and the forces which could be placed at his disposal would be destroyed by the Japanese onslaught I found that the British Chiefs of Staff, when apprised, had the same reaction

I am recorded as saying to them at a meeting on December 26 that I was not at all convinced that this arrangement was either workable or desirable "The situation out there was that certain particular strategic points had to be held, and the commander in each locality was quite clear as to what he should do The difficult question was the application of resources arriving in the area. This was a matter which could only be settled by the Governments concerned " Nevertheless it was evident that we must meet the American view

* * * * *

Mr. Attlee sent me his own and the Cabinet's congratulations on my speech to Congress, and in reply I opened to him the question of the South-West Pacific Command

Prime Minister to Lord Privy Seal 28 Dec 41

Am so glad you were pleased Welcome was extraordinary

Work here is most strenuous. To-day for five hours President and I received representatives of all other Allied or friendly Powers and British Dominions, and made heartening statements to them. My talks with President increasingly intimate and friendly. Beaverbrook also had great success with him on the supply side.

2. Question of unity of command in South-West Pacific has assumed urgent form. Last night President urged upon me appointment of a single officer to command Army, Navy, and Air Force of Britain, America, and Dutch, and this morning General Marshall visited me at my request and pleaded case with great conviction. American Navy authorities take opposite view, but it is certain that a new far-reaching arrangement will have to be made. The man President has in mind is General Wavell. Marshall has evidently gone far into detailed scheme and has draft letter of instructions. So far I have been critical of plan, and while admiring broadmindedness of offer have expressed anxiety about effects on American opinion. Chiefs of Staff have been studying matter all day, and to-night I will send you my considered advice after receiving their views.

3. I leave to-morrow afternoon for Ottawa, staying two clear days and addressing Canadian Parliament on Tuesday, then back here for another three or four days, as there is so much to settle. We are making great exertions to find shipping necessary for the various troop movements required. My kindest regards to all colleagues. It is a great comfort to act on such a sure foundation.

Before I could receive any considered advice from home it was necessary to meet the urgent wishes of the President and General Marshall. Events were moving too fast for lengthy discussions across the Atlantic. I passed the 28th in conference with the President and in drafting with my staff the series of telegrams which follow, and tell the tale in carefully weighed words.

Prime Minister to Lord Privy Seal 29 Dec 41

I have agreed with President, subject to Cabinet approval, that we should accept his proposals, most strongly endorsed by General Marshall.

(*a*) That unity of command shall be established in South-Western Pacific. Boundaries are not yet finally settled, but presume they would include Malay peninsula, including Burmese front, to Philippine Islands, and southwards to necessary supply bases, principally Port Darwin, and supply line in Northern Australia.

(*b*) That General Wavell should be appointed Commander-in-Chief, or if preferred Supreme Commander, of all United

States, British, British Empire,
and air who may be assigned by Governments concerned to that theatre

(*c*) General Wavell, whose headquarters should in first instance be established at Surabaya, would have American officer as Deputy Commander-in-Chief. It seems probable General Brett would be chosen

(*d*) That American, British, Australian, and Dutch naval forces in the theatre should be placed under the command of American admiral, in accordance with general principle set forth in paragraphs (*a*) and (*b*)

(*e*) It is intended General Wavell should have a Staff in the South Pacific portion, as Foch's High Control Staff was to the great Staffs of British and French Armies in France. He would receive his orders from an appropriate Joint Body, who will be responsible to me as Minister of Defence and to President of the United States, who is also Commander-in-Chief of all United States forces.

(*f*) Principal commanders comprised in General Wavell's sphere will be Commander-in-Chief Burma, Commander-in-Chief Singapore and Malaya, Commander-in-Chief Netherlands East Indies, Commander-in-Chief Philippines, and Commander-in-Chief of Southern Communications via South Pacific and North Australia

(*g*) India, for which an acting Commander-in-Chief will have to be appointed, and Australia, who will have their own Commander-in-Chief, will be outside General Wavell's sphere, except as above mentioned, and are two great bases through which men and material from Great Britain and Middle East on the one hand and the United States on the other can be moved into the fighting zone

(*h*) United States Navy will remain responsible for the whole Pacific Ocean east of Philippine Islands and Australasia, including United States approaches to Australasia

(*i*) A letter of instruction is being drafted for Supreme Commander safeguarding the necessary residuary interests of various Governments involved and prescribing in major outline his tasks This draft will reach you shortly

2. I have not attempted to argue case for and against our accepting this broadminded and selfless American proposal, of merits of which as a war-winner I have become convinced Action is urgent, and may perhaps have to be taken even before my returning from Canada on January 1. Australia, New Zealand, and Dutch will of course have

to be consulted, but this should not be done until I have been instructed by hearing views of War Cabinet. Meanwhile staff here will be working upon details on assumption that all consents will be obtained.

Prime Minister to Lord Privy Seal 29 Dec 41

Things have moved very quickly. The President has obtained the agreement of the American War and Navy Departments to the arrangement proposed in my last telegram, and the Chiefs of Staff Committee have endorsed it. I therefore anxiously await your approval. The President will address the Dutch the moment I tell him you agree. Foreign Office should follow suit.

You should also dispatch the following telegram to General Wavell. Staffs here are working on details both by themselves and with Americans. Position of Duff Cooper's mission requires to be reviewed, and in any case must not complicate these larger solutions. Please give me your ideas.

I must rely on you to keep the King informed at every angle and obtain his approval.

The offer which I had to make to General Wavell was certainly one which only the highest sense of duty could induce him to accept. It was almost certain that he would have to bear a load of defeat in a scene of confusion.

Prime Minister to Lord Privy Seal 29 Dec 41

Pray send following to General Wavell when Cabinet have approved general policy.

The President and his military and naval advisers have impressed upon me the urgent need for unified command in South-West Pacific, and it is unanimously desired, pressed particularly by President and General Marshall, that you should become Supreme Commander of Allied forces by land, air, and sea assigned to that theatre. The letter of instructions referred to is being drafted, the terms of which will be issued shortly. While I hope these terms will set your mind at ease on the various unprecedented points involved, I should of course be ready to receive your observations upon them.

2. I feel sure you will value the confidence which is shown in you, and I request you to take up your task forthwith. Matters are so urgent that details which are being studied by the Chiefs of Staff Committee must not delay the public announcement, which must be made, at latest, Thursday, January 1.

3. You are the only man who has the experience of handling so many different theatres at once, and you know we shall back you up and see you have fair play. Everyone knows how dark and difficult

been made by his desire.

4. Pray let me know your ideas as to Staff, which will be essentially a front Staff rather than an actual handling body If you like to take Pownall as your Chief of Staff Percival might discharge the duties of Singapore and Malaya Commander

* * * * *

On December 27 I had sent the following telegram to Mr Attlee:

Prime Minister to Lord Privy Seal 27 Dec 41

Thank you so much for agreeing to lengthen my stay

On Tuesday, December 30, I am addressing the Canadian House of Commons Utterly impossible to lay another egg [*i e*, deliver a speech in the House of Commons] so early as the New Year.

I travelled by the night train of December 28–29 to Ottawa, to stay with Lord Athlone, the Governor-General. On the 29th I attended a meeting of the Canadian War Cabinet. Thereafter Mr. Mackenzie King, the Prime Minister, introduced me to the leaders of the Conservative Opposition, and left me with them These gentlemen were unsurpassed in loyalty and resolution, but at the same time they were rueful not to have the honour of waging the war themselves, and at having to listen to so many of the sentiments which they had championed all their lives expressed by their Liberal opponents.

On the 30th I spoke to the Canadian Parliament. The preparation of my two transatlantic speeches, transmitted all over the world, amid all the flow of executive work, which never stopped, was an extremely hard exertion. Delivery is no serious burden to a hard-bitten politician, but choosing what to say and what not to say in such an electric atmosphere is anxious and harassing I did my best The most successful point in the Canadian speech was about the Vichy Government, with whom Canada was still in relations.

It was their duty [in 1940] and it was also their interest to go to North Africa, where they would have been at the head of the French Empire In Africa, with our aid, they would have had overwhelming sea-power They would have had the recognition of the United States, and the use of all the gold they had lodged beyond the seas If they had done this Italy might have been driven out of the war

before the end of 1940, and France would have held her place as a nation in the councils of the Allies and at the conference table of the victors. But their generals misled them When I warned them that Britain would fight on alone whatever they did, their generals told their Prime Minister and his divided Cabinet, "In three weeks England will have her neck wrung like a chicken." Some chicken! Some neck!

This went very well. I quoted, to introduce a retrospect, Sir Harry Lauder's song of the last war which began·

> If we all look back on the history of the past
> We can just tell where we are.

The words "that grand old comedian" were on my notes On the way down I thought of the word "minstrel". What an improvement! I rejoice to know that he was listening and was delighted at the reference. I am so glad I found the right word for one who, by his inspiring songs and valiant life, rendered measureless service to the Scottish race and to the British Empire.

At the end of the speech I ventured to attempt a forecast of the war future

We may observe three main periods or phases of the struggle that lies before us First there is the period of consolidation, of combination, and of final preparation In this period, which will certainly be marked by much heavy fighting, we shall still be gathering our strength, resisting the assaults of the enemy, and acquiring the necessary overwhelming air superiority and shipping tonnage to give our armies the power to traverse, in whatever numbers may be necessary, the seas and oceans which, except in the case of Russia, separate us from our foes It is only when the vast shipbuilding programme on which the United States has already made so much progress, and which you are powerfully aiding, comes into full flood that we shall be able to bring the whole force of our manhood and of our modern scientific equipment to bear upon the enemy. How long this period will last depends upon the vehemence of the effort put into production in all our war industries and shipyards

The second phase which will then open may be called the phase of liberation During this phase we must look to the recovery of the territories which have been lost or which may yet be lost, and also we must look to the revolt of the conquered peoples from the moment that the rescuing and liberating armies and air forces appear in strength within their bounds For this purpose it is imperative that no nation or region overrun, that no Government or State which has been con-

quered, should [illegible]
the day of deliverance The invaders, be they German or Japanese, must everywhere be regarded as infected persons to be shunned and isolated as far as possible Where active resistance is impossible passive resistance must be maintained The invaders and tyrants must be made to feel that their fleeting triumphs will have a terrible reckoning, and that they are hunted men and that their cause is doomed Particular punishment will be reserved for the Quislings and traitors who make themselves the tools of the enemy. They will be handed over to the judgment of their fellow-countrymen

There is a third phase which must also be contemplated, namely, the assault upon the citadels and the home-lands of the guilty Powers both in Europe and in Asia

Thus I endeavour in a few words to cast some forward light upon the dark, inscrutable mysteries of the future. But in thus forecasting the course along which we should seek to advance we must never forget that the power of the enemy, and the action of the enemy, may at every stage affect our fortunes. Moreover, you will notice that I have not attempted to assign any time-limits to the various phases These time-limits depend upon our exertions, upon our achievements, and on the hazardous and uncertain course of the war

I was lucky in the timing of these speeches in Washington and Ottawa. They came at the moment when we could all rejoice at the creation of the Grand Alliance, with its overwhelming potential force, and before the cataract of ruin fell upon us from the long, marvellously prepared assault of Japan. Even while I spoke in confident tones I could feel in anticipation the lashes which were soon to score our naked flesh. Fearful forfeits had to be paid not only by Britain and Holland but by the United States, in the Pacific and Indian Oceans, and in all the Asiatic lands and islands they lap with their waves An indefinite period of military disaster lay certainly before us. Many dark and weary months of defeat and loss must be endured before the light would come again. When I returned in the train to Washington on New Year's Eve I was asked to go into the carriage filled with many leading Pressmen of the United States. It was with no illusions that I wished them all a glorious New Year. "Here's to 1942. Here's to a year of toil—a year of struggle and peril, and a long step forward towards victory. May we all come through safe and with honour!"

CHAPTER XXXVI

ANGLO-AMERICAN ACCORDS

Signing of the United Nations Pact – Litvinov's Fears – American Troops for Northern Ireland – Report of January 3 to the War Cabinet – The Combined Chiefs of Staff Committee – Its Smooth Efficiency – The Russians Not Represented On It – Special Position of Sir John Dill – Lord Beaverbrook's "Ferment" – The American "History of the War Production Board" – Vast Expansion of American Supplies – And of Output of Merchant Shipping – Repose at Palm Beach – Effective Secrecy – Bad News from Alexandria – The Italian "Human Torpedoes" – Our Mediterranean Battle Fleet Out of Action – Air Reinforcements for Egypt – Untimely Proposals about Indian Self-Government – Russia and the Baltic States – My Telegram to Mr. Eden, January 8 – Wendell Willkie: an Amusing Incident – Back to the White House.

ON my return to the White House all was ready for the signature of the United Nations Pact. Many telegrams had passed between Washington, London, and Moscow, but now all was settled. The President had exerted his most fervent efforts to persuade Litvinov, the Soviet Ambassador, newly restored to favour by the turn of events, to accept the phrase "religious freedom". He was invited to luncheon with us in the President's room on purpose. After his hard experiences in his own country he had to be careful. Later on the President had a long talk with him alone about his soul and the dangers of hell-fire. The accounts which Mr. Roosevelt gave us on several occasions of what he said to the Russian were impressive. Indeed, on one occasion I promised Mr. Roosevelt to recommend him for the position of Archbishop of Canterbury if he should lose the next Presidential election. I did not however make any official recommendation to the Cabinet or the Crown upon this

reported the issue about "religious freedom" in evident fear and trembling to Stalin, who accepted it as a matter of course. The War Cabinet also got their point in about "social security", with which, as the author of the first Unemployment Insurance Act, I cordially concurred. After a spate of telegrams had flowed about the world for a week agreement was reached throughout the Grand Alliance.

The title of "United Nations" was substituted by the President for that of "Associated Powers". I thought this a great improvement. I showed my friend the lines from Byron's *Childe Harold*:

> Here, where the sword United Nations drew,
>   Our countrymen were warring on that day!
> And this is much—and all—which will not pass away.

The President was wheeled in to me on the morning of January 1. I got out of my bath, and agreed to the draft. The Declaration could not by itself win battles, but it set forth who we were and what we were fighting for. Later that day Roosevelt, I, Litvinov, and Soong, representing China, signed this majestic document in the President's study. It was left to the State Department to collect the signatures of the remaining twenty-two nations. The final text must be recorded here.

A Joint Declaration by the United States of America, the United Kingdom of Great Britain and Northern Ireland, the Union of Soviet Socialist Republics, China, Australia, Belgium, Canada, Costa Rica, Cuba, Czechoslovakia, the Dominican Republic, El Salvador, Greece, Guatemala, Haiti, Honduras, India, Luxemburg, the Netherlands, New Zealand, Nicaragua, Norway, Panama, Poland, South Africa, and Yugoslavia

The Governments signatory hereto,

Having subscribed to a common programme of purposes and principles embodied in the Joint Declaration of the President of the United States of America and the Prime Minister of the United Kingdom of Great Britain and Northern Ireland, dated August 14, 1941, known as the Atlantic Charter,

Being convinced that complete victory over their enemies is essential to defend life, liberty, independence, and religious freedom, and to preserve human rights and justice in their own lands

as well as in other lands, and that they are now engaged in a common struggle against savage and brutal forces seeking to subjugate the world, DECLARE.

(1) Each Government pledges itself to employ its full resources, military or economic, against those members of the Tripartite Pact and its adherents with which such Government is at war.

(2) Each Government pledges itself to co-operate with the Governments signatory hereto, and not to make a separate armistice or peace with the enemies.

The foregoing declaration may be adhered to by other nations which are, or which may be, rendering material assistance and contributions in the struggle for victory over Hitlerism.

* * * * *

Among other requests which I had made to the President the movement of three or four United States divisions into Northern Ireland stood high. I felt that the arrival of sixty or seventy thousand American troops in Ulster would be an assertion of the United States' resolve to intervene directly in Europe. These newly raised troops could just as well complete their training in Ulster as at home, and would at the same time become a strategic factor The Germans would certainly consider the move as an additional deterrent against the invasion of the British Isles I hoped they would exaggerate the numbers landed, and thus continue to pay attention to the West. Besides this, every American division which crossed the Atlantic gave us freedom to send one of our matured British divisions out of the country to the Middle East, or of course—and this was always in my mind—to North Africa. Though few, if any, saw it in this light, this was in fact the first step towards an Allied descent on Morocco, Algeria, or Tunis, on which my heart was set The President was quite conscious of this, and while we did not give precise form to the idea I felt that our thoughts flowed in the same direction, although it was not yet necessary for either of us to discuss the particular method.

Mr Stimson, the War Secretary, and his professional advisers also found this move to Ireland in harmony with their inclination to invade Europe at the earliest moment Thus all went forward smoothly. We were anxious that the enemy should be aware of

course specifying numbers. We hoped also that this would detain German troops in the West and thus be not unhelpful to the Russian struggle. The British public and newspapers could not be made privy to our reasons, and many unsound criticisms arose. "Why," for instance, it was asked, "should American troops be sent to Ulster? Would they not be much better employed at Singapore?" When later on I became conscious of this point of view I thought of Pope's lines

> Ye gods! annihilate but space and time,
> And make two lovers happy.

It was of course physically impossible to send an army all that way in time to be of any use.

★ ★ ★ ★ ★

I reported all these decisions to the War Cabinet.

Prime Minister to Lord Privy Seal 3 Jan 42

You will have got my two telegrams about what we did yesterday President has chosen the title "United Nations" for all the Powers now working together This is much better than "Alliance", which places him in constitutional difficulties, or "Associated Powers", which is flat

2 We could not get the words "or Authorities" inserted in the last paragraph of the Declaration, as Litvinov is a mere automaton, evidently frightened out of his wits after what he has gone through. This can be covered by an exchange of letters making clear that the word "Nations" covers authorities such as the Free French, or insurgent organisations which may arise in Spain, in North Africa, or in Germany itself Settlement was imperative because with nearly thirty Powers already informed leakage was certain President was also very keen on January 1

3. Speed was also essential in settling letter of instructions to Wavell Here again it was necessary to defer to American views, observing we are no longer single, but married I personally am in favour of Burma being included in Wavell's operational sphere; but of course the local Commander-in-Chief Burma will be based on India and will have a job of his own to do He will have to get into friendly touch with Chiang Kai-shek, upon whom, it appears, Wavell and Brett made a none too good impression

4. The heavy American troop and Air Force movements into Northern Ireland are to begin at once, and we are now beating about

during their currency.

5 We live here as a big family, in the greatest intimacy and informality, and I have formed the very highest regard and admiration for the President His breadth of view, resolution, and his loyalty to the common cause are beyond all praise There is not the slightest sign here of excitement or worry about the opening misfortunes, which are taken as a matter of course and to be retrieved by the marshalling of overwhelming forces of every kind. There will of course be a row in public presently

6 Please thank the War Cabinet for their very kind New Year's message I am so glad you like what I said in Canada My reception there was moving

* * * * *

It may well be thought by future historians that the most valuable and lasting result of our first Washington conference—"Arcadia", as it was code-named—was the setting up of the now famous "Combined Chiefs of Staff Committee" Its headquarters were in Washington, but since the British Chiefs of Staff had to live close to their own Government they were represented by high officers stationed there permanently. These representatives were in daily, indeed hourly, touch with London, and were thus able to state and explain the views of the British Chiefs of Staff to their U.S colleagues on any and every war problem at any time of the day or night. The frequent conferences that were held in various parts of the world—Casablanca, Washington, Quebec, Teheran, Cairo, Malta, and the Crimea—brought the principals themselves together for sometimes as much as a fortnight. Of the two hundred formal meetings held by the Combined Chiefs of Staff Committee during the war no fewer than eighty-nine were at these conferences, and it was at these full-dress meetings that the majority of the most important decisions were taken

The usual procedure was that in the early morning each Chiefs of Staff Committee met among themselves. Later in the day the two teams met and became one, and often they would have a further combined meeting in the evening They considered the whole conduct of the war, and submitted agreed recommendations to the President and me Our own direct discussions had of course gone on meanwhile by talks or telegrams, and we were in intimate contact with our own staff. The proposals of the professional advisers were then considered in plenary meetings, and

orders given accordingly to all commanders in the field. However sharp the conflict of views at the Combined Chiefs of Staff meeting, however frank and even heated the argument, sincere loyalty to the common cause prevailed over national or personal interests Decisions once reached and approved by the heads of Governments were pursued by all with perfect loyalty, especially by those whose original opinions had been overruled. There was never a failure to reach effective agreement for action, or to send clear instructions to the commanders in every theatre. Every executive officer knew that the orders he received bore with them the combined conception and expert authority of both Governments. There never was a more serviceable war machinery established among allies, and I rejoice that in fact if not in form it continues to this day.

The Russians were not represented on the Combined Chiefs of Staff Committee. They had a far-distant, single, independent front, and there was neither need nor means of staff integration. It was sufficient that we should know the general sweep and timing of their movements and that they should know ours. In these matters we kept in as close touch with them as they permitted I shall in due course describe the personal visits which I paid to Moscow. And at Teheran, Yalta, and Potsdam the Chiefs of Staff of all three nations met round the table.

The enjoyment of a common language was of course a supreme advantage in all British and American discussions The delays and often partial misunderstandings which occur when interpreters are used were avoided. There were however differences of expression, which in the early days led to an amusing incident The British Staff prepared a paper which they wished to raise as a matter of urgency, and informed their American colleagues that they wished to "table it". To the American Staff "tabling" a paper meant putting it away in a drawer and forgetting it. A long and even acrimonious argument ensued before both parties realised that they were agreed on the merits and wanted the same thing.

* * * * *

I have described how Field-Marshal Dill, though no longer Chief of the Imperial General Staff, had come with us in the *Duke of York* He had played his full part in all the discussions, not only afloat, but even more when we met the American leaders.

I at once perceived that his prestige and influence with them was upon the highest level. No British officer we sent across the Atlantic during the war ever acquired American esteem and confidence in an equal degree His personality, discretion, and tact gained him almost at once the confidence of the President. At the same time he established a true comradeship and private friendship with General Marshall.

★ ★ ★ ★ ★

Immense expansions were ordered in the production sphere In all these Beaverbrook was a potent impulse. The official American history of their industrial mobilisation for war* bears generous testimony to this. Donald Nelson, the Executive Director of American War Production, had already made gigantic plans. "But," says the American account, "the need for boldness had been dramatically impressed upon Nelson by Lord Beaverbrook on December 29. . . . What happened is best portrayed by Mr. Nelson's own words:

Lord Beaverbrook emphasised the fact that we must set our production sights much higher than for the year 1942, in order to cope with a resourceful and determined enemy. He pointed out that we had as yet no experience in the losses of material incidental to a war of the kind we are now fighting . . . He emphasised over and over again the fact that we should set our sights higher in planning for production of the necessary war material For instance, he thinks we should plan for the production of 45,000 tanks in 1942 against Mr Knudsen's estimate of 30,000

The American account continues:

The ferment Lord Beaverbrook was instilling in the mind of Nelson he was also imparting to the President In a note to the President Lord Beaverbrook set the expected 1942 production of the United States, the United Kingdom, and Canada against British, Russian, and American requirements. The comparison exposed tremendous deficits in 1942 planned production For tanks these deficits were 10,500; for aircraft 26,730; for artillery 22,600, and for rifles 1,600,000 Production targets had to be increased, wrote Lord Beaverbrook, and he pinned his faith on their realisation in "the immense possibilities of American industry". Production goals for 1942 should include 45,000 tanks,

* *History of the War Production Board, 1940–1945*

tity of anti-aircraft guns then programmed, including all contemplated increases

The outcome was a set of production objectives whose magnitude exceeded even those Nelson had proposed The President was convinced that the concept of our industrial capacity must be completely overhauled He directed the fulfilment of a munitions schedule calling for 45,000 combat aircraft, 45,000 tanks, 20,000 anti-aircraft guns, 14,900 anti-tank guns, and 500,000 machine-guns in 1942.

I reported all this good news home.

Prime Minister to Lord Privy Seal 4 Jan 42

A series of meetings has been held on supply issues These were presided over by the President himself and the Vice-President Negotiations were carried forward and discussions of details took place every day Then on Friday there was a meeting presided over by the President and myself There were two meetings on Saturday. Final conclusions were.

It was decided to raise United States output of merchant shipping in 1942 to 8,000,000 tons deadweight and in 1943 to 10,000,000 tons deadweight New 1942 programme is increase in production of one-third.

War weapons programmes for 1942 and 1943 were determined as follows.

Weapons	1942	1943
Operational aircraft	45,000	100,000
Tanks	45,000	75,000
Anti-aircraft guns	20,000	35,000
Anti-tank guns	14,900	Not fixed
Ground and tank machine-guns	500,000	Not fixed

New 1942 programme represents increase on programme for 1942, which has been fixed *after* United States entry into the war as follows

Operational aircraft	31,250
Tanks	29,550
Anti-aircraft guns	8,900
Anti-tank guns	11,700
Ground and tank machine-guns	238,000

Directives have been issued to all the departments concerned [Presidential] Message to Congress this week will give abridged account of programme Budget will contain necessary financial provisions

Max has been magnificent and Hopkins a godsend [illegible]
be pleased with immense resultant increase in programme

These remarkable figures were achieved or surpassed by the end of 1943. In shipping, for example, the new tonnage built in the U.S.A. was as follows:

1942	5,339,000 tons
1943	12,384,000 tons

* * * * *

Continued concentration of mind upon the war as a whole, my constant discussions with the President and his principal advisers and with my own, my two speeches and my journey to Canada, together with the heavy flow of urgent business requiring decision and all the telegrams interchanged with my colleagues at home, made this period in Washington not only intense and laborious but even exhausting. My American friends thought I was looking tired and ought to have a rest. Accordingly Mr. Stettinius very kindly placed his small villa in a seaside solitude near Palm Beach at my disposal, and on January 4 I flew down there. The night before I started the air-conditioning of my room in the White House failed temporarily, the heat became oppressive, and in trying to open the window I strained my heart slightly, causing unpleasant sensations which continued for some days Sir Charles Wilson, my medical adviser, however decided that the journey south should not be put off General Marshall came with us in the plane all the way, and I had some very good talks with him. Five days we passed in the Stettinius villa, lying about in the shade or the sun, bathing in the pleasant waves, in spite of the appearance on one occasion of quite a large shark. They said it was only a "ground shark"; but I was not wholly reassured. It is as bad to be eaten by a ground shark as by any other. So I stayed in the shallows from then on.

My movements were kept strictly secret, and a notification was given from the White House to the Press that all movements by the President or by me were to be regarded as if they were the movements of American battleships. Consequently no word ever appeared On the other hand, numbers of people greeted me in Florida, and many Pressmen and photographers, with

whom I had pleasant interchanges, waited outside the entrance to our retreat, but not a trickle ever leaked into print

Prime Minister to Lord Privy Seal 5 Jan 42

I am going south for a few days, hoping to remain in complete privacy, and President will go to Hyde Park Meanwhile the staffs are working hard, and on our return we shall deal with results There are many difficulties to be overcome in making offensive plans, but we must persevere. The big movement of United States troops into Ireland is all arranged at this end You must make sure that everything is getting prepared on our side Please see that a fine job is done over this, and their special food, etc , studied

2 I suppose you realise we are trying not only to meet the immediate needs, but to make a plan for the effective application of the American armies to the enemy's fronts wherever possible Shipping is the limiting factor

3 I shall be glad to have everything necessary sent forward, as I shall be in constant telegraphic touch They are trying here to keep my whereabouts secret It would be well to discourage speculation in our Press about my return or movements.

Prime Minister to Lord Privy Seal 7 Jan 42

Am resting in the south on Charles Wilson's* advice for a few days after rather a strenuous time. President is stopping all mention in the United States Press. Please make sure no notice is issued in England, otherwise American Press will be vexed, and I shall be overrun with them and tourists

★ ★ ★ ★ ★

While I was reclining in the mellow sunlight of Palm Beach and dictating all these telegrams and memoranda the news reached me of the Italian "human torpedo" attack in Alexandria harbour which had disabled the *Queen Elizabeth* and *Valiant* This has already been described in an earlier chapter This misfortune, following upon all our other naval losses at this moment, was most untimely and disturbing. I saw its gravity at once The Mediterranean battle fleet was for the time being non-existent, and our naval power to guard Egypt from direct overseas invasion in abeyance It seemed necessary in the emergency to send whatever torpedo planes could be gathered from the south coast of England. This had, as will presently be seen, an unpleasant sequel.

★ ★ ★ ★ ★

* Sir Charles Wilson, now Lord Moran

Prime Minister to General Ismay, for C.O.S. Committee, and to Secretary of State for Air 7 Jan 42

In view of naval position Mediterranean it is evidently urgent and important to send strong air reinforcements, especially torpedo planes, from Coastal or Bomber Command. Proportionate relaxation of bomber offensive against Germany, etc, and shipping must be accepted. General Arnold* tells me he is sending as soon as possible two bomber groups, *i e*, eighty bombers, as well as some fighter squadrons for Ulster Pray tell me what you are doing and whether Admiral Cunningham is comforted

I was also concerned lest the Italian exploit should be repeated at Scapa Flow

Prime Minister to First Sea Lord 9 Jan 42

The incident at Alexandria, which was so unpleasant, has raised in my mind the question of the security of Scapa Flow against this form of attack Are we in fact patrolling the entrances with depth-charges every twenty minutes? No doubt the strong currents would give far greater protection than the calm water of Alexandria.

How does the matter stand?

It was above all things important that the true condition of our two great battleships, which rested upon even keels in Alexandria harbour, should not become known to the enemy.

* * * * *

I now found time to deal with several difficult questions which pursued me There was of course a recurrence, both by the Viceroy and the Cabinet, to the idea of making a new constitution for India under which the Congress Party would rally to the common cause and their own security. We shall see in a later volume that this was a vain illusion.

Prime Minister to Lord Privy Seal 7 Jan 42

I hope my colleagues will realise the danger of raising constitutional issue, still more of making constitutional changes, in India at a moment when enemy is upon the frontier. The idea that we should "get more out of India" by putting the Congress in charge at this juncture seems ill-founded. Yet that is what it would come to if any electoral or Parliamentary foundation is chosen Bringing hostile political elements into the defence machine will paralyse action Merely picking and choosing friendly Indians will do no serious harm, but will not in any way meet the political demands. The Indian Liberals, though plausible,

* Head of the U S Army Air Force.

fighting splendidly, but it must be remembered that their allegiance is to the King-Emperor, and that the rule of the Congress and Hindu priesthood machine would never be tolerated by a fighting race

2 I do not think you will have any trouble with American opinion All Press comments on India I have seen have been singularly restrained, especially since they entered the war Thought here is concentrated on winning the war as soon as possible The first duty of Congress nominees who have secured control of provincial government is to resume their responsible duties as ministers, and show that they can make a success of the enormous jobs confided to them in this time of emergency Pray communicate these views to the Cabinet I trust we shall not depart from the position we have deliberately taken up

I was much disturbed by the reports which Mr Eden had brought back with him from Moscow of Soviet territorial ambitions, especially in the Baltic States. These were the conquests of Peter the Great, and had been for two hundred years under the Czars. Since the Russian revolution they had been the outpost of Europe against Bolshevism They were what are now called "social democracies", but very lively and truculent Hitler had cast them away like pawns in his deal with the Soviets before the outbreak of war in 1939. There had been a severe Russian and Communist purge All the dominant personalities and elements had been liquidated in one way or another. The life of these strong peoples was henceforward underground. Presently, as we shall see, Hitler came back with a Nazi counter-purge. Finally, in the general victory the Soviets had control again. Thus the deadly comb ran back and forth, and back again, through Estonia, Latvia, and Lithuania There was no doubt however where the right lay. The Baltic States should be sovereign independent peoples

Prime Minister to Foreign Secretary 8 Jan 42

We have never recognised the 1941 frontiers of Russia except *de facto* They were acquired by acts of aggression in shameful collusion with Hitler The transfer of the peoples of the Baltic States to Soviet Russia against their will would be contrary to all the principles for which we are fighting this war and would dishonour our cause This also applies to Bessarabia and to Northern Bukovina, and in a lesser degree to Finland, which I gather it is not intended wholly to subjugate and absorb.

2 Russia could, upon strategical grounds, make a case for the

approaches to Leningrad, which the Finns have utilised to attack her. There are islands in the Baltic which may be essential to the safety of Russia. Strategical security may be invoked at certain points on the frontiers of Bukovina or Bessarabia. In these cases the population would have to be offered evacuation and compensation if they desired it. In all other cases transference of territory must be regulated after the war is over by freely and fairly conducted plebiscites, very differently from what is suggested. In any case there can be no question of settling frontiers until the Peace Conference. I know President Roosevelt holds this view as strongly as I do, and he has several times expressed his pleasure to me at the firm line we took at Moscow. I could not be an advocate for a British Cabinet bent on such a course.

3. I regard our sincerity to be involved in the maintenance of the principles of the Atlantic Charter, to which Stalin has subscribed. On this also we depend for our association with the United States . . .

5. About the effect on Russia of our refusal to prejudice the peace negotiations at this stage in the war, or to depart from the principles of the Atlantic Charter, it must be observed that they entered the war only when attacked by Germany, having previously shown themselves utterly indifferent to our fate, and indeed they added to our burdens in our worst danger. Their armies have fought very bravely and have shown immense unsuspected strength in the defence of their native soil. They are fighting for self-preservation and have never had a thought for us. We, on the contrary, are helping them to the utmost of our ability because we admire their defence of their own country and because they are ranged against Hitler.

6. No one can foresee how the balance of power will lie or where the winning armies will stand at the end of the war. It seems probable however that the United States and the British Empire, far from being exhausted, will be the most powerfully armed and economic *bloc* the world has ever seen, and that the Soviet Union will need our aid for reconstruction far more than we shall then need theirs.

7. You have promised that we will examine these claims of Russia in common with the United States and the Dominions. That promise we must keep. But there must be no mistake about the opinion of any British Government of which I am the head, namely, that it adheres to those principles of freedom and democracy set forth in the Atlantic Charter, and that these principles must become especially active whenever any question of transferring territory is raised. I conceive therefore that our answer should be that all questions of territorial frontiers must be left to the decision of the Peace Conference.

Juridically this is how the matter stands now.

* * * * *

While at Palm Beach I was of course in constant touch by telephone with the President and the British Staffs in Washington, and also when necessary I could speak to London. An amusing, though at the moment disconcerting, incident occurred. Mr. Wendell Willkie had asked to see me. At this time there was tension between him and the President. Roosevelt had not seemed at all keen about my meeting prominent members of the Opposition, and I had consequently so far not done so. Having regard however to Wendell Willkie's visit to England a year before, in January 1941, and to the cordial relations I had established with him, I felt that I ought not to leave American shores without seeing him. This was also our Ambassador's advice. I therefore put a call through to him on the evening of the 5th. After some delay I was told, "Your call is through." I said in effect, "I am so glad to speak to you. I hope we may meet. I am travelling back by train to-morrow night. Can you not join the train at some point and travel with me for a few hours? Where will you be on Saturday next?" A voice came back: "Why, just where I am now, at my desk." To this I replied, "I do not understand." "Whom do you think you are speaking to?" I replied, "To Mr. Wendell Willkie, am I not?" "No," was the answer, "you are speaking to the President." I did not hear this very well, and asked, "Who?" "You are speaking to me," came the answer, "Franklin Roosevelt." I said, "I did not mean to trouble you at this moment. I was trying to speak to Wendell Willkie, but your telephone exchange seems to have made a mistake." "I hope you are getting on all right down there and enjoying yourself," said the President. Some pleasant conversation followed about personal movements and plans, at the end of which I asked, "I presume you do not mind my having wished to speak to Wendell Willkie?" To this Roosevelt said, "No." And this was the end of our talk

It must be remembered that this was in the early days of our friendship, and when I got back to Washington I thought it right to find out from Harry Hopkins whether any offence had been given I therefore wrote to him

I rely on you to let me know if this action of mine in wishing to speak to the person named is in any way considered inappropriate, because I certainly thought I was acting in accordance with my duty

to be civil to a public personage of importance, and unless you advise me to the contrary I still propose to do so

Hopkins said that no harm had been done.

* * * * *

It was now time to come home.

Prime Minister to Lord Privy Seal 9 Jan 42

3. You will have seen by the telegrams which have passed that I have not been idle here Indeed, the seclusion in which I have lived has enabled me to focus things more clearly than was possible in the stir of Washington I am in the midst of preparing a considerable paper on Anglo-American co-operation, which I shall discuss with the Staffs and then with the President as soon as I get back

4. I am so glad the debate of the 8th passed off peacefully, and that the House was willing to postpone the discussion on the main issue Of course the naggings and snarlings have been fully reported over here, and one would think that they represented the opinion of the House Several remarks have been reported which are not very helpful to American opinion, and I am pointing out to the President that we can no more control the expression of freak opinion by individual members than he can those of Congress backwoodsmen Try to let me have the gist of what you and Anthony said

5. It might be convenient if I made my statement on Tuesday as a statement, and the adjournment was moved by somebody else immediately after This would enable the usual criticisms to be made without my having exhausted my right to reply. Perhaps however you will not think this necessary I cannot help feeling we have a good tale to tell, even though we cannot tell the best part of it

I set out by train to return to Washington on the night of the 9th, and reached the White House on the 11th. Business kept me company.

CHAPTER XXXVII

RETURN TO STORM

Some Further Notes on the War after Anglo-American Discussions – Expansion of the United States Army – And of the Air Force – Growing Output of Munitions and Shipping – Importance of Sending an American Army to Northern Ireland – Rommel's Stubborn Resistance and Retardation of North African Plans – Need to Wear Down the German Air-Power by Continuous Engagement – Relief Afforded by the Successful Russian Resistance in the South – Potential Dangers in the Caucasus – The War Against Japan – Our Need to Regain the Initiative – Mobile Striking Force to Attack Japanese Conquests – Final Conference at the White House on January 12 – Complete Anglo-American Agreement – General Marshall's Question – We Start for Home – The President's Apprehensions – The Boeing Flying-Boat – My Wish to Use Her – Expert Advice of Portal and Pound – The Decision to Go by Air instead of in the "Duke of York" – I Address the Bermuda Assembly – A Very Long Flight – A Critical Moment at Dawn – Safe Arrival at Plymouth.

DURING my rest in Florida I prepared a fourth memorandum in two parts addressed to the Chiefs of Staff Committee and for the Defence Committee of the War Cabinet This was written also for American eyes It differed from the three previous papers in that it was composed after the opening discussions in Washington between me and the President and his advisers and between the Combined Chiefs of Staff Subsequently on my return to London I circulated all these papers to the War Cabinet for information. A very large measure of agreement had already been reached between our two countries, and the War Cabinet accorded in effect a very wide degree of approval to the direction which had been given to our affairs. I present only the more general aspects here *

* Paragraphs 9, 10, 14, 15, and 16 are omitted for reasons of space.

General Ismay, for C.O.S. Committee and Defence [illegible]

I have availed myself of a few days' quiet and seclusion to review the salients of the war as they appear after my discussions here.

The United States has been attacked and become at war with the three Axis Powers, and desires to engage her trained troops as soon and as effectively as possible on fighting fronts Owing to the shipping stringency this will not be possible on any very large scale during 1942 Meanwhile the United States Army is being raised from a strength of a little over thirty divisions and five armoured divisions to a total strength of about sixty divisions and ten armoured divisions. About 3¾ million men are at present held or about to be called up for the Army and Air Force (over a million). Reserves of man-power are practically unlimited, but it would be a misdirection of war effort to call larger numbers to the armed forces in the present phase

2 It does not seem likely that more than between a quarter and a third of the above American forces can be transported to actual fighting fronts during the year 1942 In 1943 however the great increases in shipping tonnage resulting from former and recent shipping programmes should enable much larger bodies to be moved across the oceans, and the summer of 1943 may be marked by large offensive operations, which should be carefully studied meanwhile.

3. The United States Air Force, already powerful and rapidly increasing, can be brought into heavy action during 1942 Already it is proposed that strong bomber forces, based on the British Isles, should attack Germany and the invasion ports. American fighter squadrons can participate in the defence of Great Britain and the domination of such parts of the French shore as are within fighter reach.

4. The declaration by the President to Congress of the enormous increases in United States output of munitions and shipping to proceed during 1942, and reach full flow in 1943, makes it more than ever necessary for Hitler to bring the war to a decision in 1942, before the power of the United States can be fully brought to bear

5 Hitler has had the time to prepare, perhaps in very great numbers, tank-transporting vehicles capable of landing on any beach He has no doubt developed airborne attack by parachutes, and still more by gliders, to an extent which cannot easily be measured The President, expressing views shared by the leading American strategists, has declared Great Britain an essential fortress of the United Nations It is indeed the only place where the war can be lost in the critical campaign of 1942 about to open It would be most imprudent to allow the successful defence of the British Isles to be hazarded . . .

6 The sending of four United States divisions (one armoured) into Northern Ireland is therefore a most necessary war measure, which

nothing should be allowed to prevent The replacing of the British
troops in Iceland (C) liberates an additional British division It is suggested however that the United States authorities should be asked to consider the training in Iceland of as many troops as possible to work on mountains and under snow conditions, as only the possession of such trained mountain and ski troops in considerable numbers can enable a liberating operation in Scandinavia to be prepared for the future .

7. The stubborn resistance of the enemy in Cyrenaica, the possibilities of General Rommel withdrawing, or of being able to escape with a portion of his troops, the reinforcements which have probably reached Tripoli, and others which must be expected during the delay, and above all the difficulties of supply for our advancing troops—all will retard, or may even prevent, the full completion of "Acrobat" [the clearance of Tripoli] We are therefore in a position to study "Super-Gymnast" [the Anglo-American occupation of French North Africa] more thoroughly, and to proceed with "Magnet" [the movement of American troops to Northern Ireland] with the utmost speed

8 . The German front-line Air Force is already less strong numerically than the British A considerable portion of it must now be left opposite Russia. But the bulk of the British Air Force has to be tied up at home, facing, at the present time, a much smaller concentration of German bombers and fighters, and yet not able to be moved because of the good interior communications possessed by the enemy and his power of rapid transference. In addition, there is the Italian Air Force to consider.

11. The object we should set before ourselves is the wearing down by continuous engagement of the German air-power. This is being done on the Russian front On the British front it can only be done to a limited extent, unless the enemy resumes his bombing or daylight offensive. But in the Mediterranean the enemy shows an inclination to develop a front, and we should meet him there with the superior strength which the arrival of American air forces can alone give It is of the utmost importance to make the German Air Force fight continuously on every possible occasion, and at every point of attack We can afford the drain far better than they can Indeed, like General Grant in his last campaign, we can almost afford to lose two for one, having regard to the immense supplies now coming forward in the future Every German aircraft or pilot put out of action in 1942 is worth two of them in 1943 It is only by the strain of constant air-battle that we shall be able to force his consumption of air-power to levels which are beyond the capacity of his air plants and air schools In this way the initiative may be regained by us, as the enemy will be

fully occupied, as we have been hitherto, in meeting day-to-day needs and keeping his head above water.

12 We must acclaim the very great deliverance afforded to us by the successful Russian resistance along the Don and in the Crimea, carrying with it the continued Russian command of the Black Sea Three months ago we were forced to expect a German advance through the Caucasus to the Caspian and the Baku oilfields That danger is almost certainly staved off for perhaps four or five months till the winter is over, and of course continued successful Russian resistance in the south would give complete protection to us.

13 The danger may however recur in the late spring. The oil stringency, which is already serious in Germany and the German-conquered countries, makes the seizure of the Baku and Persian oilfields objects of vital consequence to Germany, second only to the need of successfully invading the British Isles . . The enormous power of the German Army may be able to reassert itself as soon as weather conditions improve. In this case they might well be content to adopt a defensive attitude along the northern and central sectors of the Russo-German front, and thrust an offensive spearhead south-east through the Caucasus to the oilfields which lie beyond.

The War against Japan

17. It is generally agreed that the defeat of Germany, entailing a collapse, will leave Japan exposed to overwhelming force, whereas the defeat of Japan would not by any means bring the World War to an end Moreover, the vast distances in the Pacific and the advantageous forward key points already seized or likely to be seized by the Japanese will make the serious invasion of the homelands of Japan a very lengthy business Not less lengthy will be the piecemeal recovery, by armies based mainly on Australia and India, of the islands, airfields, and naval bases in the South-West Pacific area now confided to General Wavell It seems indeed more probable that a decision can be reached sooner against Germany than against Japan In any case, we cannot expect to develop adequate naval, air, and military superiority in the aforesaid area for a considerable time, having regard to other calls made upon us and the limitation of shipping

18 While therefore it is right to assign primacy to the war against Germany, it would be wrong to speak of our "standing on the defensive" against Japan, on the contrary, the only way in which we can live through the intervening period in the Far East before Germany is defeated is by regaining the initiative, albeit on a minor scale

19 In a theatre of a thousand islands, many capable of being converted into makeshift air and naval bases, insoluble problems are set

command of the sea, and air predominance over considerable areas, it is within their power to take almost any point they wish, apart, it is hoped, from the fortress of Singapore They can go round with a circus force and clean up any local garrisons we or the Dutch have been able so far to hold They will seek to secure their hold by a well-conceived network of air bases, and they no doubt hope to secure, in a certain number of months, the possession of the fortress of Singapore Once in possession of this as well as Manila, with their air bases established at focal points, they will have built up a system of air and naval defence capable of prolonged resistance . . . The naval superiority of the United States, to which Great Britain will contribute to the best of her ability, ought to be regained by the summer of 1942.

20 Thereupon, or at least as soon as possible, raids should be organised upon islands or seaports which the Japanese have seized The President has, I understand, ordered the formation of a force on the west coast of America akin to the Commandos Such a force, on account of its individual qualities, will be exceptionally valuable by gaining key points and lodgments in amphibious operations It would require to be supported by a number of small brigade groups, whose mobility and equipment would be exactly fitted to the particular task foreseen, each task being a study in itself It is not necessary, unless required on strategic grounds, to stay in the captured or recaptured islands. It will be sufficient to destroy or make prisoners of the garrison, demolish any useful installations, and depart. The exact composition of the forces for each undertaking and enterprise is a matter for separate study According to our experiences, it would seem essential that there should be adequate cover by seaborne aircraft and detachments of tanks and tank-landing craft The enemy cannot possibly be prepared, and must be highly vulnerable at many points. After even a few successful enterprises of this character, all of which are extremely valuable experiences to the troops and commanders for instructional purposes, he will be terrorised out of holding places weakly, and will be forced to concentrate on a certain number of strong points It may then be possible for us to secure very easily suitable islands, provided we do not try to hold too many, in which air and refuelling bases of a temporary or permanent character can be improvised The establishment of a reign of terror among the enemy's detached garrisons would seem to be an extremely valuable preliminary to the larger operations for reconquest and the building up of strong bases as stepping-stones from Australia northward.

This paper I gave to the President

★ ★ ★ ★ ★

When I got back to the White House I found that great progress had been made by the Combined Chiefs of Staff, and that it was mostly in harmony with my views. The President convened a meeting on January 12, when there was complete agreement upon the broad principles and targets of the war. The differences were confined to priorities and emphasis, and all was ruled by that harsh and despotic factor shipping. "The President," says the British record, "set great store on organising a 'Super-Gymnast'—*i.e.*, a combined United States-British expedition to North Africa. A tentative time-table had been worked out for putting 90,000 United States and 90,000 British troops, together with a considerable air force, into North Africa." It was settled to send two divisions of American troops to Northern Ireland, with the objects which have been described. The President had told me privately that he would, if necessary as quickly as possible, send 50,000 United States troops to Australia and the islands covering its approach by the Japanese. Twenty-five thousand were to go as soon as possible to occupy New Caledonia, and other stepping-stones between America and Australasia. On "Grand Strategy" the Staffs agreed that "only the minimum of forces necessary for the safeguarding of vital interests in other theatres should be diverted from operations against Germany". No one had more to do with obtaining this cardinal decision than General Marshall

One evening the General came to see me and put a hard question. He had agreed to send nearly thirty thousand American soldiers to Northern Ireland We had of course placed the two "Queens"—the only two 80,000-ton ships in the world—at his disposal for this purpose. General Marshall asked me how many men we ought to put on board, observing that boats, rafts, and other means of flotation could only be provided for about 8,000. If this were disregarded they could carry 16,000 men. I gave the following answer "I can only tell you what *we* should do. You must judge for yourself the risks you will run. If it were a direct part of an actual operation, we should put all on board they could carry If it were only a question of moving troops in a reasonable time, we should not go beyond the limits of lifeboats, rafts, etc It is for you to decide." He received this in silence, and our conversation turned to other matters. In their first voyages these ships carried only the lesser numbers, but later

our friend.

* * * * *

The time had now come when I must leave the hospitable and exhilarating atmosphere of the White House and of the American nation, erect and infuriate against tyrants and aggressors. It was to no sunlit prospect that I must return. Eager though I was to be back in London, and sure of ultimate victory, I felt continually the approaching impact of a period of immense disasters which must last for many months. My hopes of a victory in the Western Desert, in which Rommel would be destroyed, had faded. Rommel had escaped The results of Auchinleck's successes at Sidi Rezegh and at Gazala had not been decisive The prestige which these had given us in the making of all our plans for the Anglo-American descent on French North Africa was definitely weakened, and this operation was obviously set back for months.

* * * * *

Prime Minister to Lord Privy Seal 12 Jan 42

As I shall soon be silent for a while, though I trust not for ever, pray cable to-night any outstanding points which require decision here before I leave.

On the 14th I took leave of the President. He seemed concerned about the dangers of the voyage Our presence in Washington had been for many days public to the world, and the charts showed more than twenty U-boats on our homeward courses. We flew in beautiful weather from Norfolk to Bermuda, where the *Duke of York*, with escorting destroyers, awaited us inside the coral reefs. I travelled in an enormous Boeing flying-boat, which made a most favourable impression upon me. During the three hours' trip I made friends with the chief pilot, Captain Kelly Rogers, who seemed a man of high quality and experience I took the controls for a bit, to feel this ponderous machine of thirty or more tons in the air. I got more and more attached to the flying-boat. Presently I asked the captain, "What about flying from Bermuda to England? Can she carry enough petrol?" Under his stolid exterior he became visibly excited "Of course we can do it. The present weather forecast would give a forty miles an hour wind behind us. We could do it in twenty hours"

I asked how far it was, and he said, "About [illegible]
hundred miles." At this I became thoughtful.

However, when we landed I opened the matter to Portal and Pound. Formidable events were happening in Malaya, we ought all to be back at the earliest moment. The Chief of the Air Staff said at once that he thought the risk wholly unjustifiable, and he could not take the responsibility for it. The First Sea Lord supported his colleague. There was the *Duke of York*, with her destroyers, all ready for us, offering comfort and a certainty. I said, "What about the U-boats you have been pointing out to me?" The Admiral made a disdainful gesture about them, which showed his real opinion of such a menace to a properly escorted and fast battleship. It occurred to me that both these officers thought my plan was to fly myself and leave them to come back in the *Duke of York*, so I said, "Of course there would be room for all of us." They both visibly changed countenance at this. After a considerable pause Portal said that the matter might be looked into, and that he would discuss it at length with the captain of the flying-boat and go into weather prospects with the meteorological authorities. I left it at that.

Two hours later they both returned, and Portal said that he thought it might be done. The aircraft could certainly accomplish the task under reasonable conditions, the weather outlook was exceptionally favourable on account of the strong following wind. No doubt it was very important to get home quickly. Pound said he had formed a very high opinion of the aircraft skipper, who certainly had unrivalled experience. Of course there was a risk, but on the other hand there were the U-boats to consider. So we settled to go unless the weather deteriorated. The starting time was 2 p.m. the next day. It was thought necessary to reduce our baggage to a few boxes of vital papers. Dill was to remain behind in Washington as my personal military representative with the President Our party would consist only of myself, the two Chiefs of Staff, and Max Beaverbrook, Charles Wilson, and Hollis. All the rest would go by the *Duke of York.*

That afternoon I addressed the Bermuda Assembly, which is the oldest Parliamentary institution in the Western Hemisphere. I pleaded with them to give their assent and all their aid to the establishment of the United States naval and air bases in the island, about which they were in some distress. The life of the whole

Empire was at stake. The smooth working of
the United States made final victory certain, however long the journey might be. They did not demur. The Governor, Lord Knollys, gave a banquet that night to the island notables and their fleeting guests. We were all in high spirits. Only Tommy,* my Flag Commander, as I called him, was in terror that there would be no room for him. He explained how deeply wounded he was at the idea of going home by sea I reminded him of his devotion to the naval service, and of the pleasures to a hardy sailor of a life on the ocean wave. I dwelt upon the undeniable hazards from the U-boats. He was quite inconsolable. However, he had a plan. He had persuaded one of the stewards of the flying-boat to let him take his place; he would do the washing up himself But what, I asked, would the captain say? Tommy thought that if at the last moment the captain were confronted with the arrangement he would make no objection. He had ascertained that he weighed less than the steward. I shrugged my shoulders, and on this we went to bed in the small hours of the morning.

I woke up unconscionably early with the conviction that I should certainly not go to sleep again. I must confess that I felt rather frightened. I thought of the ocean spaces, and that we should never be within a thousand miles of land until we approached the British Isles. I thought perhaps I had done a rash thing, that there were too many eggs in one basket. I had always regarded an Atlantic flight with awe. But the die was cast Still, I must admit that if at breakfast, or even before luncheon, they had come to me to report that the weather had changed and we must go by sea I should have easily reconciled myself to a voyage in the splendid ship which had come all this way to fetch us.

Divine sunlight lapped the island, and the favourable weather prospects were confirmed. At noon we reached the flying-boat by launch. We were delayed for an hour on the quay because a picket-boat which had gone to the *Duke of York* for items of baggage had taken longer than expected. Tommy stood disconsolate. The captain had brushed his project aside in a way that captains have The steward was a trained member of the crew, he could not take one single person more; every tank was filled to the brim with petrol. It would be quite a task getting off the water even as it was. So we taxied out to the far end of the

* Commander Thompson, R N,

harbour, leaving Tommy lamenting as bitterly as Lord Ullin in the poem,* but for different reasons. Never before and never afterwards were we separated in these excursions.

It was, as the captain had predicted, quite a job to get off the water. Indeed, I thought that we should hardly clear the low hills which closed the harbour. There was really no danger, we were in sure hands. The flying-boat lifted ponderously a quarter of a mile from the reef, and we had several hundred feet of height to spare. There is no doubt about the comfort of these great flying-boats. I had a good broad bed in the bridal suite at the stern with large windows on either side. It was quite a long walk, thirty or forty feet, downhill through the various compartments to the saloon and dining-room, where nothing was lacking in food or drink The motion was smooth, the vibration not unpleasant, and we passed an agreeable afternoon and had a merry dinner. These boats have two storeys, and one walks up a regular staircase to the control room. Darkness had fallen, and all the reports were good. We were now flying through dense mist at about seven thousand feet. One could see the leading edge of the wings, with their great flaming exhausts pouring back over the wing surfaces. In these machines at this time a large rubber tube which expanded and contracted at intervals was used to prevent icing The captain explained to me how it worked, and we saw from time to time the ice splintering off as it expanded. I went to bed and slept soundly for several hours

* * * * *

I woke just before the dawn, and went forward to the controls. The daylight grew. Beneath us was an almost unbroken floor of clouds.

After sitting for an hour or so in the co-pilot's seat I sensed a feeling of anxiety around me. We were supposed to be approaching England from the south-west and we ought already to have passed the Scilly Islands, but they had not been seen through any of the gaps in the cloud floor As we had flown for more than ten hours through mist and had had only one sight of a star in that time, we might well be slightly off our course. Wireless communication was of course limited by the normal war-time rules. It was evident from the discussions which were going on that

* Thomas Campbell's *Lord Ullin's Daughter*.

been studying the position, had a word with the captain, and then said to me, "We are going to turn north at once." This was done, and after another half-hour in and out of the clouds we sighted England, and soon arrived over Plymouth, where, avoiding the balloons, which were all shining, we landed comfortably.

As I left the aircraft the captain remarked, "I never felt so much relieved in my life as when I landed you safely in the harbour" I did not appreciate the significance of his remark at the moment Later on I learnt that if we had held on our course for another five or six minutes before turning northwards we should have been over the German batteries in Brest. We had slanted too much to the southward during the night Moreover, the decisive correction which had been made brought us in, not from the south-west, but from just east of south—that is to say, from the enemy's direction rather than from that from which we were expected This had the result, as I was told some weeks later, that we were reported as a hostile bomber coming in from Brest, and six Hurricanes from Fighter Command were ordered out to shoot us down. However, they failed in their mission

To President Roosevelt I cabled, "We got here with a good hop from Bermuda and a thirty-mile wind."

APPENDICES

APPENDIX A

LIST OF ABBREVIATIONS

A A guns	Anti-aircraft guns, or ack-ack guns
A D.G.B	Air Defence of Great Britain
A F V s	Armoured fighting vehicles
A G.R.M.	Adjutant-General Royal Marines
A R P	Air Raid Precautions
A T rifles	Anti-tank rifles
A T S	(Women's) Auxiliary Territorial Service
C.A S.	Chief of the Air Staff
C I G.S.	Chief of the Imperial General Staff
C.-in-C	Commander-in-Chief
CONTROLLER	Third Sea Lord and Chief of Material
C O.S	Chiefs of Staff
D N C.	Director of Naval Construction
F O	Foreign Office
G H Q.	General Headquarters
G O C.	General Officer Commanding
H F.	Home Forces
H M G	His Majesty's Government
M A P.	Ministry of Aircraft Production
M.E W	Ministry of Economic Warfare
M.O I.	Ministry of Information
M OF L.	Ministry of Labour
M OF S	Ministry of Supply
P M	Prime Minister
U.P	Unrotated projectiles—*i e.*, code name for rockets
V C A S	Vice-Chief of the Air Staff
V C I G S	Vice-Chief of the Imperial General Staff
V C N S	Vice-Chief of the Naval Staff
W A A F	Women's Auxiliary Air Force
W R N S	Women's Royal Naval Service ("Wrens")

APPENDIX B

LIST OF CODE NAMES

German code names are marked with an asterisk

ACROBAT: Advance from Cyrenaica into Tripoli.
ARCADIA First Washington Conference, December 1941.
*BARBAROSSA German plan for invasion of Russia.
BATTLEAXE. Offensive operations in Sollum, Tobruk, and Capuzzo area, June 1941.
CANVAS. Attack on Kismayu.
COLORADO Crete
CRUSADER Operations in Western Desert, November 1941.
EXPORTER Operations in Syria.
*FELIX German plan for seizure of Gibraltar
GYMNAST British occupation of French North Africa.
INFLUX Occupation of Sicily
JAGUAR Reinforcements to Malta, 1941
LUSTRE Aid to Greece.
MAGNET Movement of American troops to Northern Ireland
MANDIBLES· Operations against Dodecanese
*MARITA German plan for invasion of Greece.
MULBERRY Artificial harbour
ORIENT German plan to overthrow British positions in the Middle East
OVERLORD. Liberation of France, 1944
PILGRIM Occupation of Canary Islands
*PUNISHMENT German bombing of Belgrade
ROUND-UP Liberation of France, 1943 (subsequently changed to OVERLORD)
SCORCHER Defence of Crete
*SEA LION· German plan for invasion of Britain
SUPERCHARGE. Relief of Australians in Tobruk
SUPER-GYMNAST Anglo-American occupation of French North Africa.
TIGER. Passage of part of convoy W S 8 through the Mediterranean.
TORCH Anglo-American operations against French North Africa
TRUNCHEON Combined raid on Leghorn.
WHIPCORD Plan for invasion of Sicily.
WORKSHOP Capture of Pantelleria.

APPENDIX C

PRIME MINISTER'S PERSONAL MINUTES AND TELEGRAMS

JANUARY-JUNE 1941

JANUARY

Prime Minister to Sir Edward Bridges, General Ismay, and Mr Seal 1 Jan 41

With the beginning of the New Year a new intense drive must be made to secure greater secrecy in all matters relating to the conduct of the war, and the following points should have your attention You should consider them together and report to me

Renewal of the cautions issued a year ago against gossip and talk about Service matters. Probably a new set of posters is required to attract attention

2 Renewal of the orders which were then issued to all departments.

3 Severe further restrictions on the circulation of secret papers, especially those relating to operations, strength of the armed forces, foreign policy, etc Every department should be asked to submit proposals for restricting the circulation of papers This is all the more important on account of the ever-increasing elaboration of Government departments and the Whitehall population

4 The use of boxes with snap locks is to be enforced for all documents of a secret character / Ministers and their private secretaries should have snap-lock boxes on their desks, and should never leave confidential documents in trays when they are out of the room

5 Boxes should always be snapped to when not immediately in use Access to rooms in which confidential secretaries and Ministers are working should be restricted wherever possible, and ante-rooms provided into which visitors can be shown

6 A small red star label should be devised to be placed on most secret papers—*i e*, those dealing with operations and the strength of the armed forces It is not necessary for all the private secretaries in the office to read these starred documents They should always be circulated in locked boxes, and transferred immediately to other locked boxes for my use and for the use of Ministers

7 A restriction of telegrams relating to future operations is to be made Sometimes lately I have received an account of future operations where the name of the place is mentioned as well as its future code-word This happened in the case of "Influx" yesterday All such

documents which contain the name of the place and the code-word should be collected and either destroyed by fire or put in a safe

8. Ministers should be requested to restrict as far as possible the circle within which it is necessary to discuss secret matters. It is not necessary for Parliamentary Private Secretaries (unless Privy Councillors) to be informed more than is necessary for the discharge of their Parliamentary and political duties.

9 We are having trouble through the activities of foreign correspondents of both sexes. The disclosures of Engel published in to-day's papers are a capital example. Proposals should be made for restricting the facilities accorded to them in obtaining confidential information. It must be remembered that everything said to the American Press is instantly communicated to Germany, and that we have no redress

10 The wide circulation of Intelligence Reports and the general tendency to multiply reports of all kinds must be curtailed Each department connected with the war should be asked to submit a report showing what further restrictions and curtailments they propose to introduce in the New Year Some time ago the late Cabinet decided that Ministers not in the War Cabinet should submit beforehand speeches on the war, or references in speeches to the war, to the Minister of Information. This has apparently fallen into disuse Let me have a report as to what is happening. A more convenient method might be that Ministers wishing to refer to these subjects should consult General Ismay as representing the Minister of Defence beforehand No officials who have, for instance, been on missions abroad should make public statements concerning their work without previous Ministerial approval

11. I have already dealt with the circulation of secret information to friendly Attachés, and we have restricted the character of the information This process should continue—the bulk of the documents circulated being made up by interesting padding such as might well appear in the newspapers.

12. The newspapers repeatedly publish—mostly with innocent intentions—facts about the war and policy which are detrimental Where these have not been censored beforehand a complaint should be made afterwards in every case. The Ministry of Information should report what they are doing

Pray consider all these matters and let me know of any others that occur to you, and advise me on how these points are to be made, and through what channels, to the various authorities affected.

Prime Minister to Colonel Jacob 3 Jan 41

I presume that this [German] corps will be most carefully scrubbed and re-scrubbed to make sure no Nazi cells develop in it I am very

strict discipline, instead of remaining useless in concentration camps, but we must be doubly careful we do not get any of the wrong breed

Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 3 Jan 41
(Copies sent to Minister of Supply and Minister of Shipping)

I was greatly distressed at the loss of the cargo of the *City of Bedford* It is the heaviest munitions loss we have sustained Seven and a half million cartridges is a grievous blow. It would be better to disperse these cargoes among more ships

2 I presume you have inquired into the causes of this collision, and of the two in-coming, out-going convoys being routed so close together. I must again emphasise the gravity of the loss.

Prime Minister to Sir Edward Bridges 4 Jan 41

Let me have a list of all committees of a Ministerial character forming part of the Central Government, with any offshoots there may be.

2 Ask each department to furnish a list of all the committees of a departmental nature which exist at the present time

3 This information is the prelude to a New Year's effort to cut down the number of such committees

Prime Minister to Sir Edward Bridges 4 Jan 41

The Committee on War Aims has largely completed its work in the draft statement which it has drawn up, and which should now be circulated to the Cabinet In any case, war aims is quite a different matter from the reconstruction of this country, which is entrusted to the Minister without Portfolio . We must be very careful not to allow these remote post-war problems to absorb energy which is required, maybe for several years, for the prosecution of the war

(Action this Day)
Prime Minister to General Ismay, for General Loch and others concerned 4 Jan 41

In the photo-electric [P E] fuze* the greatest interest attaches to high-altitude work against machines flying over 10,000 feet which are not dive-bombing but trying to hit H M ships or land targets, perhaps with improved bomb-sights It is desired to be able to burst salvoes of eight or more in close proximity to the enemy aircraft with fatal results Even if this could be achieved only in clear, good weather it would be of the highest advantage, as important operations would be arranged to seek that weather.

2 Is this high-altitude work being pressed to the full, both in the manufacture and in the Research Training sphere? Are the officers

* P E an early type of proximity fuze

original purpose, and this may well be achieved both by P.E. and A.D., but the emphasis must now be placed upon high-altitude work.

3. This also applies to the A.D. fuze firing the aerial mines at the highest altitudes of all. It is in this direction that the highest tactical and operational results will be achieved.*

Prime Minister to Home Secretary and Minister of Health 4 Jan. 41

What happens in the case where a shelter is not safe, but is nevertheless occupied, as many are? The ruling should be, I think, that every shelter that is occupied, whether safe or not, must be under the responsibility of the Minister of Health for its internal arrangements, and that there should be no distinction between approved and unapproved shelters. The Minister of Health must *act* wherever the shelter is used. On the other hand, as shelter accommodation increases and improves the Minister of Home Security would naturally be closing down the most unsafe ones.

Pray let me know that this view is correct.

Prime Minister to S. of S. for Foreign Affairs and Minister for Economic Warfare 5 Jan. 41

My message to Italy was deliberately designed to separate the Italian people from the Fascist régime and from Mussolini; and now that France is out of the war I certainly intend to talk rather more about the Nazis and rather less about the Germans. We must not let our vision be darkened by hatred or obscured by sentiment.

A much more fruitful line is to try to separate the Prussians from the South Germans. I do not remember that the word "Prussia" has been used much lately. The expressions to which I attach importance and intend to give emphasis are "Nazi tyranny" and "Prussian militarism".

(*Action this Day*)
Prime Minister to Minister for Works and Buildings 6 Jan. 41

(Minister of Health to see.)

The great increase in the destruction and damage to house property makes it all the more necessary that you should regard emergency first-aid work to buildings slightly damaged as the most important task. Please let me have a weekly report of what you are doing in this respect. I continue to see great numbers of houses where the walls and roofs are all right, but the windows have not been repaired, and which are consequently uninhabitable. At present I regard this as your No. 1 war task. Do not let spacious plans for a new world divert your energies from saving what is left of the old.

* A.D., a rocket and parachute device for use against aircraft.

You spoke to me the other day about the length of telegrams I feel that this is an evil which ought to be checked Ministers and Ambassadors abroad seem to think that the bigger the volume of their reports home the better is their task discharged All kinds of gossip and rumours are sent, regardless of credibility The idea seems to be to keep up a continued chat which no one ever tries to shorten I suggest that you should issue a general injunction, but that in addition telegrams which are unduly verbose or trivial should be criticised as such, and their authors told "this telegram was needlessly long" It is sheer laziness not compressing thought into a reasonable space I try to read all these telegrams, and I think the volume grows from day to day

Please let me know what can be done

Prime Minister to Secretary of State for War and C I G.S. 12 Jan 41

The mechanisation of the Cavalry Division in Palestine is a distressing story These troops have been carried out with their horses and maintained at great expense in the Middle East since the early months of the war Several months ago it was decided by the War Office that they should be mechanised I gladly approved Now I learn, as the result of one of my own inquiries, that nothing has been done about this, that the whole division is to be carted back again home—presumably without their horses—and that this is not to begin until June 1 After that there will be a further seven or eight months before they will be of any use. Thus 8,500 officers and men, including some of our finest Regular and Yeomanry regiments, will, except for security work, have been kept out of action at immense expense for two years and five months of war

2 Let me have a calculation of the cost involved in:

(*a*) Sending these troops to the Middle East
(*b*) Maintaining them with rations, pay, and allowances from the beginning of the war to the beginning of March 1942
(*c*) Transporting them home again

3 There must be many better uses to which these troops could be put in the Middle East Having regard to their high intrinsic quality, they should very quickly acquire new additional training It is not necessary that the organisation and establishment should follow exactly the same patterns approved for mechanised or armoured formations at home The establishments of the independent motorised brigade groups here might be more suitable than those of a division The Household Cavalry in the spring of 1918 or autumn of 1917 were very rapidly converted into a machine-gun regiment, and achieved their

training in a couple of ...
Cavalry Division should not train in Palestine, where at any rate they count as local security troops. One would have thought it was the very country.

4 Some of the captured Italian tank equipment might be taken over by these highly competent Regular or quasi-Regular units Alternatively, or in partial substitute, we have a good supply of Bren-gun carriers, 200 of which could certainly be sent out.

5. There are various other solutions. They might be converted into an infantry division, as several cavalry divisions were in the last war, or formed, perhaps, into independent brigade groups In this case they would be drafted up to full strength as infantry battalions. If this is not acceptable they could be sent to India to liberate an equal number of Regulars in battalions serving there—say eight battalions Or, again, they might form the kernel of a force to dominate Iraq One thing is certain now that we are starving ourselves to send men to the East with ever-dwindling shipping, there can be no question of bringing this large body of men and these invaluable cadres home, especially perhaps at the very moment when the fighting in the Middle East is at its height.

Prime Minister to Secretary of State for Air and C A.S. 12 Jan 41

Must the operational reports from the Middle East be of their present inordinate length and detail? It surely is not necessary to describe minutely what happened in every individual raid of a dozen aircraft over the enemy's lines and encipher and decipher all this at each end, and cable it, thus congesting the lines.

I suggest that the average weekly wordage of these routine telegrams should be calculated for the last two months and Air-Marshal Longmore asked to reduce them to, say, one-third their present length

The Foreign Office are also asking for condensation of their messages

Prime Minister to Home Secretary 12 Jan 41

This kind of propaganda* ought not to be allowed, as it is directly contrary to the will of Parliament, and hampers the maintenance of resistance to the enemy I do not see why if Mosley is confined subversives and Communists should not be equally confined The law and the regulations ought to be enforced against those who hamper our war effort, whether from the extreme Right or the extreme Left That is the position which the Conservative Party adopt, and I think it is a very strong one, and one of which the country as a whole would approve I know it is your wish to enforce an even justice, and if you

* Communist circular addressed to all active working men and women

support.

Prime Minister to General Ismay, for C O S. Committee 13 Jan 41

I do not think it would be wise to attack these smaller islands of the Dodecanese. They are no use in themselves, they are not necessary for the attack upon the larger islands now that we hold Crete. Stirring up this quarter will put the enemy on their guard, and will bring about the disagreement between Greece and Turkey, which has become only too apparent as we have explored tentatively this subject. The Defence Committee have not approved these operations.

Prime Minister to Dominions Secretary 17 Jan 41

I have read these two documents, which do not seem to me to add very much to what we already know or what is obvious in the existing Southern Irish situation. The strategic position has been repeatedly examined, and the Admiralty have a paper on the urgent need for the Irish bases, as well as for airfields on the south and west coasts. I am asking General Ismay to see that this information is placed before you.

I do not consider that it is at present true to say that possession of these bases is vital to our survival. The lack of them is a grievous injury and impediment to us. More than that it would not *at present* be true to say. I could not, however, give the assurance suggested by Mr Dillon that in no circumstances should we "violate Irish neutrality". I do not personally recognise Irish neutrality as a legal act. Southern Ireland having repudiated the Treaty, and we not having recognised Southern Ireland as a sovereign State, that country is now in an anomalous position. Should the danger to our war effort through the denial of the Irish bases threaten to become mortal, which is not the case at present, we should have to act in accordance with our own self-preservation and that of our Cause. Meanwhile the policy which we recently decided on should be carried out as you are doing, and the influence of the United States must be invoked by every means open to us. It is possible that Mr. Hopkins, with whom I have had long talks, will himself visit Ireland, and I am of opinion that his visit might be useful. I do not think the time is ripe yet for you to visit Ireland, unless you receive a direct invitation from Mr de Valera. It would be better to see how the economic and shipping pressures work. At any time the slow movements of events in Ireland may be violently interrupted by a German descent, in which case with or without an invitation we should have to go to turn out the invaders. For the present therefore I see no policy other than the one we have recently adopted.

If you approve I should like Livorno to be called in the English—Leghorn; and Istanbul in English—Constantinople. Of course, when speaking or writing Turkish we can use the Turkish name; and if at any time you are conversing agreeably with Mussolini in Italian Livorno would be correct

And why is Siam buried under the name of Thailand?

(Action this Day)
Prime Minister to General Ismay, for C.O S. Committee and Home Secretary 19 Jan 41

Many and increasing indications point to the early use of gas against us The armed forces have been kept fully abreast of these possibilities, and are accustomed to use their masks and eye-shields. It would be well however to issue renewed instructions to all commands, and also to consider whether any new filter is required for possible new toxic gases.

Let me have a report on this (one page).

2 But what is the condition of the gas masks in the hands of the civil population? Have they been overhauled regularly? Very few people carry masks nowadays. Is there any active system of gas training? It appears that the whole of this has become extremely urgent. Let me have an early report of the present position, and what is being done to bring it up to full efficiency. This report should also cover the decontamination system, and staffs.

3 Finally, it is important that nothing should appear in the newspapers, or be spoken on the B B C., which suggests that we are making a fuss about anti-gas arrangements, because the enemy will only use this as part of his excuse, saying that we are about to use it on him I am of opinion nevertheless that a nation-wide effort must be made

Prime Minister to Commander-in-Chief Home Forces 20 Jan 41

How would you propose to deal with a limited number of large amphibian tanks which got ashore and roamed about? Am I right in supposing that your light forces would surround them and follow them about at the closest quarters, preventing the crews from refuelling or getting food and sleep, or from ever leaving the armour of their vehicles? If, say, not more than forty of these tanks came ashore, would they be followed and hunted to death in this manner, apart from anything that artillery, mines, and tank traps could do?

Anyhow, please let me know what would be your plan

Prime Minister to Lord President of the Council 21 Jan 41

I see that deliveries of coal to London during recent weeks have been running at 250,000 tons per week It appears, if the Mines Department's

unless 410,000 ...
March.

I should be glad to know whether you agree with the estimates of the Mines Department, and, if so, what steps you propose to take to increase deliveries by the required amount. I find it hard to understand why deliveries by rail during the last three months should have fallen to only three-fifths of last year's figure

Prime Minister to Minister of Health 21 Jan 41

Is it not possible to reduce more rapidly the number of homeless people in the London rest centres? I am hoping that this week will show that they have practically all been dispersed. One cannot tell when another heavy attack may not be made upon us, and a quiet week should be a precious gain

Prime Minister to General Ismay, for C.O.S Committee 22 Jan 41

I should like to feel sure that the Chiefs of Staff have carefully considered whether this operation against the Lofoten Islands is likely to stir up the Norwegian coast and lead to reinforcements of the German forces in the peninsula It seems to me that as the attack is on islands, and obviously connected with blockade measures, this danger is obviated There would be no need to go on to the mainland, as I understand the operation

Pray advise me *

Prime Minister to C.A S , First Sea Lord, and Fifth Sea Lord 23 Jan 41

(Copy sent to First Lord and Secretary of State for Air.)

I wish to draw your attention to the prime importance of arranging as speedily as possible for a dozen or more Grumman Martletts or converted Brewsters being embarked upon aircraft-carriers operating in the Mediterranean I have pressed for this for some time, and now the C.-in-C. Mediterranean, 824, says quite definitely that "Fulmars are really not fast enough". It is absolutely necessary to have a comparatively small number of really fast fighter aircraft on our carriers. Without these the entire movement of our ships is hampered I am well aware of the difficulties of non-folding wings, absence of arresting hooks, etc , but I cannot easily believe that they cannot be solved before April

* A highly successful raid was carried out in the Lofoten Islands, in Northern Norway, on March 4, 1941, by two Commandos Important enemy supplies and much shipping were destroyed, 200 German prisoners taken, and 314 Norwegian volunteers brought safely out

In a second raid, carried out on December 26, the port was again occupied temporarily by our forces

important relief and advantage. Surely a few dozen could be converted to folding wings by hand-labour as a special job.

I am not satisfied that the urgency and significance of this comparatively small change is realised.

Prime Minister to Minister of Supply 23 Jan 41

Rifles (New). Since August the production of rifles has fallen off as follows:

August	.. ..	9,586
September	.. ..	8,320
October	.. ..	7,545
November	.. .	4,363
December	.. ..	4,743 (mainly from existing stocks of component parts)

I understand that this fall is due to raids on Small Heath, Birmingham, which completely stopped production. Pray inform me what progress has been made towards resuming production

2. *A.A. Mountings, 3.7-inch.* Production of 3.7-inch A.A. mountings, which control the assembly of equipment, was at the rate of about eighty per month in September, October, and November. In December however it was down to 67 per cent., which I am informed is a repercussion of the raids on Birmingham and Coventry How will the forecasts of deliveries be affected?

Prime Minister to General Ismay, for C O.S Committee 26 Jan 41

I was much concerned when I visited Dover on Friday to find the slow and halting progress in the installation of the latest and best batteries

(1) Some guns which are ready-mounted cannot be brought into action because ancillary material, such as sights and control instruments, has not been delivered A suggestion of the Controller indicated that these guns could be brought into action quickly by the intelligent improvisation of simple means of control, workable, although not so technically satisfying as those to be supp' .d eventually.

(2) Some guns cannot be completed for action owing to delay in the work involved in anchoring the mountings, reasons given for this being lack of shuttering timbers for concreting, inefficient labour, and the weather.

As regards (1), the attached Progress Report shows the situation, and it is difficult to escape the conclusion that there is a lack of initiative on the spot when such a bald statement as "No dates given for delivery" is accepted.

to demand some [illegible]
referred to the Ministry of Labour.

I was informed that all the causes of delay had been reported through the "usual channels", but as far as those on the spot were aware nothing very much seems to have happened. It would seem best therefore to start from the other end of the "usual channels" and sound backwards to find where the delay in dealing with the matter has occurred.

I gathered from Admiral Ramsay that in his opinion the lack of drive behind this work was due to the fact that no one senior officer seemed to regard the whole matter as his personal interest, although several, somewhat less senior, were active in their own particular spheres.

The Controller said that he could deal with the two points raised about deficiencies in ammunition—*i.e.*, shortage of 5.5-inch fuzes and 6-inch cartridges—but the report of this too seems to be grounded in mid "usual channels".

The completion of these batteries is of the utmost urgency, and I request the Chiefs of Staff to give all the necessary instructions and to call for a weekly report to be forwarded to me.

Prime Minister to Dominions Secretary 31 Jan 41

I agree with the general line of your talk [with Mr. Dulanty]. I could in no circumstances give the guarantee asked for, and for the reasons you state.

About arms. If we were assured that it was Southern Ireland's intention to enter the war we would of course, if possible beforehand, share our anti-aircraft weapons with them, and make secretly with them all possible necessary arrangements for their defence. Until we are so satisfied we do not wish them to have further arms, and certainly will not give them ourselves.

The concession about Lough Swilly is important and shows the way things are moving. No attempt should be made to conceal from Mr. de Valera the depth and intensity of feeling against the policy of Irish neutrality. We have tolerated and acquiesced in it, but juridically we have never recognised that Southern Ireland is an independent sovereign State, and she herself has repudiated Dominion status. Her international status is undefined and anomalous. Should the present situation last till the end of the war, which is unlikely, a gulf will have opened between Northern and Southern Ireland which it will be impossible to bridge in this generation.

Prime Minister to Minister of Economic Warfare 1 Feb 41

(Copies to Chancellor of the Exchequer, Minister of Supply)

You have no doubt been considering what we can do to prevent Germany obtaining supplies of copper, in view of the fact that although she may be able to substitute aluminium she may well become subject to a severe stringency in the two metals taken together

I understand that considerable excess capacity exists in the South American copper-mines. I am told that we have no evidence that copper has proceeded from South America to Germany, but that last year South America exported about 70,000 tons to Russia and 150,000 tons to Japan, whose stocks are estimated at a year's consumption. As soon as Germany exhausts her stocks it is obvious that she will make every effort to obtain South American copper, and it is vital to take measures in advance to prevent Japan and Russia building stocks and to prevent Germany obtaining access to the surplus capacity which exists in Chile

Apparently we are importing about 600,000 tons of copper from Canada, Rhodesia, South Africa, and the Belgian Congo As these sources are under our control we should be able to divert purchases to South America without danger that Germany would obtain supplies from the sources we gave up

I understand that you have been giving consideration to this problem, and that the Treasury is doubtful if the expenditure of dollars on pre-emptive purchase is justifiable Will you let me have a report on your plans?

Prime Minister to General Ismay, for C O.S. Committee 2 Feb 41

"Marie" [Jibouti] might be an operation of the greatest value The Senegalese should not be sent into Abyssinia, but should be kept till the Foreign Legion battalion arrives. Where would they be kept, and how?

One must consider that at any moment Weygand might move our way, in which case the Free French troops could go into Jibouti to animate the converted garrison, and even begin operations against the Italians

Another favourable situation might be reached if, as a consequence of our advance in Eritrea, the British forces were able to get into touch with the French colony at Jibouti. Anyhow, with these favourable possibilities in the wind it would be a great pity not to keep our Free French force in hand As for the political consequences, they can only be judged a few days before launching operations

cross-country run is enforced upon all in this division, from generals to privates? Does the Army Council think this a good idea? It looks to me rather excessive. A colonel or a general ought not to exhaust himself in trying to compete with young boys running across country seven miles at a time The duty of officers is no doubt to keep themselves fit, but still more to think for their men, and to take decisions affecting their safety or comfort Who is the general of this division, and does he run the seven miles himself? If so, he may be more useful for football than war Could Napoleon have run seven miles across country at Austerlitz? Perhaps it was the other fellow he made run In my experience, based on many years' observation, officers with high athletic qualifications are not usually successful in the higher ranks

Prime Minister to General Ismay, for Secretary of State for War and C I G.S 4 Feb 41

(Copy to C.-in-C. Home Forces.)

The statement that one division could not be transferred from Great Britain to Ireland in less than eleven days, no matter how great the emergency nor how careful the previous preparations, is one which deserves your earnest attention When we remember the enormous numbers which were moved from Dunkirk to Dover and the Thames last May under continued enemy attack it is clear that the movement of personnel cannot be the limiting factor The problem is therefore one of the movement of the artillery and vehicles This surely deserves special study Let me see the exact programme which occupies the eleven days, showing the order in which men, guns, and vehicles will embark. This would show perhaps that, say, nine-tenths of the division might come into action in much less than eleven days. Or, again, a portion of the mechanical transport, stores, and even some of the artillery, including Bren-gun carriers, might be found from reserves in this country and sent to Ireland in advance, where they would be none the less a reserve for us, assuming no need in Ireland arose Surely now that we have the time some ingenuity might be shown in shortening this period of eleven days to move 15,000 fighting men from one well-equipped port to another—the voyage taking only a few hours If necessary some revision of the scale of approved establishments might be made in order to achieve the high tactical object of a more rapid transference and deployment.

We must remember that in the recent training exercise "Victor" five German divisions, two of which were armoured and one motorised, were [supposed to be] landed in about forty-eight hours in the teeth of strenuous opposition, not at a port with quays and cranes,

eleven days required to shift one division from the Clyde to Belfast. We have also the statement of the Chiefs of Staff Committee that it would take thirty days to land one British division unopposed alongside the quays and piers of Tangier. Perhaps the officers who worked out the landings of the Germans under "Victor" could make some suggestion for moving this division into Ireland via Belfast without taking eleven days about it. Who are the officers who worked out the details that this move will take eleven days? Would it not be wise to bring them into contact with the other officers who landed these vast numbers of Germans on our beaches so swiftly and enabled whole armoured divisions and motorised troops to come into full action in forty-eight hours?

Evidently it would be wiser to keep open the option of moving this division as long as possible, and in order to do this we must have the best plan worked out to bring the largest possible portion of the division into action in Ireland in the shortest possible time. I am not prepared to approve the transfer of the division until this inquiry has been made. There must be an effort to reconcile the evident discrepancies as between what we assume the enemy can do and what in fact we can do ourselves.

Prime Minister to Home Secretary 5 Feb 41

I think it would be wrong to use soldiers or men of military age for smoke-protection purposes. You ought to try to do your best with over-age volunteers, or women or young persons. Pressure upon effective man-power will be very heavy in the near future. I could not support your claim to the War Office as at present advised.

(*Action this Day*)

Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 5 Feb 41

A number of convoys with most important munitions cargoes are now approaching. I know what your stresses are, and I feel sure you will make every effort possible.

2. We have now the gift announced of 250,000 more rifles and 50 million rounds—.300. To get this here quickly and safely is a prime object. Pray go into the matter with others concerned and let me know what is possible. I cannot bear to see more than 50,000 rifles or 10 million rounds in any one ship. Less if possible.

Prime Minister to Minister of Agriculture 6 Feb 41

I observe that you fear that anything up to 500,000 tons of Northern Ireland potatoes may have to be destroyed as unsaleable, the heavy decline in pig population having limited the stock-feeding outlet.

200,000 tons, [illegible]

It seems a great pity that there should have been this great reduction in the number of pigs owing to the fear of shortage of feeding stuffs, if there really is this large surplus. I trust that some way will be found of utilising it. We cannot afford in these days to throw away hundreds of thousands of tons of edible material.

Prime Minister to C.A.S. 6 Feb 41

Some time ago we asked Greece to prepare airfields for fourteen squadrons, and this work is still going on. Then, after various interchanges, you proposed sending ten squadrons to Turkey, which the Turks have not yet accepted, but which they may accept. The President has cut short his journey on my message. Suppose they do accept, and after that Greece demands further aid beyond the five squadrons allotted, what are you going to do? I am afraid you have got to look at this very seriously. I am in it with you up to the neck. But have we not in fact promised to sell the same pig to two customers? We might have a legal quibble about the word "promise", but I think we have got to look into this matter rather more deeply than that. Let me know what you feel about it and what you think can be done.

Nothing was said about time or priority, so we have that to veer and haul on.

(Action this Day)

Prime Minister to Minister of Shipping 11 Feb 41

Is it true that the steamship *New Toronto*, which arrived at Liverpool, was ordered to proceed north-about to London, and is it true that this order was only cancelled as a result of the protest of the captain, who pointed out the enormous value of the cargo, which contained, *inter alia*, 19,677 sub-machine guns and 2,456,000 cartridges? The arrival of these ships with large consignments of invaluable munitions ought to receive your personal attention in every case.

Pray give me a report. I attach my copy of the expected arrivals, on which I always follow the movements of these important cargoes. The ship referred to is on page 5.

Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 12 Feb 41

I should be glad to have a report every three days on the state of the *Furious*. Night and day work is required to fit her for her duties, which are of the highest urgency.

Prime Minister to Foreign Office 12 Feb 41

We have made Weygand great offers, to which we have had no

not be one of appeal to him. Until he has answered through some channel or other the telegram I sent him he ought not to be given supplies. Not one scrap of nobility or courage has been shown by these people so far, and they had better go on short commons till they come to their senses.

The policy of occasional blockade should be enforced as naval means are available.

(Action this Day)

Prime Minister to General Ismay and Sir E. Bridges 12 Feb 41

I see a new marking [on telegrams], "Officers Only" I do not think this is suitable, considering how many people who are not officers must be privy to the most secret matters I should like to know the reasons which have led up to starting this, but at present I am entirely unconvinced that it should continue.

Prime Minister to Lord President of the Council 12 Feb 41

There is too much truth in what Dr. Burgin says [in his letter of complaint about the State as an employer] for him to be put off by the usual official grimace I suggest that you see him and deal with his proposition. I hear a great many cases where the Government absolutely fail to pay individuals what is admittedly their due It seems to me that Dr Burgin's letter might prove a very good peg for you to hang a real stirring-up of these departments upon When one is in office one has no idea how damnable things can feel to the ordinary rank and file of the public Dr. Burgin is a very able man and has experience. Could you not draw him out and see what suggestions he has to make, and also what examples he has to give of the shortcomings which I fear with too much justice he alleges?

Prime Minister to Minister of Supply, for Import Executive 14 Feb 41

I am very anxious to send a complete infantry division, with their guns and essential vehicles, to the Middle East in Convoy W S 7 The men can be fitted in by displacing others, but the guns and vehicles will require extra ships. I am told that eight mechanical transport ships will be wanted over and above those required to carry the 450 vehicles which the War Office already wish to send in the convoy

I understand that loading would have to start about February 21 if these ships are to arrive in Egypt at the same time or shortly after the convoy. Pray consider how these eight ships could be found, and let me have a report of what can be done and at what cost in imports, but take no action in the meanwhile

defences] But this was certainly not the opinion of the responsible officers I met on the spot. I was distressed by the vigour of their complaints, and the evident feeling behind them Let me have a report each week from the Commander of the Corps Coast Artillery, and let it pass through your office, with any comments you may wish to make

Prime Minister to Sir Edward Bridges 15 Feb 41

(Circulate to War Cabinet and Service Ministers only, by my special directions)

We went through all this [vulnerability of Whitehall to air attack] last September, and came to the conclusion that we could fight it out in London. Meanwhile many improvements have been made, although the buildings are far from secure The difficulties of moving are very great indeed, but certainly the alternative citadels should be brought to a live state of readiness by March 1. I have been concerned that there is no kind of protection for G H Q Home Forces except that afforded by the fairly strong structure of the building in which they live.

How many bombs have been thrown within a thousand yards of the Central War Room? I do not myself agree that no serious attempt has been made, but we should certainly be prepared for a new assault with 2,000- and even 5,000-pound bombs.

More speed and energy should be put into covering G.H.Q.

Prime Minister to Minister of Economic Warfare 16 Feb 41

(Minister of Information to see)

I agree about co-ordinated leaflets [for propaganda in France and Belgium], but all depends upon an intimate liaison between you and the Ministry of Information on the one hand and de Gaulle on the other We must not tie de Gaulle up too tightly. We have never received the slightest good treatment or even courtesy from Vichy, and the Free French movement remains our dominant policy I am sure if you consult with de Gaulle or his people all will be satisfactory I think he is much the best Frenchman now in the arena, and I want him taken care of as much as possible

(Action this Day)

Prime Minister to Secretary of State for War and V C I G S 17 Feb 41

I do not think it is desirable to move this division [to Northern Ireland], especially in view of the possibilities of our sending the 50th away.

include: (a) A reconsideration of the ...
Mersey as well as the Clyde. Are there no smaller ports from which embarkation could be made? (b) Would it not be possible to arrange the move on the basis of a precautionary period of four days in which additional M.T. ships could be assembled? (c) The objections about moving part of the vehicles deserves further study For instance, the troops might have issued to them an additional quantity of transport while in England to break it in, and then either this or the old could be sent to Ireland. I cannot believe that there is no floating reserve of transport capable of providing for such a small need as this A little combing out and tightening up of the Mechanical Transport depots, Slough, etc, would certainly yield what is required.

3 We must not be content with anything less than a saving of five days out of the eleven during which the division will be out of action on both sides of the Channel. This period must be shortened to six days, but a reasonable precautionary notice might be expected

Prime Minister to Secretary of State for War 17 Feb 41

I deeply regret the whole story of this fine body of men [the Cavalry Division in Palestine], and that the War Office can devise nothing better than to bring them all home in June to begin a training which will keep them so long out of effective action.

What exactly does the C I G S mean by "late autumn"?

Meanwhile the division will have to render whatever service is necessary in guarding the Suez Canal, maintaining order, etc, or, if necessary, escorting prisoners, so as to liberate British battalions for active service.

The 1st Cavalry Division was redesignated 10th Armoured Division on July 23, 1941, but it did not appear in the field for a long time Its tanks were taken from it during the spring of 1942 to replace the battle losses of the 1st and 7th Armoured Divisions. In August 1942 its Headquarters and one brigade (8th) went up to the front and took part in the battle of Alam Halfa. The other brigade (9th) came up later and was attached to the New Zealand Division, taking part in the Alamein battle

Prime Minister to General Ismay 17 Feb 41

What are the arrangements in British Columbia for dealing with the Japanese colony there should Japan attack? The matter is of course for the Canadian Government, but it would be interesting to know whether adequate forces are available in that part of the Dominion About thirty years ago, when there were anti-Japanese riots, the

Prime Minister to Foreign Office

I regard these developments [about appointment of Admiral Darlan as successor to Marshal Pétain] with misgiving and distrust We have received nothing but ill-treatment from Vichy It would have been better to have had Laval, from our point of view, than Darlan, who is a dangerous, bitter, ambitious man, without the odium which attaches to Laval. I think it is important at the moment to be stiff with these people, and to assert the blockade whenever our ships are available In the meantime an end should be put to the cold-shouldering of General de Gaulle and the Free French movement, who are the only people who have done anything for us, and to whom we have made very solemn engagements The emphasis should be somewhat shifted.

Prime Minister to Sir Alexander Cadogan 17 Feb 41

Please draw attention again to Mr Eden's injunction against the length of telegrams sent to the Foreign Office by their representatives abroad.

The zeal and efficiency of a diplomatic representative is measured by the quality and not by the quantity of the information he supplies He is expected to do a good deal of filtering for himself, and not simply to pour out upon us over these congested wires all the contradictory gossip which he hears. So much is sent that no true picture can be obtained. One cannot see the wood for the trees. There is no harm in sending "background" on by bag

Prime Minister to C O S Committee, Secretary of State for War, and V C I G S 17 Feb 41

The term "division" must not become a stumbling-block A division is a tactical unit of all arms for use in its integrity against the enemy Divisions are joined together to form corps, armies, and groups of armies, with appropriate troops for the larger formations. These characteristics do not arise where there is no prospect of using a division in its integrity, or as a part of a larger formation Although for administrative purposes a divisional command may be bestowed upon a number of troops equal to a division, who have special duties assigned to them, this should not mislead us

2 We speak, for instance, of a "division" in Iceland, but it would be absurd to treat this division as similar to those which would operate against the Germans. We now know what this division has got to do, and how it is distributed It is divided into the garrisons of several posts at landing-places in a considerable country, and no doubt should

communication services should be organised and accounted for on a scale suited to the actual task of these troops in Iceland. It should properly be called "the Iceland Force", and would in no way resemble the conventional establishment of a division. It might want more of one thing and less of another

3 The African Colonial divisions ought not surely to be called divisions at all. No one contemplates them standing in the line against a European army They comprise a large body of West and East African riflemen organised in battalions, and here and there, largely for administrative purposes, in brigades. We can now expect that the Italians will in a few months be liquidated in North-East Africa. What enemy then will oppose these three African Colonial divisions? Anyone who knows these vast countries can see that these African "divisions" will be distributed in small posts and garrisons, with a number of mobile columns comprising armoured cars, etc. The idea of their being supplied with divisional and corps artillery, together with a share of the lines of communication troops on the British scale, is not sensible They cannot be used so far north as Libya on account of the cold. We cannot contemplate holding down Abyssinia once it has been "liberated" Indeed, one imagines the whole of North-East Africa returning very rapidly to peace-time conditions Therefore I cannot accept these three African Colonial divisions as such. They are, indeed, only miscellaneous units of the African Defence Force

Prime Minister to V C I G.S. and Director of Military Operations 17 Feb 41

General Wavell has thirty-one British Regular battalions, of which, as far as I can make out, only about fifteen are incorporated in divisional formations Pray correct me if I am wrong. It is indeed astonishing that he should be put to these straits to find a few battalions for Crete and Malta. If the West African Brigade were transferred from Kenya to Freetown two British battalions now degenerating there could come forward to the Nile Army.

The use of three battalions to escort prisoners to India, the whole Yeomanry and Regular Cavalry Division unemployed in Palestine, large numbers of Australian troops for which we are told there is no equipment on the Regular scale of establishment, the Polish Brigade, the drafts awaiting incorporation in units which have not yet suffered any casualties—all these are large resources if ingeniously and economically used

Are there any British battalions in East Africa?

Please give me your aid in the study of these aspects.

unload or divert the New Toronto [illegible]
she carried. I always keep check myself personally of the approaching ships which are carrying large consignments of munitions Do you not get these lists in good time, and do you not yourself personally watch over the fate of these vitally important cargoes? If not, please make arrangements to do so, and report to me when these arrangements are made and what they are

Prime Minister to Minister of Labour and National Service 20 Feb 41

(Copy to Minister of Supply)

We are very short of ammunition Production is held up entirely on account of filling, which in turn is held up on account of labour With our present factories we could increase the ammunition output two-and-a-half-fold by mid-May if we could provide the labour to run them

The additional labour required is

	By March 31	*By Mid-May*
Skilled males	340	940
Other males	9,100	20,100
Females	22,500	40,900
Total (say)	32,000	62,000

Please inform me what difficulties stand in the way of providing this labour and what measures are being taken to overcome them

Prime Minister to Minister of Supply 20 Feb 41

It is satisfactory that arrangements have now been made to link the shipping figures more closely to those on which plans for consumption will be based

Meanwhile it appears that the rate of delivery of steel to consumers during the first five weeks of the current quarter has been no higher than during the last three quarters, despite the greater need

I understand that imports of steel during the last seven months have been equivalent to 2.3 million finished tons and output to 5 1 million finished tons, while deliveries to consumers have been only 6 1 million finished tons Would not the position be greatly relieved if some of this apparent excess of 1 3 million tons could be made available for consumption?

I see that imports of iron ore continue ahead of programme, while steel and other commodities lag behind This seems strange in view of the shipping situation.

Prime Minister to Secretary for Petroleum 21 Feb 41

The very low imports of oil previously reported for the week ended January 11 have remained low, amounting to only half what they were in January last year, and covering only half the consumption

I trust steps are being taken to draw as much oil as possible from America, thus avoiding the long haul from the Persian Gulf round the Cape It should be possible to arrange with the American producers for their customers in the East to be supplied from the Persian Gulf, Burma, and the Netherlands East Indies in return for a corresponding amount of oil being delivered to us, some arrangement being made to retain goodwill.

Prime Minister to Prime Minister of Canada 21 Feb 41

I was delighted to read your speech in the Canadian House of Commons on February 17. You are quite right to prepare men's minds for a coming shock of extreme severity. It is a comfort to think how much better prepared we are than in the autumn

Let me also tell you how encouraged everyone here was by the strong array of facts which you brought together when broadcasting on February 2 Your ships and planes are doing great work here. The air training scheme is one of the major factors, and possibly the decisive factor, in the war Your plans for the Army are of enormous help I lunched with McNaughton last week, and had very good talks with him and his principal officers about the Canadian Corps They lie in the key positions of our National Defence The Secretary of State for War, who is with me now, wishes to endorse all this, and sends his kindest regards

What a pleasure it is to see the whole Empire pulling as one man, and believe me, my friend, I understand the reasons for your success in marshalling the great war effort of Canada

Prime Minister to Secretary of State for War 22 Feb 41

The approved scale of the Army is 55 divisions plus 1 additional South African division, and minus, in my opinion, 3 African Colonial divisions, total tactical divisional units=53, of which 11 are to be armoured I see no reason to alter this target at the present time

2. During the next six months only 130,000 men are required by the Army, and the Minister of Labour is ready to supply 150,000 Would it not be prudent to take a decision governing the six months only, and review the position in four months' time, when we shall know more of the scale and character of the fighting?

3 Will you kindly give me your views upon the Minister of Labour's paper, and also some notes prepared for me by Professor Lindemann, which are to be treated as private. I am very much inclined

to a greater development of armoured divisions than we have now, but it is not necessary to take a decision at the present time, as tanks and tank guns, not personnel, are the bottle-neck

4 You may count on me to sustain the Army in every possible way, provided I am convinced that it will comb itself

Prime Minister to Sir A Cadogan 23 Feb 41

All this goes to show that we should continue to give increasing support to General de Gaulle I cannot believe that the French nation will give their loyalty to anyone who reaches the head of the State because he is thought well of by the Germans. We should reason patiently with Washington against giving any food to unoccupied France or North Africa For this purpose all the unsatisfactory feeling about the Vichy-Weygand scene should be in the hands of our Ambassador in Washington I am sure Darlan is an ambitious crook His exposure and Weygand's weakness will both, as they become apparent, inure to the credit of de Gaulle

Prime Minister to V C I G.S 25 Feb 41

Let me know what older guns they have in India now, and how many of each nature I should like the new regiments which are forming out there to train on the 25-pounders, but actually to have available for local purposes enough of the older unconverted 18-pounders I presume also that the old regiments of artillery in India not to be included in the artillery of the four divisions have also got their regular complement of guns.

Are there any reserves of guns of the older natures in India?

Prime Minister to General Ismay 26 Feb 41

Let me know the field state and ration strength of the troops in Malaya and of the garrison at Singapore, showing what military formations there are.

(Action this Day)
Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 28 Feb 41

City of Calcutta, due Lock Ewe March 2, is reported to be going to Hull, arriving March 9 This ship must on no account be sent to the East Coast. It contains 1,700 machine-guns, 44 aeroplane engines, and no fewer than 14,000,000 cartridges These cartridges are absolutely vital to the defence of Great Britain, which has been so largely confided by the Navy to the Army and the Air. That it should be proposed to send such a ship round to the East Coast, with all the additional risk, is abominable I am sending a copy of this minute to the Minister of Transport

Another ship now of great importance is the *Euriades*, due Liverpool March 3. She has over 9,000,000 cartridges

I shall be glad to receive special reports as to what will be done about both these ships

MARCH

Prime Minister to Secretary of State for War 1 Mar 41

I am relieved to hear that the 250,000 rifles and the 50,000,000 rounds of ammunition have arrived safely with the Canadian troop convoy When I raised the point of getting the Admiralty to give up the 303 rifles and take the American 300 in exchange it was proposed to me on other papers that a very much larger and better change was possible by giving the newly arrived American rifles to the static troops in Great Britain, thus liberating 250,000 303's for the Regular Army I presume this will now be done On the last occasion when we got the American rifles across we made a regular evolution of it, and had special trains waiting, and the like I now hope you will make a rapid evolution of this new windfall, so that the weapons are in the hands of those who need them at the earliest moment

Perhaps you will let me know what arrangements are being made

Prime Minister to Secretary of State for the Colonies 1 Mar 41

General Wavell, like most British military officers, is strongly pro-Arab At the time of the licences to the shipwrecked illegal immigrants being permitted he sent a telegram not less strong than this, predicting widespread disaster in the Arab world, together with the loss of the Basra–Baghdad–Haifa route. The telegram should be looked up, and also my answer, in which I overruled the General and explained to him the reasons for the Cabinet decision All went well, and not a dog barked

It follows from the above that I am not in the least convinced by all this stuff The Arabs, under the impression of recent victories, would not make any trouble now However, in view of the "Lustre" [Greek] policy I do not wish General Wavell to be worried now by lengthy arguments about matters of no military consequence to the immediate situation Therefore Doctor Weizmann should be told that the Jewish Army project must be put off for six months, but may be reconsidered again in four months The sole reason given should be lack of equipment

Prime Minister to Minister of Home Security, Minister of Information, and Secretary of State for Air 7 Mar 41

For the last two months there has been a great decline in air raids, and I do not see why the carefully considered method by which we got through the period July–November inclusive should be now cast

aside I am not aware of any "depressing effect" produced upon the public morale, and as a matter of fact I thought they were settling down very well to the job I should therefore, as at present advised, strongly deprecate change in the practice which has carried us through a very severe (and now perhaps discarded) indiscriminate attack upon the civil population Still more should I regret precise signals being given of the hits the enemy make on specific military targets. These are however my personal views, and I am quite agreeable to the whole matter being discussed again in Cabinet, should you think this necessary.*

Prime Minister to General Ismay 9 Mar 41

I am thoroughly mystified about this operation [against Castelorizzo], and I think it is the duty of the Chiefs of Staff to have it probed properly How was it that the Navy allowed these large reinforcements to be landed, when in an affair of this kind everything depended upon the Navy isolating the island? It is necessary to clear this up, on account of impending and more important operations One does not want to worry people who are doing so well for us in many ways and are at full extension, and yet it is indispensable for our success that muddles of this kind should not be repeated †

Prime Minister to General Ismay 10 Mar 41

Low-flying attack should only be a real danger on days of low cloud or mist, when our fighters cannot find the enemy The use of aerial mines hung from small balloons should be considered for the defence of factories Only 20 lb lift is required, so that quite a small balloon should be sufficient When this proposal was put forward for defending estuaries it was decided that a considerably greater altitude was required, so as to have a double-purpose defence, which has entailed the production of much larger balloons, which in turn require power winches, etc We must be content with defence up to heights of 1,000 or 1,500 feet by smaller, simpler balloons without power winches On windy days they could be replaced by kites

This method of defence is not desirable for aerodromes, since the balloons would all have to be hauled down when our own machines were taking off or landing For the defence of aerodromes therefore rockets carrying mines into the air seem particularly suited

* This is a reply to a minute from the Minister of Home Security, the Secretary of State for Air, and the Minister of Information about measures to check the spread of harmful rumours about air-raid casualties and damage

† Castelorizzo island lies midway between Rhodes and Cyprus, and forms a link in the chain reaching out from the Dodecanese towards Syria A British Commando occupied this island on February 25 after slight opposition The naval forces then withdrew to Cyprus without watching events Later heavy air attacks developed and the enemy landed reinforcements, unopposed by our naval forces It was necessary to abandon the island

(*Action this Day*)
Prime Minister to Minister of Information 10 Mar 41

Obviously there are two conditions, districts where fighting is going on and districts where it is not. The words "stay put" are wholly inapplicable to the second class, which is by far the more numerous, probably 99-100ths of the country. For these districts the order should be "Carry on".

Neither is the expression "Stay put" really applicable to the districts where fighting is going on. First of all, it is American slang, secondly, it does not express the fact The people have not been "put" anywhere What is the matter with "Stand fast", or "Stand firm"? Of the two I prefer the latter. This is an English expression, and it says exactly what is meant by paragraph 3

The paragraphs about destroying maps, etc , clearly apply only to the fighting areas In the present context you might have a wholesale massacre of maps, motor-cars, and bicycles throughout the country

You might begin like this. "If this Island is seriously invaded everyone in it will immediately receive orders either to 'Carry on' or to 'Stand firm' In the vast majority of cases the order will be 'Carry on', as is set out in the first three paragraphs of the following paper. The order 'Stand firm' applies only to those districts where fighting is actually going on, and is intended to make sure that there will be no fugitives blocking the roads, and that everyone who has decided to stay in a likely area of attack, as, for instance, on the East and South Coasts, will 'Stand firm' in his dwelling or shelter till the enemy in the neighbourhood have been destroyed or driven out"

Prime Minister to Minister of Food 10 Mar 41

Yours of March 8 Would you kindly let me know what will be the objects and duties of the Food Mission you propose to send to the United States I am at this time actively considering sending Sir Arthur Salter there to expedite and animate the whole business of merchant shipbuilding This is a process which requires continued effort and attention, as an enormous scheme of shipbuilding has to be set on foot in American yards What has been done up to the present is less than half of what we need

I do not however see food problems in the same plane as this. There is plenty of food in the United States, and with our dollar allocations we should be able to select wisely what to use in our tonnage Why does this require a special mission?

I have been trying as much as possible to keep the missions to the United States as few as possible However, I shall be very glad to hear what your reasons are

Prime Minister to Secretary of State for War and others 10 Mar 41

It is of the utmost importance that a clear and consistent picture of our requirements should be presented to the United States Administration, and that their efforts on our behalf should not be hampered by any doubts as to our vital needs and their order of priority

I had occasion to deal with one aspect of this matter recently, when I directed that all statistical statements relating to our war effort intended for the United States Government should be co-ordinated centrally here and dispatched through our Ambassador at Washington

Another aspect of the same question has now been brought to my notice Mr Hopkins has reported that the Service attachés at the American Embassy in London are in the habit of sending messages, based on contacts with subordinate officers in the Service and Supply departments in London, which may well differ from the case which is being put to the Navy and Army Departments in Washington He quoted a case in which the Navy Department were being pressed to allot destroyers to us, and found themselves confronted with an expression of opinion of some anonymous officer in one of the Service departments in London, conveyed through a Service attaché of the United States Embassy in London, to the effect that it was no good hoping to cope with submarines by destroyers until we had more long-range fighters

I should be glad if you would be good enough to take the necessary steps to ensure that officers in your department who are brought into contact with the staff of the American Embassy, and particularly with the Service attachés, do not express opinions which are likely to conflict with the views which are being urged on our behalf in Washington These officers may not perhaps be aware that the views which they happen to express casually are liable to be reported to Washington It would also seem important that officers who are in contact with the United States Service attachés should be acquainted in general terms with the nature of the requests which are being put from time to time to the United States Government in Washington, so that they may be on their guard against making remarks which would be inconsistent with those requests

Prime Minister to Professor Lindemann 11 Mar 41

I am expecting you to have ready for me to-night the general layout of the imports programme under different heads, so that I can see where I can scrape off with a pencil another half-million tons for food

Prime Minister to C A S 12 Mar 41

I see accounts of Germans increasing their aerodrome accommodation in Northern France I suppose our aerodromes in the south-east

of the Island which we planned some time ago will now be coming steadily into use? Let me have a note on the augmentation which is in progress or has been achieved

(Action this Day)
Prime Minister to C.A.S. 14 Mar 41

The egg-layer pulled off another success last night Only one was up, but it got its prey. I cannot understand how there has been this frightful delay in devising and making the release gear More than three months seem to have been consumed upon a task so incomparably easier than many which are being solved Failing any mechanical solution, why cannot a hole be cut in the floor of the aeroplane and a man lying on his stomach push by hand the eggs, which are about the size of a Stilton cheese, one after another through the hole? The spacing would not be absolutely regular, but it might be just as lucky At any rate, I want to see this hold-up and hitch for myself I could come to Northolt Aerodrome at four o'clock this afternoon, Friday, if you can arrange to have the people concerned on the spot It would be very nice if you would come too, and spend the night at Chequers

There is a new danger. Now that the Admiralty balloon barrage people have exposed the idea of the aerial mine and its wire, parachute, etc , the cutter may soon be coming along, and when we are at last ready we may be too late

Surely now, when they seem to be turning on to the Mersey and the Clyde and will have to be working up to those fixed points, *now* is the time of all others for the egg-layers to reap their harvest

Prime Minister to Secretary of State for Air 14 Mar 41

Your programme [of R.A F expansion] assumed for these four months a loss [in pilots] of 1,550, whereas actually 1,229 was the figure You have therefore saved 321 pilots, and your original estimate was 26 per cent on the safe side. This is satisfactory

2 I always expected and repeatedly told you that there would be a marked falling off in war activity during the winter months This has always been so Let me know what are your forecasts for the next four or six months, including March The "postulates", as you like to call them, though "forecasts" seems more natural, are in any case only of academic interest, because we are making every pilot we can as fast as we can, and our programme is based on capacity, not assignment. None the less, one may just as well see what the possibilities are

Prime Minister to General Ismay 15 Mar 41

I agree that the 50th Division should go with W S 8, and that that convoy should have additional ships provided to make sure that none of the essentials, apart from the 50th Division, which is to go in its

integrity, are cut out Let me know what this will involve, in extra drain on shipping

(*Action this Day*)
Prime Minister to Controller, Admiralty 15 Mar 41

Give me a report on the progress of the ships to carry and disgorge tanks How many are there? What is their tonnage? How many tanks can they take in a flight? When will each one be ready? Where are they being built? What mark of tank can they carry?

Prime Minister to Foreign Office 15 Mar 41

Being a strong monarchist, I am in principle in favour of constitutional monarchies as a barrier against dictatorships, and for many other reasons. It would be a mistake for Great Britain to try to force her systems on other countries, and this would only create prejudice and opposition The main policy of the Foreign Office should, however, be to view with a benevolent eye natural movements among the populations of different countries towards monarchies. Certainly we should not hinder them, if we cannot help.

Prime Minister to Minister of Food 21 Mar 41

I hope the term "Communal Feeding Centres" is not going to be adopted It is an odious expression, suggestive of Communism and the workhouse. I suggest you call them "British Restaurants" Everybody associates the word "restaurant" with a good meal, and they may as well have the name if they cannot get anything else

(*Action this Day*)
Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 21 Mar 41

When I was at the Admiralty I repeatedly asked that more attention should be paid to the development of fuelling at sea Now we find the German battle-cruisers are able to remain out for many weeks at a time without going into any base or harbour to replenish. If they can refuel at sea it is a scandal that we cannot do so Again and again our ships have to be called off promising hunts in order to go back to fuel, six or seven hundred miles away. The argument that the Germans can send their tankers where they know they will find them, when we never know what is going to happen, being on the defensive and not having the initiative, does not appeal to me. Arrangements should be made to have a few tankers in suitable positions off the usual routes, so that if our ships are operating as they are now they could call one of these up and make a rendezvous The neglect of this principle of fuelling at sea is a grievous drag on the power of the Fleet It is the duty of the Admiralty to solve the problem

2. Even more painful is the fact that we are not apparently able to

fuel our destroyers in the comparatively calm waters off the African coast. The spectacle of this big convoy now coming up from Sierra Leone having one or two ships sunk every day by a trailing U-boat, and now the battleship escort herself also being torpedoed, is most painful. Nothing can be more like "asking for it" than to have a battleship escort waddling along with a six-and-a-half-knot convoy without any effective anti-submarine escort (other than the three corvettes). The Sierra Leone convoys will have to have destroyers with them. Ships sunk in these waters are just as great a loss to us, and just as much a part of the Battle of the Atlantic, as if they are on the North-Western Approaches. I am told that destroyers cannot go the distance. Why can they not be refuelled at sea, as has now been done, under pressure of events, for the corvettes? I am glad to hear about the air reinforcements. But destroyers are needed too. They must go all the way and be refuelled by the escort.

3. The whole question of the Cape Verde Islands being used as a German U-boat fuelling base must now be reviewed with a view to action being taken. I shall be glad to hear from you on all these points.

Prime Minister to First Lord of the Admiralty and Secretary of State for Air — 21 Mar 41

The use of aeroplanes, not only to attack our ships, but also to direct the U-boats on to them, is largely responsible for our losses in the North-Western Approaches. No effort to destroy the Focke-Wulfs should be spared. If we could employ Radar methods to find their positions and to direct long-range fighters or ship-borne aircraft to the attack we ought to be able to inflict serious casualties. Might it not be feasible to place a Radar station on Rockall? However inconvenient and unpleasant, the geographical position appears to be so good that it would be worth making a great effort to maintain a station there, at any rate during the summer months. The hills south of Lough Erne would also offer a valuable site. It might be even better if we could find ways and means of establishing stations on Tory Island or on one of the islands off the Kerry coast. These islands might be leased privately by some wealthy American friends. Please let me have a report from the technical point of view on the military results which could be expected if any of these things could be done, and upon any other possibilities that have been, or might be, examined.

We should also study methods of disturbing the aircraft's communications with U-boats. I understand that the system is that the Focke-Wulf signals to Brest, whence directions are sent to the U-boat, the process taking about an hour and a half. Is it not practicable either to jam these communications or to confuse all concerned by a series of

spurious messages? Presumably apparatus of the usual type for interfering with the Focke-Wulf's radio methods of navigation, which must be vital over the sea in bad weather, has not been neglected

I assume that we D F the signals he uses If he uses A S V. it should be practicable to locate and home on him with suitable apparatus *

(Action this Day)

Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 22 Mar 41

If the presence of the enemy battle-cruisers in a Biscayan port is confirmed every effort by the Navy and the Air Force should be made to destroy them there, and for this purpose serious risks and sacrifices must be faced If however unhappily they escape and resume their depredations, then action on the following lines would seem to be necessary, and should be considered even now

In order to regain the initiative in the Atlantic, three hunting groups should be formed at earliest, namely, *Renown* and *Ark Royal*, *Hood* and *Furious*, *Repulse* and *Argus* Each of these groups must have one or two tankers, and every device is to be used to enable them to refuel at sea The tankers need not necessarily accompany the groups, but should be in positions where the groups could rendezvous with them

2 The sea-front from Iceland to Cape Verde will be roughly divided into three sectors, in each of which one hunting group will normally be working. Although working independently of the convoys, they will give an additional measure of protection to convoys passing in their neighbourhood These dispositions should be completed by the end of April, and will come into operation in instalments at earliest

3 A plan will be made to replace *Furious* at earliest, by converting one or more ships as aircraft transports At the same time the Air Ministry will arrange for increased crating to Takoradi.

4 Considering how far we have carried the dispersal of the Fleet on escort duty, no objection could be taken to using *Nelson* in place of *Hood*

5 A flotilla must be found for the Freetown convoys This can be achieved out of the remaining twenty-five American destroyers which will have to work up in this Southern area. Arrangements must be made to fuel the destroyers from the escort cruiser or battleships

6. The evidences of German infiltration into the Cape Verde Islands, and the probability that they are being used to refuel U-boats, make it necessary to carry out Operation "Brisk" at the earliest date Once we have got possession we must make a good refuelling base there, and

* *D F*. direction-finding equipment, used to determine the direction of the source of a wireless signal
A S V airborne Radar

expel the enemy's U-boat tenders from these islands. I will discuss separately the political pros and cons of this.

As many flying-boats as can be spared, up to six, should be employed in the Freetown area, and will also work from the islands when captured

7. Pray let me have your thought on the above, together with all possible means of carrying it out

Prime Minister to Professor Lindemann 22 Mar 41

On the assumption that an [import] programme of 35 million tons is maintained, you should consider transferring in the least harmful manner 2 million tons from Ministry of Supply to Ministry of Food. If the 35 million tons is not realised this transference must be reduced *pro rata*, but in any case the existing minimum requirements of food should be met. Make a sketch plan for me to discuss with Sir Andrew Duncan to-morrow night.

(Action this Day)
Prime Minister to General Ismay 23 Mar 41

War Office and Middle East should be called upon for an exact account of all refrigerated meat ships they have requisitioned, and where and how these are at present employed. I have been told that some are used in the Middle East as depots for stores Let me have a full list, distinguishing between vessels which have been heavily converted to troop-carriers and those which could easily return to their normal duties.

Prime Minister to General Ismay, for C O.S. Committee and Admiralty 23 Mar 41

Is it true that the War Office demand provision for eight gallons of water a day per man on a troopship, and that this has become a factor greatly reducing the numbers which can be taken? Has there been any impartial investigation of the War Office standards? I was much surprised to learn that only about 3,500 men were taken in the *Queen Elizabeth* and the *Queen Mary* each This is hardly more than the numbers they carry when engaged in luxury passenger service If I remember rightly, over 8,000 men were sent in the *Aquitania* or *Mauretania* to the Dardanelles in May 1915

2 Could any saving in shipping be effected by transhipping personnel from the transports into the giant liners at Capetown? Now that the Red Sea will soon be clear of enemy submarines and aircraft it would seem attractive to organise a fast service from Capetown The matter should at any rate be examined

Prime Minister to General Ismay 23 Mar 41

Most of this is mere talk. What is the use, for instance, of saying

that no demand has been made for cranes at the smaller ports when these smaller ports have not been used and so do not feel the pinch? Surely we ought to have facilities prepared both for unloading into lighters and coasters and for removing traffic from the small ports by improved land communications by road or rail Let me have a list of the ports which could so be used, and let me have proposals for a minute, which I will thereafter draft, to procure effective action as a vital insurance. We have far too much at stake in the Clyde and Mersey

For the purposes of this use any help you may require.

Prime Minister to the Maharaja Jam Sahib of Nawanagar 24 Mar 41

My colleagues and I are moved by the terms of the resolution passed by the Chamber of Princes of March 17, and I am specially touched by the generous reference to myself His Majesty's Government in the United Kingdom gratefully recognise the valiant contribution which Indian troops have made to the Imperial victories in North Africa, and they well know that this contribution will increase still further in size and in scope as the months roll on On behalf of my colleagues I ask your Highness to express to the Chamber of Princes our appreciation of the resolute spirit with which the Princes and the peoples of India have shown themselves to be inspired

Prime Minister to Dominions Secretary 25 Mar 41

What is the point of worrying the Dominions with all this questionable stuff [about the likelihood of invasion]? Have they asked for such an appreciation? Surely the other side should be stated too, namely:

1 That even if they make their original landings the communications to these lodgments will be interrupted by the Fleet inside a week

2 That we have every reason to believe that we can maintain the superiority in the British daylight air, and that our Bomber Force will therefore "Namsos" all the landings by day as well as by night

3 That, apart from the beaches, we have the equivalent of nearly thirty divisions with 1,000 tanks at April 1, held in reserve to be hurled at the different invasion points

4 That we have 1,600,000 men in the Home Guard, of whom a million possess rifles or machine-guns to deal with sporadic descents of parachutists, etc

Frankly however I do not see the object of spouting all this stuff out—some of it injurious if it leaked—unless it is thought the Dominions require to be frightened into doing their duty

Prime Minister to Foreign Office 28 Mar 41

Monsieur Stoyadinovic should be treated with formal courtesy,

but kept under constant surveillance The Governor should be informed that he is a bad man, and was at this juncture undoubtedly a potential Serbian Quisling. It is not desirable that relations other than formal should spring up between him and the Governor or his household, or between him and people in Mauritius. Food and comfort should be appropriate to the scale of a colonel

Prime Minister to General Ismay, for C.O S. Committee and Commander-in-Chief Home Forces 30 Mar 41

1. In the invasion exercise "Victor" two armoured, one motorised, and two infantry divisions were assumed to be landed by the enemy on the Norfolk coast in the teeth of heavy opposition They fought their way ashore, and were all assumed to be in action at the end of forty-eight hours.

2 I presume the details of this remarkable feat have been worked out by the staff concerned Let me see them For instance, how many ships and transports carried these five divisions? How many armoured vehicles did they comprise? How many motor lorries, how many guns, how much ammunition, how many men, how many tons of stores, how far did they advance in the first forty-eight hours, how many men and vehicles were assumed to have landed in the first twelve hours, what percentage of loss were they debited with? What happened to the transports and store-ships while the first forty-eight hours of fighting was going on? Had they completed emptying their cargoes, or were they still lying inshore off the beaches? What naval escort did they have? Was the landing at this point protected by superior enemy daylight fighter formations? How many fighter aeroplanes did the enemy have to employ, if so, to cover the landing-places?

All this data would be most valuable for our future offensive operations I should be very glad if the same officers would work out a scheme for our landing an exactly similar force on the French coast at the same extreme range of our fighter protection, and assuming that the Germans have naval superiority in the Channel Such an enterprise as this accomplished in forty-eight hours would make history, and if the staffs will commit themselves definitely to the adventure and can show how it is worked out in detail I should very much like to bring it before the Defence Committee for action at the earliest moment

APRIL

Prime Minister to Sir Andrew Duncan and Imports Executive 1 Apr 41

At the last meeting of the "Battle of the Atlantic" Committee the impression was conveyed that the great improvement in the turn-

round of tankers was mainly due to improved methods of pumping This is not so The time has been reduced from 11 3 days to 3 3 days The main proportion of this time saved was due to good and improved organisation. This is shown in the subjoined table Improved discharge accounts for less than a third of the total saving Two-thirds of it is in more able organisation

You and your committee should look into this and see how far the Ministry of Shipping can adopt the methods of the Petroleum Department

Prime Minister to Home Secretary 2 Apr 41

I see a note in the *Daily Telegraph* that you are shortly going to make a statement to Parliament on the future of horse-racing Will you kindly let me know beforehand what you think of saying? If anything were done which threatened to terminate horse-racing in time of war or ruin the bloodstock it would be necessary that the whole matter should be thrashed out in Cabinet first.

Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 4 Apr 41

Fuelling at sea Considering that the *Malaya* was escorting an 8-knot convoy, or perhaps even a 6-knot convoy, I do not see why the danger of her oiling a destroyer at 12 knots should be stressed It is quite true that during the period of oiling the destroyer the battleship could not manœuvre to avoid a torpedo On the other hand, the advantages of having destroyers along with the convoy far more than repay this temporary disability. If four destroyers were taken along with the convoys one would be oiling while the other three would be protecting. Anyhow, nothing could be worse than to have a battleship tethered to a 6- or 8-knot convoy without any anti-U-boat craft to protect her This is what was done on the convoy in question

Prime Minister to C A S 5 Apr 41

Two things [about the Air Force in the Middle East] are to me incredible

1 That with a total personnel strength of 26,600 and a pilot strength of 1,175 and 1,044 aircraft on charge we can only fight 292 aircraft against the enemy

2 That with this immense personnel and mass of obsolete machines the C -in-C Air cannot find the necessary servicing staff for the new aeroplanes as they arrive, but that large numbers have to be sent round the Cape, with resultant destructive delays

Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 5 Apr 41

If seven cutters are available at New York within a week, why not make an evolution of getting them manned and into action from Iceland a fortnight later? Anyhow, let me be assured that all this is

in train for manning and bringing into action these vessels at the earliest moment.

Prime Minister to Sir Edward Bridges 8 Apr 41

It is very important not to have a serious break in the work at Easter. The normal Monday meeting should be at 5 p.m. Ministers are responsible for being available on the telephone at the shortest notice. It is much better for Ministers to take their holidays in rotation.

Let me have a list of who will go and who will stay I am told that Easter is a very good time for invasion.

Prime Minister to General Ismay 8 Apr 41

We must have the fullest information about Tobruk. Let a large-scale plan be prepared, and as soon as possible a model, comprising not only Tobruk but the El Adem area. Let me have, meanwhile, the best photographs available, both from the air and from the ground

Prime Minister to Minister of Supply 8 Apr 41

I observe with some concern from the census of machine tools that there was a reduction in the average hours worked by production machine tools from sixty-six to fifty-eight hours per week between June and November 1940 It is of course not possible to reach such perfect balance between different machines that all machines are fully exploited But the hours actually worked seem lower than might have been hoped A small loss (1½ hours per week) is attributed directly to air raids. Some further loss is presumably due to the tendency to close factories during hours of darkness Perhaps you would let me know the number of shifts that are being worked in the factories

It will be extremely difficult to make a case for the urgent delivery of machine tools from America if we cannot employ those we have to better advantage

I am addressing similar minutes to the Minister of Aircraft Production and the First Lord.

(*Action this Day*)

Prime Minister to Secretary of State for India 10 Apr 41

Thank you very much for prompt and efficient action which you took yesterday. I shall be greatly interested to see the plan you will make in the next few days for making Basra a great American assembly point. Naturally you will plan your scheme in stages so that we can have the use of it as it develops progressively A widespread defence scheme against air attack must also be prepared The necessary Radar stations to enable our fighters to get into the air in good time must be provided Ask the military for plenty of photographs of the place, and send them forward with your report Try to keep the report very short

Prime Minister to C I G S 15 Apr 41

By this return, which I study every week, you will see that you have 1,169 heavy tanks in this country in the hands of troops The monthly production of over 200 is going to increase in the near future. If the training of the men has not kept pace with the already much-retarded deliveries of the tanks, that is the responsibility of the War Office I do not wonder that difficulties are encountered in training when 238 cruiser tanks are given to one armoured division and only thirty-eight to another Perhaps if the 11th Armoured Division had a few more "I" tanks it would come along quicker.

Personally, I am not convinced that it is right to make each division entirely homogeneous A judicious mixture of weapons, albeit of varied speeds, should be possible in the division Moreover, some of these armoured vehicles ought to carry field artillery, and even one or two large guns or mortars Let me have a report on what the Germans do

Prime Minister to First Lord 15 Apr 41

I have heard that the use of long Actæon nets or similar device for towing behind escort vessels on either side of convoys is being investigated by the Admiralty I should be glad to have a report on progress made

If something of this sort could be developed it might go a long way to solving our problems *

Prime Minister to Secretary of State for Air 15 Apr 41

I remain far from satisfied with the state of our preparations for offensive chemical warfare, should this be forced upon us by the actions of the enemy.

I have before me a report on this matter by the Inter-Service Committee on Chemical Warfare, together with a commentary thereon by the Ministry of Supply From these two documents the following special points emerge

(1) The deficiency of gas shell is still serious Although the production of 6-inch and 5 5-inch gas shell was due to start in February, none has yet been produced I understand that the shortage of 25-pounder gas-filled shell is due to the lack of empty shell cases.

(2) The production of 30-lb. L.C bomb, Mark I, will not keep pace with the production of the 5-inch U P weapon, the new mobile projector for use with the Army Indeed, supplies will be insufficient even for training purposes

* The Actæon net defence against torpedoes was being developed for use in merchant ships It could not be towed by escort vessels without seriously hampering their freedom of movement See Vol I, Appx II, under date 21 ix 39

(3) The production of phosgene gas is inadequate. The output from the plant is now about 65 per cent. of capacity, having previously been only 50 per cent. over a period of some months.

I propose to examine the whole position at an early meeting of the Defence Committee (Supply).

In order that this examination may be as complete as possible, I shall be glad to receive from the Minister of Aircraft Production and the Minister of Supply, for circulation in advance of the meeting, brief comprehensive statements of the position so far as each is concerned, showing in respect of each of the main gas weapons and components (including gases):

(1) Total requirements notified to them, with dates
(2) Stocks of components in the custody of each on April 1
(3) Supplies delivered by April 1 to R A F or Army authorities
(4) Estimated output during each of the next six months

I shall be glad if these statements can be submitted within a week They should be addressed to Sir Edward Bridges

I am addressing similar minutes to the Secretary of State for War, the Minister of Supply, and the Minister of Aircraft Production

Prime Minister to Colonel Jacob 16 Apr 41

Let me have on one sheet of paper lists showing at present time and in September last the strength of British Home Forces in (*a*) rifles and S A A , (*b*) artillery—including all types of field and medium guns under one head, and also coast-defence batteries, and also A A , both heavy and light (*c*) Number of "I" tanks and cruiser tanks in the hands of the troops (*d*) Ration and rifle strength of the fighting formations. (*e*) Number of divisions and brigade groups (i) on the beaches, (ii) behind the beaches in Army or G H Q Reserve or otherwise. (*f*) Strength of fighter aircraft available for action at the two dates (*g*) Strength and weight of discharge of bomber aircraft at the two dates (*h*) Strength of the flotillas in home waters at the two dates Very general and round figures will do Don't go too much into details

(*Action this Day*)
Prime Minister to C A.S 17 Apr 41

It must be recognised that the inability of Bomber Command to hit the enemy cruisers in Brest constitutes a very definite failure of this arm No serious low-level daylight attack has been attempted The policy of the Air Ministry in neglecting the dive-bomber type of aircraft is shown by all experience to have been a very grievous error, and one for which we are paying dearly both in lack of offensive power and by the fear of injury which is so prevalent afloat.

2 The German battle-cruisers are two of the most important vessels

in the war, as we have nothing that can both catch and kill them. I have never asked that you should try to fight weather at the same time as the enemy, but good weather may increasingly be expected I do not think this target ought to be abandoned On the contrary, efforts ought to be made to overcome the causes of failure. Let the following be examined with the Admiralty

Take *Victorious* in her unworked-up condition and let her mount twenty Hurricane fighters on her upper deck Would this degree of fighter protection suffice to enable a dawn attack to be made by daylight by, say, a dozen bombers with the best-aiming bomb-sight we have been able to develop? Let this be studied forthwith and a report made to me

3 Naturally, I sympathise with the desire to attack Germany, to use the heaviest bombs and to give Berlin a severe dose, and I agree that the bulk of Bomber Command should be used against German targets, but photographs should be taken every day of the battle-cruisers and frequent attacks made upon them, by smaller numbers when weather is suitable or by larger forces when any movement is observable, during dark hours, apart altogether from the special daylight operations suggested above.*

(*Action this Day*)
Prime Minister to C I G S, 18 Apr 41

After the capture of Benghazi on February 6 the 7th Armoured Division, which had done so much good hard service, was ordered back to Cairo to refit This involved a journey of over 400 miles, and must have completed the wearing out of the tracks of many of the tanks It was an act of improvidence to send the whole division all this way back, in view of the fact that German elements were already reported in Tripoli The whole of the tanks in this division could not have been all simultaneously in a condition of needing prolonged heavy repairs Workshops should have been improvised at the front for lighter repairs, and servicing personnel sent forward. Thus, besides the 3rd Armoured Brigade, there would have been a considerable proportion of the Armoured Brigade in the 7th Division. General Wavell and his officers seem however to have thought that no trouble could arise before the end of May. This was a very serious miscalculation, from which vexatious consequences have flowed

* The *Gneisenau* had in fact been torpedoed in Brest harbour on April 6 by an aircraft of Coastal Command In this gallant attack the aircraft and all the crew were lost The pilot was awarded a posthumous V C A few days later Bomber Command aircraft scored four hits on the same ship with bombs These successes were not known to us at the time

In July the *Scharnhorst* moved from Brest to La Pallice, in the Bay of Biscay, for trials and sea training, but three days later she was successfully bombed in harbour there and severely damaged She returned to Brest for further extensive repairs

2 After their journey back at least 114 cruisers and 48 Infantry tanks, total 162, entered the workshops in Egypt, and are still there, and are not expected to come out faster than 40 by May 15 and 41 by May 30 It seems incredible that machines that could have made their journey back under their own power should all have taken this enormous time, and that only the handful of tanks in Tobruk have emerged from the workshops. Let me have a return showing exactly on what dates the cruiser and Infantry tanks entered the Egyptian workshops, and on which dates any came out and the rest are expected to come out There seems to be a degree of slackness and mismanagement about this repair work which is serious

3 What exactly are the sixty cruisers M.3, said to be arriving from the United States by the end of April? We have not heard about these so far

Prime Minister to Secretary of State for War 20 Apr 41

In Libya some German tanks are now in our possession Even if these were damaged, we should take all possible steps to get them examined by a skilful designer of British tanks or some other suitable engineering expert

If circumstances permit, a German tank, or suitable parts of one, could be sent home in due course Meanwhile, if there is no adequate expert already in the Middle East, one should be sent out immediately to conduct an examination on the spot.

I am sending a similar minute to the Minister of Supply

Prime Minister to General Ismay 21 Apr 41

I wish to have a conference on tank questions and future developments, to which the commanders of the tank divisions should be invited, as well as representatives of the Ministry of Supply. This conference should be fixed for Monday week—*i e*, May 5

The officers of the tank forces should be encouraged to prepare papers of suggestions, and are to be free to express their views An agenda should be prepared in the same way as is done for the conferences of Commanders-in-Chief

Pray put this all in train, and let me have a minute in a suitable form to send to the War Office.

(*Action this Day*)
Prime Minister to C I G.S 22 Apr 41

I have examined the tank situation with General Crawford After the 67 cruiser tanks and their spares have gone, deliveries in the next three months should be over 288 Deliveries of "I" tanks may reach 500, and we shall almost certainly have in May and June a good delivery of the A 22's It appears that the spare parts of the Mark IVs

and the Mark VIs are largely identical, except for the steering gear and one or two minor points The engines are identical, and there is a good supply of spares already in the Middle East on which the Mark VI can draw Therefore we only have to send the parts which are not identical

Your trouble in the next three months is going to be finding properly trained units for the tanks which will reach you.

2. I should be very glad if you would yourself look into the question of not wearing out too rapidly in training the 1,100 tanks now in the hands of troops. We do not want to be told all of a sudden that the tanks of a whole division on which we are counting have to go in for a long refit, like those of the 7th Armoured Division, just at the moment we need them most. It seems to me that training should be divided into two parts (*a*) training in the use of the tank, for which, even in divisions not yet fully supplied, model tanks must be provided, and (*b*) tactical training In this field everything possible should be done to spare the movement of masses of tanks A great number of exercises can surely be carried out with Bren-gun carriers driven at the corresponding speed of the tanks, and only now and again should the tanks themselves be made to wear out their tracks The principle of the "cover hack" being ridden till you get to the meet should commend itself to cavalry officers

Pray give me a report on this.

Prime Minister to C.I.G.S. 23 Apr 41

I fancy your trouble in the near future is going to be a plethora of tanks [at home] You speak of the speed and range of these vehicles In practice things do not work out like that It is only very rarely that a large homogeneous force has to make a prolonged advance or manœuvre Most times there are many hours wasted in each action when everyone is standing about and only a few can get on. Thus there is far more to be said for a mixed grill, and I cannot think of anything more foolish than stripping five divisions of cruiser tanks in order to have one all of a kind. This is one of the matters which must be discussed at the Tank Parliament about which I am sending you a note A meeting must be held in the near future In England there are very short distances and enclosed country, and the differences between cruiser and "I" tanks will tend to diminish almost to vanishing point Uniform organisations ought not to be higher than a brigade The tanks ought to be more evenly distributed between the units in this lull.

Prime Minister to Secretary of State for War 23 Apr 41

All the lessons of this war emphasise the necessity for good anti-tank weapons and plenty of them The number of anti-tank guns that

can be produced is necessarily limited; all the more need therefore to press forward with whatever substitutes can do the trick

I thought that the bombard was distinctly hopeful, and I was told that you had decided to order 2,000 of these, with 300,000 anti-tank projectiles and 600,000 anti-personnel projectiles. When can we expect these weapons to be in the hands of the troops? And at what rate? Pray let me have a programme.

Prime Minister to Secretary of State for War 23 Apr 41

There are persistent rumours that the Germans are constructing tanks with very thick armour—figures of four to six inches are mentioned Such armour would be impervious to any existing anti-tank gun, or indeed any mobile gun; the tracks and other vulnerable parts are very small targets.

Tests have shown that plastic explosive applied to armour plate, as, for instance, in the bombard developed by Colonel Blacker and Colonel Jefferis, has very great cutting power, and this may be a solution to the problem. In any event, we must not be caught napping I feel sure that the War Office are alive to the threat of the very thick-skinned tank, and have an antidote in mind Pray let me have a report

Prime Minister to General Wavell 24 Apr 41

Would not smoke-screens used from different directions, according to wind, give considerable immunity to ships in Tobruk harbour? Have you the necessary materials and appliances?

2. We should be glad to have details about the German tanks recently captured by the Tobruk garrison In particular, are they tropicalised, desert-worthy, and fitted for use in the very hot weather?

Prime Minister to Secretary of State for War and Minister of Supply 24 Apr 41

I propose to hold periodical meetings to consider tank and anti-tank questions, the first of which will be at 10 Downing Street on Monday, May 5, at 11 a m These meetings would be attended by yourselves, accompanied by appropriate officers From the War Office I would propose that the C I G S , A C I G S , and General Pope should come, and General Martel and his Armoured Divisional Commanders should also be invited On the Supply side I should like Mr Burton, Admiral Brown, and General Crawford to be present.

2 I am particularly anxious that all officers attending the meeting should be encouraged to send in their suggestions as to the points which should be discussed, and to express their individual views with complete freedom I contemplate, in fact, a "Tank Parliament".

3 An agenda will be prepared for each meeting by my Defence Office, and it will include any points which you wish to place upon it,

and any suggestions or questions which the Tank Commanders wish to put forward I myself should like to discuss the organisation of armoured divisions, and the present state of their mechanical efficiency, as well as the larger questions which govern 1943

Prime Minister to Viscount Halifax 28 Apr 41

Do not discourage the President from posing his questions direct to me or allowing any of the Naval Staff to do so My personal relations with him are of importance, and it would be a pity if they were superseded by ordinary staff routine

Prime Minister to General Ismay 28 Apr 41

Let me have this day the minute* which I wrote in the summer of last year directing that 5,000 parachute troops were to be prepared, together with all the minutes of the departments concerned which led to my afterwards agreeing to reduce this number to 500 I shall expect to receive the office files before midnight

2 Let me have all the present proposals for increasing the parachute and glider force, together with a time-table of expected results

Prime Minister to C I G S 28 Apr 41

The Director of Military Operations yesterday spoke of plans which had been prepared in certain eventualities for the evacuation of Egypt

Let me see these plans, and any material bearing upon them

Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 28 Apr 41

The C -in-C Mediterranean has been fully occupied in the successful conduct of the evacuation, but now he must resume his efforts to blockade Cyrenaican ports and to catch these ships or as many of them as possible It ought to be far easier to blockade Cyrenaican ports than Tripoli Both must be attempted, but failure to achieve the second would be specially lamentable

Prime Minister to General Ismay, for C O S Committee 29 Apr 41

Is it not rather strange that, when we announced that the port of Benghazi while in our occupation was of no use, and, secondly, that on our evacuation we had completely blocked it, the enemy are using it freely?

Prime Minister to General Ismay 29 Apr 41

I noticed that several of the parachutists who landed on Saturday had their knuckles terribly cut Has the question of protecting their hands and [also giving them] knee-caps been considered?

* *General Ismay, for C O S Committee* 1 Sept 40

Of course, if the Glider scheme is better than parachutes, we should pursue it, but is it being seriously taken up? Are we not in danger of being fobbed off with one doubtful and experimental policy and losing the other which has already been proved? Let me have a full report of what has been done about the Gliders

MAY

Prime Minister to General Ismay 4 May 41

Let me have a report on the efficiency of the gunners and personnel managing the 15-inch batteries and searchlights at Singapore Are they fitted with Radar?

Prime Minister to Secretary of State for Air 4 May 41

This [draft telegram to President Roosevelt about expansion of bomber production in U.S A] should surely be put forward through the regular channels. I do not like to send telegrams to the President about the general programme, which ought to be thrashed out by the very elaborate machinery provided for the purpose.

Prime Minister to Chancellor of the Exchequer 4 May 41

Is it true that the widow of a Service man killed by enemy action on leave gets only half the pension she would if her husband were killed on duty?

Prime Minister to Chancellor of the Exchequer 10 May 41

Do you think this distinction is justifiable? Is there much money in it? I was told of a case of a sailor who was drunk on duty and drowned in consequence, his widow getting full pension; while another sailor on well-earned leave, killed by enemy action, was far worse treated in respect of his wife. I doubt very much whether treating leave earned by service as equivalent to service for these purposes would cost you much, and it would remove what seems to be a well-founded grievance

Prime Minister to Chancellor of the Exchequer 16 May 41

I draw a clear distinction between deaths arising from the fire of the enemy and ordinary accidents This is the line of demarcation which we have successfully maintained in the Bill dealing with compensation for war injuries The air attack on this country is novel and sporadic, and can also quite safely be kept in a compartment by itself Therefore I reject the arguments about the concessions spreading to ordinary accidents, and from the armed forces to persons in employ on a part-time system, such as air-raid wardens and the like I consider that in a Regular service persons bound by discipline on permanent engagement have a right to be considered when on leave as enjoying the same privileges in regard to pensions for their widows, etc , as when they are with their units. Here again is a frontier which can be effectively maintained

In a Regular disciplined force leave is regarded as earned, and is part of the normal system of the force, and it breeds contempt of the governing machinery when one man's widow is left with half the

pension of the other merely because he was hit by the enemy's fire while on leave

Let me know what would be the expense if the regulations were amended as I have here suggested

Prime Minister to C I G S 6 May 41

Inquiries should be made whether the troops in Crete have a sufficiency of good maps Otherwise we shall soon find that any German arrivals will be better informed about the island than our men.

Prime Minister to First Sea Lord 6 May 41

How was it [the Mobile Naval Base Defence Organisation] took twelve weeks on passage, and why was the equipment packed without any relation to its employment? One would have thought a mobile naval base plant would above all other things have been stowed so that it could have been taken out and employed

It seems to me an inquiry should be held into this lapse of Staff work

Prime Minister to Foreign Secretary 7 May 41

Will you consider whether it would not be a good thing to publish my letter to Matsuoka I think it is important that the people of Japan generally and a circle wider than the Matsuoka military circle should be apprised of the direction in which they are moving

Prime Minister to General Ismay 8 May 41

Now that we have taken Bardia, Tobruk, Massawa, Assab, Kismayu, and other Italian African ports, pray let me have a report of the exact armament of coastal and aerial defence found there, and compare this with our Intelligence estimates beforehand A fortnight may be allowed for the preparation of this paper. I want, in the first instance, the facts, and the Intelligence must not realise that a comparison will be made with their figures

Prime Minister to General Smuts 8 May 41

I wonder if you would care for me to suggest to the King your appointment as an Honorary Field-Marshal of the British Army It seems to me that the great part you are playing in our military affairs and the importance of the South African Army would make this appropriate in every way, and I need not say how pleasing it would be to your old friend and comrade to pay you this compliment.

Prime Minister to the Belgian Prime Minister 10 May 41

On the anniversary of the day when, in violation of their most solemn undertakings, the German Government, without cause or provocation, launched their armed forces against the territory of Belgium, I wish to acknowledge in the name of His Majesty's Government the effective help which the Belgian Government, the Belgian

Empire, and the Belgian armed forces and merchant marine have given to the Allied cause throughout the past year We remember also your soldiers who resisted the invader in the Battle of Belgium, and who now in their homes oppose the will of the invader. The sympathy and admiration of His Majesty's Government and of the British people go out in especial measure to the Belgian people now under the hateful Nazi tyranny, who, by their courage and endurance, daily contribute to the defence of freedom

(*Action this Day*)
Prime Minister to C A.S. 10 May 41

The result of the Battle of Egypt now depends more upon the air reinforcements than upon the tanks. From every quarter and by every route, including repeated "Jaguars", fighter aircraft must be sent The Takoradi bottle-neck must be opened up and the congestion relieved. I have asked on other papers for a further large dispatch of Wellingtons, half a dozen additional squadrons at the least A regular flying-boat service should be established to bring back pilots who are accumulating in Egypt surplus to machines Advantage should be taken of the presence of Air Chief Marshal Longmore in England to make a comprehensive plan of reinforcements. Speed is essential, as from every side one gets information of the efforts the enemy are making.

Prime Minister to Mr Mackenzie King 11 May 41

I am delighted to hear that Mr Menzies' visit was so successful. He was with us here through times of peculiar stress, and we found him a staunch comrade A meeting of the Imperial Conference about July or August for a month or six weeks would be most desirable if it could be arranged I hope we shall give a good account of ourselves in the Middle East It will not be for want of trying Every good wish It is splendid the way you have carried Canada forward in such perfect unity

Former Naval Person to President Roosevelt 10 May 41

I expect you are now acquainted with the splendid offer which General Arnold made to us of one-third of the rapidly expanding capacity for pilot training in the United States to be filled with pupils from here We have made active preparations, and the first 550 of our young men are now ready to leave, as training was to have begun early next month A second batch of 550 will follow on their heels I now understand there are legal difficulties I hope, Mr President, that these are not serious, as it would be very disappointing to us and would offset our arrangements if there were now to be delay General Arnold's offer was an unexpected and very welcome addition to our training facilities Such ready-made capacity of aircraft, airfields, and instructors

all in balance we could not obtain to the same extent and in the same time by any other means It will greatly accelerate our effort in the air

Prime Minister to General Arnold 11 May 41

I am much obliged for the information reported by your observer in Egypt The Air Ministry tell me that we have recently sent out to Takoradi the best officers we can find, but they are necessarily less familiar with American than with British types of aircraft and engines and welcome your offer of American experts Details of numbers and grades desired will be sent to you by the Air Ministry as soon as possible

2 In the climate of tropical West Africa no man can work as hard or as long as at home. We should like to work three shifts, and are planning to use ships for additional living quarters

3. We are sending to Africa one of our most energetic and competent senior technical officers, who will be responsible to Commander-in-Chief for repair and maintenance in Egypt and for general control of Takoradi reinforcement route, sole responsibility for which lies with Air Ministry. Some decentralisation of local control is necessary on a route which begins in British or American factories and ends in Egypt.

4 Criticism of technical inexperience of certain drafts to Takoradi is justified, but there is now great dilution throughout R A F We are now sending picked men We gratefully accept your offer of loan of experts, and M A P is being pressed to provide tools and equipment

5 We agree about importance of B P C inspection, and I am passing your criticism to the M A P

6 I am much obliged for the help already given and for your offer of skilled men Assembly of aircraft is not sole bottle-neck of deliveries from Takoradi Any acceleration must be matched by corresponding increase in transport aircraft for ferry pilots Can your promised deliveries of American transport aircraft to Africa be accelerated? Thank you so much for cabling direct to me

(*Action this Day*)

Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 14 May 41

Further to my "Tiger" No 2, one would hope that it could be fitted in during the moonless period after about the middle of June In order to give greater security it might be well to send *Victorious* right through, and thus give the C -in-C. Mediterranean what he longs for, namely, two armoured aircraft-carriers For this purpose however it is most desirable that *Victorious*, and if possible the other aircraft-carriers who would be accompanying her, should have a proportion of the best and fastest fighters which can be thrown off a float. What happened to those American Martlett aircraft? I have not heard of them for some months, yet we were told they were so promising on account of their high speed How is the unloading of "Tiger" going on?

Prime Minister to General Ismay 16 May 41

What is the situation at Martinique? Are the 50 million pounds of gold still there? What French forces are there? What French vessels are in harbour? I have it in mind that the United States might take over Martinique to safeguard it from being used as a base for U-boats in view of Vichy collaboration.

Prime Minister to C.I.G.S. 16 May 41

Your minute of May 15. You tell me that the total number of cruiser tanks in a brigade of the 7th Armoured Division is 210 (including 20 per cent. reserves), and that of the "I" Tank Brigade 200 "I" tanks—say 400 heavy tanks in the 7th Armoured Division. We must try to compare like with like. I am told that the German principle is two light tanks to every heavy, thus there would be in a German armoured division about 135 heavy tanks. In other words, it would have fewer heavy tanks than one of our tank brigades. What is the additional outfit of our armoured brigades in light tanks or armoured cars? Surely they have an adequate outfit of these ancillaries. It would be enormously helpful and simplify our work if you would kindly let me have in two columns the standard outfit of the 7th Armoured Division on the basis you indicate, and the outfit of a German full armoured division, and add a third column for a German colonial division.

Have you noticed the reports from various sources that the Germans are using only one brigade in their divisions identified by contact?

Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 17 May 41

At the end of February the Admiralty seem to have had forty ships of 10,000 tons and over employed as armed merchant cruisers, since when I believe about three have been sunk. We are so short of troop-carriers now that I must ask for some of these ships to be surrendered. I suggest you hand over any you have left in excess of thirty—*i.e.*, about seven—leaving them with their armaments, but with reduced naval crews, and choosing those which will carry the largest number of troops. They will thus be able to defend themselves and the convoy of which they form a part.

Prime Minister to First Lord 17 May 41

This chart of the immense work of the Salvage Department makes me anxious that you should convey to those in charge of that branch a very high and express measure of commendation. Perhaps you will let me see a draft of what you propose.

Prime Minister to General Ismay 26 May 41

It is interesting to see how very much exaggerated were the estimates formed by our Intelligence Service of the coastal defences of the various

Italian ports that have now come into our hands I have long suspected that the Italians, and probably the French also, like to have it thought that their seaward defences are on a very heavy scale. We were told, for instance, that Massawa was defended by four 8-inch, ten large calibre, and sixteen 6-inch, total thirty high-powered guns Not one existed In the light of this exposure the Intelligence Branches of the different departments should carefully re-examine their scale of foreign coastal fortifications, which otherwise may prove to be a deterrent upon action *

Prime Minister to General Ismay, for C.O.S. Committee 27 May 41

This is a sad story [about parachute troops and gliders], and I feel myself greatly to blame for allowing myself to be overborne by the resistances which were offered One can see how wrongly based these resistances were when we read the Air Staff paper in the light of what is happening in Crete, and may soon be happening in Cyprus and in Syria

2. See also my minute on gliders of September 1, 1940 † This is exactly what has happened The gliders have been produced on the smallest possible scale, and so we have practically now neither the parachutists nor the gliders, except these 500

3 Thus we are always found behindhand by the enemy We ought to have 5,000 parachutists and an Airborne Division on the German model, with any improvements which might suggest themselves from experience. We ought also to have a number of carrier aircraft [*i e.*, transport aircraft] These will all be necessary in the Mediterranean fighting of 1942, or earlier if possible We shall have to try to retake some of these islands which are being so easily occupied by the enemy We may be forced to fight in the wide countries of the East, in Persia or Northern Iraq. A whole year has been lost, and I now invite the Chiefs of Staff to make proposals for trying, so far as is possible, to repair the misfortune

The whole file is to be brought before the Chiefs of Staff this evening

*

Port	*Total Intelligence Estimate*	*Total reported after Capture*
Tobruk	26	15
Benghazi	37	12
Bardia	7 to 9	5
Massawa	64	29
Kismayu	10 to 11	23
Grand total	144 to 147	84

† See footnote at page 677

Prime Minister to General Ismay, for C O.S Committee 27 May 41

I am in general agreement with the appreciation of C I G S., but it is clear that priority and emphasis of the operations must be prescribed from here

I should be glad if the Chiefs of Staff would consider forthwith the following proposed directive

In view of General Wavell's latest messages, he should be ordered to evacuate Crete forthwith, saving as many men as possible without regard to material, and taking whatever measures, whether by reinforcement or otherwise, are best

2 With the capture of Suda Bay or Kastelli on the south side the enemy will be most eager to land a seaborne force The Navy must not open their sea guard yet, and should try, in any case, to take the heaviest toll, thus getting some of our own back

3. The defence of Egypt from the west and from the north under the increased weight of the air attack from Crete presents the standard military problem of a central force resisting two attacks from opposite quarters. In this case the choice seems clearly dictated by the facts.

4. The attack through Turkey and/or through Syria cannot develop in great strength for a good many weeks, during which events may make it impossible.

5 In the Western Desert alone the opportunity for a decisive military success presents itself. Here the object must not be the pushing back of the enemy to any particular line or region, but the destruction of his armed force, or the bulk of it, in a decisive battle fought with our whole strength. It should be possible in the next fortnight to inflict a crushing defeat upon the Germans in Cyrenaica General Wavell has upwards of 400 heavy tanks, against 130 enemy heavy tanks, plus their 9-tonners, as well as light armoured forces upon both sides He has a large plurality of other arms, particularly artillery He has sure communications, ample supplies, and much help from the sea He should therefore strike with the utmost strength in the Western Desert against an enemy already in great difficulties for supplies and ammunition Here is the only chance of producing a major military success, and nothing should stand in its way

6 There is no objection meanwhile to the advance he proposes with the forces specified into Syria, and he may get the aerodromes there before the Germans have recovered from the immense drain upon their air-power which the unexpectedly vigorous resistance of Freyberg's army has produced.

7 Forces should not be frittered away on Cyprus at this juncture We cannot attempt to hold Cyprus unless we have the aerodromes

in Syria. When we have these, and if we have gained a decisive victory in Cyrenaica, an advance under adequate air cover into Cyprus may become possible We must not repeat in Cyprus the hard conditions of our fight in Crete

8 For the above purposes "Jaguar" must immediately be resumed and expanded *Victorious* is now at liberty The movement of all troops and transport from Abyssinia northward must be pressed to the utmost, observing that the 50th Division from England less one brigade is also already approaching, together with other reinforcements

9 To sum up, the orders should be.

(*a*) Evacuate Crete.

(*b*) Destroy the German force in Cyrenaica, thus disengaging Tobruk and securing the airfields to the westward

(*c*) Endeavour to peg out claims in Syria for reinforcement after a Cyrenaican victory as in (*b*)

All these operations should be capable of completion before the middle of June

Prime Minister to Prime Minister of Australia (Mr Menzies) 29 May 41

Sincere congratulations on the powerful moving addresses you have delivered in Canada, the United States, and above all on your return home These have been fully reported in England, and have confirmed all the goodwill you gathered from our people I thank you also for your very kindly references to me Reading the Australian dispatches, I often think of Chatham's famous invocation· "Be one people!" Best of luck

Prime Minister to Minister of Agriculture and Secretary of State for Scotland 30 May 41

I have been considering the minutes you sent me early in April concerning the production of sugar-beet in Scotland It seems to me agreed that it is desirable that in order to save shipping space the production of sugar-beet should be maintained I am also informed that the starch equivalent of beet products per acre is two-thirds greater than that of potatoes But I infer from what you say that for financial reasons farmers prefer to produce potatoes, of which there is no shortage.

It seems clear therefore that measures should be taken to ensure that sufficient beet is produced, if necessary at the expense of potatoes It ought to be possible to settle between the Ministries concerned whether the increase is to be made in Scotland or in Northern England, but it certainly appears that it would be most convenient to produce the additional quantity for the Cupar factory in Scotland

If it is too late to obtain this extra output this year steps should be

taken to make sure that the shortage is not repeated in 1942 Indeed, since beet is apparently a very valuable crop in present circumstances it should be considered whether a much larger acreage should not in future be devoted to it Please report to me further on this at a later date.

JUNE

Prime Minister to General Ismay, for C O S. Committee 1 June 41

Although I hold most strongly that we should not fritter away our forces in defence of Cyprus [at this moment], I do not wish to exclude the possibility of air defence, even before we are masters of the Syrian airfields. If as a result of a successful outcome of "Tiger-cubs" it should be found possible to spare two or three fighter squadrons, these should be sent; and anyhow meanwhile preparations should be made to receive them at short notice in Cyprus I do not know what is the position and state of the existing aerodromes

I should be glad if the whole subject could be reviewed by the Staffs

(*Action this Day*)
Prime Minister to General Ismay, for Chiefs of Staff Committee 1 June 41

Adverting to my wish that the West African Brigade should be returned from East Africa to Freetown forthwith, and that the captured Italian arms should be used to equip the Shadow Brigade now forming at Freetown or thereabouts, I have had a talk with General Giffard He says that the West African battalions require an average of eighty British officers and non-commissioned officer personnel, and that these will be lacking for the Shadow Brigade, and that even if supplied they would be better employed on handling any modern equipment we can find It has been suggested to me that the great plethora of Polish officers in Polish divisions, amounting to several thousands, might be married up to this West African Shadow Brigade I am sure that General Sikorski could easily be persuaded to find two or three hundred, and they would be very good

Pray let this be examined and a plan made General Giffard should be consulted, and I should like to have a report before he leaves the country, the object being the transfer of the West African Brigade from east to west, and the development of the Shadow Brigade on Italian equipment and Polish white infusion *

Prime Minister to Minister of Information 1 June 41

It is most dangerous to inform the enemy that Parliament is sitting on any particular day while there is time for an attack to be made I

* About four hundred Polish officers were sent as proposed to the West African Division, and served with high credit

do not admit the assumption that the enemy knows all that is attributed to him

(Action this Day)
Prime Minister to C A S 2 June 41

I am glad you are pressing on with this vital business [of lengthening the range of fighters] Anyone can see you will have to pay in gunfire and manœuvrability for the advantage of range, but this may be well worth while

I do not regard your last sentence as exhaustive Machines must be modified so as to enable us to fight at particular points in daylight, both by bombers and fighters This is particularly true of the Ægean Archipelago, where we ought to be able to bomb the Cretan and Dodecanese aerodromes *by daylight* under fighter protection. We have got to adapt machines to the distances which have to be traversed Again, now that so much of the German Air Force is moving East, and France is largely weakened, we ought to attempt daylight raids into Germany for bombing on a severe scale For this the range of our fighters must be extended If this is not done, you will be helpless in the West and beaten in the East

Prime Minister to Governor of Malta 6 June 41

I am entirely in agreement with your general outlook The War Office will deal in detail with all your points It does not seem that an attack on Malta is likely within the next two or three weeks Meanwhile other events of importance will be decided, enabling or compelling a new view to be taken You may be sure we regard Malta as one of the master-keys of the British Empire. We are sure that you are the man to hold it, and we will do everything in human power to give you the means

(Action this Day)
Prime Minister to Professor Lindemann 7 June 41

I have several times asked you to check up on German and British air strengths as we left it at the end of Mr Justice Singleton's investigations Pray let me have this return by Monday at latest.

I should imagine that the enemy have lost a great many more aircraft than we have, but what is the new rate of construction which he has achieved? How do matters stand? It is over two months ago since I had a thorough check made

Prime Minister to Prime Minister of Australia 9 June 41

It is not possible to hold Cyprus without having control of the Syrian airfields We therefore thought it better to try to gain these, when we should be in a position to support Cyprus more effectively In the meanwhile there is one Australian divisional mechanised cavalry

regiment and one British battalion with local troops and six Hurricanes. They are a deterrent on anything but a fairly substantial hostile scale of attack If the enemy comes in force before we have got hold of Syria, the 1,500 men in Cyprus will have to take to the mountains, which are rugged and high, and there maintain a guerrilla as long as possible If we cannot get control of Syria or if the Germans defeat the guerrilla in the mountains, we shall probably get a good many away Chiefs of Staff do not think this is an unfair task to set troops. There are many worse in war No other course is open except immediate evacuation, inviting unopposed landing I am anxious to help you in your difficulties, and, if you wish it, I will see that Australian troops are withdrawn from Cyprus with or without relief

Prime Minister to Colonial Secretary and General Ismay 11 June 41.

Our policy is the strictest possible blockade of Jibouti The fairest terms have been offered to these people Nothing must be done to mitigate the severity of the blockade It might however be possible to arrange that if a return were furnished of the number of new-born babies and young children a very limited amount of nourishment might be allowed to pass into the town under the most strict restrictions and surveillance.

On no account must the Governor of Aden take any action which will weaken the blockade, and no supplies of any kind are to move into the town without my approving the arrangements first

Prime Minister to Lord President 14 June 41

I learn that under the scheme for reducing the basic civilian ration of petrol by half once every three months the reduction is to be made for the first time this August

Could not this be avoided? We have to think of Bank Holiday and of the fact that many people may be getting leave this August for the first time since the war They are no doubt counting on having their cars full at the end of July, and having also at their disposal the full ration for August

Could you not arrange to begin the experiment in October? To make good the loss an extra half-ration month could be intercalated during the winter

(*Action this Day*)
Prime Minister to Lord Woolton and Minister of Agriculture 14 June 41

I was very glad to hear from you that the twelve hens scheme would be abandoned in favour of "No official food for more than twelve hens unless you come into the public pool" "Public chicken-food for public eggs"

2 Have you done justice to rabbit production? Although rabbits are not by themselves nourishing, they are a pretty good mitigation of vegetarianism They eat mainly grass and greenstuffs, so what is the harm in encouraging their multiplication in captivity?

3 I welcome your increase of the meat ration, but it would be a pity to cut this down in the winter, just when fresh vegetables will also drop Can you not get in additional supplies of American corned beef, pork, and bacon to bridge the winter gap? The more bread you force people to eat the greater the demands on tonnage will be Reliance on bread is an evil which exaggerates itself It would seem that you should make further efforts to open out your meat supplies

4 I view with great concern any massacre of sheep and oxen The reserve on the hoof is our main standby

Prime Minister to Secretary of State for Air and C A S 15 June 41

I suggested to you some time ago that Sir Hugh Dowding should be asked to write a dispatch about the Battle of Britain, which was fought under his command during July, August, and September last I understood from the C A S, and I think also from you, that there was no objection to this

Will you kindly have the necessary official action taken?

Prime Minister to General Ismay 18 June 41

Please have a glossary drawn up to-day of the places in Syria and Libya which are most frequently mentioned Choose in each case the simplest spelling and well-known form This will then be telegraphed to the Middle East and circulated with supplements to all concerned

Prime Minister to Secretary of State for Air and C A S 18 June 41

I saw a statement in the papers the other day that the Air Force were calling for several thousand volunteers to defend their aerodromes What is the meaning of this? It was represented that this was a part of the application of the lessons of Crete But many people have wondered why such a petty measure should have been paraded Perhaps however it is all nonsense

2 This gives me the opportunity to say that all Air Force ground personnel at aerodromes have got to undergo sharp, effective, and severe military training in the use of their weapons, and in all manœuvres necessary for the defence of the aerodromes Every single man must be accounted for in the defence, and every effort should be made to reach a high standard of nimbleness and efficiency

Will you kindly let me have a report on this

Prime Minister to General de Gaulle 19 June 41

Thank you for your message to me of June 13. I value your views highly They have been specially helpful in the light of most recent

events in Syria. You may be sure that I always cherish the interests of the Free French movement, so vital to the rebirth of France Best wishes.

Prime Minister to General Ismay 20 June 41

Please focus clearly in writing—

(*a*) The arrangements now proposed for more intimate association of the Army and the co-operating Air Force squadrons, and

(*b*) The responsibility for airfields in the United Kingdom in the event of invasion.

Prime Minister to General Ismay, for C.O S. Committee 23 June 41

The success which has attended the admirable offensive of the R.A.F. over the Pas de Calais should encourage this to be pressed day after day as long as it proves profitable The number of bombers going by day should be increased as much as possible, so as to take full advantage by daylight of the various targets presented For this purpose the Cabinet should be asked to agree to the bombing of any important factories which are being used on a large scale for the repair or manufacture of enemy aircraft, and any important objectives in the area dominated should be subjected to the heaviest daylight bombing and effectively destroyed The French workmen should at the right moment be warned to keep away from the factories, though this should not prevent our beginning before they have notice

2 On the assumption that our domination of the air over this area will be successfully established, the Staffs should consider whether a serious operation in the form of a large raid should not be launched under full air protection I have in mind something on the scale of 25,000–30,000 men—perhaps the Commandos plus one of the Canadian divisions It would be necessary to create a force exactly adapted to the tactical plan rather than to adhere to the conventional establishments of divisions As long as we can keep air domination over the Channel and the Pas de Calais it ought to be possible to achieve a considerable result.

3 Among the other objectives, the destruction of the guns and batteries, of all shipping (though there is not much there now), of all stores, and the killing and capturing of a large number of Germans present themselves The blocking of the harbours of Calais and Boulogne might also be attempted

4. I should like to have a preliminary discussion this evening at 9 45 p m, and if the principle is approved the plans should be perfected as soon as possible, in case the air domination should be achieved Now the enemy is busy in Russia is the time to "Make hell while the sun shines."

Prime Minister to General Ismay, for C O S Committee, Controller Admiralty, and others concerned 27 June 41

British amphibious attacks overseas are begun usually in the dark hours, during which it is hoped to get a certain number of Bofors guns ashore, but these will be quite inadequate to cover the landing-places from the dive-bomber attack, which must be expected almost anywhere at dawn or shortly after The guns will have taken up positions in the dark, and cannot possibly have their predictors and combined control effective in so short a time

2 To bridge the gap between the first landing and the seizure of airfields, with consequent establishment of British fighter squadrons and air protection, it is necessary that effective A A artillery support, at least in low-ceiling fire, should be provided How is this to be done? It can only be done by the provision of floating batteries which can take their stations in the dark hours of the first attack and be ready to protect the landing-places from daylight onwards

3 170 tank landing-craft are now rapidly coming out month by month At least one dozen of these should be fitted as floating batteries They should be armed either with Bofors or with multiple U P projectors with A D or P E fuze. The large-size tank landing-craft are well suited to this Let a plan be made of the best possible arrangement of the guns or projectors, or both mixed The best forms of fire-control and the principle of the four-cornered ship, so as to fire at attacks from various quarters simultaneously, should be developed This is a task for gunnery and U P experts, who should be given the dimensions of the deck space available, and should work out a full scheme in technical appliances and personnel required. The Controller should report what alterations would be necessary in the ships. One ship should be so fitted at once, and a nucleus of officers trained in the fighting of a floating battery under these conditions It would not be necessary to arm more than one ship at the present time, and it could be used for training and experimental purposes, but the remaining eleven should be got ready, with any improvements which may suggest themselves, to receive their guns or projectors All the base fittings should be made and built in so that the weapons can be rapidly mounted Meanwhile the guns and projectors can continue to play their part in A D G B, the necessary number being earmarked for speedy transfer should an amphibious operation become imminent

Pray let me have a report in one week, showing the proposed action and the time-table *

* This minute shows the genesis of the landing craft-flak (L C F), which was a converted tank landing-craft carrying a powerful battery of light anti-aircraft guns It was used to provide close air defence to landing-craft during an assault Six of these were in service by May 1942, and thereafter the numbers greatly increased

Prime Minister to General Ismay 27 June 41

Let me have a note of the number of Commanders-in-Chief, and the names, who have visited the room at the Ministry of Defence for the purpose of reading the files each week, so that I can see who take advantage of it Let me also see the first specimen file available for their scrutiny.

(*Action this Day*)
Prime Minister to Secretary of State for War and C I G S 27 June 41

Some time ago I formed the opinion that it would be far better to give names to the various marks of tanks These could be kept readily in mind, and would avoid the confusing titles by marks and numbers. This idea did not find favour at the time, but it is evident that a real need for it exists, because the "I" tank, Mark II, is widely known as Matilda, and one of the other Infantry tanks is called Valentine Moreover, the existing denominations are changed and varied A 22 has an alias, I think Pray therefore set out a list of the existing official titles of all the tanks by types and marks now existing or under construction or design in our service and in the American service, together with suggested names for them, in order that these may be considered and discussed

(*Action this Day*)
Prime Minister to Foreign Secretary, First Lord, and First Sea Lord 28 June 41

Who has been responsible for starting this idea among the Americans, that we should like their destroyer forces to operate on their own side of the Atlantic rather than upon ours? Whoever has put this about has done great disservice, and should be immediately removed from all American contacts I am in entire agreement with Mr Stimson May I ask that this should be accepted at once as a decision of policy, and that it should be referred, if necessary, to the Cabinet on Monday?

Prime Minister to Secretary of State for Air 28 June 41

I understand that little or no provision is made for the defence of aerodromes between the date at which they are fit for operational use and the date at which they are actually taken over, and that this interval is often a long one, especially if some minor adjustments have to be made after the main work is completed This appears to be a serious gap in our defences Pray let me know what the position is

Prime Minister to Secretary of State for Air and Chief of the Air Staff 29 June 41

Further to my minute of June 20, about the responsibility of the

Air Force for the local and static defence of aerodromes Every man in Air Force uniform ought to be armed with something—a rifle, a tommy-gun, a pistol, a pike, or a mace, and every one, without exception, should do at least one hour's drill and practice every day Every airman should have his place in the defence scheme At least once a week an alarm should be given as an exercise (stated clearly beforehand in the signal that it is an exercise), and every man should be at his post 90 per cent should be at their fighting stations in five minutes at the most It must be understood by all ranks that they are expected to fight and die in the defence of their airfields Every building which fits in with the scheme of defence should be prepared, so that each has to be conquered one by one by the enemy's parachute or glider troops Each of these posts should have its leader appointed In two or three hours the troops will arrive, meanwhile every post should resist and must be maintained—be it only a cottage or a mess—so that the enemy has to master each one This is a slow and expensive process for him

2 The enormous mass of non-combatant personnel who look after the very few heroic pilots, who alone in ordinary circumstances do all the fighting, is an inherent difficulty in the organisation of the Air Force Here is the chance for this great mass to add a fighting quality to the necessary services they perform Every airfield should be a stronghold of fighting air-groundmen, and not the abode of uniformed civilians in the prime of life protected by detachments of soldiers

3 In order that I may study this matter in detail, let me have the exact field state of Northolt Aerodrome, showing every class of airman, the work he does, the weapons he has, and his part in the scheme of defence We simply cannot afford to have the best part of half a million uniformed men, with all the prestige of the Royal Air Force attaching to them, who have not got a definite fighting value quite apart from the indispensable services they perform for the pilots

Prime Minister to Secretary of State for War and C I G S 29 June 41

We have to contemplate the descent from the air of perhaps a quarter of a million parachutists, glider-borne or crash-landed aeroplane troops Everyone in uniform, and anyone else who likes, must fall upon these wherever they find them and attack them with the utmost alacrity—

"Let every one
Kill a Hun"

This spirit must be inculcated ceaselessly into all ranks of H M forces—in particular military schools, training establishments, depots All the rearward services must develop a quality of stern, individual resistance No building occupied by troops should be surrendered without having

to be stormed. Every man must have a weapon of some kind, be it only a mace or a pike. The spirit of intense individual resistance to this new form of sporadic invasion is a fundamental necessity I have no doubt a great deal is being done.

Please let me know exactly how many uniformed men you have on ration strength in this Island, and how they are armed.

I should like Sir Alan Brooke to see this minute and enclosure, and to give me his views about it Let me also see some patterns of maces and pikes

Prime Minister to General Ismay, for C.O S. Committee 30 June 41

Although we take a heavy toll, very large enemy reinforcements are crossing to Africa continually The Navy seem unable to do anything. The Air Force only stop perhaps a fifth You are no doubt impressed with the full gravity of the situation

(Action this Day)
Prime Minister to Minister of Supply 30 June 41

In the Secret Session on Sir Andrew Duncan's vote questions were asked by Mr Shinwell and others about how we stood in "heavy tanks" We have hitherto regarded A 22 as the heaviest we should make, though a great deal of work has been done, I think by Stern, on a still larger type I believe there is even a pilot model Of course our problem is different from the Russian or great Continental Powers because of shipment, although that is no final bar

However, it now appears, on the highest authority, that the Russians have produced a very large tank, said to be over 70 tons, against which the German A/T 6-pounder has proved useless It seems to me that the question of a much heavier tank has now come sharply to the front The whole position must be reviewed, and we must know where we are—and that soon.

APPENDIX D

ESTIMATED BRITISH AND GERMAN AIR STRENGTHS, DECEMBER 9, 1940*

NOTE BY PRIME MINISTER AND MINISTER OF DEFENCE

Since the war began fifteen months ago the German Air Force is believed to have received 22,000 aircraft of all types, and the British

* See p 36

Air Force 18,000 of all types for use in all theatres and for all purposes In the last eight months of hard fighting the German Air Force has received from April to November inclusive 12,000 new machines, and the British Air Force 11,000, exclusive of 1,000 from overseas In these eight battle months, when both Air Forces have been at full extension, the intake has been about equal, averaging 1,400 to 1,500 machines a month

2 During these eight months the front-line strength of the British Air Force of about 2,100 machines has scarcely changed Thus a monthly output of 1,400 machines has just sufficed in a period of active warfare to keep up a front-line strength of 2,100 machines

If we reckon that of the 1,400 machines 500 were trainers, and another 200 were operational machines devoted to training—a very generous allowance in the heat of the battle—this implies that 700 operational machines, *i e*, one-third of our front-line establishment, was written off every month Actually the number is probably greater than this, at any rate in the bomber squadrons, where a number of bombers equal to two-fifths of the front-line establishment is lost monthly

3. The German losses have certainly not been less *pro rata* Their battle losses between May and August were estimated by the Air Ministry as about 3,000, and from August to the end of October as 2,800 machines—*i e*, 5,800 in all Our battle losses in the equivalent period were less than half of this

4 Information leads the Air Intelligence Branch at the Air Ministry to believe that the German front-line Air Force on May 1 was about three times as great as ours—say, 6,000 machines If this were so, and their *pro rata* losses were not higher than ours, their monthly wastage must have been at least 2,000 machines (on the two-fifths figure even higher) If our figures for their average output, *i e*, 1,500 machines, are correct, and if the statement that 1,100 of these were operational is accepted, the German Air Force must diminish at the rate of 2,000 minus 1,100, *i e*, at least 900 machines in the first month As the front line decreased, of course the losses and the rate of drop would fall, but the strength would be well below 4,000 at the end of four months

The only way of escaping this conclusion is to assume that the Germans carried an immense reserve of machines stored for such an eventuality The pre-war output does not justify such an assumption In any event, it would be an uneconomical proceeding, as the machines would rapidly become out of date Any well-arranged Air Force reckons to have a reserve at the outbreak of war to tide it over the first two or three months while the war machine begins to operate, and to run on production thereafter

An investigation should be made showing exactly what proportion of our front-line establishment was written off each month, and what were the causes It should be possible to make a fairly accurate estimate of our battle losses and the German battle losses, and the calculation should be made assuming that their other losses are *pro rata* the same as ours It should be borne in mind that the Germans must send to the training establishments and write off therein an equivalent number of those which we have to devote to this purpose, O T U s counting as training establishments

5 According to our information, only 400 German trainers are produced each month This number seems most inadequate to replace the pilot wastage in such a huge Air Force as the Air Intelligence attributes to the Germans We use considerably more, without counting those delivered direct to the training schools in Canada

We are told that Germany had a huge reserve of pilots trained before the war, and that few pilots trained since have been found among the prisoners If this were so, and if the huge reserves of machines also had really been in existence, it seems inconceivable that they should not have been brought together and the operational strength correspondingly increased for the duration of the great air battles

6 Every effort must be made to clear up the present contradiction The M E W estimate for the output is incompatible with a front-line strength much higher than 3,000 machines This figure is consonant with the weight of the German effort at Dunkirk and in the Battle of Britain (taking account of the favourable geographical factors) The Air Intelligence estimate is nearly twice as great

At present the only possible explanations seem to be

(*a*) That M E W is wildly wrong, and that the German output is nearly twice as great as they believe Further, that the Germans did not make any very great effort in the Battle of Britain or at Dunkirk

(*b*) That, on the contrary, our German Section have been misled, possibly intentionally, by the Germans, and are pinning their faith to an estimate far in excess of the real figure

(*c*) That the units identified by the German Intelligence Section are not all of them what we should call front-line units, but that a considerable proportion of them (at least one-third) are non-operational, perhaps corresponding to O T U s

APPENDIX E

MONTHLY SUMMARY OF LOSSES OF BRITISH, ALLIED, AND NEUTRAL MERCHANT SHIPS AND FISHING VESSELS BY ENEMY ACTION

(Figures corrected to May 1, 1949)

1941	British		Allied		Neutral		Total	
	No of Ships	*Gross Tons*	*No of Ships*	*Gross Tons*	*No of Ships*	*Gross Tons*	*No of Ships*	*Gross Tons*
January	44	209,394	30	107,692	1	2,962	75	320,048
February	79	316,349	20	82,222	1	3,197	100	401,768
March	98	366,847	32	138,307	9	32,339	139	537,493
April	79	362,471	67	256,612	8	34,877	154	653,960
May	96	387,303	24	98,559	6	14,201	126	500,063
June	63	268,634	35	142,887	10	19,516	108	431,037
July	36	95,465	6	23,994	1	1,516	43	120,975
August	31	96,989	9	32,010	1	1,700	41	130,699
September	61	215,207	13	47,950	9	22,595	83	285,752
October	32	151,777	14	53,434	5	13,078	51	218,289
November	29	91,352	4	6,260	1	6,600	34	104,212
December	124	271,401	44	159,276	19	55,308	187	485,985
Totals	772	2,833,189	298	1,149,203	71	207,889	1,141	4,190,281

Note.—The losses in December include about 270,000 tons lost in the Far East Of this 194,000 tons was British

APPENDIX F

MILITARY DIRECTIVES AND MINUTES

JANUARY-JUNE 1941

Prime Minister to Secretary of State for War and C I G S 6 Jan 41

W S 5A has already started and B starts immediately There is therefore no question about them They contain together 55,000 men, of whom 12,000 are for India, etc , and 43,000 for M E. Of the 43,000 M E , about 22,000 are for fighting units and drafts, and 21,000 technical, L of C , base, etc , of which about 4,000 are Navy and R A F Thus the Army in M E receives 22,000 fighting and 17,000 other men

2 The present composition of the Army in the Middle East (excluding Kenya and Aden, nearly 70,000) reveals 150,000 fighting troops Behind this are 40,000 L of C and 20,000 base establishments and details—*i e* , 150,000 to 60,000 To this will now be added by W S 5A and B 22,000 fighting and 17,000 L of C , base, etc , making a total of 172,000 fighting and 77,000 rearward services

3 Convoy W S 6, now being loaded, contains 8,500 fighting troops, plus fighting share of 4,000 drafts—say 2,500—equals total fighting troops 11,000, excluding the Mobile Naval Base, 5,300 (of which later), and the R A F (including training school to Capetown) and R N 7,000, 2,000 Free French, and about 9,000 base and other details. Upon the arrival of this convoy the total figure for the Middle East will stand at fighting troops 183,000 and 86,000 rearward units—*i e* , 15 to 7 The progressive deterioration in the proportion between fighting troops and rearward services must be noted

4 But the category "fighting troops" requires further searching analysis We are told, for example, that the 7th Australian Division, 14,800, is untrained and largely unequipped, and there is the Cavalry Division, 8,500, whose mechanisation has not yet made progress, and who cannot really be called fighting troops except for local order There are several other units I could specify which are similarly not fighting troops in the effective mobile sense—say 6,000 Thus 29,000 should properly be subtracted from the fighting total, reducing it from 183,000 to 154,000, and added to the rearward services and non-effective, raising them from 86,000 to 115,000 The condition of the Army of the Middle East (excluding the 70,000 in Kenya and Aden) is therefore represented by 154,000 fighting troops and 115,000 rearward and non-effective (except for immediate local security) The

proportion of non-effectives seems much too high It must be remembered that further great reductions could be made from the effective fighting troops, since every division or brigade group has its own first-line transport and is supposed to be a self-contained military unit Further, it should not be forgotten that in order to supply all this rearward and unorganised or non-effective strength the rations of the British people have had to be severely reduced, and further cuts are in prospect, and that every man and every ton of stores has to be carried and transported at heavy risk from enemy U-boat, air, and raider attacks round the Cape of Good Hope by ships whose there-and-back voyage occupies, with turn-round, not less than four months. It is therefore incumbent upon all loyal persons, whether at home or in M E , to try to increase the fighting troops and to keep at the lowest possible the rearward and non-effective services In this lies a great opportunity for brilliant administrative exertion, which might produce results in war economy equal to those gained by a considerable victory in the field

5. If I could be assured that the plethora of rearward services contained in the aforesaid convoys W S 5A and B and W S 6 would animate and render effective the 29,000 non-effective fighting men mentioned in paragraph 4 above I should be content. For instance, will the 7th Australian Division gain the ancillary services necessary to fit it for other than local action? Will the 8,500 Cavalry Division become a mechanised unit capable of acting in brigades, or at least regiments, against the enemy? Then, although the proportions of non-fighting troops now crowding our convoys would still be a very hard measure, at any rate the Army in the M E would grow markedly in fighting strength, and the delay in sending the 50th Division would be tolerable It may be that some consoling information will be forthcoming about this

The question of whether it would be better to send the 1st Brigade of the 50th Division instead of the Mobile Naval Base in W S 6 is nicely balanced, but preparations may have advanced too far for a convenient change of plan. This must be considered to-morrow (7th) by C O S. Committee, observing that it will be out of action for nearly three months

6 It is otherwise necessary to approve the dispatch of W S 6 (reduced to 34,000 or less) as now proposed I deeply regret the resultant composition of the Army in the M E When all these convoys have arrived its total will amount to 240,000, plus 43,000, plus 20,000—total over 300,000, to which must be added 70,000 in Aden and Kenya —total 370,000 men, on pay and ration strength From this enormous force the only recognisable fighting military units are the following

6th Australian Division
One New Zealand Division, comprising two brigade groups
4th Indian Division.
5th Indian Division.
16th Infantry Brigade
2nd Armoured Division.
7th Armoured Division (incomplete).
6th British Division (incomplete)

And such fighting units as have been formed from the 70,000 men in Kenya and Aden—*e g*, two South African brigades, two West African brigades, and local East African forces It is hoped that to these will soon be added (*a*) the completion of the above incomplete units, (*b*) a seventh British division formed out of the unclassified and by combing the rearward services·

the 7th Australian Division,
and a mechanised cavalry division

This will amount to about ten divisions, infantry, armoured, and cavalry, plus say, one division from Kenya—total 11 divisions Even this would be a very small crop to gather from so vast a field

Prime Minister to General Ismay, for C O S. Committee — 21 Jan 41

The following decisions arise from our discussion last night

Three Glen ships, with full complement of landing-craft and with the Commandos assigned to those ships on board, less one Commando (which General Wavell already has), should sail at earliest round the Cape to Suez

2. There will remain behind

(*a*) The Commando redundant through one being already in Egypt
(*b*) The Commando troops embarked on *Karanja*
(*c*) The rest of the Commando force in this country This should be made up immediately to the full strength of 5,000 and be fully equipped, and should continue their training at full speed If this is not done we shall have lost an essential weapon of offence needed to man and use the new landing-craft, which are coming out steadily now from the builders It will be necessary for D.C O to remain at home to reorganise and rebuild this force up to its full 5,000

Pray let me have a plan to implement paras. 1 and 2 during the day (21st)

3 General Wavell should be told that his plans for advancing to Benghazi are approved Unless this presents altogether unexpected difficulties he should at the same time be able to prepare in the Delta a

force sufficient to take the principal "Mandibles" [Rhodes] when the landing-craft and the Commandos arrive In the meanwhile he is to make all preparations in order that the attack may be delivered at the earliest moment He should be asked to report on the above assumption when he could do this, and what main units he would use It is hoped that the attack would be delivered not later than March 1

4. General Wavell should also begin immediately to build up in the Delta a strategic reserve to be used in Greece or Turkey as occasion may require. Having established himself strongly at Benghazi with a field force and an armoured division based on that port, he could drop the overland line of communication and thus save both men and transport

Benghazi, if captured [by us], should be made a strongly defended naval and air base, guns, etc , being drawn as may be necessary both from Alexandria and intermediate ports or posts on the lines of communication He ought therefore to be able to create a strategic striking force (of which the troops for "Mandibles" will form a first instalment) in the next two months It is hoped that this force may soon attain the equivalent of four divisions, though probably brigade group organisation would be preferable

5 The air disposition must conform to the above, subject to the commitments we have already made to Greece. The first duty of the A O C -in-C M E is none the less to sustain the resistance of Malta by a proper flow of fighter reinforcements To enable these tasks to be performed *Furious* will make another voyage with a third consignment of forty Hurricanes

6 An expeditionary force of two divisions, plus certain corps units and the Commandos when reorganised, should be prepared for action in the Western Mediterranean, whether for "Influx" or "Yorker," to aid General Wavell as circumstances may suggest Both these plans are to be studied and perfected, "Yorker" being the more probable A commander should be appointed and an attempt made to be ready to act after March 1 The impingement of the above on later convoys to M E must be examined and reported

Prime Minister to Secretary of State for War 29 Jan 41

I am very much obliged to you for the considerable effort you have made to meet my views and reduce Army demands upon the man-power of Great Britain.

2 I still do not understand how a division supposed to be complete with 15,000 men of all arms requires 35,000 men, or 20,000 extra Perhaps it will be simpler to take a corps of three divisions, which on your calculations would require 105,000 men, of which 45,000 only would be included in field units Let me have a table showing how the remaining 60,000 are divided between

(*a*) corps troops,
(*b*) share of Army troops,
(*c*) lines of communication troops

3 Neither do I understand the scale on which the lines of communication troops is calculated The troops in Great Britain lie in the midst of their base of supplies and of the most highly developed railway network in the world They have roads innumerable and of high quality. In the event of invasion the advances they would have to make are in the nature of 70–100 miles at the outside, although of course a larger lateral movement by rail from south to north, or *vice versa*, might be required Such conditions are not comparable at all with those prevailing in France, where, owing to our choosing to base ourselves on St. Nazaire, etc., we had a 500-mile line of communication, mainly by road, to maintain. What are the differences in the scale of L of C. troops provided for the first ten divisions in France this time last year and those you now propose for the troops retained in Great Britain for defence?

4 The problem will not be solved without taking a view forward of what is likely to happen in the next twelve months We shall certainly have to keep not less than fifteen British divisions behind the beaches to guard against invasion For the bulk of these a scale much less than the French scale (B E F) should suffice The forces in the Middle East, now that the Mediterranean is closed, can only be built up at a reduced rate But we ought to assume that by July there will be in the Delta or up [along] the Nile 4 Australian, 1 New Zealand, 1 + 1 South African,* 6 out of 8 Indian, and 3 British divisions, or their equivalents in brigade groups In addition, there will be in Africa the four African Colonial divisions These last, surely, are not divisions in the ordinary sense—*i e*, capable of being used as integral tactical units in the field? Are they not, in fact, the garrisons of East and West Africa and the Soudan, requiring only small complements of artillery and technical troops, and with lines of communication provided locally? Let me know what scale of corps troops, share of Army troops and L of C. troops you contemplate for these four sedentary or localised so-called "divisions". Is it not a mistake to call them divisions in any sense?

5. Returning to the Army of the Nile, with its sixteen divisions, it must be observed that once Benghazi has been taken and strongly fortified with a field force based upon it the conditions in Egypt should be such as to enable internal order to be maintained by Indian divisions, who will in fact be living very close to the possible centres of disturbance, and who will not have to take the field like a British division

* Extra to original 57

acting in France or Flanders, or even a British division at home. What scale of L. of C. troops are you providing for these? Do you think it necessary to organise them in corps, and supply them with the European quota of medium and heavy artillery, etc.?

6. We must however contemplate as our main objective in this theatre the bringing into heavy action of the largest possible force from the Army of the Nile to fight in aid of Greece or Turkey or both. How many divisions, or their equivalent, do you contemplate being available by July for action in South-East Europe? I should have thought that the 4 Australian, 1 New Zealand, 1 of the 2 South Africans, the 3 British, and 3 of the 6 Indian divisions should be available—total 12. These troops must be equipped on the highest scale, for it is Germans they will have to fight. On the other hand, they will come into action only gradually—probably 4 divisions by the end of March, and the rest as shipping and equipment becomes available. The problem, therefore, is for a first-class scale for 12 divisions against the Germans, a very much reduced second-class scale against the disorders in Egypt, or to take charge of conquered Italian territory, and a still lower scale for the so-called African Colonial Division. I hope that with this picture, which the General Staff should consider carefully, your problem may be more precisely defined—viz., 5 British divisions at home at highest mobility, 10 at secondary, working up to 12 in the Middle East in action against the Germans in Greece or Turkey on the highest scale, 4 in Egypt, Soudan, etc., on a moderate scale, and 4 African Colonials, according to local conditions—total 35, to which must be added 2 Indian divisions, for service in Malaya, total 37, leaving from your total of 58* 21 divisions. Of these 9 are armoured divisions, leaving 12 British infantry divisions to be accounted for.

7. What is the picture and forecast for these 12 British divisions? Up to 6 they have to go at very short notice to French North Africa, or alternatively perhaps to work with a friendly Spain. We cannot do both. These 6 divisions will come into operation in 2 corps of 3 divisions each, but owing to shipping exigencies they can only come gradually into operation. In so far as they come into action at all, it will be against the Germans. Therefore, whatever is thought to be the most appropriate scale must be provided. It must however be observed that neither of these theatres offers opportunities for the use of heavy or much medium artillery, and that in the Spanish alternative the war might well take a guerrilla form.

8. We cannot hope to arm the remaining 6 divisions to the full scale for many months to come, but if they were brought to the anti-

* One South African division extra to original 57.

German scale for oversea operations by the end of August it would be satisfactory

9. Nine armoured divisions are comprised in the total number of 58. What is the distribution contemplated for these? At first sight 4 at home, 2 available for amphibious action in the West, and 3 in the Middle East or Balkan theatre would seem appropriate It is clear that the rearward and repair services of any of these divisions sent abroad require to be on a larger scale than those which lie handy to all the great workshops of Great Britain. Have these differentiations been allowed for?

10 Battle wastage at 8,500 a month is not excessive as a theoretical forecast In practice however it does not seem likely that, apart from invasion, action on this scale will begin for several months. It might be safe as a working arrangement to bring this monthly figure of 8,500 into account only from July 1, 1941 This would save 60,000 men [from the calculation]

11 The wastage from normal causes of 18,750 a month, or 243,750 a year, appears a high figure, and one wonders whether it may not be reduced as better accommodation and more settled conditions are established in Great Britain, and as the men themselves become more seasoned I should like to know how many of these men discharged from the Army are unfit for any other form of war work What is the number of deaths per month, the total incapacitated, those fit for lighter duties, and those fit for munitions work? I should expect that at least 10,000 a month would be capable of some other form of employment This point is important for the War Office, as in stating the man-power demand which is to be made upon the nation the Army should credit itself with any men who are yielded up who are still capable of civilian service This of course does not affect the problem, but only the statement of the problem; none the less it is important

12 I regard A D.G B as a source which may well at some future date yield economies because of new methods and our increasing ascendancy in the air It is astonishing how great are the numbers of men required per gun. Careful study should make it possible to reduce the numbers in many localities, and to accept a slightly lower scale of immediate preparedness Even a small percentage of saving under these heads would enable the additional guns and searchlights now coming into action to be manned with a smaller demand upon man-power

13. I hope I am not to infer from the expression "beach battalions" that any body of young, physically fit, efficiently trained men would be relegated to a particular function It is indispensable that a continuous rotation should take place, all brigades taking their place on the beaches in turn, or coming into the back areas for service in the mobile divisions

14 Generally speaking, I do not consider that a demand by the

Army for 900,000 men, less 60,000, less 150,000 (paragraphs 10 and 11)=690,000 net up to October 1, 1942, is excessive The training process must be maintained, wastage must be made good [When] once the Army is heavily engaged it would be more natural to draw large numbers from the public and to comb the munitions and A R P services. It is the demand in the next six months, while military operations are at a minimum, that I am anxious to keep within limits

15 I await the further information which I ask for in this paper, but meanwhile I should greatly regret to see 20 medium regiments or 480 guns retrenched for a mere saving of 18,000 men out of the enormous totals presented, and similarly, 7 field regiments of 168 guns for the sake of saving 5,600 men It is essential to strengthen the Army in fighting troops, and it is better to take some risks in theoretical calculations of wastage, even if these should be falsified at a later date, than to fail at this moment to produce the proper quota of artillery

ARMY SCALES

Directive by the Minister of Defence

6 Mar 41

When in September 1939 the Cabinet approved the formation of a Field Army of 55 divisions it was not realised that a division as contemplated by the War Office, with its share of corps, Army, G H Q, and L of C formations, would require 42,000 men, exclusive of all training establishments and of all garrisons, depots, or troops not included in the Field Army At that time also it was assumed that the bulk of our Army would stand in the line with the French under conditions comparable to those of the last war, whereas the bulk of our Army now has to stay at home and defend the Island against invasion Thirdly, the shipping stringency makes it impossible to transport and maintain very large forces overseas, especially on the high scales which the War Office regard as necessary.

2 Out of the 55 divisions (now become 57), 36 are British and 21 overseas troops Of the 36 British divisions, 1 (so-called) division is in Iceland, and 1 (the 6th) is forming in Egypt, together with 2 armoured divisions there, total British divisions now overseas=4

3 Twenty-five British infantry divisions and the equivalent of 7 armoured divisions in process of formation, total 32, are now included in the Home Forces Army At 19,500 men apiece, these 25 British infantry divisions aggregate 487,500 men, and the 7 armoured divisions at 14,000 apiece aggregate 98,000, total 575,500. In addition to the divisional organisation, C-in-C Home Forces has 10 independent brigades, including the Guards brigades, 27 beach brigades, and 14 unbrigaded battalions, all British At an average of 3,500 men apiece,

these 42 brigades or equivalents account for about 150,000 men. Therefore the total number of British in tactical formations at home amounts to 735,500 men.

4. There are on our ration strength at home 1,800,000 British soldiers 735,500 are accounted for in the above formations, leaving 1,064,500 to be explained as corps, Army, and G.H Q troops and A D G B., or as training establishments, depots, etc., and as part of the rearward services of the forces overseas.

5 It is upon this pool of 1,064,500 that the Army must live By wise economies, by thrifty and ingenious use of man-power, by altering establishments to fit resources, it should be possible to make a very great improvement in the fighting strength Apart from this capital fund of man-power, the Army can count each year upon its 18's and 19's It is only in the event of heavy casualties being sustained through many divisions being simultaneously and continuously in action—which, except in the case of invasion, is extremely unlikely—that any further inroad can be allowed upon the man-power resources of Great Britain In other words, the Army can rely on being kept up to something like their present figure of about 2 million British, and they will be judged by the effective fighting use they make of it

6 At the same time, it will be well to plan an eventual increase of armoured formations to the equivalent of 14 armoured divisions (or 15 if the Australian armoured division materialises), in which would be included the Army tank brigades A reduction of several infantry divisions would be required, and the British Army would then be composed of 14 armoured divisions (or their equivalent) and about 22 infantry divisions. The War Office and Ministry of Supply should work out proposals on these lines

7 The 3 East African divisions and the West African division should not be organised in formations higher than brigades or small mobile groups adapted to the duties they have to perform.

8 It will be impossible for us to maintain from Great Britain any large addition to our Army in the Middle East, because we have to go round the Cape The main accretion of this Army must come from India, Australasia, and South Africa, with later on munitions from the United States Three or four more British divisions is the most we can hope to send and keep there. One must consider that General Weygand's silence has released us from any offer of helping him up to six divisions, although of course we might act on our own volition An amphibious striking force of eight or ten divisions, mostly armoured, is the utmost that need be envisaged in the West There can be no question of an advance in force against the German armies on the mainland of Europe

9 The above considerations and the situation as a whole make it impossible for the Army, except in resisting invasion, to play a primary rôle in the defeat of the enemy That task can only be done by the staying power of the Navy, and above all by the effect of air predominance Very valuable and important services may be rendered overseas by the Army in operations of a secondary order, and it is for these special operations that its organisation and character should be adapted

10 The reactions of the foregoing directive on man-power accommodation, ammunition, stores, etc , should be worked out

Prime Minister to General Wavell 4 June 41

I have for some time been considering means by which I could lighten the burden of administration which falls on your shoulders while you have four different campaigns to conduct and so much quasi-political and diplomatic business

2 During the last nine months we have sent you close on 50 per cent of our whole output here, excepting tanks and less India's sub-share You have at the present moment 530,000 soldiers on your ration strength, 500 field guns, 350 A A guns, 450 heavy tanks, and 350 anti-tank guns In the months of January to May upwards of 7,000 mechanical vehicles have reached you In drafts alone, apart from units, we have sent since the beginning of the year 13,000 The fighting in the South has for two months past enabled a northward movement to begin, yet you are evidently hard put to find a brigade, or even a battalion, and in continual telegrams you complain of your shortage of transport, which you declare limits all your operations

3 In order to help you to produce the best results, I wish to relieve you as much as possible of administration, and thus leave you free to give your fullest thought to policy and operations Here at home General Brooke has a very large Army to handle and train, but he has behind him the departments of the War Office and of the Ministry of Supply Something like this separation of functions must be established in the Middle East, although in this case your ultimate authority as Commander-in-Chief will reign over the whole theatre

4. What has been said above applies also, *mutatis mutandis*, to the Air Force and Fleet Air Arm

5 The shipping stringency has prevented the reinforcement of the Middle East to the scale which I had hoped for some months ago, and the undoubted threat of invasion in the late summer and autumn had made the General Staff and the Home Forces Command most close-fisted Nevertheless it is hoped, depending on the situation, to send you in the next four months, that is to say, June, July, August, and September, an additional infantry division, besides the 50th, as

well as a full supply of drafts, details, and equipment of all kinds Thus it should be possible to organise for the autumn and winter campaigns, which may well be very severe, the following mobile field forces.

Four Australian divisions.
One New Zealand division
Two British Indian divisions (4th and 5th).
Two South African divisions
The 6th British Infantry Division—to be organised on the spot,
The 50th British Infantry Division, and
The new division (total British divisions three).

You have now ready or in process of construction the 7th and the 2nd Armoured Divisions, and you have got to make the best you can of the trained Cavalry Division, which is being reconstituted as an armoured force Total, fifteen divisions This represents about 600,000 men, from which, without prejudice to the mobile divisions, internal security forces and rearward services must also be provided

6. All future British-Indian divisions will go in at Basra, and I hope that Eritrea, Abyssinia, Kenya, and the Somalilands can be left to native African forces (less one West African brigade to be returned to West Africa) and armed white police

7 The development and maintenance of the Army of the Nile, operating in Cyrenaica and in Syria, would require organisation and workshops on a far larger scale than you have yet enjoyed Not only must the Egyptian workshops be raised in strength and efficiency, but further bases, with adequate port facilities, will have to be built up, say at Port Sudan and Massawa, using perhaps the town of Asmara, which has fine buildings, and also Jibouti, when we get it At the same time developments on a great scale will be set on foot by the Government of India, with our active aid, it being hoped that at least six or seven divisions, with apparatus, may presently operate thence.

8 I therefore propose to set up under your general authority an organisation under an officer of high rank, who will be styled "Intendant-General of the Army of the Middle East" This officer will be equipped with an ample staff, drawn largely from your existing administrative staff and with a powerful and growing civilian element, to discharge for you, as mentioned above, many of the services rendered by the War Office and Ministry of Supply to General Brooke His duties will include the supervision and control of rearward administrative services, including the military man-power not embodied in the tactical units or employed in the active military zone.

9 President Roosevelt is now sending, in addition to the thirty ships under the American flag, another forty-four vessels, which carry, among other things, 200 additional light tanks from the United States

Army Production, and many other important items, of which I will furnish you a list It seems to me probable, and I am trying to arrange, that a great part of the supply of your armies will come direct from the United States, both by the eastern and western routes

10 Accordingly, we are sending out by air General Haining and Mr T C L Westbrook, of the Ministry of Aircraft Production General Haining will be appointed Intendant-General The War Office are telegraphing to you separately instructions which are being issued to him Under him Mr Westbrook will take charge of the development of ports and transportation facilities and the reception, maintenance, and repair of the whole of the armoured vehicles and mechanical transport He will be accompanied by a number of consultants on specialised subjects, such as transportation, port development, and workshops He will collaborate with Air Marshal Dawson, who is in charge of the cognate activities of the Royal Air Force and Fleet Air Arm, with a view to pooling resources

11 General Haining's duties in the first place will be to examine on the spot and to discuss with you the implementing and precise definition of the general directive and policy set forth in the preceding paragraphs, which must be accepted as a decision of His Majesty's Government After not more than a fortnight from the date of his arrival the report must be telegraphed home I hope it may be agreed, but any points of difference will be settled promptly by me Moreover, I shall not allow the scheme to lose any of its force and scope in the detailed application which must now be given to it

12 Because of the great mass and importance of the American supplies, and the fact that the war in the Middle East cannot be conducted at its needful scale without them, I have asked President Roosevelt to allow his envoy here, Mr Harriman, to proceed forth with to the Middle East with the other members of the mission Mr Harriman enjoys my complete confidence, and is in the most intimate relations with the President and with Mr. Harry Hopkins No one can do more for you Mr Harriman will be accompanied by one or two of his own assistants, who have shown great aptitude and ardour over here It would be disastrous if large accumulations of American supplies arrived without efficient measures for their reception and without large-scale planning for the future Besides this it will be necessary that considerable numbers of American engineers and mechanics should come for the servicing and repair of their own types of aircraft, tanks, and M T I commend Mr Harriman to your most attentive consideration He will report both to his own Government and to me as Minister of Defence

APPENDIX G

PRIME MINISTER'S PERSONAL MINUTES AND TELEGRAMS

JULY-DECEMBER 1941

JULY

Prime Minister to King of Greece 1 July 41

I have been thinking a great deal about your Majesty in these months of stress, danger, and sorrow, and I wish to tell you how much your bearing amid these vicissitudes has been admired by your many friends in England, as well as by the nation at large The warmest welcome awaits you here, where all are resolved to conquer or to perish It is my confident hope that when the good days come the glory which Greece has won will help to heal the memory of her present suffering

Prime Minister to General Ismay 1 July 41

The Germans are making a good deal of use of flame-throwers. How does this matter stand?

(*Action this Day*)
Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 1 July 41

I presume that effective arrangements have been made to prevent reinforcement of the Vichy forces in Syria by sea How does this stand?

Prime Minister to Secretary of State for Air 1 July 41

I note that your actual expenditure of bombs in May, 2,920 tons, was less than half the monthly estimated expenditure for the second quarter of this year, and that at this rate of expenditure your stock represents 30 months' supply

The last thing we wish of course is to have any shortage of bombs if and when you are ready to drop them in quantity But in the light of these figures you might perhaps wish to review your requirements, which seem to be largely attributable to your desire for a six months' reserve

Unless you are really assured that you will be in a position to make full use of these great quantities, we should consider whether some filling capacity should be transferred to other uses

Prime Minister to Minister of Food 2 July 41

I am glad that the egg scheme attributed to you was not actually

the scheme you had in mind. It is always difficult to hold the balance between the need for increasing total food supplies and the need to maintain a fair distribution We should not be too hard on the private individual who increases his supplies by his own [productive] efforts

It is satisfactory that the meat prospects are improving, and I hope that pressure on the United States to increase her pork output will soon enable us to raise the ration without risk of having subsequently to reduce it

We do not wish to create a grievance among farmers by compelling them to slaughter beasts which they can fatten without imported feeding stuffs, on the other hand of course the country cannot go hungry because farmers do not choose to bring their beasts to market. It will no doubt be possible to arrange with the Minister of Agriculture, perhaps by a carefully worked out price policy, a scheme which will keep the meat supply as constant as possible having regard to seasonal factors

As to wheat, the point I had in mind was not so much our stock as the danger of getting into a vicious circle: people eat more bread owing to a shortage of meat, and thereby compel you to import more wheat, thus reducing the shipping space available for bringing in other foods I do not believe there is great danger of the harvest being destroyed by the enemy this year We have found it very hard to burn crops, and if you will ask the Air Ministry they will explain to you why the dew conditions in this country make it even harder here than on the Continent

Prime Minister to Secretary of State for War and C.I.G S 3 July 41

In forming a very large armoured force such as we contemplate, while at the same time carrying on the war, a large element of improvisation is necessary, and this applies especially to the more backward formations It is highly questionable whether the divisional organisation is right for armoured troops A system of self-contained brigade groups forming part of the Royal Tank Corps would be operationally and administratively better One can see how ill-adapted the divisional system is when the 7th Armoured Division, one of our most highly trained and armoured units, goes into action "less one brigade", it having in fact only two, with certain additional elements However, where divisional formations have grown up and have been clothed with armed reality the conditions of war do not permit the disturbance of a change With the more backward formations the case is different They should be brought into coherent existence as brigade groups, armed with the best weapons available at the moment, and worked up gradually by increasing the proportion of the latest armoured vehicles Care should be taken that in every phase of their working

up they should have a definite fighting value It may not be possible to give all the armoured brigade groups the same equipment at the same time They must take what is going, and make the best of it For instance, in forming a new or backward armoured brigade group in this country it should first of all receive a full complement of armoured cars or Bren gun carriers, and should immediately become "brigade conscious". They should be trained in regimental and brigade exercises just as if they were a fully equipped armoured formation This is specially true in all wireless telegraphy services. In an emergency they would act as a motor machine-gun unit. As proper tanks become available, these should be infused into the regiments as a growing core, until finally the men are well used to looking after motor vehicles and well trained in the manœuvres of an armoured brigade formation They would then eventually receive their full equipment of whatever tanks are available, these tanks themselves being replaced by later models as they come to hand or are transferred to them from the more fully equipped formations Thus at every stage there would be weeded out the non-tank-minded personnel, there would be an expansion of instruction in tank tactics, and a practical value in the event of emergency would be maintained

2 Different conditions present themselves in the case of the Cavalry Division, which has so long been in Palestine ineffective as a military factor This Cavalry Division should be reorganised as fast as emergency conditions of war permit, in two brigade groups, each of which should consist of three tank regiments, twelve motorised field guns, one motorised machine-gun regiment, and ancillary services The formation of these two armoured brigade groups should have a high priority, certainly one in advance of any more backward British armoured units It would be a great convenience if these two brigades could in the first instance be ripened from mere motor machine-gun units into tank units by receiving the flow of light medium tanks from the United States which has now begun President Roosevelt has informed me that he has allocated (apart from the sixty already approaching and other orders) 200 light cruiser tanks for shipment in American vessels to Suez in the next few months Surely these additional 200 should form the main equipment of the two ex-cavalry armoured brigade groups The balance of the various regiments would continue to use *pro tem* the armoured cars or Bren gun carriers which they had begun to work with The marrying of these good troops to the windfall of 200 American light cruiser tanks would bring into being two effective armoured brigade units extremely well adapted for Palestinian, Syrian, and Iraqian warfare at a far earlier date than any equal fighting value could be [otherwise] achieved

Prime Minister to Major Morton 6 July 41

Please make sure that a list is kept of young Frenchmen who are sentenced by the Vichy courts to imprisonment for de Gaullist sympathies in France or in Morocco, so that they may be looked after later on.

(Action this Day)
Prime Minister to C.I.G.S. 6 July 41

It is nearly six months since you and Mr Eden went to Cairo, charged, *inter alia*, with the task of reporting on the interior economy of the Army in the Middle East Yet to-day the condition is deplorable, and our detailed knowledge most defective The War Office ought to have a full picture of the development of the fighting formations, and I certainly cannot discharge my responsibilities without it

2 It is not much to ask a division or brigade group to send in a monthly return of their major items of equipment I cannot imagine a competent divisional general who would not know where he was in this matter from week to week—indeed, almost from day to day

3 We should have a monthly return, considering the immense daily flow, including Air Force trivialities

General Haining's organisation ought to know the whole position, and there ought to be no difficulty in their telling us

You are wrong in supposing that this return is needed for statistical purposes only Without a clear up-to-date picture of the state of Middle East formations no view or major decisions can be taken by the Defence Committee or the War Cabinet The alternative is to continue in the state of ignorance and confusion which is leading us towards disaster

While I should be ready to agree to some small simplification of details, if you will propose it to me, I must insist upon knowing all the essential facts.

Reference C I G S minute of July 5, 1941, referring to the Prime Minister's request for a detailed distribution list of equipment, by formations, in the Middle East

(Action this Day)
Prime Minister to Secretary of State for War 6 July 41

Why have we not yet been told that the Blues, Life Guards, and Essex Yeomanry took part in the capture of Palmyra? These units have long ago been identified by contact, and there cannot be any military reasons for not disclosing this interesting piece of information to the British public

It is this kind of abuse of censorship, in the name of operational secrecy, that rightly irritates the House as well as the Press, and makes the more important positions more difficult to hold

Prime Minister to Minister of Food 7 July 41

I am glad that you are preparing for the American authorities an estimate of our full requirements of pork and dairy products, and that you have asked them for a greatly increased programme for eggs The total figure of the food imports to be obtained from America will, I trust, be much bigger than the one and a third million tons at present envisaged With due notice I feel sure that the Americans, without rationing themselves, could produce much more food for export to us (Pork production in the United States frequently fluctuates by nearly half a million tons from year to year)

I trust that every effort is made to get our meat from the nearest sources With due warning and a guarantee perhaps the Argentine could also expand their meat production.

Oil and oil-seeds are no doubt obtained so far as possible from Africa and imported on ships returning from the Middle East We can ill afford to send ships to India or the Pacific for this purpose now

Prime Minister to Foreign Secretary 9 July 41

Something like the following should be sent to the Minister of State for his information

Following from Prime Minister. Personal and secret. Begins An agent who we think is sure came a fortnight ago to establish a liaison between us and Vichy Our talks with him were on the dead level. He now sends us the following, dated July 5

> "1 The French Government has given the following general instructions to General Dentz
>
> "When Syria is occupied by the British the French civil servants must remain at their posts and carry on with their duties in collaboration with the Free French forces
>
> "2 I am requested to beg of you most earnestly to take these instructions into account Goodwill on your part on this occasion will make the best impression
>
> "3 Failure to meet this, the first wish expressed by my Government so soon after my return, would have an unfortunate influence on my future actions."

This must be considered in relation to the formal request for armistice with which you have already been acquainted We propose replying to the agent for Pétain and Huntziger to the effect that

1 England has no interest in Syria except to win the war

2 Arab independence is a first essential and nothing must conflict with that.

3 De Gaulle must naturally in the circumstances represent French interests in Syria in the interim He will thus keep alive the fact

that, without prejudice to Arab independence, France will have the dominant privileged position in Syria among all European nations

4 Everything must be done to soften (*adoucir*) the relations between the de Gaulle and French adherents in the meanwhile We are all committed to Arab independence, but we think that France could aim at having in Syria after the war the same sort of position as we had established between the wars in Iraq.

5 Don't forget that when we win, as we shall, we shall not tolerate any separation of Alsace-Lorraine or of any French colony from France. So try your best to feel your way through the detestable difficulties by which we are both at present afflicted

Prime Minister to General Ismay 10 July 41

In future the expression "landing" will be applied exclusively to landings from the sea All arrivals from the air will be described as "descents", and this terminology will rule throughout official correspondence

Prime Minister to Commander-in-Chief Home Forces, and to General Ismay, for C O S. Committee 10 July 41

PARACHUTE EXERCISE

It is said that the attack will be made at dawn This cannot however imply that all the parachute and glider troops will arrive simultaneously at dawn To move as many as 1,000 troop-carrying planes, or their equivalent, from French, Belgian, and Dutch bases would occupy several hours—at least four or five, *i.e* , almost all the present hours of darkness Therefore, as the journey is short, they would either be arriving in instalments during the night (in which case zero hour would probably be 1 a m), or if the first ones arrived at dawn the rest would straggle out during the remaining hours of daylight. In the latter case they would be cut to pieces by our fighters There can be no question of parachutists arriving in instalments by daylight It is noticeable that the Germans have never yet tried these descents by night. There are very great difficulties in finding exact points at which to make low-altitude descents at night

The Air Staff must be consulted upon all these vital problems It is no good starting staff exercises or studies of this kind, involving so much dislocation, upon a basis which is unreal and could not possibly occur It is quite easy to say, "12,000 parachutists land at dawn What would you do?" but this statement is meaningless without a detailed analysis of the movements which I have indicated

2 A smaller scale attack might well be more dangerous. Five hundred desperadoes, coming out of the blue without the slightest preliminary indication, might descend by day, or at any rate in the

half-light of dawn, at or near the centre of government These however would first be picked up by the R D F., and would run serious risk of interception by night and almost certain destruction by day Nevertheless, surprise has such sovereign virtues in war that the proposition should be attentively examined. The centres of government and executive control should at any rate be made reasonably secure against a sudden rush of this kind if upon examination any probability can be attached to it. The first hour is the only hour that matters, and the first ten minutes are the minutes that matter most.

3. I shall be glad if Home Forces will consult with the Air Staff and hack me out clear-cut answers to the above queries and suggestions Two or three days should suffice for the study

Prime Minister to Commander-in-Chief Home Forces, and to General Ismay, for C O S. Committee 10 July 41

How do we stand at present on the strategic and tactical camouflaging of defences against enemy attacks on airfields? What body is studying the lessons of Maleme and the batteries thereabouts?

Obviously action proceeds on two lines, viz

(*a*) The concealment of the real guns and deceitful presentation of the dummy guns. There might well be two or three dummy guns, or even more, for every real gun.

(*b*) The best of all camouflage is a confusing variety of positions made in which no one can tell the real from the sham

The tactics of holding fire from particular batteries during the early phases of an attack are no doubt also being studied

Pray let me have a report by Saturday next

Prime Minister to Sir Edward Bridges 11 July 41

Take the Hansards of the two days' production debate, and have all the passages which affect particular departments extracted and sent to the departments concerned with a request for their answers by July 19

Also pick out any passages which affect the central direction of the war and let me have them

It seems to me there were a lot of very good points made.

Prime Minister to Secretary of State for Air 11 July 41

Although radio beam bombing was neutralised last winter by our interference, it seems that the enemy is re-equipping his whole bomber force with improved radio receivers, and hopes to overwhelm our counter-measures next winter by the multiplicity of his beam stations.

No radio methods can of course prevent his finding and bombing targets like Coventry and Birmingham on fine moonlight nights But it is on these that our normal night defence should be most effective

It is the dark, cloudy nights that will be our main danger, and we should make every preparation to deal with the enemy beams, whose positions and wave-lengths we now know

I am informed that the equipment needed is not very remote from that used in ordinary commercial practice, so that it should be possible to obtain it from America even if it cannot be manufactured here Everything should be ready by the autumn Pray let me know what the position is and what measures are in hand to counter enemy developments

Prime Minister to Minister of Food 12 July 41

I am pleased to learn that the amount of food "requisitioned" in U S A is now far above the figure quoted in your May report I understand that the programme of our full requirements is much higher than the amount "requisitioned" so far I am sure that, given sufficient warning, America can and will produce or in some way provide a very large quantity of the food-stuffs we need so badly If we can import them on the short haul, shipping for almost all we require should be available

The only point in doubt is whether you have asked for sufficient pork America would find it difficult to provide us with beef or mutton, but pork supplies can be rapidly expanded, and if necessary imported in non-refrigerated tonnage

(Action this Day)
Prime Minister to Ministry of Aircraft Production, Sir Charles Craven, Secretary of State for Air, C A S (General Ismay to implement or report progress in one week), and Lord Cherwell 12 July 41

I was deeply concerned at the new programmes of M A P , which show a static condition for the next twelve or eighteen months in the numbers of aircraft No doubt new production would be bent on in the later phase I asked that these figures should be subjected to the test of man-hours involved in each type of machine This certainly shows an improvement of about 50 per cent in the British field by the twelfth month from now The American figures improve the calculation both from the number of aircraft and the man-hours standpoint, and one might almost say that the output for July 1942 would be to the present output as 1 to 1.75

2 I cannot feel that this is enough Our estimate of German monthly production by numbers is 2,100, which is the numerical level at which we stand up till July 1942, and indeed thereafter, apart from new projects We must assume that the Germans also would derive comfort from translating their numbers of aircraft into the man-hours

They may or they may not be making a similar expansion in size and quality Broadly, from the figures put before me, the impression would be one of equality for the next twelve months, so far as British and German construction is concerned, leaving any increase to be supplied by our share of United States production. Moreover, this takes no count of M A P.'s caveat that their estimates may be reduced by 15 per cent.

3 We cannot be content with the above situation, which excludes all possibility of decisive predominance indispensable for victory. I wish therefore these programmes to be re-examined, and the following three methods of expansion, together with any others suggested, to be explored by the highest authorities concerned The three methods are

(*a*) An improvement in the existing figures by speeding up and working the machine-tools longer, or by any other measures taken in the sphere of M A.P production.

(*b*) By the construction of new factories and assembling plants, or by the reoccupation or full occupation of plants vacated for the sake of dispersion This may well be justified in view of our increasing command of the British air by day and the improvement in night-fighting devices

(*c*) By a reclassification of the bomber programme so as to secure a larger delivery from well-tried types in that period

Fighter aircraft must continually strive for mastery, and rapid changes of design may be imperative But a large proportion of the bomber force will in the next twelve months be employed under steady conditions and within ranges which are moderate While all bombers required for long-distance or great heights or daylight action must be the subject of intensive improvement, a large proportion of the bombing force will be carrying their nightly load to, say, the Ruhr or other near-by targets It would seem that the Air Staff could divide their activities into near and far, and that on this basis some good lines of production, which have not yet reached their maximum, could be given a longer run at the peak, with very definite addition to numbers This would, for instance, seem to apply to the Blackpool Wellington, which is a new supply, reaching its peak in November, but only running for six months at that level If it were allowed a twelve-month run at the peak it may be that a larger delivery would be possible from November on

4. The criterion of bomber strength is the weight of bombs deliverable per month on the reasonably foreseeable targets in Germany and

Italy Have the Air Staff plans been applied to the figures of production with this end in view? It may be that a heavier load carried by a new machine would give better results But a machine which is good enough to carry two tons to the Ruhr ought to have a long run in continuous production before it is discarded. There are no doubt other instances. I have asked the M A P. to review their programmes accordingly, having regard to the grievous loss on too hasty change-overs

5. The new programme is substantially less than the March figures, and far below the October [1940] figures However, many materials have been accumulated on the October basis. A substantial expansion should therefore be possible if all factors are fitted to the optimum The Air Ministry should show how this latest programme, apart from any expansion, fits in with their pilot production for the next twelve months, having regard, on the one hand, to the reduced scale of losses which has been found operative by experience, and, on the other, to the much more lavish pilot establishment now said to be necessary in proportion to machines Bombs, explosives, guns, and all accessories must be measured in relation both to the existing programme and the necessary expansion *In principle however we must aim at nothing less than having an Air Force twice as strong as the German Air Force by the end of 1942 This ought not to be impossible if a renewed vast effort is made now It is the very least that can be contemplated, since no other way of winning the war has yet been proposed*

Prime Minister to Secretary of State for Air 16 July 41

Investigations by the Ministry of Home Security into the effect of German high-explosive bombs has shown that a far greater amount of damage is done by blast, which destroys buildings, etc, than by splinters, which find very few useful targets, especially at night, when most people are under cover

The higher the proportion of high explosive to bomb-case the greater the blast If the weight of the metal case is increased we get more splinters

Our general purpose bombs have a charge-weight ratio of about 30–70 The Germans work with a larger ratio, about 50–50. These are not only more efficient for destroying cities, they are also cheaper

In these circumstances the charge-weight ratio of our bombs ought to be reconsidered, especially now that the Air Ministry have asked for such a large expansion in output

Prime Minister to Secretary of State for Air 16 July 41

I should be glad if you could send me a brief report on the blind-landing position, showing how far the R A F is equipped with this aid

Prime Minister to Sir Edward Bridges 17 July 41

I have a feeling that Parliament does not at all understand the very great advance made in the refinement of priority questions through the development of the allocation principle. Let me have a note on this, not exceeding one page In fact, I think we hear very little about priorities now Here and there there may be a focal point, but, speaking generally, am I not right in supposing that all is running smoothly? See, for instance, how well the giving of First Priority to the production of tanks on psychological grounds has been adjusted Priorities now resolve themselves into the opening out of bottle-necks No one has an absolute priority to the exclusion of all others There have been no recent clashes. Comment freely on this by Friday.

Prime Minister to General Ismay, for departments concerned 17 July 41

What is the cause of the failure to produce containers in June? A fall from 1,500 to 500 tons is shocking, and absolutely contrary to the express instructions of the Cabinet over many months Who is responsible? The absolute maximum effort must be used, with super-priority to make, store, and fill into containers the largest possible quantities of gas.

Let me know exactly who is responsible for this failure

At any moment this peril may be upon us Papers must be prepared for Cabinet discussion next week.

Prime Minister to Home Secretary 19 July 41

I should like to have my opinion put on record that this sentence [of five years' penal servitude on Miss Elsie Orrin for saying to two soldiers that Hitler was a good ruler, a better man than Mr. Churchill] is far too heavy for expressions of opinion, however pernicious, which are not accompanied by conspiracy Nothing in the internal state of the country justifies such unreasonable and unnatural severity. I consider such excessive action defeats its own ends.

(*Action this Day*)
Prime Minister to First Sea Lord, and to General Ismay, for C O S Committee 20 July 41

I strongly deprecate bringing this [Glen] ship home We sent these three ships all round the Cape with much heart-burning in the hopes of "Mandibles" and for other island attacks. The Commandos have been frittered away, and are now disbanded The late régime in the Middle East showed no aptitude for combined operations There was no D C O [Director of Combined Operations], but only a lukewarm and uninfluential committee. Nevertheless we cannot exclude the need of landing operations in the future. The other two Glen ships are being mended, and it would be altogether wrong to take this one

away. I hope therefore the Chiefs of Staff will consider the matter in all its bearings.

(Action this Day)

Prime Minister to C A S. 21 July 41

Under the directions given at the time when the Battle of the Atlantic was declared in March, the Coastal Command received a special flow of reinforcements I understand that in pursuance of this all the Flying Fortresses, B.24s, that have come from the United States recently have been sent to Coastal Command In the United States these machines are considered the ideal bombers for Berlin, etc. Mr Hopkins has been asking me about their use, and seemed to be recording an American impression that they were lying idle because we had no crews wherewith to man them I am correcting this impression, but I think on the widest grounds it would be a very good thing if these bombers were used against Germany in bombing raids Furthermore, Coastal Command have been reinforced by sixty-five Catalinas and many Sunderlands, and the Battle of the Atlantic is very much eased by recent results, as well as by the impending developments following upon the United States occupation of Iceland, of which the First Sea Lord will tell you.

Pray let me have your views

C -in-C Bomber Command says he is very short and not expanding

Prime Minister to General Ismay, for C.O S Committee 23 July 41

I wish the Commandos in the Middle East to be reconstituted as soon as possible Instead of being governed by a committee of officers without much authority, Brigadier Laycock should be appointed Director of Combined Operations The three Glen ships and the D C O , with his forces, should be placed directly under Admiral Cunningham, who should be charged with all combined operations involving sea transport and not exceeding one brigade. The Middle East Command have indeed maltreated and thrown away this invaluable force

Prime Minister to General Ismay 25 July 41

Let me have, on one sheet of paper, the exact strength and details of the reinforcements and stores which got into Malta, and also the previous strength of the Malta garrison

Prime Minister to Colonel Jacob 25 July 41

Let me have a short account of what has happened to our rifle production What were the forecasts in September 1939? What have been the results? What loss was attributed to the bombing? What are the new forecasts up to the end of the year 1941?

Former Naval Person to President Roosevelt 25 July 41

I am most grateful for your message about the tank programme. This addition to our tank resources in the coming critical months is splendid. As to the longer-term policy, all our experience goes to show that more heavily armed and armoured vehicles are required for modern battle, and we should therefore plan to increase the output of medium tanks at the expense of light tanks, but not of course at the expense of your air programme.

2. I am much interested in your suggestion that men for our Tank Corps should be trained in the United States. We are examining it here, and will let you know our views as soon as possible.

3 We have been considering here our war plans, not only for the fighting of 1942, but also for 1943 After providing for the security of essential bases, it is necessary to plan on the largest scale the forces needed for victory. In broad outline, we must aim first at intensifying the blockade and propaganda Then we must subject Germany and Italy to a ceaseless and ever-growing air bombardment These measures may themselves produce an internal convulsion or collapse. But plans ought also to be made for coming to the aid of the conquered populations by landing armies of liberation when opportunity is ripe. For this purpose it will be necessary not only to have great numbers of tanks, but also of vessels capable of carrying them and landing them direct on to beaches. It ought not to be difficult for you to make the necessary adaptation in some of the vast numbers of merchant vessels you are building so as to fit them for tank-landing fast ships

4. If you agree with this broad conception of bringing Germany to her knees, we should not lose a moment in.

(*a*) Framing an agreed estimate as to our joint requirements of the primary weapons of war, *e g.*, aircraft, tanks, etc.

(*b*) Thereafter considering how these requirements are to be met by our joint production

5 Meanwhile I suggest that our combined staffs in London should set to work as soon as possible on (*a*), and that thereafter our technical experts should proceed with (*b*)

Prime Minister to General Ismay and Colonel Hollis, for C O S. Committee 26 July 41

Great importance should be attached to furnishing C -in-C Home Forces with a much larger number of mobile anti-aircraft batteries, particularly of low-ceiling guns, to work with the field divisions and accompany the troops and armoured columns

The Germans are quite right in always keeping their flak to the fore. No large body of troops should be assembled or be on the line of march without mobile Bofors batteries, to give them protection

Do I understand that the 218 guns will be employed in this way? If so, I think the arrangement is very sound If not, I should like the Chiefs of Staff to consider this point

Otherwise I am in full agreement with the redeployment proposed.

Prime Minister to Minister of Food 27 July 41

I understand that you have under consideration a flexible coupon system, should it become necessary to ration the secondary foodstuffs, which would make the coupons available for the purchase of a variety of alternative goods and dispense with registration at particular shops. Though rigid rationing might be easier to administer, some system which left the consumer a reasonable freedom of choice would seem much better Individual tastes have a wonderful way of cancelling out Besides, your power of varying the prices of the different commodities both in money and coupons would enable you to exercise great control over demand

Should you decide that the extension of rationing is inevitable, it would seem therefore that the flexible coupon system has much to commend it I look forward to hearing your views about this in due course.

Prime Minister to Lord President of the Council, Minister of Labour and National Service, and Secretary of State for War 27 July 41

Evidence is accumulating that the figure of 2,195,000 men is too small for Army needs, and that the number ought to be increased as soon as possible; and the Secretary of State for War is now engaged on a detailed examination of his additional requirements

2. Accordingly, the comprehensive review by the Man-Power Committee which has already been ordered by the War Cabinet must be pressed forward with all speed As soon as the main facts have been assembled, and without waiting for the full report, I should be glad if the Lord President of the Council, in consultation with the Ministers concerned, would give consideration, as a matter of urgency, to the additional requirements of the Army in the light of the general man-power position, and report on the measures that will be necessary to meet these requirements

Prime Minister to Minister of Aircraft Production 30 July 41

I shall look forward with interest to hearing of the success or otherwise of the trials of the Whittle engine in the fortnight's time. I hope they will be favourable, but I gathered from you that the present turbine blades were working We must not allow the designer's desire for fresh improvements to cause loss of time. Every nerve should be strained to get these aircraft into squadrons next summer, when the enemy will very likely start high-altitude bombing

Prime Minister to General Ismay 31 July 41

I shall want plenty of photographs of Port Soudan, Massawa, the new port which is being developed in the Red Sea, Asmara, Basra, Tobruk, etc.

AUGUST

Prime Minister to Lord President 9 Aug 41

I understand there is a proposal to make it a penal offence for any motorist who gets a supplementary ration of petrol not to keep a log-book in which every journey is entered.

To create and multiply offences which are not condemned by public opinion, which are difficult to detect and can only be punished in a capricious manner, is impolitic To make it a penal offence not to keep a log-book might come under this heading, especially as only one-twenty-fifth of our oil consumption is involved

I understand there is an alternative proposal to tell motorists that unless they can produce a log-book they will risk having their supplementary ration refused or reduced Might not this be sufficient?

Prime Minister to Chairman of the Import Executive 9 Aug 41

I understand that the Import Executive will shortly consider the arrangements made to provide cargoes for the additional ships to be put at our disposal by the U S A. in the near future It is of the first importance that all the shipping space that becomes available to us, whether from United States sources or from an improvement in the shipping position, is fully utilised to bring in cargoes which will increase our war effort and give the people a healthy and varied diet

2 Cargoes must be readily available for shipment as opportunity offers, and a report should be prepared at once, showing the steps taken to this end by increasing our orders and by building up reserve stocks close to ports overseas

3. I see that it is proposed to import 748,000 tons of soft-wood and 422,000 tons of hardwood in the second half of the year. This is far more than the figures mentioned at a recent Battle of the Atlantic meeting. Is this large import of timber being brought in because no more useful cargoes are available? Has the Minister of Agriculture been given the chance of suggesting any alternatives? For example, half a million tons of maize (which should be obtainable in the United States) would be of great value in keeping our chicken population going.

Prime Minister to First Lord of the Admiralty, Secretary of State for Air, and Minister of Aircraft Production 16 Aug 41

This is a melancholy story You will see from reading the minutes that we were promised Grummans, with folding wings, at twenty a

month, beginning in April We still have none, and are only promised the schedule set out in the First Lord's minute of July 26.*

2. I regard the supply of from six to twelve Grummans to *Victorious* and *Ark Royal* as of first importance. Especially is this the case with any carrier operating in the Mediterranean The surprise which will be effected upon the enemy when these fast fighters rise to engage them may give considerable easement, almost at once.

The cutting down of enemy bomber aircraft attack at sea far exceeds in importance and urgency any other duty which can be performed by a carrier in the Mediterranean Even if they can only work within forty to fifty miles of the parent ship they can do all that is necessary The enemy must be made to feel that to go near a ship convoyed by an aircraft-carrier is to incur heavy losses from aircraft almost equal to shore-based fighters

3 We have now no aircraft-carriers in the Eastern Mediterranean Therefore there is no point in sending folding-wing Grummans there at present The August, September, and October quotas for Grummans now assigned to the United Kingdom (total 22), and the 24 now assigned to the Middle East in the September and October quotas—total 46—should all be made available in the United Kingdom for the equipping of our aircraft-carriers Deliveries to the Middle East after October should be considered later

Let me have a monthly report of the equipment of the aircraft-carriers with Grummans.

4 When do we get our next new aircraft-carrier, *Indomitable*?

5 Unless there is some reason to the contrary of which I am not aware, the following orders should be given now·

> "The September and October batches of twelve Grummans with folding wings should be sent to the United Kingdom and *not* [repeat *not*] to the Middle East"

Prime Minister to General Ismay 16 Aug 41

COMMANDOS

I settled with General Auchinleck that the three Glen ships were all to remain in the Middle East and be refitted for amphibious operations as soon as possible

2. That the Commandos should be reconstituted, as far as possible, by volunteers, by restoring to them any of their former members who may wish to return from the units in which they have been dispersed, and that Brigadier Laycock should have the command and should be appointed Director of Combined Operations.

3 The D C O and the Commandos will be under the direct

* About deliveries of Martlet II aircraft

command of General Auchinleck This cancels the former arrangement which I proposed of their being under the Naval Commander-in-Chief.

(Action this Day)
Prime Minister to C I.G.S , and General Ismay, for C.O S. Committee 19 Aug 41

The important thing is not so much to reduce our troops in Iceland as to make it a training ground for Alpine units Can you not give some mountain guns to the artillery, instead of withdrawing them? Let me have a scheme for providing skis, snowshoes, etc., for the largest number that can be trained in mountain fighting under glacial conditions. The fact that a few more Americans have come should make the training all the easier I regard the creation of these Alpine units as a vital feature in our organisation. I ask that this may be taken up with the utmost vigour

Prime Minister to C.A.S 19 Aug 41

Thank you very much for your full explanation * Even if the airmen had been in error they would not have been to blame, because it is the system that is at fault The lack of effective and intimate contact between the air and the ground forces calls for a drastic reform The needs of the Army should be met in a helpful spirit by the Air Ministry It is the responsibility of the Air Force to satisfy the Army now that the resources are growing I hope I may have your assurance that you are striving night and day to end this lamentable breakdown in the war machine We need not go into the past, but if the Army is not well treated in the future the Air Ministry will have failed in an essential part of its duties.

(Action this Day)
Prime Minister to Minister of Supply 20 Aug 41

Pray see the attached statement [on gas and gas weapons] prepared at my direction by Lord Cherwell We must expect gas warfare on a tremendous scale. It may break out at any moment. Please see the alarming restriction which has had to be imposed on the production of mustard gas; and also the explanation of this. What do the Air Ministry mean by stopping the charging of 250-lb bombs? This seems most improvident, and is contrary to a number of Cabinet decisions, which are to the effect that the maximum possible gas is to be produced and charged into suitable containers, or otherwise stored.

I invite you to give your personal attention to this new aspect. The whole matter is dangerous and urgent in the last degree.

* About the action of the 2nd Armoured Division during the withdrawal from Cyrenaica, in March and April 1941

Prime Minister to Lord President 20 Aug 41

I am by no means convinced that there are sufficient reasons for imposing this additional obligation [of keeping a log-book by motorists] on the public There is a growing and justifiable impatience of multiplying the filling up of forms and providing a new foundation upon which further layers of officials may build their homes If you feel there is no other means of securing your objects it would be better to bring the matter before the Cabinet

Prime Minister to Secretary of State for India 20 Aug 41

Certainly let an invitation be sent, provided that in general you see U Saw

This refers to a minute from Mr Amery about conditions in Burma and a proposed visit to this country by the Burmese Premier, U Saw

Prime Minister to First Sea Lord 25 Aug 41

Will you please let me have on one sheet of paper a list of the effective Japanese Fleet and flotillas, with dates of construction, and the ships which are ready now

(*Action this Day*)
Prime Minister to Minister of Agriculture 26 Aug 41

I hear bad tales about the harvest What is the position to-day? We are clear of St Swithin's forty days now If we get fine weather what sort of estimate can you make? Alas, we spoke too soon!

Prime Minister to Production Executive 26 Aug 41

I am concerned at the great amount of man-power and raw materials which are still being directed to constructional work. The works and building programme is using 2¼ million tons of imported materials a year (iron, steel, and timber) and three-quarters of a million men

Has not the time come to disallow all new projects of factory construction, save in very exceptional cases? Can we justify further expenditure when so much existing plant is only half employed? Could not building resources be better used in providing hostels and amenities for the labour needed to man extra shifts in the existing plant?

The utmost economy should also be sought in Service requirements, which are apt to be on a more lavish scale than the needs of the moment or the available resources justify

I trust that there is some machinery for preventing designs being accepted which are wasteful of imported material

Please inform me what safeguards you have to ensure

(*a*) That new factories or building undertakings are really essential

(*b*) That the plans and designs for such undertakings are of the most economical character.
(*c*) That building labour is used to the best advantage.

Prime Minister to C A.S. 27 Aug 41

I have certainly sustained the impression that the Air Ministry in the past has been most hard and unhelpful both to the Army and to the Navy in meeting their special requirements. The Navy succeeded in breaking away before the war, but the Army lies under a sense of having been denied its proper air assistance To some extent this can be excused by the plea that the need of increasing the R.A F was paramount Now that that need is no longer so overwhelming I trust the Army's grievances and complaints will be met

There is a widespread belief that we have not developed dive-bombers because of the fear of the Air Ministry that a weapon of this kind specially associated with the Army might lead to a formation of a separate Army wing.

All these things happened before your time, but their consequences are with us to-day

Prime Minister to Foreign Office 27 Aug 41

Give me in a few lines the reasons which led to Siam calling itself Thailand. What are the historic merits of these two names?

Prime Minister to General Ismay, for C.O S Committee 27 Aug 41

In several quarters there are indications of a German move against Murmansk. It appears that, though there were no transports found when we made our abortive air attack, considerable numbers are on the move now What are we going to do about it now? Is it settled that we can do nothing more in the North? When do our two squadrons reach Murmansk? Can nothing naval be done to obstruct the movement of German transports?

Prime Minister to Chancellor of the Exchequer 28 Aug 41

How much gold have we actually got left in this island or under our control in South Africa? Don't be alarmed. I am not going to ask you for anything.

Prime Minister to Sir E Bridges 28 Aug 41

Mr Harcourt Johnstone will preside over an interdepartmental committee containing representatives of the offices concerned for the purpose of devising the best possible plan for relaxation of the black-out restrictions during the present comparative lull in the enemy's air attack

(*a*) on vehicles required for vital war services; and
(*b*) for factories and ports

The object is to secure the maximum of production for war purposes

2 The committee should consider, *inter alia*

(*a*) the categories of vehicles permitted to relax,

(*b*) the subdued character of the lighting enabling them to proceed at a reasonable speed,

(*c*) the particular routes over which and areas in which these relaxations may be specially required by the Ministry of Supply, Ministry of Aircraft Production, and the Admiralty, and, finally,

(*d*) the means of speedy return to present style if and when this is rendered necessary by enemy action in any district or throughout the country.

3 The committee is to report in one week to the Prime Minister All departments are expected to co-operate in the public interest to the utmost The preparation of the best possible plan must be considered a technical study, and does not necessarily commit the Ministerial heads of the departments concerned to its adoption This may be remitted to a committee of War Cabinet Ministers on grounds of general policy

(*Action this Day*)

Prime Minister to Secretary of State for War 29 Aug 41

I must draw your attention to the state of the cruiser tanks [in Britain]. This week, out of 408, there are actually more unfit for service than fit This figure and the system on which it rests require evidently strong handling The proportion of unfit is getting worse each week

Let me know who is responsible, and what you are going to do about it.

(*Action this Day*)

Prime Minister to C A S 29 Aug 41

The loss of seven Blenheims out of seventeen in the daylight attack on merchant shipping and docks at Rotterdam is most severe. Such losses might be accepted in attacking *Scharnhorst*, *Gneisenau*, or *Tirpitz*, or a south-bound Tripoli convoy, because, apart from the damage done, a first-class strategic object is served But they seem disproportionate to an attack on merchant shipping not engaged in vital supply work The losses in our bombers have been very heavy this month, and Bomber Command is not expanding as was hoped While I greatly admire the bravery of the pilots, I do not want them pressed too hard Easier targets giving a high damage return compared with casualties may more often be selected.

Let me have a return showing all bombers written off in August for

any cause, including crashes on landing, and also the number of bombers received from M.A.P., and the number manufactured and imported

(Action this Day)

Prime Minister to C.A.S. 30 Aug 41

What is being done about increasing the night-fighter defence in the Middle East? I gather they are by no means up to date with our devices, yet Alexandria, Suez, and the Suez Canal are places of the highest consequence.

Pray let me have a short report. General Pile might be helpful in drawing up a list of an advanced echelon of night-fighting devices, organisation, and supplies. All this is very important. Speed is vital.

Prime Minister to C.A.S. 30 Aug 41

This estimate of 1,700 German aircraft knocked out in the Russian fighting should now be brought into relation to the results of the second Singleton survey of the relative British and German air strength in all theatres.

Let me know the result at your convenience.

Prime Minister to V.C.A.S. 30 Aug 41

Good.

"The devotion and gallantry of the attacks on Rotterdam and other objectives are beyond all praise. The charge of the Light Brigade at Balaclava is eclipsed in brightness by these almost daily deeds of fame."

Tell the squadrons and publish if you think well.*

Prime Minister to General Ismay, for C.O.S. Committee 30 Aug 41

Although personally I am quite content with the existing explosives, I feel we must not stand in the path of improvement, and I therefore think that action should be taken in the sense proposed by Lord Cherwell, and that the Cabinet Minister responsible should be Sir John Anderson.†

I shall be glad to know what the Chiefs of Staff Committee think.

Prime Minister to First Sea Lord 31 Aug 41

If you think fit, and the ships are safely in port, please convey to the Admiralty War Staff, Trade Division, C.-in-C. Western Approaches, Coastal Command, and others concerned my compliments upon the vigilance, ingenuity, and flexible organisation which has in the last week enabled so great a number of ships to pass through the exceptionally heavy U-boat concentration.

* This refers to a minute about Blenheim attacks on shipping in Rotterdam.

† This refers to early plans for atom-bomb research, for which we used the code name "Tube Alloys".

Prime Minister to Minister of Information 31 Aug 41

How is our big broadcasting station, which is to override foreign broadcasts, getting on? There was a long delay in setting about it, but I understand the fullest priorities have been given. Please give me a short report—half a page

2. I think it very important that the German films of the invasion of Russia should be shown in England, and also that they should be sent to the United States. Mr Winant fully concurs with this last I sent you a message last week that I thought ten minutes of these German atrocities would be the best possible prelude to the Atlantic meeting and Iceland films What has been done about this?

3 Have the Icelanders got a copy of the film about themselves?

SEPTEMBER

Prime Minister to C I G S 8 Sept 41

Please let me have a short report on the present position of delayed-action fuzes

At the end of the last war the Germans used these on a great scale for rendering impossible the use of railway-lines, and also for booby-traps, when they retreated in France

The periods of delay should be varied from a few days to several months, so that uncertainty is never absent and breakdowns on the lines are continual I understand the method was a small metal box, not much bigger than a cigar-case, in which an acid gradually ate through a metal wire, thus establishing a contact or opening an orifice No doubt many improvements have taken place

The whole aspect of our lay-out in the East leads me to think that provision of these devices on a very considerable scale should be undertaken. We are making airfields in Anatolia, Syria, Persia, Cyprus, etc, and railways and roads are being improved and pushed forward We ought to have the means of making them unusable by the enemy for a considerable time, should we have to fall back. The best way of doing this would be to build in the mines beforehand, leaving a small sealed passage through which the appropriate fuze could be passed, should it become necessary to arm these mines. Every airfield should have twenty or thirty mines built into it Should it be necessary to evacuate, the fuzes could be put in and the surface smoothed over. The danger period must certainly last at least six months, and railroads (at any rate in their forward sections) should have at least three or four mines to the mile, and all bridges and tunnels should be mined The uncertainty of when a line or road would be out of order is more baffling than even widespread destruction, which is over once and for all

Pray let me have your thought on this

Prime Minister to Minister of Labour 8 Sept 41

Is there any truth in the allegations made in the newspapers that many of the so-called Jehovah's Witnesses are strong young healthy fellows, who do not take part in the war effort?

Prime Minister to Minister of Supply 10 Sept 41

(Copy to the Secretary of State for Air)

In your minute of August 29 you tell me that the order for 50,000 Jefferis bombs (puff-balls) cannot be produced and that you can offer 10,000 only.

I take it that this is due to the shortage of the explosive I am informed that the contents of nine sticky bombs will fill two puff-balls. We could thus obtain the remaining 40,000 puff-balls by postponing the filling of 180,000 stickies This, I understand, is only about six weeks' output at the present rate, and I therefore agree that we should postpone filling in this way

The bombard should continue in production unaffected

(*Action this Day*)

Prime Minister to C.I G.S 10 Sept 41

Please see attached from Lord Beaverbrook [about the Trans-Persian railway] In view of the danger to Murmansk and the masses of stuff we are planning to send to Russia and the difficulties of developing the railway through Persia and carrying at the same time, it seems most urgent to explore the full possibilities of road transport I could cable Mr Hopkins asking for the necessary lorries, drivers, and mechanics, if these are necessary, and I have little doubt the United States would ship them to Basra pretty quickly I know nothing about the roads, but the whole matter must be examined, together with a plan for improving the roads while the vehicles are coming from America

Let me have your views on this, if possible by to-morrow, so that I can act.

Prime Minister to General Ismay, for C O S Committee 12 Sept 41

It will not be possible for the whole British Army (other than those in the Middle East) to remain indefinitely inert and passive as a garrison of this Island against invasion Such a course, apart altogether from military considerations, would bring the Army into disrepute. I do not need to elaborate this

2. An Expeditionary Force equivalent to six divisions should be organised for action oversea.

3 Unless unexpected developments open a new theatre in Spain or Morocco, or invasion becomes imminent, we should attempt the liberation of Norway at the earliest suitable moment.

4 A plan should be prepared to act in whatever is thought to be the best place This plan should be brought before the Defence Committee before the end of the present month

Prime Minister to Sir Edward Bridges and General Ismay 13 Sept 41

It is certain that confusion will arise between Bandar Shahpur and Bandar Shah, at either end of the Trans-Persian railway. Therefore for all British official purposes the two places should be called Bandar Caspian and Bandar Gulf. Pray let directions be given in this sense.

Prime Minister to General Ismay 13 Sept 41

It is certainly necessary that this appreciation [on general strategy for the Dominions Prime Ministers] should be brought up to date It does not take any account of our occupation of Persia, and of the importance of the through route to Russia, with whom we have joined hands. It will be much easier at the end of September or in mid-October to take a view about Russian prospects No reference is made to a possible attack or pressure upon Turkey, and its consequences.

What is the hurry about this paper? In its present form it will only hustle and worry the Dominions Take, for instance, the suggestion that one of the reasons for holding Egypt is to prevent the Italian fleet from charging through the Canal to hunt the British Navy out of the Indian Ocean I should be very sorry to base our case for holding Egypt on such an argument.

Prime Minister to General Ismay, for C.O.S. Committee 13 Sept 41

I have never asked for a second voyage [of American ships for convoying Middle East reinforcements], though I hoped it would come. But it would be a great help in working off the masses of troops overdue for the Middle East All this is most gratifying. I should be glad presently of details to express thanks. Please report on facilities opened up by second trip.

Prime Minister to Minister of Information 13 Sept 41

Surely more stir ought to be made about Hitler shooting the Norwegian trade unionists, and sending others for long periods of penal servitude Ought not the Trade Union Congress to pass resolutions of sympathy? Why don't you get into touch with Citrine and work up a steady outcry? The names of the two victims should be publicised as martyrs.

Prime Minister to Sir Andrew Duncan 13 Sept 41

At my request Lord Cherwell has prepared a short note upon the import forecast. You are now considering the programmes at the Import Executive. I work in calendar years, and the import budget

which I wish to make must be for the year 1942. I should like to settle this budget at latest during November. Meanwhile comparisons between the first and second years of the war, and forecasts of the third year, are useful.

You must always bear in mind that I may have to make a large further demand for shipping, in case an Expeditionary Force has to be dispatched. Perhaps you will let me have your preliminary ideas, for which the Professor's paper forms a convenient peg

Prime Minister to Lord Cherwell 13 Sept 41

It will be necessary to prevent any diminution in the strength of the Army in 1942, and very special measures will have to be adopted to secure this There can be no question of switching off Army munitions for some time to come. I have asked that an Expeditionary Force of six divisions, in addition to the two going East, should be prepared. Where it will go must depend on events. What is left will be barely sufficient to give security at home.

The provision of the necessary men will cause great difficulties I hope, however, that A D G B , A R P., Coastal Defence, and the heavy artillery, together with some of the rearward services, may yield two or three hundred thousand men. We shall draw sharply upon reserved occupations At the present time there is grave danger of several divisions having to be broken up.

Please take the above for your guidance

(*Action this Day*)
Prime Minister to General Ismay, for C.O.S Committee 14 Sept 41

The Air Force demand shows the unbridled use of ground personnel We are planning to place eighty squadrons in the Middle East by the spring of 1942 There are already 45,000 air-groundmen there, and it is now proposed to add 40,000 more, making a total of well over 1,000 men to every squadron of sixteen aircraft first-line strength It is evident that a searching inquiry must be held into these establishments, which on their present scale will ruin our war effort

In the meanwhile only 20,000 Air Force personnel can be included in the convoys up to the end of December.

It should be noted that only thirteen air squadrons are being sent from here, not seventeen, as stated in these papers

2 The additional divisions should go intact, in accordance with my request to the President. He would never have given me the extra shipping but for the attraction of placing two strong additional divisions in the Middle East. I cannot face him with a demand to use his ships for details and drafts.

3. The above makes a total of 60,000 The troops for India would

seem to come next, in view of the four extra divisions we are to get as a result of them The A T. and A A. artillery would naturally have precedence over the field and medium, with which the Middle East is already so heavily supplied. Eighteen thousand additional Army Service Corps is a requirement very hard to justify. What particular task is this force, almost equivalent to a division in numbers, needed for?

4. With regard to drafts The Army of the Nile has not fought lately, and although there is the usual wastage for sickness I cannot feel that drafts to complete the first reinforcements—*i e*, 10 per cent drafts at the base over and above full strength with the units, or drafts to cover estimated additional wastage—should take precedence over organised fighting troops They should fit in as convenient.

5 Meanwhile let me have a table showing the present strength of each of the battalions or artillery regiments (British) for which these 31,000 additional drafts are now said to be required Infantry drafts should receive priority over other branches

6 Some time ago I had some figures showing the ratio of fighting troops to the rearward services in the Middle East Could these be brought up to date, on the assumption that it was possible to carry the whole 142,000 now asked for?

Prime Minister to Foreign Secretary 20 Sept 41

(Copy to Secretary of State for Air)

I think that great value might be obtained at the present time by dropping leaflets on Italy referring particularly to the fact that hundreds of thousands of Italians have been sent from sunny homes to die in the frozen mud of the Ukraine. Pray have this matter considered by the Political Warfare Executive

I am sending a copy of this minute to the Secretary of State for Air, in order that the operational aspect also may be considered.

(Action this Day)

Prime Minister to Colonel Hollis 21 Sept 41

Many bombards are now being delivered. What has been done about their tactical employment? An experimental Bombard Battery or Regiment should be set up at once to develop the use of the weapon and to further its distribution to troops Let me have proposals how this can be achieved

Prime Minister to C A S. 21 Sept 41

Do our fighter pilots over France carry a sufficient supply of French money? I am told they are only given 50 francs In my view at least 3,000 francs should be carried as part of a pilot's equipment, and passed from hand to hand.

Prime Minister to C.I.G.S. 21 Sept 41

I am not prepared to let this lapse or be slurred over, or fall into oblivion. More than admonitions are required when 600 German Legionnaires are allowed to go back to Vichy France for further use by Germany against us It might take 600 British lives to deal with these men so casually and incontinently allowed to slip through our fingers A formal letter should be written by the War Office to the Commander-in-Chief Middle East, asking for the action taken by him, and pointing out the gravity of the injury to British interests involved in this supine conduct of the Command in Syria. If a sergeant or a corporal makes a slip he is punished or reprimanded. The Staff officers around General Wilson are to blame for not having raised the point and understood what was going on. If General Wilson takes the blame himself it can be written off against his good services in other directions, but he ought to be left in no doubt of the harm that has been done. The fullest detailed explanation should be provided.*

Prime Minister to C.I.G.S. 21 Sept 41

Thank you. I am glad to see by later telegrams that it is proposed to reorganise the forward area, so that any similar movement of the enemy can be struck at offensively by the forward troops. I understand this readjustment is to be completed about 23rd instant If this is right now, I still do not see why it was not right earlier. The losses of ten tanks, etc , that the enemy suffered at the hands only of armoured cars without tanks shows that a pretty good "cop" could have been staged However, perhaps we shall get a second chance. P'raps not. Fortune is a jade

Prime Minister to Chiefs of Staff 25 Sept 41

I attach a summary of the official correspondence which has passed in the last fifteen months in regard to offensive and defensive measures in chemical warfare, together with a table showing the stock position of the more important gas-filled weapons. Please report whether you are satisfied with the present position and our means of retaliating on the Germans if necessary.

There may be a difficulty in maintaining stocks owing to chemical deterioration. Normally, if there were a consumption stocks could be replaced. Please let me have your views on this aspect of the matter as well

Prime Minister to Foreign Secretary 25 Sept 41

We now know that the Grand Mufti is in the Japanese Legation at Teheran It seems of the utmost importance to obtain his surrender,

* The explanation divided the responsibility to an extent which was difficult to follow by disciplinary action

and meanwhile I presume all measures are being taken to prevent his getting away Will you please do whatever is possible?

Prime Minister to Secretary of State for War 25 Sept 41

Many plans are being made for the amusement of troops during the winter. They are allowed to use Government transport, within limits, to get to the nearest sizeable town Officers are not allowed to have this privilege. It might be possible to arrange for officers to have reasonable use of available Government transport on paying for the petrol Many of them are too poor to hire any other form of transport, but this would be fair and acceptable The use might be controlled by the Corps Divisional Staff

Pray let me have your views on this.

Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 25 Sept 41

Why not give the *Graph* U-boat, when she is repaired, to the Yugoslav Navy? They have a submarine crew which has arrived at Alexandria, but their vessel was in too bad a condition for the Admiral to allow it to go to sea I rather like the idea of the Yugoslavs working a captured German U-boat.*

Prime Minister to Minister of Works and Buildings 27 Sept 41

I doubt very much whether it will ever be possible for me to live at Walmer Castle, or indeed whether anybody will be able to live in such fine houses after the war. I mentioned this to the King when accepting the Lord Wardenship of the Cinque Ports, which I regard as a compliment. Clearly I cannot attempt to reside there at the present time, as it is well within range of the enemy's batteries on the French coast, and the mere report of my residing there would be sufficient to get the whole place knocked down. In these circumstances I think it would be perfectly proper for the Office of Works to take it over during the war in whatever way they think most conducive to the public interest. I should hope therefore that as long as I do not use the castle at all or derive any benefit from it, it and the gardens could be taken care of by the State. After the war the position could be reviewed

Perhaps you will let me know what you think can be done.

(Action this Day)

Prime Minister to Colonel Hollis, for C.O S. Committee 30 Sept 41

When I visited *Indomitable* last week I was astonished to learn that the handful of Hurricanes to be allotted to this vital war unit were only of the lower type, Hurricane Ones. I trust it may be arranged that only the finest aeroplanes that can do the work go into all aircraft-carriers. All this year it has been apparent that the power to launch

* This was the U-boat captured by a Hudson aircraft in the Western Approaches in August 1941. See p. 460.

the highest class fighters from aircraft-carriers may reopen to the Fleet great strategic doors which have been closed against them. The aircraft-carrier should have supreme priority in the quality and character of suitable types.*

OCTOBER

(*Action this Day*)

Prime Minister to Secretary of State for War and C.I.G S. 1 Oct 41

The danger of our forces being organised on a basis so cumbrous that they will be incapable of effective overseas or amphibious action has now grown very great. The condition of the armoured divisions has recently attracted attention. As new ideas and new requirements come along the tendency to growth is continual. In order to preserve the efficiency of the Army a continued process of pruning is indispensable.

2. The dire need of finding men to maintain the fighting units at proper strength makes ceaseless economy in the rearward services imperative. I am doing my utmost to sustain the strength of the Army against the growing volume of criticism about its reputed size and obvious enforced passivity I feel therefore bound to press for assistance from the War Office, and I hope I may count upon you to help me

3. For this purpose a committee of officers acquainted with the establishments should be set up, with orders to make a plan for a 25 per cent. reduction in the rearward services and non-fighting troops, showing how this can be done with the least possible injury This work should be completed by the 15th instant, and the Defence Committee will then be able to see what is entailed in the particular cuts proposed. I wish to be consulted about the personnel of this committee. If it fails I shall have to ask for an outside committee, as I know how hard it is for a department to reform itself.

Prime Minister to Minister of War Transport 3 Oct 41

I should be glad if you would submit a report for consideration at the next meeting of the Battle of the Atlantic Committee, showing the progress which has been made with the provision of alternative port facilities for use if any of the major ports on which we now rely should be put out of action.

(*Action this Day*)

Prime Minister to Colonel Hollis, for C O S Committee 4 Oct 41

I attach the utmost importance to tanks and aircraft reaching Archangel early in October It is vital that delivery should begin at once Pray let proposals and preparations for this be made forthwith, and let me have a report on Monday evening. A special convoy will probably be necessary.

* Later types of British fighters could not at this time be spared by the R A F for the use of the Navy (See also minute of Aug 16, 1941)

I cannot too strongly emphasise the vital importance and extreme urgency of this transaction.

(Action this Day)

Prime Minister to Secretary of State for War 6 Oct 41

I feel some anxiety regarding the scheme conducted by the new Army Bureau of Current Affairs. The test must be whether discussions of such matters conducted by regimental officers will weaken or strengthen that tempered discipline without which our armies can be no match for the highly trained forces of Germany The qualities required for conducting discussions of the nature indicated are not necessarily those which fit for command in the field. Will not such discussions only provide opportunities for the professional grouser and agitator with a glib tongue? They seem to be in a different category from educative lectures by trained teachers or experts.

Pray consider this matter and let me have your personal views. Meanwhile please suspend action

Former Naval Person to President Roosevelt 8 Oct 41

After discussion with Ambassador Winant I send you this note setting out the result of our Cabinet discussion on the matter which has been causing us some difficulty

We have been considering carefully what should be the next step regarding the conference upon wheat which is due to resume its deliberations next week I feel a certain amount of concern as to the repercussions on the war situation of the proposed Wheat Agreement in its present form The draft seems to give the impression that it is contemplated to force on the wheat-importing countries of Europe, as a condition of immediate post-war relief, a series of obligations, including a drastic restriction of their wheat production, which would vitally affect their agricultural systems This is to touch a tender spot in the policy of many countries Any Wheat Agreement capable of this construction would, in our view, be dangerous in the extreme It would supply Nazi propaganda with a weapon which it would not be slow to use It would arouse widespread suspicions as to the spirit in which the United States and the United Kingdom mean to use their power when the war is over, and would confuse and dishearten the elements in Europe now hoping and working for the defeat of Germany We regard it as essential therefore to remove from the draft agreement all provisions implying Anglo-American interference in European agricultural policy

The relation of Russia to any agreement also raises a difficulty Russia was still a neutral at the time when the arrangements for the Wheat Conference were made But, as things are now, it appears to us virtually out of the question either to conclude an agreement which

may seriously affect her interests without consulting her, or to approach her on such a matter at a time when she is engaged in a life-and-death struggle, and when her richest wheatfields are in the battle area

We have been considering what instructions we can give to our delegates, who are now on their way to Washington, with a view to meeting these difficulties, but we have not been able to find a really satisfactory solution consistent with the present framework of the draft agreement. Considerable revision would certainly be required; and we are alive to the danger, which we are anxious to avoid, of protracted negotiations which might lead to a breakdown. For our part, we welcome the proposals for establishing a pool of wheat for post-war relief. There are other important features of the agreement which do not prejudice, or which could easily be given a form which would not prejudice, the interests of unrepresented countries—*e.g.*, the agreement of the four exporting countries represented as to the ratios of their respective export quotas, and the provisions for an "ever-normal" granary.

The other issues of policy might usefully be explored by the Conference with a view to preparing the ground for later decisions, but it seems to me that we should be ill-advised to attempt to reach definite conclusions about these now Apart from the fact that important countries not represented at the Conference are affected, there seems to be advantage in trying to fit these questions into the larger discussions on Anglo-American collaboration in regard to post-war economic problems generally which, as Lord Halifax will be able to explain more fully, we hope to be able to begin at an early date

If you agree generally with my view I will instruct our delegation accordingly.

Prime Minister to Secretary of State for War and Secretary of State for Air — 8 Oct 41

(Copy to Secretary of State for Dominion Affairs)

I think now the time is ripe to form an Irish Brigade, also an Irish Wing or Squadron of the R.A F. If these were taken in hand they would have to be made a great success of The pilot Finucane might be a great figure *

* Wing-Commander "Paddy" Finucane, D S O., D F C. and two bars, was killed at the age of twenty-one in July 1942, when, after continuous exploits, he was leading a fighter wing in a mass attack on enemy targets in France It was always said that the Luftwaffe would never get him, and it was actually a ground shot from an unusual single machine-gun post which hit his Spitfire He flew slowly out to sea, talking calmly to his comrades Finally, when ten miles from the French coast, he sent his last message, spoken probably as his engine stopped "This is it, chaps" He crashed from about ten feet above the sea, and his machine sank at once

Finucane had always vowed not to be taken prisoner, and it was probably this that made him fly out to sea rather than inland, where he would have had a good chance of survival

Pray let me have proposals. The movement might have important political reactions later on.

(Action this Day)

Prime Minister to Secretary of State for War and C I G.S 9 Oct 41

Pray let me have your views, and if possible your plans, for the forming of an Irish Brigade

Prime Minister to Secretary of State for War 10 Oct 41

I see some odd court-martial cases mentioned in the papers. First, a sergeant who told a Home Guard lieutenant "So what?" and "Put a sock in it" in the presence of troops, but who was merely reprimanded He should surely have been reduced to the ranks. Second, some soldiers who were heard calling the sergeants "bastards with three stripes", but who apparently were honourably acquitted on the grounds that this was a word of common use in the Army The major giving evidence said he had often turned a deaf ear to it when used about himself

In sharp contrast, two Canadians who deserted in Canada, and made their way over here after great adventure in order to fight, received sixty days.

All this seems to require very clear guidance from you and the Army authorities.

(Action this Day)

Prime Minister to Secretary of State for Air, Minister of Supply, and M A P 11 Oct 41

I have re-read the report of the Select Committee on the Albemarles, and I think it requires a far more definite and categorical reply than those which have hitherto been presented to me. I should be glad to know what is the evidence which the two Supply Ministers will give, especially on the financial side; and from the Secretary of State for Air I desire to learn (*a*) what real use this machine will be when the first 500 are completed Can he tell me that it will be a *bona fide* useful machine in the summer of next year? What parts of Germany could it bomb, or is it only of use on the French invasion ports? (*b*) What are the reasons, shortly, for refusing to publish the report? What information in particular is contained in it which would be of value to the enemy?

As this matter will be debated on Wednesday and I shall have to watch over it myself in all probability, I want to be sure of my ground The matter is urgent

Prime Minister to Minister of Supply 12 Oct 41

During your absence I have considered the questions you raised with me about the U.P.* weapon and its subsidiary variants of the

* Unrotated projectile Disguised name for rocket. See footnote to minute of Dec 6, 1941

proximity fuze, viz, P.E. and radio. The great need is the manufacture of A.D ammunition for the fifty batteries which are already deployed P.E. and radio are in the sphere of research and experiment; but these researches should be pressed to the utmost because of the immense strategic advantages to the Navy which would flow from their effective solution

Up to the present time I take full responsibility for all that has been done. You wish as Minister of Supply to have full control of both the manufacture and research, and I shall be very glad if you will assume it as from the date of this minute. As the three Services are concerned, you will no doubt arrange for the necessary consultations

Prime Minister to Secretary of State for India 15 Oct 41

Kindly let me know how many words His Majesty's representative at Kabul has telegraphed since the day when the question of turning the Germans out of Afghanistan was first mentioned to him.

Prime Minister to Sir Edward Bridges 16 Oct 41

An inquiry should be held into the question of who was responsible for the various messages sent over the radio to the Germans about the exchange of prisoners. These messages contained expressions of thanks, and were couched in the form of direct communications with the enemy. The inquiry is to be formal, and a report is to be made to me as Minister of Defence.

Pray suggest the composition of the inquiry

(*Action this Day*)

Prime Minister to Lord President of the Council 17 Oct 41

The Shelter Programme has had a pretty good run since March, and although it may not be completed according to the target plan it must be far better than last year. Having regard to the air-raid and air-raid defence situation, they must expect to have to make a definite contribution to the man-power stringency, including particularly the Army. De-reservation should play over this area. Before I send any minute to the Home Secretary and others on the subject, I should like you to take this into the scope of your general scheme and report to me

Prime Minister to Secretary of State for War 17 Oct 41

I do not approve of this system of encouraging political discussion in the Army among soldiers as such The material provided for the guidance of the officers in the short notes is hopelessly below the level of that available in the daily Press Discussions in which no controversy is desired are a farce There cannot be controversy without prejudice to discipline. The only sound principle is "No politics in the Army"

I hope you will wind up this business as quickly and as decently as possible and set the persons concerned in it to useful work

(Action this Day)

Prime Minister to Secretary of State for War 18 Oct 41

During my visit to the Richmond Anti-Aircraft Mixed Battery I learned, with much surprise, that the present policy of the [Women's] Auxiliary Territorial Service is that A T S personnel in mixed batteries should not consider themselves part of the battery, and that no "battery *esprit de corps*" was to be allowed This is very wounding to the A T.S. personnel, who have been deprived of badges, lanyards, etc , of which they were proud Considering that they share the risks and the work of the battery in fact, there can be no justification for denying them incorporation in form

2. In present circumstances it is possible also that the whole efficiency of a battery could be upset by an order from the War Office, A.T S Headquarters, moving one of a predictor team to another unit The A A Command has no say in such matters Obviously this cannot continue when we are relying upon these mixed batteries as an integral part of our defence

3 I found a universal desire among all ranks that the women who serve their country by manning guns should be called "Gunners" and "Members of the Royal Regiment of Artillery" There would be no objection to the letters "A T S " being retained

Prime Minister to Chief Whip 18 Oct 41

If the House wishes to divide in Secret Session it must itself organise the division, and provide not only the ordinary tellers, but also Members who would act as clerks, and mark the lists accordingly These division lists would remain privileged documents in the custody of Mr Speaker

2 Should, however, the House by a majority, whether on the motion of the Government or otherwise, decide that it was in the public interest, or necessary because of constitutional reaction following the division, that the division list and the questions put should be published, the House would also have to decide by conference among the Party Leaders upon such version of what had taken place in Secret Session as might be in accord with the public interest being made public at the same time The consultations between the Party Leaders or Members chosen by the House would follow the lines of the consultations which take place when it is necessary to express differences with the House of Lords, or perhaps of the conferences contemplated under the Parliament Act In this case however it would be necessary that the version of the Debate in Secret which was to be published should be debated and approved by the House word by word as if it were a Bill, and with full right of amendment

3. Thus the House, which is the only authority, would in every

stage be master of its own proceedings and express its will by majority I am of opinion that they would endorse this procedure

Prime Minister to President of the Board of Trade 19 Oct 41

I am very much obliged to you for the clear and full account you have given me of the forecast for 1942 in accordance with my minute of September 13. You seem to me to be sufficiently insured in wheat and steel, and we have also a very good account of oil from the Petroleum Executive I approve the principle of a 33,000,000-ton import, which we should by all means in our power try to achieve. I should be very glad if the meat ration could be improved. I am assuming that the impact of the Russian liabilities will be met outside the 33,000,000 limit, which limit we should regard as our minimum in all our discussions with the United States.

You should now prepare a statement for the War Cabinet, which, after examination by the Lord President's Committee, can be discussed during November.

Prime Minister to His Majesty's Representative at Kabul 19 Oct 41

I have been much pleased with the way in which you have handled the question of turning out the Germans and Italians, but I think you ought to know that from September 11, when this task was entrusted to you, to October 17, you have sent 6,639 cipher groups The labour and cost of this profuse telegraphing and the choking effect of such lengthy messages upon the higher administration ought never to be forgotten. Clarity and cogency can, I am sure, be reconciled with a greater brevity

(*Action this Day*)
Prime Minister to Minister of Labour 20 Oct 41

In my Army Strength paper, which you have seen, the total [intake] for the Army was given as 278,000, including 50,000 casualties. This covers the nine months from now till the end of June 1942 How do these figures square with your 355,000 for the twelve months so ending?

2 The Royal Air Force demands cannot be accepted as they stand They are queueing up more and more air-groundmen behind the pilot Have you subjected them to any cutting or analysis, or do you have to face the figures as they put them? I should think 50,000 could be got off here.

3 *Prima facie* I am not prepared to recognise the need for any additions to Civil Defence How was this figure arrived at? Has it been subjected to any scrutiny? Far from adding to Civil Defence personnel, I am hoping that 1942 will see them increasingly combed

Prime Minister to C.A S. 24 Oct 41

I am not content with the arrangements made for the two squadrons in Murmansk. I thought they were to take their aircraft and move

to the south of the front, where they might have come into action with the Russian Air Force. Instead of this, the personnel only is being sent When is it expected that these two squadrons will again come into action, and where? The most serious mistake we have made about the Russians was in not sending eight Air Force fighter squadrons, which would have gained great fame, destroyed many German aircraft, and given immense encouragement all along the front. This is the only criticism, among the many that have been made, which I feel strikes home.

Prime Minister to Director of Military Intelligence 24 Oct 41

My general impression is that the scale of the fighting [in Russia] has diminished on both sides, and that many fewer divisions are engaged each day than a month ago What do you say to this?

What date is the winter expected to set in in earnest in the Moscow region?

Is there any sign of digging in on any part of the front?

What, in your opinion, are the chances of Moscow being taken before the winter? I should be inclined to put it evens.

Prime Minister to Secretary of State for War 29 Oct 41

All this seems to make many difficulties out of fairly simple things Women should be enlisted in the A T S and should always wear that badge. This ensures that their special needs in treatment, accommodation, etc , are kept up to a minimum standard wherever they may be by the women influences organising the A.T S When however they are posted to a combatant unit and share in practice with the men the unavoidable dangers and hardships of that unit they should become in every respect members of it They should wear, in addition to the A T S badge, all regimental insignia appropriate to their rank Although their well-being is still supervised by the A T S authorities, they should be considered as detached from the A T S and incorporated in the combatant unit This does not imply any alteration in their legal status, nor need it involve any Parliamentary discussion (although Parliamentary authority could easily be obtained were it necessary)

2 Considering the immense importance of having a large number of women in A A batteries and that the efficiency of the batteries depends upon carefully organised gun teams, it is imperative that these women should not be moved without reference to the Battery Command The idea that there is an army of A T S under its own Commander-in-Chief, part of which lives alongside particular batteries and gives them a helping hand from time to time, is contrary to our main interest, namely, the maintenance of a larger number of A A batteries with a smaller number of men

3. You are good enough to say that I have been misinformed on various points I should like to go further into this I shall be glad

to have a meeting at 5 p.m. on Tuesday, November 4, at which General Pile and other officers of the A.D G.B., as well as representatives of the A.T S, are present, and I trust you and the Adjutant-General will also come

(Action this Day)
Prime Minister to C.I.G.S. 31 Oct 41

I am very glad to see the 50th Division moving out of Cyprus, and am glad that it can be relieved by elements of the 5th Indian Division. No decision has however yet been taken about moving the 50th Division to the Caucasus. Where will it wait in the interval?

2. Nothing in these moves is on any account to interfere with "Crusader". Pray reassure me on this.

NOVEMBER

Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 5 Nov 41

I much regret that the number of U-boat prisoners taken by us should have been published I commented unfavourably upon this publication six months ago The figure is so small that it advertises to the world the failure of all our efforts against them. There was absolutely no need to make such a disclosure, gratuitously encouraging the enemy and discouraging our friends

Were you aware beforehand that this was going to be done?

Prime Minister to Secretary of State for Air 5 Nov 41

Your reply to my minute

I do not think you should dismiss a matter like this [whereby mechanics and fitters worked for certificates of competence in each different make of engine] so lightly. I am told it is the explanation of the far higher economy reached by the Germans in maintaining their Air Force

I must beg you to have the matter more searchingly examined

Prime Minister to First Lord 7 Nov 41

The 20 assault landing-craft, the 20 heavy support craft, and 127 tank landing-craft seem to me insufficient This programme must be carefully concerted with the Army. Very large operations may be required in 1943 . *

3 If a small floating dock is constructed in India, how long will it take, and what alternative construction will it displace?

* These comments refer to the Admiralty programme of new naval construction for 1942 Many changes were made in it at later dates The following notes indicate the size of our effort

(i) *Convoy Escort Vessels* Over 100 frigates, ordered about this time and built in American yards, were delivered to us by the middle of 1944

(ii) The aircraft-carrier *Eagle* is referred to here for the first time She was laid down late in 1942, and was expected to take nearly four years to build In fact this ship has not yet been completed

4 In view of the sad tale of the *King George V* class, it would be wrong to proceed with the construction of the *Lion*, let alone the later ones, without the whole design being examined by a conference of sea officers who have either commanded or used these ships I favour the principle of three triple 16-inch-gun turrets What are your armour demands for 1942? If the question of design were satisfactorily settled I would support making a beginning upon the turrets and mountings, provided of course that the tank programme is not interfered with

5. Let me have the legend of the 100 convoy escort vessels to be built in the United States

6 Let me have the list of the eleven new or modernised capital ships attributed to Germany, Italy, and Japan at the end of 1943, and the list of our eleven. It seems probable that the war will be finished before any new capital ships can be built—*i e*, 1947 If we win the war we shall disarm the enemy If we lose it he will disarm us

7 The new aircraft-carrier must be weighed against other demands for armour and shipbuilding labour. How long will she take to make?

8. I agree to the three 6-inch-gun cruisers and to the triple 8-inch turrets of one 8-inch-gun cruiser.

9 Let me have the brief legend for the "heavy support craft"

10 You do not mention destroyers in your programme I suppose this is because all the yards are fully booked up with them Let me have a return showing what you have got building, dividing them into three classes and showing the rates at which each class can be built

(Action this Day)
Prime Minister to General Ismay, for C.O.S Committee, and C A S 9 Nov 41

Let us hurry up the arrangements for sending volunteer pilots and aeroplanes to join Chennault's party [International Air Force in China] Let me know what is proposed

(Action this Day)
Prime Minister to Secretary of State for Air, and C A.S. 11 Nov 41

The losses sustained both by the night bombers and day fighters have lately been very heavy. There is no need to press unduly the offensive by the fighters over France, about two sweeps a month instead of

(iii) *6-inch-gun Cruisers* Two of the ships mentioned became H M ships *Defence* and *Superb* The 8-inch-gun cruiser was never built

(iv) *Destroyers* The following were on order or in various stages of construction

Type	*On Order*	*Rate of Completion per annum*
Fleet destroyers	74	8, rising to 15
Destroyers classed as frigates	50	30
Canadian	4	All by late 1943
Ex-foreign	2	Early 1942

(v) *Landing-craft* Very large increases in all types of landing-craft construction were made in later years

four should be sufficient, combined with a continuance of the attacks on shipping. While the degree of attack may be lightened, the impression of its continuance should be sustained.

2. I have several times in Cabinet deprecated forcing the night bombing of Germany without due regard to weather conditions. There is no particular point at this time in bombing Berlin The losses sustained last week were most grievous. We cannot afford losses on that scale in view of the short fall of the American bomber programme Losses which are acceptable in a battle or for some decisive military objective ought not to be incurred merely as a matter of routine. There is no need to fight the weather and the enemy at the same time.

3 It is now the duty of both Fighter and Bomber Command to re-gather their strength for the spring.

4 Let me have a full report about the heavy losses of bombers on the night of the last heavy raid on Berlin.

(*Action this Day*)

Prime Minister to C.A S. 11 Nov 41

The continued wastage of aircraft in relation to production is very serious Let me have each week a precise return by types of all aircraft stationed in the United Kingdom written off either by enemy action or other causes. Let me also have, though this is not so urgent, a list of aircraft damaged each week, repairs of which cannot be executed by the squadrons

Prime Minister to C A S. 11 Nov 41

Is it true that for the first fortnight in October Bomber Command were withdrawn from attacks on shipping to take part in Army manœuvres, and that consequently there were no losses to the enemy in that period?

When was this decision to abandon operations for manœuvres taken, and by whom?

Prime Minister to Viceroy of India 12 Nov 41

I was startled to learn how far you had gone about the release of the remaining Satyagrah prisoners As you know, I have always felt that a man like Nehru should be treated as a political *détenu* and not as a criminal, and have welcomed every mitigation of his lot. But my general impression of this wholesale release is one of a surrender at the moment of success. Undoubtedly the release of these prisoners as an act of clemency will be proclaimed as a victory for Gandhi's party Nehru and others will commit fresh offences, requiring the whole process of trial and conviction to be gone through again You will get no thanks from any quarter The objections of Hope and Hallett should not be lightly turned aside

2 The Cabinet, to whom I mentioned it this evening, felt they must

have more time to consider the matter after they have received your official advice It will not be possible for us to send an answer before Monday at earliest, so I asked the Secretary of State to desire you to postpone the motion on the 17th for a few days. We often do this in the House of Commons when replies from other Governments have to be awaited.

(*Action this Day*)
Prime Minister to Secretary of State for War 13 Nov 41

Pray see the attached epitome of the Beveridge report on skilled men in the Services and the letter of the Minister of Labour Evidently the report is most damaging to the War Office, and before it can be published it is imperative that good, clear proposals for mending the evil should be formulated by the War Office and published at the same time as the report

No one would expect the Army, which is expanding twentyfold, to have the same efficiency of organisation as the Navy, which is hardly doubled But you ought to be up to the standard of the Air Force, which is also growing very rapidly

I should advise you to set up a small committee, with perhaps the Financial Secretary in the chair, to hack out a good scheme This scheme should be ready in a fortnight, and after I have approved it the whole publication can be brought before the Cabinet.

(*Action this Day*)
Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 14 Nov 41

I am much disquieted by these facts We are sinking less than two U-boats a month * They are increasing by nearly twenty The failure of our methods, about which so much was proclaimed by the Admiralty before the war, is painfully apparent. I presume we have lost a far higher proportion of British submarines placed in service since the beginning of the war than the enemy

Let me have the actual figures

2 I regard the whole position as so serious that I wish to have a special meeting in the near future to survey the whole problem and consider whether anything can be done beyond the present measures

Let me know what increases are to be expected month by month in our anti-U-boat hunting-craft Let all the considerations about the German difficulty of training crews and other aspects be assembled and reviewed. Let me know when you will be ready.

Prime Minister to Home Secretary 15 Nov 41

I shall be glad to know what action you have taken about enabling

* Post-war analysis shows that German U-boat losses at this period were as follows September, 2; October, 2, November, 5, December, 9 British submarine losses during the same period were three

the twelve couples of married internees to be confined together. Now that order has been restored in the Isle of Man there should be no particular reason against their going there. If not there must surely be some prisons in England in which arrangements could be made for reasonable association of husband and wife

Is it true that when aliens are interned husband and wife are interned in one place? If so it seems invidious to discriminate against those of British nationality

Feeling against 18B is very strong, and I should not be prepared to support the regulation indefinitely if it is administered in such a very onerous manner Internment rather than imprisonment is what was contemplated

Sir Oswald Mosley's wife has now been eighteen months in prison without the slightest vestige of any charge against her, and separated from her husband.

Has the question of releasing a number of these internees on parole been considered, or on condition of their finding sureties for good behaviour, etc ?

I should be glad if you would make proposals to the Cabinet before the debate in the House takes place.

Prime Minister to Secretary of State for War and C I G S 17 Nov 41

It seems a pity that the nine beach or county divisions should be rated at a lower level than the field divisions All they lack are two Royal Engineer companies and one regiment of artillery each, together with transport on the higher scale. Pray let me have a plan to raise these divisions to the field division scale by March 31, or, if that is impossible, by the end of June 1942, and let me know what additional man-power would be required and whether the equipment is forthcoming.

At the rate at which lorries, etc , are coming out, the extra transport should soon be available, especially if reasonable tail-combing is used on the main corpus of the Army

Prime Minister to Lord Cherwell, Sir Edward Bridges, and General Ismay 17 Nov 41

It is my wish before the end of the year to have fully planned the War Production Budget of 1942 and to submit this for approval to the Cabinet For this purpose the programmes of the Navy, Army, and Air Force, which are already far advanced, must be settled and the resulting tasks of the Supply Department set forth

At the same time the import programme, already completed on a basis of 33 million tons, and the home production should be surveyed. I should propose that of the extra 2 million tons import available half a million tons should go to food or feeding-stuffs and the other

1½ million tons to munitions in order to make up for their heavy cut this year But this does not mean that needless imports, like timber, should be allowed undue expansion The emphasis must be placed on a sharper war effort

The third major element is man-power, now under Cabinet discussion but far advanced towards settlement

It should be possible to state the above in broad outlines in a directive to be circulated about December 15 Perhaps you will let me have a preliminary study The directive should not exceed one of my white square double sheets, and should follow the model of last year.

Prime Minister to President of the Board of Education 22 Nov 41

Let me have a short note showing the number of boys who leave the public elementary schools at 15 years and over, under the war conditions of 1941

How many of these go into any form of industry and employment? How many are there in munitions between the ages of 15 and 18½ years? How many go into cadet corps of various kinds? How many pursue their education in secondary schools or go on to the universities?

I am anxious that the educational and disciplinary aspects of these boys' lives shall rank as prominently in our minds as the need to find considerable numbers for A R P , A A batteries, etc

Prime Minister to First Sea Lord 23 Nov 41

What is the present plan about the distribution of the aircraft-carriers? Since these telegrams were received we have lost the *Ark Royal*, but we still have four good new ones I do not want to waste any one of them by sending it all round the Cape, unless such a voyage coincided with an inevitable working-up period At present I am waiting to see what will happen in the Mediterranean Of course if Admiral Cunningham is going to take station in the Central Mediterranean, or if we get Tripoli or perhaps French North Africa comes out, it would be worth putting at least two aircraft-carriers there We cannot see ahead clearly enough at present I suppose you will give one of the older ones to the Indian Ocean and Pacific

Please let me have a short note.

Prime Minister to Commander, Force K 27 Nov 41

Many congratulations on your fine work since you arrived at Malta, and will you please tell all ranks and ratings from me that the two exploits in which they have been engaged, namely, the annihilation of the enemy's convoys on November 8 and of the two oil ships on Monday last, have played a very definite part in the great battle now raging in Libya. The work of the force has been most fruitful, and all concerned may be proud to have been a real help to Britain and our cause

Prime Minister to General Ismay, for C.O.S. Committee, and C.A.S. 28 Nov 41

Everything in human power should be done [to help the guerrilla fighters in Yugoslavia]. Please report what is possible

Prime Minister to First Sea Lord 28 Nov 41

I cannot help feeling that the estimate of thirty-six U-boats operating in the North Atlantic by December 15 is worse than it will be.* I hope you will consider the possibility of reinforcing the Mediterranean with at least a dozen destroyers. They need not necessarily be there very long, as the situation may change with the decision in Libya. Numbers are however the essence of successful hunting, and we ought to get good results.

Pray let me know whether anything more can be done.

Let me have U-boat sinkings for November

Prime Minister to General Ismay 29 Nov 41

I am dissatisfied with the way in which this project for Polish officers in West Africa, in which I took a personal interest, has been followed up It was evidently necessary that a proper outfit allowance should be paid to the Polish officers proceeding to these tropical regions Yet all these months have passed haggling about it. First £5 is offered, then finally £15. I expect this is typical of the way in which the experiment has been handled

On other papers I have directed that 200 more Polish officers are to be invited to present themselves for examination. A weekly report is to be supplied to me personally of the progress made both in West Africa and at home Please report to me any signs of obstructionism, and pursue the matter yourself from the Defence Office Let me know who is the officer responsible in the War Office for dealing with this, and make sure you keep him up to the mark by constant inquiries

Prime Minister to Foreign Secretary 30 Nov 41

I think it most important that the United States should continue their relations with Vichy and their supplies to North Africa and any other contacts unostentatiously for the present It would be a great mistake to lose any contacts before we know the result of the battle in Libya and its reactions There is always time to break, but it is more difficult to renew contacts.

DECEMBER

Prime Minister to C.A.S and Commander-in-Chief Fighter Command 6 Dec 41

The following are the main conclusions which we reached in our talk last night

* Post-war figures show that the average daily number of U-boats operating in the

1 "Gee"* is to be started on February 1, 1942, unless examination shows that the weather conditions over the last ten or twelve years prove that March is likely to be far more favourable than February In that event the matter should be referred to me again for decision

2 Every effort is to be made to broaden the front of the fighter force To this end reserves of pilots and machines should be disposed in squadrons, and thus allow *roulement* to be extended in the event of protracted fighting.

3 As an experiment a night-fighter wing is to be issued with day-fighting machines with a view to introducing a system of dual purpose fighter squadrons, if the experiment proves successful

Prime Minister to Minister of Food 6 Dec 41

Amid your many successes in your difficult field, the egg distribution scheme seems to be an exception I hear complaints from many quarters, and the scarcity of eggs is palpable

I send you a note which the Minister of Agriculture has furnished on his side of the problem

Will you please give me a very short statement of your plans and policy

Prime Minister to Minister of Supply 6 Dec 41

I hope to be able to go to Shoeburyness on the afternoon of Thursday, December 11, and would be grateful if you would arrange for a demonstration of the following types of U P weapons †

1 Type K
2 Apparatus A D , Type L
3 Apparatus A D , Type J
4 Rocket U, 5-inch
5 Rocket U, 3-inch

Before coming to a decision on the priority proposals set out in your minute of December 2 it is desirable, I think, to see these various weapons and decide their relative merits I hope therefore that you will be able to accompany me

Of course, if cloudy it must be cancelled

North Atlantic during December 1941 was eight In addition, on any given day many others were on outward or homeward passages

The shipping losses by U-boats during November 1941 were 61,700 tons, the lowest figure recorded for any month since May 1940

* "Gee" was the name given to a radio device by means of which our bombers could fix their positions when operating over Germany

† Type K anti-aircraft rocket

Apparatus A D , Type L } rocket for defence of aerodromes and similar places
Apparatus A D , Type J } against low flying aircraft

Rocket U, 5-inch original design was for delivering chemical warfare charge, but subsequently became area barrage weapon

Rocket U, 3-inch anti-aircraft barrage weapon

Prime Minister to General Ismay 7 Dec 41

What has been done with the Italian rifles which have been captured in Abyssinia, Gondar, and elsewhere? How many of them were there, and how much ammunition?

Prime Minister to Secretary of State for War 9 Dec 41
(Personal)

I have considered carefully your minute to me about the A.T.S., and I am willing that the principles you propose should have a trial. It is up to you to make these batteries attractive to the best elements in the A.T.S. and those who are now being compelled to join the A.T.S. I fear there is a complex against women being connected with lethal work. We must get rid of this. Also there is an idea prevalent among the ladies managing the A.T.S. that nothing must conflict with loyalty to the A.T.S. and that battery *esprit de corps* is counter to their interest or theme. No tolerance can be shown to this. The prime sphere of the women commanders is welfare, and this should occupy their main endeavours.

The conditions are very bad and rough, and I expect will get worse now that large numbers are being brought into the War Office grip by compulsion or the shadow of compulsion. A great responsibility rests upon you as Secretary of State to see that all these young women are not treated roughly. Mrs Knox and her assistants should be admirable in all this, but do not let them get in the way of the happy active life of the batteries or deprive women of their incentives to join the batteries and to care as much about the batteries as they do about the A.T.S.

I shall be very glad to have a further report from you on how the principles enunciated in your minute are in fact being applied. Every kind of minor compliment and ornament should be accorded to those who render good service in the batteries.

Prime Minister to Chairman of the Forestry Commission 9 Dec 41

I see reports in the papers that timber-felling companies are ruthlessly denuding for profit many of our woodlands. What arrangements have you got to make sure that some of the finest trees are left and that due consideration is given to the appearance of the countryside? I know we have got to cut down very severely, but there is no reason why a certain number of trees should not be left.

Let me know in a few lines what you are doing to replant. Surely you are replanting two or three trees for every large one you cut down.

Prime Minister to Minister of Food 9 Dec 41

You say that you would have preferred to bring sweets and chocolates within the points scheme, and hope to do so subsequently. Would it not be better to postpone rationing of them until you are

able to do so? If you introduce a sweets ration now all the forces of conservatism and arguments of administrative economy will be arrayed against any subsequent proposal to alter matters

I gather that it was admitted in the Lord President's Committee that a sweets ration would lend itself to irregularities more easily than our other rations Anything which diminishes respect for the rationing regulations is objectionable If we create artificial illegalities that are neither enforceable nor condemned by public opinion the habit of evasion may spread to cases where it would be injurious.

We have done without a sweets and chocolate ration for so long that a small further delay may be tolerated We should avoid allowing exceptions to the principle that any rationing of the secondary foods which you feel compelled to introduce should be incorporated in the points system

(Action this Day)
Prime Minister to Minister of Labour 10 Dec 41

I see it reported that you say Members of Parliament are liable to be called up equally with others The rule I have made, which was followed in the last war and must be followed in this, was that service in the House of Commons ranks with the highest service in the State Any Member of Parliament or Peer of Parliament has a right to decide at his discretion whether he will fulfil that service or give some other form Members of either House are free, if at any time they consider their political duties require it, and reasonable notice is given, to withdraw from the armed forces or any other form of service in order to attend Parliament

I could not possibly agree to any smirching of this principle

Prime Minister to Lord Privy Seal and Minister of Food 12 Dec 41

It would be a mistake, in my opinion, to announce these restrictions of rations now. It would savour of panic. Our position has immeasurably improved by the full involvement of the United States The reserves are good We are all in it together, and they are eating better meals than we are

I trust no announcements of this character will be made in the immediate future, and I hope I may be consulted before any final decision is taken by the War Cabinet

Prime Minister to C.I G.S. (Sir Alan Brooke) 18 Dec 41

[Your minute about the possibility of forming a Polish Armoured Division]

I do not consider that the issue of tanks to the Poles should be delayed until all the British armoured divisions have not only been completed but have a large reserve of tanks standing behind them I thought it was agreed that in the first place the divisions were to be

given their initial equipment, and the reserve built up afterwards as more tanks come to hand. The Poles should be treated on this footing equally with the British divisions. I do not see how the date of April 1, 1943, could possibly be accepted as a fair treatment of the problem by General Sikorski. I hope therefore you will let me have proposals on the basis I have indicated.

2. It should surely be possible to give a good outfit of tanks to the Poles and yet enable them to work together as a corps. It is convenient, but not indispensable, that every unit in the Army should have exactly the same organisation. It is not necessary that the Poles should have the identical equipment, *i.e.*, the whole 3,500 vehicles to which the British armoured divisions have been expanded. A practical solution would be to let them have a couple of hundred more tanks during the next six months, and work up to the full usual formation later. It should surely be possible to use the Polish force together, and not to separate the tank component from the rest.

I hope you will let me have further proposals.

Prime Minister to Secretary of State for War 21 Dec 41

Your minute about the Beveridge report.

The memorandum to be published by the War Office at the same time as the Beveridge report on the use of skilled men in the Services must be both more effective and more precise than that at present proposed.

2. The War Office should also take their stand on the grounds that it is their duty to make an efficient fighting machine rather than a well-conducted industrial establishment. Nothing must therefore be done seriously to break the cohesion of section, platoon, and company, and no general disturbance of the Army system in home ports can be tolerated in view of the danger of invasion.

3. It must however be clearly shown how skilled men in units, as they at present exist, are being used, and how still better use will be made of them. The memorandum should thus firmly rebut those suggestions in the Beveridge report which would affect the cohesion and military efficiency of the Army.

4. This does not mean that the War Office can use the excuse of military efficiency to cover over the grave defects brought to light by the report. The memorandum should not appear merely to be a whitewashing document, but should show that a really serious effort is being made to rectify shortcomings. Parliament and the public will only be reassured if the War Office can state in concrete, rather than in abstract, how amendment is being made. The memorandum should therefore deal specifically and in a manner readily understood by the layman with the main points in the report.

5 These are·

(*a*) That the reservoir of unused skill in the Army is sufficient to cover all future demands for skilled men, except armament artificers

(*b*) That economy in skilled men could be secured by review of the establishment of many field units

(*c*) That more effective steps could be taken to utilise the skill of those men whose units will be required at the front but which at present are not engaged

(*d*) That great improvements are possible in the machinery for testing, remuster, and transfer of skilled men

(*e*) That a special corps of mechanised engineers should be formed to put an end to present duplication

(*f*) That men should be enlisted into the Army as a whole and not into specific corps or units

6 The War Office reply will have to be carefully drafted if it is to be effective You should set up a small committee, which I suggest might consist of the Financial Secretary, Sir James Grigg, and the Adjutant-General, to prepare it I should like the reply to be submitted to me about January 10, so that the matter can, if necessary, be brought before the Cabinet in good time

Prime Minister to Commander-in-Chief Home Forces (General Paget) 22 Dec 41

This is a most admirable paper [on the training of infantry, by General Utterson-Kelso], and I agree with every word of it I am glad to think that in your new great sphere you will have an opportunity of putting into force the many wise and stimulating principles it contains. You may count on my assistance in every way. I have already done all in my power to prevent sections and platoons from being disturbed needlessly, or the infantry used for civil purposes other than in emergencies or the harvest While I greatly admire the conception of a well-armed infantry battalion working with the *élan* and combined individualism of a pack of hounds, I am also anxious about the smart side of things I hope there are going to be no fussy changes in the Manual Exercises and that "spit and polish" will not be incompatible with effective field training

2 Pray let me have a further note to show how you are applying the ideas of this paper, and return it to me I have been very much pleased by it.

Prime Minister to Minister of Food 22 Dec 41

Your minute about the egg distribution scheme

The fact that 370,000 small producers have enough gumption to

keep chickens is a matter for congratulation, under this head the only complaint I have heard is that this practice is not sufficiently encouraged. After all, the backyard fowls use up a lot of scrap, and so save cereals

I quite recognise your difficulties, with your imports cut to one-third, but I hope that you will get in the quantity which you had planned, so that this important animal protein which is so essential in the kitchen should not be deficient.

Prime Minister to C I.G S (Sir Alan Brooke) 22 Dec 41

Surely it was a very odd thing to create these outlandish numbered regiments of Dragoons, Hussars, and Lancers, none of which has carbines, swords, or lances, when there exist already telescoped up the 18th, 20th, and 19th Hussars, 5th Lancers and 21st Lancers Surely all these should have been revived before creating these new unreal and artificial titles I wish you would explain to me what was moving in the minds of the War Office when they did this

APPENDIX H

PRIME MINISTER'S TELEGRAMS TO THE GOVERNMENT OF AUSTRALIA

*Prime Minister to Prime Minister of Australia** 29 Aug 41

Now that you have taken up your great office, I send you my most cordial good wishes for success, and assure you that I and my colleagues will do everything in our power to work with you in the same spirit of comradeship and goodwill as we worked with Mr Menzies, who, we are so glad to see, is serving under you as Minister for the Co-ordination of Defence

2 We have followed attentively the difficulties which have arisen in Australia about your representation over here, and perhaps it will be a help if I let you see our side of the question and how we are situated.

3 Since the declarations of the Imperial Conference of 1926, embodied in the Statute of Westminster, all Dominion Governments are equal in status to that of the Mother Country, and all have direct access to the Crown The Cabinet of His Majesty's Government of Great Britain and Northern Ireland, of which at present I have the honour to be the head, is responsible to our own Parliament, and is appointed by the King because they possess a majority in the House of Commons It would not be possible therefore, without organic changes, about which all the Dominions would have to be consulted,

* See p 366.

to make an Australian Minister who is responsible to the Commonwealth legislature a member of our body The precedent of General Smuts in the last war does not apply, because he was an integral member of the War Cabinet of those days, appointed by the King because of his personal aptitudes, and not because he represented the South African or Dominions point of view

4. In practice however whenever a Dominion Prime Minister visits this country—and they cannot visit it too often or too long—he is always invited to sit with us and take a full part in our deliberations This is because he is the head of the Government of one of our sister Dominions, engaged with us in the common struggle, and has presumably the power to speak with the authority of the Dominion concerned, not only on instructions from home, but upon many issues which may arise in the course of discussion This is a great advantage to us, and speeds up business

5 The position of a Dominion Minister other than the Prime Minister would be very different, as he would not be a principal, but only an envoy Many Dominions Ministers other than Prime Ministers have visited us from Australia, Canada, New Zealand, and South Africa during the present war, and I am always ready to confer with them or put them in the closest touch with the Ministers of the various departments with which they are concerned In the normal course the Secretary of State for the Dominions and the High Commissioner for the Dominion concerned look after them, and secure them every facility for doing any work they may have to do. This arrangement has given satisfaction, so far as I am aware, to all concerned

6 I have considered the suggestion that each of the Dominions should have a Minister other than the Prime Minister sitting with us in the Cabinet of the United Kingdom during this time of war I have learnt from the Prime Ministers of the Dominions of Canada, South Africa, and New Zealand that they do not desire such representation and are well content with our present arrangements. Some of the Dominion Prime Ministers have indeed taken a very strongly adverse view, holding that no one but the Prime Minister can speak for their Governments except as specifically instructed, and that they might find their own liberty of action prejudiced by any decisions, some of which have to be made very quickly in war-time, to which their Minister became a party

7. From our domestic point of view, as His Majesty's servants in the United Kingdom, there are many difficulties. We number at present eight, and there has been considerable argument that we should not be more than five The addition of four Dominion representatives would involve the retirement from the War Cabinet of at

least an equal number of British Ministers. Dwelling within a Parliamentary and democratic system, we rest, like you do, upon a political basis I should not myself feel able, as at present advised, to recommend to His Majesty either the addition of four Dominions Ministers to the Cabinet of the United Kingdom, which would make our numbers too large for business, or the exclusion of a number of my present colleagues, who are the leading men in the political parties to which they belong.

8. If you desire to send anyone from Australia as a special envoy to discuss any particular aspect of our common war effort, we should of course welcome him with the utmost consideration and honour, but he would not be, and could not be, a responsible partner in the daily work of our Government

9. His relationship with the existing High Commissioner for Australia and with the Secretary of State for the Dominions would be for you to decide It would seem however if such an envoy remained here as a regular institution that the existing functions of the High Commissioner would to some extent be duplicated, and the relations of the Secretary of State with the High Commissioners generally might be affected Such difficulties are not insuperable, but they may as well be faced The whole system of the work of the High Commissioners in daily contact with the Secretary of State for the Dominions has worked well, and I am assured that the three other Dominions would be opposed to any change

10. We should of course welcome a meeting of Dominion Prime Ministers if that could be arranged, but the difficulties of distance and occasion are, as you know, very great. We are also quite ready to consider, if you desire it, the question of the formation of an Imperial War Cabinet. So far-reaching a change could not however be brought about piecemeal, but only by the general wish of all the Governments now serving His Majesty

Prime Minister to Prime Minister of Australia 7 Sept 41

Our position in Syria and Iraq may be threatened by a German advance.

(*a*) on Syria through Anatolia,
(*b*) on Iraq through the Caucasus and Persia (Iran),
(*c*) a combination of (*a*) and (*b*)

Through Anatolia—If Turkey does not grant passage to German forces the large land and air forces necessary for conquering Turkey could hardly be withdrawn from Russia, refitted and reconcentrated, in less than six to eight weeks Weather conditions in Anatolia virtually preclude operations from December 1 to the end of March. We therefore feel that the concentration by the Germans of sufficient

forces on the Turkish frontier to overcome that country is now improbable until a date so late that an attack on Syria through Anatolia is not likely before the spring

If however, contrary to expectations, Turkey were to give passage to German forces, three or four German divisions might arrive on the Syrian frontier before the end of the year, and be reinforced at the rate of one division a month. This force might be supplemented if sea routes through Turkish territorial waters were available A great deal therefore depends on what help the Turks may expect from us As to this we have instructed our Attachés at Ankara to speak on the following lines

(*a*) If Turkey resists we will come to her aid at once with substantial forces Our essential object in the Middle East is the destruction of the German Afrika Corps and the reconquest of Cyrenaica, but we expect that at latest by December 1 we could send to Turkey four divisions and at least one armoured brigade Air support will be on a considerable scale, and preparations should be made to receive a force of eight fighter, one Army Co-operation, two heavy, and six medium bomber squadrons

(*b*) We shall provide a strong force of anti-aircraft artillery for the defence of our own troops and of those aerodromes allotted to us, and in addition we are sending to the Turks an immediate and special consignment of one hundred 3 7-inch anti-aircraft guns. These are in addition to the normal allocation of six equipments per month

Through the Caucasus and Persia —Even in the event of an early Russian collapse a full-scale drive through the Caucasus on Persia and Iraq would not be possible this year The control we have gained in Persia adds greatly to the security of our right flank in these regions

Turning now to our own action to meet a German advance, whichever way it may come, our first requirement is facilities to operate air forces both offensively and defensively Steps are accordingly being taken to improve and increase aerodrome facilities throughout this area, and by consent of the Turks in Anatolia These will give flexibility to our air forces in the Middle East

The second requirement is to improve communications, both rail and road, throughout the areas under our control This is being pushed forward with all dispatch

In addition, steps are being taken to develop as rapidly as possible our maintenance arrangements in the Basra area, including construction of additional ports, so that the proposed increased forces in the Persian Gulf area can be maintained

Western Desert.—We must clear Eastern Cyrenaica at the earliest possible moment, not only for the defence of our base in Egypt, but also to retain control of the Eastern Mediterranean. Position is as follows:

It is estimated that the enemy has at present in Cyrenaica two German divisions (one armoured and one light motorised) and six Italian (including one motorised and one armoured). We do not think that with these forces he could undertake a major offensive against the Delta. He is in considerable difficulties with his supply and is short of mechanical transport. In addition, we are sinking a good proportion of his reinforcements of men and material from Italy. If however he were able to establish a firm base on the Halfaya-Capuzzo-Bardia line and to build up the necessary mechanical transport and supplies, it is possible that a limited offensive might be carried out against Sidi Barrani.

Our aim is to take the offensive as soon as a favourable opportunity presents itself, but Commander-in-Chief does not wish to risk another setback, such as "Battleaxe", or to move until he feels he can go right forward. He estimates that for this offensive his armoured force must not be less than two armoured divisions. These will not be ready for action until November 1, but this would not preclude him from attacking sooner if a favourable opportunity were presented to him. The importance of holding Tobruk has been clearly demonstrated.

APPENDIX I

THE BRITISH PURCHASING COMMISSION IN THE UNITED STATES*

Directive by the Prime Minister of August 11, 1941

A great mass of orders has already been placed in the United States for British war munitions, etc. These have been harmonised both as between British departments and between British home production and British orders placed in America. Mr Purvis has been made finally responsible, and any discordances should be reported to him for settlement in the office of the Minister of Defence. However, it is now necessary to make further large provision, particularly in respect of shipping, bomber aircraft, and tanks, both for the British account and for the United States' armed forces. Moreover, the arrival of Russia as an active partner against Hitler will require not only certain readjustments of British orders, original and supplementary, but also

* See p. 396

rable *expansion of plants and installations for the longer-*

, the British supplementary programme is concerned, no trouble about priorities as between heavy bomber nks We no longer consider priorities as dominated by the it prefer to deal in simultaneous quantitative allocations is, if our American colleagues will state what are the ther through improved production from existing plants tion of new ones, of greatly increasing production, and ow their views about how it is to be divided between nited States needs, we will do the share-out between partments For instance, we do not think that our need nental programme of heavy bomber aircraft should nultaneous expansion in tanks The ratio for the whole s between heavy bomber aircraft and tanks would be, 6½ to 3½, both types of production proceeding simul-ast as possible. This method of approach is suggested onvenient

atly welcome a further assignment of 150,000 rifles. munition is very short, these are absolutely needed to nnel defending the fighter airfields. At least 150,000 of present to rely on pikes, maces, and grenades. Even ammunition in Great Britain is very short and does not ove 80 rounds per rifle, production is now flowing in ates for our benefit, which will this month be clear of of the overdrawn 50 million rounds, and should amount illion rounds per month. Even if only ten rounds could it to the men at certain airfields with their rifles, this better than the makeshifts we now have to employ, and the strictest instructions to be given to all uniformed ight to the death, which instructions can hardly be given itly when no weapon can be placed in the hands of irmen concerned.

nerefore that the most rapid deliveries possible of 150,000 made, as the invasion season is fully operative after 5. In the event of our reporting to the President that ive preparations are being made by the enemy in the an, and French ports for invasion, of which there is no t, we would ask as a matter of emergency that a further of .300 ammunition should be rushed across, this being er from our monthly quotas of production

l seem indispensable that the re-equipment of the Russian d be studied at once upon the grand scale. After pre-

liminary conferences between the British and United States supply departments, it would seem advisable, and indeed inevitable, that a further conference should be held in Moscow. Both for this purpose and in any preliminary conference that may be necessary the Prime Minister would nominate Lord Beaverbrook, Minister of Supply, who should arrive here to-day, as the British representative, with power to act for all British departments.

APPENDIX J

THE ANGLO-AMERICAN-RUSSIAN CONFERENCE*

General Directive by the Prime Minister and Minister of Defence

22 Sept 41

The position reached as the result of the Beaverbrook-Harriman conversations is set out in Lord Beaverbrook's report of to-day's date We must consider ourselves pledged to fulfil our share of the tanks and aircraft which have been promised to Russia, and Lord Beaverbrook must have a considerable measure of discretion as to what quantities of other equipment and of material should be offered at the conversations in Moscow.

2. Assurance must be given to Russia of increased quotas from July 1, 1942, to June 30, 1943 During this period British war production will be at its height, and American ditto in its third year of development. It would be wiser not to be committed to precise figures based on optimistic forecasts of Anglo-American production. There are dangers also in promising the Russians a percentage of British and American output, which they may immediately ask should be increased. We should not disclose speculative figures of our joint production when none are given of theirs by the Russians They should however be invited to set forth their remaining resources in accordance with the various rearward lines they may hope to hold. Lord Beaverbrook should be free to encourage the prolonged resistance of Russia by taking a justifiably hopeful view of these more distant prospects.

3. Russian attention should be directed to the limitations of shipping, and still more of transportation from the various ports of access The rapid destruction of world shipping, the effort required to make it good, and the vital needs of this country, now cut to the bone, should be stressed.

* See p 413.

4. Encouragement should be offered, with American approval, to the keeping open of the Vladivostok route and overawing Japan for that purpose. Special emphasis should be laid upon the development on the largest scale and with the utmost energy of the route from the Persian Gulf to the Caspian, both by rail and road. The practical limitations which time enforces both upon working up the traffic on the Trans-Persian railway and upon the motor-road construction should be explained. The conflict between the movement of supplies and of troops and their maintenance at any given period along this route must be pointed out. The Russians will no doubt give their own estimate of the capacity and facilities of Archangel and of its railway connections with Central Russia, having regard both to winter ice and probable enemy action.

5. The Conference must proceed upon the basis that the United States is not a belligerent. The burden upon British man-power is already heavy, and the strain will be intense during 1942 and onwards. Apart from the help we get from the Dominions, India, and the Colonies, our man-power is fully engaged. We have to feed ourselves and keep alive by maintaining vast merchant fleets in constant movement. We have to defend the British Isles from invasion, for which the Germans can at any time gather a superior army, and also from the most dangerous forms of air attack by the main strength of the enemy Air Force, which can rapidly be transferred from east to west at the enemy's convenience. We have to maintain our armies in the Middle East and hold a line from the Caspian to the Western Desert. We hope to develop on this front during 1942 approximately twenty-five divisions, British, Indian, and Dominion, comprising, with all the exceptional rearward services needed in these undeveloped regions and strong proportionable Air Force, about a million men. The strain on shipping in supplying these forces largely round the Cape, and the time taken in the turn-round of available ships, should be explained, if necessary, in detail.

6. For the defence of the British Isles we have an army of slightly over two million men, backed by about one and a half million Home Guard. We possess only about three and a half million rifles, and can only get 100,000 more or so in the next year. Of this army of two million men, 900,000 constitute the Field Force, comprising twenty mobile infantry divisions, nine less mobile county or beach divisions, and six armoured divisions, three of which are only partly formed, together with five Army tank brigades, of which only one is as yet complete. Nearly a million men will be required for the enormous Air Force we are creating, 750,000 are already enrolled. The Navy already absorbs half a million sailors and Marines. When to this is

added the shipbuilding, aircraft production, and munitions industries, and the need of food production at home and other domestic civilian industries, all cut to a minimum, it will be seen that the man-power and available woman-power of a population of 44,000,000 is, or will soon be, engaged to the limit.

7 Out of the 1,100,000 men behind the Field Army at home, the air defence of Great Britain, the Coastal Defence, the garrison of Northern Ireland, the draft-producing units and training schools, the defence of aerodromes and vulnerable points, leave only a small margin.

8. It will not be possible to increase the Field Army at home beyond the number of divisions—less than forty—already mentioned, and great efforts will be needed to maintain the existing strength at home while supplying the drafts for the Middle East, India, and other garrisons abroad—*e g* , Iceland, Gibraltar, Malta, Aden, Singapore, Hong Kong.

9. We could not allow the force needed in Great Britain to repel invasion to fall below twenty-five infantry and four or five armoured divisions It must be noted that troops can be transferred by the enemy across the main lateral railways of Europe incomparably quicker than any of our divisions could be recalled from abroad The number of divisions available for offensive oversea action is therefore small.

10 Apart from the twenty-five British and Imperial divisions proposed to be built up in the Middle East during 1942, an Expeditionary Force of six or seven divisions, including two armoured divisions, is the maximum that can be conceived. This is being prepared Even if more were available the shipping does not exist to carry larger forces and maintain them overseas. All ideas of twenty or thirty divisions being launched by Great Britain against the western shores of the Continent or sent round by sea for service in Russia have no foundation of reality on which to rest This should be made clear

11. We have every intention of intervening on land next spring, if it can be done. All the possibilities are being studied, including action on the northern and southern flanks of the Russian front In the north an expedition into Norway would raise a serious revolt, and might, if it succeeded, win the Swedish Government, with its good army, to our cause This has been studied in detail It is not however seen how the Russian forces could help, in fact, their intervention would antagonise Sweden beyond all hope. The hostility of Finland is already declared.

12 At any moment we may be called upon to face the hostility of Spain and the penetration of the Germans into Morocco, Algeria, and West Africa Should the French resist in Africa our available force

might be sent to help them there In both these cases the sea routes are short and not comparable with the vast distances round the Cape.

13 In the Middle East, on the southern flank of Russia, we shall deploy the strong forces mentioned above. Once the Western Desert and Cyrenaica have been cleared of the German and Italian armies now active there our Middle Eastern forces would have a choice of action If they increasingly give their right hand to the Russians, either in the Caucasus or east of the Caspian, it must be realised that their supply will choke the rail and road connection from the Persian Gulf On the other hand, Turkey, if she could be gained, is the great prize Not only would the German road to Syria and Egypt be barred by powerful Turkish armies, but the Black Sea naval defence could be maintained with great advantages, thus helping the defence of the Caucasus The action of Turkey one way or the other may be determined in the near future by the promises, should she become involved, of help in troops and modern equipment, including especially aerodromes, tanks, anti-tank and anti-aircraft artillery, etc It should be made clear to the Russians that much of this equipment and the greater part of the troops would of course be withdrawn from the contributions available for Russia, which are all we can give In order however to induce Turkey to come in on our side, especially in the near future, it would be well worth Great Britain and Russia revising their arrangements

14 We are much interested in the development of the Polish and Czech armies in Russia, the latter being only small, and we should be glad to help in their equipment. It should be pointed out that the Poles and Czechs have influential communities in the United States If a proportion of our equipment could be earmarked for the Poles and Czechs it would have a good effect

15 The Russians will no doubt ask how you propose to win the war, to which our answer should be, "By going on fighting till the Nazi system breaks up, as the Kaiser's system broke up last time" For this purpose we shall fight the enemy wherever we can meet them on favourable terms We shall undermine them by propaganda, depress them with the blockade, and, above all, bomb their homelands ceaselessly, ruthlessly, and with ever-increasing weight of bombs We could not tell last time how and when we should win the war, but by not giving in and not wearying we came through all right. We did not hesitate to face Germany and Italy alone all last year, and the determination of the British masses to destroy the Nazi power is inflexible. The phrases "Nazi tyranny" and "Prussian militarism" are used by us as targets rather than as any implacable general condemnation of the

German peoples. We agree with the Russian Government in hoping to split the Germans and to isolate the criminal Nazi régime.

16. Of course we cannot predict what action the United States will take. The measures already sanctioned by President Roosevelt and his Government may at any time in the near future involve the United States in full war, whether declared or undeclared. In that case we might look forward to a general offensive upon Germany in 1943. If German morale and unity were seriously weakened and their hold upon the conquered European countries relaxed it might be possible to land large numbers of armoured forces simultaneously on the shores of several of the conquered countries and raise widespread revolts. Plans for this are now being studied by the British Staffs.

APPENDIX K

FLEET DISPOSITIONS IN THE INDIAN OCEAN

Correspondence between the Prime Minister and the First Lord and the First Sea Lord

Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 25 Aug 41

It should be possible in the near future to place a deterrent squadron in the Indian Ocean. Such a force should consist of the smallest number of the best ships. We have only to remember all the preoccupations which are caused us by the *Tirpitz*—the only capital ship left to Germany against our fifteen or sixteen battleships and battle-cruisers—to see what an effect would be produced upon the Japanese Admiralty by the presence of a small but very powerful and fast force in Eastern waters. It may be taken as virtually certain that *Tirpitz* will not sally forth from the Baltic while the Russian Fleet is in being, as she is the only unit which prevents Russian superiority there. Nevertheless, in making dispositions which take some time to alter we must provide for two *K.G.V.s* and one *Nelson* with the C.-in-C. This allows for accidents, refits, and leave. One aircraft-carrier, preferably [one of the] unarmoured, should also be provided for the broad waters.

2. The most economical disposition would be to send *Duke of York*, as soon as she is clear of constructional defects, via Trinidad and Simonstown to the East. She could be joined by *Repulse* or *Renown* and one aircraft-carrier of high speed. This powerful force might show itself in the triangle Aden–Singapore–Simonstown. It would exert a paralysing effect upon Japanese naval action. The *Duke of York* could work up on her long, safe voyage to the East, leaving the C.-in-C.

Home Fleet with two *K G V s*, which are thoroughly efficient It would be, in my opinion, a more thrifty and fruitful use of our resources than to send *Prince of Wales* from regions where she might, though it is unlikely, meet *Tirpitz*

3 I do not like the idea of sending at this stage the old "R" class battleships to the East The manning problem is greatly increased by maintaining numerically large fleets in remote waters, owing to the greater number of men in transit Besides this, the old ships are easy prey to the modern Japanese vessels, and can neither fight nor run. They might, however, be useful for convoy should we reach that stage, which is not yet by any means certain, or even, in my opinion, probable

4 I am however in principle in favour of placing a formidable, fast, high-class squadron in the aforesaid triangle by the end of October, and telling both the Americans and Australians that we will do so It seems probable that the American negotiations with Japan will linger on for some time The Americans talk now of ninety days, and the Japanese may find it convenient to wait and see how things go in Russia

5 It would always be an advantage, if possible, to change the armoured [aircraft-carrier] *Victorious* for the *Ark Royal* for service in the narrow waters of the Mediterranean, and I suppose you will wish to strengthen Force H with one of the *Nelsons* as well as either *Repulse* or *Renown*

6 Naturally, C-in-C Home Fleet will require a first call upon an aircraft-carrier, preferably *Ark Royal* *Furious* will have to do some more work on ferrying aircraft to Takoradi *Victorious* would be well placed in Force H. This would leave *Illustrious, Formidable*, and *Indomitable*, as they come to hand, together with *Eagle* and *Argus*, for the needs of the Eastern triangle and the Mediterranean. You ought to be very well off by the end of the year

Pray let me have your thoughts on the above

First Sea Lord to Prime Minister 28 Aug 41

Please see attached proposed disposition of capital ships and aircraft-carriers

1 This question had been under review before receipt of your minute, and was again reviewed after its receipt
2 The chief difference between your suggestion and the proposed disposition is in the allocation of *King George V* class and *Nelson* class I fully appreciate the attractiveness of sending one of the *King George V* class to the Indian Ocean when fully worked up, but after considering this most carefully I cannot recommend it, for the reasons given in this memorandum
3. I do not consider that any of the *King George V* class should be sent abroad until fully worked up, for the following reasons

(*a*) A ship cannot work up unless she has all the necessary targets at her disposal.
(*b*) If a ship does not get an uninterrupted working-up period she never really recovers from it
(*c*) With a combination of the intricate machinery and electrical installations, and 60 per cent. of the crew being men under twenty-one who have never been to sea before, it is inevitable that mishandling of material should occur at first. It is therefore essential that the working up should be carried out in proximity to a dockyard or contractor's yard

4 It is unfortunate that we cannot achieve the redistribution of capital ships earlier, but the number of ships under repair or refitting prevents this As long as both *Bismarck* and *Tirpitz* were afloat we had to postpone refits

5 The situation as regards aircraft-carriers is also unsatisfactory, but this is due to action damage to *Illustrious* and *Formidable* and essential refits to *Furious* and *Ark Royal*.

Capital Ship and Aircraft-carrier Dispositions

Note —The date in brackets against the name of a ship is the date on which she will arrive on her station.

FINAL DISPOSITIONS TO BE WORKED TO

	Capital Ships	*Aircraft-carriers*
Home Fleet	Two *King George V* (Sept 3)	*Victorious* (now)
	Malaya (Sept 21)	*Furious* (Feb)
Force H	One *King George V* (early Dec ?)	*Indomitable* (Nov.)
Mediterranean	*Queen Elizabeth* (now)	*Illustrious* (Jan)
	Valiant (now)	*Formidable* (Feb)
	Barham (now)	
	Warspite (late Jan)	
Trincomalee	*Nelson* (end Nov)	*Hermes* (now)
	Rodney (end Jan)	*Ark Royal* (Apr '42)
	Renown (mid-Jan)	*Indomitable* (in emergency)
Indian Ocean Troop Convoy Escort	*Revenge* (mid-Sept)	
	Royal Sovereign (mid-Nov ?)	
	Ramillies (mid-Dec)	
	Resolution (early Jan)	
Spare Ship	*Repulse*	

APPENDIX K

REASONS FOR THE PROPOSED "FINAL DISPOSITIONS"

Home Fleet and Force H

(1) The Atlantic is the vital area, as it is in that ocean and that alone that we can lose the war at sea

(2) As long as *Tirpitz* is in being it is essential to have two ships of *King George V* class available to work in company

(3) A combination of a *King George V* and a *Nelson* is not a satisfactory one, owing to their difference in speed

(4) In order to have two *King George V's* available at all times it is necessary to have three of that class in home waters, to allow for one being damaged by torpedo, bomb, or mine or refitting.

(5) It is considered that the third ship can be in Force H at Gibraltar and that all three ships need not be at Scapa

(6) If the *Tirpitz* did manage to break out she could paralyse our North Atlantic trade to such an extent that it would be essential to bring her to action at the earliest possible moment, and we could not afford to have one of the *King George V's* absent from the scene of operations

(7) The capital ship in Force H should not only be able to resist air attack, but should also be fast This combination is only obtained in the *King George V* class

(8) *Malaya* is allocated to Home Fleet, as it is necessary to have one capital ship in the Atlantic in addition to *King George V* class for the following duties

(*a*) Escorting important troop convoys
(*b*) Giving cover to convoys east of 26° W in emergency.
(*c*) To back up Force H for operations in Western Mediterranean when necessary

(9) (*a*) *Ark Royal* is not shown in the dispositions, as she has to refit on relief by *Indomitable* and will not be available until April '42
(*b*) *Eagle* is not shown in the dispositions, as she is being kept available in home waters for "Pilgrim" [occupation of the Canary Islands]

Trincomalee

(10) It is proposed to send *Nelson*, *Rodney*, and *Renown* to Trincomalee or Singapore, for the following reasons·

(*a*) *Nelson* and *Rodney* will eventually form part of the Eastern Fleet, when it is possible to form one, which is dependent on the availability of cruisers and particularly of destroyers.

(*b*) *Nelson* and *Rodney* will give the best backing to the "R" class when the Eastern Fleet is formed, and the combination will form the most homogeneous fleet we can provide as regards speed

(*c*) Until we can form a fleet in the Far East which is capable of meeting a Japanese force of the strength they are likely to send south it is necessary to deter Japanese action in the Indian Ocean

By sending capital ships to escort our convoys in the Indian Ocean we hope to deter the Japanese from sending any of their battleships to this area

By sending a battle-cruiser and aircraft-carrier to the Indian Ocean we hope to deter the Japanese from sending their 8-inch-gun cruisers to attack our trade in this area.

It is not considered that the substitution of one of the *King George V* class for one of the above would give sufficient added security to justify the disadvantages which her absence from the home area would involve, as her speed is inadequate to run down a Japanese 8-inch-gun cruiser

(*d*) Depending on the situation at the time, and if war with Japan has not broken out, it may be found desirable to send *Nelson*, *Rodney*, *Renown*, and the aircraft-carrier to Singapore in the first instance, as they would thus form a greater deterrent If war eventuated they would have to retire to Trincomalee

(*e*) Owing to the necessity to refit *Ark Royal* it will not be possible to send a large carrier to join this force until April '42, unless we take *Indomitable* away from Force H

Indian Ocean Troop Convoy Escorts

It is proposed to send the four "R" class to the Indian Ocean now, for the following reasons

(*a*) They are no longer required for North Atlantic convoy escort

(*b*) They will eventually form part of the Eastern Fleet, and until this time it is desirable to keep

them in waters where they will be free from air and U-boat attack.

(*c*) By employing them for escorting troop convoys they will relieve the cruiser situation.

(*d*) Their presence in the Indian Ocean, together with *Nelson*, *Rodney*, and *Renown*, will go some way to meet the wishes of Australia and New Zealand for the Far East to be reinforced

INTERIM DISPOSITIONS TO STRENGTHEN INDIAN OCEAN

It is necessary to retain the *Repulse* in home waters until *King George V* is again available on September 3. *Repulse* will escort W.S 11, and subsequently arrive at Trincomalee on October 7

Prime Minister to First Sea Lord 29 Aug 41

It is surely a faulty disposition to create in the Indian Ocean a fleet considerable in numbers, costly in maintenance and man-power, but consisting entirely of slow, obsolescent, or unmodernised ships which can neither fight a fleet action with the main Japanese force nor act as a deterrent upon his modern fast, heavy ships, if used singly or in pairs as raiders. Such dispositions might be forced upon us by circumstances, but they are inherently unsound in themselves

2 The use of the 4 *R s* for convoy work is good as against enemy 8-inch-gun cruisers But if the general arrangements are such that the enemy is not afraid to detach an individual fast, modern battleship for raiding purposes all these old ships and the convoys they guard are easy prey The *R s*, in their present state, would be floating coffins In order to justify the use of the *R s* for convoy work in the Indian and Pacific Oceans it would be necessary to have one or two fast heavy units, which would prevent the enemy from detaching individual heavy raiders without fear of punishment. We should inculcate the true principles of naval strategy, one of which is certainly to cope with a superior force by using a small number of the best fast ships.

3 The potency of the dispositions I ventured to suggest in my minute is illustrated by the Admiralty's own extraordinary concern about the *Tirpitz* *Tirpitz* is doing to us exactly what a *K.G.V.* in the Indian Ocean would do to the Japanese Navy It exercises a vague general fear and menaces all points at once It appears, and disappears, causing immediate reactions and perturbations on the other side

4 The fact that the Admiralty consider that three *K G V.s* must be used to contain *Tirpitz* is a serious reflection upon the design of our latest ships, which, through being under-gunned and weakened by hangars in the middle of their citadels, are evidently judged unfit to

fight their opposite number in a single-ship action. But, after making allowances for this, I cannot feel convinced that the proposal to retain three *K.G.Vs* in the Atlantic is sound, having regard (*a*) to the American dispositions which may now be counted upon, and (*b*) to the proved power of aircraft-carriers to slow down a ship like *Tirpitz* if she were loose. It also seems unlikely that *Tirpitz* will be withdrawn from the Baltic while the Russian Fleet remains in being, and, further, the fate of *Bismarck* and all her supply ships must surely be present in the German mind. How foolish they would be to send her out, when by staying where she is she contains the three strongest and newest battleships we have, and rules the Baltic as well! I feel therefore that an excessive provision is being made in the Atlantic, and one which is certainly incomparably more lavish than anything we have been able to indulge in so far in this war.

5 The best use that could be made of the *R s* would be even at this late date to have them rearmoured against aircraft attack and used as a slow-moving squadron, which could regain for us the power to move through the Mediterranean and defend Malta indefinitely.

6 I must add that I cannot feel that Japan will face the combination now forming against her of the United States, Great Britain, and Russia, while already preoccupied in China It is very likely she will negotiate with the United States for at least three months without making any further aggressive move or joining the Axis actively. Nothing would increase her hesitation more than the appearance of the force I mentioned, and above all a *K G.V.* This might indeed be a decisive deterrent.

APPENDIX L

TANKS FOR THE MIDDLE EAST

Prime Minister to Secretary of State for War and Minister of Supply 11 July 41

Out of 1,441 Infantry and cruiser tanks, with the troops [at home] 391 are "unfit for action". This is far too high, and I am sure it is capable of reduction if something like the arrangements for repair introduced into the Air Force last year could be provided

Will you please consult together and make me a proposal for the more prompt handling of these repairs The number of tanks out of action ought never to exceed 10 per cent of those in this country More especially is this the case in view of the period of maximum preparedness which is now approaching

Prime Minister to Secretary of State for War 19 Aug 41

Your minute of July 15, 1941 [about repair of tanks at home], states a number of requirements which, if they could all be met, would make life too easy. Everything practicable should be done to meet the various desiderata, but the main contribution must be a genuine effort and good management. I am shocked to see that a month later we still have 25 per cent of Infantry tanks out of order, and that out of 400 cruiser tanks no fewer than 157 are unfit for action I have no doubt there can be made plenty of explanations for such a failure, but failure it remains none the less

Pray do not let it be thought that you are satisfied with such a result If you simply take up the attitude of defending it there will be no hope of improvement

Prime Minister to Secretary of State for Air 27 Aug 41

Your minute of August 6 shows that the most promising weapon at present in sight for aerial attack on tanks is the Jefferis bomb, and I am pleased to note that you have ordered 50,000 of these

As I understand these weapons go into the ordinary light bomb container, it should be possible to put them into use at once, and I should favour postponing further manufacture of the sticky bomb and a part of the bombard ammunition in order to obtain immediately an adequate supply of these aerial bombs It seems likely that when the tactics have been worked out and the pilots have had some practice considerable improvement in the chance of hitting, as shown in the first trials, may be expected We should get immediately a large supply of dummy bombs and give a selected group of pilots plenty of practice against ground targets If the expected improvement is achieved we should investigate at once the possibility of sending through the Mediterranean at an early date in a warship an adequate supply with the pilots who have practised with the dummy bombs

It might also be well to consider whether the Russians might be able to improvise these bombs rapidly, in which case they should be given full details

* * * * *

(*Action this Day*)
Prime Minister to Minister of Supply and C I G S 27 Aug 41

We ought to try sometimes to look ahead The Germans turned up in Libya with 6-pounder guns in their tanks, yet I suppose it would have been reasonable for us to have imagined they would do something to break up the ordinary "I" tank. This had baffled the Italians at Bardia, etc The Germans had specimens of it in their possession taken at Dunkirk, also some cruiser tanks, so it was not difficult for them to prepare weapons which would defeat our tanks

2. I now try to look ahead for our side, to have Alpine troops formed for Norway, and to have the power to spring a surprise in tanks on the enemy in Libya. Instantly everyone tries to make difficulties, so that in three or four months, should it be desired to take action, we shall be confronted with the usual helpless negation. We ought to have it in our power to place at least 100 A.22's in a desert-worthy condition in the field by January or February at latest To do this it is necessary to get over all the minor modifications for desert warfare Why should this not go forward at the same time as the final improvements are being made in the tank itself? The people in Egypt will never believe the tank is desert-worthy unless they have it tried on the spot. The various improvements made at home can be flown out or explained by telegram Instead of this, we are to wait till the beginning of 1942, and then send two tanks out, which are to be then sniffed at and experimented with, and a whole new lot of faults found by the Nile authorities

3 What I have asked is this that two of these tanks shall go out now with a certain number of skilled men and spare parts, that these men shall be kept in close touch with the improvements made here, and shall at the same time deal with the "desert-worthy" aspect, imparting to us the result of any improvements they make I would have been willing to have allowed the double process to go on at home, but if it is going to take till 1942 anyhow at home, and then have to be gone over all again in the Middle East, I feel that my original thought was right

Pray let me have some help in this matter

Where is it supposed these tanks will fight in the spring of 1942, except in the Middle East?

These two Churchill tanks were shipped to the Middle East at the end of September, and arrived on December 12 General Auchinleck had promised to give his personal attention to their tests in the desert, and I was therefore shocked to receive the following telegram from him on the 25th

"These vehicles were stowed on forward well-deck, unsheeted and unlocked In consequence vehicles were exposed to sea-water, and when received both tanks had water on floors and showed rust markings nine inches up the walls

"Considerable damage to electrical and wireless gear, requiring fourteen days' expert attention before tanks can run Method of dispatch and stowage most unsatisfactory All American tanks are dispatched with all crevices and doors pasted up with masking tape . . ."

I immediately asked Mr Justice Singleton to conduct an inquiry He reported on March 10, 1942. "The case discloses mismanagement to an amazing degree." The tanks had been loaded on the open deck, ungreased, their doors unlocked, and not even covered with water-proof sheets "The damage," he said, "was caused through their not having been prepared for shipment in the normal way Much of it could and would have been avoided if the two fitters had accompanied the tanks" This of course was precisely what Lord Beaverbrook and I had asked should be done and what the War Office had ordered Mr Justice Singleton said that it was difficult to tell who was responsible, as the General concerned in the War Office was dead. He continued as follows

"The arrangement which had been made was altered under somewhat strange circumstances which it is not easy to follow The managing director of the firm of manufacturers and the Major-General met at a luncheon party at the Savoy on September 15, when the former asked if it was not possible for his fitters to be sent to the Middle East by air, as they could be usefully employed here and could keep in touch with improvements. The General then instructed the Ministry of Supply to arrange for the two men to be flown to the Middle East rather than that they should waste several weeks on board ship"

No one from the firm of manufacturers even saw the tanks loaded on board The Ordnance Officer at the port did not go inside either of them and knew nothing of their condition. His staff sergeant entered one and noticed that it was not properly "greased up", but reported the fact to nobody.

By the time however that the investigation had been finished the war had swept on, and on June 1, 1942, I minuted to General Ismay

"Alas, I am too busy to chase these rabbits as they deserve, and no one else will do anything."

* * * * *

(Action this Day)
Prime Minister to General Ismay 21 Oct 41

Please check and point this up for me in time for to-night's meeting

1 Clarification is needed about the telegrams from Middle East General Auchinleck says that the 150 tanks which he had expected in September only *arrived* October 4th to 14th Actually they arrived on October 2, or only one day later than he had expected Twelve days were taken in unloading the whole of these tanks What happened to them then? We are told they had to be stripped down to be made desert-worthy and have their front axles strengthened We now

know this was not necessary so far as the axles were concerned, and that the desert-worthy additions could all have been executed at the unit in a day or two. We do not know however what Middle East has done. Have they in fact already pulled these tanks to pieces and begun splicing the axles? If so the three weeks' delay of which they speak may be unavoidable, even though the process was unnecessary How was it no one went out with the tanks to tell the people out there about them?

2 By other telegrams and discussions it is known that an armoured brigade or division requires to be a month with its new vehicles to fire the guns and perform combined exercises How far does this apply to the 22nd Armoured Brigade, who were fully trained with these very tanks when they went out? I suppose they would say they must have some additional *desert* practice, which seems reasonable

3 But if these 150 tanks only cleared arrival on October 14 and then there is a three-weeks period to make them desert-worthy, this would carry us to November 7 What then happens to the necessary month, or perhaps somewhat shorter period, for them to be practised in the hands of troops and work in the desert with their commanders? The story we have been told, as now pieced together, does not hold water, even on the revised programme. We have got to find out (1) what has been or is being done mechanically and what is the existing state of each of the 150 tanks; (2) what changes will be made in their treatment as a result of the War Office telegram about the axles, and will any shortening up of the date be possible, (3) what about the desert training period of the 22nd Armoured Brigade?

Have this all cleaned up and the necessary telegram drafted for my consideration to-night

Prime Minister to General Ismay 24 Nov 41

Let me have your full report about the remainder of the 1st Armoured Division When did they arrive, and what is the condition of their tanks? How far are they desert-worthy? What about their axles? How far are they trained? Can anything be done to speed them up or to speed up their unloading?

* * * * *

I print these details to show how difficult it is to get things done even with much power, realised need, and willing helpers

APPENDIX M

NAVAL DIRECTIVES AND MINUTES MARCH–DECEMBER 1941

NAVAL BUILDING PROGRAMMES

The gun-power of our new battleships had always interested me deeply. In Volume I, I have summarised my discussions with the Admiralty in 1937, when the design of the *King George V* class was under review.* These five ships were in my view gravely under-gunned. The four ships of the *Lion* class which were to follow them were intended to mount the 16-inch gun, and the first two had been actually laid down before the outbreak of war, but all work on them had been stopped in October 1939. I reverted to this subject in my directive of March 27, 1941, where I stated my general views on our future naval building programme, in the light of the many other pressing commitments which clamoured for attention.

NAVAL PROGRAMME, 1941

DIRECTIVE BY THE MINISTER OF DEFENCE

27 Mar 41

Naval programmes have been continuous throughout the war, all ships being filled as vacated. It is nevertheless convenient at this time of year that the Admiralty should present their present needs of new construction in a general list and obtain Cabinet sanction for their policy.

2. No one can doubt that the construction of small craft for anti-U-boat warfare, for minesweeping, for combating the E-boats, and for assault landings should proceed to the full extent of our resources. It is essential however that simplicity of design, speed of construction, and the largest possible numbers should govern the whole of this small craft programme. The construction of destroyers should in no case exceed fifteen months. I understand from the Controller that, apart from enemy action or strikes, he can guarantee this in respect of the forty now projected.

3. We cannot at the present time contemplate any construction of heavy ships that cannot be completed in 1942. This rules out further progress upon the *Lion* and *Temeraire* and the laying down of *Conqueror* and *Thunderer*. It also makes it impossible to begin the four heavy cruisers contemplated in the programme of 1940. Work will there-

* See Volume I, Chapter IX

fore be limited to completing the three remaining battleships of the *King George V* class and to building the three light cruisers of the 1941 programme, all of which, it is understood, can be completed before the end of 1942. An additional monitor, for which the guns are already available, can also be completed before the end of 1942

4 The need of concentrating labour on merchant repairs and on repairs to the fighting fleet makes it impossible to begin any new aircraft-carriers after *Victorious*, *Indomitable*, and *Indefatigable* have been completed Such new aircraft-carriers could not in any case be ready until 1944.

5 The requirements of the Navy in armour-plate can on the above basis be adjusted to meet the needs of the Army tank programme, and can be limited to 16,500 tons in 1941 and 25,000 tons in 1942. No new armour-plate plant need be erected at present.

6 The one exception to the above principles is the *Vanguard*, which can complete in 1943 and is the only capital ship we can by any means obtain before 1945 As we have the guns and turrets for the *Vanguard*, it is eminently desirable that this vessel should be pressed forward, provided that this can be done within the limits of the armour-plate provision in paragraph 5.

7 Nothing in the above should hinder the work on the drawings and designs of any of the postponed vessels, including especially the new aircraft-carrier

8 In view of the need to concentrate on repairs, the output of new merchant ships may be reduced from 1,250,000 tons, which is the present target, to 1,100,000 tons in 1942, and we should not at the present time proceed with any merchant vessels which cannot be completed by the end of 1941 It is to the United States building that we must look for relief in 1942

9 The whole of our heavy ship construction will be reviewed on September 1, 1941, in the light of

(*a*) the Battle of the Atlantic, and
(*b*) the relation of the United States to the war

Prime Minister to First Lord, First Sea Lord, and Controller 16 Aug 41

I am greatly interested in the proposed design of the *Lion* and *Temeraire* Let me know the exact point which has been reached in the general construction and in the drawings

2 It is most important not to reproduce in these two ships the faults which are apparent in the five *K.G V s*, namely

(*a*) The retrogression to the 14-inch gun from our well-tried 15-inch type, and

(*b*) The marring of the structure by the provision of the aerodrome amidships Merely for the sake of having a couple of low-quality aircraft, the whole principle of the citadel so well exemplified in the *Nelson* and the *Rodney* has been cast aside

The space of about forty feet amidships entails a degree of heavy armouring in this vital area, which is improvident having regard to the needs for carrying a lesser protection as far forward and aft as possible. It may well be that 1,000 or 1,500 tons of armour are misplaced through the opening of this hiatus in the citadel of the ship.

3. I understand, and hope, that the *Lion* and *Temeraire* will carry nine 16-inch guns in three triple turrets, with six guns firing directly ahead, and the rear turret on the most forward bearing possible These three turrets should be grouped together as closely as possible to form the central citadel, comprising funnels and director tower, and covering with the turret and heaviest armour the magazines and vital machinery spaces. If this were done it should be possible to give a 6-inch turtle [underwater] deck carried very far forward, if possible to the bow, thus protecting the speed of the ship from bow damage.

4. Although it looked very progressive to be able to fly two aeroplanes off a battleship, the price paid in the rest of the design was altogether excessive. It might however be possible in a ship with a citadel outlined above to arrange to flip off one or two aircraft from the quarterdeck, but no serious sacrifice of design must be made for this A capital ship of the consequence of the *Lion* or *Temeraire* must depend upon having an aircraft-carrier working with her, or at the very least a cruiser capable of flying off an aircraft She should on no account be spoiled for the sake of carrying aircraft

5 I should very much like to see these two ships pressed forward beyond what is at present approved Before however any final decision is taken upon the design there ought to be a conference of a number of sea officers, including the late and present Commanders-in-Chief, who have served in the *King George V* or *Prince of Wales* The successful design of the *Arethusa* was evolved from a conference of admirals convened, at my direction, in the winter of 1911.

Pray let me have your views.

The First Sea Lord confirmed that these ships would mount nine 16-inch guns in three triple turrets and that the Commanders-in-Chief had been consulted about the design He maintained that the aircraft hangars in the *King George V* class did not weaken the citadel This had to include protection for the machinery spaces, which were enormously increased in these ships as compared with the *Nelsons*.

The resumption of work on the *Lion* and *Temeraire* was closely considered, but we decided against it for the following reasons·

(*a*) The building of turrets would interfere with the production of A A equipment and coast defence gun mountings

(*b*) The requirements for armour would conflict with tank production.

(*c*) The demands which these ships would make on our shipyard labour force.

What finally clinched the matter was the fact that there could be no reasonable chance of completing these vessels during the war They were therefore cancelled.

I was anxious to know how our *King George V* class compared with contemporary American ships.

Prime Minister to First Sea Lord 1 Sept 41

I cannot help grieving that we have not got the three triple 16-inch turrets for the five *K.G.V.s* The matter is academic and irretrievable None the less, as my thought has dwelt on these matters for the last thirty years, I should like to know what is known at the Admiralty about the American ships contemporary with *K G.V.* Admiral Stark told me that they were three triple turrets of 16-inch When I asked him whether he had not overrun the 35,000-ton limit he said, "No, but they had given up the 500 tons they used to keep to veer and haul upon."

Please let me have the legend of these American ships as far as you have knowledge of them at the Admiralty.

Let me also know what they do about the hangar, and any advantages in strength and structure possessed by *K G V.* to compensate for the loss of gun-power

The First Sea Lord replied that the equivalent American ship (U S S. *North Carolina*) had a heavier main armament, but somewhat lighter secondary armament The British ship had heavier protection and slightly higher speed He preferred the British method of carrying two aircraft in hangars amidships as compared with the American practice of providing two exposed catapults on the quarterdeck The discussion continued with my minute of September 22 and his reply dated October 2

Prime Minister to First Sea Lord, Controller, and D N C. 22 Sept 41

COMPARISON BETWEEN U S S "NORTH CAROLINA" AND H M S "KING GEORGE V"

Naturally, being all for stiff ships, I am very glad we have 1,370 tons more armour, and another 790 tons of weight in the hull The deeper armour belt and hard nose are good It is very satisfactory to be able to combine this with superior speed, as has been done. I am still not

convinced however that the lengthening of the citadel area caused by interpolating the aerodrome amidships instead of aft has not used up a lot of this fine armour without advantage to the "citadel" principle, on which fighting and flotation alike depend I should like to go further into this on other papers

2. Our ship is longer, narrower, and deeper than the American I presume this makes for speed.

3 We have exceeded the Treaty limit by 1,750 tons, while the Americans with the 16-inch guns are either within it or only 200 tons over it. Can this be true?

4 There is as much to be said for twenty 5-inch guns for A A and secondary armament as for sixteen 5 25-inch guns, in fact, some people would prefer more numerous gun positions to deal with multiplied air attacks

5 It is when we come to compare nine 16-inch guns with ten 14-inch guns that sorrow rises in the heart, or ought to Nine 16-inch at 2,700 pounds per round equals 24,300 pounds Ten 14-inch guns at 1,590 pounds equals 15,900 pounds Difference, 8,400 on the broadside

6 It is interesting to note that the Germans in the *Bismarck* chose four turrets of two 15-inch, whereas we went to the other extreme of three turrets, of which two were four-gun, but a smaller gun The Americans, coming in between the two, may have hit the happy medium, and have as well the biggest punch

First Sea Lord to Prime Minister 2 Oct 41

I attach some further remarks referring paragraph by paragraph to the points you have raised.

U S S "North Carolina" and H M S "King George V"

The *King George V* arrangement of space amidships for aircraft has been repeated in *Lion* and *Temeraire* This space, 55 ft long, gives the impression of a hiatus, but actually involves no hiatus in the citadel below the armoured deck The space from the fore end of "A" turret to the after end of "Y" turret is completely occupied by magazines, shell-rooms, and propelling machinery, which must be protected by heavy armour Were the aircraft removed no armour would become available to be fitted elsewhere

2 This is confirmed

3 In *King George V* we set out to build a ship of 35,000 tons standard displacement, but additions were made during construction and some of the estimated weights (principally armament) were not realised Hence the ship came out 1,750 tons heavy

The American ship may also have come out heavy But if we were

prepared to accept the hull scantling reported and the protection of the American ship, we estimate we could build her to a standard displacement of 35,200 tons.

4. The number of 5-inch guns mounted in the American ship are got in at the expense of close-range A A weapons

5 I agree generally The *King George V* was designed for twelve 14-inch guns, but two guns were given up for increased armour protection. It is probable that the rate of fire of the 14-inch is slightly greater

6 *Bismarck's* standard displacement is estimated to be 41,150 tons. It would appear that as soon as the Americans could design a ship they really liked with 16-inch guns they went to 45,000 tons in the *Iowa* class

APPENDIX N

MINISTERIAL APPOINTMENTS FOR THE YEAR 1941

(Members of the War Cabinet are shown in italics)

Office	Holder
Prime Minister and First Lord of the Treasury, Minister of Defence	*Mr Winston S Churchill*
Admiralty, First Lord of the	Mr A V Alexander
Agriculture and Fisheries, Minister of	Mr R S Hudson
Air, Secretary of State for	Sir Archibald Sinclair
Aircraft Production, Minister of	(a) *Lord Beaverbrook* (b) Lieut-Colonel J T C Moore-Brabazon (appointed May 1)
Burma, Secretary of State for	Mr L S Amery
Colonies, Secretary of State for the	(a) Lord Lloyd (till Feb 4) (b) Lord Moyne (appointed Feb 8)
Dominion Affairs, Secretary of State for	Viscount Cranborne
Economic Warfare, Minister of	Mr Hugh Dalton

EDUCATION, PRESIDENT OF THE BOARD OF	(a) MR. HERWALD RAMSBOTHAM (b) MR R. A. BUTLER (appointed July 20)
EXCHEQUER, CHANCELLOR OF THE	*Sir H Kingsley Wood*
FOOD, MINISTER OF	LORD WOOLTON
FOREIGN AFFAIRS, SECRETARY OF STATE FOR	*Mr. Anthony Eden*
HEALTH, MINISTER OF	(a) MR MALCOLM J MACDONALD (b) MR A E BROWN (appointed Feb 8)
HOME DEPARTMENT, SECRETARY OF STATE FOR THE HOME SECURITY, MINISTER OF	MR HERBERT S MORRISON
INDIA, SECRETARY OF STATE FOR	MR. L S AMERY
INFORMATION, MINISTER OF	(a) MR A DUFF COOPER (b) MR BRENDAN BRACKEN (appointed July 20)
LABOUR AND NATIONAL SERVICE, MINISTER OF	*Mr Ernest Bevin*
LANCASTER, CHANCELLOR OF THE DUCHY OF	(a) LORD HANKEY (b) MR A DUFF COOPER (appointed July 20)
LAW OFFICERS	
ATTORNEY-GENERAL	SIR DONALD SOMERVELL
LORD ADVOCATE	(a) MR T M. COOPER (b) MR J S C REID (appointed June 6)
SOLICITOR-GENERAL	SIR WILLIAM JOWITT
SOLICITOR-GENERAL FOR SCOTLAND	(a) MR J S C REID (b) SIR DAVID KING MURRAY (appointed June 6)
LORD CHANCELLOR	VISCOUNT SIMON
LORD PRESIDENT OF THE COUNCIL	*Sir John Anderson*
LORD PRIVY SEAL	*Mr Clement R Attlee*
MIDDLE EAST, MINISTER OF STATE RESIDENT IN THE	*Mr Oliver Lyttelton* (appointed July 1)
MINISTER OF STATE	*Lord Beaverbrook* (May 1–June 29)
MINISTER WITHOUT PORTFOLIO	*Mr Arthur Greenwood*
PAYMASTER-GENERAL	(a) VISCOUNT CRANBORNE (b) LORD HANKEY (appointed July 20)

PENSIONS, MINISTER OF	SIR WALTER WOMERSLEY
POSTMASTER-GENERAL	MR. W S MORRISON
SCOTLAND, SECRETARY OF STATE FOR	(*a*) MR A. E BROWN (*b*) MR THOMAS JOHNSTON (appointed February 8)
SHIPPING, MINISTER OF*	MR R H CROSS (resigned May 1)
SUPPLY, MINISTER OF	(*a*) SIR ANDREW DUNCAN (*b*) *Lord Beaverbrook* (appointed June 29)
TRADE, PRESIDENT OF THE BOARD OF	(*a*) MR OLIVER LYTTELTON (*b*) SIR ANDREW DUNCAN (appointed June 29)
TRANSPORT, MINISTER OF*	LIEUT -COLONEL J T. C. MOORE-BRABAZON (resigned May 1)
WAR, SECRETARY OF STATE FOR	CAPTAIN H D R MARGESSON
WAR TRANSPORT, MINISTER OF*	LORD LEATHERS (appointed May 1)
WORKS AND BUILDINGS, MINISTER OF	LORD REITH

* The office of Minister of Transport was united with that of the Minister of Shipping, and a new office of Minister of War Transport created May 1, 1941

INDEX

Abadan, oil refineries, 288, capture of, 427–8
Abdiel, H.M S , 263, 266, 371
Abdul-Ilha, Emir of Iraq, 225, 234
Abe, General, 519
Abyssinia, Haile Selassie returns to, 5, 19, 73; campaign in, 6, 15, 19, 60, 69, 73, 77–9, Italian defeat in (1896), 71, Italian capture of, 71–2, Patriot movement in, 72–3, 80, 82; fate of Italian population in, 78, 82, mentioned, 708
"Acrobat", Operation, 487, 489–90, 575, 621, 634
Actæon nets, 671
Addis Ababa, 78, 80–1, 179
Aden, troops from, take Berbera, 77, troops in, 699–700
Admiralty, minutes to, 100, and repair of ships, 101, moves Western Approaches centre to Liverpool, 103, and protection of convoys, 108, requirements for armour-plate, 113, 747, 780, puts pressure on C -in-C Mediterranean, 212–15, programme of naval construction, 746–7 *n*
Adowa, battle of, 71
Adriatic Sea, 197
Ægean Sea, operations in, 255–61
Aerial mines, 662, fast (F.A M), for Malta, 187, in defence of factories and estuaries, 659
Aerial-mine throwers, 52, 638
Aerodromes, defence of, 378, 659, 689, 692–3, 763, defence battalions for, 452–453, lacking in N Italy, 487, in S E England, 661–2, in Syria, importance of, 684–5, camouflaging defences of, 716, delayed-action mines on, 731, rockets for defence of, 753 *n* , Turkish, 761, on battleships, 781, 783
Afghanistan, 742, 744
Africa, campaigns in, 5, Hitler discusses action in, 12–13, Italian empire in, 70–72, occupation of whole coastline of, 573, 578 *See also* East African Campaign, North Africa, South Africa, West Africa
African Colonial Divisions, 654, 656, 702–703
African troops, in East African campaign, 77, 82, 654, strength of, 453
Afrika Korps, Italian troops in, 362, supplies for, 363, Panzer, 369, 479, 501, in Operation "Crusader", 498, 502, capture of headquarters of, 500
Agedabia, 175, 177, 180, 191, 567
Agheila, gateway to Cyrenaica, 173, 177, German threat to, 175, 178, attack on, 179–80, 190, vulnerable road to, 186–7, German withdrawal to, 567
Agriculture, Ministry of, 113
Ahwaz oilfields, 425, 428
"Aid to Russia" Fund, 421
Air attacks, on Atlantic shipping, 99, 107, 127, 130, 725, on U-boats, 110, 460–2, on Army in Battle of Crete, 253–4, 261–262, on Fleet in Battle of Crete, 256–8, 264–6, on Germany, 340, 346, 404, 408, 451–2, 577, 580–2, 584, 673, 718–19, 721–2, 767, place of, in battle, 443–4, on Great Britain, lessening chance of, 447–8, over-painted picture of destruction wrought by, 451–2, merchant ships lost through, 464, vulnerability of Whitehall to, 651 *See also* Air raids
Air Coastal Command, 99
Air Defence of Great Britain (A D G B), 447–9, 704
Air Force—*see* Fleet Air Arm, Royal Air Force, *also* French, German Air Force, *etc*
Air Intelligence Branch, and strength of German Air Force, 695
Air Ministry, Intelligence of, on German air strength, 35–7, unhelpful to Army and Navy, 728
Airborne troops, German, 240–1, 248–9, 252–5, use in invasion, 693–4 *See also* Gliders, Parachute Troops
Aircraft, launched from ships, 107, 121, 127, 129, reinforcements of, to Middle East, 216, 449, 613–14, troop-carrying, in Crete, 254, seaborne, in Far North, 344, sent to Russia, 345, 403–5, 408, 410–11, 417–18, 553, searchlight, 460, U-boat surrenders to, 460–1; needed for Malaya, 553, German, in Japanese Air Force, 579, priority to fighter and torpedo-carrying, 584, Allied production of, 610–11, transports for, 665, rate of production of new, 717–19, wastage of, in relation to production, 748, carried by battleships, 781, 783 *See also* Bomber aircraft, Fighter aircraft, Focke-Wulf, Hurricanes, etc
Aircraft Production, Ministry of, on German air strength, 35, static programme of, 717–19
Aircraft-carriers, improvised, for Pacific, 573, 580, 584, high-speed aircraft for,

643, 681, distribution of, 751, 769–72, for Indian Ocean, 768, 770, 772, construction of new, 780
Airfield—*see* Aerodrome
Air-raid shelters, unsafe, 638, production of, 742
Air raids, on British harbours and approaches, 37–9, 108, defences against, 38, 40–2, casualties in Britain, 42, damage to buildings, first-aid repairs, 638, causing falling off in munitions production, 644, and public morale, 658–9 *See also* Air attacks
Ajax, H M S , 205; in Battle of Crete, 255, 264
Alamein, 444, 652
Albania, Greek Army in, 9, 12, 17, 24, 58, 88, 195, Italian defeat in, 13, question of withdrawal of Greek troops from, 68, 89–90, 96, 196, 199, possibilities of Yugoslav attack in, 96–7, 146, 152, 154, Greeks surrender in, 202, post-war, 558
Albemarle bombers, 741
Aleppo, 296
Alexander, Rt Hon A V , First Lord of Admiralty, minutes to, 114, 341, 637, 648–9, 657, 663–5, 669, 671, 677, 681–2, 692, 710, 724, 737, 746, 749, 768, 780, mentioned, 784
Alexandria, Greek Navy escapes to, 206, German threat to, 211, 217, operation "Tiger" and, 222, evacuation of troops to, from Crete, 265, discontinuance of Malta convoy from, 432, Italian "human torpedoes" in harbour of, 512, 613
Algeria, 479, Anglo-American plan for 575
Algiers, 586
Aliakhmon Line, 87–9, 195–6, 199
Alpine units, Iceland as training ground for, 726, for landing in Norway, 776
Aluminium, works lost by Russia, 405, sent to Russia, 408, 410–11
Amba Alagi, 80
American Volunteer Air Force in China, 527
Amery, Rt Hon L S , minutes to, 225, 670, 727, 742, mentioned, 784–5
Amphibious force, protection of, by artillery, 691, mentioned, 706
Anderson, Rt Hon. Sir John, Lord President of Council, minutes to, 102, 642, 650, 688, 723–4, 727, 742, committee of, on Persian operation, 425–6, Manpower Committee of, 454, mentioned, 541, 785
Anglo-American Supply Mission, 397, 402–3, 410, 412–19, directive for, 764–8
Anglo-Iraqi Treaty, 224, 226
Anglo-Japanese Treaty, 516, 528
Anglo-Russian agreement, outline of, 341–343
Antelat, 178, 180
Anti-aircraft, for convoys, 108, needed for Crete, 239, 244, 247, artillery, use of, 442–3, batteries for Home Defence, 447–449, 722–3, divisions, 453, Allied production of, 610–11, high-altitude, 637, mountings, falling off in production of, 644, Eire and, 645, guns for Middle East, 735, A T.S serving in batteries, 743, 745, 754, rockets, 753 *n* , for Turkey, 761
Anti-Comintern Pact, 518–19
Anti-tank protection for guns, 442; guns, U S production of, 611, weapons, need for, 675–6; guns for Middle East, 735
Antonescu, Marshal, 11, 467
Aosta, Duke of, 78, 82, 303
Arabia, 62
Arabs, German propaganda among, 287, meeting aspirations of, 294, and Jewish Army, 658, independence for, in Syria, 714–15
"Arcadia", Operation, 608, 634
Archangel, British supplies to, 344–5, 347, 351, 404, 418–19, 456, 461, 468, 470, 738–739, 765, question of landing British divisions at, 411, 413; Finnish threat to communications of, 467
Arctic Ocean, British fleet in, 340–1, Russia asks for Second Front in, 343; convoys through, 351, 417–19, 422, 461
Argentia, U S base at, 120
Argus, H M S , 243, 665, 769, at Murmansk, 345
Argyll and Sutherland Highlanders, in Crete, 263
Ariete Armoured Division, 305, 501
Arizona, U S S , 545
Ark Royal, H M S , 222, 243, 665, 769–70, bombs Leghorn, 55, in pursuit of *Bismarck*, 271–2, 279, 282, escorts Malta convoy, 433, loss of, 493, 512, 751, for Far East, 523, 770, 772, Grummans for, 725
Arliss, Captain, 264, 266
Armoured divisions, British, 657, in North Africa, 5, 56, 64, 180–1, 183, 220, 299–300, 305–7, 354–6, 700, 726 *n* , in Greece, 14, 16, 191–2, 194, 196, 198, 7th, withdrawn to Egypt, 173–4, 179, 673–5, weakness of, in Cyrenaica, 179–80, 190–2, 217, technical difficulties in re-forming 7th, 304–5, Auchinleck's requirements of, 354–6, 358, entirely British, 356, in home defence, 374–5, 452–3, 675, in Persia, 427, in Operation "Crusader", 496 *n* , 499–502, 504, 506, 509, 567, for Second Front, 583–4, Cavalry Division

redesignated, 652, organisation of, 677, 711–12, 738, tank strength of Brigade of, 682, in Middle East, 704, 708, increase in, 706, Australian, 706, Polish, 755–6, desert training of, 778 *See also* Tanks
Armour-piercing shot, 442
Armour-plate, supplies of, 113, Admiralty requirements, 747, 780
Army—*see* British, French, German Army, etc
Army Bureau of Current Affairs, 739
Army Tank Brigade, 706, 765, in Operation "Crusader", 496, 509, 567
Arnold, General H H (U S A), 614, 680–681
Artillery, in Army of Nile, 438, Churchill's note on use of, 442–4, 485, support of in amphibious operations, 691
Asmara, 79, 179, 708, 724
Assab, 679
Athens, Wavell in, 17, 19, 66, Eden in, 61, 66–9, R A F victory near, 202
Athlone, Earl of, 601
Atlantic Charter, 385–99, 605, tentative outline of, 385–6, final form of, 392–5, broadcast on, 398, Stalin's claims contrary to, 559, 616
Atlantic Conference, 384, 385 *et seq*, 529
Atlantic Ocean, U-boat warfare in, 99, 118–21, 344, 458–62, long-range aircraft in, 99, 344, 461–2, surface raiders in, 104–6, 124–6, 162, 270, 462–3, Anglo-U S defence of, 119–26, 377, 458–60, U S bases to protect, 119–20, U S Security Zone of, 122–3, 216, 399, 434, improved position in, 257, chase of *Bismarck* in, 270 *et seq*, "decisive battle of war" in, 378, U S-German clashes likely in, 528, American battleships recalled from, 547, 553, importance of Allied supremacy in, 578, 771, Churchill flies over, 625-9, action against battle-cruisers in, 665, number of U-boats in North Atlantic, 752
Atom-bomb research, 730 *n*
Attlee, Rt Hon Clement R, Lord Privy Seal, 19, 785, Deputy Prime Minister, 383, 482, 541, Churchill to, on Atlantic Charter, 391–2, 397–8, broadcast of, 398, mission of, to U S, 481–2, 486, telegrams, minutes, etc, to, 559, 564, 597–601, 611, 613–14, 618, 625, 755
Auchinleck, Field-Marshal Sir Claude, offers troops for Iraq, 225–6, 228–9, 237, 309, telegrams, etc, to, 232, 353–5, 358–359, 361, 367–8, 370–1, 481, 493, 506–507, 510, Commander-in-Chief, Middle East, 309–10, 313, 353, armoured strength required by, 354–6, 358–9, 373, sends British troops to Cyprus, 357, 359, delays attack in Desert, 357–8, 360, 364, 369, 427, 434–5, 481–2, 762, telegrams, etc, from, 360, 500–1, 504–5, 509–10, 776, visits London, 361, and relief of Australians in Tobruk, 367–71, offensive of, 477, 482, 494 *et seq*, 553, 574, King's message to, 493, personal intervention in battle, 505, 510–11, Iraq and Persia transferred to command of, 564, deprived of fruits of victory, 567, 585, 625, and Operation "Acrobat", 574–6, and Commandos, 725–6, reports on arrival of tanks, 776, mentioned, 442
Audacity, H M S, 461–2
Augusta, U S S, 381, 384
Aurora, H M S, 435, 508, 512
Australia, Japanese threat to, 158, 435, 523, 547, 592–3, unfavourable comment in, 357, British differences with, 364–72, changes in Government of, 365–7, 370, surface raider off, 462, and U S proposal to Japan, 530, reinforcements to Philippines through, 593, U S troops for, 593, 624, a great base for war supplies, 599, Churchill's telegrams to Governments of, 758–62, seeks representation in War Cabinet, 758–60
Australian troops, in Libyan campaign, 5, 56, in Egypt, 63, 592, in Cyrenaica, 64, 174, 179, 181–2, 184, 364, in Greece, 64, 69, 90, 92–4, 181, 195, 198, 201, 205, losses of, in Greece, 206, in Crete, 244, 247, 263, in Syrian campaign, 290–1, 295–6, in Tobruk, evacuation of, 367–372, in Middle East, 372, 655, 698–70, 702–3, 708, movement of, to Singapore 565, 592–3, in Cyprus, 687
Austria, 558
Auxiliary Services, conscription of women for, 455
Auxiliary Territorial Service (A T S), women of, serving with Artillery, 743, 745, 754
Azores, in U S Security Zone, 122, 388-9, British plans to occupy, 123, 125, Salazar plans retreat to, 388

Back, Captain G R B, 265
Baghdad, Axis propaganda in, 224, advance on, 230–4, 291, troops from, for Libya, 510
Baillie-Grohman, Rear-Admiral, 203
Baku oilfields, 31, German threat to, 466, 622
Balkans, German threat to, 5, 8–19, 23, 26–9, 59, 62, 66–8, 83, 317, effects of loss of, 90, 315–16, effect of Soviet-German Pact on, 139, Axis aims in, 147, 163, hope of common front in, 149-52,

315-16, 338, Russia seeks influence on, 163; effect of resistance in, on Russian campaign, 316, 320-1, German action in, 376, Stalin asks for Second Front in, 405, 407, 409
Baltic States, under Russian rule, 164, 615, Russia claims, 558-60, 615
Banat, promised to Hungary, 145
Bandar Shahpur and Bandar Shah, 733
"Barbarossa", Operation, 37, 144, 316, 634 *See also* Russian campaign
Bardia, harbour, 363, enemy cut off in, 500, 509, 511, 567, Rommel at, 504, 509, Italian defences of, 679, 683, mentioned, 5, 13, 184-5
Barham, H M S, 193, 770, for blocking Tripoli harbour, 213-14, 434, damaged in defence of Crete, 269, loss of, 512
Basra, British base at, 224, 404, troops arrive at, 225-9, 232, 234, 237, 428, 441, Wavell and Auchinleck at, 232, railway to Caspian from, 403, U S assembly point at, 670, 732, mentioned, 724, 761
Battle of the Atlantic Committee, 106-7, 128, 668, 738
"Battleaxe", Operation, 292-3, 298 *et seq*, 355-6, 634, value of, 357
Battle-cruisers, German, fuelling at sea by, 663; attacks on, 665, 672-3 *See also* *Gneisenau*, *Scharnhorst*
Battleships, German, 106, *King George V* class, 112-13, 524, 769-71, 774, 779-81, and sinking of *Bismarck*, 286, "R" class, 523-5, 769, 772-4, Japanese, 580, reduced Allied strength in, 580, 613, French, 589, fuelling of destroyers from, 665, 669, disposition of, 770-3, construction and design of, 779-84; American, 782-3
Bavaria, 558
Beach battalions, 704, divisions, 750
Beam bombing, radio, 41-2, 716-17
Beaufighter aircraft, 129, 219
Beaverbrook, Lord, Minister of Supply, 313, 786, at first conference between Churchill and Roosevelt, 383, 396-7, sent to Moscow, 397, 402-3, 412-19, 441, 465-6, 764 *n*, mission of, in U S, 398, minutes, etc., to, 403, 418, 431, 694, 726, 732, 741, 753, 774-5, at Washington, 541, 555-6, 589, 598, 610, on American supplies, 570-1, transatlantic flight of, 626, Minister of State, 785, mentioned, 331, 732, 784
Beda Fomm, 56
Beirut, 295
Belfast, air raids on, 39
Belgium, assists in Abyssinian campaign, 82, Communist propaganda in, 164, representative of, expelled from Russia, 326, possible landings on, 583, propaganda leaflets to, 651; acknowledgment of help of, 679
Belgrade, revolution in, 142-4, 148, 319, air bombardment of, 145, 155, 196, Dill's mission to, 152-4, Germans enter, 197
Belvoir, Vale of, air raid on, 41
Benghazi, capture of, 5-6, 9, 14, 17 18, 32, 56-8, 62, 173, 482, 700-2, garrison and air base at, 60, destruction of port of, 64, 177, German threat to, 175, 177-8; air attacks on, 179, 500; evacuation of, 180-181, German use of harbour of, 221-2, 299, 305, 362 3, 677, night bombardments of, 222, supplies arriving at 492, 507-8, Italian defences of, 683
Benina, 507
Berbera, 77
Berchtesgaden, Yugoslav visits to, 139-41
Beresford-Peirse, General, 185, 305-6
Berganzoli, General, 56
Bergen, *Bismarck* at, 271-2
Berlin, Matsuoka in, 161-7, bombing of, 748
Bermuda, U S bases in, 122, 626, surface raider south of, 125, Churchill at, 625-7
Bessarabia, 407, Russian claims to, 558, 615-16
Beveridge report on skilled men in Services, 749, 756
Bevin, Rt Hon Ernest, Minister of Labour and National Service, 454, 785; minutes to, 655, 723, 732, 734, 755
Birmingham, 644, 716
Birmingham, H M S, 271
Biscia, 5
Bismarck, enters Atlantic, 126, 270-3, attacks on and end of, 274-84, design of, 783-4, mentioned, 106, 113
Bizerta, 488-9, 575-6, possible German occupation of, 507, 512
Black Sea, danger of German mastery of, 440, 467, R A F to help defend 475, Russian command of, 575, 622
Blacker, Colonel, 676
Black-out, relaxation of, 728-9
Blamey, General Sir Thomas, 291 361
Blast, effects of, 719
Blenheim bombers for Middle East, 243, in Crete, 247, over Rotterdam, 729-30
Blind-landing equipment, 719
Blues, the, 713
Bock, General von, 337, 419, 470
Bofors for convoys, 108, in N Africa, 443, in amphibious operations, 691, for Home Forces, 722
Bombard, anti-tank, 676, 732, 775, Battery, 735

Bomber aircraft, use of, in battle, 443-4, slow expansion of, 450-1, 729, Japanese torpedo, 549-51, U S, in British Isles, 576-7; and battle-cruisers, 672-3, production of new, 718-19, criterion of strength of, 718, losses of, 729-30, 747-748, device for fixing position of, 753 *n*, from U S, 762-3
Bombs, high-explosive, damage done by, 719; Jefferis, 732, 775; sticky, 732, 775
Bordeaux, U-boats based on, 123
Borneo, invasion of, 566
Boulogne, 456
Bowhill, Air Chief Marshal Sir F W, 103
Boyd, Captain, 53
Bracken, Rt Hon Brendan, Minister of Information, 379, 785, minutes to, 731, 733, mentioned, 20, 43
Brauchitsch, General von, Hitler overrules, in plan of Russian campaign, 347-8, removed from office, 477
Brazil, possible U S bases in, 122
Brenner Pass, conference held at, 362
Brescia Infantry Division, 305
Brest, surface raiders at, 104-5 129, 270, 460, *Prinz Eugen* arrives in, 277, Churchill in flying-boat near, 629, bombing of battle-cruisers in, 672 673 *n*
Brett, General, 599, 607
Brewsters, 247, 643
Bridges, Sir Edward, minutes to, 128, 383, 426, 635, 637, 650-1, 670, 716, 720, 728, 733, 742, 750, mentioned, 102, 331, 672
"Brisk", Operation, 665
Bristol, air raid on, 39, 100
Bristol Channel, obstructions in, 100, air attacks on, 108, volume of trade in, 131
British Army, strength of, 4, 378, 445, 452-3, 463, 485, Scales, 112, 656, 705-707, in Greek campaign, 205-6, in Crete, 244, 247, in Middle East, objects of, 291, in Syria, 295, 50th Division sent to Cyprus, 356-7, 359, 369, 662, 746, Stalin asks for divisions of, 411, 420, 466, 471, 488, in Persia, 427-30, 432, in N Africa, 438, use for civil purposes, 447, 757, running in training of, 647, in Middle East, composition of, 698-700, proportion of "fighting troops" and non-effectives in, 698-9, 738, demands of, on man-power, 701-6, 723, 734, 744, line of communication troops in, 702, wastage in, 704, R A F and, 726, 728, prevention of decrease in strength of, 734, amusement of officers and troops in, 737, political discussions in, 739, 742, Beveridge report on skilled men in, 749, 756-7, training of infantry in, 757, Dragoons, Hussars, and Lancers in, 758 *See also* Armoured Divisions, Guards Brigade, Home Forces
British Columbia, Japanese colony in, 652-653
British Empire, U S view of problems of, 378
British Purchasing Commission, 762
British Red Cross and St. John's "Aid to Russia" Fund, 421-2
British Restaurants, 663
British Somaliland, recapture of, 77
Broadcasting station, new, 731
Brooke, Field-Marshal Sir Alan (Viscount Alanbrooke), on threat to Caspian, 351, demands of, for Home Defence, 446, 455, Chief of Imperial General Staff, 555-6, minutes to, 642, 715-16, 755, 758, 775, mentioned, 441, 694, 707
Brown, Admiral, 676
Brown, Rt Hon A E, 785-6
Building labour, use of, 727-8
Bukhovina, 615-16
Bulgaria, German advance through, 9, 13-14, 16-18, 29-32, 58, 66, 87, 197, Russian pressure on, 11, German influence on, 13, 23, 33, 163, regarded by Russia as security zone, 29, 163, joins Tripartite Pact, 141, asked for military support against Yugoslavia, 144-5, post-war, 558, mentioned, 315-16
Bullard, Sir R, 430
Burgin, Dr L, 650
Burma, Wavell in command in, 564-5, 593, in South-Western Pacific Command, 598-9, 607, visit of Premier of, 727
Burma Road, Japanese threat to, 526-7, 532, 554
Burton, Mr, 676
Butler, Rt. Hon. R A, President of Board of Education, 62, 785, minute to, 751

Cadogan, Rt Hon Sir Alexander, minutes to, 45, 653, 657, at conference between Churchill and Roosevelt, 380, 382, 384, mentioned, 62
Cairo, Eden in, 56, 59, 63, 90, 181, Smuts in, 85, Intendant-General, for, 311, 314, German planned advance on, 491
Calais, 456
Calcutta, H M S, 255, 265-6
California, U S S, 545
Campbell, Brigadier Jock, 500
Campbell, Rt Hon Sir Ronald, Ambassador at Belgrade, 86-7, Churchill's instructions to, 142, 197, captured by Italians, 198 *n*
Canada, help of, in defence of Atlantic,

120, 460; Atlantic bases in, 129, aluminium from, 410, Churchill speaks in Parliament of, 588, 598, 601–3, 608, Japanese in, 652–3, war effort of, 656, Menzies in, 680, 685, does not desire representation in War Cabinet, 759
Canadian troops, in Hong Kong, 157, 562–563, mentioned, 656
Canarias, 283
Canary Islands, plan for occupying, 123, 388–9, 634, 771
Canea, air attacks on, 253–5, collapse of front at, 262–3, mentioned, 241, 248
"Canvas", Operation, 75, 634
Cape of Good Hope, convoys sent round, 18–19, 223, 355, 483, 698, route of shipping to and from, 125, tank personnel sent round, 218, 354
Cape Verde Islands, British preparations to occupy, 123, 125, 665–6, U.S. and, 388–9, U-boat fuelling base, 664–5
Capetown, *Prince of Wales* at, 525, transfer of troops at, 666, R.A.F. training school at, 698
Capuzzo, 300 303, 306
Cardiff, air raids on, 38
Carlisle, H.M.S., 255–6
Casablanca, 483, 489, unfinished battleship at, 561, U.S. landing at suggestion of, 561, 576
Caspian Sea, German threat to, 351, 440, 622, railway across Persia to, 403–4 430–1, British aircraft for, 449
Castelorizzo, 659
Catalina flying-boats, 99, in search of *Bismarck*, 279, in Coastal Command 721
Catapult ships, 127–9, 461–2
Catroux, General, and Syria 232, 289 294
Caucasus, 251, German advance on, 347–8, 440, 466, 476, 622, Russia holds line of 351, British help in defence of, 466, 471, 475 484, 746, 767, German plans for advance through, 490
Cavallero, General, on situation in N Africa, 362–4
Cavalry Divisions, in Syrian campaign, 288, 292, 295–6, mechanisation of, 639–640, 652, 698–9, 708, 712, U.S. tanks for 712
Cavite, 546
Censorship, abuse of, 713
Centurion, H.M.S., 187
Ceylon, Fleet to be based on, 523
Chakmak, Marshal, 31, 85
Chaney, Major-General (U.S.A.), 377–8
Chatalja lines, 150
Chemical warfare, Inter-Service Committee on, 671, rocket for, 753 *n*
Chequers, awaiting news of *Bismarck* at, 272, 274, news of attack on Russia reaches, 329–31, Auchinleck at, 361
Cherbourg, Radar station near, 42
Cherwell, Baron (Prof Lindemann), minutes to, 661, 666, 687, 717, 734, 750, recommends atom-bomb research, 730, on import forecast, 733–4, mentioned, 35, 102–3, 380, 656 726
Chiang Kai-shek, Generalissimo, appeals for aid, 526–7, protests at U.S. proposals to Japan, 530–2, Churchill's wire to, 539, mentioned, 390, 404, 607
China, Japanese action in, 159, 519, 526, 536, American mediation in, 171, "incident", 389 90, and Atlantic Charter, 390–1, British sympathy with, 415, 519, U.S. demands Japanese withdrawal from, 522, 531, British aid sought by, 526–7, American help to, 526–7, 529, 531, opposed to U.S. offer to Japan 530–2, International Air Force in, 747
Churchill, Mrs., and "Aid to Russia" Fund, 421–2, mentioned, 22, 39, 303
Churchill, Randolph, 311
Churchill, Rt. Hon. Winston S., Eden's minute to, 13, correspondence with Roosevelt, 20, 22–4, 46, 78, 97, 111, 113–17, 121–5, 157–8, 185, 188, 260, 272, 286, 294, 313, 330, 380–1, 409, 416, 436–8, 478, 481–6, 492, 507, 526–7, 530, 533, 541–2, 680, 722, 739, promises aid to Turkey, 30–1, in Bristol after air raid, 39–40, discusses Hess episode with Stalin, 49, takes charge of Foreign Office, 62, proclaims Battle of Atlantic, 106–9, gives unified direction in Battle of Atlantic, 130, directorship of, 131, combines Shipping and Transport, 132, speeches of, in House, 133–4, 283–4, 543, 551–3, first speech as Leader of Conservatives, 148–9, his correspondence with Matsuoka, 167–8, 171, 679, his salute to Rommel, 177, directive by, on Mediterranean theatre, 186–8, appeals for U.S. participation in war, 208–9, broadcasts of, 209–10, 329, 331–3, 398, and Operation "Tiger" 218–23, awaits news of *Bismarck*, 272, 274, 277 282 and replacement of Wavell, 308–10, 313–14, and Intelligence reports, 319, warns Stalin, 320–3, receives news of attack on Russia, 329 31, on help for Russia, 331–3, correspondence of, with Stalin, 340, 342–6, 403–7, 411–12 414 418, 430–1, 468–73, visits Moscow, 351 Menzies objects to powers of, 365, his first meeting with Roosevelt, 377, 380, 384, voyage of, in *Prince of Wales*, 381–384, 399–400, and drafting of Atlantic Charter, 385–95, appoints committee

to consider Persia, 425–6, note of, on strategy, 441–4, memorandum of, on man-power, 454, Guildhall speech of, on Japan, 528, 538, telephones to President, 538, visits Roosevelt in Washington, 540–2, 551, 555, 587 *et seq*, 604 *et seq*, voyage of, in *Duke of York*, 555–7, 567–8, 572, papers of, on plan and sequence of war, 572 *et seq*, 619–23, plans Second Front, 581–6, his affection for Roosevelt, 588, 608, map room of, 588, Christmas speech of, at White House, 593–4, speaks to Congress, 594–7, speaks to Canadian Parliament, 589, 598, 601–3, goes to Palm Beach for rest, 612–13, 617–18, 619, his 'phone call to Willkie, 617–18, transatlantic flight of, 625–9, personal minutes and telegrams of, 635–694, 710–58, military directives and minutes of, 698–709, Lord Warden of Cinque Ports, 737, naval directives and minutes of, 779–84
Churchill, H M S, 400
Churchill tanks, 776–7
Ciano, Count, 72
City of Bedford, the, 637
City of Calcutta, the, 657
Civil Defence Services, 38, 744
Clan Fraser, the, 196
Clan Lamont, the, 223
Clothing coupons, 312
Clough, Arthur Hugh, quoted, 210
Clyde, river, 667, air-raids on, 38, 100 108, 131, volume of trade in, 131
Coastal Command, 103, 107, cuts in expansion programme of, 451, attacks U-boats, 460–1, *Gneisenau* torpedoed by, 673 *n*, Flying Fortresses in, 721
Code names, operational, 634, careless use of, 635–6
Coldstream Guards, 303–4
"Colorado", Operation, 249–50, 300, 634
Colville, Mr (private secretary to W S C), 331
Combined Chiefs of Staff Committee, 608–9, 624
Combined Operations, Director of, in Middle East, 720–1, 725
Commandos, and Operation "Workshop", 51–2, and Operation "Mandibles", 60, in Egypt, 238, 700, in Crete, 262–3, 268, in Syria, 296, attack Rommel's headquarters, 499, raid Lofotens, 643 *n*, occupy Castelorizzo, 659 *n*, sent to Middle East, 700–1, in England, 700, frittered away by Middle East Command, 720–1, reconstitution of, 725–6, mentioned, 187, 480
Commons, House of, destruction of, 42, 277–8
Communism, Japanese ideal of moral, 166, Churchill the opponent of, 331
Communist Party, Yugoslav, 154, British, 339, 420, subversive propaganda of, 640
Conant, Dr J. B, 39
Congo, troops from, 82
Congress, against participation in war, 528, 535, Churchill speaks to, 588, 594–7
Congress Party, Indian, 614–15
Congressional Inquiry, on U S-Japanese war, 535
Coningham, Air Vice-Marshal Sir Arthur, 497
Conscription, raising age for men, 454, for women, 455
Constantinople, 12, 30, 642
Convoy(s), sent round Cape, 18–19, 218, 223, 355, 483, 698, air attacks on, 99, 107, 127, 130, 725, attacked by surface raiders, 104–5, 124, U-boat attacks on, 105, 109, 119–21, organisation of escorts for, 105, 121, 123–4, 127, 129, 458, Canada provides escort for, 120, U S notified of movements of, 122, 124, U S, to Iceland, 129, of tank-carrying ships through Mediterranean, 218–23, threatened by *Bismarck*, 271–2, 277, Arctic, 351, 417–19, 422, Malta, 432–3, U S transports for, 435–9, 441, 733, U S escorts for, 459, loss of Italian, 492, collision in, 637, of munitions, reception of, 648–9, 654, 657, "R" class ships to escort, 770, 772–3
Cooper, Rt Hon Alfred Duff, Minister of Information, minutes, telegrams, etc, to, 128, 544, 651, 658, 660, 686, Minister of State in Far East, 379, 543, 600, and defence of Singapore, 565, mentioned, 785
Cooper, Rt Hon T M, 785
Copper supplies and Germany, 646
Corinth Canal, Germans cross, 204
Cornwallis, Sir Kinahan, 225–6
Corvettes, Canadian, 120, refuelling of, 664
Cossack, H M S, 279, 461
Coventry, air raids on, 39, 644, 716
Coventry, H M S, 265
Cracow, German troops moved to, 319
Cranborne, Viscount (5th Marquis of Salisbury), Dominions Secretary, 331, 740, 784, minutes to, 641, 645, 667
Craven, Sir Charles, minute to, 717, mentioned, 450
Crawford, General, 674, 676
Creagh, General, in Operation "Battleaxe", 305–7, mentioned, 56, 180, 220
Crete, 59, airfields in, 9, 239, 247, garrisoning of, 199–200, 239, 244, importance of holding, 200–1, 209, 238, 240, 245, 248,

291, troops evacuated to, 205, 240–1, 244, 247, tanks for, 223, 247, 249–50, 260, 308, reinforcements for, 232, 243, 247, 249, 260; defences of, 238, 241, 244–245, 247, 250, 308, vulnerability of, 239, 243–4, 246, German preparations for attack on, 240–1, 243, airborne attack on, 240–1, 245–6, 248, 252–5, 259, 261; seaborne attack on, 240, 243, 245–6, 248, 255–7, 259–61; daylight blockade of, 247, plan of attack on, 248, hopeless position of Army in, 261–3, evacuation of troops from, 263–6, 268, 684, troops left on, 266; reprisals on peasants of, 266, casualties of battle for, 268, German report on British defence of, 269, effect of German capture of, 292, 432; criticisms about, 293; enemy air bases on, 432, maps for troops on, 679

Crimea, German aims in, 347, mentioned, 476, 575, 622

Cripps, Rt Hon. Sir Stafford, Ambassador to Moscow, 163–4, 169, 419, minutes, etc, to, 320, 341, 409–10, 413, 420, 470, minutes, etc, from, 321–2, and Churchill's warning to Stalin, 321–3, returns to England, 326, 331, mentioned, 331

Croatia, 197

Croats, antagonism between Serbs and, 138–40, Hitler assumes support of, 144

Cross, Rt Hon Sir Ronald, Minister of Shipping, 786, minutes to, 101, 649

Cruiser tanks, in Cyrenaica, 191–2, 217–219, 304, 674, in Greece, 192, training men for, 671, 675, U S, 674, output of, 674, in Britain, unfit for service, 729, 774–5, mentioned, 16 *n*

Cruisers, and sinking of *Bismarck*, 286, construction of new, 747, 779–80

"Crusader", Operation, 361, 371, 439, 634, 746, actions to follow up a victorious, 479–80, 486–90, 574–8, course of, 494 *et seq*, 553, 567, losses of men in, 511, French reactions to victorious, 561, 752, increased German air strength in, 567, indecisive result of, 621, 625

Cunningham, General Sir Alan, Somaliland campaign, of, 73–7, chosen to command in Western Desert, 361, in Operation "Crusader", 496–7, 500–1, 504–5, relieved of command, 506

Cunningham of Hyndhope, Admiral of the Fleet Viscount, on transport of troops to Greece, 84–5, and prevention of enemy reinforcements to Africa, 186–188, 508, at Battle of Cape Matapan, 193–4, assists re-embarkation of troops, 203, averse to bombardment of Tripoli or blocking harbour, 211–13, minutes, etc, from, 211–14, 259–60, 508, minutes, etc, to, 212, 215, 242, 250, 259, 508, and Operation "Tiger", 222, air reinforcements for, 242–3, 261, and Crete, 255, 257–8, 265–6, 432, and advance into Syria, 291, and relief of Australians, 372, Commandos under, 721, 726, mentioned, 53, 61, 182, 250, 489, 614, 751

Curtin, Rt Hon John, Prime Minister of Australia, 367, telegrams, cables, etc, to, 370, 372, 592

"Curzon Line", 558

Cutters, U S, 669

Cvetkovic, M, 139–40, 142–3; Churchill's appeal to, 141

Cyprus, importance of holding, 354, reinforcement of, with British division, 356–357, 359, 369, 427, and Syrian airfields, 684–5, 687, defence of, 686, 688, Indian Division in, 746, mentioned, 199, 260, 291

Cyrenaica, campaign in, 5, 9, 56, régime in, 60, garrison for, 64, Italian acquisition of, 71, British weakness in, 173–4, 177–9, 217–18, Wavell on enemy threat to, 174–5, 178–9, 182, Wavell and Dill visit front in, 178, German strength in, 190, 217, 305, 762, object of Army in, 291, 762, priority given to operation in, 292, 300, 684–5, air superiority in, 292–3, 355, 358, reoccupation of, 354, 358–9, 496, 762, British need for airfields in, 354, enemy air bases in, 432, blockade of ports of, 677 *See also* "Crusader" Operation, North Africa, Libya

Czech troops, in Russia, 767

Czechoslovakia, post-war frontiers of, 558

Dakar, unfinished battleship at, 561, plan to capture, 577, mentioned, 209, 251, 479

D'Albiac, Air Marshal Sir J H, 197

Dalton, Rt Hon Hugh, Minister for Economic Warfare, 784, minutes to, 638, 646, 651

Damascus, 295–6

Dardanelles, Russia seeks bases on, 163

Darlan, Admiral, and the *Dunkerque*, 114–116, grants Germans concessions in Syria, 288–9, on crest of wave, 561, and Toulon fleet, 577, to replace Pétain, 653, mentioned, 251, 657

Dawson, Air Marshal W L, 709

De Valera, Eamon, 539, 645

Debra Markos, 80

Debra Tabor, 82

Decoy, H M S, 264

Decoy fires, 38–9

Defence, H M S, 747 *n*

Degaussing, 108
Dekanosov, M, 324, 327–8
Delayed-action fuzes, 731
Denmark, possible landings on, 583
Denmark Strait, *Bismarck* in, 271–3
Dentz, General, 288–9, 295–6, 714
Derby, 41
Derna, harbour of, 363, German withdrawal through, 567, mentioned, 184, 305
Dessie, 80
Destroyers, operating from Malta, 55, as escort for convoys, 107, 664–5, sent from U S., 123, 692, and sinking of *Bismarck*, 286, fuelling at sea by, 664–5, 669, construction of, 747, 779, for Mediterranean, 752
Diamond, H M S, 205
Dido, H M S, 255, 264
Dill, Field-Marshal Sir John, C I G S, 182, 302, 441, 510, on mission to Middle East, 56, 59–68, 85, 87, 91–2, 96–7, 149, telegrams from Wavell to, 73–4; on Mission to Belgrade, 152, 153, Churchill's message to, 152, on difficulty of defending Desert Flank, 178, returns home, 182, opposes sending additional tanks to Cyrenaica, 219, brings news of invasion of Russia, 330, paper of, on dangers of invasion, 373–6, Churchill's answer to, 375–6, on Middle and Far East, 378–9, at first conference of Churchill and Roosevelt, 380, minutes, etc, to, 436, 455, 639, 647, 671, 673–5, 677, 679, 692–3, 698, 711, 713, 726, 731–2, 736, 738, 741, 746, 750, accompanies Churchill to U S, 541, 555–6, 571, 573, 609–10, remains in Washington, 626
Dillon, Mr, 641
Direction-finding equipment (D F) of Focke-Wulfs, 665
Diredawa, 77
Disarmament and Atlantic Charter, 386, 391
Ditchley, 217
Dive-bombers attacks on ships by, 52, 219, 258, protection against, 187, 216, 637; Japanese, 545–6; in Desert battle, 567, British neglect of, 672, 728
Divisions, Army, 653, Field, 452, 750, time taken to transport, 647–8, 651–2, 668, number of men required in, 701, 705
Dnieper, German advance on Lower, 338, Germans cross, 347
Dobbie, General Sir William, Governor of Malta, 54, minute to, 687
Dodecanese, German air bases in, 287, attacks on, 641, 687
Doenitz, Admiral, "wolf-pack" tactics of, 110, and American aid to Britain, 126, moves U-boats to Mediterranean, 492
Dominions, and agreement with Russia, 341–2, and War Cabinet, 365, 758–60, and Atlantic Charter, 387, 397, and invasion menace, 667; paper on general strategy for, 733
Don, river, 348, 476, 622
Donetz Basin, German aims in, 347
Donovan, Colonel, 24, 97, 140
Dorsetshire, H.M S, 463, torpedoes *Bismarck*, 283
Douglas, Lewis, 132
Dover, Churchill visits, 22, 644, delay in completion of batteries, 644–5, 651
Dowding, Air Chief Marshal Lord, 689
Duke of York, H M S, Churchill's voyage in, 555–7, 567, waits at Bermuda, 625–627, for Indian Ocean, 768, mentioned, 525
Duncan, Rt Hon Sir Andrew, Minister of Supply, 694, 786, minutes to, 103, 644, 650, 655, 668, 670, 733, 744, President of Board of Trade, 786
Dunkerque, the, 113–17
Dunkirk, 456–7
Durham Light Infantry, 300
Dutch East Indies, Japanese threat to, 158–161, 380, 522–3, 532, 592, Japan desires products of, 530, Japan attacks British vessels in, 537, in unified South-Western Pacific Command, 599

Eagle, H M S, 746 *n*, 747, 769, 771
East African campaign, 72–82, 85, 303, native troops in, 654
East African Division, 706
East Coast, munitions ships deflected to, 649, 654, 657
East Indies, Japanese occupation of, 158
See also Dutch East Indies
Economic Warfare, Ministry of, on German air strength, 35, 37
Ed Duda, 509
Eden, Rt Hon Anthony, Foreign Secretary, minutes, telegrams, etc, from, 13, 63–8, 85, 87, 181–2, 320–2, 470, 558, 560, 679, minutes, telegrams, etc, to, 45, 63, 65, 68, 86, 90–2, 94–5, 140, 149, 181, 202, 225, 319, 322, 388–9, 465, 473, 529, 534, 553–4, 557, 560, 615, 638–9, 642, 692, 714, 735–6, 752, on mission to Middle East, 57, 59–69, 85 *et seq*, 713, Yugoslavia declines visit from, 140, 153, returns to Athens, 149, 152, returns home, 182, warns Soviet Ambassador, 328, at Chequers, 331, on Soviet-Polish Agreement, 349–50, on help to Russia,

407, and campaign in Persia, 424, 426; goes on mission to Moscow, 471–3, 475, 540, 553, 557, 615, general directive for, 475, mentioned, 19, 403–4, 421, 785
Egg rationing scheme, 710–11, 753, 757–8
Egypt, defence of, 5, 8–9, 32, 58, 62, 185, 209, 354, 684, army of manœuvre in, 33, 60, 69, 83, 701, enemy spies in, 95, effect of German victories on, 185, 288, reinforcement of, 190, 217–18, effects of loss of, 208, 375, threat to, 216, 291, reinforcements from, for Iraq, 228, 230, aircraft from Crete evacuated to, 248, 50th British Division in, 356–7, 705, enemy discusses attack on, 362, 364, 491; relative importance of Singapore and, 375–6, 379, danger to, from loss of battle fleet, 613, slow repair of tanks in, 673–4, plans for evacuation of, 677; workshops in, 708, a reason for holding, 733
Eighth Army, composition of, 496 *n*, in Operation "Crusader", 496 *et seq.*, 567
Eire, Britain denied use of ports in, 99, 118–19, 641, and U S troops in N Ireland, 483, neutrality of, 641, 645, Radar stations needed on, 664
Eisenhower, General Dwight D, 53
El Abd track, 500, 502
El Adem, 509, 511 670
El Gubi, 501, 504
Electra, H.M S, 548
Elizabeth, Queen, gift of, to Red Cross, 422
Embick, General, 417, 457–8
Empire Song, the, 222
Eritrea, campaign in, 5, 15, 60, 63–4, 69, 79–80, mentioned, 70, 708
Erne, Lough, 279
Escort Groups, 129; vessels, convoy, 746 *n*, 747
Esmonde, Lieutenant-Commander, 277
Essex Yeomanry, 713
Estonia—*see* Baltic States
Euriades, the, 657
Expeditionary Force, organisation of, 732, 734, 766
"Exporter", Operation, 291, 634
Express, H M S, 548–9

Factories, curtailment of building of, 450, munitions, directing women into, 455, munitions, shortage of labour for, 655, defence of, by aerial mines, 659; aircraft, 718, construction of new, 727
Fadden, Rt Hon A W, telegrams, etc, to, 151, 366, 368, 758–62, mentioned, 366–70
Falluja, 230, 233
Far East, Japanese activity in, 156–61, 172, cramping of British defences in, 352, Minister of State for, 379, 544; British battle squadron for, 485, 523–5, 768–74, reinforcements for, 564–6 *See also* Indian Ocean, Malaya, Pacific, etc
"Felix", Plan, 491, 634
Felmy, General, 234
Ferfer, 76
Field Divisions, 452, 750, Army, 705, 765–6
Fighter aircraft, increased strength in, 449, fast, for aircraft-carriers, 643, 725; lengthening range of, 687; night and day squadrons, 753. *See also* Aircraft, Hurricane fighters, *etc*
Fiji, H M S, 222, 257–8
Finland, Russo-German differences in, 12, 163, British warnings to, 407–8, 467, 474, Britain asked to break off relations with, 465, 467–73, Britain declares war on, 474, U S relations with, 467–8, Soviet post-war plans for, 558–9, 615–16
Finnish troops in Russia, 338, 405, 467
Finucane, Wing-Commander Paddy, 740
Fiume, the, 194
Fleet Air Arm, in Mediterranean, 187, 295, based on Crete, 206, 247, helps in evacuation of Crete, 265
Flying Fortresses, 721
Flying-boats, Boeing, Churchill crosses Atlantic on, 625–9, for Freetown area, 666
Focke-Wulf 200, over Atlantic, 99, 107, challenged in air 127–8, 461–2, in North-Western Approaches, 664–5
Food imports, 112–13, 714, 717, 750, rationing, 689, 710–11, 723, 753–5, restrictions, 755
Food, Ministry of, 112–13
Food Policy Committee, 649
Force H, raids Genoa, 54, escorts tank-carrying convoy, 222, in pursuit of *Bismarck*, 271–2, escorts Malta convoys, 432, reinforcement for, 769, capital ship for, 770–1
Force K, 435, successes of, 492, 508, loss of, 512–13, Churchill congratulates, 751
Forestry Commission, minute to chairman of, 754
Formidable, H M S, 52, 769–70, at Cape Matapan, 193–4; in defence of Crete, 259, 261, 269, damage to, 770
Forrestal, Mr, 125
France, British blockade of occupied, 8, 576, 650, 653, 657, American supplies for, 117, Russia demands Second Front in, 339, 343–4, 406–7, fortified coast of, 339, 344, 409, Allied conditional promise to, 575, possibility of Germans

taking over all, 576, 578, possible landings on, 583, 690, liberation of, 585–6, propaganda leaflets to, 651, aerodromes in Northern, 661, bombing of factories in, 690, and Syria, 715, escape of German Legionnaires to, 736; R A F fighters over, 735, 747 *See also* Vichy Government
Franco, General, refuses passage to German troops, 11
Fraser, Admiral, 282
Fraser, Rt Hon Peter, Prime Minister of New Zealand, telegrams, etc, to, 245, 525, at meeting of War Cabinet, 341, 392, and Imperial War Cabinet, 365
Free French, and French Somaliland, 77–8, 646, and Syria, 227, 232, 288, 290–1 294–5, 714–15, Anglo-U S relation with, 577–8, and liberation of St Pierre and Miquelon, 590–1, mentioned, 651, 653
Freeman, Air Chief Marshal Sir W R, 380
Freetown, troops from Kenya wanted for, 74–5, 654, 686, attacks on convoys from, 105, 121, 124, catapult ships for convoys from, 129, possibility of French attack on, 295, escort for convoys from, 665
French Fleet, fear of Germans getting possession of, 113–17, 576–7
French Somaliland, 77–8
French troops, in Syria, 287, in N Africa 576
Freyberg, General Sir Bernard C, in command of Crete, 241–2, 245, 262, minutes from, 243–4, 246, 250, 254, Churchill's messages to, 250, 260, 262, on hopeless position in Crete, 261, evacuated from Greece, 266, in Operation "Crusader", 500, 509, mentioned, 242
Frigates built in U S, 746 *n*
Fuelling at sea, 663–5, 669
Fulmar aircraft, for Middle East, 243, 643, in Crete, 247, help in evacuation of Crete, 265
Furious, H M S, 649, 665, 770, carries aircraft to Takoradi, 9, 216, 243, 769, in action at Petsamo, 461, carries reinforcements to Malta, 701
Fuzes, delayed-action, 731, proximity, 742

Gallabat, 72
Galatea, H.M S, 513
Gallant, H M.S, 53
Gas warfare, retaliatory, 378, 736, protection against, 642, preparation for, 671–2, 720, danger of, 726
Gaulle, General de, and blockade of Jibouti, 77–8; and invasion of Syria, 288, 291, 714–15, telegrams, minutes, etc, to, 294, 690, promises independence to Syria and Lebanon, 294, British relations with, 561, 578, 651, 653, 657, U S relations with, 577–8, 590, and occupation of St Pierre and Miquelon, 590–1
Gavrilovic, M, 154–5
Gazala, retreat of enemy to line of, 509, 567, mentioned, 625
"Gee", 753
Genoa, naval raid on, 54–5
Genro, 518–19
George VI, King, Churchill's correspondence with, 384, 398, 540–1, gift of, to Red Cross, 422, sends message to Auchinleck, 493
Georges, General, 507
German Air Corps, 240, 252–3, 297, "battle report" of, 269
German Air Force in Mediterranean, 13, 18, 50–2, 94, 163, 621, in Bulgaria, 23, 30, strength of, 34–7, 161, 165–6, 486, 687, 694–6, 730, concentrates on British harbours and approaches, 37, Radar of, 42, deployed towards Russia, 130, destruction of Belgrade by, 145, in North Africa, 175, 180, 184, 363, 497, 513, in Greek campaign, 195–6, 202–3, in Iraq, 230–1, 233, in attack on Crete, 248, 253–5, 256–9, 268–9, allowed to land in Syria, 288, 291, in Russian campaign, 317, 621, and invasion of Britain, 374–5, moved from Sicily, 433, 479, comes to Rommel's assistance, 513, 567, importance of wearing down by continuous fighting, 621, losses in, 695, radio beam receivers of, 716, production of new aircraft in, 694–5, 717
German Army, moves to Balkans, 11–12, moves into Bulgaria, 87, strength of, 161, 409, triumphs of, 165, in Tripolitania, 174–6, attacks Agheila, 178–80; North African successes of, 180–5, 191, held up at Tobruk, 186, 190, reinforcements to, in N Africa, 186, 190, 216–17, 221, 362–3; in Greece, 195–6, in Yugoslavia, 195–7, speed of, in N Africa, 222, difficulties of, in N Africa, 299, 302, 362–4, on Eastern front, 316–19, 323, 347–8, Southern Group of, 323, 338, 347, conduct of, towards Russians, 329, Northern Group of, 337, 347, Central Group of, 337, 347, 402, 419, faces Russian winter, 401–2, 476–7, 553, 574, 622, reinforcement of, 405, 511
German atrocities, films of, 731
German Navy, strength of, 162, told to attack U S ships, 547 *See also* Battle-cruisers, U-boats

German Parachute Division, 240, 248, 252, 268
Germans, recruitment of friendly, 637; hopes of splitting from "Nazis", 767-8
Germany, and invasion of Great Britain, 4, 10, 23, 445-6, 455-8, and Spain, 7, 11, 124-5, 766, plans invasion of Balkans, 8-19, 23, 27-9, 66-8, 83, 86, 140; plans invasion of Russia, 37, 42-3, 84, 130, 170, 251, 315-20, 323-7, air defences of, 42-43, Hess on terms of, to Britain, 46, return of colonies to, 46, 49, Britain aims at air offensive over, 133; difficulties of, 134; certain defeat of, 141, seeks Japan's entry into war, 156-7, 160, Ribbentrop on might of, 161-3, differences between Russia and, 163-4, 169, Communist propaganda in, 164, Hitler on triumphs of, 165-6, invades Russia, 172, 323, 328-30, 337-8, Iraq breaks off relations with, 224, Russian supplies to, 317, 324, 338, Russian commissions sent from, 323, Russian appeasements of, 326-7, declares war on Russia, 327-8, air offensive on, 340, 346, 404, 408, 451-2, 577, 580-2, 584, 673, 718-19, 721-2, 767, aims of, in Persia, 423, impairing morale in, 451-2, 577, 582, Allied war aims concerning, 472-3, plans Middle East and N African offensive, 490-1, 760-2, and Japan's attack on America, 518-19, 546-7; at war with U S A, 541, 546-7, 553, 575, Russian ideas as to post-war treatment of, 558, 560; restitution in kind by, 558, priority given to operations against, 624, keeping copper supplies from, 646; daylight raids on, 687, American bombers over, 721; night bombing of, 747-8, British measures for defeat of, 767
Ghormley, Admiral, "exploratory conversations" of, in Britain, 119, 122-3, 125, 377, on weakness of supply-line to Middle East, 378
Gibraltar, possibility of German attack on, 7, 11, 125, 491, 578, possibility of Vichy attack on, 251, 295, U-boats sunk in Straits of, 462, closure of Straits of, 488, value of, to Britain, 578, mentioned, 62
Giffard, General, 686
Gladiator fighters, 226, 247
Glasgow, Churchill visits, 22
Glen ships, 187-8, 700, 720-1, 725
Glennie, Rear-Admiral Sir I G, 255
Glengyle, assault ship, 265
Gliders, troop-landing, in Crete, 248, 253, British, 677, 683
Gloucester, H M S, 53, 222; at bombardment of Tripoli, 214, in defence of Crete, 257-8
Gneisenau, the, attacks shipping, 104-5, 124; in Brest, 129-30, 270, 672; damage to, by torpedo, 673 *n*
Godwin-Austen, General Sir A R, in Operation "Crusader", 496 *n*, 511, mentioned, 185
Goering, Hermann, 144, airborne force of, 240, 252-3, 268-9, lost opportunity of, 268-9
Gojjam, 73, 80
Gold, in Martinique, 682; in Great Britain 728
Gondar, 80, 82
Graziani, Marshal, 71
Great Britain, danger of invasion of, 4, 10, 23, 58, 355, 358-9, 373-5, 445-9, 455-7, 766, promises France assistance in Africa, 8, air and submarine menace to, 10, 37, 98-100, 104, 165-6, air-attacks on, 37-43; air defences of, 40-2, 374-5, 447-8, Hitler's admiration for, 44, 48, Hess on German terms to, 46, blockade of, 46, 98 *et seq*, U S supplies for, 57, 111, 251, 314, 355, 397, 552-3, 569, fall in imports to, 100, 103, 107, protection of ocean routes to, 100, 107-8, secret Staff discussions with U S, 119, American escort and Air Force bases in, 119, hopes for air ascendancy, 133, 414, warns Hungary she will declare war, 148, danger of Japanese attack on, 156-61, 165, 522-3, Ribbentrop on defeat of, 164, effect of German invasion of Russia on, 325, and help for Russia, 331-3, 338-9, 343-6, 351, 402 *et seq*, 569, 764-8, and Poland, 349-50, Russia at first a liability to, 351-352, defences of, 374-5, 378, 445-9, 765-766, freezes Japanese assets, 380, 521, Free Trade in, 387, warns Japan, 399, 415, primary duties of, 414, Army strength in, 452-3, plan for (1941-2), 479-80, removal of divisions from, 482-483, undertakes to declare war on Japan, 485, 528, 534, 538, influence of resistance of, on Japan, 520, declares war on Japan, 538, 542-3, European bases for, 558, growing strength of, 569, demands on man-power of, 765-6
Greece, British aid to, 8-9, 16-17, 27-8, 33, 58-61, 63-9, 83 *et seq*, airfields in, 9, 195, 649, German threat to, 13, 16-19, 26-7, 87-91, 144-5, 162, 319, unwilling for British troops to land in, 17, 58, commander of British troops in, 61, 65-6, forces available for, 64-5, 194-5, determined to fight on, 66-7, 91-3, worsening situation in, 87-90, and Yugoslavia, 140; Italian attack on, 147, German invasion of, 195-6, 198, British evacuation of, 199-206, 410, surrender

of, 203; assembling of invasion force in, 240–1, German air bases in, 291, Ambassador of, banished from Russia, 326, transport of troops to, 409, post-war, 558, disagreement between Turkey and, 641, air squadrons for, 649
Greece, King of (George II), and evacuation of Greece, 199–200, 202–3, in Crete, 239, escapes from Crete, 266, telegram to, 710, mentioned, 66–7, 88, 91
Greek Army, exploits of, 8, 207; in Albania, 9, 12, 17, 24, 198, 202, 207, in Macedonia, 87–8, strength of, 195, disintegration of, 199, in Crete, 200, 241, 244, 247
Greek expedition, 194 *et seq*, setback to, 181, strength of troops, 194–5, evacuation of British troops, 199–206
Greek Navy, joins British, 206
Greenland, 120, U S bases in, 121–2, aerial reconnaissance from, 124, U-boat battle off, 459–60
Greenwood, Rt Hon Arthur, 785
Greer, U S S, 458
Greyhound, H M S, 257
Grigg, Rt Hon Sir James, 757
Grummans, aircraft, for Mediterranean, 52, 643, 724–5, with folding wings, 724
Guards Brigade, in North Africa, 300, 305–6, 496 *n*, 502, 567, in Home Forces 705
Guderian, General, 419, 476
"Gymnast", Operation, 489–90, 561, 576, 634

Habbaniya, 224, 226–32, 236
"Habforce", 232–3, 291, in Syria, 296
Haining, General Sir Robert, 713, Intendant-General, Middle East, 311, 314 709
Haile Selassie, Emperor, re-enters Abyssinia, 5, 19, 73, re-enters Addis Ababa, 80, Churchill congratulates, 81
Halder, General, 329
Halfaya, 302, 497, Germans in, 303–6, enemy garrison cut off in, 509, 511, 567
Halifax, Earl of, arrival in U S A, 22–3, in discussions at White House, 589, telegrams, etc, to, 677; mentioned, 530, 532
Halifax convoys, attacks on, 105, 119–20, 459–60, U S escort for, 459
Hamilton, Duke of, 43, 45, 47
Hampton, Captain T C, 257
Hankey, Lord, 785
Harrar, 76–7, 179
Harriman, Averell, at Chequers, 272, 273, 277, 537, in Cairo, 314, 378, 709, sent to Moscow, 397, 402–3, 410, 412–19, 441, 764, and Pearl Harbour, 537, 539; mentioned, 124, 378
Hart, Admiral, 546, 548
Harvey, General, 427
Hata, General, 519
Haushofer, Albrecht, 45
Haushofer, Karl, 45, 47
Hebrides, new airfields in, 99
Hecla, H M S, 400
Heraklion, defence of, 247, 250, 254–5, 262–3; rescue of garrison from, 264–5, mentioned, 241, 248, 261
Hereward, H M S, 264
Hermes, H M S, 523, 770
Hero, H M S, 372
Hess, Rudolf, 43–9
Hillgarth, Captain, 7
Hipper, the, 104–5, 270
Hiranuma, Baron, 518–19
Hitler, Adolf, seeks passage through Spain, 7, letter of, to Mussolini, 10–13, realises failure of Battle of Britain, 37, plans invasion of Russia, 37, 164, 251, 315–320, 323–4, and Hess, 44–9, speech of, on U-boat menace, 103–4, fearful of war with America, 126, 160, 167, Yugoslav leaders visit, 139–42, determines to destroy Yugoslavia, 144–6, receives Matsuoka, 165–6, instructions of, on Iraq, 234, on conduct of troops towards Russians, 329, Britain determined to withstand, 332–3, overrules Army chiefs, 347–8, 476, takes command of armies, 477, ultimate aim of, 488, Japanese message to, on war with U S, 533, reinforces Rommel, 585, and Baltic States, 615, need for speedy victory of, 620
Holland, Communist propaganda in, 164, freezes Japanese assets, 380, 521, and Atlantic Charter, 390, 399, and U S proposal to Japan, 530, Britain promises support to, against Japan, 534, declares war on Japan, 543, possible landings on, 583
Holland, Vice-Admiral Lancelot, 274
Hollis, Colonel Sir Leslie, 380, minutes to, 16, 438–9, 448, 722, 735, 737–8, accompanies Churchill to Washington, 571, 573, 626
Home Defence, 374–5, 378, weakness in tanks, 219, 374–5, prepared for airborne attack, 268, claims of, 446–7, battalions, 452–3
Home Field Army, 453
Home Forces, protection of G.H Q of, 651, strength of, 672, 705–6, anti-aircraft for, 722–3, plans for action of, 732–3

Home Guard, 4, 456–7, 667, court-martial case, 741
Hong Kong, reinforcements for, 157, Japan attacks, 543, resistance of, 562–3
Hood, H M S , 271–2, 665, loss of, 273, 274
Hopkins, Harry L , 20–2, 24, 403, 587–8, 661, 709, 732, cables, etc , to, 111, 416, 481, 617, second mission of, 377–8, 380; in Moscow, 381, 394, realises risk of neutrality, 535, telegram to, 539, in discussions at White House, 589, 597, and visit to Eire, 641, on use of Flying Fortresses, 721
Horse-racing, 669
Horthy, Admiral, 147
Hotspur, H M S , 264
Hudson, Rt Hon Robert, Minister of Agriculture and Fisheries, 784, minutes to, 648, 685, 688, 727
Hudson aircraft captures submarine, 460–1
Hull, air raids on, 39
Hull, Cordell, on crisis with Japan, 530–3, realises risk of neutrality, 535, in discussions at White House, 589, and Free French, 590–1
Humber, the, 131
Hungary, co-operates with Germany, 11–12, 27, 146–7, 467, Transylvania awarded to, 139, 147; Yugoslav pact of amity with, 139, 147, gives military support against Yugoslavia, 144–5, 147, 197, British declaration of war on, 465, 467–8, 472–5, Soviet post-war plans for, 558
Hurricane fighters, for Middle East, 9, 243, for Malta, 54, 701, flying off merchantmen, 121, 129, in Greece, 221, in Tobruk, 221, in Crete, 244, 247, for "Battleaxe", 299, at Murmansk, 345, 403, for Russia, 403–4, in Cyprus, 688, for *Indomitable*, 737–8
Hvals Fiord, 399–400
Hyderabad, destroyer given by, 266

Iceland, 669, British bases in, 120–1, 123, 129, in U S Security Zone, 122, 399, 459; U S base in, 129, 721, *Bismarck* near, 271–2, Churchill in, 398–400, U S troops to replace British in, 621, training ground for Alpine troops, 726, films of, 731
Iceland Force, 653–4, 705
Ilic, M , Yugoslav War Minister, 153
Illustrious, H M S , 52, 769, bomb damage to, 53–4, 770
Imperial, H M S , 264
Imperial Conference, 680, 758
Imperial War Cabinet, 365, 760
Import Executive, 101–3, 109, minutes to, 101, 104, 650, 668, 724, programmes of, 111–13, 733, 744, 750
Imports, fall in, 100, 103, budget for (1941), 111–13, of food, 112–13, 714, 717, 750
Indefatigable, H M S , 780
India, 62, troops from, for Iraq, 225, 230, 232, 234, Auchinleck in, 309, Wavell appointed C-in-C , 309–10, 313, defence of, 424, reinforcements for, 439, 564–5, 592, 698, 734, and Washington Declaration, 590, a great base for war supplies, 599, question of new constitution for, 614–15, transport of prisoners to, 655, old guns in, 657, floating dock for, 746, release of Satyagrahi prisoners in, 748
Indian Air Force, 449
Indian Ocean, dangers from Japanese Navy in, 158, *Prince of Wales* in, 469, battle squadron for, 485, 523–5, Japanese mastery of, 551, disasters to come in 603, Fleet dispositions in, 768–74
Indian troops, 453, in East Africa, 6, 72, 79–80, 179, in North Africa, 64, 181, 184, 305, 496 *n* , 500, 502, 511, 567, 667, in Iraq, 225, 230, 232, 234, 237, 438, 453, in Syria, 295–6, British with, 356, 453, in Persia, 420, 427, 453, reinforcements to, 438, formation of new, 453, in Malaya, 564, 566, 592, in Middle East, 700, 703, 708, to keep order in Egypt, 702, in Cyprus, 746
Indo-China, Japanese menace to, 156–7, 172, 520, occupation of, 379–80, 389–390, 522, 529–31, 536, Japanese air-bases in, 520, 548
Indomitable, H M S , 524, 725, 737, 769–70, 772, 780
Infantry tanks, in training troops, 671, 675, "unfit for action", 774–5, weapons to defeat, 775 *See also* Tanks, mentioned, 16 *n* , 304, 674
"Influx", Operation, 8, 90, 634, 701
Information, Ministry of, 636
Inonü, President, Churchill's letters, telegrams, etc , to, 30, 149
Intelligence, British, and attack on Crete, 240, in North Africa, 299, 302, 309, and invasion of Russia, 317–19, and defences of Italian African ports, 679, 682–3
Intendant-General of Army of Middle East, 311, 314, 708–9
International Air Force in China, 747
Internment of married couples, 750
Invasion, lessening danger of, 4, 477, attack on Russia a prelude to, 333, preparations against, 355, 358–9, 373–8, 445–9, 455, 483, 620, 667, 707, 763, massing of shipping for, 456–7, state of

'Alert", 456-7, U S opinion on dangers of, 457-8, U S troops in Ireland a deterrent to, 576, 606, amphibian tanks in, 642, instructions to population in case of, 660, countering airborne attack in, 693-4, troops needed to repel, 702
Invasion, Continental, preparations for, 480, 722, Churchill on, 581-4 *See also* Second Front
Ipoh, 566
Iran—*see* Persia
Iraq, German designs on, 46, 49, 229, 234-236, 490-1, British treaty with, 224, 226, Axis propaganda in, 224, British troops sent to, 225-9, 291, German aid to, 226, 230, 233-6, 288, impossibility of negotiating settlement with, 228-31, 237, air support for troops in, 228-31, British immediate aims in, 231, 300, victory in, 232-5, 297, 358, troops from, for Persia, 424-5, transferred to Middle East Command, 564, German threat to, 760-1, mentioned, 62, 201, 308
Iraqi Air Force, 230
Ireland—*see* Eire, Northern Ireland
Irish Brigade, 740-1
Irish Channel, obstructions in, 100
Ismay, General Lord, minutes to, 5, 14, 16, 52, 55, 128 157, 218, 225, 228, 289, 319 *n*, 383, 426, 429, 436, 457, 466, 489-490, 564-6, 614, 620, 635, 637, 641-4, 646-7, 650, 652, 657, 659, 662, 666, 668, 670, 674, 677-9, 682-6, 688-92, 710, 715-16, 720-2, 724-6, 728, 730, 732-4, 747, 750, 752, 754, 777-8, at Chequers, 272, on General Wavell, 308-9, sent on mission to Russia, 414-16, 419, 465, mentioned, 380, 636, 641
Istanbul, 12, 30, 642
Italian Air Force, 486, in East Africa, 76, 79-80, in Albania, 94, in North Africa, 180, 497, in Iraq, 234, weakness of, in Sicily, 433 4
Italian Armistice Commission, in Syria, 287-8
Italian Army, surrenders in Cyrenaica, 57, 173, final defeat in East Africa, 80, 82, lack of armour in, 162, troops in Afrika Korps, 362, in Operation "Crusader", 497
Italian Empire, destruction of, 5, 15-16, 60, 70 *et seq*
Italian Navy, defeated at Cape Matapan, 193-4, out of action, 196, its chance of exploiting British weakness, 269, attacks Valetta, 433, German admiral on, 433; short of oil, 492
Italian Somaliland, 70-1, campaign in, 73-76
Italo-Yugoslav Pact, 139
Italy, low morale in, 15, 54, passage of German troops through, 26, naval raids on mainland of, 54-5, asked for military support against Yugoslavia, 144-6, relations with Iraq, 224, German reinforcements to, 486-7, air attacks on, 487, 584, 722, shortage of aerodromes in, 487-8, at war with U S A , 541, 546, 553, moral and military collapse of, 575, possible landings on, 582-3, 586, Churchill's message to, 638, propaganda leaflets on, 735

Jacob, Maj -Gen Sir E I C , 380, minutes to, 636, 672, 721
Jaguar, H M S , 513
"Jaguar", Operation, 243, 634, 680, 685
Janus, H M S , 295
Japan, informed of German movement in Balkans, 28, menacing attitude of, 56 156, 352, 435, 485, 522-9, German pressure on, to enter war, 156, 160, 167, dangers from participation of, in war, 157-9, China "incident" and, 159, 389-390, 415, Churchill's questions to, 167-8, negotiates with U S , 161, 170-1, 389, 520, 522, 525, 529-31, 774, occupies Indo-China, 379-80, 519, economic sanctions against, 380, 389, 521-3, strong U S attitude to, 390-1, 397, 399, 415, 469, 485, 522, 531, Russia and, 404, 407, 519, 557, 560, attacks Pearl Harbour, 477, 533, 537-8, 544-5, Great Britain undertakes to declare war on, 485, rapid modernisation of, 514-16; society in, 516-17, moderating influences on, 517, 519-21, Constitution of, 518, sees opportunity for conquest, 519, 521, contemplates war, 525-6, 532-6, Churchill suggests joint warning to, 533, warns Germany of war with U S , 533, acts of aggression of, 536, madness of, 536, Britain declares war on, 542-3; attacks Malaya, 542, 548-9, 553, 563-6, resources of, a wasting factor, 579, strategy against, 622-3, South American copper for, 646
Japanese in Canada, 652-3
Japanese Air Force, attacks Pearl Harbour, 545, sinks British battleships, 548-50, efficiency of, 551, 566, German aircraft in, 579
Japanese Army, power and ambitions of, 517-18, 521
Japanese Emperor, 518, 521, 525-6, 534
Japanese Navy, 727, increasing activity of, 156, effects of participation of, in war, 157-8, a moderating influence, 517-18, 521, lacks oil, 521, Air arm of, 522,

warlike activities of, 535, and Pearl Harbour, 545, has command of Pacific, 545, 547, 551, 554, 578–9, new battleships of, 579; Indian Ocean fleet to act as deterrent to, 768, 772–4
Japanese-Soviet Neutrality Pact, 169–70, 172
Jean Bart, the, 589
Jefferis, Colonel, 676
Jefferis bomb, 732, 775
Jehovah's Witnesses, 732
Jelib, 75
Jervis, H M S, 55, 258
Jewish Army, 658
Jibouti, blockade of, 77–8, 688, mentioned, 646, 708
Jijiga, 76
Jodl, General, 144, 547, on attack on Yugoslavia, 146
Johnston, Rt Hon Thomas, 786, minute to, 684
Johnstone, Harcourt, 728
Johore, 565, 593
Jowitt, Rt Hon Sir William (Viscount), 785
Juba, river, 75
Junkers 88, 107
Juno, H M S, 255

Kabul, telegrams from, 742, 744
Kalamata, 205
Kalinin, 419
Kandahar, H M S, 255, 511
Karelia, Eastern, 467
Kashmir, H M S, 258
Kassala, 5–6, 72, 74
Keitel, Field-Marshal, 144, 329, 547; on attack on Yugoslavia, 146, on situation in North Africa, 362–4
Kelly, H M S, 258
Kenya, attack on Abyssinia from, 6, 15, 73, troops in, 60, 64, 73–5, 654, 699–700 708, Smuts visits, 73
Keren, check at, 63–4, 72–3, 96, victory at, 79, 179
Kermanshah, 429
Kerr, Captain Ralph, 274
Kesselring, Field-Marshal, 42, 513
Keyes, Admiral of the Fleet Sir Roger (Baron), and Operation "Workshop", 51–2, prepares invasion of Continent, 480
Keyes, Lieut -Colonel, 498
Keynes, Baron, 102
Khanaqin, 427
Khurramshahr, 428
Kiev, 338, 347, 402
King, Rear-Admiral, 255–7, 265
King, Rt Hon W L Mackenzie, 601, and Imperial War Cabinet, 365, telegrams to, 656, 680
King George V, H M S, 773; transports Halifax to U S A, 22–3, in pursuit of *Bismarck*, 271–2, 274, 278, 279, 282, Churchill's voyage on, 555 *et seq*, compared with U S S *Northern Carolina*, 782
King George V class battleships, 112, faults in, 747, 779–82; for Indian Ocean, 768–769, 773–4, disposition of, 770–1, 773, displacement of, 783
Kingston, H M S, 255
Kipling, H M S, 258
Kirkenes, 461
Kirkuk, 231–2
Kismayu, 62, operation against, 73–5, 85, Italian defences of, 679, 683
Knezevic, Major, 142
Knollys, Lord, 627
Knox, Colonel W F, 489, 535, and capture of Wake Island, 591
Knox, Mrs, 754
Konoye, Prince, 170, 389, restraining influence of, 519–20, resignation of, 525
Korysis, M, Prime Minister of Greece, 66–7, 93, suicide of, 200
Kota Bharu, 548–9, 563–4
Kotor, 197, 198 *n*
Kra Isthmus, 534
Krebs, Colonel, 170
Kuantan, 549–51
Kuibyshev, Soviet Government moved to 419, British mission at, 468
Kuneitra, 295
Kursk, 553

La Pallice, *Scharnhorst* in, 673 *n*
Labour, Ministry of, and Production Executive, 101, and interchangeability of labour, 108
Labour Party, Australian, 365, in office, 367, 370–1
Lampson, Rt Hon Sir Miles (Baron Killearn), 311
Lance, H M S, 435
Landing-craft, needed for Second Front, 339, 484, 583, 746, 747 *n*, German, 455–7, 483, British, preparation of, 480, flak (L C F), 691 *See also* Tank landing craft
Larissa, 199, 201
Latona, H M S, 371–2
Latvia—*see* Baltic States
Lauder, Sir Harry, 602
Laval, Pierre, 10, 653
Laverack, General, 182
Lawson, Brigadier, 563
Laycock, Brigadier, 238, 263, 498, Director of Combined Operations, 721, 725

Leach, Captain John, 274, 382, 550
Leathers, Lord, Minister of War Transport, minute to, 738, mentioned, 131–2, 435–436, 786
Lebanon, promise of independence to, 294
Lee, Brigadier-General, 378
Leeb, General von, 337
Le Gentilhomme, General, 77, 295
Leghorn, 55, 642
Lemnos, 96
Lend-Lease Bill, 111, 113, 159, 397, supplies sent on to Russia, 377, 396, 414, working out of aid under, 387, between Britain and Russia, 408, aid to China by, 527, temporary hold-up of supplies by 569
Leningrad, German advance on, 337–8, 405, withstands siege, 347, 476, 553, Russian naval vessels at, 411–13, Finnish threat to, 467, dangerous position of, 560, 616
Levant, danger from German dominance in, 287–9, 291–2, need to occupy coast-line of, 573
Libya, 71, attacks on enemy reinforcements for, 55, 433, garrison for, 60, value of victory in, 232, enemy reinforcements for, 353, 434, release of troops from, to aid Russia, 408, 415, transference of aircraft to Persia from, 466, 475 *See also* Cyrenaica, North Africa
Libyan campaigns, 5–9, 14, subordinated to aid to Greece, 16–17, to come before Greek evacuation, 201 *See also* "Battleaxe", Operation, "Crusader", Operation
Life Guards, 713
Lindemann, Professor—*see* Cherwell, Baron
Linlithgow, Marquis of, Viceroy of India, minutes to, 310, 748, mentioned, 225
Lion, H M S , 747, 779–81, 783
List, General, 197
Lithuania—*see* Baltic States
Little Entente, Yugoslavia turns from, 139
Litvinov M , and United Nations Pact, 604–5, 607
Lively, H M S , 435
Liverpool, air raids on, 39, 127; controlling centre of Western Approaches, 103, 129, volume of trade at, 131
Lloyd, Lord, of Dollobran, 784
Loch, General, 637
Lofoten Islands, raids on, 643
London, air raids on, 39, 41, 43; restricted trade in Port of, 100, 131, stir among Japanese in, 157–8, deliveries of coal in, 642, homeless in rest-centres of, 643
London, H.M.S , 413
Longfellow, H. W , quoted, 24–5
Longmore, Air Chief Marshal Sir A M , 9, 16, 61, 182, 200, confers in Athens, 17, needs reinforcements, 94, 96, on air protection for Tobruk, 221, operational reports from, 640
Lorient, U-boats based on, 123
"Lustre", Operation, 152, 261, 634
Lutjens, Admiral, 105, 282, 283
Lutzow, 330
Luzon, Japanese landing on, 546
Lyttelton, Rt Hon Oliver, 382, Minister of State, Middle East, 312–14, 544, 785, telegram to, on Australians in Tobruk, 369, paper to, on outcome of "Crusader", 486, telegrams, etc , to, 490, on replacement of Cunningham, 506, President of Board of Trade 786

MacArthur, General, 546, 548
Macdonald, Rt Hon Malcolm J , Minister of Health, 785, minutes to, 638, 643
Macedonia, Greek forces in, 66, 87–8, 195, promised to Bulgaria, 145, German invasion of, 197
Macfarlane, General, 404, 421
Machek, Dr , 138–9
Machine tools, production of, 670
Mack, Captain, 55, 258
"Magics", 532
"Magnet", Operation, 621, 634
Maisky, M , 342, 405, 469, and Soviet-Polish Agreement, 348, and supplies for Russia, 403, 406, demands Second Front, 407, and action against Persia, 426–7; on breaking relations with Finland, 467, 470–1
Malaya, Japanese threat to, 160–1, 379–80, 523, 532, 592, cramping of defence of, 352, Japan attacks, 542, 548–9, 553, 563–566; aircraft needed for, 553; reinforcements for, 592–3, in South-Western Pacific Command, 598–9, troops in, 657
Malaya, H M S , fuelling destroyers from, 669, duties of, in Atlantic, 771, mentioned, 54, 105, 222, 770
Maleme, 248, defence of, 247, 253, taken by enemy, 254, the Fleet bombards, 261, R A F attack, 263
Malta, 62, defence of, 5, 26, 187, 434, strategic importance of, 50–1, convoys to, 53, 432–3, air raids on, 54, 179, 491, 513, reinforcements for, 54–5, 219, 222, 701, 721, submarines operating from, 55, raids on Tripoli from, 179, naval and air forces based on, 187, 190, 243, 433, 497, possible seaborne attack on, 432, force based on, 434–5, 492, 508, 751, never assaulted, 491, 512, minute to Governor of, 687

Maltby, Major-General, 562
Man, Isle of, internees on, 750
Manchester, air raid on, 38
Manchester, H M S, 271
Manchukuo, 519
"Mandibles" Operation, 32, 60, 634, 701, 720
Manila, 546, 548, 623
Mannerheim, Field-Marshal, Churchill's exchange of notes with, 473-4
Man-power, 751, source of, for mobile troops, 447, Churchill's memorandum on, 454, Army demands on, 701-6, 723, Committee, 723, use in building, 727-8, demands on British, 765-6
Margesson, Rt Hon David (Viscount), Secretary of State for War, minutes to, 446-7, 456, 639, 647, 651-3, 656, 658, 661, 674-6, 692-3, 698, 701, 711, 713, 723, 729, 737-43, 749-50, 754, 756 774-5, mentioned, 786
"Marita", Operation, 144-6, 634
Markovic, M, 139-40, 142
Marshall, General G C (U S A), 612, realises risk of neutrality, 535, in Algiers, 586, on commander for South-Western Pacific, 598, 600, Dill's friendship for, 610, on transport of troops to Ireland, 624
Marshall-Cornwall, General, 185
Martel, General, 676
Martinique, 682
Martlett aircraft, 681
Massawa, 79, 679, 683, 708, 724
Matapan, Battle of, 193-4, 196
Matthews, Mr, American Counsellor at Vichy, 115
Matsuoka, Yosuke, visits Moscow, 158, 161, 166, 169, visits Berlin, 158, 161-7, visits Rome, 168, Churchill's letter to, 167-8, 678, his reply, 171, fall of, 172, against talks with U S, 520
Mauritius, 668
Meat ration, 689, 711, 714, 717, 744
Mechili, 177, 181, 183-4, 190
Mediterranean, effect of French participation on, 7-8, German air warfare in, 13, 18, 50-4, 94, 163, 508, fear of German intervention in, 26, 32, attacks on British convoys in, 53, attacks on German communications in, 55, 185-7, 190, 243, 507-8, 511-12, 694, moving troops across Eastern, 84, removal of Fleet from Eastern, in event of Japanese entry into war, 158, convoy of tanks sent through, 218-23, position in, before attack on Crete, 251; Eastern, unusable for convoys, 432, 762, U-boats in, 462, 492-3, plans for British expedition in, 479-80, 482-3; British air supremacy in Central, 487-8, reopening of, to convoys, 487, Britain loses naval and air supremacy in, 512-13, 567, 613, free passage through, 578, torpedo aircraft for, 613-14, high-speed fighters needed in, 643, aircraft carriers and, 750, 769, destroyers for, 752
Mediterranean Fleet, duty of, to stop enemy traffic to Africa, 186-7, 215, 242, 433, reinforcements for, 187, 190, 215-216, 222, bombardment of Tripoli by, 187, 212-15, defeats Italian Fleet, off Cape Matapan, 193-4, and embarkation of troops from Greece, 203-6, and defence of Crete, 245-6, 255-61, losses of, 257, 259-60, 269, nearing exhaustion, 261, evacuates troops from Crete, 263-6, and Tobruk, 371-2, loses fuelling base in Crete, 432, dominates Mediterranean, 433, U-boat losses in, 493, 512-13, assists in Operation "Crusader", 508, 512, loss of Eastern, 512-13
Melos, 256, 261
Menzies, Rt Hon R G, and Australian troops for Greece, 59, 69, 94, and organisation of War Cabinet, 365, loses office, 365-6, telegrams to, 365-6, 399, 685, 687, in Canada, 680, 685, Minister for Co-ordination of Defence, 758, mentioned, 39
Merchant cruisers, armed, 682
Merchant ships, aircraft launched from, 107, 121, 127-9, arming of, 108, building of, 108, 780, speeding up turn-round of, 108-9, 131, sunk by U-boat, 135-7, disguised German, 462-3, losses of, 464, 697, conversion of, into landing-craft, 484-5, 722, U S production of, 611, protection of, by nets, 671 n *See also* Atlantic Ocean, Convoys, Shipping
Mersa Matruh, 184, 211, 217, 304
Mersey, 125, 667, air raids on, 38-9, 100, 108, 131
Messervy, General, 305-6
Metaxas, General, 17, 200
Middle East, strength of British arms in, 6-7, 63, disposition of forces in, 61, 63-4, effect of Japanese participation on, 158, effect of loss of, 208, air reinforcements to, 216, 251, 449, 680, 734, Hitler's lost chance in, 235, Cavalry Division in, 288, 292, 295-6, 639-40, air-power governing position in, 291, change in command in, 308-16, 313-14, 353, "Intendant-General" for, 311, 314, 708-709, Cabinet Minister in, 311-14, U S supplies to, 314, 355, 708-9, "British" troops in, 356-7, 368-9, 440-1, reinforcements for, 358, 377, 408, 435-9, 441, 650, 685, 698, 706-7, 733-5, relation of, to security of U.K, 373-6, air

"indefensible position", 377–8; troops from, for Persia, 424, 427, mass of manœuvre in, 435–6, 701, possibilities of action in, 440–1, 767, Germany plans action in, 490–1, aircraft from, for Far East, 553, 565, refrigerated meat ships in, 666, composition of Army in, 698–700, 702, interior economy of Army of, 713, 735, Commandos wasted in, 720–1, night-fighter defences in, 730; tanks for, 774–8
Military Intelligence, Director of, minute to, 745
Minefields, to cover North-Western Approaches, 99, losses to Force K in, 512–13
Mines, magnetic, 99, 127, shipping lost through, 464 *See also* Aerial mines
Ministers, speeches of, on war, 636
Miquelon, occupation of, 590–1
Mirkovic, General Bora, 142
Mobile Naval Base Defence Organisation, 238–9, in Crete, 241, 247, transport of, 679
Modus vivendi, 530–1
Mogadishu, 76, 85
Mohawk, H M S, 55
Molotov, Vyacheslav, 317, 325, 411, 420, 558, and Matsuoka, 161, 166, 169–70, and German threat of invasion, 326–7, receives German declaration of war, 328
Monastir, 197–8
Monemvasia, 205
Montgomery, Field-Marshal Sir Bernard (Viscount), 176, on Churchill's note on strategy, 444
Moore-Brabazon, Rt Hon J T C (Baron), Minister of Transport and Minister of Aircraft Production, 450, 784, 786, minutes to, 654, 717, 723–4, 741
Morocco, 7–8, 479, 483, danger of German arrival in, 209, 589, Anglo-American intervention in, 489, 575–8 *See also* North Africa
Morrison, Rt Hon Herbert S., Home Secretary and Minister of Home Security, 785, 786, minutes to, 638, 640, 642, 648, 658, 669, 720, 749
Morshead, General, at Tobruk, 185
Morton, Major Desmond, 319, minute to, 713
Moscow, Matsuoka in, 161, 166, 169–70, advance on, 347–8, 401, 419, 745; Churchill visits, 351, Hopkins's mission to, 381, British-U S mission to, 396–7, 407–8, 410, 412, 764–8, state of siege in, 419, Wavell to go to, 466, Eden in, 471–3, 475, 540, 553, 557, German failure before, 476, 553
Mosley, Sir Oswald, 640, 750
Mosul, 231–3
Mount Vernon, the, 592
Mountbatten, Admiral Lord Louis (Earl), in defence of Crete, 258, at Malta, 434, new post for, 480–1, mission of, to U S, 481, 489
Moyne, Lord, Secretary of State for Colonies, 784, minutes to, 658, 688
Msus, 56
Mufti of Jerusalem, 224, 234, 736
"Mulberry", 634
Munitions, scale of Allied production, 610–612, falling off in production, due to air raids, 644; reception of ships carrying, 648–9, 654, 657, from United States, 762–3
Murmansk, R A F squadrons based on, 345, 403, 744–5, carriage of supplies to, 347, 351, 461, Finnish threat to communications of, 467, reinforcement of Russians in, 483, German move against, 728, 732
Murray, Rt Hon Sir David King, 785
Muselier, Admiral, 591
Mussolini, Benito, Hitler's letters, telegrams, etc, to, 10–13, 145–6, African adventures of, 71, 80, Matsuoka visits, 168, and supplies to North Africa, 492
Mustard gas, 726

Nagumo, Admiral, 545
Naiad, H M S, 222, 255–6
Napier, H M S, 266
Nauplion, 204
Navy—*see* Royal Navy, *also* German, Italian, Japanese, United States Navy, *etc*
Nawanagar, Maharaja of, 667
Nazi-Soviet Pact, and Poland, 348–9
Nazi-Soviet Relations, 29, 323 *n*
Neame, General, 66, 179–80, capture of, 182, 192
Nehru, Pandit, 748
Nelson, Donald, 610–11
Nelson, H M S, 187, 215–16, 665, 781, for Far East, 523, 524 *n*, 525, 580, 770–1
Nelson class battleship, 768–9
Neptune, H M S, 512–13
Neutrality Act, American, 437, 459, virtual repeal of, 528
New Caledonia, 624
New Toronto, the, 649, 654
New Zealand, Japanese threat to, 158, 435, 523, 547, anxious about troops in Crete, 244–5, does not desire representation on War Cabinet, 759
New Zealand Star, the, 222
New Zealand troops, in Africa, 5; in

Greece, 64, 69, 89–90, 92–5, 194, 196, 198–9, 201, 205, 245–6, losses of, in Greece, 206, commander of, 242, 245, in Crete, 243–5, 247, 253, 255, 263, 268; feel unappreciated, 246, in Operation "Crusader", 496 n, 500–1, 505, 509, 567, in Middle East, 700, 702–3, 708
Newfoundland, U S bases in, 120, 122, 124, surface raiders off, 124, capital ship stationed at, 124, Churchill and Roosevelt meet in, 380, 384
Night-fighting devices, 730
Nile, Army of the, 5–6, 9, 33, 453, 702–3, reinforcements for, 18–19, 75, 735, achievement of, 57, to be sent to Greece, 83, 97; Field State of, 438, development and maintenance, 708
Nizam, H.M.S , 266
Noble, Admiral Sir Percy, Commander-in-Chief of Western Approaches, 103, 129
Nomura, Admiral, Washington mission of, 161, 171, 389
Non-Aggression Pact, Russo-German, 519
Norfolk, H M S , in pursuit of *Bismarck*, 271–4, 278
Normandie, the, 436
Norrie, General, 496 n , 500, 502
North Africa, hopes of French co-operation in, 7–8, 766, Weygand's policy in, 10–11; Smuts on campaign in, 14, attacks on supplies and reinforcements to, 55, 185–7, 190, 243, 507–8, 511–12, 694, 762, question of removing French ships to, 114, Desert Flank in, 173 *et seq* , consequences of German successes in, 211, preparations for battle in, 298–305, 354, supply difficulties in, 299, 302, 357, 362–4, 762, supplies for, and Russian needs, 351, German High Command on situation in, 362–4, U S interest in French, 479, 489, 561–2, British plans for French, 479, 482–3, 489–90, 507, 561, 574–8, 582, 703, 751, German plans regarding, 490–1, 561, 766, change of fortune in, 512–13, Allied intervention in French, 575–8, 585–6, 588–90, 606, 624–5, possible Franco-German collaboration in, 577, Vichy's duty in, 601, indecisive success in, 625, defence of ports of, 679, 682–3, air reinforcements to, 680
Northern Australia, supply line in, 598
Northern Carolina, U S S , compared with H M S *King George V*, 782–4
Northern Ireland, new airfields in, 99, U S troops for, 482–3, 576, 590, 606–7, 613, 620, 624, U S bombers for, 614, transfer of division to, 647–8, 651–2, unsaleable potatoes in, 648
North-Western Approaches, protection of, 107, 121, 123; shipping losses in, 111, 664, U S bases in, 126, catapult ships for, 129
Norway, representative of, expelled from Russia, 326, sweeps off coast of, 340, landing of troops in, 343, 345, 483, 583, Second Front in, 412, 766, liberation of, 732, shooting of trade unionists in, 733
Nottingham, air raid on, 41
Nova Scotia, U S bases in, 122, 124, capital ship stationed off, 124
Novorossisk, 440
Nubian, H M S , 255, 261
Nuffield, Viscount, 422
Nuremberg Records, 144, 157, 329
Nye, General, 475

O'Connor, Captain R C , 573
O'Connor, General Sir R N , 56, 180, capture of, 182, 192
Oil, protection of pipe-line, 227, German threat to Russian supply, 347, Japan deprived of, 380, 521, 529–31, safeguarding of Persian, 423–5, 427–9, destruction of wells in Borneo, 566, German need for, 622, British imports of, 622, 656 *See also* Petrol
Oklahoma, U S S , 545
Olympus, Mount, 199, 201
Oran, 575, *Dunkerque* in, 113, 115–16
Orel, 419
"Orient", Plan, 490, 634
Orion, H M S , at Cape Matapan, 193–4, in Battle of Crete, 255, 264
Orrin, Elsie, 720
Ottawa, Churchill in, 589, 598, 601–3
Ottawa Agreement, and Atlantic Charter, 387, 391
"Overlord" Operation, 585–6, 634

Pacific Ocean, dangers from Japanese Navy in, 158, U S warns Japan against encroachment in, 390, British battle squadron for, 485, 523–5, Japanese terms for peace in, 529–30, Japanese mastery of, 545, 547, 551, 554, 578–9, 623, regaining command of, 573, 579–80, 582, 622–3, unified commands in South-Western, 597–601, disasters to come in, 603
Paget, General Sir Bernard, Commander-in-Chief Home Forces, 468–9, minute to, 757
Pai-tak Pass, 429
Palairet, Sir Michael, 91–2, 200, 266
Palestine, 62, troops from, for Iraq, 227-230, 289, defence of, 288, 358, reinforce-

ments for, 288–9, route to, through Turkey, 359, 437, 440, 491, Cavalry Division in, 288, 639–40, 652, 655, 712, illegal immigrants to, 658
Palm Beach, 612–13
Palmyra, 296, 713
Pantelleria, 26, plan to capture, 51–3
Panzer troops, 176, in North Africa, 185, 299, 303, 305, 362, 369
Papagos, General, 13, 17, 67–8, 91, plan of, against German threat, 87–90, 96, and disposition of Greek forces, 195–6, suggests British evacuation, 199–200
Parachute troops, German, in N Africa, 175, German, in Crete, 240–1, 248, 252, 254, British neglect of, 677, 683, protection to hands of, 677, points concerning exercise for, 715
Parliament, division in Secret Session, 743, calling up of Members, 755
Pas de Calais, British air superiority over, 456–7, 690
Patani, 548, 564
Paul, Prince, Regent of Yugoslavia, 138, British appeal to, 87, his fear of Germany, 139–41, abdication of, 143
Pearl Harbour, Japanese attack on, 161, 477, 533, 537–8, 544–5, U S losses at, 545, 554
Pedder, Colonel, 296
Peloponnese, German troops in, 204
Penang, invasion of, 566
Pensions of widows of Service men killed on leave, 678
Penelope, H M S, 435, 508, 512
Pennsylvania, U S S, 545
Percival, General A E, 601
Persia, plans for defence of, 351, 432, brought into Allied camp, 358–9, 404, 406, 430–2, transport of supplies to Russia across, 403–4, 410, 412, 419, 423, 429–32, 436, 468, 472, 484, 732, 765, transport of British troops across, 411, 413, 466, 472, 767, Russian troops in, 413, 420, 431, 484, Germans in, 423–4, 426, 429, 431, ultimatum to, 424, 426–7, Anglo-Russian invasion of, 426–30, conditions imposed on, 431–2, British air squadrons in North, 466 475, Germany plans attack on, 490–1, 761, transferred to Middle East Command, 564, improving communications in, 732, 761
Persia, Shah of, 428–30, 432
Perth, H M S, 255, 265–6
Pétain, Marshal, 8, 11, 589, and removal of *Dunkerque*, 114–17, possible German demand to, 489, illness of, 561
Peter II, King of Yugoslavia, 143, 197, evacuation of, 198 *n*
Petrol, reduction in basic ration of, 688, supplementary ration of, and log-book, 724, 727
Petroleum Department, 669, 744, minute to, 656
Petsamo, 461
"Phantoms, the", 176
Philippines, Japanese menace to, 161, 165, 380, 532, 554, Japanese attack on, 546, reinforcements for, through Australia, 593, in South-Western Pacific Command, 598–9
Phillips, Admiral Sir Tom, 524, 548–51
Phoebe, H M S, 265–6
Phosgene gas, inadequate production of, 672
Pile, General, 447–8, 730, 746
"Pilgrim", Operation, 388–9, 391, 634, 771
Pim, Captain, 588
Piræus, the, blowing up of munition ship in, 196
Pisa, raid on, 55
Placentia Bay, 380, 384, 438
Platt, General, 72, 75, 79–80, 179
Plymouth, air raids on, 39, controlling centre of Western Approaches moved from, 103
Points system, 723, 754–5
Pola, the, sinking of, 194
Poland, preparations for Russia's invasion in, 318, Russian negotiations with, 348–350, post-war frontiers of, 558
Polish troops, for Greece, 64, 95–6, 195, for Crete, 249, leave Syria, 287, in Russia, 349–50, 767, in Tobruk, 367, in Britain, 452, in N Africa, 567, in Middle East, 655, officers from, for West Africa, 686, 752, armoured, 755–6
Pope, General, 676
Port Darwin, U S Air Force at, 546, supply base at, 598
Port Emergency Committees, 38
Port Sudan, 708, 724
Portal, Marshal of the Royal Air Force Sir Charles (Viscount), 380, and Operation "Tiger", 219, on strength of R A F, 378, minutes to, 449, 451, 640, 643, 649, 661–2, 669, 672, 680, 687, 689, 692, 717, 721, 726, 728–30, 735, 744, 747–8, 752, accompanies Churchill to Washington, 541, 555, 571, 573, and transatlantic flight, 626, 629
Ports, British, air attacks on, 37–9, 108, improving service at, 108–9, 133, difficulties regarding use of, 131, use of small, 667, alternative facilities, 738
Portsmouth, air raids on, 38–9
Portugal, and Azores, 123, 388, German pressure on, 124, question of passage of German troops through, 589
Post-war relief, pool of wheat for, 740

Poultry, backyard, 688, 757–8

Pound, Admiral of the Fleet Sir Dudley, First Sea Lord, discussions of, with Ghormley, 123, and attack on Tripoli, 212–13, agrees to Operation "Tiger", 219, 222, and *Bismarck*, 282, minutes, etc, to, 341, 434, 561, 637, 643, 648–9, 657, 663, 665, 669, 677, 681–2, 692, 710, 720, 727, 730, 737, 746, 749, 751, 768, 773, 780, 782, at first conference between Churchill and Roosevelt, 380, 382, and Far Eastern Fleet, 523–4, at Washington, 541, 555, announces loss of battleships, 551, on *Duke of York*, 556, 571, 573, and transatlantic flight, 626, minute from, on disposition of Fleet in Indian Ocean, 769–73, on battleship design, 781–4, mentioned, 106, 378

Pownall, Lieut.-General Sir Henry, 272, 566, 601, in Singapore, 593

"P Q" convoy, 461

Press, disclosures made by, 636

Pridham-Wippell, Vice-Admiral, 193, 203

Prien, Captain, 110

Prince of Wales, H M S, 286 781, in pursuit of *Bismarck*, 271–3, 277, in action, 274, 286, Churchill's voyage in, 380–4, 399–400, Roosevelt on, 384, escorts Malta convoy, 433, sent to Far East, 469, 524–5, 547–8, 769, loss of, 548–51, 554

Princes, Chamber of, 667

Prinz Eugen, the, 270–3, 275, 277

Priorities, system of, 720

Prisoners, exchange of, radio messages concerning, 742

Production Executive 101–2, minute to 727

Proximity fuze, 742

Prussia, post-war treatment of, 558, 560

"Prussian militarism", 638

"Puff-balls", 732

"Punishment", Operation, 155, 634

Purchasing Commission, British 762

Purvis, Arthur, 396, 762

Purvis Programme, 112

Queen Elizabeth, 222, 770, damage to, 512, 613–14, American troops on, 624, number of troops on, 666

Queen Mary, American troops on, 624, number of troops on, 666

Quinan, General 427, 437

Radar, 40, German, 42, use against U-boats, 110, 127, 458, use of, in pursuit of *Bismarck*, 278, airborne (A S V), 460, 665, stations in N W Approaches, 664, stations at Basra, 670

Radio beam bombing, 41–2, 716–17

Raeder, Admiral, and American aid to Britain, 126

Railways, delayed-action mines on, 731 *See also* Trans-Persian railway

Ramillies, H M S, 105, 400, 770, in pursuit of *Bismarck*, 271, 277

Ramsay, Admiral Sir B H, 645

Ramsbotham, Rt Hon Herwald, 785

Rashid Ali, attacks British, 226, 229, 231, 236, flight of, 234, seeks German aid, 288, Russia recognises, 326, mentioned, 46, 225

Rawlings, Rear-Admiral, 255, 257, 264

Rayak, 295

Red Sea, end of Italian naval force in, 80, clear of enemy, 666

Regent, H M S, 198 *n*

Reid, Rt Hon J S C, 785

Reith, Lord, Minister of Works and Buildings, 786, minutes to, 638, 737

Renown, H M S, 51, 222, 665, in pursuit of *Bismarck*, 271–2, 279, for Far East, 523, 525, 768–73

Repulse, H M S, 665, 770, in pursuit of *Bismarck*, 271, sent to Far East, 524–5, 547, 768–9, 773, loss of, 548–51, 554

Resolution, H M S, 770

Retimo, 241, 248, 261, defence of, 247, 254–5, 262–3

Reuben James, U S S, 460

Revenge, H M S, 770, in pursuit of *Bismarck*, 271, 277

Reykjavik, U S convoys to, 129, Churchill in, 399 400

Rhodes, British plan to capture, 18, 32, 59 60, 64, 90, 96, 238, shelving of plan, 85, 89 90, 181, 211 239, German air bases in, 196, 241

Ribbentrop, Herr von, 144, 317, 518, 533, on German troop movements in Balkans, 27 9, urges Japan to attack Singapore, 156, 160, Matsuoka's discussions with, 161–5, 167, delivers declaration of war, 327–8, told of Japanese attack on America, 546

Richelieu, the, 589

Rifles, production of, 644, 721, convoys carrying, 648, 658, American, for Home Defence, 658, 763, captured Italian, 754

Rintelen, General von, 146

Ritchie, General, in command of "Crusader", 506 509–11

Robert, Admiral, 590

Rockall, Radar station on, 663

Rockets, in defence of Malta, 187, carrying aerial mines, 659, in chemical warfare, 671, researches in, 741–2, various types of, 753

Rodney, H M S, 105, 187, 215–16, in

pursuit of *Bismarck*, 271, 277, 279–82, escorts Malta convoy, 433, for Far East, 523, 524 *n*, 525, 580, 770–1
Rogers, Commander Kelly, 625–9
Rome, Matsuoka at, 168
Rommel, Marshal Erwin, 175–7, sent to North Africa, 163, 176, attacks Agheila, 179, reinforcements for, 216–17, 221, 302–5, 433–4, 492, 507–8, 585, 621, British need to defeat, 298, 479, difficulties of, 299, 302, 357, 362–4, on defensive, 307, 362, complains of lack of supplies, 492, composition of army of, 497, attack on headquarters of, 498, raid of, 502–4, 509, intercepted oil supplies of, 507–8, retakes Sidi Rezegh, 509, Air Forces come to assistance of, 513, escape of, 621, 625
Roosevelt, Elliott, 384
Roosevelt, Mrs , 587
Roosevelt, President Franklin D , Churchill's correspondence with, 20, 22–4, 46, 78, 97, 111, 113–17, 121–125, 157–8, 185, 188, 207–9, 259, 272, 286, 294, 313, 330, 380–1, 409, 416, 436–8, 471, 478, 481–6, 492, 507, 526–7, 530, 533, 541–2, 680, 722, 739, and Harry Hopkins, 29–2, concerned for Italians in Abyssinia, 78, assents to Lend-Lease Bill, 111, gives armed aid to Britain, 119, 165, and Atlantic defence, 119–26, 458–9, on evacuation from Greece, 207–8, on Russian strength, 351, and defence of Middle East, 377, first meeting with Churchill, 377, 380, 384, and drafting of Atlantic Charter, 385–95, message of, to Stalin, 394, and supplies for Russia, 412, 414, 416–17, lends U S transports, 435–9, 441, "shoot first" order of, 458–9, desires to bring U S to war, 478, 527–8, 535, and Mountbatten, 481, his interest in N Africa, 489, 606, declines to meet Konoye, 525, on negotiations with Japan, 529, confirms Japanese attack, 538, Churchill visits, 540–2, 551, 555, 587 *et seq* , 604 *et seq* , and Stalin's proposals for post-war settlement, 560, 616, and Churchill's papers on future course of war, 573–4, Churchill's affection for 588, 608, map room of, 588, anxious to get U S troops into action, 589, 624, and United Nations Pact, 590, 604–5, on need for unity of command in South-Western Pacific, 597–8, 600–1, talks to Litvinov, 604, and American war production, 610–11, and Churchill's 'phone call to Wendell Willkie, 617–18, allocates tanks to Egypt, 708, 712, mentioned, 397, 399–400
Rostov, 476
Rotterdam, air attack on, 729–30
Roumania, 315–16, co-operates with Germany, 11–12, 144, German troop concentration in, 16–17, 23, 27, 30, 58, 66, 147, bombing oilfields of, 31, Hungary and, 146–7, Germany guarantees, 163, British declaration of war on, 465, 467–468, 470, 472–5, invasion of Russia by, 467, Soviet post-war plans for, 558–9
Roumanian troops in Russian campaign, 317, 338, 405
"Round-up", Operation, 585, 634
Royal Air Force, increasing strength, 4, 765, in Greece, 9, 14, 27, 31, 93–4, 195, 198, 202, 206, strength of, compared with German, 36–7, 486, 687, 694–6, 719, 730, in Middle East, 61, 187–8, 245, 355–6, 439, 669, reinforcements needed for, 93–4, attacks battle-cruisers at Brest, 129, 672–3, based on Malta, 187, 434, in Iraq, 226, 228–30, 233, weakness of, in Crete, 245, 247, aids evacuation of Crete, 263, 266, authorised to act against German aircraft on French territory, 289, in Operation "Battleaxe", 307, 355–6, raids Germany, 340, 346, 410, in Russia, 345, 403, 744–5, and defence of Britain, 374–5, 456–8, 487, use to be made of, during and before battle, 442–443, technicians lent to factories, 447, increased fighter strength, 449, need for more bombers for, 450–1, to help defend Caucasus, 466, 475; in Operation "Crusader", 496–7, 500, 502, 504, 506, 511, 567, at Singapore, 548, sent to India, 564–5; tied up at home, 621, training of pilots for, in U S A , 680–1, daylight bombing by, 687, 690, ground personnel of, to defend aerodromes, 689, 692–3, in co-operation with Army, 726, 728, ground personnel of, scale of, 734, 744, over France, French money for, 735, Irish Wing of, 740, losses in, 747–8
Royal Army Service Corps, 438–9, 735
Royal Artillery, 442
Royal Canadian Navy, 120, 126
Royal Navy, shipbuilding and repairs in, 108, 112–13, 779–84, help given to Russia by, 340, 344, and defence of Britain, 458, in Far East, 469, 485, 523–525, needs to develop fuelling at sea, 663–4, Air Force and, 728, value of rocket to, 742
Royal Sovereign, H M S , 770
Rubber, sent from Russia to Germany, 326, sent to Russia from England, 346, 408
Rundstedt, Marshal von, in Russian cam-

paign, 323, 338, 347–8, 477, advance of, 476
Russia, Soviet, effect of German action in Balkans on, 9–10, 12, 26–9, 84, pressure of, on Bulgaria, 11, relations with Germany, 12, 163–4, 167, 169–70, 519, effect of British action on, 31, German preparations to invade, 37, 42–43, 49, 84, 130, 164, 170, 251, 315–20, 323–7, Hitler's hatred of, 44, and Turkey, 97, 163, occupies Bessarabia and Bukovina, 139, ties between England and, 163–4, signs Neutrality Pact with Japan, 169–70, 172; German invasion of, 172, 323, 328–30, 337–8, disastrous mistakes of, 315, 328–9, sends supplies to Germany, 317, 324, 338, seeks to appease Germany, 326–7, Germany declares war on, 327–8, conduct of German troops in, 329, U S -British help for, 330–3, 338–9, 343–6, 351, 377 383, 395–6, 402 *et seq*, 432, 552, 569 574, 582, demands "Second Front", 339–40, 343, 405–7, 409–13, 419, and agreement with Poland, 348–50, Polish prisoners in, 348–50, at first a liability rather than an asset to Britain, 351–2, and Atlantic Charter, 390–1, 399, and invasion of Persia, 404, 424, 427, and Japan, 404, 406, 519, 529, 553, 557, 560, losses in, 405; possibility of capitulation of, 409, British troops to aid, 411, 420, 441, 466, 471, 488, reception of Anglo-U S Mission in, 415–16, transport of supplies to, 417–18, 436–7, 456, 461, 466, morale in, 418, unreasonable reproaches of, 420, 469–70, medical aid to, 421–2, consultations with, on military matters, 465–6, 468–73, 475, German failure in, 553, 574–5, 745, Stalin's territorial ambitions for, 558–60, 615–16, Eastern Army of, 560, not represented on Combined Chiefs of Staff Committee, 609, S American copper for, 646, and Wheat Agreement, 739, munitions of war for, 762–4, directive for Anglo-American conference with, 764–8, Polish and Czech armies in, 767
Russian Air Force, destroyed on ground, 323, 328–30, 350, losses sustained by, 410, strength of, 486
Russian Army, taken by surprise, 328, 350, strength of, 338, 476–7, in Persia, 413, 420, 427, 429, 431–2, 484; re-equipment of, 763–4
Russian campaign, German policy for conduct in, 329, German initial successes, 337–8, 347–8, 350–1, 405, effect of, on N Africa, 355, 359–60; Russian resistance in, 401, 404, 419, 472, 476, 622, guerrilla warfare in, 401, effect of winter on, 476–7, 486, 553, 574, 622; German aircraft lost in, 730, German films of, 731
Russian Military Mission, 340–1
Russian Navy, British contact with, 341, compensation for losses in, 411–13
Rutba, 230–1

Saigon, 156, 549, 551
St. John's, Newfoundland, escort base at, 120
St Pierre, occupation of, 590–1
Saionji, Prince, 518
Sakhalin, 169
Salazar, Dr., 388
Salford, air raids on, 38
Salonika, German threat to, 9, 13, 16–17, 30, 145, difficulty of covering, 64, 68, defence of, 86–7
Salter, Sir Arthur, 660
Salvage Service, 104, 130, 682
Sandford, Brigadier, 73
Sarajevo, 142
Satyagrahi prisoners, 748
Scandinavia, preparing troops for landing in, 621 *See also* Norway
Scapa Flow, 22, 381, security of, 614
Scarpanto, attack on, 261, 264
Scharnhorst, the, attacks shipping, 104–5 124, in Brest, 129–30, 270, 672, damage to, 673 *n*
Scheer, the, attacks shipping, 104
Schulenburg, Count von, 28, 144, 161, on Matsuoka's visit to Moscow, 169–70, interviews Hitler before invasion of Russia, 323–4, telegrams of, on Russian-German relations, 325–7, delivers declaration of war, 327–8, end of, 328 *n*
"Scorcher", Operation, 232, 249–50, 300, 634
Scotland, new airfields in, 99, production of sugar-beet in, 685
Scottish Commando, exploit of, 499
"Sea Lion", Operation, 634
Sebastopol, 440
"Second Front", destruction of, 315, 338, 420, Russian demand for, 339, 343, 405–7, 411–13, 419, impossibility of forming, 339, 344, 407, 409–10, 560, Northern, 408, 766, in Sicily, 479–80, Churchill's plans for, 573, 581–4, 766, 768
Secrecy, drive to secure greater, 635–6, 650
Secret Session, division in, 743
Serbia, German army in, 197
Serbs, antagonism between Croat and, 138–40
Sforza ,Count, 78

Shadow Brigade, West African, 686
Shahabad, 429
Shaiba, 225, 229
Sheferzen, 502, 509
Sheffield, H M S, 54, 222, in pursuit of *Bismarck*, 272, 279, 282
Shigemitsu, Mr, 167, visits Churchill, 159–60
Shinwell, Rt. Hon. Emanuel, 694
Shipbuilding, U S programme, 602, 611–612
Shipping air attacks on, 99, 107, 127, 130, 461–2, reduction of operative fertility of, 100, losses of, 100–2, 106, 110–11, 120–1, 127–8, 135–7, 463–4, 697, 753 *n*; repair of damaged, 100–1, 104, 108, 121, 130, salvaging of, 104, 130, weekly publication of losses discontinued, 128, 133, German estimates of losses, 162; not available for Second Front, 409–10, 412–413, from U S, 435–9, 441, 708, 724, assembly of, for invasion, 455–8, Japanese attack on British, 537, shortage of, for Allied transport, 590, 598, 613, 620, 622, 624, 682, 705, 707, 766, mechanical transport, 650, refrigerated meat, 666, demands for, 734, limitations of, in help to Russia, 764–5
Shipping, Ministry of, 101, 132
Shoeburyness, 753
Siam, 642, 728, armistice between Vichy and, 156, Japanese encroachments in, 157, 389–90, Japanese threat to, 523, 532, 534, 565
Sicily, German Air Force in, 8, 26, 52, 433, 491, 513, 567, scheme for occupation of, 8, 90, 479–80, 482, 486–90, Italian Air Force in, 433–4, German reinforcement of, 487, Allied landings on, 586
Sidi Azeiz, 300
Sidi Barrani, 762
Sidi Omar, 303, 306, 497, 499–500, enemy garrison cut off in, 505
Sidi Rezegh, battle for, 496, 498–501, 504–505, 509, 625
Sidi Suleiman, 302, 306
Sidon, 295
Sierra Leone convoys, raids on, 105, 461, need destroyer escort, 664
Sikorski, General, 95–6, 686, 756, and Soviet-Polish Agreement, 348–9
Simon, Viscount, 785, interviews Hess, 48–9
Simovic, General, 140–4, 153–4
Sinclair, Rt Hon Sir Archibald, Secretary of State for Air, minutes to, 34–6, 640, 658, 662, 664, 671, 678, 689, 710, 716–717, 719, 724, 735, 740–1, 746–7, 775, mentioned, 450, 784
Singapore, Japanese urged to attack, 156–8, 160, 165, relative importance of Egypt and, 375–6, 379, defence of, 376, 565, Duff Cooper at, 379, 543, British Eastern Fleet based on, 524–5, Japan attacks, 543, 554, British battleships at, 547–8, 772, aircraft based on, 548, 550, 772, reinforcements for, 565–6, 592–3, peril of, 592–3, 623; garrison of, 657; personnel of batteries, etc, at, 678
Singleton, Lord Justice, reports on dispatch of Churchill tanks, 777, mentioned, 36–37, 687, 730
Singora, 548–9, 564
Skoplje, 142
Slamat, the, sinking of, 204–5
Slim, Field-Marshal Sir William, in Persia, 427, 429
Slovenia, 197
Smart, Air Vice-Marshal, at Habbaniya, 226, 229, minute to, 230
Smoke-screens, against air attack, 38, 648, for Tobruk harbour, 676
Smolensk, German capture of, 338
Smuts, Field-Marshal Rt Hon J C, 95, telegrams from, 17, 73; telegrams, etc, to, 19, 62, 65, 85, 250, 326, 441, 459, 525, 527, 561–2, 679, confers with Eden, 61, 64, 85, 92–3, sends fresh troops to Kenya, 73–5, agrees on aid to Greece, 94, and Imperial War Cabinet, 365, as Honorary Field-Marshal, 679, in War Cabinet, 759
Smyrna, 30
Sollum, 184–5, 222, 232, 355, Gott's attack on, 299–302, Germans hold, 306, enemy garrison cut off in, 505, 511, 567
Somaliland campaign, 69, 75–8 *See also* British, French, Italian Somaliland
Somervell, Rt Hon Sir Donald, 785
Somerville, Admiral of the Fleet Sir James, raids Genoa, 54–5, escorts tank-carrying convoy, 222, in pursuit of *Bismarck*, 271–272, 275, 277, 279, escorts Malta convoys, 432
Soong, T V, signs United Nations Pact, 605
Soudan, Italians driven from, 72
Soudanese troops, in Abyssinia, 80
South Africa, does not desire representation on War Cabinet, 759
South African Air Force, 76, 79
South African troops, 656, 679, in East African campaign, 15, 19, 76–7, in Kenya, 60, 64, 73, 75, 700, in Egypt, 85, 97, 702–3, in North Africa, 179, 251, 496, 501, 504, 511, 708
South America, copper supplies of, 646
Southampton, H M S, 53

Soviet-German Pact, effect on Yugoslavia, 139, and Poland, 348–9
Soviet-Polish Agreement, 348–50
Spain, question of passage of German troops through, 7, 11, 577–8, 589, 766, German pressure on, 124–5, 251, 486, 488, 491, influence of American aid to Britain on, 126, growing pessimism in, 208, effect of British success in Africa on, 484
Sphakia, 239, 246, troops evacuated from, 263–6
Spitzbergen, British warships at, 344–5, British raid on, 461
Stalin, Generalissimo, and Hess episode, 49, prepares pact with Yugoslavia, 154–155, 324, Matsuoka visits, 161, 166, 169–170, demonstrates friendship for Germany, 170, blunders of, 316, 328–9, and division of British Empire, 317–18, 338, Churchill's correspondence with, 320–3, 340, 342–6, 403–7, 411–12, 414, 418, 430–1, 468–73, chairman of Council of People's Commissars, 325, demands Second Front, 339–40, 343, 405–6, 409, 411–13, Hopkins's mission to, 381, Churchill-Roosevelt message to, 394, and Arctic convoys, 417, on post-war organisation of peace, 469, 473, 558–60, demands British rupture with Finland, 469–74, and war with Japan, 557
Stark, Admiral, 535, 782
Statistical Department, 102
Steel, import of, 112, 655, production in English-speaking nations, 168, Japanese deficient in, 528
Stettinius, Edward R , 612
Stimson, H L , 692, realises risk of neutrality, 535, and U S troops for Ireland, 606
Stork, H M S , 462
Stoyadinovic, M , 139, 667–8
Submarines, British, in Arctic, 344, midget Italian, raid Valetta, 433, British, based on Malta, 433, "human torpedoes" from, Italian, in Alexandria, 512, in U S Asiatic Fleet, 546, Dutch, in Far East, 564, 566, value of, in Far East, 579, British losses in, 749 *See also* U-boats
Suda, attack on, 248, 255
Suda Bay, fuelling base at, 55, warships based on, 84, 238, defences of, 239, 241, 247, air attacks on, 255, 261, hopeless position of troops at, 261–2, enemy reaches, 263
Suez Canal, mines in, 64, 84, 89–90, 163, U S supplies to, 251, air attacks on, 287–8, defence of, 296
Suffolk, H M S , in pursuit of *Bismarck*, 271–3, 278
Sugar-beet production, 685–6
Sunderland flying-boats, in Coastal Command, 721
Superb, H M S , 747 *n*
"Supercharge", Operation, 370, 634
"Super-Gymnast", Operation, 608, 621, 624, 634
Supply, Ministry of, and Import Executive, 101, and import programme for 1941, 112–13
Surabaya, 599
Surface raiders, attack shipping, 104–6, 124–6, 162, 270, disguised merchant ships as, 462–3, losses due to, 464
Swansea, air raids on, 38
Sweden, 412, 766
Sweets rationing, 754–5
Swilly, Lough, 645
Swordfish torpedo aircraft, attack *Bismarck*, 278–9, 282
Sydney, Australian cruiser, 462
Sydney, Cape Breton, convoys, 459–60
Syria, 232, possible breach with Vichy over, 78, Axis Armistice Commission in, 224, 287, troops for invasion of, 227, 288–90, 293, 295, effects of German control of, 287–8, 291, preparations for occupation of, 290–4, 710, promise of independence to, 294, campaign in, 295–297, 354, defence of, 351, 358–60, risk to, from North, 437, 440, 490–1, 760–1, airfields of, importance of owning, 684–685, 687, Vichy instructions to, 714, escape of German legionnaires from, 736

Takoradi, 9, 62, 665, route to Egypt via, 243, 681; bottleneck at, 680–1
Tangier, German penetration into, 125, U S interest in, 489, time needed to land division at, 648
Tank landing-craft, 663, 746, conversion of merchant ships into, 484–5, 722, converted to carry guns, 691
Tank Parliament, 674–7
Tankers, refuelling from, 663, improvement in turn-round of, 668–9
Tanks, different types, 16 *n* , Wavell's need for, 217–18, sent through Mediterranean, 218–23, 232, 298, Home Force shortage of, 219, 455, imperfect for Desert fighting, 304, losses of, in "Battleaxe", 307, Auchinleck's requirements, 354–6, 358–9, use of, in invasion 374–5, sent to Russia, 408, 417–19, American production of, 416–17, 610–611, 708, 712, 722, 762–3, artillery versus, 442–3, battle in Desert, 494, 496, strength of, in Operation "Crusader", 496–7, losses of, in "Crusader", 500–1,

504–5, amphibian, tactics against, 642, training of men for, 671, 675, 712; captured German, 674, 676, conference on question of, 674–5, German "thick-skinned", 676, number of, to brigade, 682, Wavell's strength in, 684, names for, 692, need for heavier, 694; number unfit for service, 729, 774–5, repairing of, 774–5, aerial weapons against, 775, making desert-worthy, 776–8, faulty transport of Churchill, 776–7
Tedder, Marshal of the Royal Air Force (Baron), 182, 231, 442, and battle for Crete, 249–50, 263, and advance into Syria, 291, minutes to, 300, and Operation "Crusader", 500, 505–6, telegrams, etc, from, 504
Teheran, 404, 425, Germans in, 423–4, Wavell in, 430, occupation of, 432, Mufti at, 736
Telegrams, unnecessary length of official, 639–40, 653, 742, 744
Teleki, Count, 147–8
Temeraire, H M S, 779–81, 783
Tempe gorge, 201
Tenedos, H M S, 548
Tennant, Captain, 550
Thailand – *see* Siam
Thermopylæ, retreat to, 199–202
Thomas, General, 326
Thompson, Commander, 627–8
Thrace, Turkish Army in, 30, 33, 150, Greek troops from, 195
Tiflis, Wavell in, 431, 466
"Tiger", Operation, 218–23, 232, 243, 298, 307, 634, No 2, 681
"Tiger Cubs", 299, 686 delays in utilising 302–3, 305, 308
Tikhvin, 405
Timbaki, 239, 246, 263
Timber, import of, 724, 751, felling of, 754
Timoshenko, Marshal, Army Group of, 347, withdraws towards Moscow, 419
Tirpitz, the, 106, 524–5, preoccupations caused by presence of, 768, 771, 773–4
Tobruk, capture of, 5–6, 8, 14, 17, German threat to, 177, 181, 355, defence of, 182–186, 188, 221, 364, reinforced by sea, 184, 188, 201, 364, prisoners taken by, 186, 221, aircraft destroyed in, 221, need to relieve, 298, 304, 307, sorties from, 302, 308, 362, 364, 497, 501, 504–5, 509, enemy strength before, 305; difficulty of holding, 356, 358, a threat to enemy, 357, 362–4, 497, air raids on, 364, 368, relieving Australians in, 367–72; reinforcements to, 367, R N and, 371–2; German plan to take, 490–1, 493, 497, 498, contact established with, 509, 511, tanks in, 674, protection to ships at, 676; enemy defences of, 679, 683, mentioned, 353, 670, 724, 763
Tojo, General, 520, 534; Prime Minister, 525–6
Tomahawk fighters, 94, for Middle East, 243, for Russia, 345, 403
"Torch", Operation, 585–6, 634
Torpedo aircraft sent to Egypt, 613–14
Tory Island, 664
Toulon, proposal to transfer *Dunkerque* to, 113–17, French fleet at, 561, 575, 577
Tovey, Admiral of the Fleet (Baron), in pursuit of *Bismarck*, 271, 277, 282
Trade unionists, Norwegian, shooting of, 733
Trans-Persian railway, 733, improvements to, 403–4, 407–8, 438, 732, 765, sending of troops by, 441, 466, 767
Transport, Ministry of, and Import Executive, 101, 109, combined with Ministry of Shipping, 132
Transport aircraft, for ferry pilots, 680–1, need for, 683
Trento Motorised Division, 305
Trincomalee, Fleet at, 770–2
Tripartite Pact, Bulgaria and, 11, 141, Yugoslavia and, 12, 140–2, Hungary and, 146–7, Japan and, 159–60, 172, 520, Russia offered accession to, 163, purpose of, 165
Tripoli, enemy communications with, 51–52, 186–7, 362–3, advance against, 58–9, Italian acquisition of, 71, Rommel sent to, 163, 176, bombardment of, 187, 212–215, 434; blocking harbour of, 187, 213–214, 434; bombing of, 212, 214–15, 434, reinforcements arriving at, 221, 621, British scheme to capture, 479, 482, 507, 575, 621, 751, air transport to, 492, minefield near, 512–13, blockade of, 677
Tripolitania, German armoured troops in, 174–6; vulnerable coastal road of, 181, 186–7, 362–3; British plan to occupy, 487, 490, 496
"Truncheon", Operation, 561, 634
"Tube Alloys", 730 *n*
Tula, 419
Tunisia, rallying of Vichy in, 479, enemy need for supply route through, 512, Anglo-American plan for, 575, German troops in, 585
Turkey, 14; Britain seeks entry of, into war, 9, 61, 84–6, 95, 149–51, 403, 407, 412, 415, 575, 767, effect of events in Greece and Balkans on, 17–19, 29, 58–9, 65, 93, German threat to, 26–7, 30, 32–3, 86, 315–16, British promise of aid to, 31–2, 58, 63–5, 475, 484, 649, 761, 767, neutrality of, 65, 90, 408, 420, 436, 582, Eden's discussions with, 85–6; influence

of American aid on, 126, effect of British withdrawal from Eastern Mediterranean on, 158, Russian declaration to, 163, growing pessimism of, 208, communications with, through Iraq, 227, effect of German control of Syria on, 288, 296, possibility of German attack through, 292, 359–60, 415, 437, 440–1, 490, 575, 684, 760–1; effect of Russian campaign on, 358, a protection to flank of Army of Nile, 484, 767, post-war, 558, disagreement between Greece and, 641, air squadrons for, 649
Tyneside, Churchill visits, 22

U-boats, 104, 381–2, increasing numbers of, 99, 122, 126, 162, 459, attack convoys, 105, 119, 459, 664, measures taken against, 107, 110, 118, 458–61, 730, 749, "wolf-pack" tactics of, 109–110, 119, losses of, 110, 462–3, 749, move farther west, 118–21, 123, crews for, 126–7, merchant ships sunk by, 135–7, 165, 464, come to help of *Bismarck*, 283, 285, in Bay of Biscay, 460, captured by aircraft, 460–1, 737 *n*, in Mediterranean, 462, 492–3, 512–13, fuelling base of, 664–6, Focke-Wulf signals to, 664–5, for Yugoslav Navy, 737, prisoners from, 746; number of, in Atlantic, 752
Ukraine, 251, 405, 476
United Nations Pact, 590, 604–7
United States, Halifax arrives in, 22–3, supplies from, 57, 111, 251, 314, 355, 397, 552–3, 569, aid from, in shipping, 100–1, 435–9, 441, 708, 724, 733, Lend-Lease Bill passed in, 111, 113, attitude of, to France, 113–17, 209, 507, 561, 752, armed aid from, 119, 762–3, secret Staff discussions with Britain, 119, bases of, in British territory, 119, 122, Greenland bases of, 121, extends Security Zone, 122–3, 388–9, 391, 399, 434, 459, aerial reconnaissance of, in Atlantic, 124, moves nearer war, 126, 243, 251, 458–60, 768, Hitler anxious to avoid war, 126, 160, 167, Unlimited National Emergency in, 126, Icelandic base of, 129, possibility of Japanese aggression against, 158–61, 165, Ribbentrop on aid from, to Britain, 165, Japanese negotiations with, 170–1, 520, 525, 529–33, reaction of, to Greek campaign, 207, supplies from, to Middle East, 314, 355, 708–9, sends warnings to Russia, 328, and help to Russia, 330, 333, 339, 345, 351, 377, 383, 395–6, 402–3, 408, 412, 414, 416–18, 553, sends Mission to Britain, 377–8, attitude of, to Japan, 379–80, 404, 415, 485, 520–522, 527; Protection in, 387, Japanese proposals to, 389–90, 529–30, and Atlantic Charter, 395; finishes Persian railway, 432, interest in British defence in, 457, 620; warns Finland, 467, attacked by Japan, 477, 537 *et seq*, Mountbatten in, 481; Britain promises support to, against Japan, 485, 528, 534, and intervention in Morocco, 489, 561, help to China from, 527, deciphers Japanese messages, 532–3, 535, risks of neutrality of, 535, enters war, 538–40, temporary embargo on supplies from, 554, immeasurable resources of, 570–1, Free French and, 577–578; security precautions in, 595, shipbuilding programme in, 602, 611–12, 620, 660, scale of production in, 610–12, 620, "Commandos" on W coast of, 623, Food Mission to, 660, messages from Service attachés at Embassy of, 661; tanks from, 674, 708, 712, 722, British pilots trained in, 680–1, and Martinique, 682, pork output of, 711, 717, aircraft production in, 717–18; bombers from, over Germany, 721, British tank personnel trained in, 722, lorries from, for Persia, 732, convoy vessels built in, 746 *n.*, 747
United States Air Force, squadrons of, in Britain, 576–7, 620, to assist in bombing of Germany, 581, 620, experts at Takoradi, 681
United States Army, troops for N Ireland, 482–3, 576, 590, 606, 613, 621, 624, for Morocco, 489, 576, 624–5, and passing of Draft Bill, 528, 535, numerical strength of, 581, 620, in Australia, 593, to replace British in Iceland, 621; transport of troops to Ireland, 624–5
United States Navy, patrols W Atlantic, 216, 459, transports of, lent to Britain, 437, 441, first loss suffered by, 460, losses of, at Pearl Harbour, 545, Asiatic Fleet of, attack on, 546, British battleships and, 547, 580, responsible for E Pacific 599
U P weapon—*see* Rockets
Upholder, H M S, 55
U Saw, 727
Utterson-Kelso, General, 757

Valetta, air-raid on, 433
Valiant, H M S, 770, at Battle of Matapan, 193–4, at bombardment of Tripoli, 214, in defence of Crete, 255, 257–9, damage to, 512, 613–14
Valona, 9, 14, 26, 195, 197
Vampire, H.M S, 548
Vanguard, H.M S, 113, 780

Vian, Admiral Sir Philip, 279, 461
Vichy Government, and North Africa, and Jibouti, 77–8, and Syria, 78, 287, 294–5, 714, and removal of *Dunkerque* to Toulon, 113–17, armistice between Siam and, 156, Communist propaganda in, 164, U S handling of, 209, 507, 589, 752, and Gibraltar, 251, effect of Desert victory on, 479, 482, 487, 507, 575, Japanese pressure on, 520, effect of U S participation in war on, 560–1, 575, Churchill speaks to Canadian Parliament on, 601, relations with Britain, 650, 651, 653, agent from, 714, mentioned, 7–8, 10–11, 479, 482–3, 575–8
"Victor", training exercise, 647–8, 668
Victorious, H M S, 243, 461, 780, in pursuit of *Bismarck*, 271–2, 274, 277–8, in attack on battle-cruisers, 673, for Mediterranean, 681, 685, 769, Grummans for, 725
Vittorio Veneto, damage to, 194
Vladivostok, supplies through, 404, 411, 419, 469, 765
Vyshinsky, M, 321–2

Wake Island, 591–2
Wake-Walker, Admiral Sir William, 274
Walker, Commander F J, 462
Walmer Castle, 737
Wanklyn, Lieut-Commander Malcolm, V C, 55
War Aims, statement of Committee on, 637
War Cabinet, decides on aid to Greece, 94, representative of, in Middle East, 311–314, and agreement with Russia, 341, Menzies and, 365, and Atlantic Charter, 392, 397, approves Persian operation, 426, man-power surveys before, 454, declares war on Japan, 538, 542, Churchill's reports to, from U S A, 588–90, 598, 600, and United Nations Pact, 590, 605, Australia seeks representation on, 758–60
War Office, and Army Scales, 112, and skilled men in Army, 749, 756–7
War Production Budget (1942), 750–1
War Transport, Ministry of, 132, 786 *n*
Warspite, H M S, 770, at Battle of Matapan, 193, at bombardment of Tripoli, 214, in defence of Crete, 255, 257, 259, 269
Washington, secret Staff discussions at, 119, Churchill's visit to, 540–2, 587 *et seq*, 604 *et seq*, 624–5
Wavell, Field-Marshal Sir A P (Earl), 6, 182, North African campaigns of, 9, 16–17, 305–9, minutes, telegrams, etc, to, 16, 18, 56, 74, 76–8, 178, 180, 183–4, 186, 190, 192, 200, 220–1, 227, 229–31, 241, 243, 246, 249–50, 260, 289–92, 299, 302, 309, 313, 430, 564, 600, confers in Athens, 17, 19, 61, 66–8, 88, told to give Greek situation priority, 17, 32, 58, confers with Eden and Dill, 57, 59, 63–5, 92, minutes, telegrams, etc, from, 59, 73, 76, 174, 179, 183–4, 186, 191, 217, 223, 230, 241, 249, 262, 291, 299, 302–4, 707, and disposition of forces in Middle East, 64, 654–5, East African campaigns of, 72, 74–80, against blockade of Jibouti, 77, and weakness of Desert Flank, 173–4, 179–80, on German threat in North Africa, 174, 179, 217, 221–2, inspects Desert Flank, 178, visits front, 180, 182–183, authorises withdrawal in Greece, 199, orders re-embarkation of troops, 202–3, on his weakness in armour, 217, 304, 354, desires not to repeat "Tiger", 223, reluctant to help in Iraq, 227–31, 235, 308, multitudinous cares of, 235, 239, 288, 707, in Crete, 241, and evacuation of troops from Crete, 262, 265, and invasion of Syria, 288, 290–1, 296, misunderstanding with, 290–1, offers to resign, 290, 308, achievements of, 297, prepares for attack in Western Desert, 298–305, 684–5, 700, during attack, 306, 308, replacement of, 308–10, 313–14, effect of German desert victories on, 308–9, and Persia, 359, "led astray" by politicians, 360–1, and Persian campaign, 424, 430, at Tiflis, 431, 466, suggested visit of, to Moscow, 466, 468–469, against Operation "Whipcord", 489–90, and defence of Burma, 564–5, 593, reinforcements to, 565–6, 593, 707, chosen to command in South-Western Pacific, 597–601, 607, pro-Arab, 658, miscalculation of, 673, strategic reserve of, 701
Weizmann, Dr, 658
Weizsacker, M, 324–5
Welles, Sumner, at conference between Churchill and Roosevelt, 381, 384, 387, in discussions at White House, 589
Wellington bombers, in Greece, 195, in Iraq, 229, in N Africa, 680
Welsh Regiment, in Crete, 261
Werth, General, 148
West Africa, Allied plans regarding, 561–562, 582
West African Brigades, 706, in Kenya, 74, 654, 700, 708, Polish officers for, 686, 752,
West Indies, U S bases in, 122
West Virginia, U S S, 545

Westbrook, T C L, 709
Western Approaches, controlling centre of, 103, U-boats sunk in, 110, 118, U-boat captured by aircraft in, 460–1
Western Desert, fighting in, 232, 250, question of renewed offensive in, 353–361, 369, 439, 684–5, reinforcements for, 432, Auchinleck's offensive in, 471, 473, 475, 477, 482, plans to follow up victory in, 479–80, 482–4, 486–90, effects expected from victory in, 484, Air Force, 497 *See also* Cyrenaica, Libya, North Africa
Weygand, General, 7–8, 10–11, 589, 616, reaction of British N African victories on, 482, 487, 489, 589, replacement of, 507, 561, fails to reply to British offers, 649–50, 706; weakness of, 657
Wheat Agreement, 739–40
"Whipcord", Operation, 479–80, 482, 486–8, 634, abandonment of, 488–9
White House, Churchill's visit to, 587 *et seq*, 604 *et seq*, 624–5, Christmas at, 593–4
Whitehall, vulnerability of, to air attack, 651
Whittle engine, 723
Willkie, Wendell, 23, Churchill's 'phone call to, 617–18
Wilson, Sir Charles (Lord Moran), 550, 612–13, 626
Wilson, Field-Marshal Sir Henry Maitland, commands forces in Greece, 66, 88, 91, 195, 198–201, minute to, 199, and advance into Syria, 290–1, suggested for N Africa, 354, 359, 361, and escape of German Legionnaires, 736
Winant, John G, and Pearl Harbour, 537–538, on German atrocity films, 731, mentioned, 39, 330–1, 730
Wingate, Colonel, 73, 80
Wolverine, H M S, 110
Women, recruitment, for air defence, 448–449; needed for Army, 453, conscription of, 455, employment of married, 455, in anti-aircraft batteries, 743, 745
Womersley, Rt. Hon Sir Walter, 786
Wood, Rt Hon. Sir Kingsley, Chancellor of Exchequer, 541, 785, minutes to, 678, 728
Woolton, Lord, Minister of Food, 785, minutes to, 660, 663, 688, 710, 714, 717, 753, 755, 757
"Workshop", Operation, 51–3, 634
Wryneck, H M S, 205

Yamamoto, Admiral, and Pearl Harbour, 545
Yannina, 197
Yonai, Admiral, 518–19
"Yorker", Operation, 701
Young, Sir Mark, 563
Young Soldiers Battalions, 452–3
Yugoslavia, 14, 315–16, Britain seeks co-operation of, 9, 19, 33, 58–9, 61, 65, 83–4, 86–7, 141–2, 151–4, German wish for co-operation of, 12, 140–1, 147, doubtful attitude of, 66, 68, 86, 95, 139–42, effect of British action in Greece on, 93, value of attack on Albania by, 96–97, division and disintegration in, 138–139, signs pact with Hungary, 139, Churchill's appeal to, 141–2, Revolution in, 142–4, 148, Hitler prepares to destroy, 144–7, fails to act, 153–4, Russia prepares pact with, 154–5, 324, German invasion of, 195–8, capitulation of, 198, effect of revolution in, on Hitler's plans, 319–20, 323, Minister of, expelled from Russia, 326, post-war, 558, U-boat for, 737, guerrilla warfare in, 752
Yunnan, Japanese threat to, 526–7

Zagreb, 142–3, 197
Zara, the, sinking of, 104
Zemun, 140, 143